R
१.२
२ग १
भाग

हिंदी
शब्दसागर

९

व—षप्ति

२५.००

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या R ९.२
पुस्तक संख्या श्या ६ हि भा. ६
आगत पंजिका संख्या ६५८ D

पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

R1.2, SY6H V.9
658D

हिंदी शब्दसागर

नवाँ भाग

['व' से 'ष्ठ्यूति' तक, शब्दसंख्या–२०,०००]

Stock Verification-2024
CHECKED 1973
Initial

मूल संपादक
श्यामसुंदरदास

मूल सहायक संपादक
बालकृष्ण भट्ट रामचंद्र शुक्ल
अमीरसिंह जगन्मोहन वर्मा
भगवानदीन रामचंद्र वर्मा

काशी नागरी-प्रचारिणी सभा

Stock Verification-2024

संपादकमंडल
कमलापति त्रिपाठी
धीरेंद्र वर्मा हरवंशलाल शर्मा
नगेंद्र शिवनंदनलाल दर
रामधन शर्मा सुधाकर पांडेय
करुणापति त्रिपाठी (संयोजक संपादक)

सहायक संपादक
विश्वनाथ त्रिपाठी

हिंदी शब्दसागर के संशोधन संपादन का संपूर्ण तथा प्रथम एवं द्वितीय भाग के प्रकाशन का साठ प्रतिशत व्ययभार भारत सरकार के शिक्षामंत्रालय ने वहन किया ।

पुस्तक सं० ....
आगत सं० ....
दिनांक ....

परिवर्धित, संशोधित, नवीन संस्करण

शकाब्द १८९४ सं० २०२९ वि० १९७२ ई०

मूल्य २५), संपूर्ण दस भागों का २५०)

शंभुनाथ वाजपेयी
द्वारा
नागरी मुद्रण, वाराणसी
में मुद्रित

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

प्रकाशिका

'हिंदी शब्दसागर' अपने प्रकाशनकाल से ही कोश के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं के दिशानिर्देशक के रूप में प्रतिष्ठित है। तीन दशक तक हिंदी की मूर्धन्य प्रतिभाओं ने अपनी सतत तपस्या से इसे सन् १९२८ ई० में मूर्त रूप दिया था। तब से निरंतर यह ग्रंथ इस क्षेत्र में गंभीर कार्य करनेवाले विद्वत्समाज में प्रकाशस्तंभ के रूप में मर्यादित हो हिंदी की गौरवगरिमा का आख्यान करता रहा है। अपने प्रकाशन के कुछ समय बाद ही इसके खंड एक एक कर अनुपलब्ध होते गए और अप्राप्य ग्रंथ के रूप में इसका मूल्य लोगों को सहस्र मुद्राओं से भी अधिक देना पड़ा। ऐसी परिस्थिति में अभाव की स्थिति का लाभ उठाने की दृष्टि से अनेक कोशों का प्रकाशन हिंदी-जगत् में हुआ, पर वे सारे प्रयत्न इसकी छाया के ही बल जीवित थे। इसलिये निरंतर इसकी पुनः अवतारणा का गंभीर अनुभव हिंदी-जगत् और इसकी जननी नागरीप्रचारिणी सभा करती रही, किंतु साधन के अभाव में अपने इस कर्तव्य के प्रति सजग रहती हुई भी वह अपने इस उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर सकने के कारण मर्मांतक पीड़ा का अनुभव कर रही थी। दिनोत्तर उसपर उत्तरदायित्व का ऋण चक्रवृद्धि सूद की दर से इसलिये और भी बढ़ता गया कि इस कोश के निर्माण के बाद हिंदी की श्री का विकास बड़े व्यापक पैमाने पर हुआ। साथ ही, हिंदी के राष्ट्रभाषा पद पर प्रतिष्ठित होने पर उसकी शब्दसंपदा का कोश भी दिनोत्तर गतिपूर्वक बढ़ते जाने के कारण सभा का यह दायित्व निरंतर गहन होता गया।

सभा की हीरक जयंती के अवसर पर, २२ फाल्गुन, २०१० वि० को, उसके स्वागताध्यक्ष के रूप में डा० संपूर्णानंद जी ने राष्ट्रपति राजेंद्रप्रसाद जी एवं हिंदीजगत् का ध्यान निम्नांकित शब्दों में इस ओर आकृष्ट किया—'हिंदी के राष्ट्रभाषा घोषित हो जाने से सभा का दायित्व बहुत बढ़ गया है।···हिंदी में एक अच्छे कोश और व्याकरण की कमी खटकती है। सभा ने आज से कई वर्ष पहले जो हिंदी शब्दसागर प्रकाशित किया था उसका बृहत् संस्करण निकालने की आवश्यकता है।···आवश्यकता केवल इस बात की है कि इस काम के लिये पर्याप्त धन व्यय किया जाय और केंद्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों का सहारा मिलता रहे।'

उसी अवसर पर सभा के विभिन्न कार्यों की प्रशंसा करते हुए राष्ट्रपति ने कहा—'वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दकोश सभा का महत्वपूर्ण प्रकाशन है। दूसरा प्रकाशन हिंदी शब्दसागर है जिसके निर्माण में सभा ने लगभग एक लाख रुपया व्यय किया है। आपने शब्दसागर का नया संस्करण निकालने का निश्चय किया है। जब से पहला संस्करण छपा, हिंदी में बहुत बातों में और हिंदी के अलावा संसार में बहुत बातों में बड़ी प्रगति हुई है। हिंदी भाषा भी इस प्रगति से अपने को वंचित नहीं रख सकती। इसलिये शब्दसागर का रूप भी ऐसा होना चाहिए जो यह प्रगति प्रतिबिंबित कर सके और वैज्ञानिक युग के विद्यार्थियों के लिये भी साधारणतः पर्याप्त हो। मैं आपके निश्चयों का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्दसागर का नया संस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए, जो पाँच वर्षों में बीस बीस हजार करके दिए जाएँगे, देने का निश्चय हुआ है। मैं आशा करता हूँ कि इस निश्चय से आपका काम कुछ सुगम हो जाएगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।'

राष्ट्रपति डा० राजेंद्रप्रसाद जी की इस घोषणा ने शब्दसागर के पुनःसंपादन के लिये नवीन उत्साह तथा प्रेरणा दी। सभा द्वारा प्रेषित योजना पर केंद्रीय सरकार के शिक्षामंत्रालय ने अपने पत्र सं० एफ ।४—३।५४ एच० दिनांक ११।५।५४ द्वारा एक लाख रुपए पाँच वर्षों में, प्रति वर्ष बीस हजार रुपए करके, देने की स्वीकृति दी।

इस कार्य की गरिमा को देखते हुए एक परामर्शमंडल का गठन किया गया, इस संबंध में देश के विभिन्न क्षेत्रों के अधिकारी विद्वानों की भी राय ली गई, किंतु परामर्शमंडल के अनेक सदस्यों का योगदान सभा को प्राप्त न हो सका और जिस विस्तृत पैमाने पर सभा विद्वानों की राय के अनुसार इस कार्य का संयोजन करना चाहती थी, वह भी नहीं उपलब्ध हुआ। फिर भी, देश के अनेक निष्णात अनुभवसिद्ध विद्वानों तथा परामर्शमंडल के सदस्यों ने गंभीरतापूर्वक सभा के अनुरोध पर अपने बहुमूल्य सुझाव प्रस्तुत किए। सभा ने उन सबको मनोयोगपूर्वक मथकर शब्दसागर के संपादन हेतु सिद्धांत स्थिर किए जिनसे भारत सरकार का शिक्षामंत्रालय भी सहमत हुआ।

उपर्युक्त एक लाख रुपए का अनुदान बीस बीस हजार रुपए प्रति वर्ष की दर से निरंतर पाँच वर्षों तक केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय देता रहा और कोश के संशोधन, संवर्धन और पुनःसंपादन का कार्य लगातार होता रहा, परंतु इस अवधि में सारा कार्य निपटाया नहीं जा सका। मंत्रालय के प्रतिनिधि श्री डा० रामधन जी शर्मा ने बड़े मनोयोगपूर्वक यहाँ हुए कार्यों का निरीक्षण परीक्षण करके इसे पूरा करने के लिये आगे और ६५०००) अनुदान प्रदान करने की संस्तुति की जिसे सरकार ने कृपापूर्वक स्वीकार करके पुनः उक्त ६५०००) का अनुदान दिया। इस प्रकार संपूर्ण कोश का संशोधन संपादन दिसंबर, १९६५ में पूरा हो गया।

इस ग्रंथ के संपादन का संपूर्ण व्यय ही नहीं, इसके प्रकाशन के व्ययभार का ६० प्रतिशत बोझ भी दो खंडों तक भारत सरकार ने वहन किया है, इसी लिये यह ग्रंथ इतना सस्ता निकालना संभव हो सका है। उसके लिये शिक्षामंत्रालय के अधिकारियों का प्रशंसनीय-सहयोग हमें प्राप्त है और तदर्थ हम उनके अतिशय आभारी हैं।

जिस रूप में यह ग्रंथ हिंदीजगत् के संमुख उपस्थित किया जा रहा है, उसमें अद्यतन विकसित कोशशिल्प का यथासामर्थ्य उपयोग और

प्रयोग किया गया है, किंतु हिंदी की और हमारी सीमा है। यद्यपि हम अर्थ और व्युत्पत्ति का ऐतिहासिक क्रमविकास भी प्रस्तुत करना चाहते थे, तथापि साधन की कमी तथा हिंदी ग्रंथों के कालक्रम के प्रामाणिक निर्धारण के अभाव में वैसा कर सकना संभव नहीं हुआ। फिर भी यह कहने में हमें संकोच नहीं कि अद्यतन प्रकाशित कोशों में शब्दसागर की गरिमा आधुनिक भारतीय भाषाओं के कोशों में अतुलनीय है, और इस क्षेत्र में काम करनेवाले प्रायः सभी क्षेत्रीय भाषाओं के विद्वान् इससे आधार ग्रहण करते रहेंगे। इस अवसर पर हम हिंदीजगत् को यह भी नम्रतापूर्वक सूचित करना चाहते हैं कि सभा ने शब्दसागर के लिये एक स्थायी विभाग का संकल्प किया है जो बराबर इसके प्रवर्धन और संशोधन के लिये कोशशिल्प संबंधी अद्यतन विधि से यत्नशील रहेगा।

शब्दसागर के इस संशोधित प्रवर्धित रूप में शब्दों की संख्या मूल शब्दसागर की अपेक्षा दुगुनी से भी अधिक हो गई है। नए शब्द हिंदी साहित्य के आदिकाल, संत एवं सूफी साहित्य (पूर्व मध्यकाल), आधुनिक काल, काव्य, नाटक, आलोचना, उपन्यास आदि के ग्रंथ, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, वाणिज्य आदि और अभिनंदन एवं पुरस्कृत ग्रंथ, विज्ञान के सामान्य प्रचलित शब्द और राजस्थानी तथा डिंगल, दक्खिनी हिंदी और प्रचलित उर्दू शैली आदि से संकलित किए गए हैं। परिशिष्ट खंड में प्राविधिक एवं वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों की व्यवस्था की गई है।

हिंदी शब्दसागर का यह संशोधित परिवर्धित संस्करण कुल दस खंडों में पूरा होगा। इसका पहला खंड पौष, संवत् २०२२ वि० में छपकर तैयार हो गया था। इसके उद्घाटन का समारोह भारत गणतंत्र के प्रधान मंत्री स्वर्गीय माननीय श्री लालबहादुर जी शास्त्री द्वारा प्रयाग में ३ पौष, सं० २०२२ वि० (१८ दिसंबर, १९६५) को भव्य रूप से सजे हुए पंडाल में काशी, प्रयाग एवं अन्यान्य स्थानों के वरिष्ठ और सुप्रसिद्ध साहित्यसेवियों, पत्रकारों तथा गण्यमान्य नागरिकों की उपस्थिति में संपन्न हुआ। समारोह में उपस्थित महानुभावों में विशेष उल्लेख्य माननीय श्री पं० कमलापति जी त्रिपाठी, हिंदी विश्वकोश के प्रधान संपादक श्री डा० रामप्रसाद जी त्रिपाठी, पद्मभूषण कविवर श्री पं० सुमित्रानंदन जी पंत, श्रीमती महादेवी जी वर्मा आदि हैं। इस संशोधित संवर्धित संस्करण की सफल पूर्ति के उपलक्ष्य में इसके समस्त संपादकों को एक एक फाउंटेन पेन, ताम्रपत्र और ग्रंथ की एक एक प्रति माननीय श्री शास्त्री जी के करकमलों द्वारा भेंट की गई। उन्होंने अपने संक्षिप्त सारगर्भित भाषण में इस सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों की चर्चा की और कहा : 'सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करनेवाली यह सभा अपने ढंग की अकेली संस्था है। हिंदी भाषा और साहित्य की जैसी सेवा नागरीप्रचारिणी सभा ने की है वैसी सेवा अन्य किसी संस्था ने नहीं की। भिन्न भिन्न विषयों पर जो पुस्तकें इस संस्था ने प्रकाशित की हैं वे अपने ढंग के अनूठे ग्रंथ हैं और उनसे हमारी भाषा और साहित्य का मान अत्यधिक बढ़ा है। सभा ने समय की गति को देखकर तात्कालिक उपादेयता के वे सब कार्य हाथ में लिए हैं जिनकी इस समय नितांत आवश्यकता है। इस प्रकार यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि भाषा और साहित्य के क्षेत्र में यह सभा अप्रतिम है'।

प्रस्तुत नवें खंड में 'व' से लेकर 'ष्ठ्यूति' तक के शब्दों का संचयन है। नए नए शब्द, उदाहरण, यौगिक शब्द, मुहावरे, पर्यायवाची शब्द और महत्वपूर्ण ज्ञातव्य सामग्री 'विशेष' से संवलित इस भाग का शब्दसंख्या लगभग २०,००० है। अपने मूल रूप में यह अंश कुल ४२८ पृष्ठों में था जो अपने विस्तार के साथ इस परिवर्धित संशोधित संस्करण में लगभग ४४९ पृष्ठों में आ पाया है।

संपादकमंडल के प्रत्येक सदस्य ने यथासामर्थ्य निष्ठापूर्वक इसके निर्माण में योग दिया है। स्व० श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ नियमित रूप से नित्य सभा में पधारकर इसकी प्रगति को विशेष गंभीरतापूर्वक गति देते थे और पं० करुणापति त्रिपाठी ने इसके संपादन और संयोजन में प्रगाढ़ निष्ठा के साथ घर पर, यहाँ तक कि यात्रा पर रहने पर भी, पूरा कार्य किया है। यदि ऐसा न होता तो यह कार्य संपन्न होना संभव न था। हम अपनी सीमा जानते हैं। संभव है, हम सबके प्रयत्न में त्रुटियाँ हों, पर सदा हमारा परिनिष्ठित यत्न यह रहेगा कि हम इसको और अधिक पूर्ण करते रहें क्योंकि ऐसे ग्रंथ का कार्य अस्थायी नहीं, सनातन है।

अंत में शब्दसागर के मूल संपादक तथा सभा के संस्थापक स्व० डा० श्यामसुंदरदास जी को अपना प्रणाम निवेदित करते हुए, यह संकल्प हम पुनः दुहराते हैं कि जब तक हिंदी रहेगी तब तक सभा रहेगी और उसका यह शब्दसागर अपने गौरव से कभी न गिरेगा। इस क्षेत्र में यह नित नूतन प्रेरणादायक रहकर हिंदी का मानवर्धन करता रहेगा और उसका प्रत्येक नया संस्करण और भी अधिक प्रभोज्वल होता रहेगा।

ना० प्र० सभा, काशी :
निर्जला एकादशी २०२९ वि०

सुधाकर पांडेय
प्रधान मंत्री

संकेतिका

[उद्धरणों में प्रयुक्त संदर्भग्रंथों के इस विवरण में क्रमशः ग्रंथ का संकेताक्षर, ग्रंथनाम, लेखक या संपादक का नाम और प्रकाशन के विवरण दिए गए हैं।]

अँधेरे०	अँधेरे की भूख, डा० रांगेय राघव, किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण
अंबिकादत्त (शब्द०)	अंबिकादत्त व्यास
अकबरी०	अकबरी दरबार के हिंदी कवि, डा० सरजूप्रसाद अग्रवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, सं० २००७
अखबार	'आज' दैनिक, वाराणसी
अखिलेश (शब्द०)	अखिलेश कवि
अग्नि०	अग्निशस्य, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०
अजात०	अजातशत्रु, जयशंकर प्रसाद, १६वाँ सं०
अणिमा	अणिमा, पं० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', युग मंदिर, उन्नाव
अतिमा	अतिमा, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०
अधखिला (शब्द०)	अधखिला फूल (उपन्यास), अयोध्यासिंह उपाध्याय
अनामिका	अनामिका, पं० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', प्र० सं०
अनुराग०	अनुरागसागर, संपा० स्वामी युगलानंद बिहारी, वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, प्र० सं०
अनुराग बाग (शब्द०)	अनुराग बाग
अनेक (शब्द०)	अनेकार्थ नाममाला (शब्दसागर)
अनेकार्थ०	अनेकार्थमंजरी और नाममाला, संपा० बलभद्रप्रसाद मिश्र, युनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज, प्र० सं०
अपरा	अपरा, पं० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग
अपलक	अपलक, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राजकमल प्रकाशन, प्र० सं०, १९५३ ई०
अभिशप्त	अभिशप्त, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४४ ई०
अमिट०	अमिट स्मृति, महावीरप्रसाद द्विवेदी, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, १९३० ई०
अमृतसागर (शब्द०)	अमृतसागर
अयोध्या (शब्द०)	अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

अरस्तू०	अरस्तू का काव्यशास्त्र, डा० नगेंद्र, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०, २०१४ वि०
अर्चना	अर्चना, पं० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', कलामंदिर, इलाहाबाद
अर्थ०	अर्थशास्त्र, कौटिल्य (५ खंड), संपा० आर० शाम शास्त्री, गवर्नमेंट ब्रांच प्रेस, मैसूर, प्र० सं०, १९१९ ई०
अर्ध०	अर्धकथानक, संपा० नाथूराम प्रेमी, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई, प्र० सं०
अष्टांग (शब्द०)	अष्टांगयोग संहिता
अष्टांग०	अष्टांगयोग संहिता
आँधी	आँधी, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पंचम सं०
आ० अं० रा०	आज की अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, रामनारायण यादवेंदु, आर्यावर्त प्रकाशन मंदिर, पटना, १९५१ ई०
आकाश०	आकाशदीप, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पंचम सं०
आचार्य०	आचार्य रामचंद्र शुक्ल, चंद्रशेखर शुक्ल, वाणी वितान, वाराणसी, प्र० सं०
आत्रेय अनुक्रमणिका (शब्द०)	आत्रेय अनुक्रमणिका
आदि०	आदिभारत, अर्जुन चौबे काश्यप, वाणी विहार, बनारस, प्र० सं०, १९५३ ई०
आधुनिक०	आधुनिक कविता की भाषा
आनंदघन (शब्द०)	कवि आनंदघन
आराधना	आराधना, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', साहित्यकार संसद, इलाहाबाद, प्र० सं०
आर्द्रा	आर्द्रा, सियारामशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०, १९८४ वि०
आर्य भा०	आर्यकालीन भारत
आर्यो०	आर्यों का आदिदेश, संपूर्णानंद, भारता भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, १९९७ वि०, प्र० सं०
इंद्र०	इंद्रजाल, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
इंद्रा०	इंद्रावती, संपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०

इंशा०	इंशा, उनका काव्य तथा रानी केतकी की कहानी, संपा०, ब्रजरत्नदास, कमलमणि ग्रंथमाला, बुलानाला, काशी, प्र० सं०
इति०	इतिहास और आलोचना, नामवर सिंह, प्र० सं०
इतिहास	हिंदी साहित्य का इतिहास, पं० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, नवां सं०
इत्यलम्	इत्यलम्, 'अज्ञेय,' प्रतीक प्रकाशन केंद्र, दिल्ली
इनशा (शब्द०)	इनशा अल्ला खाँ
इरा०	इरावती, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ सं०
उत्तर०	उत्तररामचरित नाटक, अनु०पं० सत्यनारायण कविरत्न, रत्नाश्रम, आगरा, पंचम सं०
एकांत०	एकांतवासी योगी, अनु० श्रीधर पाठक, इंडियन प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०, १९८६ वि०
कंकाल	कंकाल, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, सप्तम सं०
कठ० उप० (शब्द०)	कठवल्ली उपनिषद्
कढ़ी०	कढ़ी में कोयला, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', गऊघाट, मिर्जापुर, प्र० सं०
कबीर ग्रं०	कबीर ग्रंथावली, संपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, काशी
कबीर० बानी	कबीर साहब की बानी
कबीर बीजक	कबीर बीजक, कबीर ग्रंथ प्रकाशन समिति, बाराबंकी, २००७ वि०
कबीर बी०	कबीर बीजक, संपा० हंसदास, कबीर ग्रंथ प्रकाशन समिति, बाराबंकी, २००७ वि०
कबीर मं०	कबीर मंसूर (२ भाग), वेंकटेश्वर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, बंबई, सन् १९०३ ई०
कबीर० रे०	कबीर साहब की ज्ञानगुदड़ी व रेख्ते, बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद
कबीर० श०	कबीर साहब की शब्दावली (४ भाग), बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद, सन् १९०८
कबीर(शब्द०)	कबीरदास
कबीर सा०	कबीर सागर (४ भा०), संपा० स्वा० श्री युगलानंद बिहारी, वेंकटेश्वर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, बंबई
कबीर सा० सं०	कबीर साखी संग्रह, बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद, १९११ ई०
कमलापति (शब्द०)	कवि कमलापति
करुणा०	करुणालय, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, तृ० सं०
कर्ण०	सेनापति कर्ण, लक्ष्मीनारायण मिश्र, किताब महल, इलाहाबाद, प्र० सं०
कर्पूर मंजरी (शब्द०)	कर्पूरमंजरी नाटक, भारतेंदु लिखित
कविंद (शब्द०)	कविंद कवि

कविता कौ०	कविता कौमुदी (१–४ भा०), संपा० रामनरेश त्रिपाठी, हिंदी मंदिर, प्रयाग, तृ० सं०
कवित्त०	कवित्तरत्नाकर, संपा० उमाशंकर शुक्ल, हिंदी परिषद्, विश्वविद्यालय, प्रयाग
कादंबरी (शब्द०)	कादंबरी ग्रंथ अनुवाद
कानन०	काननकुसुम, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस. इलाहाबाद, पंचम सं०
कामायनी	कामायनी, जयशंकर प्रसाद, नवम सं०
काया०	कायाकल्प, प्रेमचंद, सरस्वती प्रेस, बनारस, ९वां सं०
काले०	काले कारनामे, 'निराला,' कल्याण साहित्य मंदिर, प्रयाग, २००७ वि०
काव्य०	काव्यशास्त्र
काव्य० निबंध	काव्य और कला तथा अन्य निबंध, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, चतुर्थ सं०
काव्य० प्र०	काव्य प्रभाकर (शब्द०)
काव्य० य० प्र०	काव्य : यथार्थ और प्रगति, डा० रांगेय राघव, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, प्र० सं०, २०१२ वि०
काशीराम (शब्द०)	काशीराम कवि
काश्मीर०	काश्मीर सुषमा, श्रीधर पाठक, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद. प्र० सं०
काष्ठजिह्वा (शब्द०)	काष्ठजिह्वा स्वामी
कासीराम (शब्द०)	कासीराम कवि
किन्नर०	किन्नर देश में, राहुल सांकृत्यायन, इंडिया पब्लिशर्स, प्रयाग, प्र० सं०
किशोर (शब्द०)	किशोर कवि
कीर्ति०	कीर्तिलता, सं० बाबूराम सक्सेना, ना० प्र० सभा, वाराणसी, तृ० सं०
कुकुर०	कुकुरमुत्ता, 'निराला', युगमंदिर, उन्नाव
कुणाल	कुणाल, सोहनलाल द्विवेदी
कृषि०	कृषिशास्त्र
केशव (शब्द०)	केशवदास
केशव ग्रं०	केशव ग्रंथावली, संपा० पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०
केशव० अमी०	केशवदास की अमीघूंट
कोई कवि (शब्द०)	अज्ञातनाम कोई कवि
कुलार्णव तंत्र (शब्द०)	कुलार्णव तंत्र
कौटिल्य अ०	कौटिल्य का अर्थशास्त्र
क्वासि	क्वासि, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राजकमल प्रकाशन, बंबई, १९५३ ई०
खानखाना (शब्द०)	अब्दुर्रहीम खानखाना
खालिक०	खालिकबारी, संपा० श्रीराम शर्मा, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०, २०२१ वि०
खिलोना	खिलौना (मासिक)

खुदाराम	खुदाराम और चंद हसीनों के खतूत, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', गऊघाट, मिर्जापुर, आठवाँ सं०
खुसरो (शब्द०)	अमीर खुसरो
खेती की पहली पुस्तक (शब्द०)	खेती की पहली पुस्तक
गंग क०	गंग कवित्त (ग्रंथावली), संपा० बटेकृष्ण, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
गदाधर०	श्रीगदाधर भट्ट जी की बानी
गदाधर सिंह (शब्द०)	गदाधर सिंह
गबन	गबन, प्रेमचंद, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, २६वाँ सं०
गर्ग संहिता (शब्द०)	गर्ग संहिता
गालिब०	गालिब की कविता, सं० कृष्णदेवप्रसाद गौड़, वाराणसी, प्र० सं०
गि० दा०, गि० दास गिरिधरदास (शब्द०)	गिरिधरदास (बा० गोपालचंद्र)
गिरिधर (शब्द०)	गिरिधर राय (कुंडलियावाले)
गीतिका	गीतिका, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०
गुंजन	गुंजन, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
गुंधर (शब्द०)	गुंधर कवि
गुमान (शब्द०)	गुमान मिश्र
गुरुदास (शब्द०)	गुरुदास कवि
गुलाब (शब्द०)	कवि गुलाब
गुलाल०	गुलाल बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९१० ई०
गोकुल (शब्द०)	कवि गोकुल
गोदान	गोदान, प्रेमचंद, सरस्वती प्रेस, बनारस, प्र० सं०
गोपाल उपासनी (शब्द०)	गोपाल उपासनी
गोपाल० (शब्द०)	गिरिधर दास (गोपालचंद्र)
गोपालभट्ट (शब्द०)	गोपालभट्ट, वाल्मीकि रामायण के अनुवादक
गोरख०	गोरखबानी, सं० डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, द्वि० सं०
गोल० (शब्द०)	गोलविनोद (ग्रंथ)
ग्राम०	ग्राम साहित्य, संपा० रामनरेश त्रिपाठी, हिंदी मंदिर, प्रयाग, प्र० सं०
ग्राम्या	ग्राम्या, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
घट०	घट रामायण (२ भाग), सतगुरु तुलसी साहिब, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, तृ० सं०

घनानंद	घनानंद, संपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, प्रसाद परिषद्, वाणीवितान, ब्रह्मनाल, वाराणसी
घाघ०	घाघ और भड्डरी, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद
घासीराम (शब्द०)	घासीराम कवि
चंद०	चंद हसीनों के खतूत, 'उग्र', हिंदी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता, प्र० सं०
चंद्र०	चंद्रगुप्त, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, नवाँ सं०
चक्र०	चक्रवाल, रामधारी सिंह 'दिनकर', उदयाचल, पटना, प्र० सं०
चरण (शब्द०)	चरणदास
चरणचंद्रिका (शब्द०)	चरणचंद्रिका
चरण० बानी	चरणदास की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
चाँदनी०	चाँदनी रात और अजगर, उपेंद्रनाथ 'अश्क', नीलाभ प्रकाशन गृह, प्रयाग, प्र० सं०
चाणक्य नीति (शब्द०)	चाणक्य नीति
चाणक्य (शब्द०)	चाणक्य नीति दर्पण
चिंता	चिंत ; अज्ञेय, सरस्वती प्रेस, प्र० सं०, सन् १९४० ई०
चिंतामणि	चिंतामणि (२ भाग), रामचंद्र शुक्ल, इंडियन प्रेस, लि०, प्रयाग
चिंतामणि (शब्द०)	कवि चिंतामणि त्रिपाठी
चित्रा०	चित्रावली, सं० जगन्मोहन वर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
चुभते०	चुभते चौपदे, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध,' खड्गविलास प्रेस, पटना, प्र० सं०
चोखे०	चोखे चौपदे, ,, ,, ,,
चोटी०	चोटी की पकड़, 'निराला,' किताब महल इलाहाबाद, प्र० सं०
छंद०	छंदःप्रभाकर, भानु कवि, भारतजीवन प्रेस, काशी, प्र० सं०
छत्र०	छत्रप्रकाश, सं० विलियम प्राइस, एजुकेशन प्रेस, कलकत्ता, १८ ६ ई०
छिताई०	छिताई वार्ता, संपा० माताप्रसाद गुप्त, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
छीत०	छीत स्वामी, संपा० व्रजभूषण शर्मा, विद्या विभाग, अष्टछाप स्मारक समिति, कांकरोली, प्र० सं०, संवत् २०१२
जंतुप्रबंध (शब्द०)	जंतुप्रबंध ग्रंथ

जग० बानी	जगजीवन साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०९, प्र० सं०
जग० श०	जगजीवन साहब की शब्दावली
जगन्नाथ (शब्द०)	जगन्नाथप्रसाद 'भानु'
जगन्नाथ शर्मा (शब्द०)	जगन्नाथ शर्मा (लेखक)
जनमेजय०	जनमेजय का नागयज्ञ, जयशंकर 'प्रसाद' भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, पंचम सं०
जनानी०	जनानी डचोढ़ी, अनु० यशपाल, अशोक प्रकाशन, लखनऊ
जमाना (शब्द०)	जमाना अखबार (शब्द०)।
जय० प्र०	जयशंकर प्रसाद, नंददुलारे वाजपेयी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०, १९९५ वि०
जयसिह (शब्द०)	जयसिह कवि
जरासंधवध (शब्द०)	जरासंधवध नाम का काव्य
जायसी ग्रं०	जायसी ग्रंथावली, संपा० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, द्वि० सं०
जायसी ग्रं० (गुप्त)	जायसी ग्रंथावली, संपा० माताप्रसाद गुप्त, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९५१ ई०
जायसी (शब्द०)	मलिक मुहम्मद जायसी
जिप्सी	जिप्सी, इलाचंद्र जोशी, सेंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९५२ ई०
जुगलेश (शब्द०)	जुगलेश कवि
ज्ञानदान	ज्ञानदान, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ १९४२ ई०
ज्ञानरत्न	ज्ञानरत्न, दरिया साहब, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद
झरना	झरना, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, सातवाँ सं०
झाँसी०	झाँसी की रानी, वृंदावनलाल वर्मा, मयूर प्रकाशन, झाँसी, द्वि० सं०
टैगोर०	टैगोर का साहित्यदर्शन, अनु० राधेश्याम पुरोहित, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, प्र० सं०
ठंडा०	ठंडा लोहा, धर्मवीर भारती, साहित्य भवन लि०, प्रयाग, प्र० सं०, १९५२ ई०
ठाकुर०	ठाकुर शतक, संपा० काशीप्रसाद, भारतजीवन प्रेस, काशी, प्र० सं०, संवत् १९६१
ठेठ०	ठेठ हिंदी का ठाठ, अयोध्यासिंह उपाध्याय, खड्गविलास प्रेस, पटना, प्र० सं०
ढोला०	ढोला मारू रा दूहा, संपा० रामसिंह, ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० सं०
तितली	तितली, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, सातवाँ सं०
तिथितत्व (शब्द०)	तिथितत्व निर्णय
तुलसी	तुलसीदास, 'निराला', भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, चतुर्थ सं०
तुलसी ग्रं०	तुलसी ग्रंथावली, संपा० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, काशी, तृतीय सं०
तुलसी सुधाकर (शब्द०)	तुलसी सुधाकर
तुरसी श०, तुलसी श०	तुलसी साहब (हाथरसवाले) की शब्दावली, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०९,१९११
तेग अली (शब्द०)	बदमाश दर्पण के रचयिता तेग अली
तेग०, तेगबहादुर (शब्द०)	गुरु तेगबहादुर
तेज०	तेजविंदूपनिषद्
तोष (शब्द०)	कवि तोष
त्याग०	त्यागपत्र, जैनेंद्रकुमार, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई, प्र० सं०
द० सागर	दरिया सागर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९१० ई०
दक्खिनी०	दक्खिनी का गद्य और पद्य, संपा० श्रीराम शर्मा, हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद, प्र० सं०
दयानंद (शब्द०)	स्वामी दयानंद जी
दयानिधि (शब्द०)	दयानिधि कवि
दरिया० बानी	दरिया साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, द्वि० सं०
दश०	दशरूपक, संपा० डा० भोलाशंकर व्यास, चौखंभा विद्याभवन, वाराणसी, प्र० सं०
दशम० (शब्द०)	भाषा दशम स्कंध, भागवत
दहकते०	दहकते अंगारे, नरोत्तमप्रसाद नागर, अभ्युदय कार्यालय, इलाहाबाद
दादू०	श्री दादूदयाल की बानी, संपा० सुधाकर द्विवेदी, ना० प्र० सभा, वाराणसी
दादूदयाल ग्रं०	दादूदयाल ग्रंथावली
दादू० (शब्द०)	दादूदयाल
दिनेश (शब्द०)	कवि दिनेश
दास (शब्द०)	कवि भिखारीदास
दिल्ली	दिल्ली, रामधारी सिंह 'दिनकर,' उदयाचल, पटना, प्र० सं०
दिव्या	दिव्या, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४५ ई०
दीन० ग्रं०	दीनदयाल गिरि ग्रंथावली, संपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
दीनदयाल (शब्द०)	कवि दीनदयाल गिरि

दीप०	दीपशिखा, महादेवी वर्मा, किताबिस्तान, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९४२ ई०
दी० ज०, दीप ज०	दीप जलेगा, उपेंद्रनाथ 'अश्क,' नीलाभ प्रकाशन गृह, प्रयाग
दुर्गाप्रसाद मिश्र (शब्द०)	दुर्गाप्रसाद मिश्र
दुर्गाप्रसाद (शब्द०)	दुर्गाप्रसाद कवि
दुर्गेशनंदिनी (शब्द०)	दुर्गेशनंदिनी, उपन्यास, मूल लेखक बंकिमचंद्र चटर्जी (अनुवाद)
दूलह (शब्द०)	कवि दूलह
देवकीनंदन (शब्द०)	देवकीनंदन खत्री
देव० ग्रं०	देव ग्रंथावली, ना० प्र० सभा, काशी, प्र०सं०
देव (शब्द०)	देव कवि
देव (शब्द०)	देव कवि (मैनपुरीवाले)
देवदत्त (शब्द०)	देवदत्त कवि
देवीप्रसाद (शब्द०)	मुंशी देवीप्रसाद
देशी०	देशी नाममाला
दैनिकी	दैनिकी, सियारामशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०, १९९९ वि०
दो सौ बावन०	दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता (दो भाग), शुद्धाद्वैत एकेडमी, काँकरोली, प्रथम सं०
द्वंद्व०	द्वंद्वगीत, रामधारी सिंह 'दिनकर,' पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना, प्र० सं०
द्वि० अभि० ग्रं०	द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ, ना० प्र० सभा, वाराणसी
द्विज (शब्द०)	द्विज कवि
द्विजदेव (शब्द०)	अयोध्यानरेश महाराजा मानसिंह 'द्विजदेव'
द्विवेदी (शब्द०)	आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी
धरनी० बानी	धरनी साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९११ ई०
धरम० शब्दा०, धरम०	धरमदास की शब्दावली
धीर (शब्द०)	'धीर' कवि
धूप०	धूप और धूआँ, रामधारीसिंह 'दिनकर,' अजंता प्रेस, लि०, पटना ४
ध्रुव०	ध्रुवस्वामिनी, प्रसाद, भारती भंडार, प्रयाग
नंद० ग्रं०, नंददास ग्रं०	नंददास ग्रंथावली, संपा० ब्रजरत्नदास, ना०प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
नई०	नई पौध, नागार्जुन, किताब महल, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९५३
नकछेदी (शब्द०)	नकछेदी तिवारी, कवि
नट०	नटनागर विनोद, संपा० कृष्णबिहारी मिश्र, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
नदी०	नदी के द्वीप, 'अज्ञेय,' प्रगति प्रकाशन, दिल्ली, प्र० सं०, १९५१ ई०
नया०	नया साहित्य : नए प्रश्न, नंददुलारे वाजपेयी, विद्यामंदिर, वाराणसी, २०११ वि०
नरेश (शब्द०)	'नरेश' कवि
नागयज्ञ	जनमेजय का नागयज्ञ, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, सप्तम सं०
नागरी (शब्द०)	नागरीदास कवि
नागरी० उर्दू०	नागरी और उर्दू का स्वाँग अर्थात् नागरी और उर्दू का एक नाटक, पं० गौरीदत्त, देवनागरी प्रचारिणी सभा, विद्यादर्पण यंत्रालय, मेरठ, प्र० सं०
नाथ (शब्द०)	नाथ कवि
नाथसिद्ध०	नाथसिद्धों की बानियाँ, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
नानक (शब्द०)	संत नानक गुरु
नाभादास (शब्द०)	नाभादास संत
नारायणदास (शब्द०)	नारायणदास
निबंधमालादर्श (शब्द०)	निबंधमालादर्श (म० प्र० द्विवेदी), निबंधसंग्रह
निश्चलदास (शब्द०)	संत निश्चलदास जी
नील०	नीलकुसुम, रामधारीसिंह 'दिनकर', उदयाचल पटना, प्र० सं०
निहाल (शब्द०)	निहाल कवि
नूतनामृतसागर (शब्द०)	नूतनामृतसागर नाम का ग्रंथ
नूर (शब्द०)	'नूर' उपनाम के कवि
नृपशंभु (शब्द०)	शिवाजी के पुत्र महाराज शंभाजी
नेपाल०	नेपाल का इतिहास, पं० बलदेवप्रसाद, वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, १९६१ वि०
पंचवटी	पंचवटी, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०
पजनेस०	पजनेस प्रकाश, संपा० रामकृष्ण वर्मा, भारत जीवन यंत्रालय, काशी, प्र० सं०
पदमावत	पदमावत, सं० वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०
पदु०, पदुमा०	पदुमावती, संपा० सूर्यकांत शास्त्री, पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर, १९३४ ई०
पद्माकर ग्रं०	पद्माकर ग्रंथावली, संपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
पद्माकर (शब्द०)	पद्माकर भट्ट
प० रा०, प० रासो	परमाल रासो, संपा० श्यामसुंदरदास, ना०प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
परमानंद०	परमानंदसागर
परमेश (शब्द०)	परमेश कवि

परिमल	परिमल, 'निराला', गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, प्र० सं०
पर्दे०	पर्दे की रानी, इलाचंद्र जोशी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९९९ वि०
पलटू०	पलटू साहब की बानी (१-३ भाग), बेल्वेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०७ ई०
पल्लव	पल्लव, सुमित्रानंदन पंत, इंडियन प्रेस लि०, प्रयाग, प्र० सं०
पाणिनि०	पाणिनिकालीन भारतवर्ष, वासुदेवशरण अग्रवाल, मोतीलाल बनारसीदास, प्र० सं०
पारिजात०	पारिजातहरण
पार्वती	पार्वती, रामानंद तिवारी शास्त्री, भारतीनंदन, मंगलभवन, नयापुरा, कोटा (राजस्थान), प्र० सं०, १९५५ ई०
पा० सा० सि०	पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धांत, लीलाधर गुप्त, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९५२ ई०
पिंजरे०	पिंजरे की उड़ान, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४६ ई०
पीतल०	पीतल की मूर्ति (जार्ज विलियम रेनाल्ड के ब्रान्ज स्टैच्यू का अनुवाद), पाँच भाग, वर्मन प्रेस कलकत्ता, प्र० सं० सं०, १९७४ वि०
पूर्ण (शब्द०)	पूर्ण कवि
पू० म० भा०	पूर्वमध्यकालीन भारत, वासुदेव उपाध्याय भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०, २००९ वि०
पृ० रा०	पृथ्वीराज रासो (५ खंड), संपा० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, श्यामसुंदर दास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
पृ० रा० (उ०)	पृथ्वीराज रासो (४ खंड), सं० कविराज मोहनसिंह, साहित्य संस्थान, राजस्थान विश्वविद्यापीठ, उदयपुर, प्र० सं०
पोद्दार अभि० ग्रं०	पोद्दार अभिनंदन ग्रं०, संपा० वासुदेवशरण अग्रवाल, अखिल भारतीय ब्रज साहित्यमंडल, मथुरा, सं० २०१० वि०
प्र० सा०	प्रगतिशील (वादी) साहित्य
प्रताप ग्रं०	प्रतापनारायण मिश्र ग्रंथावली, संपा० विजयशंकर मल्ल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
प्रताप (शब्द०)	व्यंग्यार्थ कौमुदी के रचयिता प्रताप कवि
प्रताप सिंह (शब्द०)	प्रताप सिंह
प्रबंध०	प्रबंधपद्म, 'निराला', गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ, प्र० सं०
प्रभावती	प्रभावती, 'निराला,' सरस्वती भंडार, लखनऊ, प्र० सं०
प्राण०	प्राणसंगली, संपा० संत संपूरणसिंह, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
प्रा० भा० प०	प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास, डा० रांगेय राघव, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली, प्र० सं०, १९५३ ई०
प्रिय०	प्रियप्रवास, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', हिंदी साहित्य कुटीर, बनारस, षष्ठ सं०
प्रिया० (शब्द०)	प्रियादास
प्रेम०	प्रेमपथिक, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, तृ० सं०
प्रेम० और गोर्की	प्रेमचंद और गोर्की, संपा० शचीरानी गुर्टू, राजकमल प्रकाशन लि०, बंबई, १९५५ ई०
प्रेमघन०	प्रेमघन सर्वस्व, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, प्र० सं०, १९९६ वि०
प्रे० सा० (शब्द०)	प्रेमसागर
प्रेमांजलि	प्रेमांजलि, ठा० गोपालशरण सिंह, इंडियन प्रेस लि०, प्रयाग, १९५३ ई०
फिसाना०	फिसाना ए आजाद (चार भाग), पं० रतननाथ सरशार'. नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, चतुर्थ सं०
फूलो०	फूलो का कुर्ता, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, प्र० सं०
बंगाल०	बंगाल का काल, हरिवंश राय 'वच्चन,' भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९४६ ई०
बंदन०	बंदनवार, देवेंद्र सत्यार्थी, प्रगति प्रकाशन, दिल्ली, १९४९ ई०
बद०	बदमाश दर्पण, तेगअली, भारतजीवन प्रेस, बनारस, प्र० सं०
बलबीर (शब्द०)	बलबीर कवि
बलभद्र (शब्द०)	बलभद्र कवि
बाँकी० ग्रं०, बाँकीदास ग्रं०	बाँकीदास ग्रथावली (तीन भाग), संपा० रामनारायण दूगड़, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
बाँगेदरा	बाँगेदरा
बापू	बापू, कवितासंग्रह, सियारामशरण गुप्त, प्र० सं०
बालकृष्ण (शब्द०)	बालकृष्ण
बालमुकुंद (शब्द०)	बालमुकुंद गुप्त
बिरहा (शब्द०)	प्रचलित बिरहा गीत
बिल्ले०	बिल्लेसुर बकरिहा, निराला, युगमंदिर, उन्नाव, प्र० सं०
बिसराम (शब्द०)	बिसराम कवि
बिहारी र०	बिहारी रत्नाकर, संपा० जगन्नाथदास 'रत्नाकर', गंगा ग्रंथगार, लखनऊ, प्र० सं०
बिहारी (शब्द०)	कवि बिहारी

बी० रासो	बीसलदेव रासो, संपा० सत्यजीवन वर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
बीसल० रास	बीसलदेव रास, संपा० माताप्रसाद गुप्त, प्र० सं०
बी० श० महा०	बीसवीं शताब्दी के महाकाव्य, डा० प्रतिपालसिंह, ओरिएंटल बुकडिपो, देहली, प्र० सं०
बुद्ध च०	बुद्धचरित, रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
बृहत्०	बृहत्संहिता
बृहत्संहिता (शब्द०)	बृहत्संहिता
बेनी (शब्द०)	कवि बेनी प्रवीन
बेला	बेला, 'निराला,' हिंदुस्तानी पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, प्र० सं०
बेलि०	बेलि क्रिसन रुक्मिणी री, संपा० ठाकुर रामसिंह, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९३१ ई०
बैताल (शब्द०)	बैताल कवि
बोधा (शब्द०)	कवि बोधा
ब्रज०	ब्रजविलास, संपा० श्रीकृष्णदास, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, तृ० सं०
ब्रज० ग्रं०	ब्रजनिधि ग्रंथावली, संपा० पुरोहित हरिनारायण शर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
ब्रजमाधुरी०	ब्रजमाधुरी सार, संपा० वियोगी हरि, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, तृ० सं०
ब्रह्म (शब्द०)	ब्रह्म कवि (बीरबल)
भक्तमाल (प्रि०)	भक्तमाल, टीका० प्रियादास, वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, १९५३ वि०
भक्तमाल (श्री०)	भक्तमाल, श्रीभक्तिसुधाबिंदु स्वाद, टीका० सीतारामशरण, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, द्वि० सं०, १९८३ वि०
भक्ति०	भक्तिसागरादि, स्वामी चरणदास, वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, संवत् १९६० वि०
भक्ति प०	भक्ति पदार्थ वर्णन, स्वामी चरणदास, वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, संवत् १९६०
भगवतरसिक (शब्द०)	भगवत रसिक
भजन (शब्द०)	भजन
भट्ट (शब्द०)	बालकृष्ण भट्ट
भस्मावृत०	भस्मावृत चिनगारी, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४६ ई०
भा० इ० रू०	भारतीय इतिहास की रूपरेखा, जयचंद्र विद्यालंकार, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९३३ वि०
भा० प्रा० लि०	भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, इतिहास कार्यालय, राजमेवाड़, प्र० सं०, १९५१ वि०

भारत०	भारतभारती, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्यसदन, चिरगाँव, झाँसी, नवम सं०
भा० भू०, भारत० नि०	भारत भूमि और उसके निवासी, जयचंद्र विद्यालंकार, रत्नाश्रम, आगरा, द्वि० सं०, १९८७ वि०
भारतीय०	भारतीय राज्य और शासनविधान
भारतेंदु ग्रं०	भारतेंदु ग्रंथावली (४ भाग), संपा० ब्रजरत्नदास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
भा० सैन्य०	भारत का सैन्य इतिहास, सर जदुनाथ सरकार, अनु० सुशील त्रिवेदी, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, प्र० सं०
भा० शिक्षा	भारतीय शिक्षा, राजेंद्रप्रसाद, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली, १९५३ ई०
भाषा शि०	भाषाशिक्षण, पं० सीताराम चतुर्वेदी
भिखारी ग्रं०	भिखारीदास ग्रंथावली (दो भाग), संपा० प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, काशी
भीखा श०,	भीखा शब्दावली प्र० सं०
भुवनेश (शब्द०)	भुवनेश कवि
भूधर (शब्द०)	भूधर कवि
भूपति (शब्द०)	भूपति कवि
भूमि०	भूमि की अनुभूति (कवितासंग्रह)
भूषण ग्रं०	भूषण ग्रंथावली, संपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, साहित्य सेवक कार्यालय, काशी, प्र० सं०
भूषण (शब्द०)	कवि भूषण त्रिपाठी
भोज० भा० सा०	भोजपुरी भाषा और साहित्य, डा० उदयनारायण तिवारी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, प्र०सं०
मतपरीक्षा (शब्द०)	मतपरीक्षा (पुस्तक)
मति० ग्रं०	मतिराम ग्रंथावली, संपा० कृष्णबिहारी मिश्र, गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ, द्वि० सं०
मतिराम (शब्द०)	कवि मतिराम त्रिपाठी
मधु०	मधुकलश, हरिवंशराय 'बच्चन,' सुषमा निकुंज, इलाहाबाद, द्वि० सं०, १९३९ ई०
मधुज्वाल	मधुज्वाल, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वि० सं०, १९३९ ई०
मधु मा०	मधुमालती वार्ता, संपा० माताप्रसाद गुप्त, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
मधुशाला	मधुशाला, हरिवंश राय 'बच्चन,' सुषमा निकुंज, इलाहाबाद, प्र० सं०
मधुसूदन् (शब्द०)	मधुसूदनदास कवि
मनविरक्त०	मनविरक्तकरन गुटका सार (चरणदास)
मनु०	मनुस्मृति
मन्नालाल (शब्द०)	कवि मन्नालाल
मलूक० बानी	मलूकदास की बानी, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग

मलूक० (शब्द०)	मलूकदास
महा०	महाराणा का महत्व, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ सं०
महावीरप्रसाद (शब्द०)	पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी
महाभारत (शब्द०)	महाभारत
महाराणा प्रताप (शब्द०)	महाराणा प्रताप, ग्रंथ
माधव०	माधवनिदान, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, चतुर्थ सं०
माधवानल०	माधवानल कामकंदला, बोधा कवि, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, प्र० सं०, १८९१ ई०
मान०	मानसरोवर, प्रेमचंद, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद
मानव	मानव, कवितासंकलन, भगवतीचरण वर्मा
मानव०	मानवसमाज, राहुल सांकृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद, द्वि० सं०
मानस	रामचरितमानस, संपा० शंभुनारायण चौबे, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
मा० स०, मा० स० रू०	मानवसमाज या मानव समाज की रूपरेखा
मिट्टी०	मिट्टी और फूल, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९९९ वि०
मिलन०	मिलनयामिनी, हरिवंश राय 'बच्चन,' भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्र० सं०, १९५० ई०
मीरा (शब्द०)	भक्त मीरा बाई
मीर हसन (शब्द०)	मीर हसन
मुंशी अभि० ग्रं०	मुंशी अभिनंदन ग्रंथ, संपा० डा० विश्वनाथप्रसाद, हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय, आगरा
मुकुंदलाल (शब्द०)	मुकुंदलाल कवि
मुबारक (शब्द०)	मुबारक कवि
मुरारिदान (शब्द०)	कवि मुरारिदान
मृग०	मृगनयनी, वृंदावनलाल वर्मा, मयूर प्रकाशन, झाँसी
मैला०	मैला आँचल, फणीश्वरनाथ 'रेणु,' समता प्रकाशन, पटना–४, प्र० सं०
मोहन०	मोहनविनोद, सं० कृष्णविहारी मिश्र, इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, प्र० सं०
यमुना (शब्द०)	यमुनाशंकर
यशो०	यशोधरा, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०
यामा	यामा, महादेवी वर्मा, किताबिस्तान, प्रयाग, प्र० सं०
युग०	युगवाणी, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०
युगपथ	युगपथ „ „ „
युगलेश (शब्द०)	कवि युगलेश
युगांत	युगांत, सुमित्रानंदन पंत, इंद्र प्रिंटिंग प्रेस, अल्मोड़ा, प्र० सं०
योग०	योगवाशिष्ठ (वैराग्य मुमुक्षु प्रकरण), गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास, लक्ष्मी वेंकटेश्वर छापाखाना, कल्याण, बंबई, सं० १९६७ वि०
रंगभूमि	रंगभूमि, प्रेमचंद, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, प्र० सं०, १९८१ वि०
रघु० रू०	रघुनाथ रूपक गीतांरो, संपा० महताबचंद्र खारैड़, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
रघु० दा०, रघुनाथदास (शब्द०)	रघुनाथदास
रघुनाथ (शब्द०)	रघुनाथ
रघुराज, रघुराजसिंह (शब्द०)	रीवाँनरेश महाराज रघुराजसिंह, सं० १८८०-१९३६ वि०
रजत०	रजतशिखर, सुमित्रानंदन पंत, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, २००८ वि०
रज्जब०	रज्जब जी की बानी, ज्ञानसागर प्रेस, बंबई, १९७५ वि०
रतन०	रतनहजारा, संपा० श्री जगन्नाथप्रसाद श्रीवास्तव, भारतजीवन प्रेस, काशी, प्र० सं०, १९८२ ई०
रति०	रतिनाथ की चाची, नागार्जुन, किताब महल, इलाहाबाद, द्वि० सं०, १९५३ ई०
रत्न० (शब्द०)	रत्नसार
रत्नपरीक्षा (शब्द०)	रत्नपरीक्षा
रत्नाकर	रत्नाकर [दो भाग], ना० प्र० सभा, काशी, चतुर्थ, द्वि० और प्रथम सं० १९८०
रत्नावली (शब्द०)	रत्नावली नाटिका
रश्मि०	रश्मिबंध, सुमित्रानंदन पंत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
रस०	रसमीमांसा, संपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० सं०
रस क०	रसकलश, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध,' हिंदी साहित्य कुटीर, बनारस, तृतीय सं०
रसखान०	रसखान और घनानंद, संपा० अमीरसिंह, ना० प्र० सभा, द्वि० सं०
रसखान (शब्द०)	सैयद इब्राहिम रसखान
रस र०, रसरतन	रसरतन, संपा० शिवप्रसाद सिंह, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
रसनिधि (शब्द०)	राजा पृथ्वीसिंह
रसिया (शब्द०)	रसिया कवि ? रसिया गीत ?
रहिमन (शब्द०)	रहीम कवि

रहीम (शब्द०)	अब्दुर्रहीम खानखाना
रहीम०	रहीम रत्नावली
राज० इति०	राजपूताने का इतिहास, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, अजमेर, १९९७ वि०, प्र० सं०
राज०	राजतरंगिणी
रा० रू०	राजरूपक, संपा० पं० रामकर्ण, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
रा० वि०	राजविलास, संपा० मोतीलाल मेनारिया, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
राजनीतिक०	राजनीतिक विचारधाराएँ
राज्यश्री	राज्यश्री, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, सातवाँ सं०
राम०	रामचरितमानस, संपा० विजयानंद त्रिपाठी, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं० १९७३ वि०
राम, रामकवि (शब्द०)	राम कवि
रामकृष्ण (शब्द०)	रामकृष्ण
राम० चं०	संक्षिप्त रामचंद्रिका, संपा० लाला भगवानदीन, ना० प्र० सभा, वाराणसी, षष्ठ सं०
राम० धर्म०	रामस्नेह धर्मप्रकाश, संपा० मालचंद्र जी शर्मा, चौकसराम जी (सिंहथल), बड़ा रामद्वारा, बीकानेर ।
राम० धर्म० सं०	रामस्नेह धर्मसंग्रह, संपा० मालचंद्र जी शर्मा, चौकसराम जी (सिंहथल), बड़ा रामद्वारा, बीकानेर ।
रामरसिका०	रामरसिकावली (भक्तमाल)
रामसहाय (शब्द०)	रामसहाय कवि कृत सतसई
रामानंद०	रामानंद की हिंदी रचनाएँ, संपा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, ना० प्र० सभा, प्र० सं०
रामाश्व०	रामाश्वमेध, ग्रंथकार, मन्नालाल द्विज, त्रिपुरा भैरवी, वाराणसी, १९३९ वि०
रिखिनाथ (शब्द०)	कवि रिखिनाथ
रेणुका	रेणुका, रामधारी सिंह 'दिनकर,' पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना, प्र० सं०
रै० बानी	रैदास बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद
लक्ष्मणसिंह (शब्द०)	राजा लक्ष्मणसिंह
लल्लू, लल्लूलाल (शब्द०)	लल्लूलाल
लवकुश चरित्र (शब्द०)	लवकुश चरित्र
लहर	लहर, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पंचम सं०
लाल (शब्द०)	लाल कवि (छत्रप्रकाशवाले)
वर्ण०, वर्णरत्नाकर	वर्णरत्नाकर
वाल्मीकीय० (शब्द०)	वाल्मीकीय रामायण

विद्यापति	विद्यापति, संपा० खगेंद्रनाथ मित्र, यूनाइटेड प्रेस, लि०, पटना
विनय०	विनयपत्रिका, टीका० पं० रामेश्वर भट्ट, इंडियन प्रेस लि०, प्रयाग, तृ० सं०
विशाख	विशाख, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, तृ० सं०
विश्राम (शब्द०)	विश्रामसागर
विश्वनाथसिंह (शब्द०)	रीवाँ नरेश महाराज विश्वनाथसिंह जी (सं० १८४६-१९११ वि०)
विश्वप्रिया	विश्वप्रिया, अज्ञेय
विश्वास (शब्द०)	विश्वास ?
वीणा	वीणा, सुमित्रानंदन पंत, इंडियन प्रेस, लि० प्रयाग, द्वि० सं०
वेणी (शब्द०)	वेणी (या बेनी) कवि
वेनिस (शब्द०)	वेनिस का बाँका
वैशाली०, वै० न०	वैशाली की नगरवधू, चतुरसेन शास्त्री, गौतम बुकडिपो, दिल्ली, प्र० सं०
वो दुनिया	वो दुनिया, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४१ ई०
व्यंग्यार्थ०	व्यंग्यार्थ कौमुदी प्रताप कवि कृत, बाबू रामकृष्ण वर्मा, भारत जीवन प्रेस, काशी, प्र० सं०, संवत् १९५७
व्यंग्यार्थ (शब्द०)	व्यंग्यार्थ कौमुदी
व्यास (शब्द०)	अंबिकादत्त व्यास
ब्रज (शब्द०)	ब्रज विलास
शं० दि० (शब्द०)	शंकरदिग्विजय
शंकर (शब्द०)	शंकर कवि
शंकर०	शंकरसर्वस्व, संपा० हरिशंकर शर्मा, गयाप्रसाद एँड संस, आगरा, प्र० सं०
शंभु (शब्द०)	शंभु कवि, शिवाजी के पुत्र संभाजी
शकुं०	शकुंतला, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी
शकुंतला	शकुंतला नाटक, अनु० राजा लक्ष्मणसिंह, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, चतु० सं०
शब्दावली (शब्द०)	शब्दावली ग्रंथ
शाहजहाँनामा (शब्द०)	शाहजहाँनामा
शार्ङ्गधर सं०	शार्ङ्गधर संहिता, टी० सीताराम शास्त्री, मुंबई वैभव मुद्रणालय, संवत् १९७१
शिखर०	शिखर वंशोत्पत्ति, संपा० पुरोहित हरिनारायण शर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०, १९८५
शिरमौर (शब्द०)	कवि शिरमौर
शिवप्रसाद (शब्द०)	राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद

शिवराम (शब्द०)	शिवराम कवि
शिवशंभु (शब्द०)	शिवशंभु का चिट्ठा
शुक्ल० अभि० ग्रं०	शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ, मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य संमेलन
शृं० सत० (शब्द०)	शृंगार सतसई
शृंगार सुधाकर(शब्द०)	शृंगार सुधाकर
शेखर (शब्द०)	शेखर कवि
शेर०	शेर ओ सुखन, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्र.सं.
शैली	शैली, पं० करुणापति त्रिपाठी, प्र० सं०
श्यामबिहारी (शब्द०)	श्यामबिहारी मिश्र ('मिश्रबंधु')
श्यामा०	श्यामास्वप्न, संपा० डा० कृष्णलाल, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
श्रद्धानंद (शब्द०)	स्वामी श्रद्धानंद
श्रद्धाराम (शब्द०)	श्रद्धाराम फुल्लौरी
श्रीकृष्णसंदेश (शब्द०)	श्रीकृष्णसंदेश
श्रीधर (शब्द०)	श्रीधर कवि
श्रीधर पाठक (शब्द०)	श्रीधर पाठक
श्रीनिवास ग्रं०	श्रीनिवास ग्रंथावली, संपा० डा० कृष्णलाल, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
श्रीपति (शब्द०)	श्रीपति कवि
संतति०	चंद्रकांता संतति, देवकीनंदन खत्री, वाराणसी
संचिता	संचिता (कवितासंग्रह)
संत तुरसी०	संत तुरसीदास की शब्दावली, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।
सं० दरिया, संत० दरिया	संत कवि दरिया, सं० धर्मेंद्र ब्रह्मचारी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, प्र० सं०
सं० दा० (शब्द०)	संगीत दामोदर
सं० शा० (शब्द०)	संगीत शाकुंतल
संत र०	संत रविदास और उनका काव्य, स्वामी रामानंद शास्त्री, भारतीय रविदास सेवासंघ, हरिद्वार, प्र० सं०
संतवाणी०, संत०सार०	संतवाणी सार संग्रह (२ भाग), बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद
संन्यासी	संन्यासी, इलाचंद्र जोशी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
संपूर्णा० अभि० ग्रं०	संपूर्णानंद अभिनंदन ग्रंथ, संपा० आचार्य नरेंद्रदेव, ना० प्र० सभा, वाराणसी
स० दर्शन	समीक्षादर्शन, रामलाल सिंह, इंडियन प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
सत्य०	कविरत्न सत्यनारायण जी की जीवनी, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, द्वि० सं०
सत्यार्थप्रकाश (शब्द०)	सत्यार्थप्रकाश, स्वामी दयानंद
सबल (शब्द०)	सबलसिंह चौहान (महाभारत)
सभा० वि० (शब्द०)	सभाविलास
सरस्वती (शब्द०)	सरस्वती, मासिक पत्रिका
सर्पाघातचिकित्सा(शब्द०)	सर्पाघात चिकित्सा
स० शास्त्र	समीक्षाशास्त्र, पं० सीताराम चतुर्वेदी, अखिल भारतीय विक्रम परिषद्, काशी, प्र० सं०
स० सप्तक	सतसई सप्तक, संपा० श्यामसुंदरदास, हिंदुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, प्र० सं०
सरलाबाई (शब्द०)	सरलाबाई, कवयित्री।
सहजो०	सहजो बाई की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०८ वि०
साकेत	साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्यसदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० सं०
सागरिका	सागरिका, ठा० गोपालशरण सिंह, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
सात सतक	हस्तलेख, छत्रपति संभा जी, उपनाम शंभु कवि
साम०	सामधेनी, रामधारी सिंह 'दिनकर,' उदयाचल, पटना, द्वि० सं०
सा० दर्पण	साहित्यदर्पण, संपा० शालिग्राम शास्त्री, श्री मृत्युंजय औषधालय, लखनऊ, प्र० सं०
सा० द०	साहित्य दर्शन
सा० लहरी	साहित्यलहरी, संपा० रामलोचनशरण बिहारी, पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना
सा० समीक्षा	साहित्य समीक्षा, कालिदास कपूर, इंडियन प्रेस, प्रयाग
साहित्य०	साहित्यालोचन, श्री श्यामसुंदर दास, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद
सिद्धांतसंग्रह (शब्द०)	सिद्धांतसंग्रह
सीतल (शब्द०)	कवि सीतल
सीताराम (शब्द०)	सीताराम कवि
सुंदर० ग्रं०	सुंदरदास ग्रंथावली (दो भाग), संपा० हरिनारायण शर्मा, राजस्थान रिसर्च सोसायटी, कलकत्ता
सुंदरीसिंदूर (शब्द०)	सुंदरी सिंदूर, कवितासंग्रह
सुकवि (शब्द०)	सुकवि उपनाम के कवि
सुखदा	सुखदा, जैनेंद्रकुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, प्र० सं०
सुखदेव (शब्द०)	कवि सुखदेव
सुधाकर (शब्द०)	महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी
सुजान०	सुजानचरित (सूदनकृत), संपा० राधाकृष्ण, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, प्र० सं०

सुधानिधि	कवि तोष और सुधानिधि, सं० सुरेंद्र माथुर, ना० प्र० स० काशी, प्र० सं०
सुनीता	सुनीता, जैनेंद्रकुमार, साहित्यमंडल, बाजार सीताराम, दिल्ली, प्र० सं०
सुंदर (शब्द०)	सुंदर कवि, सुंदरदास जी
सूत०	सूत की माला, पंत और बच्चन, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०
सूदन (शब्द०)	सूदन कवि (भरतपुरवाले)
सूर०	सूरसागर (दो भाग), ना०प्र० सभा, द्वितीय सं०
सूर० (शब्द०)	सूरदास
सूर० (राधा०)	सूरसागर, संपा० राधाकृष्णदास, वेंकटेश्वर प्रेस, प्र० सं०
सेवक (शब्द०)	'सेवक' कवि
सेवक श्याम (शब्द०)	सेवक श्याम कवि
सेवासदन	सेवासदन, प्रेमचंद, हिंदी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता, द्वि० सं०
सैर कु०	सैर कुहसार, पं० रतननाथ 'सरशार', नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, च० सं०, १९३४ ई०
सौ अजान० (शब्द०)	सौ अजान और एक सुजान, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
स्कंद०	स्कंदगुप्त, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
स्वर्ण०	स्वर्णकिरण, सुमित्रानंदन पंत, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
स्वाधीनता (शब्द०)	स्वाधीनता
स्वामी रा०	स्वामी रामकृष्ण
स्वामी राम कृष्ण (शब्द०)	
स्वामी हरिदास (शब्द०)	स्वामी हरिदास
हंस०	हंसमाला, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० सं०
हंसराज (शब्द०)	हंसराज
हकायके०	हकायके हिंदी, ले० मीर अब्दुल वाहिद, प्र० संपा० 'रुद्र' काशिकेय, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
हनुमन्नाटक (शब्द०)	हनुमन्नाटक
हनुमान, हनुमान कवि (शब्द०)	हनुमान कवि
हम्मीर०	हम्मीरहठ, संपा० जगन्नाथदास 'रत्नाकर,' इंडियन प्रेस लि०, प्रयाग
ह० रासो०	हम्मीर रासो, संपा० डा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
हरिजन (शब्द०)	कवि हरिजन
हरिदास (शब्द०)	स्वामी हरिदास
हरिश्चंद्र (शब्द०)	भारतेंदु हरिश्चंद्र
हरिसेवक (शब्द०)	हरिसेवक कवि
हरी घास०	हरी घास पर क्षण भर, अज्ञेय, प्रगति प्रकाशन, नई दिल्ली, १९४९ ई०
हर्ष०	हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, वासुदेवशरण अग्रवाल, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, प्र० सं०, १९५३ ई०
हालाहल	हालाहल, हरिवंशराय बच्चन, भारती भंडार, प्रयाग, १९४६ ई०
हिंदी आ०	हिंदी आलोचना
हिंदी का०	हिंदी काव्य की अंतश्चेतना
हिं० का० प्र०	हिंदी काव्य पर आंग्ल प्रभाव, रवींद्रसहाय वर्मा, पद्मजा प्रकाशन, कानपुर, प्र० सं०
हिं० क० का०	हिंदी कवि और काव्य, गणेशप्रसाद द्विवेदी हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०
हिं० ना०	हिंदी के नाटक
हिंदी प्रदीप (शब्द०)	हिंदी प्रदीप
हिंदी प्रेमगाथा०	हिंदी प्रेमगाथा काव्यसंग्रह, गणेशप्रसाद द्विवेदी, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, १९३९ ई०
हिंदी प्रेमा०	हिंदी प्रेमाख्यानक काव्य, डा० कमल कुलश्रेष्ठ, चौधरी मानसिंह प्रकाशन, कचहरी रोड
हिं० प्र० चि०	हिंदी काव्य में प्रकृतिचित्रण, किरणकुमारी गुप्त, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग
हिं० सा० भू०	हिंदी साहित्य की भूमिका, हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई, तृ० सं०, १९४८
हिंदु० सभ्यता	हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता, बेनीप्रसाद, हिंदुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, प्र० सं०
हित हरिवंश (शब्द०)	वैष्णव संत हित हरिवंश दास
हिम कि०	हिमकिरीटिनी, माखनलाल चतुर्वेदी, सरस्वती प्रकाशन मंदिर, इलाहाबाद, तृ० सं०
हिम त०	हिमतरंगिणी, माखनलाल चतुर्वेदी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०
हिम्मत०	हिम्मतबहादुर विरुदावली, लाला भगवानदीन, ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० सं०
हिल्लोल	हिल्लोल, शिवमंगल सिंह 'सुमन', सरस्वती प्रेस, बनारस, द्वि० सं०
हुमायूँ०	हुमायूँनामा, अनु० ब्रजरत्नदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, द्वि० सं०
हृदय०	हृदयतरंग, सत्यनारायण कविरत्न
हृदयराम (शब्द०)	कवि हृदयराम

[व्याकरण, व्युत्पत्ति आदि के संकेताक्षरों का विवरण]

अं०	अंग्रेजी
अ०	अरबी
अक० रूप	अकर्मक रूप
अनु०	अनुकरण शब्द
अनुध्व०	अनुध्वन्यात्मक
अनु० मू०	अनुकरणार्थमूलक
अनुर०	अनुरणनात्मक रूप
अप०	अपभ्रंश
अर्ध मा०	अर्धमागधी
अल्पा०	अल्पार्थक
अव०	अवधी
अव्य०	अव्यय
इता०	इतालवी
इब०	इबरानी
उ०	उदाहरण
उच्चा०	उच्चारण सुविधार्थ
उड़ि०	उड़िया
उप०	उपसर्ग
उभय०	उभयलिंग
एकव०	एकवचन
कनाड़ी	कन्नड़ भाषा
कहावत	कहावत
काव्यशास्त्र	काव्यशास्त्र
[को०], (को०)	अन्य कोश
*	संभाव्य व्युत्पत्ति
?	अनिश्चित व्युत्पत्ति
कोंक०	कोंकणी
क्रि०	क्रिया
क्रि० अ०	क्रिया अकर्मक
क्रि० प्र०	क्रिया प्रयोग
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण
क्रि० स०	क्रिया सकर्मक
क्व०	क्वचित्
गीत	लोकगीत
गुज०	गुजराती
ची०	चीनी भाषा
छं०	छंद
जापा०	जापानी
जावा०	जावा द्वीप की भाषा
जी०, जीवन०	जीवनचरित
ज्या०	ज्यामिति
ज्यो०	ज्योतिष
डिं०	डिंगल

त०	तमिल
तर्क०	तर्कशास्त्र
ति०	तिब्बती भाषा
तु०	तुर्की
दू०	दूहा या दूहला
तुल०	तुलनीय
दे०	देखिए
देश०	देशज
देशी	देशी
धर्म०	धर्मशास्त्र
नाम०	नामधातु
ना० धा०	नामधातुज क्रिया
नामिक धातु	नामिक धातु
ने०	नेपाली
न्याय०	न्याय या तर्कशास्त्र
पं०	पंजाबी
परि०	परिशिष्ट
पा०	पाली
पुं०	पुंलिंग
पुर्त०	पुर्तगाली
पु० हिं०	पुरानी हिंदी
पू० हिं०	पूर्वी हिंदी
पृ०	पृष्ठ
प्र०	प्रकाशकीय या प्रस्तावना
प्रत्य०	प्रत्यय
प्रा०	प्राकृत
प्रे०	प्रेरणार्थक रूप
फ०	फराँसीसी भाषा
फकीर०	फकीरों की बोली
फा०	फारसी
बँग०	बँगला भाषा
बरमी०	बरमी भाषा
बहुव०	बहुवचन
बुं० खं०	बुंदेलखंड की बोली
बुंदेल०	,, ,,
बोल०	बोलचाल
भाव०	भाववाचक संज्ञा
भू०	भूमिका
भू० कृ०	भूत कृदंत
मरा०	मराठी
मल०	मलयाली या मलयालम भाषा
मला०	मलाया की भाषा
मि०	मिलाइए
मुसल०	मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त
मुहा०	मुहावरा

यू०	यूनानी	संयो० क्रि०	संयोजक क्रिया
यौ०	यौगिक	स०	सकर्मक
राज०	राजस्थानी	सक० रूप	सकर्मक रूप
लश०	लशकरी	सधु०	सधुक्कड़ी भाषा
ला०	लाक्षणिक	सर्व०	सर्वनाम
लै०	लैटिन	सिंहली	सिंहली भाषा
व० कृ०	वर्तमान कृदंत	स्पे०	स्पेनी भाषा
वर्ण वि०	वर्णविपर्यय	स्त्रि०	स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त
वि०	विशेषण	स्त्री०	स्त्रीलिंग
वि० द्वि० मू०	विषमद्विरुक्तिमूलक	हि०	हिंदी
वै०	वैदिक	(पु)	काव्यप्रयोग, पुरानी हिंदी
व्या०	व्याकरण	>	व्युत्पन्न
व्यंग्य	व्यंग्यार्थ में प्रयुक्त	†	प्रांतीय प्रयोग
(शब्द०)	हिंदी शब्दसागर प्र० सं०	‡	ग्राम्य प्रयोग
सं०	संस्कृत	√	धातुचिह्न
संयो०	संयोजक अव्यय		

हिंदी शब्दसागर

व

व—हिंदी या संस्कृत वर्णमाला का उन्नीसवाँ व्यंजन वर्ण, जो उकार का विकार और अंतस्थ अर्धव्यंजन माना जाता है। इसका उच्चारणस्थान दंत्योष्ठ है. अर्थात् दांत और ओठ से इसका उच्चारण होता है। प्रयत्न ईषत्स्पृष्ट होता है, अर्थात् उच्चारण के समय दांतों का ओठ से कुछ स्पर्श होता है। हिंदी में इस वर्ण का उच्चारण अधिकतर केवल ओठ से होता है; केवल संस्कृताभ्यासी लोग ही शुद्ध दंत्योष्ठ उच्चारण करते हैं।

वंक^1—वि० [सं० वङ्क या बक्र] कुछ झुका हुआ। टेढ़ा। वक्र।

वंक^2—संज्ञा पुं० १. नदी का मोड़। वंकर। २. टेढ़ापन। कुटिलता (को०)। ३. पल्ययन। दे० 'वंका'। (को०)। ४. आवारा व्यक्ति (को०)।

वंकट—वि० [सं० वङ्क] १. टेढ़ा। बाँका। २. कुटिल। जो सीधा न हो। ३. विकट। दुर्गम। उ०—रही है घूँघटपट की ओट। मनौ कियो फिर मान मवासो मन्मथ वंकट कोट।—सूर (शब्द०)।

वंकटक—संज्ञा पुं० [सं० वङ्कटक] एक पर्वत जिसे वंकाटक भी कहा गया है।

वंकनाल—संज्ञा पुं० [सं० वङ्कनाल] शरीर की एक नाड़ी का नाम। सुषुम्ना।

वंकनाली—संख्या स्त्री० [हिं० वंक+नाड़ी] साधुओं की बोलचाल में सुषुम्ना नामक नाड़ी, जो मध्य में मानी गई है। उ०—वंकनालि सदा रस पीवै, तब यहु मनुवाँ कहीं न जाय। बिगसै कँवल प्रेम जब उपजै ब्रह्म जीव को करैं सहाय।—दादू (शब्द०)।

वंकर—संज्ञा पुं० [सं० वङ्कर] वह स्थान जहाँ से नदी मुड़ी हो। नदी का मोड़।

बंकसेन—संज्ञा पुं० [सं० वङ्कसेन] अगस्त का वृक्ष।

वंका—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्का] चारजामे की अगली मेंड़ी।

वंकाटक—संज्ञा पुं० [सं० वङ्काटक] एक पर्वत का नाम।

वंकाला—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्काला] राजतरंगिणी के अनुसार बंगाल की प्राचीन राजधानी का नाम जिसके कारण उस देश का बंगाल नाम पड़ा। (राज०)।

वंकिणी—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्किणी] एक क्षुप का नाम।

वंकिम—वि० [सं० वङ्किम] ईषत् वक्र। कुछ टेढ़ा या झुका हुआ। बाँका। उ० निद्रालस वंकिम विशाल नेत्र मूँदे रही। किंवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिए। - अपरा, पृ० ५।

वंकिल—संज्ञा पुं० [सं० वङ्किल] कंटक। काँटा।

वंक्य—वि० [सं० वङ्क्य] टेढ़ा। लचीला। वक्र [को०]।

वंक्रा—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्क्रा] दे० 'वंक्रि'।

वंक्रि—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्क्रि] १. पशुओं की पसली की हड्डी। २. काँड़ी। कड़ी। ३. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा।

वंक्षण—संज्ञा पुं० [सं० वङ्क्षण] मूत्राशय और जंघास्थल का संधिस्थान। वह स्थान जो पेड़ू और जाँघ के बीच में है और जहाँ 'वर्ध्म' नामक रोग की गाँठ निकला करती है।

वंक्षु—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्क्षु] १. आक्सस नदी जो हिंदूकुश पर्वत से निकलकर मध्य एशिया में बहती हुई आरल समुद्र में गिरती है।

विशेष—इस नदी का नाम वेदों में कई जगह आया है। पुराणों में यह केतुमाल वर्ष की एक नदी कही गई है। महाभारत में इसकी गणना पवित्र नदियों में की गई है। रघुवंश की प्राचीन प्रतियों में भी रघु के दिग्विजय के अंतर्गत इस नदी का उल्लेख है और इसके किनारे हूणों की बस्ती कही गई है।

२. गंगा की एक छोटी सी शाखा (को०)।

वंग—संज्ञा पुं० [सं० वङ्ग] १. मगध या बिहार के पूर्व पड़नेवाला प्रदेश। बंगाल।

विशेष—ऋग्वेद में सबसे पूर्व पड़नेवाले जिस प्रदेश का उल्लेख है, वह 'कीकट' (मगध) है। अथर्व संहिता में 'अंग' देश का भी नाम मिलता है। संहिताओं में 'वंग' नाम नहीं मिलता। ऐतरेय आरण्यक में ही सबसे पहले वंग देश की चर्चा आई है; और वहाँ के निवासियों की दुर्बलता और दुराहार आदि का उल्लेख पाया जाता है। बात यह है कि संहिता काल में कीकट और वंग देश में अनार्यों का ही निवास था। आर्य लोग वहाँ तक न पहुँचे थे। बौधायन धर्मसूत्र में लिखा है कि वंग, कलिंग, पुंड्र आदि देशों में जानेवाले को लौटने पर पुनस्तोम यज्ञ करना चाहिए। मनुस्मृति में तीर्थयात्रा के लिये जाने की आज्ञा है। इससे जान पड़ता है कि उस समय आर्य वहाँ बस गए थे। शतपथ ब्राह्मण

के समय में मिथिला में विदेह वंश प्रतिष्ठित था। रामायण में प्राग्‌ज्योतिःपुर (रंगपुर से लेकर आसाम तक प्रागज्योतिष प्रदेश कहलाता था) की स्थापना का उल्लेख है।

महाभारत (आदिपर्व) में लिखा है कि क्षत्रिय राजा बलि को कोई संतति न हुई। तब उन्होंने अंधे दीर्घतमा ऋषि द्वारा अपनी रानी के गर्भ से पाँच पुत्र उत्पन्न कराए, जिनके नाम हुए—अंग, वंग, कलिंग, पुंड्र और सुह्य। इन्हीं के नाम पर देशों के नाम पड़े।

२. राँगा नाम की धातु। ३. राँगे का भस्म। ४. कपास। ५. बैंगन। भंटा। ६. राजा बलि का पुत्र। एक चंद्रवंशी राजा (को०)। ७. एक धातु। सीसा। सीसक।

वंगज^2—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गज] १. सिंदूर। २. पीतल।

वंगज^3—वि० १. वंगाल में उत्पन्न होनेवाला। २. बंगाली।

वंगजीवन—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गजीवन] चाँदी।

वंगन—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गन] बैंगन।

वंगमल—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गमल] सीसा नामक धातु।

विशेष—प्राचीनों की यह धारणा थी कि राँगा और सीसा दोनों एक ही धातु हैं और वे सीसे को राँगे का मल समझते थे।

वंगला—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्गला] बगाला या बंगालिका नाम की रागिनी। विशेष दे० 'वंगाली'।

वंगशुल्यज—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गशुल्यज] काँसा। कांस्य [को०]।

वंगसेन—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गसेन] लाल फूलवाला अगस्त।

वंगा—संज्ञा पुं० [सं० वङ्ग] दे० 'वंग'। उ०—तेलंगा, वंगा, चोला, कलिंगा राआ पुत्ते मंडिया।—कीर्ति०, पृ० ४८।

वंगारि—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गारि] हरताल।

वंगाल—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गाल] एक राग। दे० 'बंगाल'–२।

वंगाली—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्गाली] भैरव राग की एक रागिनी।

विशेष—यह ओड़व जाति की है और इसमें ऋषभ तथा धैवत स्वर नहीं लगते। कल्लिनाथ के मत से यह संपूर्ण जाति की है और इसमें दो बार मध्यम आता है।

वंगाष्टक—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गाष्टक] एक रसौषध जिसमें राँगा आदि आठ धातुएँ एक साथ मिलाकर फूँकी जाती हैं। यह प्रमेह रोग पर दिया जाता है।

विशेष—पारा, गंधक, लोहा, चाँदी, खपरिया, अभ्रक और ताँवा बराबर लेकर जितना सब हो, उतना राँगा लेकर सब को एक साथ मर्दन करके गजपुट द्वारा फूँकते हैं। जब भस्म हो जाता है, तब उसको वंगाष्टक कहते हैं। वंगाष्टक की मात्रा दो रत्ती है; और मधु, हलदी के चूर्ण तथा आमले के रस में इसे खाते हैं।

वंगेरिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्गेरिका] चंगेरी। डलिया। टोकरी [को०]।

वंगेरी—संज्ञा स्त्री० [सं० वङ्गेरी] चँगेरी। डलिया [को०]।

वंगेश्वर—संज्ञा पुं० [सं० वङ्गेश्वर] एक प्रसिद्ध रस।

विशेष—पारे का भस्म ८ तोला, वंग का भस्म ८ तोला, ताँबे का भस्म ३२ तोला और गंधक ३२ तोला लेकर मदार के दूध में मलकर फिर पिंडी बनाकर 'भूधर यंत्र' द्वारा फूँकते हैं। जब भस्म हो जाता है, तब उसे वंगेश्वर कहते हैं। इसकी मात्रा २ रत्ती है। इसे गुल्मोदर रोग में घी के साथ देते हैं; और ऊपर से पुनर्नवा का रस और गोमूत्र या हल्दी का रस पिलाते हैं।

वंघ—संज्ञा पुं० [सं० वङ्घ] एक वृक्ष का नाम [को०]।

वंचक^1—वि० [सं० वञ्चक] १. धूर्त। धोखेबाज। ठग। २. खल।

वंचक^2—संज्ञा पुं० १. गीदड़। २. सोंधियार। ३. चोर। ठग। ४. गृहबभ्रु। गंधमूषक (को०)।

वंचति—संज्ञा पुं० [सं० वञ्चति] अग्नि [को०]।

वंचथ—संज्ञा पुं० [सं० वञ्चथ] १. धूर्तता। छलना। २. धूर्त। छली। ३. पिक। कोकिल। ४. मरण। मृत्यु [को०]।

वंचन—संज्ञा पुं० [सं० वञ्चन] [वि० वंचित] १. धोखा देना। धूर्तता। ठगी। २. धोखा खाना। ठगा जाना। ३. भ्रांति। व्यामोह (को०)। ४. क्षति। हानि (को०)।

यौ०—वंचनचंचुता = वंचन कार्य में कुशलता। वंचनपटुता = दे० 'वंचनचंचुता। वंचनप्रवण = धोखा देने की ओर प्रवृत्त। वंचन योग = ठगी या धोखा देने का अभ्यास।

वंचना^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० वञ्चना] धोखा। जाल। फरेब। छल। वंचन।

यौ०—बंचनापंडित = कुशल धोखेबाज। वंचनापटु, वंचना-कुशल = वंचना करने में पंडित।

वंचनाⓟ^{2}—क्रि० स० [सं० वञ्चना] धोखा देना। ठगना। उ०—दंभ विलोक्यो कहल जो, दिल्ली नगरी जाइ। वंचतु जग जैसे फिरतु मो पै बरनि न जाइ।—केशव (शब्द०)।

वंचनाⓟ^{3}—क्रि० स० [सं० वाचन] पढ़ना। बाँचना।

वंचनीय—वि० [सं०] १. त्याज्य। परित्याग करने लायक। छोड़ने के काबिल। २. भोला भाला। जिसे धोखा दिया जा सके। जो ठगा जा सके [को०]।

वंचयिता—वि० [सं० वञ्चयितृ] वंचना करनेवाला। दे० 'वंचक' [को०]।

वंचित—वि० [सं० वञ्चित] १. धोखे में आया हुआ। जो ठगा गया हो। २. अलग किया हुआ। ३. विमुख। अलग। हीन. रहित। जैसे—मैं इस कृपा से वंचित रखा गया हूँ।

वंचिता—संज्ञा स्त्री० [सं० वञ्चिता] प्रहेलिका। गूढ़ प्रश्न। पहेली [को०]।

वंचुक^1—वि० [सं० वञ्चुक] [वि० स्त्री० वंचुकी] धूर्त। ठग। चालाक। बेईमान [को०]।

वंचुक^2—संज्ञा पुं० गीदड़। स्यार [को०]।

वंचुलक—संज्ञा पुं० [सं० वञ्चुलक] १. एक प्रकार का वृक्ष। दे० 'वंजुल'। २. एक पक्षी [को०]।

वंछित—वि० [सं० वाञ्छित] दे० 'वांछित'। उ०—कितहूँ न भयौ वंछित कछू अब तौ तृष्णा मोहि तजि।—ब्रज० ग्रं०, पृ० १०७।

वंजुल—संज्ञा पुं० [सं० वञ्जुल] १. बेत। उ०—मंजु वंजुल की लता और नील निचुल के निकुंज जिनके पता ऐसे सघन जो सूर्य की

किरनों को भी नहीं निकलने देते ।—श्यामा०, पृ० ४१ । २. तिनिश का पेड़ । ३. अशोक का पेड़ । ४. स्थलपद्म । ५. एक प्रकार के पक्षी का नाम ।

यौ०—वंजुलद्रुम = अशोक । वंजुलप्रिय = वेतस ।

वंजुला—संज्ञा स्त्री० [सं० वञ्जुला] १. अधिक दूध देनेवाली गौ । दुधारी गाय । दुधारू गाय । २. एक नदी का नाम जो मत्स्यपुराणानुसार सह्याद्रि पर्वत से निकलती है ।

वंजुलावती—संज्ञा स्त्री० [सं० वञ्जुलावती] एक नदी का नाम जो दक्षिण के एक पर्वत से निकलती है ।

वंट¹—संज्ञा पुं० [सं० वण्ट] १. भाग । बाँट । २. हँसिया आदि की मूठ । बेंट । वह । ३. वह जिसकी पूँछ न हो या कट गई हो । लँड़ूरा । बाँड़ा । ४. अविवाहित पुरुष ।

वंट²—वि० १. बाँड़ा । लँडूरा । २. अविवाहित [को०] ।

वंटक¹—संज्ञा पुं० [सं० वण्टक] भाग । बाँट ।

वंटक²—वि० बाँटनेवाला । विभाजक ।

वंटन—संज्ञा पुं० [सं० वण्टन] अंश या भाग लगाना । विभक्त करना । बाँटना [को०] ।

वंटनीय—वि० [सं० वण्टनीय] बाँटने लायक । वंटन के योग्य ।

वंटाल—संज्ञा पुं० [सं० वण्टाल] १. शूरों का युद्ध । २. नौका । ३. खोदने का औजार । खनती ।

वंठ¹—वि० [सं० वण्ठ] १. जिसका कोई अंग खंडित हो । हीनांग । जैसे—लूला, लँडूरा, खंजा आदि । २. अविवाहित (को०) ।

वंठ²—संज्ञा पुं० १. अविवाहित पुरुष । २. दास । सेवक । ३. वामन । बौना । ४. कुंत । भाला ।

वंठर—संज्ञा पुं० [सं० वण्ठर] १. ताड़ के वृक्ष का कोंपल । २. बाँस के कल्ले का वह मोटा पत्ता जो उसे छिपाए रहता है ।

विशेष—यह पत्ता गाँठ गाँठ पर होता है और बहुत कड़ा तथा भूरे रंग का होता है ।

३. कुत्ते की पूँछ । ४. वह रस्सी जिससे बकरी, गाय आदि को गले से बांधते हैं । ५. स्तन । थन । ६. मेघ । ७. कुत्ता ।

वंठाल—संज्ञा पुं० [सं० वण्ठाल] दे० 'वंटाल' ।

वंड¹—संज्ञा पुं० [सं० वण्ड] १. वह जिसकी लिंगेंद्रिय के अग्र भाग पर वह चमड़ा न हो, जो सुपारी को ढांके रहता है । २. ध्वजभंग नामक रोग ।

पर्या०—दुश्चर्मा । द्विनग्नक । शिपिविष्ट ।

वंड²—वि० १. बाँड़ा । हीनांग । २. अविवाहित (को०) ।

वंडर—संज्ञा पुं० [सं० वण्डर] १. मक्खीचूस । सूम । कंजूस । २. वह नपुसक जो अंतःपुर का रक्षक हो । खोजा ।

वंडा—संज्ञा स्त्री० [सं० वण्डा] रंडा । पुंश्चली स्त्री ।

वंडाल—संज्ञा पुं० [सं० वण्डाल] दे० 'वंटाल' ।

वंद—वि० [सं० वन्द] १. स्तुति या प्रशस्ति करनेवाला । २. परोपजीवी [को०] ।

वंदक—संज्ञा पुं० [सं० वन्दक] १. स्तुतिकर्ता । चारण । वंदी । २. एक परोपजीवी पौधा । विशेष दे० 'वंदा' । ३. बौद्ध भिक्षु [को०] ।

वंदका—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दका] दे० 'वंदा' [को०] ।

वंदथ—संज्ञा पुं० [सं० वन्दथ] १. वंदीजन । चारण । २. वंदनीय व्यक्ति [को०] ।

वंदन—संज्ञा पुं० [सं० वन्दन] १. स्तुति और प्रणाम । पूजन ।

विशेष—वंदन षोडशोपचार पूजन में है । यह समस्त पदों के अंत में 'वंदन' शब्द से पूजित या पूज्य का अर्थ देता है । (जैसे,—जगवंदन)

२. शरीर पर बनाए हुए तिलक आदि चिह्न । ३. एक विष का नाम । ४. एक असुर का नाम । ५. एक ऋषि का नाम । ६. वंदाक । बाँदा ।

वंदनक—संज्ञा पुं० [सं०] विनम्र भाव से नमस्कार [को०] ।

वंदनमाल—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनमाल] वंदनवार ।

वंदनमाला—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनमाला] दे० 'वंदनमाल' ।

वंदनमालिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनमालिका] दे० 'वंदनमाल' ।

वंदनवार—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनमाल] वह माला जो सजावट के लिये घरों के द्वार पर या मंडप के चारों ओर उत्सव के समय बाँधी जाती है । उ०—सेजहि सुधारैं एक, रोशनी उज्यारैं एक, बांधती वंदनवारैं झारैं फूल क्यारी को ।—राम (शब्द०) ।

विशेष—इस माला में फूल पत्तियाँ गुथी रहती हैं । यज्ञादि के अवसर पर इसमें आम के पल्लव गूँथे जाते हैं ।

वंदना—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दना][वि० वंदित, वंदनीय] १. स्तुति । २. प्रणाम । वंदन । ३. वह तिलक जो होम के भस्म से यज्ञ के अंत में लगाया जाता है ।

वंदनी—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनी] १. स्तुति । २. जीवातु नामक ओषधि । ३. गोरोचन । ४. तिलकादि चिह्न जो शरीर पर बनाए जाते हैं । ५. याचनाकर्म । ६. बटी ।

वंदनीय¹—वि० [सं० वन्दनीय] वंदना करने योग्य । आदर करने योग्य ।

वंदनीय²—संज्ञा पुं० पीत भृंगराज । पीली भँगरैया [को०] ।

वंदनीया—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दनीया] गोरोचना [को०] ।

वंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दा] दूसरे पेड़ों के ऊपर उसी के रस से पलनेवाला एक प्रकार का पौधा । वंदाक । बाँदा ।

पर्या०—वृक्षादनी । वृक्षरुहा । वदाका । जीवंतिका । शेखरी । सव्या । वंदका । वंदक । नीलवल्ली । वंदाकी । परवासिका । वशिनी । पुत्रिणी । वंध्या । परपुष्टा । पराश्रया । कामवृक्षा । केशरूपा । गधमादनी । कामिनी । श्यामा । कामवृक्ष ।

विशेष—इसका स्वाद तिक्त होता है, और वैद्यक में यह कफ, पित्त, तथा श्रम को दूर करनेवाला कहा गया है ।

२. भिक्षुणी (को०) ।

वंदाक—संज्ञा पुं० [सं० वन्दाक] दे० 'वंदा' ।

वंदाका—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दाका] दे० 'वंदा' ।

वंदाकी—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्दाकी] दे० 'वंदा'।

वंदार—संज्ञा पुं० [सं० वन्दार] परोपजीवी पौधा। वंदा। बाँदा [को०]।

वंदारु[1]—संज्ञा पुं० [सं० वन्दारु] १. स्तोत्र। २. बाँदा। वंदाक। ३. वैतालिक। चारण। स्तुतिपाठक। स्तुतिकर्ता। भाट (को०)।

वंदारु[2]—वि० वंदशील। नम्र।

वंदि—संज्ञा पुं० [सं० वन्दि] १. दे० 'बंदी'। २. कैद। ३. सोपान। सीढ़ी। ४. स्तुति। ५. स्तुतिपाठक। वंदी [को०]।

वंदिग्राह—संज्ञा पुं० [सं० वन्दिग्राह] डाकू।

वंदिचौर—संज्ञा पुं० [सं० वन्दिचौर] १. चोर। तस्कर। २. डाकू [को०]।

वंदित—वि० [सं० वन्दित] [वि० स्त्री० वंदिता] १. आदृत। पूजित। २. पूज्य। आदरणीय।

वंदितव्य—वि० [सं० वन्दितव्य] दे० 'वंद्य'।

वंदिता—संज्ञा पुं० [सं० वन्दितृ] स्तुति करनेवाला। प्रशंसा करनेवाला [को०]।

वंदिपाल—संज्ञा पुं० [सं० वन्दिपाल] कैदखाने का अधिकारी [को०]।

वंदी—संज्ञा पुं० [वन्दिन्] १. दे० 'बंदी'। २. दे० 'वंदि'।

वंदीक—संज्ञा पुं० [सं० वन्दीक] इंद्र।

वंदीगृह—संज्ञा पुं० [सं० वन्दीगृह] कैदखाना।

वंदीजन—संज्ञा पुं० [सं० वन्दीजन] राजाओं आदि का यश वर्णन करनेवाली एक प्राचीन जाति।

वंद्य—वि० [सं० वन्द्य] वंदना करने योग्य। वंदनीय। आदरणीय। पूजनीय।

वंद्या—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्द्या] १. बाँदा। वंदा। २. गोरोचन [को०]।

वंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वन्द्र] १. अभ्युदय। मंगल। २. प्राचुर्य। प्रचुरता। ३. भक्त। उपासक [को०]।

वंधु—संज्ञा पुं० [सं० वन्धु] दे० 'बंधु'।

वंधुर[1]—संज्ञा पुं० [सं० वन्धुर] १. रथ या गाड़ी का आश्रय जिसमें दोनों हरसे और धुरा प्रधान हैं। २. गाड़ी में का वह स्थान जहाँ सारथी या गाड़ीवान बैठकर उसे चलाता है।

वंधुर[2]—वि० दे० 'बंधुर'।

वंध्य—वि० संज्ञा पुं० [सं० वन्ध्य] दे० 'बंध्य'।

यौ०—वंध्यफल।

वंध्या—संज्ञा स्त्री० [सं० वन्ध्या] बाँझ स्त्री जिसे संतान न उत्पन्न हो। दे० 'बंध्या'।

यौ०—वंध्यातनय। वंध्यापुत्र। वंध्यासुत। वंध्यासूनु = दे० 'बंध्यापुत्र'।

वंन्न(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वर्ण; प्रा० वण्ण] दे० 'वर्ण'। उ०—मारवणी मुँह वंन्न आदित्ता हूँ उजली।—ढोला०, दू० ४६४।

वंभ—संज्ञा पुं० [सं० वम्भ] बाँस [को०]।

वंभारव—संज्ञा पुं० [सं० वम्भारव] रँभाना। जानवर के रँभाने का शब्द [को०]।

वंश—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस। २. बँडेर। ३. पीठ की हड्डी। ४. नाक के ऊपर की हड्डी। बाँसा। ५. बाँसुरी। ६. एक प्रकार की ईख। ७. खड्ग के बीच का वह भाग जो ऊँचा हो, अर्थात् जहाँ पर वह अधिक चौड़ा होता है। ८. बारह (कुछ के मत में दस) हाथ का एक मान। ९. बाहु आदि की लंबी हड्डियाँ। १०. युद्ध की सामग्री। जैसे, रथ, ध्वजा इत्यादि। ११. विष्णु। १२. वंशलोचन। १३. फूल। १४. कुल। परिवार। जाति (को०)। १५. संतान। पुत्र (को०)। १६. एक ही जैसी वस्तुओं का समूह या वर्ग (को०)। १७. शाल का वृक्ष (को०)। १८. अभिमान। दर्प (को०)। १९. दृढ़ ग्रंथि। मजबूत गाँठ (को०)। २०. ववंडर।

यौ०—वंशज। वंशकृत। वंशक्षय। वंशच्छेद, इत्यादि।

वंशऋषि—संज्ञा पुं० [सं०] वे ऋषि जिनके नाम वंश ब्राह्मण में आए हैं।

वंशकंज—संज्ञा पुं० [सं० वंशकञ्ज] काले अगर की लकड़ी। कृष्णागुरु।

वंशक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगर नामक गंधद्रव्य। अगुरु। २. एक प्रकार की मछली। ३. एक प्रकार का गन्ना या ईख।

विशेष—वैद्यक में इसे शीतल, मधुर, स्निग्ध, पुष्टिकारक, सारक, वृष्य और कफनाशक लिखा है। इसके रस का स्वाद कुछ खारीपन लिए भारी होता है। इसे 'कड़ऊख' कहते हैं।

४. बाँस की गाँठ या संधि (को०)। ५. छोटी जाति का बाँस।

वंशकठिन—संज्ञा पुं० [सं०] जहाँ बाँस परस्पर गुथे हुए हों। बाँस का जंगल [को०]।

वंशकपूर—संज्ञा पुं० [सं० वंशकर्पूर] बंसलोचन।

वंशकफ—संज्ञा पुं०] सं०] सेमल आदि का घूआ जो आकाश में उड़ता फिरता है।

वंशकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह पुरुष जिससे किसी वंश का आरंभ हुआ हो। मूल पुरुष। पूर्वज। पुरखा। २. पुत्र (को०)।

वंशकरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मार्कंडेय पुराणानुसार एक नदी जो महेंद्र पर्वत से निकलती है। वंशधारा।

वंशकर्पूर—संज्ञा पुं० [सं०] बंसलोचन।

यौ०—वंशकर्पूररोचना, वंशकर्पूररोचनी, वंशकर्पूरलोचना = दे० 'वंशलोचन', 'बंसलोचन'।

वंशकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वंशकर्मन्] बँसोर का काम। बाँस की डलिया, सूप, टोकरी आदि बनाने का काम [को०]।

यौ०—वंशकर्मकृत् = दे० 'बँसोर'।

वंशकार—संज्ञा पुं० [सं०] गंधक।

वंशकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वंश का मूल पुरुष [को०]।

वंशकृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] वंशीवादन। बाँसुरी बजाना [को०]।

वंशक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वंश की तालिका। वंशानुक्रम [को०]।

वंशक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] वंश या कुल का विनाश [को०]।

वंशक्षीरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बंसलोचन।

वंशगोप्ता—संज्ञा पुं० [सं० वंशगोप्तृ] वह जो कुल या वंश का संरक्षक हो [को०]।

वंशघटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दिव्यावदान के अनुसार एक प्रकार का खेल।

वंशचर्मकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बाँस और चमड़े की वस्तुएँ बनाता हो [को०]।

वंशचरित—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वंश का इतिहास [को०]।

वंशचिंतक—संज्ञा पुं० [सं० वंशचिन्तक] कुल या वंश का कुर्सीनामा तैयार करनेवाला [को०]।

वंशच्छेत्ता—संज्ञा पुं० [सं० वंशच्छेत्तृ] वंश का अंतिम पुरुष [को०]।

वंशज[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस का चावल या बीज। २. पुत्र। ३. कुल में उत्पन्न पुरुष। संतान। संतति। औलाद। ४. वंशलोचन (को०)।

वंशज[2] - वि० १. बाँस का बना हुआ। २. अच्छे कुल में उत्पन्न। ३. (किसी) वंश में उत्पन्न [को०]।

वंशजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वंशलोचन। २. कन्या।

वंशतंडुल—संज्ञा पुं० [सं० वंशतण्डुल] बाँस का चावल या बीज [को०]।

वंशतालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वंशवृक्ष। कुर्सीनामा (को०)।

वंशतिलक- संज्ञा पुं० [सं०] एक छंद का नाम।

वंशचला- संज्ञा स्त्री० [सं०] जीरिका तृण। बाँसा। विशेष दे० 'वंशपत्री' [को०]।

वंशधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुल में उत्पन्न। वंशज। संतति। संतान। २. वंश की मर्यादा रखनेवाला।

बंशधरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी जो महेंद्र पर्वत से निकली है। यह नदी मध्य प्रदेश में है। इसे वंशकरा भी कहते हैं। इसका आधुनिक नाम वंशधारा है।

वंशधान्य—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस का चावल।

वंशनर्ती—संज्ञा पुं० [सं० वंशनर्त्तिन्] भाँड़।

वंशनाडिका, वंशनाडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बाँसुरी। २. बाँस की पुपली या नली [को०]।

वंशनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] वंश का प्रधान पुरुष। जाति का मुखिया या प्रधान व्यक्ति [को०]।

वंशनाश—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार एक योग जो शनि और राहु के सूर्य के साथ एक लग्न में, विशेषत: पंचम में पड़ने पर होता है।

वंशनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] ईख के अंकुरवाले डंठल जिन्हें जमीन में गाड़ने से ईख का नया पौधा उत्पन्न होता है। आँख।

वंशपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हरताल। २. बाँस का पत्ता (को०)। ३. एक प्रकार का सरकंडा (को०)।

वंशपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की ईख जो सफेद होती है। २. एक प्रकार की मछली। ३. हरताल। ४. सरकंडा (को०)।

वंशपत्रपतित—संज्ञा पुं० [सं०] १७ वर्णों के एक छंद का नाम जिसमें क्रम से भगण, रगण, नगण, भगण, नगण और अंत में एक लघु और एक गुरु होता है।

वंशपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की हींग। २. एक घास जिसे बाँसा कहते हैं।

विशेष—इसकी पत्तियाँ बाँस की पत्तियों से मिलती हैं। वैद्यक में यह शीतल, मधुर, रुचिकारी तथा रक्तपित्त के दोषों को शांत करनेवाली कही गई है।

पर्या०—वंशदला। जीरिका। जीर्णपत्रिका। वेणुपत्री। पिंडा। शिराटिका।

वंशपरपरा—संज्ञा स्त्री० [सं० वंशपरम्परा] १. वंशतालिका। वंशवृक्ष। २. पूर्वपुरुषों से चली आती हुई रीति। कुलगत आचार।

वंशपात्र—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस का बना पात्र। जैसे, डलिया, टोकरी आदि [को०]।

वंशपीत—संज्ञा पुं० [सं०] गुग्गुल।

वंशपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] क्षुप जाति की एक वनौषधि। सहदेई। विशेष दे० 'सहदेई'।

वशपूरक—संज्ञा पुं० [सं०] ईख या गन्ने की पोर [को०]।

वंशपोट—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस का अंकुर। करइल। २. अच्छे कुल की संतान [को०]।

वंशबाह्य - वि० [सं०] वंश से बाहर किया गया। वंशच्युत [को०]।

वंशब्राह्मण—संज्ञा पुं० [सं०] सामवेद के ब्राह्मणों में एक प्रधान ब्राह्मण, जिसमें सामवेदी ब्राह्मणों के वंशकार ऋषियों की नामावली है।

वशभव—वि० [सं०] १. बाँस का बना हुआ। २. कुलीन। पालनकर्ता।

वंशभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] वंश का प्रधान [को०]।

वंशभोज्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह संपत्ति जिसपर वंशगत अधिकार हो। मौरूसी जायदाद। २. वंशगत अधिकार की शासनप्रणाली।

वंशयव—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस का बीज [को०]।

वंशराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत लंबा बाँस। २. खानदान का मालिक। कुल का प्रधान।

वंशरोचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] बंसलोचन।

वंशलून—वि० [सं०] जिसके वंश का लून अर्थात् उच्छेद हो गया हो। संसार में अकेला [को०]।

वंशलोचन—संज्ञा पुं० [सं०] बंसलोचन।

पर्या०—त्वक्क्षीरा। वंशलोचना। तुगाक्षीरी। वांशी। वंशजा। क्षीरिका। तुंगा। त्वक्क्षीरी। शुभ्रा। शुभा। वंशक्षीरी। त्वक्सारा। कर्म्मरी। श्वेता। वंशकर्पूर। रोचना। रोचनिका। पिंगा। वंशशर्करा। वेणुलवण। वैणवी।

वंशलोचना—वि० स्त्री० [सं०] बंसलोचन।

वंशवन—संज्ञा पुं० [सं०] बाँसों का जंगल [को०]।

वंशवर्धन—संज्ञा पुं० [सं०] वंश की वृद्धि करनेवाला । पुत्र [को०] ।

वंशवितति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. परिवार । २. बाँसों का झुरमुट [को०] ।

वंशविस्तर—संज्ञा पुं० [सं०] वंशवृक्ष [को०] ।

वंशवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस का पेड़ । २. किसी वंश की वृक्ष की आकृति में बनाई गई तालिका [को०] ।

वंशशर्करा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बंसलोचन ।

वंशशलाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बीन, सितार आदि बाजों का डंडा ।

वंशसपत्—संज्ञा स्त्री० [वंशसम्पत्] उच्च कुल में जन्म एवं प्रभूत वैभव [को०] ।

वंशस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] बारह वर्णों का एक वर्णवृत्त जिसका व्यवहार संस्कृत काव्यों में अधिक मिलता है। इसमें जगण, तगण, जगण और रगण आते हैं। जैसे,—प्रथा जु वंशस्थ विलंघि धावती। नसाय तीनों कुल को लजावती। इसे 'वंशस्थविल' भी कहते हैं।

वंशस्थविल—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस के भीतर का खोखला हिस्सा । २. एक वर्णिक छंद । वंशस्थ [को०] ।

वंशहीन—वि० [सं०] जिसके वंश में कोई न हो । निर्वंश । २. अपुत्र ।

वंशांकुर—संज्ञा पुं० [सं० वंशाङ्कुर] १. बाँस का कोपल । करइल । २. पुत्र [को०] ।

वंशागत—वि० [सं०] कुल परंपरा से आता हुआ ।

वंशाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वंशांकुर' [को०] ।

वंशानुक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] वशावली ।

वंशानुकीर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वंशानुचरित' [को०] ।

वंशानुचरित—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन राजवंशों की कथा ।

विशेष—यह पुराणों के लक्षणां में से एक है ।

वंशावली—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी वंश में उत्पन्न पुरुषां की पूर्वोत्तर क्रम से सूची।

वंशाह्व—संज्ञा पुं० [सं०] बंसलोचन ।

वंशिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगर की लकड़ी । २. काला गन्ना । केतारा । ३. प्राचीन काल की एक माप जो चार स्तोम की कही गई है (को०) । ४. एक जाति जो शूद्र और वेषी से उत्पन्न कही गई है (को०) ।

वंशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अगर की लकड़ी । २. बंसी । मुरली । ३. पिप्पली ।

वंशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुँह से फूँककर बजाया जानेवाला एक प्रकार का बाजा जो बाँस में सुर निकालने के लिये छेद करके बनाया जाता है । बाँसुरी । मुरली ।

विशेष—पुराने ग्रंथों में लिखा है कि वंशी बाँस ही की होनी चाहिए, पर खैर, लाल चंदन आदि की लकड़ी की अथवा सोने, चाँदी की भी हो सकती है । यह वास्तव में बाँस की एक पोली नली होती है, जिसके बजानेवाले छोर पर एक जीभ लगी होती है और दूसरी ओर नली के ऊपर एक पंक्ति में सुर निकलने के छेद होते हैं। मातंग ऋषि का मत है कि नली का छेद कनिष्ठा उँगली के मूल के बराबर होना चाहिए । जो छोर मुँह में रखकर फूँका जाता है, उसे 'फूत्काररंध्र' और सुर निकालनेवाले सात छेदों को 'ताररंध्र' कहते हैं । इस बंसी के अतिरिक्त मातंग के अनुसार चार प्रकार की मुरलियाँ और होती हैं, जिन्हें मदानंदा, नंदा, विजया और जया कहते हैं । मदानंदा में ताररंध्र फूत्कारंध्र से दस अंगुल पर, नंदा में ग्यारह अंगुल पर, विजया में बारह अगुल पर और जया में चौदह अंगुल पर होते हैं । आजकल वह वशी जो एक साथ दो बजाई जाती है, अलगोजा कहलाती है । प्राचीन काल के गोपों में इस बाजे का प्रचार बहुत था ।

यौ० -- वंशीधर ।

२. चार कर्ष का एक मान, जो आठ तोले के बराबर होता है । ३. बंसलोचन । ४. धमनी । नाड़ी (को०) ।

वंशीधर—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण, जो वंशी बजाया करते थे ।

वंशीधारी—संज्ञा पुं० [सं० वंशीधारिन्] १. श्रीकृष्ण । २. वह जो बाँसुरी बजाता हो । बाँसुरीवादक [को०] ।

वंशीय—वि० [सं०] वंशोद्भव । कुल में उत्पन्न । जैसे,—चंद्रवंशीय ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग यौगिक शब्दों के अंत में हुआ करता है।

वंशीवट—संज्ञा पुं० [सं०] वृंदावन में वह बरगद का पेड़ जिसके नीचे श्रीकृष्ण वंशी बजाया करते थे ।

वंशीवादन—संज्ञा पुं० [सं०] वंशी बजाना ।

वंशोद्भव—वि० [सं०] वंशज । कुल में उत्पन्न ।

वंशोद्भवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बंसलोचन ।

वंश्य¹—वि० [सं०] १. वंशी । वंशज । २. मेरुदंड संबंधी । मुख्य अस्थि से संबद्ध (को०) । ३. अच्छे कुल का । कुलीनवंश संबंधी [को०] ।

वंश्य²—संज्ञा पुं० १. पीठ की रीढ़ । २. वह बड़ी लकड़ी जो छाजन के बीचोबीच रीढ़ के समान होती है । बँड़ेर । ३. पूर्व पुरुष । पूर्वज (को०) । ४. संतति । संतान (को०) ५. परिवार या कुल का कोई व्यक्ति (को०) । ६. शिष्य (को०) । ७. वे संबंधी व्यक्ति जो सात पुश्त पूर्व और सात पीढ़ी बाद के हों (को०) ।

वंश्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] धनिया [को०]

वंस—संज्ञा पुं० [सं० वंश] दे० 'वंश' । उ०—एक पुत्र है, सो तेरो वंस चल्यो जायगो ।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० ७२ ।

वंसग—संज्ञा पुं० [सं०] साँड़ । वृषभ [को०] ।

वँसली‡—संज्ञा स्त्री० [हिं० बांसुरी] दे० 'बाँसुरी' । उ०—गावणहार माँडइ (अ) र गाई । रास कइ (सम) यइ वँसली वाई ।—बी० रासो, पृ० ५ ।

व¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु । २. बाण । ३. वरुण । ४. बाहु । ५. मंत्रणा । ६. कल्याण । ७. सांत्वना । ८. वसति । बस्ती । ९. वरुणालय । समुद्र । १०. शार्दूल । ११. वस्त्र । १२. कोई का कंद । सेरकी । १३. जल में उत्पन्न होनेवाले कंद । शालूक ।

१४. वंदन। १५. अस्त्र। १६. खड्गधारी पुरुष। १७. मूर्वा नामक लता। १८. वृक्ष। १६. कलश से उत्पन्न ध्वनि। २०. मद्य। २१. प्रचेता। २२.। पानी। जल (को०)। २३- आदर। संमान (को०)। २४- राहु (को०)।

व^{2}—वि० बलवान्।

व^{3}—अव्य० [फ़ा०] और। जैसे,—राजा व रईस।

वअन⑤—संज्ञा पुं० [सं० बचन; प्रा० वयण, वअन] दे० 'वचन'। उ०—कुटिल राजनीति चतुरहु, मोर वअन आकएणे करहु।—कीर्ति०, पृ० २०।

वइठना⑤†—क्रि० अ० [सं० √विश्, विष्ट; प्रा० बिट्ठ+हिं० ना (प्रत्य०) या सं० वितिष्ठति, प्रा० बइट्ठइ] दे० 'बैठना'। उ०—वइठहिं ठामहि ठामा।—कीर्ति०, पृ० ६६।

वइराग⑤†—संज्ञा पुं० [सं० वैराग्य; प्रा० वइराग] दे० 'वैराग्य'। उ०—मनि वइराग न थाइ, वाँलभ वीछुड़िया तणी।—ढोला०, दू० १७१।

वइसाना⑤—क्रि० स० [हिं० बैठाना] दे० 'बैठाना'। उ०—अमरापति चढ़ि चाल्यो राय। ली अस्त्री अरधंग वइसाय।—बी० रासो, पृ० २७।

वक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बगला नाम का पक्षी। २. अगस्त का पेड़ या फूल। ३. एक दैत्य का नाम जिसे श्रीकृष्ण ने बाल्यावस्था में मारा था। ४. एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था। ५. कुबेर। ६. एक यक्ष का नाम। ७. एक जाति का नाम। ८. वंचक। ठग। ढोंगी (को०)।

वकअत—संज्ञा स्त्री० [अ० वक़अत] इज्जत। मान। गौरव। साख। ऊँचाई। प्रतिष्ठा। उ०—सबसे ज्यादा जिस बात से तआज्जुब होता है, यह है कि खान देहली की जबान और उर्दू को भी वकअत की निगाह से नहीं देखते।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ८७।

वककच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जनपद जो नर्मदा के किनारे था।

विशेष—कथासरित्सागर में लिखा है कि उज्जयिनी के राजा सातवाहन सर्ववर्मा ने कलाप व्याकरण का अध्ययन करके अपने गुरु को यह राज्य गुरुदक्षिणा में दिया था।

वकचर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वकवृत्ति'।

वकचिंचिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वकचिञ्चिका] एक प्रकार की छोटी मछली।

वकजित्—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीकृष्ण। २. भीमसेन।

वकत—संज्ञा स्त्री० [अ० वक़त] दे० 'वकअत' [को०]।

वकनख—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

वकनिषूदन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बकनिषूदन' [को०]।

वकधूप—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बकधूप' [को०]।

वकपंचक—संज्ञा पुं० [सं० वकपञ्चक] कार्तिक के शुक्ल पक्ष की एकादशी से लेकर पूर्णिमा तक की पाँच तिथियाँ।

वकयंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वकयन्त्र] आसव आदि भबके से उतारने के लिये एक यंत्र या बरतन, जिसके मुँह पर बगले की गरदन की तरह टेढ़ी नली लगी रहती है।

वकवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] धोखा देकर काम निकालने की घात में रहने की वृत्ति। कदाचार।

वकल—संज्ञा पुं० [सं० वल्कल] भीतर की छाल [को०]।

वकव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] बगले की तरह घात में रहनेवाला। कपटी। चालबाज मनुष्य।

वकाची—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की मछली [को०]।

वकार—संज्ञा पुं० [अ० वक़ार] १. प्रतिष्ठा। बड़प्पन। इज्जत। २. गुरुता। गंभीरता [को०]।

वकारना—क्रि० अ० [देश०] गरजना। ललकारना। हुंकारना। उ०—भये त्रिपत वीराधिवर, पूरन डक्क डकार। अति आनंदत उल्हसत, बोलत वयन वकार।—पृ० रा०, ६।१७०।

वकालत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. दूसरे के किसी काम का भार लेना। दूसरे के स्थानापन्न होकर काम करना। २. दूसरे का सँदेसा जोर देकर कहना। दूतकर्म। ३. दूसरे के पक्ष का मंडन दूसरे की ओर से उसके अनुकूल बातचीत करना। जैसे,—उन्हें जो कुछ कहना होगा आप कहेंगे, तुम क्यों उनकी ओर से वकालत करते हो। ४. अदालत या कचहरी में किसी मामले में वादी या प्रतिवादी की ओर से प्रश्नोत्तर या वादविवाद करने का काम। मुकदमे में किसी फरीक की तरफ से बहस करने का पेशा।

मुहा०—वकालत चलना या चमकना = वकालत के पेशे में आमदनी होना। वकालत जमना = वकालत के पेशे में लाभ होने लगना।

यौ०—वकालतनामा।

वकालतन्—क्रि० वि० [अ०] वकील के द्वारा। असालतन् का उलटा।

वकालतनामा—संज्ञा पुं० [अ० वकालत+फ़ा० नामह्] वह अधिकारपत्र जिसके द्वारा कोई किसी वकील को अपनी तरफ से मुकदमे में बहस करने के लिये मुकर्रर करता है।

वकाली—संज्ञा स्त्री० [सं० वक+आलि] वकपंक्ति। उ०—नभ में मेघावलि है काली, क्षिति में है मंजुल हरियाली, है दोनों के बीच वकाली। विद्युदबाला की माला सी, है वह सुंदर श्वेत सुमन की।—प्रेमांजलि, पृ० ११६।

वकासुर—संज्ञा पुं० [सं०] एक राक्षस का नाम।

विशेष—इस नाम के दो राक्षस हुए हैं। एक को श्रीकृष्ण ने अपनी बाल्यावस्था में मारा था। वत्सासुर और अघासुर नाम के इसके दो भाइयों का भी कृष्ण ने संहार किया था। यह पूतना नाम की राक्षसी का भाई और कंस का अनुचर था। दूसरे को भीमसेन ने उस समय मारा था, जब पाँचों पांडव लाक्षागृह से निकलकर वन में जाकर रहते थे।

वकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक राक्षसी का नाम।

वकीअ—वि० [अ० वेक़ीअ्] १. इज्जतदार। प्रतिष्ठित। २. ऊँचा। बलंद।

वकीअत—संज्ञा स्त्री० [अ० वक़ीअ़त] १. कुत्सा। निंदा। २. युद्ध। लड़ाई [को०]।

वकील—संज्ञा पुं० [अ०] १. दूसरे के काम को उसकी ओर से करने का भार लेनेवाला। २. दूसरे का संदेसा ले जाकर उसपर जोर देनेवाला। दूत। ३. राजदूत। एलची। उ०—सूरज कही नवाब के है आनंद सरीर। तब वकील बिनती करी कृपा पाइ जदुबीर।—सूदन (शब्द०)। ४. प्रतिनिधि। ५. दूसरे का पक्ष मंडन करनेवाला। दूसरे की ओर से उसके अनुकूल बात करनेवाला। ६. कानून के अनुसार वह आदमी जिसने वकालत की परीक्षा पास की हो और जिसे हाईकोर्ट की ओर से अधिकार मिला हो कि वह अदालतों में मुद्दई या मुद्दालैह की ओर से बहस करे।

वकीली—संज्ञा स्त्री० [अ० वकील + हिं० ई (प्रत्य०)] दे० 'वकालत'।

वकुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त का पेड़ या फूल। २. मौलसिरी। उ०—सूखा है यह मुख यहाँ, रूखा है मन आज। किंतु सुमनसंकुल रहे प्रिय का वकुल समाज।—साकेत, पृ० २९३। ३. शिव। दे० 'बकुल'।

वकुला—संज्ञा स्त्री० [सं०) कुटकी नामक ओषधि।

वकुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली नाम की ओषधि। २. वकुल। मौलसिरी।

वकुश—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह त्यागी, यती, साधु जिसे अपने ग्रंथों, शरीर और भक्तों या शिष्यों की कुछ कुछ चिंता रहती हो। (जैन)। २. पत्तों के झुरमुट में रहनेवाला एक जंतु (को०)।

वकूअ—संज्ञा पुं० [अ० वक़ूअ] घटित होना। प्रकट होना।

मुहा०—वकूअ में आना = प्रकट होना। घटित होना।

वकूआ—संज्ञा पुं० [अ० वक़ूआ] १. फसाद। झंझट। २. घटना। वारदात। हादसा (को०)।

वकूफ—संज्ञा पुं० [अ० वक़ूफ़] १. जानकारी। ज्ञान। २. बुद्धि। समझ।

यौ०—बेवकूफ = मूर्ख।

वक्त^1—संज्ञा पुं० [अ० वक़्त] १. समय। काल।

मुहा०—वक्त काटना = (१) किसी प्रकार समय बिताना। (२) जी बहलाना। वक्त की चीज = (१) किसी समय या ऋतु विशेष में मिलनेवाली चीज। (२) किसी विशेष समय में गाया जानेवाला गीत या राग। जैसे,—कोई वक्त की चीज गाइए। वक्त खोना = समय नष्ट करना।

२. किसी बात के होने का समय। अवसर। मौका।

मुहा०—वक्त पर = अवसर आने पर। कोई विशेष परिस्थिति होने पर। जैसे,—इसे रख छोड़ो, वक्त पर काम आवेगी। वक्त ताकना = मौका देखना। इस बात की प्रतीक्षा में रहना कि कब उपयुक्त अवसर मिले और कोई बात करूँ। वक्त हाथ से देना = अवसर चूकना। मौका आने पर भी काम न करना।

३. इतना समय कि कोई काम किया जा सके। अवकाश। फुरसत।

क्रि० प्र०—निकलना।—निकालना।—मिलना।

४ विपत्काल। मुसीबत का समय (को०)। ५. मौसिम (को०)। ६. मरने का नियत समय। मृत्युकाल।

क्रि० प्र०—आ जाना।—आ पहुँचना।

वक्त(पु)^2—वि० सं० वक्तृ, वक्ता दे० 'वक्ता'। उ०—उनईस सहस गरुणह पुरान। श्रोतान वक्त भक्ती उरान।—पृ० रा० १।४०।

वक्तन् फौक्तन्—क्रि० वि० [अ० वक़्तन् फ़ौक़्तन्] यदाकदा। कभी कभी। ३. यथासमय।

वक्तव्य^1—वि० [सं०] १. कहने योग्य। वाच्य। २. कुछ कहने सुनने लायक। ३. हीन। तुच्छ। ४ जिम्मेदार। उत्तरदायी। ५. आधारित। निर्भर। आश्रित (को०)।

वक्तव्य^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. कथन। वचन। २. वह बात जो किसी विषय में कहनी हो। ३. निंदा। बुराई (को०)। ४. नियम (को०)। ६. सीख। शिक्षा (को०)।

वक्तव्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दोषारोपण। तिरस्कार। २. निर्भरता। पराधीनता [को०]।

वक्तव्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वक्तव्यता' [को०]।

वक्ता—वि० [सं० वक्तृ] १. वाग्मी। बोलनेवाला। २. भाषणपटु। वदान्य। ३. ईमानदार (को०)।

वक्ता^{2}—संज्ञा पुं० १. कथा कहनेवाला पुरुष। व्यास। उ०—सूत तहँ कथा भागवत की कहत है ऋषि अठासी सहस हुते श्रोता। राम को देखि सनमान सब ही कियो सूत नहिं उठ्यो निज जानि वक्ता।—सूर (शब्द०)। २. शिक्षक। अध्यापक (को०)। ३. बुद्धिमान्। मेधावी व्यक्ति (को०)।

वक्तुकाम—वि० [सं०] बोलने की इच्छा रखनेवाला [को०]।

वक्तुमना—वि० [सं० वक्तुमनस्] जो बोलना चाहता हो। जिसके मन में बोलने की इच्छा हो [को०]।

वक्तृक—वि० [सं०] बोलनेवाला। वक्तृता देनेवाला [को०]।

वक्तृता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वाग्मिता। वाक्पटुता। २. व्याख्यान। ३. कथन। भाषण।

वक्तृत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. वक्तृता। वाग्मिता। २. व्याख्यान। प्रवचन। ३. कथन। भाषण।

वक्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. मुख। २. तगर की जड़। ३. एक प्रकार का छंद जो अनुष्टुप छंद के अनुरूप होता है। ४. काम का आरंभ। ५. मुखाकृति। चेहरा (को०)। ६. दाँत (को०)। ७. बाण की नोक (को०)। ८. एक प्रकार का पहनावा।

यौ०—वक्त्रज।

वक्त्रखुर—संज्ञा पुं० [सं०] दंत। दाँत [को०]।

वक्त्रज—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्राह्मण। २. दाँत [को०]।

वक्त्रताल—संज्ञा पुं० [सं०] वह ताल जो मुँह से उत्पन्न किया जाय। जैसे, वंशी को बजाने से या मुँह में वायु भरकर छोड़ने से।

वक्त्रतुंड—संज्ञा पुं० [सं० वक्त्रतुण्ड] गणेश।

वक्त्रदल—संज्ञा पुं० [सं०] तालु । तालू ।

वक्त्रपट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] तोबड़ा [को०] ।

वक्त्रपरिस्पंद—संज्ञा पुं० [सं० वक्त्रपरिस्पन्द] वार्ता । बात [को०] ।

वक्त्रबाहु संज्ञा पुं० [सं०] बाराही कंद ।

वक्त्रभेदी—वि० [सं० वक्त्रभेदिन्] बहुत तीखा या चरपरा [को०] ।

वक्त्रवास—संज्ञा पुं० [सं०] नारंगी ।

वक्त्रशल्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुंजा । घुँघची ।

वक्त्रशोधी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वक्त्रशोधिन्] जमीरी नींबू [को०] ।

वक्त्रशोधी^{२}—वि० मुख को शुद्ध करनेवाला [को०] ।

वक्त्रासव—संज्ञा पुं० [सं०] लाला । थूक [को०] ।

वक्फ़—संज्ञा पुं० [अ० वक़्फ़] १. वह भूमि या सपत्ति जो धर्मार्थ दान कर दी गई हो । किसी धर्म के काम में लगी हुई जायदाद ।

क्रि० प्र०—करना ।

२. किसी धर्म के काम में धन आदि देना । धर्मार्थ दान । ३. किसी के लिये चीज या धन संपत्ति आदि छोड़ देना (क्व०) ।

वक्फ़नामा—संज्ञा पुं० [अ० वक़्फ़् + फ़ा० नामह्] वह पत्र जिसके अनुसार किसी के नाम कोई चीज वक्फ की जाय । दानपत्र ।

वक्फा—संज्ञा पुं० [अ० वक़्फ़ा] १. अवकाश । अंतर । छुट्टी । मोहलत ।

क्रि० प्र०—देना ।—मिलना ।

२. काम करने से विराम ।

क्रि० प्र०—मिलना ।

वक्र^{१}—वि० [सं०] १. टेढ़ा । बाँका । ऋजु का उलटा । २. झुका हुआ । तिरछा । ३. कुटिल । दाँवपेंच चलनेवाला । ४. बेईमान (को०) । ५. निर्दय । क्रूर (को०) ।

वक्र^{२}—संज्ञा पुं० १. नदी का मोड़ । बाँका । २. तगरपादुका । ३. शनैश्चर । ४. भौम । मगल । ५. रुद्र । ६. पर्पट । ७. वह ग्रह जिससे तीस अंश के अंदर ही सूर्य हो । वक्री ग्रह । ८. एक राक्षस का नाम । ९. त्रिपुरासुर । १०. नासिका । नाक (को०) । ११. अस्थिभंग का एक प्रकार (को०) ।

वक्रकंट—संज्ञा पुं० [सं० वक्रकण्ट] बैर का वृक्ष । वक्रकंटक ।

वक्रकटक—संज्ञा पुं० [सं० वक्रकण्टक] १. बैर का वृक्ष । २. खैर का पेड़ (को०) ।

वक्रकील—संज्ञा पुं० [सं०] अंकुश [को०] ।

वक्रगति—संज्ञा पुं० [सं०] १. भौम । मंगल । २. ग्रहलाघव के अनुसार वे ग्रह जो सूर्य से पाँचवें, छठे, सातवें और आठवें हों । इस प्रकार मंगल ३६ दिन, बुध २१ दिन, बृहस्पति १०० दिन, शुक्र १२ दिन और शनि १८४ दिन वक्री होता है ।

वक्रगल—संज्ञा पुं० [सं० वक्र + गला] एक प्रकार का बाजा जो मुँह से फूँककर बजाया जाता है ।

वक्रगामी—वि० [सं० वक्रगामिन्] १. टेढ़ी चाल चलनेवाला । २. शठ । कुटिल ।

वक्रगुल्फ—संज्ञा पुं० [सं०] ऊँट ।

वक्रग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] ऊँट । क्रमेलक [को०] ।

वक्रचंचु—संज्ञा पुं० [सं० वक्रचञ्चु] तोता । शुक पक्षी ।

वक्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. टेढ़ापन । २. पीछे की ओर मुड़ने की क्रिया । ३. विफलता । असफलता । चूक । ४. कुटिलता [को०] ।

वक्रताल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बाजा जो मुँह से बजाया जाता है । वक्रनाल ।

वक्रताली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वक्रताल' ।

वक्रतुंड—संज्ञा पुं० [सं० वक्रतुण्ड] १. शुक पक्षी । तोता । २. गणेश ।

वक्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वक्रता' ।

वक्रदंष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] शूकर । सूअर ।

वक्रदृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. टेढ़ी दृष्टि । २. क्रोध की दृष्टि । ३. मंद दृष्टि ।

वक्रधर—संज्ञा पुं० [हिं० वक्र + धर] द्वितीया का टेढ़ा चंद्रमा धारण करनेवाले, शिव ।

वक्रधी^{१}—वि० [सं०] टेढ़ी बुद्धिवाला । धूर्त । बेईमान [को०] ।

वक्रधी^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] धूर्तता । बेईमानी । मक्कारी ।

वक्रनक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. पिशुन । चुगुलखोर । २. शुक पक्षी । तोता ।

वक्रनाल—संज्ञा पुं० [सं०] वक्रताल नाम का बाजा जो मुंह से फूँककर बजाया जाता है ।

वक्रनासिक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] उल्लू ।

वक्रनासिक^{२}—वि० टेढ़ी नाकवाला ।

वक्रपद—संज्ञा पुं० [सं०] विभिन्न प्रकार की नक्काशी से युक्त कपड़ा । छींट [को०] ।

वक्रपाद—वि० [सं०] जिसका पैर टेढ़ा हो ।

वक्रपुच्छ, वक्रपुच्छिक—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता ।

वक्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त का पेड़ । २. पलाश ।

वक्रबुद्धि—वि० [सं०] दे० 'वक्रधी' [को०] ।

वक्रभाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. टेढ़ापन । २. धूर्तता [को०] ।

वक्रभुज—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश [को०] ।

वक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] भागना । अवक्रम । पलायन [को०] ।

वक्रमति—वि० [सं०] दे० 'वक्रधी' [को०] ।

वक्रय^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] मूल्य । दाम ।

वक्रय^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] अवक्रम । भागना [को०] ।

वक्रवक्त्र—संज्ञा पुं० [दि०] शूकर । सूअर [को०] ।

वक्रशल्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कड़वा कद्दू या घीया । २. लाल फूल की विषलांगली ।

वक्रांग^{१}—वि० [सं० वक्राङ्ग] जिसका अंग टेढ़ा हो ।

वक्रांग^{२}—संज्ञा पुं० १. हंस । २. सर्प । साँप ।

वक्राख्य—संज्ञा पुं० [सं०] टीन [को०]।

वक्रि—वि० [सं०] असत्यभाषी। झूठा [को०]।

वक्रित—वि० [सं०] जो टेढ़ा हो गया हो।

वक्रिम—वि० [सं०] टेढ़ा। कुटिल।

वक्रिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० वक्रिमन्] १. टेढ़ापन। कुटिलता। २. कथन की भंगी [को०]।

वक्री^{1}—वि० [सं० वक्रिन्] १. अपने मार्ग को छोड़कर पीछे लौटनेवाला।

विशेष—फलित ज्योतिष में जो ग्रह अपनी राशि से एकबारगी दूसरी राशि में चला जाता है, उसे अतिवक्री या महावक्री कहते हैं। यह वक्रता मंगल आदि पाँच ग्रहों में भी होती है। विशेष दे० वक्रगति'।

२. कुटिल। टेढ़ा (को०)। ३. धूर्त। मक्कार। फरेबी (को०)।

वक्री^{2}—संज्ञा पुं० १. वक्र ग्रह। २. वह प्राणी जिसके अंग जन्म से टेढ़े हों। २. बुद्धदेव या जैन जिन्होंने टेढ़ी युक्तियों से वैदिक मत का विरोध किया था।

वक्रोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का काव्यालंकार जिसमें काकु या श्लेष से वाक्य का और का और अर्थ किया जाता है। २. काकूक्ति। ३. वह उक्ति जिसमें चमत्कार हो। बढ़िया उक्ति।

विशेष—किसी किसी आचार्य (जैसे 'वक्रोक्तिजीवितम्' के कर्ता) ने वाक्चातुर्य को ही काव्य की आत्मा कह दिया है, जिसका और आचार्यों ने खंडन किया है।

वक्रोक्तिजीवित—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य शास्त्र का एक ग्रंथ जिसमें वक्रोक्ति को ही काव्य की आत्मा माना गया है। इसके रचयिता आचार्य 'कुंतक' थे।

वक्रोष्ठि, वक्रोष्ठिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऐसी मंद हँसी जिसमें दाँत न खुलें केवल ओंठ कुछ टेढ़े हो जायँ। मुसकान। स्मित।

वक्वस—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का मद्य।

वक्षःस्थल—संज्ञा पुं० [सं०] उरस्थल। वक्ष।

वक्ष—संज्ञा पुं० [सं० वक्षस्] १. पेट और गले के बीच में पड़नेवाला भाग जिसमें स्त्रियों के स्तन और पुरुषों के स्तन के से चिह्न होते हैं। छाती। उरस्थल। २. बैल। वृषभ। ३. शक्ति। बल। ताकत (को०)।

वक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] १. छाती। सीना। २. शक्ति वा स्फूर्तिदायक पदार्थ। ३. अग्नि। पावक [को०]।

वक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पेट। उदर। २. नदी का पाट या चौड़ाई। ३. नदी [को०]।

वक्षथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. उगना। बड़ा होना।

वक्षस्थल—संज्ञा पुं० [सं०] उरस। छाती।

वक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्निशिखा।

वक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वंक्षु'।

वक्षोग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

वक्षोज—संज्ञा पुं० [सं०] स्तन। कुच।

वक्षोरुह—संज्ञा पुं० [सं०] स्तन। कुच।

वक्षोमंडली—संज्ञा पुं० [सं० वक्षोमण्डलिन्] नृत्य में हाथों की एक मुद्रा वा स्थिति [को०]।

वक्षोमणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] मणि या रत्न जो वक्ष पर धारण किया जाय [को०]।

वक्ष्यमाण—वि० [सं०] १. वाच्य। वक्तव्य। २. जिसे कह रहे हों अथवा जो आगे या बाद में कहा जानेवाला हो। जो कथन का प्रस्तुत विषय हो।

वखरुहा†—संज्ञा पुं० [देश०] १. मुँह से निकला हुआ शब्द। बोल। बकार। २. अंश। भाग। बखरा। उ०—वखरु साचु करे वा पारु। नानक पाए मुक्ति द्वार।—प्राण०, पृ० १०४।

वखाण‡—संज्ञा पुं० [हिं० बखान] दे० 'बखान'। उ०—मालव देस वखोडिया, मारू किया वखाण। मारू सोहागिणि थई, सुंदरि सगुण सुजाण। - ढोला०, दू० ६७२।

वगपंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वकपङ्क्ति] बगलों की पाँत। वकपंक्ति। उ०—जामन चलत सेत सिर दंती। स्याम घटा मानहु वगपंती—हिं० क० का०, पृ० २२३।

वगर^1—अव्य० [फ़ा०] दे० 'अगर'। उ०—मेरे वर में बोलो के क्या रंग है। वगर नहीं तो तुम सूँ मेरा जंग है।—दक्खिनी०, पृ० ३४८।

वगर(पु)^2—संज्ञा पुं० [सं० प्रघण, प्रा० पघण] महल। निवास। दे० 'बगर'। उ०—जड़ित नीलमणि जासु वगर सुंदर चामीकर। नगर परम रमनीय सुथर सुरलोकहु ते वर।—दीन० ग्रं०, १४६।

वगरना—अव्य० [फा० वगरह्] अन्यथा। वर्ना। नहीं तो [को०]।

वगराना—क्रि० स० [सं० विकीर्णन] फैलाना। दे० 'बगराना'। उ०—कुसुम समूढ़ रहत सुंदर सुगंध वगराई।—प्रेमघन०, पृ० १६।

वगलबंदी†—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० बग़लबंदी] मिरजई। उ०—अतः वगलबंदी आई, पर वह भी न भई।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २१६।

वगला—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वगलामुखी'।

वगलामुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दस महाविद्याओं में से एक जिसकी पूजा का महत्व तंत्रों में वर्णित है।

वगा—संज्ञा स्त्री० [अ० वग़ा] युद्ध। लड़ाई [को०]।

वगाह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'अवगाह' [को०]।

वगैरह—अव्य० [अ० वग़ैरह] एक अव्यय जिसका अर्थ यह होता है कि 'इसी प्रकार और भी समझिए'। इत्यादि। आदि। जैसे,—बैल, ऊँट, हाथी, वगैरह बहुत से जानवर वहाँ आए थे।

विशेष—इसका प्रयोग वस्तुओं को गिनाने में उनके नामों के अंत में संक्षेप या लाघव के लिये होता है।

वग्ग^1—संज्ञा पुं० [सं० वर्ग, प्रा० वग्ग (= बाड़ा)] १. दे० 'वर्ग'। समूह। शाला। (लाक्ष०)। उ०—ढोलह चित्त विमासियउ, मारू देश अलग्ग। आपण जाए जोइयउ, करहा हंदउ वग्ग। — ढोला०, दू० ३०७।

वग्गⓟ²—संज्ञा पुं० [अ० बाग़] बगीचा । बाग । उ०—फुल्ले सुगंध के बरन फूल । देखंत वग्ग पावस्स भूल ।—पृ० रा०, १४।६८ ।

वग्ग³—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्गा, प्रा० वग्ग] लगाम । उ०—फेरे वग्ग तुरंग री, तोले खग्ग करग्ग । —रा० रू०, पृ० ३२ ।

वग्गनाⓟ—क्रि० अ० [सं०√वल्ग्, प्रा० वग्ग (=दहाड़ना) + हिं० ना (प्रत्य०)] तीव्र ध्वनि करना । गरजना । बजना । उ०—बजे त्रंब जंगी गढ़े नाल वग्गी । लजावंत जंगी दुहूँ दीठ लग्गी ।—रा० रू०, पृ० १८९ ।

वग्नु¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वक्ता । वाचक । २. शब्द । आवाज । ध्वनि । ३. (किसी पशु की) चिल्लाहट [को०] ।

वग्नु²—वि० बकवादी [को०] ।

वग्वनु—संज्ञा पुं० [सं०] ध्वनि [को०] ।

वचंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० वचण्डी] १. सारिका । मैना । २. दीप की बत्ती । बत्ती । ३. एक शस्त्र का नाम ।

विशेष—मेदिनी कोश में इस शब्द का पाठ 'वचंडा' और 'वरंडा' है ।

वचंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० वचन्दा] दे० 'वचंडी' [को०] ।

वच¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. तोता । शुक पक्षी । २. वजह । कारण । हेतु । ३. सूर्य ।

यौ०—वचार्च=सूर्यपूजक ।

वच²—संज्ञा पुं० [वचस्, वचन] १. वचन । वाक्य । २. आज्ञा । आदेश (को०) । ३. सलाह । मंत्रणा । परामर्श (को०) । ४. चिड़ियों की चहचह ध्वनि (को०) । ५. स्तुति । स्तवन (को०) । ६. (व्याकरण में) शब्द के रूप में वह विधान जिससे एकत्व आदि का बोध होता है । दे० 'वचन'–३ ।

वचक्नु¹—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण [को०] ।

वचक्नु²—वि० बकवादी । वग्नु । बहुत बोलने या बड़बड़ानेवाला [को०] ।

वचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मनुष्य के मुँह से निकला हुआ सार्थक शब्द । वाणी । वाक्य ।

पर्या०—**इरा । सरस्वती । ब्राह्मी । भाषा । गिरा । गोर्देवी । भारती । वरजा । वर्णमातृका । व्याहार । लपित ।**

२. कही हुई बात । कथन । उक्ति ।

यौ०—वचनबद्ध । वचनगुप्ति ।

३. व्याकरण में शब्द के रूप में वह विधान जिससे एकत्व या बहुत्व का बोध होता है ।

विशेष—हिंदी में दो ही वचन होते हैं—एकवचन और बहुवचन । पर कुछ और प्राचीन भाषाओं के समान संस्कृत में एक तीसरा वचन द्विवचन भी होता है ।

४. बोलना । बोलने की क्रिया । उच्चारण । वाचन (को०) । ५. शास्त्रों का उधृत अंश । जैसे शास्त्रवचन, श्रुतिवचन (को०) । ६. आदेश (को०) । ७. मंत्रणा । परामर्श (को०) । ८. घोषणा । प्रख्यापन (को०) । ९. शब्द का अर्थ या भाव (को०) । १०. सोंठ सुंठी (को०) ।

वचनकर—वि० [सं०] १. दे० 'वचनकारी' । २. किसी नियम या आदेश का लेखक या उद्घोषक ।

वचनकारी—वि० [सं० वचनकारिन्] आज्ञाकारी ।

वचनक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] आज्ञापालन [को०] ।

वचनगुप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैन धर्म के अनुसार वाणी का ऐसा संयम जिससे वह अशुभ वृत्ति में प्रवृत्त न हो ।

वचनगोचर—वि० [सं०] जो वाणी द्वारा व्यक्त हो । कथन द्वारा व्यक्त [को०] ।

वचनगौरव—संज्ञा पुं० [सं०] आज्ञा की गुरुता । आदेश के प्रति आदर भाव [को०] ।

वचनग्राही—वि० [सं० वचनग्राहिन्] आज्ञा का पालन करनेवाला [को०]

वचनपटु—वि० [सं०] बातचीत करने में कुशल [को०] ।

वचनबद्ध—वि० [सं०] प्रतिज्ञाबद्ध । प्रतिश्रुत [को०] ।

वचनरचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] कथन, लेखन, भाषण की प्रभावशाली शब्दावली [को०] ।

वचनलक्षिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह परकीया नायिका जिसकी बातचीत से उसका उपपति से प्रेम लक्षित या प्रकट होता है । जैसे,—अंगन की छवि भूपन की रघुनाथ सराहि सबै सिहरातें । आपनी प्रीति, मया उनकी प्रगटी प्रगटे सुख के हियरातें । काहे के आजु छिपावति हौ हमसों करि ये चतुराई की घातें । मैं निज कान सुनी जो कही यह काल्हि सखी सों गोपाल की बातें ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

वचनविदग्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नायिकाओं का एक भेद । वह परकीया नायिका जो अपने वचन की चतुराई से नायक की प्रीति का साधन करती हो । जैसे,—जब लौं घर को धनी आवै घरै तब लौं तो कहुँ चित दैबो करो । पदमाकर ये बछरा अपने बछरान के संग चरैबो करो । अरु औरन के घर तें हम सों तुम दूनी दुहावन लैबो करो । नित साँझ सकारे हमारी हहा ! हरि गैयन को दुहि जैबो करो ।—पद्माकर (शब्द०) ।

वचनव्यक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी उक्ति का ठीक ठीक आशय । २. भाष्य । विवृति । निर्वचन । व्याख्या [को०] ।

वचनसहाय¹—वि० [सं०] सहायता का वचन देनेवाला [को०] ।

वचनसहाय²—संज्ञा पुं० १. कथन द्वारा की गई सहायता । २. मित्र [को०] ।

वचनस्थित—वि० [सं०] बात पर दृढ़ रहनेवाला [को०] ।

वचनावक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] अवक्षेप से भरे वचन का कथन [को०] ।

वचनीय—वि० [सं०] १. कथनीय । २. निंदनीय (को०) ।

वचनीय¹—संज्ञा पुं० [सं०] निंदा । शिकायत ।

वचनोपक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्य का आरंभ [को०] ।

वचर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुक्कुट । २. शठ ।

वचलु—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुश्मन । शत्रु । २. दुष्ट व्यक्ति [को०] ।

वचस¹—वि० [सं०] १. कुशल । चतुर । २. वाचाल [को०] ।

वचसांपति—संज्ञा पुं० [सं० वचसाम्पति] बृहस्पति [को०] ।

वचसा—अव्य० [सं०] वचन द्वारा । कथन द्वारा [को०] ।

वचस्कर—वि० [सं०] १. आज्ञाकारी । २. बोलनेवाला [को०] ।

वचस्वी—वि० [सं० वचस्विन्] बोलने में पटु । प्रवक्ता ।

वचा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वच नाम की ओषधि । विशेष दे० 'बच' । २. सारिका पक्षी । मैना ।

वचार—संज्ञा पुं० [?] दे० 'विचार' । उ०—वाँहे सुंदरि बहरखा, चापू चुड़स वचार । मनुहरि कटि थल मेखला, पग झाँझर झणकार ।—ढोला०, दू० ४८१ ।

वचोग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] कर्ण । कान [को०] ।

वचोहर—संज्ञा पुं० [सं०] दूत । संदेशवाहक [को०] ।

वच्छ(पु)¹—संज्ञा पुं० [सं० वक्षस्, प्रा० वच्छ] उर । छाती ।

वच्छ²—संज्ञा पुं० [सं० वत्स, प्रा० वच्छ] दे० 'वत्स' ।

वजग—संज्ञा पुं० [अ० वज़ग़] दे० 'वजगा' [को०] ।

वजगा—संज्ञा पुं० [अ० वज़ग़ह्] १. मंडूक । मेढक । २. गृहगोधा । छिपकिली । ३. गिरगिट । कृकलास [को०] ।

वजन—संज्ञा पुं० [अ० वज़न] १. भार । बोझ । २. तौल । ३. तौलने की क्रिया । ४. मान । मर्यादा । गौरव ।

क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।

यौ०—**वजनदार** = दे० 'वजनी' ।

बजनी—वि० [अ० वज़न + ई] १. जिसका बहुत बोझ हो । भारी । २. जिसका कुछ असर हो । मानने योग्य ।

वजर(पु)¹—संज्ञा, पुं० [सं० वज्र] दे० 'वज्र' । उ०—एक अनेकाँ सूँ हिचै, छाती वजर कपाट ।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० ५ ।

यौ०—**वजरकपाट** = वज्र के समान दरवाजा ।

वजर²—संज्ञा पुं० [अ०] भय । डर । खौफ [को०] ।

वजह—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. कारण । हेतु । २. प्रकृति । ३. तत्व । ४. मुखाकृति । चेहरा (को०) ।

वजा—संज्ञा स्त्री० [अ० वज़अ्] १. संघटन । बनावट । रचना । २. चालढाल । सजधज । ३. रूप । आकृति । ४. दशा । अवस्था । ५. रीति । प्रणाली । तौर तरीका । उ०- हुनकी रहन सहन वजा अंदाज और कार्यों में......।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १७७ । ६. मुजरा । मिनहा । कटती । ७. जनना । प्रसव (को०) ८. रखना (को०) । ९. सदैव एक समान रहना और यथायोग्य व्यवहार करना । (को०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

वजादार—वि० [अ० वज़ा + फ़ा० दार] १. जिसकी बनावट या गठन आदि बहुत अच्छी हो । तरहदार । दर्शनीय । २. अपनी रीतिनीति पर कायम रहनेवाला । जो अपनी वजा का पाबंद हो (को०) ।

वजादारी—संज्ञा स्त्री० [अ० वज़ा + फ़ा० दारी] १. कपड़े वगैरह पहनने का सुंदर ढंग । फैशन । २. सजावट का उत्तम ढंग । ३. किसी प्रकार की मर्यादा आदि का भली भाँति निर्वाह । ३ उ०—प्रायः स्त्रियों के नाज व अंदाज के कारण नजाकत वजादारी से रहित न हो प्रचलित थी ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ५ ।

वजारत—संज्ञा स्त्री० [अ० वज़ारत] १. मंत्री, वजीर या अमात्य का पद । वजीरी । २. मंत्री या अमात्य का कार्य । ३, अमात्य का कार्यालय ।

वजाहत¹—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. सुंदरता । भव्यता । चेहरे का रोब । उ०—कहते हैं जो था कोई सौदागर एक । वजाहत मन पाक सीरत में नेक ।—दक्खिनी०, पृ० ७ । २. प्रतिष्ठा । महत्व । बड़प्पन ।

वजाहत²—संज्ञा स्त्री० [अ० वज़ाहत] १, स्पष्टता । विवरण । २. विस्तार । फैलाव [को०] ।

वजीफा—संज्ञा पुं० [अ० वज़ीफ़ह्] १. वृत्ति । उ०—याद करना हर घड़ी तुझ यार का । है वजीफा मुझ दिले बीमार था ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ६ । २. वह वृत्ति या आर्थिक सहायता जो विद्वानों, छात्रों, संन्यासियों, दीनों या बिगड़े हुए रईसों आदि को दी जाती है । ३. निवृत्त वेतन । पेनशन (को०) । ४. वह जप या पाठ जो नियमपूर्वक प्रतिदिन किया जाता है । (मुसलमान) । उ०—प्रातःकाल नमाज वजीफा पढ़िकै चट पट ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० २० ।

क्रि० प्र०—पढ़ना ।

वजीफादार--वि० [अ० वज़ीफ़ह् + फा० दार] वजीफा पानेवाला ।

वजीर—संज्ञा पुं० [अ० वज़ीर] १, वह जो बादशाह को रियासत के प्रबंध में सलाह या सहायता दे । मंत्री । अमात्य । दीवान । २. शतरंज की एक गोटी ।

विशेष—यह बादशाह से छोटी और शेष सब मोहरों से बड़ी होती है । यह गोटी आगे, पीछे, दाहिने, बाँए और तिरछे जिधर चाहे, उधर और जितने घर चाहे, उतने घर चल सकती है ।

यौ०—वजीरे आजम = प्रधान मंत्री । वजीरे इंसाफ = न्यायमंत्री । वजीरे खारिजा = परराष्ट्रमंत्री, वजीरे गिजा = खाद्यमंत्री । वजीरे जंग = युद्धमंत्री । वजीरे तालीम = शिक्षामंत्री । वजीरे दाखिला = गृहमंत्री । वजीरे माल = अर्थमंत्री ।

वजीरी¹—संज्ञा स्त्री० [अ० वज़ीरी] वजीर का काम या पद ।

वजीरी²—संज्ञा पुं० १. सरहदी पठानों का एक वर्ग या कबीला । २. घोड़ों की एक जाति जो बलूचिस्तान में पाई जाती है ।

विशेष—इस जाति के घोड़े बड़े परिश्रमी और दौड़ने में बहुत तेज होते हैं । इनके कंधे ऊँचे और पुट्ठे चौड़े होते हैं ।

वजीह—वि० [अ०] दृढ़ । मजबूत [को०] ।

वजीहा—वि० [अ० वजीहह्] १. सुंदर । भव्य । रोबदार । २. सामान्य । विशिष्ट [को०] ।

वजू—संज्ञा पुं० [अ० वुज़ू] नमाज पढ़ने के पूर्व शौच के लिये हाथ पाँव आदि धोना । उ०—का भो वजू व मज्जन कीन्हें का मसजिद सिर नाएँ । हृदया कपट निमाज गुजारै का भो मक्का जाएँ । कबीर (शब्द०) ।

विशेष—मुसलमानों का नियम है कि नमाज पढ़ने के पूर्व वे पहले तीन बार हाथ धोते, फिर तीन बार कुल्ली करके नथनों में पानी देते हैं। फिर मुँह धोकर कुहनियों तक हाथ धोते हैं, और सिर पर पानी लगे हाथ फेरते हैं। अंत में पाँव धोते हैं। इसी आचार का नाम वजू है।

क्रि० प्र०—करना।

वजूद—संज्ञा पुं० [अ०] १. सत्ता। स्थिति। अस्तित्व। उ०—नाहीं खबर वजूद की मैं फकीर दिवाना।—मलूक० बानी, पृ० ७। २. शरीर। देह। उ०—वजूद खजाना अलह का, जर अंदर अरि वाहि। रज्जब पीर खजानची, दसत न सकई बाहि।—रज्जब०, पृ० १८। ३. सृष्ट। ४. प्रकट या घटित होना। अभिव्यक्ति।

मुहा०—वजूद पकड़ना = प्रकट होना। अस्तित्व में आना। वजूद में आना = उत्पन्न होना। प्रकट होना। वजूद में लाना = उत्पन्न करना।

वजूहात—संज्ञा स्त्री० [अ० वजूह का बहु० रूप] कारणों का समूह।

विशेष—यह बहुवचन शब्द है, और इसका प्रयोग भी सदा बहुवचन में ही होता है।

वजेकता—संज्ञा पुं० [अ० वज़ए + कत्अ़] बनावट। तर्ज। ढंग। उ०—और फकीराना मकान होने की शहादत अपनी वजेकता और तर्जे तामीर से ब जबाने हाल खुद ही दे रहा है।—सुंदर० ग्रं० (जी०), भा० १, पृ० ५३।

वजेदारी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० वज्अदारी] दे० 'वजादारी'। उ०—पंडित पुरुषोत्तमदास ने बड़ी वजेदारी से कहा।—श्रीनिवास ग्रं०, पृ० १७०।

वजोग†—संज्ञा पुं० [सं० वियोग] दे० 'वियोग'। उ०—किसन वजोग चारणाँ कारण गलियो जुजठल राव गत।—बाँकी० ग्रं०, भा० ३, पृ० ११२।

वज्जित्त(५)—संज्ञा, पुं० [सं० वादित्र] वादित्र। बाजा। उ०—वज्जित्त नृघोष अरि घोष पर, छोरि पंग दिष्षे सु हय।—पृ० रा०, २६।१४।

वज्द—संज्ञा पुं० [अ०] १. आनंदातिरेक में होनेवाली आत्मविस्मृति। २. काव्य या संगीत की रसानुभूतिजन्य तन्मयता। ३. आनंद की स्थिति मे आपा भूला हुआ व्यक्ति [को०]।

वज्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार भाले के फल के समान एक शस्त्र जो इंद्र का प्रधान शस्त्र कहा गया है।

विशेष—इसकी उत्पत्ति की कथा ब्राह्मण ग्रंथों और पुराणों में लिखी हुई है। ऋग्वेद में उल्लेख है कि दधीचि ऋषि की हड्डी से इंद्र ने राक्षसों का ध्वंस किया। ऐतरेय ब्राह्मण में इसका इस प्रकार विवरण है। दधीचि जब तक जीते थे, तब तक असुर उन्हें देखकर भाग जाते थे पर जब वे मर गए, तब असुरों ने उत्पात मचाना आरंभ किया। इंद्र दधीचि ऋषि की खोज में पुष्कर गए। वहाँ पता चला कि दधीचि का देहावसान हो गया। इसपर इंद्र उनकी हड्डी ढूँढने लगे। पुष्कर क्षेत्र में सिर की हड्डी मिली। उसी का वज्र बनाकर इंद्र ने असुरों का संहार किया। भागवत में लिखा है कि इंद्र ने वृत्रासुर का वध करने के लिये दधीचि की हड्डी से वज्र बनवाया था। मत्स्यपुराण के अनुसार जब विश्वकर्मा ने सूर्य को भ्रमयंत्र (खराद) पर चढ़ाकर खरादा था, तब छिलकर जो तेज निकला था, उसी से विष्णु का चक्र, रुद्र का शूल और इंद्र का वज्र बना था। वामनपुराण में लिखा है कि इंद्र जब दिति के गर्भ में घुस गए थे, तब वहाँ उन्हें बालक के पास ही एक मांसपिंड मिला था। इंद्र ने जब उसे हाथ में लेकर दबाया, तब वह लंबा हो गया और उसमें सौ गाँठें दिखाई पड़ीं। वही पीछे कठिन होकर वज्र बन गया। इसी प्रकार और और पुराणों में भी भिन्न भिन्न कथाएँ हैं।

पर्या०—ह्लादिनी। कुलिश। भिदुर। पवि। शतकोटि। स्वरु। शब। दंभोलि। अशनि। स्वरुस्। जंभारि। शतार। शतधार। आपोत्र। अक्षज। गिरिकंटक। गो। अश्रोत्य। दंभ, इत्यादि। वैदिक निघंटु के अनुसार—विद्युत्। नेमि। हेति। नम। पवि। सृक्। वृक। वच। अर्क। कुत्स। कुलिश। तुज। तिग्म। मेनि। स्वधिति। सायक परशु।

२. विद्युत्। बिजली।

क्रि० प्र०—गिरना।—पड़ना।

मुहा०—वज्र पड़े = दैव से भारी दंड मिले। सत्यनाश हो। (स्त्रियाँ)।

३. हीरा। उ०—मुझे बड़ी दयापूर्वक एक अमोल वज्र की अँगूठी केवल स्मरणार्थ दे गए थे।—श्यामा०, पृ० १२७। ४. एक प्रकार का लोहा। फौलाद।

विशेष—वैद्यक के ग्रंथों में वज्रलौह के अनेक भेद कहे गए हैं। यथा—नीलपिंड, अरुणाभ, मोरक, नागकेसर, तित्तिरांग, स्वर्णवज्र, शैवालवज्र, शेणवज्र, रोहिणी, कांकोल, ग्रंथिवज्रक, और मदन।

५. भाला। बरछा। उ०—हरन रुक्मिनी होत है, दुहूँ ओर भई भीर। अति अघात, कछु नाहिन सूझत, वज्र, चलहिं ज्यों नीर। सूर० (शब्द०)। ६. ज्योतिष में २२ व्यतीपात योगों में से एक। ७. वास्तुविद्या के अनुसार वह स्तंभ (खंभा) जिसका मध्य भाग अष्टकोण हो। ८. विष्णु के चरण का एक चिह्न। ९. अभ्रक। १०. कोकिलाक्ष वृक्ष। ११. श्वेत कुश। १२. काँजी। १३. वज्रपुष्प। १४. धात्री। १५. थूहर का पेड़। सेहुँड। १६. कृष्ण के एक प्रपौत्र जो अनिरुद्ध के पुत्र थे। १७. विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम। १८. बौद्ध मत में चक्राकार चिह्न। १९. बालक। शिशु (को०)। २०. आसन की एक मुद्रा या स्थिति। बैठने का एक प्रकार (को०)। २१. एक प्रकार का सैनिक व्यूह (को०)। २२. रत्न, मणि आदि छेदने का एक औजार (को०)। २३. वज्रवत् कठोर एवं घातक अस्त्र (को०)। २४. कठोर भाषा। वज्र की तरह कठोर भाषा (को०)। २५. अकलबीर नाम का पौधा।

वज्र^{२}—वि० १. वज्र के समान कठिन। बहुत कड़ा या मजबूत। अत्यंत

दृढ़ और पुष्ट। जैसे,—यह मसाला जब सूखेगा, तब वज्र हो जायगा। २. घोर। दारुण। भीषण। उ०—वज्र अगिनि बिरहिनि हिय जारा। सुलगि सुलगि दहि कै भइ छारा।—जायसी (शब्द०)। ३. जिसमें अनी या शल्य हो। अनीदार। काँटेदार।

वज्रकंकट—संज्ञा पुं० [सं० वज्रकङ्कट] हनुमान का एक नाम।

वज्रकंटक—संज्ञा पुं० [सं० वज्रकण्टक] स्नुही वृक्ष। थूहर। सेंहुड़। २. कोकिलाक्ष वृक्ष।

वज्रकंटशाल्मली—संज्ञा पुं० [सं० वज्रकण्टशाल्मली] भागवत पुराण के अनुसार अट्ठाईस नरकों में से एक नरक का नाम।

वज्रकंद—संज्ञा पुं० [सं० वज्रकन्द] १. जंगली सूरन या जिमीकंद। २. शकरकंद। कदा। ३. ताल के वृक्ष का फूल।

वज्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वज्रक्षार। २. फलित ज्योतिष के अनुसार सूर्य के आठ उपग्रहो में से एक, जो सूर्य से तेईसवाँ नक्षत्र होता है। ३. एक प्रकार का तेल (को०)। ४. हीरा (को०)।

वज्रकपाली—संज्ञा पुं० [सं० वज्रकपालिन्] बौद्धों की महायान शाखा के अनुसार एक बुद्ध का नाम।

वज्रकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वज्रकंद' [को०]।

वज्रकषण—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र [को०]।

वज्रकवच—संज्ञा पुं० [सं०] १. समाधि का एक भेद। एक प्रकार की समाधि। २. वह कवच जिसे काटा न जा सके। वज्र के समान दुर्भेद्य कवच [को०]।

वज्रकारक—संज्ञा स० [सं०] नख नामक सुगंधित द्रव्य।

वज्रकालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बुद्ध की माता मायादेवी का नाम।

वज्रकाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैना की एक शक्ति [को०]।

वज्रकीट—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कीड़ा जो पत्थर या काठ को काटकर उसमें छेद कर देता है।

विशेष—कहते हैं, गंडक नदी में इन कीटों के द्वारा काटी हुई शिला ही शालग्राम की बटिया बन जाती है।

वज्रकील—संज्ञा पुं० [सं०] सौदामिनी। तड़ित्। बिजली [को०]।

वज्रकुच—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की समाधि।

वज्रकूट—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक पर्वत का नाम। २. हिमालय की चोटी पर का एक प्राचीन नगर।

वज्रकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] मार्कंडेयपुराण के अनुसार एक राक्षस जो नरक का राजा था। नरकासुर।

वज्रक्षार—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक रसायन योग जिसका व्यवहार गुल्म, शूल, अजीर्ण, शोथ तथा मंदाग्नि आदि उदर रोगों में होता है।

विशेष—साँभर, सैंधव, काच और सौवर्चल लवण तथा जवाखार और सज्जी सम भाग लेकर चूर्ण करते हैं; और उसको थूहर के दूध में भिगाकर तीन दिन तक छाया में सुखाते हैं। इसके उपरांत उस चूर्ण का आक (मदार) के पत्तों में लपेटकर एक घड़े में गजपुट द्वार फूँकते हैं। जब वह भस्म हो जाता है, तब उसमें सोंठ, मिर्च पीपल, त्रिफला, अजवायन, जीरा और चित्रक (चीता) का चूर्ण उतना ही मिलाकर खरल कर लेते हैं और दो टंक मात्रा में सेवन कराते हैं। इसका अनुपान उष्ण जल, गोमूत्र, घी या काँजी है।

वज्रगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों की महायान शाखा के अनुसार एक बोधिसत्व का नाम।

वज्रगोप—संज्ञा पुं०] सं०] बीरबहूटी नाम का कीड़ा। इंद्रगोप।

वज्रघात—संज्ञा पुं० [सं०] १. वज्र की चोट। २. वह चोट जो वज्र की चोट के समान भयंकर हो [को०]।

वज्रघोष—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिजली की कड़क। २. बिजली की कड़क के समान भीषण ध्वनि [को०]।

वज्रचंचु—संज्ञा पुं० [सं० वज्रचञ्चु] गृद्ध [को०]।

वज्रचर्मा—संज्ञा पुं० [सं० वज्रचर्मन्] गैंडा।

वज्रजित्—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ का एक नाम [को०]।

वज्रज्वाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विरोचन दैत्य की पौत्री का नाम। २. कुंभकर्ण की पत्नी। ३. बिजली जी अग्नि [को०]।

वज्रटीक—संज्ञा पुं० [सं०] वज्रकपाली बुद्ध का एक नाम [को०]।

वज्रडाकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] महायान शाखा के तांत्रिक बौद्धों की उपास्य डाकिनियों का एक वर्ग।

विशेष—इस वर्ग के अंतर्गत ये आठ डाकिनियाँ मानी जाती हैं,—लास्या, माला, गीता, नृत्या, पुष्पा, धूपा, दीपा और गंधा। इनकी पूजा तिब्बत में होती है।

वज्रतर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृहत्संहिता के अनुसार एक प्रकार का जोड़ने या पलस्तर करने का मसाला। वज्रलेप [को०]।

वज्रतुंड—संज्ञा पुं० [सं० वज्रतुण्ड] १. गरुड़। २. गणेश। १. गीध। ४. मशक। मच्छड़। ५. थूहर। सेहुँड़।

वज्रतुल्य—संज्ञा पुं० [सं०] नीलम [को०]।

वज्रदंड—संज्ञा पुं० [सं० बज्रदण्ड] एक अस्त्र का नाम जिसे इंद्र ने अर्जुन को प्रदान किया था।

वज्रदंत—संज्ञा पुं० [सं० वज्रदन्त] १. चूहा। २. सूअर।

वज्रदंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्रदन्ती] एक पकार का पेड़ या पौधा।

विशेष—इसकी दतुवन अच्छी होती है और वैद्यक में इसकी जड़ वमनकारक कही गई है।

वज्रदंष्ट्र— देश० पुं० [सं०] १. इंद्रगोप नाम का कीड़ा। बीरबहूटी। २. भागवत के अनुसार एक असुर का नाम।

वज्रदक्षिण—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का एक नाम [को०]।

वज्रदशन—संज्ञा पुं० [सं०] चूहा [को०]।

वज्रदेह—वि० [सं०] वज्र के समान कठोर शरीरवाला [को०]।

वज्रदेहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम।

वज्रद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] थूहर का वृक्ष। स्नुही। सेहुँड़।

वज्रधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. बौद्धों की महायान शाखा के अनुसार आदि बुद्ध।

विशेष—तिब्बत के तांत्रिक बौद्ध मतानुसार ये प्रधान बुद्ध, प्रधान जिन, गुह्यपति तथा सब तथागतों के प्रधान मंत्री आदि अनंत और वज्रसत्व हैं। अपदेवताओं ने उनसे हार मानकर प्रतिज्ञा की थी कि बौद्ध धर्म के विरुद्ध कभी प्रयत्न न करेंगे।

३. उल्लू। उलूक।

वज्रधात्वीश्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक देवी जिसकी उपासना तांत्रिक करते हैं। २. वैरोचन की पत्नी [को०]।

वज्रधार—वि० [सं०] जिसका धार हीरे की तरह कठिन होता है [को०]।

वज्रधारण—संज्ञा पुं० [सं०] नकली सोना। कृत्रिन कोना [को०]।

वज्रनख—संज्ञा पुं० [सं०] नृसिंह।

वज्रनाभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्कंद के एक अनुचर का नाम। २. एक दानवराज। ३. राजा उक्थ के पुत्र का नाम। ४. विष्णु के चक्र का नाम को (को०)।

वज्रनिर्घोष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वज्रघोष'।

वज्रपरीक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हीरे की परख [को०]।

वज्रपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. ब्राह्मण। ३. बौद्धशास्त्रानुसार एक प्रकार की देवयोनि। ४. एक बोधिसत्व। ध्यानी बोधिसत्व। ५. उलूक। उल्लू (को०)।

वज्रपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिजली का गिरना। २. भारी बिपत्ति का आना [को०]।

वज्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. तिल का फूल। २. एक विशिष्ट गुणवान कीमती पुष्प [को०]।

वज्रपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतपुष्पा [को०]।

यज्रप्रभ—संज्ञा पुं० [सं०] एक विद्याधर का नाम।

वज्रबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. रुद्र। ३. अग्नि।

वज्रबीजक—संज्ञा पुं० [सं०] लता [को०]।

वज्रभृकुटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों के अनुसार तंत्र की एक देवी जिसकी उपासना तांत्रिक करते हैं [को०]।

वज्रभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र [को०]।

वज्रभैरव—संज्ञा पुं० [सं०] महायान शाखा के बौद्धों के एक देवता, जिन्हें भूटान में 'यमांतक शिव' कहते हैं। इनके अनेक मुख और हाथ माने जाते हैं।

वज्रमणि—संज्ञा पुं० [सं०] हीरा।

वज्रमय—वि० [सं०] १. कठोर। कठिन। २. क्रूर हृदय। कठिन हृदयवाला [को०]।

वज्रमति—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व [को०]।

वज्रमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का कीड़ा। वज्रकीट। २. एक प्रकार की समाधि [को०]।

वज्रमुष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. एक राक्षस का नाम। ३. जंगली सूरन। ४. वीर। क्षत्रिय। योद्धा (को०)। ५. एक अस्त्र (को०)। ६. वज्र के समान हाथ की बँधी हुई मुट्ठी (को०)। ७. तीर चलाने के समय हाथ की मुद्रा (को०)।

वज्रमूली—संज्ञा स्त्री० [सं०] मापपर्णी।

वज्रयान—संज्ञा पुं० [सं०, प्रा० वज्जजाण] वह बौद्ध मत जिसपर तंत्र का बहुत अधिक प्रभाव था। उ०—उस काल की रचना के नमूने बौद्धों की वज्रयान शाखा के सिद्धों की कृतियों के बीच मिले हैं।—इतिहास, पृ० ६।

वज्रयोगिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तंत्रानुसार एक देवी। इसे वरदयोगिनी भी कहते हैं।

वज्ररथ—संज्ञा पुं० [सं०] क्षत्रिय।

वज्ररद—संज्ञा पुं० [सं०] सुकर [को०]।

वज्रलिपि—संज्ञा स्त्री० [सं०] लिखने की एक विशेष रीति [को०]।

वज्रलेप—संज्ञा पुं० [सं०] एक मसाला या पलस्तर जिसका लेप करने से दीवार, मूर्ति आदि अत्यंत दृढ़ और मजबूत हो जाती हैं।

विशेष—यह दो तरह से बनता है। एक में तो तेंदू और कैथ के कच्चे फल, सेमल के फूल, शल्लकी (सलई) के बीज, धन्वन की छाल और बच को लेकर एक द्रोण पानी में उबालते हैं। जब जलकर आठवाँ भाग रह जाता है, तब उसे उतारकर उसमें गंधाबिरोजा, बोल, गूगल, भिलावाँ, कुंदुरु, गोंद, राल, अलसी और बेल का गूदा घोटकर मिलाते हैं। दूसरा मसाला इस प्रकार है—लाख, कुंदुरु, गोंद, वेल का गूदा, गँगेरन का फल, तेंदू का फल, महुए का फल, मजीठ, राल, बोल और आँवला इन सबको द्रोण भर पानी में उबालते हैं। जब अष्टमांश रह जाता है, तब काम में लाते हैं।

वज्रलोहक—संज्ञा पुं० [सं०] चुंबक [को०]।

वज्रवध—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशनिपात जन्य मृत्यु। वज्रपात से हुई मौत। २. वज्र के समान कठोर आघात [को०]।

वज्रवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] अस्थिसंहार नाम की लता [को०]।

वज्रवारक—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार जैमिनि, सुमंत, वैशंपायन, पुलस्त्य, और पुलह नामक पाँच ऋषि, जिनका नाम लेने से वज्रपात का भय नहीं रहता।

वज्रवाराही—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बौद्धों की एक देवी का नाम।

पर्या०—मारीची। त्रिमुखी। वज्रकालिका। विकटा। गौरी।

२. बुद्ध की माता मायादेवी का नाम।

वज्रविष्कंभ—संज्ञा पुं० [सं० वज्रविष्कम्भ] गरुड़ के एक पुत्र का नाम।

वज्रवीर—संज्ञा पुं० [सं०] महाकाल रुद्र का एक नाम।

वज्रवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] सेहुँड़ [को०]।

वज्रवेग—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक राक्षस का नाम। २. एक विद्याधर का नाम।

वज्रव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की सेना की रचना, जो दुधारे खड्ग के आकार में स्थित की जाती थी।

वज्रशल्य—संज्ञा पुं० [सं०] साही नाम का वन्य जंतु। शल्यक [को०]।

वज्रशाखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैन मत के एक संप्रदाय का नाम जिसे वज्रस्वामी ने चलाया था।

वज्रशृंखला—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्रशृङ्खला] जैन मतानुसार सोलह महाविद्याओं में से एक।

वज्रसंघात—संज्ञा पुं० [सं० वज्रसङ्घात] १. भीमसेन। २. पत्थर जोड़ने का एक मसाला जिसमें आठ भाग सीसा, दो भाग काँसा और एक भाग पीतल होता था। इससे पत्थर की जोड़ाई की जाती थी।

वज्रसंहत—संज्ञा पुं० [सं०] ललितविस्तर के अनुसार एक बुद्ध का नाम।

वज्रसत्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक ध्यानी बुद्ध का नाम।

वज्रसमाधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्ध धर्म के अनुसार एक प्रकार की समाधि।

वज्रसार[1]—संज्ञा पुं० [सं०] हीरा।

वज्रसार[2]—वि० अत्यंत कठोर [को०]।

वज्रसूची—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह सुई जिसकी नोक पर हीरा लगा हो। २. एक उपनिषद्। ३. अश्वघोषप्रणीत एक ग्रंथ [को०]।

वज्रसूर्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

वज्रसेन—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम [को०]।

वज्रहस्त—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र। २. अग्नि (को०)। ३. मरुत (को०)। ४. शिव (को०)।

वज्रहृदय—वि० [सं०] कठोर। क्रूर।

वज्रांक—वि० [सं० वज्राङ्क] हीरा जड़ा हुआ [को०]।

वज्रांग—संज्ञा पुं० [सं० वज्राङ्ग] १. सर्प। साँप। २. हनुमान। उ०—जलराशि विपुल मथ मिला अनिल में महाराव। वज्रांग तेज घन बना पवन को।—अनामिका, पृ० १५३।

वज्रांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्राङ्गी] १. गवेधुक। कौड़िल्ला। २. हड़जोड़ नाम की लता जो चोट लगने पर लगाई जाती है।

वज्रांबुजा—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्राम्बुजा] बौद्धों की एक देवी का नाम। [को०]

वज्रांशु—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण के एक पुत्र का नाम [को०]।

वज्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्नुही। थूहर। २. गुड़ुच। ३. दुर्गा।

वज्राकर- वि० पुं० [सं०] हीरे की खान [को०]।

वज्राकार—वि० [सं०] १. वज्र के समान। वज्र जैसा। २ वज्र के आकार का [को०]।

वज्राची—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेहुंड़ नाम का कँटीला पौधा [को०]।

वज्राख्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक रत्न। एक मूल्यवान् पत्थर। [को०]।

वज्राग—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्राग्नि] वज्र की आग। उ०—राठौड़ा उण वार रां जोस पराक्रम जोर। की बड़वाग वज्राग की सिघन आगन सोर—रा० रू० । ७८।

वज्राग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्राग्नि] वज्र की ज्वाला। बिजली की आग। उ०—पार है वज्राग्नि ताकै ऊपर अचानचक्र घूरि उड़ि जाइ कहूँ ठीहर न पाइ है।—सुंदर ग्रं; भा० २, पृ० ५०० ।

वज्राघात—संज्ञा पुं० [सं०] वज्र की चोट। बिजली का आघात [को०]।

वज्राचार्य—संज्ञा पुं० [सं०] नैपाली बौद्धों के अनुसार तांत्रिक बौद्ध आचार्य जिसे तिब्बत में लामा कहते हैं।

विशेष—यह बौद्ध आचार्य गृहस्थ होता है और अपने पुत्र कलत्र के साथ विहार में रह सकता है। नेपाल और तिब्बत में ऐसे आचार्यों का बड़ा मान है।

वज्राभ—संज्ञा पुं० [सं०] दुग्ध पाषाण। स्फटिक मृत्तिका। एक मूल्यवान् पत्थर [को०]।

वज्राभिषवन—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अनुष्ठान जिसमें तीन दिन तक जौ का सत्तू पीकर रहते थे।

वज्राभ्र—संज्ञा [सं०] एक प्रकार का अभ्रक जो काले रंग का होता है।

वज्रायुध—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र।

वज्रावर्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक मेघ का नाम। उ०—सुनत मेघवर्तक सजि सैन लै आए। जलवर्त, वारिवर्त, पवनवर्त, वज्रावर्त, आगिवर्तक जलद संग लाए।—सूर। (शब्द०)।

वज्राशनि—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रात्मा। वज्र [को०]।

वज्रासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हठ योग के चौरासी आसनों में से एक जिसमें गुदा और लिंग के मध्य के स्थान को बाएँ पैर की एड़ी से दबाकर उसके ऊपर दाहिना पैर रखकर पालथी लगाकर बैठते हैं। २. वह शिला जिसपर बैठकर बुद्धदेव ने बुद्धत्व लाभ किया था। यह गया जी में बोधिद्रुम के नीचे थी।

वज्रास्थि—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेहुँड़ [को०]।

वज्रास्थिशृंखला—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्रास्थिशृङ्खला] तालमखाना। कोकिलाक्ष [को०]।

वज्रिजित्—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़।

वज्री[1]—संज्ञा पुं० [सं० वज्रिन्] १. इंद्र। २. एक प्रकार की ईंट। ३. वह जो वज्र से युक्त हो (को०)। ४. उल्लू (को०)। ५. बौद्ध भिक्षु [को०]।

वज्री[2]—संज्ञा स्त्री० १. थूहर। स्नुही। २. तिधारा। नरसेज।

वज्रश्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बौद्धों की एक देवी। २. एक तांत्रिक अनुष्ठान जिसे वज्रवाहनिका भी कहते हैं।

विशेष—इसमें वज्र बनाकर मंत्रों द्वारा अभिषेक करते हैं और उसपर सोने से मंत्र लिखते हैं। इसके उपरांत उस वज्र को किसी जितेंद्रिय पुरुष के हाथ में दे देते हैं और लाख बार मंत्र जाप करके वज्रकुंड में हवन करते हैं। इस प्रयोग से शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है।

वज्रोद्ग—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की समाधि [को०]।

वज्रोली—संज्ञा स्त्री० [सं० या हिं० वज्र+ओली] हठयोग की एक मुद्रा का नाम।

वट—संज्ञा पुं० [सं०] १. बरगद का पेड़। उ०—लेकर वट का दूध जटा प्रभु ने रची, अब सुमंत्र के लिये न कुछ आशा बची। साकेत, पृ० १२६। २. गोली वस्तु। गेंद। गोल (को०)। ३. एक खाद्य। बड़ा या पकौड़ा (को०)। ४. साम्य। एकरूपता

(को०)। ५. शृंखला। लड़ी या डोरी (को०)। ६. एक पक्षी (को०)। ७. कौड़ो। कपर्दक (को०)। ८. गंधक (को०)। ९. शून्य। सिफर (को०)। १०. शतरंज का प्यादा (को०)।

वटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बड़ी टिकिया या गोला। बट्टा। २. बड़ा। पकौड़ा। ३. एक तौल जो आठ माशे की होती है और सोना तौलने के काम में आती थी। इसे क्षुद्रम, प्रक्षण और कोक भी कहते थे। यह १० गुंजा या शोण के बराबर कही गई है,—१० गुंजा = १ माशा, ४ माशा = १ शोण, २ शोण = १ वटक।

वटका—संज्ञा पुं० [देश०] टुकड़ा। उ०—दोह घटका खिरै बंट वटका दुवै, आध जगनाथ राजाण अटका हुवै।—रघु० रू०, पृ० १८४।

वटच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत बर्बरी। सफेद वनतुलसी।

वटपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वटच्छद' २. वट का पत्ता [को०]।

वटपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृत्तमल्लिका नामक फूल का पौधा।

वटपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाखानभेद। पथरफोड़।

वटर^{1}—वि० [सं०] दुष्ट। खल। शठ [को०]।

वटर^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चोर। २. बटेर नामक पक्षी। ३. पगड़ी। ४. बिस्तर। चटाई। ५. मथानी। ६. एक सुगंधित घास (को०)। ७. मुर्गा (को०)।

वटवासी—संज्ञा पुं० [सं० वटवासिन्] यक्ष [को०]।

वटसावित्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक व्रत का नाम जिसमें स्त्रियाँ वट का पूजन करती हैं। दे० 'बरसायत'।

वटाकर, वटारक—संज्ञा पुं० [सं०] रज्जु। रस्सी।

वटावीक—संज्ञा पुं० [सं०] छद्मतापस। दांभिक [को०]।

वटाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर का एक नाम [को०]।

वटि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कृमि। कीट। २. चिउँटी। चींटी। ३. दे० 'वटिका' [को०]।

वटिक—संज्ञा पुं० [सं०] शतरंज का प्यादा या मोहरा [को०]।

वटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गोली। वटी। २. शतरंज का मोहरा। वटिक (को०)। ३. एक खाद्य पदार्थ जो चावल और उड़द के मिश्रण से बनता है (को०)।

वटी^{2}—वि० [सं० वटिन्] जिसमें डोरी या सिकड़ी लगी हो। वर्तुल या गोलाकार [को०]।

वटी^{2}—संज्ञा पुं० शतरंज की गोटी। वटिक [को०]।

वटी^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गोली या टिकिया। बटी। २. रस्सी। सिकड़ी। रज्जु (को०)।

वटु—संज्ञा पुं० [सं०] १. बालक। २. ब्रह्मचारी। माणवक।

वटुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बालक। २. माणवक। ब्रह्मचारी। ३. एक भैरव। बटुकभैरव। ४. मूर्ख। अज्ञ (लाक्ष०)।

वटुरी वि० [सं० वटुरिन्] चौड़ा। विस्तृत। फैलावदार [को०]।

वटेस्वर—संज्ञा पुं० [सं० वटेश्वर] शिव। महादेव। उ०—पुज्जि वटेश्वर मल्ल सौं परौ सरसव जाय।—प० रासो, पृ० ६१।

वटोदका—संज्ञा स्त्री० [सं०] भागवत के अनुसार एक नदी जो पवित्र मानी जाती है।

वटोरना(पु)†—क्रि० स० [सं० वर्तुल+करण] दे० 'बटोरना'। उ०—परम ब्रह्म परमत्थ वुज्झइ, वित्ते वटोरइ कित्ति।—कीर्ति०, पृ० ८।

वट्ट^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्म, प्रा० वट्ट] बाट। मार्ग। रास्ता।

वट्ट^{2}—संज्ञा पुं० [देश०] १. प्याला। कटोरा। (तुल० गुज० वाटको)। २. हानि। नुकसान (तुला० गुज० वट्टो, हिं० बट्टा)। ३. वट्टा। लोढ़ा [को०]।

वट्टक—संज्ञा पुं० [सं०] गोली। वटिका [को०]।

वट्टा—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मन्, प्रा० वट्टग्र] रास्ता। बाट। पथ।

वठर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंबष्ठ नामक एक वर्णसंकर जाति। २. २. शब्दकार। ३. चिकित्सक। हकीम (को०)। ४. जलपात्र (को०)।

वठर^{2}—वि० १. मूर्ख। २. शठ। ३. मंद।

वडफर†—संज्ञा स्त्री० [देश०] ढाल। उ०—अति खीजे सुण सुण असुर, जण जण छीजे प्राण। अवदल खाँ पढियौ अकस, कस वडफर केवाँण।—रा० रू०, पृ० २२९।

वड्व—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वड्वा] घोड़ा।

वडबा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वडवा' [को०]।

वडभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की चिड़िया [को०]।

वडभी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह शाला या घर जो किसी प्रासाद के शिखर पर हो। गृहचूड़ा। धौरहर। धरहरा।

पर्या०—गोपानसी। चंद्रशाला। कूटागार। वलभी।

वडवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'बड़वा^{1}' [को०]।

वडवाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'बड़वाग्नि'।

वडवाभर्ता—संज्ञा पुं० [सं० वडवाभर्तृ] इंद्र का अश्व जिसका नाम उच्चैःश्रवा है [को०]।

वडवामुख—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बड़वाग्नि। २. शिव। ३. एक प्राचीन जनपद। ४. एक पौराणिक समुद्र। दे० 'बड़वामुख' [को०]।

वडवासुत—संज्ञा पुं० [सं०] अश्विनीकुमार [को०]।

वडहंसिका, वडहंसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक रागिनी। दे० 'बड़हंसिका' [को०]।

वडा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक पक्वान्न। दे० 'बड़ा'। २. छोटा गोला। वटिका [को०]।

वडिल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० वडिश [को०]।

वडिश—संज्ञा पुं० [सं०] १. बंसी जिसमें मछली फँसाई जाती है। कँटिया। २. चिकित्सकों का एक अस्त्र जिससे वे वेधते या नश्तर लगाते हैं। (वैद्यक)।

वड्ड—वि० [देशी या सं० वड्र] बड़ा। महान्।

वड्डिपन(पु)—संज्ञा पुं० [अप० वडुप्पण, हिं० बड़प्पन] बड़प्पन।

बड़ाई। महत्ता। उ०—ता कुल केरा वड्डिपन कहवा कवन उपाए।—कीर्ति०, पृ० १०।

वड्र—वि० [सं०] बड़ा। महान्। श्रेष्ठ [को०]।

वर्ण(पु)†[1]—संज्ञा पुं० [देश०] धनुष। उ०—वण छेद सुजेह, कंबाण वणी। फब ईस धकं फिर सेस फणी।—रा० रू०, पृ० ३४।

वर्ण[2]—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द। ध्वनि। शोर [को०]।

वणिक्– देश० पुं० [सं० वणिज्] १. वह जो वाणिज्य के द्वारा अपनी जीविका का निर्वाह करता हो। रोजगार करनेवाला। २. वैश्य। बनिया। उ०—पर हुई गति और ही नृप चित्त की। सोचकर घटना वणिक् के वित्त की।—शकुं०, पृ० ४१।

यौ०—वणिक्कटक = कणिक्सार्थ। वणिक्कर्म = सौदागरी। वणिक्कर्मा। वणिक्क्रिया = वणिक्कर्म। सौदागरी। वणिक्पथ = दे० 'वणिक्पथ'। वणिक्सार्थ = व्यापारियों का काफिला। कारवाँ। वणिग्ग्राम = व्यापारियों का दल। वणिग्जन। वणिग्बधु। वणिग्भाव = व्यापार। वणिग्वह। वणिग्वीथी = हाट। बाजार। वणिग्वृत्ति = वणिक् की जीविका। व्यापार।

वणिक्कर्मा—संज्ञा पुं० [सं० वणिक्कर्मन्] व्यापारी। सौदागर [को०]।

वणिग्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैश्य। बनिया। २. व्यापारी। सौदागर [को०]।

वणिग्बंधु—संज्ञा पुं० [सं० वणिग्बन्धु] नील का पौधा [को०]।

वणिग्वह—संज्ञा पुं० [सं०] क्रमेलक। ऊँट [को०]।

वणिग्वृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यापार। सौदागरी। २. लाभ की दृष्टि से काम करना [को०]।

वणिज—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यापार। बनिज। २. व्यापारी। सौदागर। ३. तुला राशि। ४. शिव का एक नाम। ५. ज्योतिष में एक करण [को०]।

वणिजक—संज्ञा पुं० [सं०] व्यापारी। सौदागर [को०]।

वणिज्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] सौदागरी। व्यापार [को०]।

वणिजार(पु)‡—संज्ञा पुं० [सं० वणिज + हिं० आर (प्रत्य०)] बनजारा। व्यापारी। उ०—बहुले भाँति वणिजार हाट हिंडए जवे आवथि।—कीर्ति०, पृ० ३०।

वणिज्य—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वणिज्या] व्यापार। सौदागरी [को०]।

वतंड—संज्ञा पुं० [सं० वतण्ड] साधु। संत। महात्मा [को०]।

वतंस—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'अवतंस'।

वतंसित—वि० [सं०] अवतंसित। विभूषित [को०]।

वत[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. खेद। २. अनुकंपा। ३. संतोष। ४. विस्मय। ५. आमंत्रण।

वत[2]—अव्य० [सं०] शब्दों एवं विचारों पर जोर देने के लिये प्रयुक्त शब्द। विशेष दे० 'वत'।

विशेष—हिंदी में इसका प्रयोग नहीं मिलता है।

वतक—संज्ञा पुं० [देश० या गुज० वाडको] बत्तख के गर्दन के आकार की सुराही जिसमें शराब रखी जाती है। उ०—मतवाला री वतक ज्यऊं, पिय नइं परहरियाह।—ढोला०, दू० ४१८।

वतन—संज्ञा पुं० [अ०] १. निवासस्थान। वासस्थान। २. जन्मभूमि। स्वदेश।

यौ०—वजनपरस्ती = देशभक्ति।

वतनी—संज्ञा पुं० [अ० वतन] अपने देश का निवासी। उ०—एते जीव ज्याचे वतनी सो ऐसा राजा त्रिभुवन धनी।—दक्खिनी०, पृ० ३०।

वतास(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वातसह] दे० 'वातास'। उ०—काहु हांअ अइसनो आस कउसे लागन आचर वतास।—कीर्ति०, पृ० ३६।

वतीरा—संज्ञा पुं० [अ०] १. ढंग। रीति। प्रथा। २. चाल ढाल। ३. लत। टेव। बान।

वतू[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्वर्ग की एक नदी [को०]।

वतू[2]—संज्ञा पुं० [सं०] १. सड़क। २. आँख का एक रोग [को०]।

वतोका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वध्या स्त्री। २. वह स्त्री या गाय जिसका गर्भ किसी दुर्घटना से गिर जाय [को०]।

वत्—अव्य० [सं०] समान। तुल्य। सदृश। जैसे, पुत्रवत्। मित्रवत्।

वत्री†—संज्ञा स्त्री० [सं० वार्ता, प्रा० वत्तड़ी] दे० 'वार्ता'। उ०—दुगम पिनाक सहल तो दीसे विगत हमैं सुण वत्री। खंडे मैं वसुधा विण खत्री कीधो वार इकीसे।—रघु० रू०, पृ० ९०।

वत्स—संज्ञा पुं० [सं०] १. गाय का बच्चा। बछड़ा। २. शिशु। बालक। बच्चा। ३. वत्सर। वर्ष। ४. कंस का एक अनुचर। वत्सासुर। ५. इंद्रजौ। ६. वक्ष। उर। छाती। ७. एक देश का नाम जो कोशांबी की राजधानी था और जहाँ का राजा उदयन था।

वत्सक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुष्प कसीस। २. कुटज। ३. इंद्रजौ। ४. निर्गुंडी। ४. छोटा बछड़ा (को०)। ५. शिशु। बच्चा (को०)।

वत्सकामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बच्चों को प्यार करनेवाली स्त्री या गाय [को०]।

वत्सघोष—संज्ञा पुं० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम जो नक्षत्रों के प्रथम वर्ग में है।

वत्सतंत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० वत्सतन्त्री] बछड़ा बांधने की रस्सी।

विशेष—मनुस्मृति के अनुसार बछड़ा बाँधने की रस्सी को लाँघना नहीं चाहिए।

वत्सतर—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वत्सतरी] जवान बछड़ा जो जोता न गया हो। दोहान।

वत्सतरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह बछिया जो तीन वर्ष की हो। कलोर।

विशेष—वृषोत्सर्ग में चार वत्सतरी के साथ एक वृष उत्सर्ग करने का विधान है।

वत्सदंत—संज्ञा पुं० [सं० वत्सदन्त] एक प्रकार का बाण [को०]।

वत्सनाभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक विष जिसे 'बछनाग' या 'बच्छनाग' भी कहते हैं। मीठा जहर।

विशेष—इसका पौधा हिमालय के कम ठंढे भागों में होता है। इसकी जड़ विशेषतः नैपाल से आती है। इसके पत्ते सँभालू के पत्तों के समान होते हैं। विष जड़ में होता है। यह विष शोधकर औषधों में दिया जाता है। शोधन के लिये जड़ के छोटे छोटे

टुकड़े काटकर तीन दिन तक गोमूत्र में भिगोते हैं। फिर छाल अलग करके लाल सरसों के तेल में भिगोए हुए कपड़े में पोटली बाँधकर रखते हैं। उपयुक्त मात्रा और युक्ति के साथ सेवन करने से यह रसायन, योगवाही, वातनाशक और त्रिदोषघ्न कहा गया है। वैद्य लोग इसे ज्वर और लकवा रोग में देते हैं। इसके प्रयोग में बड़ी सावधानी चाहिए; क्योंकि अधिक मात्रा में होने से यह विष प्राणनाशक होता है। इसके योग से मृत्युंजय रस, आनदभैरव रस, पंचवक्त्र रस आदि कई प्रसिद्ध औषधें बनती हैं।

पर्या०—अमृत। विष। उग्र। महौषध। गरल। मारण। नाग। स्तोकक। प्राणहारक। स्थावर।

२. एक वृक्ष का नाम।

वत्सपत्तन संज्ञा पुं० [सं०] कौशांबी नगरी का प्राचीन नाम। जहाँ का राजा उदयन था [को०]।

वत्सपद—संज्ञा पुं० [सं०] बछड़े के खुर का निशान। गोपद [को०]।

वत्सपाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो बछ गायों का पालन करता हो। गोपाल। २. कृष्ण। ३. बलराम [को०]।

वत्सपालक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वत्सपाल'।

वत्सपीता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह गाय जिसका दूध बछड़ा पी चुका हो [को०]।

वत्सबंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० वत्सबन्धा] वह गाय जिसका बछड़ा बंधा हुआ हो। गाय जो अपने बछड़े को पाना चाहती हो [को०]।

वत्सर—संज्ञा पुं० [सं०] उतना काल या समय जितने में पृथ्वी सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करती है और सब ऋतुओं की एक उद्धरणी हो जाती है। काल का वह मान जो बारह महीनों या ३६५ दिनों का होता है। वर्ष। साल। बरस।

वत्सरांतक—संज्ञा पुं० [सं० वत्सरान्तक] वर्ष का आखिरी महीना [को०]।

वत्सराज—संज्ञा पुं० [सं०] एक राजा का नाम।

विशेष—इस नाम के अनेक राजा हो गए हैं। एक तो कौशांबी का प्रसिद्ध राजा था, जो गौतम बुद्ध का समसामयिक था। चौहान वंश में भी एक वत्सराज हुआ। लाट देश का एक चौलुक्यवंशी राजा भी इस नाम का हुआ है। महोबे के चंदेल राजाओं का एक मंत्री भी वत्सराज था जो आल्हा गानेवालों में आल्हा का पिता कहा गया है और 'बच्छराज' के नाम से प्रसिद्ध है।

वत्सरादि—संज्ञा पुं० [सं०] मार्गशीर्ष। अगहन का महीना [को०]।

वत्सराण—संज्ञा पुं० [सं०] ऋण जो एक वर्ष के लिये लिया अथवा दिया गया हो [को०]।

वत्सरूप—संज्ञा पुं० [सं०] छोटा बछड़ा [को०]।

वत्सल^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वत्सला] १. पुत्र या संतान के प्रति पूर्ण स्नेह से युक्त। बच्चे के प्रेम से भरा हुआ। जैसे,—पुत्रवत्सल पिता, पुत्रवत्सला माता। २. अपने से छोटों के प्रति अत्यंत स्नेहवान् या कृपालु। जैसे,—प्रजावत्सल राजा।

वत्सल—संज्ञा पुं० १. साहित्य में कुछ लोगों के द्वारा माना हुआ दसवाँ रस। वात्सल्य रस, जिसमें पिता या माता का अपनी संतति के प्रति रतिभाव या प्रेम प्रदर्शित होता है। २. घास फूस की आग (को०)। ३. विष्णु का एक नाम (को०)।

वत्सशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] बछड़े बाँधने की जगह। वह स्थान जहाँ बछड़े रखे जायँ [को०]।

वत्साक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तरबूज। कलींदा।

वत्सादन—संज्ञा पुं० [सं०] वृक। भेड़िया [को०]।

वत्सादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुडुच। गिलोय।

वत्सासुर—संज्ञा पुं० [सं०] कंस का अनुचर एक राक्षस जिसे कृष्ण ने बाल्यावस्था में मारा था।

वत्सिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बछिया। बाछी [को०]।

वत्सिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० वत्सिमन्] शिशुता। बचपन [को०]।

वत्सी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वत्सिन्] विष्णु।

वत्सी^{2}—वि० जिसे बहुत बच्चे हों [को०]।

वत्सीय^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] गोपालक [को०]।

वत्सीय^{2}—वि० वत्स संबंधी। बछड़ा संबंधी [को०]।

वदंति, वदंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वदन्ति, वदन्ती] कथा। कहानी। २. बात। वार्ता।

वद—वि० [सं०] बोलनेवाला।

विशेष—यह शब्द समासांत में जुड़ता है। जैसे,—वशंवद, प्रियंवद, आदि।

वदक—संज्ञा पुं० [सं०] वक्ता। कहनेवाला।

वदतोव्याघात—संज्ञा पुं० [सं०] कथन का एक दोष, जिसमें कोई एक बात कहकर फिर उसके विरुद्ध बात कही जाती है।

वदन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मुख। मुँह। २. अगला भाग। ३. कथन। बात कहना। ४. त्रिभुज का शीर्ष भाग (को०)। ५. चेहरा। आकृति। स्वरूप (को०)।

वदनपवन—संज्ञा पुं० [सं०] मुख की हवा। साँस [को०]।

वदनमदिरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अधरासव। अधरामृत [को०]।

वदनश्यामिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुख का एक रोग। मुँह पर पड़ी हुई झाईं। २. मुँह का कालापन [को०]।

वदनामय—संज्ञा पुं० [सं०] मुख का रोग [को०]

वदनासव—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वदनमदिरा'। २. लार। लाला।

वदनोदर—संज्ञा पुं० [सं०] मुखगह्वर। मुख का गड्ढा [को०]।

वदन्य—वि० [सं०] दे० 'वदान्य' [को०]।

वदर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बदर' [को०]।

वदान्य—वि० [सं०] १. अतिशय दाता। उदार। २. मधुरभाषी। अपनी बात से दूसरों को संतुष्ट करनेवाला।

वदाम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बादाम' [को०]

वदाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. पाठीन मत्स्य। पहिना मछली। २. आवर्त। भँवर (को०)।

वदालक—संज्ञा पुं० [सं०] पाठीन मत्स्य [को०]।

वदावद—वि० [सं०] वाग्मी। वाचाल। बड़बड़िया [को०]।

वदि—संज्ञा पुं० [सं० अवदिन] कृष्ण पक्ष। जैसे—जेठ वदि ४।

वदितव्य—वि० [सं०] बोलने योग्य। कहने लायक [को०]।

वदिता—संज्ञा पुं० [सं० वदितृ] बोलनेवाला। कहनेवाला। वक्ता।

वदीअत—संज्ञा स्त्री० [अ०] अमानत। धरोहर।

वदुसाना(पु)—क्रि० स० [सं० विदूषण] दोष देना। भला बुरा कहना। इलजाम लगाना। उ०—हम सब जानत हरि की घातें। तुम जो कहत हरि राज करत नहिं जानत हौ कछु का तें? उग्रसेन बैठारि सिंघासन लोग कहत कुल नाते। तप तें राज, राज तें आगे तुम सन समुझन बातें। सूरश्याम यहि भाँति सयाने हमही को वदुसाते।—सूर (शब्द०)।

वदेस(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विदेश] परदेश। विदेश। उ०—वहु धंधालू आव घरि, काँसू करइ वदेस। संपत सघलि संपजे, आ दिन कहां लहेस।—ढोला०, दू० १७८।

वद्दल—संज्ञा पुं० [देशी०] दुर्दिन। बरसात।

वद्य^1—वि० [सं०] १. कथनीय। २. अनिंद्य। निर्दोष [को०]।

वद्य^2—संज्ञा पुं० १. कृष्ण पक्ष। २. बात। कथन [को०]।

यौ०—**वद्यपक्ष** = कृष्णपक्ष।

वध—संज्ञा पुं० [सं०] १. घात। नाश। मरण। विशेष दे० 'बध'। २. प्रहार। अभिघात। मार (को०)। ३. लकवा (को०)। ४. तिरोधान। लोप। ओझल। ओट (को०)। ५. (गणित में) गुणन क्रिया (को०)। ६. वधक। मारनेवाला (को०)। ७. जेता। जयी (को०)। ८. मृत्युदंड (को०)। ९. विफलता। हार। पराजय (को०)। १०. दोष। दूषण (को०)। ११. उत्पत्ति। उपज (बीजगणित)।

वधक—संज्ञा पुं० [सं०] १. घातक। हिंसक। २. व्याध। ३. मृत्यु। ४. एक प्रकार का सरकंडा (को०)।

वधकर्माधिकारी—संज्ञा पुं० [सं० वधकर्माधिकारिन्] जल्लाद।

वधजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वधजीविन्] वह जो वध करके जीविका निर्वाह करता हो।

वधत्र—संज्ञा पुं० [सं०] अस्त्र। हथियार।

वधनिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] मृत्युदंड। फाँसी की सजा [को०]

वधनिर्णेक—संज्ञा पुं० [सं०] हत्या का प्राचश्चित्त।

वधभूमि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'बधभूमि'।

वधांगक—संज्ञा पुं० [सं० वधाङ्गक] कारागार। कैदखाना।

वधाव(पु)—संज्ञा पुं० [पा० वद्धव] दे० 'वधावा'। उ०—शोक वधाव जिन सम करि माना। ताकी बात इंद्रहुँ नहिं जाना।—कबीर बी० (शिशु०), पृ० २५४।

वधावरा(पु)—संज्ञा पुं० [हिं० वधाव+रा (प्रत्य०)] दे० 'बधावा'। उ०—सोक को जनम ब्रज ओक में भयो है ऊधो साँवरे बिरह तैं वधावरे बजत ये।—दीन० ग्रं०, पृ० ४०।

वधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मृगमद। कस्तूरी। २. दे० 'बधिक' [को०]।

वधित्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. कामदेव। २. कामासक्ति [को०]।

वधिर—वि० [सं०] दे० 'बधिर'।

वधु—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वधुका'।

वधुका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुत्र की स्त्री। बहू। २. दुलहन। स्त्री।

वधुटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वधूटी'।

वधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नव विवाहिता स्त्री। दुलहन। २. पत्नी। भार्या। ३. पुत्र की बहू। पतोहू।

यौ०—**वधूगृहप्रवेश, वधूप्रवेश** = विवाहिता स्त्री का पति के घर में पहली बार प्रवेश करने की विधि। **वधूधन** = स्त्री की निर्जा संपत्ति। **वधूपक्ष** = कन्यापक्ष। **वधूवस्त्र** = विवाह के समय कन्या को दिया जानेवाला वस्त्र।

वधूटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नई ब्याही हुई स्त्री। दुलहिन। २. भार्गा। पत्नी। ३. पुत्रवधू। पतोहू।

वधूत(पु)—संज्ञा पुं० [सं० अवधूत] दे० 'अवधूत'। उ०—श्रवन कुंडल गरल कंठ करुणाकंद सच्चिदानंद वंदे वधूतं।—तुलसी (शब्द०)।

वध्य—वि० [सं०] मार डालने योग्य। वधार्ह।

यौ०—**वध्यघ्न** = जल्लाद। **वध्यचिह्न** = प्राणदंड पाए हुए अपराधी का चिह्न। **वध्यडिंडिम, वध्यपटह** = फाँसी देने के समय की जानेवाली सूचना। **वध्यपट** = वध दंड दिए जाने के समय का काला या लाल वस्त्र। **वध्यपाल** = जेलर। **वध्यशिला** = वह वेदी या शिला जिसपर वध किया जाता है।

वध्र—संज्ञा पुं० [सं०] सीसा नाम की धातु।

वध्रि—संज्ञा पुं० [सं०] बधिया।

वध्रिका—संज्ञा पुं० [सं०] वह पुरुष जो बधिया हो। खोजा।

वध्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] चमड़े का तसमा [को०]

वध्र्य—संज्ञा पुं० [सं०] पदत्राण। जूता [को०]।

वध्र्यश्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. आखता घोड़ा। २. एक प्राचीन राजा का नाम।

वन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बन। जंगल। २. वाटिका। ३. जल। ४. घर। आलय। ५. चमसा नामक यज्ञपात्र जो काठ का होता था। ६. रश्मि। ७. शंकराचार्य के अनुयायी संन्यासियों की एक उपाधि। ८. फूलों का गुच्छा। ९. समूह। झुंड। १०. काष्ठ। लकड़ी (को०)। ११. बादल (को०)। १२. पहाड़ (को०)। १३. जंगल का निवास (को०)। १४. झरना। सोता। १५. अर्चन। पूजन (को०)।

वनकणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वनपिप्पली।

वनकदली—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली केला [को०]

वनकरी—संज्ञा पुं० [सं० वनकरिन्] जंगली हाथी [को०]।

वनकुंजर—संज्ञा पुं० [सं० वनकुञ्जर] दे० 'वनकरी'।

R
९.२
श्या हि हि भाग. ८.

६५८

वनकुंडल—संज्ञा पुं० [सं० वनकुण्डल] अच्छी जाति का सूरन या जिमीकंद।

वनकोकिलक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का छंद [को०]।

वनकोलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] जंगली बेर [को०]।

वनग—संज्ञा पुं० [सं०] वन में रहनेवाला। वनवासी [को०]।

वनगज—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली हाथी [को०]।

वनगमन—संज्ञा पुं० [सं०] १. संन्यासग्रहण (को०)। २. सब कुछ छोड़कर वन का यात्रा करना।

वनगव—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बैल [को०]।

वनगहन—संज्ञा पुं० [सं०] घना जंगल [को०]।

वनचंदन—संज्ञा पुं० [सं० वनचन्दन] १. अगुरु। अगर। २. देवदार।

वनगुप्त—संज्ञा पुं० [सं०] जासूस [को०]।

वनगोचर[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिकारी। व्याधा। २. वनवासी। वन। ३. जंगल [को०]।

वनगोचर[२]—वि० १. जंगल में रहनेवाला। २. जल में रहनेवाला [को०]।

वनग्रामक—संज्ञा पुं० [सं०] १. जंगली गाँव। २. गरीब गाँव [को०]।

वनग्राही—संज्ञा पुं० [सं०] व्याधा। बहेलिया [को०]।

वनचंद्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वनचन्द्रिका] मल्लिका।

वनचंपक—संज्ञा पुं० [सं० वनचम्पक] एक प्रकार का चंपा का पुष्प।

वनचर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन में भ्रमण करने या रहनेवाला। २. जंगली मनुष्य या प्राणी। ३. शरभ नामक वनजंतु।

वनचर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वन भ्रमण या वनवास [को०]।

वनछाग—संज्ञा पुं० [सं०] १. जंगली बकरा। २. सूअर [को०]।

वनछिद—संज्ञा पुं० [सं० वनच्छिद] लकड़ी काटनेवाला। लकड़हारा [को०]।

वनज—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वन (जंगल या पानी) में उत्पन्न हो। २. कमल। ३. मुस्तक। मोथा। ४. तुबुरु का फल। ५. जंगली बिजौरा नीबू। ६. बनकुलथी।

वनजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुद्गपर्णी। २. निर्गुंडी। ३. सफेद कटकारि। ४. वनतुलसी। ५. अश्वगंधा। ६. वनकपासी।

वनजीर—संज्ञा पुं० [सं०] काली जीरी।

वनजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वनजीविन्] १. वनवासी। २. लकड़हारा [को०]।

वनतिक्त—संज्ञा पुं० [सं०] हरीतकी। हड़।

वनतिक्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पाठा। २. पथरी नाम का शाक।

वनद—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

वनदाह—संज्ञा पुं० [सं०] वनाग्नि।

वनदीप—संज्ञा पुं० [सं०] वनचंपक पुष्प।

वनदेव, वनदेवता—संज्ञा पुं० [सं०] वन का अधिष्ठाता देवता।

वनदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वन की अधिष्ठात्री देवी।

वनद्विप—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली हाथी [को०]।

वनद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली पेड़ पौधा [को०]।

वनधेनु—संज्ञा स्त्री० [सं०] जंगली गाय। गवय [को०]।

वनधान्य—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली अन्न। श्योमाक धान [को०]।

वनन—संज्ञा पुं० [सं०] धन संपत्ति। दौलत [को०]।

वनप—संज्ञा पुं० [सं०] १. लकड़हारा। २. वनरक्षक। उ०—वन जंगल की देखरेख करनेवाले (वनप), जंगली आग बुझानेवाले (दावप)...। हिंदु० सभ्यता, पृ० ९८।

वनपल्लव—संज्ञा पुं० [सं०] शोभांजन वृक्ष। सहिजन [को०]।

वनपांसुल—संज्ञा पुं० [सं०] शिकारी। व्याध [को०]।

वनपाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. बागवान। २. वनपालक। उ०—मुरधर थया वधावणा, हरखे तेरह साख। ज्यूँ वनपालै पीड़ियाँ, सिर आपो वैसाख।—रा० रू०, पृ० २६।

वनपिप्पली—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी पीपल।

वनपूरक—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बिजौरा नीबू [को०]।

वनप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] तपस्वी।

वनप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. कोकिल। २. बहेड़े का वृक्ष। ३. कपूरकचरी। ४. साँभर हिरन।

वनभूपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] काकिला। कोयल [को०]।

वनभक्षिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] डाँस। डंस [को०]।

वनमल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेवती का पौधा या फूल।

वनमल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वनमल्लिका' [को०]।

वनमाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वन के फूलों की माला। २. एक विशेष प्रकार की माला।

विशेष—यह सब ऋतुओं में होनेवाले अनेक प्रकार के फूलों से बनती और घुटने तक लंबी होती थी। ऐसी माला श्रीकृष्ण धारण करते थे।

वनमालिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] द्वारिका पुरी का एक नाम।

वनमाली[१]—वि० [सं० वनमालिन्] वनमाला धारण करनेवाला।

वनमाली[२]—संज्ञा पुं० श्रीकृष्ण।

वनमुक्—संज्ञा पुं० [सं० वनमुच्] बादल। मेघ [को०]।

वनमुद्ग—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मूँग [को०]।

वनमूत—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

वनमूर्द्धजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जंगली बिजौरा नीबू। २. काकड़ासिंगी।

वनमोचा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वन्य कदली। जंगली केला [को०]।

वनर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वानर' [को०]।

वनरक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] जंगल की देखभाल करनेवाला। बनरखा [को०]।

वनराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिंह। २. अश्मंतक वृक्ष।

वनराजि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वन की श्रेणी। वनसमूह। वृक्षसमूह। २. वन के बीच गई हुई पगडंडी। ३. वसुदेव की एक दासी का नाम।

वनराजी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वनराजि'।

वनरुह—संज्ञा पुं० [सं०] कमल।

वनलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वन की शोभा । वनश्री । २. कदली । केला ।

वनलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] जंगली बेल ।

वनवर्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का बत्तक । बटेर । लवा पक्षी [को०] ।

वनवसना—संज्ञा स्त्री० [सं०] धरती जिसका वस्त्र वन है । पृथिवी । उ०—नमित शालि से भरी हुई, सुंदर वनवसना ।—अपरा, पृ० १६५ ।

वनवह्नि—संज्ञा पुं० [सं०] दावाग्नि [को०] ।

वनवास^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन का निवास । जंगल में रहना । २. बस्ती छोड़कर जंगल में रहने की व्यवस्था या विधान ।

मुहा०—**वनवास देना** = जंगल में रहने की आज्ञा देना । बस्ती छोड़ने की आज्ञा देना । **वनवास लेना** = बस्ती छोड़कर जंगल में रहना । अंगीकार करना ।

वनवास^2—वि० जंगल में रहनेवाला । वनवासी ।

वनवासक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शाल्मली कंद । २. एक प्राचीन नगर जो कादंब राजाओं की राजधानी था ।

वनवासन—संज्ञा पुं० [सं०] गंधबिलाव [को०] ।

वनवासी^{1}—वि० [सं० वनवासिन्] [वि० स्त्री० वनवासिनी] वन में रहनेवाला । बस्ती छोड़कर जंगल में निवास करनेवाला ।

वनवासी^{2}—संज्ञा पुं० १. ऋषभ नामक ओषधि । २. वाराही कंद । ३. शाल्मली कंद । ४. नीलमहिष कंद । ५. द्रोण काक । डोम कौआ । ६. दक्षिण में तुंगभद्रा की शाखा वरदा नदी के किनारे बसा हुआ एक प्राचीन नगर जो कादंब राजाओं का प्रधान नगर था । ७. वानप्रस्थ आश्रमी । तपस्वी (को०) ।

वनविलासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शंखपुष्पी लता ।

वनबीज, वनबीजक—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली नीबू [को०] ।

वनवृंताकी—संज्ञा स्त्री० [सं० वनवृन्ताकी] जंगली बैंगन । भंटा [को०] ।

वनव्रीहि—संज्ञा पुं० [सं०] तिन्नी नाम का जंगली अन्न ।

विशेष—यह अपने आप पैदा होता है और इसे अन्नों में नहीं गिना जाता । इसका व्यवहार फल के रूप में व्रतादि में होता है ।

वनशूकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कपिकच्छु । केवाँच । २. जंगली मादा सूअर ।

वनशृंगाट—संज्ञा पुं० [सं० वनशृङ्गाट] गोखरू ।

वनशृंगाटक—संज्ञा पुं० [सं० वनशृङ्गाटक] दे० 'वनशृंगाट' ।

वनशोभन—संज्ञा पुं० [सं०] कमल [को०] ।

वनश्वा—संज्ञा पुं० [सं० वनश्वन्] १. स्यार । गीदड़ । २. गंधबिलाव । ३. चीता । बाघ [को०] ।

वनसंकट—संज्ञा पुं० [सं० वनसङ्कट] मसूर ।

वनसंवासी—संज्ञा पुं० [सं०] १. जो वानप्रस्थ आश्रम का हो । वन में रहनेवाला । वनवासी [को०] ।

वनसमूह—संज्ञा पुं० [सं०] निविड़ वन । घना जंगल [को०] ।

वनसरोजिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बनकपासी [को०] ।

वनसिंधुर—संज्ञा पुं० [सं० वनसिन्धुर] जंगली हाथी । वनकुंजर [को०] ।

वनस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौंदर्य । लावण्य । २. कीर्ति । यश । ३. धनदौलत ।

वनस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन में रहनेवाला । २. वानप्रस्थ आश्रम । ३. मृग । हिरन ।

वनस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] वनभूमि । अरण्यदेश । जंगली जमीन ।

वनस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अश्वत्थ । पीपल का पेड़ । २. वट । न्यग्रोध वृक्ष [को०] ।

वनस्थी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वनस्था' [को०] ।

वनस्पति^{1}—संज्ञा स्त्री०, पुं० [सं०] १. वह वृक्ष जिसमें फूल न हो (अर्थात् न दिखाई पड़े) केवल फल ही हों । जैसे,—गूलर, बड़, पीपल आदि वट वर्ग के वृक्ष । (मनु०) । २. वृक्ष मात्र । पेड़ पौधा । ३. वट वृक्ष । बरगद । ४. सोम नाम का पौधा (को०) । ५. पेड़ का तना । स्कंध (को०) । ६. धरन । बड़ेर । लट्ठा (को०) । ७. यज्ञस्तंभा । यूप (को०) । ८. काठ का रक्षा कवच (को०) । ९. वध्यपंच । फाँसी का तख्ता (को०) । १०. यती । तपस्वी । योगी (को०) । ११. मूँगफली, बिनौला, नारियल आदि का जमाया हुआ तेल ।

वनस्पति^{2}—संज्ञा पुं० धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम ।

वनस्पतिशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसके द्वारा यह जाना जाता हो कि पौधा और वृक्षों आदि के क्या क्या रूप और कौन कौन सी जातियाँ होती हैं, उनके भिन्न भिन्न अंगों की बनावट कैसी होती है और कलम आदि के द्वारा किस प्रकार के नए पौधे या वृक्ष उत्पन्न होते हैं । वनस्पति विज्ञान ।

वनस्रक्—संज्ञा स्त्री० [सं० वनस्रज्] दे० 'वनमाला' [को०] ।

वनहरिद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जंगली हल्दी ।

वनहव—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ । एकाह यज्ञ [को०] ।

वनहास, वनहासक—संज्ञा पुं० [सं०] १. काश । काँस । २. कुंद का फूल ।

वनहुताशन—संज्ञा पुं० [सं०] वनाग्नि । वनवह्नि [को०] ।

वनांत—संज्ञा पुं० [सं० वनान्त] वनप्रांत । जंगली भूमि या मैदान ।

वनांतर—संज्ञा पुं० [सं० वनान्तर] १. दूसरा वन । २. वन का भीतरी भाग [को०] ।

वनाखु—संज्ञा पुं० [सं०] खरगोश । शशक [को०] ।

वनाखुक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का माष । उरद [को०] ।

वनाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दावानल । वन में अपने आप लगनेवाली आग [को०] ।

वनाज—संज्ञा पुं० [सं०] वन्य अज । जंगली बकरा [को०] ।

वनाटु—संज्ञा पुं० [सं०] नीली जंगली मक्खी [को०] ।

वनानी—संज्ञा स्त्री० [सं० वनाली] वन का समूह । घना और विस्तृत वन । उ०—काफल थे रँग रहे, फूल में थी फल लिए

खुबानी। लाल बुरूसों के मधु छत्तों से थी भरी वनानी।—अतिमा, पृ० १५।

वनायु—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन देश का नाम जहाँ का घोड़ा अच्छा होता था। २. इस देश में रहनेवाली जाति। ३. पुरुरवा के एक पुत्र का नाम।

वनायुज—संज्ञा पुं० [सं०] वनायु देश का घोड़ा।

वनारिष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वनहरिद्रा। वनहल्दी [को०]।

वनार्चक—संज्ञा पुं० [सं०] माली। माला या हार बनानेवाला [को०]।

वनार्द्रका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वन अदरक जिसे ऐंद्र भी कहते हैं [को०]।

वनालक्त—संज्ञा पुं० [सं०] गेरू।

वनालक्तक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० वनालक्त' [को०]।

वनालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] हस्तिशुंडी लता। हाथी सूँड़ी।

वनाश^{१}—वि० [सं०] केवल जल पीकर रहनेवाला [को०]।

वनाश^{२}—संज्ञा पुं० १. वनविहार। पिकनिक। २. एक प्रकार का छोटा जौ [को०]।

वनाश्रम—संज्ञा पुं० [सं०] वानप्रस्थ आश्रम [को०]।

वनाश्रमी—संज्ञा पुं० [सं० वनाश्रमिन्] वानप्रस्थी। तपस्वी [को०]।

वनाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] १. काला कौआ। डोम कौआ। २. वह जो जंगल का निवासी हो (को०)।

वनाहिर—संज्ञा पुं० [सं०] वन्य शूकर। जंगली सूअर [को०]।

वनि^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. याचना। २. राशि। ढेर। ३. आग। अग्नि [को०]।

वनि^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] इच्छा। कामना [को०]।

वनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुंजवन। उपवन।

वनित—वि० [सं०] १. पूजित। २. इच्छित। ३. याचित [को०]।

वनिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनुरक्ता स्त्री। प्रिया। प्रियतमा। २. स्त्री। औरत। ३. छह वर्णों की एक वृत्ति जिसे 'तिलका' और 'डिल्ला' भी कहते हैं। इसमें दो सगण होते हैं। जैसे,—ससि बाल धरो। शिव भाल धरो। ४. मादा (को०)।

वनिताद्विष्—संज्ञा पुं० [सं० वनिताद्विट्] स्त्रीविद्वेषी [को०]।

वनितामुख—संज्ञा पुं० [सं०] मार्कंडेयपुराण के अनुसार मनुष्यों की एक जाति।

वनिताविलास—संज्ञा पुं० [सं०] वनिताओं का विहार। स्त्रियों की क्रीड़ा [को०]।

वनिष्णु—वि० [सं०] माँगनेवाला। याचक [को०]।

वनी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वनिन्] १. वानप्रस्थ। २. वृक्ष (को०)। ३. सोमलता (को०)।

वनी^{२}—वि० १. पूजित। २. अभिलषित। ३. दिया हुआ। ४. जल के ऊपर निर्वाह करनेवाला। ५. जंगल में रहनेवाला [को०]।

वनी^{३}—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा वन। वनस्थली। उ०—अति चंचल जहँ चलदलै, विधवा बनी, न नारि।—केशव (शब्द०)।

वनीक—संज्ञा पुं० [सं०] याचक। भिखारी [को०]।

वनीपक—संज्ञा पुं० [सं०] भिखारी [को०]।

वनीयक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वनीपक' [को०]।

वनीयस—वि० [वनीयस्] अत्यंत उदार [को०]।

वनेकिंशुक—संज्ञा पुं० [सं०] वह वस्तु जो वैसे ही, बिना माँगे मिले जैसे वन में किंशुक बिना माँगे या प्रयास किए मिलता है।

वनेक्षुद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] करंज [को०]।

वनेचर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन में फिरनेवाला मनुष्य। वनचर। जंगली आदमी। २. यती। तपस्वी (को०)। ३. जंगली पशु। जंगली जानवर (को०)। ४. प्रेत। भूत। पिशाच (को०)।

वनेजा—संज्ञा पुं० [सं०] १. आम। २. पर्पट। पापड़ा।

वनेज्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. पापड़ा। २. उत्तम जाति का आम [को०]।

वनेसर्ज—संज्ञा पुं० [सं०] पीतसाल का वृक्ष। असन [को०]।

वनेविल्वक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वनेकिंशुक' [को०]।

वनोत्सर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवमंदिर, वापी, कूप, उपवन, आदि का उत्सर्ग जो शास्त्रविधि से किया जाता है। मंदिर, कुआँ आदि बनवाकर सर्वसाधारण के लिये दान करना। २. ऐसे दान या उत्सर्ग की विधि।

वनोत्साह—संज्ञा पुं० [सं०] गैंड़ा [को०]।

वनोद्धवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वनकपासी जिसे वनोद्भवा भी कहा गया है [को०]।

वनोपप्लव—संज्ञा पुं० [सं०] वनदाह। जंगल में आग लगना [को०]।

वनोपल—संज्ञा पुं० [सं०] कंडा। करीष। सूखा गोबर [को०]।

वनौकस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसका घर वन में हो। वनवासी। २. जंगली पशु। बंदर, शूकर आदि। ३. तपस्वी। यती।

वनौका—संज्ञा पुं० [सं० वनौकस्] दे० 'वनौकस्' [को०]।

वनौषध—संज्ञा स्त्री० [सं०] वन की ओषधियाँ। जंगली जड़ी बूटी।

वन्न—संज्ञा पुं० [सं०] हिस्सेदार। साझीदार [को०]।

वन्य^{१}—वि० [सं०] १. वन में उत्पन्न होनेवाला। वनोद्भव। २. जंगली।

यौ०—**वन्य गज** = वन्यद्विप। वन्यचर। **वन्यद्विप** = जंगली हाथी। **वन्यपक्षी** = वन के पक्षी। **वन्यवृत्ति** = जंगल में उत्पन्न पदार्थों से जीवननिर्वाह करनेवाला।

वन्य^{२}—संज्ञा पुं० १. वनसूरन। २. क्षीर विदारी। ३. वाराही कंद। ४. शंख। ५. जंगली जानवर (को०)। ६. जंगली पौधा (को०)। ७. बंदर (को०)। ८. जंगल में उत्पन्न होनेवाले फल (को०)। ९. त्वचा। छाल (को०)।

वन्यचर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वनचर'। उ०—बस, पत्र पुष्प हम वन्यचरों की सेवा।—साकेत, पृ० २१६।

वन्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुद्गपर्णी। २. गोपाल ककड़ी। ३. गुंजा। ४. भद्रमुस्ता। ५. अश्वगंध। असगंध। ६. सघन जंगल। वन-

समूह। ७ बाढ़। जलप्लावन। ९. अप्रकेत जलराशि। १०. लता। उ०—परंतु मेरा तो निज का कोई स्वार्थ नहीं, हृदय के एक एक कोने को छान डाला--कहीं भी कामना की वन्या --नहीं। स्कंद०, पृ० ९३।

वन्योपोदकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] लताविशेष। बन पोय [को०]।

वन्न—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वन्न' [को०]।

वप--संज्ञा पुं० [सं०] १. बीज बोना। २. बीज बोनेवाला। ३. क्षौर। मुंडन। ४. बुनाई।

वपन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वपनीय] १. केशमुंडन। २. बीज बोना। ३. शुक्र। बीज (को०)। ४. बाल बनाने का अस्तुरा (को०)। ५. क्रम से रखना। रोपना (को०)।

वपनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्थान जहाँ नाई क्षौरकार्य करते हैं। वह स्थान जहाँ हज्जाम बैठकर हजामत बनाते हैं। २. वह स्थान जहाँ जुलाहे कपड़ा बुनते हैं। ३. कपड़ा बुनने का औजार। करघा (को०)।

वपनीय—वि० [सं०] १. बोने योग्य। २. वपन के योग्य। मूँड़ने लायक (को०)।

वपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चरबी। मेद। २. वल्मीक। बाँबी। ३. विवर। छिद्र (को०)। ४. आँतों की झिल्ली। अंत्रावरण (को०)। ४. बाहर निकली हुई नाभि (को०)।

वपाकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] मज्जा [को०]।

वपित—वि० [सं०] बोया हुआ [को०]।

वपिल--संज्ञा पुं० [सं०] पिता। जनक [को०]।

वपु^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वपु] १. शरीर। देह। २. रूप। ३. सौंदर्य (को०)। ४. सत्व। सत्ता। नैसर्गिक प्रवृत्ति (को०)। ५. पानी (वेद)। ६ आश्चर्य (को०)। ७ अंश (को०)।

यौ०—वपुर्गुण। वपुःप्रकर्ष। वपुर्धर। वपुःस्रव।

वपु^{2}—संज्ञा स्त्री० दक्ष की एक कन्या का नाम जो धर्मराज की पत्नी थी [को०]।

वपुःप्रकर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वपुर्गुण' [को०]।

वपुःस्रव—संज्ञा पुं० [सं०] शरीरस्थ रस धातु [को०]।

वपुन—संज्ञा पुं० [सं०] देवता [को०]।

वपुमान—वि० [सं०] १. सुंदर शरीरवाला। २. साकार। मूर्त [को०]।

वपुरा(पु)—वि० [देश०] बेचारा। उ०—तुम्हें ण होसउँ असहना जइ सुनिअउँ गिउँ नाम। इअर वपुरा को करओ वीरत्तण निज ठाम।—कीर्ति०, पृ० ६०।

वपुर्गुण—संज्ञा पुं० [सं०] आकृति का सौंदर्य [को०]।

वपुर्धर—वि० [सं०] १. सौंदर्ययुक्त। सुंदर। २. शरीरी। मूर्त [को०]।

वपुष(पु)^1—संज्ञा पुं० [सं० वपुस्] शरीर। देह। उ०—विन नाथ की मैं दीन। विधवा सु वपुष नवीन। जग सिंधु घोर अपार। ता मद्धि मो तनु डारि।—प० रासो, पृ० ११।

वपुष^2—वि० [सं०] १. सुंदर। सलोना। २. आश्चर्यजनक [को०]।

वपुष^3—संज्ञा पुं० [सं०] आकार या शरीर का सौंदर्य [को०]।

वपुष्टमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पद्मचारिणी लता। २. हरिवंश के अनुसार काशिराज की एक कन्या, जो परीक्षित के पुत्र जनमेजय से व्याही थी।

विशेष—हरिवंश में लिखा है कि राजा जनमेजय ने एक अश्वमेध यज्ञ किया। उनकी पत्नी, वपुष्टमा साथ ही बैठी थी। इंद्र ने अश्व के शरीर में प्रविष्ट होकर उसके साथ सहवास किया। जब मरा हुआ अश्व जीवित दिखाई पड़ा, तब इंद्र की चाल का पता लगा। जनमेजय ने क्रुद्ध होकर इंद्र को शाप दिया कि अब से अश्वमेध में तुम्हारा कोई पूजन न करेगा। उन्होंने ऋत्विक् ऋषियों को भी देश से निकाल दिया और वपुष्टमा का भी तिरस्कार किया। उसी समय गंधर्वराज विश्वावसु ने आकर राजा को समझाया कि इंद्र ने तुम्हारे अश्वमेध यज्ञों से डरकर रंभा अप्सरा को वपुष्टमा का शरीर धारण करा के भेजा है। ऋत्विजों को निकालने से तुम्हारा अश्वमेध का पुण्य क्षीण हो गया।

वपुष्मान्—वि० [सं० वपुष्मत्] १. मूर्तिमान्। शरीरी। २. सुंदर। ३. हृष्टपुष्ट। ४. पूर्ण। अक्षत। ५. देहात्मवादी [को०]।

वपोदर - वि० [सं०] तुंदिक। तोंदवाला [को०]।

वप्ता—संज्ञा पुं० [सं० वप्तृ] १. पिता। जनक। २. कवि। ३. नापित। नाई। ४. बीज बोनेवाला। ५. कर्षक। किसान (को०)।

वप्प(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वप्तृ>वप्ता, प्रा० वप्प, वप्पा] दे० 'बाप'। उ०—जें सत्तु समर सम्मदि कहू वप्प वैर उद्धरिअ धुअ। —कीर्ति०, पृ० ८।

वप्पीओ(पु)—संज्ञा पुं० [देशी] चातक। पपीहा।—देशी०, पृ० २८५।

वप्पो(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वपुस्] शरीर। तनु। देह।—देशी०, पृ० ३०७।

वप्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. मिट्टी का ऊँचा धुस्स, जो गढ़ या नगर की खाईं से निकली हुई मिट्टी के ढेर से चारों ओर उठाया जाता है और जिसके ऊपर प्राकार या दीवार होती है। चय। मृत्तिकास्तूप। २. क्षेत्र। खेत। ३. रेणु। धूल। ४. ऊँचा किनारा। कगार। (नदी आदि का)। ५. पहाड़ की चोटी। ६. टीला। भीटा। ७. सीसा नाम की धातु। ८. प्रजापति। ९. द्वापर युग के एक व्यास। १०. चौदहवें मनु के एक पुत्र का नाम। ११. साँड़ अथवा हाथी का अपनी सींग या दाँत से मिट्टी का ढूह गिराना (को०)। १२. पिता। जनक (को०)। १३. सोना (को०)। १४. नींव (को०)। १५. परिखा। खाईं (को०)। १६. घेरा (को०)। १७. मैदान (को०)।

वप्रक—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्त की परिधि। गोलाई का घेरा। चक्कर।

वप्रक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वप्रक्रीड़ा'।

वप्रक्रीड़ा—संज्ञा स्त्री० [सं० वप्रक्रीडा] टीले या ऊँचे उठे हुए मिट्टी के ढेर को हाथी, साँड़ आदि का दाँतों या सींगों से मारना, जो उनकी एक क्रीड़ा है।

वप्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मजीठ। २. जैनों के इक्कीसवें जिन नेमिनाथ की माता का नाम। ३. मिट्टी का चिपटे सिरे का बाँध (को०)। ४. उद्यानशय्या (को०)।

वप्राभिघात—संज्ञा पुं० [सं०] १. तटाघात । २. दे० 'वप्रक्रिया' [को०]।

वप्रि—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्षेत्र । २. समुद्र । ३. स्थान की दुर्गमता । दुर्गति ।

वप्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वल्मीक । बाँबी । २. मिट्टी का ढूह (को०)।

वफा—संज्ञा स्त्री० [अ० वफ़ा] १. वादा पूरा करना । बात निवाहना ।

यौ०—वफादार । वफादारी । वफापरस्त = दे० 'वफादार'। वफापरस्ती = वफादार होना । वफादारी । वफाशनास = वफा की पहचान रखनेवाला । वफाशनासी = वफा को पहचानना ।

२. निर्वाह । पूर्णता । उ०—अब कूच ही करना सही इस खेत से न वफा लही ।—सूदन (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।

३. मुरौवत । सुशीलता । उ०—वे खाए ते बेवफा वफा रहै ठहराइ। मीनै कीनै दूर ज्यों तेही तै रह जाइ ।—रसनिधि (शब्द०) ।

वफात—संज्ञा स्त्री० [अ० वफ़ात] मौत । मृत्यु ।

क्रि० प्र०- करना ।—पाना ।—होना । उ०—नवाब आलिफ खाँ कोट कांगड़े में वफात प्राप्त हुआ और लाश फतेहपुर में लाके रक्खी ।—पुंदर० ग्रं० (जी०), भाट० १, पृ० ५१ ।

वफादार—वि० [अ० वफ़ा + फ़ा० दार] [संज्ञा वफादारी] १. वचन या कर्तव्य का पालन करनेवाला । २. अपने काम को ईमानदारी से करनेवाला । ३. सच्चा ।

वफादारी—संज्ञा स्त्री० [अ० वफ़ा + फ़ा० दारी] १. प्रतिज्ञापालन । बात को पूरा करना । २. मित्र या स्वामी का तन, मन, धन से साथ निभाना [को०] ।

वफीक—संज्ञा पुं० [अ० वफ़ीक] अनुकूल आचरण करनेवाला, मित्र । दोस्त । उ०—जा को साहब देत वफीक, चारि पियाला करु तहकीक ।—धरनी०, पृ० २० ।

वफ्क—संज्ञा पुं० [अ० वफ़्क़] अनुकूल । मुआफिक [को०] ।

वफ्द—संज्ञा पुं० [अ० वफ़्द] दूतमंडल । प्रतिनिधि मंडल [को०] ।

वबर—संज्ञा पुं० [अ०] ऊन । बाल [को०] ।

वबा—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. मरी । महामारी । फैलनेवाला भयंकर रोग । जैसे,— हैजा, प्लेग आदि । २. छूत का रोग ।

क्रि० प्र०—आना ।—पड़ना ।—फैलना ।

वबाई—संज्ञा स्त्री० [अ०] वबा संबंधी । फैलनेवाली । छुतही [को०]।

वबाल—संज्ञा पुं० [अ०] १. बोझ । भार । २. आपत्ति । कठिनाई । ३. घोर विपत्ति । आफत । ४. ईश्वरीय कोप । ५. पाप का फल ।

क्रि० प्र०—होना ।

मुहा०—किसी का वबाल पड़ना = किसी को दुःख पहुँचाने का फल मिलना । दुखिया की आह पड़ना । जैसे,—इसका वबाल तेरे ऊपर पड़ेगा ।

वभ्रु—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का सर्प । (सुश्रुत) । २. एक यदुवंशीय योद्धा । विशेष दे० 'बभ्रु' ।

वभ्रुवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बभ्रुवाहन' ।

वम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वमन' [को०] ।

वमति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वमन करना । वमनक्रिया [को०] ।

वमथु—संज्ञा पुं० [सं०] १. वमन । २. थूक । ३. हाथी के सूँड़ से निकला हुआ पानी । ४. खाँसी [को०] ।

वमन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कै करना । उलटी करना । छर्दन । २. वमन किया हुआ पदार्थ । ३. आहुति । ४. पीड़ा । ५. भाँग (को०) ।

वमना—क्रि० स० [सं० वमन] कै करना । उलटी करना [को०] ।

वमनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जोंक । २. कपास का पौधा (को०) ।

वमनीया—संज्ञा स्त्री० [सं०] मक्खी ।

वमि^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक रोग, जिसमें मनुष्य का जी मतलाता है, मुँह से पानी छूटता है और जो कुछ वह खाता पीता है, उसे मुँह के रास्ते निकालकर बाहर फेंक देता या कै कर देता है।

विशेष—यह वमन रोग पाँच प्रकार का माना गया है,—वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, और आगंतुक । वातज में बगल और छाती में दर्द, मस्तक और नाभि में शूल तथा अंगों में सूई छेदने की सी पीड़ा होती है । वमन बड़े वेग से और बड़े शब्द के साथ अधिक मात्रा में निकलता है। पित्तज में मूर्छा, प्यास, मुँह सूखना, तालू और आँखों में जलन और आँखों के सामने अँधेरा छाना आदि लक्षण होते हैं और वमन कुछ हरा और तीता होता है । कफज में मुँह मीठा रहता है, कुछ कफ निकलता है । भोजन की अनिच्छा होती है, शरीर भारी जान पड़ता है और वमन सफेद, गाढ़ा और मीठा होता है; तथा वमन के समय रोंगटे खड़े हो जाते हैं और बड़ी पीड़ा होती है । आगंतुक वमन कोई बुरी वस्तु खा लेने या घृणित वस्तु देखने या सूँघने से एकबारगी हो जाता है ।

२. वमन करानेवाली दवा

वमि^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि । २. धतूरा । ३. दुष्ट ।

वमित—वि० [सं०] वमन किया हुआ । जो वमन किया गया हो [को०] ।

वमी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वमन । छर्दि । दे० 'वमि' ।

वमी^{2}—वि० [सं० वमिन्] वमन रोग का रोगी [को०] ।

वम्य—वि० [सं०] (औषध आदि) जिससे वमन हो । वमन करानेवाली [को०] ।

वम्र—संज्ञा पुं० [सं०] दीमक । वम्री [को०] ।

वम्रक^1—संज्ञा पुं० [सं०] दीमक या चींटा [को०] ।

वम्रक^2—वि० अत्यंत छोटा । बहुत छोटा [को०] ।

वम्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] दीमक ।

वम्रीकूट—संज्ञा [सं०] वल्मीक। बाँबी। बिमौट।

वम्हⓅ†—संज्ञा पुं० [देशी] बल्मीक। बिमौट।—देशी०, पृ० २८४।

वम्हणⓅ†—संज्ञा पुं० [सं० ब्राह्मण, प्रा० बम्हन] दे० 'ब्राह्मण'। उ०—बहुल वम्हण वहुल काअ्रथ राजपुत्त कुल वहुल वहुल जाति मिलि वइस।—कीर्ति०, पृ० ३०।

वयंⓅ—सर्व० [सं० अस्मद् शब्द का प्र० पु० बहुवचन] हम। उ०—विकटतर वक्र छुर धार प्रमदा तीव्र दर्प कंदर्प खर खड्गधारा। धीर गंभीर मन पीर कारक तत्र के वराका वयं विगत सारा।—तुलसी (शब्द०)।

वयःक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] क्रमागत जीवन काल। अवस्था। उम्र।

वयःपरिणति—संज्ञा स्त्री० [सं०] अवस्था की परिपक्वता। प्रौढ़ अवस्था [को०]।

वयःपरिणाम—संज्ञा पुं० [सं०] वयःपरिणति।

वयःप्रमाण—संज्ञा पुं० [सं०] जीवन का पूरा समय [को०]।

वयःसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० वयःसन्धि] बाल्यावस्था और यौवनावस्था के बीच की स्थिति। लड़कपन और जवानी के बीच का काल।

वयःस्थ—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'वयस्थ'।

वयःस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वयस्था'।

वयःस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] जवानी। दे० 'वयस्थान' [को०]।

वय^1—संज्ञा पुं० [सं० वयस्] १. बीता हुआ जीवनकाल। अवस्था। उम्र। २. बल। शक्ति। ३. पक्षी। ४. युवावस्था। जवानी (को०)। ५. कौवा (को०)। ६. यज्ञ प्रयुक्त बलि पदार्थ। बलि या अन्न (वेद) (को०)। ७. स्वास्थ्य। पुष्टता (को०)।

वय^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. तंतुवाय। जुलाहा। २. बया पक्षी।

वय^3—संज्ञा स्त्री० जुलाहों के करघे में सूत का एक जाल। विशेष दे० 'वै' या 'वय'।

वयतालⓅ†—संज्ञा पुं० [सं० बैताल] उ०—कालीदास भोज कै ज्यौं विक्रम के वयताल।—बाकी० ग्रं०, भा० ३, पृ० १३३।

वयन—संज्ञा पुं० [सं०] बुनने की क्रिया या भाव। बुनना।

वयराटⓅ—वि० [सं० वैराट] दे० 'विराट्'। उ०—वयराट रूप गावत निगम। निज दासन (दाता) अच्छय।—नट०, पृ० १०।

वयस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. बीता हुआ जीवन काल। अवस्था। उम्र। २. पक्षी।

वयस—संज्ञा पुं० [सं० वयस्] दे० 'वयस्'।

वयसिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वयस्या'।

वयस्क—वि० [सं०] [स्त्री० वयस्का] १. उमर का। अवस्थावाला।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग समस्तपद के अंत में होता है। जैसे, अल्पवयस्क, समवयस्क इत्यादि।

२. पूरी अवस्था को पहुँचा हुआ। जो अब बालक न हो। सयाना। बालिग।

वयस्कर—वि० [सं०] दे० 'वयस्कृत'।

वयस्कृत—वि० [सं०] आयुःप्रद। जीवन देनेवाला।

वयस्थ^1—वि० [सं०] [स्त्री० वयस्था] १. प्राप्तवयस्क। २, युवा। युवक। ३. समवयस्क।

वयस्थ^2—संज्ञा पुं० समवयस्क पुरुष।

वयस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आमलकी। आँवला। २. हरीतकी। हड़। ३. गुड़ुच। ४. छोटी इलायची। ५. काकोली। ६. सेमल। ७. युवती। ८. मत्स्याक्षी (को०)। ९. अत्यम्लपर्णी (को०)। १०. सोमवल्लरी। सोमलता (को०)। ११. आली। सखी। सहेली। (को०)।

वयस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] यौवन।

वयस्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. समवयस्क। एक उमरवाले। हमजोली। २. मित्र। उ०—प्रिय वयस्य ? आज तुम्हें आए तीन दिन हुए।—स्कंद० पृ० १२७।

यौ०—**वयस्यभाव** = मित्रता। मैत्री। दोस्ती।

वयस्यक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वयस्य' [को०]।

वयस्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सखी। सहेली। उ०—देखकर अपनी सखी को पलक सी ध्यानलग्ना, एक ने संकेत कर यों वयस्या से दबे स्वर में कहा।—ग्रंथि०, पृ० ७२। २. इष्टका। ईंट।

वयस्यिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'वयस्या'-१। २. अंतरंग चेटी वा दासी [को०]।

वया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वयाक' [को०]।

वयाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. डाली। टहनी। २. लता (को०)।

वयारⓅ—संज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'बयार'।

वयालाⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्याल] १. दे० 'व्याल'। २. वायु। हवा। उ०—अंधा भया बनाय वैद की बात न मानै। क्षिषय वयाला खाय करै संजय का जानै।—पलटू०, पृ० ९०।

वयुन—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्ञान। बुद्धि। बौद्धिक चेतना। २. मंदिर। देवागार। ३. आज्ञा। आदेश। नियम। ४. कर्म। ५. रीति। पद्धति। सरणि। ६. स्पष्टता [को०]।

वयोगत^1—वि० [सं०] प्रौढ़। अधिक वय का।

वयोगत^2—संज्ञा पुं० युवावस्था का गमन। प्रौढ़ावस्था [को०]।

वयोधा^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वयोधस्] १. अन्न। २. युवा अथवा मध्यम वय का व्यक्ति। प्रौढ़ व्यक्ति [को०]।

वयोधा^{2}—वि० [सं०] १. शक्तिशील। ताकतवर। २. शक्तिदायक वा स्वास्थ्यप्रद। ३. भोजन देनेवाला। अन्न देनेवाला [को०]।

वयोधा^{3}—संज्ञा स्त्री० शक्ति। ताकत। सामर्थ्य [को०]।

वयोबाल—वि० [सं०] छोटी उम्र का। बाल्यावस्था का [को०]।

वयोरंग—संज्ञा पुं० [सं० वयोरङ्ग] सीसा धातु [को०]।

वयोवंग—संज्ञा पुं० [सं० यौवङ्ग] सीसक। सीसा धातु [को०]।

वयोविशेष—संज्ञा पुं० [सं०] वय की विशेषता। उम्र का अंतर [को०]।

वयोवृद्ध—वि० [सं०] जो अवस्था में बड़ा हो। बड़ा बूढ़ा।

वयोहानि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बल या शक्ति का कम होना। २. बुढ़ाना। वृद्धावस्था होना [को०]।

वरंच—अव्य [सं० वरञ्च] १. ऐसा न होकर ऐसा। बल्कि। अपितु। २. परंतु। लेकिन। किंतु।

वरंड—संज्ञा पुं० [सं० वरण्ड] १. बंसी की डोर। शिस्त। २. समूह। ३. मुहाँसा। ४. घास का गट्ठर. ५. फीलखाने आदि में की वह दीवार जो दो लड़ाके हाथियों के बीच में लड़ाई बचाने के लिये बनाई जाती है। ६. कोष। थैली। झोला (को०)। ७. अलिंद। बरामदा। दालान (को०)।

वरंडक^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वरण्डक] १. मिट्टी का भीटा। ढूह। २. दो लड़ाके हाथियों के बीच की दीवार। ३. हाथी की पीठ पर कसा जानेवाला हौदा। ४. मुँहासा (को०)। ५. दीवार (को०)।

वरंडक^{२}—वि० १. लंबा। बड़ा। विस्तृत। २. भयानक। डरावना। भयभीत। ३. दुःखी। पीड़ित। ४. गोल। वर्तुलाकार [को०]।

वरंडलंबुक—संज्ञा पुं० [सं० वरण्डलम्बुक] बंसी की डोरी [को०]।

वरडा^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं० वरण्डा] १. कटारी। कर्त्ता। २. बत्ती। ३. मैना। सारिका (को०)।

वरडा^{२}—संज्ञा पुं० दे० 'बरामदा'।

वरंडालु—संज्ञा पुं० [सं० वरण्डालु] एरंड वृक्ष। रेंड़ का पेड़ [को०]।

वर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] किसी देवता या बड़े से माँगा हुआ मनोरथ। वह बात जिसके लिये किसी देवी, देवता या बड़े से प्रार्थना की जाय। जैसे,—उसने शिव से यह वर माँगा।

क्रि० प्र०—माँगना।

२. किसी देवता या बड़े से प्राप्त किया हुआ फल या सिद्धि। वह बात जो किसी देवता या बड़े की प्रसन्नता से प्राप्त हुई हो। जैसे,—उसे यह वर था कि वह किसी के हाथ से न मरेगा।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

३. जामाता। ४. पति या दूल्हा। ५. गुग्गुल। ६. कुंकुम। केसर। ७. दारचीनी। ८. बालक। ९. अदरक। आर्द्रक। १० सुगंध तृण। ११. सेंधा नमक। १२. पियाल या चिरौंजी का पेड़। १३. वकुल। मौलसिरी। १४. हलदी। १५. गौरा पक्षी। १६. चुनाव (को०)। १७. पसंद (को०)। १८. इच्छा (को०)। १९. लंपट या छिछोरा व्यक्ति (को०)। २० वह जो किसी से प्रेम करता हो। प्रेमी (को०)। २१. दहेज (को०)।

वर^{२}—वि० १. श्रेष्ठ। उत्तम। २. सर्वोत्तम (को०)।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्रायः श्रेष्ठता सूचित करने के लिये संज्ञा या विशेषणों के आगे होता है। जैसे,—पंडितवर, विज्ञवर, वीरवर, मित्रवर।

वरकंठ—संज्ञा पुं० [सं० वर+कण्ठ] सुग्रीव। उ०—वरकंठ वामा घरी धामा किता कामा बद किया। भय मेट भारी धनुष धारी अरज सारी येह।—रघु० रू०, पृ० १४६।

वरक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. साधारण वस्त्र। गमछा, दुपट्टा आदि। उ०—गुरु के चरन अनंद जाय करि, अनुभव वरक उतारी।—धरनी०, पृ० ३। २. नाव का आच्छादन। ३. बनमूँग। ४. काकुन। प्रियंगु। ५. जंगली बेर। झड़बेरी। ६. अभिलाषा। मनोरथ। इच्छा (को०)। ७. घड़ी। घंटा (को०)। ९. किसी स्त्री से विवाह की प्रार्थना करनेवाला व्यक्ति (को०)।

वरक^{२}—संज्ञा पुं० [अ० वरक़] १. पत्र। २. पुस्तकों का पन्ना। पत्रा। ३. दल। पत्र। पंखुड़ी (को०)। ४. सोने, चाँदी आदि के पतले पत्तर, जो कुटकर बनाए जाते हैं और मिठाइयों पर लगाने और औषध में काम आते हैं।

यौ०—वरकसाज = सोने चाँदी के वरक बनानेवाला। **वरकसाजी** = वरकसाज का काम।

वरका—संज्ञा पुं० [अ० वरक़ह] दल। पत्र। पत्ता [को०]।

वरकी—वि० [अ० वरकी] वरक की तरह पतला [को०]।

वरकोद्रव—संज्ञा पुं० [सं०] कोविदार। कचनार का पेड़।

वरक्रतु—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र।

वरग(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वर्ग, प्रा० वग्ग] दे० 'वग्ग'। उ०—मालवणी मनि दूमणी आवी वरग विमासि।—ढोला०, दू० ३१६।

वरचंदन—संज्ञा पुं० [सं० वरचन्दन] १. काला चदन। २. देवदारु।

वरज—वि० [सं०] ज्येष्ठ। बड़ा।

वरजिश—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० वरज़िश] १. व्यायाम। कसरत। शारीरिक परिश्रम। २. अभ्यास। मश्क। ३. ग्रहण। इख्तियार [को०]।

यौ०—वरजिशखाना, वरजिशगाह = व्यायामशाला। अखाड़ा।

वरजिशी—वि० [फ़ा० वरज़िशी] कसरती [को०]।

वरजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वरजीविन्] १. एक वर्णसंकर जाति जो स्मृतियों में गोप और तंतुवाय के संयोग से उत्पन्न कही गई है। २. ब्राह्मण का औरस पुत्र जो शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न हो।

वरट—संज्ञा पुं० [सं०] १. हंस। २. कुंद का फूल। ३. भिड़। बर्रे। ४. एक प्रकार का अन्न (को०)। ५. कुसुम का बीज (को०)।

वरटक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वरटिका, वरट्टिका] कुसुम का बीज। बर्रे का बीज।

वरटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हंसी। २. गंधिया कीड़ा। गंधकीट। ३. बर्रे। ततैया। भिड़। ४. कुसुम का बीज (को०)।

वरटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हंसी। २. गंधिया कीड़ा। ३. पीली मक्खी। उ०—वरटी (पीली माँखी), झींगर आदि आपसे चौगुने भारी भी हैं।—माधव०, पृ० १९२।

वरण^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी को पसंद करके किसी कार्य के लिये नियुक्त करना। किसी को किसी काम के लिये चुनना या मुकर्रर करना।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

२. मंगल कार्य के विधान में होता आदि कार्यकर्ताओं को नियत करके दान आदि से उनका सत्कार करना। ३. मगल कार्य में नियत किए हुए होता आदि के सत्कारार्थ दी हुई वस्तु या दान। जैसे,—विवाह में ११ आदमियों को वरण मिला है।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

४. कन्या के विवाह में वर को अंगीकार करने की रीति। ५. पूजा। अर्चना। सत्कार। ६. ढकने या लपेटने की वस्तु। आवरण। आच्छादन। वेष्ठन। ७. किसी स्थान के चारों ओर घेरी हुई दीवार। ८. ऊँट। ९. वरुण वृक्ष। १०. पुल। सेतु। ११. धनुष की सज्जा या अलंकार (को॰)। १२. इंद्र (को॰)। १३. एक प्रकार का अस्त्र का मंत्र (को॰)। १४. वृक्ष। पेड़ (को॰)। १५. याचना। प्रार्थना।

वरण(पु)^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वर्ण] १. रंग। दे॰ 'वर्ण'। २. मनुष्यों के चार विभाग या वर्ण। उ॰—जो कोइ भक्त हमारा होई। जात वरण को त्यागै सोई।—कबीर सा॰, पृ॰ ८२०।

वरणक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. आच्छादन। आवरण। २. वह जो किसी का आच्छादन करे। आच्छादन करनेवाला (को॰)।

वरणजथा(पु) संज्ञा पुं॰ [देश॰] एक प्रकार का डिंगल छंद।—रघु॰ रू॰, पृ॰ २५३।

वरणना(पु)—क्रि॰ स॰ [सं॰ वर्णन] वर्णन करना। कहना। उ॰—नभ वायु तेज चल धरणी। पीछे बहु बिधि करि वरणी।—सुंदर॰ ग्रं॰, भा॰ १, पृ॰ ६७।

वरणमाला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] जयमाल [को॰]।

वरणसी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वाराणसी।

वरणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वरुण ?] १. एक छोटी नदी का नाम जो काशी के उत्तर में बहती है। यह नदी वाराणसी क्षेत्र की उत्तरीय सीमा है। वरुणा। २. पंजाब देश की एक नदी का नाम जो सिंधु नद में दक्षिण ओर से अटक के विपरीत दिशा से आकर मिलती है। ३. अरहर।

वरणी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वरण] दे॰ 'वरण'—३।

वरणीय—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ वरणीया] १. पूजनीय। पूज्य। २. श्रेष्ठ। बड़ा। ३. चुनने या ग्रहण करने योग्य। उ॰—थी अनंत की गोद सदृश जो विस्तृत गुहा वहाँ रमणीय। उसमें मनु ने स्थान बनाया सुंदर स्वच्छ और वरणीय।—कामायनी, पृ॰ ३०।

वरतंतु—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वरतन्तु] एक ऋषि का नाम।

वरत(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ व्रत] उपवास। दे॰ 'व्रत'-२। उ॰—विकट करी तीरथ वरत, धरा भेष के धार। विनै नाम रघुबीर रै, परत न उतरै पार।—रघु॰ रू॰, पृ॰ ३४।

वरतनु^{1}—वि॰ [सं॰] सुंदर शरीरवाला [को॰]।

वरतनु^{2}—संज्ञा स्त्री॰ सुंदरी स्त्री [को॰]।

वरतमान(पु)—वि॰ [सं॰ वर्तमान] दृश्य जगत् जो वर्तमान है। उ॰—वरतमान मँह सतगुरु भारा। सतगुरु भव तारन कड़िहारा।—कबीर सा॰, पृ॰ ४३०।

वरति(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ व्रत] दे॰ 'व्रत'। उ॰—वरति करइ घरि आपणाइँ।—बी॰ रासो, पृ॰ ४६।

वरतिक्त—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कुटज। कोरैया। २. नीम। ३. पर्पट। पापड़ा। ४. रोहितक। रोइना का पेड़।

वरतिक्तिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] पाठा।

वरत्त(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वरयात्रा, प्रा वरत्त] दे॰ 'बारात'। उ॰—नायदवारे परसवा, आवी धार वरत्त।—रा॰ रू॰, पृ॰ ३५६।

वरत्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'वरत्रा' [को॰]।

वरत्रा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. वरेत। वरेता। २. हाथी खींचने का रस्सा। ३. चमड़े का तसमा।

वरत्वच—संज्ञा पुं॰ [सं॰] नीम का पेड़।

वरद^{1}—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ वरदा] वर देनेवाला। अभीष्टदाता। २. प्रसन्न। हर्षयुक्त (को॰)।

यौ॰—**वरदचतुर्थी** = वरदा चतुर्थी। **वरदहस्त** = वर देने की मुद्रा। हाथ की वरद मुद्रा।

वरद^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. उपकारी। कल्याणकर। २. पितृगणों का एक वर्ग [को॰]।

वरदक्षिणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वह धन जो वर को विवाह के समय कन्या के पिता से मिलता है। दहेज। दायदा।

वरदा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. कन्या। २. अश्वगंध। ३. अड़हुल। ४. आदित्यभक्ता। हुरहुर। ५. वाराही कंद। ६. एक नदी का नाम [को॰]।

वरदाई^{1}—वि॰ [सं॰ वरदायिन्] वरदायी। वर देनेवाला। उ॰—इंद्र को इंद्र, देव देवन को, बह्मा को ब्रह्म महा बरदाई।—नंद॰ ग्रं॰, पृ॰ ३४३।

वरदाई^{2}—संज्ञा पुं॰ पृथ्वीराज रासो के रचयिता चंद का उपनाम।

वरदा चतुर्थी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] माघ महीने के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी। वरदा चौथ।

वरदाता—वि॰ [सं॰ वरदातृ] [वि॰ स्त्री॰ वरदात्री] वर देनेवाला। वरद। उ॰—जीवन समीर शुचि निःश्वसना, वरदात्री।—अपरा, पृ॰ २०३।

वरदान—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. किसी देवता या बड़े का प्रसन्न होकर कोई अभिलषित वस्तु या सिद्धि देना। उ॰—देन कहेहु वरदान दुइ तेउ पावत संदेह।—तुलसी (शब्द॰)।

क्रि॰ प्र॰—देना।

२. किसी फल का लाभ जो किसी को प्रसन्नता से हो।

क्रि॰ प्र॰—**पाना**।—**मिलना**।

वरदानी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वरदानिन्] वर प्रदान करनेवाला। मनोरथ पूर्ण करनेवाला। वरदायक।

वरदायक^{1}—वि॰ [स॰] दे॰ 'वरदाता'।

वरदायक^{2}—संज्ञा पु॰ [सं॰] एक प्रकार की समाधि [को॰]।

वरदारुक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विषैली पत्तियोंवाला एक पौधा [को॰]।

वरदी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] वह परिधान जो किसी विशेष विभाग के कर्मचारियों के लिये नियत हो। वह पोशाक या पहनावा जो किसी खास महकमे के अफसरों और नौकरों के लिये मुकर्रर हो। जैसे,—पुलिस की वरदी, फौज की वरदी।

वरद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अगर, जिसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है।

वरन्—अव्य० [सं० वरम्] ऐसा नहीं। बल्कि।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग अब उठता जा रहा है।

वरन(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वर्ण] दे० 'वर्ण'। उ०—इनकौ अंग बोहोत सुंदर और गौर वरन है, श्री स्वामिनी जी सदृश।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० १०८।

वरना(पु)[१]—संज्ञा पुं० [सं० वरण] ऊँट। उ०—वरना भख कर में अवलोकत केश पास कृतबंद। अधर समुद्र सदल जो सहसा ध्वनि उपजत सुखकंद।—सूर (शब्द०)।

वरना[२]—अव्य० [अ०] नहीं तो। यदि ऐसा न होगा तो। जैसे,—आप बैठिए, वरना मैं भी उठकर चला जाऊँगा।

वरना(पु)[३]—क्रि० स० [सं० वरण] वरण करना। उ०—और चाहते होंगे फिर से मर्त्य धरा पर आकर, जीवन श्रम के शोभा सुख को वरना।—युगपथ, पृ० ११५।

वरपक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. बरात। २. बराती [को०]।

वरपर्णाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] क्षीरकंचुकी का वृक्ष [को०]।

वरपीतक—संज्ञा पुं० [सं०] अबरक। अभ्रक [को०]!

वरप्रद—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वरप्रदा] १. वर देनेवाला। २. प्रसन्न।

वरप्रदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अगस्त्य ऋषि की पत्नी लोपामुद्रा [को०]।

वरप्रदान—संज्ञा पुं० [सं०] मनोरथ पूर्ण करना। कोई फल या सिद्धि देना। वर देना।

क्रि० प्र०—**करना**।—**होना**।

वरप्रभ[१]—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व [को०]।

वरप्रभ[२]—वि० शोभायुक्त। अच्छी कांतिवाला [को०]।

वरप्रस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वरयात्रा' [को०]।

वरफल—संज्ञा पुं० [सं०] नारिकेल। नारियल।

वरबाह्लिक—संज्ञा पुं० [सं०] केसर [को०]।

वरम(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वर्म] दे० 'वर्म'।

वरमना(पु)†—क्रि० अ० [देश० या सं० विरमण] रमना। झुकना। उ०—झिरिहिरि बहै बयारि अमी रस ढरकै हो। वरमा नौरँगिया कै डारि, चँदन गछ महकै हो।—पलटू० भा० ३, पृ० ७३।

वरमेल्हो—संज्ञा पुं० [पुर्त०] एक प्रकार का लाल चंदन जो मलाया द्वीप से आता है।

वरम्म(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वर्म] दे० 'वर्म'। उ०—नमसकार सुराँ नराँ, विरद नरेस वरम्म। रिजक उजालै साँम रौ, पालै साँम धरम्म।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० १३।

वरमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक गंधद्रव्य। रेणुका [को०]।

वरयात्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विवाह के लिये वर का अपने इष्ट-मित्रों और संबंधियों के सहित घूमधाम के साथ कन्या के घर जाना। दूल्हे का बाज गाजे के साथ दुलहिन के घर विवाह के लिये जाना। २. वह भीड़ भाड़ जो दूल्हे के साथ चलती है। बरात।

वरयिता—संज्ञा पुं० [सं० वरयितृ] १. वरण करनेवाला। २. पति। भर्ता।

वरयुवति, वरयुवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदरी स्त्री [को०]।

वररुचि—संज्ञा पुं० [सं०] एक अत्यंत प्राचीन पंडित, वैयाकरण और कवि।

विशेष—अष्टाध्यायीवृत्ति, प्राकृतप्रकाश, लिंगानुशासन, राक्षस काव्य आदि अनेक ग्रंथ इनके नाम से प्रसिद्ध हैं; पर सब इनके नहीं बनाए हैं। इनका प्राकृत का व्याकरण 'प्राकृत प्रकाश' बहुत प्राचीन और प्रामाणिक माना जाता है। ये कब हुए, इसका ठीक ठीक निश्चय विद्वानों को अभी नहीं हुआ है। कथासरित्सागर में ये पाणिनि के सहाध्यायी और प्रतिद्वंद्वी कहे गए हैं; पर यह कल्पना मात्र है। उसी ग्रंथ में वररुचि और कात्यायन एक हो गए हैं; पर यह भी ठीक नहीं है। इसी प्रकार ज्योतिर्विदाभरण का नवरत्नवाला वह श्लोक भी, जिसमें वररुचि का नाम है, कपोलकल्पना मात्र है। 'प्राकृतप्रकाश' की भूमिका में कावेल साहब ने वररुचि को ईसा की पहली शताब्दी का ठहराया है; और कोई कोई इन्हें चंद्रगुप्त मौर्य से भी पहले ईसा से ४०० वर्ष पूर्व का मानते हैं। फिर भी ये पतंजलि (ई० पू० १५७) से एक दो शती पूर्ववर्ती थे, इसमें कोई संदेह नहीं है।

वरल—संज्ञा पुं० [सं०] भिड़। बर्रें [को०]।

वरलब्ध—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंपक वृक्ष। २. वह जो वररूप में प्राप्त हो। बरदान के रूप में प्राप्त वस्तु [को०]।

वरला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हंसी। २. भिड़। बर्रें (को०)।

वरली—संज्ञा स्त्री० [सं०] भिड़। बर्रें [को०]।

वरवत्सला—संज्ञा स्त्री० [सं०] सास। पत्नी की माता [को०]।

वरवराह—संज्ञा पुं० [सं०] घुँघराले बालोंवाला जंगली आदमी। बर्बर।

वरवर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ण। सोना [को०]।

वरवर्णिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उत्तम स्त्री। २. लाख। ३. हल्दी। ४. गोरोचन। ५. कँगनी। काकुन। ६. गौरी। ७. लक्ष्मी। ८. सरस्वती। ९. महिला। स्त्री (को०)। १०. प्रियंगु लता (को०)।

वरबाह्लीक—संज्ञा पुं० [सं०] कुंकुम। केसर।

वरवृद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव [को०]।

वरशिख—संज्ञा पुं० [सं०] एक असुर जिसे इंद्र ने सपरिवार मारा था।

वरशीत—संज्ञा पुं० [सं०] दालचीनी। विशेष दे० 'दारचीनी' [को०]।

वरसाल(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वर्षाकाल] वर्षाऋतु। बरसात का मौसम। उ०—बिना नीर जहो कमल है बिन बरखा वरसाल।—राम० धर्म०, पृ० ६१।

वरसावरस(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वर्ष+प्रतिवर्ष] सालोसाल। प्रतिवर्ष। उ०—सीदौ उदियासिंघ सूँ, कीधौ राम करार। सोंझल लौ वरसावरस रुपिया सात हजार।—रा० रू०, पृ० २२४।

वरसुरत—वि० [सं०] १. रति के भेदों का ज्ञाता। रतिज्ञ। २. कामी। भोगी। विलासी (को०)।

वरस्रक्—संज्ञा स्त्री० [सं० वरस्रज्] वरमाल। वर को पहनाई जानेवाली माला [को०]।

वरहक—संज्ञा पुं० [सं०] एक जनपद का नाम ।

वरही^{१}--संज्ञा पुं० [हिं० वर] सोने की एक लंबी पट्टी जो विवाह के समय वधू को पहनाई जाती है । टीका ।

वरही(पु)^{२}--संज्ञा पुं० [सं० वर्हिन्] मयूर । दे० 'वर्हीं' ।

वरही^{३}--संज्ञा स्त्री० [हिं० बारह+ई (प्रत्य०)] प्रसूता का बारहवें दिन स्नान । दे० 'बरही' ।

वरही^{४}—संज्ञा स्त्री० [देश०] मोटी रस्सी । दे० 'बरही^{३}' ।

वरांग^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वराङ्ग] १. मस्तक । २. गुदा । ३. योनि । ४. हस्ती । ५. विष्णु का एक नाम । ६. एक प्रकार का नक्षत्र-वत्सर जो ३२४ दिनों का होता है । ७. दारचीनी । ८. पेड़ की टहनी का सिरा । ९. कामदेव का एक नाम (को०) । १०. मुख्य भाग । उत्कृष्ट अंश (को०) । ११. सुंदर रूप (को०) ।

वरांग^{२}—वि० सुंदर एवं सुघटित अंश युक्त [को०] ।

वरांगक—संज्ञा पुं० [सं० बराङ्गक] दारचीनी ।

वरागंना—संज्ञा स्त्री० [सं० वराङ्गना] सुंदर स्त्री ।

वरांगी—संज्ञा पुं० [सं० वराङ्गिन्] १. हाथी । २. अमलबेल ।

वरांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वराङ्गी] १. हल्दी । २. नागदंती । ३. मजीठ ।

वरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. त्रिफला । रेणुका नामक गंधद्रव्य । ३. गुरुच । ४. मेदा । ५. ब्राह्मी । ६. विड़ग । ७. पाठा । ८. हल्दी । ९. बैंगन । १०. अड़हुल । जपा । देवीफूल । ११. मद्य । १२. सोमराजी लता । १३. अपराजिता । १४. शतमूली । १५. पार्वती का एक नाम (को०) ।

वराक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. युद्ध । ३. पापड़ा ।

वराक^{२}—वि० १. शोचनीय । २. नीच । ३. अशुचि । अशुद्ध (को०) ।

वराकक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. युद्ध । लड़ाई [को०] ।

वराकी—वि० स्त्री० [सं०] दीन । भाग्यहीन । दुःखिनी [को०] ।

वराजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वराजीविन्] ज्योतिषी । गणक ।

वराट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कौड़ी । २. रस्सी । ३. पद्मबीज । ~ कँवलगट्टे का बीज ।

वराटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कौड़ी । २. रस्सी । ३. पद्म का बीज ।

वरातकरजा—संज्ञा पुं० [सं० वराटकरजस्] नागकेसर का पेड़ ।

वराटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कौड़ी । २. तुच्छ वस्तु । ३. नागकेसर ।

वराटी, वराडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] संगीत में एक प्रकार का राग [को०] ।

वराण—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र । २. वरुण वृक्ष । बरना ।

वराणसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाराणसी । काशी [को०] ।

वरानना—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदर स्त्री ।

वरान्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. दला हुआ उत्तम अन्न । २. उत्तम खाद्य । उत्कृष्ट भोजन (को०) ।

वराभिद, वराभिध—संज्ञा पुं० [सं०] अम्लवेतस् । अमलबेद ।

वराम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] करौंदा ।

वरारक—संज्ञा पुं० [सं०] हीरा । हीरक ।

वरारणि--संज्ञा स्त्री० [सं०] माता ।

वरारुह—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभ । बैल । साँड़ [को०] ।

वरारोह^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु । २. एक प्रकार का पक्षी । ३. चतुर सवार । ४. अश्वारोही वा गजारोही (को०) । ५. सवार होना । सवारी करना (को०) ।

वरारोह^{२}—वि० [वि० स्त्री० वरारोहा] १. श्रेष्ठ सवारीवाला । २. जिसकी कटि या नितंब सुंदर हों (को०) ।

वरारोहा^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदर स्त्री । वरवर्णिनी । २. कटि । कमर । [को०] ।

वरारोहा^{२}—वि० स्त्री० नितंबिनी । ऊँचे चक्राकार नितंबोंवाली [को०] ।

वरार्द्धक—संज्ञा पुं० [सं०] पूजा की सामग्री जिसमें चंदन, कुंकुम और जल सम भाग होता है ।

वराल, वरालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. लवंग । लौंग । २. दानी । दाता [को०] ।

वराला—संज्ञा स्त्री० [सं०] हंसिनी [को०] ।

वरालि—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

वरालिका--संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।

वराशि—संज्ञा पुं० [सं०] मोटा कपड़ा ।

वरासत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. उत्तराधिकार । दायाधिकार । २. मृत पुरुष की संपत्ति जो उत्ताराधिकार में प्राप्त हो । रिक्थ । तरका [को०] ।

वरासतन्--वि० [अ०] उत्ताराधिकार के रूप में [को०] ।

वरासतनामा--संज्ञा पुं० [अ० वरासत+फा० नामह्] उत्ताराधिकार-पत्र । वरासत का कानूनी दस्तावेज [को०] ।

वरासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रेष्ठ आसन । ऊँचा आसन । २. विवाह में वर के बैठने का आसन या पाटा । ३. जपा । देवी फूल । अड़हुल । ४. हिजड़ा । खोजा । ५. द्वारपाल ।

वरासि--संज्ञा पुं० [सं०] १. मोटा कपड़ा । २. कृपाणधर पुरुष ।

वरासी--संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नहाने का मोटा कपड़ा । २. मैला कपड़ा । मलिन वस्त्र [को०] ।

वराह—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूकर । सूअर । २. विष्णु । ३. मुस्ता । मोथा । ४. एक पर्वत का नाम । ५. एक मान । ६. सूँस । शिशुमार । ७. वराहीकंद । ८. अठारह द्वीपों में से एक छोटा द्वीप । ९. भेड़ा । मेष (को०) । १०. साँड़ (को०) । ११. बादल । मेघ (को०) । १२. मगर । घड़ियाल (को०) । १३. सेना का एक व्यूह । दे० 'वराह व्यूह' (को०) । १४. वराहमिहिर का नाम (को०) । १५. सिक्का (को०) । १६. एक प्रकार का तृण (को०) । १७. एक पुराण जो १८. पुराणों में से है ।

वराहकंद—संज्ञा पुं० [सं० वराहकन्द] वराहीकंद [को०] ।

वराहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. हीरा । २. शिशुमार । सूँस ।

वराहकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बाण [को०] ।

वराहकर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक अस्त्र का नाम [को०]।

वराहकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्वगंधा। असगंध।

वराहकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] वह कल्प या काल जिसमें विष्णु ने वराह अवतार धारण किया था [को०]।

वराहकांता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वाराही' [को०]।

वराहक्रांता—संज्ञा स्त्री० [सं० वराहक्रान्ता] १. वाराही। २. लज्जालु। लजालू।

वराहकाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्यमुखी का फूल [को०]।

वराहपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्वगंधा। असगंध।

वराहमिहिर—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के एक प्रधान आचार्य जिनके बनाए वृहत्संहिता, पंचसिद्धांतिका और वृहज्जातक नामक ग्रंथ प्रचलित हैं।

विशेष—इनके समय के संबंध में अनेक प्रकार के प्रवाद कुछ वचनों के आधार पर प्रचलित हैं। जैसे,—ज्योतिर्विदाभरण के एक श्लोक में कालिदास, धन्वंतरि आदि के साथ वराहमिहिर भी विक्रम की सभा के नौ रत्नों में गिनाए गए हैं। पर इन नौ नामों में से कई एक भिन्न भिन्न काल के सिद्ध हो चुके हैं। अतः यह श्लोक प्रमाण के योग्य नहीं। इसी प्रकार कुछ लोग ब्रह्मगुप्त के टीकाकार पृथुस्वामी के इस वचन का आश्रय लेते हैं—'नवाधिक पंचशतसंख्य शाके वराहमिहिराचार्य्या दिवंगतः।' और शक ५०९ में वराहमिहिर की मृत्यु मानते हैं। पर अपनी पंचसिद्धांतिका में 'रोमकसिद्धांत' का 'अहर्गण' स्थिर करते हुए वराहमिहिर ने शक संवत् ४२७ लिया है। ज्योतिषी लोग अपना समय लेकर ही अहर्गण स्थिर करते हैं। अतः इससे ईसा की पाँचवीं शताब्दी में वराहमिहिर का होना सिद्ध होता है। अपने वृहज्जातक के उपसंहाराध्याय में आचार्य ने अपना कुछ परिचय दिया है। उसके अनुसार ये अवंती (उज्जयिनी) के रहनेवाले थे। 'कायित्थ' स्थान में सूर्यदेव को प्रसन्न करके इन्होंने वर प्राप्त किया था। इनके पिता का नाम आदित्यदास था।

वराहमुक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का मोती।

विशेष—जैसे, 'गजमुक्ता' हाथी से उत्पन्न मानी जाती है, वैसे ही यह सूअर से उत्पन्न मानी जाती है।

वराहव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का व्यूह या सेना की रचना, जिसमें अग्र भाग पतला और बीच का भाग चौड़ा रखा जाता था।

वराहशिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक विचित्र पवित्र शिला जो हिमालय के शिखर पर है।

वराहशृंग—संज्ञा पुं० [सं० वराहशृङ्ग] शिव।

वराहशैल—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

वराहसंहिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वराहमिहिर रचित ज्योतिष की वृहत्संहिता नाम की प्रसिद्ध पुस्तक।

वराहांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वराहाङ्गी] क्षुद्रदंती।

वराहिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कपिकच्छु। केवाँच। कौंच।

वराही—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सूअरी। शूकरी। २. भद्रमुस्ता। नागरमोथा। ३. वाराहीकंद। ४. अश्वगंधा। ५. एक प्रकार का पक्षी जो गौरैया के बराबर और काले रंग का होता है। ६. दे० 'वाराही'।

वराहु—संज्ञा पुं० [सं०] शूकर। सूअर।

वरिता—वि० [सं० वरित] १. वरण करनेवाला। २. ढकनेवाला [को०]।

वरिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० वरिमन्] १. श्रेष्ठता। उत्तमता। प्रमुखता। २. विस्तार। आयाम। परिणाह। ३. मंडल। घेरा [को०]।

वरिवसित—वि० [सं०] पूजित। संमानित। उपासित [को०]।

वरिवसिता—संज्ञा पुं० [सं० वरिवसितृ] उपासक। भक्त [को०]।

वरिवस्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उपासना। पूजा। २. सेवा। सुश्रूषा।

वरिवस्यित—वि० [सं०] दे० 'वरिवसित'।

वरिशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मछली फँसाने की कँटिया। बंसी [को०]।

वरिष—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ष। वत्सर।

वरिषा—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्षा ?] वर्षा ऋतु। बरसात [को०]।

यौ०—वरिषाप्रिय - चातक पक्षी।

वरिष्ठ^1—वि० [सं०] १. श्रेष्ठ। पूजनीय। उ०—भाव देख उन एक महा व्रतनिष्ठ के, भर आए युग नेत्र वरिष्ठ वशिष्ठ के।—साकेत, पृ० १०८। २. बहुत बड़ा। अत्यंत विस्तृत (को०)। ३. बहुत वजनी। अत्यंत भारी (को०)। ४. खराब। अत्यंत दुष्ट (को०)।

वरिष्ठ^2—संज्ञा पुं० १. तित्तिर पक्षी। तीतर। २. चाक्षुप मनु के पुत्र का नाम। ३. धर्म सावर्णि मन्वंतर के सप्त ऋषियों में से एक। ४. ताम्र। ताँबा। ५. मिर्च। ६. उरुतमस् ऋषि का एक नाम। ७. नारंगी का पौधा (को०)।

वरिष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हलदी। २. हुरहुर नाम का पौधा।

वरिस(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वरिष] दे० 'वरिष' या 'वर्ष'। उ०—दरबार बरहे दिवस भइट्ठे, वरिसहु भेट्ट न पावंता।—कीर्ति०, पृ० ४६।

वरिहिष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. उशीर। खस। २. सुगंधबाला।

वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शतावरी। सतावर। २. सूर्य की पत्नी। छाया।

वरीता—वि० [सं० वरीतृ] दे० 'वरिता' [को०]।

वरीमा—संज्ञा स्त्री० [सं० वरीमन्] दे० 'वरिमा' [को०]।

वरीयान्^{1}—वि० [सं० वरीयस्] १. श्रेष्ठ। २. अति युवा।

वरीयान्^{2}—संज्ञा पुं० १. फलित ज्योतिष में विष्कंभ आदि सत्ताईस योगों में से अठारहवाँ योग।

विशेष—इस योग में जन्म लेनेवाला मनुष्य दयालु, दाता, सुंदर, सत्कर्म करनेवाला और मधुर स्वभाव का होता है।

२. पुलह ऋषि के एक पुत्र का नाम।

वरीवर्द—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वलीवर्द' [को०]।

वरीषु—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव।

वरीसियⓅ - वि० [सं० वरीयस्] प्रगाढ़। घनघोर। बहुत बड़ा। उ०—मनु सहित उड़गन नवग्रहनु मिल जुद्ध रच्चि वरीसियं।—सुजान०, पृ० १६।

वरीसणहारⓅ - वि० [सं० वर्षण, हिं० वरीसना + हार] बरसनेदेनेवाला। उ० – लंक वरीसणहार सुण, दसकंधर दुख सीह। —बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० ४६।

वरु—अव्य० [अ० बल्कि, हिं० बरुक, बरु] बल्कि। उ०—खेदि देहे वरु निकलि जाउ, मोरे नामे भिखि मागि खाउ।—विद्यापति, पृ० १३।

वरुक- संज्ञा पुं० [सं०] एक मोटा अन्न। एक कदन्न [को०]।

वरुट—संज्ञा पुं० [सं०] म्लेच्छों की एक जाति [को०]।

वरुड—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस, बेंत आदि से कुर्सी, चटाई आदि बनानेवाली एक जाति का नाम [को०]।

वरुण—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक वैदिक देवता जो जल का अधिपति, दस्युओं का नाशक और देवताओं का रक्षक कहा गया है। पुराणों में वरुण की गिनती दिक्पालों में है और वह पश्चिम दिशा का अधिपति माना गया है। वरुण का अस्त्र पाश है।

विशेष—बहुत प्राचीन वैदिक काल में वरुण प्रधान देवता थे; पर क्रमशः उनकी प्रधानता कम होती गई और इंद्र को प्रधानता प्राप्त हुई। वरुण अदिति के आठ पुत्रों में कहे गए हैं। निरुक्तकार इन्हें द्वादश आदित्यों में बतलाते हैं। ऋग्वेद में वरुण के अनेक मंत्र हैं, जिनमें से कुछ के संबंध में ऐतरेय ब्राह्मण में शुनःशेफ की प्रसिद्ध गाथा है। इसके अनुसार 'हरिश्चंद्र वैधस' नामक एक राजा ने पुत्रप्राप्ति के लिये वरुण की उपासना की। वरुण ने पुत्र दिया, पर यह वचन लेकर कि उसी पुत्र से तुम मेरा यज्ञ करना। पुत्र का नाम रोहित हुआ। जब वह कुछ बड़ा हुआ और उसे यह पता चला कि मुझे वरुण के यज्ञ में बलिपशु बनना पड़ेगा; तब वह जंगल में भाग गया। वहाँ उसे इंद्र घर लौटने को बराबर मना करते रहे। अंत में राजा ने अजीगर्त नामक एक ऋषि को सौ गौएं देकर उनके पुत्र शुनःशेफ को बलि के लिये मोल लिया। जब शुनःशेफ यूप में बाँधा गया, तब वह अपने छुटकारे के लिये प्रजापति, अग्नि, सविता आदि कई देवताओं की स्तुति करने लगा। अंत में वरुण की स्तुति करने से उसका उद्धार हुआ। ऋग्वेद में वरुण के कुछ मंत्र वे ही हैं, जिन्हें पढ़कर शुनःशेफ ने स्तुति की थी।

पुराणों में वरुण कश्यप के पुत्र कहे गए हैं। भागवत में लिखा है कि चर्षणी नाम्नी पत्नी से वरुण को भाद्र और वाल्मीकि नामक दो पुत्र हुए थे। वरुण अब तक जल के देवता माने जाते हैं और जलाशयोत्सर्ग में इनका पूजन होता है। साहित्य में ये करुण रस के अधिष्ठाता माने गए हैं।

पर्या०—प्रचेतस। पाशी। यादशांपति। अंपति। अप्पति। यादःपति। अपांपति। जम्बूक। मेघनाद। परंजय। वारिलोम। कुंडली।

२. बरना का पेड़। ३. जल। पानी। ४. समुद्र (को०)। ५. आकाश (को०)। ६. सूर्य। ७. एक ऋषि का नाम। ८. एक ग्रह का नाम जिसे अंगरेजी में 'नेपचून' कहते हैं। (आधुनिक)।

वरुणक—संज्ञा पुं० [सं०] बरना का वृक्ष।

वरुणकुमार—संज्ञा पुं० [सं०] अगस्त्य ऋषि। उ० – उन वरुणकुमार अगस्त्य जी की स्तुति करने का फल हम कहाँ तक कहें।—बृहत्०, पृ० ७६।

वरुणगृहीत वि० [सं०] जलोदर रोग से पीड़ित। जलोदर का रोगी [को०]।

वरुणग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] घोड़ों का एक रोग जो अचानक हो जाता है।

विशेष—इस रोग में घोड़े का तालू, जीभ, आँख और लिंगेंद्रिय आदि अंग काले रंग के हो जाते हैं। उसका शरीर भारी हो जाता है और पसीना छूटता है। यह रोग भयानक होता है और बहुत यत्न करने पर घोड़े के प्राण बचते हैं।

२. वरुण नाम का ग्रह। नेपचून।

वरुणघृत—संज्ञा पुं० [सं०] घृत में बनी हुई एक औषध जो अश्मरी (पथरी) रोग में दी जाती है।

विशेष—इसमें बरना नामक पेड़ की छाल को जल और घी में जलाकर क्वाथ बनाया जाता है।

वरुणदेव – संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वरुणदैवत' [को०]।

वरुणदैवत—संज्ञा पुं० [सं०] शतभिषा नक्षत्र।

वरुणपाश—संज्ञा पुं० [सं०] १. वरुण का अस्त्रपाश या फंदा। २. नाक नामक जलजंतु। नक्र।

वरुणप्रघास—संज्ञा पुं० [सं०] एक व्रत या कृत्य जो आषाढ़ या श्रावण की पूर्णिमा के दिन किया जाता है।

विशेष – इसमें लोग जौ का सत्तू खाकर रहते हैं। इस व्रत का फल यह कहा गया है कि व्रत करनेवाला जल में डूबता नहीं और उसे मगर, घड़ियाल आदि जलजंतु नहीं पकड़ते।

वरुणप्रघासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पति द्वारा पत्नी से उसके प्रेमियों के बारे में पूछताछ की रीति। उ०—वरुणप्रघासा उस रीति को कहते थे, जिसमें पति अपनी पत्नी से उसके प्रेमियों के बारे में पूछता था।—प्रा० भा० प०, पृ० ९०।

वरुणप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन नगर जो कुरुक्षेत्र के पश्चिम में था।

वरुणमंडल—संज्ञा पुं० [सं० वरुणमण्डल] नक्षत्रों का एक मंडल जिसमें रेवती, पूर्वाषाढ़ा, आर्द्रा, अश्लेषा, मूल, उत्तराभाद्रपद और शतभिषा हैं। उ० – रेवती आदि सात नक्षत्र वरुणमंडल के हैं।—बृहत्०, पृ० १४६।

वरुणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वरुणा'। उ०—वरुणा असी गंग के तीरा।—कबीर सा०, पृ० १५८१।

वरुणांगरुह—संज्ञा पुं० [सं० वरुणाङ्गरुह] वरुणकुमार। अगस्त्य मुनि का एक नाम [को०]।

वरुणात्मज—संज्ञा पुं० [सं०] जमदग्नि ऋषि [को०]।

वरुणात्मजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वारुणी । सुरा । मदिरा । शराब ।

विशेष—पुराणों में यह समुद्रमंथन से उत्पन्न कही गई है ।

वरुणादिगण—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ों और पौधों का एक वर्ग ।

विशेष—सुश्रुत में इस वर्ग के अंतर्गत बरुन, नील झिंटी, सहिंजन, जपती. मेढ़ासींगी, पूतिका, नाटकरंज, अग्निमंथ (अगेंथू), चीता, शतमूली, बेल, अजशृंगी, डाभ, बृहती और कंटकारी (भटकटैया) हैं । (सुश्रुत) ।

वरुणानी संज्ञा स्त्री० [सं०] वरुण की स्त्री ।

वरुणालय—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

वरुणावास—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र । [को०] ।

वरुणावि – संज्ञा स्त्री० [सं०] वरुण से आविर्भूत, लक्ष्मी [को०] ।

वरुणेश—संज्ञा पुं० [सं०] शतभिषा नक्षत्र । दे० 'वरुण दैवत' [को०] ।

वरुणोद—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

वरुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] उपरना । उत्तरीय [को०] ।

वरुल– वि० [सं०] १. संभक्त । वितरित । विभाजित । २. सर्वोत्तम । श्रेष्ठ । [को०] ।

वरूथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. तनुत्राण । बक्तर । २. ढाल । ३. लोहे की चद्दर या सीकड़ों का बना हुआ आवरण या झूल जो शत्रु के आघात से रथ को रक्षित करने के लिये उसके ऊपर डाली जाती थी । ४. सैन्य । सेना । फौज । ५. एक प्राचीन ग्राम (रामायण) । ६. दल । झुंड । समूह (को०) । ७. रक्षण । बचाव (को०) । ८. परिवार (को०) । ९. कोयल । कोकिल (को०) । १०. गृह । घर (को०) । ११. समय । काल (को०) ।

वरूथप—संज्ञा पुं० [सं०] सेनापति ।

वरूथवती—सज्ञा संज्ञा [सं०] सेना । फौज [को०] ।

वरूथाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] सेनापति ।

वरूथिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सेना । २. वैशाख कृष्ण एकादशी (को०) ।

वरूथी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वरूथिन्] [स्त्री० वरूथिनी] १. हाथी की काठी । २. रक्षक । प्रहरी । (को०) ३. रक्षास्थान या घेरा (को०) । ४. रथ (को०) ।

वरूथी^{2}—वि० १. रथारूढ । २. कवच या बकतर धारी । ३. सेना से घिरा हुआ या रक्षित । ४. रक्षक । बचानेवाला [को०] ।

वरूनी‡—संज्ञा स्त्री० [सं० वरण] बरनी । वरण । उ०—सो ब्राह्मन ने रुपैया ले कै वरूनी कराई । महादेव के नाम को जज्ञ कियो । बेहोत जतन किए ।—दो सौ बावन--भा० २, पृ० ४५ ।

वरेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वरेन्द्र] १. राजा । २. इंद्र । ३. बंगाल का एक भाग ।

वरेंद्री—संज्ञा स्त्री० [सं० वरेन्द्री] गौड़ देश [को०] ।

वरे—अव्य० [हिं०] परे । उधर ।

वरेण—संज्ञा पुं० [सं०] बर्रे । भिड़ [को०] ।

वरेणुक—संज्ञा पुं० [सं०] अनाज । अन्न [को०] ।

वरेण्य^{1}—वि० [सं०] १. प्रधान । मुख्य । २. वरणीय । पूजनीय । ३. जिसकी कामना की जाय (को०) ।

वरेण्य^{2}—संज्ञा पुं० १. भृगु के एक पुत्र का नाम । २. महादेव । ३. कुंकुम । केसर । ४. पितृगणों का एक वर्ग (को०) ।

वरेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०] ।

वरोट—संज्ञा पुं० [सं०] १. मरुवा । मरुवाक । २. मरुवा का पुष्प (को०) ।

वरोरु—वि० स्त्री० [सं०] १. श्रेष्ठ जंघोंवाली । २. सुंदरी ।

वरोरू—वि० स्त्री० [सं०] दे० 'वरोरु' ।

वरोल—संज्ञा पुं० [सं०] बर्रे । भिड़ । [को०] ।

वर्क—संज्ञा पुं० [अ०] कार्य । काम ।

वर्कट—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथी का बंधन जो लकड़ी का बना हुआ और काँटेदार होता है । २. काँटा । कील । ३. अगरी । अर्गल ।

वर्कण—संज्ञा स्त्री० [सं०] जवान बकरी । पठिया ।

वर्कर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. जवान पशु । २. बकरा । ३. भेड़ का बच्चा । मेमना । ४. आमोद प्रमोद । परिहास ।

यौ०—वर्कर कर्कर = मेढ़ा, बकरा आदि बाँधने का चमड़े का फीता या रस्सी ।

वर्कर^{2}—संज्ञा पुं० [अं०] कार्यकर्ता । काम करनेवाला ।

वर्करा– संज्ञा स्त्री० [सं०] जवान बकरी । पठिया [को०] ।

वर्कराट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कटाक्ष । २. मध्याह्न के सूर्य की प्रभा । ३. स्त्री के कुच के किनारे लगा हुआ नखक्षत्र ।

वर्किंग कमिटी—संज्ञा स्त्री० [अं०] कार्यकारिणी समिति । जैसे—कांग्रेस वर्किंग कमिटी ।

वर्कुट—संज्ञा पुं० [सं०] झिल्ली । कील [को०] ।

वर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक ही प्रकार की अनेक वस्तुओं का समूह । जाति । कोटि । गण । श्रेणी । २. आकार प्रकार में कुछ भिन्न, पर कोई एक सामान्य धर्म रखनेवाले पदार्थों का समूह । जैसे, अंतरिक्ष वर्ग शूद्र वर्ग, ब्राह्मण वर्ग । ३. शब्दशास्त्र में एक स्थान से उच्चरित होनेवाला स्पर्श व्यंजन वर्णों का समूह । जैसे,—कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, इत्यादि ।

विशेष—ज्योतिष में स्वर अंतस्थ और ऊष्म वर्ण भी (जैसे,—अ, य, श,) क्रमशः अवर्ग, यवर्ग और शवर्ग के अंतर्गत रखे गए हैं । इस प्रकार ज्योतिष के व्यवहार के लिये सब वर्णों के विभाग 'वर्ग' के अंतर्गत किए गए हैं और अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, तथा शवर्ग के स्वामी क्रमशः सूर्य, मंगल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि और चंद्रमा कहे गए हैं ।

४. ग्रंथ का विभाग । परिच्छेद । प्रकरण । अध्याय । ५. दो समान अंकों या राशियों को घात या गुणनफल । जैसे,—३ का ९, ५ का २५ (३ × ३ = ९ । ५ × ५ = २५) । ६. वह चौखूँटा क्षेत्र जिसकी लंबाई चौड़ाई बराबर और चारों कोण समकोण हों । (रेखागणित) । ७. शक्ति । सामर्थ्य (को०) । ८. अर्थ, धर्म तथा काम का त्रिवर्ग (को०) ।

वर्गचर—संज्ञा पुं० [सं०] पढ़ना या पहिना मछली । पाठीन ।

वर्गघन—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ग का घन ।

वर्गण—संज्ञा पुं० [सं०] गुणन । घात ।

वर्गणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गुणन । घात । २. संचयन । एकत्रीकरण । राशि । ३. श्रेणी । विभाग । विभाजन [को०] ।

वर्गपद—संज्ञा पुं० [सं०] वह अंक जिसके घात से कोई वर्गांक बना हो । वर्गमूल ।

वर्गफल—संज्ञा पुं० [सं०] वह गुणनफल जो दो समान राशियों के घात से प्राप्त हो । वह अंक जो किसी अक को उसी अंक के साथ गुणा करने से आवे । जैसे,—५ का वर्गफल २५ होता है ।

वर्गभेद—संज्ञा पुं० [सं०] दो या अधिक वर्गों वा श्रेणियों का पारस्परिक अंतर । उ०—इसलिये वर्गभेद और द्वेष दिन पर दिन बढ़ता ही गया ।—भा० इ० रू०, पृ० ६७ ।

वर्गमूल—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वर्गांक का वह अंक जिसे यदि उसी से गुणन करें, तो गुणन वही वर्गांक हो । जैसे,—४ वर्गांक का वर्गमूल २ और २५ का ५ होगा ।

वर्गवर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ग का वर्ग । जैसे,—३ का वर्ग ९ और उसका वर्ग ८१ (९ × ९) हुआ [को०] ।

वर्गलाना—क्रि० स० [फ़ा० 'वरग़ला नीदन' से] १. कोई काम करने के लिये उभारना । कुछ करने के लिये उत्तेजित करना । उकसाना । २. बहकाना । फुसलाना ।

वर्गशः—क्रि० वि० [सं० वर्गशस्] वर्गों के अनुसार । वर्गों के क्रम से [को०] ।

वर्गस्थ—वि० [सं०] वर्ग के साथ रहनेवाला । पक्षपाती । तरफदार [को०] ।

वर्गांक—संज्ञा पुं० [सं० वर्ग्गांक] वह अंक जो किसी अंक का वर्ग हो [को०] ।

वर्गांत्य—संज्ञा पुं० [सं० वर्गान्त्य] व्याकरण में वर्ग का अंतिम अक्षर । नासिक्य वर्ण ।

वर्गाष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] व्यंजनों के आठ वर्ग । जैसे, कवर्ग, चवर्ग आदि [को०] ।

वर्गी^{१}—वि० [सं० वर्गिन्] किसी वर्ग या पक्ष से संबंधित ।

वर्गी^{२}—संज्ञा पुं० वर्ग का नेता [को०] ।

वर्गीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] वस्तुओं को विभिन्न वर्गों में बाँटना [को०] ।

वर्गीकृत—वि० [सं०] १. वर्गों में बँटा हुआ । २. गणित में जिसका वर्ग किया गया हो [को०] ।

वर्गीण—वि० [सं०] वर्गी । वर्ग से संबद्ध [को०] ।

वर्गीय^{१}—वि० [सं०] किसी वर्ग से संबद्ध [को०] ।

वर्गीय^{२}—सहपाठी [को०] ।

वर्गोत्तम—संज्ञा पुं० [सं०] १. फलित ज्योतिष में राशियों के वे श्रेष्ठ अंश जिनमें स्थित ग्रह शुभ होते हैं ।

विशेष—चर राशि (मेष, कर्कट, तुला, मकर) का प्रथम अंश, स्थिर राशि (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ) का पंचम अंश और द्व्यात्मक राशि (मिथुन, कन्या, धनु, मीन) का नवम अंश वर्गोत्तम कहा जाता है । इसके अतिरिक्त राशियों का नवांश भी वर्गोत्तम कहा जाता है ।

२. नासिक्य वा अनुनासिक वर्ण । दे० 'वर्गांत्य' (को०) ।

वर्ग्य^{१}—वि० [सं०] एक ही वर्ग, जाति या समूह से संबद्ध । (व्यक्ति, पदार्थ आदि) ।

वर्ग्य^{२}—संज्ञा पुं० १ सहयोगी । २. वर्गीय । सहाध्यायी [को०] ।

वर्चःस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] पाखाना । (परा० स्मृति) ।

वर्चटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वेश्या । पातुर । २. एक प्रकार का धान [को०] ।

वर्चस्—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्चस्वान्, वर्चस्वी] १. रूप । २. तेज । कांति । दीप्ति । ३. अन्न । ४. विष्ठा । ५. शक्ति । शौर्य (को०) । ६. शुक्र । वीर्य (को०) ।

वर्चस्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. दीप्ति । तेज । २. विष्ठा । ३. शौर्य । शक्ति (को०) ।

वर्चस्य—वि० [सं०] १. तेजवर्धक । २. रेचक । दस्तावर (को०) ।

वर्चस्व—संज्ञा पुं० [सं० वर्चस्] १. शक्ति । २. प्राधान्य । उ०—मेरी प्रार्थना यह है कि वे महानुभाव जीवन को सर्वांगरूप में समझने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं जब वे काव्य या कला में घोर पदार्थमूलक उपयोगितावाद का ही वर्चस्व चाहने लगते हैं ।—कुंकुम, पृ० ७ ।

वर्चस्वान्—वि० [सं० वर्चस्वत्] [स्त्री० वर्चस्विणी] १. वर्चस् युक्त । शक्तिमान् । २. तेजवान् । दीप्तियुक्त । समुज्वल ।

वर्चस्वी^{१}—वि० [सं० वर्चस्विन्] [स्त्री० वर्चस्विणी] १. तेजस्वी । दीप्तियुक्त । २. शौर्यशाली । शक्तिमान ।

वर्चस्वी^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

वर्चा—संज्ञा पुं० [सं० वर्चस्] बुध । चंद्रमा का पुत्र [को०] ।

वर्चोग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] कब्ज । कोष्ठबद्धता [को०] ।

वर्चोभेद—संज्ञा पुं० [सं०] अतीसार [को०] ।

वर्चोमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] गुदा [को०] ।

वर्चोविनिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्चोग्रह' [को०] ।

वर्ज^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] परित्याग । छोड़ देना [को०] ।

वर्ज^{२}—वि० छोड़ा हुआ । परित्यक्त [को०] ।

वर्जक—वि० [सं०] १. वर्जन करनेवाला । २. त्यागनेवाला [को०] ।

वर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्जनीय, वर्ज्य, वर्जित] १. त्याग । छोड़ना । २. ग्रहण या आचरण का निषेध । मनाही । मुमानियत । ३. हिंसा । मारण । ४. अपवाद (को०) ।

वर्जना^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्जन । निषेध । मनाही । उ०—प्रभु की वह सौम्य वर्जना ।—साकेत, पृ० ३५७ ।

वर्जना^{२}—क्रि० स० [सं० वर्जन] १. बरजना । मना करना । निषेध करना । २. त्यागना । छोड़ना ।

वर्जनीय—वि० [सं०] १. छोड़ने योग्य । न ग्रहण करने योग्य । त्याज्य । २. निषेध के योग्य । निषिद्ध । मना ।

वर्जयिता—वि० [सं० वर्जयितृ] १. वर्जन करनेवाला । २. त्यागनेवाला । छोड़नेवाला ।

वर्जित—वि० [सं०] १. त्यागा हुआ । छोड़ा हुआ । त्यक्त । २. जो ग्रहण के अयोग्य ठहराया गया हो । अग्राह्य । निषिद्ध । जैसे,—कलि में नियोग वर्जित है । ३. रहित । जैसे, गुणवर्जित ।

वर्जिश—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० वर्ज़िश] दे० 'वरजिश' ।

वर्जी—वि० [सं० वर्जिन्] दे० 'वर्जक' (को०] ।

वर्ज्य^{१}—वि० [सं०] १. छोड़ने योग्य । त्याज्य । वर्जनीय । २. जिसका निषेध किया गया हो । जो मना हो । ३. अपवाद योग्य (को०) ।

वर्ज्य^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा की एक विशेष स्थिति जिसमें नया काम निषिद्ध होता है [को०] ।

वर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. पदार्थों के लाल, पीले आदि भेदों का नाम । रंग । विशेष दे० 'रंग' । २. जनसमुदाय के चार विभाग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जो प्राचीन आर्यों ने किए थे । जाति ।

विशेष—इस शब्द का प्राचीन प्रयोग ऋग्वेद में है । वहाँ यह जनता के दो वर्गों आर्यों और दस्युओं को सूचित करने के लिये हुआ है । यह विभाग पहले रंग के आधार पर था; क्योंकि आर्य गोरे थे और दस्यु या अनार्य काले । पर पीछे यह विभाग व्यवसाय के आधार पर हुआ और चार वर्ण माने गए । पुरुषसूक्त में चारों वर्णों की उत्पत्ति का आलंकारिक रूप से इस प्रकार वर्णन है कि ब्राह्मण ईश्वर के मुख से, क्षत्रिय बाहु से, वैश्य जंघे से और शूद्र पैर से उत्पन्न हुए । इस व्यवस्था के अनुसार 'वर्ण' शब्द की व्युत्पत्ति 'वृ' धातु से बताई जाती है, जिसका अर्थ है 'चुनना' । अतः 'वर्ण' शब्द का अर्थ हुआ व्यवसाय । स्मृतियों में भिन्न भिन्न वर्णों के धर्म निरूपित हैं । जैसे, ब्राह्मण का धर्म—अध्ययन, अध्यापन, यजन, याजन, दान और प्रतिग्रह; क्षत्रिय का धर्म—प्रजारक्षा, दान, यज्ञानुष्ठान और अध्ययन; वैश्य का धर्म—पशुपालन, कृषि, दान, यज्ञ और अध्ययन; शूद्र का धर्म—तीनों वर्णों की सेवा । व्यवसायभेद और सब देशों में भी चला आ रहा है, पर भारतीय आर्यों की लोकव्यवस्था में वह व्यवसायों के विचार से जातिगत या जन्मना माना गया है । इसी 'वर्ण' और 'आश्रम' की व्यवस्था को भारतीय आर्य अपना विशेष लक्षण मानते थे और अपने धर्म को 'वर्णाश्रम धर्म कहते थे ।

३. भेद । प्रकार । किस्म । ४. आकारादि शब्दों के चिह्न या संकेत अक्षर । ५. गुण । ६. यश । कीर्ति । ७. स्तुति । बड़ाई । ८. स्वर्ण । सोना । ९. मृदग का एक ताल जो चार प्रकार का होता है—पाट, विधि पाट, कूट पाट और खंड पाट । १०. रूप । ११. अंगराग । विलेपन । १२. कुंकुम । केसर । १३. चित्र । तसवीर । १४. रग । रोगन (को०) । १५. रंग ढंग । आकृति । बाह्य रूप (को०) । १६. पोशाक । वेशभूषा (को०) । १७. एक प्रकार का ढीला ढाला अंगरखा । लबादा (को०) । १८. ढक्कन । आवरण (को०) । १९. हाथी की झूल (को०) । २०. उपवास । व्रत (को०) । २१. अज्ञात राशि (को०) । २२. एक की संख्या (को०) । २३. एक माप (को०) । २४. एक गंधद्रव्य (को० ।

वर्णकंट—संज्ञा पुं० [सं० वर्णकण्ट] तूतिया ।

वर्णक—संज्ञा पुं० [सं०] १. हरताल । २. अनुलेपन । उबटन । ३. ३. चंदन । ४. पिसी हुई हल्दी आदि जो देवताओं को चढ़ाई जाती है । ५. मंडल । ६. चारण । ७. रंग । ८. अभिनेताओं के परिधान या परिच्छद । ९. चित्रकार । १०. विभाग । अध्याय । परिच्छेद (को०) । ११. सिंदूर (को०) । १२. चित्रलेखन (को०) । १३. ढाँचा । रूपरेखा (को०) । १४. अक्षर । वर्ण । १५. वक्ता । व्याख्याता (को०) । १६. कलम । लेखनी । उ०—ललितविस्तर के अध्याय १० (अंग्रेजी अनुवाद, पृ० १८१–१८५) में बुद्ध का लिपिशाला में जाकर अध्यापक विश्वामित्र से चंदन की पाटी पर वर्णक (कलम) से लिखना सीखने का वृत्तांत मिलता है ।—भा० प्रा० लि०, पृ० ६ ।

वर्णका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नृत्यादि के समय अभिनेताओं का परिच्छद या परिधान । २. रंग । रोगन । ३. उच्च कोटि का सोना । ४. मेंदुर । ईंगुर [को०] ।

वर्णकवि—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर के एक पुत्र का नाम [को०] ।

वर्णकूपिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दावात । मसिपात्र (को०] ।

वर्णक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. अक्षरानुक्रम । २. जाति या रंगों का क्रम [को०] ।

वर्णखंडमेरु--संज्ञा पं० [सं० वर्णखण्डमेरु] पिंगल या छंदशास्त्र में वह क्रिया जिससे बिना मेरु बनाए मेरु का काम निकल जाता है । अर्थात् यह ज्ञात हो जाता है कि इतने वर्णों के कितने वृत्त हो सकते हैं और प्रत्येक वृत्त में कितने गुरु और कितने लघु होंगे ।

विशेष—जितने वर्णों का खंडमेरु बनाना हो, उतने से एक कोष्ठ अधिक बाईं से दाहिनी ओर को बनावे । फिर उन्हीं कोष्ठों के नीचे पहला स्थान छोड़कर दूसरे स्थान से आरंभ करके ऊपर से एक कोष्ठ कम बनावे । इसी प्रकार उसी स्थान से नीचे एक कोष्ठ कम बराबर बनाता जाता जाय, जब तक एक कोष्ठ न आ जाय । इन कोष्ठों को इस प्रकार भरे, कोष्ठों की पहली पंक्ति में बाईं ओर से सब में एक एक का अंक लिखे । दूसरी पंक्ति के पहले कोष्ठ से आरंभ करके क्रमशः २, ३, ४, ५, ६, आदि अंत तक लिख जाय । इसके अनंतर कोष्ठों की प्रथम पंक्ति के तीसरे अंक से उत्तरोत्तर नीचे की ओर वक्रगति से अंकों को जोड़कर अगले खानों में रखता जाय । अंतिम कोष्ठों में जो अंक होंगे, वे लघु गुरु के हिसाब से वृत्तों के भेद सूचित करेंगे । उदाहरणार्थ आठ वर्णों का खंडमेरु बनाना हो, तो इस प्रकार करे—

वर्णखंडमेरु की आकृति—

१	१	१	१	१	१	१	१	१
२	३	४	५	६	७	८		
३	६	१०	१५	२१	२८			
४	१०	२०	३५	५६				
५	१५	३५	७०					
६	२१	५६						
७	२८							
८								

वर्ण वृत्तों में एक भेद ऐसा होगा जिसमें सब गुरु होंगे; और एक ऐसा होगा, जिसमें सब लघु होंगे अतः सर्वगुरु से आरंभ करके एक एक गुरु घटाते जायँ, तो भेदों की संख्या इस प्रकार होगी। १ भेद ऐसा होगा, जिसमें सब (८) गुरु होंगे। ८ भेद ऐसे ऐसे होंगे जिनमें १ लघु और ७ गुरु होंगे। ८ भेद ऐसे होंगे जिनमें २ लघु और ६ गुरु होंगे। ५६ भेद ऐसे होंगे, जिनमें ३ लघु और ५ गुरु होंगे। ७० भेद ऐसे होंगे, जिनमें ४ लघु और ४ गुरु होंगे। ५६ भेद ऐसे होंगे, जिनमें ५ लघु और ३ गुरु होंगे। २८ भेद ऐसे होंगे, जिनमें ६ लघु और २ गुरु होंगे। ८ भेद ऐसे होंगे जिनमें ७ लघु और १ गुरु होगा। एक भेद ऐसा होगा, जिसमें सब लघु होंगे।

वर्णगत—वि० [सं०] १. रंगीन। रंग या वर्ण युक्त। २. बीज गणित संबंधी [को०]।

वर्णगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] राजा का पुत्र। राजकुमार। राजा [को०]।

वर्णग्रथणा—संज्ञा पुं० [सं०] पद्यरचना की एक पद्धति [को०]।

वर्णचारक—संज्ञा पुं० [सं०] चित्रकार [को०]।

वर्णचित्र—संज्ञा पुं० [सं०] रंगों के द्वारा बना चित्र। रंगीन चित्र। उ०—इस काल में भी वर्णचित्र और रेखाचित्र भी बने जरूर होंगे।—भा० इ० रू०, पृ० ३७।

वर्णज्येष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] सब वर्णों में बड़ा, ब्राह्मण।

वर्णतर्णक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वर्णतर्णिका] चटाई या बिछाने के काम में प्रयुक्त ऊनी वस्त्र। ऊन की दरी [को०]।

वर्णतूलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह कूँची जिससे चित्रकार चित्र बनाते हैं। कलम।

वर्णतूलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वर्णतूलि'।

वर्णतूली—संज्ञा स्त्री० [सं०] चित्र बनाने की कूँची। दे० 'वर्णतूलि'।

वर्णद¹—संज्ञा पुं० [सं०] कालीयक। एक प्रकार की पीली लकड़ी [को०]।

वर्णद²—वि० रंग देनेवाला। रँगनेवाला [को०]।

वर्णदात्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] हरिद्रा। हल्दी [को०]।

वर्णदूत—संज्ञा पुं० [सं०] लिपि। लेख।

वर्णदूषक—संज्ञा पुं० [सं०] अपने संसर्ग से दूसरे को जातिभ्रष्ट करनेवाला। पंक्तिदूषक। पतित मनुष्य।

वर्णधर्म—संज्ञा पुं० [सं०] वर्णों या जातियों का पृथक् पृथक् धर्म। जातिधर्म [को०]।

वर्णधर्मी—वि० [सं० वर्णधर्मिन्] वर्णव्यवस्था को माननेवाला। वर्णों के धर्म में विश्वास रखनेवाला। उ०—यह मर्यादा उन आर्य, अनार्य, अनुलोम, संकर सभी पर लागू हो, जो वर्णधर्मी हों।—वैशाली०, पृ० ३४०।

वर्णधातु—संज्ञा पुं० [सं०] गेरू, ईंगुर आदि रंग के काम में आनेवाली धातु।

वर्णन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्णनीय, वर्ण्य, वर्णित] १. चित्रण। रँगना। २. किसी बात को सविस्तार कहना। कथन। बयान। उ०—सो चौबीस रूप निज कहियत वर्णन करत विचार।—सूर (शब्द०)। ३. स्तवन। प्रशंसा। गुणकथन। तारीफ। ४. लिखना। लेखन (को०)।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

वर्णनष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] पिंगल या छंदःशास्त्र में एक क्रिया जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि प्रस्तार के अनुसार इतने वर्णों के वृत्तों के अमुक संख्यक भेद का रूप लघु गुरु के हिसाब से कैसा होगा।

विशेष—जितने वर्ण के प्रस्तार के किसी भेद का रूप निकालना हो, उतने लघु के चिह्न लिखकर उनके सिरे पर क्रमशः वर्णोद्दिष्ट अंक (१ से आरभ करके क्रमशः दूने दूने अंक) लिखे। फिर अंतिम अंक का दूना करके उसमें से पूछी हुई संख्या घटावे। जो अक शेष रहे, वह जिन जिन उद्दिष्टों के योग से बना हो, उनके नीचे की लघु मात्राओं के चिह्नों को गुरु कर दे। जो रूप सिद्ध होगा, वही उत्तर होगा। जैसे,—किसी ने पूछा कि चार वर्णों के प्रस्तार में तेरहवें भेद का रूप क्या होगा? इसके लिये हमने यह क्रिया की—

१	२	४	८
।	।	।	।

अंतिम अंक ८ का दूना १६ हुआ। उसमें से १३ घटाया, तो ३ रहा। अब हमने देखा कि ३ संख्या ऊपर दिए हुए उद्दिष्टांकों में से १ और २ जोड़ने से आ जाती है। अतः उनके नीचे गुरु बनाया तो यह रूप SS।। सिद्ध हुआ।

वर्णना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गुणकथन। २. चित्रकारी। २. व्याख्या। किसी विषय का ब्यौरेवार कथन। ४. लेखन (को०)।

वर्णनातीत—वि० [सं०] जिसका वर्णन न हो सके। अवर्णनीय [को०]।

वर्णनात्मक—वि० [सं०] वर्णनप्रधान। जिसमें वर्णन की प्रमुखता हो।

वर्णन संबंधी। उ०—ऐसी अलंकृत भाषा में जो भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न रीतियों से चमत्कृत हो—वर्णनात्मक रीति से नहीं वरन् कार्यात्मक रीति से।– पा० सा० सि०, पृ० ३।

वर्णनाश—संज्ञा पुं० [सं०] निरुक्तकार के अनुसार शब्द में किसी वर्ण का नष्ट हो जाना। जैसे,—'पृषोदर' शब्द में 'पृषतोदर' शब्द के 'त' का नाश पाया जाता है।

वर्णनीय—वि० [सं०] १. चित्रण करने योग्य। २. वर्णन करने योग्य [को०]।

वर्णपताका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिंगल या छंदःशास्त्र में एक क्रिया, जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि वर्णवृत्तों के भेदों में से कौन सा (पहला, दूसरा या तीसरा आदि) ऐसा है, जिसमें इतने लघु और इतने गुरु होंगे।

वर्णपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. लघु तल्प। २. रंग रखने का पात्र।

वर्णपरिचय—संज्ञा पुं० [सं०] १. अक्षरों का बोध करानेवाली पुस्तक। २. संगीत का ज्ञान [को०]।

वर्णपरिध्वंस—संज्ञा पुं० [सं०] जातिच्युति। जातिभ्रंश [को०]।

वर्णपात—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णनाश'।

वर्णपाताल—संज्ञा पुं० [सं०] पिंगल या छंदःशास्त्र में एक क्रिया जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि अमुक संख्या के वर्णों के कुल कितने वृत्त हो सकते हैं और उन वृत्तों में से कितने लघ्वादि और कितने लघ्वंत, कितने गुर्वादि और कितने गुर्वंत तथा कितने सर्वगुरु और कितने सर्वलघु होंगे।

विशेष—जितने वर्णों का पाताल बनाना हो, उतनी ही खड़ी रेखाएँ और उन्हें काटती हुई पाँच आड़ी रेखाएँ खींचे। इस प्रकार कोष्ठ बन जाने पर कोष्ठों की पहली पंक्ति में क्रम से १, २, ३, ४ आदि अंक भरे। दूसरी पंक्ति में २, ४, ८, १६ आदि वर्णसूची के अंक लिखे। तीसरी पंक्ति में सूची के अंकों के आधे लिखे; और चौथी पंक्ति में पहली और तीसरी पंक्ति के अंकों का गुणनफल लिखे। उदाहरण के लिये ९ वर्णों का पाताल इस प्रकार होगा।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वर्णसंख्या।
२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	सर्वसंख्या।
१	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	लघ्वादि, लघ्वंत, गुर्वादि, गुर्वंत।
१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	सर्वगुरु, सर्वलघु।

इस पाताल से विदित हुआ कि ९ वर्णों के ५१२ वृत्त हो सकते हैं। इन वृत्तों में २५६ ऐसे वृत्त होंगे, जिनके आदि में लघु होंगे; २५६ ऐसे होंगे, जिनके अंत में लघु होंगे; फिर २५६ ऐसे होंगे जिनके आदि में गुरु होंगे; और २५६ ऐसे होंगे, जिनके अंत में गुरु होंगे। सब वृत्तों में कुल मिलाकर २३०४ गुरु और २३०४ लघु होंगे।

वर्णपात्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णपत्र' [को०]।

वर्णपुर—संज्ञा पुं० [सं०] शुद्ध राग का एक भेद।

वर्णपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. पारिजात। २. राजतरुणी नाम का फूल का वृक्ष [को०]।

वर्णपुष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णपुष्प [को०]।

वर्णप्रकर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. रंग की विशिष्टता। २. जाति की उत्तमता [को०]।

वर्णप्रणाली—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्ण+प्रणाली] वर्णों या जातियों में एक क्रम के स्थापन की पद्धति। वर्णव्यवस्था। उ०—यज्ञ-विधियों के विस्तार के साथ ही साथ उस वर्णप्रणाली का भी विकास और संगठन होने लगा जिसमें ब्राह्मणों को सामाजिक एवं धार्मिक श्रेष्ठता प्राप्त हुई।—संत० दरिया (भू०), पृ० ५३।

वर्णप्रत्यय—संज्ञा पुं० [सं०] छंदःशास्त्र या पिंगल मे वे क्रियाएँ जिनके द्वारा यह जाना जाता है कि अमुक संख्या के वर्णवृत्तों के कितने भेद हो सकते हैं और उनके स्वरूप क्या होंगे, इत्यादि।

विशेष—जिस प्रकार मात्रिक छंदों में ९ प्रत्यय होते हैं, उसी प्रकार वर्णवृत्तों में भी ९ प्रत्यय होते हैं—प्रस्तार, सूची, पाताल, उद्दिष्ट, नष्ट, मेरु, खंडमेरु, पताका और मर्कटी।

वर्णप्रसादन—संज्ञा पुं० [सं०] अगुरु [को०]।

वर्णप्रस्तार—संज्ञा पुं० [सं०] पिंगल या छंदःशास्त्र में वह क्रिया जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि इतने वर्णों के वृत्तों के इतने भेद हो सकते हैं और उन भेदों के स्वरूप इस प्रकार होंगे।

विशेष—जितने वर्णों का प्रस्तार बढ़ाना हो, उतने वर्णों का पहला भेद (सर्वगुरु) लिखे। फिर गुरु के नीचे लघु लिखकर शेष ज्यों का त्यों लिखे। फिर सबसे बाईं ओर के गुरु के नीचे लघु लिखकर आगे ज्यों का त्यों लिखे; और बाईं ओर जितनी न्यूनता रहे, उतनी गुरु से भरे। यह क्रिया अंत तक अर्थात् सर्वलघु भेद के आने तक करे। उदाहरण के लिये तीन वर्णों का प्रस्तार इस प्रकार होगा—

रूप	भेद
ऽऽऽ	पहला
।ऽऽ	दूसरा
ऽ।ऽ	तीसरा
।।ऽ	चौथा
ऽऽ।	पाँचवाँ
।ऽ।	छठा
ऽ।।	सातवाँ
।।।	आठवाँ

इस प्रस्तार से प्रकट हुआ कि तीन वर्णों के आठ ही भेद हो सकते हैं; अर्थात् आठ ही प्रकार के वृत्त बन सकते हैं, अधिक नहीं।

वर्णबुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] अक्षर या ध्वनिजन्य संबद्ध आशय अथवा बोध [को०]।

वर्णभिन्न—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत का एक ताल [को०]।

वर्णभीरु—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णभिन्न' [को०]।

वर्णभेद—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर के वर्ण या जाति के कारण होनेवाला भेदभाव [को०]।

वर्णभेदिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मोटा अन्न जिसमें बाजरा, कोदो, मड़ुवा, जोन्हरी आदि हैं [को०]।

वर्णमंचिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्णमञ्चिका] संगीत का एक ताल [को०]।

वर्णमर्कटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिंगल या छंदःशास्त्र में एक क्रिया जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि इतने वर्णों के इतने वृत्त हो सकते हैं, जिनमें इतने गुर्वादि, गुर्वंत और इतने लघ्वादि लघ्वंत होंगे; तथा सब वृत्तों में मिलाकर इतने वर्ण, इतने गुरु, लघु, इतनी कलाएँ और इतने पिंड (=दो कल) होंगे।

विशेष—जितने वर्ण हों, उतने खाने बाएँ से दाहिने बनावे। फिर उन खानों के नीचे उतने ही खानों की छह पंक्तियाँ और बनावे। कोष्ठों की पहली पंक्ति में १, २, ३, आदि अंक लिखे; दूसरी में वर्णसूची के अंक (२, ४, ८, १६ आदि) लिखे; तीसरी पक्ति में दूसरी पक्ति के अंकों के आधे अंक भरे; चौथी में पहली और दूसरी पंक्ति के अंकों के गुणनफल लिखे; पाँचवीं में चौथी पंक्ति के आधे अंक भरे; छठी पंक्ति में चौथी और पाँचवीं पंक्ति के अंकों का योग लिखे; और सातवीं पंक्ति में छठी पंक्ति के आधे अंक भरे। उदाहरण के लिये छह वर्णों की मर्कटी इस प्रकार होगी।

१	२	३	४	५	६	वर्णसंख्या
२	४	८	१६	३२	६४	वृत्तों की संख्या
१	२	४	८	१६	३२	गुर्वादि, गुर्वंत, लघ्वादि, लघ्वंत
२	८	२४	६४	१६०	३८४	सर्व वर्ण
१	४	१२	३२	८०	१९२	गुरु लघु
३	१२	३६	९६	२४०	५७६	सर्व कला
१½	६	१८	४८	१२०	२८८	पिंड

इस मर्कटी से प्रकट हुआ कि ६ वर्णों के ६४ वृत्त हो सकते हैं। ३२ वृत्त ऐसे होंगे जिनके आदि में गुरु, ३२ ऐसे जिनके अंत में गुरु, ३२ ऐसे जिनके आदि में लघु और ३२ ही ऐसे जिनके अंत में लघु होंगे। सब वृत्तों को मिलाकर ३८४ वर्ण होंगे; इत्यादि, इत्यादि।

वर्णमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्णमातृ] कलम। लेखनी [को०]।

वर्णमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सरस्वती। विद्या देवी। २. वर्ण माला [को०]।

वर्णमाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] अक्षरों के रूपों की यथाश्रेणी लिखित सूची। किसी भाषा में आनेवाले सब हरफ जो ठीक सिलसिले से रखे हों। जैसे देवनागरी में अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ।

क ख ग घ ङ।
च छ ज झ ञ।
ट ठ ड ढ ण।
त थ द ध न।
प फ व भ म।
य र ल व।
श ष स ह।
अं अः।

वर्णपति—संज्ञा स्त्री० [सं०] सगीत में एक एक ताल का नाम [को०]।

वर्णरेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] खड़िया मिट्टी [को०]।

वर्णलेखा, वर्णलेखिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] खड़िया [को०]।

वर्णवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] हल्दी।

वर्णवर्ति, वर्णवर्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चित्र बनाने की कूँची या कलम। २. पेंसिल [को०]।

वर्णवादी—संज्ञा पुं० [सं० वर्णवादिन्] स्तुतिपाठक। बंदीजन चारण। वैतालिक [को०]।

वर्णविकार—संज्ञा पुं० [सं०] निरुक्त के अनुसार शब्दों में एक वर्ण का बिगड़कर दूसरा वर्ण हो जाना। जैसे 'हल्दी' शब्द में 'हरिद्रा' के 'र' का 'ल' हो गया है। 'द्वादश' के 'द' का 'बारह' शब्द में 'र' हो गया है।

वर्णविक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] जातिगत विद्वेष। किसी जाति के प्रति दुर्भावना [को०]।

वर्णविचार—संज्ञा पुं० [सं०] आधुनिक व्याकरण का वह अंश जिसमें वर्णों के आकार, उच्चारण और संधि आदि के नियमों का वर्णन हो।

विशेष—प्राचीन वेदांग में यह विषय 'शिक्षा' कहलाता था और व्याकरण से बिल्कुल स्वतंत्र माना जाता था।

वर्णविन्यास—संज्ञा पुं० [सं०] १. रूपयोजना। चित्रण। रूपांकन। २. अक्षरों की योजना। वर्णों का चुनाव। उ०—जिस प्रकार की रूपरेखा या वर्णविन्यास से किसी की तदाकार परिणति होती है, उसी प्रकार की रूपरेखा या वर्णविन्यास उसके लिये सुंदर है।—रस०, पृ० ३०। ३. वर्ण नवृत्ति। हिज्जे।

वर्णविपर्यय—संज्ञा पुं० [सं०] निरुक्त के अनुसार शब्दों में वर्णों का उलटफेर हो जाना। जैसे, 'हिंस' शब्द से बने 'सिंह' शब्द में हुआ है।

वर्णविभाग—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णव्यवस्था'।

वर्णविलासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] हल्दी।

वर्णविलोडक—संज्ञा पुं० [सं०] १. काव्य का चोर। काव्यार्थचोर। रचना का चोर। २. सेंध खोलकर चोरी करनेवाला। सेंधिया चोर [को०]।

वर्णविवृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्णविन्यास। हिज्जे [को०]।

वर्णवृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] वह पद्य जिसके चरणों में वर्णों की संख्या और लघु गुरु के क्रमों में समानता हो।

वर्णव्यतिक्रांता—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्णव्यतिक्रान्ता] वह औरत जो अपने से नीची जातिवाले के साथ संबंध करे [को०]।

वर्णव्यवस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्णों के आधार पर समाज की योजना एवं संघटन। विशेष दे० 'वर्ण'। उ०—ऋग्वेद के समय तक वर्णव्यवस्था कायम नहीं हुई थी।—हिंदू० सभ्यता पृ० ३३।

वर्णवैचित्र्य—संज्ञा पुं० [सं० वर्ण + वैचित्र्य] रंगों की विचित्रता। विविध रंगों का अनूठापन। वर्णों के संयोजन का अनूठापन। उ०—बाहर नयनाभिराम रूपरेखा, विकसित वर्णवैचित्र्य, चमक दमक इत्यादि हैं तो भीतर सौंदर्य की मादक अनुभूति, प्रेमोल्लास, स्वप्न, दर्शनपिपासा, इत्यादि।—रस०, पृ० ७४।

वर्णश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण।

वर्णसंकर—संज्ञा पुं० [सं० वर्णसङ्कर] १. वह व्यक्ति या जाति जो दो भिन्न भिन्न जातियों के स्त्री पुरुष के संयोग से उत्पन्न हो।

विशेष—स्मृतियों में ऐसी बहुत सी जातियाँ गिनाई गई हैं। इस विषय में एक दूसरे के मत भी नहीं मिलते। वर्णसंकर दो प्रकार के कहे गए हैं, अनुलोमज और दूसरा प्रतिलोमज। अनुलोमज का पिता माता से श्रेष्ठ वर्ण का होता है और प्रतिलोमज की माता पिता से श्रेष्ठ वर्ण की होती है। प्रतिलोमज संकर प्राचीन काल में निषिद्ध माने जाते थे। अनुलोम विवाह का प्रचार प्राचीन काल में था; पर पीछे बंद हो गया। धर्मशास्त्रों में यद्यपि वर्णसंकरता के ये कारण गिनाए गए हैं—(१) व्यभिचार, (२) अवेद्यावेदन और (३) स्वकर्मत्याग; पर लोक में अंतिम बात पर ध्यान नहीं दिया जाता।

२. वह व्यक्ति जो ऐसे स्त्री पुरुष के संयोग से उत्पन्न हुआ हो, जो धर्मानुसार विवाहित न हों। व्यभिचार से उत्पन्न मनुष्य। दोगला।

वर्णसंघात—संज्ञा पुं० [सं० वर्णसङ्घात] वर्णमाला। वर्णसमाम्नाय। अक्षरसमूह [को०]।

वर्णसंयोग—संज्ञा पुं० [सं०] किसी एक जाति के भीतर परस्पर विवाह संबध [को०]।

वर्णसंसर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] जातियों का घालमेल। दूसरी जाति में विवाह संबंध [को०]।

वर्णसंहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रतिमुख संधि के तेरह अंगों में एक। २. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों के लोगों का एक स्थान पर सम्मेलन। (नाट्यशास्त्र)।

विशेष—भरत नाट्यशास्त्र के व्याख्याता अभिनवगुप्ताचार्य (अभिनव भारती) का मत है कि नाटक के विभिन्न पात्रों के एक स्थान पर सम्मेलन को वर्णसंहार कहना चाहिए।

वर्णसमाम्नाय—संज्ञा पुं० [सं०] वर्णमाला।

वर्णसि—संज्ञा पुं० [सं०] १. जल। पानी। २. कमल [को०]।

वर्णसूची—संज्ञा स्त्री० [सं०] छंदःशास्त्र या पिंगल में एक क्रिया जिसके द्वारा वर्णवृत्तों की संख्या की शुद्धता, उनके भेदों में आदि अंत लघु और आदि अंत गुरु की संख्या जानी जाती है।

विशेष—जितने वर्णों की सूची देखनी हो, उतने वर्णों की संख्या तक क्रम से २, ४, ८ इत्यादि अर्थात् उत्तरोत्तर दूने अंक लिखे। इस क्रिया के अंत में जो संख्या आएगी, वह वृत्तभेद की संख्या होगी। अंत के अंक से बाईं ओर जो अंक होगा, उतने आदिलघु और अंतलघु तथा आदिगुरु और अंतगुरु होंगे। फिर उससे भी बाईं ओर अर्थात् अंत से तीसरे कोष्ठ में जो अंक होगा उतने ही आद्यंत लघु और आद्यंत गुरु वृत्त होंगे। उदाहरणार्थ ४ वर्णों की सूची यह है —

२	४	८	१६
	आद्यंत लघु आद्यंत गुरु	आदि लघु अंत लघु आदि गुरु अंत गुरु	सब वृत्त

वर्णस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] वर्णों के उच्चारण का स्थान, कंठ, गला आदि [को०]।

वर्णहीन—वि० [सं०] जाति से बहिष्कृत [को०]।

वर्णांका—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्णाङ्का] कलम। लेखनी।

वर्णांतर—संज्ञा पुं० [सं० वर्णान्तर] दूसरा वर्ण। दूसरी जाति [को०]।

यौ०—वर्णांतर गमन = (१) अन्य वर्ण में जाना। जाति या धर्म परिवर्तन। (२) व्याकरण में ध्वनि या अक्षर का बदलना।

वर्णा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अरहर।

वर्णागम—संज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण में किसी शब्द के बीच किसी वर्ण का आगम होना। जैसे,—'हस' शब्द में ह के ऊपर अनुस्वार का आगम हो जिससे इस शब्द का व्युत्पन्न रूप 'हंस' हो जाता है। (निरुक्त)।

वर्णाट—संज्ञा पुं० [सं०] १. चित्रकार। गायक। ३. स्त्री के द्वारा उपार्जित धन से जीविका करनेवाला। ४. प्रेमी [को०]।

वर्णात्मक वि० [सं०] वर्णमय। वर्णरूप। उ०—दूसरा वर्णात्मक शब्द वर्णविन्यास युक्त होता है।—रस क०, (भू०), पृ० २।

वर्णात्मा—संज्ञा प्र० [सं० वर्णात्मन्] शब्द [को०]।

वर्णाधम—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वर्णों वा जातियों में निम्न श्रेणी का हो।

वर्णाधिप—संज्ञा पुं० [सं०], फलित ज्योतिष के अनुसार ब्राह्मणादि वर्णों के अधिपति ग्रह।

विशेष—ब्राह्मण के अधिपति बृहस्पति और शुक्र, क्षत्रिय के भौम और रवि, वैश्य के चंद्र, शूद्र के बुध और अंत्यज के शनि माने जाते हैं।

वर्णानुप्रास—संज्ञा पुं० [सं०] एक शब्दालंकार विशेष। दे० 'अनुप्रास'।

वर्णापसद—संज्ञा पुं० [सं०] जातिच्युत व्यक्ति [को०]।

वर्णापेत—वि० [सं०] वर्णहीन । जातिच्युत [को०] ।

वर्णार्ह—संज्ञा पुं० [सं०] मूँग [को०] ।

वर्णावकृष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] शूद [को०] ।

वर्णावर—वि० [सं०] निम्न जाति का [को०] ।

वर्णावली—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्णमाला' । उ०—हमारी सरकार से वहाँ की एक दूसरी ही भाषा और वर्णावली स्वीकार की जाती है ।—प्रेमघन, भा० २, पृ० ४१४ ।

वर्णाश्रम—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ण और आश्रम । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार वर्ण तथा ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, बानप्रस्थ और संन्यास ये चार आश्रम । उ —वर्णाश्रम की नव स्फुरित ज्योति, नूतन विलास ।—अपरा, पृ० २०१ ।

यौ०—**वर्णाश्रम गुरु**=शिव । **वर्णाश्रम धर्म**=वर्णों और आश्रमों के कर्तव्य ।

वर्णि—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर्ण । सोना । २. बलि । ३. सुगंधित अंगराग (को०) ।

वर्णिक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] लेखक ।

वर्णिक^{२}— वि० वर्ण से संबंध रखनेवाला । जैसे, वर्णिक वृत्त ।

वर्णिकवृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] वह वृत्त या छंद जिसके प्रत्येक चरण के वर्णों की संख्या और लघु गुरु के स्थान समान हों ।

वर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कठिनी । खड़िया । २. मसि । स्याही । ३. सोने का पानी । ४. चंद्रमा । ५. विलेपन । ६. नट की वेशभूषा या पहनावा । अभिनेताओं का परिच्छद या पोशाक (को०) । ७. चित्र में विशिष्ट वर्णों या रंगों का संयोजन (को०) ।

वर्णित—वि० [सं०] १. कथित । कहा हुआ । २. जिसका वर्णन हो । बयान किया हुआ । ३. चित्रित । अंकित (को०) । ४. प्रशंसित स्तुत (को०) ।

वर्णिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्री । नारी । २. चार वर्णों में से किसी एक वर्ण की स्त्री । ३. हरिद्रा हल्दी [को०] ।

वर्णिलिंगी—संज्ञा पुं० [सं० वर्णिलिङ्गिन्] ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारी की वेशभूषा धारण करनेवाला व्यक्ति [को०] ।

वर्णी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वर्णिन्] १. लेखक । २. चित्रकार । ३. ब्रह्मचारी । उ०– बाण के अनुसार निम्नलिखित संप्रदाय अधिक प्रचलित थे ।...भागवत, वर्णी (ब्रह्मचारी) आदि ।—प्रार्य० भा०, पृ० ४५२ । ४. चारो वर्णों में स किसी वर्ण का व्यक्ति (को०) ।

वर्णी^{२}—वि० १. विशेष आकृति या रंगवाला । जैसे, देववर्णी । २. किसी जाति से सबंध रखनेवाला ।

वर्णु—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक नदी का नाम । बन्नू । आदित्या । २. बन्नू नामक देश । ३. सूर्य ।

वर्णोदक—संज्ञा पुं० [सं०] रंगीन जल । रंग मिला हुआ पानी [को०] ।

वर्णोद्दिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] छंदःशास्त्र में एक क्रिया जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि अमुक संख्यक वर्णवृत्त का कोई रूप कौन सा भेद है ।

विशेष—जो भेद दिया गया हो, उसमें लघु गुरु के ऊपर क्रम से दूने अंक अर्थात् १, २, ४, ८ इत्यादि लिखे । फिर लघु के ऊपर जितने अंक हों, उन्हें जोड़कर उसमें १ और जोड़ दें । जैसे,—किसी ने पूछा कि चार वर्ण के वृत्तों में ।।ऽऽ कौन सा भेद है तो यह क्रिया की—

१ २ ४ ८
। । ऽ ऽ

अब लघु वर्णों के ऊपर अंक (१+२) जोड़ने से ३ हुए । इससे विदित हो गया कि यह चौथा भेद है ।

वर्ण्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुंकुम । २. वनतुलसी । बबई । ३. प्रस्तुत विषय । ४. उपमेय ।

वर्ण्य^{२}—वि० १. वर्णन के योग्य । २. जो वर्णन का विषय हो । उ०—वर्ण्य वस्तु और वर्णन प्रणाली बहुत दिनों से एक दूसरे से अलग कर दी गई है ।—रस०, पृ० ५० ।

वर्ण्यमान—वि० [सं० वर्ण्यमत्] जिसका वर्णन या उल्लेख किया जा रहा हो । उ०—उसके अंतःकरण में यह दृढ़ संस्कार होना चाहिए कि वर्ण्यमान नदी, पर्वत तथा वन के संमुख वह स्वयं उपस्थित होकर उसकी शोभा देख रहा है ।—हिं० भा० प०, पृ० ९९ ।

वर्ण्यविषय—संज्ञा पुं० [सं०] वह विषय जिसका वर्णन किया जाय या किया गया हो । उ०—तीसरे अध्याय में उपर्युक्त कवियों की रचनाओं तथा उनके वर्ण्य विषय का परिचय दिया गया है ।—अकबरी०, पृ० ९ ।

वर्ण्यसम—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का हेत्वाभास [को०] ।

वर्त संज्ञा पुं० [सं०] जोविका । आहार । समासांत में प्रयुक्त, जैसे, कल्यवर्त [को०] ।

वर्तक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बटुवा । २. नर बटेर । ३. घोड़े का खुर । ४. एक प्रकार का पीतल या काँसा (को०) ।

वर्तक^{२}—वि० १. रहनेवाला । अस्तित्वयुक्त । २. अनुरक्त [को०] ।

वर्तका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० बटेर ।

वर्तकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वर्तका' ।

वर्तजन्मा—संज्ञा पुं० [सं० वर्तजन्मन्] बादल । मेघ [को०] ।

वर्ततीक्ष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वर्तलोह' । २. एक प्रकार का पीतल या काँसा धातु [को०] ।

वर्तन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्तित] १. बरताव । व्यवहार । २. व्यवसाय । जोवनोपाय । वृत्ति । रोजी । ३. फेरना । घुमाना । बटना । ४. परिवर्तन । फेर फार । ५. स्थिति । ठहराव । ६. स्थापन । रखना । ७. सिल बट्टे से पीसना । पेषण । बटना । ८. वर्तमान । ९. चरखे की वह लकड़ी जिसमें तकला लगा रहता है । १०. बटलोई । बकला । ११. पात्र । बरतन । १२. घाव में सलाई डालकर हिलाना डुलाना, जिससे घाव या नासूर की गहराई और फैलाव आदि का पता लगता है । शल्यकंपन कर्म । १३. विष्णु । १४. कौआ । १५. गोल । वर्तुल । गेंद (को०) । १६. वामन । बौना (को०) । १७. रंजन । लगाना ।

संयोजित करना । १८. घोड़े के लोटने की जगह (को०) । १९. वेतन । भृति (को०) । २०. तकला । तर्कु (को०) । २०. क्वाथ (को०) । २२. प्रायः कथित शब्द । बारबार कहा हुआ शब्द (को०) ।

वर्तन^2—वि० १. रहनेवाला । ठहरनेवाला । २. अचल । अटल । ३. जीवित रखनेवाला । ४. गतिमान करनेवाला [को०] ।

वर्तनदान—संज्ञा पुं० [सं०] रोटी देना । जीविका देना [को०] ।

वर्तनविनियोग—संज्ञा पुं० [सं०] वेतन । भृति [को०] ।

वर्तना—क्रि० अ०, क्रि० स० [सं० वर्तन] दे० 'बरतना' ।

वर्तनार्थी—वि० [सं०] रोजी या जीविका चाहनेवाला । नौकरी का इच्छुक [को०] ।

वर्तनि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पूर्व दिशा । पूर्व देश । २. बाट । रास्ता । ३. शुद्ध राग का एक भेद । ४. स्तोत्र । सूक्त (को०) ।

वर्तनि^{2}—संज्ञा स्त्री० १. सड़क । पथ । २. पहिया । चक्र । ३. लीक । गाड़ी के पहिए का निशान । ३. अक्षिरोम । बरौनी [को०] ।

वर्तनी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बटने की क्रिया । पेषण । पिसाई । २. बाट । रास्ता । ३. तकला । टेकुआ (को०) । ४. भेजने या प्रेषण करने की क्रिया (को०) । ५. रहना । वर्तमान होना (को०) ।

वर्तनी^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्तन] अक्षरक्रम वा न्यास । हिज्जे । दे० 'बरतनी' ।

वर्तम(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मन्] मार्ग । रास्ता । उ०—वर्तम अध्वा सरनि पथ संचर पादबिहार ।—अनेकार्थ०, पृ० ७७ ।

वर्तमान^1- वि० [सं०] १. चलता हुआ । जो जारी हो । जो चल रहा हो । २. उपस्थित । मौजूद । विद्यमान । ३. साक्षात् । ४. आधुनिक । हाल का ।

वर्तमान^2—संज्ञा पुं० १. व्याकरण में क्रिया के तीन कालों में से एक, जिससे सूचित होता है कि क्रिया अभी चली चलती है, समाप्त नहीं हुई है ।

विशेष—वर्तमान के कई भेद होते हैं । 'वह आता है' इस क्रिया में आरंभ और चला चलना पाया जाता है, समाप्ति नहीं, इससे यह 'सामान्य वर्तमान' है । कभी कभी वर्तमान के प्रयोग द्वारा 'नित्य प्रवृत्ति' भी पाई जाती है । जैसे,—'भारत के उत्तर में हिमालय है ।' कभी कभी 'वृत्ताविरतता' भी पाई जाती है । जैसे,—'इस मैदान में लड़के खेलते हैं ' इस वाक्य से यह सूचित होता है कि चाहे कहने के समय लड़के न खेलते रहे हों, पर उसके पूर्व कई बार खेल चुके हैं और आगे भी बराबर खेलेंगे । इसी प्रकार 'वह मांस नहीं खाता' इस वाक्य में 'प्रवृत्तोपरता' पाई जाती है, अर्थात् वह जन्म से ही मांस नहीं खाता । इसी प्रकार और भी भेद हैं ।

२. वृत्तांत । समाचार । ३. चलता व्यवहार । उ०—तुम पाँच सात पीढ़ियों के वर्तमान को सनातन व्यवहार मानते हो ।—सत्यार्थप्रकाश (शब्द०) ।

वर्तरूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक नदी का नाम । २. कौवे का घोंसला । ३. द्वारपाल । ४. गतिहीन वा स्थिर जल । ५. आवर्त । भँवर (को०) । ६. छोटा तालाब या पोखर जिसका जल पंक के कारण मलिन हो । डाबर (को०) ।

वर्तलोह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लोहा ।

विशेष—वैद्यक में शोधे हुए वर्तलोह को कफ, दाह और पित्त का नाशक और उसके स्वाद को कटु, मधुर और तिक्त लिखा है । यह वही लोहा है, जिसके बिदरी बरतन बनते हैं ।

पर्या०—वर्ततीक्ष्ण । वर्तक । लोहसंकट । नीलक । नीलज । नीललोह ।

वर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बत्ती । २. अंजन । ३. वह बत्ती जो वैद्य घाव में देता है । ४. औषध बनाना । ५. अनुलेपन । उबटन । ६. गोली । बटी । ७. लकीर । रेखा (को०) । ८. गले की सूजन (को०) । ९. ऐंद्रजालिक का या आभिचारिक तिलक (को०) । १०. कपड़े के किनारे की झालर (को०) । ११. चिराग । दीपक (को०) ।

वर्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] बटेर ।

वर्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बटेर । २. अजशृंगी । ३. बत्ती । ४. शलाका । सलाई । ५. तूलिका । चित्र बनाने की कूँची (को०) । ६. रंग । रोगन (को०) ७. छड़ी । यष्टि (को०) ।

वर्तिकाबिंदु—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्तिकाविन्दु] हीरे का एक दोष ।

विशेष—'रत्नपरीक्षा' के अनुसार इस प्रकार के हीरे को धारण करने से भय उत्पन्न होता है ।

वर्तित—वि० [सं०] १. संपादित । निष्पादित । किया हुआ । २. चलाया हुआ । जारी किया हुआ । ३. दुरुस्त किया हुआ । ४. व्यतीत । बीता हुआ । जैसे; वर्तित जीवन या काल (को०) ।

वर्तितजन्मा—वि० [सं० वर्तितजन्मन्] उत्पादित । जनित । उत्पन्न किया हुआ [को०] ।

वर्तिर—संज्ञा पुं० [सं०] बटेर ।

वर्तिष्णु—वि० [सं०] १. वर्तुलाकार । २. चक्कर खानेवाला । ३. स्थिर । ४. युद्ध में अविचल । ५. रहनेवाला (को०) ।

वर्ती^{1}—वि० [सं० वर्तिन्] [वि० स्त्री० वर्तिनी] १. वर्तनशील । बरतनेवाला । २. स्थित रहनेवाला । जैसे,—समीपवर्ती ।

वर्ती^{2}—संज्ञा स्त्री० १. बत्ती । २. शलाका । सलाई ।

वर्तीर—संज्ञा पुं० [सं०] बटेर [को०] ।

वर्तुल^1—वि० [सं०] गोल । वृत्ताकार ।

वर्तुल^2—संज्ञा पुं० १. गृंजन । गाजर । २. मटर । ३. गुड तृण । ४. सुहागा । ५. गोला गेंद (को०) । ६. वृत्त । घेरा (को०) । ७. शिव का एक गण ।

वर्तुला—संज्ञा स्त्री० [सं०] तकुए के सिरे की घुंडी [को०] ।

वर्तुलाकार—वि० [सं० वर्तुल+आकार] गोला । वृत्ताकार । उ०—(क) अब ब्रह्मरंध्र आकाश तत्व है सुभ्र वर्तुलाकार ।—सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० ५२ । (ख) सुंदर वर्तुलाकार जावैं कनक

कदली के खंभों की नाईं राजती थीं मानो किसी ने उलटे स्तंभ लगा दिए हों ।—श्यामा०, पृ० २८ ।

वर्तुलाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] श्येन । बाज पक्षी । [को०] ।

वर्तुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] गजपिप्पली [को०] ।

वर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मन्] १. मार्ग । पथ । २. गाड़ी के पहिए का मार्ग । लीक । ३. किनारा । औंठ । वारी । ४. आँख की पलक । ५. आधार । आश्रय । ६. प्रथा । परंपरा । कार्यविधि (को०) । ७. अवकाश । क्षेत्र (को०) ।

वर्त्मकर्दम—संज्ञा पुं० [सं०] आँख का एक रोग जिसमें पित्त और रक्त के प्रकोप से आँखों में कीचड़ भरा रहता है ।

वर्त्मकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मकर्मन्] रास्ता बनाना । राह बनाना । पथ निर्माण [को०] ।

वर्त्मनि- संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पथ । राह । २. सड़क राजमार्ग [को०] ।

वर्त्मनी संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वर्त्मनि' [को०] ।

वर्त्मपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. पथ का अतिक्रमण । मार्गभ्रंश । २. राह पर आना । मार्ग पर आना । रास्ता पकड़ना [को०] ।

वर्त्मपातन—संज्ञा पुं० [सं०] लूटने के लिये राह में घात लगाए रहना [को०] ।

वर्त्मबंध—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मबन्ध] आँख का एक रोग जिसमें पलक में सूजन हो आती है, खुजली तथा पीड़ा होती है और आँख नहीं खुलती ।

वर्त्मबंधक—संज्ञा पुं० [सं० वर्त्मबन्धक] एक नेत्ररोग । दे० 'वर्त्मबंध' [को०] ।

वर्त्ममाक्षिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्वर्णमाक्षिका । सोनामाखी ।

वर्त्मरोग—संज्ञा पुं० [सं०] आँख का एक रोग जिसमें पलकों में विकार उत्पन्न हो जाता है और आँखों को खालने में बड़ी पीड़ा होती है ।

विशेष—वैद्यक में इस रोग के २१ भेद माने गए हैं । उत्संगिनी, कुंभिका, पोथकी, वर्त्मशर्करा, वर्त्मर्श, शुष्कार्श, अंजनदूषिका, वहुलवर्त्म, वर्त्मबंधक, क्लिष्टवर्त्म, वर्त्मकर्दम, श्याववर्त्म, प्रिक्लन्नवर्त्म, अक्लिन्नवर्त्म, वातहतवर्त्म, वर्त्मार्बुद, निमेष, शोणितार्श, नगण, विषवर्त्म और कुंचन ।

वर्त्मशर्करा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँख का एक रोग जिसमें पलकों में छोटी छोटी फुंसियों के सहित एक बड़ी और कड़ी फुंसी हो जाती है ।

वर्त्मस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँखों का एक रोग । वर्त्मरोग ।

वर्त्मार्बुद—संज्ञा पुं० [सं०] आँखों का एक रोग जिसमें पलक के अंदर एक गांठ उत्पन्न हो जाती है । यह टेढ़ी और लाल रंग की होती है और इसमें पीड़ा नहीं होती ।

वर्त्मायास—संज्ञा पुं० [सं०] यात्राजन्य श्रम [को०] ।

वर्त्मावरोध—संज्ञा पुं० [सं०] वर्त्मरोग ।

वर्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] बाँध । पुस्ता । सेतु । पुल [को०] ।

वर्दी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्त्ती (=वत्ती)] मूँज की पत्ती जो गज के ढीले होने पर चरखे में लगाई जाती है ।

वर्दी^{२}—संज्ञा स्त्री० [अं०] दे 'वरदी' ।

वर्द्ध, वर्ध—संज्ञा पुं० [सं०] १. सीसा धातु । २. भारंगी । ३. काटना । तराशना । ४. पूर्ति । पूरण । ५. बढ़ोतरी । वृद्धि (को०) । ७. ब्राह्मणयष्टिका । एक क्षुप । छड़ी ।

वर्द्धक, वर्धक^{१} वि० [सं०] १. बढ़ानेवाला । पूरक । २. काटनेवाला । छीलनेवाला ।

वर्द्धक, वर्धक^{२}—संज्ञा पुं० १. बढ़ई । २. एक वृक्ष का नाम । भारंग ।

वर्द्धकि, वर्धकि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्द्धकी' [को०] ।

वर्द्धकी वर्धकी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वर्द्धकि, वर्द्धकिन्] बढ़ई । लकड़ी का काम करनेवाला ।

वर्द्धकी, वर्धकी^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] गणिका । वेश्या । कुलटा स्त्री ।

वर्द्धन, वर्धन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्द्धित] १. बढ़ाना । २. वृद्धि । बढ़ती । उन्नति । ३. छेदना । काटना । छीलना । तराशना । ४. दाँत पर जमनेवाला दूसरा दाँत (को०) । ५. शिव (को०) । ६. शिक्षण (को०) । ७. पूर्ति । पूरण (को०) । ८. वह जिससे बल, शक्ति आदि बढ़े । सत्व वर्धक (को०) ।

वर्द्धन, वर्धन^{२}—वि० १. अभ्युदय वा वृद्धि करनेवाला । जैसे, हर्षवर्धन । वंशवर्धन ।

वर्द्धनक, वर्धनक - वि० [सं०] अभ्युदय करनेवाला । उल्लास और आनंददायक [को०] ।

वर्द्धनिका, वर्धनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह छोटा घड़ा या पात्र जिसमें पवित्र जल रखा जाता है [को०] ।

वर्द्धनी, वर्धनी—संज्ञा स्त्री० [संज्ञा] १. झाड़ू । २. कलसा । छोटा घड़ा । ३. अरथी [को०] ।

वर्द्धमान, वर्धमान^{१}—वि० [सं०] १. बढ़ता हुआ । जो बढ़ता जा रहा हो । उ०—कज्जल का वर्धमान भूधर, उतरा नभ पर, उतरा भू पर ।—अपलक, पृ० ९६ । २. बढ़नेवाला । वर्धनशील ।

वर्द्धमान, वर्धमान्^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक वर्णवृत्त जिसके चारों चरणों में वर्णों की संख्या भिन्न भिन्न होती है; अर्थात् १४, १३, १८ और १५ ।

विशेष—इसके चारो चरणों में वर्णों की संख्या इस प्रकार होती है । प्रथम चरण—मगण, सगण, जगण, भगण, गुरु, गुरु; द्वितीय चरण—सगण, नगण, जगण रगण, गुरु; तृतीय चरण—नगण, नगण, सगण, नगण, नगण, सगण; और चतुर्थ चरण—नगण, नगण, नगण, जगण, यगण । यथा—गोविंदा पद में जु मित्त चित्त लगैहौ । निहचै यहि भवसिंधु पार जैहौ । असत सकल जग मोह मदहिं सब तज रे । तन मन धन सन भजिए हरि को रे ।

२. मिट्टी का प्याला । सकोरा । ३. जैनियों के २४ वें जिन महावीर का नाम । ४. बंगाल का एक जिला और नगर । आधुनिक वर्दवान । ५. एरंड वृक्ष । रेंड़ (को०) । ६. एक प्रकार की पहेली (को०) । ७. विष्णु का एक नाम (को०) । ८. मीठा नीबू । ९. हाथों की एक विशिष्ट मुद्रा (को०) । १०. नृत्य की एक मुद्रा (को०) । ११. वह मकान जिसमें दक्षिण दिशा में दरवाजा न

हो (को०)। १२. वास्तु संबंधी एक तांत्रिक यंत्र या रेखांकित आकार (को०)। १३. एक विशिष्ट प्रकार का प्रासाद या मंदिर जो उक्त तांत्रिक यंत्र के आधार पर निर्मित हो (को०)। १४. ईशान कोण में स्थित दिग्गज।

वद्‌र्धमानक, वर्धमानक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कसोरा। सकोरा। २. ढक्कन [को०]।

वद्‌र्धमानगृह—संज्ञा पुं० [सं०] क्रीडागृह। प्रमोदमंदिर [को०]।

वद्‌र्धमानपुर—संज्ञा पुं० [सं०] एक नगर। आधुनिक वर्दवान [को०]।

वद्‌र्धयिता, वर्धयिता—संज्ञा पुं० [सं० वर्द्धयितृ] [स्त्री० वर्द्धयित्री] बढ़ानेवाला।

वद्‌र्धा, वर्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम जो सतपुरा के पर्वतों से निकलकर गोदावरी में गिरती है। मध्यप्रदेश की अमरावती नगरी इसी नदी के किनारे बसी है।

वद्‌र्धापन, वर्धापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कर्णवेध। नाड़ीछेदन। कनछेदन। २. महाराष्ट्र देश में अभ्यंगादि क्रिया जो किसी पुरुष की जन्मतिथि को की जाती है। ३. जन्मदिन का उत्सव (को०)। ४. वह उत्सव जिसमें किसी के अभ्युदय की कामना की जाय, अथवा बधाई दी जाय (को०)। ५. काटना। छेदना (को०)।

वर्द्धापनिक, वर्धापनिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अभिनंदन। २. अभिनंदन के समय दी जानेवाली भेंट [को०]।

वर्द्धापिका, वर्धापिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] धाय। धात्री [को०]।

वर्द्धित, वर्धित—वि० [सं०] १. बढ़ा हुआ। २. पूर्ण। ३. छिन्न। कटा हुआ।

वर्द्धिष्णु, वर्धिष्णु—वि० [सं०] वृद्धिशील। बढ़ने की कामना करनेवाला [को०]।

वर्द्धीणस, वर्धीणस—संज्ञा पुं० [सं०] वह सफेद रंग का बकरा जिसके कान नदी में पानी पीते समय पानी में छू जायँ।

वर्द्‌ध्म, वर्ध्म—संज्ञा पुं० [सं० वर्ध्मन्] १. वह फोड़ा जो जाँघ के मूल में संधिस्थान में निकल आता है। यह फोड़ा कठिन होता है। इसके रोगी को ज्वर आता है, शूल होता है और वह सुस्त पड़ा रहता है। बद। २. अंत्रवृद्धि रोग। आँत उतरने का रोग।

वद्‌ध्र, वर्ध्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. खाल। चमड़ा। २. चमड़े की बद्धी। वर्ध्रिका। ३. सीसा। राँगा।

वर्द्ध्रिका, वर्ध्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चमड़े की रस्सी। बद्धी। २. एक प्रकार का आभूषण जिसे बद्धी कहते हैं।

वद्‌र्ध्री, वर्ध्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वर्द्ध्रिका'।

वर्नन⑤—संज्ञा पुं० [सं० वर्णन] दे० 'वर्णन'। उ०—दीपक वर्नन कह कहौं, सबै मनोरथ काज।—कबीर सा०, पृ० ५६७।

वर्प—संज्ञा पुं० [सं०] आकृति। आकार। रूप [को०]।

वर्म—संज्ञा पुं० [सं० वर्मन्] १. कवच। बकतर। २. घर। आश्रय। ३. पित्त पापड़ा। पर्पटक। ४. बल्कल। छाल (को०)।

वर्मक—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक जनपद का नाम, जिसे अब 'बरमा' कहते हैं।

वर्मकंटक—संज्ञा पुं० [सं० वर्मकण्टक] पित्तपापड़ा। पर्पटक।

वर्मकशा, वर्मकषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सातला। सप्तला।

वर्मण—संज्ञा पुं० [सं०] नारंगी का पेड़ [को०]।

वर्मधर—वि० [सं०] कवची। वर्महर।

वर्महर—वि० [सं०] १. वर्मधर। कवचधारी। २. जो वर्म धारण न कर सके। जैसे, अत्यंत वृद्ध (को०)।

वर्मा—संज्ञा पुं० [सं० वर्म्मन्] क्षत्रियों आदि की उपाधि जो उनके नाम के अंत में लगाई जाती है।

वर्मि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली।

वर्मिक—वि० [सं०] दे० 'वर्मित' [को०]।

वर्मित—वि० [सं०] कवचधारी। कृतसन्नाह।

वर्मिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार सड़क का महसूल। पथकर (को०)।

वर्मी—वि० [सं० वर्मिन्] दे० 'वर्मिक' [को०]।

वर्मुष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली [को०]।

वर्य¹—वि० [सं०] १. प्रधान। २. निर्वाचित या चुनने योग्य। ३. श्रेष्ठ।

विशेष—इसका प्रयोग विशेषतः समस्त पदों में होता है। जैसे,—विद्वद्वर्य।

वर्य²—संज्ञा पुं० कामदेव।

वर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कन्या। २. पतिवरा वधू। ३. अरहर।

वर्वट—संज्ञा पुं० [सं०] लोबिया। बोड़ा। बजरबट्टू।

वर्वणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नीली मक्खी।

वर्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक देश का नाम। २. इस देश का असभ्य निवासी जिसके बाल घुँघराले कहे गए हैं।

विशेष—यद्यपि वर्वर देश का उल्लेख महाभारत (भीष्मपर्व) तथा वामन, मार्कंडेय आदि पुराणों में है, तथापि यह जनपद कहाँ था; इसका ठीक ठीक पता नहीं। कहीं कहीं वर्वरों के बाल घुँघराले कहे गए है। पुराने यूनानी और रोमन भौगोलिकों ने सिंधु नद के मुहाने के आसपास के प्रदेश को बर्बर (बार्बेरियन) देश कहा है। कुछ भारतीय ग्रंथकारों ने महाराष्ट्र देश के एक विशेष भाग को वर्वर कहा है। वर्वर नाम की एक प्राकृत भाषा का उल्लेख भी 'प्राकृतचंद्रिका' में है। इसमें संदेह नहीं कि इस जनपद के निवासी असभ्य समझे जाते थे और घृणा की दृष्टि से देखे जाते थे। पीछे से दूर दूर तक की सभ्य जातियों में यह शब्द 'म्लेच्छ' और 'जंगली' का वाचक हुआ। प्राचीन यूनानी अपनी जाति के लोगों के अतिरिक्त औरों को 'वर्वर' कहा करते थे। रोमनों में भी ऐसा ही था।

३. पामर। नीच। ४. घुँघराले बाल। ५. काली बनतुलसी। ६. हिंगुल। ईंगुर। ७. पीला चंदन। ८. मूर्ख। अज्ञ (को०)। ९. नीच जाति (को०)। १०. जातिभ्रष्ट व्यक्ति (को०)। ११. नृत्य का एक प्रकार। एक प्रकार का नाच (को०)। १२. शस्त्रों का परस्पर टकराना।

वर्वर¹—वि० १. घुंघराला। छल्लेदार। २. जो स्पष्ट न हो [को०]।

वर्वरक- संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चंदन।

विशेष—इसका गुण शीतल, कफ, वायु पित्त, कोढ़, खाज और व्रण तथा रक्तदोष का नाशक और स्वाद कड़ुवा माना गया है।

पर्या०—वर्वरोत्थ। शीत। पित्तारि।

वर्वरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की मक्खी। नीली मक्खी। २. वर्वरी। बनतुलसी [को०]।

वर्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बनतुलसी। २. दे० 'वर्वरा'।

वर्वरीक· संज्ञा पुं० [सं०] १. भारंगी। २. बनतुलसी। ३. महाकाल। ४. भीम के पौत्र का नाम जो घटोत्कच का पुत्र था। ५. घुंघराले केश। छल्लेदार बाल [को०]।

वर्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्वरी। बनतुलसी [को०]।

वर्वि—वि० [सं०] बहुत खानेवाला। पेटू [को०]।

वर्वुर—स्त्री० पुं० [सं०] एक वृक्ष। विशेष दे० 'बबूल' [को०]।

वर्वूर—संज्ञा पुं० [सं०] बबूल।

वर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृष्टि। जलवर्षण। २. काल का एक मान जिसमें दो अयन और बारह महीने होते हैं। उतना समय जितने में सब ऋतुओं की एक आवृत्ति हो जाती है। संवत्सर। साल।

विशेष—वर्ष चार प्रकार के होते हैं—सौर, चांद्र सावन और नाक्षत्र। सौर वर्ष ३६५ दिन, ५ घंटे, ४८ मिनट और ४६ सेकंड का होता है। यह उतना समय है, जितने में पृथ्वी सूर्य की एक परिक्रमा पूरी कर लेती है। पृथ्वी के इसी भ्रमण के कारण सूर्य का सत्ताईस नक्षत्रों और बारह राशियों में गमन दिखाई पड़ता है। लोग कहते हैं कि अब सूर्य अमुक नक्षत्र या राशि में है। घूमते समय पृथ्वी की धुरी सीधी न रहकर कुछ टेढ़ी रहती है और उसके मार्ग की कक्षा गोल न होकर अंडाकार होती है। इसी से सूर्य कुछ महीनों तक भूमध्यरेखा के उत्तर और कुछ महीनों तक दक्षिण में उदय होता दिखाई पड़ता है। ये दोनों 'उत्तर अयन' और 'दक्षिण अयन' कहलाते हैं। वर्ष में केवल दो दिन सूर्य भूमध्य या विषुवत् रेखा पर उदय होता हैं। इन दोनों को सायन कहते। एक सायन तुला राशि में और दूसरा मेष में होता है। सूर्य कर्क राशि में आकर दक्षिण की ओर बढ़ने लगता है और धनु राशि में पहुँचने तक भूमध्यरेखा के दक्षिण ही रहता है। मकर राशि से फिर उत्तर की ओर बढ़ने लगता है और कर्क राशि में पहुँचने तक उत्तर ही रहता है। प्राचीन भारतीय आर्यों में राशियों का व्यवहार न था; इससे सौर वर्ष दो अयनों का ही माना जाता था। ग्रहों का उदय राशियों में न माना जाकर २७ नक्षत्रों में माना जाता था। इससे कभी कभी बड़ी अव्यवस्था होती थी। चांद्र वर्ष ३५४ दिन, ८ घंटे, ४८ मिनट और ३६ सेकंड का होता है। इतने काल में चंद्रमा पृथ्वी की बारह परिक्रमाएँ कर लेता है। इस प्रकार सौर वर्ष और चांद्र वर्ष में प्रति वर्ष १० दिन, २१ घंटे का अंतर पड़ता है। हिंदू पंचांग में यह अंतर प्रति तीसरे वर्ष, १३ महीने का वर्ष मानकर दूर किया जाता है। उस बढ़े हुए महीने को 'अधिमास' या 'मलमास' कहते हैं। सावन वर्ष पूरे ३६० दिनों का होता है और उसके महीने तीस तीस दिन के होते हैं। वैदिक काल में सावन मास ही अधिक चलता था और प्रत्येक मास की तिथि की गणना चंद्रमा के ही हिसाब से होती थी। शुक्ल प्रतिपदा से पूर्णिमा तक १५ दिन का शुक्ल पक्ष और कृष्ण प्रतिपदा से अमावास्या तक १५ दिन का कृष्ण पक्ष होता था। नाक्षत्र वर्ष ३२४ दिन का और उसका प्रत्येक महीना २७-२७ दिन का होता है। इन चार प्रकार के वर्षों के अतिरिक्त प्राचीन काल में और कई प्रकार के वर्षों का प्रचार था। जैसे,—सप्तर्षि वर्ष।

३. पुराण में माने हुए सात द्वीपों का एक विभाग। ४. किसी द्वीप का प्रधान भाग, जैसे,—भारतवर्ष। ५. मेघ। बादल।

वर्षकर—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ।

वर्षकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] झिल्ली। झींगुर।

वर्षकाम वि० [सं०] वृष्टि की कामना रखनेवाला। वृष्टि चाहनेवाला।

वर्षकामेष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] एक यज्ञ जो वर्षा के लिये किया जाता था।

ववकाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] जीरा।

ववकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग की पुनर्नवा। लाल गदहपूरना।

ववकोश—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्षकोष' [को०]।

ववकोष—संज्ञा पुं० [सं०] १. दैवज्ञ। ज्योतिषी। २. माष। उड़द।

वर्षगाँठ—संज्ञा स्त्री० [हिं० वर्ष+गाँठ] वह कृत्य जो किसी पुरुष के जन्मदिन पर किया जाता है। विशेष दे० 'बरसगाँठ'।

वर्षगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] संसार का विभाग करनेवाले सात पर्वत जो वर्षपर्वत कहे जाते हैं। इनमें हिमवान्, हेमकूट, निषध, मेरु, चैत्र, कर्णी और शृंगी नामक पर्वत हैं [को०]।

वर्षघ्न¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. पवन। २. ग्रहों का वह योग जिससे वर्षा नष्ट हो जाती है।

वर्षघ्न²—वि० वर्षा से बचानेवाला।

वर्षज—वि० [सं०] १. वर्षा से उत्पन्न। २. एक वर्ष का [को०]।

वर्षण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वर्षित] १. वृष्टि। बरसना। उ०—भाव बदला हुआ—पहले की घनघटा वर्षण बनी हुई।—अपरा, पृ० १४३। २. छिड़कना। नीचे किसी पर डालना या फेंकना। जैसे, द्रव्यवर्षण, पुष्पवर्षण (को०)।

वर्षणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वृष्टि। वर्षा। २. कर्म। क्रिया। कृति। ३. निवास। वर्तन। ४. यज्ञकर्म। यज्ञ [को०]।

वर्षत्र—संज्ञा पुं० [सं०] छत्र। छाता [को०]।

वर्षत्राण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्षत्र' [को०]।

वर्षधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. अंतःपुर का रक्षक। नपुंसक। खोजा। ३. पर्वत। पहाड़ (को०)। ४. वर्ष (पृथ्वी का

खंड) का अधिपति (को०)। ६. पृथ्वी को वर्षों (खंडों) में विभाजित करनेवाले पहाड़। (जैन)।

वर्षधर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] अंतःपुर का रक्षक। नपुंसक। खोजा।

वर्षप—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वर्षपति'।

वर्षपति—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ष के अधिपति ग्रह।

विशेष—फलित ज्योतिष में वर्षप्रवेश होने पर कोई न कोई ग्रह उस वर्ष का अधिपति या राजा माना जाता है। इसी अधिपति के विचार से यह बताया जाता है कि वर्ष शुभ होगा या अशुभ।

वर्षपद—संज्ञा पुं० [सं०] पंचांग। पत्रा। जंत्री [को०]।

वर्षपर्वत—संज्ञा पुं० [सं०] पृथ्वी को सात भागों में बाँटनेवाले पहाड़। वर्षगिरि [को०]।

वर्षपाकी—संज्ञा पुं० [सं० वर्षपाकिन्] आम्रातक। आमड़ा।

वषपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सहदेई नाम की लता [को०]।

वर्षपूग—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षशृंखला। वर्ष का समूह [को०]।

वर्षप्रतिवध—संज्ञा पुं० [सं० वर्षप्रतिबन्ध] वृष्टि का न होना। अनावृष्टि। अवर्षण। सूखा [को०]।

वर्षप्रवेग—संज्ञा पुं० [सं०] घनघोर वर्षा [को०]।

वर्षप्रवेश—संज्ञा पुं० [सं०] नववर्षारंभ [को०]।

वर्षप्रिय—संज्ञा पुं०] सं०] पपीहा। चातक [को०]।

वषफल—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में जातक के अनुसार वह कुंडली जिससे किसी के वर्ष भर के ग्रहों के शुभाशुभ फलों का विवरण जाना जाता है।

क्रि० प्र०—निकालना।—बनाना।

वर्षरात्र—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु [को०]।

वर्षवर—संज्ञा पुं० [सं०] नपुंसक। अंतःपुर का रक्षक। खाजा [को०]।

वर्षवसन—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु में किसी एक निवास में रहना। (बौद्ध)।

वर्षवृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्षगाँठ। जन्मदिन [को०]।

वर्षशत—संज्ञा पुं० [सं०] सौ वर्ष। शताब्दी [को०]।

वर्षसहस्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक हजार वर्ष [को०]।

वर्षांग—संज्ञा पुं० [सं० वर्षाङ्ग] मास। महीना।

वर्षांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्षाङ्गी] पुनर्नवा [को०]।

वर्षांबु—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा का जल [को०]।

वर्षांश—संज्ञा पुं० [सं०] महीना।

वर्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह ऋतु जिसमें पानी बरसता है।

विशेष—छह ऋतुओं के हिसाब से सावन और भादों के दो महीने वर्षा ऋतु के माने जाते हैं। पर साधारण व्यवहार में जाड़ा, गरमी और बरसात के हिसाब से वर्षा काल आषाढ़ से कुआर तक चार महीने का लिया जाता है जिसे चातुर्मास या 'चौमासा' कहते हैं।

पर्या०—प्रावृट्। पावस। घनागम। घनाकर।

२. पानी बरसने की क्रिया या भाव। वृष्टि।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

मुहा०—(किसी वस्तु की) वर्षा होना = (१) बहुत अधिक परिमाण में ऊपर से गिरना। जैसे,—फूलों की वर्षा होना। (२) बहुत अधिक संख्या में मिलना। जैसे,—वहाँ रुपयों की वर्षा होती है।

वर्षाकाल—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु। बरसात।

वर्षागम—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु का आगमन। वर्षारंभ।

वर्षाघोष—संज्ञा पुं० [सं० वर्षा + आघोष] बड़ा मेढक [को०]।

वर्षाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार वह ग्रह जो संवत्सर के वर्ष का अधिपति हो। वि० दे० 'वर्षपति'।

वर्षाप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] चातक। पपीहा।

वर्षाबीज—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

वर्षाप्रभंजन—संज्ञा पुं० [सं० वर्षाप्रभञ्जन] आँधी [को०]।

वर्षाभव—संज्ञा पुं० [सं०] रक्त पुनर्नवा। पुनर्नवा जिसके फूल लाल होते हैं [को०]।

वर्षाभू[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. भेक। दादुर। मेढक। २. इंद्रगोप। ग्वालिन नाम का कीड़ा। ३. लाल रंग की पुनर्नवा। ४. कीड़े मकोड़े।

वर्षाभू[२]—वि० वर्षा में उत्पन्न होनेवाला।

वर्षाभ्वी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मादा मेढक। छोटा मेढक। २. पुनर्नवा। २. केचुआ [को०]।

वर्षामद—संज्ञा पुं० [सं०] मयूर। मोर।

वर्षीयस—वि० [सं०] नब्बे बरस से ऊपर की अवस्था का। अति वृद्ध।

वर्षारात्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वर्षा ऋतु। २. वर्षा की रात [को०]।

वर्षारात्रि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वर्षारात्र'

वर्षार्चि—संज्ञा पुं० [सं० वर्ष + अर्चिस्] मंगल ग्रह।

वर्षार्ह—वि० [सं०] वर्ष भर के लिये पर्याप्त [को०]।

वर्षालंकायिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्षालङ्कायिका] पृक्का। असवर्ग।

वर्षाल—संज्ञा पुं० [सं०] फतिंगा। पतंग।

वर्षावसान—संज्ञा पुं० [सं०] शरद् ऋतु [को०]।

वर्षाशन—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ष भर के लिये दिया जानेवाला अन्न का दान [को०]।

वर्षाहिक—संज्ञा पुं० [सं०] बरसाती साँप जिसमें विष नहीं होता।

वर्षिक[१]—वि० [सं०] १. वर्षा संबंधी। २. एक वर्ष का। वार्षिक [को०]।

वर्षिक[२]—संज्ञा पुं० अगुरु [को०]।

वर्षित[१]—संज्ञा पुं० [सं०] वृष्टि। वर्षा [को०]।

वर्षित[२]—वि० बरसा हुआ [को०]।

वर्षिता—वि० [सं० वर्षितृ] बरसने या वर्षा करनेवाला [को०]।

वर्षिष्ठ—वि० [सं०] बहुत वृद्ध [को०]।

वर्षी—वि० [सं० वर्षिन्] १. वर्षा करनेवाला। २. वर्ष का। साल का। समासांत में प्रयुक्त। जैसे, घनवर्षी। वारिवर्षी [को०]।

वर्षीका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वृत्त [को०] ।

वर्षीण—वि० [सं०] (इतने) बर्ष का [को०] ।

वर्षीय - वि० [सं० वर्षीयम्] दे० 'वर्षीण ।

वर्षीयस्—वि० [सं०] १. वर्षा युक्त । २. वृद्ध । अत्यंत बूढ़ा । ३. अत्यंत शक्तिशाली । ४. महत्तम । विशिष्ट [को०] ।

वर्षुक—वि० [सं०] १. जलयुक्त । २. वर्षा करनेवाला [को०] ।

वर्षेज—वि० [सं०] दे० 'वर्षज' ।

वर्षेश—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षाधिप । विशेष दे० 'वर्षपति' ।

वर्षोपल—संज्ञा पुं० [सं०] १. ओला । करका । २. एक तरह की गोलाकार मिठाई [को०] ।

वर्ष्म—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर । दे० 'वर्ष्मा' [को०] ।

वर्ष्मवान्—वि० [सं० वर्ष्मवत्] शरीरवाला । शरीरधारी [को०] ।

वर्ष्मा—संज्ञा पुं० [सं० वर्ष्मन्] १. शरीर । २. प्रमाण । ३. इयत्ता । ४. जलरोधक बाँध । ५. नाप । उँचाई (को०) । ६. अत्यंत सुंदर या कोमल आकृति । ७. वर्षीयान् । अत्यंत वृद्ध (को०) ।

वर्ह—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोर का पंख । २. गठिवन । ग्रंथिपर्णी । ३. पत्र । पत्ता । ४. दे० 'परीवार' (को०) ।

वर्हण—संज्ञा पुं० [सं०] पत्र । पत्ता ।

वर्हा—संज्ञा पुं० [सं० वर्हस्] १. अग्नि । २. दीप्ति । ३. यज्ञ । ४. कुश । ५. चित्रक । चीते का पेड़ । ६. एक राजा का नाम । ७. जल । पानी (को०) ।

वर्हिःशुष्मा—संज्ञा पुं० [सं० वर्हिःशुष्मन्] आग । अग्नि [को०] ।

वर्हि—संज्ञा पुं० [सं० वर्हिस्] १. जल । २. अग्नि । ३. यज्ञ । ४. कुश । ५. चित्रक वृक्ष । ६. दीप्ति । ७. एक राजा [को०] ।

वर्हिकुसुम—संज्ञा पुं० [सं०] गठिवन । ग्रंथिपर्णी [को०] ।

वर्हिज्योति—संज्ञा पुं० [सं० वर्हिज्योतिस्] अग्नि [को०] ।

वर्हिण—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोर । २. भारतवर्ष के एक द्वीप का नाम । ३. तगर [को०] ।

यौ०—वर्हिणवाहन = स्कंद का एक नाम । वर्हिणवासा = 'वर्हिवासा' ।

वर्हिण—वि० मोरपंख से सज्जित [को०] ।

वर्हिध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद [को०] ।

वर्हिवर्ह—संज्ञा पुं० [सं०] एक गंधद्रव्य ।

वर्हिमुख - संज्ञा पुं० [सं०] १. देवता । २. अग्नि [को०] ।

वर्हिवासा—वि० [सं० वर्हिवासस्] वह वाण जिसमें मोर का पंख लगा हो [को०] ।

वर्हिवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद ।

वर्हिषद्—संज्ञा पुं० [सं०] एक पितर का नाम ।

वर्हिष्केश—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि । पावक [को०] ।

वर्ही—संज्ञा पुं० [सं० वर्हिन्] १. मयूर । मोर । २. कश्यप के एक पुत्र का नाम । ३. तगर ।

वलंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वलन्तिका] अंगविक्षेप या हाव भाव की एक विशेष मुद्रा [को०] ।

वलंब—संज्ञा पुं० [सं० वलम्ब] १. अवलंब । सहारा । २. लंब (ज्यामिति) । आधार (को०) ।

वल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ । २. एक असुर का नाम ।

विशेष—यह देवताओं की गौएँ चुराकर एक गुहा में जा छिपा था । इंद्र उस गुहा को छेंककर उसमें से गौओं को छुड़ा लाए थे । फिर वल ने बैल का रूप धारण किया और वह बृहस्पति के हाथ से मारा गया । दे० 'बल' ।

वलक - संज्ञा पुं० [सं०] मार्कंडेयपुराणानुसार तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक ऋषि का नाम । २. यात्रा (को०) । ३. शहतीर (को०) । ४. जुलूस (को०) ।

वलक्ष—वि० [सं०] धवल । श्वेत । उ०—मानव की पूजा की मैंने सुर के समक्ष, नर की महिमा का लिखा पृष्ठ नूतन, वलक्ष । सामधेनी, पृ० ५३ ।

वलग्न—संज्ञा पुं० [सं०] कटि । कमर [को०] ।

वलज—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्न का ढेरो । २. खेत । क्षेत्र । ३. अन्न । ४. युद्ध । लड़ाई । ५, प्राकार । चहारदोवारी [को०] ।

वलजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदरी स्त्री [को०] ।

वलद्विष—संज्ञा पुं० [सं० वलद्विष्] इंद्र ।

वलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्योतिष शास्त्रानुसार ग्रह, नक्षत्रादि का सायनांश से हटकर चलना । विचलन । वक्रगति । २. गोल में घूमना । चक्कर खाना (को०) । ३. क्षोभ (को०) ।

वलनांश—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के अनुसार अयनांश से किसी ग्रह के वलन अर्थात् हटकर चलने या वक्रगति की दूरी का अंश ।

वलनाशन, वलभित्—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र [को०] ।

वलभि, वलभी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह मंडप जो घर के ऊपर शिखर पर बना हो । रावटी । वडभी । २. घर की चोटी । ३. छानी । ४. एक पुरानी नगरी जो काठियावाड़ में थी और जिसके खँडहर अब तक मिलते हैं ।

विशेष—यहाँ एक प्रसिद्ध राजवंश का राज्य था, जिसके संस्थापक सेनापति भट्टार्क थे ।

वलय—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंडल । २. कंकण । ३. चूड़ी । ४. वेष्ठन । ५. अठारह प्रकार के गलगंड रोगों में से एक ।

विशेष—इसमें कफ के कारण गले के अंदर उस नली में जिसमें से होकर अन्न जल पेट में जाता है, एक गाँठ उत्पन्न हो जाती है । यह गाँठ ऊँची और बड़ी होती है और अन्न जल के जाने का मार्ग रोक देती है । वैद्य लोग इसे असाध्य मानते हैं ।

६. दंड व्यूह का एक भेद । सैनिकों की दो दो पंक्तियों में स्थिति । (कौटिल्य अर्थशास्त्र) । ८. कुंडल । बाला (को०) । ९. कटिबंध । मेखला । कमरपेटी (को०) । १०. प्राकार । चहारदीवारी (को०) । ११. शाखा । डाली (को०) । १२. शरीर की गोल हड्डियाँ । १३. प्राचुर्य । विविधता । आधिक्य (को०) ।

वलयित—वि० [सं०] १, वेष्ठित । परिवृत्त । घेरा हुआ । २. चक्कर खाता हुआ (को०) । ३. गोल मुड़ा हुआ (को०) ।

वलयिता—वि० [सं० वलयितृ] वेष्ठित करनेवाला । घेरनेवाला [को०] ।

वलयी—वि० [सं० वलयिन्] १. वलय या कंकण पहननेवाला । २. आवेष्ठित । घिरा हुआ [को०] ।

वलवंडⓅ—वि० [सं० वलवन्त] दे० 'वरिवंड' । उ०—अर्पसिंह अयनैत इक खल खंडन वलवंड ।—सुजान०, पृ० ५ ।

वलवला—संज्ञा पुं० [अ०] उमंग । आवेश ।

वलसूदन—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र ।

वलहंता—संज्ञा पुं० [सं० वलहन्तृ] इंद्र ।

वलाक—संज्ञा पुं० [सं०] वगला । वक [को०] ।

वलाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वगला । दे० 'बलाका' ।

वलाकी—वि० [सं० वलाकिन्] दे० 'बलाकी' ।

वलाट—संज्ञा पुं० [सं०] मूँग ।

वलायत—संज्ञा पुं० [अ०] १. विलायत । इंग्लैंड । २. वली होना । संरक्षक होना (को०) ।

वलासक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कोकिल । २. मेढक । भेक [को०] ।

वलाहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ । वादल । २. पर्वत । ३. एक दैत्य का नाम । ४. साँपों की एक जाति जो दर्वीकर के अंतर्गत मानी जाती है । ५. मुस्तक । मोथा । ६. श्रीकृष्ण के रथ के एक घोड़े का नाम । ७. एक नद का नाम । ८. कुशद्वीप के एक पर्वत का नाम । दे० 'बलाहक' ।

वलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रेखा । लकीर । २. चंदन आदि से वनाई हुई रेखा । ३. सिकुड़न के कारण पड़ी हुई लकीर । झुर्री । ४. पेट के दोनों ओर पेटी के सिकुड़ने से पड़ी हुई रेखा । वल । जैसे,—त्रिवली । ५. देवता को चढ़ाने की वस्तु । ६. राजकर । ७. एक दैत्य जो प्रह्लाद का पौत्र था और जिसे विष्णु ने वामन अवतार लेकर छला था । विशेष—दे० 'बलि' । ८. कौटिल्य कथित एक प्रकार का धार्मिक कर । धर्मकार्य के लिये लगाया हुआ कर । ९, श्रेणी । पंक्ति । १०. ववासीर का मस्सा । ११. छाजन की ओलती । १२. गंधक । १३ एक प्रकार का वाजा ।

वलिक—संज्ञा पुं० [सं०] घर की छत या छाजन की ढाल का अंत जहाँ से पानी गिरता है । ओलती ।

वलित^1— वि० [सं०] १. बल खाया हुआ । लचका हुआ । २. झुका हुआ । मोड़ा हुआ । ३. परिवृत्त । आवेष्ठित । घेरा हुआ । ४. जिसमें झुर्रियाँ पड़ी हों । जो जगह जगह से सिकुड़ा हो । ५. लिपटा हुआ । लगा हुआ । उ०—उरज मलय शैल शील सम सुनि देखि अलक वलित व्याल आशा कर आए हैं ।—केशव (शब्द०) । ६. आच्छादित । ढका हुआ । उ०—कंटक कलित तृन वलित विंध जल ।—केशव (शब्द०) । ७. युक्त । सहित । उ०—श्री रघुबर के इष्ट अश्रु वलित सीतानयन ।—केशव (शब्द०) ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग 'कलित' आदि के समान काव्य की भाषा में बहुत अधिक होता है ।

वलित^2—संज्ञा पुं० १. काली मिर्च । २. नृत्य में हाथ मोड़ने की एक मुद्रा ।

वलितक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का आभूषण । एक गहना [को०] ।

वलिन, वलिभ—वि० [सं०] झुर्रीदार । सिकुड़नवाला [को०] ।

वलिमान्—वि० [सं० वलिमत्] दे० वलि युक्त । 'वलिन ।'

वलिमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. वानर । २. गरम दूध में मट्ठा मिलाने से उत्पन्न छठा विकार ।

वलिर—वि० [सं०] ऐंचाताना [को०] ।

वलिस—संज्ञा पुं० [सं०] वडिश । कँटिया । वंसी [को०] ।

वलिशि, वलिशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वलिश' [को०] ।

वली^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. झुर्री । शिकन । २. अवली । श्रेणी । ३. रेखा । लकीर । ४. चंदन आदि से वनाई हुई लकीर । ५. पेट के दोनों ओर पेटी के सुकड़ने से पड़ी हुई लकीर । जैसे,—त्रिवली । उ०—यह रोग गुदा की तीन वली के भीतर होय है ।—माधव०, पृ० ५३ ।

वली^{2} - संज्ञा पुं० [अ०] १. मालिक । स्वामी । उ०—बेवहा मेरे सिर पर सदा वली अल्लाह मदद वेवहा की, दोहाई दरिया साहब की, दोहाई ।—संत० दरिया, पृ० ३५ । २. शासक । हाकिम । अधिपति ।

यौ०—वलीअहद ।

३. साधु । फकीर । उ०—करम उनका मदद जब तें न होवे । वली हरगिज विलायत कूँ न पावे ।—दक्खिनी०, पृ० ११४ ।

यौ०—वली खंगर = साधू होने का झूठा दावा रखनेवाला । धर्मध्वजी साधु ।

४. [स्त्री० वलीया] उत्तराधिकारी । वारिस (को०) । ५. मित्र । दोस्त । सहायक (को०) ।

वलीअहद—संज्ञा पुं० [अ०] युवराज । टीका । टिकैत ।

वलीक—संज्ञा पुं० [सं०] १. घर की छत या छाजन की ओलती । २. सरकंडा ।

वलीभृत्—वि० [सं०] घुँघराला । मुड़ा हुआ । वलियुक्त [को०] ।

वलीमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. वानर । २. दे० 'वलिमुख' [को०] ।

वलीवदन, वलीवक्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वानर । कपि [को०] ।

वलीवर्द—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभ । वैल [को०] ।

वलूक—संज्ञा पुं० [सं० [१. पद्ममूल । भिस्सा । भसींड । कमल की जड़ । २. एक प्रकार का पक्षी ।

वलूल—वि० [सं०] शक्तिमान् । बली [को०] ।

वले, वलेक—अव्य० [फ़ा० वलेकिन का संक्षिप्त रूप] लेकिन । मगर उ०—नुमाइश में गरचे मुठी भर हूँ मैं । वले इल्म के फन में बेहतर हूँ मैं ।—दक्खनी०, पृ० ७९ ।

वलेकिन—अव्य० [फ़ा०] किंतु । परंतु । मगर [को०] ।

वल्क^1—संज्ञा पुं० [सं०√वल्क् (=भाषण, कथन)] वक्ता। वावदूक [को०]।

वल्क^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. पेड़ों के धड़ और कांड पर का आवरण। वल्कल। छाल। २. मछली के ऊपर की छाल। चोई। शल्क (को०)। ३. खंड। भाग (को०)। ६. एक प्रकार का वस्त्र (को०)। ५. पट्टिका लोध्र। पठानी लोध (को०)।

यौ०—वल्कतरु। वल्कद्रुम। वल्कपत्र। वल्कफल। वल्कलोध्र। वल्कवासा = वल्कल या छाल का परिधान।

वल्कतरु—संज्ञा पुं० [सं०] सुपारी का वृक्ष।

वल्कद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] भोजपत्र का वृक्ष।

वल्कपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] हिंताल।

वल्कफल—संज्ञा पुं० [सं०] अनार का पेड़ [को०]।

वल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृक्ष की छाल। पेड़ों के धड़ और कांड पर का आवरण।

पर्या०—त्वक्। वल्क। चोच। चोलक। शल्क। छल्लक। छल्लि। छल्ली।

२. वृक्ष की छाल का वस्त्र, जिसे अरण्यवासी मुनि और तपस्वी पहना करते थे उ०—वल्कल की चोली हँस हँसकर ढीली करती थी आली।—शकुं०, पृ० ५। ३. ऋग्वेद की वाष्कल नामक शाखा। ४. एक प्रकार की लोध (को०)। ५. एक दैत्य (को०)।

यौ०—वल्कलसंवीत = वृक्ष की छाल का परिधान धारण करनेवाला।

वल्कला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सफेद रंग का एक प्रकार का पत्थर जिसका गुण शीतल और शांतिकारक माना जाता है। शिलावल्का। २. तेजबल।

वल्कली—वि० [सं० वल्कलिन्] वल्कल या पेड़ की छाल पहननेवाला। वल्कलधारी।

वल्कलोध्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की लोध। पठानी लोध।

वल्कवान्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वल्कवत्] वह जिसमें शल्क या चोई हो, मछली. मीन [को०]।

वल्कवान्^{2}—वि० दे० 'वल्कली' [को०]।

वल्किल—संज्ञा पुं० [सं०] कंटक। काँटा।

वल्कुट—संज्ञा पुं० [सं०] छाल। वल्कल [को०]।

वल्गक वि० [सं०] उछलनेवाला। नाचने कूदनेवाला [को०]।

वल्गन—संज्ञा पुं० [सं०] १. घोड़े का कूदते या उछलते हुए चलना। दुलकी। २. बहुत सी इधर उधर की बातें कहना। बहुत बकना।

वल्गर—वि० [अं०] ग्राम्य। भोंडा। अशिष्ट। उ०—वल्गर शब्द ही इस आशय को व्यक्त कर सकता है।—रंगभूमि, भा० २, पृ० ५००।

वल्गा—संज्ञा स्त्री० [सं०] लगाम। बाग।

वल्गित^1—वि० [सं०] १. घूमता या नाचता हुआ। नचता हुआ। उ०—अपलक था आकाश चपल वल्गित गति लक्ष्मी।—साकेत, पृ० ४०३। २. उछलता कूदता हुआ।

वल्गित^2—संज्ञा पुं० १. डींग। बढ़ा चढ़ा कर की गई बात। २. घोड़े की एक चाल। प्लुत गति [को०]।

वल्गु^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. छाग। बकरा। २. बौद्धों के बोधिद्रुम के चार अधिष्ठाता देवताओं में से एक।

वल्गु^{2}—वि० १. सुंदर। खूबसूरत। २. मीठा। मधुर (को०)। ३. अमूल्य। बहुमूल्य (को०)।

वल्गु^{3}—क्रि० वि० सुंदरता से। सुस्पष्टतापूर्वक [को०]।

वल्गुक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंदन। २. विपिन। बन। ३. पण। बाजी। ४ सौदा। ५. मूल्य (को०)।

वल्गुक^2—वि० रुचिर। सुंदर।

वल्गुजंघ—संज्ञा पुं० [सं० वल्गुजङ्घ] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

वल्गुज—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वल्गुजा] छाग। बकरा।

वल्गुदंतीसुत—संज्ञा पुं० [सं० वल्गुदन्तीसुत] इंद्र।

वल्गुनाद——वि० [सं०] मधुर कूजन या गान करनेवाला [को०]।

वल्गुपत्र संज्ञा पुं० [सं०] बनमूँग।

वल्गुपोदिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लहसुआ नाम का साग। २. एक प्रकार की लता।

वल्गुल—संज्ञा पुं० [सं०] चमगादड़। गादुर।

वल्गुला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बकुची। २. चमगादड़।

वल्गुलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कत्थई रंग का पतंग जाति का कीड़ा जिसे 'तैलपायी' भी कहते हैं। चपड़ा। २. मंजूषा। झावा। पिटारा।

वल्गुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चमगादड़। गादुर। २. मंजूषा। झावा। पिटारा।

वल्द—संज्ञा पुं० [अ०] औरस बेटा। पुत्र।

विशेष—किसी मनुष्य के कुल के परिचय के लिये उसके नाम के आगे इस शब्द का व्यवहार करके उसके पिता का नाम रखा जाता है। जैसे,—'गोकुल वल्द बलदेव' अर्थात् 'गोकुल, बेटा बलदेव का'। दस्तावेजों और सरकारी कागजों आदि में, जिनकी भाषा उर्दू होती है, इस शब्द का प्रयोग अधिक होता है।

वल्दियत—संज्ञा स्त्री० [अ०] पिता के नाम का परिचय। बाप के नाम का पता। जैसे,—अपनी वल्दियत और सकूनत लिखाओ।

वल्मन—संज्ञा पुं० [सं०] १. आहार। भोजन। २. खाना। भोजन करना [को०]।

वल्मिक, वल्मिकि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वल्मीक' [को०]।

वल्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दीमक। चींटी [को०]।

यौ०—वल्मीकूट।

वल्मीक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दीमकों का लगाया हुआ मिट्टी का ढेर। बाँबी। बिमौट।

यौ०—वल्मीकभौम, वल्मीकराशि, वल्मीकवपा = बाँबी। बिमौट। वल्मीकशीर्ष। वल्मीक संभव।

२. वाल्मीकि मुनि। ३. वह मेघ जिसपर सूर्य की किरणें पड़ती हों। ४. एक प्रकार का रोग।

विशेष—इस रोग में त्रिदोष के कारण गले, कंधे, काँख, हाथ, पैर और संधि स्थानों (जोड़ों) में सूजन हो जाती है, जो क्रमशः गाँठ की तरह कड़ी हो जाती है। इसमें सूई चुभने की सी पीड़ा होती है और पकने पर अनेक छेद हो जाते हैं। यदि आरंभ में ही इसकी चिकित्सा न की जाय, तो यह रोग असाध्य हो जाता है।

वल्मीकशीर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] स्रोतांजन। लाल सुरमा।

वल्मीकसंभवा—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्मीकसम्भवा] एक प्रकार की ककड़ी [को०]।

वल्मीकाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] रामगिरि पर्वत का एक शृंग [को०]।

वल्मीकूट—संज्ञा पुं० [सं०] बिमौट [को०]।

वल्ल—संज्ञा पुं० [सं०] १. लीलावती के अनुसार एक मान जो तीन गुंजा या रत्ती के बराबर तौल में होता है।

विशेष—वैद्यक में दो गुंजा का एक 'वल्ल' माना गया है और राजनिघंटु सार्ध एक घुँघची का ही वल्ल मानता है।

२. खलिहान में भूसा अलग करना। बरसाना। ओसाना। ३. निषेध। ४. आवरण। ५. सलई का पेड़। ६. बौंरा। ७. एक माशा चाँदी (को०)। ८. एक किस्म का गेहूँ (को०)।

वल्लक—संज्ञा पुं० [सं०] १. समुद्र में रहनेवाला एक प्रकार का जंतु। २. चिड़िया। पक्षी (को०)।

वल्लकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वीणा। उ०—वही वल्लकी में लिए गोद में, उसे छेड़ती थी महामोद में।—साकेत, पृ० ३०४। २. सलई का वृक्ष।

वल्लणहार—वि० [सं० √वल् या वल्ल् (= गमन) + हिं० हार] गमनशील। चलनेवाला। चलायमान। उ०—सज्जण वल्ले, गुण रहे, गुण भी वल्लणहार। सूकण लागी वेलड़ी, गया ज सींचणहार।—ढोला०, दू० ३७४।

वल्लभ^1—वि० [सं०] १. अत्यंत प्रिय। प्रियतम। प्यारा। २. सर्व श्रेष्ठ। सर्वप्रधान (को०)।

वल्लभ^2—संज्ञा पुं० १. अत्यंत प्यारा व्यक्ति। प्रिय मित्र। नायक। २. पति। स्वामी। जैसे,—राधावल्लभ। ३. अध्यक्ष। मालिक। ४. सुंदर लक्षणों से युक्त घोड़ा। ५. एक प्रकार की सेम। ६. वैष्णव संप्रदाय के प्रवर्तक एक प्रसिद्ध आचार्य जिनका संप्रदाय वल्लभ संप्रदाय कहलाता है।

विशेष—इनके माता पिता का पता नहीं। लक्ष्मण भट्ट नामक एक दाक्षिणी ब्राह्मण ने चुनारगढ़ के पास एक बालक पड़ा पाया; और उसे अपने घर लाकर पुत्र के समान पाला। फिर वही बालक प्रसिद्ध वल्लभाचार्य हुआ। जबतक लक्ष्मण भट्ट जीते रहे, तबतक वल्लभ उन्हीं के पास अध्ययन करते थे। उनके मरने पर वे विष्णुस्वामी के मंदिर में जाकर शिष्य हुए और काशी में आकर संन्यास लिया। संन्यास छोड़कर ये फिर गृहस्थ हो गए थे। इनके कई पुत्र हुए, जो गद्दियों के मालिक गोस्वामी हुए। इन्होंने राधाकृष्ण की बड़ी आडंबरपूर्ण उपासना चलाई और अपना वेदांत संबंधी एक स्वतंत्र सिद्धांत भी स्थापित किया जो 'विशुद्धाद्वैतवाद' के नाम से प्रसिद्ध है। इस कारण ये वेदांत के चार मुख्य आचार्यों में माने जाते हैं। इनका जन्म सन् १४७९ ई० और मृत्यु १५३१ ई० में हुई। सूरदास आदि अष्टछाप के कवि इन्हीं के शिष्य थे।

वल्लभपाल, वल्लभपालक—संज्ञा पुं० [सं०] साईस। अश्वरक्षक [को०]।

वल्लभमत—संज्ञा पुं० [सं०] विशुद्धाद्वैतवाद। उ०—वल्लभाचार्य के द्वितीय पुत्र विट्ठलनाथ ने 'वल्लभ मत' के आठ प्रधान भक्त कवियों को लेकर 'अष्टछाप' की स्थापना की।—अकबरी०, पृ० ५।

वल्लभा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रिय स्त्री। प्रिय पत्नी। प्यारी जोरू।

वल्लभा^{2}—वि० स्त्री० प्यारी। प्रिया।

वल्लभाचार्य—संज्ञा पुं० [सं०] वैष्णव मत के एक प्रसिद्ध आचार्य। विशेष दे० 'वल्लभ'—६। उ०—चैतन्य महाप्रभु एवं वल्लभाचार्य द्वारा कृष्णभक्ति को प्रश्रय मिला।—अकबरी०, पृ० ५।

वल्लभायित—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रतिबंध [को०]।

वल्लभी—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वलभी'। २. गोपिका। गोरी (को०)।

वल्लर—संज्ञा पुं० [सं०] १. लता। २. निकुंज। ३. वन। ४. कृष्णागुरु। अगर। ५. मंजरी। दे० 'वल्लुर'।

वल्लरि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वल्लरी'।

वल्लरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वल्ली। लता। २. मंजरी। ३. मेथी। ४. वच। ५. एक प्रकार का बाजा।

वल्लव—संज्ञा पुं० [सं०] १. गोप। उ०—छीत स्वामी सकल जीव उद्धरन हित प्रगट वल्लव सदन दनुज हारी।—छीत०, पृ० १। २. सुपकार। सुआर। रसोइया। ३. भीम का एक नाम। दे० 'बल्लभ' (को०)।

वल्लवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोपी। अहीरिन [को०]।

वल्लहⓟ—संज्ञा पुं० [सं० वल्लभ, प्रा० वल्लह] दे० 'वल्लभ'। उ०—सखिए सज्जण वल्लहा, जइ अणदिट्ठा तोइ। खिण खिण अतर संभरइ, नहीं विसारइ सोइ।—ढोला०, दू० २३।

वल्लाह—अव्य० [अ०] ईश्वर की शपथ। सचमुच। उ०—इन नए नखरों ने तो वल्लाह बस बेतरह आफत मचा दिया।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २४।

वल्लि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लता। २. पृथिवी [को०]।

वल्लिकंटकारिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्लिकण्टकारिका] अग्निदमनी। शोला।

वल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लता । २. वेला । ३. पोई नाम की लता जिसकी पत्तियों का साग बनाकर खाया जाता है ।

वल्लिकाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] मूँगा [को०] ।

वल्लिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वल्लकी' [को०] ।

वल्लिज—संज्ञा पुं० [सं०] मरिच । मिर्च ।

वल्लिदूर्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्वेत दूर्वा । सफेद दूब ।

वल्लिनो—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वल्लिदूर्वा' [को०] ।

वल्लिपापाणसंभव—संज्ञा पुं० [सं० वल्लिपाषाणसम्भव] मूँगा [को०]।

वल्लिय(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्ली] लता । उ०—बिना वृक्ष वल्लिय आरोहति ।—प० रासो०, पृ० ६३ ।

वल्लिशूरण, वल्लिसरण—संज्ञा पुं० [सं०] अत्यम्लपर्णी लता । रामचना । रपटुआ ।

वल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लता । २. केवटी मोथा । कैवर्तिका । ३. अग्निदमनी । शोला । ४. काली अपराजिता । ५. चव्य । चाव (को०) । ७. अजमोदा ।

वल्लीकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] कानों का वैरूप्य । श्रवणेंद्रिय की विरूपता [को०] ।

वल्लीगड—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली [को०] ।

वल्लीज—संज्ञा पुं० [सं०] मिर्च ।

वल्लीपद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वस्त्र [को०] ।

वल्लीवदरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की बेर [को०] ।

वल्लीवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] शाल वृक्ष ।

वल्लुर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुंज । २. मंजरी । फूलों का गुच्छा ३. क्षेत्र । ४. निर्जन स्थान । सूखी जगह ।

वल्लूर—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूप में सुखाया हुआ मांस । २. शूकर का मांस । ३. ऊषर । ऊसर । रेगिस्तान । ४. जंगल । ५. वीरान । उजाड़ । ६. बिना जोती हुई भूमि । परती (को०) । ७. कुंज । लतामंडप (को०) । ९. मंजरी (को०) । १०, निर्जल भूमि (को०) ।

वल्लूरक—संज्ञा पुं० [सं०] कान की कुरूपता । वल्लीकर्ण । [को०] ।

वल्ल्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] धात्री वृक्ष । आँवला [को०] ।

वल्वग—संज्ञा पुं० [सं०] आँवला ।

वल्वज—संज्ञा पुं० [सं०] ओखली ।

वल्वजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का तृण या घास ।

पर्या०—दृढ़पत्री । तृणेक्षु । दृढ़क्षुरा । मौंजीपत्री ।

विशेष—वैद्यक में यह शीतल, मधुर तथा पित्त, दाह और तृषा को दूर करनेवाली कही गई है ।

वल्वल—संज्ञा पुं० [सं०] एक दैत्य जिसे बलराम जी ने मारा था । इल्वल । उ०—राम दिन कइक ता ठौर औरहु रहे, आइ वल्वल तहाँ दियो दिखाई । रुधिर अरु मांस की लग्यो वर्षा करन, ऋषिसकल देखि कै गए डराई ।—सूर (शब्द०) ।

वल्हिक, वल्हीक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बल्हीक' [को०] ।

वव—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार ग्यारह करणों में एक करण, जिसमें जन्म लेनेवाले मनुष्य का बलवान्, धीर, कृती, और विचक्षण होना माना जाता है ।

ववज†—संज्ञा पुं० [सं० व्यपगम या देशज] विघ्न । बाधा । उ०—संदेसाँहि ववज पड़चो ।—वी० रासो, पृ० ६७ ।

ववणी†—संज्ञा स्त्री० [देशी] कपास ।—देशी०, पृ० २८४ ।

ववहार—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्यवहार' ।

ववना†—क्रि० स० [प्रा० √वव] बोना ।

वशंकर—वि० [सं० वशङ्कर] वश या काबू में करनेवाला [को०] ।

वशंकृत—वि० [सं० वशङ्कृत] वशीभूत [को०] ।

वशंगत—वि० [सं० वशङ्गत] वशवर्ती [को०] ।

वशंवद—वि० [सं०] १. वशीभूत । वशवर्ती । २. आज्ञाकारी । दास ।

वश^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. इच्छा । चाह । २. एक व्यक्ति पर दूसरे का ऐसा प्रभाव कि दूसरा उसके साथ जो चाहे कर सके, या उससे जो चाहे करा सके । काबू । इख्तियार । अधिकार । जैसे,—(क) इस समय वह तुम्हारे वश में है; जो चाहो करा लो । (ख) मैं उसके वश में हूँ; जैसा वह कहेगा, वैसा करूँगा । (ग) उसपर मेरा कोई वश नहीं है ।

मुहा०—**(किसी का किसी के) वश में होना** = (१) अधिकार में होना । काबू में होना । कब्जे में होना । अधीन होना । (२) कहे में होना । आज्ञानुवर्ती होना । दबाव मानना । **किसी पर वश होना** = किसी पर अधिकार होना । किसी पर ऐसा प्रभाव होना कि उसे इच्छानुकूल चलाया जा सके । जैसे,—उस लड़के पर हमारा कोई वश नहीं है । वश का = जिसपर अधिकार हो । जो इच्छानुसार चलाया जा सके । अधीन । जैसे,—अब वह सयाना हुआ; हमारे वश का नहीं है ।

३. किसी वस्तु या बात को अपने अनुकूल घटित करने का सामर्थ्य । शक्ति की पहुँच । काबू । जैसे,—(क) जो अपने वश की बात नहीं उसके लिये शोक क्या ? । (ख) हार जीत अपने वश की बात नहीं ।

मुहा०—वश का = इच्छा के अधीन । वश चलना = शक्ति काम करना । कुछ करने का सामर्थ्य होना । काबू चलना । जैसे,—यदि मेरा वश चलता, तो मैं उसे निकाल देता ।

४. अधीन करने का भाव । अधिकार । कब्जा । प्रभुत्व । उ०—हरि कछु ऐसो टोना जानत । सबके मन अपने वश आनत ।—सूर (शब्द०) । ५. जन्म । ६. वेश्याओं के रहने का स्थान । चकला । ७. आर्यों का एक समूह । उ०—मध्यदेश में कुरुओं और पंचालों के अलावा वश और उशीनर भी थे ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७७ ।

वश^2—वि० १. अधीन । २. आज्ञाकारी । ३. मुग्ध [को०] ।

वश^3—प्रत्य० [फा०] समान । तुल्य ।

वशाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] आज्ञाकारिणी पत्नी [को०] ।

वशाकारक—वि० [सं०] वश या अधिकार में करनेवाला। वशीभूत कराने योग्य [को०]।

वशक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] वश में लाने की क्रिया। वशीकरण प्रयोग [को०]।

वशग—वि० संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वशवर्ती' [को०]।

वशगा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आज्ञाकारिणी स्त्री। वशका [को०]।

वशन—संज्ञा पुं० [सं०] इच्छा या आकांक्षा करना। चाहना। अभिलाषा करना [को०]।

वशवर्ती^{1}—वि० [सं० वशवर्तिन्] जो दूसरे के वश में रहे। जो दूसरे के आज्ञानुसार चलता हो। अधीन। तावे। उ०—उसके संपादक आग्रह और हठ के वशवर्ती हो अपनी मर्यादा को सर्वथा भूल गए हैं।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २८५।

वशवर्ती^{2}—संज्ञा पुं० सेवक। चाकर। दास [को०]।

वशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वंध्या स्त्री। बाँझ। २. नारी। स्त्री। ३. पत्नी। ४. गाय। ५. हथिनी। ६. वंध्या गाय। ठाँठ। ७. पति की बहन। ननद। ८. कन्या। बेटी। पुत्री (को०)। ९. वेश्या। वारांगना (को०)।

वशाकु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की चिड़िया।

वशाढ्यक—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुमार. सूँस।

वशानुग^1—संज्ञा पुं० [सं०] आज्ञाकारी सेवक। अधीन दास।

वशानुग^2—वि० वशीभूत।

वशापायी—संज्ञा पुं० [सं० वशापायिन्] कुत्ता। श्वान [को०]।

वशालोभ—संज्ञा पुं० [सं०] हथिनी के द्वारा हाथी को पकड़ने का ढंग या तरीका [को०]।

वशि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वश में करना। संमोहित करना [को०]।

वशिक—वि० [सं०] शून्य। खाली।

वशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अगरु। अगर की लकड़ी।

वशिता^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अधीनता। तावेदारी। २. मोहने की क्रिया या भाव। मोहन। ३. दे० 'वशित्व' (को०)।

वशिता^{2}—वि० [सं० वशितृ] स्वतंत्र। २. संयमी [को०]।

वशित्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. वशता। अधीनता। २. योग के अणिमादि आठ प्रकार के ऐश्वर्यों में से एक। कहते हैं कि इस सिद्धि से साधक सबको अपने वश में कर लेता है। ३. आत्मसंयम (को०)।

वशिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शमी का पेड़। २. एक वनस्पति। बाँदा (को०)। ३. पत्नी। स्त्री (को०)।

वशिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० वशिमन्] योग की आठ सिद्धियों में से एक वशित्व। सिद्धि।

वशिर—संज्ञा पुं० [सं०] १. समुद्रलवण। समुद्री नमक। २. एक प्रकार का वृक्ष। ३. एक प्रकार की लाल मिर्च। मिर्चा। ४. चव्य (को०)। ५. अपामार्ग (को०)। ६. राजपिप्पली (को०)।

वशिष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वसिष्ठ'।

वशी^{1}—वि० [सं० वशिन्][वि० स्त्री० वशिनी] १. अपने को वश में रखनेवाला। २. वश में किया हुआ। काबू में लाया हुआ। अधीन। ३. शक्तिशाली (को०)।

वशी^{2}—संज्ञा पुं० १. ऋषि। २. शासक। राजा [को०]।

वशीकर—वि० [सं०] वश में करनेवाला। अधीन बनानेवाला [को०]।

वशीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वशीकृत] १. वश में लाने की क्रिया। नियमन। निग्रह। २. मणि, मंत्र या औषध आदि के द्वारा किसी को अपने वश में करने का प्रयोग। अधीन करना।

विशेष—तंत्र में चार प्रकार के प्रयोग कहे जाते हैं—मारण, मोहन, वशीकरण और उच्चाटण। अथर्ववेद में मंत्र सिद्ध करके मणि और औषध द्वारा वश में करने का उल्लेख है।

वशीकरणीय—वि० [सं०] वश में किए जाने योग्य। अपना लेने लायक। उ०—तुम वशीकरणीय, प्रियतम, तुम रुचिर वरणीय साजन। लाजनत तव नयन में अब विरति के रंग राग ये क्यों ?—क्वासि, पृ० ४३।

वशीकार—संज्ञा पुं० [सं०] वश में करना।

वशीकृत—वि० [सं०] १. किसी प्रकार वश में किया हुआ। २. मंत्र द्वारा वश में किया हुआ। मंत्रमुग्ध। ३. मोहित। मुग्ध।

वशीभूत—वि० [सं०] १. वश में आया हुआ। अधीन। तावे। २. दूसरे की इच्छा के अधीन। ३. शक्तिशाली। शक्तिपूर्ण (को०)।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

वशीर—संज्ञा पुं० [सं०] गजपिप्पली [को०]।

वशेंद्रिय—वि० [सं० वशेन्द्रिय] इंद्रियों को अधीन रखनेवाला। जितेंद्रिय [को०]।

वश्य^1—वि० [सं०] १. वश में आनेवाला। तावे होनेवाला। २. किसी की इच्छा के अधीन। दूसरे की आज्ञा या कहने में रहनेवाला। वश में रहनेवाला। उ०—तुम्हारा धन है मान अवश्य; किंतु हूँ मैं तो यों ही वश्य।—साकेत, पृ० ४४।

वश्य^2—संज्ञा पुं० १. दास। सेवक। २. मातहत। ३. मार्कंडेयपुराण के अनुसार अग्नीध्र का पाँचवाँ पुत्र। ४. लवग। लौंग (को०)।

वश्यक—वि० [सं०] आज्ञापालक। वश में रहनेवाला [को०]।

वश्यका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वश्या। आज्ञाकारिणी स्त्री [को०]।

वश्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वश में होने की अवस्था या भाव। अधीनता। (राष्ट्र या राजा)।

वश्यमित्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह (राष्ट्र या राजा) मित्र जिसका बहुत प्रकार से उपयोग किया जा सके। यह तीन प्रकार का होता है।—(१) एकतोभोगी, (२) उभयतोभोगी और (३) सर्वतोभोगी।

वश्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लगाम। २. नीला पराजिता। ३. गोरोचन। ४. आज्ञाकारिणी या वशीभूता स्त्री (को०)।

वषट्—अव्य० [सं०] एक शब्द जिसका उच्चारण अग्नि में आहुति देते समय यज्ञों में होता है। अंगन्यास और करन्यास में शिखा और मध्यमा के साथ इसका व्यवहार होता है।

वषट्कर्ता—संज्ञा पुं० [सं० वषट्कर्तृ] वषट् का या देवाहुति के मंत्रों का उच्चारण करनेवाला होता [को०]।

वषट्कार—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवताओं के उद्देश्य से किया हुआ यज्ञ। होम। होत्र। २. वेदोक्त तैंतीस देवताओं में से एक।

वषट्कृत—वि० [सं०] देवताओं के निमित्त अग्नि में डाला हुआ। होम किया हुआ। हुत।

वषट्कृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] होम।

वष्कय—संज्ञा पुं० [सं०] एक वर्ष का बछड़ा [को०]।

वष्कयणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वष्कयिणी'।

वष्कयिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बकेना गाय।

वसंत—संज्ञा पुं० [सं० वसन्त] [वि० वासंत, वासंतक, वासतिक, वसंती] १. वर्ष की छह ऋतुओं में से प्रधान और प्रथम ऋतु जिसके अंतर्गत चैत और बैसाख के महीने माने गए हैं। नई पत्ती लगने और बहुत से फूल फूलने की सुंदर ऋतु। बहार का मौसम।

विशेष—प्राचीन वैदिक काल में यह ऋतु चैत और बैसाख में ही पड़ती थी; पर क्रमशः अयन खिसकने से आजकल प्रकृति में कुछ अंतर दिखाई पड़ता है। इसी से पीछे के कुछ ग्रंथों में फागुन और चैत के महीने वसंत ऋतु के कहे गए हैं। पर काव्य आदि में परंपरानुसार अबतक चैत और बैसाख ही इस ऋतु के महीने माने जाते हैं। वसंत ऋतु के ये लक्षण कहे गए हैं—पेड़ों में फूल लगना और नई पत्तियाँ आना, शीतल, मंद और सुगंधयुक्त वायु चलना, सायंकाल अत्यंत मनोरम होना और स्त्री पुरुषों का उमंग से भरना, आदि। इस ऋतु में प्राचीन काल में वसंतोत्सव और मदनपूजा होती थी। आजकल होली का उत्सव उसी की परंपरा है। पुराणों में इस ऋतु का अधिष्ठाता देवता कामदेव का सहचर कहा गया है।

२. अतिसार रोग। ३. शीतला रोग। विस्फोटक। चेचक। ४. मसूरिका रोग। ५. छह रागों में दूसरा राग। (संगीत)।

विशेष—इस राग की उत्पत्ति पंचवक्त्र शिव के पाँचवें मुख से कही गई है। इसकी छह रागिनियाँ ये हैं—देशी, देवगिरी, वैराटी, ताड़िका, ललिता और हिंडोला। कल्लिनाथ के अनुसार छह रागिनियाँ ये हैं—अंधूली, गमकी, पटमंजरी, गौड़केरी, धामकली और देवशाखा। संगीतदामोदर का मत है कि श्रीपंचमी से हरिशयनी एकादशी तक वसंत राग गा सकते हैं। पर संगीतदर्पण के अनुसार इसे वसंत ऋतु में ही गाना चाहिए। इसका सरगम इस प्रकार है—सा, रि, ग, म, प, नि, सा। कुछ लोग इस राग को हिंदोल राग का पुत्र मानते हैं।

६. एक ताल का नाम। (संगीत)। ७. फूलों का गुच्छा। ८. नाटक में विदूषकों की आख्या वा नाम (को०)। ९. एक वृत्त का नाम (को०)।

वसंतक—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तक] १. वसंत ऋतु (को०)। २. श्योनाक। सोनापाढ़ा। टेंटू। अरलू।

वसंतकाल—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तकाल] बहार का मौसम। वसंत ऋतु [को०]।

वसंतकुसुम—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तकुसुम] गोंदनी नाम का वृक्ष। विशेष दे० 'गोंदी' [को०]।

वसंतकुसुमाकर—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तकुसुमाकर] एक उत्तम रसौषध। (वैद्यक)।

वसंतघोष—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तघोष] कोकिल। कोयल [को०]।

वसतघोषी—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तघोषिन्] कोकिल।

वसंतजा—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तजा] १. वासंती या माधवी लता। २. सफेद जुही। ३. वसंतोत्सव।

वसंततिलक—संज्ञा पुं० [सं० वसन्ततिलक] १. एक प्रकार के फूल का नाम। २. एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तगण, भगण, जगण, जगण, और दो गुरु, इस प्रकार कुल चौदह वर्ण होते हैं। जैसे,—लाला ललाम मृदुता अवलोकनीया।

वसंततिलका—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्ततिलका] एक वर्णवृत्त। दे० 'वसंततिलक'।

वसंतदूत—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तदूत] १. आम का वृक्ष। २. कोयल। ३. पंचम राग। ४. चैत्र मास।

वसंतदूती—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्तदूती] १. कोकिला। २. पटोली वृक्ष। पांडरी। पाडर। ३. माधवी लता।

वसंतद्रु—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तद्रु] आम्रवृक्ष [को०]।

वसंतद्रुम—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तद्रुम] आम का वृक्ष [को०]।

वसंतपंचमी—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्तपञ्चमी] माघ महीने की शुक्ल पचमी।

विशेष—इस दिन वसंत और रति सहित कामदेव की पूजा करने का विधान है। वसंत राग के सुनने का महाफल है। इस दिन एकाहार व्रत भी किया जाता है।

वसंतपुष्प—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तपुष्प] १. वसंत ऋतु के पुष्प। २. एक प्रकार का कदंब पुष्प [को०]।

वसतबंधु—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तबन्धु] कामदेव।

वसतभैरवी—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्तभैरवी] एक रागिनी का नाम।

वसंतमहोत्सव—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तमहोत्सव] १. एक उत्सव जो प्राचीन काल में वसंतपंचमी के दूसरे दिन कामदेव और वसंत की पूजा के उपलक्ष्य में मनाया जाता था। २. होलिकोत्सव।

वसंतमारू—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तमारू] संपूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

वसंतमालतीरस—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तमालतीरस] एक प्रसिद्ध रसौषध का नाम [को०]।

वसंतमालिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्तमालिका] एक वर्णवृत्त। एक छंद का नाम [को०]।

वसंतयात्रा—संज्ञा स्त्री० [सं० वसन्तयात्रा] वसंतोत्सव।

वसंतयोध—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तयोध] कामदेव [को०]।

वसंततु—संज्ञा पुं० [सं० वसन्ततुं] ऋतुराज वसंत। वहार का मौसम [को०] ।

वसंतवाक्—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तवाक्] संगीतदामोदर के अनुसार चौदह तालों में से एक।

वसंतव्रत—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तव्रत] कोकिल ।

वसंतसखा—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तसखः] १. कामदेव । मदन । २. मलय पवन ।

वसंतसखा—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तसखा] १. मदन । कामदेव । २. मलयानिल ।

वसंतसहाय—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तसहाय] जिसका सहायक वसंत हो, कामदेव [को०] ।

वसंता—संज्ञा पुं० [हिं० वसंता] हरे रंग की एक सुंदर चिड़िया जिसका कंठ और सिर लाल होता है ।

वसंतार्त—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तार्त्त] विभीतक वृक्ष । वहेड़ा ।

वसंती^{१}—संज्ञा पुं० [हिं० वसंत] एक रंग जो हलका पीला होता है । सरसों के फूल के रंग का । बसती ।

वसंती^{२}—वि० वसती रंग का ।

विशेष—वसंतोत्सव में इस रंग के कपड़े पहने जाते हैं ।

वसंतोत्सव—संज्ञा पुं० [सं० वसन्तोत्सव] १. एक उत्सव, जो प्राचीन काल में वसंत पंचमी के दूसरे दिन होता था ।

विशेष—इसे 'मदनोत्सव' भी कहते थे । इसमें उद्यानों में जाकर लोग वसंत और कामदेव का पूजन करते थे । होली का उत्सव इसी की परंपरा है ।

२. होली का उत्सव ।

वसअत—संज्ञा स्त्री० [अ० वसअ्त] १. विस्तार । फैलाव । २. समाई । अँटने की जगह । ३. चौड़ाई । ४. सामर्थ्य । शक्ति । जैसे—सब काम अपनी वसअत देखकर करना चाहिए ।

वसति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वास । रहना । २. घर । ३. बस्ती । आबादी । ४. जैन साधुओं का मठ । ५. रात । रात्रि । विश्राम काल । ६. शिविर । पड़ाव (को०) ।

वसती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वास । रहना । २. रात । ३. घर । दे० 'वसति' ।

वसत्त(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्तु] दे० 'वस्तु' । उ०—हुंता सज्जण हीयड़े सयणाँ हंदा हत्त । जउ सोहणो साचइ होअइ, सोहणों बड़ी वसत्त ।—ढोला०, दू० ५०६ ।

वसथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. रहने का स्थान । २. वास । घर । ४. पक्षियों का घोंसला [को०] ।

वसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वस्त्र । २. ढकने की वस्तु । आवरण । छादन । ३. घेरा । अवरोध । परिवेष्ठन (को०) ।

यौ०—वसनपर्याय = वस्त्रपरिवर्तन । वस्त्र बदलना । वसनसद्म = तंबू । खेमा । रावटी ।

वसना^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्रियों की कमर का एक आभूषण ।

वसना^{२}—वि० (समास में) १. वस्त्र धारण करनेवाली । जैसे, शुभ्रवसना । २. घिरी हुई । आवेष्टित । जैसे समुद्रवसना । ३. निमग्न । लीन [को०] ।

वसनार्णवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भूमि । पृथिवी ।

वसनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वसना' [को०] ।

वसमा—संज्ञा पुं० [अ० वसमह्] १. नील का पत्ता । २. खिजाब । ३. उबटन । ४. एक प्रकार का छपा कपड़ा जो चाँदी के वर्क लगाकर छापा जाता है ।

वसवस्त—संज्ञा पुं० [अ०] दे० 'वसवास' [को०] ।

वसवास—संज्ञा पुं० [अ०] [वि० वसवासी] १. भ्रम । दुबधा । संदेह । २. भुलावा । बहकावा । प्रलोभन या मोह । उ०—सरगहुँ ते दोउ निकसे नारद के वसवास ।—जायसी (शब्द०) ।

वसबासी—वि० [अ० वसवास] १. विश्वास न करनेवाला । शक्की । संशयात्मा । २. भुलावे मे डालनेवाला । बहकानेवाला ।

वसह(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृषभ, प्रा० वसह] बैल । वसह ।

वसा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मेद । २. चरबी । ३. भेजा । मगज (को०) ।

वसाकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के धूमकेतु जो पश्चिम में उदय होते हैं और जिनका पूँछ का विस्तार उत्तर की ओर होता है । ये देखने में स्निग्ध जान पड़ते हैं और इनके उदय से सुभिक्ष होता है ।

वसाच्छटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मस्तिष्कपिंड । भेजा [को०] ।

वसाढ्य—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुमार । सूंस ।

वसाढ्यक—संज्ञा पु० [सं०] दे० 'वसाढ्य' ।

वसातनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पीला शीशम ।

वसाति^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वसाति नामक जनपद का अधिवासी । उ०—दक्षिणी पश्चिमी पंजाब में अंबष्ठों, क्षत्रियों तथा वसातियों के छोटे छोटे संघ थे ।—प्रा० भा० पृ० २१० । २. इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम । ३. जनमेजय के एक पुत्र का नाम ।

वसाति^{२}—संज्ञा स्त्री० १. उत्तर के एक जनपद का नाम । २. उषा (को०) ।

वसादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पीला शीशम [को०] ।

वसान—वि० [सं०] निवास करनेवाला । रहनेवाला [को०] ।

वसापाथी—संज्ञा पुं० [सं० वसायायिन्] कुत्ता ।

वसापावन—संज्ञा पुं० [सं० वसापावन्] एक प्रकार के वैदिक देवता । पशुभाजा ।

वसाप्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मेह रोग जिसमें मूत्र के साथ चरबी मिलकर निकलती है ।

विशेष—आधुनिक डाक्टरी चिकित्सा में यह बहुमूत्र का भेद है, जिसमें मूत्र के साथ शरीर का सत निकलता है और रोगी बहुत क्षीण हो जाता है ।

वसाप्रमेही—वि० [सं० वसाप्रमेहिन्] चर्बीयुक्त अथवा चर्बी के समान

पेशाब करनेवाला । उ०—वसाप्रमेही वसा (चर्बी) युक्त अथवा वसा के समान मूते !—माधव०, पृ० १८४ ।

वसामूर—संज्ञा पुं० [सं०] एक जनपद का नाम ।

वसामेह—संज्ञा पुं० [सं०] वसाप्रमेह ।

वसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. इच्छा । २. वश । ३. अभिप्राय ।

वसारोह—संज्ञा पुं० [सं०] कुकुरमुत्ता । खुमी ।

वसि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भवन । घर । २. वस्त्र । कपड़ा [को०] ।

वसित^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. निवासस्थान । २. वस्त्र ।

वसित^2—वि० १. बसा हुआ । निवसित । २. पहना हुआ । ३. इकट्ठा किया हुआ [को०] ।

वसितव्य—वि० [सं०] १. धारण के योग्य । पहनने लायक । २. निवास करने या ठहरने के उपयुक्त [को०] ।

वसिता—वि० [सं० वसितृ] १. निवास करनेवाला । २. पहननेवाला [को०] ।

वसिर—संज्ञा पुं० [सं०] १. समुद्रलवण । २. गजपिप्पली । ३. लाल रंग का अपामार्ग । लाल चिचड़ा । ४. जलनीम ।

वसिष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि, जिनका उल्लेख वेदों से लेकर रामायण, महाभारत, पुराणों आदि तक में है ।

विशेष—वेदों में ये मित्र और वरुण के पुत्र कहे गए हैं । यज्ञस्थल में एक बार उर्वशी को देखकर मित्र और वरुण का वीर्यपात हो गया । वह वीर्य एक यज्ञकुंभ में रखा गया । कुंभ से वसिष्ठ और अगस्त्य का जन्म हुआ । 'वृहद्देवता' में लिखा है कि कुंभ के जल में मत्स्य, स्थल में वसिष्ठ और कुंभ में अगस्त्य उत्पन्न हुए थे । ऋग्वेद के अनुसार ये वसिष्ठ गांधार और काबुल की ओर राज्य करनेवाले त्रित्सु वंश के राजा दिवोदास के पौत्र और पिजवन के पुत्र सुदास के पुरोहित थे । सुदास ने इनको बहुत कुछ दान दिया था । एक बार सुदास ने यज्ञ करने के लिये विश्वामित्र को बुलाया, इसपर वसिष्ठ बहुत क्रुद्ध हुए । उन्होंने अपने अन्य यजमानों, भरतों के द्वारा विश्वामित्र को बहुत तंग किया । विश्वामित्र तो चले आए, पर सुदास के पुत्रों ने वसिष्ठ के सौ पुत्रों का नाश कर दिया । फिर वसिष्ठ ने 'एकस्मान्न' इत्यादि ५० मंत्रों द्वारा यज्ञ करके सौदासों का पराभूत किया ।

पुराणों में वसिष्ठ ब्रह्मा के मानसपुत्र कहे गए हैं । राजा निमि और वसिष्ठ के बीच एक बार झगड़ा हुआ । वसिष्ठ ने निमि को और निमि ने वसिष्ठ को शाप दिया । निमि तप करके शरीररहित होकर अमर हुए और उनका वंश विदेह कहलाया । वसिष्ठ ने शरीर को त्यागकर मित्रावरुण के वीर्य से जन्म ग्रहण किया । कामधेनु के लिये वसिष्ठ और विश्वामित्र (जो पहले राजा थे) से बहुत दिनों तक झगड़ा होता रहा । विश्वामित्र के सौ पुत्रों को वसिष्ठ ने केवल हुंकार से जला दिया था । विश्वामित्र अंत में हारकर ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के लिये तप करने लगे । पुराणों में वसिष्ठ को अनेक पत्नियों के नाम मिलते हैं, जिनमें से. एक अरुंधती थी. जो कर्दम की कन्या थी और वसिष्ठ को सबसे प्रिय थी । इनकी एक और स्त्री अक्षमाला नीच जाति की थी । किसी और पत्नी से इन्हें शक्तृ नामक एक पुत्र हुआ था जो गोत्रकार ऋषि हुआ । ऋग्वेद के अनेक मंत्रों के द्रष्टा वसिष्ठ हैं । सप्तम मंडल के द्रष्टा ये ही माने जाते हैं ।

२. सप्तर्षिमंडल का एक तारा जिसके पास का छोटा तारा अरुंधती कहलाता है । ३. मांस । ४. एक स्मृतिकार (को०) ।

वसिष्ठक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वसिष्ठ' [को०] ।

वसिष्ठनिहव, वसिष्ठनिह्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

वसिष्ठपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] एक उपपुराण जिसका उल्लेख देवी भागवत में है । कुछ लोग कहते हैं कि लिंगपुराण ही वसिष्ठ पुराण है ।

वसिष्ठप्राची—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक जनपद का नाम ।

वसिष्ठशफ—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

वसिष्ठसंसर्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का संन्यासी ।

वसिष्ठसंहिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक स्मृति का नाम ।

वसिष्ठसिद्धांत—संज्ञा पुं० [सं० वसिष्ठसिद्धान्त] ज्योतिष का एक सिद्धांत ग्रंथ ।

वसिष्ठांकुश—संज्ञा पुं० [सं० वसिष्ठाङ्कुश] एक साम का नाम ।

वसिष्ठानुपद—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

वसिष्ठापवाद—संज्ञा पुं० [सं०] सरस्वती नदी के किनारे का एक प्राचीन स्थान ।

विशेष—कथा है कि जब वसिष्ठ और विश्वामित्र के बीच घोर युद्ध हुआ था; तब सरस्वती नदी ने वसिष्ठ को विश्वामित्र से बचाने के लिये इसी स्थान पर छिपा लिया था ।

वसिष्ठोपपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] वसिष्ठपुराण नाम का एक उपपुराण [को०] ।

वसी^{1}—पुं० [सं० वसिन्] ऊदबिलाव [को०] ।

वसी^{2}—संज्ञा पुं० [अ०] वह व्यक्ति जिसके नाम वसीयतनामा लिखा गया हो [को०] ।

वसीअ—वि० [अ० वसीअ] विस्तृत । लंबा चौड़ा [को०] ।

वसीअत—संज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'वसीयत' ।

यौ०—वसीअतनामा = वसीयतनामा ।

वसीक—वि० [अ० वसीक़] मजबूत । टिकाऊ । ठोस । दृढ़ [को०] ।

वसीका—संज्ञा पुं० [अ० वसीक़ह्] १. मुसलमानी धर्मशास्त्र के अनुसार वह धन जो विधर्मी या काफिर से नगद रुपए के मुनाफे के तौर पर लिया जाय । २. वह धन जो इस उद्देश्य से सरकारी खजाने में जमा किया जाय कि उसका सूद जमा करनेवाले के संबंधियों को मिला करे अथवा किसी धर्मकार्य, मकान की मरम्मत आदि में लगाया जाय । उ०—आपको पाँच सौ रुपए महीने का वसीका सरकार से मिलता है । —प्रेमघन०, भा० २, पृ० ८४ । ३. ऐसे धन से आया हुआ सूद । वृत्ति । ४. वक्फ का इकरारनामा ।

वसीकादार—संज्ञा पुं० [अ० वसीक़ह् + फा० दार] वसीका पानेवाला । पेंशनयाफ्ता [को०] ।

वसीय—वि० [अ०] १. चारु । सुंदर । मनोहर । २. अंकित । चिह्नित [को०] ।

वसीयत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. वह अंतिम आदेश जो विदेश जानेवाला या मरणासन्न पुरुष इस उद्देश्य से करता है कि मेरी अनुपस्थिति में अमुक काम इस प्रकार किया जाय । २. अपनी संपत्ति के विभाग और प्रवंध आदि के संबंध में की हुई वह व्यवस्था जो मरने के समय कोई मनुष्य लिख जाता है । विल ।

वसीयतनामा—संज्ञा पुं० [अ० वसीयत + फ़ा० नामह] वह लेख जिसके द्वारा कोई मनुष्य यह व्यवस्था करता है कि मेरी संपत्ति का विभाग और प्रबंध मेरे मरने के पीछे किस प्रकार हो । विल ।

वसीरो—वि० [सं० √वस्] बसा या बसाया हुआ । प्रजा । उ०—हुवै वसीरो वाणियो, पातर हुवै खवास ।—बाँकी० ग्रं०, भा० २, पृ० ६२ ।

वसीला—संज्ञा पुं० [अ० वसीलह्] १. संबंध । २. आश्रय । सहायता । उ०—बिना वसीला संत नाम से भेंट न होई ।—पलटू०, पृ० ७ । ३. किसी कार्य की सिद्धि का मार्ग । जरिया । द्वार । जैसे,—(क) किस वसीले से वह यहाँ आया । (ख) नौकरी के लिये जाता हूँ, कोई वसीला निकल ही आवेगा ।

मुहा०—वसीला पैदा करना = (१) किसी कार्य की सिद्धि का मार्ग निकालना । सहारा पैदा करना । (२) आमदनी आदि का रास्ता निकालना । वसीला रखना = (१) संवंध रखना । (२) आसरा रखना ।

वसुंधरा—संज्ञा स्त्री० [सं० वसुन्धरा] १. धरा । पृथ्वी । २. श्वफलक की कन्या जो सांब से व्याही थी । ३. एक देवी का नाम । ४. देश । राज्य (को०) ।

वसुंधराधर—संज्ञा पुं० [सं० वसुन्धराधर] भूधर । पर्वत [को०] ।

वसुंधराधव—संज्ञा पुं० [सं० वसुन्धराधव] भूपति । राजा [को०] ।

वसुंधराभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ [को०] ।

वसु—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवताओं का एक गण जिसके अंतर्गत आठ देवता हैं ।

विशेष—वेदों में वसु शब्द का प्रयोग अग्नि, मरुद्गण, इंद्र, उषा, अश्वी, रुद्र और वायु के लिये मिलता है । वसु को आदित्य भी कहा है । बृहदारण्यक में इस गण में पृथिवी, वायु, अंतरिक्ष, आदित्य, द्यौ, अग्नि, चद्रमा और नक्षत्र माने गए हैं । महाभारत के अनुसार आठ वसु ये हैं—धर, ध्रुव, सोम, विष्णु, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास । श्रीमद्भागवत में ये नाम हैं—द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वास्तु और विभावसु । अग्निपुराण में आप, ध्रुव, सोम, धर, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास वसु कहे गए हैं । भागवत के असुसार दक्ष प्रजापति की कन्या 'वसु' ने, जो धर्म को व्याही थी, वसुओं को उत्पन्न किया ।

देवीभागवत में कथा है कि एक वार वसुओं ने वसिष्ठ की नंदिनी गाय चुरा ली थी; जिससे वसिष्ठ जी ने शाप दिया था कि तुम लोग मनुष्य योनि में जन्म लोगे । उसी शाप के अनुसार वसुओं का जन्म शांतनु की पत्नी गगा के गर्भ से हुआ, जिनमें सात को तो गगा जनमते ही गंगा में फेंक आई, पर अंतिम भीष्म बचा लिए गए । इसी से भीष्म वसु के अवतार माने जाते हैं ।

२. शब्दों द्वारा संख्या सूचित करने की रीति के अनुसार आठ की संख्या । ३. रत्न । ४. धन । ५. वक्र वृक्ष । अगस्त का पेड़ । ६. अग्नि । ७. रश्मि । किरण । ८. जल । ९. सुवर्ण । सोना । १०. योक्त्र । जोत । ११. कुबेर । १२. पीली मूँग । १३. वृक्ष । पेड़ । १४. शिव । १५. सूर्य । १६. विष्णु । १७. मौलसिरी । वकुल । १८. साधु पुरुष । सज्जन । १९. सरोवर । तालाव । २०. राजा नृग के एक पुत्र का नाम । २१. छप्पय के हो सकनेवाले भेदों में से ६९ वाँ भेद । २२. घृत । घी (को०) । २३. वस्तु । पदार्थ (को०) । २४. एक प्रकार का नमक (को०) । २५. रास । लगाम । बागडोर (को०) । २६ रज्जु । रस्सी (को०) । २७. हाथ की कुहनी से लेकर बंधी हुई मुट्ठी तक की लंबाई या दूरी (को०) ।

वसु^{२}—संज्ञा स्त्री० १. दीप्ति । आभा । २. वृद्धौषध । वृद्धि । ३. दक्ष । प्रजापति की एक कन्या जो धर्म को व्याही थी और जिससे द्रोण आदि आठ वसुओं का जन्म हुआ था । ४. अमरावती । इंद्रपुरी (को०) । ५. अलका । कुबेर की नगरी (को०) ।

वसु^{३}—वि० १. जो सबमें वास करता हो । २. जिसमें सबका वास हो । ३. मीठा । मधुर (को०) । ४. सूखा । शुष्क (को०) । ५. धनी । संपन्न । ६. अच्छा । उत्तम ।

वसुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँभर नमक । २. पांशु लवण । रेह । ३. वास्तुक शाक । बथुआ । ४. काला अगर । कृष्णागुरु । ५. क्षार लवण । ६. मदार का वृक्ष । ७. बनहला वृक्ष । बड़ी मौलसिरी । ८. एक प्रकार का ताल (को०) । ९. एक प्रकार का पुष्प (को०) ।

वसुकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक मंत्रद्रष्टा ऋषि ।

वसुकीट—संज्ञा पुं० [सं०] भिखारी [को०] ।

वसुकृत—संज्ञा पुं० [सं०] एक मंत्रद्रष्टा ऋषि ।

वसुकृमि—संज्ञा पुं० [सं०] भिक्षुक । भिखारी [को०] ।

वसुकोदर—संज्ञा पुं० [सं०] तालीशपत्र ।

वसुक्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक मंत्रद्रष्टा ऋषि का नाम ।

विशेष—इस नाम के दो ऋषि हुए हैं । एक इंद्र के गोत्र में उत्पन्न हुए थे, दूसरे वसिष्ठ के गोत्र के थे ।

वसुचरण—संज्ञा पुं० [सं०] डगण के चौथे भेद का नाम जिसके आदि में गुरु और फिर दो लघु होते हैं । (पिंगल) ।

वसुचारुक—संज्ञा पुं० [सं०] सोना ।

वसुच्छिद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] महामेदा ।

वसुद^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुबेर । २. विष्णु ।

वसुद^2—वि० धन देनेवाला [को०] ।

वसुदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्कंदमाताओं में से एक । २. पृथ्वी । ३. माली राक्षस की पत्नी ।

विशेष—यह नर्मदा नाम की गंधर्वों की पुत्री थी । इसके अनल, निल, हर और संपति नामक चार पुत्र थे, जो विभीषण के अमात्य थे ।

वसुदान—संज्ञा पुं० [सं०] १. विदेहराज के एक पुत्र का नाम । २. बृहद्रथ के एक पुत्र का नाम ।

वसुदामा^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वासुदामन्] बृहद्रथ के एक पुत्र का नाम ।

वसुदामा^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्कंदमाताओं में से एक का नाम ।

वसुदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. यदुवंशियों के शूर कुल के एक राजा जो श्रीकृष्ण के पिता थे ।

विशेष—इनके पिता का नाम देवमीढ़ और माता का मारिषा था । इनके जन्म के समय स्वर्ग में दुंदुभि का शब्द सुनाई पड़ा था इससे ये 'आनकदुंदुभी' कहलाते थे । ये अपने पिता के ज्येष्ठ पुत्र थे । इनकी बारह स्त्रियाँ थीं—पौरवी, रोहिणी, मदिरा, धरा, वैशाखी, भद्रा, सुनाम्नी, सहदेवा, शांतिदेवा, सुदेवा, देवरक्षिता और देवकी । इन पत्नियों के अतिरिक्त इनके सुतनु और बड़वा नाम की दो परिचारिकाएँ भी थीं । रोहिणी के गर्भ से बलराम और देवकी के गर्भ से श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था । वसुदेव की बहन कुंती थी, जिससे पांडव उत्पन्न हुए थे ।

२. एक राजा जो पहले वसुभूति का अमात्य था और पीछे उसे मारकर आप राजा हुआ । ३. धनिष्ठा नक्षत्र ।

वसुदेवत—संज्ञा पुं० [सं०] धनिष्ठा नक्षत्र ।

वसुदेव्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. धनिष्ठा नक्षत्र । २. पक्ष की नवमी तिथि ।

वसुदैव—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वसुदैवत' [को०] ।

वसुदैवत—संज्ञा पुं० [सं०] धनिष्ठा नक्षत्र ।

वसुद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] उदुंबर । गूलर ।

वसुधर्मा—संज्ञा पुं० [सं० वसुधर्मन्] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम ।

वसुधार्मिक—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वसुधार्मिका] स्फटिक पत्थर [को०] ।

वसुधा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पृथ्वी । भूतल । २. देवलोक ।

वसुधा^{2}—वि० वसु अर्थात् धन देनेवाला । धनदाता ।

वसुधातल—संज्ञा पुं० [सं०] धरातल । पृथ्वीतल [को०] ।

वसुधाधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पर्वत । २. विष्णु ।

वसुधाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] राजा ।

वसुधान—संज्ञा पुं० [सं०] पृथ्वी ।

वसुधार—संज्ञा पुं० [सं०] मार्कंडेयपुराण के अनुसार एक पर्वत का नाम ।

वसुधारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जैनों की एक देवी का नाम ।

पर्या०—तारा । नीलसरस्वती । महाश्री । स्वाहा । श्री । जया । अनंता । शिवा । भद्रा । शंखिनी । महातारा । त्रिलोचना । तारिणी ।

२. कुबेर की पुरी, अलका । ३. एक तीर्थ का नाम । ४. नांदीमुख श्राद्ध का अंग एक कृत्य, जिसमें राजा वसु के लिये घी की सात धारें दी जाती हैं । पहले दीवार में चंदन से सात चिह्न बनाए जाते हैं । फिर वेदमंत्र पढ़ते हुए धारें दी जाती हैं । ५. एक नदी का नाम । स्वर्गगंगा । मंदाकिनी ।

ववधारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी [को०] ।

ववधार्मिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्फटिक । स्तरबिल्लौर । २. संगमर्मर ।

वसुनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा, जिन्हें चार मुख होने के कारण आठ आँखें हैं [को०] ।

वसुनीत—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा ।

वसुनीथ—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि ।

वसुपति—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण [को०] ।

वसुपाता—संज्ञा पुं० [सं० वसुपातृ] कृष्ण [को०] ।

वसुपाल—संज्ञा पुं० [सं०] राजा [को०] ।

वसुप्रद^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. स्कंद के एक अनुचर का नाम । ३. कुबेर ।

वसुप्रद^2—वि० धन देनेवाला [को०] ।

वसुप्रभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक । ४. कुबेर की नगरी । अलका [को०] ।

वसुप्राण—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि [को०] ।

वसुबंधु—संज्ञा पुं० [सं० वसुबन्धु] एक प्राचीन बौद्ध आचार्य जो महायान शाखा के अनुयायी थे । इन्होंने अनेक ग्रंथ रचे थे, जिनमें से कुछ के अनुवाद चीनी भाषा में भी वर्तमान हैं ।

वसुभ—संज्ञा पुं० [सं०] धनिष्ठा नक्षत्र ।

वसुभारत—वि० [सं०] धनपूर्ण । धनाढ्य [को०] ।

वसुमती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पृथ्वी । २. छह वर्णों का एक वृत्त; जिसके प्रत्येक चरण में तगण और सगण होते हैं । उ०—तासों परिहरो जो है । हितु खरो । रारी जड़मती । धारी वसुमती । ३. धनी या संपन्न स्त्री (को०) । ४. देश । राज्य । प्रदेश (को०) ।

वसुमना—संज्ञा पुं० [सं० वसुमनस्] पुराणानुसार एक मंत्रद्रष्टा ऋषि का नाम ।

वसुमान^1—संज्ञा पुं० [सं० वसुमत्] १. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जो उत्तर दिशा में है । २. वैवस्वत मनु के एक पुत्र का नाम (को०) । ३. कृष्ण का एक नाम (को०) ।

वसुमान^2—वि० धनवान् । धनी । समृद्ध [को०] ।

वसुमित्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक बौद्ध आचार्य ।

विशेष—ये महायान शाखा के अंतर्गत वैभाषिक संप्रदाय के थे। ये काश्मीर के पश्चिम अश्मापरांत देश के निवासी कहे गए हैं।

वसुर वि० [सं०] कीमती। मूल्यवान् [को०]।

वसुरक्षित—संज्ञा पुं० [सं०] एक बौद्ध आचार्य का नाम।

वसुरात—संज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम।

वसुरुच—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के देवता।

वसुरुचि—संज्ञा पुं० [सं०] एक गंधर्व का नाम।

वसुरूप—संज्ञा पुं० [सं०] शिव।

वसुरेता—संज्ञा पुं० [सं० वसुरेतस्] १. अग्नि। २. शिव।

वसुरोचि—संज्ञा पुं० [सं० वसुरोचिस्] १. यज्ञ। २. अग्नि [को०]।

वसुरोधी—संज्ञा पुं० [सं०] शिव।

वसुल—संज्ञा पुं० [सं०] देवता।

वसुवन—संज्ञा पुं० [सं०] वृहत्संहिता के अनुसार ईशान कोण में स्थित एक देश।

वसुवाह—संज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम।

वसुविद—वि० [सं० वसुविन्द] धन पानेवाला [को०]।

वसुविद्—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि।

वसुव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अनुष्ठान। एक तरह की तपस्या जिसमें १२ दिनों तक पृथ्वी पर गिरे हुए अन्न को खाकर रहा जाता है [को०]।

वसुश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० वसुश्रवस्] शिव [को०]।

वसुश्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्कंद की अनुचरी एक मातृका का नाम।

वसुश्रुत—संज्ञा पुं० अत्रिगोत्रीय एक ऋषि का नाम।

वसुश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. चाँदी। रजत। २. कृष्ण। ३. नकली सोना। कृत्रिम स्वर्ण [को०]।

वसुषेण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कर्ण। २. विष्णु [को०]।

वसुसारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुबेर की पुरी, अलका।

वसुसेन—संज्ञा पुं० [सं०] कर्णराज [को०]।

वसुस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुबेर की पुरी, अलका।

वसुहंस—संज्ञा पुं० [सं०] वसुदेव के पुत्र एक यादव का नाम। उ०—चल्यो वीर वसुहस हंस दुति हंस वरन पट। जादवकुल अवतंस शत्रु विध्वंसकरन झट।—गोपाल (शब्द०)।

वसुहट्ट, वसुहट्टक- संज्ञा पुं० [सं०] अगस्त का वृक्ष।

वसुहोम—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणों के अनुसार अंग देश के एक राजा का नाम।

वसूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त का पेड़ या फूल। २. साँभर नमक। ३. दे० 'वसुक'।

वसूज—संज्ञा पुं० [सं०] अत्रिगोत्रीय एक ऋषि जो ऋग्वेद के एक सूक्त के द्रष्टा थे।

वसूत्तम—संज्ञा पुं० [सं०] पितामह भीष्म का एक नाम [को०]।

वसूदम—संज्ञा पुं० [सं०] सज्जीखार [को०]।

वसूरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या [को०]।

वसूल^{१}—वि० [अ०] १. पास पहुँचा हुआ। मिला हुआ। प्राप्त। जैसे,—खत का वसूल होना। २. जो चुका लिया गया हो। जो हाथ में आ गया हो। प्राप्त। लब्ध। जैसे,—लगान वसूल करना, रुपया वसूल करना।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

मुहा०—वसूल पाना = दूसरे से जो पाना हो, वह मिल जाना।

वसूल^{२}—संज्ञा पुं० दे० 'उसूल'।

वसूली—संज्ञा स्त्री० [अ० वसूल] १. चुकता कराने की क्रिया। दूसरे से रुपया पैसा या वस्तु लेने का काम। प्राप्ति। जैसे,—इन्हें रुपया देते तो हो, पर वसूली में बड़ी दिक्कत होगी। २. बाकी निकला या चाहता हुआ रुपया लेने का काम। जैसे,—उस गाँव में वसूली शुरू हो गई।

वस्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. जाना। चलना। गमन। २. परिश्रम। अध्यवसाय [को०]।

वस्कय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वष्कय'।

वस्कयणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वष्कयणी'।

वस्कराटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिच्छू [को०]।

वस्त^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बकरा। २. निवास की जगह। ३. मकान। घर (को०)।

वस्त^{२}—अव्य० [अ०] मध्य। बीच।

वस्त^{३}—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वस्तु'।

वस्तक—संज्ञा पुं० [सं०] कृत्रिम लवण। बनाया हुआ नमक।

वस्तकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] शाल वृक्ष। साखू का पेड़।

वस्तगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्तगन्धा] अजगंधा [को०]।

वस्तमोदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा।

वस्तर—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्र] दे० 'वस्त्र'। उ०—कामकंदला बिरहवसि, वस्तर गात मलीन। मुख माधौ माधौ रटै, होइ सो छिन छिन छीन।—हिं० क० का०, पृ० २१२।

वस्तव्य वि० [सं०] १. निवास योग्य। रहने लायक। २. बिताने या व्यतीत करने लायक [को०]।

वस्तव्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] निवास। रहना [को०]।

वस्तांत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृषपत्रिका नामक पौधा। अजांत्री [को०]।

वस्ता—वि० [सं० वस्तृ] १. द्योतित या दीप्त होनेवाला। चमकनेवाला। २. पहनने या धारण करनेवाला। ३. रखनेवाला। ऊपर रखनेवाला [को०]।

वस्ताद†—संज्ञा पुं० [अ० उस्ताद] दे० 'उस्ताद'। उ०—अव्वल याद करो वस्ताद कीन गुरु, पीर, पैगंबर की और याद किए करतार को।—दक्खिनी०, पृ० ५७।

वस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नाभि के नीचे का भाग। पेड़ू। २. मूत्राशय। ३. पिचकारी। ४. रहना। रुकना। पड़ाव। निवास (को०)। ५. वस्त्र का आँचल। छोर (को०)।

वस्तिकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वस्तिकर्मन्] लिंगेंद्रिय, गुदेंद्रिय आदि मार्गों में पिचकारी देने की क्रिया ।

वस्तिकर्माढ्य—संज्ञा पुं० [सं०] रीठे का पेड़ । अरिष्ट वृक्ष [को०] ।

वस्तिकुंडलिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्तिकुण्डलिका] एक रोग ।

विशेष—इस रोग में मूत्राशय में गाँठ सी पड़ जाती है, उसमें पीड़ा तथा जलन होती है और पेशाब कठिनता से उतरता है । गाँठ को दबाने से कभी तो बूंद बूंद करके पेशाब गिरता है, और कभी धार भी निकल पड़ती है । यह रोग असाध्य कहा जाता है । अधिक परिश्रम करने, दौड़कर चलने या चोट लगने से इस रोग की उत्पत्ति कही गई है ।

वस्तिकोश—संज्ञा पुं० [सं०] मूत्राशय [को०] ।

वस्तिमल—संज्ञा पुं० [सं०] मूत्र । पेशाब ।

वस्तिवात—संज्ञा पुं० [सं०] एक मूत्र रोग जिसमें वायु बिगड़कर वस्ति (पेड़ू) में मूत्र को रोक देता है ।

वस्तिशिर—संज्ञा पुं० [सं० वस्तिशिरस्] १. पिचकारी का अग्रभाग या टोंटी । २. मूत्राशय का ऊपरी संकीर्ण भाग [को०] ।

वस्तिशोधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मदन वृक्ष । मैनफल का पेड़ । २. मदनफल । मैनफल ।

वस्ती[1]—वि० [अ०] दरम्यानी । बीच का । मध्यवर्ती [को०] ।

वस्ती(पु)[2]—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्ति = (रहना)] रहने की जगह । जनपद ।

वस्तु—संज्ञा स्त्री० [सं०] [वि० वास्तव, वास्तविक] १. वह जिसका अस्तित्व हो । वह जिसकी सत्ता हो । वह जो सचमुच हो । जैसे,—डर कोई वस्तु नहीं । २. सत्य । ३. वह जिसका नाम-रूप हो । गोचर पदार्थ । चीज । जैसे,—घर में बहुत सी वस्तुएँ इधर उधर पड़ी हैं । ४. इतिवृत्त । वृत्तांत । ५. आधार । पीठ (को०) । ६. उपकरण । सामग्री । ७. नाटक का कथन या आख्यान । कथावस्तु ।

विशेष—नाटकीय कथावस्तु दो प्रकार की कही गई है—आधिकारिक जिसमें नायक का चरित्र हो; और प्रासंगिक जिसमें नायक के अतिरिक्त और किसी का चरित्र बीच में आ गया हो । विशेष दे० 'नाटक' ।

८. धन । संपत्ति (को०) । ९. ढाँचा । आकार । रूपरेखा (को०) ।

वस्तुक—संज्ञा पुं० [सं०] बथुआ का साग [को०] ।

वस्तुकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बथुआ नाम का साग । श्वेत चिल्ली ।

वस्तुगत—वि० [सं०] वस्तुनिष्ठ । कथागत । वस्तु या आख्यान में स्थित । उ०—संक्षेप में ये विचार साहित्य और जीवन का यथार्थ, अविच्छेद्य और वस्तुगत संबंध मानते हैं ।—न० सा० न० प्र०, पृ० १४१ ।

वस्तुजगत्—संज्ञा पुं० [सं०] प्रत्यक्ष संसार । दृश्यमान विश्व [को०] ।

वस्तुजात—संज्ञा पुं० [सं०] वस्तुओं का योग या समूह [को०] ।

वस्तुज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु की पहचान । २. मूल तथ्य का बोध । सत्य की जानकारी । तत्वज्ञान ।

वस्तुतः—अव्य० [सं० वस्तुतस्] यथार्थतः । सचमुच । असल में ।

वस्तुनिर्देश—संज्ञा पुं० [सं०] मंगलाचरण का एक भेद, जिसमें कथा का कुछ आभास दे दिया जाता है । यह एक तरह की सुची होती है ।

वस्तुनिष्ठ—वि० [सं०] वस्तु अर्थात् वृत्तांत, कथा आदि से संबद्ध । वस्तुपरक । जैसे,—वैसी लंबी वस्तुनिष्ठ कविताएँ वे पहले लिख चुके हैं ।

वस्तुपरक—वि० [सं०] वस्तुनिष्ठ । वस्तुगत । जैसे,—विज्ञानवेत्ता का परीक्षण वस्तुपरक होगा ।

वस्तुपुरुष—संज्ञा पुं० [सं०] नायक [को०] ।

वस्तुबल—संज्ञा पुं० [सं०] वस्तु का गुण ।

वस्तुभान—संज्ञा पुं० [सं०] सत्यता । यथार्थता [को०] ।

वस्तुभेद—संज्ञा पुं० [सं०] तात्विक अंतर [को०] ।

वस्तुमात्र—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय या पदार्थ का बाहरी रूप [को०] ।

वस्तुरचना संज्ञा स्त्री० [सं०] शैली ।

वस्तुवाद—संज्ञा पुं० [सं०] वह दार्शनिक सिद्धांत जिसमें जगत् जैसा दृश्य है, उसी रूप में उसकी सत्ता मानी जाती है । जैसे,—न्याय और वैशेषिक ।

विशेष—यह सिद्धांत अद्वैतवाद का विरोधी है, जिसमें नामरूपात्मक जगत् की सत्ता नहीं मानी जाती ।

वस्तुविनिमय—संज्ञा पुं० [सं०] वस्तुओं का पारस्परिक लेन देन । अदला बदली [को०] ।

वस्तुविवर्त—संज्ञा पुं० [सं०] दर्शन में सत्व या सत्ता का प्रसार [को०] ।

वस्तुवृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. यथार्थ बात । यथार्थ कथा । २. सुंदर चरित्र [को०] ।

वस्तुव्यापार—संज्ञा पुं० [सं०] वस्तु का स्वभाव और धर्म । उ०—प्राकृतिक वस्तुव्यापार का सुक्ष्म निरीक्षण धीरे धीरे कम होता गया ।—रस०, पृ० १२६ ।

वस्तुशून्य—वि० [सं०] यथार्थतारहित [को०] ।

वस्तुस्थिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] सच्ची स्थिति [को०] ।

वस्तूत्प्रेक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] उत्प्रेक्षा अलंकार का एक भेद । विशेष दे० 'उत्प्रेक्षा' ।

वस्तूपमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] उपमा अलंकार का भेद, जिसमें साधारण धर्म का लोप होता है । विशेष दे० 'उपमा' ।

वस्त्य—संज्ञा पुं० [सं०] बसने की जगह । घर ।

वस्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपड़ा । २. पहनावा । पोशाक (को०) । ३. दारचीनी का पत्ता (को०) ।

वस्त्रक—संज्ञा पुं० [सं०] कपड़ा [को०] ।

वस्त्रकुट्टिम—संज्ञा पुं० [सं०] १. छाता । २. खेमा । डेरा ।

वस्त्रगृह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वस्त्रभवन' [को०] ।

वस्त्रगोपन—संज्ञा स्त्री० [सं०] ६४ कलाओं में से एक का नाम । विशेष दे० 'कला' ।

वस्त्रग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्त्रग्रन्थि] नीवी । नाड़ा । इजारबंद ।

वस्त्रघर्घरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का बाजा । २. छनना या छानने का वस्त्र (को०) ।

वस्त्रदशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कपड़े की किनारी [को०] ।

वस्त्रधारणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] खूँटी । नागदंतिका । अलगनी [को०] ।

वस्त्रधावी—वि० [सं० वस्त्रधाविन्] कपड़ा धोनेवाला [को०] ।

वस्त्रनिर्णेजक—संज्ञा [सं०] धोबी [को०] ।

वस्त्रपजल—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्रपञ्जल] कोलकंद [को०] ।

वस्त्राप—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक तीर्थ स्थान, जिसका नाम पुराणों में वस्त्रापथक्षेत्र मिलता है । यह आजकल का गिरनार है, जो गुजरात में है । २. शुक्रनीति के अनुसार रेशम, ऊन तथा सब प्रकार के वस्त्रों को पहचानने और उनके भाव आदि का पता रखनेवाला राजकर्मचारी ।

वस्त्रपुत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कपड़े की बनी गुड़िया । पुतरी [को०] ।

वस्त्रपूत—वि० [सं०] कपड़े से छना हुआ ।

वस्त्रपेशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] झालर [को०] ।

वस्त्रबंध—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्रबन्ध] नीवी ।

वस्त्रभवन—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्र + भवन] कपड़े का बना हुआ घर । जैसे,—रावटी, खेमा आदि ।

वस्त्रभूषण—संज्ञा पुं० [सं०] रक्तांजन ।

वस्त्रभूषणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ ।

वस्त्रभेदक—संज्ञा पुं० [सं०] दरजी [को०] ।

वस्त्रभेदी—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्रभेदिन्] कपड़ा सीनेवाला दरजी [को०] ।

वस्त्रभौनⓅ—संज्ञा पुं० [सं०] रावटी । खेमा । डेरा । उ०—वस्त्रभौन स्यों वितान आसने बिछावने, दायजो विदेहराज भाँति भाँति को दियो ।—केशव (शब्द०) ।

वस्त्रयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वस्त्र का उपादान । जैसे,—रूई आदि [को०] ।

वस्त्ररंजन—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्ररञ्जन] कुसुम का वृक्ष ।

वस्त्ररंजनी—संज्ञा स्त्री० [सं० वस्त्ररञ्जनी] मजीठ ।

वस्त्रवेश—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वस्त्रवेश्म' ।

वस्त्रवेश्म—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्रवेश्मन्] रावटी । वस्त्रभवन [को०] ।

वस्त्राचल, वस्त्रांत—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्राञ्चल, वस्त्रान्त] कपड़े का किनारा या छोर [को०] ।

वस्त्रांतर—संज्ञा पुं० [सं० वस्त्रान्तर] उपरना । ऊर्ध्ववस्त्र [को०] ।

वस्त्रागार—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपड़े की दुकान । २. कपड़े का घर । रावटी । खेमा [को०] ।

वस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] भवन । घर [को०] ।

वस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'अवस्था' [को०] ।

वस्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेतन । २. मूल्य । ३. वसन । ४. द्रव्य । चीज । ५. धन । ६. त्वक् । वल्कल । छाल । ७. मृत्यु (को०) ।

वस्नन—संज्ञा पुं० [सं०] कटिभूषण । करधनी ।

वस्नसा—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्नायु । नस [को०] ।

वस्निक—वि० [सं०] धनलोलुप । । भृतिभोगी [को०] ।

वस्निका—संज्ञा स्त्री० [सं०] मूल्यवान् थाती । बहुमूल्य धरोहर [को०] ।

वस्फ़—संज्ञा पुं० [अ० वस्फ़] १. प्रशंसा । स्तुति । उ०—करें सब वस्फ उस शाहंशाह के ।—कबीर मं०, पृ० ३९९ । २. गुण । सिफत । उ०—फिर मुझे लिखना जो वस्फे रूए जानाँ हो गया । वाजिब इस जा पर कलम को सर झुकाना हो गया ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, ८४९ । ३. विशेषता ।

वस्म—संज्ञा पुं० [सं० वस्मन्] १. कपड़ा । २. वासस्थान (वैदिक अर्थ) ।

वस्य—वि० [सं० वस्यस] १. उत्कृष्ट । उत्तम । २. बहुत संपत्तिशाली । धनी ।

वस्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. दिन । २. घर । मकान । २. निवास । ३. वह स्थान जहाँ मार्ग मिलें चौराहा ।

वस्ल—संज्ञा पुं० [अ०] १. दो चीजों का आपस में मिलना । मिलन । २. संयोग । मिलाप । विशेषतः प्रेमी और प्रेमिका का मिलाप । उ०—बगैर उसके वस्ल के सब रंडरोना है यह हँसी नहीं ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १ पृ० ५७० ।

वस्वौकसारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रपुरी । २. कुबेरपुरी । ३. गंगा । ४. इंद्र नामक नदी ।

वहंत—संज्ञा पुं० [सं० वहन्त] १. वायु । २. बालक । ३. रथ (को०) ।

वह^1—सर्व० [सं० सः या असौ] १. एक शब्द जिसके द्वारा दूसरे मनुष्य से बातचीत करते समय किसी तीसरे मनुष्य का संकेत किया जाता है । जैसे,—तुम जाओ; वह आता ही होगा । २. एक निर्देशकारक शब्द जिससे दूर की या परोक्ष वस्तुओं का संकेत करते हैं । जैसे,—यह और वह दोनों एक ही हैं ।

विशेष—इस अर्थ में यह शब्द संज्ञा के पहले विशेषण की तरह भी आता है । जैसे,—यह आदमी और वह आदमी ।

वह^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैल का कंधा । २. घोड़ा । ३. वायु । ४. मार्ग । पथ । ५. नद । ६. वाहन (को० । ७. प्रवाह । धारा (को०) । ८. ले जाने या ढोने की क्रिया (को०) । ९. चार द्रोण का एक मान (को०) । १०. गाय के रंभाने का शब्द (को०) ।

वह^3—वि० १. बोझ उठाकर ले जानेवाला । जैसे, काष्ठ भारवह । २. गंवाहक । जैसे, धवह (समास में) ।

वहत—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैल । २. यात्री । पथिक (को०) । ३. जिसपर लोग चलते हैं, पंथ । मार्ग (?) ।

वहतांत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० वहतान्त्री] छागलांत्री क्षुप ।

विशेष—वैद्यक में यह पौधा कटु तथा कास रोग का नाशक और शुक्रवर्धक कहा गया है ।

पर्या०—वृषगंधा । मेषांत्री । वृषपत्रिका ।

वहति^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु । २. सचिव । सलाहकार । मित्र । ३. बैल । वृष (को०) ।

वहती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गाय । २. नदी जो प्रवहमान रहती है ।

वहतु—संज्ञा पुं०[सं०] १. बैल। २. पथिक (वेद)। ३. विवाह (वेद)। ४. स्त्रीधन। दायज। दहेज (को०)।

वहदत—संज्ञा स्त्री० [अ०] एकत्व। वाहिद या एक होने का भाव। अद्वैतवाद। उ०—परीखे वे गर इस गज का खास। के जे वहदत की दरिया का है गव्वास —द० प० ग०, पृ० १५५।

वहदानी—वि० [अ०] एक ईश्वर से ही संबंध रखनेवाला। अद्वैतवाद को माननेवाला। अद्वैतवादी [को०]।

वहन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वहनीय, वहमान, वहित] १. बेड़ा। तरेंदा। नौका नाव। २. खींचकर अथवा सिर या कंधे पर लादकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाना। जैसे,—भार वहन करना। रथ वहन करना। ३. कंधे या सिर पर लेना। ४. ऊपर लेना। उठाना। ५. वास्तु विद्या में खंभे के नौ भागों में से सब से नीचे का भाग। ६. बहना। प्रवाहित होना (को०)। ७. यान। सवारी (को०)।

वहनभंग—संज्ञा पुं० [सं०] पोतभंग। पोत आदि का डूब जाना [को०]।

वहनीय—वि० [सं०] १. उठा या खींचकर ले जाने योग्य। २. ऊपर लेने या धारने योग्य।

वहम—संज्ञा पुं० [अ०] १. बिना संकल्प के चित्त का किसी बात पर जाना। मिथ्या धारणा। झूठा खयाल। २. भ्रम। ३. व्यर्थ की शंका। मिथ्या संदेह। फजूल शक। जैसे,—वहम की तो कोई दवा ही नहीं। उ०—जिस वस्तु की संसार में सृष्टि ही न हो वह भी वहम समा जाने से तत्काल दिखाई देने लगती है। —श्रीनिवास ग्रं०, पृ० २४५।

वहमी—वि० [अ० वहम] १. वृथा संदेह द्वारा उत्पन्न। भ्रमजन्य। २. झूठे खयाल में पड़ा रहनेवाला। ३. वहम करनेवाला। जो व्यर्थ संदेह में पड़े। किसी बात के संबंध में जो व्यर्थ भला बुरा सोचे। संशयात्मा।

वहल^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] नौका। नाव।

वहल^{2}—वि० १. दृढ़। मजबूत। २. दे० 'बहल'।

वहलगंध—संज्ञा पुं० [सं० वहलगन्ध] शबर चंदन।

वहलचक्षु—संज्ञा पुं० [सं० वहलचक्षुस्] मेढ़ासींगी। मेषशृंगी।

वहलत्वच्—संज्ञा पुं० [सं०] लोध।

वहला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शतपुष्पा। २. बड़ी इलायची। ३. दीपक राग की एक रागिनी का नाम।

वहवाँ†—क्रि० वि० [हिं० वहाँ] उस स्थान पर। उस जगह। वहाँ। उ०—यहवाँ सूरज क्रांति प्रकाशा। वहवाँ जोती स्थिर निवासा।—कबीर सा०, पृ० ९८।

वहश—संज्ञा पुं० [अ०] वन्य पशु जंगली पशु [को०]।

वहशत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. जंगलीपन। असभ्यता। बर्बरता। २. उजड्डपन। ३. पागलपन। बावलापन। ४. चित्त की चंचलता। अधीरता। ५. विकलता। घबराहट। ६. चहल-पहल या रौनक न होना। सन्नाटापन। उदासी। उ०—ऐ खिरदमंदो मुबारक हो तुम्हें फर्जानगी। हम हों औ सहरा हो औ वहशत हो औ दीवानगी।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ४३। ७. डरावनापन।

मुहा०—वहशत उछलना = (१) सनक होना। खब्त होना। (२) धुन होना। वहशत बरसना = (१) उदासी छाना। करुणा या दुःख का भाव प्रकट होना। रौनक न रहना। (२) जंगलीपन प्रकट होना।

वहशतजदा—वि० [अ० वहशत + फ़ा० ज़द्ह] भयभीत। उद्विग्न [को०]।

वहशियाना—वि० [फा०] वहशी जैसा। वहशी के समान [को०]।

वहशी—वि० [अ०] १. जंगल में रहनेवाला। जंगली। उ० ये लोग भी एक किस्म के वहशी हैं, इनसे दुनियाँ के लोगों को किसी तरह का फायदा नहीं पहुँचता।—श्रीनिवास ग्रं०, पृ० १८। २. जो पालतू न हो। जो आदमियों में रहना न जानता हो। ३. असभ्य। ४. भड़कनेवाला।

वहस†—संज्ञा पुं० [देश०] सम। तुक। उ०—विषम सम विषम सम दवालैं बेद तुक ठीक गुर, अंत तुक वहस ठाला।—रघु० रू०, पृ० ५०।

वहाँ—अव्य० [हिं० वह] उस जगह। उस स्थान पर। उहाँ।

विशेष—जैसे 'यहाँ' का प्रयोग पास के स्थान के लिये होता है, वैसे ही इस शब्द का प्रयोग दूर के स्थान के लिये होता है।

वहा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] नदी। स्रोतस्विनी [को०]।

वहा^{2}—वि० स्त्री० वहन या धारण करनेवाली। जैसे, स्रोतोवहा।

वहाबी—संज्ञा पुं० [अ०] मुसलमानों का एक सप्रदाय जो अब्दुल वहाब नज्दी का चलाया हुआ है।

विशेष—अब्दुलवहाब अरब के नज्द नामक स्थान में उत्पन्न हुआ था। वह मुहम्मद साहब के सर्वोच्च पद को अस्वीकार करता था। इस मत के अनुयायी किसी व्यक्ति या स्थानविशेष की प्रतिष्ठा नहीं करते। अब्दुलवहाब ने अनेक मसजिदों और पवित्र स्थानों को गिराया और मुहम्मद साहब की कब्र को भी खोदकर फेंक देना चाहा था। इस मत के अनुयायी अरब और फारस में अधिक हैं।

वहाल—संज्ञा पुं० [सं०] वायु [को०]।

वहिः—अव्य० [सं० वहिर्] जो अंदर न हो। बाहर।

विशेष—हिंदी में इस शब्द का प्रयोग अकेले नहीं होता, समस्त रूप में होता है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार समास में इसके रूप वहिर्, वहिश्, वहिष् आदि होते है। जैसे,—वहिर्गत। वहिश्चर। वहिरंग। वहिष्कार इत्यादि।

वहित—वि० [सं०] १. ढोया हुआ। वहन किया हुआ। २. अवहित। ३. प्रसिद्ध। ख्यात। ४. प्राप्त [को०]।

वहित्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाव। जहाज। २. स्तंभयुक्त। एक प्रकार का वर्गाकार रथ [को०]।

वहित्रकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक योगासन जिसमें दोनों पैर एक में मिलाकर सामने फैलाए जाते हैं [को०]।

वहित्रक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वहित्र' [को०]।

वहिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नौका। नाव।

वहिया—संज्ञा स्त्री० [हिं० बाहा] बाहा। धारा। सोता। उ०—बंगाल में तो चैतन्य महाप्रभु ने कृष्ण को केंद्र में रखकर भक्ति की वहिया ही बहा दी।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ९२।

वहिरंग¹—संज्ञा पुं० [सं० वहिरङ्ग] १. शरीर का बाहरी भाग। देह का बाहरी हिस्सा। २. ऊपर या बाहर का हिस्सा। बाहरी भाग। अंतरंग का उलटा। ३. वह जो किसी वस्तु के भीतरी तत्व को न जानना चाहता हो। ४. आगंतुक पुरुष। कहीं बाहर से आया हुआ आदमी। ५. वह मनुष्य जो अपने दल या मंडली का न हो। वायबी आदमी। ६. पूजा में वह कृत्य जो आदि में किया जाय।

वहिरंग²—वि० १. ऊपर ऊपर का। बाहर का। जो अंतरंग न हो। बाहरी। २. जो सार रूप न हो। जो भीतरी तत्व न हो। ३. अनावश्यक। फालतू।

वहिरंतर—वि० [सं० वहिर् + अन्तर] बाहरी और भीतरी। आंतरिक और बाह्य।

उ०—'ज्योत्सना' में मैंने जीवन की वहिरंतर मान्यताओं का समन्वय करने का प्रयत्न किया है।—हिं० आं० प्र०, पृ० २५३।

वहिरिंद्रिय—संज्ञा स्त्री० [सं० वहिरिन्द्रिय] १. कर्मेंद्रिय। २. बाह्यकरणमात्र। कर्मेंद्रिय और ज्ञानेंद्रिय।

वहिर्गत—वि० [सं०] जो बाहर गया हो। निकला हुआ। बाहर का।

वहिर्देश—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाहर का स्थान। २. विदेश। ३. अज्ञात स्थान। ४. द्वार। दरवाजा।

वहिर्द्वार—संज्ञा पुं० [सं०] बाहरी फाटक। सदर फाटक। तोरण।

वहिर्ध्वजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

वहिर्भूत—वि० [सं०] वहिर्गत।

वहिर्मुख—वि० [सं०] विमुख।

वहिर्योग—संज्ञा पुं० [सं०] हठयोग।

वहिर्लंब—संज्ञा पुं० [सं० वहिर्लम्ब] रेखागणित में वह लंब जो किसी क्षेत्र के बाहर बढ़ाए हुए आधार पर गिराया जाता है।

वहिर्लापिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कोई ऐसा टेढ़ा वाक्य या प्रश्न जिसका उत्तर बतलाने के लिये श्रोता से कहा जाय। पहेली।

विशेष—पहेलियाँ दो प्रकार की होती हैं। जिनके उत्तर का शब्द पहेली के वाक्य के अंदर ही रहता है, उसे 'अंतर्लापिका' कहते हैं। और जिनके उत्तर का पूरा शब्द पहेली के अंदर नहीं होता, वे 'वहिर्लापिका' कहलाती हैं। जैसे,—भाखैं काह सज्जन को ? कौन शंभु वाहन है? काको सुख होत ? काकी माल शिव धारो है ? कहा गज बंधन ? छबीले रंग का के अति ? कौन हरपुत्र ? सीसुत को सुप्यारो है। शोभा को सुनाम को है ? कृष्ण नख धारो कहा ? सिंधु से मिलत कौन ? काह अनियारो है ? । उत्तर के वर्णन में आदि अंत छाँड़ि दीजै, मध्य लीजै सो हिये मनोरथ हमारो है।

इन प्रश्नों के उत्तर क्रमशः ये होंगे—(१) सयाने। (२) बरद। (३) सुकृती। (४) कपाल। (५) साँकल। (६) हरिणी। (७) गनेश। (८) मुकता। (९) पानिप। (१०) पहाड़। (११) सरिता। (१२) नयन। उत्तर के इन शब्दों के मध्याक्षर लेने से यह उत्तर वाक्य निकलता है,—यार कृपा करि नेक निहारिय।'

वहिर्वेगज्वर—संज्ञा, पुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर जिसमें शरीर में ताप, प्यास आदि उपद्रव होते हैं। उ०—तृष्णादिक लक्षण थोड़े होवे ये वहिर्वेगज्वर के लक्षण हैं।—माधव०, पृ० ३७।

वहिश्चर—संज्ञा पुं० [सं०] केवड़ा।

वहिष्क—वि० [सं०] बाहरी। बाह्य [को०]।

वहिष्करण—संज्ञा पुं० [सं०] बाहर की इंद्रियाँ। पाँच ज्ञानेंद्रियाँ और पाँच कर्मेंद्रियाँ। बाह्येंद्रिय। (मन या अंतःकरण को भीतर की इंद्रिय कहते हैं।)

वहिष्कार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बहिष्कार' [को०]।

वहिष्कृत—वि० [सं०] १. निकाला हुआ। बाहर किया हुआ। २. अलग किया हुआ। त्यागा हुआ। त्यक्त।

वहिष्ठ—वि० [सं०] अधिक भार उठानेवाला।

वहिष्प्राण—संज्ञा पुं० [सं०] १. जीवन। २. श्वास। वायु। ३. अर्थ।

वहीं—अव्य० [हिं० वहाँ + ही] उसी स्थान पर। उसी जगह।

विशेष—जब वहाँ शब्द पर जोर होता है तब 'ही' लगाने के कारण उसका यह रूप हो जाता है।

वही¹—सर्व० [हिं० वह + ही] १. उस तृतीय व्यक्ति की ओर निश्चित रूप से संकेत करनेवाला सर्वनाम, जिसके संबंध में कुछ कहा जा चुका हो। पूर्वोक्त व्यक्ति। जैसे,—(क) यह वही आदमी है जो कल आया था। २. निर्दिष्ट व्यक्ति। अन्य नहीं। जैसे—जो पहले वहाँ पहुँचेगा, वही इनाम पावेगा।

वही²—संज्ञा पुं० [सं० वहिन्] १. बैल। २. मोटिया। भारवाहक। बोझा ढोनेवाला [को०]।

वहीर—संज्ञा पुं० [हिं० भीर, बहीर या देश०] परिजन। प्रजा। दे० 'बहीर'। उ०—चाली अहमद बेगमरी, दिल्ली दिसा वहीर।—रा० रू०, पृ० ३१७।

वहीरु—संज्ञा पुं० [सं०] १. रक्तवाहिनी नाड़ियों का एक वर्ग। शिरा। २. स्नायु। ३. मांसपेशी। पुट्ठा।

वहूदक—संज्ञा पुं० [सं०] चार प्रकार के संन्यासियों में से एक।

विशेष—सूतसंहिता के अनुसार कुटीचक, वहूदक, हंस और परमहंस ये चार प्रकार के संन्यासी कहे गए हैं। वहूदकों के लिये यह नियम है कि वे एक घर से पूरी भिक्षा न ग्रहण करें; सात घरों से लें। उन्हें अपने साथ में गाय की पूँछ के रोयों से बँधा हुआ त्रिदंड, शिक्य, जलपूर्ण पात्र, कौपीन, कमंडलु, कंथा, पादुका, छत्र, रुद्राक्ष की माला, योगपट्ट, खनित्र और कृपाण रखना चाहिए। मरने पर वहूदक संन्यासी जल में डुबाए जाते हैं।

वहेटक, वहेड़ुक, वहैड़ुक—संज्ञा पुं० [सं०] विभीतक वृक्ष [को०]।

वह्नि—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. कृष्ण के एक पुत्र का नाम, जो मित्रविंदा से उत्पन्न हुआ था। ३. तुर्वसु के पुत्र का नाम। ४. कुक्कुर वंशी एक यादव का नाम। ५. चित्रक। चीता।

६. भिलावाँ। ७. तीन की संख्या। ८. राम की सेना के सेनापति एक बंदर का नाम। ९. जैनों के अनुसार लौकांतिक जीवों का तीसरा वर्ग। १०. पाचन शक्ति। पाचन। जठराग्नि (को०)। ११. यान (को०)। १२. देवता (को०)। १३. मरुत् (को०)। १४. सोम (को०)। १५. सवारी खींचनेवाले जानवर। बैल, घोड़ा आदि (को०)। १६. निंबूक। बिजौरा नीबू। चकोतरा नीबू (को०)। १७. तंत्र के अनुसार रेफ, रवर्ण (को०)। १८. आठवाँ कल्प (को०)। १९. पुरोहित (को०)। २०. क्षुधा। भूख (को०)।

वह्निक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] उष्णता। गरमी [को०]।

वह्निक^{२}—वि० गरम। उष्ण [को०]।

वह्निकर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्युत्। बिजली। २. जठराग्नि। ३. चकमक। पथरी।

वह्निकर^{२} वि० १. उत्तापक। उद्दीपक। २. पाचक। क्षुधावर्धक [को०]।

वह्निकरी - संज्ञा स्त्री० [सं०] धौ का फूल।

वह्निकाष्ठ —संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अगुरु। दाहागुरु [को०]।

वह्निकुंड—संज्ञा पुं० [सं० वह्निकुण्ड] अग्निकुंड।

वह्निकुमार—संज्ञा पुं० [सं०] भुवनपति देवगण में से एक।

वह्निकोण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'अग्निकोण' [को०]।

वह्निकोप—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्वलन। जलना। प्रदाह। २. प्रलयाग्नि। ३. दावाग्नि [को०]।

वह्निगंध—संज्ञा पुं० [सं० वह्निगंध] १. धूप। लोबान। २. यक्षधूप। राल [को०]।

वह्निगर्भ संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस। २. शमीवृक्ष।

वह्निगर्भा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमीवृक्ष [को०]।

वह्निचक्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कलिहारी या कलियारी नाम का विष।

वह्निजाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह्नि की पत्नी स्वाहा। स्वाहा मंत्र [को०]।

वह्निज्वाल—संज्ञा पुं० [सं०] एक नरक का नाम [को०]।

वह्निज्वाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] धव का पेड़।

वह्निदमनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्निदमनी नाम का पौधा।

वह्निदीपक—संज्ञा पुं० [सं०] कुसुंभ का वृक्ष।

वह्निदीपिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा।

वह्निदैवत—वि० [सं०] अग्नि की पूजा करनेवाला। अग्नि का उपासक अग्निपूजक [को०]।

वह्निधौत—वि० [सं०] अग्नि के समान पवित्र [को०]।

वह्निनामा—संज्ञा पुं० [सं० वह्निनामन्] १. चित्रक। चीते का पेड़। २. भिलावाँ।

वह्निनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जटामासी।

वह्निपुष्पा, वह्निपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] धव का वृक्ष।

वह्निबीज—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर्ण। सोना।

विशेष—ब्रह्मवैवर्त पुराण के कृष्णजन्म खंड में स्वर्ण की उत्पत्ति की कथा यह है—स्वर्ग की सभा में एक बार सब देवता बैठे हुए थे और रंभा नाच रही थी। रंभा को देखकर अग्निदेव कामपीड़ित हुए और उनका वीर्य गिरा, जिसे उन्होंने लज्जावश कपड़ों से ढाँक लिया। कुछ दिनों पीछे वह वीर्य दमकती हुई धातु होकर वस्त्र भेदकर नीचे गिरा, जिससे सुवर्ण की उत्पत्ति हुई।

२. तंत्र में 'र' बीज। ३. नीबू।

वह्निभूतिक—संज्ञा पुं० [सं०] चाँदी।

वह्निभोग्य—संज्ञा पुं० [सं०] घी।

वह्निमंथ—संज्ञा पुं० [सं० वह्निमन्थ] गनियारी का पेड़। अग्निमंथ वृक्ष। अंगेथू का पेड़।

वह्निमंथन—संज्ञा पुं० [सं० वह्निमन्थन] गनियारी का पेड़।

वह्निमारक—संज्ञा पुं० [सं०] पानी। जल [को०]।

वह्निमित्र —संज्ञा पुं० [सं०] वायु। हवा।

वह्निमुख—संज्ञा पुं० [सं०] देवता।

विशेष—यज्ञ की अग्नि में डाला हुआ भाग देवताओं को पहुंचता है इसी से वे वह्निमुख कहलाते हैं।

वह्निरेता—संज्ञा पुं० [सं० वह्निरेतस्] शिव।

वह्निलोह - संज्ञा पुं० [सं०] ताम्र। ताँबा।

वह्निलोहक —संज्ञा पुं० [सं०] १. काँसा। २. ताँबा (को०)।

वह्निवक्त्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कलिहारी या कलियारी नाम का विष।

वह्निवधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वह्निजाया' [को०]।

वह्निवर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल।

वह्निवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] सर्ज रस। यक्षधूप [को०]।

वह्निवल्लभा —संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वह्निजाया'।

वह्निवीज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वह्निबीज'।

वह्निशिख—संज्ञा पुं० [सं०] १. केसर। २. कुसुंभ [को०]।

वह्निशिखर—संज्ञा पुं० [सं०] रुद्रजटा नाम का पौधा।

वह्निशिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कलिहारी या कलियारी नाम का विष। २. धव का पेड़। ३. काकुन नाम का अन्न। प्रियंगु। ४. गजपिप्पली।

वह्निशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] केसर [को०]।

वह्निसंज्ञक—संज्ञा पुं० [सं०] चित्रक वृक्ष [को०]।

वह्निसख—संज्ञा पुं० [सं०] १. जीरक। जीरा। २. पवन [को०]।

वह्निसाक्षिक—संज्ञा पुं० [सं०] साक्षीस्वरूप अग्नि।

वह्निसात् —संज्ञा पुं० [सं०] जल जाना। भस्मीभूत होना [को०]।

वह्निसुत—संज्ञा पुं० [सं०] पयोलस। पायस क्षीरिका। अन्नरस। रस।

वह्नीक—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'वह्निक'।

वह्नीश्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] लक्ष्मी [को०]।

वह्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाहन। यान। २. शकट। गाड़ी।

वह्यक —संज्ञा पुं० [सं०] उठाकर ले जानेवाला। वाहक।

वह्या —संज्ञा स्त्री० [सं०] मुनिपत्नी। ऋषिवधू [को०]।

वांक—संज्ञा पुं० [सं० वाङ्क] समुद्र [को०]।

वांगाल—संज्ञा पुं० [सं० वाङ्गाल] संगीत में एक राग [को०]।

वांगाली— संज्ञा स्त्री० [सं० वाङ्गाली] एक रागिनी (संगीत) [को०]।

वांछक—वि० [सं० वाञ्छक] चाहने या वांछा करनेवाला। अभिलाषी। इच्छुक [को०]।

वांछन—संज्ञा पुं० [सं० वाञ्छन] चाहना। इच्छा करना [को०]।

वांछनीय—वि० [सं० वाञ्छनीय] १. चाहने या कामना के योग्य। २. जिसकी इच्छा हो।

वांछा—संज्ञा स्त्री० [सं० वाञ्छा] [वि० वांछित, वांछनीय] इच्छा। अभिलाषा। चाह।

विशेष—सिद्धांत मुक्तावली के अनुसार वांछा नामक आत्मवृत्ति दो प्रकार की होती है। एक उपायविषयिणी, दूसरी फलविषयिणी। फल का अर्थ है—सुख की प्राप्ति और दुःख का न होना। जिस वांछा का कारण फलज्ञान हो, अर्थात् जो वांछा इस रूप में हो कि अमुक सुख मुझे मिले, वह फलविषयिणी है। जो वांछा किसी ऐसे उपाय के संबंध में हो, जिससे इष्टसाधन हो, वह उपायविषयिण है।

वांछातीत—वि०[सं० वाञ्छातीत] इच्छा के परे। जिसकी अभिलाषा न की जा सके। उ०—उन्मेष···उसकी गति तीव्र हो या मंद, प्रत्यक्ष हो या परोक्ष, वांछित हो या वांछातीत।—नदी०, पृ० ८८।

वांछित^1—वि० [सं० वाञ्छित] अभिलषित। इच्छित। चाहा हुआ। जिसकी इच्छा हो।

वांछित^2— संज्ञा पुं० १. इच्छा। आकांक्षा। चाह। २. संगीत में एक ताल [को०]।

वांछितव्य—वि० [सं० वाञ्छितव्य] देश० 'वांछनीय'।

वांछिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० वाञ्छिनी] १. कुलटा। पुंश्चली। २. कामार्थिनी या अत्यंत कामुक स्त्री [को०]।

वांछी—वि० [सं० वाञ्छित] १. इच्छुक। चाहनेवाला। २. कामुक। लंपट। विषयी [को०]।

वांछेय—वि० [सं० वाञ्छय] दे० 'वांछनीय'।

वांत^1— संज्ञा पुं० [सं० वान्त] १. वमन। कै। २. वमन किया हुआ पदार्थ [को०]।

वांत^2—वि० १. वमन किया हुआ। २. निःसृत। त्यक्त। उत्क्षिप्त। ३. गिराया हुआ। चूआ हुआ। ४. जिसने कै किया हो [को०]।

वांताद— संज्ञा पुं० [सं० वान्ताद] १. कुत्ता। श्वान। २. एक पक्षी का नाम। [को०]।

वांतान्न— संज्ञा पुं० [सं० वान्तान्न] वमित अन्न। कै किया हुआ अन्न।

वांताशी^{1}—वि० [सं० वान्ताशिन्] वमन खानेवाला।

वांताशी^{1}—संज्ञा पुं० १. कुत्ता। २. वह ब्राह्मण जो भोजन के लिये अपने कुल या गोत्र की प्रशंसा करे। ३. दूषित या निषिद्ध पदार्थों को खानेवाला राक्षस (को०)।

वांति—संज्ञा स्त्री० [सं० वान्ति] १. वमन। वांत। कै। २. वमन करने की क्रिया [को०]।

वांतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वान्तिका] कुटकी।

वांतिकृत्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वान्तिकृत्] मदनफल वृक्ष। मैनफल का पेड़।

वांतिकृत्^{2}— वि० वमनकारक। वमन करानेवाला [को०]।

वांतिदा—संज्ञा स्त्री० [सं० वान्तिदा] कुटकी।

वांतिशोधनी--संज्ञा स्त्री० [सं० वान्तिशोवनी] जीरक। जीरा।

वांतिहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वांतिकृत्'।

वांश—वि० [सं०] वंश संबंधी। बाँस का बना हुआ [को०]।

वांशिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँसुरी बजानेवाला। २. बाँस काटनेवाला [को०]।

वांशी - संज्ञा स्त्री० [सं०] वंशरोचना। बंसलोचन [को०]।

वाँ—अव्य० [हिं० वहाँ का संक्षिप्त रूप] उस जगह। उस स्थान पर। उ०–घर वैठत वाँ जल सों रजए।—हम्मीर रा०, पृ० ४५।

वाँकम†—संज्ञा पुं० [हिं० वाक्रमन् या वक्रम्] वक्रता। बाँकापन। उ०—सखी अमीणो साहिबो, वाँकम सूँ भरियोह।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० ७।

वाँग‡—संज्ञा पुं० [फा० बाँग] दे० 'वाँग'। उ०—कतहु वाँग कतहु वेद, कतहु मिसिमल कतहु छेद।—कीर्ति०, पृ० ४२।

वाँचण—क्रि० स० [सं० वाचन, हिं० बाँचना] दे० 'बाँचना'। उ०—संदेसा मति मोकलउ, प्रीतम तूँ आवेस। आँगलड़ी ही गलि गयाँ, नयण न वाँचण देस।—ढोला०, दू० १४४।

वाँलम(पु)— संज्ञा पुं० [सं० वल्लभ] दे० 'वल्लभ—२'। उ०—वाँलम एक हिलोर दे, आइ सकइ तउ आइ। वाहड़ियाँ वे थक्कियाँ, काग उड़ाइ उड़ाइ।—ढोला०, दू० १६७।

वाँस(पु)—संज्ञा पुं० [सं० पार्श्व, प्रा० पास, वास] दे० 'पास'। उ०—साल्ह कुँवर करहइ चढ्यउ, वाँसइ चाढ़ी नार।—ढोला०, दू० ६२५।

वाः—संज्ञा पुं० [सं० वार्] जल। पानी [को०]।

वाःकिटि—संज्ञा पुं० [सं०] जल का कीट वा शूकर, शिशुमार। सूँस।

वाःपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] लवंग। लौंग।

वाःसदन—संज्ञा पुं० [सं०] जलपात्र [को०]।

वाःस्थ—वि० [सं०] पानी में स्थित। पानी में टिका हुआ [को०]।

वा^{1}—अव्य० [सं०] विकल्प या संदेहवाचक शब्द। या। अथवा।

वा(पु)^2—सर्व० [हिं० वह] ब्रजभाषा में प्रथम पुरुष का वह एकवचन रूप, जो कारकचिह्न लगने के पहले उसे प्राप्त होता है। जैसे,—वाने वाको, वासे, वासो इत्यादि। उ०—(क) वा सुरतरु महँ अवर एक अद्भुत छबि छाजै। साखा दल फल फूलनि हरि प्रतिबिंब बिराजै।—नंद० ग्रं०, पृ० ६। (ख) रहै देह वाके परस याहि दृगन ही देख।—बिहारी (शब्द०)। (ग) और प्रभु जब किवाड़ खोलन पधारते तब

श्री ठाकुर जी वा इ पुकार सों पूछते ।--दो सौ बावन०, भा० १, पृ० १०१ ।

वा^{३}—वि० [फा०] कुशादा । खुला या फैला हुआ । खुले । उ०—दिन के वा दतुम्न के दर्बार में रौनक अफरोज हुए ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १७ ।

वाइ(पु)^{१}—सर्व० [हि० वह] दे० 'वाहि' । उ०—नैन कमल ह्या लगत है कमल लगत है वाइ । कमल काल सज्जन हियो दोनों एक सुभाइ ।—रसनिधि (शब्द०) ।

वाइ†^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० वापी] वापिका । दे० 'वाय' ।

वाइक(पु)—वि० [सं० वाचिक] कहा हुआ । वाणी या वचन द्वारा व्यक्त । उ०—काइक वाइक मानस हू करि है गुरु देव ही बंदन मेरो ।—सुंदर० ग्रं०, भा० २, पृ० ३८३ ।

वाइकौंट– संज्ञा पुं० [अं०] [स्त्री० वाइकौंटेस] इंगलैंड के सामंतों और बड़े बड़े भूम्यधिकारियों को वंशपरंपरा के लिये दी जानेवाली एक प्रतिष्ठासूचक उपाधि जिसका दर्जा 'अर्ल' के नीचे और 'बैरन' के ऊपर है । विशेष दे० 'ड्यूक' ।

वाइज—वि०, संज्ञा पुं० [अ० वाइज] धर्मोपदेष्टा । उपदेशक । मजहबी नसीहत देनेवाला । उ०—रंगे शराब से मेरी नीयत बदल गई । वाइज की बात रह गई साकी की चल गई ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ६२० ।

वाइदा—संज्ञा पुं० [अ०] दे० 'वादा' ।

वाइन—संज्ञा स्त्री० [अं०] शराब । मद्य । सुरा ।

वाइस(पु)^{१}—संज्ञा पुं० दे० [सं० वायस] 'वायस' । उ०—कंक वाइस उलू गिद्ध सुर असुभ कहि ।—सुजान०, पृ० १६ ।

वाइस^{२}—संज्ञा पुं० [अं०] प्रतिनिधि । दूसरे के स्थान पर या सहायक रूप में काम करनेवाला व्यक्ति । जैसे, वाइस चांसलर, वाइस प्रेसिडेंट आदि ।

वाइस चांसलर—संज्ञा पुं० [अं०] विश्वविद्यालय का वह ऊँचा मुख्याधिकारी जो चांसलर के सहायतार्थ हो और प्राय: उसकी अनुपस्थिति के कारण उसके अधिकांश कामों को कर सकता हो । हिंदी में इसके पर्याय रूप में कहा कुलपति और कहीं उपकुलपति शब्द प्रयुक्त हो रहा है ।

वाइस चेयरमैन—संज्ञा पुं० [अं०] वह जिसका दर्जा चेयरमैन या सभाध्यक्ष के बाद ही होता है और जो उसकी अनुपस्थिति में उसका काम करता है । उपाध्यक्ष । उपसभापति । जैसे,-- म्युनिसिपैलिटी के वाइस चेयरमैन ।

वाइस प्रेसिडेंट—संज्ञा पुं० [अं०] वह जिसका दर्जा प्रेसिडेंट या सभापति के बाद ही होता है और जो उसकी अनुपस्तिथि में सभा का संचालन करता है । उपसभापति । जैसे,—कौंसिल के वाइस प्रेसिडेंट ।

वाइसराय—संज्ञा पुं० [अं०] अंग्रेजों के शासन काल मे हिंदुस्तान का वह सर्वप्रधान शासक अधिकारी जो सम्राट् के प्रतिनिधि (बड़ा लाट) के रूप में कार्य करता था और भारत का सर्वोच्च अधिकारी था । बड़े लाट साहब ।

वाई†—संज्ञा स्त्री० [सं० वायु] दे० 'वायु' । उ०— सकसे का जैतवार अकसे का वाई । अरिदल समुद्र आए कुंभज के भाई ।—रा० रू०, पृ० ६७ ।

वाउ‡—संज्ञा पुं० [सं० वायु] दे० 'वायु' । उ०---भ्रांति गनै सो लवै न वाउ ।—प्राण०, पृ० ३३ ।

वाउचर—संज्ञा पुं० [अं०] वह कागज या पुरजा या बही जिसमें किसी प्रकार के हिसाब का ब्यौरा हो ।

वाक्—पुं० [सं० वाच्] १. वाणी । वाक्य । २. सरस्वती । ३. बोलने की इंद्रिय । ४. शब्द । ५. ध्वनि (को०) । ६. कथन । वक्तव्य (को०) । ७. वादा । प्रतिज्ञा । ८. उक्ति (को०) ।

वाक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बगलों का समूह । २. बगलों की उड़ान (को०) । ३. वाणी । वाक्य । ४. वेद का एक भाग । ५. खेत की वह कूत जो बिना खेत नापे की जाती है ।

वाक^{२}— वि० वक संबंधी । बगलों का ।

वाकई^{१}—वि० [अ० वाक़ई] ठीक । यथार्थ । सच । वास्तव । जैसे,—जो कुछ कहता हूँ, वह वाकई कहता हुँ ।

वाकई^{२}—अव्य० सचमुच । यथार्थ में । वास्तव में । जैसे—क्या आप वाकई वहाँ गए थे ?

वाकफियत—संज्ञा स्त्री० [अ० वाक़फियत] १. वाकिफ होने का भाव जानकारी । २. जान पहचान । परिचय ।

वाकया—संज्ञा पुं० [अ० वाक़िअह्] १. कोई बात जो घटित हो । व्यापारसंयोग । घटना । २. वृत्तांत । समाचार ।

यौ०—वाकयानवीस, वाकयानिगार = मुसलमानी साम्राज्य में वह कर्मचारी जिसका कार्य इतिहास के रूप में घटनाओं को लिखना होता था ।

वाकयात—संज्ञा पुं० [अ० वाक़िआत] वाकया का बहुवचन ।

वाका—संज्ञा पुं० [अ० वाक़अ] १. होनेवाला । घटनेवाला ।

मुहा०—वाका होना = घटना के रूप में उपस्थित होना । घटित होना ।

२. स्थित । खड़ा । प्रतिष्ठित । जैसे,—वह मकान दरिया के किनारे वाका है ।

वाकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तंत्र के अनुसार एक देवी का नाम ।

वाकिफ—वि० [अ० वाक़िफ़] १. जानकार । ज्ञाता । जैसे,—मैं इस बात से वाकिफ न था । २. बात को समझने बूझनेवाला । बातों की जानकारी रखनेवाला । अनुभवी । जैसे,—किसी वाकिफ आदमी को इंतजाम के लिये भेजना चाहिए ।

वाकिफकार—वि० [अ० वाक़िफ़ + फा० कार] काम को समझने बूझनेवाला । जो अनाड़ी न हो । कार्याभिज्ञ उ०—वे हैं वाकिफकार मिलन की राह बतावैं ।—पलटू०, पृ० ७ ।

वाकिफकारी—संज्ञा स्त्री० [अं० वाक़िफ़कारी] परिचय । जानकारी । अभिज्ञता [को०] ।

वाकिफीयत—संज्ञा स्त्री० [अ० वाक़िफ़ीयत] दे० 'वाकफियत' [को०] ।

वाकुची—संज्ञा स्त्री० [सं०] बकुची ।

वाकुल—संज्ञा पुं० [सं०] बकुल या मौलसिरी का पेड़ वा पुष्प ।

वाकै—संज्ञा पुं० [अ० वाक़अ] दे० 'वाका' । उ०—इस सब से उसकी कारवाई में अक्सर खलल वाकै होते रहते हैं ।—श्रीनिवास ग्रं०, पृ० ३१ ।

वाकोवाक—संज्ञा पुं० [सं०] कथोपथन। बातचीत।

वाकोवाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] परस्पर कथोपकथन। बातचीत। २. परस्पर तर्क। ३. तर्क विद्या।

विशेष—छांदोग्योपनिषद् में नारद ने सनत्कुमारों से अपनी जिन जिन विद्याओं के ज्ञाता होने की बात कही थी, उनमें 'वाकोवाक्य' विद्या भी थी।

वाकौ†—संज्ञा पुं० [अ० वाक़यह्] दे० 'वाकया'। उ०—वाकौ झूठौ अक्खयौ, दक्खिण गयौ सदूर।—रा० रू०, पृ० ३२४।

वाक्कलह—संज्ञा पुं० [सं०] कहासुनी। वाक् युद्ध। उ०—मुख्य विवादग्रस्त विषय छूट कर व्यर्थ घृणित वाक्कलह उत्पन्न हो जाता। प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३०३।

वाक्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] चरक के अनुसार एक प्रकार का पक्षी।

वाक्कीर—संज्ञा पुं० [सं०] पत्नी का भाई। साला। श्यालक [को०]।

वाक्केलि, वाक्केली—संज्ञा स्त्री० [सं०] हास परिहास [को०]।

वाक्क्षत—संज्ञा पुं० [सं०] बात की चोट।

वाक्चपल—वि० [सं०] १. बहुत बातें करनेवाला। बातें करने में तेज। मुँहजोर। २. भड़भड़िया।

वाक्छल—संज्ञा पुं० [सं०] न्यायशास्त्र के अनुसार छल के तीन भेदों में से एक।

विशेष—जब वक्ता के साधारण रूप से कहे हुए कथन में दूसरे पक्ष द्वारा अभिप्रेत अर्थ से अन्य अर्थ की कल्पना उसे केवल चक्कर में डालने के लिये की जाती है, तब वाक्छल कहा जाता है। जैसे,—वक्ता ने कहा,—यह बालक नवकंबल है। (नवकंबलोऽयं बालकः) अर्थात् नए कंबलवाला है। इसका प्रतिवादी यदि यह अर्थ लगावे कि इस बालक के पास संख्या में नौ कंबल हैं, और कहे—'नौ कंबल कहाँ हैं, एक ही तो है'। तो यह वाक्छल होगा।

वाक्पटु—वि० [सं०] बात करने में चतुर। वाक्कुशल।

वाक्पति—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहस्पति। २. विष्णु। ३. पुष्य नक्षत्र (को०)। ४. अनवद्य वचन। पटु वाक्य। निर्दोष बात।

वाक्पतिराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक कवि जो राजा यशोवर्मा के आश्रित थे। इन्होंने प्राकृत में गौड़वहो (गौड़वध) नामक काव्य की रचना की है। ये भवभूति के समसामयिक थे। २. मालवा का एक परमार राजा जो सीयक का पुत्र था। (इस नाम का एक और राजा हुआ है।)

वाक्पथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. बोलने के लिये उपयुक्त क्षण। २. वाणी का क्षेत्र। भाषण का क्षेत्र [को०]।

वाक्पाटव—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्पटुता। भाषण की योग्यता। [को०]।

वाक्पारीण—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वाणी या कथन के क्षेत्र को पार कर गया हो।

वाक्पारुष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वचन की कठोरता। बात का कड़ुआपन। मुँहजोरी। २. धर्मशास्त्रानुसार किसी की जाति, कुल इत्यादि के दोषों को इस प्रकार ऊंचे स्वर से कहना कि उससे उद्वेग उत्पन्न हो।

वाक्पुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] डींगभरी बात। बे सिर पैर की बात [को०]।

वाक्प्रचोदन—संज्ञा पुं० [सं०] मौखिक या शाब्दिक आज्ञा [को०]।

वाक्प्रतोद—संज्ञा पुं० [सं०] वाणी का अंकुश। व्यंग्य। ताना। [को०]।

वाक्प्रदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती नदी [को०]।

वाक्प्रलाप—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्पटुता। वाग्मिता [को०]।

वाक्प्रसारी—वि० [सं० वाक्प्रसारिन्] भाषणकुशल। लंबी चौड़ी बातें करनेवाला [को०]।

वाक्फियत—संज्ञा स्त्री० [अ० वाक़िफ़यत] जानकारी। परिज्ञान।

वाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह पद समूह जिससे श्रोता को वक्ता के अभिप्राय का बोध हो। भाषा की भाषावैज्ञानिक आर्थिक इकाई का बोधक पद समूह। वाक्य में कम से कम कारक (कर्तृ आदि) जो संज्ञा या सर्वनाम होता है, और क्रिया का होना आवश्यक है। क्रियापद और कारक पद से युक्त साकांक्ष अर्थबोधक पदसमूह या पदोच्चय। उद्देश्यांश और विधेयांशवाले सार्थक पदों का समूह।

विशेष—नैयायिकों और अलंकारियों के अनुसार वाक्य में (१) आकांक्षा, (२) योग्यता और (३) आसक्ति या सन्निधि होनी चाहिए। 'आकांक्षा' का अभिप्राय यह है कि शब्द यों ही रखे हुए न हों, वे मिलकर किसी एक तात्पर्य का बोध कराते हों। जैसे, कोई कहे—'मनुष्य चारपाई पुस्तक' तो यह वाक्य न होगा। जब वह कहेगा—'मनुष्य चारपाई पर पुस्तक पढ़ता है।' तब वाक्य होगा। 'योग्यता' का तात्पर्य यह है कि पदों के समूह से निकला हुआ अर्थ असंगत या असंभव न हो। जैसे, कोई कहे—'पानी में हाथ जल गया' तो यह वाक्य न होगा। 'आसक्ति' या 'सन्निधि' का मतलब है सामीप्य या निकटता। अर्थात् तात्पर्यबोध करानेवाले पदों के बीच देश या काल का व्यवधान न हो। जैसे, कोई यह न कहकर कि 'कुत्ता मारा, पानी पिया' यह कहे—'कुत्ता पिया मारा पानी' तो इसमें आसक्ति न होने से वाक्य न बनेगा; क्योंकि 'कुत्ता' और 'मारा' के बीच 'पिया' शब्द का व्यवधान पड़ता है। इसी प्रकार यदि कोई 'पानी' सबेरे कहे और 'पिया' शाम को कहे, तो इसमें काल संबंधी व्यवधान होगा।

काव्य भेद का विषय मुख्यतः न्याय दर्शन के विवेचन से प्रारंभ होता है और यह मीमांसा और न्यायदर्शनों के अंतर्गत आता है। दर्शन शास्त्रीय वाक्यों के ३ भेद-विधिवाक्य, अनुवाद वाक्य और अर्थवाद वाक्य किए गए हैं। इनमें अंतिम के चार भेद-स्तुति, निंदा, परकृति और पुराकल्प बताए गए हैं।

वक्ता के अभिप्रेत अथवा वक्तव्य की अबाधकता वाक्य का मुख्य उद्देश्य माना गया है। इसी की पृष्ठ भूमि में संस्कृत वैयाकरणों ने वाक्यस्फोट की उद्भावना की है। वाक्यपदीयकार द्वारा स्फोटात्मक वाक्य की अखंड सत्ता स्वीकृत है।

भाषावैज्ञानिकों की दृष्टि में वाक्य संश्लेषणात्मक और विश्लेषणात्मक होते हैं। शब्दाकृतिमूलक वाक्य के शब्दभेदानुसार चार भेद हैं—समासप्रधान, व्यासप्रधान, प्रत्ययप्रधान और विभक्तिप्रधान। इन्हीं के आधार पर भाषाओं का भी वर्गी-

करण विद्वानों ने किया है। आधुनिक व्याकरण की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद होते हैं—सरल वाक्य. मिश्रित वाक्य और संयुक्त वाक्य।

२. कथन। उक्ति (को०)। ३. न्याय में युक्ति। उपपत्ति। हेतु ४. विधि। नियम। अनुशासन (को०)। ५. ज्योतिष में गणना की सौर प्रक्रिया (को०)। ६ प्रतिज्ञा। पूर्व पक्ष (को०)। ७. आदेश। प्रभुत्व। शासन (को०)। ८. विधिसंमत साक्ष्य वा प्रमाण (को०)। ९. वाक्प्रदत्त होना (को०)।

वाक्यकंठ—वि० [सं० वाक्यकण्ठ] जिसके कंठ में बात आ गई हो। जो बोलना ही चाहता हो [को०]।

वाक्यकर- संज्ञा पुं० [सं०] १. एक की बात दूसरे से कहनेवाला। दूत। २. बातें बनानेवाला।

वाक्यखंड—संज्ञा पुं० [सं० वाक्यखण्ड] वाक्य के भीतर आया हुआ वाक्य। उपवाक्य [को०]।

वाक्यखंडन—संज्ञा पुं० [सं० वाक्यखण्डन] तर्क का खंडन करना [को०]।

वाक्यग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] किसी कारण से वाणी का रुकना। वाक्स्तंभन [को०]।

वाक्यज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] केवल वार्तालाप करना। वाचक ज्ञान। विद्या का ज्ञान। उ०—वाक्य ज्ञान अत्यंत निपुनभव पार न पावै कोई। निशि ग्रह मध्य दीप की बातन तम निवृत्त नहिं होई। संतवाणी०, भा० २, पृ० ८५।

वाक्यपदीय—संज्ञा पुं० [सं०] भर्तृहरि द्वारा विरचित एक व्याकरण ग्रंथ जिसमें तीन कांड हैं। वाक्यपद संबंधी व्याकरण दर्शन के सिद्धांतों का कारिकाओं में गूढ़ विवेचन है। व्याकरण दर्शन के प्राचीनतम और प्रामाणिक ग्रंथों में इसकी गणना है। शब्दब्रह्म, स्फोटब्रह्म और स्फोटवाद का इसमें प्रतिपादन है। इसे 'हरिकारिका' भी कहते हैं। इसकी दो प्राचीन टीकाएँ प्राप्त होती हैं।

वाक्यपद्धति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाक्यरचना की पद्धति, प्रणाली या ढंग। शैली [को०]।

वाक्यप्रबंध—संज्ञा पुं० [सं०] १. निबंध। लेख। २. वाक्य की गति। वाक्य का प्रवाह [को०]।

वाक्यभेद—संज्ञा पुं० [सं०] मीमांसा के एक ही वाक्य का एक ही काल में परस्पर विरुद्ध अर्थ करना।

वाक्यरचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वाक्यविन्यास'।

वाक्यवक्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाक्यगत वक्रता। वाक्य की भंगिमा। उ०—अलंकार, चाहे अप्रस्तुत वस्तुयोजना के रूप में हों (जैसे उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा इत्यादि में), चाहे वाक्यवक्रता के रूप में हों (जैसे अप्रस्तुतप्रशंसा, परिसंख्या, व्याजस्तुति, विरोध इत्यादि में), चाहे वर्णविन्यास के रूप में (जैसे अनुप्रास में) लाए जाते है वे प्रस्तुत भाव या भावना के उत्कर्ष के लिये ही।—रस०, पृ० ४९।

वाक्यविन्यास—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्यरचना। वाक्यों का संयोजन या गठन [को०]।

वाक्यविलेख—संज्ञा पुं० [सं०] लेखा जोखा तथा आदेश आदि लिखने का प्रधान अधिकारी [को०]।

वाक्यविशारद— वि० [सं०] बात करने में कुशल [को०]।

वाक्यशेष—संज्ञा पुं० [सं०] १. अधूरी बात। अधूरा भाषण। २. अपूर्ण वाक्य। न्यूनपद वाक्य [को०]।

वाक्यसारथि—संज्ञा पुं० [सं०] प्रवक्ता। प्रमुख बोलनेवाला [को०]।

वाक्यस्थ—वि० [सं०] आज्ञाकारी। विनत। नम्र (को०)।

वाक्यहारक—संज्ञा पुं० [सं०] दूत। संदेशवाहक [को०]।

वाक्यहारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दूती। संदेशवाहिका [को०]।

वाक्याडंबर—संज्ञा पुं० [सं० वाक्यआडम्बर] दीर्घ और क्लिष्ट शब्दों तथा लंबे लंबे समासों से युक्त वाक्य [को०]।

वाक्यार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाक्य का अर्थ। २. वाक्य प्रमाण के बल पर प्राप्त किया हुआ वाक्य का अभिप्राय। सामान्य ढंग से अभिप्रवृत्त, पदार्थों का विशेष में अवस्थान (सामान्येनाभिप्रवृत्तानां पदार्थानां यद्विशेषेऽवस्थानं स वाक्यार्थः)।

वाक्यालाप -संज्ञा पुं० [सं०] बात चीत। संभाषण। प्रवचन [को०]।

वाक्यैकवाक्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] मीमांसा के अनुसार एक वाक्य को दूसरे वाक्य से मिलाकर उसके सुसंगत अर्थ का बोध कराना।

वाक्यशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाणी। सरस्वती। उ०— ईश्वरीय वाक्शक्ति अर्थात् वाणी वा सरस्वती का प्रादुर्भाव हुआ। प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३७१।

वाक्शलाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कड़ी बात। २. लगनेवाली बात। ३. श्राप। शाप [को०]।

वाक्शल्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाक्शलाका'।

वाक्संग -संज्ञा पुं० [सं०वाक्सङ्ग] १. धीरे धीरे कहना। २. वाणी का रुक जाना। वाक्यस्तंभ [को०]।

वाक्संतक्षण—संज्ञा पुं० [सं० वाक्य सन्तक्षण] व्यंग्यात्मक वचन [को०]।

वाक्संयम—संज्ञा पुं० [वि०] वाणी का संयम। अन्यथा बात न कहना। व्यर्थ बातें न करना।

वाक्संवर—संज्ञा पुं० [सं०] वाणी को प्रतिरुद्ध या सीमित करना वाक्यसंयम [को०]।

वाक्सरणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाणी की पद्धति या राह। वाक्यप्रकार। बात कहने का ढंग। उ०—वाक्सरणि जिसके द्वारा पात्रों के विचार व्यक्त होते हैं।—पा० सा० सि०, पृ० १३१।

वाक्सार-- संज्ञा पुं० [सं०] व्यंग्य [को०]।

वाक्सिद्ध - संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी कही हुई बात ठीक निकले। वह जिसने वाक्सिद्धि प्राप्त कर ली हो [को०]।

वाक्सिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाणी की सिद्धि; अर्थात् इस प्रकार का सिद्धि या शक्ति कि जो भी बात मुँह से निकले, वह ठीक ठीक घटे।

वाक्स्तंभ—संज्ञा पुं० [सं० वाक्स्तम्भ] वाणी का रुक जाना। वाणी को लकवा मार जाना। बोली बंद हो जाना [को०]।

वागंत—संज्ञा पुं० [सं० वागन्त] सबसे ऊँचा स्वर [को०]।

वाग (पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वागा] दे० 'वागा'। उ०—घाली टापर वाग मुखि, झेक्यउ राज दुआरि। करहइ किया टहूकड़ा, निद्रा जागी नारि।—ढोला०, दू० ३४५।

वागतीत—संज्ञा पुं० [सं०] एक मिश्र वा संकर जाति [को०]।

वागधिप—संज्ञा पुं० [सं०] बृहस्पति [को०]।

वागना (पु)—क्रि॰ ऊ॰ [सं॰ √वंक = (चलाना)] दे॰ 'बागना'।

वागपहारक—वि॰, संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. दूसरों की उक्ति को चुरानेवाला। २. मिथ्यावादी [को॰]।

वागपेत—वि॰ [सं॰] मूक। गूँगा [को॰]।

वागर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वारक। २. शाण। सान। ३. निर्णय। ४. वृक। भेड़िया। ५. पंडित। ६. मुमुक्षु। ७. निर्भय। निडर। नायक। ८. वड़वाग्नि। (को॰)। ९, सूर्य का एक घोड़ा।

वागरवाल (पु)—वि॰ [सं॰ वागर] वाक्चतुर। विद्वान्। पंडित। उ॰—नरवर गढ़ ढोलइ कन्हइ; जावउ वागरवाल।—ढोला॰, दू॰, पृ॰ १०५।

वागा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वल्गा। लगाम।

वागाडंबर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वाक्+आडम्बर] वाग्जाल। व्यर्थ की लंबी चौड़ी बात। उ॰—किसी जन विशेष को मनस्ताप देने ही के अर्थ व्यर्थ वागाडंबर!—प्रेमघन॰, भा॰ २, पृ॰ २९९।

वागात्मा—वि॰ [सं॰ वाक्+आत्मन्] शब्दमय [को॰]।

वागारु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] आशा देकर निराश करनेवाला। आसरे में रखकर पीछे धोखा देनेवाला। विश्वासघाती।

वागाशनि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बुद्धदेव।

वागीश¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बृहस्पति। २. ब्रह्मा। ३. वाग्मी। कवि। ४. पुष्य नक्षत्र [को॰]।

वागीश²—वि॰ अच्छा बोलनेवाला। वक्ता।

वागीशा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सरस्वती।

वागीश्वर¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बृहस्पति। २. ब्रह्मा। ३. मंजुघोष बोधिसत्व। ४. वाग्मी। कवि।

वागीश्वर²—वि॰ अच्छा बोलनेवाला। सद्वक्ता।

वागीश्वरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सरस्वती।

वागुंजार—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वागुञ्जार] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की मछली।

वागुजार—वि॰ [फा॰ वागुजार] छोड़ने या त्यागनेवाला [को॰]।

वागुजारी—संज्ञा स्त्री॰ [फा॰ वागुज़ारी] १. मुक्ति। त्यागना। २. छूट (जायदाद आदि की)।

वागुजाश्ता—वि॰ [फा॰ वागुजाश्तह्] छूटा या छोड़ा हुआ [को॰]।

वागुजी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] बकुची नाम की ओषधि। सोमराजी।

वागुण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कमरख। २. बैंगन। भंटा।

वागुरा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] मृगों या पक्षियों के फँसाने का जाल। जाल।
यौ॰—वागुरावृत्ति = (१) शिकारी। बहेलिया। (२) पशु फँसाने की जीविका।

वागुरिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हिरन फँसानेवाला शिकारी। मृगव्याध।

वागुरीक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'वागुरिक'। उ॰—एक तंतुवाय के सेवक के रूप में, वागुरीक मृगयाशिक अथवा बढ़ई का काम करते हैं।—हिंदु॰ सभ्यता, पृ॰ ३०४।

वागुलि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] डिब्बा। पानदान।

वागुलिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] राजाओं का वह सेवक जिसका काम उनको पान खिलाना होता है। खवास।

वागुस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का बड़ा मत्स्य [को॰]।

वागृषभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. उत्तम वक्ता। २. विद्वान् [को॰]।

वाग्गुण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वक्तृत्व की श्रेष्ठता। बोलने का एक गुण वा पद्धति।

विशेष—हेमचंद्र ने ३५ प्रकार के वाग्गुण कहे हैं।

वाग्गुद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का पक्षी।

विशेष—मनुस्मृति में लिखा है कि जो गुड़ चुराता है, वह दूसरे जन्म में वाग्गुद पक्षी होता है।

वाग्गुलि, वाग्गुलिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] राजाओं का वह खवास जो उनको पान खिलाता है।

वाग्जाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बातों की लपेट। बातों का आडंबर या भरमार।

वाग्जीवन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विदूषक [को॰]।

वाग्डंबर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वाग्डंबर] १. दर्पवचन। अतिशयोक्ति। २. विदग्धतापूर्ण भाषा [को॰]।

वाग्दंड—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वाग्दण्ड] १. भला बुरा कहने का दंड। मौखिक दंड। डाँट डपट। लिथाड़। २. वाक्संयम। वाणी का नियंत्रण (को॰)।

वाग्दत्त—वि॰ [सं॰] मुँह से दिया हुआ। वचनों द्वारा प्रदान किया हुआ। जिसे दूसरे को देने के लिये कह चुके हों।

वाग्दत्ता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वह कन्या जिसके विवाह की बात किसी के साथ ठहराई जा चुकी हो, केवल विवाह संस्कार होने को बाकी हो। उ॰—यह विधि वाग्दत्ता कन्या के लिये है।—प्रेमघन॰, भा॰ २, पृ॰ १९९।

विशेष—पूर्व काल में प्रथा थी कि कन्या का पिता जामाता के पास जाकर कहता था कि मैं अपनी कन्या तुम्हें दूँगा। इस प्रकार देने को कही हुई कन्या वाग्दत्ता कही गई है। आजकल इस प्रकार तो नहीं कहा जाता; पर बरच्छा या फलदान का टीका चढ़ाया जाता है।

वाग्दरिद्र—वि॰ [सं॰] बहुत कम बोलनेवाला। अल्पवक्ता [को॰]।

वाग्दल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ओष्ठाधर। ओठ।

वाग्दान—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कन्या के पिता का किसी से जाकर यह कहना कि मैं अपनी कन्या तुम्हें ब्याहूँगा।

विशेष—प्राचीन काल में कन्या का पिता जिसे उत्तम वर समझता था, उसके पास जाकर कहता था—'मैं अपनी कन्या तुम्हें दूँगा'। यही कथन वाग्दान कहलाता था।

वाग्दुष्ट¹—वि॰ [सं॰] १. परुषभाषी। कटुभाषी। २. जिसे किसी ने शाप दिया हो। जिसे किसी ने कोसा हो। अभिशप्त। ३. अशुद्ध वा व्याकरण के प्रतिकूल भाषा का प्रयोग करनेवाला (को॰)।

वाग्दुष्ट²—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जो निंदा करता हो। निंदक। वह ब्राह्मण जिसका उपयुक्त समय पर उपनयन संस्कार न हुआ हो [को॰]।

वाग्देवता—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वाणी। सरस्वती।

वाग्देवी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सरस्वती। वाणी।

वाग्देवत्यचरु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह चरु जो सरस्वती के उद्देश्य से पकाया गया हो।

वाग्दोष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बोलने की त्रुटि। जैसे, वर्णों का ठीक उच्चारण न करना इत्यादि। २. व्याकरण संबंधी त्रुटियाँ या दोष। ३. निंदा या गाली।

वाग्धारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाणी की अप्रतिहत गति। वाणी की अटूट धारा। उ०—रामानंद और वल्लभाचार्य ने जिस भक्तिरस का प्रभूत संचय किया, कबीर, सूर आदि की वाग्धारा ने उसका संचार जनता के बीच किया।—आचार्य०, पृ० ९४।

वाग्निबंधन—वि० [सं० वाग्निबन्धन] जो शब्दों पर निर्भर या आधारित हो [को०]।

वाग्बंधन—संज्ञा पुं० [सं० वाग्बन्धन] बोलने से विरत करना। बोलने न देना।

वाग्बद्ध—वि० [सं०] मौन। चुप [को०]।

वाग्बाहुल्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वागाडंबर'। उ०—उनकी कृति वाग्बाहुल्य से भरी रहती है।—साहित्य०, पृ० २५१।

वाग्भट—संज्ञा पुं० [सं०] १. अष्टांगहृदय सहिता नामक वैद्यक के ग्रंथ के रचयिता जिनके पिता का नाम सिंहगुप्त था। ग्रंथकार का वैद्यक के ग्रंथकर्ताओं में बड़ा संमान और प्रामाण्य है। २. पदार्थचंद्रिका, भावप्रकाश, रसरत्न समुच्चय, शास्त्रदर्पण आदि के रचयिता। ३. वैद्यक निघंटु के रचयिता। ४. एक जैन पंडित जिनके पिता का नाम नेमिकुमार था। इनके रचे अलंकारतिलक, वाग्भटालंकार और छंदानुशासन प्रसिद्ध ग्रंथ हैं।

वाग्मिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पांडित्य। २. उत्तम वक्तृत्व शक्ति [को०]।

वाग्मित्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाग्मिता' [को०]।

वाग्मी—संज्ञा पुं० [सं० वाग्मिन्] १. वाचाल। अच्छा वक्ता। २. पंडित। ३. बृहस्पति। ४. एक पुरुवंशी राजा। ५. विष्णु (को०)। ६. शुक। तोता (को०)।

वाग्य¹—वि० [सं०] १. परिमितभाषी। २. सत्य वक्ता [को०]।

वाग्य²—संज्ञा पुं० १. निर्वेद। २. विनम्रता। विनय। शालीनता (को०)। ५. संदेह। शंका। विकल्प (को०)।

वाग्यत—वि० [सं०] वाणी का संयम या निरोध करनेवाला मितभाषी। [को०]।

वाग्यम—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने वाणी का निरोध कर लिया हो, मुनि [को०]।

वाग्यमन—संज्ञा पुं० [सं०] वाणी का संयम। बोलने में संयम।

वाग्याम—संज्ञा पुं० [सं०] मूक। गूँगा [को०]।

वाग्युद्ध—संज्ञा पुं० [सं०]। कहासुनी। वादविवाद।

वाग्वज्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशुद्ध रूप से कहा हुआ वाक्य। २. कठोर वाक्य। ३. शाप।

वाग्वद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चमगादड़ [को०]।

वाग्वादिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती।

वाग्विद—वि० [सं०] दे० 'वाग्विदग्ध' [को०]।

वाग्विदग्ध—वि० [सं०] १. पंडित। २. बातचीत करने में चतुर।

वाग्विदग्धता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० वाग्वैदग्ध्य'।

वाग्विनिःसृत—वि० [सं०] कथन से व्यंजित [को०]।

वाग्विभव—संज्ञा पुं० [सं०] वाणीरूपी संपत्ति। वाणी का वैभव। भाषा पर विशेष अधिकार [को०]।

वाग्विरोध—संज्ञा पुं० [पुं०] वादविवाद। कहासुनी [को०]।

वाग्विलास—संज्ञा पुं० [सं०] आनदपूर्वक परस्पर संभाषण। आनंदपूर्वक बातचीत करना। २. व्यर्थ का वागाडंडर।

वाग्विलासी—संज्ञा पुं० [सं० वाग्विलासिन्] १. कपोत। कबूतर। २. पंडुक। पंडुखी [को०]।

वाग्विस्तर—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्प्रपंच। वाणी का विस्तार [को०]।

वाग्वीर—संज्ञा पुं० [सं०] खूब लंबी चौड़ी बातें करनेवाला व्यक्ति। बातचीत में वीरता दिखानेवाला आदमी [को०]।

वाग्वैचिज्य—संज्ञा पुं० [सं०] चमत्कारप्रियता। भाषा की विचित्रता। उ०—अभिव्यंजनावाद तो बेचारा अभिव्यजना को छोड़कर किसी वाग्वैचित्र्य की बात ही नहीं करता।—आचार्य०, पृ० १२०।

वाग्वैदग्ध्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. बात करने की चतुरता। २. सुंदर अलकार और चमत्कारपूर्ण उक्तियों की निपुणता। उ०—कवि गंग के छंदों में जैसा काव्यगत चमत्कार, वाग्वैदग्ध्य, भाषासौष्ठव वर्तमान है, उनके प्रकाश में रीतिकालीन कवियों की पृथक्ता स्पष्ट हो जाती है।—अकबरी०, पृ११८।

विशेष—काव्य में वाग्वैदग्ध्य की प्रधानता मानते हुए भी काव्य की आत्मा रस ही कहा गया है। अग्निपुराण में स्पष्ट लिखा है—'वाग्वैदग्ध्यप्रधानेऽपि रस एवात्र जीवितम्'।

वाग्व्यय—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्क्षेप। वाक्व्यय [को०]।

वाग्व्यवहार—संज्ञा पुं० [सं०] वाचिक विचारणा। मौखिक निरूपण या कथन [को०]।

वाग्व्यापार—संज्ञा पुं० [सं०] १. कथन की पद्धति। २. भाषण शैली। ३. बातचीत। वार्तालाप [को०]।

वाघंभरⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्राम्बर] दे० 'बाघंबर'। उ० शिव विभूत गोला लिये, वाघभर धरि अंग।—प० रासो, पृ० १७९।

बाघंमर†—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्राम्बर] दे० 'वाघंबर'।

वाङ्निमित्त—संज्ञा पुं० [सं०] पूर्वसूचना [को०]।

वाङ्निश्चय—संज्ञा पुं० [सं०] वाणी द्वारा विवाह की बातचीत पक्की होना [को०]।

वाङ्निष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वचनबद्धता। वचन का पालन [को०]।

वाङ्मती—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी जो नैपाल से निकलती है और आजकल 'वागमती' कहलाती है।

विशेष—वराहपुराण (गोकर्ण महात्म्य) में इस नदी को अत्यंत पवित्र, गंगा से भी पवित्र, कहा है और इसमें स्नान करने तथा इसके किनारे मरने से विष्णुलोक की प्राप्ति बतलाई है।

वाङ्मधुर—वि० [सं०] मिष्टभाषी। मधुर बोलनेवाला [को०]।

वाङ्मय¹—वि० [सं०] १. वाक्यात्मक। वचन संबंधी। २. वचन द्वारा किया हुआ। जैसे,—वाङ्मय पाप।

विशेष—वचनों द्वारा किए हुए पाप चार प्रकार के कहे गए हैं—पारुष्य, अनृत, पैशुन्य और असंनद्ध प्रलाप।

३. जो पठन पाठन का विषय हो। ४. वाक्पटु। वाक्चतुर [को०]।

वाङ्मय²—संज्ञा पुं० १. गद्य पद्यात्मक वाक्य आदि जो पठन पाठन का विषय हो। साहित्य। उ०—इस्लाम के प्रवेश ने भारतवर्ष की ललित कलाओं तथा वाङ्मय के क्षेत्रों पर अपना विशेष प्रभाव डाला।—अकबरी० (भू०) पृ० २। २. वाक्पटुता। वाग्मिता (को०)। ३. अलंकारशास्त्र। साहित्यशास्त्र (को०)।

वाङ्मयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती।

वाङ्मुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का गद्यकाव्य। उपन्यास। २. भूमिका। प्रस्तावना।

वाङ्मूर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाणी। सरस्वती [को०]।

वाचंयम—संज्ञा पुं० [सं०] १. मुनि। २. मौन व्रत धारण करनेवाला पुरुष। मौनी।

वाच्—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाचा। वाणी। वाक्य।

वाच^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० वाच्] दे० 'वाच्'। उ०—काय मन वाच सब धर्म करिबो करै।—केशव (शब्द०)।

वाच^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की मछली। २. मदन नाम का एक पौधा (को०)।

वॉच—संज्ञा स्त्री० [अं०] जेब में रखने की या कलाई पर बाँधने की छोटी घड़ी।

वाचक^{1}—वि० (सं०) १. बतानेवाला। कहनेवाला। द्योतक। सूचक। बोधक। जैसे—उपमावाचक शब्द, लिंगवाचक प्रत्यय। २. मौखिक। शाब्दिक (को०)।

वाचक^{2}—संज्ञा पुं० १. वह जिससे किसी वस्तु का अर्थ बोध हो। नाम। संज्ञा। संकेत। २. वक्ता। ३. पाठक (को०)। ४. दूत। संदेशवाहक (को०)।

वाचकत्व—संज्ञा पुं० [सं०] सूचकत्व। वाचक होने का भाव। बोधकत्व। उ०—मेरी समझ में रसास्वादन का प्रकृत स्वरूप आनंद शब्द से व्यक्त नहीं होता। लोकोत्तर, अनिवर्चनीय आदि विशेषणों से न तो उसके वाचकत्व का परिहार होता है, न प्रयोग का प्रायश्चित्त होता है।—आचार्य०, पृ० ४।

वाचकता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वाचकत्व'।

वाचकधर्मलुप्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह उपमा जिसमें वाचक शब्द और सामान्य धर्म का लोप हो, जैसे ईस प्रसाद असीस तुम्हारी। सब सुतबधू देवसरि बारी।—तुलसी। यहाँ उपमान और उपमेय तो हैं पर उपमावाचक शब्द और साधारण धर्म नहीं है।

वाचकपद—संज्ञा पुं० [सं०] बोधक पद या शब्द [को०]।

वाचकलुप्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का उपमालंकार जिसमें उपमावाचक शब्द का लोप होता है। जैसे,—नील सरोरुह स्याम, तरुण अरुण वारिज नयन।—तुलसी (शब्द)।

वाचकोपमानधर्मलुप्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह उपमा जिसमें वाचक शब्द, उपमान और धर्म तीनों लुप्त हों केवल उपमेय भर हो। जैसे,—जेहि बर बाजि राम असवारा। तेहि सारदौ न बरनै पारा।—तुलसी।

वाचकोपमानलुप्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] उपमालंकार का एक भेद जिसमे वाचक और उपमान का लोप होता है। यथा,—तेरे ये कटु वचन हूँ सुनत हियो हरखात।

वाचकोपमेयलुप्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] उपमालंकार का एक भेद जिसमें वाचक और उपमेय का लोप होता है। जैसे,—अटा उदय होतै भयो छबिधर पूरन चंद।

वाचक्नवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वचक्नु ऋषि की अपत्या। गार्गी। वाचकूटी।

वाचन—संज्ञा पुं० [सं०] पढ़ना या उच्चारण करना। पठन। बाँचना। २. कहना। बताना। ३. प्रतिपादन।

वाचनक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पहेली। २. एक प्रकार की मिठाई (को०)।

वाचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पाठ। २. पाठ का अंश। ३. अध्याय। परिच्छेद [को०]।

वाचनालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह कमरा या भवन जहाँ पुस्तकें और समाचारपत्र आदि पढ़ने को मिलते हों। (अं०) रीडिंग रूम।

वाचनिक—वि० [सं०] १. वचन संबंधी। मौखिक। शब्दों द्वारा व्यक्त २. वाचन करनेवाला [को०]।

वाचयिता—वि० [सं० वाचयितृ] १. वाचक। बाँचनेवाला। २. पाठ करानेवाला। पाठसंचालक (को०)।

वाचसांपति—संज्ञा पुं० [सं० वाचसाम्पति] बृहस्पति।—(सोम, ब्रह्मा, प्रजापति, विश्वकर्मा आदि के लिये भी प्रयुक्त।)

वाचस्पति—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहस्पति। २. शब्द प्रतिपालक। ३. पुष्य नक्षत्र (को०)। ४. सुवक्ता (को०)। एक कोशकार (को०)। ६. एक ऋषि का नाम (को०)। ७. एक दार्शनिक का नाम (को०)। ८. वेद (को०)।

वाचस्पत्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. भाषणकुशलता। २. उत्तम वक्तव्य। ३. संस्कृत का एक कोशग्रंथ [को०]।

वाचस्पत्य^{2}—वि० १. वाचस्पति संबंधी। २. बृहस्पति द्वारा कथित या उक्त [को०]।

वाचा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वाणी। सरस्वती। २. वाक्य। वचन। शब्द। ३. सूक्त। ऋचा (को०)। ४. शपथ। कसम (को०)।

वाचा^{2}—वि० वचन द्वारा। वचन या कथन से।

वाचाट—वि० [सं०] १. वाचाल। २. बकी। बकवादी।

वाचापत्र—संज्ञा पुं० [सं०] प्रतिज्ञापत्र।

वाचाबंधⓅ—वि० [सं० वाचाबद्ध]। प्रतिज्ञाबद्ध। वचनबद्ध। उ०—वाचाबंध कंस कार छाँड्या तब वसुदेव पतीज हो। याके गर्भ अवतरे जे सुत सावधान ह्वै लाज हो।—सूर (शब्द०)।

वाचाबंधन—संज्ञा पुं० [सं० वाचाबन्धन] प्रतिज्ञाबद्ध होना।

वाचाबद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] वादे में बँधा हुआ। वचन देने के कारण विवश। प्रतिज्ञाबद्ध।

वाचाल—वि० [सं०] १. बोलने में तेज। वाक्पटु। २. बकवादी। व्यर्थ बकनेवाला।

वाचालता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बहुभाषिता। बहुत बोलना। २. बातचीत में निपुणता।

वाचासहाय—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वाणी द्वारा सहायक हो, मित्र। मधुरभाषी सखा [को०]।

वाचिक^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वाचिका, वाचिकी] १. वाणी संबंधी। २. वाणी से किया हुआ। ३. संकेत से कहा हुआ।

वाचिक^2—संज्ञा पुं० अभिनय का एक भेद जिसमें केवल वाक्यविन्यास द्वारा अभिनय का कार्य संपन्न होता है।

यौ० वाचिकपत्र—(१) प्रतिज्ञापत्र। (२) समाचारपत्र। (३) चिट्ठी। पत्र। वाचिकहारक = संदेशहारक. दूत।

वाची—वि० [सं० वाचिन्] १. वाक्ययुक्त। २. प्रकट करनेवाला। बोध करानेवाला। सूचक।

विशेष—यह शब्द समास में समस्त पद के अंत में आने से वाचक और विधायक का अर्थ देता है। जैसे,—पुरुषवाची = पुरुषवाचक।

वाचोयुक्ति^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदर भाषण। २. वक्तव्य [को०]।

वाचोयुक्ति^{2}—वि० भाषणपटु। वक्तव्य में निपुण [को०]।

वाचोयुक्तिपटु—सं० [सं०] वाग्मी [को०]।

वाच्य^1—वि० [सं०] १. कहने योग्य। जो कथन में आवे। २. शब्द-संकेत द्वारा जिसका बोध हो। अभिधा द्वारा जिसका बोध हो। अभिधेय।

विशेष—जिस शब्द द्वारा बोध होता है, उसे 'वाचक' कहते हैं, और जिस वस्तु या अर्थ का बोध होता है, उसे 'वाच्य' कहते हैं।

३. जिसे लोग भला बुरा कहें। कुत्सित। हीन।

वाच्य^2—संज्ञा पुं० १. अभिधेयार्थ। वाच्यार्थ। शब्दयोजना से प्राप्त अर्थ। व्यंग्य का उलटा। विशेष दे० 'वाच्यार्थ'। उ०—एक में भाव वाच्य द्वारा प्रकट किया गया, दूसरे में अलंकार रूप व्यंग्य द्वारा।—रस०, पृ० १२३। ४. प्रतिपादन।

वाच्यचित्र—संज्ञा पुं० [सं०] निम्न कोटि का काव्य [को०]।

वाच्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वाच्य होने का भाव। ४. कुत्सा। निंदा। अपयश [को०]।

वाच्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाच्यता' [को०]।

वाच्यार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] वह अभिप्राय जो शब्दों के नियत अर्थ द्वारा ही प्रकट हो। संकेत रूप से स्थिर शब्दों का नियत अर्थ। मूल शब्दार्थ।

विशेष—अभिधा, लक्षणा और व्यंजना ये तीन शक्तियाँ शब्द की मानी जाती हैं। इनमें से प्रथम के सिवा और सब का आधार 'अभिधा' है, जो शब्दसंकेत में नियत अर्थ का बोध कराती है। जैसे,—'कुत्ता' और 'इमली' कहने से पशुविशेष और वृक्षविशेष का ही बोध होता है। इस प्रकार का मूल अर्थ वाच्यार्थ कहलाता है। विशेष दे० 'शब्दशक्ति'।

वाच्यावाच्य—संज्ञा पुं० [सं०] भली बुरी या कहने न कहने योग्य बात। जैसे,—उसे वाच्यावाच्य का विचार नहीं है।

वाछो(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वत्सक, प्रा० वच्छअ, वच्छय] दे० 'वत्स'। उ०—पांच कापर चरावे। चित सौ वाछा राखीला।—दक्खिनी०, पृ० ३३।

वाजंती(पु)—वि० [हिं० बाजना, बजना] बजती हुई। उ०—बोली वीणा हंस गत, पग वाजंती पाल। रायजादी घर अंगणइ छुटे पटे छंछाल।—ढोला०, दू०, ५४०।

वाज^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. घृत। घी। २. यज्ञ। ३. अन्न। ४. जल। ५. संग्राम। युद्ध। ६. बल। ७. वाण में का पंख जो पीछे लगा रहता है। ८. पलक। निमेष। ९. वेग। उ०—अवलंबत, रव, जव, चपल, रंहसि, रय, त्वर, वाज। सहसा, सत्वर, रभ, तुरा, तुरन वेग के साज।—नद० ग्रं०, पृ० १०७। १०. मुनि। ११. शब्द। आवाज। १२ श्राद्ध में दिया जानेवाला चावल का पिंड (को०)। १३. पंख। पर (को०)। १४. चैत्र मास का एक नाम (को०)। १५. यज्ञ के अंत में पढ़ा जानेवाला एक मंत्र (को०)। १६. प्रतियोगिता में प्राप्त पुरस्कार (को०)। १७. तीव्र गतिवाला घोड़ा (को०)। १७. तीन ऋतुओं में से एक ऋतु (को०)। १८. प्राप्ति। लाभ (को०)।

वाज^2—संज्ञा पुं० [अ० वाज] १. उपदेश। शिक्षा। २. धार्मिक व्याख्यान। ३. धार्मिक उपदेश। कथा।

क्रि० प्र०—करना।—देना।—होना।

वाजकर्मा—वि० [सं० वाजकर्मन्] युद्ध में संलग्न [को०]।

वाजकृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] लड़ाई [को०]।

वाजगंध्य—वि० [सं० वाजगन्ध्य] जिसके पास गाड़ी भर धन या लूट का माल हो। [को०]।

वाजजित्—वि० [सं०] प्रतियोगिता या युद्ध में विजयी होनेवाला [को०]।

वाजदा—वि० [सं०] वाज अर्थात् बल या वेग प्रदान करनेवाली [को०]।

वाजदावर्षा—संज्ञा पुं० [सं० वाजदावर्षस्] एक साम का नाम।

वाजदावा—वि० [सं० वाजदावन्] धनद्रव्य, इनाम आदि देनेवाला [को०]।

वाजना(पु)†—क्रि० अ० [हिं०] बजना। ध्वनित होना।

वाजपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. अन्नपति।

वाजपेई(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वाजपेयिन्, वाजपेयी] दे० 'वाजपेयी'। उ०—व्याध अपराध की साध राखी कौन, पिंगलै कौन मति भक्तिभेई। कौन धौं सोमजाजी अजामिल अधम कौन गजराज धौं वाजपेई?—तुलसी (शब्द०)।

वाजपेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रसिद्ध यज्ञ, जो सात श्रौत यज्ञों में पाँचवाँ है।

वाजपेयक—वि० [सं०] वाजपेय यज्ञ संबधी [को०]।

वाजपेयी—संज्ञा पुं० [सं० वाजपेयिन्] १. वह पुरुष जिसने वाजपेय यज्ञ किया हो। २. ब्राह्मणों का एक उपाधि जो कान्यकुब्जों में होती है। ३. अत्यंत कुलीन पुरुष। जैसे,—वे कौन बड़े भारी वाजपेयी हैं।

वाजप्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रकार ऋषि। इनके गोत्र के लोग वाजप्यायन कहलाते हैं।

वाजबी—वि० [फ़ा० वाजिबी] दे० 'वाजिबी'।

वाजभर्मीय—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम।

वाजभृत—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम।

वाजभोजी—संज्ञा पुं० [सं० वाजभोजिन्] वाजपेय यज्ञ [को०]।

वाजयु—वि० [सं०] १. युद्ध या प्रतियोगिता के लिये इच्छुक। २. तेजस्वी। शक्तिशाली। ३. उत्साही। ४. धन देनेवाला [को०]।

वाजवत—संज्ञा पुं० [सं०] [अपत्य वाजवतायनि] एक गोत्रकार ऋषि, जिनके गोत्र के लोग 'वाजवतायनि' कहलाते हैं।

वाजवाल—संज्ञा पुं० [सं०] मरकत [को०]।

वाजश्रव—संज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम।

वाजश्रवस—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाजश्रवा ऋषि के गोत्र में उत्पन्न पुरुष। २. एक ऋषि जिनके पुत्र का नाम 'नचिकेता' था और जो अपने पिता के क्रुद्ध होने पर यमराज के यहाँ चला गया था। वहाँ उसने उनसे ज्ञान प्राप्त किया था।

वाजश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० वाजश्रवस्] १. अग्नि। २. एक गोत्रकार ऋषि का नाम।

वाजस—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम ? का नाम।

वाजसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. विष्णु [को०]।

वाजसनि—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य। २. अन्नदाता (को०)।

वाजसनेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. यजुर्वेद की एक शाखा का नाम।

विशेष—इसे याज्ञवल्क्य ने अपने गुरु वैशंपायन पर क्रुद्ध होकर उनकी पढ़ाई हुई विद्या उगलने पर सूर्य के तप से प्राप्त की थी। मत्स्य पुराण के अनुसार वैशंपायन के शाप से वाजसनेय शाखा नष्ट हो गई। पर आजकल शुक्ल यजुर्वेद की जो संहिता मिलती है, वह वाजसनेय संहिता कहलाती है। यजुर्वेद के दो पाठ हैं शुक्ल और कृष्ण। शुक्ल में १५ शाखा हैं; कराव, माध्यंदिन; जाबाल, बुधेय, शाकेय, तापनीय, कापीस, पौंड्रवहा, आवर्तिक, परमावर्त्तिक, पाराशरीय, वैनेय, बौधेय, औधेय और गालव। यह सब एकत्रित होकर वाजसनेयी शाखा भी कहलाती हैं।

२. याज्ञवल्क्य ऋषि जो सूर्य के छात्र थे।

वाजसनेयक—वि० [सं०] १. वाजसनेय संबंधी। २. याज्ञवल्क्य द्वारा रचित [को०]।

वाजसनेयी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वाजसनेयिन्] १. वाजसनेय शाखा के प्रवर्तक याज्ञवल्क्य। २. इस शाखा के अनुयायी लोग [को०]।

वाजसनेयी^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुक्ल यजुर्वेद की पंद्रहों शाखाओं का नाम।—प्रा० भा० प०, पृ० १८२।

वाजसाम—संज्ञा पुं० [सं० वाजसामन्] एक साम का नाम।

वाजस्रजाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] वेण राजा का नाम।

वाजा(पु)ं—संज्ञा, पुं० [सं० वाद्य] दे० 'बाजा'। उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, वाजइ वाजा रंग। जिण वाटइ सज्जण गया, सा वाटड़ी सुरंग।—ढोला०, दू० ३५६।

वाजिगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० वाजिगन्धा] अश्वगंधा। असगंध।

वाजित—वि० [सं०] वाज युक्त। पंखोंवाला। जैसे, वाण [को०]।

वाजित्र—संज्ञा पुं० [सं० वादित्र] बाजा। वाद्य। वाद्ययंत्र। उ०—हुई सोपारी मनि हरष्यो छइ राव। वाजित्र बाजइ नीसाँणों घाव।—बी० रासो, पृ० ६।

वाजिदंत, वाजिदंतक—संज्ञा पुं० [सं० वाजिदन्त, वाजिदन्तक] वासक। अड़ूसा।

वाजिन—संज्ञा पुं० [सं०] १ शक्ति (वेद)। २. संघर्ष। होड़। ३. उलझन। ४ छेने का पानी [को०]।

वाजिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. घोड़ी। २. अश्वगंधा। असगंध। ३. उषा (को०)। ४. अन्न (वेद)।

वाजिब—वि० [अ०] उचित। ठीक। मुनासिब। उ०—वाकिफ हो सो गमि लहै, वाजिब सखुन अजूब।—कबीर० श०, पृ० ३०।

वाजिबी—वि० [अ०] उचित। ठीक। मुनासिब।

मुहा०—वाजिबी बात = ठीक बात। यथार्थ या सच्ची बात। वाजिबी खर्च = आवश्यक खर्च।

वाजिबुल्अदा^{1}—वि० [अ०] (रकम या धन) जिसके देने का समय आ गया हो। (वह रकम) जिसका दे देना उचित हो, या जिसे देने का समय पूरा हो गया हो।

वाजिबुल् अदा^{2}—संज्ञा पुं० ऐसा धन या रकम जिसे देने का समय पूरा हो चुका हो।

वाजिबुल् अर्ज—संज्ञा पुं० [अ० वाजिबुल अर्ज़] वह शर्त जो कानूनी बंदोबस्त के समय जमीदारों और काश्तकारों के बीच गाँव के रिवाज आदि के संबध में लिखी जाती है।

वाजिबुल् वसूल^{1}—वि० [अ०] (धन) जिसके वसूल करने का वक्त आ गया हो।

वाजिबुल् वसूल^{2}—संज्ञा पुं० ऐसा धन या रकम जिसे वसूल करना उचित हो।

वाजिपृष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] अम्लान वृक्ष। दे० 'अम्लान' [को०]।

वाजिभ—संज्ञा पुं० [पुं०] अश्विनी नक्षत्र।

वाजिभक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] चना। चणक [को०]।

वाजिभोजन—संज्ञा पुं० [सं०] मूँग। मुद्ग।

वाजिमान्—संज्ञा पुं० [सं० वाजिमत्] परवल। पटोल [को०]।

वाजिमेध—संज्ञा पुं० [सं०] एक यज्ञ। अश्वमेध।

वाजियोजक—संज्ञा पुं० [सं०] सारथी। साईस [को०]।

वाजिराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. उच्चैःश्रवा।

वाजिविष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वट का वृक्ष। बरगद [को०]।

वाजिशत्रु—संज्ञा पुं० [सं०] अश्वमार। कनेर का पेड़।

वाजिशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] मंदुरा। अस्तबल। घुडसाल [को०]।

वाजिशिरा—संज्ञा पुं० [सं० वाजिशिरस्] १. भगवान् के एक अवतार का नाम। २. एक दानव का नाम।

वाजी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वाजिन्] १. घोड़ा। २. वासक। अड़ूसा। ३. फटे हुए दूध का पानी।

विशेष—वैद्यक में इसे रुचिकर तथा तृष्णा, दाह, रक्तपित्त और ज्वर का नाशक लिखा है।

४. हवि। ५. बाण। तीर (को०)। ६. वह जो वाजसनेयी शाखा का अनुयायी हो (को०)। ७. आदित्य। सूर्य (को०)। ८. इंद्र।

६. बृहस्पति (को०)। १०. पक्षी (को०)। ११. सात की संख्या (को०)। १२. लगाम। वल्गा (को०)।

वाजी^{२}—वि० १. तीव्र। वेगयुक्त। तेज। २. सुदृढ़। मजबूत। ३. अन्नवाला। जिसके पास अन्न हो। ४. पंखोंवाला। पक्षयुक्त [को०]।

वाजीकर—वि० [सं०] १. कामोद्दीपक। २. शक्तिवर्धक [को०]।

वाजीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] वह आयुर्वेदिक प्रयोग जिससे मनुष्य में वीर्य, स्तंभनशक्ति और पुंसत्व की वृद्धि हो। उ०—जिस औषध से...स्त्री विषये अभिलाषा उत्पन्न हो और धातु बढ़े तिसको वाजीकरण कहते हैं।—शार्ङ्गधर०, पृ० ३६।

विशेष—जिस प्रयोग से मनुष्य अश्व के समान रतिशक्तिवाला हो, उसे वाजीकरण कहते हैं। मनुष्य में जब वीर्य की अल्पता होती है, तब वाजीकरण औषधों का व्यवहार किया जाता है। साधारणतः घी, दूध, मांस आदि पदार्थ वीर्यवर्द्धक होते हैं। पर आयुर्वेद में वाजीकरण पर एक अलग प्रकरण रहता है, जिसमें अनेक प्रकार की काष्ठौषधों और रसौषधों की व्यवस्था रहती है।

वाजीत्र—संज्ञा पुं० [सं० वादित्र] बाजा। वाद्ययंत्र। उ०—मोती चउक पुरावीया, वाजीत्र वाजे घुरइ निसांण।—बी० रासो, पृ० २२।

वाजूँ—वि० [अ० वाजूँ] अधोमुख। उलटा।

वाजे—वि० [अ० वाज़ेअ] १. रखने या घर देनेवाला। वजा करनेवाला। २. रचनेवाला बनानेवाला [को०]।

वाट—संज्ञा पुं० [सं०] १. मार्ग। रास्ता। उ०—जिण वाटइ सज्जण गया सा वाटड़ी सुरंग।—ढोला०, दू० ३५६। २. वास्तु। इमारत। ३. मंडप। ४. आवृत स्थान। घेरेदार जगह (को०)। ५. उद्यान। उपवन (को०)। ६. एक अन्न (को०)। ७. तट पर लगाया हुआ लकड़ी का बाँध (को०)। ८. उरुसंधि। वंक्षण (को०)। ९. प्रांत। प्रदेश (को०)।

वाटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. उद्यान। उपवन। २. घेरा। बाड़। दे० 'वाट' [को०]।

वाटड़ी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाट+(राज०) ड़ी (प्रत्य०) मार्ग। राह। पथ। उ०—सज्जण चाल्या हे सखी, वाजइ वाजारंग। जिण वाइट सज्जण गया सा वाटड़ी सुरंग।—ढोला०, दू० ३५६

वाटधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक जनपद जो काश्मीर के नैर्ऋत्य कोण में कहा गया है। नकुल के दिग्विजय में इसे पश्चिम में और मत्स्यपुराण में उत्तर दिशा में लिखा है। २. स्मृति के अनुसार ब्राह्मणी माता और वर्ण ब्राह्मण या कर्महीन ब्राह्मण से उत्पन्न एक संकर जाति। ३. वह सैन्याधिकारी जो अपनी सेना की प्रकृति एवं प्रवृत्ति से परिचित हो (को०)। ४. भूस्वामी। जमींदार (को०)।

वाटर—संज्ञा पुं० [अं०] पानी।

यौ०—वाटरकलर=(१) एक प्रकार का रंग। (२) इस रंग से बना चित्र। वाटर पेंटिंग=वाटरकलर से चित्र बनाना। वाटरपोलो=एक खेल का नाम। वाटरप्रूफ। वाटर मार्क=(१) जल की गहराई का सूचक चिह्न। (२) कागज पर छपा विशेष प्रकार का चिह्न आदि जो प्रकाश के सामने करने पर दिखाई पड़ता है, जैसे मुद्राविनिमय के नोटों आदि पर रहता है। वाटर वर्क्स। वाटरशूट। सोडावाटर आदि।

वाटरप्रूफ—वि० [अ०] जिसपर पानी का प्रभाव न पड़े। जो पानी में न भीग सके। जैसे, वाटरप्रूफ कपड़ा।

वाटरवर्क्स—संज्ञा पुं० [अं०] १. नगर में पानी पहुँचाने का विभाग। पानी पहुँचाने की कल का कार्यालय। २. पानी पहुँचाने की कल। जलकल।

वाटरशूट—संज्ञा स्त्री० [अ०] पानी में कूदकर तैरने की क्रीड़ा। जलक्रीड़ा।

वाटली(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्तुली, प्रा० वट्टुली, राज०, वाटला, अथवा देश० बट्टु या वट्ट, गुज० वाटको०] पात्र। छोटी कटोरी। उ०—मोती जड़ी स हाथि, सुरह सुगंधी वाटली। सूती माँझिम राति, जाणू ढोलू जागली।—ढोला० दू०, ५०५।

वाटश्रृंखला—संज्ञा स्त्री० [सं० वाट शृङ्खला] वह शृंखला या जंजीर जिससे कोई स्थान घेर दिया गया हो [को०]।

वाटि'—संज्ञा स्त्री० [सं०] घिरा हुआ भूभाग [को०]।

वाटि(पु)^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० वर्ति, प्रा० वट्टि, राज० वाटि] दे० 'बत्ती'। उ०—ढोला माखड़ी मुई, सइं सारड़ी न लध्ध। दीवा केरी वाटि जिम, खोड़ी खोड़ी दध्ध।—ढोला०, दू० ६०९।

वाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वास्तु। इमारत। २. बाग। बगीचा। ३. हिंगुपत्री। ४. पर्णशाला। कुटीर (को०)। ५. अतिबला। बरियारा (को०)।

वाटिदीर्घ—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वाटिदीर्घा] सरपत। एक प्रकार को लंबी घास [को०]।

वाटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वास्तु। इमारत। घर। २. वह भूभाग जहाँ कोई घर बनाया गया हो (को०)। ३. अहाता। बाड़ा (को०)। ४. उद्यान। उपवन (को०)। ५. सड़क। रथ्या (को०)। ६. जाँघ का जोड़। उरुसंधि (को०)। ७. एक प्रकार का अन्न (को०)। ८. अतिबला। बरियारा (को०)।

वाट्टक—संज्ञा पुं० [सं०] भुना हुआ जौ। बहुरी।

वाट्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बला। बरियारा। खिरैंटी। २. भुना हुआ जौ।

वाट्य'—वि० १. उपवन। २. बट्काष्ठ का बना हुआ। वट निर्मित (को०)।

वाट्यपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंदन। २. कुंकुम।

वाट्यपुष्पी—संज्ञा स्त्री [सं०] अतिबला। बरियारा

वाट्यमंड—संज्ञा पुं० [सं० वाट्यमण्ड] बिना भूसी या छिलके के भुने हुए और दले हुए जौ का माँड।

विशेष—एक भाग दले हुए जौ को चौगुने पानी में पकाने से वाट्यमंड बनता है। वैद्यक में यह हल्का, रुचिकर, दीपन, हृद्य तथा पित्त, श्लेष्मा, वायु और अनाहनाशक कहा गया है।

वाट्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] बरियारा । बीजबंद ।

वाट्याल—संज्ञा पुं० [सं०] बरियारा । बीजबंद ।

वाट्यालक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाट्याल' ।

वाट्यालिका, वाट्याली—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा बरियारा ।

वाड—संज्ञा पुं० [सं०] घेरा । बाड़ । वेष्टन [को०] ।

वाड़ पु—संज्ञा स्त्री० [सं० वाड] दे० 'बाड़' । उ०—सील संतोष की वाड़ करायलो गुरु शब्द रखवारी ।—राम० धर्म०, पृ० ४२ ।

वाड़व¹ संज्ञा पुं० [सं० वाडव] १. दे० 'बाड़व'¹ । २. ब्राह्मण (को०) । ३. एक वैयाकरण का नाम (को०) । ५. वडवा का समूह । अश्वसमूह (को०) । ६. एक मुहूर्त का नाम (को०) । ७. एक रतिबंध । ८. पाताल (को०) ।

वाड़व²—वि० दे० 'बाड़व'² ।

वाडवहरण—संज्ञा पुं० [सं०] घोड़ों का चारा । घोड़े को दिया जानेवाला चारा, दाना, घास आदि [को०] ।

वाडवहारक—संज्ञा पुं० [सं०] एक समुद्री जतु [को०] ।

वाड़वाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं० वाडवाग्नि] १. समुद्र के अंदर की आग । २. समुद्री आग । वह आग जो समुद्र में दिखाई देती है ।

वाड़वानल—संज्ञा पुं० सं० वाडवानल] बड़वानल । दे० वाड़वाग्नि [को०] ।

वाडवेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. अश्विनीकुमार । २. ब्राह्मण । ३. अश्व । घोड़ा । ४. साँड़ [को०] ।

वाडव्य—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण समुदाय [को०] ।

वाढ—वि० [सं०] दे० 'बाढ'² [को०] ।

वाढम्—अव्य० [सं०] अलम् । बस । काफी है । बहुत हो चुका ।

वाण—संज्ञा पुं० [सं०] धारदार फल लगा हुआ छड़ी के आकार का छोटा अस्त्र जो धनुष की डोरी पर खींचकर छोड़ा जाता है। तीर ।

विशेष—बृहत् शार्ङ्गधर में धनुष और वाण बनाने के संबंध में बहुत से नियम दिए गए हैं । उसमें लिखा है कि वाण या तीर का फल शुद्ध लौह का होना चाहिए । फल कई आकार के बनाए जाते थे, जैसे,—आरामुख, क्षुरप्र, गोपुच्छ, अर्धचंद्र, सूचीमुख, भल्ल, वत्सदत, द्विभल्ल, कीर्णक और काकतुंड । ये सब भिन्न भिन्न कामों के लिये होते थे । जैसे,—आरामुख वाण वर्म (बकतर) भेदने के लिये, अर्धचंद्र सिर काटने के लिये, आरामुख और सूचीमुख ढाल छेदने के लिये, क्षुरप्र धनुष काटने के लिये, भल्ल हृदय भेदने के लिये, द्विभल्ल धनुष की डोरी काटने के लिये, आदि । वाण के फल पर अच्छी जिला होनी चाहिए । पीपल, सेंधा नमक और गुड़ को गोमूत्र में पीसकर फल पर लेप करे, फिर फल को आग्न में तपाकर तेल में बुझावे, तो अच्छी जिला होगी । शर कैसा होना चाहिए, इसके संबंध में भी बहुत सी बातें हैं । वाण ठीक सीधा जाय, रास्ते में इधर उधर न हो, इसके लिये पिछले भाग में कुछ दूर तक कौवे, हंस, बगले, गीध और मयूर आदि किसी पक्षी के पर लगाने चाहिए । विशेष विवरण के लिये देखिए 'धनुर्वेद' और 'वाण' शब्द ।

वाणावली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वाणों की अवली । तीरों की कतार । तीरों की लगातार वर्षा । २ एक साथ बने हुए पाँच श्लोक । श्लोकों का पंचक ।

वाणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बुनना (कपड़ा आदि) । २. करगह । करघा । ३. सरस्वती । ४. बादल । ५. मूल्य । कीमत । ६. शब्द । वाणी [को०] ।

वाणिज—संज्ञा पुं० [सं०] १. वणिक । २. बड़वानल । ३. तुला राशि का चिह्न (को०) ।

वाणिजक—संज्ञा पुं० [सं०] वणिक् । व्यापारी ।

वाणिजिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वणिक् । व्यापारी । २. धूर्त । ठग । ३. बड़वानल [को०] ।

वाणिज्य—संज्ञा पुं० [सं०] व्यापार । वाणिज्य ।

वाणिज्यक—संज्ञा पुं० [सं०] व्यापारी [को०] ।

वाणिज्य दूत—संज्ञा पुं० [सं०] वह मनुष्य जो किसी स्वाधीन राज्य या देश के प्रतिनिधि रूप से दूसरे देश में रहता और अपने देश के व्यापारिक स्वार्थों की रक्षा करता हो । कान्सल । उ०—दोनों सरकार महावाणिज्य दूतों, वाणिज्य दूतों, उपवाणिज्य दूतों, तथा अन्य वाणिज्य दूताभिकर्ताओं की नियुक्ति के लिये संमत हैं ।—नेपाल०, पृ० २५६ ।

वाणिज्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वाणिज्य' [को०] ।

वाणिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्णवृत्त [को०] ।

वाणिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नर्तकी । २. मत्त । ३. शृंगारप्रिय और स्वेच्छाचारिणी औरत (लाक्ष०) । ४. एक वर्णवृत्त का नाम, जिसके प्रत्येक चरण में १६ वर्ण अर्थात् क्रमानुसार नगण, जगण, भगण, फिर जगण और अंत में रगण और गुरु होता है ।

वाणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १, सरस्वती । २. मुंह से निकले हुए सार्थक शब्द । वचन । उ०—इसमें भी मन और भाव हैं किंतु नहीं वैसी वाणी ।—पंचवटी, पृ० ९ ।

मुहा०—वाणी फुरना = मुँह से शब्द निकलना ।

३. वाक्शक्ति । उ०—इतनी कहत गरुड़ पर चढ़िकै तुरतहि मधुवन आए । कंबु कपोल परसि बालक के वाणी प्रगट कराए । —सूर (शब्द०) । ४. वागिंद्रिय । जीभ । रसना । उ०—नैन निरखि चक्रित ह्वै गए । मन वाणी दोऊ थकि रए ।—सूर (शब्द०) । ५. स्वर । ६. साहित्यिक रचना या कृति । ग्रंथ (को०) । ७. प्रशंसा । स्तवन । स्तुति (को०) । ८. एक छंद (को०) । ९. बुनाई [को०] ।

वाणीवाद—संज्ञा पुं० [सं०] एक पक्षी (को०) ।

वाणीमय—वि० [सं०] शब्दित । शब्दायमान । ध्वनित । उ०—वाणीमय मरु प्रांतर, छई है विषण्ण लाज ।—आराधना, पृ० ३१ ।

वातंड—संज्ञा पुं० [सं० वातण्ड] एक गोत्रकार ऋषि का नाम, जिनके गोत्रवाले वातंड्य कहलाते हैं।

वातंड्य—संज्ञा पुं० [सं० वातण्ड्य] [स्त्री० वातंड्यादिनी] वातंड ऋषि के गोत्र में उत्पन्न पुरुष।

वात—संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु। हवा। २. वैद्यक के अनुसार शरीर के अंदर की वह वायु जिसके कुपित होने से अनेक प्रकार के रोग होते हैं।

विशेष—शरीर में इसका स्थान पक्वाशय माना गया है। कहते हैं, शरीर की सब धातुओं और मल आदि का परिचालन इसी से होता है; और श्वास प्रश्वास, चेष्टा, वेग आदि इंद्रियों के कार्यों का भी यही मूल है।

३. वायु का देवता। वायु का अधिष्ठाता देवता (को०)। ४. गठिया। संधिवात (को०)। ५. धृष्ट नायक (को०)।

वात^{2}—वि० १. वही हुई। २. इच्छित। अभीष्ट। प्रार्थित [को०]।

वातकंटक—संज्ञा पुं० [सं० वातकण्टक] एक प्रकार का वात रोग

विशेष—इसमें पाँव की गाँठों में वायु के घुसने के कारण जोड़ों में बड़ी पीड़ा होती है। यह रोग ऊँचे नीचे पैर पड़ने या अधिक परिश्रम करने से हो जाता है।

वातक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशनपर्णी। २. उपपति। जार (को०)।

वातकपिंडक—संज्ञा पुं० [सं० वातक पिण्डक] जन्मजात नपुंसक [को०]।

वातकर—वि० [सं०] वायुकारक। शरीर में वात पैदा करनेवाला।

वातकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वातकर्मन्] अपानवायु का निकालना। पादना [को०]।

वातकी—वि० [सं० वातकिन्] १. वात संबंधी। वात दोष से उत्पन्न। उ०—स्वरभेद और सूखी खाँसी उठे ये वातकी खाँसी के लक्षण हैं।—माधव०, पृ० ८९। २. वात रोग का रोगी (को०)।

वातकुंडलिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वातकुण्डलिका] एक प्रकार का मूत्ररोग। उ०—इस दारुण व्याधि को वातकुंडलिका रोग कहते हैं।—माधव०, पृ० १७४।

विशेष—मूत्रकृच्छ्र का रोगी यदि कुपथ्य करके रूखी वस्तुएँ खाता है, तो यह उपद्रव होता है। इस व्याधि में वायु कुंडलाकार होकर पेड़ू में घूमता रहता है, रोगी को पेशाब करने में पीड़ा होती है, और बूँद बूँद करके पेशाब उतरता है।

वातकुंडली—संज्ञा स्त्री० [सं० वात कुण्डली] एक मूत्ररोग। विशेष दे० 'वातकुंडलिका' [को०]।

वातकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० वातकुम्भ] हाथी के माथे का निचला भाग। हाथी का गंडस्थल [को०]।

वातकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] धूल। गर्द।

वातकेलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदर आलाप। प्रेमियों की कानाफूसी। २. उपपति के दाँतों या नखों का क्षत।

वातकोपन—वि० [सं०] शरीरस्थ वायु को दूषित करनेवाला [को०]।

वातक्षोभ—संज्ञा पुं० [सं०] शरीरस्थ वायु का दूषित होना [को०]।

वातगंड—संज्ञा पुं० [सं० वातगण्ड] वातज गलगंड रोग जिसमें गले की नसें काली या लाल और कड़ी हो जाती हैं तथा बहुत दिन में पकती हैं।

वातगज—संज्ञा पुं० [सं०] तीव्र गति से दौड़नेवाला मृग [को०]।

वातगामी—संज्ञा पुं० [सं० वातगामिन्] पक्षी। विहग [को०]।

वातगुल्म—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गुल्म रोग जो वात के प्रकोप से होता है।

विशेष—वैद्यक के अनुसार अधिक भोजन करने, रूखा अन्न खाने, बलवान् से लड़ने, मल मूत्र रोकने या अधिक विरेचनादि लेने से यह रोग होता है। इसमें गोला सा बँध जाता है, जो इधर से उधर रेंगता सा जान पड़ता है। कभी कभी बड़ी पीड़ा होती है। यह पीड़ा प्रायः भोजन पचने के पीछे खाली पेट होने पर होती है और भोजन करने पर घट जाती है।

२. आँधी। अंधड़। तूफान (को०)।

वातघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शालपर्णी। २. अश्वगंधा। असगंध।

वातचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्योतिष में एक योग।

विशेष—आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन सूर्यास्त के समय यह योग आता है। उस समय वायु की दिशा द्वारा वर्ष के फलाफल का विचार किया जाता है।

२. अंधवायु। चक्रवात। बवंडर।

वातचटक—संज्ञा पुं० [सं०] तित्तिर। तीतर पक्षी।

वातज^{2}—वि० [सं०] वायु द्वारा उत्पन्न। वातकृत्।

वातज^{2}—संज्ञा पुं० उदरव्यथा। उदरशूल। पेट में उत्पन्न होनेवाली चुभन या पीड़ा [को०]।

वातजात—संज्ञा पुं० [सं० वात + जात] पवनसुत। हनूमान। उ०—सहमि सुखात वातजात की सुरति करि लवा ज्यों लुकात तुलसी झपेटे बाज के।—तुलसी (शब्द०)।

वातज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर।

विशेष—इसमें गला, होंठ और मुँह सूखते हैं, नींद नहीं आती, हिचकी आती है, शरीर रूखा हो जाता है, सिर और देह में पीड़ा होती है, मुँह फीका लगता है और मल रुद्ध हो जाता है। यह ज्वर कभी घट और कभी बढ़ जाता है।

वाततूल—संज्ञा पुं० [सं०] महीन तागा जो कभी कभी आकाश में इधर उधर उड़ता दिखाई पड़ता है।

विशेष—यह एक प्रकार की बहुत छोटी मकड़ियों का जाला होता है जिसके सहारे वह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर जाया करती हैं। इसी को बुढ़िया का तागा कहते हैं।

पर्या०—वृद्धसूत्रक। इंद्रतूल। ग्रावाहास। वंशकफ। मरुध्वज।

वातथुडा,—संज्ञा स्त्री० [सं०] [अन्य रूप—वातखुडा, वातथूडा, वातहुडा] १. तेज हवा। २. भयंकर वातरोगी। ३. एक प्रकार की चेचक की बीमारी। ४. सुंदरी स्त्री [को०]।

वातध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। २. धूल (को०)।

वातनाडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का नासूर जिसमें वायु के प्रकोप से दाँत की जड़ में नासूर हो जाता है। इसमें से रक्त सहित पीव निकला करता है और चुभने की सी पीड़ा होती है।

वातपंड—संज्ञा पुं० [सं० वातपण्ड] एक प्रकार का नपुंसक [को०]।

वातपट—संज्ञा पुं० [सं०] १. पताका। ध्वजा। २. नाव का पाल (को०)।

वातपत्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दिशा।

वातपर्याय—संज्ञा पुं० [सं०] एक चक्षुरोग, जिसमें कभी भौं में और कभी आँखें धंसने से बड़ी पीड़ा होती है।

वातपात—संज्ञा पुं० [सं०] वायु का प्रबल वेग या झोंका [को०]।

वातपित्ता—संज्ञा पुं० [सं०] एक तरह का गठिया रोग [को०]।

वातपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हनुमान। २. भीम। भीमसेन। ३. वंचक। ठग (को०)।

वातपोथ—संज्ञा पुं० [सं०] पलाश।

वातपोथक—संज्ञा पुं० [सं०] पलाश [को०]।

वातप्रकृति—वि० [सं०] जिसकी प्रकृति वायुप्रधान हो।

वातप्रकोप—संज्ञा पुं० [सं०] वायु का बढ़ जाना। वायु की अधिकता।

विशेष—इसमें अनेक प्रकार के रोग होते हैं।

वातप्रमी—संज्ञा पुं०, स्त्री० [सं०] १. मृग। हिरन। २. नकुल। नेवला। ३. घोड़ा।

वातप्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रमेह। उ०—उदावर्त,··· शोष, सूखी खाँसी, श्वास ये वातप्रमेह के उपद्रव हैं।—माधव०, पृ० १८५।

वातप्रवाहिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का अतिसार रोग [को०]।

वातप्रशमिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आलूबुखारा।

वातफुल्लांत्र—संज्ञा पुं० [सं० वातफुल्लान्त्र] १. वायु के कारण आँतों का फूलना। २. फुफ्फुस [को०]।

वातमंडली—संज्ञा स्त्री० [सं० वातमण्डली] वात्याचक्र। बवंडर [को०]।

वातमज—संज्ञा पुं० [सं०] जिधर की हवा हो, उधर मुख करके दौड़नेवाला मृग। वातमृग।

वातमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] वायुपथ। आकाश [को०]।

वातमृग—संज्ञा पुं० [सं०] जिधर की हवा हो, उधर मुख करके दौड़नेवाला मृग। वातमृग।

वातरंग—संज्ञा पुं० [सं० वातरङ्ग] चलदल वृक्ष। पीपल।

वातर—वि० [सं०] १. तूफानी। झंझामय। २. तेज। चुस्त [को०]।

वातरक्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक रोग जिसमें कुपथ्य और अयुक्ताहार विहार से रक्त वायु से दूषित हो जाता है।

विशेष—इसमें पैर के तलवे से घुटने तक छोटी छोटी फुंसियाँ हो जाती हैं, जठराग्नि मंद पड़ जाती है और शरीर दुर्बल होता जाता है।

वातरक्तघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] कुक्कुर नाम का वृक्ष [को०]।

वातरक्तारि—संज्ञा पुं० [सं०] पित्तघ्नी लता [को०]।

वातरथ—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ।

वातरायण—संज्ञा पुं० [सं०] १. निष्प्रयोजन पुरुष। निकम्मा आदमी। २. कांड। ३. करपत्र। आरा। ४. कूट। शिखर। चोटी। ५. चीड़ का पेड़। सरल वृक्ष। ६. उन्मत्त पुरुष। ७. वाण। ८. वाण की उड़ान। तीर के लक्ष्य तक पहुँचने की दूरी (को०)।

वातरूष—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्रधनुष। २. उत्कोच। घूस। रिशवत। ३. तूफान। प्रचंड हवा। आँधी (को०)।

वातरोग—संज्ञा पुं० [सं०] वात से उत्पन्न रोग। गठिया आदि [को०]।

वातरोहिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें रोगी की जांघ पर चारों ओर काटे के समान मांस उभर आता है और उसका गला रुक सा जाता है। इसमें रोगी को बड़ा कष्ट होता है।

वातर्द्धि—संज्ञा पुं० [सं०] काठ और लोहे का बना हुआ पात्र।

वातल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. चना। २. वायु। हवा (को०)।

वातल^2—वि० १. वायुकारक। वायुवर्धक। २. तूफानी। झंझामय (को०)। ३. हवा से फूला हुआ (को०)।

यौ०—वातलमंडली = बवंडर। वात्याचक्र। वातलयोनि = योनि का दूषित होना।

वातवलासक ज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर। उ०—देह रूखी हो, अंग जकड़ जावें कफ विशेष होय यह ज्वर वात और कफ से होता है इसको वातवलासक ज्वर कहते हैं।—माधव०, पृ० ३३।

वातवसन—संज्ञा पुं० [सं०] वातपट। पाल। उ०—जीर्ण शीर्ण वातवसन, दुर्गति है नौका की।—अपलक, पृ० ६८।

वातवस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] मूत्रनिरोध [को०]।

वात विलोडित—वि० [सं०] हवा से मथा हुआ। वायुकंपित। उ०—वात विलोडित जलप्रसार में क्षोभ और आकुलता का आभास मिलता है।—रस०, पृ० १७।

वातवृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंडकोष की सूजन। अंडवृद्धि। [को०]।

वातवैरी—संज्ञा पुं० [सं० वातवैरिन्] १. बादाम। २. एरंड। रेंड़ वृक्ष (को०)।

वातव्याधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] गठिया।

वातशीर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. वस्ति। पेड़ू। २. पिचकारी।

वातशूल—संज्ञा पुं० [सं०] वायुविकारजन्य शूल। वायु के विकार से होनेवाली पीड़ा [को०]।

वातशोणित—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वातरक्त' [को०]।

वातश्लेष्मज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर। उ०—स्तैमित्य नाम गीले कपड़े से देह का ढकना से जैसा हो ऐसा मालुम हो, संधियों में फूटनो, निद्रो, देह भारो, मस्तक भारो, नाक से पानी गिरे, खांसी, पसीने का आना, शरीर में दाह, ज्वर का मध्यवेग ये वातश्लेष्पज्वर के लक्षण हैं।—माधव० पृ० १६।

वातसख—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि।

वातसह—वि० [सं०] वात रोग से ग्रस्त। गठिया का रोगी। जिसे गठिया का रोग हो [को०]।

वातसार—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्व । बेल ।

वातसारथि—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि ।

वातस्कंध—संज्ञा पुं० [सं० वातस्कन्ध] आकाश का वह भाग जहाँ वायु चलती रहती है ।

वातस्वन—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि ।

वातहत—वि० [सं०] वायुजन्य उन्माद से ग्रस्त [को०] ।

वातहा—वि० [सं०] वायुविकार शामक । वायुनाशक [को०] ।

वातांड—संज्ञा पुं० [सं० वाताण्ड] अंडकोश का एक रोग, जिसमें एक अंड चलता रहता है ।

वाता—संज्ञा पुं० [सं० वातृ] पवन । वायु [को०] ।

वाताख्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह घर जिसमें दक्षिण और पूर्व की ओर दालान हो [को०] ।

वाताट—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य का घोड़ा । २. हिरन ।

वातातिसार—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अतिसार जो वायुविकार से होता है ।

विशेष—इसमें ललाई लिए हुए झागदार, रूखा, आम मिला हुआ दस्त होता है, और मल उतरते समय आवाज भी होती है ।—माधव०, पृ० ४५ ।

वातात्मज—संज्ञा पुं० [सं०] १. हनुमान । २. भीमसेन (को०) ।

वाताद—संज्ञा पुं० [सं०] बादाम ।

वाताध्वा—सं० पुं० [सं०] झरोखा । मोखा । गवाक्ष । खिड़की [को०] ।

वातापि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक असुर का नाम ।

विशेष—आतापि और वातापि दो भाई थे । दोनों मिलकर ऋषियों को बहुत सताया करते थे । वातापि तो भेंड़ बन जाता था और उसका भाई आतापि उसे मारकर ब्राह्मणों को भोजन कराया करता था । जब ब्राह्मण लोग खा चुकते, तब वह वातापि का नाम लेकर पुकारता था और वह उनका पेट फाड़कर निकल जाता था । इस प्रकार उन दोनों ने बहुत से ब्राह्मणों को मार डाला । एक दिन अगस्त्य ऋषि उन दोनों के घर आए । आतापि ने वातापि को मारकर अगस्त्य को खिलाया और फिर नाम लेकर पुकारने लगा । अगस्त्य जी ने डकार लेकर कहा कि वह तो मेरे पेट में कभी का पच गया, अब कहाँ आता है ।

यौ०—वातापिद्विट्, वातापिसूदन, वातापिहा=वातापि को मारने या पचा जानेवाले, अस्गत्य ऋषि ।

वातापी—संज्ञा पुं० [सं० वातापि] दे० 'वातापि' । उ०—मुनियों की कोख के भेदन करनेवाले वातापी नामक असुर को जिन्होंने पचा डाला था ।—वृहत्संहिता, पृ० ७६ ।

वाताप्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. उदक । जल । २. सोम । ३. शोथ । ४. उफान । खमीर [को०] ।

वाताम—संज्ञा पुं० [सं०] बादाम ।

वातामोदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कस्तूरी ।

वाताय—संज्ञा पुं० [सं०] पर्ण । पत्ता [को०] ।

वातायन—संज्ञा [सं०] १. गवाक्ष । झरोखा । छोटी खिड़की । २. घोड़ा । ३. एक मंत्रद्रष्टा ऋषि का नाम । ४. रामायण के अनुसार एक जनपद का नाम । ५ अलिंद, द्वारमंडप (को०) । ६. मंडप । माँड़ो (को०) ।

वातायमान—वि० [सं०] वायु की तरह गतिशील [को०] ।

वातायु—संज्ञा पुं० [सं०] हिरन ।

वातारि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एरंड । रेंड़ । २. शतमूली । ३. सिहारू । निर्गुंडी । ४. अजवाइन । ५. थूहर । सेंहुड़ । ६. बायविडंग । ७. सूरन । जिमीकंद । ८. भिलावाँ । ९. सतावर । १०. तिलक वृक्ष । ११. नील का पौधा ।

वातालि, वाताली—संज्ञा स्त्री० [सं०] वात्या । आँधी । तूफान [को०] ।

वातावरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. पृथ्वी के चारों ओर रहनेवाली वायु । २. परिस्थिति । ३. आस पास की स्थिति । उ०—प्रणामित है वातावरण, नमितमुख सांध्य कमल ।—अपरा, पृ० ३८ ।

वातावर्त—संज्ञा पुं० [सं०] बवंडर । वात्याचक्र [को०] ।

वाताश—संज्ञा पुं० [सं०] सर्प [को०] ।

वाताशी—संज्ञा पुं० [सं० वाताशिन्] साँप । सर्प [को०] ।

वाताश्व—संज्ञा पुं० [सं०] तीव्रगामी घोड़ा [को०] ।

वाताष्ठीला—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उदररोग जिसमें नाभि के नीचे वायु की गाँठ सी पड़ जाती है, जो इधर उधर रेंगती सी जान पड़ती है । यह कभी कभी मूत्र का अवरोध भी करती है ।

वातास—संज्ञा स्त्री० [सं० वात, हिं० बतास] हवा । वायु । बयार । उ०—आज जाने कैसी बातास, छोड़ती सौरभ श्लथ उच्छ्वास ।—गुंजन, पृ० ५३ ।

वाताहत—वि० [सं०] वायु से आहत, हिलाया हुआ । वायुकंपित । उ०—दिक्पिजर में बद्ध गजाधिप सा विनतानन, वाताहत हो गगन आर्त करता गुरु गर्जन ।—रश्मि०, पृ० ५४ । २. गठिया रोग से ग्रस्त (को०) ।

वाताहति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वायु का प्रचंड झोंका [को०] ।

वाताहार—वि० [सं०] वायु पीकर जीनेवाला [को०] ।

वातिंगण—संज्ञा पुं० [सं० वातिङ्गण] दे० 'वातिगम' [को०] ।

वाति—संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु । २. सूर्य । ३. चंद्रमा ।

वातिक[1]—वि० [सं०] [स्त्री० वातिकी] १. तूफानी । २. पागल । उन्माद से पीड़ित । ३. संधिवात या गठिया रोगवाला । ४. वायु के कारण उत्पन्न । वातजन्य । उ०—ऐसे शूलों को वातिक शूल कहते हैं ।—माधव०, पृ० १५९ ।

वातिक[2]—संज्ञा पुं० १. पपीहा । २. वह व्यक्ति जो वातव्याधि से प्रभावित हो । पागल । उन्मत्त । वातुल । ३. चाटुकार । ४. एक प्रकार का ज्वर । ५. देवयोनि विशेष । ६. ऐंद्रजालिक । बाजीगर । ७. विष वैद्य [को०] ।

वातिग—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वातिगम' ।

वातिगम—संज्ञा पुं० [सं०] १. भंटा । बैंगन । २. वह व्यक्ति जो धातुविज्ञान का ज्ञाता हो । खनिजविज्ञान का वेत्ता (को०) ।

वातीक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का छोटा पक्षी।

वातीय^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] चावल का माँड़ [को०]।

वातीय^{२}—वि० वायुसंबंधी [को०]।

वातुल^{१}—वि० [सं०] १. वायुप्रधान। २. वायु के कोप से जिसकी बुद्धि ठिकाने न हो। बातूनी। बकबादी (को०)। ३. संधिवात से पीड़ित (को०)।

वातुल^{२}—संज्ञा पुं० १. बावला। उन्मत्त। २. पागल। वायु का आवर्त। बवंडर (को०)।

वातुलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ा चमगादड़ [को०]।

वातूल—वि० [सं०] दे० 'वातुल'। उ०—उठता वह वातूल वेग से है कब से।—साकेत, पृ० ४०१।

वातूलीभ्रम—संज्ञा पुं० [सं०] बवंडर। वात्याचक्र [को०]।

वातृ—संज्ञा पुं० [सं०] वायु [को०]।

वातोदर—संज्ञा पुं० [सं०] एक वातरोग।

विशेष—इसमें हाथ, पाँव, नाभि, काँख, पसली, पेट, कमर और पीठ में पीड़ा होती है; सूखी खाँसी आती है; शरीर भारी रहता है; अंगों में ऐंठन होती है; और मल का अवरोध हो जाता है। पेट में कभी कभी गुड़गुड़ाहट भी होती है और पेट फूला रहता है। पेट ठोंकने से ऐसा शब्द निकलता है, जैसे हवा भरी हुई मशक ठोंकने से।

वातोना—संज्ञा पुं० [सं०] गोजिह्वा नाम का एक पौधा [को०]।

वातोर्मी—संज्ञा पुं० [सं०] ग्यारह अक्षरों का एक वर्णवृत्त जिसमें मगण, भगण, तगण और अंत में दो गुरु होते हैं। जैसे,—मो भाँती गो गहि धीरा धरो जू। नीकै कौरो सह युद्धै करो जू। पाओगे अर्जुन या रीति मुक्ति। वातोर्मी सो समुझो आत्मयुक्ति।—छंद:०, पृष्ठ १६१।

वातोलंबन—संज्ञा पुं० [सं० वातोलम्बन] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर।

विशेष—इसमें रोगी को श्वास, खाँसी, भ्रम और मूर्छा होती है तथा वह प्रलाप करता है। उसकी पसलियों में पीड़ा होती है, वह जंभाई अधिक लेता है और उसके मुँह का स्वाद कसैला रहता है।

वात्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बवडर। २. तूफान। आँधी। उ०—आरंभिक वात्या उद्गम मैं अब प्रकृति बन रहा संसृति का।—कामायनी, पृ० ७६।

वात्याचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. बवंडर। २. बावेला (लाक्ष०)। उ०—कारण समझ में नहीं आता—यह वात्याचक्र क्यों?—चंद्र०, पृ० १८१।

वात्स—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक गोत्रकार ऋषि का नाम। २. एक साम का नाम।

वात्सक—संज्ञा पुं० [सं०] बछड़ों का समूह या झुंड [को०]।

वात्सरिक—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिषी।

वात्सल्य—संज्ञा पुं० [स०] १. प्रेम। स्नेह। १. वह स्नेह जो पिता या माता के हृदय में संतति के प्रति होता है। माता पिता का प्रेम।

विशेष—साहित्य में जिस प्रकार नायक नायिका के रतिभाव के वर्णन द्वारा शृंगार रस माना जाता है, उसी प्रकार कुछ लोग माता पिता के रतिभाव के विभाव, अनुभाव और संचारी सहित वर्णन को वात्सल्य रस मानते हैं। पर यह सर्वसंमत नहीं है। अधिकांश लोग दांपत्य रति के अतिरिक्त और प्रकार के रति भाव को 'भाव' ही मानते हैं।

वात्सि, वात्सी—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्राह्मण और शूद्रा के संसर्ग से उत्पन्न कन्या [को०]।

वात्सिपुत्र, वात्सीपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] नाई। नापित [को०]।

वात्स्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक ऋषि का नाम। ३. एक गोत्र जिसमें और्व, च्यवन, भार्गव, जामदग्न्य और आप्नुवान नामक पाँच प्रवर होते हैं।

वात्स्यायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक ऋषि का नाम। २. न्यायशास्त्र के प्रसिद्ध भाष्यकार। ३. कामसूत्र के प्रणेता एक प्रसिद्ध ऋषि।

वाथुरी†—संज्ञा स्त्री० [देश०] एक पुरानी जाति का नाम। उ०—अन्य जातियाँ भी थीं—हार्डिक्क, बागुडि के पूर्वज वाथुरी तथा चूहड़े।—प्रा० भा० प०, पृ०, १८१।

वाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह बातचीत जो किसी तत्व के निर्णय के लिये हो। तर्क। शास्त्रार्थ। दलील।

विशेष—'वाद' न्याय के सोलह पदार्थों में दसवाँ पदार्थ माना गया है। जब किसी बात के संबंध में एक कहता है कि यह इस प्रकार है और दूसरा कहता है कि नहीं, इस प्रकार है, और दोनों अपने अपने पक्ष की युक्तियों को सामने रखते हुए कथोपकथन में प्रवृत्त होते हैं, तब वह कथोपकथन 'वाद' कहलाता है। यह वाद शास्त्रीय नियमों के अनुसार होता है, और उसमें दोनों अपने अपने कथन को प्रमाणों द्वारा पुष्ट करते हुए दूसरे के प्रमाणों का खंडन करते हैं। यदि कोई निग्रहस्थान मे आ जाता है, तो उसका पक्ष गिरा हुआ माना जाता है और वाद समाप्त हो जाता है।

२. किसी पक्ष के तत्वज्ञों द्वारा निश्चित सिद्धांत। उसूल। जैसे—अद्वैतवाद, आरंभवाद, परिणामवाद। ३. बहस। झगड़ा। ४. भाषण (को०)। ५. वक्तव्य। उक्ति। आरोप (को०)। ५. वर्णन। वृत्त (को०)। ६. उत्तर (को०)। ७. विवृति। व्याख्या (को०)। ८. ध्वनन। ध्वनि (को०)। ९. विवरण। अफवाह (को०)। १०. अभियोग। नालिश। (को०)। ११. संमति। सलाह (को०)। १२. अनुबंध। इकरारनामा (को०)।

वादक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाजा बजानेवाला। २. वक्ता। ३. वाद करनेवाला। तर्क या शास्त्रार्थ करनेवाला।

वादकर—वि० [सं०] दे० 'वादकृत्' [को०]।

वादकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० वादकर्तृ] वाद्य बजानेवाला। वादक [को०]।

वादकृत्—वि० [सं०], जो झगड़े या विवाद का कारण हो। विवाद करनेवाला [को०]।

वादग्रस्त—वि॰ [सं॰] १. किसी वाद का आग्रही। उ॰—इसका प्रमाण वादग्रस्त आलोचकों की प्रवृत्ति है।—आचार्य॰, पृ॰ १४१। २. अनिश्चित। विवादास्पद (को॰)।

वादचंचु—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वादचञ्चु] १. शास्त्रार्थ करने में पटु। वाद करने में दक्ष। २. हाजिरजवाब। श्लेषगर्भित उत्तर देने में पटु व्यक्ति (को॰)।

वाददंड—संज्ञा, पुं॰ [सं॰ वाददण्ड] सारंगी आदि बाजों के बजाने की कमानी।

वादद—वि॰ [सं॰] प्रतिस्पर्गी [को॰]।

वादन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बाजा बजाना। २. बाजा। ३. वह जो संगीतवाद्य को बजाता हो (को॰)।

वादनक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बाजा।

वादनीय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] नरसल। सर [को॰]।

वादप्रतिवाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शास्त्रीय विषयों में होनेवाला कथोपकथन। बहस।

वादयुद्ध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विवाद। तर्कवितर्क [को॰]।

वादरंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वादरङ्ग] १. अश्वत्थ का वृक्ष। २. गूलर का वृक्ष (को॰)।

वादर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कपास के सून का कपड़ा। २. कपास का पेड़। ३. बेर का पेड़।

वादरा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] कपास।

वादरायण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] व्यासदेव। वेदव्यास।

वादरायणि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. व्यास के पुत्र, शुकदेव। २. व्यासदेव।

वादरि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वादरायण के पिता।

विशेष—इनका मत वेदांत दर्शन में प्रायः उद्धृत मिलता है।

वादरिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बेर बीननेवाला।

वादल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मधुयष्टिका। जेठी मधु। मधु। मुलेठी। २. अंधकारमय दिवस (को॰)।

वादवादी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वादवादिन्] जैन [को॰]।

वादविवाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शाब्दिक झगड़ा। बहस।

यौ॰—**वादविवाद प्रतियोगिता** = वह वादविवाद जिसमें विभिन्न प्रतियोगी किसी निर्धारित विषय के पक्षविपक्ष में भाषण करते हैं और निर्णायकों की संमति से सर्वोत्तम वक्ता पुरस्कृत होते हैं।

वादसाधन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. अपकार करना। २. तर्क करना या तर्क में प्रमाण देना।

वादा—संज्ञा पुं॰ [अ॰ वाइदह] (१) नियत समय या घड़ी।

मुहा॰—**वादा आना** = १. घड़ी आ पहुंचना। नियत समय का प्राप्त होना। २. काल आना। मृत्यु का समय आना। **वादा पूरा होना** = जीवनकाल समाप्त होना।

२. इस बात का विश्वास दिलाना कि मैं अमुक काम करूंगा। वचन। प्रतिज्ञा। इकरार।

मुहा॰—**वादा करना** = कोई बात या काम करने के लिये वचन देना। प्रतिज्ञा करना। **वादा पूरा करना** = वचन के अनुसार काम पूरा करना। प्रतिज्ञा पूर्ण करना। **वादा टालना** = जिस समय कोई काम करने का वचन दिया हो, उस समय न करना। प्रतिज्ञा भंग करना। **वादा खिलाफी करना** = बात पूरी न करना। कथन के विरुद्ध कार्य करना। **वादा रखाना** = वचन लेना। प्रतिज्ञा कराना। उ॰—सौंह करि कहत हौं, एहो प्यारे रघुनाथ आवति रखाए वादो उनहीं के घर सों।—रघुनाथ (शब्द॰)। **वादे से निकल जाना** = वचन से पलट जाना। कहकर न करना। कहे के खिलाफ करना। कहकर मुकर जाना। उ॰—नवाब साहब ने शरई कसम खाई और कहा, अगर अबकी वादे से निकल जाऊँ तो शरीफ नहीं पाजी समझना, चमार समझना—सैर कु॰, पृ॰ २५।

यौ॰—**वादाखिलाफ** = वादा पूरा न करनेवाला। **वादाखिलाफी** = प्रतिज्ञा भंग। वचन पूरा न करना। **वादागाह** = सहेट स्थल। वह स्थान जहाँ मिलने की बात तै हुई हो। **वादाफरामोश, वादाशिकन** = वचन भंग करनेवाला। वादा पूरा न करनेवाला।

वादानुवाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] तर्क वितर्क। शास्त्रार्थ। बहस।

वादान्य—वि॰ [सं॰] उदार। वदान्य [को॰]।

वादाम—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बादाम [को॰]।

वादाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] सहस्रदंष्ट्रा नामक मछली।

वादाशिकनी [संज्ञा स्त्री॰] [फा॰] प्रतिज्ञा भंग। वादखिलाफी [को॰]।

वादि¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विद्वान्। बुद्धिमान। चतुर। उ॰—लह्यो जीति बहु वादिगन जिन वादीश्वर नाम।—भारतेंदु ग्रं॰, भा॰ १, पृ॰ १०२। २. वक्ता। बोलनेवाला (को॰)।

वादि²—अव्य॰, [हिं॰ बादि]। दे॰ 'बादि'।

वादिक¹—वि॰ [सं॰] १. तार्किक। वाद करनेवाला।

वादिक²—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बाजीगर। जादूगर। ऐंद्रजालिक। २. वंदी। भाँट [को॰]।

वादित¹ वि॰ [सं॰] १. बजाया हुआ। नादित। २. जो बोलने के लिये प्रेरित कराया गया हो। उच्चरित कराया हुआ (को॰)।

वादित²—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वाद्य संगीत [को॰]।

वादितव्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. जो कहे या बजाए जाने योग्य हो। २. वाद्य संगीत [को॰]।

वादित्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बाद्य। बाजा। उ॰—पै मिलि बैठत जबै सबै रँगि जात एक रँग। भिन्न भिन्न वादित्र यथा मिलि बजत एक सँग।—प्रेमघन॰ भा॰ १. पृ॰ ४। २. वाद्यसंगीत (को॰)।

यौ॰—**वादित्रगण** = वाद्य समूह। वाद्यश्रेणी।

वादित्रलगुड—संज्ञा पुं॰ [सं॰] नगाड़ा, ढाल आदि बजाने की लकड़ी।

वादिर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बेर के समान छोटे फलवाला वृक्ष [को॰]।

वादिराज—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वादिराज] मंजुघोष।

वादिश¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विद्वान् पुरुष। विद्याव्यसनी। २. संत। ऋषि। मुनि [को॰]।

वादिश²—वि॰ सत्यवक्ता। साधुवादी [को॰]।

वादींद्र—संज्ञा [सं॰ वादीन्द्र] मंजुघोष।

वादी¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वादिन्] १. वक्ता। बोलनेवाला। २. किसी वाद का पहले पहल प्रस्ताव करनेवाला जिसका प्रतिवादी की ओर से खंडन होता है। ३. व्यवहार में किसी के प्रति कोई अभियोग चलानेवाला। मुकदमा लानेवाला। फरियादी। मुद्दई। ४. व्याख्याता। अध्यापक (को॰)। ५. राग का मुख्य स्वर (को॰)। ६. रासायनिक। कामियागर (को॰)। ७. गायक। ८. बाजा बजानेवाला (को॰)। ९. एक बुद्ध (को॰)।

वादी^{२}—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. घाटी। २. नदीतट का मैदान। ३. बना जंगल [को०]।

वादीलाⓅ—वि० [सं० वादिन्+हिं० ला (प्रत्य०)] वाद करनेवाला। हठीला। हठवाला। उ०—वादीला बनवा रै, जितै कलाया जोर।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० २०।

वादुⓅ—संज्ञा पुं० [सं० वाद] वाद। संवाद। बातचीत। उ०—तेल तंबोल का वादु।—अकबरी०, पृ० १५०।

वादूलि—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

वाद्‌गल—संज्ञा पुं० [सं०] ओष्ठ। ओष्ठ।

वाद्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. बजाना। २. बाजा। ३. बाजे की ध्वनि या स्वर (को०)।

यौ० वाद्यकर, वाद्यधर=संगीतज्ञ। वाद्यनिर्घोष=वाद्य की ध्वनि। बाजे की आवाज वाद्यभांड

वाद्यक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाजा बजानेवाला। २. वाद्य (को०)।

वाद्यभांड—संज्ञा पुं० [सं० वाद्यभाण्ड] १. मुरज आदि बाजे। २. बाजों का समूह। वाद्ययंत्रों का ढेर (को०)।

वाद्यमान—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो बजने या बोलने में प्रवृत्त किया जाय। २. वाद्य संगीत [को०]।

वाध, वाधन—संज्ञा पुं० [सं०] बाधा। रोक। प्रतिबंध [को०]।

वाधल—संज्ञा पुं० [सं०] तैत्तरीय संहिता से सबंधित एक श्रौत सूत्र [को०]।

वाधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पीड़ा। २. निषेध। रोक [को०]।

वाधुवय, वाधूवय—संज्ञा पुं० [सं०] पाणिग्रहण। विवाह [को०]।

वाधुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक व्यक्ति का नाम। २. वह व्यक्ति जो संस्कार करे। संस्कार करनेवाला [को०]।

वाधू—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाव का डाँड़। २. नौका। नाव।

वाधूल—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रकार ऋषि का नाम। इस गोत्र के लोग वाधौल कहलाते हैं।

वाध्रीणस—संज्ञा पुं० [सं०] गैंडा [को०]।

वाध्यूश्व—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि।

वान^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कट। गोनटी। चटाई। २. पानी में लगनेवाला वायु का झोंका। ३. गति। ४ सुरंग। ५. सौरभ। सुगंध। ६. सूखा फल। ७. बाना। ८. बनों का समूह या घना जंगल (को०)। ९. बुनाई। बुनने की क्रिया (को०)। १०. घर की दीवार का छेद (को०)। ११. चतुर व्यक्ति (को०)। १२. यमराज (को०)। १३. एक प्रकार का बंसलोचन (को०)।

वान^{२}—वि० खिला हुआ। प्रफुल्लित। ३. हवा से सूखा हुआ। शुष्क। ३. वन का। वन संबंधी। जंगली [को०]।

वानⓅ^{३}—संज्ञा, स्त्री० [सं० वाणी] वाणी। वचन। प्रतिज्ञा। उ०—निज्ज वान सुप्रमान। वान नीसान बधै सुर।—पृ० रा०।

वानⓅ^{४}—संज्ञा पुं० [सं० वाण] दे० 'वाण'। उ०—करे कुंभ चूरं। भरे वान भूरं।—पृ० रा०, २। २८।

वानक—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मचर्य की अवस्था [को०]।

वानदंड—संज्ञा पुं० [सं० वानदण्ड] वह लकड़ी जिसमें बाना लपेटकर बुना जाता है।

वानप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. महुए का पेड़। मधूक वृक्ष। २. पलाश। ३. प्राचीन भारतीय आर्यों के अनुसार मनुष्य के चार विभागों या आश्रमों में से तीसरा विभाग या आश्रम।

विशेष—यह आश्रम गार्हस्थ्य के पीछे और संन्यास के पहले पड़ता है। शास्त्र के अनुसार पचास वर्ष के ऊपर हो जाने पर और गार्हस्थ्य आश्रम से चित्त हट जाने पर मनुष्य इस आश्रम का अधिकारी होता है। इस आश्रम में प्रवेश करनेवाले को नगर, गाँव या बस्ती से अलग वन में रहना, जंगली फल खाना, और उन्हीं से पंचमहायज्ञादि करना चाहिए शय्या, वाहन, वस्त्र, पलंग आदि सब त्याग देना चाहिए। स्त्री को चाहे पुत्र के पास छोड़े, चाहे अपने साथ वन में ले जाय। जब इस आश्रम में रहकर मनुष्य पूर्ण वैराग्यसंपन्न हो जाय, तब उसे संन्यास लेना चाहिए।

४. उदासी। वैरागी। साधु (को०)।

वानप्रस्थी—वि० [सं० वानप्रस्थिन्] वानप्रस्थ के योग्य। वानप्रस्थ से संबंधित। विरक्त। सर्वत्यागी। उ०—निर्मल वानप्रस्थी मनोवृत्ति में बरामदे में टहल रही थी।—वो दुनिया, पृ० १००।

वानप्रस्थ्य—संज्ञा पुं० [सं०] वानप्रस्थ की स्थिति या अवस्था [को०]।

वानर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बंदर। २. दोहे का एक भेद, जिसके प्रत्येक चरण में १० गुरु और २८ लघु होते हैं। यथा—जड़ चेतन गुणदोषमय, विश्व कीन्ह करतार। संत हंस गुण गहहिं पै परिहरि वारि विकार। ३. एक प्रकार का गंधद्रव्य। राल। यक्षधूप (को०)।

वानर^{२}—संज्ञा पुं० [देश०] राठौड़ क्षत्रियों की एक शाखा। उ०—बन्नर नील जिसौ बल वानर।—रा० रू०, पृ० १४६।

वानरकेतन, वानरकेतु, वानरध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] कपिध्वज। अर्जुन [को०]।

वानरप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] खिरनी का वृक्ष [को०]।

वानराक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बकरा [को०]।

वानराघात—संज्ञा पुं० [सं०] लोध्र वृक्ष [को०]।

वानरापसद—संज्ञा पुं० [सं०] उपेक्षणीय। तुच्छ।

वानरी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. केवाँच। कपिकच्छु। २. बंदर की मादा। बँदरिया। मर्कटी।

वानरी^{२}—वि० वानर का। वानर संबधी [को०]।

वानरेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वानरेंद्र] १. हनुमान। २. सुग्रीव [को०]।

वानल—संज्ञा पुं० [सं०] काली बनतुलसी।

वानवासक—संज्ञा पुं० [सं०] वैश्य पुरुष और वैदेही स्त्री से उत्पन्न संतान [को०]।

वानवासिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोलह मात्राओं के छंदों या चौपाई का एक भेद जिसमें नवीं और बारहवीं मात्राएँ लघु पड़ती हैं। जैसे,—'सीय लखन जेहि बिधि सुख लहहीं।

वानस्पत्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह वृक्ष जिसमें पहले फूल लगकर पीछे फल लगते हैं। जैसे, आम, जामुन आदि। २. वनस्पति का समूह।

वानस्पत्य^{२}—वि० १. वृक्ष संबंधी। वृक्ष से प्राप्त होनेवाला। वनस्पति निर्मित, जैसे सोम। २. वृक्ष के नीचे रहनेवाला (को०)।

वाना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बटेर पक्षी। २. सूखा फल (को०)।

वानायु—संज्ञा पुं० [सं०] १. भारत के पश्चिमोत्तर स्थित एक देश का प्राचीन नाम। २. हिरन [को०]।

वानायुज—संज्ञा पुं० [सं०] वानायु देश का घोड़ा।

वानिक—वि० [सं०] वनवासी [को०]।

वानिनि (पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वणिज (वणिक), प्रा० बनिअ, बनी] बनियाइन। वणिक् की पत्नी। उ०—
वानिनि बीथी माँडि सए सहस हि नागरि।—कीर्ति०, पृ० ३२।

वानीय^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] कैवर्त मुस्तक। केवटी मोथा। कुट। गोन।

वानीय^{२}—वि० बिनने योग्य [को०]।

वानीर—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेंत। उ०—जिनके तीर वानीर के भिरे मदकल कूजित विहंगमों से शोभित हैं।—श्यामा०, पृ० ४०। २. पाकड़ का पेड़। पक्कड़।

वानीरक—संज्ञा पुं० [सं०] मूँज।

वानीरज—संज्ञा पुं० [सं०] १. मूँज नाम की घास। २. कुष्ठ नाम का वृक्ष [को०]।

वानैत (पु)—संज्ञा पुं० [हिं० बान+ऐत (प्रत्य०)] दे० 'बानैत'। उ०—जित्यौ वानेतं उदल चढ़ेतं बैस मरेतं स्वर्ग गयौ।—प० रासो, पृ० १४६।

वानेय^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] गोन नाम का तृण जो पानी में होता है। कैवर्त मुस्तक।

वानेय^{२}—वि० १. जलसंबंधी। जलीय। २. वनसंबंधी। वन का [को०]।

वान्य—वि० [सं०] दे० 'वानेय'।

वान्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वनसमूह। २. मृतवत्सा गौ [को०]।

वाप—संज्ञा पुं० [सं०] १. बोना। वपन। वयन। २. मुंडन। ३. क्षेत्र। खेत। ४. बुनना। ५. वप्ता। बोनेवाला (को०)। ६. बीया। बीज (को०)।

विशेष—हिंदी के पितावाचक शब्द 'बाप' का भी यह पूर्वकालीन रूप है।

वापक—संज्ञा पुं० [सं०] बीज बोनेवाला।

वापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बीज बोना। २. क्षौर. मुंडन (को०)।

वापस—वि० [फ़ा०] लौटा हुआ। फिरा हुआ।

मुहा०—वापस आना = किसी स्थान पर जाकर वहाँ से फिर आ जाना। लौट आना। वापस करना = (१) किसी आए हुए मनुष्य को फिर वहीं भेजना, जहाँ से वह आया हो। लौटाना। (२) किसी वस्तु को मोल लेकर फिर दूकानदार को दे देना और उससे दाम ले लेना। जैसे,—यह छाता अच्छा नहीं है; वापस कर दो। (३) दे० 'वापस लेना'। (४) किसी से ली हुई वस्तु को फिर दे देना। वापस जाना = फिर वहीं जाना, जहाँ से आया हो। लौट जाना। वापस लेना = दी हुई या बेची हुई वस्तु को पुनः देने या बेचनेवाले द्वारा ले लेना। वापस होना = (१) लौट जाना। (२) किसी मोल ली हुई वस्तु का फिर दूकानदार को उससे दाम लेकर दे दिया जाना। फेरा जाना। जैसे,—अब यह छाता वापस नहीं हो सकता। (३) दी हुई वस्तु का फिर मिल जाना या ली हुई वस्तु का फिर दे दिया जाना।

वापसीं—वि० [फ़ा०] अंतिम। आखिरी। जैसे, वापसीं साँस [को०]।

वापसी^{१}—वि० [फ़ा० वापस] लौटा हुआ या फेरा हुआ। जैसे,—वापसी डाक।

वापसी^{२}—संज्ञा स्त्री० १. लौटने की क्रिया या भाव। प्रत्यावर्तन। जैसे,—वापसी के समय लेते जाना। २. किसी दी हुई वस्तु को फिर लेने या ली हुई वस्तु को फिर देने का काम या भाव।

वापारु (पु)—संज्ञा पुं० [सं० व्यापार] दे० 'व्यापार'। उ०—सुख दुःख अरु पुन्न पापु भला बुरा वापारु।—प्राण०, पृ० २११।

वापि—संज्ञा स्त्री० [सं० वापि, वापी] दे० 'वापी'। उ०—किधौं पेट थल किधौं, वापि किधौं सागर है। जेतो जल परै, तेतो सकल समातु है।—सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० १२१।

वापिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का बड़ा चौड़ा कूआँ या जलाशय। वापी। बावली।

वापित^{१}—वि० [सं०] १. बोया हुआ। २. मुंडित। मूँड़ा हुआ।

वापित^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान्य। बोवारी धान [को०]।

वापी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा जलाशय। बावली।

वापी^{२}—वि० [सं० वापिन्] बोनेवाला [को०]।

वापीह—संज्ञा पुं० [सं०] पपीहा। चातक [को०]।

वाप्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुट। २. बोवारी धान। ३. बावली का पानी।

वाबस्तगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] लगाव। संबंध [को०]।

वाबस्ता—वि० [फा० वाबस्तह्] १. बँधा हुआ। संबद्ध। २. संलग्न। ३. संबंधी। आत्मीय [को०]।

वाभन (पु)—संज्ञा पुं० [सं० ब्राह्मण] दे० 'ब्राह्मण'। उ०—वाभन को जनम जनेऊ मेलि जानि बूझ, जीभ ही बिगारिबे को याच्यो जन जन में।—अकबरी०, पृ० ११५।

वाम^{१}—वि० [सं०] १. बायाँ। दक्षिण या दाहिने का उलटा। २. प्रतिकूल। विरुद्ध। खिलाफ। अहित में तत्पर। उ०—विधि वाम की करनी कठिन जेइ मातु कीन्ही बावरी।—तुलसी (शब्द०)। ३. टेढ़ा। कुटिल। ४. खोटा। दुष्ट। नीच। ५. जो अच्छा न हो। बुरा। ६. बाईं ओर स्थित या विद्यमान (को०)। ७. सुंदर। प्रिय। लावण्यमय। जैसे, वामलोचना, वामोरु (को०)। ८. अल्प। लघु (को०)। ९. क्रूर। कठोर (को०)।

वाम^{२}—संज्ञा पुं० १. कामदेव। २. एक रुद्र का नाम। वामदेव। शिव। ३. वरुण। ४. कुच। स्तन। ५. धन। ६. ऋचीक के एक पुत्र का नाम। ७ कृष्ण के एक पुत्र का नाम। ८. चंद्रमा के रथ के एक घोड़े का नाम। ९. २४ अक्षरों का एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सात जगण और एक यगण होता है। इसे मंजरी, करंद और माधवी भी कहते हैं। यह एक प्रकार का सवैया ही है। जैसे,—जु लोक यथामति वेद पढ़ैं सह आगम औ दस आठ सयाने। ...लहैं भलि वाम अरू धनधाम तु काह भयो बिनु रामहि जाने।—छंदः०, पृ० २४५।

१०. निषिद्ध आचरण वा कार्य। कदाचार। वामाचार [को०]। ११. बायाँ पार्श्व या हाथ (को०)। १२. प्राणी। जंतु (को०)। १३. साँप (को०)। १४. वमन। मतली (को०)। १५ सुंदरतम वा अभीप्सित वस्तु। प्रिय वस्तु या व्यक्ति (को०)। १६. दुर्भाग्य। अभाग्य। संकट (को०)।

वाम(पु)^{३}—संज्ञा स्त्री० [सं० वामा] दे० 'वामा'। उ०—नवल त्रिभंग कदम तर ठाढ़ो, मोहत सब ब्रज वाम।—गीत (शब्द०)।

वाम^{४}—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १ ऋण कर्ज। २. रंग। वर्ण [को०]।

वामक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंगभंगी का एक भेद। २. बौद्ध ग्रंथों के अनुसार एक चक्रवर्ती। ३. एक संकर जाति (को०)।

वामक^{२}—१. बायाँ। २. विरुद्ध। विपरीत [को०]।

वामकक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रकार ऋषि का नाम जिनके गोत्र के लोग वामकक्षायन कहे जाते थे।

वामकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी जिसकी पूजा प्रायः जादूगर आदि करते हैं।

वामतः क्रि० वि० [सं० वामतस्] बाईं ओर। बाईं तरफ [को०]।

वामता—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रतिकूलता। विपरीतता। उ०—बुद्धि से तो क्षुद्र मानव भी चलाता काम अपने। वामता से हीन विधि की शक्ति क्या होती प्रमाणित।—इत्यलम्, पृ० ११४।

वामदृक्—संज्ञा स्त्री० [सं० वामदृश्] सुंदर नेत्रोंवाली औरत। स्त्री महिला।

वामदेव^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. गौतम गोत्रीय एक वैदिक ऋषि जो ऋग्वेद के चौथे मंडल के अधिकांश सूक्तों के द्रष्टा थे। ३. दशरथ के एक मंत्री का नाम।

वामदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. सावित्री।

वामदेव्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक साम का नाम। २. एक ऋषि का नाम। ३. पुराणानुसार शाल्मलि द्वीप के एक पर्वत का नाम।

वामदेव्य^{२}—वि० वामदेव ऋषि से उत्पन्न [को०]।

वामन^{१}—वि० [सं०] १. बौना। छोटे डील का। २. ह्रस्व। खर्व। ३. विनत। नम्र (को०)। ४. पूज्य। अभिवाद्य (को०)। ५. दुष्ट। नीच। ओछा (को०)।

वामन^{२}—संज्ञा पुं० १. विष्णु। २. शिव। ३. एक दिग्गज का नाम। ४. एक प्रकार का घोड़ा, जो डीलडौल में छोटा होता है। ५. दनु के एक पुत्र का नाम। ६. एक नाग का नाम। ७. गरुड़वंशी एक पक्षी का नाम। ८. क्रौंच द्वीप के एक पर्वत का नाम। ९. विष्णु भगवान् का पाँचवाँ अवतार जो बलि को छलने के लिये अदिति के गर्भ से हुआ था। १०. अठारह पुराणों में से एक। ११. नीले रंग का बकरा। उ०—नीले रंग के छाग को वामन कहते हैं।—बृहत्०, पृ० ३०८। १२. संस्कृत साहित्य में रीति संप्रदाय की प्रतिष्ठा करनेवाले एक आचार्य। ११. बौना या ठिगना व्यक्ति (को०)। १२. अंकोट या अंकोल का वृक्ष (को०)। १३. एक मास (को०)। १४. पाणिनि के सूत्र पर 'काशिका वृत्ति' नामक भाष्य के प्रणेता (को०)।

वामनक—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रौंच द्वीप का एक पर्वत। २ छोटे कद का आदमी। ३. ठिगनापन। बौना (को०)।

वामनद्वादशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक पर्व तिथि जो भाद्र शुक्ल १२ को पड़ती है। इस दिन व्रत करके विष्णु भगवान् के वामनावतार की पूजा की जाती है।

वामनपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] अट्ठारह पुराणों में से एक पुराण।

वामनयना संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदर नेत्रोंवाली स्त्री [को०]।

वामना—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक अप्सरा का नाम।

वामनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्कद की अनुचरी एक माता या मातृका का नाम। २. बौनी स्त्री।

वामनी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बौने आकार की स्त्री। २. घोड़ी। ३. एक प्रकार का नारी रोग जो योनि में होता है। वामिनी। ४. एक प्रकार की स्त्री [को०]।

वामनी^{२}—वि० वाम अर्थात् धन लानेवाली।

वामनीकृत—वि० [सं०] छोटा किया हुआ। नम्र किया हुआ। झुकाया हुआ [को०]।

वामनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] दीर्घ ईकार [को०]।

वामपथ—संज्ञा पुं० [सं० वाम+पथ] दे० 'वाममार्ग'। उ०—जन बलवर्धन के हेतु वामपथ का चालन।—अपरा पृ० २१२।

वामभ्रू—संज्ञा स्त्री [सं०] सुभ्रु। सुंदर भौहोंवाली स्त्री [को०]।

वाममार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] वेदविहित दक्षिण मार्ग से भिन्न तांत्रिक मत।

विशेष—वाम मार्ग में मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा, व्यभिचार आदि निषिद्ध बातों का विधान रहता है। तांत्रिक मत की दक्षिण मार्ग शाखा भी है जिसमें दक्षिणकाली, शिव, विष्णु आदि की उपासना का विशिष्ट विधान है।

वामरथ—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रकार ऋषि का नाम, जिसके गोत्रवाले वामरथ्य कहलाते थे।

वामलूर—संज्ञा पुं० [सं०] दीमक का भीटा। वल्मीक। बाँबी।

वामलोचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदरी स्त्री।

वामांगिनी, वामांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वामाङ्गिनी, वामाङ्गी] पत्नी। भार्या [को०]।

वामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्री। २. दुर्गा। ३. लक्ष्मी (को०)। ४. सरस्वती (को०)। ५. मनोहारिणी स्त्री। भ्रूविलासवती सुंदरी रमणी (को०)। ६. दस अक्षरों के एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में तगण, यगण और भगण तथा अंत में एक गुरु होता है। यथा—तू यों भग वामा तैं सरला। टेढ़े धनु ते ज्यों तीर चला। ये हैं दुख नाना की जननी। ऐसी हम गाथा ते अकनी।—छंद०:, पृ० १५४।

वामाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदर स्त्री। २. दीर्घ ईकार। वामनेत्र।

वामागम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वामाचार' [को०]।

वामाचार—संज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिक मत का एक भेद जिसमें पंचमकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन द्वारा उपास्य देव की पूजा की जाती है। इस मत को माननेवाले स्वमतावलंबी को वीर, साधक आदि और विरोधी को कंटक कहते हैं।

वामाचारी—संज्ञा पुं० [सं० वामाचारिन्] वामागम को माननेवाला वामाचार मत का अनुगामी [को०]।

वामापीड़न—संज्ञा पुं० [सं०] पीलू का पेड़।

वामारंभ—वि० [सं० वामारम्भ] जो झुके नहीं। स्वाभिमानी। अदमनीय [को०]।

वामावर्त—वि० [सं०] १. दक्षिणावर्त का उलटा। (वह फेरी) जो किसी वस्तु (देवप्रतिमा आदि) की बाईं ओर से आरंभ की जाय। जैसे,—वामावर्त परिक्रमा। २. (वह चक्कर) जो बाईं ओर से चला हो। ३. जिसमें बाईं ओर का घुमाव या भँवरी हो। जैसे,—वामावर्त शंख।

विशेष—शंख दो प्रकार के होते हैं—एक वामावर्त, दूसरा दक्षिणावर्त। दक्षिणावर्त शंख अत्यंत शुभ और दुष्प्राप्य कहा जाता है।

वामि—संज्ञा स्त्री० [सं०] नारी [को०]।

वामिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंडिका।

वामिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का योनिरोग जिसमें गर्भाशय से छह सात दिन तक रज का स्राव होता रहता है। इसमें कभी पीड़ा होती है, कभी नहीं होती।

वामिल—वि० [सं०] १. सुंदर। मनोहर। २. अहंकारी। घमंडी। ३. ३. धूर्त। चालाक। कपटी [को०]।

वामी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शृगाली। गीदड़ी। २. मादा हाथी। हथिनी (को०)। ३. घोड़ी। ४. गदही।

वामी^{2}—वि० [सं० वामिन्] १. वामाचार को माननेवाला। २. वमन करनेवाला [को०]।

वामेक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मनोहर नेत्रोंवाली स्त्री [को०]।

वामेतर—वि० [सं०] दाहिना [को०]।

वामोरु, वामोरू—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदर उरुवाली स्त्री। सुंदरी स्त्री।

वाम्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक स्त्री जो गोत्रकार थी। इसके गोत्रवाले वाम्नेय कहलाते थे।

वाम्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वामदेव ऋषि के घोड़े का नाम। २. वामता। कुटिलता। दुष्टता। विपरीतता (को०)।

वाम्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक साम का नाम। २. एक ऋषि का नाम (को०)।

वाय^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुनना या सीना। २. बुनने या सीने का साधन। ३. तागा। डोरा (को०)। ४. पक्षी (को०)। ५. नेता नायक (को०)।

वाय^2(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वायु] दे० 'वायु'।—उ० वाय सों वाय मलि मलि कर जानि। पानि म घ्रत कसं मथि आन।—रामानंद०, पृ० १४।

वाय^3—संज्ञा स्त्री० [सं० वापी, हिं० बाय] बावली। वापी।

वायक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो बुनता हो। बुननेवाला। उ०—पत्र रंध्र तें छनि छनि आवत, चाँदनि रस सिंगार की वायक।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ४००। २. तंतुवाय। जुलाहा। ३. राशि। समूह। ढेर (को०)।

वायक^2(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वाद, प्रा० वाय+क (प्रत्य०)] उक्ति। कथन। वचन। वाक्य। उ०—वाँका रा वायक सुणै, कायरड़ा किण काज।—बाँकी ग्रं०, भा० १, पृ० ८।

वायदंड—संज्ञा पुं० [सं० वायदण्ड] जुलाहों की ढरकी।

वायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह मिठाई या पकवान जो देवपूजा या विवाहादि के लिये बनाया जाय। २. एक गंधद्रव्य (को०)।

विशेष—दे० 'बायन'।

वायनक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वायन' [को०]।

वायनरज्जु—संज्ञा पुं० [सं०] जुलाहों के करघे की बै।

वायर(पु)—संज्ञा स्त्री० [हिं० बयार] वायु। बयार। उ०—सूराँ नूर दरस्सिया, तोले सेल करग्ग। वायर ज्यौं लागा विमुह कायर आँठू मग्ग।—रा० रू०, पृ० २०३।

वायव—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वायवी] १. वायु संबंधी या वायु से प्राप्त। २. आध्यात्मिक। ३. मनःकल्पित। हवाई। ४. अमूर्त। सूक्ष्म। उ०—तुम्हारी अलौकिक शक्ति, वायवी प्रतिभा, एवं मायावी आकर्षण के प्रभाव से यह कार्य अधिक सुगमता से संपन्न हो सकेगा, इसी लिये मैंने तुम्हारा आवाहन किया है।—ज्योत्स्ना, पृ० ५०।

वायवी—संज्ञा स्त्री० [सं० वायवी, वायवीय] वायु की दिशा। उत्तरपश्चिम दिशा [को०]।

वायवीय—वि० [सं०] वायु संबंधी। २. सूक्ष्म। उ०—मूर्तिमती कला का वायवीय आकार उसके हृदय के भीतर स्पर्श करके मधुरता से भर रहा था।

यौ०—वायवीय पुराण = वायुपुराण।

वायव्य^1—वि० [सं०] १. वायु संबंधी। २. वायुघटित। वायु से बना हुआ। ३. जिसका देवता वायु हो।

वायव्य^2—संज्ञा पुं० १. वह कोण या दिशा जिसका अधिपति वायु है। उत्तरपश्चिम का कोना। पश्चिमोत्तर दिशा। २. वायु पुराण। ३. एक अस्त्र का नाम। ४. स्वाती नक्षत्र (को०)।

वायव्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] पश्चिमोत्तर दिशा [को०]।

वायस—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगुरु। अगर का पेड़। २. कौआ। ३. तारपीन (को०)। ४. वह मकान जिसका दरवाजा उत्तरपूर्व की ओर हो (को०)। ५. कौओं का झुंड (को०)। ६. पक्षी। बड़ा पक्षी (को०)।

वायसजंघा—संज्ञा स्त्री० [सं० वायसजङ्घा] काकजंघा नाम का पौधा विशेष दे० 'काकजंघा'। [को०]।

वायसतंतु—संज्ञा पुं० [सं० वायसतन्तु] १. हनु के दोनों जोड़। २. काकतुंडी। कौआठोंठी।

वायसतुंड—संज्ञा पुं० [सं० वायसतुण्ड] कौआठोंठी [को०]।

वायसपीलु—संज्ञा पुं० [सं०] एक वृक्ष। काकपीलु [को०]।

वायसांतक—संज्ञा पुं० [सं० वायसान्तक] उलूक। उल्लू।

वायसादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. महाज्योतिष्मती लता । २. कौश्राठोंठी ।

वायसाराति, वायसारि—संज्ञा पुं० [सं०] उल्लू । उलूक [को०] ।

वायसाह्वा—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का भक्ष्य शाक ।

वायसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. छोटी मकोय जिसमें गुच्छों में गोल मिर्च के समान लाल फल लगते हैं । काकमाची । २. महाज्योतिष्मती । ३. काकतुंडी । कौवाठोंठी । ४. सफेद घुंघची । ५. काकजंघा । मासी । ६. महाकरंज । बड़ा कंजा । ७. कौवे की मादा (को०) ।

वायुसेक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] कांस नाम का तृण ।

वायसोलिका, वायसोली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली । मालकंगनी । २ महा ज्योतिष्मती लता ।

वायार—संज्ञा पुं० [देशी] ठंढ भरी हवा । जाड़े की हवा ।—देशी०, पृ० २९५ ।

वायु—संज्ञा स्त्री० [सं०] हवा । वात ।

विशेष—वैशेषिक दर्शन वायु को द्रव्यों में मानता है श्रौर उसे रूपरहित, स्पर्शवान् तथा नित्य कहता है । न्याय दर्शन में वायु पंचभूतों में है श्रौर इसका गुण स्पर्श कहा गया है । वायु से ही स्पर्शेंद्रिय की उत्पत्ति मानी गई है । वैशेषिक दर्शन स्पर्श के श्रतिरिक्त संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, श्रपरत्व श्रौर वेग भी वायु के गुण मानता है। सांख्य में वायु की उत्पत्ति स्पर्श तन्मात्रा से मानी गई है । उपनिषदों के श्रनुसार वेदांती भी वायु की उत्पत्ति श्राकाश से मानते हैं ।

२. वायु देवता । पवन देवता (को०)। ३. प्राणवायु । जीवनवायु भो पांच प्रकार कहा का है—प्राण, श्रपान, समान, व्यान, उदान । ४. सांस । श्वास (को०) । ५. 'य' श्रक्षर (को०) । ६. एक वसु (को०) । ८. एक दैत्य का नाम,(को०) । ९. गंधर्वों के एक राजा का नाम (को०) ।

वायुकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] धूलि [को०] ।

वायुकोण—संज्ञा पुं० [सं०] पश्चिमोत्तर दिशा ।

वायुगंड—संज्ञा पुं० [सं० वायुगण्ड] श्रजीर्ण । श्रफरा [को०] ।

वायुगति—वि० [सं०] तीव्र गति । श्रत्यंत तीव्र चाल [को०] ।

वायुगीत—वि० [सं०] सर्वविदित । प्रसिद्ध [को०] ।

वायुगुल्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. वातचक्र । बगोला । बवंडर । २. पेट का एक रोग । वायगोला ।

विशेष—इस रोग में पेट के श्रंदर वायु का एक गोला सा बँध जाता है, जो घटता बढ़ता श्रौर सारे पेट में फिरता रहता है। कभी कभी यह पीड़ा भी उत्पन्न करता है । इसमें प्रायः मल मूत्र का श्रवरोध भी हो जाता है श्रौर गला सूखा रहता है। हृदय, बगल श्रौर पसली में कभी कभी बड़ा दर्द होता है । खाली पेट में इसका जोर श्रधिक रहता है श्रौर भरे पेट में कम । कड़ुवे, कसैले पदार्थों के खाने से यह रोग बढ़ता है ।

३. जल का श्रावर्त । पानी की भँवर (को०) ।

वायुगोचर—संज्ञा पुं० [सं०] पश्चिमोत्तर दिशा ।

वायुग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० वायुग्रन्थि] १. वायुगुल्म । २. बवंडर [को०] ।

वायुग्रस्त—वि० [सं०] वात रोग से पीड़ित [को०] ।

वायुजात, वायुतनय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वायुपुत्र' [को०] ।

वायुदार, वायुदारु—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ । बादल ।

वायुदिश्—संज्ञा स्त्री० [सं०] पश्चिमोत्तार दिशा [को०] ।

वायुदेव—संज्ञा पुं० [सं०] स्वाति नक्षत्र जिसके देवता वायु हैं [को०] ।

वायुनिघ्न—वि० [सं०] वातप्रकोप से पीड़ित । उन्मत्त [को०] ।

वायुपंचक—संज्ञा पुं० [सं० वायुपञ्चक] शरीरस्थ पंचवायु [को०] ।

वायुपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हनुमान । २. भीम ।

वायुपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] श्रट्ठारह पुराणों में से एक पुराण ।

वायुफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्रधनुष । २. श्रोला (को०) ।

वायुभक्ष, वायुभक्ष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. सर्प । साँप । २. वह तपस्वी जा केवल वायु पीकर रहे ।

वायुभुक्—संज्ञा पुं० [सं० वायुभुज्] दे० 'वायुभक्ष' [को०] ।

वायुमंडल—संज्ञा पुं० [सं० वायुमण्डल] १. श्राकाश, जिसमें वायु प्रवाहित होती है । २. बवंडर (को०) ।

वायुमरुल्लिपि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ललितविस्तर के श्रनुसार एक लिपि का नाम ।

वायुमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] श्राकाश ।

वायुयान—संज्ञा पुं० [सं०] हवाई जहाज । वायु में उड़नेवाला यान । विमान । उ०—रेडियो, तार, श्रौ फोन वाष्प, जल, वायुयान । मिट गया दिशावधि का जिनसे व्यवधान यान ।—ग्राम्या, पृ० ८८ ।

वायुयानवेधी तोप—संज्ञा स्त्री०[सं० वायुयानवेधी + तु० तोप] विमान विध्वंसक तोप । (श्रं० ऐंटी-एश्ररक्राफ्ट गन)। उ०—जर्मन से वायुयानवेधी तोपें श्राक्रमणकारी वायुयानों पर गोले चला रही थीं ।—'श्राज' ।

वायुर—वि० [सं०] १. वायुयुक्त । हवादार । २. तूफानी । श्रंधड़ से भरा हुश्रा [को०] ।

वायुरोषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात ।

वायुलोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार एक लोक का नाम । २. श्राकाश ।

वायुवर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० वायुवर्त्मन्] श्राकाश [को०] ।

वायुवाह—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूम । धूश्रां । २. भाप [को०] ।

वायुवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूम्र । धूश्रां । ३. शिव (को०) । ४. विष्णु । (को०) ।

वायुवाहिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर की नस । शिरा [को०] ।

वायुवेग—वि० [सं०] वायु के समान तीव्र गतिवाला [को०] ।

वायुसख, वायुसखा, वायुसखि—संज्ञा पुं० [सं०] श्रग्नि ।

वायुस्कंध—संज्ञा पुं० [सं० वायुस्कन्ध] वायु का क्षेत्र [को०]।

वायुहन्—संज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम जो मंकण ऋषि के पुत्र थे ।

विशेष—कथा है कि मंकण ऋषि एक बार सरस्वती में स्नान कर रहे थे। वहाँ उनको एक नग्न स्त्री स्नान करती हुई दिखाई दी। उसे देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया। इसे इन्होने एक घड़े में रखा, वह सात भागों में विभक्त हो गया और उनसे वायुवेग, वायुबल, वायुहन् वायुमंडल, वायुजाल, वायु रेता और वायुचक्र नामक सात पुत्र उत्पन्न हुए।

वायौ(पु)†—वि॰ [सं॰ वायुग्रस्त] बावला। उ॰—विचित्र हुवौ लड़ता रस वायौ।— रा॰ रू॰, पृ॰ ५१।

वाय्यास्पद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] आकाश। वातावरण [को॰]।

वारंक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वारङ्क] पक्षी।

वारंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वारङ्ग] १. तलवार की मूठ। २. अंकुड़े के आकार का एक अस्त्र जिससे चिकित्सक अस्थिविनष्ट शल्प निकालते थे। (सुश्रुत)।

वारंट—संज्ञा पुं॰ [अ॰] अदालत का वह आज्ञापत्र जिसके अनुसार किसी कर्मचारी को वह काम करने का अधिकर प्राप्त हो जाय, जिसे वह अन्यथा करने में असमर्थ हो। यह कई प्रकार का होता है, जैसे,—वारंट गिरफ्तारी, वारंट तलाशी, वारंट रिहाई इत्यादि।

वारंट गिरफ्तारी—संज्ञा पुं॰ [अं॰ वारंट+फ़ा॰ गिरफ्तारी] अदालत का वह आज्ञापत्र जिसके अनुसार किसी कर्मचारी को यह अधिकार दिया जाय कि वह किसी पुरुष का पकड़कर अदालत में हाजिर करे।

वारंट तलाशी—संज्ञा पुं॰ [अं॰ वारंट+फ़ा॰ तलाशी] अदालत का वह आज्ञापत्र जिसके अनुसार किसी कर्मचारी को यह अधिकार दिया जाय कि वह किसी स्थान में जाकर वहाँ की तलाशी ले।

घारंट रिहाई—संज्ञा पुं॰ [अं॰ वारंट+फा॰ रिहाई] अदालत का वह आज्ञापत्र जिसके अनुसार किसी सरकारी कर्मचारी को यह आज्ञा और अधिकार मिले कि वह किसी पुरुष को, जो जेल, हवालात या गिरफ्तारी में हो, छोड़ दे; या किसी माल या जायदाद को, जो कुर्क हो या किसी की सपुर्दगी में हो, मालिक को लौटा दे।

वारवार—अव्य॰ [वारम् बारम्] दे॰ 'बारंबार'। उ॰- रिपुओं की पुकार भी मानो निष्फल जाती वारंवार।—साकेत, पृ॰ ३९४।

वार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. जल। पानी। २. रक्षक। त्राता। प्रतिपालक (को॰)।

वार^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. द्वार। दरवाजा। उ॰— संदेसे ही घर भरचउ कइ अंगणि कई वार।—ढोला॰, दू॰ २००। २. अवरोध। रोक। रुकावट। ३, ढाँकनेवाली वस्तु। आवरण। ४. कोई नियत काल। अवसर। दफा। मरतबा। जैसे—वारंवार। ५. क्षण। ६. सप्ताह का दिन। जैसे,—आज कौन वार है। ७. कुज वृक्ष। ८. पानपात्र। मद्य का प्याला। ९. वाण। तीर। १०. नदी या समुद्र का किनारा।—उ॰ जोय प्रबल अणपार जल वार रह्या भड आन। निडर उलंघण वारनिध, हुवो त्यार हनुमान।—रघु॰ रू॰, पृ॰ १६३। ११. शिव का नाम। १२. जलराशि। जलौघ (को॰)। १३. पूँछ। दुम (को॰)। १४. दाँव। बारी। जैसे—अपना अपना वार है। उ॰—देस देस के भूपति आवैं। द्वारे भीर वार नहि पावैं।—हिं॰ क॰ का॰, पृ॰ १८८।

मुहा॰—वार मिलना = फुरसत मिलना। वार सरना = अवसर या मौका मिलना। संभव हो सकना। पार पड़ना। उ॰—सूआ एक संदेसड़उ, वार सरेसी तुझ्झ। प्रीतम वाँसइ जाय नई, मुई सुणावे मुझ्झ।– ढोला॰, दू॰ ३९८।

वार^{२}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वार (= दाँव, बारी।) या फ़ा॰] चोट। आघात। आक्रमण। हमला। उ॰—वार नाम वैरी के ऊपर प्रहार चाहैं हैं किवा वार है बाल ताको चाहै हैं, अर्थात् उत्तम बालक वा वारागंना। × × × अथवा वार मूढ़ को न चाहै।—दीन॰ ग्रं॰, पृ॰ १७८।

क्रि॰ प्र॰ – करना।—होना।

मुहा॰—वार खाली जाना = (१) प्रहार का ठीक स्थान पर न पड़ना। चलाया हुआ अस्त्र न लगना। (२) युक्ति सफल न होना। चली हुई चाल या तदबीर का कुछ नतीजा न होना।

वार^{३}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वार, हिं॰ बेर] देर। विलंब। उ॰—चल्या ठकुराल्या न लावीय वार, भोज तणाँ मिलिया असवार।—बी॰ रासो पृ॰ १६।

वार^{४}—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ उबार] बचाना। रक्षा करना। उ॰—गया हैं हृदय हिल, लो थके को वार।—आराधना, पृ॰ ४६।

वार^{५}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वाल] [स्त्री॰ वारा] १. बालक। बच्चा। शिशु। २. अज्ञ या मूर्ख व्यक्ति। उ॰—(क) किवा वार है वाल ताको चाहै हैं अर्थात् उत्तम बालक·········।—दीन॰। ग्रं॰, पृ॰ १७८। (ख) तीनों अंड भए तिवारा। ता के रूप भए अधिकारा।—कबीर सा॰, पृ॰ १६।

वार^{६}—संज्ञा पुं॰ [अं॰] युद्ध। समर। जंग। जैसे,—जर्मन वार।

यौ॰—वारफंड = युद्ध के लिये आर्थिक मदद या चंदा आदि का संग्रह।

वारक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. निषेध करनेवाला। वह जो वारण करे। प्रतिबंधक। २. घोड़े का कदम। ३. घोड़ा। ४. एक प्रकार का विशेष घोड़ा (को॰)। ५. वह स्थान जहाँ पीड़ा हो। कष्टस्थान। ६. बाधा का स्थान। ७. एक सुगंधित तृण।

वारकन्यका, वारकन्या—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वेश्या। रंडी।

वारकी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वारकिन्] १. प्रतिवादी। शत्रु। २. समुद्र। ३. पत्ते खाकर रहनेवाला तपस्वी। पर्णाशी यति। ४. शुभ लक्षणों से युक्त घोड़ा (को॰)।

वारकीर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. साला। २. द्वारपाल। ३. वाड़वाग्नि। ४. जूँ। ५. कंघी। ६. लड़ाई का घोड़ा। चित्राश्व।

वारट—संज्ञा पुं॰ [सं॰] खेत या खेतों का सिलसिला [को॰]।

वारटा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] हंसिनी [को॰]।

वारण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. किसी बात को न करने का संकेत या आज्ञा। निषेध। मनाही। उ॰—हठपूर्वक मुझको भरत करें यदि वारण।—साकेत, पृ॰ २२०।

क्रि॰ प्र॰—करना।—होना।

२. रोक। रुकावट। बाधा। ३. कवच। बकतर। ४. हाथी। ६. हरताल। ७. काला सीसम। ८. पारिभद्र। ९. सफेद कोरैया का फूल। १०. छप्पय छंद का एक भेद जिसमें ४१ गुरु, ७० लघु कुल १११ वर्ण या १५२ मात्राएँ होती हैं; अथवा ४१ गुरु, ६६ लघु, कुल १०७ वर्ण या १४८ मात्राएं होती हैं। ११. द्वार। कपाट (को॰)। १२. प्रतिरक्षा। संरक्षा। प्ररक्षा (को॰)। १३. हाथी की सूँड़। १४. मेहराब या तोरण की एक प्रकार की सजावट या नक्काशी [को॰]।

वारणकणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] गजपिप्पली।

वारणकर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हाथी की सूँड़ [को॰]।

वारणकृच्छ्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का कृच्छ्र व्रत जिसमें एक महीने तक पानी में जौ का सत्तू घोलकर पीना पड़ता है।

वारणकेसर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'नागकेसर'।

वारणबुषा, वारणबुसा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] कदली। केला।

वारणवल्लभा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] केला। कदली [को॰]।

वारणशाला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] हस्तिशाला [को॰]।

वारणसाह्वय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हस्तिनापुर का एक नाम [को॰]।

वारणसी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'वाराणसी' [को॰]।

वारणहस्त—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का तंत्रवाद्य [को॰]।

वारणानन—संज्ञा पुं॰ [पुं॰] गजानन। गणेश [को॰]।

वारणावत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] महाभारत के अनुसार एक जनपद या नगर जो गंगा के किनारे था।

विशेष—यहीं पर दुर्योधन ने पांडवों को जलाने के लिये लाक्षागृह बनवाया था। कुछ लोग इसे करनाल के आसपास मानते हैं और कुछ लोग इलाहाबाद जिले के हँडिया नामक स्थान के पास।

वारणीय—वि॰ [सं॰] निषेध योग्य। प्रतिषेध्य।

वारता(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वार्ता] बातचीत। कथोपकथन। उ॰—सदा ज्ञान वैराग्य योग की होत वारता। ईस भक्ति मैं निरत, सबन के हिय उदारता।—प्रेमघन॰, भा॰ १, पृ॰ ४।

वारतिय(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ बारस्त्री] वेश्या। उ॰—ताके रहीं वारतिय दोई। रूपवती रंभा छबि छोई।—रघुराज (शब्द॰)।

वारत्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ वारत्रा] चर्म रज्जु। चमड़े का बना तसमा [को॰]।

वारत्रा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक पक्षी। वारटा [को॰]।

वारद(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वारिद] बादल। उ॰—सोहति धोती सेत में कनक बरन तन बाल। सारद वारद बीजुरी भा रद कीजत लाल।—बिहारी (शब्द॰)।

वारदात—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] १. कोई भीषण या शोचनीय कांड। दुर्घटना। २. मारपीट। मारकाट। दंगा फसाद।

क्रि॰ प्र॰—करना।—होना।

३. घटना संबधी समाचार। हाल [को॰]।

वारध(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वारिधि] दे॰ 'वारिधि'। उ॰—वारध मुनि पीधो, त्रंबक विष, जिके प्रकट दरसे जग जांण।—रघु॰ रू॰, पृ॰ २६८।

वारधान—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पुराणानुसार एक जनपद का नाम। इसे वाटधान भी कहते हैं।

वारन^{1}(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ वारना] निछावर। बलि। उ॰—नित हित सों पालत रहै रूप भूप नँदलाल। छबि पनिवारन मैं मनौ दृग पर वारन हाल।—रसनिधि (शब्द॰)।

वारन^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वंदन] वंदनवार। वंदनमाला। उ॰—घर घर धुजा पताका बानी। तोरन वारन वामर ठानी।—सूर (शब्द॰)।

वारना^{1}—क्रि॰ स॰ [हिं॰ उतारना] निछावर करना। उत्सर्ग करना। उ॰—(क) चितै रही मुख इंदु मनोहर या छबि पर वारति तन को। कछि काछिनी भेष नटवर को बीच मिली मुरलीधर को।—सुर (शब्द॰)। (ख) कौसिला की कोषि पर तोष तन वारिए री। राम दसरथ की बलाय लीजै आलि री।—तुलसी (शब्द॰) (ग) तो पर वारौं उरबसी सुन राधिका सुजान। तू मोहन के उर बसी ह्वै उरबसी समान।—बिहारी (शब्द॰)।

वारना^{2}—संज्ञा पुं॰ निछावर। उत्सर्ग। उ॰—अति कोमल कर चरन सरोरुह, अधर दसन नासा सोहै री। लटकन सीस कंठ मणि भ्राजत कोटि वारने गै री।—सूर (शब्द॰)।

क्रि॰ प्र॰—करना।—होना।

मुहा॰—वारने जाना=निछावर होना। बलि जाना। उ॰—बाल विभूषन, बसन मनोहर अंगनि बिरचि बनैहौं। सोभा-निरखि निछावरि करि उर लाइ वारने जैहौं।—तुलसी (शब्द॰)।

वारनारी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वेश्या।

वारनिश—संज्ञा स्त्री॰ [अं॰ वार्निश] एक प्रकार का यौगिक तरल पदार्थ जो लकड़ियों आदि पर उनमें चमक लाने के लिये लगाया जाता है।

वारपार^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ अवार+पार] १. (नदी आदि का) यह किनारा और वह किनारा। पूरा विस्तार। जैसे,—नदी इतनी बढ़ी है कि वारपार नहीं सूझता। २. यह छोर और वह छोर। अंत। उ॰—वारपार नहि सूझहि लाखन उमरा मीर।—जायसी (शब्द)।

वारपार^{2}—अव्य॰ १. इस किनारे से उस किनारे तक। जैसे,—वारपार जाने में एक घंटा लगेगा। उ॰—अति सुमार गार सार वारपार बहत हैं।—घनानंद, पृ॰ ३५०।

मुहा॰—वारपार करना=पूरा विस्तार तै करना। वारपार होना=पूरा विस्तार तै होना।

२. एक पार्श्व से दूसरे पार्श्व तक। एक बगल से दूसरी बगल तक। पूरी चौड़ाई या मोटाई तक। जैसे,—बरछी वारपार हो गई।

मुहा॰—वारपार करना=इस ओर से उस ओर तक धँसाना। पूरी मोटाई छेदकर दूसरी ओर निकालना।

वारफेर—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ वार+फेर] १. निछावर। बलि। २. वह रुपया पैसा जो दूल्हा या दुलहिन के सिर पर से घुमाकर डोमनियों आदि को दिया जाता है। उ॰—वाली कर जोरि मेरो जोर न चलत कछु चाहो सोई होहु यह वारिफेर डारिए।—प्रियादास (शब्द॰)।

वारबाण—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वारवाण'। २. एक प्रकार का कंबल (को०)।

वारबुसा, वारबूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कदली। केला [को०]।

वारमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या। उ०—कहै तुम कौन वारमुखी नहीं भोग संग भरुवा सुगहै मौन सुनी पापी बेरी है।—प्रियादास (शब्द०)।

वारमुख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्याओं के वर्ग की प्रधान स्त्री। कुट्टनी। कुट्टनी नायका।

वारयिता—संज्ञा पुं० [सं० वारयितृ] पति [को०]।

वारयुवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या [को०]।

वारयोग—संज्ञा पुं० [सं०] चूर्ण। पाउडर [को०]।

वारयोषित्, वारयोषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वारवधू'।

वारला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हंसी। हंसिनी। २. केला। ३. भिड़ या बर्रे (को०)।

वारवारण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कवच। २. ढाल [को०]।

वारलीक—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्वजा तृण। बनकस।

वारवधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या। रंडी।

वारवाण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कौटिल्य के अनुसार एँड़ी तक लंबा अंगा। २. कंचुक। कंचुकी (को०)। ३. कवच। जिरहबख्तर।

वारवाणि^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वंशी बजानेवाला। २. उत्तम गायक। ३. धर्माध्यक्ष। न्यायाधीश। जज। ४. ज्योतिर्विद। ज्योतिषी। ५. वर्ष (को०)।

वारवाणि^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या। रंडी [को०]।

वारवाणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या।

वारवासि—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक जनपद का नाम जो भारत की पश्चिमी सीमा के आगे था।

वारवास्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वारवासि'।

वारविलासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या। रंडी।

वारवृषा—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्न। २. केला [को०]।

वारवेला—संज्ञा स्त्री० [सं०] दिन का एक अशुभ समय जब कोई शुभ कार्य करना वर्जित है [को०]।

वारशिप—संज्ञा पुं० [अं०] जंगी जहाज। लड़ाकू जहाज। युद्धपोत।

वारसुंदरी—संज्ञा स्त्री० [सं० वारसुन्दरी] दे० 'वारस्त्री'।

वारसेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वेश्यावृत्ति। रंडी का व्यवसाय। २. वेश्याओं का समुदाय [को०]।

वारस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाजारू स्त्री। गणिका। वेश्या। रंडी।

वारांगणा—संज्ञा स्त्री० [सं० वाराङ्गणा] वेश्या। रंडी।

वारांगना—संज्ञा स्त्री० [सं० वाराङ्गना] दे० 'वारांगणा'।

वारांनिधि—संज्ञा पुं० [सं० वारान्निधि] समुद्र। उ०—जयति वैराग्य विज्ञान वारांनिधे, नमत नर्मद पाप ताप हर्ता।—तुलसी (शब्द०)।

वारा^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वारण(=रक्षा, बचाव)] १. खर्च की बचत। किफायत। २. लाभ। फायदा।

क्रि० प्र०—पड़ना।—बैठना।

वारा^{२}—संज्ञा पुं० [हिं० वार(=यह किनारा)] इधर का किनारा। इस ओर का तट या छोर। वार।

यौ०—वारान्यारा। वारापार।

वारा^{३}—वि० किफायत। सस्ता।

वारा^{४}—वि० [हिं० वारना] [वि० स्त्री० वारी] जो निछावर हुआ हो। जिसने किसी पर अपने को उत्सर्ग किया हो।

मुहा०—वारा होना = निछावर होना। कुरबान होना। (प्यार का वाक्य)। उ०—हौं वारी तेरे इंदुवदन पर अति छवि अलसानि रोई।—सूर (शब्द०)। वारा जाना = दे० 'वारा होना'। उ०—बनवारी वारी गई बनवारी पै आज।—रसनिधि (शब्द०)।

वारा (पु)^{५}—संज्ञा स्त्री० [सं० वाला] दे० 'बाला'। उ०—इक सूक्ष्म अस्थूल दै, वारा भूषण येह।—प० रासो, पृ० १६३।

वाराणसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] काशी नगरी का प्राचीन नाम।

विशेष—कुछ लोग यह नाम वरुणा और असी नदियों के कारण मानते हैं। पर इस प्रकार यह शब्द सिद्ध नहीं होता। लोग इसकी ठीक व्युत्पत्ति 'वर' + अनस् (जल) अर्थात् 'पवित्र जलवाली पुरी' बतलाते हैं। कुछ विद्वान् 'उत्तम रथोंवाली पुरी अर्थ भी करते हैं। विशेष दे० 'काशी'।

वाराणसेय—वि० [सं०] वाराणसी का। वाराणसी में स्थित या उत्पन्न। जैसे, वाराणसेय विद्वत्सभा।

वारान्यारा—संज्ञा पुं० [हिं० वार + न्यारा] १. इस पक्ष या उस पक्ष में निर्णय। किसी ओर निश्चय। फैसला। उ०—आर्य गौरवसर्वस्व का वारान्यारा होना सहज सुलभ है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३७२। २. झंझट या झगड़े का निबटेरा। चले आते हुए मामले का खातमा। जैसे,—उस मामले का अभी तक कुछ वारान्यारा नहीं हुआ।

वारापार—संज्ञा पुं० [हिं० वारपार] ओर छोर। अंत। उ०—(क) महिमा अपार काहू बोल को न वारापार बड़ी साहबी में नाथ बड़े सावधान हौ।—तुलसी ग्रं०, पृ० २२९। (ख) वह खुद सब कुछ सह सकती थी, उसकी सहन शक्ति का वारापार न था, पर चक्रधर को इस दशा में देखकर उसे दुःख होता था।—काया०, पृ० ३७९।

वारालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

वारावस्कंदी—संज्ञा पुं० [सं० वारावस्कन्दिन्] अग्नि।

वाराशि—संज्ञा पुं० [सं०] सागर। समुद्र।

वारासन—संज्ञा पुं० [सं०] तालाब। झील। [को०]।

वाराह^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वाराही] १. दे० 'वराह'। २. काली मैंनी का वृक्ष। ३. पानी के किनारे होनेवाला बेंत। अंबुवेतस। ४. एक पहाड़ (को०)। ५. एक साम (को०)।

वाराह^{२}—वि० १. शूकर संबंधी। २. वराह अवतार संबंधी [को०]।

वाराहकंद—संज्ञा पुं० [सं० वाराहकन्द] एक प्रकार का कंद, जिसपर शूकर के समान बाल होते हैं।

वाराहकर्णी—स्त्री० [सं०] असगंध। वराहकर्णी [को०]।

वाराहकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक कल्प (ब्रह्मा का दिन) का नाम जिसमें हम लोग रह रहे हैं [को०] ।

वाराहद्वादशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ शुक्ल द्वादशी [को०] ।

वाराहपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्वगंधा । असगंध ।

वाराहांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वाराहाङ्गी] दंती का पेड़ ।

वाराही—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ब्राह्मणी आदि आठ मातृकाओं में से एक मातृका का नाम । २. एक योगिनी का नाम । ३. वाराहीकंद । ४. कँगनी । ५. श्यामा पक्षी । ६. सफेद भूकुष्मांडा । बिलाई कंद । विदारी कंद । ७. शूकरी (को०) । ८. पृथ्वी (को०) । ९. एक प्रकार की माप (को०) ।

वाराहीकंद संज्ञा पुं० [सं० वाराहीकन्द] एक प्रकार का महाकंद जो गेंठी कहलाता है ।

विशेष—कहते हैं, यह अनूप (जलप्राय) देश में होता है । इसके कंद के ऊपर सूअर के बालों के समान रोएँ होते हैं । इसका आकार प्रायः गुड की भेली के समान होता है और इसके पत्ते कँटीले, बड़े बड़े तथा अनीदार होते हैं । वैद्यक में यह चरपरा, कड़ुवा, बलकारक, पित्तजनक, रसायन, शुक्रजनक, वीर्यवर्धक, अग्निदीपक, मधुर, गरम, स्वर को शुद्ध करनेवाला, आयुवर्धक तथा कोढ़, प्रमेह, त्रिदोष, कफ, वात, कृमि और मूत्रकृच्छ्र का नाशक माना है ।

पर्या०—वाराही । चर्मकारालुक । विष्वक्सेनप्रिया । घृष्टि । वदरा । कच्छा । वनमालिनी । गृष्टि । बिल्वमूला । शूकरी । क्रोड़कन्या । कौमारी । त्रिनेत्रा । ब्रह्मपुत्री । क्रोड़ी । कन्या । माधवेष्टा । शूकरकंद । वनवासी । कुष्ठनाशन । वल्य । अमृत । महावीर्य । शंवरकंद । वराहकंद । वीर । ब्राह्मीकंद । महौषध । सुकंदक । वृच्छिद । व्याधिहंता । मागधी ।

वारि¹—संज्ञा पुं० [सं०] १ जल । पानी । २. तरल पदार्थ । ३. ह्रीवेर । सुगंधबाला ।

वारि²—संज्ञा स्त्री० १. वाणी । सरस्वती । २. हाथी के बाँधने की जंजीर आदि । ३. हाथी के बाँधने का स्थान । ४. छोटा कलसा या गगरा । ५. हाथियों के पकड़ने का गड्ढा आदि (को०) । ६. बंदी । कैदी (को०) । ७. वाक् । बोली (को०) ।

वारि³—संज्ञा स्त्री० [हिं० बारा(=छोटा)] दे० 'बारी' । उ०—सुनहु वारि माधौनल कहई । इहि जग नेहु नहीं थिर रहई ।—माधवानल०, पृ० १९७ ।

वारिकंटक—संज्ञा पुं० [सं० वारिकण्टक] सिंघाड़ा [को०] ।

वारिकफ—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

वारिकर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुंभी । कुंभिका (को०) ।

वारिकर्पूर—संज्ञा पुं० [सं०] इलीश या हिलसा नाम की एक मछली [को०] ।

वारिकुब्ज—संज्ञा पुं० [सं०] सिंघाड़ा ।

वारिकुब्जक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वारिकुब्ज' ।

वारिकूट—संज्ञा पुं० [सं०] नगरद्वार की रक्षा के लिये बना हुआ स्तूप वा ढूहा [को०] ।

वारिकोल—संज्ञा पुं० [सं०] कच्छप । कछुआ ।

वारिक्रिमि—संज्ञा पुं० [सं०] जलौका । जोंक [को०] ।

वारिगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] बादल [को०] ।

वारिगृह—संज्ञा पुं० [सं०] तालाब । पोखरा [को०] ।

वारिचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] जलावर्त । भँवर । उ०—तुझमें बहु वारिचक्र हैं, कितने कच्छप और नक्र हैं । - साकेत, पृ० ३३० ।

वारिचत्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुंभी । जलकुंभी । कुंभिका । २. जलाशय [को०] ।

वारिचर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पानी में रहनेवाले जंतु । २. मत्स्य । मछली । ३. शंख ।

वारिचरकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव । मीनकेतन ।

वारिचामर—संज्ञा पुं० [सं०] शैवाल । सेवार [को०] ।

वारिचारी वि० [सं० वारिचारिन्] जल में रहनेवाला (जंतु) ।

वारिज¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल । २. द्रोणी लवण । ३, मछली । ४. शंख । ५. घोघा । ६. कौड़ी । ७. ? उत्तम सुवर्ण । खरा सोना । ८. एक प्रकार का शाक । विशेष दे० 'गौर सुवर्ण' (को०) । ९. लौंग (को०) ।

वारिज²—वि० जल में उत्पन्न । जल में होनेवाला [को०] ।

वारिजात—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल । २. शंख । ३. दे० 'वारिज' ।

वारिजीवक—वि० [सं०] जल से जीविका चलानेवाला (मल्लाह) ।

वारित—वि० [सं०] १. जो रोका गया हो, जो मना किया गया हो । निवारित । २. छिपाया हुआ । ढका हुआ (को०) ।

वारितर—संज्ञा पुं० [सं०] उशीर । खस ।

वारितस्कर—संज्ञा पुं० [सं०] १. बादल । २. सूर्य [को०] ।

वारित्र—संज्ञा पुं० [सं०] निषिद्ध आचरण [को०] ।

वारित्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] छत्र । छाता [को०] ।

वारिद¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ । बादल । २. भद्र मुस्तक । नागरमोथा । ३. एक गंधद्रव्य । सुगंधबाला । बाला । ४. पितरों को जल देनेवाला (को०) ।

वारिद्र—संज्ञा पुं० [सं०] चातक । पपीहा [को०] ।

वारिधर - संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ । बादल । वारिवाह । २. भद्रमुस्तक । नागरमोथा ।

वारिधार—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम [को०] ।

वारिधारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृष्टि की बौछार । जल की वर्षा [को०] ।

वारिधि - संज्ञा पुं० [सं०] १. समुद्र । २. जलपात्र [को०] ।

वारिनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वरुण । २. समुद्र । ३. बादल । मेघ । ४. नाग लोक जहाँ सर्पों का निवास माना जाता है (को०) ।

वारिनिधि—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

वारिपथ—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रयात्रा । जलयात्रा [को०] ।

वारिपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जलकुंभी । २. पानी की काई ।

वारिपूर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वारिपर्णी' [को०] ।

वारिपृश्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलकुंभी ।

वारिप्रवाह—संज्ञा पुं० [सं०] १. जल का प्रवाह या धारा । २. झरना । जलप्रपात [को०] ।

वारिबदर—सं० स्त्री० [सं०] आँवला [को०]

वारिबालक—संज्ञा पुं० [सं०] ह्रीबेर नामक गंधद्रव्य [को०] ।

वारिभव—संज्ञा पुं० [सं०] १. शंख । २. रसांजन । सौवीर [को०]।

वारिमसि—संज्ञा पुं० [सं०] बादल ।

वारिमुक—संज्ञा पुं० [सं० वारिमुच्] बादल । मेघ ।

वारिमूली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वारिपर्णी' [को०] ।

वारियंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वारियन्त्र] १. फौआरा । जलयंत्र । २. जलघटिका । रहट (को०) ।

वारियाँ—संज्ञा स्त्री० [हिं० वारी] निछावर । बलि ।

क्रि० प्र०—जाना ।

मुहा०—वारियाँ जाऊँ=तुझपर निछावर हूँ । (स्त्रियों का प्यार का वाक्य जो वे बातचीत में लाया करती हैं) ।

वारिर—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ । बादल [को०] ।

वारिरथ—संज्ञा पुं० [सं०] नौका । नाव । पोत । [को०] ।

वारिराज—संज्ञा पुं० [सं०] वरुण [को०] ।

वारिराशि—संज्ञा पुं० [सं०] १. समुद्र । २. झील ।

वारिरुह—संज्ञा पुं० [सं०] कमल ।

वारिलोमा—संज्ञा पुं० [सं० वारिलोमन्] वरुण ।

वारिवंद—संज्ञा पुं० [सं० वारिवन्द] एक प्राचीन जनपद ।

विशेष—यह कूचबिहार के उत्तर में बताया जाता है ।

वारिवदन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वारिवदर' ।

वारिवर—संज्ञा पुं० [सं०] करौंदा ।

वारिवर्णक—संज्ञा पुं० [सं०] रेत । बालू । सिकता ।

वारिवर्त(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वारि आवर्त्त] एक मेघ का नाम । उ०— सुनत मेघवर्तक साजि सैन लै आए । जलवर्त, वारिवर्त, पवनवर्त, वज्रवर्त, आगिवर्तक जलद संग लाए ।—सूर (शब्द०) ।

वारिवल्लभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विदारी कंद [को०] ।

वारिवास—संज्ञा पुं० [सं०] मद्य बनानेवाला । कलवार । कलार ।

वारिवाह, वारिवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ । वारिधर । २. मुस्तक । मोथा ।

वारिवाही—संज्ञा पुं० [सं० वारिवाहिन्] मेघ । बादल ।

वारिश—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

वारिशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष का एक ग्रंथ ।

विशेष—यह ग्रंथ गर्ग मुनि का रचा हुआ कहा जाता है । इससे यह निकाला जाता है कि किस स्थान में कैसी वृष्टि होगी, और कब कब होगी ।

वारिसंभव—संज्ञा पुं० [सं० वारिसम्भव] १. लौंग । २. अंजन विशेष । ३. खस की सुगंधित जड़ । उशीर [को०] ।

वारिस—संज्ञा पुं० [अ०] १. दायाद । दायभागी पुरुष । २. वह पुरुष जो किसी के मरने के पीछे उसकी संपत्ति आदि का स्वामी और उसके ऋण आदि का देनदार हो । उत्तराधिकारी । ३. रक्षक ।

वारिसाम्य—संज्ञा पुं० [सं०] दुग्ध । दूध [को०] ।

वारिसार—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत पुराण के अनुसार चंद्रगुप्त के एक पुत्र का नाम ।

ारींद्र—संज्ञा पुं० [सं० वारीन्द्र] समुद्र ।

वारी[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हाथी के बाँधने की जंजीर या अंकुश । २. कलसी । छोटा गगरा । दे० 'वारि' ।

वारी[2]—वि० दे० 'वारा' ।

वारी[3]—संज्ञा स्त्री० [सं० बालिका > प्रा० बालिआ > हिं० बरी] छोटी उम्र की बालिका उ०—वारी सुकुमारी, दरिद्र,……जर्जर लस्त को ब्याह दी जाय……। प्रेमघन०, भा० २, पृ० १८७ ।

वारी[4]—संज्ञा स्त्री० [हिं० पारी, बारी] बारी । अवसर । समय । उ०—साँकिया राज राँणा सकल, अकल पाँण छिलियौ असुर । लहरे स जाँण वारी लहै, गरज निवारी सीम गुर ।—रा० रू०, पृ० १६ ।

वारीट—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी ।

वारीफेरी—संज्ञा स्त्री० [हिं० वारना + फेरना] किसी प्रिय व्यक्ति के ऊपर कुछ द्रव्य, या और कोई वस्तु घुमाकर इसलिये छोड़ना या उत्सर्ग करना, जिसमें उसकी सब बाधाएँ दूर हो जायँ । निछावर । (स्त्रियों का एक टोटका) । उ०—भुजन पर जननी वारीफेरी डारी । क्यों तोरयो कोमल कर कमलन संभु सरासन भारी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख)…क्योंकि आपकी लेखनी विचारी कलम की कारीगरी पर वारीफेरी हो जाती है । —प्रेमघन०, भा० २, पृ० २७ ।

क्रि० प्र०—डालना ।

वारीश—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

वारुंड—संज्ञा पुं० [सं० वारुण्ड] १. साँपों का राजा । २, नाव में से पानी निकालने का बरतन । तसला । ३. कान की मैल । खूँट । ४. आँख का कीचड़ ।

वारुंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० वारुण्डी] द्वार की सीढ़ी [को०] ।

वारु—संज्ञा पुं० [सं०] १. विजयहस्ति । विजयकुंजर । जंगी हाथी । २ अश्व । घोड़ा (को०) ।

वारुक—वि० [सं०] चयनकर्ता । चुननेवाला [को०] ।

वारुठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंतशय्या । मरण खाट । २. वह टिकठी जिसपर मुरदे को लेट कर ले जाते हैं । अरथी ।

वारुण[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. जल । २. शतभिषा नक्षत्र । ३. भारतवर्ष के एक खंड का नाम । (इसे आजकल 'वरनारक' कहते हैं ।) ४. एक अस्त्र का नाम । ५. हरताल । ६. एक उपपुराण का नाम । ७. वरुण या वरुना नाम का पेड़ । ८. जलजंतु (को०) । ९. पश्चिम दिशा (को०) ।

वारुण[2]—वि० १. वरुण संबंधी । वरुण का । २. जलीय । जलसंबंधी । ३. पश्चिमी [को०] ।

वारुणक—संज्ञा पुं० [सं०] एक जनपद का नाम ।

वारुणकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वारुणकर्मन्] कुआँ, पोखरा, बावली आदि जलाशय बनवाने का काम ।

वारुणकृच्छ्र—संज्ञा पुं० [सं०] स्मृति के अनुसार एक व्रत, जिसमें महीने भर तक पानी में घुला सत्तू खाकर रहते थे ।

वारुणपाशक—संज्ञा पुं० [सं०] एक विशाल समुद्री जंतु [को०] ।

वारुणि—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त्य मुनि । २. वसिष्ठ । ३. भृगु । ४. विनता के एक पुत्र का नाम । ५. एक जनपद का नाम । ६. दँतैला हाथी । ७. वारुण वृक्ष । बरुना का पेड़ ।

वारुणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मदिरा। शराब।

विशेष—कई प्रकार की मदिरा का नाम वारुणी है। जैसे,—पुनर्नवा (गदहपूरना) की पीसकर बनाई हुई, ताड़ या खजूर के रस से बनी हुई, साठी धान के चावल और हड़ पीसकर बनाई हुई।

२. वरुण की स्त्री। वरुणानी। ३. उपनिषद् विद्या, जिसका उपदेश वरुण ने किया था। ४. पश्चिम दिशा। ५. शतभिषा नक्षत्र। ६. एक नदी का नाम। ७. भूईआँवला। ८. गांडर दूब। ९. घोड़े की एक चाल। १०. इंद्रवारुणी लता। इंदारुन की वेल। ११. हथिनी। १२. एक पर्व जो उस समय माना जाता है जब चैत महीने की कृष्ण त्रयोदशी को शतभिषा नक्षत्र पड़ता है। इस दिन लोग गंगास्नान, दान आदि करते हैं। १३. दूर्वा। दूब (को०)। १४. घोड़े की गति का एक भेद (को०)। १५. एक नदी का नाम (को०)। १६. वृंदावन के एक कदंब का रस, जो वरुण की कृपा से बलराम जी के लिये निकला था। १७. कदंब के पके हुए फलों से बनाया हुआ मद्य।

वारुणीवर—संज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार चौथे द्वीप और उसके समुद्र का नाम।

वारुणीवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] वरुण देवता (को०)।

वारुणीश—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

वारुण्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] भ्रम। भ्रांति [को०]।

वारूण्य^2—वि० १. वरुण संबंधी। २. मदिरा संबंधी [को०]।

वारूढ़—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वारूढ़ा] १. अग्नि। आग। २. पिंजरा (को०)। ३. संबल। पाथेय (को०)। ४ द्वार का पल्ला (को०)। ५. वस्त्र का छोर (को०)। ६. किनारा। तट (को०)।

वारेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वारेन्द्र] [स्त्री० वारेंद्री] गौड़ देश के एक प्राचीन जनपद का नाम जो आजकल के राजशाही जिले में था।

वारैं†—क्रि० वि० [सं० बहिर्] दे० 'बाहर'। उ०—पाँण जोडे हुकुम पावै अतुर वारैं भरथ आवै ले चले हित लेख।—रघु० रू०, पृ० ११६।

वार्कजंभ—संज्ञा पुं० [सं० वार्कजम्भ] १. एक साम का नाम। २. वृकजंभ ऋषि का गोत्रज।

वार्कार्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक यज्ञ कर्म।

वार्क्ष^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वार्क्षी] १. वृक्ष संबधी या वृक्ष का बना हुआ। २. वृक्षों से युक्त या घिरा हुआ (को०)।

वार्क्ष^2—संज्ञा पुं० १. वृक्ष की छाल का बना हुआ वस्त्र। २. वन। अरण्य। जंगल (को०)।

वार्क्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रचेतागण की स्त्री मारिषा का नाम।

विशेष—इसका जन्म कुंड मुनि और प्रम्लोचा अप्सरा से हुआ था। कुंड मुनि गोमता के तट पर तप कर रहे थे। उनको तपोभ्रष्ट करने के लिये इंद्र ने प्रम्लोचा को भेजा था। वह मुनि के आश्रम में बहुत काल तक रही। जब मुनि को उसके छल का ज्ञान हुआ, तब वे अपने को धिक्कारने लगे। प्रम्लोचा शाप के भय से भागो। उसके शरीर से पसाना निकला, जो एक वृक्ष के ऊपर पड़ा। उसी से मारिषा उत्पन्न हुई। मारिषा को राजा ने प्रचेतागण को प्रदान किया, जिससे दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ।

वार्क्ष्य—वि०, संज्ञा पु [सं०] दे० 'वार्क्ष' [को०]।

वार्गर—संज्ञा पुं० [सं०] श्यालक। साला [को०]।

वार्च—संज्ञा पुं० [सं०] हस।

वार्ड—संज्ञा पुं० [अं०] १. रक्षा। हिफाजत। २. किसी विशिष्ट कार्य के लिये घेरकर बनाया हुआ स्थान। ३. नगर में उसके महल्लों आदि का समूह, जो किसी विशिष्ट कार्य के लिये अलग नियत किया गया हो। ४. अस्पताल या जेल आदि के अंदर के अलग अलग विभाग। ५. अलग अलग कमरा या विभाग आदि (को०)।

वार्डन—संज्ञा पुं० [अं०] १. अभिभावक। २. छात्रावासों में छात्रों के प्रतिपालक। ३. रक्षक। ४. जेल के भीतर का पहरेदार [को०]।

वार्डर—संज्ञा पुं० [अं०] १. वह जो रक्षा करता हो। रक्षक। २. जेल आदि के अंदर का पहरेदार।

वार्णक—संज्ञा पुं० [सं०] लेखक।

वार्णिक—संज्ञा पुं० [सं०] लेखक।

वार्तक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्त्तक' [को०]।

वार्त्त^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. आरोग्य। निरामय। २. किसी वृत्ति या व्यवसाय में लगा हुआ व्यक्ति। कामकाजी आदमी। ३. कुशलता। दक्षता (को०)। ४. भूसी। तुष। छिलका (को०)।

वार्त्त^2—वि० १. स्वस्थ। निरोग। २. हलका। कमजोर। सारहीन। ३. वृत्तिशाली। जीविकाप्राप्त।

वार्त्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] बटेर पक्षी।

वार्त्ता—संज्ञा स्त्री० [सं० वार्त्ता, वार्ता] १. जनश्रुति। अफवाह। २. संवाद। वृत्तांत। हाल। ३. विषय। मामला। प्रसंग। बात। ४. चार विद्यावर्गों (आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दंडनीति) में एक। ५. कथोपकथन। बातचीत।

यौ०—वार्त्तालाप।

५. वैश्य वृत्ति जिसके अंतर्गत कृषिकर्म, वाणिज्य, गोरक्षा और कुसीद हैं।

यौ०—वार्ताकर्म = कृषि, व्यापार, गोपालन आदि वैश्यों के कार्य।

६. दुर्गा। ७. अन्य के द्वारा क्रय विक्रय होना। ८. ठहरना। रहना (को०)। ९. बैंगन। भाँटा (को०)। १०. वृत्ति। आजीविका (को०)।

वार्त्ताक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैंगन। भंटा। २. बटेर पक्षी।

यौ०—वार्त्ताकशाकट, वार्ताकशाकिन = बैंगन का खेत [को०]।

वार्त्ताकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बैंगन। भंटा।

वार्त्ताकु—संज्ञा पुं० [सं०] बैंगन। भंटा।

वार्त्तानुकर्षक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गुप्तचर। जासूस। २. दूत। चर संदेशवाहक [को०]।

वार्त्तानुजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वार्त्तानुजीविन्] कृषि, गोरक्षा, व्यापार आदि द्वारा जीविका चलानेवाला। वैश्य [को०]।

वार्त्तापति—संज्ञा पुं० [सं०] काम करानेवाला मालिक।

वार्तायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. गूढ़ पुरुष। प्रणिधि। चर। २. दूत। एलची। संदेशवाहक।

वार्त्तारंभ—संज्ञा पुं० [सं० वार्त्तारम्भ] व्यापार। रोजगार [को०]।

वार्त्तालाप—संज्ञा पुं० [सं०] बातचीत। कथोपकथन।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

वार्त्तावह—संज्ञा पुं० [सं०] १. पनसारी। २. समाचार ले जानेवाला। दूत। ३. नीति शास्त्र का वह भाग, जो आय व्यय से संबंध रखता है। वार्त्ता।

वार्त्ताविशेष—वि० [सं०] मृत। मरा हुआ।

वार्त्तावृत्ति—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसकी जीविका वार्त्ता, कृषिकर्म पर आधृत हो। २. गृहपति। ३. वैश्य [को०]।

वार्ताशस्त्रोपजीवी—संज्ञा पुं० [सं० वार्त्ताशस्त्रोपजीविन्] केवल वाणिज्य या युद्ध व्यवसाय में लगे रहनेवाले लोग।

विशेष—कौटिल्य ने लिखा है कि कांबोज और सौराष्ट्र देशवाले अधिकतर ऐसे ही हैं।

वार्ता साहित्य—संज्ञा पुं० [सं०] आख्यान। कथा साहित्य। उ०—जिसका उल्लेख संग्रह ग्रंथों, वार्तासाहित्य, समकालीन कवियों की रचनाओं, ऐतिहासिक ग्रंथों तथा हस्तलिखित प्रतियों में मिलता है।—अकबरी,० पृ० ३८।

वार्त्तिक[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी ग्रंथ के उक्त, अनुक्त और दुरुक्त अर्थों का स्पष्टार्थकारी विवेचक वाक्य या ग्रंथ। जैसे,—पाणिनि की अष्टाध्यायी पर कात्यायन का वार्तिक, न्यायसूत्र के वात्स्यायन भाष्य पर उद्योतकर का न्याय वार्तिक।

विशेष—वृत्ति और भाष्य केवल मूल ग्रंथ के आशय को स्पष्ट करते हैं, उसके बाहर कुछ नहीं कहते। पर वार्त्तिककार को पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। वह नई बातें भी कह सकता है।

२. वृत्ति या आचार शास्त्र का अध्ययन करनेवाला। उ०—वेदज्ञ, वैद्य, वैदेशिक, वार्त्तिक, वक्ता, व्यसनी, व्यावहारिक विद्यामंत।—वर्ण०, पृ० १०। ३. दूत। चर। ४. वैद्य (को०)। ५. बटेर पक्षी (को०)। ६. किसान (मुख्यतः वैश्य)। ७. व्यवसायी। व्यापारी (को०)। ८. विवाह का भोजन (को०)। ९. भंटा। बैंगन (को०)।

वार्तिक[2]—वि० १. संदेश लानेवाला। दूत। संदेशवाहक। २. समाचार संबंधी। व्याख्यात्मक [को०]।

वार्त्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यापार। वाणिज्य। २. खबर। समाचार [को०]।

वार्त्तीक, वार्तीर—संज्ञा पुं० [सं०] बटेर पक्षी का एक भेद।

वार्त्रघ्न[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. अर्जुन। २. जयंत।

वार्त्रघ्न[2]—वि० वृत्रघ्न संबंधी। इंद्र संबंधी। [को०]।

वार्त्रतूर—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम।

वार्द—संज्ञा पुं० [सं० वार्द्] मेघ। बादल।

वार्दर—संज्ञा पुं० [सं० वार्द्धर] १. दक्षिणावर्त शंख। २. जल। ३. घोड़े के गले पर की दाहिनी ओर की भौंरी। ४. आम की गुठली। ५. रेशम। ६. जल। ७. काकचिंचा।

वार्दल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघाच्छन्न दिवस। दुर्दिन। वर्षा का दिन। २. मसिपात्र। ३. मसि। स्याही [को०]।

वार्दालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक पौधा [को०]।

वार्द्धक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुढ़ापा। वृद्धावस्था। २. बुढ़ापे के कारण होनेवाली कमजोरी (को०)। ३. वृद्ध जनों का समूह या मंडली (को०)।

वार्द्धक्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुढ़ापा। २. वृद्धि। बढ़ती। ३. बुढ़ापे की कमजोरी (को०)।

वार्द्धि—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र।

वार्द्धिभव—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्री नमक। द्रोणी लवण [को०]।

वार्द्धुक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्द्धक' [को०]।

वार्द्धुष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्द्धुषि'।

वार्द्धुषि—संज्ञा पुं० [सं०] बहुत अधिक ब्याज लेनेवाला।

वार्द्धुषिक—संज्ञा पुं० [सं०] बहुत अधिक सूद लेनेवाला। सूदखोर।

वार्द्धुषी[1]—संज्ञा पुं० [सं० वार्द्धुषिन्] सूदखोर। वार्द्धुषिक [को०]।

वार्द्धुषी[2]—संज्ञा स्त्री० सूदखोरी [को०]।

वार्द्धुष्य—संज्ञा पुं० [सं०] अन्न को अधिक ब्याज पर देने का व्यवसाय। बिसार।

वार्द्धेय—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्री लवण [को०]।

वार्द्धर्य—संज्ञा पुं० [सं०] वृद्धता। बुढ़ापा [को०]।

वार्द्ध्र—संज्ञा पुं० [सं०] चमड़े की बद्धी। तसमा।

वार्द्ध्री संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वार्द्ध्र' [को०]।

वार्द्ध्रीणस—संज्ञा पुं० [सं०] १. गैंडा। २. वह बधिया बकरा जिसका रंग सफेद हो और जिसके कान इतने लंबे हों कि पानी पीते समय पानी से छू जायँ। ३. एक प्रकार का पक्षी जिसका सिर लाल, गला नीला और शेष शरीर काला कहा गया है। प्राचीन काल में इस पक्षी का बलिदान विष्णु के उद्देश्य से होता था।

वार्धनी—संज्ञा पुं० [सं०] जलपात्र। घड़ा [को०]।

वार्धि—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र [को०]।

वार्धुषिक- संज्ञा पुं० [सं०] कम दाम पर वस्तु खरीदकर अधिक दाम पर बेचने का व्यवसाय करनेवाला। खरीद फरोख्त का रोजगारी। बनिया। (स्मृति)।

वार्निश—संज्ञा स्त्री० [अं०] दे० 'बारनिश'। लकड़ी आदि की बनी वस्तुओं में खूबसूरती और चमक लाने के लिये लगाया जानेवाला रोगन। उ०—(क) रमा ने मुग्दर की जोड़ी देखी। उसपर वार्निश थी, साफ सुथरी, मानों अभी किसी ने फेरकर रख दिया हो।—गबन, पृ० २३४। (ख) वे मार्मिक से मार्मिक प्रत्यक्ष दृश्य के सामने वार्निश किए हुए काठ के कुंदे या गढ़ी हुई पत्थर की मूर्ति के समान खड़े रह जायंगे।—चिंतामणि, भा० २, पृ० २१२।

वार्बट—संज्ञा पुं० [सं०] नाव [को०]।

वार्भट—संज्ञा पुं० [सं०] घड़ियाल।

वार्मण—संज्ञा पुं० [सं०] कवचों का समूह [को०]।

वार्मिण—संज्ञा पुं० [सं०] कवच धारण करनेवालों का दल [को०]।

वार्मुच—संज्ञा पुं० [सं० वार्मुच्] १. बादल। २. मुस्तक। मोथा।

वार्य[1]— वि० [सं०] १. जो रोका जा सके। जिसका निवारण हो सके। वारणीय। २. जिसे वारण करना हो। जिसे रोकना हो। ३. वारि संबंधी। जल संबंधी [को०]।

वार्य[2]—संज्ञा पुं० १. आशीर्वाद। वरदान। २. जायदाद। संपत्ति। ३. दीवार [को०]।

वार्युद्भव—संज्ञा पुं० [सं०] जलज। कमल [को०]।

वार्योका—संज्ञा स्त्री० [सं० वार्योकस्] जोंक ।

वार्वट—संज्ञा पुं० [सं०] नौका । नाव । बेड़ा ।

वार्वणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नीले रंग की मक्खी ।

वार्ष—वि० [सं०] १. वर्षा संबंधी । २. वार्षिक [को०] ।

वार्षक—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार पृथ्वी के दस भागों में से एक भाग का नाम, जिसे सुद्युम्न ने विभक्त किया था ।

वार्षगण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के वैदिक आचार्य ।

वार्षभ—वि० [सं०] वृषभ संबंधी । बैल संबंधी [को०] ।

वार्षभानवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृषभानु की पुत्री । राधा [को०] ।

वार्षल—वि० [सं०] शूद्र संबंधी । शूद्र का कार्य, पेशा आदि [को०] ।

वार्षलि—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रा का पुत्र ।

वार्षाहर—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

वार्षिक¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वार्षिकी] १. वर्ष संबंधी । २. जो प्रतिवर्ष होता हो । सालाना । ३. वर्षाकाल में होनेवाला । ४. एक वर्ष तक रहनेवाला [को०] ।

वार्षिक²—संज्ञा पुं० [सं०] त्रायमाणा नाम की एक लता, जिसका प्रयोग ओषधि के रूप में होता है ।

वार्षिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बेले का फूल । २. वह नदी जिसमें साल भर पानी रहता है (को०) । ३. प्रति वर्ष नियमित रूप से होनेवाली पूजा आदि (को०) ।

वार्षिक्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु [को०] ।

वार्षिक्य²—वि० वर्षा संबंधी [को०] ।

वार्षिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] ओला । करका । पत्थर ।

वार्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्षा ऋतु [को०] ।

वार्षुक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वार्षुकी] बरसालू । वर्षणशील । बरसनेवाला [को०] ।

वार्ष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्णचंद्र ।

वार्ष्णि—संज्ञा [सं०] कृष्ण [को०] ।

वार्ष्णेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृष्णि की संतान । २. कृष्णचंद्र । ३. नल का सारथी (को०) ।

वार्ह—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वार्ही] दे० 'बार्ह' [को०] ।

वार्हत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बंगन । बृहती फल [को०] ।

वार्हद्रथ—संज्ञा पुं० [सं०] बृहद्रथ का पुत्र, जरासंध ।

वार्हद्रथि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्हद्रथ' [को०] ।

वार्हस्पत—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्हस्पत' ।

वार्हस्पत्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वार्हस्पत्य' [को०] ।

वार्हिण—वि० [सं०] मयूर संबंधी । दे० 'बार्हिण' ।

वालंटियर—संज्ञा पुं० [अं०] १. वह मनुष्य जो बिना किसी पुरस्कार या वेतन के किसी कार्य में अपनी इच्छा से योग दे । स्वयंसेवक । स्वेच्छा सेवक । २. वह सिपाही जो बिना वेतन के अपनी इच्छा से फौज में सिपाही या अफसर का काम करे । बल्लमटेर ।

वाल (पु)¹—संज्ञा स्त्री० [सं० बाला] युवती स्त्री । बाला । उ०—सुभंत केश वालयं । सारत्त ज्यों सेवालयं ।—पृ० रा०, ६१ । १८८३ ।

वाल²—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बाल' ।

वालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बालछड़ । २. कंकण । कंगन । अंगूठी । ३. घोड़े या हाथी की पूंछ (को०) । दे० 'बालक' ।

वालखिल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'बालखिल्य' । २. ऋग्वेद की ११ ऋचाएं ।

वालदैन—संज्ञा पुं० [अ०] माता पिता । माँ बाप ।

वालधान—संज्ञा पुं० [सं०] वालधि । पूँछ ।

वालधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पूँछ । पुच्छ । २. भैंसा । महिष । ३. एक ऋषि [को०] ।

वालनाटक—संज्ञा पुं० [सं०] एक तरह का निम्नकोटि का अन्न वा कदन्न [को०] ।

वालपाशक—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी की पूँछ का एक भाग [को०] ।

वालपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] मूँछ [को०] ।

वालप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] गाय की जाति का एक पशु । चमरी गाय [को०] ।

वालरा†—संज्ञा पुं० [देश०] विशेष ढंग से की जानेवाली खेती । उ०—पहाड़ों के ढेलों आदि पर, जहाँ हल नहीं चलाए जा सकते, भील लोग जगह जगह लकड़ियाँ काटकर उनके ढेर लगाते और उनको जला देते हैं, जिसकी राख खाद का काम देती है फिर, वे लोग वहाँ की जमीन को खोदकर उसमें मक्का वगैरह अन्न बोते हैं । ऐसी खेती को वालरा (वल्लर) कहते हैं ।—राज० इति०, पृ० १४३४ ।

वालव—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में एक करण का नाम ।

वालव्यजन—संज्ञा पुं० [सं०] १. चामर । चँवर । २. छोटा पंखा । उ०—यह माला, यह मल्लिका का वालव्यजन क्या होगा—मेरा दिनभर का परिश्रम ।—राज्यश्री, पृ० ८ ।

वालहस्त—संज्ञा पुं० [सं०] बालधि । पूंछ [को०] ।

वाला¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रवज्रा और उपेंद्रवज्रा के मेल से बने हुए उपजाति नामक सोलह प्रकार के वृत्तों में से एक, जिसके पहले तीन चरणों में दो तगण, एक जगण और दो गुरु होते हैं; तथा चौथे चरण में और सब वही रहता है, केवल प्रथम वर्ण लघु होता है । जैसे,—राखो सदा शंभु हिए अखंडा । बाघो सबै शूर तनै जु दंडा । धारो विभूती तन अद्दमंडा । नसैं सबेई अघ ओघ चंडा । २. नारियल (को०) ३. । दे० 'बाला' ।

वाला²—वि० [फ़ा० वालह्] १. प्रतिष्ठित । मान्य । २. उच्च । उत्तुंग । श्रेष्ठ । उत्तम [को०] ।

यौ०—दे० 'बाला' शब्द में ।

वालाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक पौधा, जिसके फूलों के दल आँख के आकार के लगते हैं ।

वालाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन मान जो आठ रज का माना जाता था । उ०—आठ रज का वालाग्र होता है ।—बृहत्संहिता पृ० २८६ । दे० 'बालाग्र' ।

वालि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बालि' ।

वालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'बालिका' । २. वालुका । बालू । ३. कान का एक गहना । बाला । बाली । ४. इलायची । ५. मुहर । मुद्रा (को०) ।

वालिखिल्ल (पु)—संज्ञा पुं० [सं० वालखिल्य] दे० 'बालखिल्य'।

वालिद—संज्ञा पुं० [अ०] पिता। बाप।

वालिदा—संज्ञा स्त्री० [अ० वालिदह्] माता। माँ।

वालिदैन—संज्ञा पुं० [अ०] माँ बाप। उ.—देखता वालिदैन अपने मकमूर हाल। परेशान अपन भी फिकर लग दुबाल।—दक्खिनी०, पृ० २६८।

वालिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्विनी नक्षत्र [को०]।

वालिभ (पु)—संज्ञा पुं० [सं० वल्लभ] दे० 'वल्लभ'। उ०—वालिभ गरथ वसीकरण, वीजा सहु अकयथ्य। जिए चढ्या दल उत्तरइ, तरुणि पसारइ हथ्य।—ढोला०, दू० १६६।

वाली^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वालिन्] बंदरों का एक राजा जो सुग्रीव का बड़ा भाई और अगद का पिता था।

विशेष—पुराणों में इसकी उत्पत्ति इंद्र के वीर्य से कही गई है। विशेष दे० 'बालि'।

वाली^{2}—संज्ञा पुं० [अ०] १. मित्र। सखा। २. शासक। हाकिम। उ०—वह बाला वाली इस घर का। है खालिक सब बहरो बर का।—दक्खिनी०, पृ० २२३।

वालुंक—संज्ञा पुं० [सं० वालुङ्क] एक प्रकार की ककड़ी [को०]।

वालु—संज्ञा पुं० [सं०] एक गंध द्रव्य।

वालुक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक गंध द्रव्य। २. पनियालू।

वालुक^2—वि० १. वालू की तरह का। २. नमक से बना हुआ [को०]।

वालुकांबुधि—संज्ञा पुं० [सं० वालुकाम्बुधि] बालू का समुद्र, मरुस्थल। रेगिस्तान [को०]।

वालुका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बालू। रेत। २. शाखा। ३. हाथ पैर। ४. ककड़ी। ५. कपूर। ६. चूर्ण (को०)।

वालुकात्मिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] चीनी। शर्करा [को०]।

वालुकाप्रभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नरक का नाम।

वालुकाब्धि—संज्ञा पुं० [सं०] रेगिस्तान। मरुभूमि।

वालुकायंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वालुकायन्त्र] औषध सिद्ध करने का एक प्रकार का यंत्र। दे० 'बालुका यंत्र'।

वालुकार्णव—संज्ञा पुं० [सं०] मरुभूमि। रेगिस्तान [को०]।

वालुकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की ककड़ी।

वालुकेल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लवण [को०]।

वालुकेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

यौ०—वालुकेश्वर तीर्थ = बंबई के पास का एक तीर्थ स्थान।

वालूक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का विष।

वालेय^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. गधा। २. पुत्र। ३. एक प्रकार का करंज। अंगारवल्लरी।

वालेय^2—वि० [सं०] दे० 'बालेय^2' [को०]

वाल्क—संज्ञा पुं० [सं०] क्षौमादि वस्त्र। वल्क से बना वस्त्र।

वाल्कल^1—वि० [सं०] वल्कल का। छाल का।

वाल्कल^2—संज्ञा पुं० दे० 'वाल्क'।

वाल्कली—संज्ञा स्त्री० [सं०] मदिरा। गौड़ी मद्य।

वाल्गुक—वि० [सं०] बहुत सुंदर [को०]।

वाल्गुद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चमगादड़ [को०]।

वाल्मिकि, वाल्मीक, वाल्मीकि—संज्ञा पुं० [सं०] एक मुनि जो रामायण के रचयिता और आदि कवि कहे जाते हैं।

विशेष—इनका जन्म भृगु वंश में हुआ था। ये प्रचेता के वंशज थे और तमसा नदी के किनारे, जिसे अब टौंस कहते हैं, रहते थे। ये एक बार अपने शिष्यों सहित नदी तट पर स्नान करने गए। वहाँ शिष्यों को घाट पर स्नान संध्या करने के लिये छोड़कर नदी के किनारे टहल रहे थे कि इसी बीच में एक निषाद ने एक क्रौंच को मारा। क्रौंच रक्त में लथपथ भूमि पर गिर पड़ा और क्रौंची चिल्लाने लगी। यह घटना देखकर मुनि के मुंह से यह वाक्य निकल गया—'मा निषाद प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वती समाः। यत्क्रौञ्च मिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।' यह वाक्य विशुद्ध वर्णयुक्त सुंदर अनुष्टुभ् था। यह छंद मुनि को इतना रुचिकर हुआ कि उन्होंने समस्त रामायण महाकाव्य इसी छंद में रच डाला।

वाल्मीकीय—वि० स्त्री० [सं०] १. वाल्मीकि संबंधी। वाल्मीकि की। २. वाल्मीकि की बनाई हुई।

वाल्लभ्य—संज्ञा पुं० [सं०] प्रियता। प्यार। वल्लभता [को०]।

वाल्हा (पु)^1—संज्ञा पुं० [सं० वल्लभ] बालम। प्रिय। स्वामी। उ०—वाल्हा सेज हमारे रे, तूँ आव हूँ वारी रे, हूँ दासी तुम्हारी रे। —दादू०, पृ० ५०४।

वाल्हा^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्लभा] पत्नी। प्रिया। उ०—वाल्हा हूँ ताहरी, तूं माहरौ नाथ। तुम सू पहली प्रीतड़ी, पूरिवलौ साथ। —दादू० पृ० ३८९।

वावदूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अच्छा बोलनेवाला। वक्ता। वाग्मी। २. बहुत बकनेवाला। बकवादी।

वावदूकता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाग्मिता।

वावय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की तुलसी का पौधा [को०]।

वावसू (पु)—संज्ञा पुं० [देश०] चर। दूत। जासूस। उ०—इतरे अस खड़ आविया, सथ वावसू सताब। अकबर कहियौ आवते, बहियौ साह निबाब।—रा० रू०, पृ० १०८।

वावात—वि० [सं०] प्रिय। चहेता [को०]।

वावाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] राजा की वह प्रिया पत्नी जो शूद्र जाति की होती थी। उ०— उस समय राजा को चार स्त्रियाँ रखने का अधिकार था; महिषी (पटरानी), परिवाक्त्री (उपेक्षिता), वावाता (प्रिया) तथा पालागली (किसी दरबारी अफसर की लड़की)।—प्रा० भा० प०, पृ० १८५।

वावुट—संज्ञा पुं० [सं०] नाव, बेड़ा। डोंगी [को०]।

वावू (पु)—संज्ञा, पुं० [सं० वायु] दे० 'वायु'। उ०—खोजे बाबू हत्थड़ा, घूडि भरेसी मूठि।—ढोला० दू० ३६१।

वावृत्त—वि० [सं०] छाँटा गया। चुना गया। पसंद किया गया [को०]।

वावैला—संज्ञा पुं० [अ०] १. विलाप। रोना पीटना। २. शोरगुल। हल्ला। चिल्लाहट।

क्रि० प्र०—करना।—मचाना।—होना।

वाश^1—संज्ञा पुं० [सं०] अडूसा। वासक।

वाश^2—वि० १. बहुत रोनेवाला। रोना। २. निवेदित।

वाश^{३}—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

वाशक—संज्ञा पुं० [सं०] १. चिल्लानेवाला । निनादकारी । २. रोनेवाला । ३. अड़ूसा ।

वाशन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षियों का बोलना । २. मक्खियों का भिनभिनाना ।

वाशन^{२}—वि० १. चिल्लानेवाला । शब्द करनेवाला । २ चहचहानेवाला ३. भिनभिनानेवाला ।

वाशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वासक । अड़ूसा ।

वाशि—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि । आग ।

वाशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अड़ूसा

वाशित^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] पशु पक्षी आदि का शब्द ।

वाशित^{२}—वि० १. दे० 'वासित' । २. शब्दित । पुकारा हुआ । (को०) ।

वाशिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्री । २. हथिनी । ३. पत्नी [को०] ।

वाशितागृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] जवान हथिनी [को०] ।

वाशिष्ठ^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक उपपुराण का नाम । २. एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

वाशिष्ठ^{२}—वि० [सं०] वशिष्ठ संबंधी । वशिष्ठ का ।

वाशिष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोमती नदी ।

वाशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुल्हाड़ी । कुठार । २. ध्वनि । स्वर । ३. युद्ध का निनाद [को०] ।

वाशुरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात । रात्रि [को०] ।

वाश्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंदिर । निवास । २. चौराहा । ३. दिन । दिवस (को०) । ४. वृषभ । बैल (को०) । ५. गोबर (को०) ।

वाश्रा – संज्ञा स्त्री० [सं०] १. माता । २. बछड़े सहित गाय [को०] ।

वाष्कल^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] वीर । योद्धा [को०] ।

वाष्कल^{२}—वि० महान् । बड़ा [को०] ।

वाष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. लोहा । २. आँसू । ३. भाप । भाफ । ४. कटकार । भटकटैया ।

यौ०—वाष्पदुर्दिन = अश्रुभरी (आँखें) । वाष्पमुख = आँसू से जिसका मुँह गीला हो । वाष्पमोक्ष, वाष्पमोक्षण = अश्रुपात । रुदन । (अन्य यौ० शब्दों के लिये देखें 'बाष्प' शब्द) ।

वाष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मरसा नाम का साग । २. दे० 'बाष्पक' ।

वाष्पयान—संज्ञा पुं० [सं०] भाप की शक्ति से चलनेवाला यान । रेलगाड़ी । उ०—रेडियो, तार औ 'फोन',—वाष्प, जल, वायुयान, मिट गया दिशावधि का जिनसे व्यवधान मान । —ग्राम्या, पृ० ८८ ।

वाष्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] हिंगुपत्री ।

वाष्पी, वाष्पीका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वाष्पिका' [को०] ।

वासंत^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वासन्त] १. ऊँट । २. कोकिल । ३. मलय वायु । ४ मूँग । ५. मैनफल । ६. लंपट या दुराचारी व्यक्ति (को०) । ७. जवान हाथी या कोई भी जवान पशु (को०) ।

वासंत^{२}—वि० १. बसंती । वसंत ऋतु का । वसंत संबंधी । २. युवा । जीवन के वसंत में वर्तमान । युवक । ३. कार्यतत्पर । काम में संलग्न [को०] ।

वासंत^{३}—संज्ञा पुं० [सं० वसन्त] दे० 'वसंत' । उ०—वासंत विना इन सकल वुधि सव्व मनोरथ रह्यो मन ।—पृ० रा०, ५८ । ८१ ।

वासंतक—वि० [सं० वासन्तक] १. वसंत संबंधी । २. वसंत ऋतु में बोया हुआ ।

वासंतिक^{१}—संज्ञा पुं० [सं० वासन्तिक] १. भाँड़ । विदूषक । २. नाचनेवाला । नर्तक । अभिनेता ।

वासंतिक^{२}—वि० वसंत संबंधी ।

वासंतिकता—संज्ञा स्त्री० [सं० वासन्तिकता] वसंत संबंधी होने का भाव । आनंद । मौज ।

वासंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वासन्ती] १. माधवी लता । २. जूही । ३. एक पुष्प जो जूही की जाति का होता है । यह वसंत ऋतु में ही फूलता है और सुगंधित होता है । नेवारी । ४. गनियारी नामक फूल । ५. मदनोत्सव । ६. दुर्गा । ७. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में चौदह वर्ण (म, त, न, म, ग ग) होते हैं, जिनमें ६, ७, ८ और ९ वां वर्ण लघु और शेष गुरु होते हैं ।

वासंदर(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वैश्वानर, प्रा० वइसाणर, वइस्साणर, अप० वासंदर, बैसंदर] अग्नि । वैसंदर । उ०—का वासंदर सेवियइ, कइ तरुणी, कइ मंद ।—ढोला०, दू० २९४ ।

वासः—संज्ञा पुं० [सं० वासस्] दे० 'वासस्' ।

यौ०—वासःकुटी = रावटी । खेमा । तंबू । २. वासःखंड = वस्त्र का टुकड़ा ।

वास—संज्ञा पुं० [सं०] १. अवस्थान । रहना । निवास । उ०—गोदावरी तीर पर प्रभु ने दंडक वन में वास किया ।—साकेत, पृ० ३७८ ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

यौ०—कारावास । तीर्थवास । कल्पवास । कैलाशवास । वैकुंठवास ।

२. गृह । घर । मकान । ३. स्थान । स्थल । जगह । स्थिति (को०) । ४. वासक । अड़ूसा । ५. एक दिन की यात्रा (को०) । ६. वासना । भावना (को०) । ७. संकाश । औपम्य । सादृश्य (को०) । ८. सुगंध । बू ।

यौ०—वासकर्णी । वासगृह = गृह का भीतरी हिस्सा । शयनकक्ष । वासताबूल = सुगंधित पान । वासपर्यय । वासप्रासाद = महल । वासभवन, वासमंदिर, वाससदन = निवासस्थान । घर । वासयष्टि । वासयोग = सुगंधित चूर्ण । पाउडर । वाससज्जा = दे० 'वासकसज्जा' ।

वासक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अड़ूसा । २. गान का एक अंग ।

विशेष—शंकर के मत से मनोहर, कंदर्प, चारु और नंदन नामक इसके चार भेद हैं । कोई कोई विनोद, वरद, नंद और कुमुद को इसका भेद मानते हैं ।

३. वासर । दिन । ४. शालक राग का एक भेद । ५. वस्त्र । ६. गंध । सुगंधद्रव्य (को०) । ७. शयनागार शयनकक्ष (को०) ।

वासक(पु)^{२}—संज्ञा पुं० [सं० वासुकि] दे० 'वासुकि' । उ०—एक दंत पाताल चलावा । तहाँ जाय वासक को खावा ।—कबीर सा० पृ० ८०२ ।

वासक^1 –वि० [सं०] [वि० स्त्री० वासका, वासिका] १. सुवासित करनेवाला। सुगंधित करनेवाला। २. बसानेवाला बसने के लिये प्रेरित करनेवाला [को०]।

वासकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह कक्ष जहाँ सार्वजनिक प्रदर्शन, नृत्य, गीत, कुश्ती आदि किए जायँ। २. यज्ञशाला [को०]।

वासकसज्जा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नायिका भेद के अनुसार वह नायिका जो नायक से मिलने की तैयारी किए हुए घर आदि सजाकर और आप भी सजकर बैठी हो।

वासकसज्जिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वासकसज्जा' [को०]।

वासका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अड़ूसा।

वासकेट—संज्ञा पुं०, स्त्री० [अं० वेस्टकोट] एक प्रकार की छोटा बडी या कमर तक की कुरती जिससे केवल पीठ, छाती और पेट ढकता है।

विशेष—इसमें आस्तीन नहीं होती। आगे और पीछे के कपड़ों में भेद होता है। इसे कसने के लिये पीछे बकसुएदार दो बंद होते हैं।

२. एक प्रकार की बडी जिसमें आस्तीन नहीं होती। यह एक ही कपड़े की बनती है। इसे जवाहर बंडी भी कहते हैं।

वासत—संज्ञा पुं० [सं०] गर्दभ। गदहा।

वासतेय—वि० [सं०] बस्ती के योग्य। रहने लायक।

वासतेयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात। रात्रि। २. रहने की जगह। घर। निवास (को०)।

वासन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वासित] १. सुगंधित करना। बासना। धूपन। २. वस्त्र। ३. वास। निवास। ४. ज्ञान। ५. बसना। निवास करना (को०)। ६. आच्छादन। गिलाफ। लिफाफा (को०)। ७. कोई पात्र, आधार, टोकरी, संदूक, बर्तन आदि (को०)। ८. योग की एक मुद्रा (को०)।

वासना^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रत्याशा। २. ज्ञान। ३. किसी पूर्व स्थिति के जमे प्रभाव से उत्पन्न मानसिक दशा। भावना। संस्कार। स्मृति हेतु। ४. न्याय के अनुसार देहात्म बुद्धिजन्य मिथ्या संस्कार। ५. इच्छा। कामना ६. दुर्गा। ७. अर्क की पत्नी। ७ सुगंधित करने या बासने की क्रिया (को०)। ८. प्रमाण। उत्पत्ति (गणित में)।

वासना^{2}—क्रि० स० दे० 'बासना'।

वासना^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं० वास] सुगंध। खुशबू। उ०–बिन वासना को फूल कहो कौन काम को।—कबीर मं०, पृ० ३६३।

वासनात्मक—वि० [सं० वासना] वासनामय। वासनायुक्त। उ०—वासनात्मक अवस्था में इन दोनों के विषय सामान्य रहते हैं।—रस०, पृ० ७५।

वासनामय -संज्ञा पुं० [सं०] संस्कारजन्य। भावना से युक्त [को०]।

वासनीय—वि० [सं०] दुर्बोध। अत्यंत क्लिष्ट [को०]।

वासपर्यय—संज्ञा पुं० [सं०] स्थान बदलना। स्थानपरिवर्तन [को०]।

वासयष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] चिड़ियों के बैठने का अड्डा। छतरी [को०]।

वासर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. दिन। दिवस। उ०—यह तारक जो खचे रचे, निशि में वासर बीज से बचे।—साकेत, पृ० ३२२। २. क्रम। बारी (को०)। ३. एक नाग का नाम (को०)। ४. वह घर जिसमें विवाह हो जाने पर स्त्री पुरुष पहली रात को सोते हैं।

वासर^2—वि० प्रभात संबंधी। प्रातःकालीन (को०)।

वासरकन्यका—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात्रि।

वासरकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०]।

वासरमणि—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

वासरसंग—संज्ञा पुं० [सं० वासरसङ्ग] प्रातःकाल।

वासराधीश—संज्ञा पुं० [सं०] दिन का स्वामी। सूर्य [को०]।

वासरेश—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०]।

वासव^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. धनिष्ठा नक्षत्र।

यौ०–वासवचाप = इंद्रधनुष। वासवज = इंद्र का पुत्र—१. अर्जुन। (२) बालि। (३) जयंत। वासवदत्ता = (१) सुबंधु का संस्कृत गद्य काव्य (२) वत्सराज उदयन की महिषी। वासवदिक्, वासवदिशा = पूर्वदिशा जिसका अधिपति इंद्र है।

वासव^2—वि० १. वसु संबंधी। २. इंद्र संबंधी। इंद्र का [को०]।

वासवानुज संज्ञा पुं० [सं०] १. उपेंद्र। विष्णु। २. कृष्णचंद्र।

वासवार—संज्ञा पुं० [देशी०] घोड़ा। तुरंग।—देशी०, पृ० २९६।

वासवावरज—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

वासवावास—संज्ञा पुं० [सं०] आकाश। गगन [को०]।

वासवाशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्र की दिशा। पूर्व दिशा।

वासवि—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र के पुत्र—१. अर्जुन। २. बालि। ३. जयंत।

वासवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यास की माता सत्यवती। मत्स्यगंधा।

वासवेय—संज्ञा पुं० [सं०] वासवी के पुत्र, वेदव्यास।

वासस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वस्त्र। कपड़ा। २. आच्छादन। परदा (को०)। ३. प्रेत पट। वाच्छादन (को०)। ४. वाणपुंख। तीर के पिछले भाग में लगाया जानेवाला पर (को०)। ५. रुई। कपास (को०)। जाल। सूत्रजाल (को०)।

वासा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वासक। अड़ूसा। उ०—वासा यह तरु पै तुम्हैं वासा वासर येक।—दीन० ग्रं०, पृ० १०१। २. बासंती। माधवी लता।

वासा^{2}—संज्ञा पुं० दे० 'बासा'।

वासात्य—वि० [सं०] उषःकालीन। उषाकाल का [को०]।

वासायनिक—वि० [सं०] दरवाजे दरवाजे घूमनेवाला [को०]।

वासि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का कुठार। बसूला। २. निवास। वास करना। रहना (को०)।

वासिक—वि० [अ० वासिक़] मजबूत। दृढ़ [को०]।

वासिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वासक' [को०]।

वासित^1—वि० [सं०] १. सुगंधित किया हुआ। महकाया हुआ। २. वस्त्राच्छादित। कपड़े से ढका हुआ। ३. जो ताजा न हो। बासी। ४. ख्यात। प्रसिद्ध (को०)। ५. जो रोका गया हो। ठहराया हुआ (को०)। ६. बसाया हुआ। आबाद (को०)। ७. मसालेदार (को०)। ८. आर्द्र। तर। भिगोया हुआ (को०)।

वासित²—संज्ञा पुं० १. पक्षियों की चहचहाहट। कलरव। २. स्मृतिजन्य ज्ञान। वासना [को०]।

वासित³—वि० [अ०] मध्यवर्ती। बीच का [को०]।

वासिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्री। २. हथिनी। ३. दे० 'वाशिता'। ४. चंद्रशेखर के मत से आर्याछंद का एक भेद, जिसमें ६ गुरु और २६ लघु वर्ण होते हैं।

वासिल—वि० [अ०] १. पहुँचाया हुआ। प्राप्त। २. मिलनेवाला। मुलाकात करनेवाला (को०)। २. सटा हुआ। संयुक्त (को०)। ४. मिला हुआ। जो वसूल हुआ हो।

यौ०—वासिल बाकी=वसूल और बाकी कम। उ०—वासिल बाकी स्याहा मुजमिल सब अधरम की बाकी। चित्रगुप्त होते मुस्तौफी शरण गहौं मैं काकी।—सूर (शब्द०)।

वासिलात—संज्ञा पुं० [अ०] वह धन जो वसूल हुआ हो।—वसूल हुए धन का योग।

विशेष—इसका प्रयोग बहुवचन में होता है।

वासिष्टवा—संज्ञा पुं० [सं०] १. रक्त। रुधिर। २. दे० 'वसिष्ठ'।

वासिष्ठ¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वाशिष्ठी] वशिष्ठ संबंधी। २. वशिष्ठ द्वारा कृत।

वासिष्ठ²—संज्ञा पुं० वशिष्ठ ऋषि का पुत्र। २. दे० 'वासिष्ठ' [को०]।

वासिष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उत्तर दिशा। २. गोमती नदी [को०]।

वासी¹—संज्ञा पुं० [सं० वासिन्] रहनेवाला। बसनेवाला। अधिवासी। जैसे, ग्रामवासी। नगरवासी।

वासी²—संज्ञा स्त्री० [सं०] बसूला जिससे बढ़ई लकड़ी छीलते हैं। तक्षणी।

वासुंधरेय संज्ञा पुं० [सं० वासुन्धरेय] एक नरक का नाम [को०]।

वासुंधरेयी—संज्ञा स्त्री० [सं० वासुन्धरेयी] वसुंधरा की पुत्री। भूमिजा। भूमिगत। सीता [को०]।

वासु—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. परमात्मा। ३. आत्मा (को०)। ४. पुनर्वसु नक्षत्र।

वासुक(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वासुकि] दे० 'वासुकि'। उ०—दंड भरै सेवा करैं, वासुक इंद्र कुबेर। गनु गंध्रव किन्नर सबै, जच्छ रहें होइ चेर।—माधवानल०, पृ० १८६।

वासुकि—संज्ञा पुं० [सं०] आठ नागों में से दूसरा नागराज।

यौ०—वासुकिसुता=वासुकि की पुत्री। सुलोचना।

वासुकी—संज्ञा पुं० [सं० वासुकि] दे० 'वासुकि'।

वासुकेय—संज्ञा पुं० [सं०] वासुकि [को०]।

यौ०—वासुकेयस्वसा=मनसा देवी।

वासुदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वसुदेव के पुत्र, श्री कृष्णचंद्र। २ मुनिश्रेष्ठ कपिल का एक नाम (को०)। ३. घोड़ा। अश्व (को०)। ४. जैनों का एक वर्ग (को०)। ५. हरिवंश के अनुसार पुंड्र देश के राजा का नाम (को०)। ६. पीपल का पेड़। अश्वत्थ। (बोलचाल)।

वासुदेवक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वासुदेव। २. श्रीकृष्ण का उपासक। ३. वह जिससे वासुदेव नाम कलंकित हो (को०)।

वासुदेवप्रियंकरी—संज्ञा स्त्री० [सं० वासुदेवप्रियङ्करी] शतावरी। वासुदेवी (को०)।

वासुदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतावरी [को०]।

वासुभद्र—संज्ञा पुं० [सं०] वासुदेव। श्रीकृष्णचंद्र।

वासुमंद—संज्ञा पुं० [सं० वासुमन्द] एक साम का नाम।

वासुरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्री। २. हथिनी। ३. रात्रि। रात। ४. भूमि। जमीन।

वासू—संज्ञा स्त्री० [सं०] नाटकों की परिभाषा में स्त्रियों के लिये संबोधन का शब्द।

वासूला(पु)—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'वसूला'। उ०—ऊछले खले तज तुरंग एक। वासूले पूँलाँसूँ विमेख।—रा० रू०, पृ० २४६।

वासोख्त—संज्ञा पुं० [अ० वासोख्त] उर्दू कविता का एक प्रकार, जो मुसद्दस के ढंग का होता है और जिसमें प्रेमिका के व्यवहार से रुष्ट होकर प्रेम छोड़ने और प्रेमिका के त्याग का उल्लेख होता है [को०]।

वासोख्ता—वि० [अ० वासोख्तह्] १. जला हुआ। २. रुष्ट [को०]।

वासोद—वि० [सं०] जो वस्त्र देता हो। वस्त्रदाता [को०]।

वासोभृत्—वि० [सं०] जो वस्त्र पहने हुए हो। जिसने वस्त्र पहना हो [को०]।

वासौकस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. निवासगृह। २. तंबू। खेमा।

वास्कट—संज्ञा स्त्री० [अ० वेस्टकोट] फतुही।

वास्त—संज्ञा पुं० [सं०] बकरा।

वास्तव¹—वि० [सं०] प्रकृत। यथार्थ। सत्य।

यौ०—वास्तव में=सचमुच। सत्यतः। असल में। दरअसल। वाकई।

वास्तव²—संज्ञा पुं० परमार्थभूत। असल तत्व।

वास्तविक¹—वि० [सं०] १. परमार्थ। सत्य। प्राकृत। २. यथार्थ। ठीक।

वास्तविक²—संज्ञा पुं० १. मालाकार। माली। २. यथार्थवादी [को०]।

वास्तवोषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] निशा। रात [को०]।

वास्तव्य¹—वि० [सं०] १. रहने योग्य। बसने योग्य। २. बसनेवाला। अधिवासी। ३. अनुपयोगी होने से त्यक्त वा छोड़ा हुआ (को०)। ४. आबाद। जो बसा हुआ हो (को०)।

वास्तव्य²—संज्ञा पुं० बस्ती। आबादी।

वास्ता संज्ञा पुं० [अ०] १. संबंध। लगाव।

मुहा०—वास्ता पड़ना=व्यवहार का अवसर आना। काम पड़ना। जैसे—तुमको उससे वास्ता नहीं पड़ा है; नहीं तो जानते। वास्ता पैदा करना=ढब लगाना। संबंध जोड़ना। वास्ता रखना=लगाव रखना। संबंध रखना।

२. मित्रता। ३. स्त्री और पुरुष का अनुचित संबंध। ४. वह जो मध्यस्थ हो (को०)।

वास्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] बकरों का समूह [को०]।

वास्तु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुभ निवासयोग्य स्थान। वह स्थान जिसपर घर उठाया जाय। डीह।

विशेष—घर बनाने के पहले वास्तु या डीह के शुभाशुभ का विचार किया जाता है। बृहत्संहिता में वास्तुगृह के उत्तम, मध्यम, आदि क्रम से पाँच भेद कहे गए हैं।

२. घर । गृह । मकान । ३. इमारत । ४. कक्ष । कमरा (को०) । ५. दे० 'वास्तूक'—१, २ । ६. आठ वसुओं में से एक का नाम (को०) । ७. एक प्रकार का अन्न (को०) ।

वास्तुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बथुआ नाम का साग । २. पुनर्नवा । गदहपूरना ।

यौ०—वास्तुकर्म = गृहनिर्माण । वास्तुकाल=भवन बनाने का उपयुक्त एवं शुभ समय । वास्तुकालिंग । वास्तुकीर्ण = एक प्रकार का पट मंडप । वास्तुज = घरेलू । गृह सबंधी । वास्तुज्ञान = दे० 'वास्तुकला' । वास्तुदेव, वास्तु देवता = गृहदेवता । वास्तुनर = आदर्श भवन । वास्तुपि । वास्तुपति । वास्तुपुरुष । वास्तुपूजा । वास्तुयाग ।

वास्तुकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक शाक । चिल्ली शाक [को०] ।

वास्तुकला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वस्तु या भवननिर्माण की कला । उ०—उसमें न तो मूर्तिकला और न वास्तुकला के उत्कृष्ट उदाहरणों के सौंदर्य की प्रशंसा करने का क्षमता थी ।—पा० सा० सि०, पृ० १२१ ।

वास्तुकालिंग—संज्ञा पुं० [सं० वास्तुकालिङ्ग] तरबूज । कलींदा ।

वास्तुप, वास्तुपति संज्ञा पुं० [सं०] वास्तु का अधिष्ठाता देवता । उस स्थान का देवता जिसमें घर बना हो । वास्तुपुरुष ।

वास्तुपुरुष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वास्तुपति' ।

वास्तुपूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वास्तु पुरुष की पूजा जो नवीन घर में गृहप्रवेश के आरंभ में की जाती है ।

वास्तुबंधन—संज्ञा पुं० [सं० वास्तुबन्धन] गृहनिर्माण [को०] ।

वास्तुयाग—संज्ञा पुं० [सं०] वह याग जो नवीन गृह में प्रवेश करने के समय किया जाता है ।

वास्तुविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह विद्या जिससे वास्तु या इमारत के संबंध की सारी बातों का परिज्ञान होता है । भवननिर्माण की कला ।

वास्तुविधान—संज्ञा पुं० [सं०] गृहनिर्माण [को०] ।

वास्तुशांति—संज्ञा स्त्री० [सं० वास्तुशान्ति] वे शांति आदि कर्म जो नवीन गृह में प्रवेश करते समय किए जाते हैं ।

पर्या०—वास्तुशमन । वास्तुप्रशमन । वास्तुयाग । वास्तूपशम । वास्तूपशमन, आदि ।

वास्तुशाक—संज्ञा पुं० [सं०] बथुआ [को०] ।

वास्तुशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वास्तुविषयक शास्त्र । दे० 'वास्तुविद्या' ।

वास्तूक—संज्ञा पुं० [सं०] एक शाक । बथुआ ।

वास्ते—अव्य० [अ०] १. लिये । निमित्त । जैसे,—तुम्हारे वास्ते आम लाया हूँ । २. हेतु । सबब । जैसे—तुम किस वास्ते वहाँ जाते हो ?

वास्तेय—वि० [सं०] १. वस्ति संबंधी । कुक्षि वा उदर संबंधी । २. वस्त, वस्तु और वास्तु संबंधी । बसाने लायक । आबाद करने लायक [को०] ।

वास्तोष्पति—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र । सुरपति । २. देवता मात्र । ३. वास्तुपति ।

वास्त्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] रथ जिसपर परदा वा ओहार पड़ा हो । वस्त्र से ढका रथ [को०] ।

वास्त्र^2—वि० १. वस्त्रनिर्मित । २. वस्त्र से आच्छादित या ढंका हुआ [को०] ।

वास्थ—वि० [सं०] जल में रहनेवाला । जलस्थ ।

वास्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. गरमी । ऊष्मा । २. लोहा । ३. भाप । वाष्प ।

वास्पेय—संज्ञा पुं० [सं०] नागकेसर ।

वास्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] कुठार । कुल्हाड़ा [को०] ।

वास्य^2—वि० १. ढंकने या आच्छादन करने लायक । २. आबाद करने या बसाने योग्य [को०] ।

वास्र—संज्ञा पुं० [सं०] दिवस । दिन [को०] ।

वास्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सवत्सा गौ । गाय । २. माता [को०] ।

वाह^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाहन । सवारी । २. लादकर या खींचकर ले चलनेवाला । ३. घोड़ा । ४. बैल । ५. भैंसा । ६. वायु । ७. बाहु । भुजा (को०) । ८. ढोना । ले जाना । वहन करना (को०) । ९. अर्जन । प्रापण (को०) । १०. प्रवाह । धारा । वहाव (को०) । ११. प्राचीन काल का एक तौल या मान जो चार गोणी का होता था ।

वाह^2—वि० १. लादकर या खींचकर ले जानेवाला । जैसे, अंबुवाह । २. प्रवहमान । बहनेवाला [को०] ।

वाह^3—अव्य० [फ़ा०] १. प्रशंसासूचक शब्द । धन्य । जैसे,—वाह ! यह तुम्हारा ही काम था ।

विशेष—कभी कभी अत्यंत हर्ष प्रकट करने के लिये यह शब्द दो बार भी आता है । जैसे, वाह वाह, आ गए ।

२. आश्चर्यसूचक शब्द । जैसे,—वाह ! मियाँ काले, क्या खूब रंग निकाले । ३. घृणाद्योतक शब्द । जैसे,—वाह, तुम्हारा यह मुँह । ४. आनंदसूचक शब्द ।

वाहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. लादकर या खींचकर वस्तुओं को ले चलनेवाला । बोझ ढोने या खींचनेवाला । जैसे, भारवाहक । २. सारथी । ३. अश्वारोही । घुड़सवार (को०) । ४. जलप्रणाली । नहर (को०) ।

वाहन—संज्ञा पुं० [मं०] १. सवारी । २. धारण करना या ले जाना (को०) । ३. हाँकना । गति में प्रवृत्त करना । जैसे, घोड़े आदि को (को०) । ४. गज । हाथी (को०) । ५. नौका का दंड । डाँड़ा । पतवार (को०) ।

वाहनप—संज्ञा पुं० [सं०] अश्व आदि का परिचारक । साईस [को०] ।

वाहनश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] अश्व । घोड़ा [को०] ।

वाहना^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेना [को०] ।

वाहना^{2} क्रि० स० [सं० वहन] दे० 'बाहना' ।

वाहरिपु—संज्ञा पुं० [सं०] महिष । भैंसा ।

वाहल—संज्ञा पुं० [सं०] १. जलप्रणाली । प्रवाह । स्रोत । जल की धारा । २. यान । वाह । प्रवहण [को०] ।

वाहला†^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० वाहल] धारा । प्रवाह । जल का प्रवाह या पूर । उ०—जउ साहिब तू नावियउ, मेहाँ पहलइ पूर । विचइ वहेसी वाहला, दूर स दूरे दूर ।—ढोला०, दू० १४७ ।

वाहला†^{2}—संज्ञा पुं० [सं० वल्लभ, प्रा० वल्लह] प्रिय । स्वामी । उ०—मारा वाहला जी, विषया थी वारे ।—दादू०, पृ० ५१६ ।

वाहवाह—अव्य० [फ़ा० वाह] बहुत अच्छा। साधुवाद। प्रशंसासूचक शब्द। उ०—जब अपने प्रान पिंड को जानी। तब प्रगटी वाहवाह की बानी।—प्राण०, पृ० १६१।

मुहा०—वाह वाह होना = खूब प्रसन्न होना। उ०—जबाने खल्क भी 'हातिम' अजब तमाशा है। जिधर वह निकले उधर वाह वाह निकले है।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ४५।

वाहवाही—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] लोगों की प्रशंसा। स्तुति। साधुवाद।

मुहा०—वाहवाही लेना या लूटना = लोगों की प्रशंसा का पात्र बनना। जैसे,—दूसरे का माल बाँटकर उसने खूब वाहवाही लूटी।

वाहस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. ऋचा। सूक्त [को०]।

वाहस—संज्ञा पुं० [सं०] १. अजगर। २. अग्नि। पावक। ३. एक साग। ४. झरना [को०]।

वाहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाहु। भुजा [को०]।

वाहावाहवि अव्य० [सं०] १. हाथोहाथ। २. आमने सामने [को०]।

वाहावाहवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] हाथ से होनेवाला युद्ध [को०]।

वाहिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गाड़ी। छकड़ा। २. ढक्का। ३. बोझ ढोने की गाड़ी (को०)।

वाहित^1—वि० [सं०] १. प्रवाहित। २. चलाया हुआ। चालित। ३. वंचित। ४. जो वहन किया गया हो। ढोया हुआ। ५. बिताया हुआ। व्यतीत किया हुआ (को०)। ६. नष्ट। विध्वस्त (को०)। ७. जिसके निमित्त चेष्टा की गई हो (को०)।

वाहित^2—संज्ञा पुं० बड़ा भार। भारी बोझ [को०]।

वाहित्थ—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी के मस्तक के बीच का भाग [को०]।

वाहिद^1—संज्ञा पुं० [अ०] १. एक की संख्या। २. ईश्वर। खुदा। उ०—है वाहिद और युकजा वही। गुन ज्ञान की टकसार है।—कबीर मं०, पृ० ३९१।

वाहिद^2—वि० यकला। अद्वय। एक। इकला [को०]।

वाहिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सेना। २. सेना का एक भेद, जिसमें ८१ हाथी, ८१ रथ, २४३ घोड़े और ४०५ पैदल होते थे। एक वाहिनी में तीन गण होते थे। ३. नदी (को०)।

यौ०—वाहिनीनिवेश = सेना की छावनी। सैन्यशिविर। वाहिनीपति।

वाहिनीक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाहिनी' [को०]।

वाहिनीपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाहिनी नामक सेना विभाग का अधिपति या प्रधान। २. सेनापति। ३. नदियों का अधिपति। समुद्र (को०)।

वाहिनीश—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाहिनीपति'।

वाहिम—वि० [अ०] १. शक्की। वहमी। २. कल्पना करनेवाला [को०]।

वाहिमा—संज्ञा पुं० [अ० वाहिमह्] १. भ्रम। भ्रांति। वहम। २. कल्पना शक्ति [को०]।

वाहियात^1—वि० [अ० वाही + फ़ा० यात] १. व्यर्थ। फजूल। जैसे,—तुम तो यों ही वाहियात बका करते हो २. बुरा। खराब। जैसे,—वाहियात आदमियों का साथ मत किया करो।

वाहियात^2—संज्ञा स्त्री० निरर्थक और व्यर्थ की बात।

वाही^{1}—वि० [अ०] १. सुस्त। ढीला। २. निकम्मा। ३. बुद्धिहीन। मूर्ख। उ०—पीठि परो ईठि सो बसीठि बिनु ढीठ मन नीठ न सँभारै वाही मोहि मढ़ि रहो है।—देव (शब्द०)। ४. आवारा। ५. बेठिकाने का। ६. बेहूदा। उ०—वाही हो खासे।—सैर०, पृ० ४।

वाही^{2}—सर्व० [हिं०] दे० 'वही'। उ०—(क) वाही थी गुण बेलड़ी, वाही थी रस बेलि। पीणई पीवो मारवी, चाल्या सूती मेलि।—ढोला०, दू० ६१०। (ख) उपरना वाही कैं जु रह्यो। जाही के उर बसे स्यामघन, निसि कों जहँ सुख गह्यो। नंद० ग्रं०, पृ० ३५५।

वाही^{3}—वि० [सं० वाहिन्] १. वहन करने या ढोनेवाला। २. रथ आदि खींचनेवाला। ३. उत्पन्न करनेवाला। पैदा करने या लानेवाला। ४. बहनेवाला। ५. गिराने या प्रवाहित करनेवाला [को०]।

वाही^{4}—संज्ञा पुं० रथ। गाड़ी [को०]।

वाहीतवाही^{1}—वि० [अ० वाही + तबाही] १. बेहूदा। आवारा।

क्रि० प्र०—फिरना।

२. अंडबंड। बेसिर पैर का।

क्रि० प्र०—बकना।

वाहीतवाही^{2}—संज्ञा स्त्री० अंडबंड बातें। गाली गलौज। उ०—बेगम साहब के सामने लगीं वाहीतवाही बकने, बड़ी एक हो।—सैर०, पृ० २७।

वाहु—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हाथ के ऊपर का भाग जो कुहनी और कंधे के बीच में होता है। भुजदंड। दे० 'बाहु'। २. गणित शास्त्र में त्रिकोणादि क्षेत्रों के किनारे की (पार्श्व) रेखा। भुजा।

वाहुक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बाहुक' [को०]।

वाहुमूल—संज्ञा पुं० [सं०] कंधे और बाँह का जोड़। काँख।

वाहुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिक का महीना। २. शाक्य मुनि के पुत्र का नाम। दे० 'बाहुल' [को०]।

वाहुल्य—संज्ञा पुं० [सं०] आधिक्य। अधिकता। बाहुल्य।

वाहुवार—संज्ञा पुं० [सं०] बहेड़े का वृक्ष।

वाह्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. यान। रथ। सवारी। २. भारवाही पशु। दे० 'बाह्य'

वाह्य^2—क्रि० वि० १. बाहर। २. अलग। जैसे,—लोकवाह्य।

वाह्य आतिथ्य—संज्ञा पुं० [सं०] बाहर से आया हुआ विदेशी माल।

वाह्यक—संज्ञा पुं० [सं०] रथ [को०]।

वाह्यकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक विषैला कीट [को०]।

वाह्यान्तर^1—वि० [सं० वाह्यान्तर] भीतर और बाहर का। जैसे,—वाह्यांतर शुद्धि।

वाह्यान्तर^2—क्रि० वि० भीतर और बाहर।

वाह्याभरण—संज्ञा पुं० [सं०] बाहरी भूषण। बाहर की भूषा, या सजावट, अलकार आदि। उ०—अलंकार सिद्धांत काव्य के केवल वाह्याभरण पर जोर देते हैं।—प्ररस्तू०, पृ० १५९।

वाह्यायाम—संज्ञा, पुं० [सं०] एक प्रकार का वात रोग।—माधव०, पृ० १३९।

वाह्याली—संज्ञा स्त्री० [सं०] घोड़े के चलने योग्य सड़क [को०]।

यौ०—वाह्यालीभू = वाह्याली।

वाह्येंद्रिय—संज्ञा स्त्री० [सं० वाह्येन्द्रिय] पाँचों ज्ञानेंद्रियाँ जिनका काम वाह्य विषयों का ग्रहण करना है। आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा।

वाह्लि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वाह्लीक'।

यौ०—वाह्लिज = बलख या वाह्लीक का अश्व।

वाह्लीक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक जनपद जो भारत की उत्तरपश्चिम सीमा पर था। गांधार के पास का एक प्रदेश।

विशेष—साधारणतः आजकल के 'बलख', जो अफगानिस्तान के उत्तरी भाग में है, के आसपास का प्रदेश ही, जिसे प्राचीन पारसी 'बकतर' और यूनानी 'बैक्ट्रिया' कहते थे, वाह्लीक माना जाता है; पर पाश्चात्य पुरातत्वविद् इसे आजकल के हिंदुस्तान के बाहर नहीं मानना चाहते।

२. वाह्लीक देश का घोड़ा। ३. कुंकुम। केसर। ४. हींग। ५. एक प्रमुख गंधर्व का नाम।

विंख—संज्ञा पुं० [सं० विङ्ख] घोड़े का खुर [को०]।

विंगन†—वि० [सं० व्यङ्ग्य ?] व्यंग्यजन्य। व्यंग्य। संकेतित। उ०—दुसरी बानी विंगन कही। पिंडज बानि में बोलै सही।—कबीर सा०, पृ० ८८०।

विंगेश—संज्ञा पुं० [सं० ?] अग्नि। आग।

विंजना(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जना] दे० 'व्यंजना'। उ०—कवित की जाति बहु भाँति गुनि रीत धुनि, लच्छना कहाँ लों वाच्य विंजना जनाओ मैं।—दीन० ग्रं०, पृ० ६।

विंजामर—संज्ञा पुं० [सं० विञ्जामर] आँख का वह भाग जो सफेद होता है।

विंजोलि, विंजोली—संज्ञा स्त्री० [सं० विञ्जोलि, विञ्जोली] श्रेणी। पंक्ति। कतार।

विंझ(पु)—वि० [सं० विन्ध्य या विद्ध, प्रा० विज्झ] घना। गंभीर। गझिन। उ०—नयणा आडा विंझ वन, मनह न आडउ कोइ।—ढोला०, दू० २१३।

विंझासनि(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्यवासिनी] दुर्गा, विंध्य पर निवास करनेवाली देवी। उ०—एक सुदिन संध्या समय विंझासनि के थान।—पृ० रा०, २४। ४६१।

विंद^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विन्द] १. अवंती के एक राजा का नाम। २. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ३. दिन का एक विशेष भाग। ४. प्राप्ति। लाभ।

विंद^{2}—वि० १. प्राप्त करनेवाला। लाभ करनेवाला। २. जिसने प्राप्त किया हो।

विंद^{3}—संज्ञा पुं० [सं० वृन्द] दे० 'वृंद'। उ०—कलिंदजा के सुख मूल लतान के विंद वितान तने हैं।—दास (शब्द०)।

विंद^{4}—संज्ञा पुं० [सं० विन्द] दे० 'विंदु'।

विंदक(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विन्दक] १. प्राप्त करनेवाला। पानेवाला। २. जाननेवाला। ज्ञाता। वेत्ता। उ०—(क) परम साधु परमारथ विंदक। संभु उपासक नहि हरि निंदक।—तुलसी (शब्द०)। (ख) भव कि परहिं परमातम विंदक। सुखी कि होंहि कबहुँ परनिंदक।—तुलसी (शब्द०)।

विंदण†—संज्ञा पुं० [सं० वन्दीजन] स्तुतिपाठक। उ०—जै जया सबद विंदण भणे, वयण राजा बामहा। लाखीक खड़े अक्खर लियां, दुरगे दक्खण सामहा।—रा० रू०, पृ० १७३।

विंदु^{1}—संज्ञा पुं० [सं० बिन्दु] १. जलकण। बूंद। २. बुंदकी। बिंदी। ३. रंग की बिंदी जो हाथी के मस्तक पर शोभा के लिये बनाई जाती है। ४. अनुस्वार। ५. शून्य। ६. दाँत का लगाया हुआ क्षत। दंतक्षत। ७. दो भौहों के बीच की बिंदी। ८. एक बूँद परिमाण। ९. रेखागणित के अनुसार वह जिसका स्थान नियत हो, पर विभाग न हो सके। १०. छोटा टुकड़ा। कण। कनी। उ०—कनक बिंदु दुइ चारि के देखे। राखे सीस सीय सम लेखे।—तुलसी (शब्द०)। ११. रत्नों का एक दोष या धब्बा जो चार प्रकार का कहा गया है—आवर्त (गोल), वर्ति (लंबा), आरक्त (लाल) और यव (जौ के आकार का) १२. मूँज या सरकंडे का धूंआँ।

विंदु^{2}—वि० १. ज्ञानी। वेत्ता। जानकार। २. उदार। दाता। ३. जानने योग्य।

विंदुचित्रक—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुचित्रक] वह मृग जिसके शरीर पर गोल गोल सफेद बुँदकियाँ होती हैं। सफेद चित्तियों का हिरन।

विंदुजाल—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुजाल] सफेद बिंदियों का समूह जो हाथी के मस्तक और सूँड़ पर बनाया जाता है।

विंदुजालक—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुजालक] हाथियों का पद्मक नामक रोग।

विंदुतंत्र—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुतन्त्र] १. चौपड़ आदि की बिसात। अक्ष। सारिफलक। २. तुरंगक।

विंदुतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुतीर्थ] काशी के प्रसिद्ध पंचनद तीर्थ का नामांतर जहाँ बिंदुमाधव का मंदिर है। पंचगंगा।

विंदुत्रिवेणी—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्दुत्रिवेणी] गाने में स्वरसाधन की एक प्रणाली जिसमें तीन बार एक स्वर का उच्चारण करके एक बार उसके बाद के स्वर का उच्चारण करते हैं। फिर तीन बार उस दूसरे स्वर का उच्चारण करके एक बार तीसरे स्वर का उच्चारण करते हैं; और अंत में तीन बार सातवें स्वर का उच्चारण करके एक बार उसके अगले सप्तक के पहले स्वर का उच्चारण करते हैं। यथा—आरोही—सा सा सा रे, रे रे रे ग, ग ग ग म, म म म प, प प प ध, ध ध ध नि, नि नि नि सा। अवरोही—सा सा सा नि, नि नि नि ध, ध ध ध प, प प प म, म म म ग; ग ग ग रे, रे रे रे सा।

विंदुपत्र—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुपत्र] भोजपत्र।

विंदुमति—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्दुमति] दे० 'विंदुमती'।

विंदुमती—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्दुमती] राजा शशिविंदु की कन्या का नाम।

विंदुमाधव—संज्ञा पुं० [सं० बिन्दुमाधव] काशी की एक प्रसिद्ध विष्णु-मूर्ति का नाम।

विशेष—इनके विषय में काशी खंड में लिखा है कि एक बार भगवान् विष्णु शिव जी की संमति पाकर काशी आए और यहाँ के राजा दिवोदास को बाहर निकाल दिया। उस समय अग्निविंदु नामक ऋषि ने विष्णु की स्तुति की और भगवान् ने प्रसन्न होकर उससे वर माँगने के लिये कहा। ऋषि ने कहा कि मोक्षाभिलाषियों के हितार्थ पंचनद तीर्थ पर आप अवस्थान करें और हमारे नाम से प्रसिद्ध होकर सबको मुक्ति प्रदान करें। विष्णु भगवान् ने 'एवमस्तु' कहकर कहा कि आज से हम तुम्हारा आधा नाम अपने नाम के आगे जोड़कर विंदुमाधव नाम से प्रख्यात होकर पंचनद तीर्थ (पंचगंगा) पर वास करेंगे। पंचनद तीर्थ भी विंदुतीर्थ कहलावेगा।

विंदुरⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विंदु+र (प्रत्य०)] किसी पदार्थ पर दूसरे रंग के लगे हुए छोटे छोटे चिह्न। बुंदकी। उ०—सिंदुर विंदुर वान के चिह्न चुनी जरि केसर कुंदन कीजै।—सुंदरी सं० (शब्द०)।

विंदुराजि—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुराजि] एक प्रकार का साँप। राजमन।

विंदुल—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुल] अगिया नामक कीड़ा जिसके छूने से शरीर में फफोले निकल आते हैं।

विंदुसर—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुसर] १. पुराणानुसार एक सरोवर का नाम जिसके उत्तर कैलाश पर्वत है।

विशेष—कहते हैं, भगीरथ ने गंगा के लिये इसी सर के किनारे तप किया था। गंगा जी इसी स्थान से निकली हैं। देवताओं ने यहाँ अनेक यज्ञ किए थे और भगवती गंगा के जितने विंदु पृथ्वी पर उतरते समय गिरे, वे इसी स्थान पर थे। इससे वह सर बन गया और विंदुसर कहलाने लगा।

२. उड़ीसा में भुवनेश्वर क्षेत्र के एक प्राचीन सरोवर का नाम।

विंदुसार—संज्ञा पुं० [सं० विन्दुसार] चंद्रगुप्त के एक पुत्र का नाम।

विशेष—यह चंद्रगुप्त के बाद मगध का राजा हुआ था। सम्राट् अशोक इसी का पुत्र था।

विंधⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्य] विंध्याचल। विंध्य पर्वत। उ०—कुसमउ देखि सनेह सँभारा। बढ़त विंध जिमि घटज निवारा।—तुलसी (शब्द०)।

विंधपत्र—संज्ञा पुं० [सं० विन्धपत्र] बेलसोंठ। बिल्व शलाटु।

विंधपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्धपत्री] दे० 'विंधपत्र'।

विंधस—संज्ञा पुं० [सं० विन्धस] चंद्रमा [को०]।

विंध्य—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्य] एक प्रसिद्ध पर्वत या पर्वतश्रेणी का नाम।

विशेष—यह पर्वत भारतवर्ष के मध्य में पूर्व से पश्चिम को फैला हुआ है। आर्यावर्त देश की दक्षिण सीमा पर यह पर्वत है। विंध्य पर्वत के दक्षिण का प्रदेश दक्षिणापथ या दक्षिण कहलाता है। इससे दो प्रधान नदियाँ नर्मदा और ताप्ती दक्षिण और पश्चिम दिशा में बहकर अरब की खाड़ी में गिरती हैं। इस पर्वत के पत्थर प्रायः बलुए और परतदार होते हैं। इसकी अनेक शाखा प्रशाखाएँ सतपुरा आदि नाम से विख्यात हैं। पुराणानुसार यह सात कुलपर्वतों में है और मनु के अनुसार मध्य देश की दक्षिणी सीमा है। महाभारत में कथा है कि विंध्य ने सूर्य से कहा कि मेरु के समान तुम हमारी प्रदक्षिणा किया करो। जब सूर्य ने न माना, तब विंध्य ऊपर बढ़ने लगा और यह आशंका हुई कि यह सूर्य का मार्ग ही रोक देगा। देवताओं ने अगस्त्य जी से प्रार्थना की। अगस्त्य उसके पास गए और उसने साष्टांग दंडवत किया। मुनि ने कहा कि जबतक मैं न लौटूँ, तबतक इसी तरह पड़े रहना। इतना कहकर अगस्त्य जी चले गए और फिर वापस नहीं आए। कहते हैं कि इसी लिये यह पर्वत अब तक ज्यों का त्यों लेटा पड़ा है; और इसी लिये इसका इतना अधिक विस्तार है।

यौ०—विंध्यकूट। विंध्यकूटक। विंध्यकूटन। विंध्यकैलासवासिनी। विंध्यगिरि=विंध्याचल। विंध्यचूलक। विंध्यचूलिक। विंध्यनिलया। विंध्यनिवासी। विंध्यवासी। विंध्यपति। विंध्यवासिनी। विंध्यशैल। विंध्यस्थ।

विंध्यकूट—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यकूट] १. विंध्य पर्वत। २. अगस्त्य मुनि का एक नाम।

विंध्यकूटक, विंध्यकूटन—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यकूटक, विन्ध्यकूटन] विंध्य पर्वत। विंध्यकूट। २. अगस्त्य मुनि।

विंध्यकैलासवासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्यकैलासवासिनी] विन्ध्यवासिनी देवी [को०]।

विंध्यगिरि—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यगिरि] विंध्य नाम का पर्वत।

विंध्यचूलक—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यचूलक] विंध्य पर्वत के दक्षिण का प्रदेश। महाभारत के अनुसार यहाँ एक प्राचीन जंगली जाति बसती थी।

विंध्यचूलिक—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यचूलिक] दे० 'विंध्यचूलक'।

विंध्यनिलया—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्यनिलया] दे० 'विंध्यवासिनी'।

विंध्यवासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्यवासिनी] देवी की एक प्रसिद्ध मूर्ति।

विशेष—यह मूर्ति मिर्जापुर जिले में विंध्य के एक टीले पर अवस्थित है। पुराणों में इस मूर्ति के संबंध में अनेक आख्यान हैं। वामन पुराण का मत है कि इंद्र ने भगवती दुर्गा को विंध्य पर्वत पर ले जाकर स्थापित किया था। किसी किसी का मत है कि सती के देह परित्याग करने पर जब शिव जी उनके शव को अपनी पीठ पर लादकर फिरने लगे, तब विष्णु धनुष बाण लेकर उनके पीछे पीछे चले; और जहाँ जहाँ अवकाश पाया, शव को काट काटकर गिराते गए। उसी समय एक अंग यहाँ भी गिरा था, जिससे यह सिद्धपीठ हो गया। यह मूर्ति बहुत प्राचीन है; क्योंकि प्राकृत के गौड़वहो (गोड़बध)

काव्य में वाक्पतिराज ने, जो आठवीं शताब्दी में था, इसका वर्णन किया है। राजतरंगणी में विंध्यवासिनी को अमरवासिनी नाम से लिखा है। जिस स्थान पर यह मूर्ति है, वह स्थान विंध्याचल कहलाता है।

विंध्यवासी—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यवासिन्] १. व्याकरण के एक आचार्य व्याड़ि मुनि का एक नाम। २. वह जो विंध्य का निवासी हो। विंध्य पर्वत का रहनेवाला।

विंध्यशक्ति—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यशक्ति] एक यवन राजा का नाम।

विंध्यशैल—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यशैल] विंध्य नाम का पर्वत।

विंध्यस्थ—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यस्थ] १. व्याडि मुनि का एक नाम। २. विंध्य का निवासी।

विंध्या^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्या] १. एक नदी का नाम। २. लवली नाम का वृक्ष जिसे हरफारेवड़ी भी कहते हैं (को०)। ३. इलायची (को०)। ४. समय का एक अत्यंत सूक्ष्म मान या विभाग दे० 'त्रुटि'—८ (को०)।

विंध्या^{2}—संज्ञा पुं० दे० 'विंध्य'।

विंध्याचल—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्याचल] १. विंध्य पर्वत। २. विंध्य पर्वत की एक शाखा पर बसी हुई एक छोटी सी बस्ती जिसमें विंध्यवासिनी देवी का मंदिर है। यह मिर्जापुर से थोड़ी दूर पर है।

विंध्याटवी—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्याटवी] विंध्य का अरण्य। विंध्य पर्वत पर का जंगल [को०]।

विंध्याद्रि—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यादि] विंध्य पर्वत।

विंध्यारि—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्यारि] अगस्त्य मुनि [को०]।

विंध्यावली—संज्ञा स्त्री० [सं० विन्ध्यावली] राजा बलि की स्त्री का नाम।

यौ०—विंध्यावली पुत्र, विंध्यावली सुत = बाणासुर।

विंब—संज्ञा पुं० [सं० विम्ब] दे० 'बिंब' [को०]।

विंबक—संज्ञा पुं० [सं० विम्बक] दे० 'बिंबक' [को०]।

विंबट—संज्ञा पुं० [सं० विम्बट] सरसों का पौधा।

विंबा, विंबिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विम्बा, विम्बिका] एक लता। कुँदरू।

विंबु—संज्ञा पुं० [सं० विम्बु] सुपारी का पौधा। दे० 'बिंबु' [को०]।

विंबोष्ठ, विंबौष्ठ—संज्ञा पुं० [सं० विम्बोष्ठ, विम्बौष्ठ] दे० 'बिंबोष्ठ'।

विंश^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विंशी] क्रम में बीस के स्थान पर पड़नेवाला। बीसवाँ।

विंश^2—संज्ञा पुं० बीसवाँ हिस्सा। बीसवाँ अंश [को०]।

विंशक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विंशका] १. बीस (रुपए आदि) में खरीदा हुआ। २. बीस अंश या भाग का। ३. बीस [को०]।

विंशत—वि० [सं०] बीस। (कुछ समस्त शब्दों में)।

विंशति^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बीस की संख्या। २. इस संख्या का सूचक अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—२०। ३. सेना के व्यूह का एक प्रकार (को०)।

विंशति^{2}—वि० जो गिनती में बीस हो।

विंशतिक—वि० [सं०] बीस के योग्य [को०]।

विंशतितम—वि० [सं०] बीसवाँ [को०]।

विंशतिप—संज्ञा पुं० [सं०] बीस गाँवों का अधिपति।

विंशतिबाहु, विंशतिभुज—संज्ञा पुं० [सं०] रावण का एक नाम। विंशद्बाहु।

विंशतिम—वि० [सं०] बीसवाँ। बीस की संख्या का [को०]।

विंशतीश—संज्ञा पुं० [सं०] बीस गाँवों का अधिपति।

विंशतीशी—संज्ञा पुं० [सं० विंशतीशिन्] बीस गाँवों का अधिपति। विंशतीश।

विंशी—संज्ञा पुं० [सं० विंशिन्] बीस। विंशति [को०]।

विंशोत्तरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार मनुष्य के शुभाशुभ फल जानने की एक रीति, जिसमें मनुष्य की आयु १२० वर्ष मानकर उसके विभाग करके नक्षत्रों और ग्रहों के अनुसार शुभाशुभ फल की कल्पना की जाती है। यथा—

ग्रह	काल	नक्षत्र
सूर्य	६ वर्ष	कृत्तिका, उत्तर फाल्गुनी और उत्तराषाढ़।
चंद्र	१० वर्ष	रोहिणी, हस्त और श्रवण।
मंगल	७ वर्ष	मृगशिरा, चित्रा और धनिष्ठा।
राहु	१८ वर्ष	आर्द्रा, स्वाती और शतभिषा।
बृहस्पति	१६ वर्ष	पुनर्वसु, विशाखा और पूर्व भाद्र।
शनि	१९ वर्ष	पुष्य, अनुराधा और उत्तर भाद्र।
बुध	१७ वर्ष	अश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती।
केतु	७ वर्ष	मघा, मूल और अश्विनी।
शुक्र	२० वर्ष	पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और भरणी।
	—	
कुल	१२० वर्ष	

विःकुंधिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विःकुन्धिका] १. मेढकों की बोली। २. टर्र टर की आवाज। कर्कश ध्वनि। टर्राहट।

वि^{1}—उप० [सं०] एक उपसर्ग जो शब्द के पहले लगकर इस प्रकार अर्थ देता है—१. पृथक्ता। वियोजन; जैसे,—वियोग। २. निषेध या वैपरीत्य। जैसे,—विक्रय, विकच्छ। ३. प्रभाग। भाग। जैसे,—विभाग। ४. क्रम। व्यवस्था। जैसे,—विधा। ५. विशेषता; जैसे,—विकराल, विहीन। ६. वैरूप्य; जैसे,—विविध।

वि^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्न। २. आकाश। ३. चक्षु। आँख। ४. घोड़ा। ५. सोम का एक नाम। ६. पक्षी। ७. बागडोर [को०]।

वि^{3}—संज्ञा स्त्री० पक्षी।

विश्रारिया—संज्ञा पुं० [देश०] पूर्वाह्न भोजन। वह भोजन जो दोपहर के पहले किया जाता है।—देशी०, पृ० ३०१।

विआल—संज्ञा पुं० [देशी, तुल० बंग० बिकाल] संध्या। सायंकाल।—देशी०, पृ० ३१०।

विए(पु)—वि० [सं० द्वितीय] अन्य। दूसरा। उ०—सोमेसर परिगह प्रबंध सित उप्पने खित्रिवर। हुए बीस अजमेर विए उप्पने अपर धर।—पृ० रा०, १। ५८३।

विकंकट—संज्ञा पुं० [सं० विकङ्कट] १. गोक्षुर। गोखरू। २. एक वृक्ष। विकंकत (को०)।

विकंकत—संज्ञा पुं० [सं० विकङ्कत] एक जंगली वृक्ष का नाम। यज्ञादि में स्रुवा इसी का बनता था।

विशेष—इसे कटाई, किंकिणी और बंज कहते हैं। इसके पत्ते छोटे छोटे और डालियों में काँटे होते हैं। इसके फल बेर के आकार के तथा पकने पर मीठे होते हैं; पर अधपकी अवस्था में खटमीठे होते हैं। वैद्यक में यह लघु, दीपन और पाचक तथा कमल और प्लीहा का नाशक लिखा है। यज्ञों के लिये स्रुवा इसी की लकड़ी का बनाने का विधान है।

पर्या०—ग्रंथिल। सुवावृक्ष। स्वादुकंटक। कंटकी। व्याघ्रपाद। कंटकारी। वृतिकंट। स्रुग्दारु। मधुपर्णी। बहुफल। गोपघंटी। दंतकाष्ठ। ब्रह्मपादप। हिमक। पिडार। पृथुवीज। रावण। पादरोहण। सुधावृक्ष, इत्यादि।

विकंकता—संज्ञा स्त्री० [सं० विकङ्कता] अतिबला।

विकंटक—संज्ञा पुं० [सं० विकण्टक] १. जवासा। २. विकंकट।

विकंप—वि० [सं० विकम्प] १. चपल। चंचल। अस्थिर। काँपता हुआ। २. दीर्घ साँस लेनेवाला [को०]।

विकंपन—संज्ञा पुं० [सं० विकम्पन] १. एक राक्षस का नाम। २. सूर्य की गति या कंपन (को०)। ३. कंपन। काँपना (को०)।

विकंपित^{1}—वि० [सं० विकम्पित] काँपता हुआ। हिलता डुलता हुआ [को०]।

विकंपित^{2}—संज्ञा पुं० १. स्वरों का गलत उच्चारण करना। २. मंद पड़ते हुए स्वर का एक भेद [को०]।

विकंपी—संज्ञा स्त्री० [सं० विकम्पी] संगीत में एक श्रुति [को०]।

विकंपी—वि० [सं० विकम्पिन्] काँपनेवाला। काँपता हुआ या हिलता हुआ [को०]।

विक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] सद्यःप्रसूता गाय का दूध। तुरंत की व्याई गौ का दूध। पेउस। पीयूष।

विक^{2}—वि० १. जलरहित। जलविहीन। २. जो प्रसन्न न हो। शुष्क। सूखा [को०]।

विकच—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार के धूमकेतु।

विशेष—इनकी संख्या ६५ है। ये बृहस्पति के पुत्र माने जाते हैं। इनमें शिखा नहीं होती। इनका वर्ण सफेद होता है और ये प्रायः दक्षिण दिशा में उदय होते हैं। इनके उदय का फल अशुभ माना जाता है। (बृहत्संहिता)।

२. ध्वजा। केतु ३. क्षपणक।

विकच^{2}—वि० १. विकसित। खिला हुआ। २. जिसमें बाल न हो। बिना बाल का। केशहीन। ३. विस्तृत। फैला हुआ। विस्तीर्ण (को०)। ४. सुस्पष्ट। व्यक्त। स्फुट (को०)। ५. उज्वल। दीप्तिमत् (को०)।

यौ०—विकचश्री = विकसित सौंदर्य से युक्त। दीप्त। शोभायुक्त।

विकचा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कदंबपुष्पी। महामुंडी [को०]।

विकचित—वि० [सं०] प्रफुल्ल। खिला हुआ [को०]।

विकच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] (नदी) जिसके दोनों ओर तराई या कछार न हो। जिसके किनारे पर दलदल या गीली जमीन न हो।

विकट^{1}—वि० [सं०] १. विशाल। २. विकराल। भयंकर। भीषण। ३. वक्र। टेढ़ा। उ०—(क) भृकुटी विकट निकट नैनन के राजत अति वर नारि। मनहुँ मदन जग जीति जेर करि राख्यो धनुष उतारि।—सूर (शब्द०)। (ख) विकट भृकुटि कच घूघरवारे। नव सरोज लोचन रतनारे।—तुलसी (शब्द०)। ४ कठिन। मुश्किल। उ०—(क) नित प्रति सबै उरहने के मिस आवति हैं उठि प्रात। अनसमुझे अपराध लगावति विकट बनावति बात।—सूर (शब्द०)। (ख) नट कृत कपट विकट खगराया। नट सेवकहि न व्यापहि माया।—तुलसी (शब्द०)। ५. दुर्गम। जैसे, विकट मार्ग ६. दुस्साध्य। ७. बिना चटाई का। ८. गर्वयुक्त। घमंड से भरा हुआ। दर्पयुक्त (को०)। ९. सौंदर्य युक्त। सुंदर (को०)। १०. जिसके दाँत लंबे हों। लंबदंत (को०)। ११. विकृत। भद्दा (को०)।

विकट^{2}—संज्ञा पुं० १. विस्फोटक। व्रण। फोड़ा। २. सोमलता। ३. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ४. गणेश [को०]। ५. चंदन। मलयज (को०)। ६. श्वेत फेनाश्म। मैनसिल। मनःशिला (को०)।

विकटक—वि० [सं०] भद्दी आकृति या देहवाला [को०]।

विकटमूर्ति—वि० [सं०] डरावने शक्ल का। जिसका आकार भयंकर हो।

विकटवदन—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुर्गा देवी के एक अनुचर का नाम। २. वह जिसकी आकृति भयावनी हो। डरावने मुहँवाला [को०]।

विकटविषाण—संज्ञा पुं० [सं०] बारहसिंहा [को०]।

विकटशृंग—संज्ञा पुं० [सं० विकटशृङ्ग] बारहसिंगा [को०]।

विकटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बुद्ध देव की माता माया देवी का एक नाम।

विकटाकृति—वि० [सं०] दे० 'विकटमूर्ति'।

विकटाक्ष—वि० [सं०] जिसकी आँखें विकट हों। भयंकर आँखोंवाला।

विकटानन—संज्ञा पुं० [सं०] १. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। २. वह जिसका मुख विकट हो।

विकतिक—संज्ञा पुं० [पालि] ऊनी चद्दर। पलंगपोश। ऐसा शय्यास्तरण जिसपर शेर, बाघ आदि की आकृतियाँ काढ़ी रहती हैं। उ०—वहाँ स्थान स्थान पर करीने से आसंदी, पलंग, चित्रक, पटिक, पर्यलक, तूलिका, विकतिक, उद्दलोमी, एकांतलोमी, कटिस्स, कौशेय और समूरी मृग के खालों के कोमल कीमती बिछौने बिछे थे।—वैशाली०, पृ० ६५।

विकत्थन^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. लंबी चौड़ी बातें करना। डींग हाँकना। २. व्याजोक्ति। व्यंग्योक्ति। झूठी प्रशंसा। ३. प्रशंसा [को०]।

विकत्थन^{2}—वि० १. शेखी बघारनेवाला । डींग हाँकनेवाला । २. व्यंग्योक्तिपूर्वक प्रशंसा करनेवाला [को०] ।

विकत्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. डींग । श्लाघा । २. झूठी प्रशंसा । व्यंग्योक्ति । ३. स्तवन । स्तुति । प्रशंसा । बड़ाई । ४. उद्घोषणा । कोई बात जोरों से कहना । घोषणा [को०] ।

विकत्थी—वि० [सं० विकत्थिन्] विकत्था करनेवाला । शेखी मारनेवाला । आत्मश्लाघी [को०] ।

विकथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विशिष्ट कथा । २. कुत्सित कथा । (जैन) ।

विकद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] यादवों के एक भेद का नाम ।

विकनिकाहिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम ।

विकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. रोग । व्याधि । युद्ध का एक ढंग । २. तलवार के ३२ हाथों में से एक का नाम ।

विकरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. परिवर्तन । संशोधन । सुधार । २. व्याकरण में क्रियारूपों की रचना के समय धातु और कालवाचक लकार प्रत्ययों के मध्य में रखे जानेवाले विशिष्ट गणद्योतक प्रत्यय अथवा चिह्न ।

विकरार^{1} (पु)—वि० [सं० विकराल] विकराल । भयंकर । डरावना । उ०—(क) कान नाक बिनु भइ विकरारा । जनु स्रव सैल गेरु कै धारा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) कियो युद्ध अति ही विकरार । लागी चलन रुधिर की धार ।—सूर (शब्द०) ।

विकरार^{2} (पु)—वि० [अ० फ़ा० बेकरार] विकल । बेचैन । व्याकुल । उ०—खनहिं चेत खन होइ विकरारा । भा चंदन वंदन सब छारा ।—जायसी (शब्द०) ।

विकराल—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विकराला, विकराली] भीषण । भयानक । डरावना । उ०—कितनो आतुरता से देखे अपने पर्चे आली । निर्दय परीक्षकों की कृतियाँ कैसी हैं विकराली ।—कुंकुम, पृ० ७९ ।

विकराला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा । २. एक वेश्या का नाम [को०] ।

विकराली^{1}—वि० [सं० विकरालिन्] ऊष्म । गरम [को०] ।

विकराली^{2}—संज्ञा स्त्री० ऊष्मा । ताप । गरमी [को०] ।

विकर्ण^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कर्ण के एक पुत्र का नाम । २. दुर्योधन के भाई का नाम जो कुरुक्षेत्र की लड़ाई में मारा गया था । ३. एक साम का नाम । ४. एक प्रकार का बाण ।

विकर्ण^{2}—वि० १. श्रवण शक्ति से हीन । बधिर । २. जिसे कान न हों । ३. जिसके कान बड़े बड़े हों [को०] ।

विकर्णक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की गँठिवन । २. शिव का व्याडि नामक गण ।

विकर्णिक—संज्ञा पुं० [सं०] सारस्वत प्रदेश ।

विकर्णी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की ईंट, जिसका व्यवहार यज्ञ की वेदी बनाने में होता था ।

विकर्णी^{2}—संज्ञा पुं० एक साम का नाम ।

विकर्णी^{3}—संज्ञा पुं० [सं० विकर्णिन्] एक प्रकार का बाण [को०] ।

विकर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य । २. मंदार । आक । ३. वह पुत्र जो अपने पिता को राज्यच्युत करके राजा बना हो (को०) । ४. वह व्यक्ति जो विकर्तन करे । काटनेवाला (को०) ।

विकर्म^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विकर्मन्] १. निषिद्ध कर्म । विरुद्धाचार । २. अनेक प्रकार के काम । विविध कार्य (को०) । ३. कार्य व्यापार से मुक्त होना (को०) ।

यौ०—विकर्मकृत् = निषिद्ध कर्म करनेवाला । विकर्मक्रिया = निषिद्ध कार्य । अविहित कर्म । विकर्मस्थ = पापात्मा ।

विकर्म^{2}—संज्ञा पुं० [सं० वि० + कर्म] विशिष्ट कार्य । उत्तम कर्म । उ०—अकर्म से दूर भागना और विकर्म से मनुष्य अपने को मुक्त और भाग्यवान बनाता है ।—कबीर सा०, पृ० ९६४ ।

विकर्मा—वि० [सं० विकर्मन्] कर्मभ्रष्ट । दुराचारी ।

विकर्मस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] धर्मशास्त्रानुसार वह पुरुष जो वेदविरुद्ध कर्म करता हो । वेद के विरुद्ध आचार करनेवाला व्यक्ति । पापात्मा ।

विकर्मिक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] बाजार और मेले का निरीक्षक [को०] ।

विकर्मिक^{2}—वि० १. अविहित या निषिद्ध कर्म करनेवाला । दुष्कर्म करनेवाला । २. जो अनेक प्रकार के कार्यों में लगा हो । विभिन्न काम करनेवाला [को०] ।

विकर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाण । तीर । २. खींचना । आकर्षण (को०) । ३. दूरी । फासला । अंतर (को०) ।

विकर्षण—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकर्षण । खींचना । २. विभाग । हिस्सा । ३. एक शास्त्र का नाम, जिसमें आकर्षण करने की विद्या का वर्णन, है । उ०—सत्य अस्त्र मायास्त्र महाबल घोर तेज तनुकारी । पुनि पर तेज विकर्षण लीजै सौम्य अस्त्र भयहारी—(शब्द०) । ४. कामदेव के एक बाण का नाम (को०) । ५. निवारण । हटाना । दूरीकरण (को०) । ६. खाद्य से परहेज । अन्न से परहेज करना (को०) । ७. अन्वेषण । जांच । ८. कुश्ती का एक ढग । अपनी ओर खींचकर गिराना या फेंकना (को०) । ९. प्रतिकूल कर्षण । विपरीत दिशा की ओर खींचना (को०) ।

विकलंक—वि० [सं० विकलङ्क] कलंकरहित । निर्दोष । दीप्तियुक्त ।

विकल^{1}—वि० [सं०] १. विह्वल । व्याकुल । बेचैन । २. कलाहीन । अंशरहित । ३. खंडित । अपूर्ण । जैसे—विकलांग । ४. घटा हुआ । ह्रासप्राप्त । ५. अस्वाभाविक । अनैसर्गिक । ६. असमर्थ । ७. त्रस्त । भयभीत । डरा हुआ (को०) । ८. प्रभाव रहित । प्रभावहीन (को०) । ९. हतोत्साह । जिसका उत्साह समाप्त हो गया हो (को०) ।

विकल^{2}—संज्ञा पुं० दे० 'विकला'—५ ।

विकलकरण—वि० [सं०] शिथिलांग । स्रस्तांग । श्लथ । क्षीणशक्ति [को०] ।

विकलकरुण—वि० [सं०] दयनीय । असहाय । निरवलंब [को०] ।

विकलपाणिक—संज्ञा पुं० [सं०] लूला । वह आदमी जिसके हाथ कट गए हों [को०] ।

विकलांग—वि०[सं० विकलाङ्ग] जिसका कोई अंग टूटा या खराब हो। न्यूनांग। अंगहीन। जैसे, लूला, लँगड़ा काना, खंजा आदि।

विकला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कला का साठवाँ अंग। २. वह स्त्री जिसका रजोदर्शन होना बंद हो गया हो। ऋतुहीना। ३. वह स्त्री जो ऋतुमती हो। रजस्वला (को०)। ४. बुध ग्रह की गति का नाम। ५. समय का एक अत्यंत छोटा भाग।

विकलाई—संज्ञा स्त्री० [सं० विकल + हिं० आई (प्रत्य०)] व्याकुलता। विकलता। उ०—सूखों का पहिन कलेवर सा, विकलाई का कल जेवर सा। घुल घुल आँखों के पानी में, फिर छलक छलक बन छंद चलो; पर मंद चलो।—हिम त०, पृ० ३।

विकलाना(पु)^{१}—क्रि० अ० [सं० विकल + हिं० आना (प्रत्य०)] व्याकुल होना। घबराना। बेचैन होना। उ०—(क) निठुर बचन सुनि स्याम के युवती विकलानी। मनों महानिधि पाइकै खोए पछितानी।—सूर (शब्द०)। (ख) एक एक ह्वै ढूढ़हीं तरुनी बिकलाहीं। सूर प्रभू कहु नाहिं मिले ढूंढ़ति द्रुम पाही।—सूर (शब्द०)।

विकलाना(पु)^{२}—क्रि० स० व्याकुल करना। विचलाना।

विकलास—संज्ञा पुं० [सं० विकलास्य] एक प्रकार का प्राचीन बाजा, जिसपर चमड़ा मढ़ा होता था।

विकलित—वि० [सं०] १. व्याकुल। बेचैन। २. दुःखी। पीड़ित।

विकली—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋतुहीना स्त्री [को०]।

विकलेंद्रिय—वि० [सं० विकलेन्द्रिय] १. जिसकी इंद्रियाँ वश में न हों। २. जिसकी कोई इंद्रिय खराब हो, अथवा बिल्कुल न हो। न्यूनेंद्रिय। जैसे,— लूला, लँगड़ा, काना, खंजा इत्यादि।

विकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. भ्रांति। भ्रम। धोखा। २. एक बात मन में बैठाकर फिर उसके विरुद्ध सोच विचार। संकल्प का उलटा। ३. विपरीत कल्पना। विरुद्ध कल्पना। ४. विशेष रूप से कल्पना करना या निर्धारित करना। जैसे,—दंड विकल्प। ५. विविध कल्पना। नाना भाँति से कल्पना करना। ६. कई प्रकार की विधियों का मिलना।

विशेष—मीमांसा में विकल्प दो प्रकार का माना गया है—एक व्यवस्थायुक्त, दूसरा इच्छानुयायी। जिसमें दो प्रकार की विधियाँ मिलती हों, उसे व्यवस्थायुक्त कहते हैं। यथा 'दर्श पौर्णमास याग में यव द्वारा होम करे, व्रीहि द्वारा होम करे इसमें दो प्रकार की विधियाँ हैं। इनमें यदि कर्ता यव से होम करे या व्रीहि से तो यह इच्छानुयायी विकल्प होगा। इच्छा विकल्प में आठ दोष होते हैं—प्रमाणत्व परित्याग, अप्रामाण्य कल्पना, अप्रामाण्योपजीवन और प्रामाण्यहानि। ये चारों उक्त दोनों में लगने से आठ हो जाते हैं।

७. योग शास्त्रानुसार पचविध चित्तवृत्तियों में एक।

विशेष—यह चित्तवृत्ति ऐसे शब्दज्ञान की शक्ति है जिसका वाच्य वस्तु नहीं होती। इसमें मनुष्य इस बात की खोज नहीं करता कि अमुक शब्द का वाच्य कोई पदार्थ है या नहीं, अथवा हो सकता है या नहीं। परंपरा से उसके वाच्य के संबंध में जैसा लोग मानते आते हैं वैसा ही वह भी मान बैठता है। जैसे,—पारस पत्थर न मिला और न किसी ने देखा है। पर पारस पत्थर शब्द से लोग यही समझते हैं कि कोई ऐसा पत्थर है, जिसके स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है। इस प्रकार के शब्दों के वाच्य के संबंध में जो वृत्ति चित्त में उत्पन्न होती है, उसे विकल्प कहते हैं।

८. अवांतर कल्प। ९. एक काव्यालंकार जिसमें दो विरुद्ध बातों को लेकर कहा जाता है कि या तो यही होगा या यही। जैसे,—कै लखिहौं मुख मोहन को कै पलास प्रसून की आगि जरौंगी। १०. वैचित्र्य। विलक्षणता। ११. समाधि का एक भेद जिसे सविकल्प कहते हैं। १२. व्याकरण में एक ही विषय के कई नियमों में से किसी एक का इच्छानुसार ग्रहण। १३. गणना (को०)। १४. उपाय (को०)। १५. कथन। वक्तव्य (को०)। १६ उत्पत्ति (को०)। १७ देवता। ईश्वर (को०)। १८. कूटयुक्ति। कला (को०)।

विकल्प आपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौटिल्य द्वारा व्याख्यात वह आपत्ति जो दूसरे मार्ग के अवलंबन से बचाई जा सकती हो।

विकल्पक—वि० [सं०] विभेदक। विच्छेदक। विभाग कल्पक [को०]।

विकल्पजाल—संज्ञा पुं० [सं०] अनिश्चय का घेरा। अनेक प्रकार की दुविधा।

विकल्पन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अनिश्चय। संदेह। द्विविधा। २. दो में से किसी एक का निश्चय करने की छूट। ३. विचारशून्यता [को०]।

विकल्पसंप्राप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० विकल्पसम्प्राप्ति] वातादि दोषों की मिश्रित अवस्था में प्रत्येक के अंशांश की कल्पना करना। (वैद्यक)।

विकल्पसम—संज्ञा पुं० [सं०] न्यायदर्शन में २४ जातियों में से एक जिसमें वादी के दिए हुए दृष्टांत में अन्य धर्म की योजना करते हुए साध्य में भी उसी धर्म का आरोप करके अथवा दृष्टांत को असिद्ध ठहराकर वादी की युक्ति का मिथ्या खंडन किया जाता है। जैसे—वादी—'शब्द अनित्य है, क्योंकि वह उत्पत्ति धर्मवाला है, घट के समान'। प्रतिवादी—'अनित्य और मूर्त है, क्योंकि वह उत्पत्ति धर्मवाला है घट के समान जो अनित्य और मूर्त है'। यहाँ प्रतिवादी का अभिप्राय यह है कि या तो शब्द को मूर्त मानो अथवा उसका नित्य होना स्वीकार करो।

विकल्पित—वि० [सं०] १. जिसके संबंध में निश्चय न हो। संदिग्ध। २. जिसका कोई नियम न हो। अनियमित। ३. क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित (को०)। ४. विभाजित। विभक्त (को०)।

विकल्मष—वि० [सं०] जिसमें पाप न हो। निष्पाप। पापरहित। निर्दोष।

विकवच—वि० [सं०] वर्म से रहित। बिना कवच का [को०]।

विकश्वर—वि० संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विकस्वर'।

विकषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ।

विकस—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

विकसन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विकसित] प्रस्फुटन। फूटना। खिलना।

विकसना—क्रि० अ० [सं० विकसन] दे० 'बिकसना'।

विकसा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ [को०]।

विकसाना(पु)—क्रि० स० [हिं० बिकसना का प्रे० रूप] खिलाना। विकसित करना।

विकसित—वि० [सं०] १. प्रफुल्ल। खिला हुआ। २. प्रसन्न [को०]।

विकस्वर^१—वि० [सं०] १. विकासशील। खिलनेवाला। २. खुला हुआ। फूला हुआ (को०)। ३. जो स्पष्ट सुनाई दे (ध्वनि)। ऊँचे स्वरवाला (को०)। ४. निष्कपट (को०)।

विकस्वर^२—संज्ञा पुं० एक काव्यालंकार जिसमें पहले कोई विशेष बात कहकर उसकी पुष्टि सामान्य बात से की जाती है। उ०—मधुप मोह मोहन तज्यो यह स्यामन की रीति। करौ आपने काज लौं तुम्हैं भाति सौ प्रीति।

विकस्वरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] लाल रंग की पुनर्नवा। लाल गदहपुरना।

विकांक्ष—वि० [सं० विकाङ्क्ष] कांक्षा या इच्छा रहित। इच्छा रहित। निष्काम [को०]।

विकांक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं० विकाङ्क्षा] १. मिथ्या कथन। विसंवाद। २. इच्छा का अभाव। ३. दुबधा। अनिश्चय [को०]।

विकांक्षी—वि० [सं० विकाङ्क्षिन्] दे० 'विकांक्ष'।

विकाम—वि० [सं०] कामना रहित। निष्काम [को०]।

विकार^१—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु का रूप, रंग आदि बदल जाना। विकृति। २. निरुक्त के चार प्रधान नियमों में एक जिसके अनुसार एक वर्ण के स्थान में दूसरा वर्ण हो जाता है। ३. दोष की प्राप्ति। बिगड़ना। खराबी। ४. दोष। बुराई, अवगुण। ५. मन की वृत्ति या अवस्था। मनोवेग या प्रवृत्ति। वासना। उ०- सकल प्रकार विकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई।– तुलसी (शब्द०)। ६ वेदांत और सांख्य दर्शन के अनुसार किसी पदार्थ के रूप आदि का बदल जाना। परिणाम। जैसे,—कंकण सोने का विकार है; क्योंकि वह सोने से ही रूपांतरित होकर बना है। ७. उपद्रव। हानि। ८. बीमारी। रोग। व्याधि (को०)। ९. घाव। जख्म। क्षत (को०)। १० परिवर्तन। रद्दोबदल (को०)। ११. मनोवृत्ति या विचार का बदलना (को०)।

विकारण—वि० [सं०] विना कारण के। अकारण (को०)।

विकारित—वि० [सं०] विकृत किया हुआ। विकारयुक्त बनाया हुआ। परिवर्तित।

विकारी^{१}—वि० [सं० विकारिन्] १. जिसमें विकार हो। विकारयुक्त। २. क्रोधादि मनोविकारों से युक्त। दुष्ट वासनावाला। उ०—रे रे अंध बीसहूँ लोचन परतिय हरन विकारी। सूने भवन गवन तैं कीनो शेष रेख नहिं टारी —सूर (शब्द०)। ३. जिसमें विकार या परिवर्तन हुआ हो। परिवर्तित। उ०—तो हूँ क्रोध न कियो विकारि। महादेव हू फिरे बिहारि। —सूर (शब्द०)। ४. परिवर्तनशील। ५. प्रेमासक्त। आसक्त (को०)।

विकारी^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] साठ संवत्सरों में से एक संवत्सर का नाम।

विकार्य—संज्ञा पुं० [सं०] अहंकार जो विकार से होता है [को०]।

विकाल^१—संज्ञा पुं० [सं०] १. अतिकाल। देर। २. ऐसा समय जब देवकार्य या पितृकार्य करने का समय बीत गया हो। ३. सायंकाल का समय।

पर्या०—सायं। दिनांत। सायाह्न। विकालक।

विकाल^२—संज्ञा पुं० [सं० द्विकाल, प्रा० वि + काल] दोनों काल—प्रातः सायं। उ०—होम जाप अस्नान विकाला। तजहि न एकौ तिनहुँ क हाला।—चित्रा०, पृ० ११।

विकालक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विकाल'^{२}।

विकालत—संज्ञा स्त्री० [अ० वकालत] दे० 'वकालत।'

विकालतनामा—संज्ञा पुं० [फा० वकालतनामह] दे० 'वकालतनामा'। उ०—(क) विकालतनामा में लिखूँ कर्मसिंह के नाम। नागरी मेरा नाम है आर्यावर्त है धाम।—नागरी० उर्दू०, पृ० ४। (ख) मिरजा साहब के नाम विकालतनामा इस प्रकार लिखा दिया।—नागरी० उर्दू०, पृ० ५।

विकालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] घड़ियाल का कटोरा। जलघड़ी।

विकाश^१—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रकाश। २. प्रसार। फैलाव। विस्तार। वृद्धि। ३. आकाश। ४. विषम गति या सुस्पष्ट पद्धति। ५. प्रस्फुटन। खिलना। ६. एक काव्यालंकार जिसमें किसी वस्तु का बिना निज का आधार छोड़े अत्यंत विकसित होना वर्णन किया जाता है। ७. किसी वस्तु की वृद्धि के लिये उसके रूप आदि में उत्तरोत्तर परिवर्तन होना। ८. प्रदर्शन। प्रकटीकरण। दिखलावा (को०)। ९ हर्ष। आनंद (को०)। १० उत्सुकता। प्रबल उत्कंठा (को०)। ११. एकांत स्थान। एकाकीपन (को०)।

विकाश^२—वि० निर्जन। एकांत।

विकाशक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विकाशिका] प्रदर्शित करनेवाला। व्यक्त करनेवाला। खोलनेवाला [को०]।

विकाशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रकटीकरण। प्रदर्शन। २. खिलना।

विकाशना(पु)—क्रि० स० [सं० विकाश] दे० 'विकासना'। उ० छटपटाहि वै अर्थ विकाशैं। ये पुनि आतम अर्थ प्रकाशैं। (शब्द)।

विकाशित वि० [सं०] दे० 'विकासित'।

विकाशी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विकाशिन्] धातुओं को शिथिल करनेवाली औषध। उ०—जो औषध··धातुओं को शिथिल कर दे तिसको विकाशी कहते हैं।—शार्ङ्गधर०, पृ० ४०।

विकाशी^{२}—वि० १. दिखाई देनेवाला। चमकनेवाला। २. फूलनेवाला। खिलनेवाला। ३. खिलानेवाला [को०]।

विकास^१—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रसार। फैलाव। २. खिलना। प्रस्फुटित होना। ३. किसी पदार्थ का उत्पन्न होकर अंत या आरंभ से भिन्न रूप धारण करते हुए उत्तरोत्तर बढ़ना। क्रमशः उन्नत होना। जैसे,—सृष्टि का विकास, मानव सभ्यता का विकास,

बीज से पेड़ों का विकास, गर्भादि से शरीर का विकास। ४. एक प्रसिद्ध पाश्चात्य सिद्धांत जिसके आचार्य डार्विन नामक प्राणिविज्ञानवेत्ता हैं।

विशेष—इस सिद्धांत में यह माना जाता है कि आधुनिक समस्त सृष्टि और उसमें पाए जानेवाले जीवजंतु तथा वृक्ष आदि एक ही मूल तत्व से उत्तरोत्तर निकलते गए हैं। यह सिद्धांत इस बात का विरोधी है कि सारी सृष्टि जैसी है, वैसी ही एक बारगी उत्पन्न हो गई थी। इसे विकासवाद भी कहते हैं।

विकास^2—संज्ञा स्त्री० [सं० वि+काश] एक प्रकार की घास जो नीची भूमि में होती है। इसकी पत्तियाँ दूब की भाँति पर कुछ बड़ी होती हैं। चौपाए इसे बड़े चाव से खाते हैं।

विकासन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विकाशन' [को०]।

विकासना(पु)^1—क्रि० स० [सं० विकास] १. प्रकट करना। निकालना। उ०—जनु अमृत होइ बचन विकासा। कमल जो बास वास धन बासा।—जायसी (शब्द०)। २. विकसित करना। प्रस्फुटित करना। खिलने में प्रवृत्त करना।

विकासना^{2}—क्रि० अ० १. विकसित होना। खिलना। २. प्रकट होना। जाहिर होना।

विकासमान्—वि० [सं० विकासमत्] उत्तरोत्तर विकसित होनेवाला। उ०—उन्होंने ईश्वर संबंधी मनुष्य की कल्पना को विकासमान् स्वीकार किया है।—आचार्य०, पृ० ७०।

विकासित—वि० [सं०] १. विकास किया हुआ। खिला हुआ। विस्तारित। उ०—विकासित केसर कुंकुम काम।—पृ० रा०, २५। २३३। २. प्रस्फोटित। ३. प्रकाशित। प्रदर्शित।

विकिर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षी। चिड़िया। २. कूआँ। ३. वह चावल आदि जो पूजा के समय विघ्न आदि दूर करने के लिये चारों ओर फेंका जाता है। अक्षत। ४. पेड़ (को०)। ५. बूँद बूँद करके (तटवर्ती वालू आदि से) चूनेवाला जल (को०)। ६. अपमृत्यु (आग में जलकर, पानी में डूबकर आदि) प्राप्त पितरों को दिया जानेवाला पिंड (को०)। ७. छितराई या बिखेरी हुई वस्तु (को०)।

विकिरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. छितराना। इधर उधर बिखेरना। २. हिंसन। मारना। ३. ज्ञान। ४. किरणों का एकत्र करना। ५. अर्क वृक्ष। ६. एक समाधि [को०]।

विकिष्कु—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का बढ़इयों का एक प्रकार का गज जो प्रायः सवा दो हाथ या ४२ इंच का होता था।

विकीरण—संज्ञा पुं० [सं०] आक। मदार।

विकीरन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विकीर्णन] फैलाना। छितराना। उ०—मंद मंद आवै देखो प्रात समीरन करत सुगंध चारो ओर विकीरन।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ६८६।

विकीर्ण^1—वि० [सं०] १. चारों ओर फैला या छितराया हुआ। अस्तव्यस्त। बिखरा हुआ। २, विख्यात। प्रसिद्ध। मशहूर। ३. प्रसृत (को०)

विकीर्ण^2—संज्ञा पुं० स्वर के उच्चारण में होनेवाला एक प्रकार का दोष।

विकीर्णक—वि० [सं०] फैलाने या विखेरनेवाला [को०]

विकीर्णकेश,विकीर्णमूर्धज—वि० [सं०] अस्तव्यस्त या खुले विखरे बालवाला। [को०]।

विकीर्णरोम—संज्ञा पुं० [सं० विकीर्णरोमन्] एक प्रकार का सुगंधित पौधा।

विकीर्णसंज्ञ—दे० संज्ञा पुं० [सं०] 'विकीर्णरोम'।

विकुंचन—संज्ञा पुं० [सं० विकुञ्चन] सिकुड़ने या सिमटने की क्रिया। मुड़ने की क्रिया।

विकुंचित—वि० [सं० विकुञ्चित] सिकुड़ा या सिमटा हुआ। मुड़ा हुआ। मोड़दार [को०]।

विकुंज—संज्ञा पुं० [सं० विकुञ्ज] महाभारत के अनुसार एक जाति का नाम।

विकुंठ^1—संज्ञा पुं० [सं० विकुण्ठ] १. वैकुंठ। विष्णुलोक। उ०—(क) हरि रस माते मगन रहइ। निरमल भगति प्रेमरस पीवइ आन न पूजा भाव धरइ। सहजइ सदा राम रसराते, मुक्ति विकुंठइ कहा करइ।—दादू (शब्द०)। (ख) नारायण सुंदर भुज चारी। बसहि विकुंठहि सदा सुरारी।—रघुराज (शब्द०)। २. विष्णु का एक नाम (को०)।

विकुंठ^2—वि० [सं० विकुण्ठ] १. जो कुंठित न हो। तेज धारवाला। कुंद या भुथरा का उलटा। २. जो धारहीन हो। कुंद या अत्यंत भुथरा (को०)।

विकुंठा—संज्ञा स्त्री० [सं० विकुण्ठा] १. विष्णु की माता। २. मन को केंद्रस्थ करना (को०)।

विकुंठित—वि० [सं० विकुण्ठित] १. शक्तिहीन। अशक्त। २. धारहीन। कुंद। भोथरा (को०)।

विकुंभांड—संज्ञा पुं० [सं० विकुम्भाण्ड] पुराणानुसार एक दानव का नाम।

विकुक्षि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] अयोध्या के राजा कुक्षि के पुत्र का नाम।

विकुक्षि^{2}—वि० जिसका पेट फुला या आगे को निकला हुआ हो। तोंदवाला।

विकुचित—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध का एक प्रकार। लड़ने की एक प्रकार की पद्धति [को०]।

विकुज—वि० [सं०] १. भौम ग्रह से रहित। २. मंगल के व्यतिरिक्त (दिन)।

यौ०—विकुजरबींदु=मंगल, सूर्य और चंद्रमा रहित।

विकुत्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विगर्हणा [को०]।

विकुर्वण—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. इच्छानुकुल रूप धारण की शक्ति। कामरूपता (बौद्ध०) [को०]।

विकुर्वाणा—वि० [सं०] १. प्रसन्न। खुश। २. परिवर्तनशील। ३. आत्मशोधक (को०)।

विकुर्वित—संज्ञा पुं० [सं०] नाना रूप धारण करना [को०]।

विकुस्र—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

विकूजन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कलरव करना। पक्षियों का चहचहाना। २. उदर में वायुविकार से होनेवाली गुड़गुड़ाहट [को०]।

विकूजित—संज्ञा पुं० [सं०] कूजन। गुंजार। पक्षियों का कलरव [को०]।

विकूणन—संज्ञा पुं० [सं०] १. टेढ़ी चितवन। कटाक्ष। २. सँकोचन [को०]।

विकूणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] नासिका। नाक।

विकृत^1—वि० [सं०] १. जिसमें किसी प्रकार का विकार आ गया हो। बिगड़ा हुआ। २. जो भद्दा या कुरूप हो गया हो। उ०—पुरुष के शुक्र और स्त्री के आर्तव में कैसा दोष हो जाने से संतान नहीं होती अथवा विकृत संतान होती है।—जगन्नाथ शर्मा (शब्द०)। ३. असाधारण। अस्वाभाविक। अप्राकृतिक। ४. असंस्कृत (को०)। ५. अपूर्ण। अधूरा। अंगहीन। छिन्न भिन्न। ६. विद्रोही। अराजक। ७. रोगी। बीमार। ८. आवेशग्रस्त। भावाविष्ट (को०)। ९. बीभत्स। घृणास्पद (को०)। १०. पराङ्मुख। विरक्त (को०)। ११. विच्छिन्न (को०)।

यौ०—विकृतदर्शन = जिसका रूप बदल गया हो या विकारयुक्त हो। विकृतदृष्टि। विकृतरक्त = लाल रँगा हुआ या लाल धब्बोंवाला। विकृतवदन = भद्दी आकृतिवाला। बदशकल। विकृतवेषी = वस्त्रादि को असंस्कृत रूप से पहननेवाला। विकृतस्वर।

विकृत स्वर—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्वर जो अपने नियत स्थान से हटकर दूसरी श्रुतियों पर जाकर ठहरता है।

विशेष—संगीत शास्त्र में १२ विकृत स्वर माने गए हैं-(१) च्युत षड्ज, (२) अच्युत षडज, (३) विकृत षड्ज, (४) साधारण गांधार, (५) अंतर गांधार, (६) च्युत मध्यम, (७) अच्युत मध्यम, (८) त्रिश्रुति मध्यम, (९) कैशिक पंचम, (१०) विकृत धैवत, (११) कैशिक निषाद और (१२) काकली निषाद।

विकृता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक योगिनी का नाम।

विकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विकार। खराबी। बिगाड़। २. वह रूप जो विकार के उपरांत प्राप्त हो। बिगड़ा हुआ रूप। ३. रोग। बीमारी। ४. सांख्य के अनुसार मूल प्रकृति का वह रूप जो उसमें विकार आने पर होता है। विकार। परिणाम। ५. परिवर्तन। ६. मन में होनेवाला क्षोभ। ७. विद्रोही होने का भाव। शत्रुता। ८ मूल धातु से बिगड़कर बना हुआ शब्द का रूप। ९. उन्नति। विकास। १०. माया का एक नाम। ११. २३ वर्ण के वृत्तों की संज्ञा। १२. गर्भपात। गर्भच्युति (को०)।

विकृती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रोग। २. विकार। ३. डिंब। ४. मदिरा (को०)।

विकृष्ट—वि० [सं०] १. खींचा हुआ। आकृष्ट। २. अलग किया हुआ (को०)। ३. फैलाया हुआ। विस्तृत किया हुआ (को०)। ४. ध्वनित। शब्दायमान (को०)। ५. लुटा हुआ (को०)।

यौ०—विकृष्टकाल = चिरकाल।

विकेट—संज्ञा पुं० [अं०] क्रिकेट के खेल में दोनों पक्षों की ओर आमने सामने गाड़े गए तीन तीन स्टंप या डंडे और उनके ऊपर लगाई जानेवाली दो दो गुल्लियाँ।

यौ०—विकेट कीपर = बल्लेबाज के पीछे के स्टंप के पास रहनेवाला प्रतिपक्ष का खिलाड़ी।

विकेट डोर—संज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का छोटा चक्करदार दरवाजा या जाने का रास्ता, जो प्रायः कमर तक ऊँचा और ऊपर से बिलकुल खुला हुआ होता है।

विशेष—यह बागों आदि के बड़े दरवाजों के पास ही इसलिये लगाया जाता है कि आदमी तो आ जा सकें, पर पशु आदि न आ सकें। इसके रूप प्रायः इस प्रकार के होते हैं — (१) (V); (२) [×]; (३) [▢]

विकेतु—वि० [सं०] ध्वजाविहीन। पताका से रहित [को०]।

विकेश^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विकेशी] १. जिसके बाल खुले या बीखर हों।

विकेश^2—संज्ञा पुं० १. एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. पुच्छल तारा। ३. एक प्रकार के प्रेत।

विकेशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] क्षौमबंध [को०]।

विकेशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मही (पृथ्वी) रूप शिव की पत्नी का नाम। २. एक प्रकार की राक्षसी या पूतना। ३. बालों की छोटी छोटी लटों को मिलाकर बनाई गई चोटी। वेणी (को०)। ४. बिखरे बालोंवाली स्त्री (को०)। ५. गंजी स्त्री।

विकोक—संज्ञा पुं० [सं०] वृकासुर के पुत्र और कोक के छोटे भाई का नाम।

विकोदरⓅ—संज्ञा पुं० [सं० वृकोदर] दे० 'वृकोदर'। उ०—गोयंद का सुंदर विकोदर सा बाहाँ। समर की मरजाद धरम के राहाँ।—रा० रू०, पृ० १२३।

विकोश—वि० [सं०] दे० 'विकोष' [को०]।

विकोष—वि० [सं०] १. कोष या म्यान से निकली हुई (तलवार)। २. जिसके ऊपर किसी प्रकार का आवरण या आच्छादन न हो। बिना छिलके का।

विकौतुक—संज्ञा पुं० [सं०] उत्सुकता रहित। उदासीन [को०]।

विक्क—संज्ञा पुं० [सं०] करभ। हस्तिशावक। हाथी का बच्चा [को०]।

विक्कणⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विक्रयण] दे० 'विक्रय'। उ०—वेवहार मुल्लहि वणिक विक्कण कीनि आनहि वव्वरा।—कीर्ति०, पृ० २८।

विक्केणुअ—वि० [सं० विक्रेय] दे० 'विक्रेय'।—देशी०, पृ० ३००।

विक्टोरियाँ^{1}—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. ब्रिटेन की महारानी जिसके शासनकाल में भारत का शासन ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ से ब्रिटिश पार्लियामेंट के हाथ में चला गया था। २. एक प्रकार की घोड़ागाड़ी जो देखने में प्रायः फिटन से मिलती जुलती, पर उससे कुछ छोटी और हलकी होती है और जिसे प्रायः एक एक ही घोड़ा खींचता है।

विक्टोरिया^{2}—संज्ञा पुं० एक छोटे ग्रह का नाम जिसका पता हैंड नामक एक यूरोपियन ने सन् १८५० में लगाया था।

विक्त—वि० [सं०] १. पृथक् किया हुआ। २. खाली। रिक्त [को०]।

विक्रम^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। उ०—कटि तट प्रगट प्रताप महान त्रिविक्रम रच्चैं। पृष्ठ देस महँ परम रास

वर विक्रम रघ्वैं।—गोपाल (शब्द०)। २. बल, शौर्य या शक्ति की अधिकता। ताकत का ज्यादा होना। बहादुरी। पराक्रम। उ०—(क) कासी भूपति चलेउ प्रकासी विक्रम रासी।—गोपाल (शब्द०)। (ख) वर भोगी भूषन को धरे पंचानन विक्रम अधिक।—गोपाल (शब्द०)। (ग) विपुल बल मूल सर्दूल विक्रम जलदनाद मर्दन महाबीर भारी।—तुलसी (शब्द०)। ३. ताकत। बल। ४. गति। ५. प्रकार। ढंग। मार्ग। ६. साठ संवत्सरों में से चौदहवाँ संवत्सर। ७. वेदपाठ की वह प्रणाली जिसमें क्रम का अभाव हो। ८. दे० 'विक्रमादित्य'। ९. पादविक्षेप। कदम। डग (को०)। १०. चंडता। तीव्रता उत्कर्ष (को०)। ११. स्थिति (को०)। १२. चरण (को०)। १३. विसर्ग का उष्म में न बदलना (को०)। १४. कुंडली के लग्न चक्र का तीसरा स्थान (को०)। १५. संस्कृत भाषा के एक जैन कवि जिन्होंने मेघदूत के पदों को लेकर नेमिदूत नामक काव्य की रचना की थी।

विक्रमⓟ²—वि० श्रेष्ठ। उत्तम। उ०—सुवा सुफल लै आएउँ तेहि गुन ते मुख रात। कया पीत सो तासों सवरौं विक्रम बात।—जायसी (शब्द०)।

विक्रमक—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय के एक गण का नाम।

विक्रमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. चलना। कदम रखना। २. विष्णु का एक डग (को०)। ३. शूरता। वीरता (को०)। ४. (पाशुपत) अलौकिक शक्ति (को०)।

विक्रमशील—संज्ञा पुं० [सं०] एक बौद्ध विहर का नाम [को०]।

विक्रमस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध मठ। बिहार [को०]।

विक्रमाजीत—संज्ञा पुं० [सं० विक्रमादित्य] दे० 'विक्रमादित्य'।

विक्रमादित्य—संज्ञा पुं० [सं०] उज्जयिनी के एक प्रसिद्ध प्रतापी राजा का नाम।

विशेष—इनके संबंध में अनेक प्रकार के प्रवाद प्रचलित हैं। ये बहुत बड़े विद्याप्रेमी, कवि, उदार, गुणग्राहक और दानी कहे जाते हैं। यह भी कहा जाता है कि इनकी सभा में नौ बहुत बड़े बड़े और प्रसिद्ध पंडित रहा करते थे, जो 'नवरत्न' कहलाते थे और जिनके नाम इस प्रकार हैं—कालिदास, बररुचि, अमरसिंह, धनवंतरि, क्षपणक, वेतालभट्ट, घटकर्पर, शंकु और वाराहमिहिर। परंतु ऐतिहासिक दृष्टि से इन नौ विद्वानों का एक ही समय में होना सिद्ध नहीं होता, जिससे 'नवरत्न' को लोग कल्पित ही समझते हैं। आजकल जो विक्रमी संवत् प्रचलित है, उसके संबंध में भी लोगों की यही धारणा है कि इन्हीं राजा विक्रमादित्य का चलाया हुआ है, पर इस बात का भी कोई ऐतिहासिक प्रमाण अभी तक नहीं मिला है कि विक्रमी संवत् के आरंभ होने के समय मालव देश में या उसके आसपास विक्रमादित्य नाम का कोई राजा रहता था। विक्रमी सवत् किस राजा विक्रमादित्य का चलाया हुआ है, इसका अभी तक कोई ठीक ठाक पता नहीं चला है। कुछ विद्वानों का मत है कि विक्रम संवत् का विक्रमादित्य नाम के किसी राजा के साथ कोई संबंध नहीं है और न वह किसी एक व्यक्ति का चलाया हुआ है। उनका मत है कि ईसवी सन् से ५८ वर्ष पूर्व शक नहपाण को गौतमीपुत्र ने युद्ध में बुरी तरह परास्त करके उसे मार डाला था। इस युद्ध में उसने अपना जो विक्रम (वीरता) दिखलाया था, उसी की स्मृति के रूप में मालवों के गण ने उसी तिथि से 'कृत युग का आरंभ माना' और इस प्रकार इस विक्रम संवत् का प्रचार हुआ। तात्पर्य यह है कि संवत् वाला 'विक्रम' शब्द किसी विक्रमादित्य नामक संवत् चलानेवाले राजा का सूचक नहीं है, बल्कि वह पीछे के किसी राजा के विक्रम या वीरता का बोधक है। स्कंदपुराण में लिखा है कि कलियुग के तीन हजार वर्ष बीत जाने पर विक्रमादित्य नाम का एक बहुत प्रतापी राजा हुआ था। मोटे हिसाब से यह समय ईसवी सन् से प्रायः सौ वर्ष पूर्व पड़ता है; पर यह राजा कौन था, इसका निश्चय नहीं होता। यह भी प्रसिद्ध है कि इस राजा ने शकों को एक घोर युद्ध में पराजित किया था और उसी विजय के उपलक्ष में अपना सवत् भी चलाया था। शकों को पराजित करने के कारण ही इसकी एक उपाधि 'शकारि' भी हो गई थी। बौद्धों और जैनियों के धर्मग्रंथों तथा चीनी और अरबी आदि यात्रियों के यात्राविवरणों में भी विक्रमादित्य के संबंध में कुछ फुटकर बातें पाई जाती हैं, पर न तो यही ज्ञात है कि इन्होंने कब से कब तक राज्य किया और न इनके जीवन की और बातों का ही कोई क्रमबद्ध इतिहास मिला है। इतिहास से यह भी पता चलता है कि गुप्तवंशीय प्रथम चंद्रगुप्त ने उत्तर भारत में शकों को परास्त करके 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की थी, परंतु ये सवत् चलानेवाले विक्रमादित्य के बहुत बाद के हैं। इसके अतिरिक्त इसी गुप्तवंश के समुद्रगुप्त के पुत्र द्वितीय चंद्रगुप्त ने भी 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की थी। ईसवी सातवीं शताब्दी के आरंभ में काश्मीर में भी विक्रमादित्य नाम का एक राजा हुआ था जिसके पिता का नाम रणादित्य था। इसी प्रकार चालुक्य वंश में भी इस नाम के कई राजा हो गए हैं। पीछे से तो मानो यह प्रथा सी चल पड़ी थी कि जहाँ कोई राजा कुछ अधिक बढ़ निकलता था, वहाँ वह अपने नाम के साथ 'विक्रमादित्य' की उपाधि लगा लिया करता था। यहाँ तक कि अकबर की बाल्यावस्था में जब हेमूँ दूसर ने दिल्ली पर अधिकार किया, तब वह भी विक्रमादित्य बन बैठा था।

उज्जयिनी नरेश विक्रमादित्य का पता अब चल गया है। वह मालव गणतंत्र का प्रधान था। ऊपर के अनुच्छेद में इसे ही गौतमीपुत्र के नाम से पुकारा गया है। वह इतना पराक्रमी निकला था कि बाद के प्रभावशाली नरेशों ने भी अपने नाम के आगे उसका नाम जोड़ने में गौरव का अनुभव किया। ई० सन् से ५७ वर्ष पूर्व उसने भयंकर युद्ध करके शकों को परास्त करके भारत से बाहर निकाल दिया था। इस विषय में तथ्य के निर्णय में कतिपय शिलालेख और उज्जयिनी में खुदाई में निकले मंदिर आदि अत्यंत सहायक सिद्ध हुए हैं।

विक्रमाब्द—संज्ञा पुं० [सं०] विक्रमादित्य के नाम से चला हुआ संवत्। विक्रम संवत्।

विक्रमार्क—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विक्रमादित्य'।

विक्रमित—संज्ञा पुं० [सं०] शौर्य । वीर्य । पौरुष [को०] ।

विक्रमी[१]—संज्ञा पुं० [सं० विक्रमिन्] १. वह जिसमें बहुत अधिक बल हो । विक्रमवाला । पराक्रमी । उ०—अति विक्रमी मोरध्वज-नंदन । नाम ताम्रध्वज दुष्ट निकंदन ।—रघुराथ (शब्द०) । २. विष्णु । ३. शेर ।

विक्रमी[२]—वि० विक्रम का । विक्रम संबंधी । जैसे,—विक्रमी संवत् ।

विक्रमीय—वि० [सं०] विक्रमादित्य संबंधी ।

विक्रय—संज्ञा पुं० [सं०] मूल्य लेकर कोई पदार्थ देना । बेचना । बिक्री । उ०- इस दलील के आधार पर क्रय विक्रय के मामूली व्यापार में दस्तंदाजी करना—अर्थात् किसी चीज के बेचने या मोल लेने की मनाई कर देना—और भी अनुचित बात होगी ।—स्वाधीनता (शब्द०) ।

यौ०—क्रय विक्रय ।

विक्रयक—संज्ञा पुं० [सं०] बेचनेवाला । विक्रेता ।

विक्रयण—संज्ञा पुं० [सं०] बेचने की क्रिया । विक्रय । बिक्री ।

विक्रयपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह पत्र जिसमें यह लिखा हो कि अमुक पदार्थ अमुक व्यक्ति के नाम इतने मूल्य पर बेचा गया । बैनामा । २. सामानों की खरीद की रसीद । नगदी खरीद की रसीद । कैशमेमो ।

विक्रय प्रतिक्रोष्टा—संज्ञा पुं० [सं० विक्रय प्रतिक्रोष्टृ] बोली बोलकर बेचनेवाला । नीलाम करनेवाला ।

विक्रयिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विक्रय करता या बेचता हो । बेचनेवाला । विक्रेता ।

विक्रयी—संज्ञा पुं० [सं० विक्रयिन्] विक्रय करनेवाला । बेचनेवाला । विक्रेता ।

विक्रय्य—वि० [सं०] बेचने योग्य । जो बेचा जानेवाला हो [को०] ।

विक्रस्त—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०] ।

विक्रांत[१]—संज्ञा पुं० [सं० विक्रान्त] १. वैक्रांत मणि । २. शूर । वीर । बहादुर । ३. शेर । सिंह । ४. पुराणानुसार हिरण्याक्ष के एक पुत्र का नाम । ५. व्याकरण में एक प्रकार की संधि जिसमें विसर्ग अविकृत ही रहता है । ६. एक प्रजापति का नाम । ७. पुराणानुसार कुवलयाश्व के पुत्र का नाम जिसका जन्म मदालसा के गर्भ से हुआ था । ८. चलने का ढंग । ९. साहस । हिम्मत । १०. एक प्रकार का मादक पेय पदार्थ ।

विक्रांत[२]—वि० १. जिसकी क्रांति नष्ट हो गई हो । २. तेजस्वी । प्रतापी ।

यौ०—विक्रांतगति = सिंह के समान गति या चालवाला । सुंदर गतिवाला । विकांतयोधी = पराक्रमी वा उच्चकोटि का योद्धा ।

विक्रांता[१]—संज्ञा स्त्री० [सं० विक्रांता] १. अग्निमंथ वृक्ष । अरणी । २. जयंती । ३. मूसाकानी । ४, अडहुल । गुड़हर । ५. अपराजिता । ६. लाल लजालू । छुई मुई । ७. हंसपदी नाम की लता ।

विक्रांता[२]—संज्ञा पुं० [सं० विक्रान्तृ] १. शूरवीर । वीर । योद्धा । २. शेर । सिंह । ३. विजेता [को०] ।

विक्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० विक्रान्ति] १. गति । २. घोड़े की सरपट चाल । ३ विक्रम । बल । ४. वीरता । शूरता । बहादुरी ।

विक्रायक—संज्ञा पुं० [सं०] बेचनेवाला । विक्रेता ।

विक्रायिक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विक्रयिक [को०] ।

विक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विकार । खराबी । २. किसी क्रिया के विरुद्ध होनेवाली क्रिया । ३. परिवर्तन (को०) । ४. उत्तेजना । उद्वेग (को०) । ५. क्रोध । ६. प्रतिकूलता (को०) । ७. भौंहों का संकोचन (को०) । ८. रोमांच (को०) । ९. रोगग्रस्तता । बीमारी (को०) । १०. उल्लंघन । कर्तव्य का पालन न होना (को०) । ११. चावल पकाना (को०) । १२. क्षति । हानि । १३. बुझाना । निर्वाण (दीपक का) ।

विक्रियोपमा—संज्ञा " [सं०] एक प्रकार का उपमालंकार जिसमें किसी विशिष्ट क्रिया या उपाय का अवलंबन कहा जाता है ।

विक्री—संज्ञा स्त्री० [सं० विक्रय] १. बेचने की क्रिया या भाव । विक्रय । बिक्री । २. वह धन जो बेचने पर मिले ।

विक्रीड—संज्ञा पुं० [सं०] १. खेल का मैदान । २. खेलने की वस्तु । खिलौना [को०] ।

विक्रीत[१]—वि० [सं०] जो बेच दिया गया हो । बेचा हुआ ।

विक्रीत[२]—संज्ञा पुं० बिक्री । विक्रयण [को०] ।

विक्रुष्ट[१]—वि० [सं०] १. निष्ठुर । निर्दय । निठुर । २. कोसा हुआ । गर्हित । निंदित ।—विरुद्ध (को०) । ३. उत्क्रोशित । उद्घोषित (को०) ।

विक्रुष्ट[२]—संज्ञा पुं० १. गाली । अपशब्द । २. सहायता प्राप्त करने के लिये चिल्लाना । दुहाई देना । गुहार [को०] ।

विक्रेतव्य—वि० [सं०] विक्रय के योग्य । बेचने लायक [को०] ।

विक्रेता—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो मूल्य लेकर देता हो । बेचनेवाला । बिक्री करनेवाला ।

विक्रेय, विक्रेय्य—वि० [सं०] जो विक्रय होने को हो । बिकनेवाला । जो बिकने योग्य हो ।

विक्रोध—वि० [सं०] शांत । क्रोधहीन [को०] ।

विक्रोश, विक्रोशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. गुहार । दुहाई । २. गाली । अपशब्द [को०] ।

विक्रोष्टा—संज्ञा पुं० [सं० विक्रोष्टृ] १. वह जो सहायतार्थ गुहार करता हो । २. अपशब्दों का प्रयोग करनेवाला [को०] ।

विक्लव[१]—वि० [सं०] १. विह्वल । बेचैन । २. भयभीत । चौंका हुआ । त्रस्त (को०) । ३. डरपोक । कायर (को०) । ४. अभिभूत । ग्रस्त । परास्त (को०) । ५. दुःखी । कष्टग्रस्त । संतप्त (को०) । ६. ऊबा हुआ (को०) । ७. हकलाने या लड़खड़ानेवाला (को०) ।

विक्लव[२]—संज्ञा पुं० [सं०] १. विह्वलता । व्याकुलता । बैचैनी । २. खौफ । डर । भय [को०] ।

विक्लवता—संज्ञा स्त्री० [सं०] भीरुता । कायरता [को०] ।

विक्लवित—संज्ञा पुं० [सं०] भय से भरी बात । भयभीत बचन ।

विक्लांत—वि० [सं० विक्लांत] १. थका हुआ। श्रांत। पस्त हिम्मत। २. हतोत्साह [को०]।

विक्लित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] आर्द्रता। क्लिन्नता। गीलापन [को०]।

विक्लिध—वि० [सं०] पसीने से तर। प्रस्वेद से भींगा हुआ। [को०]।

विक्लिन्न—वि० [सं०] १. जो पुराना होने के कारण सड़ या गल गया हो। जीर्ण शीर्ण। २. अत्यंत गीला। पूरी तरह भीगा हुआ (को०)। ३. मुर्झाया हुआ। म्लान। शुष्क (को०)।

विक्लिष्ट^1—वि० [सं०] १. अत्यंत कष्टग्रस्त। दुःखी। २. क्षतिग्रस्त। नष्ट किया हुआ [को०]।

विक्लिष्ट^2—संज्ञा पुं० उच्चारण दोष [को०]।

विक्लेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. आर्द्रता। गीलापन। २. भली भाँति तर या गीला होना। ३. विगलन। द्रवीकरण [को०]।

विक्लेदन—संज्ञा पुं० [सं०] मुलायम या आर्द्र करने की क्रिया [को०]।

विक्लेश—संज्ञा पुं० [सं०] दैत्य वर्णों का अशुद्ध उच्चारण [को०]।

विक्षत^1—वि० [सं०] १. जिसमें क्षत लगा हो। जिसमें खराश पड़ी हो। घायल। जख्मी। २. पीटा हुआ (को०)। ३. प्रभावित। अभिभूत (को०)।

विक्षत^2—संज्ञा पुं० घाव। जख्म [को०]।

विक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जो अधिक मद्यपान करने से होता है।

विक्षर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २. कृष्ण। ३ एक राक्षस [को०]।

विक्षर^2—वि० प्रवहमान। बहता हुआ [को०]।

विक्षरण—संज्ञा पुं० [सं०] बहना [को०]।

विक्षार—संज्ञा पुं० [सं०] भाग्यशाली दैवी घटना।

विक्षाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. खाँसी। कास। २. शब्द। ध्वनि [को०]।

विक्षित—वि० [सं०] १. नीचे गिरा हुआ। २. हीन। दुःखी [को०]।

विक्षिप्त^1—वि० [सं०] १. फेंका या छितराया हुआ। २. जिसका त्याग किया गया हो। त्यक्त। ३. जिसका दिमाग ठिकाने न हो। पागल। उ०—(क) उसकी नींद भी उड़ जाती होगी और जो रात दिन जागता होगा, तो विक्षिप्त या अतिरोगी होगा। —दयानंद (शब्द०)। (ख) तुमहिं कह्यो श्रुति शास्त्रन माहीं। जहँ विक्षिप्त भूप ह्वै जाहीं।—रघुराज (शब्द०)। ४. घबराया हुआ। पागलों का सा। विकल। व्याकुल। ५. भेजा हुआ। प्रेषित (को०)। ६. जिसका खंडन किया गया हो। निराकृत (को०)। ७. कंपित। विक्षुब्ध। जैसे, विक्षिप्त भ्रू विलास (को०)।

विक्षिप्त^2—संज्ञा पुं० योग में चित्त की वृत्तियों या अवस्थाओं में से एक जिसमें चित्त प्रायः अस्थिर रहता है, पर बीच बीच में कुछ स्थिर भी हो जाता है। कहा गया है कि ऐसी अवस्था योग की साधना के लिये अनुकूल या उपयुक्त नहीं होती।

विशेष—दे० 'चित्तभूमि' और 'योग'।

विक्षिप्तक—संज्ञा पुं० [सं०] वह मृत शरीर जो जलाया या गाड़ा न गया हो, बल्कि यों ही कहीं फेंक दिया गया हो। (बौद्ध)।

विक्षिप्तता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विक्षिप्त या पागल होने का भाव। पागलपन। उ०—यहाँ तक कि कुछ काल के पश्चात् स्वयं उसे ही अपनी विक्षिप्तता को देखकर विस्मित होना पड़ता है। —निबंधमालादर्श (शब्द०)।

विक्षीणक—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवमंडली। २. शिव के अनुचरों का प्रधान। ३. वह स्थान जहाँ से आमिषाहारी हटा दिए गए हों। ४ विध्वंस या नष्ट करनेवाला व्यक्ति। विनाशक [को०]।

विक्षीर संज्ञा पुं० [सं०] आक। मदार।

विक्षीरणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुद्धी। दुग्धिका।

विक्षुण्ण—वि० [सं०] १. प्रोत्साहित। प्रेरित। २. चूर्णित। मर्दित। ३. पददलित [को०]।

विक्षुद्र—वि० [सं०] जो अपेक्षाकृत छोटा हो [को०]।

विक्षुब्ध—वि० [सं०] जिसके मन में क्षोभ उत्पन्न हुआ हो। जिसका मन चंचल हो। क्षुब्ध।

विक्षुभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] छाया का एक नाम।

विक्षेप संज्ञा पुं० [सं०] १. ऊपर की ओर अथवा इधर उधर फेंकना। डालना। २. इधर उधर हिलाना। झटका देना। ३. (धनुष की डोरी) खींचना। चिल्ला चढ़ाना। ४. मन को इधर उधर भटकाना। इंद्रियों को वश में न रखना। संयम का उलटा। उ०—ईर्ष्या, द्वेष, काम, अभिमान, विक्षेप आदि दोषों से अलग हो के सत्य आदि गुणों को धारण करे।—दयानंद (शब्द०)। ५. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जो फेंककर चलाया जाता था। ६. सेना का पड़ाव। छावनी। ७. एक प्रकार का रोग। ८. बाधा। विघ्न। खलल। जैसे,—इस काम में कई विक्षेप पड़े हैं। उ०—समाधि की प्राप्ति होने पर भी उसमें चित्त स्थिर न होना ये सब चित्त की समाधि होने में विक्षेप अर्थात् उपासनायोग के शत्रु हैं।—दयानंद (शब्द०)। ९. भेजना। प्रेषण (को०)। १०. खटका। भय (को०)। ११. तर्क का निराकरण (को०)। १२, ध्रुवीय अक्षरेखा (को०)। १३. व्यर्थ गवाँना (को०)। १४. अनवधानता (को०)।

विक्षेपण—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऊपर अथवा इधर उधर फेंकने की क्रिया। २. हिलाने या झटका देने की क्रिया। ३. धनुष की डोरी खींचने की क्रिया। ४. विघ्न। बाधा। खलल। ५. प्रेषण। भेजना (को०)। ६. व्यामोह। व्यग्रता। चित्तविक्षेप (को०)।

विक्षेपलिपि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ललितविस्तर के अनुसार एक प्रकार की प्राचीन लिपि या लेख प्रणाली।

विक्षेपशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदांतदर्शन के अनुसार माया की शक्ति। अविद्या [को०]।

विक्षेपावस्था—संज्ञा स्त्री० [सं० विक्षेप+अवस्था] असंयम की दशा। अस्थिरता की स्थिति। उ०—ज्यों उसकी यह विक्षेपावस्था विरोधावस्था में बदली कि उसका आवरण डालना बंद हो जाता है।—साहित्य०, पृ० २३६।

विक्षेता—वि० [सं० विक्षेप्तृ] विक्षेप करनेवाला। फेंकनेवाला। तितर बितर करनेवाला [को०]।

विक्षोभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. मन की चंचलता या उद्विग्नता। क्षोभ। २. हाथी की छाती का एक भाग या पार्श्व। ३. हलचल। कंपन। जैसे, वीचिविक्षोभ (को०)। ४. द्वंद्व। संघर्ष (को०)। ५. विदीर्णन। विदारण (को०)। ६. आतंक। भय। खौफ (को०)।

विक्षोभण—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार एक दानव का नाम। २. मन में बहुत अधिक क्षोभ उत्पन्न होना या करना। ३. कंपित करना। हिलाना (को०)।

विक्षोभित—वि० [सं०] क्षुब्ध किया हुआ। हिलाया हुआ [को०]।

विक्षोभी—वि० [सं० विक्षोभिन्] [वि० स्त्री० विक्षोभिणी] जो क्षोभ उत्पन्न करे। क्षोभकारी। विक्षुब्ध करनेवाला।

विखंडित—वि० [सं० विखण्डित] १. तोड़ा हुआ। टुकड़ों में विभक्त। विघटित। २. दो भागों में किया हुआ। दो टुकड़ों में विभक्त। ३. अंगभंग किया हुआ। ४. जिसका खंडन या निराकरण किया गया हो (न्याय)। ५. क्षुब्ध। अशांत। हीन (को०)।

विखंडी—वि० [सं० विखण्डिन्] विखंडित या विभिन्न करनेवाला। नष्ट करनेवाला [को०]।

विख^{१}—वि० [सं०] जिसको नाक न हो। बिना नाकवाला।

विख(पु)^{२}—संज्ञा पुं० [सं० विष, प्रा० विख्] दे० 'विष'।

विखइ, विखउ(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विषम या विषय] विपत्ति। सकट। दुर्दिन। उ०—(क) आज विखइ धाँ दीकरी, हाँसउ हसिसि लोइ।—ढोला०, दू० ७। (ख) परदेसे घांघल घणा विखउ न जाणइ मुध्ध।—ढोला०, दू० १७।

विखनन—संज्ञा पुं० [सं०] खोदना। खोदने का काम। खोदाई [को०]।

विखना—संज्ञा पुं० [सं० विखनस्] १. प्रजापति। ब्रह्मा। २. एक मुनि का नाम [को०]।

विखम(पु)—वि० [सं० विषम] दे० 'विषम'। उ०—लै पहुंचायो कीस दस, जहँ गिरि विखम उजारि। धीरी चार निसि बीत पुनि, भयो नपत उजियार।—चित्रा०, पृ० २७।

विखहा—संज्ञा पुं० [सं० विषहा] विषैले सर्पों के शत्रु, गरुड़।

विखाद(पु)^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विषाद] दे० 'विषाद'। उ०—अवतार अंस अगजीत ग्रह वंस विखाद पलट्टिया।—रा० रू०, पृ० ३७७।

विखाद^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] १. नष्ट करना। ध्वस्त करना। ध्वंसन। २. खादन। निगलना। भक्षण। खाना [को०]।

विखादितक—संज्ञा पुं० [सं०] वह मृत शरीर जिसे पशुओं ने खा डाला हो। (बौद्ध)।

विखान(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विषाण] सींग।

विखानस—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैखानस'।

विखाना(पु)†—क्रि० स० [सं० वीक्षण, प्रा० विक्खण ?] दिखाना। उ०—सोहँणि सूरती नू अख्याँ तरदा आनंदघन मुख आणि विखावै।—घनानंद०, पृ० ३६६।

विखायँध—संज्ञा स्त्री० [हिं० विख (=जहर)+आयँध (गंध) (प्रत्य०)] कड़वी या जहर की सी गंध। बिखायँध। उ०—जो अन्हवाय भरै अरगजा। तौहु विखाँयध ओहि नहिं तजा।—जायसी (शब्द०)।

विखासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जिह्वा। रसना [को०]।

विखु—वि० [सं०] नासाहीन। विख [को०]।

विखुर—संज्ञा पुं० [सं०] १. राक्षस। २. चोर।

विखेद—वि० [सं०] खेदरहित। आलस्यहीन। चुस्त [को०]।

विखै^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं० विषय] विपत्ति काल। उ०—(क) विखै के तुम नायक और सब के मुदायत, सो जंग की ढोल मैं वरस जैसी सायत।—रा०रू०, पृ० ११७। (ख) उरघण भीम हठी मत ऊजल। एताँ आद विखै ची आगल।—रा० रू०, पृ० ३११।

विख्य—वि० [सं०] नासाहीन [को०]।

विख्यात—वि० [सं०] १. जिसे सब लोग जानते हों। प्रसिद्ध। मशहूर। उ०—(क) यक्ष प्रबल बाढ़े भुव मंडल तिन मारयो निज भ्रात। तिनके काज अंशहरि प्रगटे ध्रुव जगत विख्यात।—सूर (शब्द०)। (ख) मन तें बढ़ि रथ जात केतु फहरात बात बस। लखि लजात सुरतात बहुत विख्यात जगत जस।—गोपाल (शब्द०)। २. नामवाला। नामवर। नामधारी (को०)। ३. मान्य। स्वीकृत। माना हुआ (को०)।

विख्याति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विख्यात होने का भाव। प्रसिद्धि। शोहरत। उ०—राम नाम सुमिरत सुजस भाजन भएउ कुजाति। कुतरु कुसरु पुर राज बन लहत भुवन विख्याति।—तुलसी (शब्द०)।

विख्यापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रसिद्ध करना। मशहूर करना। २. व्याख्यान, व्याख्या या विवेचन करना (को०)। ३. स्वीकरण। स्वीकार करना (को०)।

विख्र, विख्रु—वि० [सं०] नासाहीन। नासिकारहित [को०]।

विगंडीर—संज्ञा पुं० [सं० विगण्डरी] एक तरह का फूल। अम्लान पुष्प [को०]।

विगंध—वि० [सं० विगन्ध] १. जिसमें किसी प्रकार की गंध न हो। २. बदबूदार। उ०—कंटक कलित त्रिन बलित विगंध जल तिनके तलफत लता को ललचात जू।—केशव (शब्द०)।

विगंधक—संज्ञा पुं० [सं० विगन्धक] इंगुदी वृक्ष।

विगंधिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विगन्धिका] १. हपुषा। हाउबेर। २. अजगंधा। तिलवन।

विगणन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिसाब लगाना। लेखा करना। २. विचारना। विचार विनिमय करना (को०)। ३. ऋण से मुक्त होना। कर्ज चुकाना।

विगणित—वि० [सं०] १. विचारित। २. चुकता किया हुआ। अदा किया हुआ (कर्ज)। ३. जिसका विगणन किया गया हो [को०]।

विगत^{१}—वि० [सं०] १. जो गत हो गया हो। जो बीत चुका हो।

विशेष—जब यह शब्द यौगिक अवस्था में किसी संज्ञा के पहले आता है तब इसका अर्थ होता है—'जिसका नष्ट हो गया हो'।

जैसे,—विगतज्वर = जिसका ज्वर उतर गया हो। विगतनयन = जिसकी आँखें नष्ट हो गई हों। विगतत्रास = जिसका भय दूर हो गया हो। उ०—विगतत्रास प्रमुदित मन माहीं। निरखि राम छबि दृग न अघाहीं।—रामाश्वमेध (शब्द०)।

२. गत से पहले का। अंतिम या बीते हुए से पहले का। जैसे,—विगत सप्ताह = गत सप्ताह से पहले का सप्ताह। ३. जो कहीं इधर उधर चला गया हो। ४. जिसकी प्रभा या कांति नष्ट हो गई हो। जिसकी चमक आदि जाती रही हो। निष्प्रभ। ५. रहित। विहीन। उ०—(क) विगत मान सम सीतल मन पर गुन नहिं दोस कहौंगो।—तुलसी (शब्द०)। (ख) प्रमुदित जनक निरखि अंबुज मुख विगत नयन मन पीर।—सूर (शब्द०)। ६. मृत (को०)। ७. खोया हुआ। लुप्त (को०)। ८. अंधकाराच्छन्न। अस्पष्ट। धुँधला (को०)।

यौ०—विगतकल्मष = निष्पाप। पवित्र। विगतक्लम = अक्लांत क्लांतिरहित। विगतज्ञान = नष्टज्ञान। विनष्टबुद्धि। विगतनयन = नेत्रहीन। अंधा। विगतभी = निर्भय। निडर। विगतराग = विगतस्पृहा। विगतलक्षण = अभागा। विगतश्रीक = कांतिहीन। अभागा। विगतस्पृहा = आकांक्षाहीन उदासीन।

विगत^{२}—संज्ञा पुं० पक्षियों का उड़ना [को०]।

विगत^{३}—संज्ञा पुं०० [सं० विगत(= व्यतीत)]। १. बीता हुआ। व्यतीत। २. असलीयत। ब्यौरा। हालचल। उ०—इह भाँत विगत विवाह सुणतां अंग प्रफुलत आंण।—रघु० रू०, पृ० ८१।

विगतवार—क्रि० वि० [हिं० विगत + वार] दे० 'ब्योरेवार'। उ०—या समैं आजानबाह जेते सरदार। कवि जेते जानैं सो बखानै विगतवार।—रा० रू०, पृ० ११८।

विगता—वि० स्त्री० [सं०] १. जो विवाह करने के योग्य न रह गई हो। २. जो परपुरुष से प्रेम करती हो।

विगतार्तवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह औरत जिसका ऋतुस्राव बंद हो गया हो [को०]।

विगतासु—वि० [सं०] मृत। निष्प्राण [को०]।

विगति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्दशा। दुर्गति। खराबी।

विगतोवद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

विगत्त (पु)—संज्ञा पुं० [सं० बिगति(= व्यतीत)] ब्यौरा। विवरण। उ०—उल्लसै वेल परसै अरस, ग्यान न लोक त्रिगत्तारौ।—रा० रू०, पृ० १५३।

विगद^{१}—वि० [सं०] गद रहित। नीरोग। स्वस्थ [को०]।

विगद^{२}—संज्ञा पुं० एक साथ अनेक प्रकार के शब्द होना [को०]।

विगदित—वि० [सं०] १. चतुर्दिक् फैला हुआ (जनरव)। २. कहा हुआ। बातचीत किया हुआ। वर्णित [को०]।

विगम—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रस्थान। अनुपस्थिति। चला जाना। प्रयाण। २. समाप्ति। अंत। खातमा। ३. नाश। हानि। ४. मोक्ष। ५. परित्याग (को०)। ६. मृत्यु (को०)। ७. पार्थक्य। अलगाव (को०)।

विगर—संज्ञा पुं० [सं०] १. भोजन का त्याग करनेवाला व्यक्ति। २. नग्न यति। नागा। नंगा यति। ३. पर्वत। पहाड़ [को०]।

विगर्जा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भर्त्सना करना। डाँटना। डपटना। धिक्कार। फटकार।

विगर्हण—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र की लहरों की गर्जनध्वनि [को०]।

विगर्हणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भर्त्सना। डाँट। फटकार।

विगर्हणीय—वि० [सं०] बुरा। दुष्ट। निंद्य [को०]।

विगर्हा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुत्सा। भर्त्सना। निंदा [को०]।

विगर्हित^{१}—वि० [सं०] १. जिसे भर्त्सना की गई हो। जिसे डाँट या फटकार बतलाई गई हो। तिरस्कृत। २. बुरा। खराब। निंदनीय। ३. निषिद्ध। ४. नीच। दुष्ट (को०)।

विगर्हित^{२}—संज्ञा पुं० निंदा [को०]।

विगर्ही—वि० [सं० विगर्हिन्] निंदक [को०]।

विगर्ह्य—वि० [सं०] जो भर्त्सना करने योग्य हो। डाँटने डपटने या निंदा करने के योग्य।

विगलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. गिरना। श्लथ होना। शैथिल्य। २. नाश। ३. एकरूप होना। घुलना। ४. रिसना। बह जाना। ५. गल जाना [को०]।

विगलित—वि० [सं०] १. जो गिर गया हो। अधःपतित। २. जो बह गया हो। जो चूकर या टपककर निकल गया हो। ३. ढीला पड़ा हुआ। छुटा हुआ। शिथिल। ४. बिगड़ा हुआ। उ०—ऋतुपति तरु विगलित सुदल, तहँ कुरूपता बास। बसी अरुचियक अघन में, पाप न बस्यो विनास।—रामस्वयंवर (शब्द०)। ५. अंतर्हित। गया हुआ। लुप्त (को०)। ६. तितर बितर। अस्तव्यस्त (को०)। ७. विदीर्ण।

यौ०—विगलितकेश = बिखरे बालोंवाला। विगलितनीवी = जिसकी नीवी खुल गई हो। विगलितबंध = बंधनमुक्त। विगलितलज्ज = धृष्ट। ढीठ। निर्लज्ज। विगलितवसन, विगलितवस्त्र = विवस्त्र। नग्न। नंगा। विगलितशुच्, विगलितशोक = दुःखरहित। कष्टरहित। वेदनामुक्त।

विगसना (पु)—क्रि० अ० [सं० विकसन] विकसित होना। खिलना। उ०—हीरा मन निज दास है, सब दासन को दास। सतगुरु से परिचय भई, विगसा प्रेम प्रकाश।—सं० दरिया, पृ० ४५।

विगाढ़—वि० [सं० विगाढ] १. अतिशय। २. आगे बढ़ा हुआ। ३. धंसा हुआ (शस्त्र)। ४. स्नात। अवगाहित। ५. प्रगाढ़। ६. गहरा घुसा हुआ। डूबा हुआ। निमज्जित [को०]।

विगाथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आर्या छंद का एक भेद जिसके विषम (प्रथम और तृतीय) पदों में १२, दूसरे में १५ और चौथे में में १८ मात्राएँ होती हैं और अंत का वर्ण गुरु होता है। विषम गणों (पदों) में जगण नहीं होता, पहले दल का छठा गण (२७ ही मात्रा के कारण) एक लघु का मान लिया जाता है। इसे 'विग्गाहा' और 'उद्गीति' भी कहते हैं।

विगान—संज्ञा पुं० [सं०] १. निंदा। भर्त्सना। मानहानि। अपमान। २. परस्पर विरोधी युक्ति। असंगति [को०]।

विगाह—संज्ञा पुं० [सं०] १. डुबकी लगाना। २. प्रवेश। ३. स्नान करना [को०]।

विगाहनाⓅ—क्रि० अ० [सं० विगाहन] अवगाहन करना। अवगाहना।

विगाहमान—वि० [सं०] विलोडन या अवगाहन-करनेवाला [को०]।

विगाहा—संज्ञा स्त्री० [सं० विगाथा] दे० 'विगाथा'।

विगीत—वि०[सं०] १. निंदित। बुरा। कुत्सित। २. परस्पर विरोधी। असंगत। ३. बुरे ढंग से गाया हुआ।

विगीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. निंदा। झिड़की। २. परस्पर विरोधी उक्ति। ३. आर्याछंद का एक भेद [को०]।

विगुण¹—वि० [सं०] १. जिसमें कोई गुण न हो। गुणरहित। निर्गुण। विशेष दे० 'निर्गुण'। उ०—हशि रूप मनं तमजं विगुणं। हृदयस्थ लखौ सब त्यागि भ्रमं।—स्वामी रामकृष्ण (शब्द०)। २. बुरा। निकम्मा (को०)। ३. बिना रस्सी का (को०)। ४. सूक्ष्म (को०)। ५. अव्यवस्थित। अस्तव्यस्त (को०)। ६. असफल (को०)। ७. अपर्याप्त। थोड़ा। अधूरा (को०)। ८. बिकृत। उलटा। विपरीत। उ०—मन का अवरोध होने से वायु विगुण (उलटा) होकर अफरा, वात, शूल और मूत्र इनका नाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय।—माधव० पृ० १७१।

विगुल्फ—वि० [सं०] प्रचुर। अधिक [को०]।

विगूढ़—वि० [सं० विगूढ] १. गुप्त। छिपा हुआ। २. निंदित [को०]।

विगृहीत—वि० [सं०] १, विभक्त। भग्न किया हुआ। २. पकड़ा हुआ। अभिभूत। ३. मुकाबला किया हुआ। विरोध किया हुआ। ४. प्रतिबद्ध। निरुद्ध [को०]।

विगृह्यगमन—संज्ञा पुं० [सं०] कामंदक नीति के अनुसार चारों ओर से मित्रों तथा शत्रुओं से घिरकर पानी में से भागना।

विगृह्ययान—संज्ञा पुं० [सं०] चढ़ाई। हमला [को०]।

विगृह्यवाद—संज्ञा पुं० [सं०] कहासुनी [को०]।

विगृह्यास—संज्ञा पुं० [सं०] कामंदक नीति के अनुसार शत्रु की शक्ति आदि की कुछ भी परवाह न करके की जानेवाली अंधाधुंध चढ़ाई।

विगृह्यासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुश्मन को छेड़कर या उसकी जमीन आदि छीनकर चुपचाप बैठना। २. शत्रुस्थित दुर्ग को जीतने में असमर्थ होकर घेरा डालकर बैठना।

विग्गाहा—संज्ञा स्त्री० [सं० विगाथा] विगाथा नामक छंद जो आर्या का एक भेद है।

विग्न—वि० [सं०] १ कंपित। क्षुब्ध। २. त्रस्त। भीत [को०]।

विग्यपतिⓅ—संज्ञा स्त्री० [सं० विज्ञप्ति>विग्यपति] दे० 'विज्ञप्ति'। उ०—विग्यपति ये है देव। भृति भयौ भाषै मेव। सुंदर सुधा समुद्र ग्रंथ मोहि भायौ है।—सुंदर० ग्रं० (जी०) भा० १, पृ० ६२।

विग्र—वि० [सं०] १. नासाहीन। बिना नाक का। २. शक्तिशाली। मेधावी। बली [को०]।

विग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] १. दूर या अलग करना। २. विभाग। ३. यौगिक शब्दों अथवा समस्त पदों के किसी एक अथवा प्रत्येक शब्द को अलग करना (व्याकरण)। ४. कलह। लड़ाई। झगड़ा। ५. युद्ध। समर। ६. नीति के छह गुणों में से एक। विपक्षियों में फूट या कलह उत्पन्न करना। ७. आकृति। शकल। ८. शरीर। ९. मूर्ति। १०. सजावट। शृंगार। ११. सांख्य के अनुसार कोई तत्व। १२. शिव का एक नाम। १३. स्कंद के एक अनुचर का नाम। १४. दूसरे के प्रति हानिकारक उपायों का प्रत्यक्ष प्रयोग। १५. विस्तार। फैलाव। प्रसार (को०)।

विग्रहग्रहण—संज्ञा पुं० [सं०] रूपाकार धारण करना [को०]।

विग्रहण—संज्ञा पुं० [सं०] रूप धारण करना। शक्ल में आना।

विग्रहपर—वि० [सं०] युद्ध या लड़ाई के लिये तुला हुआ।

विग्रहवान—वि० [सं० विग्रहवत्] शरीरधारी [को०]।

विग्रहावर—संज्ञा पुं० [सं०] देह का पिछला भाग। पीठ [को०]।

विग्रही—संज्ञा पुं० [सं० विग्रहिन्] १. लड़ाई झगड़ा करनेवाला। २. युद्ध करनेवाला। ३. युद्ध विभाग का मंत्री या सचिव।

विग्रहेच्छु—वि० [सं०] युद्ध चाहनेवाला। युद्धाभिलाषी [को०]।

विग्राहित—वि० [सं०] बुरी धारणा रखनेवाला [को०]।

विग्राह्य—वि० [सं०] जो इस योग्य हो कि उसके साथ लड़ाई की जा सके। जिसके साथ युद्ध हो सके।

विग्रीव—वि० [सं०] ग्रीवा रहित। जिसकी गरदन कट गई हो। [को०]।

विघटन—संज्ञा पुं० [सं०] १. संयोजक अंगों को अलग अलग करना। २. तोड़ना फोड़ना। उ०—प्रगटी धनु विघटन परिपाटी।—तुलसी (शब्द०)। ३. नष्ट या बरबाद करना।

विघटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] समय का एक छोटा मान। लगभग २३–२४ सेकेंड के बराबर का काल। घड़ी का २३ वाँ या ६० वाँ भाग। पल।

विघटित वि० [सं०] १. जिसके संयोजक अंग अलग अलग किए गए हों। २. जो तोड़ फोड़ डाला गाया हो। ३. नष्ट।

विघट्टन—संज्ञा पुं० [सं०] १. खोलना। २. पटकना। ३. रगड़ना। ४. दे० 'विघटन'। ५. प्रहार करना। टक्कर मारना (को०)। ६. ठेस पहुँचाना। व्यथित करना (को०)।

विघट्टनीय—वि० [सं०] १. पृथक् करने योग्य। २. जिसका विघटन किया जाय। विघटन करने योग्य [को०]।

विघट्टित—वि० [सं०] १. खुला हुआ। २. तोड़ा फोड़ा हुआ। ३. विभक्त या अलग अलग किया हुआ (को०)। ४. रगड़ा हुआ (को०)। ५. हिलाया हुआ। विलोडित (को०)। ६. आधारित (को०)।

विघट्टी—वि० [सं० विघट्टिन्] विघटित करनेवाला [को०]।

विघन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. आघात करना। चोट पहुँचाना। २. एक प्रकार का बहुत बड़ा हथौड़ा। घन। ३. इंद्र।

विघन²—वि० १. अत्यंत ठोस। कठिन। कठोर। २. घनता से रहित। कोमल। मृदु। ३. मेघविहीन। बादलों से रहित [को०]।

विघन(पु)^{२}—संज्ञा पुं० [सं० विघ्न] दे० 'विघ्न'।

विघर्षण—संज्ञा पुं० [सं०] अच्छी तरह रगड़ने या घिसने की क्रिया।

विघस—संज्ञा पुं० [सं०] १. आहार। भोजन। खाना। २. वह अन्न जो देवता, पितर, गुरु या अतिथि आदि के खाने पर बच रहे। उ०—अतिथि के भोजन से बचा हुआ अन्न 'विघस' और पंचयज्ञ से बचा अन्न 'अमृत' कहलाता था।—प्रा० भा० प०, पृ० ३२९। ३. आधा चबाया हुआ ग्रास (को०)। ४. खाद्य पदार्थ (को०)। ५. सिक्थक। मोम (को०)।

विघसाश—संज्ञा पुं० [सं०] विघस नामक अन्न का भक्षक। भुक्तशेष अन्न खानेवाला। जैसे, कौआ, कुत्ता आदि [को०]।

विघसाशी—संज्ञा पुं० [सं० विघसाशिन्] दे० 'विघसाश'।

विघात—संज्ञा पुं० १. आघात। प्रहार। चोट। २. टुकड़े टुकड़े करना। तोड़ना फोड़ना। ३. नाश। ४. बाधा। विघ्न। रोक। ५. सफल न होना। विफलता। ६. हत्या। वध (को०)। ७. परित्याग करना। छोड़ना (को०)। ८. व्याकुलता (को०)।

विघातक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विघ्न डालनेवाला। बाधक। २. विघात करनेवाला। घातक (को०)।

विघातन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विघात करने की क्रिया। २. मार डालना। हत्या करना।

विघातन^{२}—वि० विघात करनेवाला। निवारण करने या हटानेवाला।

विघाती—संज्ञा पुं० [सं० विघातिन्] [स्त्री० विघातिनी] १. विघात करनेवाला। २. बाधा डालनेवाला। ३. हत्या करनेवाला। घातक।

विघुष्ट—वि० [सं०] उच्च स्वर से कथित। उद्घोषित [को०]।

विघूणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] नासिका। नाक।

विघूर्णन—संज्ञा पुं० [सं०] चारों ओर घुमाना। चक्कर देना।

विघूर्णित—वि० [सं०] १. कँपाया हुआ। कंपित। २. चारों ओर घुमाया या चक्कर दिया हुआ [को०]।

विघृष्ट—वि० [सं०] १. भली भाँति रगड़ा हुआ। घिसा हुआ। २. पीड़ित [को०]।

विघोषण—संज्ञा पुं० [सं०] घोषणा करना। जोरों से चिल्लाना [को०]।

विघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी काम के बीच में पड़नेवाल अड़चन। रुकावट। बाधा। व्याघात। अंतराय। खलल।

क्रि० प्र०—करना।—डालना।—दूर करना।—पड़ना।—होना।

विशेष—जब इस शब्द के साथ नायक, नाशक अथवा इनके पर्यायवाची शब्दों का योग होता है तब इसका अर्थ 'गणेश' होता है।

२. कृष्ण पाकफला। काली मकोय। ३. कष्ट। कठिनाई (को०)।

विघ्नक, विघ्नकर, विघ्नकर्ता—वि० [सं०] विघ्न करनेवाला। बाधा डालनेवाला।

विघ्नकारी—संज्ञा पुं० [सं० विघ्नकारिन्] वह जो विघ्न डालता हो। बाधा उपस्थित करनेवाला।

विघ्नकृत्—वि० [सं०] दे० 'विघ्नक' [को०]।

विघ्नजित्—संज्ञा पुं० [सं०] विनायक। गणेश।

विघ्नायक—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्ननाशक—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्ननाशन—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश [को०]।

विघ्नपति—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्नराज—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्नविनायक—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्नसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विघ्न का दूर होना [को०]।

विघ्नहंता—संज्ञा पुं० [सं० विघ्नहन्तृ] गणेश [को०]।

विघ्नहरण—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश [को०]।

विघ्नहारी—संज्ञा पुं० [सं० विघ्नहारिन्] गणेश।

विघ्नित—वि० [सं०] १. बाधायुक्त। अंतराययुक्त। अवरुद्ध। २. मलिन। आकुलित [को०]।

विघ्नेश—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश।

विघ्नेशकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० विघ्नेशकान्ता] सफेद दूर्वा।

विघ्नेशवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश जी का वाहन। मूसा। चूहा [को०]।

विघ्नेशान—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश [को०]।

यौ०—विघ्नेशानकांता = श्वेत दूर्वा।

विघ्नेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] गणेश। गणपति।

विचंद्र—वि० [सं० विचन्द्र] चंद्रमारहित। जिसमें चंद्रमा न हो [को०]।

विचकित—वि० [सं०] घबराया हुआ।

विचकिल—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की मल्लिका या चमेली। २. मदनक। मदन वृक्ष।

विचक्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक दानव का नाम।

विचक्र^{२}—वि० जो चक्ररहित हो। चक्रविहीन [को०]।

विचक्षण—वि० [सं०] १. प्रकाशवान्। चमकता हुआ। २. जो स्पष्ट दिखाई दे। ३. जो किसी विषय का अच्छा ज्ञाता हो। निपुण। पारदर्शी ४. पंडित। विद्वान्। ५. बहुत बड़ा चतुर या बुद्धिमान्। उ०—परम साधु सब बात विचक्षण बसे ताहि महँ सकल सुलक्षण।—रघुराज शब्द०)।

विचक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नागदंती।

विचक्षन(पु)—वि० [सं० विचक्षण] दे० 'विचक्षण'। चतुर। बुद्धिमान्। उ०—अंतरवेद विचक्षन नारि निरंतर अतर की गति जानै।—देव (शब्द०)।

विचक्षा—संज्ञा पुं० [सं० विचक्षस्] आध्यात्मिक गुरु [को०]।

विचक्षु—संज्ञा पुं० [सं० विचक्षुस्] १. अंधा। नेत्रहीन। २. आकुल। घबराया हुआ। ३. विमनस्क। उदास [को०]।

विचच्छेन(पु)—संज्ञा [सं० विचक्षण, प्रा० विचच्छन] बहुत बड़ा बुद्धिमान् या चतुर। उ०—(क) रन परम विचच्छन गरम वर धरम सुरच्छन करम कर।—गोपाल (शब्द०)। (ख) लच्छ रथी अध्यच्छ प्रबल प्रत्यच्छ विचच्छन। कसे कच्छ निज सैनु रच्छ

करि पर बल भच्छन ।—गोपाल (शब्द०)। (ग) ह्वै कपूर मनिमय रही मिलि तन दुति मुकुतालि। छिन छिन खरी विचच्छनौ लखति छ्वाय तिन आलि ।—बिहारी (शब्द०)।

विचच्छिन(पु)—वि० [सं० विचक्षण] दे० 'विचक्षण'। उ०— मुग्धा में धीरादिक लच्छिन । प्रगट नहीं पै लखै विचच्छिन ।—नंद० ग्रं०, पृ० १४७।

विचय—संज्ञा पुं० [सं०] १. एकत्र करना। इकट्ठा करना। जमा करना। २. जाँच पड़ताल करना। परीक्षा करना। अन्वेषण। खोजना। ढूँढना (को०)। ३. विशिष्ट रूप से रखना। क्रम या तरतीब से रखना (को०)।

विचयन—संज्ञा पुं० [सं०] १. इकट्ठा करना। एकत्र करना। २. जाँचना। परीक्षा करना। दे० 'विचय'।

विचर—वि० [सं०] १. घूमा हुआ। भ्रमित। भ्रमण किया हुआ। २. भूला हुआ। भटका हुआ [को०]।

विचरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. चलना। २. घूमना फिरना। पर्यटन करना। उ०—आर्य संतान उस दिन अपने प्राचीन वेष में विचरण करती थी।—बालमुकुंद गुप्त (शब्द०)।

विचरणीय—वि० [सं०] विचरण के योग्य। आचरणीय [को०]।

विचरन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विचरण] दे० 'विचरण'। उ०—(क) पूछ पूरी सोभा विचरन नरचपैं दीह सीकर की चरनन रचना ऊपर है।—गोपाल (शब्द०)। (ख) भए कवीर प्रगट मथुरा में। विचरन लगे सकल बसुधा में।—कवीर (शब्द०)।

विचरना—क्रि० अ० [सं० विचरण] चलना फिरना। उ०—(क) जग महँ विचरि विचरि सब ठौरा। हरि विमुखन किय हरि की ओरा।—रघुराज (शब्द०)। (ख) भोग समग्री जुरी अपार। विचरन लागे सुख संसार।—सूर (शब्द०)। (ग) रामचरण धरि हृदय मुदित मन विचरत फिरत निशंक।—सूर (शब्द०)।

विचरनि(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विचरण] चलने फिरने या विचरण करने की क्रिया या भाव।

विचरित[1]—वि० [सं०] १. घूमा हुआ। विचरण किया हुआ। २. (लाक्ष०) अनुष्ठित। कृत। आचरित। (को०)।

विचरित[2]—संज्ञा पुं० घूमना। विचरण [को०]।

विचर्चिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें दाने निकलते और खुजली होती है। ब्योंची। २. छोटी फुंसी।

विचर्मा—वि० [सं० विचर्मन्] विना ढाल का। जिसके पास चर्म अर्थात् ढाल न हो [को०]।

विचल—वि० [सं०] १. जो बराबर हिलता रहता हो। २. जो स्थिर न हो। अस्थिर। ३. डिगा हुआ। स्थान से हटा हुआ। ४. व्यग्र। घबड़ाया हुआ (को०)। ५. अभिमानी। घमंडी (को०) ६. प्रतिज्ञा या संकल्प से हटा हुआ।

मुहा०—चलविचल होना=मन का किसी एक बात पर न ठहरना। चित्त का चंचल होना।

विचलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विचल होने की क्रिया' या भाव। चंचलता। अस्थिरता। २. घबराहट।

विचलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अस्थिरता। २. इतस्ततः भ्रमण। ३. गर्व। घमंड [को०]।

विचलना(पु)†—क्रि० अ० [सं० विचलन] १. अपने स्थान से हट जाना या चल पड़ना। (विशेषतः घबराहट या गड़बड़ी आदि के समय)। उ०—(क) औ जोवन मैमंत बिधांसा। विचला बिरह बिरह लै नासा।—जायसी (शब्द०)। (ख) दल विचलत लखिकै भट सगरे। धरि धरि धनुष गदादिक अगरे।—गोपाल (शब्द०)। (ग) जो सीता सत ते विचलै तौ श्रीपति काहि सँभारै। मोसे मुग्ध महापापी को कौन क्रोध करि तारै। —सूर (शब्द०)। २. विचलित होना। अधीर होना। घबराना। उ०—(क) जेंहि भजत वि इक इकरदन चलत समर विचलत प्रबल।—गोपाल (शब्द०)। (ख) चलत जबै रन हेत तबै विचलत लखिकै पर।—गोपाल (शब्द०)। ३. प्रतिज्ञा या संकल्प पर दृढ़ न रहना। बात पर जमा न रहना।

विचलाना(पु)†—क्रि० स० [सं० विचलन] १. इधर उधर हटाना या चलाना। विचलित करना। उ०—एहि विधान भरि जोर सकल यदु दल विचलायो।—गोपाल (शब्द०)। २. ऐसा काम करना जिससे कोई घबरा जाय वा स्थिर न रह सके।

विचलित—वि० [सं०] १. जो विचल हो गया हो। अस्थिर। चंचल। जैसे,—किसी चीज को देखकर मन विचलित होना। उ०—(क) उसकी बुद्धि ऐसी तीक्ष्ण थी कि कोई कैसा ही दुर्घट काम हो, परंतु वह, कभी विचलित न होता।—कादंबरी (शब्द०)। (ख) तेहि ते अब यह रूप दुरावहु। विचलित सकल लोक सुख पावहु।—शं० दि० (शब्द०)। २. प्रतिज्ञा या संकल्प से हटा हुआ। जो दृढ़ न रहा हो। डिगा हुआ। ३. गया हुआ। गत। चलित (को०)। ४. घबराया हुआ। व्यग्र।

विचष्षन(पु)—वि० [सं० विचक्षण, प्रा० विचक्खन, विचष्षन] दे० 'विचक्षण'। उ०—आनन इंदु उदोत सु मानौं। जानन भोज विचष्षन जानौं। रवि ज्यों सत्रुन के तन तापन। कामिनी कौं मकरध्वज मानन।—पृ० रा०, १।७५३।

विचार—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो कुछ मन से सोचा जाय अथवा सोचकर निश्चित किया जाय। किसी विषय पर कुछ सोचने या सोचकर निश्चय करने की क्रिया। २. वह बात जो मन में उत्पन्न हो। मन में उठनेवाली कोई बात। भावना। खयाल। जैसे,—अभी मेरे मन में विचार आया है कि चलकर उससे बातें करूँ। ३. राजा या न्यायाधीश आदि का वह कार्य जिसमें वादी और प्रतिवादी के अभियोग और उत्तर आदि सुने जाते हैं; यह निश्चित किया जाता है कि किस पक्ष का कथन ठीक है; और तब कुछ निर्णय किया जाता है। मुकदमें की सुनवाई और फैसला। जैसे,—राजकर्मचारी दोनों को पकड़कर उनका विचार कराने के लिये उन्हें राजद्वार पर ले गया (शब्द०)।

यौ०—विचारकर्ता। विचारविमर्श। विचारसभा। विचारस्थल।

४. विचरना। घूमना। ५. घुमाना। फिराना। ६. चयन (को०) ७. संकोच। संदेह (को०)। ८. दूरदर्शिता। सतर्कता (को०)। ९. विमर्श। गवेषणा। तत्वार्थनिर्णय (को०)। १०. विवेक। तर्कण (को०)। ११. परीक्षण (को०)।

विचारक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विचारिका] १. वह जो विचार करता हो। विचार करनेवाला। उ०—इन बातों पर ध्यान करके विचारक पुरुष जानते हैं कि ऐसा वृत्तांत केवल कवीश्वर का कल्पित मात्र है।—मतपरीक्षा (शब्द०)। २. फैसला करनेवाला। न्यायकर्ता। उ०—तब तक विरोधी विचारकों का होना बहुत ही जरूरी है।—स्वाधीनता (शब्द०)। ३. नेता। पथप्रदर्शक। ४. गुप्तचर। जासूस।

विचारकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० विचारकर्तृ] १. वह जो किसी प्रकार का विचार करता हो। सोचने विचारनेवाला। २. वह जो अभियोग आदि सुनकर उनका निर्णय करता हो। न्यायाधीश।

विचारज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विचार करना जानता हो। विचार करने में कुशल या प्रवीण। २. वह जो अभियोग आदि का निर्णय या निपटारा करता हो।

विचारण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विचार करने की क्रिया या भाव। २. घूमना फिरना। ३. घुमाना फिराना। ४. संदेह। हिचक (को०)। ५. परीक्षण। पर्यालोचन। अन्वेषण (को०)।

विचारणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विचार करने की क्रिया या भाव। उ०—क्योंकि केवल अपनी बुद्धि, या अपने ज्ञान या अपनी विचारणा पर आदमी का विश्वास जितना कम होता है, उतना ही ससार की प्रमादहीनता या निर्भ्रमता पर उसका विश्वास अधिक होता है।—स्वाधीनता (शब्द०)। २. घूमने फिरने या घुमाने फिराने की क्रिया या भाव। ३. संदेह। हिचक (को०)। ४. परीक्षण। गवेषण (को०)। ५. दर्शन शास्त्र की मीमांसा पद्धति (को०)।

विचारणीय—वि० [सं०] १. जो विचार करने के योग्य हो। जिसपर कुछ विचार करने की आवश्यकता हो। उ०—अब यह अवश्यमेव विचारणीय है कि यदि ऐसा ही है तो बिना कारण किसी को दूषित करना और व्यर्थ उसपर दोषारोपण कर लोगों में उसकी योग्यता कम करने के लिये यत्न करना नीचता एवं अधमता है।—निबंधमालादर्श (शब्द०)। २. जो सिद्ध न हो। जिसे प्रमाणित करने की आवश्यकता हो। चित्य। संदिग्ध।

विचारना—क्रि०अ० [सं० विचार+हिं० ना (प्रत्य०)] १. विचार करना। सोचना। समझना। गौर करना। उ०–(क) कृष्णदेव द्वारावति अहैं। मन में बहुत विचारत रहैं।—सबल (शब्द०)। (ख) फिर मैंने यह बात विचारी की लिखने में तो कुछ अधिक अनर्थ नहीं होता।—श्रद्धाराम। (शब्द०)। (ग) आजु हो अजादवी धरा करौं विचारि कै।—गोपाल (शब्द०) (घ) रचो विरंचि विचार तहं, नृपमणि मधुकर शाहि।—केशव (शब्द०)। २. पूछना। ३. ढूँढ़ना। पता लगाना। उ०—तुलसी तेहि अवसर लावनता दस चारि नव तीनि एकीस सबै। मति भारति पंगु भई जो निहारि विचारि फिरी उपमा न पवै।—तुलसी (शब्द०)।

विचारपति—संज्ञा पुं० [सं० विचार+पति] वह जो किसी बड़े न्यायालय में बैठकर मुकदमों आदि के फैसले करता हो। विचारक। न्यायाधीश।

विचारपरिणीत—वि० [सं० विचार+परिणीत] जिसका विचार द्वारा ग्रहण किया गया हो। विचारित। भली भाँति विचार किया हुआ। संकल्प द्वारा गृहीत। उ०—वर श्रम प्रसूति से की कृतार्थ तुमने विचारपरिणीत उक्ति।—युगांत, पृ० ५५।

विचारभू—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अदालत। न्यायालय। २. यम का न्यायासन। यमराज का न्यायालय [को०]।

विचारमूढ़—वि० [सं० विचारमूढ] १. निर्णय लेने में असमर्थ। जो भला बुरा समझने में असमर्थ हो। २. जड़। मूर्ख। अज्ञ [को०]।

विचारवान्—संज्ञा पुं० [सं० विचारवत्] वह जिसमें सोचने समझने या विचारने की अच्छी शक्ति हो। विचारशील।

विचारशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह शक्ति जिसकी सहायता से विचार किया जाय। सोचने या भला बुरा पहचानने की शक्ति। उ०—मनुष्य जानता तो है कि मैं जीता हूँ और सोच विचार भी करता हूँ, परंतु प्राण और विचारशक्ति किससे बनाई गई।—गोलविनोद (शब्द०)।

विचारशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] मीमांसा शास्त्र।

विचारशील—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसमें किसी विषय को सोचने विचारने की अच्छी शक्ति हो। विचारवान्। उ०—(क) जिसका सत्य विचारशील ज्ञान और अनंत ऐश्वर्य है, इससे उस परमात्मा का नाम ईश्वर है।—सत्यार्थप्रकाश (शब्द०)। (ख) विद्वान्, बुद्धिमान और विचारशील पुरुषों के चरण जिस भूमि पर पड़ते हैं वह तीर्थ बन जाती है।—शिवशंभु (शब्द०)।

विचारशीलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विचारशील होने का भाव या धर्म। बुद्धिमत्ता। अक्लमंदी। उ०—आत्मकर्त्तव्य का मामूली अर्थ विचारशीलता या बुद्धिमानी है।—स्वाधीनता (शब्द०)।

विचारश्रृंखला—संज्ञा स्त्री० [सं० विचार+श्रृङ्खला] परपरा द्वारा प्राप्त विचार की सरणि। विचारों की परंपरा या कड़ी। उ०—इस तरह अनेक विचारश्रृंखलाएँ अर्थात् अनेक व्यवस्थित दर्शन होते हैं।—हिंदु० सभ्यता, पृ० १६१।

विचारसरणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विचार करने का ढंग। विचार करने की पद्धति [को०]।

विचारस्थल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह स्थान जहाँ किसी विषय पर विचार होता हो। २. न्यायालय। अदालत। ३. तर्कसंगत चर्चा जिसपर विचार विमर्श किया जा सके।

विचारस्वातंत्र्य—संज्ञा पुं० [सं० विचार+स्वातन्त्र्य] १. किसी विषय पर अपने हृद्गत भावों को व्यक्त करने की छूट या आजादी। २. जो चाहे कहने की छूट। भाषण करने की स्वतंत्रता। शासन की आलोचना करने में प्रतिबंध न होना।

विचाराध्यक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो न्याय विभाग का प्रधान हो। प्रधान विचारक। प्रधान न्यायाधीश।

विचारालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ अभियोगों आदि का विचार होता हा। न्यायालय। कचहरी। उ०—बड़े बड़े आचार्य, नीतिज्ञ, धर्मशास्त्री लोग विचारालय में बैठे विचार कर रहे हैं।—कादबरी (शब्द०)।

विचारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्राचीन काल की वह दासी जो घर में लगे हुए फूल पौधों की देखभाल तथा इसी प्रकार के और काम करती थी। २. वह स्त्री जो अभियोगों आदि का विचार करती हो।

विचारित^{१}—वि० [सं०] १. जिसपर विचार किया जा चुका हो। जो सोचा समझा जा चुका हो। निर्णीत। निश्चित। २. जो अभी विचाराधीन हो। जिसपर अभी विचार होने को हो। संदिग्ध। अनिश्चित।

विचारित^{२}--संज्ञा पुं० १. विचार। मंतव्य। २. संदेह। संशय [को०]।

विचारितसुस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य का वह प्रकार जिसमें वैचारिक प्रौढ़ता रहती है। बुद्धिप्रधान साहित्य। उ०—साहित्य विषय के दो प्रभेद हैं विचारितसुस्थ और अविचारितरमणीय। – पा० सा० सि०, पृ० ७।

विचारी—संज्ञा पुं० [सं० विचारिन्] १. वह जिसपर चलने के लिये बहुत बड़े बड़े मार्ग बने हों (जैसे, पृथ्वी)। २. जो इधर उधर चलता हो। विचरण करनेवाला। ३. वह जो विचार करता हो। विचार करनेवाला। ४. कबंध के एक पुत्र का नाम। ५. जो लंपट वा कामुक हो (को०)।

विचारु—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।

विचार्य—वि० [सं०] जो विचार करने के योग्य हो। जिसपर विचार करने की आवश्यकता हो। विचारणीय।

विचाल^{१}—वि० [सं०] मध्यस्थ। मध्यवर्ती। बीच का [को०]।

विचाल^{२}—संज्ञा पुं० १. विभाग करना। अलग करना। पृथक् करना। २. मध्यवर्ती स्थान या काल। अंतराल। अंतर। उ०—अरणव सांते उदर, विरछ रोमांच विचालें।—रघु० रू०, पृ० ४४।

विचालन--संज्ञा पुं० [सं०] १. हटाना या चलाना। २. नष्ट करना।

विचिंतन—संज्ञा पुं० [सं० विचिन्तन] [स्त्री० विचिन्तना] चिंता करना। सोचना। २. देखभाल। निरीक्षण [को०]।

विचिंतनीय--वि० [सं० विचिन्तनीय] १. जो चिंता करने या सोचने योग्य हो। २. देख भाल करने लायक (को०)।

विचिंता—संज्ञा स्त्री० [सं० विचिन्ता] १. सोच विचार। २. देखभाल। निरीक्षण।

विचिंतित—वि० [सं० विचिन्तित] विचारा हुआ [को०]।

विचिंत्य—वि० [सं० विचिन्त्य] १. जो चिंतन करने या सोचने के योग्य हो। २. जिसमें किसी प्रकार का संदेह हो। संदिग्ध। ३. निरीक्षण या देखभाल करने योग्य (को०)।

विचि^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीचि। तरंग। लहर।

विचि(पु)^{२}—क्रि० वि० [हिं० बीच] बीच में। मध्य में। उ०—सो मुख ब्रज अवलोकन करै। तब जु आइ विचि पलकैं परै।—नंद० ग्रं०, पृ० १६३।

विचिकित्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संदेह। अनिश्चय। शक। २. वह संदेह जो किसी विषय में कुछ निश्चय करने के पहले उत्पन्न हो और जिसे दूर करके कुछ निश्चय किया जाय। ३. अनवधानता। भूल। प्रमाद (को०)।

विचिकित्सित—वि० [सं०] संदिग्ध। संदेहास्पद [को०]।

विचिकीर्षा—संज्ञा स्त्री० [सं० वि० (उप०)+चिकीर्षा] करने की इच्छा या अभिलाषा।

विचिकीर्षु—वि० [सं० वि (उप०)+चिकीर्षु] करने की इच्छा रखनेवाला।

विचिचीषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अन्वेषण की आकांक्षा [को०]।

विचिचीषु—वि० [सं०] अन्वेषण करने की इच्छावाला [को०]।

विचित—वि० [सं०] जिसका अन्वेषण किया जाय।

विचिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विचार। सोचना। २. अनुसंधान।

विचित्त^{१}—वि० [सं०] १. अचेत। बेहोश। २. जिसका चित्त ठिकाने न हो। जो अपना कर्तव्य न समझ सकता हो।

विचित्त(पु)^{२}--वि० [सं० विचित्र, प्रा० विचित्त] दे० 'विचित्त'। उ०--अद्भुत चरित्त चंदह चरिचि सुर विचित्त हिय हथ्थ किय।—पृ० रा०, ६।४६।

विचित्तर—वि० [सं० विचित्र, प्रा० विचित्त] दे० 'विचित्र'। उ०—कभी नागा नहीं करती थी अक्सर। चतुर सब औरतां में थीं विचित्तर।—दक्खिनी०, पृ० २४६।

विचित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बेहोशी। २. वह अवस्था जिसमें मनुष्य का चित्त ठिकाने न रहे।

विचित्र^{१}—वि० [सं०] १. जिसमें कई प्रकार के रंग हों। कई तरह के रंगों या वर्णोंवाला। रंग बिरंगा। २. जिसमें किसी प्रकार की विलक्षणता हो। जिसमें किसी प्रकार की असाधारणता हो। विलक्षण। जैसे,—(क) ऐसा विचित्र पक्षी मैंने पहले नहीं देखा था। (ख) तुम भी बड़े विचित्र आदमी हो। ३. जिसके द्वारा मन में किसी प्रकार का आश्चर्य उत्पन्न हो। विस्मित या चकित करनेवाला। ४. सुंदर। खूबसूरत। ५. रंगीन। चित्रित। रँगा हुआ (को०)।

यौ०—विचित्रचरित्र = अद्भुत चरित्रवाला। विचित्र देह = (१) सुंदर शरीरवाला। (२) जिसकी देह चितकबरी हो। विचित्ररूप = विविध प्रकार का। अनेक रूपोंवाला। विचित्रवीर्य। विचित्रशाला।

विचित्र^{२}—संज्ञा पुं० १. पुराणानुसार रौच्य मनु के एक पुत्र का नाम। २. साहित्य में एक प्रकार का अर्थालंकार जो उस समय होता है, जब किसी फल की सिद्धि के लिये किसी प्रकार का उलटा प्रयत्न करने का उल्लेख किया जाता है। उ०—(क) करिबैको उज्वल सुधा सों अभिराम देखो, मन ब्रजवाम रँगती हैं श्याम रंग में (ख) राम कहेउ रिस तजहु मुनीसा। कर कुठार आगे यह सीसा।—तुलसी (शब्द०)। (ग) जीवन हित प्रानहिं तजत नवैं ऊँचाई हेत। सुख कारण दुख संग्रहैं बहुधा पुरुष सचेत (शब्द०)। (घ) क्यों नहिं गंगा को सुमिरि दरस परस सुख लेत। जाके तट में मरत नर अमर होन के हेत (शब्द०)। ३. अनेक रंगों का समूह। विभिन्न रंगों का एकीभवन। (को०)। ४. आश्चर्य (को०)।

विचित्रक¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. भोजपत्र का वृक्ष। २. आश्चर्य। विचित्र।

विचित्रक²—वि० दे० 'विचित्र'।

विचित्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रंग बिरंगे होने का भाव। २. विलक्षण या अद्भुत होने का भाव।

विचित्रताई—संज्ञा स्त्री० [सं० विचित्र + सं० ताति √हिं० ताई (प्रत्य०)] दे० 'विचित्रता'। उ०—उस विचित्रता से बढ़कर विचित्रताई दिखा सकने की आशा इन्हें होती।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३६।

विचित्रदेह—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

विचित्रवर्षी—वि० [सं० विचित्रवर्षिन्] इधर उधर बरसनेवाला। जहाँ तहाँ बरसनेवाला (मेघ)।

विचित्रवीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रवंशी राजा शांतनु के पुत्र का नाम. जिनकी कथा महाभारत में है।

विशेष—जब राजा शांतनु ने अपने पुत्र भीष्म के आजन्म ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा करने पर सत्यवती के साथ विवाह कर लिया था, तब उसी सत्यवती के गर्भ से उन्हें चित्रांगद और विचित्रवीर्य नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। चित्रांगद तो छोटी अवस्था में ही एक गंधर्व द्वारा मारा गया था; पर विचित्रवीर्य ने बड़े होने पर राज्याधिकार पाया था। इसने काशिराज की अंबिका और अंबालिका नाम की दो कन्याओं के साथ विवाह किया था, जिन्हें भीष्म इसी के लिये हरण कर लाए थे। परंतु थोड़े ही दिनों बाद निःसंतान अवस्था में ही इसकी मृत्यु हो गई। सत्यवती को विवाह से पहले ही पराशर ऋषि से गर्भ रह चुका था और उससे द्वैपायन (व्यास) का जन्म हुआ था। विचित्रवीर्य के निःसंतान मर जाने पर सत्यवती ने अपने उसी पहले पुत्र द्वैपायन को बुलाया और उसे विचित्रवीर्य की विधवा स्त्रियों के साथ नियोग करने को कहा। तदनुसार द्वैपायन ने अंबिका और अंबालिका से धृतराष्ट्र और पांडु तथा एक दासी से विदुर (विशेष दे० 'विदुर') नाम के तीन पुत्र उत्पन्न किए थे।

विचित्रशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ अनेक प्रकार के विचित्र पदार्थों का संग्रह हो। अजायबघर।

विचित्रांग¹—संज्ञा पुं० [सं० विचित्राङ्ग] १. मोर। जिसकी देह चितकबरी हो। २. व्याघ्र। बाघ।

विचित्रांग²—वि० चितकबरे शरीरवाला [को०]।

विचित्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक रागिनी, जिसे कुछ लोग भैरव राग की पाच स्त्रियों में से एक और कुछ लोग त्रिवण, बरारी, गौरी और जयंती के मेल से बनी हुई संकर जाति की मानते हैं। २. श्वेत हिरन (को०)।

विचित्रित—वि० [सं०] १. जो कई तरह के रंगों आदि से बना हो। अनेक प्रकार के रंगों से चित्रित। रंग बिरंगा। २. आभूषित। अलंकृत (को०)। ३. आश्चर्यजनक (को०)।

विचिन्वत्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्वेषण। तलाश। खोज। २. योद्धा। शूरवीर। ३. गवेषणा [को०]।

विचिलक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का जहरीला कीड़ा।

विची—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीची। तरंग। लहर।

विचीर्ण—वि० [सं०] १. अधिकृत। अधिकार में लिया हुआ। २. जिसको विदीर्ण किया गया हो। ३. जिसमें प्रवेश किया गया हो [को०]।

विचुंबन—संज्ञा पुं० [सं० विचुम्बन] चुंबन। चूमना। चुम्मा [को०]।

विचुंबित—वि० [सं० विचुम्बित] १. चूमा हुआ। जिसका चुंबन किया गया हो। २. स्पृष्ट। छूआ हुआ [को०]।

विचेतन—वि० [सं०] १. जिसे चेतना न हो। संज्ञाहीन। अचेतन। बेहोश। २. निर्जीव। प्राणहीन (को०)। ३. जिसे भले बुरे का ज्ञान न हो। विवेकहीन। ४. संभ्रांत। हतबुद्धि। कातर। अधीर (को०)।

विचेतना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विचेतन होने का भाव। संज्ञाहीन। अचेतनता। अधीरता। व्याकुलता।

विचेता—संज्ञा पुं० [सं० विचेतस्] १. जिसका चित्त ठिकाने न हो। घबराया हुआ। २. बेहोश। ३. जिसे किसी विषय का विशेष ज्ञान हो। चतुर। विशेषज्ञ। ४. दुष्ट। पाजी। ५. मूर्ख। बेवकूफ।

विचेष्ट—वि० [सं०] जिसमें किसी प्रकार की चेष्टा न हो। जो हिलता डोलता न हो।

विचेष्टन—संज्ञा पुं० [सं०] १. (पीड़ा आदि से) बुरी चेष्टा करना। इधर उधर लोटना। तड़पना। २. (घोड़े का) लात फेंकना या लोटना (को०)।

विचेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बुरी या खराब चेष्टा करना। मुँह बनाना या हाथ पैर पटकना। २. प्रयत्न। उद्यम। कोशिश। गति (को०)। ३. व्यवहार। आचार (को०)।

विचेष्टित¹—वि० [सं०] १. जिसके लिये उद्योग या प्रयत्न किया गया हो। २. परोक्षित। ३. अविचारित या मूर्खता के साथ किया हुआ। ४. अन्वेषित (को०)।

विचेष्टित²—संज्ञा पुं० १. कार्य। काम। २. प्रयत्न। उद्योग। ३. इंगित। संकेत। भावभंगी। ४. कार्य। आचार। ५. अभिसंधि। षड्यंत्र। ६. बुरा कार्य। दुष्कर्म [को०]।

विच्छंद¹—वि० [सं० विच्छन्द] विविध प्रकार के छंदों से युक्त। अनेक छंदोंवाला [को०]।

विच्छंद²—संज्ञा पुं० दे० 'विच्छंदक'।

विच्छंदक—संज्ञा पुं० [सं० विच्छन्दिक] १. देवमंदिर। देवालय। २. प्रासाद। महल।

विच्छत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] सुसनी का साग।

विच्छर्दक—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवमंदिर। देवायतन। देवालय। २. प्रासाद। महल।

विच्छर्दन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कै। वमन। २. उपेक्षा। अवमानना। ३. क्षय (को०)।

विच्छर्दिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वमन। कै।

विच्छर्दित—वि० [सं०] १. जो वमन किया गया हो। कै किया हुआ। २. जिसकी उपेक्षा की गई हो। जो तुच्छ समझा गया हो। ३. त्यक्त। छोड़ा हुआ। परित्यक्त (को०)। ४. कम किया हुआ। न्यून किया हुआ (को०)।

विच्छल—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत की लता।

विच्छाय—संज्ञा सं० [सं०] १. पक्षियों की छाया। २. मणि। ३. वह जिसकी छाया न पड़ती हो।

विशेष—प्रायः ऐसा माना जाता है कि देवताओं, भूतों और प्रेतों आदि की छाया नहीं पड़ती।

विच्छाय^2—वि० १. कांतिहीन। श्रीहीन। २. छायाहीन। प्रतिबिंब या छायारहित (को०)।

विच्छिअ—वि० [देशी० या सं० विच्छेदित] पाटित। विदारित। फाड़ा हुआ।—देशी०, पृ० ३१०।

विच्छित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काटकर अलग या टुकड़े करना। २. विच्छेद। अलगाव। ३. कमी। त्रुटि। ४. वेशभूषा आदि में होनेवाली लापरवाही या बेढंगापन। ५. रंगों आदि से शरीर को चित्रित करना। ६. कविता में यति। ७. एक प्रकार का हार। ८. साहित्य में एक हाव, जिसमें स्त्री थोड़े श्रृंगार से पुरुष को मोहित करने की चेष्टा करती है। यथा—बेंदी भाल, तमोल मुख, सीस सिलसिले बार। दृग आँजे, राजे ख़री, साजे सहज सिंगार। ९. मकान की सीमा। हद (को०)। १०. विनाश। लोप (को०)। ११. वैचित्र्य। विचित्रता (को०)। १२. बाधा। रोक। रुकावट।

विच्छिन्न^1—वि० [सं०] १. जो काट या छेदकर अलग कर दिया गया हो। जिसका अपने मूल अंग के साथ कोई संबंध न रह गया हो। विभक्त। २. जुदा। अलग। उ०—बंगनिवासी इससे विच्छिन्न नहीं हुए वरंच और युक्त हो गए।—शिवशंभु (शब्द०)। ३. जिसका विच्छेद हुआ हो। ४. जिसका अंत हो गया हो। ५. कुटिल। ६. विभिन्न रंगों से युक्त (को०)। ७. लुप्त। तिरोहित (को०)। ८. उबटन आदि से लेपित (को०)। ९. जिसका निवारण किया गया हो।

यौ०—विच्छिन्नप्रसार = जिसकी प्रगति का प्रसार निरुद्ध हो गया हो। विच्छिन्नमद्य = वह जिसने बहुत दिनों से मदिरापान बंद कर दिया हो।

विच्छिन्न^2—संज्ञा पुं० [सं०] योग में अस्मिता' राग, द्वेष और अभिनिवेश इन चारों क्लेशों की वह अवस्था जिसमें बीच में उनका विच्छेद हो जाता है। वह बीच की अवस्था जिसमें कोई क्लेश वर्तमान नहीं रहता, पर जिससे कुछ पहले और कुछ बाद वह वर्तमान रहता है।

विच्छुर—वि० [सं० विच्छुरित] दे० 'विच्छुरित'। उ०—थिर चितवन से चिर मिलनातुर, विष की शत वाणी से विच्छुर।—अर्चना, पृ० १०६।

विच्छुरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. छिड़कना। २. लेपन करना। मल देना [को०]।

विच्छुरित^1—वि० [सं०] १. लिप्त किया हुआ। २. छिड़का हुआ। ३. ढका हुआ। उ०—विच्छुरित वह्नि राजीव नयन हतलक्ष्य बाण।—अपरा, पृ० ३७।

विच्छुरित^2—संज्ञा पुं० एक प्रकार की समाधि। दे० 'विच्छिन्न'।

विच्छेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. काट या छेदकर अलग करने की क्रिया। २. क्रम का बीच से टूट जाना। सिलसिला न रह जाना। ३. किसी प्रकार अलग या टुकड़े टुकड़े करना। सबमें से कुछ अलग करना। ४. नाश। उ०—जैसे इस समय बद्धमुक्त जीव हैं, वैसे ही सर्वदा रहते हैं, अत्यंत विच्छेद बंधमुक्ति का कभी नहीं होता, किंतु बंध और मुक्ति सदा नहीं रहती।—दयानंद (शब्द०)। ५. विरह। वियोग। ६. पुस्तक का प्रकरण या अध्याय। परिच्छेद। ७. बीच में पड़नेवाला खाली स्थान। अवकाश। ८. कविता में यति। ९ वंशपरंपरा का लोप होना (को०)। १०. प्रतिषेध। रोक। निषेध (को०) ११. हानि। क्षति (को०)। १२. अनबन। मतभेद। फूट (को०)।

विच्छेदक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विच्छेद करता हो। २. वह जो काट या छेदकर अलग करता हो। ३. विभाग करनेवाला। विभाजक।

विच्छेदन—संज्ञा पुं० [सं०] १. काट या छेदकर अलग करने की क्रिया। अलग करना। २. नष्ट करना। बरबाद करना। दे० 'विच्छेद'।

विच्छेदनीय—वि० [सं०] १. जो काट या छेदकर अलग करने के योग्य हो। २. जो विच्छेद करने के योग्य हो।

विच्छेदी—संज्ञा पुं० [सं० विच्छेदिन्] १. वह जो विच्छेद करता हो। विच्छेदन करनेवाला। २. जिसमें विच्छेद हो। वह जिसमें अंतर हो (को०)।

विच्छेद्य—वि० [सं०] जो विच्छेद करने के योग्य हो। जो काटने या विभाग करने के योग्य हो।

विच्छोही(५)—संज्ञा पुं० [देशी] बिछोह। वियोग। विरह। देशी०, पृ० २९७।

विच्युत—वि० [सं०] १. जो कटकर अथवा और किसी प्रकार इधर उधर गिर पड़ा हो। २. जो जीवित अंग में से काटकर निकाला गया हो। (वैद्यक)। ३. जो अपने स्थान से गिर या हट गया हो। स्थानभ्रष्ट। च्युत। ४. विनष्ट। (को०) ५. जो सफल न हो। जो सफल न हो सका हो।

विच्युति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी पदार्थ का अपने स्थान से हट या गिर जाना। च्युत होना। २. गर्भ का गिर जाना। गर्भपात।

विछल(५)—[सं० वत्सल] पुत्रवत् प्रेम करनेवाला। उ०—राम टेक जुग जुग अमर परगट भक्त निसाण। भक्त विछल विरद बिस्तर्यो भगवद वचन प्रमाण।—राम० धर्म०, पृ० २४३।

विछलना(५)†—क्रि०अ० [सं० विच्छिलन, हिं० फिसलना] १. फिसलना। २. विचलित होना। उ०—उछल्यो उदधिराज विछल्यो ग्रहन राज ध्यान की धमारि भूरि भूली भूतराज की।—रघुराज (शब्द०)।

विछाडना†—क्रि० अ० [हिं० छोड़ना या सं० वि + √छद्] लक्ष्य पर छोड़ना। चलाना। उ०—कोमंड लियो रघुवीर कराँ सारंग विछाडे साँध सराँ।—रघु० रू०, पृ० १३३।

विछाल(पु)†—वि० [सं० विशाल, या सं० विस्तार, प्रा० विच्छार] दे० विशाल'। उ०—छाड्यो नयर विछाल छी छाड्या साँभरि का रिणवास।—बी० रासो, पृ० ६०।

विछेद(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विच्छेद] प्रिय से अलग या दूर होना। वियोग। विछोह। उ०—सूर श्याम के परम भावती पलक न होत विछेद।—सूर (शब्द०)।

विछेप(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विक्षेप, प्रा० विच्छेव] दे० 'विक्षेप'। उ०—देहिक दैविक छुटै भवतिक सोइ अनन्य कहावनं। इंद्री रहित विछेप नाहीं सोई है आतीतनं।—पलटू०, पृ० ६२।

विछोई(पु)†—संज्ञा पुं० [हिं० विछोह + ई (प्रत्य०)] वह जिसका अपने प्रिय से विच्छेद हो गया हो। वियोगी। उ०—हितू पियारा मीत विछोई। साथ न लाग आप गा सोई।—जायसी (शब्द०)।

विछोह(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विच्छेद, देशी विच्छोह] प्रिय से अलग या दूर होना। वियोग। उ०—जस बिछोह जल मीन दुहेला। जल हति काढ़ अँगन म्हँ मेला।—जायसी (शब्द०)।

विजंघ—वि० [सं० विजङ्घ] १. जिसकी जाँघें कट गई हों या न हों। २. (गाड़ी) जिसके धुरी और पहिए आदि न हों।

विज(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत्, प्रा० विज्जु, विज्ज] बिजली। विद्युत्। उ०—आवृत्त घत्त आजान भुम्र मतु कजल कोट कि विज लहि।—पृ० रा०, ७। १४२।

विजई(पु)† - संज्ञा पुं० [सं० विजयिन्] दे० 'विजयी'।

विजउरा†—संज्ञा पुं० [सं० बीजपूरक, प्रा० बीयऊरय] दे० 'विजौरा'। उ०—करहा नीरुँ सोई चर वाट चलतउ पूर। द्राख विजउरा नीरती. सो धण रही सू दूर।—ढोला०, ४२६।

विजट—वि० [सं०] मुक्त। खुला हुआ। जैसे, केश [को०]।

विजड़ित—वि० [सं० विजडित] १. स्थिर। अडोल। उ०—चरण हुए थे विजड़ित मधुभार से।—लहर, पृ० ६६। २. जड़ा हुआ। जटित।

विजन¹—वि० [सं०] जिसमें अथवा जहाँ आदमी न हो। जनरहित। एकांत। निराला। उ०—तहाँ सचिव सब लेहिं सुधारी। भूपहि विजन भवन महं डारी।—रघुराज (शब्द०)।

विजन²—संज्ञा पुं० [सं०] १. निर्जन या एकांत स्थान। २. गवाह या साक्ष्य का अभाव [को०]।

विजन(पु)³—संज्ञा पुं० [सं० व्यजन] हवा करने का पंखा। बीजन। उ०—(क) मुरछल चँवर विजन बहु करते। मृदु कहि राह परिस्रम हरते।—गोपाल (शब्द०)। (ख) कोऊ विजन डोलावन लागे। कोउ सींचे जल आत अनुरागे।—रघुराज (शब्द०)।

विजनता - संज्ञा स्त्री० [सं०] विजन होने का भाव। एकांत का भाव।

विजनन—संज्ञा पुं० [सं०] जनन करने की क्रिया। प्रसव।

विजना(पु)†- संज्ञा पुं० [सं० विजन] पंखा। उ०—इत एक सखी बतराय रही विजना इत एक डुलाय रही।—संगीत शाकुंतल (शब्द०)।

विजनित—वि० [सं०] उत्पन्न। जनित। जन्म लिया हुआ [को०]।

विजन्मा¹—संज्ञा पुं० [सं० विजन्मन्] १. किसी स्त्री का उसके उपपति या यार से उत्पन्न पुत्र। जारज। दोगला। २. मनु के अनुसार एक वर्णसंकर जाति। ३. वह जो जातिच्युत कर दिया गया हो।

विजन्मा²—संज्ञा पुं० उत्पत्ति। पैदाइश। जनन [को०]।

विजन्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो प्रसव करने को हो। गर्भवती। गर्भिणी।

विजपिल - संज्ञा पुं० [सं०] कर्दम। कीचड़ [को०]।

विजयंत—संज्ञा पुं० [सं० विजयन्त] इंद्र का एक नाम।

विजयंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विजयन्तिका] एक योगिनी का नाम।

विजयंती—संज्ञा स्त्री० [सं० विजयन्ती] १. एक अप्सरा का नाम। २. ब्राह्मी बूटी।

विजय¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. युद्ध या विवाद आदि में होनेवाली जीत। विपक्षी या शत्रु को दबाकर अपना प्रभुत्व या पक्ष स्थापित करना। जय। जीत। पराजय का उलटा। उ०—पांडव विजयी यह कथा राजा सुन के कान। विजय होय सब जगत में शत्रु होय क्षय जान।—सबल (शब्द०)। २. एक प्रकार का छंद जो केशव के अनुसार सवैया का मत्तगयंद नामक भेद है। ३. हरिवंश के अनुसार जयंत (इंद्र का पुत्र) के पुत्र का नाम (को०)। ४. जैनों के अनुसार पाँच अनुत्तरों में से पहला अनुत्तर या सबसे ऊपर का स्वर्ग। ५. विष्णु के एक पार्षद का नाम। ६. अर्जुन का एक नाम। ७. यम का नाम। ८. जैनियों के एक जिन देव का नाम। ९. कल्कि के एक पुत्र का नाम। १. कालिकापुराण के अनुसार भैरववंशी कलपराज के पुत्र का नाम जो काशिराज नाम से प्रसिद्ध थे. ११. विमान १२. संजय के एक पुत्र का नाम। १३. जयद्रथ के एक पुत्र का नाम। १४. एक प्रकार का शुभ मुहूर्त। †१५. प्रस्थान। गमन (आदरार्थ), जैसे—विजययात्रा। उ०—श्री गुसाईं जी फेरि श्री गोकुल को विजय करे।—दो सौ बावन०, पृ० १९३। १६. एक संवत्सर का नाम (को०)। १७. वर्ष का तीसरा मास (को०)। १८. एक प्रकार का सैन्य व्यूह (को०)। १९. एक प्रकार की मान या तौल (को०)। २०. जात का पारितोषिक। लूट का माल (को०)। २१. प्रदेश। जिला (को०)। २२. एक प्रकार की बाँसुरी (को०)। २३. कृष्ण के पुत्र का नाम (को०)। २४. शिव का त्रिशूल (को०)। २५. राजकीय शिविर (को०)।

विजय†²—संज्ञा पुं० [सं० व्यञ्जन < पूं० हिं० विजन, विजय बीजन] भोजन करना। खाना। (पूरब)।

विजयक—वि० [सं०] जो विजय करता हो। सदा जीतनेवाला।

विजयकर—वि० [सं०] दे० 'विजयक' [को०]।

विजयकुंजर—संज्ञा पुं० [सं० विजयकुञ्जर] १. राजा की सवारी का हाथी। २. लड़ाई के मैदान में जानेवाला हाथी।

विजयकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह ध्वजा जो शत्रु पर विजय प्राप्त करके फहराई जाती है। विजय पताका। २. एक विद्याधर का नाम (को०)।

विजयछंद—संज्ञा पुं० [सं० विजयच्छन्द] १. पाँच सौ मोतियों का हार। २. एक प्रकार का कल्पित हार, जो दो हाथ लंबा और ५०४ (कुछ के मत) से ५०० लड़ियों का माना जाता है। कहते। हैं कि ऐसा हार केवल देवता लोग पहनते हैं।

विजयडिंडिम—संज्ञा पुं० [सं० विजयडिण्डिम] प्राचीन काल का एक प्रकार का बड़ा ढोल, जो युद्ध के समय बजाया जाता था।

वियजतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम।

विजयदंड—संज्ञा पुं० [सं० विजयदण्ड] १. सैनिकों का वह समूह अथवा सेना का वह विभाग जो सदा विजयी रहता हो। २. सेना का एक विशिष्ट विभाग जिसपर विजय विशेष रूप से निर्भर करती है, ३. विजयसुचक दंड।

विजयदशमी—संज्ञा स्त्री० [सं० विजय (विजया) + दशमी] दे० 'विजया दशमी'।

विजयदुंदुभि—संज्ञा स्त्री० [सं० विजयदुन्दुभि] युद्ध में विजय होने पर बजनेवाला धौंसा या नगाड़ा। विजयडिंडिम [को०]।

विजय द्वादशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि का नाम [को०]।

विजयध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विजयपताका'। उ०—फिर चले छोड़कर गृह त्याग के विजयध्वज से।—अपरा, पृ० २१३।

विजयनंदन—संज्ञा पुं० [सं० विजयनन्दन] इक्ष्वाकुवंश के राजा जय का एक नाम।

विजयनगर—संज्ञा पुं० [सं०] एक नगर का नाम जो कर्नाटक के अंतर्गत है [को०]।

विजयपताका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सेना में की वह पताका जो जीत के समय फहराई जाती है। २. विजय का सूचक कोई चिह्न।

वियजपर्पटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की औषध।

विशेष—यह पारे, जयंती के पत्तों, रेंड़ की जड़ और अदरक आदि के योग से बनाई और संग्रहणी रोग में दी जाती है।

विजयपूर्णिमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विजयदशमी के उपरांत पड़नेवाली पूर्णिमा। आश्विन को पूर्णिमा।

विशेष—इस तिथि को बंगाल में लक्ष्मी का पूजन होता है और उत्सव मनाया जाता है।

विजयभैरव—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस।

विशेष—इसमें हड़ का छिलका, चीता, इलायची, तज, संभालू, पीपल, लोहसार आदि के योग से गंधक और पारे की कजली तैयार की जाती है। वह सब प्रकार के रोगों और दुर्बलता को दूर करनेवाला माना जाता है।

विजयभैरव तैल—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार तेल।

विशेष—यह तेल, मालकंगनी, अजवायन, काले जीरे, मेथी और तिल को कोल्हू में पेरकर निकाला जाता है और सब प्रकार के वायुरोगों का नाशक माना जाता है।

विजयमर्दल—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का ढोल। ढक्का।

विजययात्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह यात्रा जो किसी पर किसी प्रकार की विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से की जाय।

विजयरस—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो पारे, गंधक और सीसे के योग से बनता और प्राय: अजीर्ण रोग में दिया जाता है।

विजयलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विजय की अधिष्ठात्री देवी। वह देवी जिसकी कृपा पर विजय निर्भर मानी जाती है।

विजयशील—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बराबर विजय करता हो। सदा जीतनेवाला।

विजयश्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] विजय की अधिष्ठात्री देवी, जिसकी कृपा पर विजय निर्भर मानी जाती है।

विजयसार—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बड़ा वृक्ष, जिसकी लकड़ी औजार बनाने और इमारत के काम में आती है। विशेष दे० 'विजैसार'।

विजयसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विजयप्राप्ति। सफलता। कामयाबी [को०]।

विजया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुराणानुसार पार्वती की एक सखी का नाम, जो गौतम की कन्या थी। २. दुर्गा। ३. यम की भार्या का नाम। ४. हरीतकी। हर्रे। ५. बच। ६. जयंती। ७. मजीठ। ८. एक प्रकार का शमी। ९. अग्निमंथ। १०. भाँग। सिद्धि। भंग। उ०—(क) संसार के सब दु:खों और समस्त चिताओं को जो शिवशंभु शर्मा दो चुल्लू बूटी पीकर भुला देता था, आज उसका उस प्यारी विजया पर भी मन नहीं है।—शिवशंभु० (शब्द०)। (ख) हम तो यह जानते हैं कि यदि किसी मंत्र, यंत्र से सर्पादि के डंक का कष्ट या कोई ज्वर, शूल आदि विकार दूर हो जाता हो, तो वह मंत्र संखिया, धतूरा, विजयादि के विषों पर पढ़ा हुआ भी अवश्य फल करे।—श्रद्धाराम (शब्द०)। ११. एक योगिनी का नाम। १२. वर्तमान अवसर्पिणी के दूसरे अर्हत् की माता का नाम। १३. दक्ष की एक कन्या का नाम। १४. श्रीकृष्ण की माला का नाम। १५. इंद्र की पताका पर की एक कुमारी का नाम। १६. प्राचीन काल का एक प्रकार का बड़ा खेमा। १७. काश्मीर के एक पवित्र क्षेत्र का नाम। १८. दस मात्राओं का एक मात्रिक छंद जिसमें अक्षरों का कोई नियम नहीं होता और जिसके अंत में रगण रखना कर्णमधुर होता है। १९. एक वर्णिक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। इसके अंत में लघु और गुरु अथवा नगण भी होता हैं। उ०—बरन बसु चारिए। चरण प्रति धारिए। लगन ना बिसारिए। सुविजया सम्हारिए। २०. दे० 'विजयादशमी'। २१. एक विद्या का नाम जिसे ऋषि विश्वामित्र ने रामचंद्र को सिखाया था (को०)। २२. षोडश मातृकाओं में से एक का नाम।

विजया एकादशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी। २. फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी।

विजया दशमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी।

विशेष—यह हिंदुओं का और विशेषतः क्षत्रियों का एक बहुत बड़ा त्योहार है। प्राचीन काल में राजा लोग इसी दिन अपने शत्रुओं पर आक्रमण करने अथवा दिग्विजय आदि करने के लिये निकला करते थे। इस दिन देवी, घोड़े, हाथी और खड्ग आदि का पूजन तथा राजा के दर्शन करने का विधान है। इस दिन किसी नए कार्य का आरंभ करना बहुत ही शुभ समझा जाता है।

विजयानंद—संज्ञा पुं० [सं० विजयानन्द] १. संगीत में ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक। २. वैद्यक में एक प्रकार की औषध जो पारे और हरताल के योग से बनाई जाती और कुष्ठरोग में में दी जाती है।

विजयाभ्युपाय—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध में विरोधी पर विजय प्राप्त करने का उपाय [को०]।

विजयार्थी—वि० [सं० विजयार्थिन्] विजय का इच्छुक। विजय पाने की कामना रखनेवाला [को०]।

विजयार्ध—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

विजयावटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की वटिका या गोली जो पारे और गंधक के योग से बनाई जाती है और जिसका व्यवहार संग्रहणी में होता है।

विजया सप्तमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार किसी मास के शुक्ल पक्ष की वह सप्तमी जो रविवार को पड़े।

विशेष—ऐसी तिथि को पुराणानुसार रामचंद्र जी का पूजन और दान करने का विधान है।

विजयी—संज्ञा पुं० [सं० विजयिन्] [वि० स्त्री० विजयिनी] १. वह जिसने विजय प्राप्त की हो। विजय करनेवाला। जीतनेवाला। उ०—(क) सीजर भी उसी धर्म के प्रभाव से ऐसी विजयी सेना संग होने पर भी काँप उठता है।—तोताराम (शब्द०)। (ख) ऐरावत विजयी द्विरद मत्त उसके सब। मेघों से टक्कर मार खेलते हैं अब।—द्विवेदी (शब्द०)। (ग) शक्ति के विद्युत्कण, जो व्यस्त विकल बिखरे हैं, हो निरुपाय, समन्वय उसका करे समस्त विजयिनी मानवता हो जाय।—कामायनी, ५९। २. अर्जुन।

विजयेश—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम, जो विजय के देवता माने जाते हैं।

विजयोत्सव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह उत्सव जो आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी को होता है। विजया दशमी को होनेवाला उत्सव। २. वह उत्सव जो किसी प्रकार की विजय प्राप्त करने पर होता है।

विजर^1—वि० [सं०] १. जिसे जरा या बुढ़ापा न आता हो। जरारहित। २. नवीन। नया।

विजर^2—संज्ञा पुं० वृक्ष का तना या डंठल [को०]।

विजरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्रह्मलोक की एक नदी का नाम।

विजर्जर—वि० [सं०] १. बहुत जीर्ण। कमजोर। २. सड़ा हुआ। जैसे काष्ठ [को०]।

विजल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. जल या वर्षा का अभाव। अनावृष्टि। सूखा। २. जल का न होना। पानी का अभाव। ३. दे० 'विजिल' (को०)।

विजल^2—वि० जलहीन। निर्जल [को०]।

विजला—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंचु या चेंच नाम का साग।

विजल्प संज्ञा पुं० [सं०] १. सच, झूठ और तरह तरह की ऊटपटाँग बातें करना। व्यर्थ की बहुत सी बकवाद। २. किसी सज्जन या भले आदमी के संबंध में द्वेषपूर्ण झूठी बातें कहना। ३. सामान्य कथन या वार्ता (को०)।

विजल्पित—वि० [सं०] १. निरर्थक या ऊटपटाँग कहा हुआ। २. कथित। कहा। अस्पष्ट या तुतलाहट से भरा हुआ [को०]।

विजवल—वि० [सं०] पिच्छिल। फिसलाहट से भरा हुआ [को०]।

विजाग(पु)^1—संज्ञा पुं० [सं० वियोग] विमोह। वियोग। उ०—सूरज जरत हिमंचल ताका। बिरह विजाग सौंह रथ हाँका।—जायसी (शब्द०)।

विजाग(पु)^2—संज्ञा स्त्री० [सं० वज्राग्नि, हिं० बजागि] बिजली। उ०—छण रुचि, छटा, अकाल की, तड़ित चंचला होइ। विद्युत, संप, विजाग, विज्जु, दामिनि घन बिनु सोइ।—नंद० ग्रं०, पृ० ८८।

विजागी(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वियोगिन्] जिसका अपने प्रिय से विछोह हुआ हो। वियोगी। उ०—तेहि के जरत जो उठै विजागी। तीनों लोक जरहि तेहि लागी।—जायसी (शब्द०)।

विजात^1—वि० [सं०] १. वर्णसंकर। दोगला। हरामजादा। २. उत्पन्न या जनमा हुआ (को०)। ३. रूपांतरित। जो दूसरे रूप में परिणत हो (को०)।

विजात^2—संज्ञा पुं० सखी छंद का एक भेद

विशेष—इसके प्रत्येक चरण में ५-५-४ के विश्राम से १४ मात्राएँ और अंत में मगण या यगण होता है। इसकी पहली और आठवीं मात्राएँ लघु रहती हैं। इसके अंत में जगण, तगण या रगण नहीं होना चाहिए।

विजाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जारज लड़की। दोगली। २. वह स्त्री जिसे हाल में संतान हुई हो। जच्चा। ३. माता (को०)।

विजाति^{1}—वि० [सं०] १. भिन्न या दूसरी जाति का। भिन्न वर्ग का। उ०—जो विजातियों और सजातियों में भेद नहीं मानते।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २२८।

विजाति^{2}—संज्ञा स्त्री० विभिन्न जाति या वर्ग [को०]।

विजातीय—वि० [सं०] १ जो दूसरी जाति का हो। एक अथवा अपनी जाति से भिन्न जाति का। उ०—(क) हम विजातीय कार्य-

कर्त्ताओं की बनाई हुई वस्तुओं को काम में लाते हैं। (ख) ब्रह्म से पृथक् कोई सजातीय, विजातीय और स्वगत अवयवों के भेद न होने से एक ब्रह्म ही सिद्ध होता है।—दयानंद (शब्द०)। २. विभिन्न प्रकार का। असमान। विषम (को०)। ३. मिली-जुली जाति का। मिश्रित जातिवाला (को०)।

विजानक—वि० [सं०] ज्ञाता। परिचित। विज्ञ [को०]।

विजानता—संज्ञा स्त्री० [सं०] चतुरता। बुद्धिमत्ता [को०]।

विजानना(पु)—क्रि० स० [सं० (उप०) वि०+हिं० जानना] जानना। भली भाँति जानना। विशेष रूप से जानना। उ०—आतम कवन अनातम को है। याको तत्त्व विजानत जो है।—पद्माकर (शब्द०)।

विजानु—संज्ञा पुं० [सं०] तलवार चलाने के ३२ हाथों में से एक हाथ या प्रकार। उ०—तिमि सव्य जानु विजानु संकोचित सुआहित चित्त को।— रघुराज (शब्द०)।

विजापयिता—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विजापयितृ] वह जो विजय दिलावे। विजय करानेवाला [को०]।

विजायठ†—संज्ञा पुं० [सं० विजय ?] दे० 'बिजायठ'। उ०—आभूषणों में सोने के बने विजायठ, शिरोभूषण, हार, मुकुट आदि थे।—आ० भा०, पृ० ४१।

विजार—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार की मटिया भूमि जिसमें धान और कभी कभी चना भी बोया जाता है।

विजारत—संज्ञा स्त्री० [अ० विज़ारत] वजीर का पद, धर्म या भाव। मंत्रित्व। उ०—वजीर की तनखाह १ लाख रुपए की और विजारत के दस्तूर समेत २ लाख रुपए की सालाना है।—देवी प्रसाद (शब्द०)। २. दे० 'वजारत'।

विजारौ(पु)†—वि० [देश० या सं० विजेतृ=विजेतर्] विजय करनेवाला। उ०—छात्र विजारौ सोनगिर, वात सुणै संसार।—रा० रू०, पृ० ३५५।

विजिगीत—वि० [सं०] ख्यात। प्रसिद्ध। मशहूर [को०]।

विजिगीष—वि० [सं०] विजिगीषु। विजयेच्छु [को०]।

विजिगीषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह इच्छा जिसके अनुसार मनुष्य यह चाहता है कि मुझे कोई यह न कह सके कि मैं अपना पेट पालने में असमर्थ हूँ। २. विजय प्राप्त करने की इच्छा। उ०—परस्पर की विजिगीषा के कारण दोनों दल जीतोड़ परिश्रम करेंगे।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३२४। ३. व्यवहार। ४. उत्कर्ष। उन्नति।

विजिगीषु—वि० [सं०] १. विजय की इच्छा करनेवाला। २. महत्वाकांक्षी (को०)। ३. योद्धा। शूर वीर (को०)। ४. प्रतिद्वंदी। प्रतिपक्षी (को०)।

विजिगीषुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विजिगीषु होने भाव या धर्म।

विजिघत्स—वि० [सं०] भूख पर विजय पानेवाला [को०]।

विजिघांसु—वि० [सं०] मारने की इच्छा रखनेवाला। हनन या विनाश करने को उत्सुक [को०]।

विजिज्ञासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जानने की विशिष्ट इच्छा। २. अन्वेषण। शोध। खोज [को०]।

विजिज्ञासु—वि० [सं०] जो पूर्णतया जानना चाहता हो। जानने समझने की इच्छावाला। [को०]।

विजिट—संज्ञा स्त्री० [अं० विज़िट] १. भेंट। मुलाकात। २. डाक्टर आदि का रोगी के देखने के लिये आना। उ०—मालती को भी एक विजिट करनी थी।—गोदान, पृ० १३४। ३. वह धन जो डाक्टर आदि को आने के उपलक्ष्य में दिया जाय। डाक्टर की फीस।

विजिटर—वि० [अं० वि'ज़टर] विजिट करनेवाला [को०]।

विजिटर्स बुक—संज्ञा स्त्री० [अ० विज़िटर्स बुक] किसी सार्वजनिक संस्था की वह पुस्तक जिसमें वहाँ के आने जानेवाले अपना नाम और कभी कभी उस संस्था के संबंध में अपनी संमति भी लिखते हैं।

विजिटिंग कार्ड—संज्ञा पुं० [अं० विज़िटिंग कार्ड] एक प्रकार का बढ़िया छोटा कार्ड जिसपर लोग अपना नाम, पद और पता छपवा लेते हैं, और जब किसी से मिलने जाते हैं तब उसे अपने आगमन की सूचना देने के लिये पहले यह कार्ड उसके पास भेज देते हैं।

विजित—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसपर विजय प्राप्त की गई हो। वह जो जीत लिया गया हो। २. वह प्रदेश जिसपर विजय प्राप्त की गई हो। जीता हुआ देश। ३. कोई प्रांत या प्रदेश। ४. फलित ज्योतिष में वह ग्रह जो युद्ध में किसी दूसरे ग्रह से बल में कम होता है। ५. जीत। विजय (को०)।

विजितवान्—वि० [सं० विजितवत्] विजेता। विजयी [को०]।

विजिता^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विजितृ] १. निर्णायक। २. भागीदार। हिस्सेदार [को०]।

विजिता^{2}—वि० १. पृथक्। २. भीत। डरा हुआ। ३. कंपित [को०]।

विजितात्मा—संज्ञा पुं० [सं० विजितात्मन्] १. शिव का एक नाम। २. वह जिसने अपनी वासनाओं का दमन कर लिया हो।

विजितामित्र—वि० [सं०] अमित्रों को जीतनेवाला। शत्रुंजय। विजितारि [को०]।

विजितारि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक राक्षस का नाम। २. वह जिसने अपने शत्रु को जीत लिया हो।

विजिताश्व—संज्ञा पुं० [सं०] राजा पृथु के एक पुत्र का नाम।

विजितासु—संज्ञा पुं० [सं०] एक मुनि का नाम [को०]।

विजिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विजय। जीत। २. प्राप्ति।

विजिती—वि० [सं० विजितिन्] विजयी [को०]।

विजितेंद्रिय—वि० [सं० विजितेन्द्रिय] दे० 'जितेंद्रिय' [को०]।

विजितेय—वि० [सं०] जिसे जीतना हो। विजय करने योग्य [को०]।

विजित्वर—वि० [सं०] जीतनेवाला। विजेता।

विजित्वरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम।

विजिन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विजिल'।

विजिल—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऐसा भोजन जिसमें अधिक रस न हो। २. एक प्रकार का दही।

विजिविल—संज्ञा पुं० [सं०, दे० 'विजिल' [को०] ।

विजिहीर्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मनोरंजन की लालसा । २. घूमने की कामना [को०] ।

विजिहीर्षु—वि० [सं०] मनोरंजन या घूमने के लिये इच्छुक [को०] ।

विजिह्म—वि० [सं०] १. कुटिल । झुका हुआ । मुड़ा हुआ । २. बेइ-मानी । ३. तिरछा । टेढ़ा । ४. शून्य । ५. निष्प्रभ । फीका । विच्छाय [को०] ।

विजिह्व—वि० [सं०] १. जिह्वारहित । २. मूक । गूँगा [को०] ।

विजीवित—वि० [सं०] प्राणहीन । मृत [को०] ।

विजीष—वि० [सं०] जिसे जय प्राप्त करने की इच्छा हो ।

विजु¹—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी के शरीर का वह अंग जहाँ से डैने निकलते हैं [को०] ।

विजु(पु)²—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत्, प्रा० विज्जु] बिजली । उ०—विद्युत संप विजाग विजु दामिनि घन बिनु सोइ।—नंद० ग्रं०, पृ० ८८

विजुल—संज्ञा पुं० [सं०] शाल्मलि कंद ।

विजुली¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक देवी का नाम।

विजुली²—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत] दे० 'बिजली' ।

विजृंभ—संज्ञा पुं० [सं० विजृम्भ] १. सिकोड़ना । संकोचन (भौंह आदि का) । २. जँभाई [को०] ।

विजृंभक—संज्ञा पुं० [सं० विजृम्भक] एक विद्याधर [को०] ।

विजृंभण—संज्ञा पुं० [सं० विजम्भण] १. किसी पदार्थ का मुँह खोलना । २. बौर आना । कली आना । खिलना । ३. जंभाई लेना । उबासी लेना । ४. धनुष की डोरी खींचना । ५. (भौं) सिकोड़ना । ६. कामक्रीड़ा । आमोद प्रमोद । रँगरेली (को०) ।

विजृंभा—संज्ञा स्त्री० [सं० विजृम्भा] उबासी । जँभाई ।

विजृंभिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विजृंम्भिका] १. जृंभा । जंभाई । २. हफनी । हाँफ [को०] ।

विजृंभित¹—वि० [सं० बिजृम्भित] १. जम्हाई लिया हुआ । २. उद्घाटित । विकसित । फैलाया हुआ । ३. प्रदर्शित । ४. उपस्थित । आविर्भूत । ५. क्रीडित । खेला हुआ [को०] ।

विजृंभित²—संज्ञा पुं० १. क्रीडा । मनोरंजन । २. अभिलाषा । इच्छा । ३. प्रदर्शन । प्रदर्शनी । ४. कृत्य । कर्म । आचार । ५. फल । परिणाम । ३. जंभाई [को०] ।

विजेतव्य—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विजेतव्या] जो विजित करने के योग्य हो । जो जीतने के योग्य हो ।

विजेता—संज्ञा पुं० [सं० विजेतृ] जिसने विजय पाई हो । जीतनेवाला । विजय करनेवाला ।

विजेय—वि० [सं०] जिसपर विजय प्राप्त की जाने को हो । जीता जाने के योग्य ।

विजै(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विजय] दे० 'विजय' । उ०—हारि जात नर करि उपाय । कपट न तिनको यह कँपाय । सोइ अकंपन पद कहाय । त्रैलोक्य विजै जौ रहा पाय ।—देव स्वामी (शब्द०) ।

विजैसार—संज्ञा पुं० [सं० विजयसार] एक प्रकार का बड़ा वृक्ष जो साल का एक भेद माना जाता है ।

विशेष—यह पूर्वी भारत तथा बरमा में बहुत अधिकता से पाया जाता है । इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है और खेत के औजार बनाने तथा इमारत आदि के काम में आती है ।

विजैसाल—संज्ञा पुं० [सं० विजयसार] दे० 'विजैसार' ।

विजोग(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वियोग] बिछोह । वियोग । उ०—जूँ राणी सूँ पड़इ विजोग ।—बी० रासो, पृ० ६३ ।

विजोगी—वि० [सं० वियोगी] दे० 'वियोगी' ।

विजोरा†¹—संज्ञा पुं० [सं० बीजपूरक] दे० 'बिजौरा' ।

विजोर²—वि० [हिं० वि + जोर (= बल)] अशक्त । निर्बल । कमजोर । उ०—जीव को सुख दुख तनु संग होई । जोर विजोर तन के संग सोई ।—सूर (शब्द०) ।

विजोहा—संज्ञा पुं० [सं० विमोहा] एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में दो रगण होते हैं । इसे 'जोहा', 'विमोहा' और 'विज्जोहा' भी कहते है ।

विज्जन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विज्जल' ।

विज्जनु—संज्ञा स्त्री० [प्रा० विज्ज] बिजली । विद्युत् । उ०—प्राची प्रमान संमुह अनिय मुष पंगुर विज्जनु मनिय ।—पृ० रा०, ५५ । ७ ।

विज्जल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की लपसी या चटनी । २. शर । तीर । वाण । ३. शालमली कंद [को०] ।

विज्जल²—वि० फिसलनेवाला । पिच्छल [को०] ।

विज्जलत्ता(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युल्लता] बिजली । विद्युत् की लता । दे० 'बिजली' । उ०—ठनक्कंत घटा बलँ अंग मोरँ । मनौं कूलटा छैल चित चालि चोरँ । झमैकंत दतो सुनैनं बिराजैं । मनौं बिज्जलत्ता नभं मध्य छाजैं । ब—पृ० रा०, १२ । १७८ ।

विज्जव—संज्ञा पुं० [सं०] एक विशेष प्रकार का वाण या तीर ।

विज्जाहार(पु)—संज्ञा पुं० [सं० बिद्याधर; प्रा०] उ०—इंद चंद सुर सिद्ध चरण विज्जाहार णाह भरिब वीर जुज्झ देष्खह कारण ।—कीर्ति०, पृ० १०६ ।

विज्जिल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विज्जल' [को०] ।

विज्जु(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत्] । विद्युत । बिजली । उ०—ससि विज्जु मनहुँ दोउ दिसि बसत उड़गन को बखतर धरे ।—गोपाल (शब्द०) ।

विज्जुझला(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युज्ज्वाला, प्रा० विज्जुझला] बिजली की चमक । विद्युत् की ज्योति । उ०—तरवारि चमक्कइ विज्जुझला ।—कीर्ति०, पृ० ११० ।

विज्जुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. त्वचा । छिलका । २. दारचीनी ।

विज्जुलता(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युल्लता] विद्युत् । बिजली । उ०—कर लीने मनि रस्मि रस्मि राह फौलि अथोरी । विज्जुलता बढ़ि मनहुँ रची बिसुकरमा डोरी ।—गोपालचंद्र (शब्द०) ।

विज्जुलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] जतुका या पहाड़ी नाम की लता ।

विज्जोहा—संज्ञा पुं० [सं० विमोहा] दे० 'विजोहा' ।

विज्ञ¹—वि० [सं०] १. जो जानता हो । जानकार । २. बुद्धिमान् । समझदार । ३. विद्वान् । पंडित ।

विज्ञ^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुद्धिमान् व्यक्ति। पंडित। २. मुनि। ऋषि [को०]।

विज्ञता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विज्ञ होने का भाव। जानकारी। २. बुद्धिमत्ता। ३. पांडित्य। विद्वत्ता।

विज्ञत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विज्ञता'।

विज्ञप्त—वि० [सं०] जो बतलाया या सूचित किया गया हो। जतलाया हुआ।

विज्ञप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जतलाने या सूचित करने की क्रिया। २. विज्ञापन। इश्तहार। ३. शिक्षा। उपदेश (को०)। ४. निवेदन। प्रार्थना (को०)।

विज्ञप्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रार्थना। निवेदन।

विज्ञबुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] जटामासी।

विज्ञराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऋषिश्रेष्ठ। २. पंडितराज [को०]।

विज्ञात—वि० [सं०] १. जाना या समझा हुआ। २. प्रसिद्ध। मशहूर।

विज्ञातवीर्य—वि० [सं०] जिसकी शक्ति प्रख्यात हो [को०]।

विज्ञातव्य—वि० [सं०] जो जानने या समझने के योग्य हो।

विज्ञातस्थाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] सामान्य ढंग से तैयार किया हुआ पात्र [को०]।

विज्ञाता—संज्ञा पुं० [सं० विज्ञातृ] वह जो जानता या समझता हो।

विज्ञातार्थ—वि० [सं०] जो स्थिति को जानता हो या जो उससे अच्छी तरह परिचित हो।

विज्ञाति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ज्ञान। समझ। २. जानकारी। ३. एक प्रकार की देवयोनि जिसे गय भी कहते हैं। ४. एक कल्प का नाम।

विज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्ञान। जानकारी। २. किसी विशिष्ट विषय के तत्वों या सिद्धांतों आदि का विशेष रूप से प्राप्त किया हुआ ज्ञान जो ठीक क्रम से एकत्र या संगृहीत हो। किसी विषय की जानी हुई बातों का ठीक तरह से किया हुआ संग्रह जो एक अलग शास्त्र के रूप में हो। शास्त्र। जैसे,—पदार्थ विज्ञान, राजनीति विज्ञान, शरीर विज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान, समाजविज्ञान आदि। ३. किसी विषय का अनुभवजन्य, पूरा और अच्छा ज्ञान। कार्यकुशलता। ४. कर्म। ५. माया या अविद्या नाम की वृत्ति। ६. बौद्धों के अनुसार आत्मा के स्वरूप का ज्ञान। आत्मा का अनुभव। ७. ब्रह्म। ८. आत्मा। ९. आकाश। १०. निश्चयात्मिका बुद्धि। ११. मोक्ष। १२. संगीत (को०)। १३. चौदह विद्याओं का ज्ञान (को०)। १४. व्यवसाय। नियोजन (को०)।

विज्ञानकृत्स्न—संज्ञा पुं० [सं०] तंत्र का एक कृत्स्न। (बौद्ध०)।

विज्ञानकेवल—संज्ञा पुं० [सं०] जीवात्मा [को०]।

विज्ञानकोश—संज्ञा पुं० [सं०] वेदांत के अनुसार ज्ञानेंद्रियाँ और बुद्धि। विज्ञानमय कोश। विशेष दे० 'कोष'।

विज्ञानघन—संज्ञा पुं० [सं०] केवल ज्ञान। विशुद्ध ज्ञान [को०]।

विज्ञानता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विज्ञान का भाव या धर्म।

विज्ञानपति—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो परम ज्ञानी हो।

विज्ञानपाद—संज्ञा पुं० [सं०] वेदव्यास का एक नाम।

विज्ञानमय—वि० [सं०] प्रज्ञायुक्त। विशुद्ध ज्ञान से मंडित [को०]।

विज्ञानमय कोष—संज्ञा पुं० [सं०] ज्ञानेंद्रियों और बुद्धि का समूह। विशेष दे० 'कोष'।

विज्ञानमातृक—संज्ञा पुं० [सं०] बुद्धि का एक नाम।

विज्ञानयोग—संज्ञा पुं० [सं०] शुद्ध ज्ञान तक पहुँचने का साधन। प्रमाण [को०]।

विज्ञानवाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह वाद या सिद्धांत जिसमें ब्रह्म और आत्मा की एकता प्रतिपादित हो। उ०—विज्ञानवाद को मैं अब तक इतना प्रिय समझता था।—मानव०, पृ० ४१७। २. वह वाद या सिद्धांत जिसमें केवल आधुनिक विज्ञान की बातें ही प्रतिपादित या मान्य की गई हों।

विज्ञानवादी—संज्ञा पुं० [सं० बिज्ञानवादिन्] १. वह जो योग के मार्ग का अनुसरण करता हो। योगी। २. वह जो आधुनिक विज्ञान शास्त्र का पक्षपाती हो। विज्ञान के मत का समर्थन करनेवाला।

विज्ञानहंस—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'परमहंस'। उ०—और ब्रह्मज्ञानी से बढ़कर विज्ञानहंस है।—कबीर मं०, पृ० ३०६।

विज्ञानिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. जिसे ज्ञान हो। २. विज्ञ। पंडित। ३. दे० 'वैज्ञानिक'।

विज्ञानिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विज्ञानी का भाव या धर्म। किसी विषय का पूर्ण ज्ञान।

विज्ञानी—संज्ञा पुं० [सं० विज्ञानिन्] १. वह जिसे किसी विषय का अच्छा ज्ञान हो। २. वह जो किसी विज्ञान का अच्छा वेत्ता हो। वैज्ञानिक। ३. वह जिसे आत्मा तथा ईश्वर आदि के स्वरूप के संबंध में विशेष ज्ञान हो।

विज्ञानीय—वि० [सं०] विज्ञान संबंधी। वैज्ञानिक।

विज्ञानेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] एक महात्मा का नाम जिन्होंने याज्ञवल्क्य स्मृति की व्याख्या मिताक्षरा नाम से की थी। उ०—हिंदू व्यवहार के प्रसिद्ध व्याख्याता तथा 'मिताक्षरा' के के उन्नायक तथा विधायक विज्ञानेश्वर उसी के आश्रय में रहते थे।—आ० भा०, पृ० ५५८।

विज्ञापक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विज्ञापन करता हो। समझाने, बतलाने या जतलानेवाला।

विज्ञापन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विज्ञापनीय] १. किसी बात को बतलाने या जतलाने की क्रिया। जानकारी कराना। सूचना देना। २. वह पत्र या सूचना आदि जिसके द्वारा कोई बात लोगों को बतलाई जाय। इश्तहार। ३. निवेदन। प्रार्थना (को०)।

विज्ञापना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विज्ञप्त करना। जतलाना। बतलाना। २. निवेदन (को०)।

विज्ञापनीय—वि० [सं०] १. जो बतलाने या जतलाने के योग्य हो। सूचित करने के योग्य। २. निवेदनीय। प्रार्थनीय।

विज्ञापित—वि० [सं०] १. जो बतलाया जा चुका हो जिसकी सूचना दी जा चुकी हो। २. जिसका इश्तहार दिया जा चुका हो।

विज्ञापी—वि० [सं० विज्ञापिन्] जतलाने या बतलानेवाला। सूचना देनेवाला।

विज्ञाप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विज्ञप्ति'।

विज्ञाप्य[१]—वि० [सं०] बतलाने योग्य। सूचित करने योग्य।

विज्ञाप्य[२]—संज्ञा पुं० [सं०] प्रार्थना। निवेदन [को०]।

विज्ञिप्सु—वि० [सं०] जतलाने, सूचना देने अथवा निवेदन करने का अभिलाषी। [को०]।

विज्ञेय—वि० [सं०] १. जो जानने, सीखने, या समझने के योग्य हो। २. सम्मान्य (को०)।

विज्य—वि० [सं०] जिस धनुष से कसी डोर उतार दी गई हो। (वह धनुष) जिसमें डोर न हो। २. (धनुष) जो गुण या प्रत्यंचा विहीन हो [को०]।

विज्वर—वि० [सं०] १. जिसका ज्वर उतर गया हो। जिसका बुखार छूट गया हो। २. जिसे सब प्रकार की चिंताओं से छुटकारा मिल गया हो। निश्चित। बेफिक्र। ३. जो सब प्रकार के क्लेशों आदि से मुक्त हो। जिसे किसी प्रकार का शोक या सताप न हो।

विझर्झर—वि० [सं०] १. अप्रिय। २. विषम। बेमेल [को०]।

विटंक[१]—वि० [सं० विटङ्क] सुंदर। मनोहर।

विटंक[२]—संज्ञा पुं० १. सब से ऊँचा सिरा या स्थान। २. पक्षियों का पिंजड़ा। कबूतर का दरबा। काबुक। ३. बड़ी ककड़ी।

विटंकक[१]—वि० संज्ञा पुं० [सं० विटङ्कक] दे० 'विटंक' [को०]।

विटंकित—वि० [सं० विटङ्कित] १. टंकित। मुद्रांकित। २. उत्थित। खड़ा हुआ। अंचित [को०]।

विट—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसमें कामवासना बहुत अधिक हो। कामुक। लपट। २. वह जो किसी वेश्या का यार हो या जिसने किसी वेश्या को रख लिया हो। ३. धूर्त। चालाक। ४. साहित्य में एक प्रकार का नायक। साहित्यदर्पण के अनुसार जो व्यक्ति विषय भोग में अपनी सारी संपत्ति नष्ट कर चुका हो, भारी धूर्त हो, फल या परिणाम का एक ही अंग देखता हो, वेष भूषा और बातें बनाने में बहुत चतुर हो, वह विट कहलाता है। ५. एक पर्वत का नाम। ६. एक प्रकार का खर जिसे 'दुर्गंध खैर' भी कहते हैं। ७. नारंगा का वृक्ष। ८. चूहा। ९. साँचर नमक। १०. विष्ठा। गुह। मल। उ०—(क) कवि भस्म विट परिनाम तन तेहि लागि जगु बैरी भयो। (ख) पाछे तें शूकर सुत आवा। विट ऊपर मुख मारि गिरावा।—विश्राम (शब्द०)। ११. (नाटक में) एक पात्र। नायक का सखा (को०)। १२. गांडू। इल्लती (को०)। १३. पल्लवयुक्त शाखा। पत्तोंवाली डाली (को०)।

विटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल की एक जाति का नाम। २. पुराणानुसार एक प्राचीन देश जो नर्मदा नदी के तट पर था। ३. फोड़ा। व्रण।

विटकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० विटकान्ता] हरिद्रा। हल्दी [को०]।

विटका—संज्ञा स्त्री० [सं०] विटों के मिलने का कक्ष [को०]।

विटकारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पक्षी।

विटकृमि—संज्ञा पुं० [सं०] चुन्ना या चुनचुना नाम का कीड़ा जो बच्चों की गुदा में उत्पन्न होता है।

विटप—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृक्ष या लता की नई शाखा। कोंपल। २. छतनार पेड़। झाड़ी। ३. वृक्ष। पेड़। उ०—ठहर गए नृप वहीं विटप की छाँह में, हुआ विस्फुरण शकुनरूप वर बाँह में।—शकुं०, पृ० ४७। ४. आदित्य पत्र। ५. विस्तार। फैलाव (को०)। ६. लता (को०)। ७. अंडकोश पटल (को०)।

विटपक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुष्ट। पाजी। २. वृक्ष (को०)।

विटपि—संज्ञा पुं० [सं० विटपी] दे० 'विटपी'। उ०—नियममयी उलझन लतिका का भाव विटपि से आकर मिलना। जीवन वन की बनी समस्या आशा नभकुसुमों का खिलना।—कामायनी, पृ० २६५।

विटपिमृग—संज्ञा पुं० [सं०] वानर। बंदर [को०]।

विटपी—संज्ञा पुं० [सं० विटपिन्] १. जिसमें नई शाखाएँ या कोंपलें निकली हों। २. वृक्ष। पेड़। उ०—बढ़ते हैं विटपी जिधर चाहता मन है।—साकेत, पृ० २१२। ३. अंजीर का पेड़। ४. वट वृक्ष। बड़ का पेड़।

विटपीमृग—संज्ञा पुं० [सं०] शाखामृग। बंदर।

विटपेटक—संज्ञा पुं० [सं०] धूर्तमंडली। धूर्तों का समुदाय [को०]।

विटप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] मोगरा नामक फूल या उसका पौधा।

विटभूत—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक असुर का नाम।

विटमाक्षिक—संज्ञा पुं० [सं०] सोनामक्खी नाम का खनिज द्रव्य।

विटलवण—संज्ञा पुं० [सं०] साँचर नमक।

विटवल्लभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाटली वृक्ष।

विटाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. धूर्तों का मिलन कक्ष। विट लोगों का आश्रय या गृह। २. एक प्रकार का मुस्तक या मोथा [को०]।

विटि, विटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लाल चंदन। २. पीत चंदन [को०]।

विट्—संज्ञा पुं० [सं०] साँचर नमक।

विट्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष। जहर। २. मल (को०)।

विट्घात—संज्ञा पुं० [सं०] मूत्राघात नामक रोग।

विट्चर—संज्ञा पुं० [सं०] गाँवों में रहनेवाला सूअर।

विट्ठल—संज्ञा पुं० [सं०] पंढरपुर (महाराष्ट्र) की विष्णु की एक मूर्ति का नाम।

विट्पति—संज्ञा पुं० [सं०] जामाता। दामाद।

विट्प्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुमार या सूँस नामक जलजंतु।

विट्शूल—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का शूल रोग।

विट्संग—संज्ञा पुं० [सं० विट्सङ्ग] मलरोध। कब्जियत।

विट्सारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पक्षी।

विठंक—वि० [सं० विठङ्क] नीच। दुर्वृत्त। कमीना [को०]।

विठर—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहस्पति का एक नाम। २. बावदूक। वाग्मी व्यक्ति। पंडित ३. मूर्ख आदमी [को०]।

विठल—संज्ञा पुं० [सं० विट्ठल ?] दे० 'विट्ठल'।

विठोबा—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'विट्ठल'।

विठ्ठल—संज्ञा पुं० [सं० या सं० विष्टरश्रवस् = विष्णु (कृष्ण) के एक नाम का संक्षिप्त रूप, स० विष्टर > प्रा० विठ्ठल] १. विष्णु या कृष्ण की एक मूर्ति जो पंढरपुर में है।

विठ्ठलनाथ—संज्ञा पुं० [हिं०] वल्लभाचार्य के द्वितीय पुत्र का नाम जिन्होंने 'वल्लभ मत' के आठ प्रधान भक्त कवियों को लेकर 'अष्ट छाप' की स्थापना की।

विडंग^1—संज्ञा पुं० [सं० विडङ्ग] बायविडंग।

विडंग^2—वि० अभिज्ञ। जानकार। निपुण [को०]।

विडंग^3—संज्ञा पुं० [देश०] अश्व। घोड़ा। उ०—तिणिमइ लेस्या टालिमा वाँकड मुहाँ विडंग—ढोला०, दू० २२७।

विड़ँग(पु)—संज्ञा पुं० [देश०] घोड़ा। उ०—निस प्रथम जाम आलोभनर, दारुण सोनागिर दुरग। कर वाचपाद अकबर कुशल, वीदहरे सझिया विड़ँग।—रा० रू०, पृ० १७०।

विडंगी(पु)—वि० [हिं० बेढंग] बेढंगो। उ०—आया मृग मार सेसनूँ आखे बंधव सुणो सबीता। दारुण कुटी विडंगी दीसै सही गमाई सीता।—रघु० रू०, पृ० १३८।

विडंब^1—संज्ञा पुं० [सं० विडम्ब] १. नकल। अनुकरण। २. दुखी करना। तंग करना। ३. मजाक। परिहास। ठिठोली [को०]।

विडंब—वि० अनुकरण करनेवाला। नकल करनेवाला।

विडंबक—संज्ञा पुं० [सं० विडम्बक] १. ठीक ठीक अनुकरण करनेवाला। पूरी पूरी नकल करनेवाला। २. अनुकरण करके चिढ़ाने या अपमान करनेवाला। ३. निंदा या परिहास करनेवाला।

विडंबन—संज्ञा पुं० [सं० विडम्बन] १. किसी के रंगढंग या चाल-ढाल आदि का ठीक ठीक अनुकरण करना। पूरी पूरी नकल करना। २. चिढ़ाने या अपमानित करने के लिये नकल करना। भाँड़पन करना। मजाक करना। मजाक का विषय बनाना। ३. निंदा या उपहास करना। ४. धोखेबाजी। जालसाजी (को०)। ५. क्लेश। संताप (को०)। ६. निराश करना (को०)।

विडंबना—संज्ञा स्त्री० [सं० विडम्बना] [वि० विडंबनीय, विडंबित] १. अनुकरण करना। नकल उतारना। २. किसी को चिढ़ाने या बनाने के लिये उसकी नकल उतारना। ३. हँसी उड़ाना। मजाक करना। ४. हँसी का विषय। उ०—संसार के समस्त अभावों को असंतोष कहकर हृदय को धोखा देता रहा। परंतु कैसी विडंबना! लक्ष्मी के लालों के भ्रूभंग और क्षोभ की ज्वाला के अतिरिक्त मिला क्या?—स्कंद०, पृ० १६। ५. डाँटना डपटना। फटकारना। दे० 'विडंबन'।

विडंबनीय—वि० [सं० विडम्बनीय] १. जो अनुकरण करने के योग्य हो। नकल उतारने लायक। २. चिढ़ाने या उपहास करने योग्य। दे० 'विडंबित'।

विडंबित—वि० [सं० विडम्बित] १. नकल किया हुआ। २. जिसका परिहास किया गया हो। ३. वंचित। छला हुआ। ४. संतप्त किया हुआ। जो हताश किया गया हो। ५. नीच। हेय। कमीना।

विडंबी—संज्ञा पुं० [सं० विडम्बिन्] वह जो किसी प्रकार की विडंबना करता हो। विडंबना करनेवाला।

विडंब्य—संज्ञा पुं० [सं० विडम्ब्य] वह जो विडंबना के लायक हो। उपहास का विषय [को०]।

विड—संज्ञा पुं० [सं०] १. विट् लवण। काला नमक। २. खंड। अंश। टुकड़ा (को०)।

विडगंड—संज्ञा पुं० [सं० विडगण्ड] विट् लवण। साँचर नामक।

विड़द†—संज्ञा पुं० [हिं० बिरद] दे० 'विरुद'। उ०—भाट विड़द तिहाँ ऊचरै। धनि धनि हो वीसल चहूँवाण।—बी० रासो, पृ० ११०।

विडरना(पु)†—क्रि० अ० [सं० विघारित ? या सं० तलव, हिं० डालना या सं० वितरण] १. इधर उधर होना। तितर बितर होना। उ०—(क) विडरत बिझुकि जानि रथ ते मृग जनु ससंकि शशि लंगर सारे।—सूर (शब्द०)। (ख) जानत नहीं कौन गुण यहि तन जाते सब विडरे।—सूर०। २. भागना। दौड़ना। उ०—ढ़ाँके मुगल ताल की जोरी। भजें विडरि बालक चहुँ ओरी।—छत्रप्रकाश (शब्द०)। ३. चौंकना। भौचक होना। ४. डरना। भीत होना।

विडराना(पु)†—क्रि० स० दे० 'विडारना'।

विडाँणा, विडाणा(पु)†—वि० [देश०] [वि० स्त्री० विडाँणी] बिराना। विगाना। पराया। उ०—(क) थल मथ्थइ ऊजासड़इ, थे इण केहइ रंग। धण लीजइ प्री मारिजइ, छाँड़ि विड़ाँणउ संग।—ढोला०, दू० ६३२। (ख) रामनाम निशि दिन भजो तजो विडाणी तात। जन हरिया नर देह सो औसर बीतो जात।—राम० धर्म०, पृ० ५८। (ग) आँखडियाँ डंबर हुई नयण गमाया रोय। से साजण परदेश मइँ रह्या विडाणा होय।—ढोला०, दू० १६५।

विडारक—संज्ञा पुं० [सं०] विडाल। बिल्ली।

विडारना—क्रि० स० [हिं० विडरना का सक० रूप] १. तितर बितर करना। इधर उधर करना। छितराना। उ०—हारे लै विडारे जोइ। पति पै पुकारे कहो वजमारे मति जोवो हरि गाम।—नाभादास (शब्द०)। २. नष्ट करना। उ०—विष्वकसेन रूप हरि लेगे कोन्हों शिव को हेत। असुर मारि सब तुरत विडारे दीन्हे रुद्र निकेत।—सूर (शब्द०)। ३. भगाना। दौड़ाना। ४. चौंकाना। आश्चर्यचकित कर देना।

विडाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. आँख का पिंड। २. आँख की एक प्रकार की दवा जो जेठी मधु, गेरू, दारु हल्दी और रसांजन आदि से बनती है और जिसका आँख के चारों ओर लेप किया जाता है। ३. आँख के चारों ओर किया जानेवाला कोई लेप। ४. बिल्ली। ५. गंधमार्जार। मुश्क बिलाव। ६. हरताल। दे० 'बिडाल'।

विडालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. हरताल। २. बिल्ली। ३. आँख की एक औषध। विडाल।

विडालपद—संज्ञा पुं० [सं०] दो तोले का परिमाण।

विडालपदक—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक परिभाषा के अनुसार एक कर्म का परिमाण।

विडालाक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम जो महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में गया था।

विडालाक्षी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक राक्षसी का नाम [को॰]।

विडाली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विदारी कंद। २. बिल्ली।

विडीन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पक्षियों की उड़ान का एक प्रकार।

विडीनक—संज्ञा सं॰ [सं॰] पक्षियों की उड़ान का एक भेद। पक्षियों का अलग अलग होकर उड़ना [को॰]।

विड्डुल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का बेत [को॰]।

विड्डूरज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक बहुमूल्य रत्न। वैदूर्य मणि [को॰]।

विडोजा, विडौजा—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विडोजस् विडौजस्] इंद्र का एक नाम।

विड्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विड' [को॰]।

विड्गंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विड्गन्ध] विड लवण।

विड्ग्रह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कोष्ठबद्धता। कब्जियत। मलरोध।

विड्घात—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मलमूत्र का अवरोध। पेशाब और पाखाना रुकना।

विड्ज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विष्ठा आदि से उत्पन्न होनेवाले कीड़े मकोड़े।

विड्ड—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अस्थि। हड्डी [को॰]।

विड्ढल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विठ्ठल' [को॰]।

विड्बंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विड्बन्ध] मल का अवरोध। कब्जियत।

विड्भंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विड्भङ्ग] बहुत दस्त होना। पेट चलना।

विड्भव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विड्ज' [को॰]।

विड्भुक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ बिड्भुज्] १. गुबरैला। २. सूअर [को॰]।

विड्भेद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बहुत दस्त होना। पेट चलना।

विड्भेदी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विड्भेदिन्] वह ओषधि या द्रव्य जो विरेचक हो। दस्तावर चीज या दवा।

विड्भोजी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विड्भोजिन्] वह जो विष्ठा खाता हो। शूकर, गुबरैला आदि।

विड्लवण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विट्लवण। साँचर नमक।

विड्वराह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] गाँवों में रहनेवाला सूअर।

विड्विघात—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का मूत्रघात रोग।

विढना(पु)†—क्रि॰ अ॰ [सं॰ वि + दहन तुल॰ हिं॰ बेढ़ना] युद्ध करना। भिड़ना उ॰—आया साह अलावदी, विढ कटकाँसूँ वीर।—बाँकी॰ ग्रं॰, भा॰ १, पृ॰ ८१।

विणज†—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वणिज्] व्यापार उ॰—दारुण नगर साक जुत देखे। दोलत विणाज बजार न देखे।—रघु॰रू॰, १।११२।

विणठना†—क्रि॰ अ॰ [सं॰ विनष्ट, प्रा॰ विणट्ठ + हिं॰ ना (प्रत्य॰)] नष्ट होना। उ॰—तन विणठा जीउ खेलिया छाडि चलिया घर बारु।—प्राण॰, पृ॰ २५९।

विणसना†—क्रि॰ अ॰ [सं॰ विनशन] नष्ट होना। उ॰—कलिजुग पाप जअनतरयो रजि के कारण विणसस लंक।—बी॰ रासो, पृ॰ ८९।

विणास†—संज्ञा पुं॰ [प्र॰] दे॰ 'विनाश'। उ॰—अस्त्री चरित गति को लहइ? एकइँ आखर रस सबइ विणास।—बी॰ रासो, पृ॰ २।

वितंड—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वितण्ड] १. हाथी। २. एक प्रकार का ताला (को॰)।

वितंडा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वितण्डा] १. न्यायशास्त्र में सोलह प्रकार की तर्क प्रणालियों में से एक। दूसरे के पक्ष को दबाते हुए अपने मत की स्थापना करना। २. व्यर्थ का झगड़ा या कहासुनी। ३. कचूर। ४. दर्वी। ५. करवीरी (को॰)। ६. शिलारस।

वितंडावाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वितण्डावाद] व्यर्थ के तर्क का आश्रय लेना। उ॰—आधुनिक प्रवृत्तियों को प्रवाद और वितंडावाद कहकर उनकी निंदा की थी।—आचार्य॰, पृ॰ १४०।

वितंत(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वि॰ + तन्त्र] वह बाजा जिसमें तार न लगे हों। बिना तार का बाजा। उ॰—तंत वितंत सुअघन बाजहिं शब्द होय झनकारा।—जायसी (शब्द॰)।

वितंतु^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वितन्तु] ऊँचो जाति का घोड़ा। अच्छा घोड़ा [को॰]।

वितंतु^{2}—संज्ञा स्त्री॰ पतिहीना स्त्री। विधवा [को॰]।

वितंत्री—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वितन्त्री] वह वीणा जिसके तारों के स्वरों में एकरूपता न हो [को॰]।

वितंस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पक्षियों अथवा छोटे छोटे पशुओं आदि को फँसाने का जाल। २. पिंजड़ा (को॰)।

वित(पु)—वि॰ [सं॰ विद्] १. जाननेवाला। ज्ञाता। उ॰—सब शस्त्र विसारद अस्त्र वित विदित बली मनि जगत जित।—गोपाल (शब्द॰)। २. चतुर। निपुण। उ॰—रन जु आन रद वित नृप लस्यो करद मगध महराज को।—गोपाल (शब्द॰)।

वित(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वित्त] धन दौलत।

वितघ्नी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] छोटी अरणी।

वितड़ना‡—क्रि॰ स॰ [सं॰ वितरण] १. बाँटना। २. अर्पित करना। दान करना। उ॰—दादू ज्यौं आवै त्यौं जाइ विचारी। बिलसी वितड़ी न माथै मारी।—दादू॰, पृ॰ २३७।

वितत^{1}—वि॰ [सं॰] १. विस्तृत। फैला हुआ। २. आयत। विशाल। विस्तीर्ण (को॰)। ३. किया हुआ। संपन्न। कार्यान्वित (को॰)। ४. ढका हुआ। आच्छादित (को॰)। ५. खींचा हुआ। कर्षित। झुकाया हुआ (धनुष या ज्या)। जैसे, विततधनु, विततज्या (को॰)।

वितत^{2}—संज्ञा पुं॰ १. वीणा अथवा उससे मिलता जुलता हुआ और कोई बाजा। २. मृदंग या ढोल आदि आनद्ध बाजों से उत्पन्न होनेवाला शब्द। ३. दे॰ 'प्रतान' (को॰)।

विततधन्वा—वि॰ [सं॰ विततधन्वन्] धनुष की प्रत्यंचा या डोरी को खींचनेवाला [को॰]।

विततवपु—वि॰ [सं॰] लंबे चौड़े शरीरवाला [को॰]।

वितताना(पु)—क्रि॰ अ॰ [सं॰ व्यथा] व्याकुल होना। बेचैन होना। उ॰—देखे आइ तहाँ हरि नाहीं, चितवति जहाँ तहाँ विततानी।—सूर (शब्द॰)।

विततायुध—वि॰ [सं॰] जिसने धनुष की प्रत्यंचा या डोरी कान तक तान दी हो [को॰]।

वितति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विस्तार। फैलाव। आतिशय्य। आधिक्य। २. संग्रह। गुल्म। झुंड (को०)। ३. रेखा। कतार। पंक्ति (को०)।

विततोत्सव—वि० [सं०] जिसने उत्सव की व्यवस्था की हो [को०]।

वितथ—वि० [सं०] [संज्ञा वितथता] १. मिथ्या। झूठ। २. व्यर्थ। निरर्थक। बेफायदा।

वितथता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वितथ का भाव। मिथ्यात्व।

वितथप्रयत्न—वि० [सं०] निष्फल यत्न करनेवाला।

वितथमर्याद—वि० [सं०] अनाचारी। आचारहीन [को०]।

वितथवादी—वि० [सं० वितथवादिन्] असत्यभाषी।

वितथाभिनिवेश—संज्ञा पुं० [सं०] असत्य बोलने की प्रवृत्ति या आदत [को०]।

वितथ्य—वि० [सं०] १. मिथ्या। असत्य। झूठ। २. व्यर्थ। निरर्थक।

वितद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] पंजाब की वितस्ता या झेलम नदी का एक नाम।

वितन(पु)—वि०, संज्ञा पुं० [सं० वितनु] दे० 'वितनु'।

वितनिता—वि०, संज्ञा [सं० वितनितृ] विस्तृत करनेवाला। वह जो विस्तृत करता हो। विस्तारक।

वितनु¹—वि० [सं०] १. जो बहुत ही सूक्ष्म हो। २ शरीररहित (को०)। ३. सुंदर (को०)। ४. कोमल। मृदु (को०)। ५. निस्तत्व। सारहीन (को०)।

वितनु²—संज्ञा पुं० कामदेव [को०]।

वितपन्न¹—संज्ञा पुं० [सं० व्युत्पन्न] वह जो किसी काम में कुशल हो। व्युत्पन्न। दक्ष। प्रवीण। उ०—(क) सूरज प्रभु वितपन्न कोक गुन ताते हरि हरि ध्यावत।—सूर (शब्द०) (ख) संगहि रहति सदा पिय प्यारी क्रीड़त करति उपाधा। कोककला वितपन्न भई हौ कान्हरूप तनु आधा।—सूर (शब्द०)।

वितपन्न²—वि० [सं० विपद् + पन्न = विपन्न] घबराया हुआ। व्याकुल। उ०—उनहि मिले वितपन्न भई अब वै दिन गए भुलाइ।—सूर (शब्द०)।

वितमस्क—वि० [सं०] जिसमें अंधकार न हो। २. जिसमें तमोगुण न हो।

वितमा—वि० [सं० वितमस्]। दे० 'वितमस्क' [को०]।

वितर—वि० [सं०] जो आगे पहुँचावे (मार्ग आदि)। आगे पहुँचानेवाला [को०]।

वितरक—संज्ञा पुं० [सं०] वितरण करनेवाला। बाँटनेवाला। उ०—तुनु धुनि पूरत ताते नूपुर वितरक अर्थ सुरायन में।—देवस्वामी (शब्द०)।

वितरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. दान करना। अर्पण करना। देना। २. बाँटना। ३. वितरक (को०)। ४. पार करना। पार जाना (को०)। ५ छोड़ देना। त्याग करना। तिलांजलि देना (को०)।

वितरन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वितरण] १. बाँटनेवाला। वितरण करनेवाला। जैसे—तरन तरन दुत भवतरन वितरन सुख हित रनकरन।—गोपाल (शब्द०)। २. दे० 'वितरण'। उ०—कछु दिन प्रभु तहँ किणो निवासा। वितरन वैष्णव वृंद हुलासा।—रघुराज (शब्द०)।

वितरना(पु)—क्रि० स० [सं० वितरण] वितरण करना। बाँटना। उ०—(क) ये लहुरे अति रहैं उदारा। वितरहिं सब को द्रव्य अपारा।—रघुराज (शब्द०)। (ख) सुवरण तनु तिनके किए, सुवरण वितरि अपार।—रघुराज (शब्द०)।

वितरिक्त(पु)—अव्य० [सं० व्यतिरिक्त] अतिरिक्त। सिवा। उ०—हरि वितरिक्त जाहि शिर नावै मूरति तुरत फूटि सो जावे।—रघुराज (शब्द०)।

वितरित—वि० [सं०] जो वितरण किया गया हो। बाँटा हुआ।

वितरिता—वि० संज्ञा पुं० [सं० वितरितृ] १. वितरण करनेवाला। बाँटनेवाला। २. दान देनेवाला [को०]।

वितरेक(पु)¹—संज्ञा पुं० [सं० व्यतिरेक] व्यतिरेक अलंकार। दे० 'व्यतिरेक'।

वितरेक(पु)²—क्रि० वि० [सं० व्यतिरिक्त] छोड़कर। सिवा। उ०—वितरेक तोहि निर्दय महाबल आनु कहु को कहि सकै।—तुलसी (शब्द०)।

वितर्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक तर्क के उपरांत होनेवाला दूसरा तर्क। युक्ति। दलील। २. सदेह। शक। ३. अटकल। अनुमान। ४. एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें किसी प्रकार के संदेह या वितर्क का उल्लेख होता है और कुछ निर्णय नहीं होता। ६. विचार विनिमय (को०)। ७. आध्यात्मिक गुरु (को०)। ८. अभिप्राय। प्रयोजन (को०)।

वितर्कण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वादविवाद। २. तर्क करने की क्रिया। ३. संदेह। ४. अटकल करना। अंदाज लगाना [को०]।

वितर्कित—वि० [सं०] विचारित [को०]।

वितर्क्य—वि० [सं०] १. जिसमें किसी प्रकार के वितर्क या संदेह का स्थान हो। २. जो विचार करने योग्य हो (को०)। ३. जो देखने में बहुत विलक्षण हो।

वितर्दि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वेदी। मंच। वेदिका। २. छज्जा। बरामदा (को०)।

वितर्दिका, वितर्दी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वितर्दि' [को०]।

वितर्द्धि, वितर्द्धिका, वितर्द्धी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वितर्दि' [को०]।

वितल—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार सात पातालों में से तीसरा पाताल।

विशेष—देवी भागवत के अनुसार यही दूसरा पाताल है। कहते हैं, इस पाताल में शिव जी 'हाटकेश्वर' नाम से अपने पार्षदों के साथ रहते हैं। इनके वीर्य से हाटकी नाम की नदी बहती है जिसे हुताशन पीते हैं। उन्हीं हुताशन के मुँह से जब फुफकार निकलता है, तब उससे हाटक नामक सोना निकलता है।

वितली—संज्ञा पुं० [सं० वितलिन्] वितल लोक को धारण करनेवाले, बलदेव। उ०—वलिनं मुशलिनं देव हलिनं वितलिनं स्वयं।—गर्गसंहिता (शब्द०)।

वितष्ठ—वि० [सं०] १. काटा हुआ। २. खोदा हुआ। ३. समतल या हमवार किया हुआ [को०]।

वितसारू‡—१. अव्य० [देश० या सं० वित्त+सार] यथाशक्ति। उ०—दान सदा वितसारू देवै, नित रसणा लेवै हरिनाम। —रघु० रू०, पृ० २४।

वितस्त—संज्ञा पुं० [सं० वितस्ति] वितस्ति। बालिश्त। एक बित्ता। बारह अंगुल।

वितस्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] पंजाब की झेलम नामक नदी का प्राचीन नाम। उ०—वितस्तातीर स्वच्छ स्थल।—का० सुषमा, पृ० १।

वितस्ताख्य—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार तक्षक नाग का निवासस्थान।

वितस्ताद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] राजतरंगिणी के अनुसार एक पर्वत का नाम।

वितस्ति—संज्ञा पुं० [सं०] १. उतना परिमाण जितना हाथ अँगूठे और उँगली को पूरा पूरा फैलाने से होता है। बालिश्त। बित्ता। २. बारह अंगुल का परिमाण।

विता†—अव्य० [हिं० उतना—उत्ता] उतने। उ०—बहूँवचन विते बजाँ बहिश्त स्याँने जिते थे विते गुनहगार आदम हव्वाकर कते।—दक्खिनी०, पृ० ३३२।

विताड़न—संज्ञा पुं० [सं० विताडन] मारना। ताड़ना करना [को०]।

वितान^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ। २. विस्तार। फैलाव। ३. बड़ा चँदोआ या खेमा। ४. समूह। संघ। जमाव। ५. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बंधन जो सिर पर के आघात या घाव आदि पर बाँधा जाता है। ६. अवसर। अवकाश। ७. घृणा। नफरत। ८. शून्य खाली स्थान। ९. अग्निहोत्र आदि कर्म। १०. वेदिका। वेदी (को०)। ११. गद्दी (को०)। १२. प्राचुर्य। आधिक्य (को०)। १३. एक प्रकार का छंद। १४. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में एक सगण, एक भगण और दो गुरु होते हैं। उ०—सुभगंगा जल तेरो। सुखादता जन केरो। नसिकै भौ दुख नाना। जस को तान विताना।—जगन्नाथ (शब्द०)।

वितान^2—वि० १. मंद। धीमा। २. शून्य। खाली। ३. उदास। हतोत्साह (को०)। ४. जड़ बुद्धिहीन। ५. खल। दुष्ट (को०)। ६. सारहीन। तुच्छ (को०)।

वितानक^1—संज्ञा पुं० [सं०] धनिया।

वितानक^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. बड़ा चँदोआ या खेमा। २. समूह। जमावड़ा। ३. धन। संपत्ति। ४. बिछाने की बड़ी चाँदनी (को०)। ५. माड नामक वृक्ष (को०)।

वितानना(पु)†—क्रि० स० [सं० वितान] १. शामियाना आदि तानना। २. कोई चीज तानना। उ०—मनी हीन छीन फनी, मीन बारि सों बिहीन ह्वै कै मलीन मति दीनता वितानई।—रसकुसुमाकर (शब्द०)।

वितानमूल—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

वितानमूलक—संज्ञा पुं० [सं०] उशीर। गाडर। खस।

वितामस^1—संज्ञा पुं० [सं०] प्रकाश। उजाला।

वितामस^2—वि० १. जिसमें तमोगुण न हो। २. अंधकार रहित।

वितार—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहत्संहिता के अनुसार एक प्रकार का केतु या पुच्छल तारा। २. वह रात्रि जिसमें तारे न हों।

वितारक—संज्ञा पुं० [सं०] विधारा नामक जड़ी।

विताल—वि० [सं०] १. अशुद्ध (ताल)। २. (संगीत में) तालहीन [को०]।

वितिक्रम(पु)—संज्ञा पुं० [सं० व्यतिक्रम] क्रम का भंग होना। व्यतिक्रम। गड़बड़ी। उ०—प्रीति परीक्षा तिहुन की बैर वितिक्रम जानि।—तुलसी (शब्द)।

वितिमिर—वि० [सं०] अंधकाररहित [को०]।

वितिलक—वि० [सं०] सांप्रदायिक तिलक से हीन ललाटवाला [को०]।

वितिहोतर—संज्ञा पुं० [सं० वीतिहोतृ] अग्नि। (डिं०)।

वितीत(पु)†—वि० [सं० व्यतीत] दे० 'व्यतीत'। उ०—आम मंजरी संग सनेह सों कछु दिन करत वितीत।—सं० शा० (शब्द०)।

वितीपात—संज्ञा पुं० [सं० व्यतीपात] एक योग। दे० 'व्यतीपात'।

वितीपाती—संज्ञा पुं० [सं० व्यतीपात+हिं० ई (प्रत्य०)] वह जो बहुत अधिक उपद्रव करता हो। पाजी। शरारती (लड़का)।

वितीर्ण^1—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वितरण'।

वितीर्ण^2—वि० दे० 'उत्तीर्ण'।

वितुंड—संज्ञा पुं० [सं० वि०+तुण्ड] हाथी। उ०—(क) जादो पुंड के वितुंड चित्र तुंड झुंड झुंड मुंड घरे कुंड सुंड कुंडल करे करे।—गोपाल (शब्द०)। (ख) तहँ वसिष्ठ आदिक मुनिराई। चढ़े वितुंडन आनंद छाई।—रघुराज (शब्द०)।

वितु(पु)‡—संज्ञा पुं० [सं० बित्त] धन। संपत्ति। उ०—दै चितु कै हित लै सब छबि वितु विधि निज हाथ सँवारे।—तुलसी (शब्द०)।

वितुड—संज्ञा पुं० [सं०] नीला थोथा। तूतिया।

वितुद—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक साहित्य के अनुसार एक प्रकार की भूतयोनि।

वितुन्न^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिरियारी या सुसना नामक साग। २. सेवार।

वितुन्न^2—वि० छिन्न। चीरा या काटा हुआ [को०]।

वितुन्नक—संज्ञा पुं० [सं०] १. धनिया। २. तूतिया। ३. कैवर्तमुस्तक। ४. भुइँ आँवला। ५. कान का छेद जिसमें आभूषण पहनते हैं (को०)।

वितुन्नका—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँ आँवला।

वितुन्नभूता—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला।

वितुन्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला।

वितुन्निका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वितुन्ना'।

वितुष—वि० [सं०] तुषहीन। तुषरहित। जिसका छिलका निकाल लिया गया हो [को०]।

वितुष्ट—वि० [सं०] जो संतुष्ट न हो। असंतुष्ट।

वितृट्—वि० [सं० वितृष्] तृषारहित। जिसे प्यास न हो [को०]।

वितृण—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ तृण या घास आदि न होती हो।

वितृतीय—वि० [सं०] अंतर देकर होनेवाला। जैसे, ज्वर (को०)।

वितृप्त—वि० [सं०] १. जो तृप्त या संतुष्ट न हुआ हो। २. जो पूर्ण संतुष्ट हो (को०)।

वितृप्तक—वि० [सं०] दे० 'वितृप्त' [को०]।

वितृप्तता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वितृप्त या असंतुष्ट होने का भाव।

वितृष—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसे किसी प्रकार की तृष्णा न रह गई हो। निस्पृह। उदासीन। २. वह जिसे तृषा न हो (को०)।

वितृष्ण—वि० [सं०] इच्छा या कामनारहित। तृष्णारहित [को०]।

वितृष्णा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. तृष्णा का अभाव। तृष्णा का न होना। विरक्ति। २. संतुष्टि (को०)। ४. प्रबल कामना। तीव्र इच्छा (को०)।

वितोय—वि० [सं०] निर्जल। जलविहीन [को०]।

वित्त^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. धन। संपत्ति। उ०—पर हुई गति और ही नृप चित्त की। सोच कर घटना वणिक के वित्त की।—शकुं०, पृ० ४०। २. प्राप्त वस्तु (को०)। ३. अधिकार (को०)। शक्ति (को०)। ५. सोना (को०)। ६. कुंडली के जन्मलग्न का दूसरा स्थान (को०)।

वित्त^2—वि० १. सोचा या विचारा हुआ। २. जाना या समझा हुआ। ३. मिला या पाया हुआ। ४. विख्यात। प्रसिद्ध। मशहूर। ५. परीक्षित [को०]।

वित्तक(पु)^1—संज्ञा पुं० [सं० वृत्त+क (अल्पार्थक प्रत्य०)] चरित्र। वीतक। आचरण। बात। उ०—(क) जिहि निसि सो बर वित्तक वित्ती। ज्यों राजन कैमास सु हत्ती।—पृ० रा०, ५७।११६। (ख) अब्बुअ पति पामार पह, लिय गिर गुज्जर राइ। ता पछ वित्तक वित्त यौ, कह्यौ चंद बरदाइ।—पृ० रा०, १२।१०६।

वित्तक^2—वि० [सं०] विशेष प्रसिद्ध [को०]।

वित्तकाम—वि० [सं०] धन संपत्ति की कामना रखनेवाला [को०]।

वित्तकोश—संज्ञा पुं० [सं०] रुपए पैसे आदि रखने की थैली।

वित्तगोप्ता—संज्ञा पुं० [सं० वित्तगोप्तृ] कुबेर के भंडारी का नाम।

वित्तजानि,वित्तजाय—वि० [सं०] विवाहित [को०]।

वित्तद—वि० [सं०] दानी। दाता [को०]।

वित्तदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

वित्तनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर का एक नाम।

वित्तप—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो धन की रक्षा करता हो। भंडारी। २. कुबेर का एक नाम।

वित्तपति—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर का एक नाम। उ०— लज्यो वित्तपति चित्त महँ, कहि धनि अनुज हमार। —रघुराज० (शब्द०)।

वित्तपाल—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर का एक नाम।

वित्तपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुबेर की पुरी, अलका।

वित्तपेटा,वित्तपेटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] रुपया पैसा रखने की थैली। वित्तकोश [को०]।

वित्तमात्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] धन। संपत्ति [को०]।

वित्तरक्षी—संज्ञा पुं० [सं० वित्तरक्षिन्] वह जिसके पास वित्त रक्षित हो। संपन्न व्यक्ति। धनी व्यक्ति [को०]।

वित्तराग(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वीतराग] दे० 'वीतराग'। उ०—कपडिया बीर कहा कहौ वित्ति। मन वित्तराग लै मुक्ति जित्ति—पृ० रा०, ६।८३।

वित्तवान्—संज्ञा वि० [सं० वित्तवत्] धनी [को०]।

वित्तविवर्धी—संज्ञा पुं० [सं० वित्तविवर्धिन्] १. वह जो धन की अभिवृद्धि करता हो। २. व्याज। सूद [को०]।

वित्तशाठ्य—संज्ञा पुं० [सं०] लेनदेन में धोखाधड़ी [को०]।

वित्तहीन—संज्ञा पुं० [सं०] धनहीन। दरिद्र। गरीब। उ०—सब परिवार मेरो याही लागे राजाजू हौं दीन वित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं।—तुलसी (शब्द०)।

वित्तागम—संज्ञा पुं० [सं०] १. धन की प्राप्ति या आगम। २. धन की प्राप्ति का साधन [को०]।

वित्ताढ्य—वि० [सं०] बहुत धनी [को०]।

वित्तान(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वितान] दे० 'वितान'। उ०—सिंधुजा रच्यो भक्ति वित्तान।—भक्तमाल (श्री०), पृ० ३८१।

वित्ताप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] धन की प्राप्ति।

वित्तायन—वि० [सं०] धन लानेवाला [को०]।

वित्तार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] चतुर आदमी। निपुण व्यक्ति [को०]।

वित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विचार। २. लाभ। प्राप्ति। ३. ज्ञान। ४. संभावना।

वित्तीय—वि० [सं०] वित्त संबधी। वित्त की व्यवस्था के अनुसार। जैसे, वित्तीय वर्ष।

वित्तेश—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर।

वित्तेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर।

वित्तेहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वित्तैषणा' [को०]।

वित्तैषणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] धन का लोभ। संपत्ति पाने की लालसा। उ०—लोकैषणा, वित्तैषणा तथा दारैषणा की यथोचित संतृप्तिः भौतिक तथा आध्यत्मिक सुख एवं साफल्य की प्राप्ति समीक्षा शक्ति के ऊपर ही निर्भर है।—स० दर्शन, पृ० ९६।

वित्थार(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विस्तार, विथ्थार] प्रसार। विस्तार। फैलाव।

वित्रप—वि० [सं०] निर्लज्ज। बेहया। बेशरम।

वित्रस्त—वि० [सं०] विशेष रूप से त्रस्त। बहुत डरा हुआ। उ०—यों तुम अपनी विजय घोषणा कर सकते हो क्योंकि मेरी गजवाहिनी तुम्हारे अश्वारोहियों से वित्रस्त हो चुकी है।—राज्यश्री, पृ० ५।

वित्रास—संज्ञा पुं० [सं०] आतंक। भय। डर। खौफ।

वित्रासन^1—संज्ञा पुं० [सं०] भयभीत करना। डराना [को०]।

वित्रासन^{२}—वि० भयानक । डरावना [को०] ।

वित्रासित—वि० [सं०] किसी के द्वारा भयभीत कराया हुआ । डराया हुआ [को०] ।

वित्रिभलग्नक—संज्ञा पुं० [सं०] क्षितिज के ऊपर रविमार्ग का सबसे ऊंचा विंदु [को०] ।

वित्त्व—संज्ञा पुं० [सं०] वेत्ता होने का भाव ।

वित्सन—संज्ञा पुं० [सं०] बैल । साँड़ ।

विथक—संज्ञा पुं० [हिं० विथकना ?] पवन ।

विथकना†—क्रि० अ० [हिं० थकना] १. थकना । शिथिल होना । उ०—सुनि किन्नर गंधर्व सराहत विथके हैं विबुध विमान ।—तुलसी (शब्द०) । २. मोहित या चकित होकर चुप हो जाना । उ०—तुलसी सुनि ग्रामवधू विथकीं पुलकीं तन औ चले लोचन च्वै ।—तुलसी (शब्द०) ।

विथकित(पु)—वि० [हिं० विथकना] १. थका हुआ । शिथिल । उ०—तुलसी भइ मति विथकित करि अनुमान । राम लषन के रूप न देषेउ आन ।—तुलसी (शब्द०) । २. जो आश्चर्य या मोह आदि के कारण कुछ न बोल सक्ता हो । उ०—गोपीजन विथकित ह्वै चितवत सब ठाढ़ी ।—सूर (शब्द०) ।

विथराना(पु)—क्रि० स० [सं० विस्तरण, प्रा० विथ्थरण] १. फैलाना । २. इधर उधर करना ।

विथा(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यथा] १. व्यथा । पीड़ा । तकलीफ । उ०—(क) तनकहु विथा नहीं मन मान्यो । पर उपकार न तनु प्रिय जान्यो ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) भँवर जानि पै कमल पिरीती । जेहि मँह विथा प्रेम गै बीती ।—जायसी (शब्द०) । (ग) बूटी जड़ी म्नी बहुबिधि की । लीनी विथा निवारन सिधि को ।—गोपाल (शब्द०) । २. रोग । बीमारी । उ०—फेन तजै मुख तैं, पटकै कर, जौ न कियौ जू विथा निरवारन ।—रस कुसुमाकर (शब्द०) ।

विथारना(पु)—क्रि० स० [सं० विस्तारण, प्रा० वित्थारण] फैलाना । छितराना । उ०—श्री रघुवीर के वाक विलास तें धर्म रच्यो त्रैलोक्य विथार्यो ।—हृदयराम (शब्द०) ।

विथित(पु)—वि० [सं० व्यथित] जिसे किसी प्रकार की व्यथा हो । व्यथायुक्त । दुखी ।

विथुर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चोर । २. राक्षस । ३. क्षय । नाश ।

विथुर^{२}—वि० १. अल्प । थोड़ा । कम । २. व्यथित । दुःखित । ३. घनत्वरहित । जो ठोस न हो (को०) । ४. विचलित । स्खलित (को०) ।

विथुरना—क्रि० स० [सं० विस्तरण प्रा० वित्थरण] फैलना । छितराना । इधर उधर होना । फटना । उ०—पर अंत को अकाल ही के मेघ तो थे क्षण में प्रवात से विथुर गए आकाश खुल गया ।—श्यामा०, पृ० ७ ।

विथुरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्त्री जिसका स्वामी से वियोग हो । विरहिणी । २. विधवा (को०) ।

विथ्था(पु)—वि० [सं० वृथा या मिथ्या] दे० 'वृथा' । उ०—विथ्था जीवन मनुष्य कौ, जो धन नाहीं पास ।—पृ० रा०, २३।८ ।

विथ्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोभी ।

विदंड—संज्ञा पुं० [सं० विदण्ड] अंकुड़ा । अर्गला [को०] ।

विदंत^{१}—वि० [सं० विदंत] (हाथी) विना दाँत का । दतहीन [को०] ।

विदंत^{२}—संज्ञा पुं० [सं० विद् (=जानना), विद्वान् । ज्ञाता ।

विदंत‡—संज्ञा स्त्री० [सं० विदन्ता] एक प्रकार की कौड़ी ।

विदंश—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऐसा चरपरा खाद्य जिसके खाने से प्यास जगती है । २. दंशन [को०] ।

विद—संज्ञा पुं० [सं०] १. तिलपुष्पी । तिलक । २. जानकार । जाननेवाला । ३. पंडित । विद्वान् ।

विदत्त—वि० [सं०] जो दिया गया हो । वितरित ।

विदकना—क्रि० अ० [सं० विदरण या देश०] भड़कना । चौंकना । बिदकना ।

उ०—एक बूँद विष सात बूँद मधु को दूषित कर देता, अपनी परछाईं से भी तो मानव आज विदकता ।—वंदन०, पृ० ८१ ।

विदग्ध^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. रसिक पुरुष । रसज्ञ । नागर । २. पंडित विद्वान् । ३. चतुर । चालाक । होशियार । कलाभिज्ञ । ४. रूसा नामक घास ।

विदग्ध^{२}—वि० १. जला हुआ । दग्ध । २. जिसका पाक हुआ हो । पका या पचा हुआ (को०) । ३. नष्ट । सड़ा गला (को०) । ४. जो जला या पचा न हो (को०) । ५. सुंदर (को०) । ६. भद्रतापूर्ण । जैसे, पोशाक । ७. परिपक्व । जैसे, गुल्म (को०) । ८. पिंग । पीला (को०) ।

यौ०—विदग्ध अजीर्ण = दे० 'विदग्धाजीर्ण' । विदग्ध वरिवृद्धता=पेट में अम्ल का घुमड़ना और पेट का फूलना । विदग्ध परिषद् = रसिकों या विदग्ध व्यक्तियों की सभा । विदग्धवचन = वाक्चतुर ।

विदग्धक—संज्ञा पुं० [सं०] जलता हुआ शव [को०] ।

विदग्धता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विदग्ध होन का भाव । पांडित्य । विद्वत्ता । २. चातुर्य । चातुरी (को०) । ३. रसिकता (को०) ।

विदग्धत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विदग्धता' ।

विदग्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह परकीया नायिका जो होशियारी के साथ परपुरुष को अपनी ओर अनुरक्त करे ।

विशेष—यह दो प्रकार की मानी गई है—वचनविदग्धा और क्रियाविदग्धा । जो स्त्री अपनी बातचीत के कौशल से परपुरुष पर अपनी कामवासना प्रकट करती है, वह वचनविदग्धा कहलाती है; और जो किसी प्रकार के क्रियाकलाप से अपना भाव प्रकट करती है, उसे क्रियाविदग्धा कहते हैं ।

विदग्धाजीर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अजीर्ण रोग जो पित्त के प्रकोप से उत्पन्न होता है और जिसमें रोगी को भ्रम, तृष्णा, मूर्छा, दाह और पेट में दर्द होता है ।

विदग्धाम्लदृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँखों का एक प्रकार का रोग जो बहुत अधिक खटाई खाने से होता है और जिसमें आँखें पीली पड़ जाती हैं ।

विदग्धालाप—वि० [सं०] बात करने में कुशल । वाक्पटु [को०] ।

विदत्—वि० [सं०] १. जानकार । ज्ञाता । २. बुद्धिमान् [को०] ।

विदथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. योगी । २. यज्ञ । ३. वैदिक काल के एक राजा का नाम । ४. विद्वान् । जानकार (को० । ५. धार्मिक, सामरिक अथवा सामाजिक संघटन । ६. मकान । ७. ज्ञान । प्रज्ञा । बुद्धि । उ०—ऋग्वेद में एक तीसरा शब्द विदथ भी अनेक बार आया है जिसका अर्थ कहीं तो धार्मिक, कहीं मकान, कहीं यज्ञ और कहीं बुद्धि इत्यादि है ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७२ ।

विदथी—संज्ञा पुं० [सं० विदथिन्] एक वैदिक ऋषि का नाम ।

विददंक्षु—वि० [सं० विददङ्क्षु] डँसने के लिये तेयार या तत्पर [को०] ।

विदमान(पु)^1—वि० [सं० विद्यमान] जो विद्यमान हो । उ०—(क) फोरयो नयन काग नाहि छाँड़्यो सुरपति के विदमान ।—सूर (शब्द०) । (ख) ताको बंधन कियो इहि रघुपति को देखत विदमान ।—सूर (शब्द०) ।

विदमान†^{2}—संज्ञा पुं० [सं० विद्वान्] पंडित । ज्ञाता । विद्वान् ।

विदर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंकारी । विश्वसारक । २. विदारण करना । फाड़ना । ३. रंध्र । विवर । दरार । उ०—मुगति मग्ग खुल्ले विदर ।—पृ० रा०, ५८ । २१५ ।

विदर^2—वि० [सं० विदल, प्रा० विदर] दे० 'विदल' ।

विदर†^{3}—संज्ञा पुं० [देश०] दासीपुत्र । उ०—विदर पिदर जाएँ नहीं, मादर विदराँ मूल ।—बाँकी० ग्रं०, भा० २, पृ० ८५ ।

विदरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विदारण करना । फाड़ना । २. विद्रधि नामक रोग ।

विदरना(पु)^1—क्रि० अ० [सं० विदरण] विदीर्ण होना । फटना । उ०—(क) विदरत नाहिं बज्र की छाती हरि वियोग क्यों साहए ।—सूर (शब्द०) ।

विदरना^{1}—क्रि० स० विदीर्ण करना । फाड़ना । उ०—महेश यही तुमको निदरचोजु । अरा सम पत्रनि ह्वै विदरचोजु ।—गुमान (शब्द०) ।

विदर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] १. आधुनिक बरार प्रदेश का प्राचीन नाम । २. भागवत के अनुसार एक राजा का नाम । कहते हैं, इसी राजा के नाम पर विदर्भ देश का नाम पड़ा था । ३. पुराणानुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम । ४. दाँतों में चोट लगने के कारण मसूड़ा फूलना या दाँतों का हिलना । ५. सूखी भूमि या मरुभूमि (को०) । ६. विदर्भ देश के निवासी (को०) ।

विदर्भजा—संज्ञा स्त्री० [स०] अगस्त्य ऋषि की स्त्री लोपामुद्रा का एक नाम । २. दमयंती का एक नाम जो विदर्भ के राजा भीष्मक की कन्या थी । ३. रुक्मिणी का एक नाम ।

विदर्भतनया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दमयंती [को०] ।

विदर्भराज—संज्ञा पुं० [स०] दमयंती के पिता राजा भीष्म या भीष्मक जो विदर्भ के राजा थे ।

विदर्भसुभ्रू—संज्ञा स्त्री० [सं०] दमयंती [को०] ।

विदर्भा—संज्ञा पुं० [सं०] १. विदर्भ की राजधानी । कुंडिनपुर । २. एक नदी । ३. चाक्षुष मनु की पत्नी [को०] ।

विदर्भाधिपति—संज्ञा पुं० [सं०] विदर्भ नरेश । राजा भीष्मक [को०] ।

विर्दभि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

विदर्व्य—संज्ञा पुं० [सं०] बिना फनवाला साँप ।

विदर्शना—संज्ञा स्त्री० [सं०] विवेक । ज्ञान [को०] ।

विदल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. लाल रंग का सोना । २. सोना । स्वर्ण । ३. अनार का दाना वा कल्क । ४. बाँस का बना हुआ दौरा या और कोई पात्र । ५. चना । ६. पीठी । ७. पहाड़ी आबनूस (को०) । ८. विभाग । पार्थक्य (को०) । ९. टुकड़ा (को०) । १०. वेतस (को०) । ११. टहनी (को०) । १३. दाल (को०) ।

विदल^2—वि० विकसित । खिला हुआ । ३. जिसमें दल न हों । बिना दल का ।

विदलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मलने, दलने या दबाने आदि की क्रिया । २. टुकड़े टुकड़े या इधर उधर करना । फाड़ना ।

विदलना(पु)—क्रि० स० [सं० विदलन] दलित करना । नष्ट करना । उ०—तैं रन केहरि केहरि के विदले अरि कुंजर छैल छवा से । —तुलसी (शब्द०) ।

विदला—संज्ञा स्त्री० [सं०] त्रिपृत या निसोथ नाम की एक प्रकार की लता । विशेष दे० 'निसोथ' [को०] ।

विदलान्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. पकाई हुई दाल । २. वह अन्न जिसमें दो दल हों । जैसे—चना, उड़द, मूँग, अरहर, मसूर आदि ।

विदलित—वि० [सं०] १. जिसका अच्छी तरह दलन किया गया हो । २. रौंदा हुआ । मला हुआ । ३. टुकड़े टुकड़े किया हुआ । ४. फाड़ा हुआ ।

विदलिनी—वि० स्त्री० [सं० विदल+इनि ?] विदीर्ण करनेवाली । फाड़नेवाली । उ०—किंतु तर्जनी तेरी हा, उनके मस्तक तैयार, पथ दर्शक अमरत्व और हो नभ विदलिनी पुकार ।—हिम०, पृ० ५२ ।

विदश—वि० [सं०] (वस्त्र) जिसमें किनारी या पाढ़ न हो । जो बिना किनारी के हो [को०] ।

विदस्त—वि० [सं०] कृश । दुर्बल । क्षीण [को०] ।

विदा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बुद्धि । अक्ल । समझ । २. ज्ञान ।

विदा^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० विदाय, मि० अ० विदाअ] १. प्रस्थान । रवाना होना । बिदाई । जैसे, मैके से बहू । २. कहीं से चलने की आज्ञा या अनुमति ।

क्रि० प्र०—करना ।—माँगना ।—होना ।

विदाई—संज्ञा स्त्री० [हिं० विदा+ई (प्रत्य०)] १. विदा होने की क्रिया या भाव । रुखसती । प्रस्थान । २. विदा होने की आज्ञा या अनुमति । ३. वह धन आदि जो विदा होने के समय किसी को दिया जाय ।

क्रि॰ प्र॰—देना ।—पाना ।—मिलना ।

विदान—संज्ञा पुं॰ [सं॰] खंड खंड करने की क्रिया [को॰] ।

विदाम‡—संज्ञा पुं॰ [सं॰ बादाम से लक्ष्यार्थ] कौड़ी । छदाम । उ॰—लेता नाम विदाम न लागै, विगत जिका दह व्यापै ।—रघु॰ रू॰, पृ॰ २७ ।

विदाय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विसर्जन । २. प्रस्थान । ३. जाने की आज्ञा या अनुमति । विदा ! उ॰—ता पाछे श्री गुसाईं जी विजय करिबे को विदाय भए सो चले ।—दो सौ बावन॰, भा॰ २, पृ॰ ८१ ।

क्रि॰ प्र॰—माँगना ।—लेना ।

४. दान । वितरण । ५. विभाग । विभाजन (को॰) ।

विदायी^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विदायिन्] १. वह जो ठीक तरह से चलाता या रखता हो । नियामक । २. दान करनेवाला ।

विदायी^{2}—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ विदा+यी (ई) प्रत्य॰] दे॰ 'विदाई' ।

विदार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. युद्ध । समर । २. दे॰ 'विदारण' । ३. प्लावन । पानी का ऊपर से बहना । जलोच्छ्वास (को॰) ।

विदारक^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह वृक्ष या पर्वत आदि जो जल के बीच में हो । २. छोटी नदियों के तल में बनाया हुआ गड्ढा, जिसमें नदी के सूखने पर भी पानी बचा रहता है । ३. नौसादर ।

विदारक^2—वि॰ विदारण करनेवाला । फाड़ डालनेवाला ।

विदारण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बीच में से अलग करके दो या अधिक टुकड़े करना । फाड़ना । २. मार डालना । हत्या करना । ३. युद्ध । समर । लड़ाई । ४. कनेर । ५. खपरिया । ६. नौसादर । ७. जैनों के अनुसार दूसरों के पापों या दोषों की घोषणा करना । ८. पेड़ पौधे आदि काटकर साफ करना (को॰) । ९. खोलना । जैसे, मुख विदारण (को॰) । १०. निवारण । छोड़ देना । रद्द करना (को॰) । ११. रौंदना (को॰) । १२. कष्ट देना । तकलीफ पहुँचाना । १३. दे॰ 'विदारक'—१ ।

विदारणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] लड़ाई । संग्राम [को॰] ।

विदारनाⓅ—क्रि॰ स॰ [हिं॰ विदरना] फाड़ना । उ॰—(क) जनु उड़गन विधु मिलन कौ चले तम विदारि करि वाट ।—तुलसी (शब्द॰) । (ख) निज जाँघन पर ताहि पछारयो । नखन साथ तब उदर विदारयो ।—केशव (शब्द॰) ।

विदारि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शालपर्णी । विदारी [को॰] ।

विदारिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. बहत्संहिता के अनुसार एक प्रकार की डाकिनी जो घर के बाहर अग्निकोण में रहती है । २. गंभारी वृक्ष । ३. विदारी कंद । ४. शालपर्णी । ५. कड़वी तूँबी । ६. बिदारीकंद के समान गोल और कड़ी जंघा-मूल की सूजन या पिटिका ।—माधव॰, पृ॰ १८७ ।

विदारिगंधा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विदारिगन्धा] शालपर्णी ।

विदारिणी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] काश्मीरी । गंभारी ।

विदारित—वि॰ [सं॰] विदीर्ण किया हुआ । फाड़ा हुआ ।

विदारी^{1}—वि॰ [सं॰ विदारिन्] फाड़नेवाला । विदारण करनेवाला ।

विदारी^{2}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. शालपर्णी । २. भुइँ कुम्हड़ा । ३. भावप्रकाश के अनुसार अठारह प्रकार के कंठरोगों में से एक प्रकार का कंठरोग ।

विशेष—यह रोग पित्त के प्रकुपित होने से होता है । इसमें गले और मुँह पर लाली आ जाती है, जलन होती है और बदबूदार मांस के टुकड़े कट कटकर गिरने लगते हैं । कहते हैं, जिस करवट कोई अधिक सोता है—उसी ओर यह रोग होता है ।

४. एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिसमें बगल में फुंसी निकलती है । ५. कान का एक रोग । ६. वाराहीकंद । ७. क्षीर काकोली । ८. वाग्भट्ट के अनुसार मेढ़ासींगी, सफेद पुनर्नवा, देवदार, अनंतमूल, वृहती आदि ओषधियों का एक गण ।

विदारीकंद—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विदारीकन्द] भुइँकुम्हड़ा ।

विदारीगंधा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विदारीगन्धा] १. शालपर्णी । २. सुश्रुत के अनुसार शालपर्णी, भुइँकुम्हड़ा, गोखरू, शतमूली, अनंत-मूल, जीवंती, मुगवन, कटियारी, पुनर्नवा आदि ओषधियों का एक गण ।

विशेष—इस गण की सब ओषधियाँ वायु तथा पित्त की नाशक, और शोथ, गुल्म, ऊर्ध्वश्वास तथा खाँसी आदि रोगों में हितकर मानी जाती हैं ।

विदारीगंधिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विदारीगन्धिका] दे॰ 'विदारीगंधा' [को॰] ।

विदारु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कृकलास । क्रकचपाद । गिरगिट । गृहगोधा ।

विदाह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पित्त के प्रकोप के कारण होनेवाली जलन । २. हाथ पैर में किसी कारण से होनेवाली जलन । ३. आँतों में अम्ल बनने की क्रिया (को॰) ।

विदाहक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जो विदाह उत्पन्न करता हो । २. दे॰ 'विदाह' ।

विदाही—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विदाहिन्] वह पदार्थ जिससे जलन पैदा हो । दाह उत्पन्न करनेवाला । तीक्ष्ण । चरपरा उ॰—विदाही, अर्थात् जो चीज खाने से छाती में जलन होती है, और जितने प्रकार के रूखे अन्न हैं, जैसे बाजरा आदि, इनको न खाय ।

विदिक्^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विदिश्] दिक्कोण । विदिश् [को॰] ।

विदिक^2—वि॰ भिन्न दिशा में जानेवाला [को॰] ।

विदिक्चंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विदिक्चङ्ग] एक प्रकार का पक्षी जो पीला होता है [को॰] ।

विदित^1—वि॰ [सं॰] १. जाना हुआ । अवगत । ज्ञात । सूचित । २. विश्रुत । विख्यात (को॰) । ३. प्रतिज्ञात । जिसकी प्रतिज्ञा की गई हो । इकरार किया हुआ (को॰) ।

विदित^2—संज्ञा पुं॰ १. कवि । विद्वान् । विद्याव्यसनी । २. सूचना । परिज्ञान (को॰) । ३. प्रसिद्धि । ख्याति (को॰) । ५. अवाप्ति । लाभ (को॰) ।

विदिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैनों की एक देवी।

विदितात्मा—संज्ञा पुं० [सं० विदितात्मन्] १. प्रसिद्ध या ख्यात व्यक्ति। २. आत्मज्ञानी पुरुष [को०]।

विदिथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. पंडित। विद्वान्। २. योगमार्गी। योगी। दे० 'विदथ'।

विदिश्—संज्ञा स्त्री० [सं० विदिश्] दे० 'विदिक्'। उ०— धायो घर शर शैल विदिश दिशि चक्रहूँ चाहि लयो।—सूर (शब्द०)।

विदिशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वर्तमान भेलसा नामक नगर का प्राचीन नाम। २. पुराणानुसार पारियात्र पर्वत से निकली हुई एक नदी का नाम। ३. दे० 'विदिश्'।

विदिश—संज्ञा स्त्री० [सं०] दो दिशाओं के बीच का कोना। जैसे,—अग्नि या ईशान आदि।

विदीधिति—वि० [सं०] किरणहीन। निष्प्रभ [को०]।

विदीपक—संज्ञा पुं० [सं०] दीपक। दीआ।

विदीपित—वि० [सं०] १. प्रज्वलित। २. प्रकाशित। दीप्त। ३. धूपित। (को०)।

विदीप्त—वि० [सं०] प्रदीप्त। प्रभावान्। चमकीला [को०]।

विदीर्ण—वि० [सं०] १. बीच से फाड़ा या विदारण किया हुआ। उ०—हुआ विदीर्ण जहाँ तहाँ श्वेत आवरण जीर्ण। व्योम शीर्ण कंचुक धरे विषधर सा विस्तीर्ण।—साकेत, पृ० २७८। २. टूटा हुआ। भग्न। ३. मार डाला हुआ। निहत। ४. फैला या खोला हुआ (को०)।

यौ०—विदीर्णमुख = जिसका मुँह खुला हो। विदीर्णहृदय = छिन्नहृदय। भग्नहृदय।

विदु—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथी के मस्तक के बीच का भाग। २. घोड़े के कान के नीचे का भाग। ३. दरियाई घोड़ा। जलहस्ती (को०)।

विदुत्तम—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सब बातें जानता हो। २. विष्णु का एक नाम

विदुर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो जानता हो। जानकार। वेत्ता। ज्ञाता। २. पंडित। ज्ञानी। ३. कौरवों के सुप्रसिद्ध मंत्री।

विशेष—यह राजनीति, धर्मनीति और अर्थनीति में बहुत निपुण थे और धर्म के अवतार माने जाते हैं। महाभारत में कथा है कि जब सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू अंबिका को दूसरी बार कृष्णद्वैपायन के साथ नियोग करने की आज्ञा दी, तब उसने कृष्णद्वैपायन की आकृति आदि से भयभीत होकर एक सुंदरी दासी को अपने कपड़े आदि पहनाकर उनके पास भेज दिया, जिससे विदुर का जन्म हुआ। ये बहुत बड़े पंडित, बुद्धिमान्, शांत और दूरदर्शी थे; और पांडवों के बहुत बड़े पक्षपाती थे। पहले ये राजा पांडु के मंत्री थे; और इसी लिये पीछे से अनेक अवसरों पर इन्होंने पांडवों की भारी भारी विपत्तियों में रक्षा की थी। जतुगृह के जलने के समय भी इन्हीं के परामर्श से पांडवों की जान बची थी। ये धृतराष्ट्र के छोटे भाई और मंत्री भी थे। जिस समय दुर्योधन के बहुत कहने पर धृतराष्ट्र ने इनसे जूए के संबंध में संमति माँगी थी उस समय इन्होंने उन्हें बहुत रोका और समझाया था। पांडवों के वन जाने पर ये दुर्योधन के पास रहते थे। महाभारत का युद्ध आरंभ होने से पहले इन्होंने धृतराष्ट्र को रात भर अनेक प्रकार के अच्छे अच्छे उपदेश देकर युद्ध रुकवाना चाहा था; पर इसमें भी इन्हें सफलता नहीं हुई। युद्ध में इन्होंने पांडवों का पक्ष ग्रहण किया था। महाभारत के युद्ध के उपरांत जब पांडवों का राज्य हुआ, तब भी ये बहुत दिनों तक मंत्री के पद पर थे। पर पीछे से वन में चले गए। वहाँ राजा युधिष्ठिर से एक बार इनकी भेंट हुई थी। वहीं बहुत दिनों तक घोर तपस्या करने के उपरांत इनका परलोकवास हुआ था। नीति की प्रसिद्ध पुस्तक 'विदुरनीति' या 'विदुर प्रजागर' इन्हीं की रचित मानी जाती है (जो महाभारत के पाँचवें पर्व में ३३ वें अध्याय से ४०वें तक है)।

विदुर^2—वि० चतुर। जानकार। कुशल।

विदुल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेंत। २. जलबेंत। ३. बोल या गंधरस नामक गंधद्रव्य। ४. अमलबेत।

विदुल(पु)^2—वि० [प्र० विदुर] धीर। उ०—झर करत विदुल भर लोह भार।—पृ० रा० ५६। ८७।

विदुला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का थूहर जिसे सातला कहते हैं। २. विट् खदिर। ३. महाभारत में वर्णित एक स्त्री जिसके पुत्र का नाम संजय था। युद्ध में पराजित होकर घर में युद्धविरत पड़े हुए पुत्र का उद्बोधन कर इसने उसे युद्ध में भेजा था (को०)।

विदुष—संज्ञा पुं० [सं० विद्वस्] [स्त्री० विदुषी] विद्वान्। पंडित। उ०—(क) निज निज देह को सप्रेम जोग छेम मई मुदित असीस विप्र विदुषनि दई है।—तुलसी (शब्द०)। (ख) विदुष जनन विराट प्रभु दीखे अति मन में सुख पायो।—सूर (शब्द०)।

विदुषी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्या पढ़ी हुई स्त्री। विद्वान् स्त्री। उ०—(क) जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवति, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय, सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं।—दयानंद (शब्द०)। (ख) जहाँ पूर्ण विद्वान् और पूर्ण विदुषी स्त्री शिक्षा और विद्यादान करनेवाली हों, वहाँ भेज दें।—दयानंद (शब्द०)।

विदुष्कृत—वि० [सं०] निष्पाप [को०]।

विदू—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विदु' [को०]।

विदून—वि० [सं०] पीड़ित [को०]।

विदूर^1—वि० [सं०] जो बहुत दूर हो।

विदूर^2—संज्ञा पुं० १. बहुत दूर का प्रदेश। २. एक देश का नाम। २. एक पर्वत का नाम। कहते हैं, वैदूर्यमणि इसी पर्वत में मिलती है। ४. दे० 'वैदूर्य'। (मणि)। उ०—वेदी लसत विदूर फटिकमय सलिल तीर लस पाँती।—श्यामा०, पृ० ११८। ५. कुरु का एक पुत्र (को०)।

विदूरग—वि० [सं०] दूर तक फैला हुआ। विस्तृत। जो दूर तक फैला हुआ हो। [को०]।

विदूरज—संज्ञा पुं० [सं०] विदूर पर्वत से उत्पन्न, वैदूर्यमणि।

विदूरजात—संज्ञा पुं० [सं०] वैदूर्यमणि। विदूरज [को०]।

विदूरत्व—संज्ञा पुं० [सं०] विदूर होने का भाव। बहुत अधिक दूर होना।

विदूरथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुरुक्षेत्र का एक नाम। २. एक ऋषि का नाम (को०)। ३. एक वृष्णिवंशीय राजा जिनके पुत्र का नाम शूर था (को०)। ४. पुराणानुसार एकरा जा का नाम। ५. कुरु का एक पुत्र; इसकी माता का नाम सुभांगी था (को०)।

विदूरभूधर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विदूराद्रि' [को०]।

विदूरभूमि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विदूर नामक देश। कहते हैं, वैदूर्यमणि इसी देश में होती है।

विदूररत्न—संज्ञा पुं० [सं०] वैदूर्यमणि जो अनुश्रुति के अनुसार विदूर पर्वत पर प्राप्त होती है [को०]।

विदूरविगत—संज्ञा पुं० [सं०] अंत्यज।

विदूरित—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विदूरिता] हटाया हुआ या दूर किया हुआ। उ०—करुण वरुणालया अवंध विदूरिता।—बी० श० महा०, पृ० २१६।

विदूराद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] विदूर पर्वत [को०]।

धिदूरोद्भावित—संज्ञा पुं० [सं०] विदूर पर्वत पर उत्पन्न होनेवाली, वैदूर्यमणि [को०]।

विदूषⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विदूषक] भाँड। विदूषक। उ०—नाचहिं कहुँ विदूष करि जाला। कूजहिं काँख बजावहिं ताला।—सबल (शब्द०)।

विदूषक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो अधिक विषयी हो। कामुक। २. वह जो तरह तरह की नकलें आदि करके, वेश भूषा बनाकर अथवा बातचीत करके दूसरों को हँसाता हो। मसखरा।

विशेष—प्राचीन काल में राजाओं और बड़े आदमियों के मनोविनोद के लिये उनके दरबार में इस प्रकार के मसखरे रहा करते थे जो अनेक प्रकार के कौतुक करके, बेवकूफ बनकर अथवा बातें बनाकर लोगों को हँसाया करते थे। प्राचीन नाटकों आदि में भी इन्हें यथेष्ट स्थान मिला है; क्योंकि इनसे सामाजिकों का मनोरंजन होता है। साहित्यदर्पण के अनुसार विदूषक प्रायः अपने कौशल से दो आदमियों में झगड़ा भी कराता है; और अपना पेट भरना या स्वार्थ सिद्ध करना खूब जानता है। यह शृंगार रस में सहायक होता है और मानिनी नायिका को मनाने में बहुत कुशल होता है।

३. चार प्रकार के नायकों में से एक प्रकार का नायक जो अपने कौतुक और परिहास आदि के कारण कामकेलि में सहायक होता है। ४. वह जो दूसरों की निंदा करता हो। खल। ५. भाँड।

विदूषक^2—वि० १. भ्रष्ट, दूषित या गंदा करनेवाला। २. परनिंदक। बदनाम करनेवाला। ३. हँसी करनेवाला। मसखरा [को०]।

विदूषण—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पर विशेष रूप से दोष लगाने की क्रिया। ऐब लगाना। परिवाद। २. मलिन या दूषित करना। दुर्वचन। झिड़की (को०)।

विदूषना^{1}—क्रि० स० [सं० विदूषण या हिं० वि०+दुखाना] १. सताना। दुःख देना। उ०—सुनु सठ काल ग्रसित यह देही। जनि तेहि लागि विदूषहि केही।—तुलसी (शब्द०)। २. दोष लगाना। दोषी ठहराना।

विदूषना^{2}—क्रि० अ० दुखी होना। पीड़ा का अनुभव करना। उ०—तापन सों तपती बिर में बिन काल वृथा वन माहिं विदूषती।—मन्नालाल (शब्द०)।

विदूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाप। अनाचार [को०]।

विदूषित—वि० [सं०] १. अपमानित। तिरस्कृत। लांछित। २. दोषपूर्ण बनाया हुआ (को०)।

विदृक—वि० [सं०] दे० 'विदृश'।

विदृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संधि। सीवन। २. खोपड़ी का जोड़। उ०—यह शरीर ही द्वारकापुरी है। नौ इंद्रिय द्वार और दसवाँ विदृति द्वार ये दस फाटक हैं।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ६४०।

विदृश—वि० [सं०] जिसे दिखाई न पड़े। अंधा।

विदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. दे० 'विदेह'।

विदेय—वि० [सं०] जो दिया गया हो। देय। देने लायक [को०]।

विदेव^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. राक्षस। २. यक्ष। ३. अक्षक्रीड़ा। पासे का खेल।

विदेव^2—वि० १. देवरहित। देवताविहीन। देवताओं से विरहित। जैसे, विदेव मंदिर, विदेव यज्ञ। २. देवद्रोही। देवों का विद्वेषी [को०]।

विदेवन—संज्ञा पुं० [सं०] अक्षक्रीड़ा। पासा खेलना [को०]।

विदेश—संज्ञा पुं० [सं०] अपने देश को छोड़कर दूसरा देश। परदेश। परराष्ट्र।

विदेशग—वि० [सं०] परदेश जानेवाला। विदेश जानेवाला [को०]।

यौ०—विदेशग। विदेशगमन = परदेश की यात्रा। विदेशगामी = विदेश जानेवाला। विदेशज = जो विदेश में उत्पन्न हो। विदेशवास = विदेश में रहना। विदेशवासी = प्रवासी। विदेश में रहनेवाला। विदेशस्थ = (१) परदेश में रहनेवाला। (२) परदेश में होनेवाला।

विदेशप्रवृत्तिज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार परराष्ट्र प्रवृत्तियों का ज्ञान और अनुमान। विदेशी मुआमलों की जानकारी।

विदेशी—वि० [सं० विदेशिन्] १. विदेश संबंधी। बाहरी। २. परदेशी। दूसरे देश का निवासी।

विदेशीय—वि० [सं०] दे० 'विदेशी'।

विदेस^1—संज्ञा पुं० [सं० विदेश] दे० 'विदेश'। उ०—अब तू विदेस का मनमाना मजा लूट।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १७।

विदेह^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शरीर से रहित हो। २. वह जिसकी उत्पत्ति माता पिता से न हो। जैसे,—देवता आदि। ३. ज्ञानी एवं देहवाद को अधिक महत्व न देनेवाले राजा जनक का एक नाम। विशेष दे० 'जनक'। ४. राजा निमि का एक नाम। विशेष दे० 'निमि'। ५. प्राचीन मिथिला का एक नाम। ६. इस देश के निवासी।

विदेह^{२}—वि० [सं०] ज्ञानशून्य। संज्ञारहित, बेसुध। अचेत। उ०—(क) मूरति मधुर मनोहर देखी। भयउ विदेह विदेहु बिसेखी।—तुलसी (शब्द०)। (ख) देखि भरत कर सोच सनेहू। भा निषाद तेहि समय बिदेहू।—तुलसी (शब्द०)। (ग) कौन ले आई कौने चरन चलाई, कौने बहियाँ गही मो धौं केही री। सूरदास प्रभु देखे सुधि रही नहिं, अति विदेह भई अब मैं बूझनि तोही री।—सूर (शब्द०)। २. मृत (को०)। ३. विरागी। उदासीन (को०)। ४. शरीररहित। कामशून्य।

विदेहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम। २. एक वर्ष का नाम (को०)।

विदेहकुमारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] (राजा जनक की पुत्री) जानकी। सीता। उ०—कहौ धौं तात क्यों जीति सकल नृप वरी है विदेहकुमारी।—तुलसी (शब्द०)।

विदेहकूट—संज्ञा पुं० [सं०] जैन पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

विदेहकैवल्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह निर्वाण या मोक्ष जो जीवन्मुक्त को मरने पर प्राप्त होता है।

विदेहजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सीता [को०]।

विदेहत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. विदेह होने का भाव। २. शरीर का नाश। मृत्यु। मौत।

यौ० —विदेहत्वगत, विदेहत्वप्राप्त = (१) मृत। (२) मुक्त।

विदेहपुर—संज्ञा पुं० [सं०] राजा जनक की राजधानी, जनकपुर। उ०—विदित विदेहपुर नाथ भृगुनाथ गति समय सयानी कीन्हीं जैसी आइ गौं परी।—तुलसी (शब्द०)।

विदेहमुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विदेहकैवल्य'। उ०—जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्ति का भेद प्रगट है, परंतु तुझको मालूम नहीं हो सकता है।—कबीर मं०, पृ० १७६।

विदेहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मिथिला नगरी और प्रदेश का एक नाम।

विदेही—संज्ञा पुं० [सं० विदेहिन्] ब्रह्म। उ०—कुल मर्यादा खोइ कै खोजिनि पदनिर्वान। अंकुर बीज नसाइ कै भए विदेही थान।—कबीर (शब्द०)।

विदोष—वि० [सं०] जिसमें किसी प्रकार का दोष न हो। दोषरहित। बेऐब।

विदोह, विदोहन—संज्ञा पुं० [सं०] किसी से अत्यधिक लाभ उठाना या अधिक दूहना। शोषण [को०]।

विद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो जानता हो। जानकार। २. पंडित। विद्वान्। ३. बुध ग्रह। ४. तिल का पौधा।

विद्^{२}—वि० ज्ञाता। जानकार। विद्वान्। समासांत में प्रयुक्त। जैसे,—वेदविद्, तद्विद।

विद्^{३}—संज्ञा स्त्री० ज्ञान। समझ। जानकारी [को०]।

विद्ध—वि० [सं०] १. बीच में से छेद किया हुआ। छिद्रित। विदीर्ण। २. फेंका हुआ। क्षिप्त। ३. जिसमें बाधा पड़ी हो। बाधित। ४. समान। तुल्य। बराबर। ५. जिसको चोट लगी हो। ताड़ित। ६. टेढ़ा। ७. मिला हुआ। आबद्ध।

यौ०—विद्धकर्ण १. जिसके कान छिदे हों। २. विद्धकर्णी। विद्धकर्णा, विद्धकर्णिका = पाठा। विद्धकर्णी।

विद्ध^{२}—संज्ञा पुं० (१) घाव। जख्म। (२) पहाड़मूल। पाठा [को०]।

विद्ध(पु)^{३}—संज्ञा पुं० [सं० विधि] ब्रह्मा। विधि। उ०—संषेपक जंपी सुकथ, माधव माननि मझ्झ। जो चित हित्त बिलंबियौ। (सो). हरिहर विद्ध न सुझ्झ।—पृ० रा०, २।४२२।

विद्धक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का यंत्र जिससे मिट्टी खोदी जाती थी।

विद्धकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंबष्ठा। पाठा [को०]।

विद्धव्रण—संज्ञा पुं० [पुं०] वह सूजन जो शरीर के किसी अंग में काँटे की नोक के चुभने या टूटकर रह जाने से होती है।

विद्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिससे शरीर में बहुत छोटी छोटी फुंसियाँ निकलती हैं।

विद्धायुध—संज्ञा पुं० [सं०] धनुष का एक प्रकार। विशेष लंबाई का धनुष [को०]।

विद्धि^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आघात करना। हनन। मारना। २. वेधना या छेदना।

विद्धि(पु)^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विधि = काम करने का तरीका] विधि। जुगत। उ०—आहार पान घनसार पूर। बैठे सु आइ एकंत सूर। सब कहिग व्रिद्धि कमधज दिसान। सुद्धरै वत्त सो काहु पान।—पृ० रा०, १।६२८।

विद्य—संज्ञा पुं० [सं०] लाभ। प्राप्ति [को०]।

विद्यमान—वि० [सं०] १. वर्तमान। उपस्थित। मौजूद। उ०—सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु। विद्यमान रन पाय रिपु, कायर करहिं प्रलापु।—संतवाणी०, पृ० ७३। २. तथ्यपूर्ण। तथ्यपूर्ण (को०)।

विद्यमानता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्यमान होने का भाव। उपस्थिति। मौजूदगी।

विद्यमानत्व—संज्ञा पुं० [सं०] विद्यमान होने का भाव। उपस्थिति। मौजूदगी।

विद्यांकुर—संज्ञा पुं० [सं० विद्या + अङ्कुर] आरंभिक विद्या। बालकों को पढ़ाई जानेवाली ज्ञान की प्रथम पुस्तक। उ०—वहाँ राजा शिवप्रसाद सदृश विलक्षण विद्वान् के बनाए भूगोल हस्तामलक, इतिहास तिमिर नाशक, गुटका आदि विद्यांकुर से पढ़ाये जाते थे।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ४१७।

विद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह ज्ञान जो शिक्षा आदि के द्वारा उपार्जित या प्राप्त किया जाता है। वह जानकारी जो सीखकर हासिल की जाती है। किसी विषय का विशिष्ट ज्ञान। इल्म। जैसे,—(क) विद्या पढ़कर मनुष्य पंडित होता है। (ख) आजकल पाठशालाओं में अनेक प्रकार की विद्याएँ पढ़ाई जाती हैं।

विशेष—हमारे यहाँ विद्या दो प्रकार की मानी गई है—परा और अपरा। जिस विद्या के द्वारा ब्रह्मज्ञान होता है, वह परा विद्या और इसके अतिरिक्त जो अन्य लौकिक या पदार्थ विद्याएँ हैं, वे सब अपरा विद्या कहलाती हैं।

२. वह ज्ञान जिसके द्वारा मोक्ष की प्राप्ति या परमपुरुषार्थ की सिद्धि होती है। ३. वे शास्त्र आदि जिनके द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है।

विशेष—हमारे यहाँ इनकी संख्या १८ बतलाई गई है। यथा—चारों वेद, छओ अंग, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद और अर्थशास्त्र।

४. दुर्गा। ५. देवी का मंत्र। ६. गनियारी। ७. सीता की एक सखी का नाम। ८. तंत्र में 'ई' अक्षर का वाचक शब्द (को०)। ९. छोटी घंटी (को०)। १०. ऐंद्रजालिक कौशल (को०)। ११. सिद्ध गुटिका। ऐंद्रजालिक गुटिका (को०)।

विशेष—कहते हैं, इसे मुँह में रखने से व्यक्ति उड़ता हुआ कहीं भी गमन कर सकता था।

१२. आर्या छंद का पाँचवाँ भेद, जिसमें चंद्रशेखर के मत से २३ गुरु और ११ लघु मात्राएँ होती हैं।

विद्याकर—संज्ञा पुं० [सं०] विद्या का आकर। विद्वान् व्यक्ति। वह जिससे ज्ञान प्राप्त हो। अध्यापक। शिक्षक [को०]।

विद्याकोशगृह—संज्ञा पुं० [सं०] पुस्तकालय। ग्रंथागार [को०]।

विद्याकोशसमाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] पुस्तकालय। लाइब्रेरी [को०]।

विद्यागम—संज्ञा पुं० [सं०] ज्ञानप्राप्ति। विद्याप्राप्ति [को०]।

विद्यागुरु—संज्ञा पुं० [सं०] वह गुरु जिससे विद्या पढ़ी हो। पवित्र ज्ञान का देनेवाला। पढ़ानेवाला गुरु। शिक्षक।

विद्यागृह—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ विद्या पढ़ाई जाती हो। विद्यालय। पाठशाला।

विद्याचंचु—वि० [सं० विद्याचञ्चु] विद्या द्वारा ख्यात। प्रसिद्ध विद्वान् [को०]।

विद्याचण—वि० [सं०] दे० 'विद्याचंचु'।

विद्याजंभक—वि० [सं० विद्याजम्भक] भाँति भाँति की ऐंद्रजालिक क्रिया अथवा जादू के खेल दिखानेवाला [को०]।

विद्यातीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम। २. शिव का एक नाम (को०)।

विद्यात्व—संज्ञा पुं० [सं०] विद्या का भाव।

विद्यादल—संज्ञा पुं० [सं०] भोजपत्र का पेड़।

विद्यादाता—संज्ञा पुं० [सं० विद्यादातृ] विद्या पढ़ानेवाला गुरु, जो शास्त्रों के अनुसार पिता माना जाता है।

विद्यादान—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्या पढ़ाना। शिक्षा देना। २. पुस्तक का दान (को०)।

विद्यादायाद—संज्ञा पुं० [सं०] विद्या का दायाद। किसी विद्या का उत्तराधिकारी [को०]।

विद्यादेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सरस्वती। २. जैनियों की सोलह जिन देवियों में से एक देवी का नाम।

विद्याधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्या रूपी धन। २. वह धन जो अपनी विद्या द्वारा उपार्जित किया जाय। ऐसे धन में किसी का हिस्सा नहीं लग सकता।

विद्याधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की देवयोनि जिसके अंतर्गत खेचर, गंधर्व, किन्नर आदि माने जाते हैं। २. सोलह प्रकार के रतिबंधों में से एक प्रकार का रतिबंध। ३. वैद्यक में एक प्रकार का यंत्र जिससे पारे का संस्कार करते हैं।

विशेष—इसमें एक थाली में पारा रखकर उसपर दूसरी थाली रखकर मिट्टी से बीच का जोड़ बंद कर देते हैं, और ऊपर की थाली में पानी भरकर दोनों मिली हुई थालियों को पाँच पहर तक आग पर रखते हैं। इसके उपरांत ठंढे होने पर पारा निकाल लेते हैं।

४. एक प्रकार का अस्त्र। उ०—(क) वर विद्याधर अस्त्र नाम नंदन जो ऐसो। मोहन स्वापन सयन सौम्य कर्षन पुनि है सो।—पद्माकर (शब्द०) (ख) महा अस्त्र विद्याधर लीजै पुनि नंदन जेहि नाऊँ।—रघुराज (शब्द०)। ५. विद्वान् व्यक्ति। पंडित। उ०—कविदल विद्याधर सकल कलाधर राज राज वर वेश बने।—केशव (शब्द०)।

विद्याधर रस—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो पारे, गंधक, ताँबे, सोंठ, पीपल, मिर्च, धतूरे आदि की सहायता से बनाया जाता है और ज्वर में बहुत उपयोगी माना जाता है।

विद्याधरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्याधर नामक की स्त्री। उ०—विद्याधरी किन्नरी नामा त्यों वानरी अगारा।—रघुराज (शब्द०)।

विद्याधरेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० विद्याधरेन्द्र] जांबुवान का एक नाम।

विद्याधरेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक शिवलिंग का नाम।

विद्याधार—संज्ञा पुं० [सं०] पंडित। विद्वान्।

विद्याधारी—संज्ञा पुं० [सं० विद्याधारिन्] एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में चार मगण होते हैं। उ०—मैं चारों बंधू गाऊँ भक्ती को पाऊँ। लाभै सारे यामें अंतै ना जाऊँ। जानै भेदा याको सत्संगा को धारी। वोही साँचो भक्ता साँचो विद्याधारी।—जगन्नाथ (शब्द०)।

विद्याधिदेवता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्या की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती।

विद्याधिप—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्या पढ़ानेवाला। गुरु। शिक्षक। २. विद्वान्। पंडित।

विद्याधिराज—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत बड़ा पंडित हो।

विद्याध्र—संज्ञा पुं० [सं०] विद्याधर नाम की देवयोनि।

विद्यानुपालन—संज्ञा पुं० [सं०] अध्ययन [को०]।

विद्यानुपाली—संज्ञा पुं० [सं० विद्यानुपालिन्] अध्येता [को०]।

विद्यानुसेवन—संज्ञा पुं० [सं०] विद्याध्ययन [को०]।

विद्यानुसेवी—संज्ञा पुं० [सं० विद्यानुसेविन्] अध्येता [को०]।

विद्यापति—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रमुख पंडित या विद्वान्। २. मैथिली भाषा के एक महान् गीतकार कवि (को०)।

विद्यापीठ—संज्ञा पुं० [सं०] शिक्षा का केंद्र। विद्यालय [को०]।

विद्याबल—संज्ञा पुं० [सं०] १. जादू की शक्ति। २. विद्या की शक्ति। विद्वत्ता का बल (को०)।

विद्याभाक्—वि० [सं० विद्याभाज्] विद्वान्।

विद्याभ्यसन, विद्याभ्यास—संज्ञा पुं० [सं०] विद्याध्ययन।

विद्यामंडलक—संज्ञा पुं० [सं० विद्यामण्डलक] पुस्तकालय [को०]।

विद्यामंत(५)—संज्ञा पुं० [सं० विद्यावत्] दे० 'विद्वान्'। उ०—व्यसनी व्यावहारिक विद्यामंत वादी व्युत्पति वंदीजन वाहक।—वर्ण०, पृ० २०।

विद्यामंदिर—संज्ञा पुं० [सं० विद्यामन्दिर] विद्यालय।

विद्यामणि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्याधन'।

विद्यामय—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो पूर्ण पंडित हो।

विद्यामहेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

विद्यामार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] वह कार्य जो मनुष्य को मोक्ष की ओर ले जाय। श्रेयःमार्ग (कठवल्ली उपनिषद्)।

विद्यारंभ—संज्ञा पुं० [सं० विद्यारम्भ] वह संस्कार जिसमें विद्या की पढ़ाई आरंभ होती है।

विद्याराज—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु की एक मूर्ति का नाम।

विद्याराशि—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

विद्यार्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्या का अर्जन। विद्या की प्राप्ति। २. विद्या द्वारा होनेवाली प्राप्ति [को०]।

विद्यार्थ—वि० [सं०] विद्याप्राप्ति का इच्छुक [को०]।

विद्यार्थी—संज्ञा पुं० [सं० विद्यार्थिन्] वह जो विद्या पढ़ता हो। पढ़नेवाला छात्र। शिष्य।

विद्यालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ विद्या पढ़ाई जाती हो। पाठशाला।

विद्यालाभ—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्यार्जन' [को०]।

विद्यावंश—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विद्या के शिक्षकों की क्रमागत परंपरा सुचनिका [को०]।

विद्यावधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती [को०]।

विद्यावान—संज्ञा पुं० [सं० विद्यावान्] पंडित। विद्वान्। उ०—जीवत जग में काहि पिछानी। विद्यावान होइ जो प्रानी।—विश्राम (शब्द०)।

विद्यावार्तिक—वि० [सं०] तरह तरह के जादू के खेल करनेवाला [को०]।

विद्याविक्रय—संज्ञा पुं० [सं०] धन लेकर शिक्षा देना [को०]।

विद्याविद्—संज्ञा पुं० [सं०] विद्वान्। पंडित।

विद्याविरुद्ध—वि० [सं०] विद्या के विपरीत या विरुद्ध।

विद्याविशिष्ट—वि० [सं०] विद्याज्ञान या विद्वत्ता के लिये ख्यात [को०]।

विद्याविहीन—वि० [सं०] विद्याहीन। मूर्ख। अपढ़ [को०]।

विद्यावृद्ध—वि० [सं०] विद्या या ज्ञान में अग्रसर [को०]।

विद्यावेश्म—संज्ञा पुं० [सं० विद्यावेश्मन्] पाठशाला [को०]।

विद्याव्यवसाय—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'विद्याव्यसन'। २. दे० 'विद्याविक्रय'।

विद्याव्यसन—संज्ञा पुं० [सं० विद्या+व्यसन] विद्या या ज्ञानप्राप्ति के लिये उत्कट अभिलाषा। विद्याप्रेम। अध्ययन। उ०—क्षत्रियों के पास सैन्य बल था, राजनैतिक प्रभुता थी, विद्याव्यसन भी था।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ९७।

विद्याव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] वह व्रत जो गुरु के घर रहकर विद्या पढ़ने के उद्देश्य से धारण किया जाता है।

विद्यासागर—वि० [सं०] विद्या का समुद्र। अगाध विद्वान् [को०]।

विद्याव्रतस्नातक—संज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार वह स्नातक जो गुरु के पास रहकर वेद और विद्याव्रत दोनों समाप्त करके अपने घर लौटे।

विद्यास्नात—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्यास्नातक' [को०]।

विद्यास्नातक—संज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार वह स्नातक जो गुरु के घर रहकर वेदाध्ययन समाप्त करके घर लौटा हो।

विद्यु—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्युत्। बिजली।

विद्युच्चालक—संज्ञा पुं० [सं० विद्युत्+चालक] वह पदार्थ जिसमें विद्युत् की धारा प्रवाहित हो। जैसे, ताँबा आदि।

विद्युच्छिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक पौधा जिसकी जड़ विषैली होती है। २. एक राक्षसी [को०]।

विद्युज्ज्वाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक नाग का नाम। २. बिजली की कौंध [को०]।

विद्युज्ज्वाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कलिकारी या कलियारी नामक वृक्ष। २. बिजली की कौंध। उ०—इसपर चमक रही है रक्तिम, विद्युज्ज्वाला बारबार।—अपरा, पृ० ३५४।

विद्युज्जिह्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. रामायण के अनुसार रावण के पक्ष के एक राक्षस का नाम जो शूर्पणखा का पति था। २. एक यक्ष का नाम (को०)। ३. एक राक्षस का नाम।

विद्युज्जिह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

विद्युता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विद्युत्। बिजली। २. महाभारत के अनुसार एक अप्सरा का नाम।

विद्युताक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम।

विद्युत्^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संध्या। २. बिजली। ३. बृहत्संहिता के अनुसार एक प्रकार की उल्का। ४. एक प्रकार की वीणा। ५. वज्र (को०)। ६. उषा (को०)। ७. प्रजापति बाहुपुत्र की चार कन्याएँ (को०)। ८. अतिजंगली छंद का एक भेद या प्रकार (को०)।

विद्युत्^{2}—संज्ञा पुं० १. एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. समाधि का एक प्रकार (को०)। ३. एक असुर का नाम (को०)।

विद्युत्^{3}—वि० १. जिसमें बहुत अधिक दीप्ति हो। बहुत चमकीला। २. जिसमें किसी प्रकार की दीप्ति या प्रभा न हो।

विद्युत्कंप—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युत्कम्प] बिजली की कौंध या चमक [को॰]।

विद्युत्केश—संज्ञा पुं॰ [सं॰] रामायण के अनुसार हेति नामक राक्षस का पुत्र, जो काल की कन्या भया के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। इसी विद्युत्केश और पौलोमी से राक्षसों के वंश की वृद्धि हुई थी।

विद्युत्केशी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युत्केशिन्] दे॰ 'विद्युत्केश' [को॰]।

विद्युत्ता—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विद्युत् का भाव या धर्म। बिजलीपन।

विद्युत्पताक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] प्रलय के समय के सात मेघों में से एक मेघ का नाम।

विद्युत्पर्णा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक अप्सरा का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

विद्युत्पात—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बिजली का गिरना। वज्रपात।

विद्युत्पुंज—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युत्पुञ्ज] एक विद्याधर [को॰]।

विद्युत्प्रपतन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विद्युत्पात' [को॰]।

विद्युत्प्रभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. महाभारत के अनुसार एक ऋषि का नाम। २. वह जो विद्युत् के समान दीप्तिमान् हो। ३. एक दैत्य का नाम।

विद्युत्प्रभा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. दैत्यों के राजा बलि की पोती का नाम। २. अप्सराओं का एक गण। ३. बिजली का प्रकाश या दीप्ति।

विद्युत्प्रिय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] काँसा नामक धातु या उसका कोई बरतन, जिसकी ओर बिजली जल्दी खिँचती है।

विद्युत्य—वि॰ [सं॰] विद्युत् या बिजली से उत्पन्न।

विद्युत्वत्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह जिसमें विद्युत् हो। जैसे, बादल। (को॰)। २. मेघ। बादल।

विद्युत्वान्^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युत्वत्] १. एक पर्वत। २. बादल। मेघ [को॰]।

विद्युत्वान्^{2}—वि॰ १. बिजली के समान चमकीला। २. बिजली के समान क्षणिक [को॰]।

विद्युदक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पुराणानुसार एक दैत्य का नाम।

विद्युदुन्मेष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बिजली की चमक। विद्युत्कंप [को॰]।

विद्युद्गौरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शक्ति की एक मूर्ति का नाम।

विद्युद्दाम— पुं॰ [सं॰विद्युद्दामन्] वक्रगति युक्त बिजली की कौंध या चमक। विद्युल्लता। विद्युल्लेखा। उ॰—दुहरा विद्युद्दाम चढ़ा द्रुत, इंद्रधनुष की कर टंकार।—पल्लव, पृ॰ ९२।

विद्युद्द्योत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बिजली की चमक या कौंध [को॰]।

विद्युद्ध्वज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. एक असुर का नाम। २. दे॰ 'विद्युत्पताक'।

विद्युद्वर्णा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक अप्सरा [को॰]।

विद्युद्वल्ली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] बिजली की कौंधा। विद्युल्लता [को॰]।

विद्युन्मापक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युत्+मापक] एक विशेष प्रकार का यंत्र जिससे यह जाना जाता है कि विद्युत् का बल कितना और प्रवाह किस ओर है।

विद्युन्माल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. रामायण के अनुसार एक बंदर का नाम। २. दे॰ 'विद्युन्माला'।

विद्युन्माला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. बिजली का समूह या सिलसिला। २. एक यक्षिणी का नाम। ३. एक छंद जिसके प्रत्येक चरण में आठ आठ गुरु वर्ण अथवा दो मगण और दो गुरु वर्ण (म म ग ग) होते हैं और चार वर्णों पर यति होती है। उ॰—मैं मागों गोपी सो दाना। भागो बोली नाहीं काना। कारी सारी ताही माला। भासी मोही विद्युन्माला।—जगन्नाथ (शब्द॰)।

विद्युन्माली—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विद्युन्मालिन्] १. पुराणानुसार एक राक्षस का नाम। उ॰—विद्युत्माली रजनिचर, हन्या सुषेणहिं बान। मारि सुषेणहुँ शृंग इक, तोड्यो वाकर यान।—रघुराज (शब्द॰)।

विशेष—इसने शिव की भक्ति करके सोने का एक विमान प्राप्त किया था और उसी विमान पर चढ़कर यह सूर्य के पीछे पीछे घूमा करता था। इससे रात के समय भी उस विमान में अंधकार नहीं होने पाता था। इससे घबराकर सूर्य ने अपने तेज से वह विमान गलाकर जमीन पर गिरा दिया था। रामायण में कहा है कि धर्म के पुत्र सुषेण के साथ इसका युद्ध हुआ था।

२. महाभारत के अनुसार एक असुर का नाम। ३. एक छंद का नाम जिसके प्रत्येक चरण में एक भगण, एक मगण और अंत में दो गुरु होते हैं। ४. एक प्रकार के देवता (को॰)। ५. एक विद्याधर का नाम (को॰)।

विद्युन्मुख—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार के उपग्रह।

विद्युल्लक्षण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अथर्ववेद का ५९वाँ परिशिष्ट [को॰]।

विद्युल्लता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विद्युत्। बिजली। उ॰—नीरव विद्युल्लता आज लंका पर टूटी।—साकेत, पृ॰ ४०८।

विद्युल्लेखा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में दो मगण होते हैं। इसे शेषराज भी कहते हैं। उ॰—मैं माटी खाई। झूठे ग्वाला माई। मू बायो मा देखा। जाती विद्युल्लेखा।—जगन्नाथ (शब्द॰)। २. विद्युत्। बिजली की कौंध। बिजली।

विद्युल्लोचन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार की समाधि [को॰]।

विद्युल्लोचना—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक नागकन्या [को॰]।

विद्येश—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शिव का एक नाम।

विद्येश्वर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शिव। २. शैव मतानुसार एक उन्नत योनि। ३. एक ऐंद्रजालिक [को॰]।

विद्योत^1—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विद्युत्। बिजली। २. प्रभा। दीप्ति। चमक। ३. एक अप्सरा का नाम।

विद्योत^2—वि॰ चमकीला। प्रकाशमान [को॰]।

विद्योतक—वि॰ [सं॰] द्योतित करनेवाला। दीप्त करनेवाला [को॰]।

विद्योतन^1—वि॰ [सं॰ स्त्री॰ विद्योतिनी] १. प्रकाश करनेवाला। चमकानेवाला। २. उदाहरण के साथ निरूपण करनेवाला। व्याख्याता [को॰]।

विद्योतन^{2}—संज्ञा पुं० बिजली [को०]।

विद्योती—वि० [सं० विद्योतिन्] [वि० स्त्री० विद्योतिनी] द्योतित करनेवाला। व्यक्त वा प्रकाशित करनेवाला [को०]।

विद्योपयोग—संज्ञा पुं० [सं०] प्राप्त ज्ञान को प्रयोग में लाना या विद्यादान करना।

विद्योपार्जन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्यार्जन'।

विद्योपार्जित—वि० [सं०] जिसे विद्या द्वारा अर्जित किया जाय। जैसे, विद्योपार्जित धन।

विद्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. छिद्र। छेद। २. फाड़ना। खंड खंड करना। छेद करना (को०)।

विद्रध^{1}—वि० [सं०] १. मोटा ताजा। २. दृढ़। मजबूत। पक्का। ३. जो किसी काम के लिये अच्छी तरह तैयार हो।

विद्रध^{2}—संज्ञा पुं० एक फोड़ा। दे० 'विद्रधि'।

विद्रधि—संज्ञा पुं०, स्त्री० [सं०] पेट के अंदर का एक प्रकार का फोड़ा जो बहुत घातक होता है।

यौ०—विद्रधिघ्न। विद्रधिनागन = सिहिजन।

विद्रधिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का छोटा फोड़ा जो प्रमेह रोग के बहुत दिनों तक रहने के कारण होता है।

विद्रधिघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] शोभांजन। सहिजन।

विद्रम (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विद्रुम] दे० 'विद्रुम'। उ०—गति गयंद जँघ केलिप्रभ केहरि जिमि कटि लंक। हरो डसण, विद्रम अधर, मारू भृकुटि मयंक।—ढोला०, दू० ४५४।

विद्रव—संज्ञा पुं० [सं०] १. पलायन। भागना। २. बुद्धि। अक्ल। ३. नाश। ४. भय। आतंक। घबराहट। डर। ५. युद्ध। लड़ाई। ६. प्रवाह। बहना। ७. पिघलना। द्रवीभूत होना। ८. निंदा। शिकायत।

विद्रवण—संज्ञा पुं० [सं०] १. पलायन। भागना। २. पिघलना। गलना [को०]।

विद्रवित—वि० [सं० वि + द्रवित] १. भागा हुआ। पलायित। २. छितराया या बिखरा हुआ। ३. जो द्रवित हो चुका हो। उ०—किंतु कौन तुम, मौन ज्योति विद्रवित जलद से।—रजत०, पृ० ६७।

विद्राण—वि० [सं०] सुप्ति से जाग्रत अवस्था में लाया हुआ। [को०]।

विद्राव—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहना। क्षरण। २. पिघलना। गलना। ३. पलायन। 'विद्रव'।

विद्रावक—वि० [सं०] १. भगानेवाला। २. द्रवित करनेवाला [को०]।

विद्रावण^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. भगाना। पराजित करना। २. पिघलाना। ३. गलाना। ४. उड़ाना। ५. फाड़ना। ६. वह जो नष्ट करता हो। ७. एक दानव का नाम।

विद्रावण^{2}—वि० आतंकित करनेवाला। भगानेवाला। घबरा देनेवाला। जैसे—महामोह विद्रावण।

विद्राविणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौवाठोंठी।

विद्रावित—वि० [सं०] १. खदेड़ा या भगाया हुआ। डराया हुआ। २. फैलाया या बिखराया हुआ। तितर बितर किया हुआ। ३. पिघलाया या गलाया हुआ [को०]।

विद्रावी—संज्ञा पुं० [सं० विद्राविन्] १. भागनेवाला। २. भगानेवाला। ३. गलनेवाला। ४. फाड़नेवाला।

विद्राव्य—वि० [सं०] १. जिसका विद्राव करणीय हो। भगाने के लायक। २. पिघलाने या गलाने योग्य [को०]।

विद्रुत^{1}—वि० [सं०] १. भागा हुआ। २. गला हुआ। ३. पिघला हुआ। ४. आतंकित। भयभीत (को०)। ५. नष्ट (को०)।

विद्रुत^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. युद्ध का एक विशेष ढंग। २. उड़ान [को०]।

विद्रुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भागना। २. गलना। ३. पिघलना। ४. नष्ट होना।

विद्रुधि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्रधि'।

विद्रुम^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रवाल। मूँगा। २. मुक्ताफल नामक वृक्ष। ३. वृक्ष का नया पत्ता। कोंपल। ४. एक पहाड़ का नाम (को०)।

विद्रुम^{2}—वि० द्रुमहीन [को०]।

विद्रुमच्छवि—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

घिद्रुमदंड—संज्ञा पुं० [सं०] मुक्ताफल या रत्नवृक्ष की शाखा [को०]।

विद्रुमफल—संज्ञा पुं० [सं०] कुंदुरु नामक सुगंधित गोंद।

विद्रुमलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नलिका या नली नामक गंधद्रव्य। २. मूँगा।

विद्रुमलतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विद्रुमलता' [को०]।

विद्रूप—संज्ञा पुं० [सं०] परिहास। व्यंग्य। मजाक। ठट्ठा। उ०—प्रगतिशील साहित्य के मानदंड पुस्तक में डा० रांगेय राघव का यह आक्रोश भरा विद्रूप।—हिंदी आ०, पृ० १२।

विद्रोह—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी के प्रति होनेवाला वह द्वेष या आचरण जिससे उसको हानि पहुँचे। २. राज्य में होनेवाला भारी उपद्रव जो राज्य को हानि पहुँचाने या नष्ट करने के उद्देश्य से हो। क्रांति। बलवा। बगावत।

विद्रोही—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विद्रोहिन्, [स्त्री० विद्रोहिणी] १. जो किसी के प्रति विद्रोह या द्वेष करता हो। २. राज्य का अनिष्ट करनेवाला। बागी।

विद्वज्जन—संज्ञा पुं० [सं० विद्वत् + जन] १. विद्वान् या कुशल व्यक्ति। २. संत। तपस्वी ऋषि (को०)।

विद्वत्—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

यौ०—विद्वत्कल्प = जो विद्वान् न हो। कम पढ़ा लिखा। विद्वज्जन। विद्वत्तम = (१) शिव। (२) विद्वानों में श्रेष्ठ। महान् विद्वान्। विद्वद्देश्य। विद्वद्देशीय = विद्वत्कल्प।

विद्वत्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बहुत अधिक विद्वान् होने का भाव। पांडित्य।

विद्वत्व—संज्ञा पुं० [सं० विद्वत्त्व] बहुत अधिक विद्वान होने का भाव। विद्वत्ता। पांडित्य।

विद्वद्देशीय—वि० [सं०] विद्वत्कल्प। कम शिक्षित [को०]।

विद्वान्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विद्वस्] १. वह जो आत्मा का स्वरूप जानता हो। २. वह जिसने बहुत अधिक विद्या पढ़ी हो। पंडित। ३. वह जो सब कुछ जानता हो। सर्वज्ञ।

विद्वान्^{२}—वि० १. ज्ञाता । जानकार । २. बुद्धिमान् । पंडित । विद्यायुक्त ।

विद्विट्^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विद्विष] शत्रु [को०] ।

विद्विट्^{२}—वि० द्वेषी । द्वेष रखनेवाला [को०] ।

विद्विष—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विद्वेष या शत्रुता करता हो । शत्रु । दुश्मन ।

विद्विषाण—वि० [सं०] द्वेष या शत्रुता करनेवाला [को०] ।

विद्विष्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विद्विष' ।

विद्विष्ट—वि० [सं०] १. जिसके साथ विद्वेष या शत्रुता की जाय । द्वेष का पात्र या भाजन । २. घृणित । कुत्सित (को०) ।

विद्विष्टता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्विष्ट होने का भाव ।

विद्विष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्वेष । शत्रुता । दुश्मनी ।

विद्वेष—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रुता । दुश्मनी । वैर । द्वेष । २. अभिमत वा ईप्सित की प्राप्ति होने पर भी उद्धत गर्व या मान के कारण अनादर या घृणाभाव (को०) ।

विद्वेषक—वि० संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विद्वेष करता हो । द्वेषी शत्रु । बैरी ।

विद्वेषण—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विद्वेषणी] १. शत्रुता । दुश्मनी । बैर । २. तंत्र के अनुसार एक प्रकार की क्रिया जिसके द्वारा दो व्यक्तियों में द्वेष या शत्रुता उत्पन्न की जाती है । ३. वह जो द्वेष करता हो । शत्रु । बैरी । ४. सज्जनता का उल्टा । दुष्टता ।

विद्वेषणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रोषपूर्ण स्वभाव की स्त्री । कोपना स्त्री । २, द्वेष या बैर रखनेवाली औरत [को०] ।

विद्वेषिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार दुःसह नामक यक्ष की आठवीं और अंतिम कन्या जो निर्माष्टि के गर्भ से उत्पन्न हुई थी ।

विशेष—कहते हैं, यही लोगों में द्वेष उत्पन्न करती है । इसे शांत करने के लिये दूध, शहद और घी में मिले हुए तिलों से होम आदि करने का विधान है ।

२. दे० 'विद्वेषणी' ।

विद्वेषिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शत्रुता । शात्रव भाव । दुश्मनी [को०] ।

विद्वेषी—संज्ञा पुं० [सं० विद्वेषिन्] [स्त्री० विद्वेषिणी] १. वह जो विद्वेष करता हो । द्वेषी । २. शत्रु । बैरी ।

विद्वेष्टा—संज्ञा पुं० [सं० विद्वेष्टृ] १. वह जो विद्वेष करता हो । २. शत्रु । बैरी ।

विद्वेष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. जिसके साथ विद्वेष किया जाय । द्वेष का पात्र या भाजन । २. कंकोल ।

विधंस(पु)^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विध्वंस] विध्वंस । नाश । उ०—माया कंस विधंस मुरारी । दारिद बारिद प्रबल बयारी ।—रघुराज (शब्द०) ।

विधंस^{२}—वि० विध्वस्त । नष्ट । विनष्ट ।

विधंसना(पु)†—क्रि० स० [सं० विध्वंसन] नष्ट करना । बरबाद करना । उ०—चाँद सुरज सौं होइ बिवाहू । बारि बिधंसब, बेधव राहू ।—जायसी (शब्द०) ।

विध(पु)^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विधि] विधि । ब्रह्मा । उ०—नैन की कोर ते नेह कियो विध डील की छाँह ते शील सँवारो ।—हृदय० (शब्द०) ।

विध^{२}—संज्ञा स्त्री० दे० 'विध' ।

विध^{३}—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रकार । किस्म । २. ढंग । रीति । रूप । ३. प्रकार । तरह । किस्म । ४. हाथियों का आहार । ५. समृद्धि । वैभव । ६. छेदन [को०] ।

विधत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० विधात्री] ब्रह्मा की शक्ति, महासरस्वती ।

विधन—वि० [सं०] जिसके पास धन न हो । निर्धन । गरीब ।

विधनता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विधन होने का भाव । निर्धनता । गरीबी ।

विधना^{१}—क्रि० स० [सं० विधि] १. प्राप्त करना । अपने साथ लगाना । ऊपर लेना । २. वेधन करना । वेधना । उ०—(क) लए फँदाइ विहंग मानो मदन व्याध विधए ।—सूर (शब्द०) । (ख) थाके सूर पथिक मग मानो मदन व्याधि विधए री ।—सूर । (शब्द०) ।

विधना^{२}—क्रि० अ० १. विँधा जाना । विद्ध होना । २. उलझना । फँसना । दे० 'बिंधना' ।

विधना^{३}—संज्ञा स्त्री० [सं० विधि] वह जो कुछ होने को हो । भवितव्यता । होनी ।

विधना^{४}—संज्ञा पुं० विधि । ब्रह्मा । उ०—विधना ऐसी रैन कर भोर कभी ना होय ।—(शब्द०) ।

विधनुष्क—वि० [सं०] धनुष से रहित । धनुषहीन [को०] ।

विधन्वा—वि० [सं० विधन्वन्] दे० 'विधनुष्क' ।

विधमन—संज्ञा पुं० [सं०] १. धौंकनी या नल आदि के द्वारा हवा पहुंचाकर आग सुलगाना । धौंकना । विधूनन । उड़ाना । २. अग्नि आदि । बुझाना । नष्ट करना (को०) ।

विधमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक राक्षसी [को०] ।

विधर†—क्रि० वि० [पुं० हिं०] दे० 'उधर' । उ०—जैसे रथ के घोड़े बाग के आश्रय जिधर ले जाते हैं, विधर जाता है ।—यमुनाशंकर (शब्द०) ।

विधरकता†—संज्ञा स्त्री० [हिं० बेधड़क + ता (प्रत्य०)] निर्भयता । उ०—या प्रकार बोहोत ही आर्ति सों श्री गुसाईं जी सों हरिदास की बेटी ने प्रार्थना करि कै अपनी सास तें विधरकता सों बाली । —दो सौ बावन०, भा० १, पृ० २५५ ।

विधरण^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पकड़ना । रोकना । २. दे० 'विधृत' ।

विधरण^{२}—वि० पकड़नेवाला । रोकने या रुद्ध करनेवाला [को०] ।

विधर्ता—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विधर्तृ] व्यवस्था करनेवाला । सँभाल करनेवाला । प्रबंधक [को०] ।

विधर्म^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अपने धर्म को छोड़कर और किसी का धर्म । पराया धर्म । २. अन्याय । अधर्म (को०) । ३. अपने धर्म को छोड़तर दूसरे का धर्म ग्रहण करना, जो पाँच प्रकार के अधर्मों में से एक कहा गया है ।

विधर्म[२]—वि० [सं०] १. जिसकी धर्मशास्त्र में निंदा की गई हो। २. जिसमें गुण न हो। गुणहीन।

विधर्मक—वि० [सं०] दे० 'विधर्मिक'।

विधर्मा—वि० [सं० विधर्मन्] अनुचित या गलत कार्य करनेवाला। अन्यायकारी [को०]।

विधर्मिक—वि० [सं०] १. जो धर्मविरुद्ध आचरण करता हो। २. जो दूसरे धर्म का अनुयायी हो।

विधर्मी—वि० [सं० विधर्मिन्] १. जो अपने धर्म के विपरीत आचरण करता हो। धर्मभ्रष्ट। २. जो किसी दूसरे धर्म का अनुयायी हो। ३. विभिन्न प्रकार का (को०)।

विधवन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंपन। २. हिलाना [को०]।

विधवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसका पति मर गया हो। पतिहीन स्त्री। राँड़। बेवा। उ०—(क) सुत वधू विधवा सों बोलि कै सुनायो लेहु धनपति गेह श्री गुपाल भरतार है।—नाभा (शब्द०)। (ख) ब्राह्मण विधवा नारि सुर गुरु अंश चुरावहीं। कहै न वचन विचारि, परै सोई निरश्वास मँह।—विश्राम (शब्द०)।

विशेष—स्मृतियों में विधवा स्त्रियों के लिये ब्रह्मचर्य तथा कठिन कठिन नियमों का पालन विधेय है। जैसे,—तांबूल और मद्य-मांस आदि का त्याग। द्विजातियों में विधवा के लिये पुनर्विवाह का नियम नहीं है। केवल पराशर संहिता में यह कहा गया है कि स्वामी के नष्ट अर्थात् लापता होने, मरने, अथवा संन्यासी, क्लीव या पतित होने पर स्त्री दूसरा पति कर सकती है। पर और स्मृतियों के साथ अविरोध सिद्ध करने के लिये पंडित लोग 'अन्य पति' शब्द का अर्थ 'दूसरा पालनकर्ता' किया करते हैं।

विधवागामी—संज्ञा पुं० [सं० विधवागामिन्] विधवा स्त्री के साथ यौन संबंध रखनेवाला व्यक्ति। विधवा का जार [को०]।

विधवापन—संज्ञा पुं० [सं० विधवा + हिं० पन (प्रत्य०)] विधवा होने की अवस्था। वह अवस्था जिसमें पति के मरने के कारण स्त्री पतिहीन हो जाती है। रँड़ापा। वैधव्य। उ०—लिख्यो न विधि मिलिबे तिहि मोंही। प्राणजई विधवापन तोही।—रघुराज (शब्द०)।

विधवाविवाह—संज्ञा पुं० [सं०] विधवा स्त्री के साथ विवाह करना।

विधवावेदन—संज्ञा पुं० [सं० विधवा + आवेदन] दे० 'विधवाविवाह'।

विधवाश्रम—संज्ञा पुं० [सं० विधवा + आश्रम] विधवाओं के रहने का स्थान। अनाथ विधवाओं का शरणगृह। वह स्थान जहाँ विधवाओं के पालन पोषण तथा शिक्षा आदि का प्रबंध किया जाता है। उ०—इन बालिकाओं के लिये अध्यापक कर्वे ने पूना में 'अनाथ विधवाश्रम' खोला है।—सरस्वती (शब्द०)।

विधव्य—संज्ञा पुं० [सं०] कंपन। थरथराहट। विक्षोभ [को०]।

विधस—संज्ञा पुं० [सं०] मोम।

विधस्—संज्ञा पुं० [सं०] सृष्टिकर्ता। ब्रह्मा [को०]।

विधांसना(पु)†—क्रि० स० [सं० विध्वंसन] १. नष्ट करना। बरबाद करना। उ०—(क) श्री जोबन मैमंत विधाँसा। बिचला बिरह लै नासा।—जायसी (शब्द०)। (ख) भएउ जूझ जस रावन रामा। सेज विधांस, बिरह सग्रामा।—जायसी (शब्द०)। २. अस्तव्यस्त करना। इधर उधर करना। गड़बड़ कर देना।

विधा[१]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. माध्यम। रीति। रूप। ढंग। २. प्रकार, तरह। किस्म। ३. हाथी घोड़े आदि का चारा। ४. समृद्धि। संपन्नता। ५. वेधन कर्म। छेदना। ६. उच्चारण। ७. पारिश्रमिक। मजदूरी। ८. व्यवहार। आचरण। क्रिया। चेष्टा [को०]।

विधातव्य—वि० [सं०] १ विधान के योग्य। विधेय। २. करने योग्य। कर्तव्य।

विधाता[१]—संज्ञा पुं० [सं० विधातृ] [स्त्री० विधात्री] १. विधान करनेवाला। रचनेवाला। बनानेवाला। २. उत्पन्न करनेवाला। तैयार करनेवाला। उ०—विद्या वारिध बुद्धि विधाता।—तुलसी (शब्द०)। ३. व्यवस्था करनेवाला। प्रबंध करनेवाला। इंतजाम करनेवाला। ठीक तरह से लगानेवाला। उ०—ए गोसाइँ! तू ऐस विधाता। जावत जीव सबन्ह भुक्तदाता।—जायसी (शब्द०)। ४. सृष्टि बनानेवाला। जगत् की रचना करनेवाला। सृष्टिकर्ता। ब्रह्मा या ईश्वर। उ०—कुछ संदेह नहीं कि विधाता ने मुझे अत्यंत सुकुमारी बनाया है।—तोताराम (शब्द०)। ५. वितरण करने वा देनेवाला। दाता (को०)। ६. दैव। भाग्य। किस्मत (को०)। ७. विश्वकर्मा (को०)। ८. कामदेव (को०)। ९. मदिरा। शराब। (स्त्रीलिंग में भी प्रयुक्त)। १०. माया (को०)।

विधातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] विधान करनेवाली। विधात्री।

विधातृभू—संज्ञा पुं० [सं०] नारद का एक नाम जो विधाता के पुत्र हैं [को०]।

विधात्रायु—संज्ञा पुं० [सं० विधात्रायुस्] १. सूर्यमुखी का फूल। २. सूर्य की ज्योति। सूर्यप्रभा [को०]।

विधात्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विधान करनेवाली। रचनेवाली। बनानेवाली। २. व्यवस्था करनेवाली। प्रबंध करनेवाली। ३. पिप्पली। पीपल। ४. माता। जननी। ५. सरस्वती। शारदा। उ०—सती विधात्री इंदिरा देखी अमित अनूप। जेहि जेहि वेष अजादि सुर तेहि तेहि तन अनुरूप।—मानस, १।५४।

विधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी कार्य का आयोजन। काम का होना या चलना। विन्यास। संपादनक्रम। अनुष्ठान। जैसे—जो कुछ करना है, उसी का विधान अब होना चाहिए।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

२. व्यवस्था। प्रबंध। इंतजाम। बंदोबस्त। जैसे,—पहले ही से ऐसा विधान करो कि कार्य आरंभ करने में देर न हो। ३. कार्य करने की रीति। विधि। प्रणाली। पद्धति। जैसे—शास्त्रों में ऐसा विधान है। उ०—तुम विज्ञ विविध विधान।—केशव (शब्द०)। ४. रचना। निर्माण। ५. ढंग। तरकीब। उपाय। युक्ति। जैसे—कोई ऐसा विधान निकालो कि कार्य निर्विघ्न हो जाय। ६. उतना चारा जितना हाथी एक बार मुँह में डालता है। हाथी का ग्रास। ७. हानि पहुँचाने का दाँवपेंच।

शत्रुता का आचरण। ८. प्रेरण। भेजना। ९. अनुमति देने का कार्य। आज्ञा करना। १०. धन संपत्ति। ११. पूजा। अर्चन। १२. नाटक में वह स्थल जहाँ किसी वाक्य द्वारा एक साथ सुख और दुःख प्रकट किया जाता है। जैसे,—'बाल्यकाल ही में तुम्हारा ऐसा उत्साह देख मुझे हर्ष और विषाद दोनों होते हैं। १३. पीड़ा। वेदना। संताप (को०)। १४. प्राप्ति। लाभ (को०)। १५. प्रतिकार (को०)। १६. वेद (को०)। १७. भाग्य। दैव (को०)। १८. उपसर्ग या प्रत्यय का योग (को०)। १९. नियम। कानून (को०)।

विधानक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विधान। विधि। २. विधानवेत्ता। विधि या रीति जाननेवाला। ३. कष्ट। पीड़ा (को०)।

विधानग—संज्ञा पुं० [सं०] १. विधान का ज्ञाता। पंडित। २. आचार्य। अध्यापक [को०]।

विधानज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. विधान का ज्ञाता। २. अध्यापक। आचार्य [को०]।

विधानपरिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यवस्थापिका सभा। प्रांत में सुचारु रूप से व्यवस्था के लिये विधान या कानून बनानेवाली सभा।

विधानयुक्त—वि० [सं०] विधिविहित। विधि के अनुकूल [को०]।

विधानविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] रचना। वाक्यविन्यास। वाक्य रूप या आकार प्रकार। (अं० फार्म) उ०—विधानविधि का भेद ऊपर सूचित किया गया।—चिंतामणि, भा० २, पृ० १३९।

विधानव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य का एक व्रत। दे० 'विधानसप्तमी व्रत' [को०]।

विधानशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवस्था शास्त्र। आईन। २. नीतिशास्त्र [को०]।

विधानसप्तमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ शुक्ला सप्तमी।

विधानसप्तमी व्रत—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य का एक व्रत जो माघ शुक्ला सप्तमी को आरंभ करके साल भर तक (पौष तक) किया जाता है। इसमें सूर्य का पूजन होता है।

विधानापहार—संज्ञा पुं० [सं०] विधान का अपहरण करना। निषेध को विधि के रूप में लाना। उ०—विधानापहार—विधान को बदल देना अर्थात् निषेध को विधि रूप में कहना।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, २६३।

विधानिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृहती।

विधानी—संज्ञा पुं० [सं० विधान + ई (प्रत्य०)] १. विधान का जाननेवाला। विधानज्ञ। २. विधिपूर्वक कार्य करनेवाला।

विधानीक(पु)—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का डिंगल छंद। उ०—तुक तुक में क्रम सों तवैं, अवर अवर विध जांण। सझ चौथी तुक नाम सों विधानीक बाँखाण।—रघु० रू०, पृ० २४६।

विधायक—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विधायिका] १. विधान करनेवाला। कार्य करनेवाला। २. बनानेवाला। रचनेवाला। संस्थापक। उ०—हे विरंचि तैं विश्वविधायक।—रघुराज (शब्द०)। ३. व्यवस्था करनेवाला। प्रबंध करनेवाला। व्यवस्था देनेवाला। प्रस्तुत करनेवाला। उ०—मंगल मूरति सिद्ध विधायक।—शंकर दि० (शब्द०)। ४. विधाननिर्माता। कानून बनानेवाला (आधु०)। ५. रचनात्मक।

विधायिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विधायक'।

विधायी—वि० [सं० विधायिन्] १ विधानकर्ता। २. व्यवस्थापक। ३ नियामक। दे० 'विधायक' [को०]।

विधायिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संस्थापिका। २ निर्मात्री [को०]।

विधारण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सँभालना। रोकना। २. वहन करना। ढोना। ३. वह जो अलग करे। पृथक्कर्ता [को०]

विधारा—संज्ञा पुं० [सं० वृद्ध + दारु] एक प्रकार की लता जो दक्षिण भारत में बहुतायत से होती है।

विशेष—इसका झाड़ बहुत बड़ा और इसकी शाखाएँ बहुत घनी होती हैं। इसकी डालियों पर गुलाब के से काँटे होते हैं। पत्ते तीन अंगुल लंबे अंडाकार और नोकदार होते हैं। डालियों के सिरे पर चमकदार पीले फूलों का गुच्छा होता है। वैद्यक में इसे गरम, मधुर, मेधाजनक, अग्निप्रदीपक, धातुवर्धक और पुष्टिदायक माना है। उपदंश, प्रमेह, क्षय, वातरक्त आदि में इसे औषधि की भाँति व्यवहार में लाते हैं।

पर्या०—जीर्णदारु। वृद्धदारु। वृद्धदारुक। गर्भवृद्धि।

विधि^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कोई कार्य करने की रीति। कार्यक्रम। प्रणाली। ढंग। नियम। कायदा। जैसे—पूजा की विधि, यज्ञ की विधि। २. व्यवस्था। संगति। योजना। करीना। मेल या सिलसिला।

मुहा०—विधि बैठना = (१) परस्पर अनुकूलता होना। मेल बैठना। मेल खाना। व्यवहार निभना। जैसे,—हमारी उनकी विधि नहीं बैठेगी। (२) सब बातों का ठीक होना। इच्छानुकूल व्यवस्था होना। जैसे,—फिर क्या है, तुम्हारी विधि बैठ गई।

३. किसी शास्त्र या ग्रंथ में लिखी हुई व्यवस्था। शास्त्रोक्त विधान।

मुहा०—कुंडली की विधि मिलना = कुंडली में लिखी बात का पूरा होना। फलित ज्योतिष द्वारा बताई हुई बात का ठीक घटना।

४. किसी शास्त्र या धर्मग्रंथ में किया हुआ कर्तव्यनिर्देश। कर्म के अनुष्ठान की आज्ञा या अनुमति। शास्त्र में इस प्रकार का कथन कि मनुष्य यह काम करे।

विशेष—किसी काम को करने की आज्ञा को 'विधि' और न करने की आज्ञा को 'निषेध' कहते हैं। पूर्वमीमांसा में नियोग का नाम विधि है। अर्थात् जो वाक्य किसी इष्ट फल की प्राप्ति का उपाय बताकर उसे करने की प्रवृत्ति उत्पन्न करे, वही विधि है। जैसे,—'स्वर्ग चाहनेवाला यज्ञ करे'। विधि दो प्रकार की कही गई है—प्रधान विधि और अंग विधि। फल देनेवाली संपूर्ण क्रिया के आदेश करनेवाले वाक्य को 'प्रधान विधि' कहते हैं। जैसे,—'जैसे

पुत्र की कामना हो, वह पुत्रेष्टि यज्ञ करे'। प्रधान क्रिया के अंतर्गत होनेवाली छोटी छोटी क्रियाओं के निर्देश को 'अंगविधि' कहते हैं। जैसे,—'चावल से यज्ञ करे, दधि का हवन करे, इत्यादि।

यौ०—विधि निषेध = किसी काम को करने और न करने की शास्त्रीय आज्ञा। उ०—विधिनिषेध मय कलिमल हरनी। —तुलसी (शब्द०)।

५. व्याकरण में क्रिया का वह रूप जिसके द्वारा किसी को कोई काम करने का आदेश किया जाता है। जैसे,—यह काम करो या काम करना चाहिए। यह लिङ् लकार में होता है और इसके दो भेद हैं। एक विधिलिङ् दूसरा आशिष् लिङ्। ६. साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें किसी सिद्ध विषय का फिर से विधान किया जाता है। जैसे—वर्षा काल के ही मेघ मेघ हैं। ७. आचार व्यवहार। चालढाल।

यौ०—गतिविधि = चेष्टा और कार्रवाई। जैसे,—उसकी गतिविधि पर ध्यान रखना।

८. भाँति। प्रकार। किस्म। तरह। उ०—एहि विधि राम सबहिं समुझावा। —तुलसी (शब्द०)। ९. प्रयोग (को०)।

विधि²—संज्ञा पुं० [सं०] १ सृष्टि का विधान करनेवाला। ब्रह्मा। उ० विधि करतब सब उलटे अहहीं। —तुलसी (शब्द०)। २. भाग्य। दैव (को०)। ३. विष्णु (को०)। ४. अग्नि (को०)। ५. समय (को०)। ६. हाथियों का खाद्य या चारा (को०)। ७. चिकित्सक। वैद्य (को०)। ८. कर्म (को०)। १०. यज्ञ नियमों का उपदेशक ग्रंथ (को०)।

विधिकर—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] नौकर। दास। आज्ञाकारी। सेवक [को०]।

विधिकृत् वि० संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विधिकर'।

विधिघ्न—वि० [सं०] नियमों का उल्लंघन करनेवाला। विधि को न माननेवाला [को०]।

विधिज्ञ¹—वि० [सं०] १. विधि को जाननेवाला। शास्त्रोक्त विधान को जाननेवाला। २. रीति जाननेवाला।

विधिज्ञ²—संज्ञा पुं० वह ब्राह्मण जो शास्त्रोक्त विधियों का पारगंत हो। शास्त्रवेत्ता। विद्वान् [को०]।

विधित्समान—वि० [सं०] करने या देने की इच्छा रखनेवाला। २. मतलबी।

विधित्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संपन्न करने या विधान करने की इच्छा। २. आयोजन [को०]।

विधित्सित¹—वि० [सं०] जिसे करने की इच्छा की गई हो [को०]।

विधित्सित²—संज्ञा पुं० अभिप्राय। नीयत [को०]।

विधित्सु—वि० [सं०] करने की इच्छा रखनेवाला [को०]।

विधिदर्शक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विधिदर्शी' [को०]।

विधिदर्शी—संज्ञा पुं० [सं० विधिदर्शिन्] १. यज्ञ में यह देखने के लिये नियुक्त पुरुष कि होता, आचार्य आदि ठीक ठीक विधि के अनुकूल कर्म कर रहे हैं या नहीं। २. सदस्य।

विधिदृष्ट—वि० [सं०] विधि के अनुकूल [को०]।

विधिदेशक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सदस्य। दे० 'विधिदर्शी'। २. अध्यापक। आचार्य [को०]।

विधिद्वैध—संज्ञा पुं० [सं०] विधि या समादेश की विविधता। नियमों की भिन्नता [को०]।

विधिना—संज्ञा पुं० [सं० विधि हिं० + ना (प्रत्य०)] विधि। ब्रह्मा।

विधिनिषेध—संज्ञा पुं० [सं०] करणीय और अकरणीय कर्म का निर्देश।

विधिपत्त(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विधि + पत्र, प्रा० विधि + पत्त] विधि का पत्र। भाग्यलेख। उ०—दिय दरिद्र मंगनं वरहु को मेटै विधिपत्त।—पृ० रा०, ६१।५७८।

विधिपाट—संज्ञा पुं० [सं०] मृदंग के चार वर्णों में से एक वर्ण। चारों वर्ण ये हैं—पाट, विधिपाट, कूटपाट और खंडपाट।

विधिपुत्र—संज्ञा पुं० [सं० विधि + पुत्र] ब्रह्मा के पुत्र, नारद।

विधिपुर संज्ञा पुं० [सं० विधि + पुर] ब्रह्मा का लोक, ब्रह्मलोक। उ०—स्वर्ग लोक महँ बचब न देखी। विधिपुर गयो त्राण निज लेखी।—रघुराज (शब्द०)।

विधिपूर्वक—अव्य० [सं०] नियम के अनुसार। 'विधिवत्' [को०]।

विधिप्रयोग—संज्ञा पुं० [सं०] विधि या नियम का प्रयोग [को०]।

विधिबोधित—वि० [सं०] शास्त्र विधि द्वारा बताया हुआ। शास्त्र संमत।

विधियज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] वह यज्ञ जिसके करने की विधि हो। जैसे,—दर्शपौर्णमास।

विधियोग—संज्ञा पुं० [सं०] १. नियम का अनुसरण या पालन। २. भाग्य का प्रभाव [को०]।

विधिरानी(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विधि + हिं० रानी] ब्रह्मा की पत्नी, सरस्वती। उ०—वंदौ वाणी वीणा कर विधिरानी विख्यात।—रघुराज (शब्द०)।

विधिलोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मलोक। सत्यलोक। २. शास्त्रीय विधानों का अभाव या न होना।

विधिलोप—संज्ञा पुं० [सं०] विधि या नियमों का तिरस्कार [को०]।

विधिवत्—क्रि० वि० [सं०] १ विधिपूर्वक। विधि से। पद्धति के अनुसार। कायदे के मुताबिक। २. जैसा चाहिए। उचित रूप से। यथायोग्य।

विधिवधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्रह्मा की पत्नी, सरस्वती।

विधिवशात्—अव्य० [सं०] भाग्यतः। भाग्य से। दैवयोग से।

विधिवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा की सवारी हंस।

विधिविपर्यय—संज्ञा पुं० [सं०] भाग्य का फेर। दुर्भाग्य [को०]।

विधिविहित—वि० [सं०] शास्त्र के अनुकूल। नियमानुकूल। [को०]।

विधिसेध—संज्ञा पुं० [सं०] विधि और निषेध।

विधिहीन—वि० [सं०] नियमशून्य। अशास्त्रीय। अविहित [को०]।

विधुंत(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विधुन्तुद] दे० 'विधुंतुद'।

विधुंतुद—संज्ञा पुं० [सं० विधुन्तुद] चंद्रमा को दुःख देनेवाला, राहु। उ०—ज्ञानराकेस ग्रासन विधुंतुद चलन काम करि मत्त हरि।—तुलसी (शब्द०)।

विधुंसन(पु)—क्रि० स० [सं० विध्वंसन] दे० 'विधाँसना'। उ०— पंड कोपियौ किनां धार पण, वोर भद्र दिख ज्याग विधुंसण —रा० रू०, पृ० ९५।

विधुंसना(पु)—क्रि० [सं० विध्वंमप] विध्वंस करना। नाश करना। उ०—ज्याग विधु'से जावै।—रघु० रू०, पृ० ६४।

विधु—संज्ञा पुं० [सं०] १. चद्र'मा। २. वायु। ३. कपूर। ४. ब्रह्मा। ५. विष्णु। ६. एक राक्षस का नाम। ७. आयुध। ८. जलस्नान। ९. पापक्षालन। पाप छुड़ाना। प्रायश्चित्तपरक आहुति। १०. शिव (को०)। ११. युद्ध। लड़ाई (को०)। १२. काल। समय (को०)। १३. एक राजा का नाम (को०)।

विधुक्रांत—संज्ञा पुं० [सं० विधुक्रान्त] संगीत का एक ताल।

विधुक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा की कलाओं का नाश। असित पक्ष। कृष्ण पक्ष [को०]।

विधुत—वि० [सं०] १. त्यक्त। २. कंपित। दे० 'विधूत' [को०]।

विधुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] संक्षोभ। कंपन। विधूति [को०]।

विधुदार—संज्ञा पुं० [सं० विधु+दार] चंद्रमा की स्त्री। रोहिणी। उ०—तारा किधों विधुदार किधों धृतधार सी पावक है परिरंभौ।—मन्नालाल (शब्द०)।

विधुदिन—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रवार। सोमवार [को०]।

विधुनन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विधूनन' [को०]।

विधुपंजर—संज्ञा पुं० [सं० विधुपञ्जर] खड्ग। खाँड़ा।

विधुपरिध्वंस—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रग्रहण [को०]।

विधुपिंजर—संज्ञा पुं० [सं०] विधु+पिञ्जर] खड्ग। खाँड़ा [को०]।

विधुप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चंद्रमा की स्त्री, रोहिणी। २. कुमुदिनी। कोई।

विधुबंधु—संज्ञा पुं० [सं० विधुबन्धु] कुमुद का फूल।

विधुबंधुर(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विधु+बन्धुर (=प्रिय)] कुमुद। उ०—विधुबंधुर मुख भा बड़ो वारिज नैन प्रभाति।—रामसहाय (शब्द०)।

विधुबैनी(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विधु+वदन, प्रा० वयन] चंद्रमुखी। सुंदरी स्त्री। उ०—संग लिए बिधुबैनी बधू रति हू जेहि रंचक रूप दियो है।—तुलसी (शब्द०)।

विधुमंडल—संज्ञा पुं० [सं० विधुमण्डल] चंद्रमा की परिधि या परिवेश। चंद्रमंडल [को०]।

विधुमणि—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रकांत मणि [को०]।

विधुमास—संज्ञा पुं० [सं०] चांद्रमास। महीने की वह गणना जो कृष्ण प्रतिपदा से लेकर शुक्ल पूर्णिमा तक (१ मास) मानी जाती है।

विधुमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विधुबदनी'।

विधुर^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विधुरा] १. दुःखी। २ घबराया हुआ। ३. डरा हुआ। ४. विकल। व्याकुल। जैसे—विरह विधुर। ५. असमर्थ। अशक्त। ६. परित्यक्त। शून्य। वंचित। ७. विमूढ़। ८ विरोधी (को०)। ९. एकाकी। अकेला। १०. (गाड़ी) जिसमें धुरा न हो (को०)।

विधुर^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कष्ट। दुःख। २. वियोग। जुदाई ३. अलग होने की क्रिया या भाव। ४. कैवल्य। मोक्ष। ५. शत्रु। दुश्मन। बैरी। ६. वह पुरुष जिसकी स्त्री मर गई हो [को०]।

विधुरा^{1}—वि० स्त्री० [सं०] १. कातर। व्याकुल। पीड़ित। २. विधवा। पतिहीना।

विधुरा^{2}—संज्ञा स्त्री० १. कानों के पीछे की एक स्नायु ग्रंथि जिसके पीड़ित या खराब होने से प्राणी बहरा हो जाता है। ३. दही की एक प्रकार की गाढ़ी लस्सी जिसे श्रीखंड भी कहते हैं। रसाला।

विधुरित—वि० [सं०] १. विवर्ण। मंदप्रभ। २. कपित [को०]।

विधुबदनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्रमा के समान मुखवाली स्त्री। सुंदरी स्त्री। उ०—विधुवदनी सब भाँति सँवारी। सोह न बसन बिना बर नारी।—तुलसी (शब्द०)।

विधुवन—संज्ञा पुं० [सं०] कंपन। हिलना [को०]।

विधूत—वि० [सं०] १. कंपित। काँपता हुआ। २. हिलता हुआ। डोलता हुआ। ३. त्यागा हुआ। छोड़ा हुआ। त्यक्त। ४. दूर किया हुआ। हटाया हुआ। ५. निकाला हुआ। बाहर किया हुआ।

वितधूकल्मष—वि० [सं०] दे० 'विधूतपाप्मा' [को०]।

विधूतकेश—वि० [सं०] जिसके बाल लहरा रहे हों [को०]।

विधूतनिद्र—वि० [सं०] सोते से जगाया हुआ [को०]।

विधूतपक्ष—वि० [सं०] जिसने अपने पखने हिलाए हों [को०]।

विधूतपाप्मा—वि० [सं० विधूतपाप्मन्] पाप से मुक्त। पापों से छुटकारा पाया हुआ [को०]।

विधूतबंधन—संज्ञा [सं० विधूतबन्धन] जिसने बंधन दूर कर दिया हो। बधनमुक्त।

विधूतवेश—वि० [सं०] जिसके वस्त्र लहरा या हिल रहे हों [को०]।

विधूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] थरथरी। कँपकँपी। विक्षोभ [को०]।

विधूनन^{1}—पुं० [सं०] कंपन। काँपना। विक्षोभ।

विधूनन^{2}—वि० १ प्रतिघाती। विरोधक। निष्कर्षणशील। उ०—रस वात्सल्य करन अनुभव नित। विरह विधूनन हरि मुख नाम।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ४८१।

विधूनित—वि० [सं०] १. क्षुब्ध। कंपित। उ०—हैं विटप विधूनित होते, है छिपता पुलिन दिखाता। पत्तों पर बूँद पतन का, है टप टप नाद सुनाता।—पारिजात, पृ० १२५। २. उत्पीड़ित।

विधूम—वि० [सं०] धूमरहित। बिना धुएँ का। उ०—जारि बारि कै विधूम वारिधि बुताई लूम।—तुलसी (शब्द०)।

विधूम्र—वि० [सं०] धूमिल या मटमैले रंग का। धूसर वर्ण।

विधूवन—संज्ञा पुं० [सं०] कंपन। काँपना।

विधृत^1—वि० [सं०] १. धारण या ग्रहण किया हुआ। २. पृथक् वा वियुक्त किया हुआ। ३. उठाया हुआ। ४. अधिकृत। स्वायत्तीकृत। अपनाया हुआ। ५. अवरुद्ध। ६. समर्थित। ७. रखा हुआ। रक्षित [को०]।

विधृत^2—संज्ञा पुं० १. असंतोष। २. आदेश की अवहेलना। आज्ञा न मानना [को०]।

विधृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पृथक्ता। अलगाव। विभाजन। २. व्यवस्था। नियमन। उ०—सत्ता और विधृति ये दोनों प्रतिष्ठा के रूप हैं।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ६२२।

विधेय—वि० [सं०] १. विधान के योग्य। जिसका विधान या अनुष्ठान उचित हो। जिसका करना उचित हो। कर्तव्य। २. जिसका विधान हो या होनेवाला हो। जो किया जाय या किया जानेवाला हो। ३. जो नियम या विधि द्वारा जाना जाय। जिसके करने का नियम या विधि हो। ४. वचन या आज्ञा के वशीभूत। अधीन। ५. वह (शब्द या वाक्य) जिसके द्वारा किसी के संबंध में कुछ कहा जाय। जैसे,—'गोपाल सज्जन है' इस वाक्य में 'सज्जन है' विधेय है; क्योंकि वह गोपाल के संबंध में कुछ विधान करता है, अर्थात् उसकी कोई विशेषता बताता है।

विशेष——न्याय और व्याकरण में वाक्य के दो मुख्य भाग माने जाते हैं—उद्देश्य और विधेय। जिसके संबंध में कुछ कहा जाता है (अर्थात् कर्ता), वह उद्देश्य कहलाता है; और जो कुछ कहा जाता है, वह 'विधेय' कहलाता है।

६. आश्रित। निर्भर (को०)। ७. प्राप्य (को०)। ८. प्रज्वलित करने योग्य (को०)।

विधेय^2—संज्ञा पुं० १. वह जो किया जाना चाहिए। कर्तव्य कर्म। प्रतिज्ञा या प्रस्थापन की उक्ति। ३. सेवक। भृत्य [को०]।

विधेयक—संज्ञा पुं० [सं०] अधिपत्र। विधान लिपि। अधिनियम का प्रस्तावित एवं प्राथमिक रूप। (अं० बिल) उ०—गवर्मेंट आफ इंडिया विधेयक (बिल) पार्लमेंट में प्रेषित किया गया।—भारतीय०, पृ० २।

विधेयज्ञ—वि० [सं०] अपने कर्तव्य का ज्ञान रखनेवाला [को०]।

विधेयता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विधि की योग्यता। विधान का औचित्य। २. अधीनता। वश्यता।

विधेयत्व—संज्ञा पुं० [सं०] विधेयता।

विधेयवर्ती—वि० [सं० विधेयवर्तिन्] दूसरे की आज्ञा में रहनेवाला। अधीन। वश्य [को०]।

विधेयात्मा^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विधेयात्मन्] विष्णु [को०]।

विधेयात्मा^{2}—वि० संयतात्मा। आत्मा को वश में रखनेवाला [को०]।

विधेयाविमर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य में एक वाक्यदोष जो विधेय अंश को अप्रधान स्थान प्राप्त होने पर होता है। जो बात प्रधानतः कहनी है, उसका वाक्यरचना के बीच दबा रहना।

विशेष—प्रत्येक वाक्य में विधेय की प्रधानता के साथ निर्देश होना चाहिए। ऐसा न होना दोष है। 'विधेय' शब्द के समास के बीच पड़ जाने से या विशेषण रूप से आ जाने पर प्रायः यह दोष होता है। जैसे,—किसी वीर ने खिन्न होकर कहा—'मेरी इन व्यर्थ फूली हुई बाहों से क्या'। इस वाक्य में कहनेवाले का अभिप्राय तो यह है मेरी बाहें व्यर्थ फूली हैं; पर 'फूली हैं' के विशेषण रूप में आ जाने से विधेय की प्रधानता नहीं स्पष्ट होती। दूसरा उदाहरण—'मुझ रामानुज के सामने राक्षस क्या ठहरेंगे।' यहाँ कहना चाहिए था कि—'मैं राम का अनुज हूँ' तब राम के संबंध से लक्ष्मण की विशेषता प्रकट होती।

विधौत—वि० [सं०] धुला हुआ। धोकर निर्मल किया हुआ। उ०—कंठलग्न मुक्तामाला इव मंजुल सुरसरि धारा। होता है विधौत पग पावन पूत पयोनिधि द्वारा।—पारिजात, पृ० १०।

विध्यापन—संज्ञा पुं० [सं०] विकीर्ण करने या बिखेरनेवाला। तितर बितर करनेवाला [को०]।

विध्य—वि० [सं०] १. बिंधने योग्य। छिदने योग्य। २. जिसे बेधना हो। जो छेदा जानेवाला हो।

विध्यपराध संज्ञा पुं० [सं०] विधि या नियम की अवहेलना [को०]।

विध्यपाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] विधि के अनुकूल आचरण [को०]।

विध्यलंकार—संज्ञा पुं० [सं० विध्यलङ्कार] एक काव्यालंकार जिसमें किसी सिद्ध बात का पुनर्विधान किया जाता है। दे० 'विधि'—६।

विध्यलंक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विध्यलंकार'।

विध्याभास—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक अर्थालंकार जिसमें घोर अनिष्ट की संभावना दिखाते हुए अनिच्छापूर्वक किसी बात की अनुमति दी जाती है। जैसे,—विदेश जाते हुए नायक के प्रति नायिका का यह कथन 'जाते हो तो जाओ! जहाँ जाते हो, मैं भी वहाँ जन्म लेकर पहुँचूँगी'।

विध्र(पु)^1—संज्ञा पुं० [सं० ब्रध्न ?] सूर्य। उ०—विध्र, विरोचन, विभावसु, मार्तंड, त्रयिअंग।—नंद० ग्रं०, पृ० ११२।

विध्र^2—वि० सूर्य की तरह निर्मल। निर्दोष [को०]।

विध्वंस—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश। नाश। बरबादी। २. घृणा। ३. अनादर। ४. वैर। ५. वैमनस्य।

विध्वंसक—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाश करनेवाला। २. छिछोरा। लंपट (को०)। ३. शत्रुओं के समुद्री पोतों को नष्ट करनेवाला पोत या अस्त्रशस्त्र (आधुनिक)।

विध्वंसन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विध्वंसित, विध्वस्त] विध्वंस करना। नाश करना। बरबाद करना।

विध्वंसात्मक—वि० [सं०] विध्वंस या विनाश करनेवाला। विनाशक। संहारक। उ०—यह समय भारत में ईसाइयत के प्रचार और (डेरोजीयनिज्म ऐसे) अति विध्वंसात्मक मतों के प्रसार का था।—हिं० का० प्र०, पृ० ३४।

विध्वंसित—वि० [सं०] विध्वंस किया हुआ। नष्ट किया हुआ। बरबाद किया हुआ।

विध्वंसी—संज्ञा पुं० [सं० विध्वंसिन्] [स्त्री० विध्वंसिनी] १. नाशकारी। सतीत्वनाश करनेवाला। २. बरबाद करने या होनेवाला। ३. दुश्मन। शत्रु। अरि (को०)।

विध्वस्त—वि० [सं०] १. नष्ट किया हुआ। बरबाद किया हुआ। २. इधर उधर विकीर्ण या छितराया हुआ (को०)। ३. अस्पष्ट। धुँधला (को०)। ४. ग्रहणग्रस्त (को०)।

विनंशी—वि० [सं० विनंशिन्] नष्ट होनेवाला। लुप्त होनेवाला [को०]।

विन^1—सर्व० [हि० वा (=उस)] प्रथम पुरुष बहुवचन सर्वनाम का वह रूप जो उसे कारकचिह्न लगने के पहले प्राप्त होता है। जैसे,—विन ने, विन को, इत्यादि।

विन^2— अव्य० [सं० विना] दे० 'विना'।

विनअ(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विनय, प्रा० विणअ] दे० 'विनय'। उ०—तासु तनअ नअ विनअ गुन गरुअ राए गएनेस। जे पट्ठाइअ दसओ दिस कित्ति कुसुम संदेश।—कीर्ति०, पृ० १०।

विनक्क(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वणिक, (स्वरव्यत्यय से) विणक्] दे० 'वणिक्'। उ०—गुरु षंडन गुरु विदुब लच्छि षंडन विनक्क घर।—पृ० रा०, ५५। ६३।

विनग्न—वि० [सं०] निर्वस्त्र। नंगा [को०]।

विनटन—वि० [सं०] इधर उधर घूमना। चंक्रमण [को०]।

विनत^1—वि० [सं०] १. नीचे की ओर प्रवृत्त। झुका हुआ। २. टेढ़ा पड़ा हुआ। वक्र। ३. संकुचित। सिकुड़ा हुआ। ४. विनीत। नम्र। ५. शिष्ट। शिक्षित। ६. अवसन्न। ७. हतोत्साह। ८. खिन्न (को०)।

विनत^2—संज्ञा पुं० १ सुग्रीव की सेना का एक बंदर। २. शिव। महादेव। ३. एक प्रकार की चींटी (को०)। ४. सुद्युम्न का एक पुत्र (को०)। ५. व्याकरण में स् का ष् या न का ण होना। दे० विनाम।

विनतक—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

विनतड़ी(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विनत+हि० ड़ी (प्रत्य०)] दे० 'विनती'। उ०—स्वामी तमों हौं संग न मेल्हौं बीनतड़ी कहेस।—दादू (शब्द०)।

विनता^{1}—वि० स्त्री० [सं०] कुबड़ी या खंज (स्त्री)।

विनता^{2}—संज्ञा स्त्री० १. दक्ष प्रजापति की एक कन्या जो कश्यप की स्त्री और गरुड़ की माता थी।

यौ०—विनतातनय, विनतात्मज, विनतानंदन, विनतासुत = दे० 'विनतासूनु'। २. एक प्रकार का भयानक फोड़ा जो प्रमेह या बहुमूत्र के रोगियों को होता है।

विशेष—जिस स्थान पर यह फोड़ा होता है, वह स्थान मुरदा हो जाने के कारण नीला पड़ जाता है। सुश्रुत आदि प्राचीन ग्रंथों में प्रमेह के अंतर्गत इसकी चिकित्सा लिखी है। यह प्रायः घातक होता है। इसमें अंग बहुत तेजी के साथ सड़ता चला जाता है। यदि बढ़ने के पहले ही वह स्थान काटकर अलग कर दिया जाय, तो रोगी बच सकता है।

३. महाभारत के अनुसार एक राक्षसी जो व्याधि लाती है। ४. एक प्रकार की टोकरी या डलिया (को०)। ५. रामायण के अनुसार एक राक्षसी का नाम जिसे रावण ने सीता को समझाने के लिये नियुक्त किया था।

विनतातनया—संज्ञा स्त्री० [सं०] विनता की कन्या जिसका नाम सुमति था। [को०]

विनतासूनु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अरुण। २. गरुड़।

विनति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. झुकाव। २. नम्रता। विनय। शिष्टता। सुशीलता। ३. अनुनय। प्रार्थना। विनती। ४. निवारण। रोक। ५. दमन। शासन। दंड। ६. विनियोग।

विनतिय(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विनति] दे० 'विनति'। उ०—अतुल तेज प्रथिराज करव विनतिय हितकारिय।—प० रासो, पृ० ४३।

विनती—संज्ञा स्त्री० [सं० विनति] दे० 'विनति'।

विनतोदर—वि० [सं०] उदर के पास से झुका हुआ [को०]।

विनद—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का पेड़। विन्याक वृक्ष। २. कोलाहल। ध्वनि। शोर (को०)।

विनदी—वि० [सं०] कोलाहल करनेवाला।

विनद्ध—वि० [सं०] १. बँधा हुआ। नँधा हुआ। २. जिसका बंधन दूर किया गया हो। मुक्त।

विनमन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनत] १. नम्र करना। झुकाना। २. लचाना। लपाना।

विनमित—वि० [सं०] १. लचाया हुआ। नम्र। २. झुका हुआ [को०]।

विनम्र^1—वि० [सं०] १. झुका हुआ। नम्र। २. विनीत। सुशील। ३. अवसन्न (को०)।

विनम्र^2—संज्ञा पुं० तगर का फूल।

विनम्रक—संज्ञा पुं० [सं०] तगर वृक्ष का फूल [को०]।

विनय^1—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यवहार में दीनता या अधीनता का भाव। नम्रता। प्रणति। आजिजी। २. शिक्षा। नैतिक शिक्षण। मार्गदर्शन। ३. प्रार्थना। विनती। अनुनय। ४. शासन। तंबीह। (स्मृति)। ५. नीति। उ०—नमत सबै करि विनय, विनय मत सबै बखानत।—गोपाल (शब्द०)।

विनय^2—संज्ञा पुं० १. वणिक्। बनिया। २. बला। बरियारा। ३. जितेंद्रिय। संयमी। ४. विनयपिटक (बौद्ध०)। उ०—'विनय जिसमें पांच ग्रंथ हैं।'—हिंदु० सभ्यता, पृ० २४६।

विनय^3—वि० १. फेंका हुआ। क्षिप्त। २. गुप्त। छिपाया हुआ। ३. दुर्वृत्त। अशिष्टाचारी। ४. अलग अलग करनेवाला। पृथक्कर्ता [को०]।

विनयकर्म—संज्ञा पुं० [सं० विनयकर्मन्] शिक्षण। मार्गदर्शन [को०]।

विनयग्राही—वि० [सं० विनयग्राहिन्] अनुशासन के नियमों का पालक। आज्ञाकारी [को०]।

विनयधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुरोहित। २. अध्यक्ष। उ०—कम से कम निश्चित तथा अनिवार्य संख्या को 'गणपूर्ति' (कोरम) कहा जाता था और इसमें अध्यक्ष (विनयधर) की गणना नहीं होती थी।—आ० भा०, पृ० १६१।

विनयन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिक्षा। अनुशासन। २. दूरीकरण। हटाना। दूर करना। उ०—रुधिर भरी वेदियाँ भयंकर

उनमें ज्वाला, विनयन का उपचार तुम्हीं से खींच निकाला।
—कामायनी, पृ० १९६।

विनयपिटक—संज्ञा पुं० [सं०] आदि बौद्ध शास्त्रों में से एक।

विशेष—आदि बौद्ध शास्त्र, जो पाली भाषा में हैं, तीन भागों में विभक्त हैं—विनयपिटक, सूत्रपिटक और अभिधर्मपिटक। ये तीनों 'त्रिपिटक' नाम से प्रसिद्ध हैं। बुद्ध देव ने अपनी शिष्यमंडली को भिक्षुधर्म के जो उपदेश दिए थे, वे ही विनयपिटक में संगृहीत हैं। इसके संकलन के संबंध में यह कथा है कि बुद्ध भगवान् तथा सारिपुत्र मौद्गलायन आदि प्रधान प्रधान शिष्यों के निर्वाणलाभ करने पर बौद्ध शास्त्र के लुप्त होने का भय हुआ। इसमें महाकश्यप ने अजातशत्रु के राजत्वकाल में राजगृह के पास वैभार पर्वत की सप्तपर्णी नाम की गुफा में पाँच सौ स्थविरों को आमंत्रित करके एक बड़ी सभा की, जिसमें उपालि ने बुद्ध द्वारा उपदिष्ट 'विनय' का प्रकाश किया। इसके पीछे एक बार फिर गड़बड़ उपस्थित होने पर वैशाली के वालिकाराम में सभा हुई, जिसमें 'विनय' का फिर संग्रह हुआ। इस प्रकार कई संकलनों के उपरांत अशोक के समय में 'विनय' पूर्ण रूप से संकलित हुआ।

विनयप्रमाथी—वि० [सं० विनयप्रमाथिन्] शिक्षा या अनुशासन न माननेवाला [को०]।

विनयभाक्—वि० [सं० विनयभाज्] विनयी। विनम्र [को०]।

विनययोगी—वि० [सं० विनययोगिन्] दे० 'विनयभाक्'।

विनयवाक्—वि० [सं० विनयवाच्] मधुरभाषी। नम्रता से बात करनेवाला [को०]।

विनयवान्—वि० [सं० विनयवत्] [स्त्री० विनयवती] जिसमें नम्रता हो। शिष्ट।

विनयशील—वि० [सं०] विनययुक्त। नम्र। सुशील। शिष्ट।

विनयस्थ—वि० [सं०] विनयशील [को०]।

विनयस्थिति स्थापक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल में विनय वा वाणिज्य विभाग की देख रेख करनेवाला अधिकारी। उ०—प्रांतीय शासन के अधिकारियों में कई पद थे जैसे, 'कुमारामात्य,' 'विनयस्थिति स्थापक' आदि।—आ० भा०, पृ० ४०२।

विनया^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाट्यालक। बरियारा।

विनया(पु)^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० विनय] विनय। नम्रता। प्रार्थना। उ०—विना विनया नृप बद्ध कराय।—प० रासो, पृ० ४३।

विनयावनत—वि० [सं०] विनय या शिष्टता से नम्र। नम्रता से झुका हुआ [को०]।

विनयासुर—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल में राजसभा का एक कर्मचारी जो आगंतुकों के आगमन की सूचित करता, उनकी देखरेख करता एवं उन्हें राजसभा में ले जाता था।—[आ० भा०, पृ० ४४४।]

विनयी—वि० [सं० विनयिन] विनययुक्त। नम्र।

विनर्दन—संज्ञा पुं० [सं०] गरजन। चिग्घाड़। शोरगुल [को०]।

विनयोक्ति—संज्ञा पुं० [सं०] विनयभरी उक्ति या कथन [को०]।

विनर्दी—वि० [सं० विनर्दिन्] गरजनेवाला।

विनवना(पु)—क्रि० अ०, क्रि० स० [सं० विनयन] दे० 'बिनवना'।

विनशन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनष्ट, विनश्वर] १. नष्ट होना। नाश। बरबादी। हानि। लोप। क्षय। २. एक स्थान का नाम जहाँ सरस्वती नदी रेत में लुप्त हुई है (को०)।

विनशना(पु)—क्रि० अ० [सं० विनशन] दे० 'विनसना'।

विनशाना(पु)—क्रि० स० [सं० विनाशन] दे० 'विनसाना'।

विनश्वर—वि० [सं०] सब दिन या बहुत दिन न रहनेवाला। नष्ट होनेवाला। ध्वंसशील। अचिरस्थायी। अनित्य। जैसे,—शरीर विनश्वर है।

विनश्वरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] अनित्यता। अचिरस्थायित्व।

विनश्वरत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विनश्वरता' [को०]।

विनष्ट—वि० [सं०] १. नाश को प्राप्त। जो बरबाद हो गया हो। जो न रह गया हो। जिसका अस्तित्व मिट गया हो। ध्वस्त। २. मृत। मरा हुआ। ३. जो विकृत या खराब हो गया हो। जो व्यवहार के योग्य न रह गया हो। जो निकम्मा हो गया हो। बिगड़ा हुआ। ४. जिसका आचरण बिगड़ गया हो। भ्रष्ट। पतित। ५. ओझल। लुप्त। अलोप।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

यौ०—विनष्टचक्षु = जिसके चक्षु देख न सकें। विनष्टदृष्टि = दे० 'विनष्टचक्षु'। विनष्टधर्म = (१) धर्मभ्रष्ट व्यक्ति। (२) देश जिसका विधान भ्रष्ट हो।

विनष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नाश। २. लोप। ३. पतन।

विनष्टोपजीवी—वि० [सं० विनष्टोपजीविन्] शव या सड़ी गली वस्तुओं को खाकर जीवन धारण करनेवाला [को०]।

विनस—वि० [सं०] जिसे नासिका न हो। बिना नाक का। नकटा।

विनसना(पु)—क्रि० अ० [सं० विनशन] नष्ट होना। न रहना। लुप्त होना। उ०—उपजै विनसै ज्ञान जिमि पाइ सुसंग कुसंग।—तुलसी (शब्द०)।

विनसाना(पु)^{१}—क्रि० स० [हिं० विनसना का सक० रूप] १. ध्वस्त या नष्ट करना। २. बिगाड़ना।

विनसाना^{२}—क्रि० अ० [सं० विनशन] दे० 'विनसना'।

विना—अव्य० [सं०] १. अभाव में। न रहने की अवस्था में। बगैर। जैसे—तुम्हारे विना यह काम न बनेगा। २. छोड़कर। अतिरिक्त। सिवा। जैसे,—तुम्हारे विना और कौन यह काम कर सकता है।

विनाकृत—वि० [सं०] १. अलग किया हुआ। २. परित्यक्त ३. निर्जन। निभृत। एकांत [को०]।

विनाडि, विनाडिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विनाडी'।

विनाडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक घड़ी का साठवाँ भाग। २४ सेकेंड का समय। पल।

विनाती(पु)‡—संज्ञा स्त्री० [सं० विनती] विनती। विनय। उ०—ए गोसाइँ, सुनु मोरि विनाती।—जायसी (शब्द०)।

विनाथ—वि० [सं०] जिसका कोई रक्षक न हो। अनाथ। उ०—नाथ नाथ विनाथ नाथ अनाथ नाथ सुसिद्ध।—केशव (शब्द०)।

विनादित—वि० [सं०] शब्दित या ध्वनित [को०]।

विनादी—वि० [सं० विनादिन्] नाद करनेवाला। शब्द करनेवाला। शोर करनेवाला [को०]।

विनान (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विज्ञान, प्रा० विन्नाण] १. विज्ञान। सद्बोध। २. मेधा। मति। बुद्धि। उ०—सुकी कहै सुक संभरी, कहौ कथा प्रति प्रान। पृथु भोरा भीभंग पहु, किम हुअ बंर विनान।—पृ० रा०, ५।१।

विनाभव—संज्ञा पुं० [सं०] पृथक्ता। पार्थक्य। अलगाव [को०]।

विनाभाव—संज्ञा पुं० [सं०] दे० विनाभव।

विनाम—संज्ञा पुं० [सं०] १. झुकाव। टेढ़ापन २. भावप्रकाश के अनुसार किसी पीड़ा द्वारा शरीर का झुक जाना। ३. व्याकरण में स् का ष् अथवा न् का ण् होना (को०)।

विनयित—वि० [सं०] नम्र किया हुआ। झुकाया हुआ [को०]।

विनायक^1—संज्ञा पुं० [सं०] गणों के नायक, गणेश। २. गरुड़। ३. विघ्न। बाधा। उ०—लसत विनायक केतु विनायक नसत निरखि रथ।—गोपाल (शब्द०)। ४. गुरु। ५. देवी का एक स्थान। ६. बुद्धदेव। ७. नेता। नायक (को०)। ८. वह जो (विघ्न) दूर करता हो (को०)।

विनायक^2—वि० १. ले जानेवाला। २. हटानेवाला। दूर करनेवाला। ३. बिना नायक का। अनाथ [को०]।

विनायककेतु—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ध्वज। श्रीकृष्ण। उ०—लसत विनायककेतु विनायक नसत निरखि रथ।—गोपाल (शब्द०)।

विनायक चतुर्थी—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ महीने की शुक्ला चतुर्थी। माघ सुदी चौथ। गणेश चतुर्थी।

विशेष—इस दिन गणेश का पूजन और व्रत होता है।

विनायिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विनायक की पत्नी। २. गरुड़ की पत्नी [को०]।

विनारुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'त्रिपर्णिका' [को०]।

विनाल—वि० [सं०] नालरहित। बिना डंठल का [को०]।

विनाश—संज्ञा पुं० [सं०] १. अभाव हो जाना। अस्तित्व का न रह जाना। न रहना। नाश। मिटना। ध्वंस। बरबादी। २. लोप।। अदर्शन। ३. बिगड़ जाने का भाव। खराब हो जाना। चौपट हो जाना। खराबी। ४. बुरी दशा। तबाही। ५. हानि। नुकसान।

विनाशक—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश करनेवाला। क्षय करनेवाला। २. बिगाड़नेवाला। खराब करनेवाला। घातक।

विनाशधर्मा—वि० [सं० विनाशधर्मन्] नश्वर। नाशवान् [को०]।

विनाशधर्मी—वि० [सं० विनाशधर्मिन्] दे० 'विनाशधर्मा' [को०]।

विनाशन^1—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनाशी, विनाश्य] १. नष्ट करना। ध्वस्त करना। बरबाद करना। २. संहार करना। बध करना। उ०—दससीस विनाशन बीस भुजा।—तुलसी (शब्द०)। ३. खराब करना। बिगाड़ना। ४. एक असुर जो काल का पुत्र था।

विनाशन^2—वि० नाशक। विध्वंसक [को०]।

विनाशयिता—वि० संज्ञा पुं० [सं० विनाशयितृ] विनाश करनेवाला। नाश करनेवाला [को०]।

विनाशांत—संज्ञा पुं० [सं० विनाशान्त] मरण। मृत्यु [को०]।

विनाशसंभव—संज्ञा पुं० [सं० विनाशसम्भव] विनाश का निदान या प्रधान कारण [को०]।

विनाशहेतु—संज्ञा वि० [सं०] विनाश का कारण या हेतु।

विनाशित—वि० [सं०] १. नष्ट किया हुआ। ध्वस्त किया हुआ। २. मारा हुआ। ३. बिगाड़ा हुआ। खराब किया हुआ।

विनाशी—वि० [सं० विनाशिन्] [वि० स्त्री० विनाशिनी] १. नष्ट करनेवाला। ध्वस्त करनेवाला। बरबाद करनेवाला। २. बध करनेवाला। मारनेवाला। ३. बिगाड़नेवाला। खराब करनेवाला।

विनाशोन्मुख—वि० [सं०] १. विनाश की ओर उन्मुख या प्रवृत्त। जिसका शीघ्र नाश होनेवाला हो। २. परिपक्व [को०]।

विनाश्य—वि० [सं०] विनाश के योग्य।

विनास^1—वि० [सं०] नासारहित। बिना नाक का [को०]।

विनास (पु)^2—संज्ञा पुं० [सं० विनाश] दे० 'विनाश'।

विनासक^1—वि० [सं०] बिना नाक का। नकटा।

विनासक (पु)^2—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विनाशक] दे० 'विनाशक'।

विनासन (पु)—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विनाशन] दे० 'विनाशन'।

विनासना^{1} (पु)—क्रि० स० [सं० विनाशन] १. नष्ट करना। ध्वस्त करना। बरबाद करना। न रहने देना। २. संहार करना। बध करना। ३. खराब करना। बिगाड़ना।

विनासना^{2}—क्रि० अ० नष्ट होना। बरबाद होना। खराब होना।

विनासिक—वि० [सं०] बिना नाक का। नकटा [को०]।

विनासिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक विषयुक्त कीड़ी [को०]।

विनाह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वीनाह' [को०]।

विनिंद—वि० [सं० विनिन्द] १. हँसोड़। २. बढ़ जानेवाला [को०]।

विनिंदक—वि०, संज्ञा पुं० [सं० विनिन्दक] १. अत्यंत निंदा करनेवाला। २. आगे बढ़ जानेवाला।

विनिंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० विनिन्दा] अतिशय निंदा। बहुत बुराई।

विनिंदित—वि० [सं० विनिन्दित] जिसकी बहुत निंदा या बुराई हुई हो। लांछित।

विनिःसरण—संज्ञा पुं० [सं०] निकलना। बहिर्गमन। बाहर जाना [को०]।

विनिःसृत—वि० [सं०] १. पलायित। भागा हुआ। २. निकला हुआ। बहिर्गत। जो बाहर हुआ हो।

विनिःसृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाहर निकलना। विनिःसरण। भागना। पलायन [को०]।

विनिःसृष्ट—वि० [सं०] निक्षिप्त। फेंका हुआ [को०]।

विनिकषण—संज्ञा पुं० [सं०] छीलने की क्रिया। खुरचना [को०]

विनिकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. त्रुटि। क्षति। हानि। २. अपराध [को०]।

विनिकीर्ण—वि० [सं०] १. बिखेरा हुआ। छितराया हुआ। इतस्ततः क्षिप्त। २. भरा हुआ। ढंका हुआ [को०]।

विनिकृत—वि० [सं०] क्षति पहुंचाया हुआ । जिसका तिरस्कार हुआ हो ।

विनिकृंतन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो काटता या निकृंतन करता हो । २. काटना । निकृंतन । टुकड़े टुकड़े करना [को०] ।

विनिकृत्त—वि० [सं०] काटा हुआ । निकृंतित [को०] ।

विनिकेत—वि० [सं०] निकेतरहित । गृहहीन । बेघर का ।

विनिलोचन—संज्ञा पुं० [सं०] सिकोड़ना । सकोचन । जैसे,—भ्रूविनिकोचन [को०] ।

विनिक्षिप्त—वि० [सं०] १, नीचे गिराया या फेंका हुआ । २. किसी में या नीचे की ओर रखा हुआ [को०] ।

विनिक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. उछालना । फेंकना । २. अलगाव । ३. प्रेषण (को०) ।

विनिगड़—वि० [सं० विनिगड] जिसके पैरों में बेड़ी न हो । निगड़रहित [को०] ।

विनिगमक—वि० [सं०] दो पक्षों में से किसी एक पक्ष को सिद्ध करनेवाला ।

विनिगमना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दो परस्पर विरुद्ध पक्षों में से किसी एक पक्ष का युक्ति और प्रमाण द्वारा निश्चय । दो बातों में से किसी एक बात के ठीक होने का निर्णय जो विचार और तर्क द्वारा हो । (वैशेषिक) । २. सिद्धांत । नतीजा ।

विनिगूहित—वि० [सं०] छिपाया हुआ । ढका हुआ [को०] ।

विनिगूहिता—संज्ञा पुं० [सं० विनिगूहितृ] वह जो गोप्य को छिपावे । गोपन करने या ढकनेवाला [को०] ।

विनिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] १. नियम । बंधेज । प्रतिबंध । २. किसी वृत्ति को दबाकर अधीन करना । संयम । ३. अवरोध । रुकावट । ४. व्याघात । बाधा । ५. पारस्परिक विरोध (को०) । ६. पार्थक्य । अलगाव । विभाजन (को०) ।

विनिग्राह्य—वि० [सं०] निग्रह के योग्य । अवरुद्ध करने लायक ।

विनिर्घूर्णित—वि० [सं०] १. चक्कर करता हुआ । घूमता हुआ । २. अशांत । क्षुब्ध [को०] ।

विनिघ्न—वि० [सं०] १. नष्ट । बरबाद । २. गुणित । वृद्धिगत । गुणा किया हुआ ।

विनिच्चय—संज्ञा पुं० [विनिश्चय, पा० विनिच्चय] न्यायाधीश । उ०—अट्ठकथा के अनुसार विनिच्चय......यह आठ न्यायाधीश थे जो एक एक करके मुकद्दमों की जाँच करते थे ।—हिंदु० सभ्यता पृ० २६२ ।

विनिद्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. अस्त्र का एक संहार जिससे अस्त्र द्वारा निद्रित या मूर्छित व्यक्ति की नींद या बेहोशी दूर होती है । २. नींद न आने का एक रोग ।

विनिद्र—वि० १. जिसकी नींद खुल गई हो । २. मुकुलित । खुला हुआ । फूला हुआ (को०) ।

विनिद्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] निद्रा का अभाव । जागरण [को०] ।

विनिद्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विनिद्रता' ।

विनिध्वस्त—वि० [सं०] नष्टभ्रष्ट । विध्वस्त किया हुआ [को०] ।

विनिपतित—वि० [सं०] अधःपतित । गिरा हुआ [को०] ।

विनिपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश । ध्वंस । बरबादी । २. वध । हत्या । ३. अवमान । अनादर । नजर से गिरना । ४. अधःपतन । गिराव (को०) । ५. नरकपात । नरक (को०) । ६. क्षय । मृत्यु (को०) । ७. घटित होना । घटना (को०) । ८. पीड़ा । कष्ट । दुःख (को० ।

यौ०—विनिपातग्रस्त = अधःपतित । दुर्भाग्यग्रस्त । विपन्न । विनिपातप्रतीकार = विपत्ति या कष्ट से बचने का उपाय । विनिपातशंसी = उत्पात, विपत्ति या दुर्भाग्य का सूचक ।

विनिपातक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाशकारी । २. संहारकर्ता । ३. अपमान करनेवाला ।

विनिपातन—संज्ञा पुं० [सं०] गर्भपातन । गर्भ गिराने की क्रिया [को०] ।

विनिपातित—वि० [सं०] १. जिसका विनिपात किया गया हो । गिराया हुआ । ध्वस्त या नष्ट किया हुआ । २. मारा हुआ । हत [को०] ।

विनिपाती—वि० [सं० विनिपातिन] विनिपात करनेवाला । गिरानेवाला [को०] ।

विनिबंध—संज्ञा पुं० [सं० विनिबन्ध] किसी वस्तु से लगाव या संबध होना [को०] ।

विनिबंधन—संज्ञा पुं० [सं० विनिबन्धन] दे० 'विनिबध' ।

विनिमग्न—वि० [सं०] डूबा हुआ । लीन ।

विनिमय—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक वस्तु लेकर बदले में दूसरी वस्तु देने का व्यवहार । अदल बदल । परिवर्तन । परिदान । २. गिरवी । बंधक । ३. वर्णव्यत्यय । वर्णों का परिवर्तन (को०) । ४. अन्योन्यता । परस्परता (को०) । ५. किसी देश की मुद्रा या सिक्के का अन्य देश की मुद्रा में परिवर्तन । जैसे, पौंड या डालर का भारतीय सिक्के में । (अं० एक्सचेंज) ।

विनिमित्त—वि० [सं०] निमित्त या कारणरहित । जिसका कोई मुख्य कारण न हो [को०] ।

विनिमीलन—संज्ञा पुं० [सं०] बंद होना ।

विनिमीलित—वि० [सं०] जो बंद हो गया हो । मुद्रित । संकुचित । मुंदा हुआ [को०] ।

विनिमीलितेक्षण—वि० [सं०] मुँदी हुई आँखोंवाला [को०] ।

विनिमेष, विनिमेषण—संज्ञा पुं० [सं०] १. (आँखों का) झपकना । पलकों का गिरना । २. संकेत । इंगित [को०] ।

विनियत—वि० [सं०] नियमन किया हुआ । नियंत्रित । प्रतिबद्ध [को०] ।

यौ०—विनियतचेता = जिसका चित्त वश में हो । संयतात्मा । विनियतवाक् = (१) संयत कथन । (२) जिसकी वाणी संयमित हो । विनियताहार = मितभोजी । कम खानेवाला ।

विनियम—संज्ञा पुं० [सं०] १. निग्रह । रोक । संयम । प्रतिबंध । २. शासन [को०] ।

विनियम्य—वि० [सं०] नियमन के योग्य । वश में रखने लायक [को०] ।

विनियुक्त—वि० [सं०] १. किसी काम में लगाया हुआ । नियोजित । २. अर्पित । ३. प्रेरित । ४. अलग किया हुआ । विच्छिन्न (को०) । ५. व्यवहृत (को०) । ६. समादिष्ट । विहित (को०) ।

विनियुक्तात्मा—वि० [सं० विनियुक्तात्मन्] जिसका मन किसी वस्तु में केंद्रित हो गया हो [को०]।

विनियोक्तव्य—वि० [सं०] १. नियुक्त करने योग्य। २. आदेश को पूर्ण करने में समर्थ [को०]।

विनियोक्ता— वि० [सं० विनियोक्तृ] नियुक्त करनेवाला [को०]।

विनियोग—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी फल के उद्देश्य से किसी वस्तु का उपयोग। किसी विषय में लगाना। प्रयोग। २. किसी वैदिक कृत्य में मंत्र का प्रयोग। ३. प्रेषण। भेजना। ४. प्रवेश। घुसना। ५. अलगाव। विभाग। विभाजन (को०)। ६. छोड़ना। त्यागना (को०)। ७. रुकावट। अड़चन। ८. संवंध। ताल्लुक (को०)।

विनियोजित – वि० [सं०] १. प्रयुक्त। नियुक्त। लगाया हुआ। २. अर्पित। ३. प्रेरित।

विनियोज्य वि० [सं०] १. नियुक्त किया जानेवाला। २. उपयोग किया जानेवाला [को०]।

विनिरोध—वि० [सं०] १ जो निरोध न करे। निष्क्रिय। २. अप्रभावित [को०]।

विनिरोधी – वि० [सं० विनिरोधिन] निरोध करनेवाला। रोकनेवाला। बाधा उपस्थित करनेवाला।

विनिर्गत—वि० [सं०] १. निकला हुआ। जो बाहर हुआ हो। बहिर्गत। २. गया हुआ। जो चला गया हो। निष्क्रांत। ३. बीता हुआ। अतीत। व्यतीत।

विनिर्गम—संज्ञा पुं० [स०] १. बाहर होना। निकलना। २. प्रस्थान। चला जाना।

विनिर्घोष – संज्ञा पुं० [सं०] उच्च स्वर।

विनिर्जन—वि० [सं०] निर्जन। सुनसान। जनहीन [को०]।

विनिर्जय—संज्ञा स्त्री० [सं०] पूरी जीत। पूर्ण विजय [को०]।

विनिर्जित—वि० [सं०] पूर्णतः पराजित। पूरी तौर से हारा हुआ [को०]।

विनिर्णय—संज्ञा पुं० [सं०] १. दृढ़ निश्चय। २. निर्धारित नियम। ३. पूर्ण रूप रूप से निबटारा या फैसला [को०]।

विनर्णीत—वि० [सं०] १. निश्चित। २. स्पष्टतया निर्णीत [को०]।

विनिर्दग्ध—वि० [सं०] पूर्ण रूप से जला या नष्ट किया हुआ [को०]।

विनिर्दहन – संज्ञा पुं० [सं०] पूरी तौर से जला डालना। संपूर्णतया नष्ट कर देना [को०]।

विनिर्दिष्ट—वि० [सं०] जिसका निर्देश किया गया हो। विशेष रूप से निर्दिष्ट। सुस्पष्ट। उ०—देश (स्थान) और काल (उससे संबद्ध समय) दोनों दिए हों तो वह घटना या तथ्य पूर्णतया विनिर्दिष्ट होता है।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २२३।

विनिर्देश्य—वि० [सं०] उल्लेख योग्य। जिसका निर्देश किया जाय।

विनिर्धुत, विनिर्धूत—वि० [सं०] कंपित या क्षुब्ध किया हुआ। २. क्षिप्त या फेंका हुआ [को०]।

विनिर्धौत—वि० [सं०] भली भाँति धुला हुआ। स्वच्छ। निर्मल।

विनिर्बंध—संज्ञा पुं० [सं० विनिर्बन्ध] आग्रह। दृढ़ता।

विनिर्बाहु—संज्ञा पुं० [सं०] तलवार चलाने का एक प्रकार [को०]।

विनिर्भिन्न—वि० [सं०] खंडित। टूटा हुआ। छिन्न भिन्न। फटा हुआ।

विनिर्भोग—संज्ञा पुं० [सं०] एक कल्प का नाम।

विनिर्मद—वि० [सं०] निरभिमान। गर्वरहित। निर्विकार। उ०—श्यामश्यामा के युगल पद कोकनद मन के विनिर्मद।—अर्चना, पृ० ९९।

विनिर्मल—वि० [सं०] निर्मल। स्वच्छ। पूत। पवित्र। उ०—प्रथम बंदूँ पद विनिर्मल।—अर्चना, पृ० २७।

विनिर्माण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनिर्मित] विशेष रूप से निर्माण होना। अच्छी तरह बनना।

विनिर्माता—संज्ञा पुं० [सं० विनिर्मातृ] निर्माता।

विनिर्मित—वि० [सं०] १. विशेष रूप से निर्मित या बना हुआ। जैसे,—प्रस्तरविनिर्मित भवन। २. बनाया हुआ। निर्माण किया हुआ (को०)। ३. (उत्सव आदि) जो संपन्न या मनाया गया हो (को०)। ४. निर्धारित। निश्चित (को०)।

विनिर्मिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] कृति। संरचना। निर्माण [को०]।

विनिर्मुक्त—वि० [सं०] १. बाहर निकला हुआ। वहिर्गत। २. जो खुला हो या ढँका न हो। अनाच्छन्न। ३. छूटा हुआ। बंधन से रहित।

विनिर्मुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] पूरी स्वतंत्रता होना। वंधराहित्य। पूर्ण मुक्ति [को०]।

विनिर्मूढ़—वि० [सं० विनिर्मूढ] कर्तव्यबोध रखनेवाला [को०]।

विनिर्मोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. निर्मोक रहित। २. बिना पहनावे का। वस्त्ररहित। परिधानशून्य।

विनिर्मोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विनिर्मुक्ति'।

विनिर्याण – संज्ञा पुं० [सं०] गमन। प्रस्थान [को०]।

विनिर्यात—वि० [सं०] गत। गया हुआ [को०]।

विनिर्वाण—संज्ञा पुं० [सं०] विशेप प्रकार की मुक्ति। उ०—तर्क सिद्ध है, स्वप्न एक है विनिर्वाण यह।—अपरा. पृ० १८७।

विनिवर्तक—वि० [सं०] रद्द करने या बदलनेवाला [को०]।

विनिवर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनिवर्तित, विनिवर्ती] लौटना।

विनिवर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विराम। निर्वृत्ति [को०]।

विनिवर्तित—वि० [सं०] वापस किया हुआ। लौटाया हुआ [को०]।

विनिवर्ती—वि० [सं०] वापस करने या परिवर्तन करनेवाला [को०]।

विनिवारण—संज्ञा पुं० [सं०] निवारण करना। दूर करना। नियंत्रित करना।

विनिविष्ट—वि० [सं०] १. बसा हुआ। निवास किया हुआ। २. रखा हुआ। रक्षित [को०]।

विनिवेदन—संज्ञा पुं० [सं०] विशिष्ट रूप से निवेदन करना। घोषित करना [को०]।

विनिवृत्त—वि० [सं०] १. लौटा हुआ। वापस आया हुआ। २. (सेवा) मुक्त। ३. पूर्ण। संपन्न। ४. निकाला हुआ। उत्पन्न। ५. क्षांत [को०]।

यौ॰—विनिवृत्तकाम = आकांक्षारहित। कामनाओं से मुक्त। विनिवृत्तशाप = शापमुक्त।

विनिवृत्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰]. १. विश्रांति। आराम। मुक्ति। २. निवारण। दूरीकरण। ३. अंत। अवसान। समाप्ति [को॰]।

विनिदेश—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. प्रवेश। घुसना। २. निवास करना। बसना। ३. छाप। चिह्न। ४. (पुस्तक आदि में) उल्लेख करना (को॰)।

विनिवेशन—वि॰ [सं॰] [वि॰ विनिवेशित, विनिवेशी] १. प्रवेश। घुसना। २. अधिष्ठान। स्थिति। वास। रहायश। ३. निर्माण (को॰)। ४. व्यवस्था (को॰)। ५. चिह्न या छाप डालना (को॰)।

विनिवेशित—वि॰ [सं॰] १. प्रविष्ट। घुसा हुआ। २. ठहरा या टिका हुआ। अधिष्ठित। स्थापित। ३. बसा हुआ। ४. निर्मित। रचा या बना हुआ (को॰)।

विनिवेशी—वि॰ [सं॰ विनिवेशिन्] [स्त्री॰ विनिवेशिनी] १. प्रवेश करनेवाला। घुसनेवाला। २. रहनेवाला। बसनेवाला।

विनिश्चय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. निश्चित करना। तय करना। २. निर्णय। निश्चय।

विनिश्चल—वि॰ [सं॰] अचल। दृढ़। कंपरहित। स्थित [को॰]।

विनिश्वसित—संज्ञा पुं॰ [सं॰] साँस। प्रश्वास [को॰]।

विनिश्वास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] उच्छ्वास। गहरी साँस। उसास [को॰]।

विनिषूदित—वि॰ [सं॰] पूर्ण रूप से उच्छिन्न या नष्ट किया हुआ [को॰]।

विनिष्कंप—वि॰ [सं॰ विनिष्कम्प] स्थिर। अचल [को॰]।

विनिष्टप्त—वि॰ [सं॰] भली भाँति पकाया या भूना हुआ [को॰]।

विनिष्पतित—वि॰ [सं॰] आगे की ओर उछला या झपटा हुआ [को॰]।

विनिष्पात—संज्ञा पुं॰ [सं॰] तेजी से झपटना या टूट पड़ना [को॰]।

विनिष्पाद्य—वि॰ [सं॰] पूरा करने योग्य [को॰]।

विनिष्पेष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कुचलना। पीसना। मर्दित करना। रगड़ना। मलना [को॰]।

विनिस्तंद्र—वि॰ [सं॰ विनिस्तन्द्र] तंद्राविहीन। निरलस। उ॰—कुज्झटिका अट्टहास अंतर्हग विनिस्तंद्र।—आराधना, पृ॰ १३।

विनिस्तार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पारगमन। मुक्ति। छुटकारा। उद्धार। उ॰—कठिन यह संसार, कैसे विनिस्तार; ऊर्मि का पाथार, कैसे करे पार।—अर्चना, पृ॰ ७५।

विनिस्मृत—वि॰ [सं॰] निर्दिष्ट। स्मृत। कीर्तित। वर्णित। लिखित [को॰]।

विनिहत^{1}—वि॰ [सं॰] १. चोट खाया हुआ। आहत। २. विनष्ट। ध्वस्त। बरबाद। ३. मारा हुआ। मृत। ४. लुप्त। ५. पूरी तरह परास्त किया हुआ (को॰)। ६. उपेक्षित। उल्लंघित। तिरस्कृत (को॰)।

विनिहत^{2}—संज्ञा पुं॰ १. कोई बड़ी या अनिवार्य विपत्ति। भाग्यदोष से या दैवात् आनेवाला संकट। २. धूमकेतु।

विनिहित—वि॰ १. नीचे रखा हुआ। २. जमाया हुआ। नियुक्त। ३. विकीर्ण। विभक्त। अलग किया हुआ।

विनिहितदृष्टि—वि॰ [सं॰] जिसकी दृष्टि किसी वस्तु पर लगी हो [को॰]।

विनिहितमना—वि॰ [सं॰ विनिहितमनस्] जिसने किसी बात का दृढ़ निश्चय कर लिया हो [को॰]।

विनिह्नुत—वि॰ [सं॰] १. छिपा हुआ। २. अस्वीकृत [को॰]।

विनीत^{1}—वि॰ [सं॰] १. जिसमें उत्तम शिक्षा का संस्कार और शिष्टता हो। विनययुक्त। सुशील। २. व्यवहार में अधीनता प्रकट करनेवाला। शिष्ट। नम्र। ३. जितेंद्रिय। ४. संयमी। ५. ग्रहण किया हुआ। ६. सिखाया हुआ। ७. दूर किया हुआ। हटाया हुआ। ले गया हुआ। ८. जिसको तंबीह की गई हो। दंडित। शासित। ९. नीतिपूर्वक व्यवहार करनेवाला। धार्मिक। १०. प्रिय। मनोहर (को॰)। ११. साफ सुथरा (कपड़ा आदि)।

विनीत^{2}—संज्ञा पुं॰ १. वणिक्। बनिया। साहु। २. निकाला हुआ घोड़ा। ३. पुलस्त्य के एक पुत्र का नाम। दमनक। दौने का पौधा। ५ सधाया हुआ बैल (को॰)।

विनीतक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वाहन। पालकी। २. वह जो वहन करे। वाहक। [को॰]।

विनीतता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विनीत होने का भाव। नम्रता।

विनीतत्व—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विनीतता। नम्रता [को॰]।

विनीता—वि॰ स्त्री॰ [सं॰] विनयवाली। नम्र (स्त्री)। उ॰—कुछ नहीं कहा क्या सीता ने, वैदेही वधू विनीता ने ?—साकेत, पृ॰ १८५।

विनीति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विनय। सुशीलता। २. सद्व्यवहार। ३. संमान।

विनीय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पाप। दोष। जुर्म। अपराध। २. तलछट [को॰]।

विनील—वि॰ [सं॰] गहरा नीला। नील वर्ण का [को॰]।

विनीलक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह मृत देह जो नीला पड़ गया हो। नीला शव। (बौद्ध)।

विनु(पु)†—अव्य॰ [सं॰ विना] दे॰ 'विना'।

विनुक्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. प्रशंसा। २. आश्वलायन श्रौत सूत्र के अनुसार विवाह कृत्य का नाम। ३. अपवारण। दूर करना (को॰)।

विनुन्न—वि॰ [सं॰] १. अपकारित। दूर किया हुआ। २. चोट खाया हुआ। घायल [को॰]।

विनूट(पु)†—वि॰ [हिं॰ अनूठा?] दे॰ 'विनूठा'। उ॰—अब सचिय मुद्र विनूट।—पृ॰ रा॰, ६१। २११।

विनूठा†—वि॰ [हिं॰ अनूठा?] अनूठा। सुंदर। बढ़िया।

विने†—सर्व॰ [हिं॰ विन + ने] दे॰ 'वह'। उ॰—मेरे घर कूँ मेहमान जो आएगा। के यो शीर खुरमाँ विने खाएगा।—दक्खिनी॰, पृ॰ ३३१।

विनेता^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विनेतृ] १. अगुआ। नेता। पथप्रदर्शक। २. अध्यापक। गुरु। शिक्षक। ३. दंड देनेवाला। ४. राजा। शासक [को॰]।

विनेय^{1}—वि॰ [सं॰] १. दंडनीय। शासन के योग्य। जिसको दंड दिया जाय। २. हटा देने या ले जाने लायक। नेतव्य। ३. शिक्षा देने योग्य। जिसे शिक्षा दी जाय [को॰]।

विनेय^{2}—सं० पुं० शिष्य। वह जो शिक्षा ग्रहण करता हो। अंतेवासी। छात्र [को०]।

विनोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक अलंकार जिसमें (किसी वस्तु के अभाव में) किसी वस्तु की हीनता या श्रेष्ठता वर्णन की जाती है। जैसे—(क) जिय बिनु देह नदी बिनु वारी। तैसई नाथ पुरुष बिनु नारी।—तुलसी (शब्द०)। (ख) कैसे नीके लगत ये बिनु संकोच के बैन।—बिहारी (शब्द०)

विनोद—संज्ञा पुं० [सं०] १. कौतूहल। तमाशा। मनोरंजक व्यापार। २. क्रीड़ा। खेल कूद। लीला। ३. प्रमोद। हँसी। दिल्लगी। परिहास। ४. कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का आलिंगन। ५. एक प्रकार का प्रासाद। प्रमोदगृह। ६. हर्ष। आनंद। प्रसन्नता।

यौ०—विनोदरसिक = क्रीड़ाशील। कौतुकी। विनोद में आनंद लेनेवाला। विनोदस्थान = आनंददायक स्थान। क्रीड़ा विनोद की जगह।

७. हटाना। दूर करना। अपनयन। जैसे, श्रमविनोद (को०)। ८. औत्सुक्य। उत्सुकता। उत्कंठा (को०)।

विनोदन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विनोदित, विनोदी] १. ऐसे व्यापार करना जिनका उद्देश्य केवल मनोरंजन हो। आमोद प्रमोद करना। क्रीड़ा करना। खेल कूद करना। २. हंसी दिल्लगी या हास विलास करना। ३. आनंद करना। ४. हटाना। दूर करना। अपवारण (को०)।

विनोदित—वि० [सं०] १. हर्षित। प्रसन्न। २. अपवारित। दूर किया या हटाया हुआ (को०)। ३. कुतूहलयुक्त।

विनोदी—वि० [सं० विनोदिन्] [वि० स्त्री० विनोदिनी] १. कुतूहल करनेवाला। आमोद प्रमोद करनेवाला। क्रीड़ा करनेवाला। २. खेल कूद करनेवाला। चुहलबाज। ३. जिसका स्वभाव आमोद प्रमोद करने का हो। आनंदी। ४. हटाने या दूर करनेवाला। अपवारण करनेवाला (को०)। ५. क्रीड़ाशील। खेलकूद या हँसी ठट्ठे में रहनेवाला। उ०—श्याम बिनोदी रे मधुवनिया। —सूर (शब्द०)।

विन्न वि० [सं०] १. जाना हुआ। ज्ञात। २. प्राप्त। लब्ध। हासिल। ३. रखा हुआ। ४. विचारविमर्श किया हुआ। अनुसंहित। विचारित। ५. अस्तित्वयुक्त। अस्तित्व या सत्ता रखनेवाला। ६. [स्त्री० विन्ना] परिणीत। विवाहित [को०]।

विन्नक—संज्ञा पुं० [सं०] अगस्त्य ऋषि [को०]।

विन्नप—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजतरंगिणी के अनुसार एक राजा का नाम। २. अगस्त्य ऋषि [को०]।

विन्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] विवाहिता स्त्री [को०]।

विन्यय—संज्ञा पुं० [सं०] दशा। स्थिति। [को०]।

विन्यसन—संज्ञा पुं० [सं०] विन्यास करना [को०]।

विन्यस्त—वि० [सं०] १. रखा हुआ। स्थापित। २. यथास्थान बैठाया हुआ। जड़ा हुआ। ३. करीने से लगा हुआ। ४. डाला हुआ। क्षिप्त। ५. सौंपा हुआ। समर्पित (को०)। ६. उपस्थित किया हुआ। प्रस्तुत (को०)।

विन्याक—संज्ञा पुं० [सं०] बरियारा नाम का पौधा।

विन्यास—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विन्यस्त] १. स्थापन। रखना। धरना। उ०—शेली ने प्रबंधक्षेत्र में भी अच्छी तरह घुसकर भावों की अनेकरूपता का विन्यास किया था।—रस०, पृ० ६९। २ यथास्थान स्थापन। ठीक जगह पर करीने से रखना या बैठाना। सजाना। रचना। ३. जड़ना। ४. किसी स्थान पर डालना। ५. सौंपना। समर्पण (को०)। ६. संग्रह। समवाय (को०)। ७. फैलाना। विस्तार करना (को०)। ८. आधार। स्थान (को०)। ९. स्थिति। जैसे, अंगविन्यास (को०)।

विपंचनक—संज्ञा पुं० [सं० विपञ्चनक] ज्योतिषी। भविष्यद्वक्ता [को०]।

विपंचिक—संज्ञा पुं० [सं० विपञ्चिक] [स्त्री० विपंचिका] भविष्यद्वक्ता [को०]।

विपंचिका, विपंची—संज्ञा स्त्री० [सं० विपञ्चिका, विपञ्ची] १ एक प्रकार का बाजा जिसमें तार लगे रहते हैं। एक प्रकार की वीणा। उ०—(क) नवल वसंत धुनि सुनिए विपंची नाद पंचम सुरनि ठानि ओठनि अमेठिए।—देव (शब्द०)। (ख) तंत्री वीणा वल्लभी बहुरि विपंची आहि।—नंददास (शब्द०)। २. केलि। क्रीड़ा। खेल।

विप—वि० [सं०] विद्वान् [को०]।

विपक्त्रिम—वि० [सं०] विपक्व। पका हुआ। परिपक्व [को०]।

विपक्व—वि० [सं०] १. खूब पका हुआ। २. पूर्ण अवस्था को प्राप्त। ३. जो पका न हो। कच्चा।

विपक्ष^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरुद्ध पक्ष। किसी बात के विरुद्ध दूसरी स्थिति। २. शत्रु या विरोधी का पार्श्व। ३. विरोध करनेवाला दल। शत्रु पक्ष। विरोधी। प्रतिद्वंद्वी। दूसरा फरीक। जैसे—विपक्ष में जाना। ४. प्रतिवादी या शत्रु। विरुद्ध दल का मनुष्य। ५. किसी बात के विरुद्ध की स्थापना। विरोध। खंडन। जैसे,—इसके विपक्ष में तुम्हें क्या कहना है? ६. व्याकरण में किसी नियम के विरुद्ध व्यवस्था बाधक नियम। अपवाद। ७. न्याय या तर्क शास्त्र में वह पक्ष जिसमें साध्य का अभाव हो। ८. वह दिन जब पक्ष बदले (को०) ९. निष्पक्ष होने का भाव। निष्पक्षता। पक्षविहीनता (को०)।

विपक्ष^{2}—वि० १. विरुद्ध। खिलाफ। प्रतिकूल। २. उलटा। विपरीत। ३. जिसके पक्ष में कोई न हो। जिसका कोई तरफदार न हो। बिना पक्ष का। ४. विना पर या डैने का। पक्षहीन।

यौ०—विपक्षभाव, विपक्षवृत्ति=दे० 'विपक्षता'। विपक्षरमणी।

विपक्षता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विरुद्ध पक्ष का अवलंबन। २. विपक्ष होने की क्रिया या भाव। खिलाफ होना।

विपक्षरमणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसकी किसी अन्य स्त्री से प्रतिद्वंद्विता हो [को०]।

विपक्षी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपक्षिन्] १. विरुद्ध पक्ष का। दूसरी तरफ का। २. शत्रु। प्रतिद्वंद्वी। प्रतिवादी। फरीक सानी। ३. बिना पक्ष का। बिना पंख या डैने का।

विपच्छ(५)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपक्ष, प्रा॰ विपच्छ] १. दे॰ 'विपक्षी'। २. बिना पंख या डैने का। उ॰—गिरिहै विपच्छ बनाइ।—गुमान (शब्द)।

विपज्जन्य—वि॰ [सं॰ विपत्+जन्य] दुःखी। पीड़ित। उ॰—जन विपज्जन्य होकर अगर आपके—आराधना, पृ॰ १९।

विपण, विपणन—संज्ञा पुं॰ [सं॰]

विपणि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. दूकान। २. विक्रय का सामान। ३. व्यापार। ४. विक्रय। ५. बाजार। उ॰—अपने इन विहारों के दौरान में कर्मशाला, सभा, कूप, विपणि, निर्माणशाला—इन सब आवासस्थानों में।—हिंदु॰ सभ्यता, पृ॰ २२५।

यौ॰—विपणिकर्म। विपणिगत=बाजार में उपलब्ध या प्राप्त। विपणिजीविका=व्यापारजीवी। व्यवसायी। विपणिपथ=बाजार का मार्ग। पण्यवीथी।

विपणिकर्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपणिकर्मन्] दूकानदारी। व्यापार।

विपणी^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'विपणि'।

विपणी^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपणिन्] व्यापारी [को॰]।

विपण्यु—वि॰ [सं॰] १. जिसने अपना रोजगार धंधा छोड़ दिया हो। २. अन्यमनस्क [को॰]।

विपताक—वि॰ [सं॰] पताकारहित। ध्वजविहीन [को॰]।

विपतित—वि॰ [सं॰] १. गिरा हुआ। २. उड़ा हुआ [को॰]।

विपत्—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'विपद्'।

यौ॰—विपत्कर=कष्टकर। विपत्ति पैदा करनेवाला। विपत्काल=बुरा समय। विपज्जन्य। विपत्फल=जिससे संकट उठाना पड़े। विपत्संकुल=विपत्तियों, आपत्तियों से भरा हुआ। उ॰—छोटे छोटे राज्यों से हो गया विपत्संकुल यह देश।—अपरा, पृ॰ २१६। विपत्सागर=बहुत बड़ा संकट। विपत्तियों का समुद्र।

विपत्ति^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. कष्ट, दुःख या शोक की प्राप्ति। भारी रंज या तकलीफ का आ पड़ना। आफत। २. क्लेश या शोक की स्थिति। रंज या तकलीफ की हालत। संकट की अवस्था। बुरे दिन। जैसे,—विपत्ति में कोई साथी नहीं होता।

क्रि॰ प्र॰—आना।—पड़ना।

मुहा॰—विपत्ति उठाना=संकट या कष्ट सहना। रंज या तकलीफ बरदाश्त करना। विपत्ति काटना=संकट या कष्ट के दिन बिताना। रंज या तकलीफ में रहना। विपत्ति झेलना=कष्ट या शोक सहना। (किसी पर) विपत्ति डालना=(किसी को) शोक या दुःख पहुँचाना। किसी को रंज या तकलीफ में डालना। (किसी पर) विपत्ति ढहना=सहसा कोई दुःख या शोक उपस्थित होना। एक बारगी आफत आना। विपत्ति में डालना=संकट या दुःख की अवस्था में करना। विपत्ति में पड़ना=शोक, दुःख या संकट की दशा को प्राप्त होना। विपत्ति भुगतना या भोगना=शोक, दुःख या संकट सहना।

३. कठिनाई। झंझट। बखेड़ा।

मुहा॰—विपत्ति मोल लेना=व्यर्थ अपने ऊपर झंझट लेना। बखेड़े में पड़ना। विपत्ति सिर पर लेना=व्यर्थ झंझट में पड़ना। दिक्कत में पड़ना।

४. मृत्यु। नाश। विध्वंस (को॰)। ५. समाप्ति।

विपत्ति^{2}—संज्ञा पुं॰ श्रेष्ठ पदाति। पैदल सिपाही। प्यादा [को॰]।

विपथ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कुमार्ग। बुरी राह। खराब रास्ता। २. बगल का रास्ता। ३. बुरी चाल चलन। मंद आचरण। ४. एक प्रकार का रथ।

यौ॰—विपथगति=कुमार्ग गमन। विपथगमन। विपथगा। विपथगामी।

विपथगा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. सरिता। नदी। २. वह जो कुमार्ग पर चले [को॰]।

विपथगामिन्—वि॰ [सं॰ विपथगामिन्] [वि॰ स्त्री॰ विपथगामिनी] कुमार्गगामी। विरुद्ध मार्ग पर चलनेवाला। उ॰—विपथगामी होने पर, वही संकेत करके मनुष्य का अनुशासन करती है।—आँधी, पृ॰ २०।

विपद्—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विपत्ति। आफत। संकट।

विपदा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विपत्ति। आफत। दुःख, शोक या संकट।

यौ॰—विपद्गत= विपत्ति में पड़ा हुआ। विपद्ग्रस्त=विपन्न। आफत का मारा। विपद्दशा=संकट की स्थिति। विपद्युक्त=विपत्तिग्रस्त। अभागा।

विपन(५)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपिन] जंगल। विपिन। उ॰—विपन विहर ऊपल अकल सकल जीव जड़ जाल।—पृ॰ रा॰, ६।१४।

विपन्न^1—वि॰ [सं॰] १. जिसपर विपत्ति पड़ी हो। विपत्ति में पड़ा हुआ। मुसीबत का मारा। २. दुःखी। आर्त। ३. कठिनाई या झंझट में पड़ा हुआ। ४. भूला हुआ। भ्रम में पड़ा हुआ। ५. विध्वस्त। नष्ट (को॰)। ६. मृत।

विपन्न^2—संज्ञा पुं॰ सर्प [को॰]।

विपन्नक—वि॰ [सं॰] १. भाग्यहीन। २. मृत। ३. नष्ट [को॰]।

विपन्नाव—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विपत्+हिं॰ नाव] विपत्ति या भँवर में पड़ी हुई नौका। उ॰—जीवन बिना अन्न के विपन्नाव।—अर्चना, पृ॰ ८५।

विपरिक्रांत—वि॰ [सं॰ विपरिक्रान्त] वीर। साहसी। हिम्मतवर [को॰]।

विपरिच्छिन्न—वि॰ [सं॰] १. कर्तित। कटा हुआ। २. विध्वस्त। नष्ट [को॰]।

विपरिणति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] परिणाम। परिवर्तन। उ॰—वह यह सिद्ध करने का जतन करता था कि मानव इतिहास का विकास प्राकृतिक प्रभावों की विपरिणतियों का ठीक अनुसरण करता है।—भारत नि॰, पृ॰ ३।

विपरिणमन—संज्ञा पुं० [सं०] परिवर्तन [को०]।

विपरिणाम—संज्ञा पुं० [सं०] १. परिवर्तन। २. रूपपरिवर्तन। रूपांतरण। ३. प्रौढ़ि [को०]।

विपरिणामी—वि० [सं० विपरिणामिन्] परिवर्तनशील [को०]।

विपरिधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशिष्ट परिधान। विशिष्ट प्रकार का पहनावा। २. विनिमय। लेनदेन [को०]।

विपरिवर्तन¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लौटना। घूमना। २. चक्कर खाना [को०]।

विपरिवर्तन²—वि० लौटानेवाला [को०]।

विपरिवर्तनी विद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह विद्या या मंत्र जो किसी व्यक्ति को दूर से खींच लाए [को०]।

विपरिवर्तित—वि० [सं०] लौटा या लौटाया हुआ [को०]।

विपरिवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] लौटना [को०]।

विपरीत¹—वि० [सं०] १. जो मेल में या अनुरूप न हो। जो विपर्यय के रूप में हो। उलटा। विरुद्ध। खिलाफ। २. किसी की इच्छा या हित के विरुद्ध। प्रतिकूल। जैसे,—विपरीत आचरण। ३. अनिष्टसाधन में तत्पर। रुष्ट। जैसे,—दैव या विधि का विपरीत होना। ४. हितसाधन के अनुपयुक्त। दुःखद। जैसे,—विपरीत समय। उ०—आजु विपरीत समय सब हीं विपरीत है। (शब्द०)। ५. मिथ्या। असत्य (को०)। ६. व्यत्यस्त अर्थात् उलटा वा प्रतिकूल अभिनय करनेवाला (को०)।

विपरीत²—संज्ञा पुं० १. केशव के अनुसार एक अर्थालंकार, जिसमें कार्य की सिद्धि में स्वयं साधक का बाधक होना दिखाया जाता है। जैसे,—'राधा जू सों कहा कहौं दूतिन की मानैं सीख साँपनी सहित विषरहित फनिन की। क्यों न पैर बीच, बीच आँगियौ न सहि सकै, बीच परी अंगना अनेक आँगननि की'। (यहाँ दूती को साधक होना चाहिए था, पर वह बाधक हुई)। २. सोलह प्रकार के रतिबंधों में से दसवाँ रतिबंध।

यौ०—विपरीतकर, विपरीतकारक, विपरीतकृत = उलटा काम करनेवाला। विपरीतचेता। विपरीतमति। विपरीतरत = विपरीतरति। विपरीतलक्षणा। विपरीतवृत्ति।

विपरीतक¹—संज्ञा पुं० [सं०] विपरीतरति [को०]।

विपरीतक²—वि० प्रतिकूल। विपरीत [को०]।

विपरीतकरणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] हठयोग की एक क्रिया। उ०—विपरीतकरणी पुनि बज्रोली शक्ति चालन कीजिए।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ५०।

विपरीतकारी—वि० [सं० विपरीतकारिन्] विपरीत या उलटा काम करनेवाला। प्रतिकूल कार्य करनेवाला [को०]।

विपरीतचेता—वि० [सं० विपरीतचेतस्] उलटी बुद्धिवाला [को०]।

विपरीतता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विपरीत होने का भाव।

विपरीतत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विपरीतता' [को०]।

विपरीतरति—संज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य के अनुसार संभोग का एक प्रकार जिसमें पुरुष नीचे की ओर चित लेटा रहता है और स्त्री उसके ऊपर लेटकर संभोग करती है। कामशास्त्र में इसे पुरुषायित संबंध कहा है। इसके कई भेद कहे गए हैं।

विपरीतलक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह व्यंग्यात्मक उक्ति जो विरोधी बात द्वारा व्यक्त की जाय [को०]।

विपरीतवृत्ति—वि० [सं०] उलटा काम करनेवाला।

विपरीता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुश्चरित्रा स्त्री।

विपरीतार्थ—वि० [सं०] जिसका अर्थ उलटा हो।

विपरीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विपरीत'।

विपरीतोपमा—संज्ञा पुं० [सं०] केशव के अनुसार एक अलंकार जिसमें किसी भाग्यवान् व्यक्ति की हीनता वर्णन की जाय और वह अतिहीन दशा मे दिखाया जाय। यथा,—देखिए मंडित दंडन सों, भुजदंड दोऊ असि दंड विहीनो। राजनि श्री रघुनाथ के राज कुमंडल छांड़ि कमंडली लीनो।—केशव (शब्द०)।

विपर्जयⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विपर्यय] दे० 'विपर्यय—३'। उ०—तब साधै हठ जोग विपर्जय को घर पावै। प्रान करै आयाम पुरुप तव नजरि में आवै।—पलटू०, पृ० ३६।

विपर्णक¹—वि० [सं०] पर्णरहित। विना पत्तों का।

विपर्णक²—संज्ञा पुं० पलाश का पेड़। टेसू।

विपर्यय—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक वस्तु का दूसरी के स्थान पर और दूसरी का पहली के स्थान पर होना। उलट पुलट। इधर का उधर। जैसे,—वर्णविपर्यय। २. ऐसा परिवर्तन जिसमें दो वस्तुओं की स्थिति पूर्वस्थिति से विरुद्ध हो जाय। जैसी चाहिए, उससे विरुद्ध स्थिति। और का और। व्यतिक्रम। ३. मिथ्या ज्ञान। और का और समझना।

विशेष—योग दर्शन के अनुसार 'विपर्यय' चित्त की पाँच प्रकार की वृत्तियों (प्रमाण, विकल्प आदि) में से एक है। जैसे,—रस्सी को साँप या सीप को चाँदी समझना। यथार्थ ज्ञान द्वारा इसका निराकरण होता है। इस 'विपर्यय' या विपरीत ज्ञान के पाँच अवयव कहे गए हैं—अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश। इन्हीं को सांख्य में क्रमशः तम, मोह, महामोह तामिस्र और अंधतामिस्र कहते हैं।

४. भ्रम। भूल। गलती। समझ का फेर। ५. गड़बड़ी। अव्यवस्था। ६. नाश। विनाश। ७. अदल बदल। विनिमय (को०)। ८. शत्रुता (को०)। ९. बैर। विरोध (को०)। १०. प्रलय (को०)। ११. अभाव। अनस्तित्व (को०)।

विपर्यस्त—वि० [सं०] १. जिसका विपर्यय हुआ हो। जो उलट पलट गया हो। जो इधर का उधर हो गया हो। २. अस्त व्यस्त। गड़बड़। चौपट। ३. मिथ्याज्ञानजन्य। और का और समझा हुआ। भूल से वास्तविक समझा हुआ (को०)।

विपर्यस्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसे लड़का न होता हो।

विपर्याण—वि० [सं०] पर्याणहीन। जिसपर पलान न हो। जिसमें चारजामा न हो [को०]।

विपर्यास—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विपर्यस्त] १. विपर्यय। उलट पलट। इधर का उधर। व्यतिक्रम। २. पूर्व से विरुद्ध स्थिति। एक वस्तु का दूसरी के स्थान पर होना। ३. जैसा चाहिए,

उसके विरुद्ध स्थिति । और का और । ४. मिथ्या ज्ञान । और का और समझना ।

विशेष—न्याय में अप्रमात्मक बुद्धि का नाम विपर्यास है । जैसे,— रस्सी को साँप समझना ।

विपल—संज्ञा पुं० [सं०] समय का एक अत्यत छोटा विभाग जो एक पल का साठवाँ भाग होता है ।

विपलायन—संज्ञा पुं० [सं०] इतस्ततः भागना । पलायन । इधर उधर भागना [को०] ।

विपलायित—वि० [सं०] १. खदेड़ा या भगाया हुआ । २. पलायित । भागा हुआ [को०] ।

विपलायी—वि० [सं० विपलायिन्] इधर उधर पलायन करने या भागनेवाला [को०] ।

विपलाश—वि० [सं०] विपर्ण । पलाशहीन । पत्रविहीन [को०] ।

विपवन¹—वि० [सं०] [वि० विपवनीय, विपव्य] १. विशेष रूप से पवित्र करनेवाला । २. वायुरहित । पवनरहित ।

विपवन²—संज्ञा पुं० विशुद्ध पवन । साफ हवा ।

विपव्य—वि० [सं०] विशेष रूप से शुद्ध या पवित्र करने योग्य [को०] ।

विपशी—संज्ञा पुं० [सं० विपशिन्] एक बुद्ध का नाम ।

विपश्चित्—वि० [सं०] पंडित । बुद्धिमान् । सूक्ष्मदर्शी । उ०—तेहि कारण शिव गंग तेहि गहँ विपश्चित लोक । याहि में मज्जन किए ते मिटै महा अघ शोक ।—शं० दि० (शब्द०) ।

विपश्यन—संज्ञा पुं० [सं०] प्रकृत ज्ञान । यथार्थ बोध । (बौद्ध) ।

विपश्यी—संज्ञा पुं० [सं० विपश्यिन्] एक बुद्ध का नाम ।

विपश्वी—संज्ञा पुं० [सं० विपश्विन्] बुद्ध का एक नाम [को०] ।

विपस्—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेधा । बुद्धि । २. ज्ञान । समझ ।

विपहुर(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० द्वि+प्रहर, प्रा० वि+पहर] द्वितीय प्रहर । दुपहर ।—पृ० रा०, ६१ । १७०८ ।

विपांडु—वि० [सं० विपाण्डु] स्वर्णाभ । पीला [को०] ।

विपांडुर—वि० [सं० विपाण्डुर] पीत । पीला [को०] ।

विपांडुरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] महामेदा ।

विपांसुल—वि० [सं०] जिसमें धूल न हो [को०] ।

विपाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. परिपक्व होना । पचन । पकना । २. पूर्ण दशा को पहुँचना । तैयारी पर आना । चरम उत्कर्ष । ३. फल । परिणाम । ४. कर्म का फल ।

विशेष—योग दर्शन में यह विपाक तीन प्रकार का कहा गया है— जाति (जन्म), आयु और भोग ।

५. खाए हुए भोजन का पेट में पचना । खाद्य द्रव्य की पेट के अंदर रस रूप में परिणति । ६. दुर्गति । दुर्दशा । ७. स्वाद । जायका । ८. पकाना । परिपक्व करना । ९. मुरझाना । कुम्हलाना (को०) ।

यौ०—विपाककाल = पूर्णता या परिपक्व होने का समय । विपाकदारुण = जिसका परिणाम दुःखद हो । विपाकदोष = पाचनक्रिया का दोष या कुप्रभाव । अजीर्ण ।

विपाट्—संज्ञा स्त्री० [सं० विपाश्] एक नदी । विशेष—दे० 'विपासा' [को०] ।

विपाट—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वाण ।

विपाटक—वि० [सं०] १. विपाटन करनेवाला । उत्पाटित करनेवाला । उखाड़नेवाला । खोदनेवाला । अपहर्ता । अपहारक (को०) ।

विपाटन—संज्ञा पुं० [सं०] १. उखाड़ना । खोदना । २. खंड खंड करना (को०) । ३. अपहरण (को०) ।

विपाटल—वि० [सं०] गहरा लाल । विशेष लाल [को०] ।

विपाटित—वि० [सं०] १. उखाड़ा हुआ । उन्मूलित । खोदा हुआ । २. खंड खंड किया हुआ । अलग किया हुआ । ३. अपहृत । [को०] ।

विपाठ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार लंबा वाण । तीर ।

विपात—संज्ञा पुं० [सं०] पातन । नाश ।

विपातक—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाश करनेवाला । नाशक । २. गला देनेवाला । पिघलानेवाला ।

विपातन—संज्ञा पुं० [सं०] १. गलाना । २. नाश करना ।

विपादन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विपादित] वध । हत्या । नाश ।

विपादिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुष्ठ रोग का एक भेद । अपरस ।

विशेष—यह पैर में होता है । इससे उँगलियों के पास से ऊपर तक चमड़े में दरारें पड़ जाती हैं और बड़ी खुजली होती है । पीड़ा के कारण पैर नहीं रखा जाता है ।

२. प्रहेलिका । पहेली ।

विपादित—वि० [सं०] विनाशित । नष्ट किया हुआ ।

विपाद्य—वि० [सं०] नाश करने योग्य । मारने योग्य । वध्य [को०] ।

विपाप—वि० [सं०] पापरहित । निष्पाप [को०] ।

विपापा—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत में वर्णित एक नदी का नाम ।

विपाप्मा—वि० [सं० विपाप्मन्] निष्पाप [को०] ।

विपाल—वि० [सं०] (पशु) जिसका कोई पालनेवाला या मालिक न हो । (स्मृति) ।

विपाश—वि० [सं०] पाशरहित । बंधनमुक्त । निर्बंध [को०] ।

विपाशन—संज्ञा पुं० [सं०] मुक्त करानेवाला [को०] ।

विपाशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यास नदी जो पंजाब में है । विशेष दे० 'विपासा' ।

विपासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पंजाब की एक नदी । व्यास ।

विशेष—ऋग्वेद में इस नदी का उल्लेख शतुद्री (सतलज) के साथ है ।

विपिन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन । जंगल । २. उपवन । वाटिका ।

विपिन²—वि० भयानक । डरावना ।

विपिनचर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वन में रहनेवाला । वनचर । २. जंगली आदमी । ३. पशु पक्षी आदि ।

विपिनतिलका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्णवृत्ति जिसके प्रत्येक चरण में नगण, सगण, नगण, और दो रगण (न, स, न, र, र अर्थात् ।।।, ।।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ होते हैं ।

विपिनपति—संज्ञा पुं० [सं०] वन का राजा, सिह । उ०—जिमि भेरी दल लै विपिनपति रिसि दुचंग मन में धरत । तिमि लस्यो प्रवीन उताल गति सुर सिगार करि समर रत ।—गोपाल (शब्द०) ।

विपिनविहारी—संज्ञा पुं० [सं० विपिन+विहारिन्] १. वन में विहार करनेवाला । वनचारी । २. कृष्ण का एक नाम । उ०– दरसन पाइ थकित भई सारी । कहत भए तब विपिनविहारी ।—विश्राम (शब्द०) ।

विपिनौका—संज्ञा पुं० [सं० विपिनौकस्] १. बंदर । २. वनमानुस । ३. वन में रहनेवाला मनुष्य [को०] ।

विपुंसक—वि० [सं०] पुंसत्वरहित । पुरुषत्व से हीन ।

विपुंसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसकी चेष्टा, स्वभाव या आकृति पुरुषों जैसी हो ।

विपुत्र—वि० [सं०] [स्त्री० विपुत्रा] पुत्ररहित । पुत्रहीन ।

विपुन(पु)—संज्ञा पुं० [?] पक्ष । पखवारा । उ०—पख हारचौ पाँसू विपुन अर्धमास बल जान । पख जु पक्ष हरि राखिए जातें होइ कल्यान ।—नंद० ग्रं०, पृ० ६७ ।

विपुर—वि० [सं०] जो एक स्थान पर न रहे [को०] ।

विपुल^1—वि० [सं०] [स्त्री० विपुला] १. विस्तार, संख्या या परिमाण में बहुत अधिक । २. बृहत् । बड़ा । ३. अगाध । बहुत गहरा । ४. रोमांचित (को०) ।

विपुलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सुमेरु पर्वत का पश्चिमी भाग । २. मगध देश की प्राचीन राजधानी राजगृह के पास की एक पहाड़ी । ३. हिमालय । ४. एक देवीपीठ । देवी का एक प्रधान स्थान जहाँ की देवी का नाम विपुला है । ५. रोहिणी से उत्पन्न वसुदेव के एक पुत्र का नाम । उ०—विपुल विपुल बल चल्यो रचत रन में पुल सर को ।— गोपाल (शब्द०) । ६. समादृत व्यक्ति । संमानित व्यक्ति (को०) ।

विपुलक–वि० [सं०] १. बहुत चौड़ा । २. जिसे रोमांच न हो । पुलकरहित ।

विपुलग्रीव—वि० [सं०] जिसकी गर्दन लंबी हो [को०] ।

विपुलच्छाय—वि० [सं०] (वृक्ष) जो घनी छायावाला हो [को०] ।

विपुलजघना—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथु या बड़े नितंबोंवाली स्त्री [को०] ।

विपुलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] आधिक्य । बहुतायत । बड़ाई । उ०—खड़ी बोली में उसकी भी विपुलता है ।—अर्चना (भू०), पृ० 'ख' ।

विपुलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विपुलता' ।

विपुलपार्श्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम ।

विपुलद्रव्य—वि० [सं०] जिसके पास प्रचुर धन हो [को०] ।

विपुलप्रज्ञ, विपुलबुद्धि—वि० [सं०] दे० 'विपुलमति' ।

विपुलमति^{1}—वि० [सं०] बहुत बुद्धिवाला । बहुत बुद्धिमान् ।

विपुलमति^{2}—संज्ञा पुं० १. एक बोधिसत्व का नाम । २. जैनों के अनुसार मनःपर्याय ज्ञान का एक भेद । उ०—मनःपर्याय ज्ञान के दो भेद हैं—ऋजुमति,...और विपुलमति जो दूसरे के मन में सरलता तथा वक्रता से ठहरे हुए पदार्थों को जताता है ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २८२ ।

विपुलरस—संज्ञा पुं० [सं०] गन्ना । ईख [को०] ।

विपुलश्रोणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विपुलजघना' [को०] ।

विपुलस्कंध—संज्ञा पुं० [सं० विपुलस्कन्ध] अर्जुन का एक नाम ।

विपुलस्रवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] घीकुवार । विपुलास्रवा [को०] ।

विपुलहृदय—वि० [सं०] विशाल हृदयवाला । उदारचेता ।

विपुला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पृथ्वी । वसुंधरा । २. एक प्रकार का छंद, जिसके प्रत्येक चरण में भगण, रगण और दो लघु होते है । ३. आर्या छंद के तीन भेदों में से एक भेद जिसक प्रथम चरण में १८, दूसरे मे १२, तीसरे में १४ और चौथे में १३ मात्राएँ होती हैं । ४. विपुल नामक पर्वत की अधिष्ठात्री देवी । ५. एक प्रसिद्ध सती जो बहुला के नाम स प्रसिद्ध है । ६. एक ताल का नाम । (संगीत) ।

विपुलाई(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विपुल+हिं० आई (प्रत्य०)] विपुलता । अधिकता । ज्यादती । उ०—को कहि सक कपि दल विपुलाई ।—मानस, ६.४ ।

विपुलास्रवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] घृतकुमारी । घीकुवार । ग्वारपाठा ।

विपुलेक्षण—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विपुलेक्षणा] विशाल नेत्रोंवाला । बड़ी आँखोंवाला [को०] ।

विपुलोरस्क—वि० [सं०] जिसका उरस्क चौड़ा हो । चौड़ी छातीवाला । विशाल वक्षवाला [को०] ।

विपुष्ट—वि० [सं०] दुर्बल । जिसे पर्याप्त पोषण न मिला हो [को०] ।

विपुष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] उन्नति । समृद्धि । अभ्युदय [को०] ।

विपुष्पित—वि० [सं०] हर्षित । प्रफुल्ल ।

विपूय—संज्ञा पुं० [सं०] मुंज तृण । मूँज ।

विपूयूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सड़ी हुई वस्तु की गंध । सड़ाँध । २. सड़ा हुआ शव (बौद्ध) ।

विपृक्—वि० [सं० विपृच्] अलग । जुदा । पृथक् [को०] ।

विपृक्त—वि० [सं०] असंपृक्त । अलग किया हुआ । वियुक्त [को०] ।

विपृक्वत्—वि० [सं०] शुद्ध । बेमेल । निर्मल [को०] ।

विपोहना(पु)—क्रि० स० [सं० वि+प्रोत] १. पोतना । लीपना । २. नाश करना । मिटाना । उ०—ज्योति जगै जमुना सो लगै जग लाल विलोचन पाप विपोहै ।—केशव (शब्द०) । ३. दे० 'पोहना' ।

विप्पंन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विपिन, प्रा० बिपन, विपन ।] दे० 'विपिन' । उ०—बगुर घेरि विप्पंन अप्प मूलन में मंडिय । तक्क तकै इक रहिय हक्कि षेदा षिभ्भ छंडिय ।—पृ० रा०, ६।६७ ।

विप्प(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विप्र, प्रा० विप्प] दे० 'विप्र' । उ०—पधराइ राइ मुख दरस कीन । क्रित क्रम्म पुब्ब फल मान लीन । करि जातक्रम्म मति ग्रंथ सोधि । वेदोक्त विप्प बर बुद्धि बोधि ।—पृ० रा०, १।६६६ ।

विप्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्राह्मण ।

विशेष—जो यजन, याजन आदि कर्म पूर्ण रीति से करता है वह विप्र है। विशेष दे० 'ब्राह्मण'।

२. पुरोहित। यज्ञ करानेवाला। ३. वेदमंत्रों को जाननेवाला। कर्मनिष्ठ। स्तवन करनेवाला। स्तुतिपाठक। ४. शिरीष वृक्ष। सिरिस का पेड़। ५. अश्वत्थ। पीपल का पेड़। ६. पीपर का पौधा जो औषध के काम में आता है। रेणुक। ७. भाद्रपद मास (को०)। ८. चंद्रमा (को०)। ९. बुद्धिमान् व्यक्ति।

विप्र²—वि० मेधावी। बुद्धिमान्।

विप्रक—संज्ञा पुं० [सं० विप्र+क (प्रत्य०)] निम्न ब्राह्मण। क्षुद्र वा कुत्सित ब्राह्मण [को०]।

विप्रकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० विप्रकर्तृ] वह जो विप्रकार करे। अपकार या तिरस्कार करनेवाला व्यक्ति [को०]।

विप्रकर्ष, विप्रकर्षण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विप्रकृष्ट] १. दूर खींच ले जाना। दूर हटाना। २. किसी कर्म या कृत्य का अंत। ३. अंतर। दूरी। फासला (को०)। ४. बिलगाव। अलगाव। भेद। फर्क (को०)।

विप्रकार¹—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विप्रकृत] १. तिरस्कार। अनादर। २. उपकार। ३. विभिन्न या विविध प्रकार। अनेक ढंग (को०)। ४. प्रतिशोध। बदला (को०)। ५. क्षति। हानि (को०)।

विप्रकार²—अव्य० विविध प्रकार से।

विप्रकारी—वि० [सं० विप्रकारिन्] १. तिरस्कार करनेवाला। २. विरोधी। ३. बदला लेनेवाला [को०]।

विप्रकाष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] नरमा या कपास का पौधा।

विप्रकीर्ण—वि० [सं०] १. बिखरा हुआ। छितराया हुआ। इधर उधर पड़ा हुआ। २. अस्त व्यस्त। अव्यवस्थित। गड़बड़। ३. चौड़ा। विस्तृत। फैला हुआ (को०)।

विप्रकुंड—संज्ञा पुं० [सं० विप्रकुण्ड] ब्राह्मण की जारज संतान [को०]।

विप्रकृत—वि० [सं०] १. तिरस्कृत। २. जिसकी हानि की गई हो [को०]।

विप्रकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विप्रकार। अपकार। २. परिवर्तन। भिन्नता। रद्दोबदल (को०)।

विप्रकृष्ट¹—वि० [सं०] १. खींचकर दूर किया हुआ। २. जो दूरी पर हो। दूरस्थ। ३. फैलाया हुआ। विस्तारित (को०)।

विप्रकृष्ट²—संज्ञा पुं० [सं०] किसी ऋतु में संचित हुए कफ, पित्त आदि का अन्य ऋतु में कुपित होना। उ०—विप्रकृष्ट उसे कहते हैं जैसे हेमंत ऋतु में संचित हुआ कफ वसंत ऋतु में कुपित होता है।—माधव०, पृ० ३।

विप्रकृष्टक—वि० [सं०] दूरवर्ती। दूरस्थ। जो फासले पर हो [को०]।

विप्रगीत—वि० [सं०] जिसके विषय में मतैक्य न हो (जैन)।

विप्रग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मराक्षस [को०]।

विप्रचरण—संज्ञा पुं० [सं०] भृगु मुनि की लात का चिह्न जो विष्णु के हृदय पर माना जाता है।

विप्रचरन—संज्ञा पुं० [सं० विप्रचरण] दे० 'विप्रचरण'। उ०—(क) उर बनमाल पदिक अति शोभित विप्रचरन, चित कहँ करषै।—तुलसी (शब्द०)। (ख) उर मनि हार पदिक की सोभा। विप्रचरन देखत मन लोभा।—तुलसी (शब्द०)।

विप्रचित्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विप्रचित्ति'।

विप्रचित्ति—संज्ञा पुं० [सं०] एक दानव जिसकी पत्नी सिंहिका के गर्भ से राहु की उत्पत्ति हुई थी।

विप्रच्छन्न—वि० [सं०] छिपा हुआ। अंतर्हित। प्रच्छन्न [को०]।

विप्रणाश—संज्ञा पुं० [सं०] विनाश। नाश। प्रणाश [को०]।

विप्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्राह्मणत्व।

विप्रतापस—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण तपस्वी।

विप्रतारक—संज्ञा पुं० [सं०] बहुत धोखा देनेवाला।

विप्रतारित—वि० [सं०] जिसने धोखा खाया हो। जो छला गया हो [को०]।

विप्रतिकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. खंडन। विरोध। २ प्रतिकार। प्रतिशोध [को०]।

विप्रतिकृत—वि० [सं०] जिसका विप्रतिकार किया गया हो। जिसका प्रतिशोध किया गया हो [को०]।

विप्रतिपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विरोध। मेल न बैठना। जैसे,—मनुष्यों के स्वार्थ की विप्रतिपत्ति। (मिताक्षरा)। २. ऐसा कथन जिसके अंदर दो ऐसी बातें हों जो एक के साथ न हो सकती हों। परस्पर विरुद्ध वाक्य। (न्याय)।

विशेष—जैसे कोई कहे कि वहाँ आग है और नहीं है तो उसका यह कथन विप्रतिपत्ति का उदाहरण होगा।

३. किसी बात का बिलकुल उलटा निरूपण। किसी बात में ऐसा नतीजा निकालना जो ठीक न हो। विपरीत प्रतिपत्ति। असिद्धि। उ०—उनमें विप्रतिपत्ति न हो; उनमें यथार्थता हो।—पा० सा० सि०, पृ० १३२। ४. प्रसिद्धि का अभाव। अख्याति। ५. कुख्याति। बदनामी। ६. गलत धारणा। भ्रांत धारणा (को०)। ७. पारस्परिक संबंध। परिचय। जान पहचान (को०) ८. हैरानी। घबड़ाहट (को०)। ९. चातुर्य। विदग्धता (को०)। १०. किसी कृत्य या पूजन की वह विकृति जो प्रतिनिधि द्रव्य का नाम लेने से होती है।

विशेष—किसी कृत्य या पूजन में जो द्रव्य विहित है, उसके अभाव में यदि कोई दूसरा द्रव्य प्रतिनिधि रूप में रखा जाय, तो समर्पण वाक्य में प्रतिनिधि द्रव्य का नाम न लेकर जिसके अभाव में वह द्रव्य रखा गया हो, उसी का नाम कहना चाहिए। प्रतिनिधि द्रव्य का नाम लेने से पूजा विकृत हो जाती है।

विप्रतिपद्य—वि० [सं०] १. जो अनेक प्रकार से सिद्ध किया जाय। अनेक ढंग से सिद्ध किया जानेवाला। २. जिसका खंडन या विरोध किया जाय [को०]।

विप्रतिपद्यमान—वि० [सं०] पाप करनेवाला। पापात्मा।

विप्रतिपन्न—वि० [सं०] १. विप्रतिपत्तियुक्त। संदेहयुक्त। २. अस्वीकृत। ३. जो साबित न हुआ हो। असिद्ध। ४. व्याकुल।

घबड़ाया हुआ। हतबुद्धि। किंकर्तव्यविमूढ़ (को०)। ५. परस्पर संयुक्त या संबद्ध (को०)।

यौ०—विप्रतिपन्न बुद्धि = जिसकी धारणा गलत हो।

विप्रतिषिद्ध—वि० [सं०] १. जिसका निषेध किया गया हो। जो मना हो। निषिद्ध। (स्मृति)। २. विरुद्ध। खिलाफ। उलटा। ३. निवारित। वर्जित।

विप्रतिषेध—संज्ञा पुं० [सं०] १. दो बातों का परस्पर विरोध। मेल न बैठना २. नियंत्रण या वश में रखना (को०)। ३. प्रतिषेध। रोक। वर्जन (को०)। ४. व्याकरण में समान रूप से महत्वपूर्ण दो नियमों की एक स्थान पर उपस्थिति। जहाँ दो प्रसंग अन्वयार्थ एक साथ प्राप्त हों—यंत्र द्वौ प्रसंगान्वयार्थौ एकस्मिन् प्राप्नुत: स: विप्रतिषेध: (काशिका)।

विप्रतिसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. अनुताप। पछतावा। २. रोष। क्रोध। ३. दुष्टता।

विप्रतिसारी—वि० [सं० विप्रतिसारिन्] दु:खी। अनुतप्त [को०]।

विप्रतीप—वि० [सं०] उलटा। प्रतिकूल [को०]।

विप्रतीसार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विप्रतिसार'।

विप्रत्यनीक, विप्रत्यनीयक—वि० [सं०] शत्रुतापूर्ण। बैरभाव से युक्त [को०]।

विप्रत्यय—संज्ञा पुं० [सं०] अविश्वास [को०]।

विप्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मणत्व।

विप्रथित—वि० [सं०] विख्यात। मशहूर।

विप्रदह—संज्ञा पुं० [सं०] सूखा फल, कंद, मूल आदि [को०]।

विप्रदुष्ट—वि० [सं०] १. पापरत। २. कामी। ३. मंद। नष्ट।

विप्रधर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. पीड़ा। क्लेश। दु:ख। २. विरक्ति। व्यग्रता [को०]।

विप्रधुक्—वि० [सं०] लाभकारी। हितकर।

विप्रपद—संज्ञा पुं० [सं०] भृगु मुनि की लात का चिह्न जो विष्णु के वक्षस्थल पर माना जाता है। विप्रचरण।

विप्रपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशेष रूप से पतन। बिलकुल गिर जाना। २. ऊँचा ढालवाँ टीला। ३. खाईं। ४. उड़ने की एक विशेष स्थिति या ढंग (को०)।

विप्रप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. पलाश का वृक्ष। २. जमा हुआ और खट्टा दही (को०)।

विप्रबंधु—संज्ञा पुं० [सं० विप्रबन्धु] १. वह ब्राह्मण जो अपने कर्म से च्युत हो। नीच ब्राह्मण। २. गोपायन गोत्रीय एक मंत्रद्रष्टा ऋषि।

विप्रबुद्ध—वि० [सं०] १. जागा हुआ। २. ज्ञानप्राप्त।

विप्रबोधित—वि० [सं०] १. जिसकी चर्चा हो चुकी हो। जो विचारित हो। २. जगाया हुआ। प्रबोध किया हुआ।

विप्रमत्त—वि० [सं०] जो अनवधान न हो। प्रमादरहित [को०]।

विप्रमना—वि० [सं० विप्रमनस्] जिसका जी न लगता हो। अन्यमनस्क। अनमना।

विप्रमाथी—वि० [सं० विप्रमाथिन्] [वि० स्त्री० विप्रमाथिनी] १. खूब मथन करनेवाल। २. ध्वस्त या नष्ट करनेवाला। ३. आकुल या क्षुब्ध करनेवाला।

विप्रमुक्त—वि० [सं०] १. निर्बंध। स्वतंत्र। खुला हुआ। मुक्त। २. जिसपर लक्ष्य संधान किया गया हो। ३. रहित। मुक्त। (समासांत में प्रयुक्त) जैसे, भयविप्रमुक्त [को०]।

विप्रमोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] मोक्ष। मुक्ति [को०]।

विप्रमोच्य—वि० [सं०] छोड़ने या मुक्त करने योग्य। जिसे मुक्त किया जाय [को०]।

विप्रमोह—संज्ञा पुं० [सं०] नियमभंग। अपराध। त्रुटि [को०]।

विप्रमोहित—वि० [सं०] मुग्ध। मूढ़। हतबुद्धि [को०]।

विप्रयाण—संज्ञा पुं० [सं०] १. भागना। पलायन। २. चलना। गमन। जाना।

विप्रयात—वि० [सं०] १. गत। गया हुआ। प्रस्थित। २. पलायित। भागा हुआ [को०]।

विप्रयुक्त—वि० [सं०] १. जो मिला न हो। विश्लिष्ट। विभिन्न। अलग। २. वियुक्त, बिछड़ा हुआ। (मित्र या प्रिय से)। ३. वंचित। रहित। उ०—संघ से मैं विप्रयुक्त हूँ, इसलिये दुखी हूँ।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० १६। ४. मुक्त। छोड़ा हुआ। ५. जिसका विभाग हुआ हो।

विप्रयोग—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विप्रयुक्त] १. वियोग। विरह। जुदाई। विप्रलंभ। २. विसंवाद। बुरा समाचार। ३. विच्छेद। अलग होना। ४. असहमति। कलह। मतभेद (को०)। ५. अनुकूलता। योग्यता। पात्रता (को०)। ६. अभाव (को०)।

विप्रयोगी—वि० [सं० विपयोगिन्] विरही। वियुक्त [को०]।

विप्रयोजित—वि० [सं०] वियुक्त, रहित वा मुक्त किया हुआ।

विप्रराम—संज्ञा पुं० [सं०] परशुराम। उ०—बैरिन में विप्रराम, नीति माहि जदुराम, बूँदीनाथ राजाराम शील माहि राम है।—मतिराम (शब्द०)।

विप्रलंभ—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलम्भ] १. अभिलषित वस्तु की अप्राप्ति। चाही हुई वस्तु का न मिलना। २. प्रिय का न मिलना। वियोग। जुदाई। विरह। अमिलन।

विशेष - साहित्य में शृंगार रस दो प्रकार का कहा गया है—संभोग शृंगार विप्रलंभ शृगार। इन्हीं को संयोग और वियोग भी कहते हैं। विप्रलंभ शृंगार में नायक नायिका के विरहजन्य संताप आदि का वर्णन होता है।

३. अलग होना। विच्छेद। ४. छल से किसी को किसी लाभ से वंचित करना। धोखा। छल। धूर्तता। वंचना। ५ विरुद्ध कर्म। बुरा काम। ६ असहमति। कलह

विप्रलंभक—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलम्भक] धूर्त या धोखेबाज आदमी। वंचक।

विप्रलंभन—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलम्भन] छल करना।

विप्रलंभी—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलम्भिन्] धोखेबाज। धूर्त।

विप्रलपित—वि० [सं०] दे० 'विप्रलप्त¹'।

विप्रलप्त¹—वि० [सं०] १. तर्क या विवाद से युक्त। विचारित। २. विलपित। विलाप किया हुआ।

विप्रलप्त²- संज्ञा पुं० १. तर्क। विवाद। २. विलाप।

विप्रलब्ध—वि० [सं०] १. जिसे चाही हुई वस्तु न प्राप्त हुई हो। रहित। वंचित। निराश। २. जिसे प्रिय का समागम न प्राप्त हुआ हो। वियोगदशाप्राप्त। ३. जो छल द्वारा किसी लाभ से वंचित किया गया हो। प्रतारित। ४. हानि पहुँचाया हुआ। क्षतिग्रस्त (को०)।

विप्रलब्धा¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह नायिका जो संकेत स्थान में प्रिय को न पाकर निराश या दुःखी हो।

विप्रलब्धा—वि० [सं० विप्रलब्ध] छलिया। धूर्त [को०]।

विप्रलय—संज्ञा पुं० [सं०] पूर्ण विनाश। विलय। प्रलय [को०]।

विप्रलाप—संज्ञा पुं० [सं०] १. सारहीन वाक्य। व्यर्थ बकवाद। २. पारस्परिक वचन विरोध। विवाद। ३. झगड़ा। तू तू मैं मैं। ४. बुरा वचन। ५. प्रतिज्ञाभंग। वचनभंग। कही हुई बात से मुकर जाना (को०)।

विप्रलापी—वि० [सं० विप्रलापिन्] विप्रलाप करनेवाला। व्यर्थ बकवाद करनेवाला। बकवादी [को०]।

विप्रलीन—वि० [सं०] बिखरा हुआ। छितराया हुआ। इधर उधर पड़ा हुआ। जैसे—विप्रलीन सैन्य = जिसकी सेना हारकर विच्छिन्न हो गई हो।

विप्रलुंपक—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलुम्पक] १. बड़ा लालची। अति लोभी। २. अपने लाभ के लिये लोगों को सतानेवाला। उत्पीड़क। ३. छीनकर लेनेवाला। बलात् लूटनेवाला (को०)। ४. अधिक कर लेनेवाला।

विप्रलुप्त—वि० [सं०] १. जो लूटा गया हो। अपहृत। २. जो गायब किया गया हो। जो उड़ा लिया गया हो। ३. जिसके कार्य में विघ्न पहुँचाया गया हो।

विप्रलून—वि० [सं०] १. छिन्न किया या तोड़ा हुआ। २. एकत्रित। इकट्ठा किया हुआ [को०]।

विप्रलोक—संज्ञा पुं० [सं०] चिड़िया पकड़नेवाला। व्याध। शिकारी।

विप्रलोडित—वि० [सं०] विलोडित या इतस्ततः किया हुआ। बरबाद किया हुआ [को०]।

विप्रलोप—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विप्रलुप्त] १. पूर्णतः अदर्शन या लोप। २. ध्वंस। नाश।

विप्रलोपी—वि० [सं० विप्रलोपिन्] तोड़नेवाला। नष्ट या लुप्त करनेवाला।

विप्रलोभी—संज्ञा पुं० [सं० विप्रलोभिन्] किंकिरात नामक वृक्ष, जो अशोक की तरह होता है [को०]।

विप्रवसित—वि० [सं०] प्रवास के लिये गया हुआ। प्रवासगत [को०]।

विप्रवाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुरे वचन। २. व्यर्थ बकवाद। ३. कलह। विवाद। झगड़ा।

विप्रवास—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विप्रवसित] १. विदेश में वास। परदेस में रहना। २. संन्यास आश्रम में एक अपराध जो अपने कपड़े दूसरे को देने से होता है।

विप्रवासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. देश से निकाल देना। २. प्रवासी होना। प्रवास में रहना [को०]।

विप्रवासित—वि० [सं०] दूर किया हुआ। अपवारित या नष्ट किया हुआ। (पाप आदि)।

विप्रविद्ध—वि० [सं०] जो प्रविद्ध किया गया हो। इधर उधर किया या मारा हुआ [को०]।

विप्रव्राजिनी संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो दो पुरुषों से संबंध रखे।

विप्रश्न—संज्ञा पुं० [सं०] वह प्रश्न जिसका उत्तर फलित ज्योतिष द्वारा दिया जाय।

विप्रश्निक—संज्ञा पुं० [सं०] दैवज्ञ। ज्योतिषी।

विप्रश्निका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दैवज्ञा। ज्योतिषी स्त्री [को०]।

विप्रष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] एक यादव का नाम जो बलराम जी का छोटा भाई लगता था।

विप्रसन्न—वि० [सं०] अत्यंत संतुष्ट। बहुत अधिक खुश।

विप्रसारण—संज्ञा पुं० [सं०] विस्तार करना। फैलाना।

विप्रस्थित—वि० [सं०] प्रस्थान किया हुआ। गया हुआ।

विप्रहत—वि० [सं०] १. मारा हुआ। २. पराजित किया हुआ। मर्दित। पराभूत।

विप्रहरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. त्याग। २. मुक्ति।

विप्रहाण—संज्ञा पुं० [सं०] लोप। अंत [को०]।

विप्रहीण—वि० [सं०] १. वंचित। निरस्त। २. लुप्त [को०]।

विप्राधिप संज्ञा पुं० [सं०] शशि। चंद्रमा [को०]।

विप्रियंकर—वि० [सं० विप्रियङ्कर] अप्रिय काम करनेवाला [को०]।

विप्रिय¹—वि० [सं०] १. अप्रिय। २. कटु। ३. अतिशय प्रिय। ४. वियोग।

विप्रिय²—संज्ञा पुं० अपराध। कसूर।

विप्रुट्—संज्ञा स्त्री० [सं० विप्रुष्] १. पानी की छोटी बूँद या छींटा। २. थूक का वह छींटा जो वेदपाठ करने में उड़ता है।

विशेष—मनुस्मृति के अनुसार ऐसा छींटा अपवित्र नहीं है।

३. चिह्न। बिंदु। धब्बा (को०)। ४. दृग्विषय। गोचर वस्तु (को०)।

विप्रुड्होम—संज्ञा पुं० [सं० विप्रुष् + होम] एक प्रकार का पूजन जो यज्ञ के अवसर पर सोमप्राप्ति के लिये किया जाता था।

विप्रुष—संज्ञा पुं० [सं०] १. पानी की छोटी बूंद या छींटा। २. दे० 'विप्रुट्'। ३. पक्षी।

विप्रेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० विप्रेन्द्र] वह जो ब्राह्मणों में मुख्य या प्रधान हो।

विप्रेक्षण, विप्रेक्षित—संज्ञा पुं० [सं०] चारों ओर देखना [को०]।

विप्रेक्षिता—वि० [सं० विप्रेक्षितृ] चारों ओर देखनेवाला [को०]।

विप्रेत—वि० [सं०] १. गत। २. फैला या बिखरा हुआ [को०]।

विप्रोषित---वि० [सं०] १. प्रवास में गया हुआ। २. अनुपस्थित। ३. पठाया हुआ वा निष्काषित (को०)।

विप्रोषितभर्तृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसका पति या प्रेमी परदेश गया हो। प्रोषितभर्तृका।

विप्लव[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपद्रव। हंगामा। अशांति और हलचल। २. राज्य के भीतर जनता की अशांति और उद्धत आचरण। बलवा। ३. दूसरे राष्ट्र द्वारा उपस्थित अशांति। परचक्र भय। ४. उथल पुथल। अव्यवस्था। ५. आफत। विपत्ति। ६. विनाश। ७. शत्रु को डराने के लिये मचाया हुआ शोरगुल। डाँट उपट या भभकी। ८. नाव का डूबना। पोतभंग। ९. जल की बाढ़। बहिया। १०. वेदों के अपूर्ण ज्ञान द्वारा उनका अनादर। ११. घोड़े की बहुत तेज चाल। १२. बहना। इधर उधर प्रवाहित होना (को०) १३. विरोध। वैपरीत्य (को०)। १४. आइने पर का धब्बा (को०)। १५. पाप। दुष्टता (को०)।

विप्लव[2] वि० [सं०] प्लवरहित। पोतविहीन [को०]।

विप्लवक—वि० [सं०] विप्लव करनेवाला [को०]।

विप्लवी—वि० [सं० विप्लविन्] १. अस्थिर। नश्वर। २. विप्लव या विद्रोह करनेवाला। [को०]।

विप्लाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. पानी की बाढ़। बहिया। २. घोड़े की बहुत तेज चाल। ३. विप्लव। उपद्रव (को०)।

विप्लावक—वि० [सं०] १. विप्लवकारी। उपद्रव मचानेवाला। २. राज्य में उपद्रव खड़ा करनेवाला। बलवाई। ३. जल की बाढ़ लानेवाला।

विप्लावन—संज्ञा पुं० [सं०] निंदनीय वचन। अपशब्द [को०]।

विप्लावित—वि० [सं०] १. बहाया हुआ। २. नष्ट किया हुआ। ३. व्यग्रता में फेंका हुआ [को०]।

विप्लावी—संज्ञा पुं० [सं० विप्लाविन्] [स्त्री० विप्लाविनी] १. उपद्रव करनेवाला। २. जल की बाढ़ लानेवाला।

विप्लुट्—संज्ञा स्त्री० [सं० विप्लुष्] १. जलसीकर। २. स्फुलिंग। चिनगारी। ३. कण। ४. निशान। धब्बा। बिंदी [को०]।

विप्लुत[1]—संज्ञा पुं० [सं०] विस्फोट। स्फोट [को०]।

विप्लुत[2]—वि० [सं०] १. छितराया हुआ। बिखरा हुआ। २. घबराया हुआ। आकुल। ३. क्षुब्ध। व्यग्र। दुखी। ४. भ्रष्ट। पतित। ५. नियम, प्रतिज्ञा आदि से च्युत। ६. व्यसन के कारण किसी वस्तु के अभाव में व्याकुल। व्यसनार्त। ७. इधर उधर बहा हुआ (को०)। ८. डूबा हुआ। निमग्न। बाढ़ग्रस्त (को०)। ९. विध्वस्त। उजड़ा हुआ (को०)। १०. अपमानित। अनादृत (को०)। ११. नष्ट। बरबाद (को०)। १२. तिरोहित। विलुप्त (को०)। १३. विपरीत। उलटा (को०)। १४. असत्य। मिथ्या। झूठा (को०)।

विप्लुतनेत्र, विप्लुतलोचन—वि० [सं०] हर्ष, शोक आदि के कारण जिसकी आँखों अश्रुपूरित हों। [को०]।

विप्लुतभाषी—वि० [सं० विप्लुतभाषिन्] तुतलाकर या हकलाकर बोलनेवाला। [को०]।

विप्लुतयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक स्त्रीरोग। दे० 'विप्लुता' [को०]।

विप्लुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्रियों की एक व्याधि जिसमें उनकी योनि में नित्य पीड़ा रहती है।

विप्लुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विप्लव। हलचल। उपद्रव। २. हानि। क्षति। (को०)।

विप्लुष्—संज्ञा पुं० दे० 'विप्रुट्'।

विप्लुष्ट—वि० [सं०] झुलसा या जला हुआ [को०]।

विप्सा—संज्ञा स्त्री० [सं० वीप्सा] दे० 'वीप्सा'।

विफल—वि० [सं०] १. जिसमें फल न लगता या लगा हो। फलरहित। उ०—मुरली सुनत अचल चले। द्रवित ह्वै जल झरत पाहन विफल वृक्ष फले।—सूर (शब्द०)। २. जिसका कुछ परिणाम न हो। जिसका कुछ नतीजा न हो। जिससे कुछ सिद्धि न प्राप्त हो। निष्फल। व्यर्थ। बेफायदा। जैसे,—कोई प्रयत्न विफल होना; विफलमनोरथ होना। ३. जिसके प्रयत्न का कुछ परिणाम न हुआ हो। अकृतकार्य। नाकामयाब। ४ हताश। निराश। ५ अंडकोशरहित। ६. प्रभावरहित। जिसका कुछ असर न हो (को०)।

विफलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्य की सिद्धि न होना। असफलता।

विफला[1]—वि० स्त्री० [सं०] १. बिना फल की। जिसमें फल न लगें। २. जिसका कुछ परिणाम न निकले। ३. जो प्रयत्न में कृतकार्य न हुई हो।

विफला[2]—संज्ञा स्त्री० केतकी।

विफाक—संज्ञा पुं० [अ० विफ़ाक़] १. संघ। २. अनुकूलता। ३. दोस्ती। मित्रता [को०]।

विबंध—संज्ञा पुं० [सं० विबन्ध] १. विशेष रूप से बंधन। खूब जकड़ना। २. आनाह रोग (अफरा) का एक भेद जिसमें खाए हुए पदार्थ का बिना पचा रस मल रूप में पेट में रुका रहता है और दस्त नहीं होता। ३. एक प्रकार की पट्टी। पविबंधन।

विबंधन संज्ञा पुं० [सं० निबन्धन] पीठ, छाती, पेट आदि के घाव या फोड़े को कपड़े से विशेष रूप से बाँधने की युक्ति या क्रिया। (सुश्रुत)।

विबंधवर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० विबन्धवर्ति] घोड़ों का एक रोग जिसमें उनका पेशाब बंद हो जाता है तथा पेट और नाड़ियों में जकड़ने की सी पीड़ा होती है।

विबंधहृत्—वि० [सं०] विबंध को दूर करनेवाला।

विबंधु—वि० [सं० वि+बन्धु] १. बंधुरहित। जिसके भाई बंधु न हों। २. पितृहीन। अनाथ।

विबद्ध—वि० [सं०] पूर्णतया बँधा हुआ [को०]।

विबल—वि० [सं०] १. बलरहित। २. कमजोर दुर्बल। अशक्त। ३. विशेष बली। अधिक ताकत रखनेवाला।

विबाध^{1}—वि० [सं०] बाघारहित । कष्टरहित ।

विबाध^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] दूर करना । हटा देना [को०] ।

विबाधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कष्ट । व्यथा । पीड़ा [को०] ।

विबाहु—वि० [सं०] बाहुरहित । भुजाविहीन [को०] ।

विबुक—संज्ञा पुं० [सं०] मल्लि से उत्पन्न वैश्य का पुत्र [को०] ।

विबुद्ध—वि० [सं० वि + बुध] १. जाग्रत । जगा हुआ । २. विकसित । खिला हुआ । ३. ज्ञानप्राप्त । सचेत । ४. कुशल । चतुर (को०) ।

विबुध—संज्ञा पुं० [सं० वि + बुघ] १. पंडित । बुद्धिमान् । २. देवता । ३. चंद्रमा । ४. एक राजा का नाम । ५. शिव । महादेव ।

विबुधगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] बृहस्पति [को०] ।

विबुधतटिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देवताओं की नदी, आकाशगंगा । २. गंगा, देवनदी ।

विबुधतरु—संज्ञा पुं० [सं०] कल्पवृक्ष ।

विबुधद्विट्—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं के शत्रु । असुर [को०] ।

विबुधधेनु—संज्ञा स्त्री० [सं०] कामधेनु ।

विबुधनदी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंगा । देवापगा [को०] ।

विबुधपति—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं का राजा, इंद्र ।

विबुधप्रिया—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवी । भगवती । २. अप्सरा । ३. एक वर्णवृत्त ।

विबुधबेलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] कल्पलता । उ०—कृपा सुधा सींची विबुधबेलि ज्यौं फिरि सुख फरनि फरी ।—तुलसी (शब्द०) ।

विबुधरिपु—संज्ञा पुं० [सं०] असुर [को०] ।

विबुधवन—संज्ञा पुं० [सं० विबुध + वन] इंद्र का उद्यान । नंदन कानन ।

विबुधविलासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देवांगना । देवता की स्त्री । २. स्वर्ग की वेश्या । अप्सरा । उ०—सकल सुआसिनी गुरुजन पुरजन पाहुने लोग । विबुधबिलासिनी सुर मुनि जाचक जो जेहि जोग—तुलसी (शब्द०) ।

विबुधवैद्यु—संज्ञा पुं० [सं०] विबुधवैद्य, अश्विनीकुमार ।

विबुधवैद्य—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं के वैद्य, अश्विनीकुमार ।

विबुधशत्रु—संज्ञा पुं० [सं०] दैत्य । असुर [को०] ।

विबुधसद्म—संज्ञा पुं० [सं० विबुधसद्मन्] सुरलोक । स्वर्ग [को०] ।
यौ०—विबुधसद्मस्त्री = अप्सरा । देवांगना ।

विबुधाचार्य—संज्ञा पुं० [सं०] देवों के आचार्य, बृहस्पति [को०] ।

विबुधाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं के राजा, इंद्र ।

विबुधाधिपति—संज्ञा पुं० [सं०] देवराज । इंद्र [को०] ।

विबुधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. पंडित । बुद्धिमान । विज्ञ । आचार्य । शिक्षक । २. देवता ।

विबुधानुचर—संज्ञा पुं० [सं०] देवसेवक । देवोपासक [को०] ।

विबुधापगा—संज्ञा स्त्री० [सं०] देवताओं की नदी, आकाशगंगा ।

विबुधावास—संज्ञा पुं० [सं० विबुध + आवास] १. देवताओं का निवासस्थान, स्वर्ग । २. देवमंदिर ।

विबुधेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० विबुधेन्द्र] इंद्र [को०] ।

विबुधेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र । देवराज [को०] ।

विबुभूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आत्माभिव्यक्ति इच्छा या कामना [को०] ।

विबोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. जागरण । जागना । २. एक संचारी भाव । उ०—चिंता मोह सुपन विबोध स्मृति अमर्ष गर्व उतसुक तासु अवहित्थ ठानिस ।—पद्माकर (शब्द०) ।

विशेष—दे० साहित्यदर्पण के अनुसार 'विबोधः कार्य मार्गणम्' अर्थात् कार्य का अन्वेषण विबोध कहा जाता है । साहित्य के रसविधान में विबोध संचारी या व्यभिचारी भावों में से एक है । २. सम्यक् बोध । अच्छा ज्ञान । ३. सचेत होना । जागना । सावधान होना । ४. होश में आना । ५. विकास । प्रफुल्लता । ६. बुद्धि । प्रतिभा (को०) । ७. प्रमाद । अनवधानता (को०) । ८. एक पक्षी का नाम (को०) ।

विबोधन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विबोधित] १. जगाना । प्रबोधन । २. ज्ञान कराना । आँख खोलना । ३. जगना । जागृत होना । ४. समझाना बुझाना । ढाढ़स देना ।

विबोधित—वि० [सं०] १. जगाया हुआ । २. ज्ञापित । जताया हुआ । बतलाया हुआ । ३. खिलाया या प्रफुल्लित किया हुआ । विकासित ।

विब्बोक—संज्ञा पुं० दे० 'बिब्बोक' [को०] ।

विभंगी—संज्ञा पुं० [सं० विभङ्ग] १. विन्यास । गठन या रचना । २. टूटना । ३. विभाग । ४. क्रम या परंपरा का टूटना । ५. भ्रूभंग । भौं की चेष्टा । ६. मुख का भाव या चेष्टा । ७. ठहराना । अवरोध । पड़ाव (को०) । ८. शिकन । झुर्री (को०) । ९. सोपान । सीढ़ी (को०) । १०. फूट पड़ना । प्रकट होना (को०) । ११. तरंग । लहर (को०) ।

विभंग^{2}—वि० चपल । उ०—विमल विपुल बहसि वारि सीतल भय ताप हारि भंवर बर विभंग तर तरंग मालिका ।—तुलसी (शब्द०) ।

विभंगि—संज्ञा स्त्री० [सं० विभङ्गि] १. अनुकृति । २. भंगिमा । भंगी । [को०] ।

विभंगी—वि० [सं० विभङ्गिन्] १. कंपनधर्मा । कंपनशील । २. जिसपर झुर्रियाँ पड़ी हों [को०] ।

विभंगुर—वि० [सं० विभङ्गुर] लोल । अस्थिर (दृष्टि) ।

विभंज—वि० [सं० वि + भज्^{1}] १. टूटना । फूटना । २. नाश । ध्वंस ।

विभक्त^{1}—वि० [सं० वि + √भज् + क्त (प्रत्य०)] १. बँटा हुआ । विभाजित २. अलग किया हुआ । पृथक् किया हुआ । ३. जो अपने पिता की संपत्ति से अपना भाग पा चुका हो और अलग हो । ४. विभिन्न । विविध (को०) । ५. सेवानिवृत्त । एकांतवासी (को०) । ६. नियमित (को०) । ७. विभूषित । अलंकृत (को०) । ८. मापा हुआ (को०) ।

विभक्त^{2}—संज्ञा पुं० १. कार्तिकेय । २. एकांतवास । ३. अलगाव । पार्थक्य । ४. भाग । हिस्सा । ५. संपत्ति जो विभाजित की हुई हो । विभक्त संपत्ति ।

विभक्तज—संज्ञा पुं० [सं०] वह बालक जो भाइयों या हिस्सेदारों में संपत्ति का विभाजन हो जाने पर जन्मा हो [को०]।

विभक्ता—वि० [सं० विभक्तृ] १. हिस्सा बाँटनेवाला। विभक्त करनेवाला। २. प्रबंधक [को०]।

विभक्ति - वि० [सं०] १. विभक्त होने की क्रिया या भाव। विभाग। बाँट। २. अलग होने की क्रिया या भाव। अलगाव। पार्थक्य। ३. उत्तराधिकार में मिली हुई संपत्ति या हिस्सा (को०)। ४. व्याकरण में शब्द के आगे लगा हुआ वह प्रत्यय या चिह्न जिससे पता लगता है कि उस शब्द का क्रियापद से क्या संबंध है। उ०—एक ही प्रत्यय अथवा विभक्ति के योग से निष्पन्न धातु, शब्द, प्रत्यय या विभक्ति में निर्दिष्ट क्रमानुसार स्वरध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है।—भोज० भा० सा०, पृ० १०।

विशेष—संस्कृत व्याकरणानुसार नाम या संज्ञाशब्दों के बाद लगनेवाले वे प्रत्यय जो नाम या संज्ञाशब्दों को पद (वाक्य प्रयोगार्ह) बनाते हैं और कारक परिणति के द्वारा क्रिया के साथ संबंध सूचित करते हैं। प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्तियाँ हैं जिनमें एकवचन, द्विवचन, बहुवचन —तीन बचन होते है। पाणिनीय व्याकरण में इन्हें 'सुप' आदि २७ विभक्ति के रूप में गिनाया गया है। संस्कृत व्याकरण में जिसे 'विभक्ति' कहते हैं, वह वास्तव में शब्द का रूपांतरित अंग होता है। जैसे,—रामेण, रामाय इत्यादि। आजकल की प्रचलित खड़ी बोली में इस प्रकार की विभक्तियाँ प्रायः नहीं हैं, केवल कर्म और सप्रदान कारक के सर्वनामों में विकल्प से आती हैं। जैसे,—मुझे, तुझे, इन्हें इत्यादि। संस्कृत में विभक्तियों के रूप शब्द के अंत्य अक्षर के अनुसार भिन्न भिन्न होते हैं। पर यह भेद खड़ीबोली के कारकों में नहीं पाया जाता, जिसमें शुद्ध विभक्तियों का व्यवहार नहीं होता, कारकचिह्नों का व्यवहार होता है।

विभग्न—वि० [सं० वि + भग्न] १. टूटा फूटा हुआ। २. जो जुदा हो। अलग हुआ। छिन्न।

विभचारⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्यभिचार] दे० 'व्यभिचार'। उ०—आचार ध्रंम नहि सुद्द मन विधि विचार विभचार घन।—पृ० रा०, २५। १२६।

विभच्छⓅ—संज्ञा पुं० [सं० वीभत्स, प्रा० वीभच्छ] दे० 'बीभत्स'। उ०—भणौं सिंगार, विभच्छ, भय सांत सुअद्भुत सार। करुण वीर रुद्र, हास रस, नव रस उक्त निहार।—रघु० रू०, पृ० ४६।

विभज—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बड़ी संख्या [को०]।

विभजन—संज्ञा पुं० [सं०] भेद। अंतर। पार्थक्य [को०]।

विभजनीय—वि० [सं०] विभक्त करने योग्य [को०]।

विभज्य[1]— वि० [सं०] १. जिसका विभाग करना हो। २. जिसका भेद दिखाना हो [को०]।

विभज्य[2] — क्रि० वि० विभाग करके। खंड खंड करके।

विभय[1] —संज्ञा पुं० [सं०] भय से छुटकारा। भय से मुक्ति।

विभय[2]—वि० निर्भय [को०]।

विभव—संज्ञा पुं० [सं०] १. धन। संपत्ति। २. ऐश्वर्य। शक्ति। उ०—भव भव विभव पराभव कारिनि।—तुलसी (शब्द०)। ३. औदार्य। ४. बहुतायत। आधिक्य। ५. मोक्ष। जन्ममरण से छुटकारा। ६. साठ संवत्सरों में से छत्तीसवाँ संवत्सर। ७. उन्नत अवस्था। पद। प्रतिष्ठा (को०)। ८. महत्ता (को०)। ९. पालन। रक्षण (को०)। १०. प्रलय (बौद्ध)। ११. संगीत में एक ताल (को०)।

विभवराशि—संज्ञा स्त्री० [सं० विभव + राशि] धनराशि। संपत्ति का ढेर। उ०—······विश्व की विभव राशि, और थे प्रणत वहीं गुर्जर महीप भी।—लहर, पृ० ७७।

विभववान्—संज्ञा स्त्री० [सं० विभववत्] [स्त्री० विभववती] १. विभववाला। धनी। दौलतमंद। २. शक्तिशाली।

विभवशाली—वि० [सं० विभवशालिन्] [वि० स्त्री० विभवशालिनी] १. विभववाला। २. प्रतापवाला। ऐश्वर्यवाला।

विभवी—वि० [सं० विभविन्] ऐश्वर्यवान्। प्रतापी [को०]।

विभांडक—संज्ञा पुं० [सं० विभाण्डक] एक ऋषि जो ऋष्यशृंग के पिता थे।

विभांडिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विभाण्डिका] आहुल्य वृक्ष।

विभांडी—संज्ञा स्त्री० [सं० विभाण्डी] नीली अपराजिता। विष्णुक्रांता लता।

विभाँति[1]—संज्ञा स्त्री० [सं० वि + हिं० भाँति] प्रकार। भेद। किस्म।

विभाँति[2]—वि० अनेक प्रकार का।

विभाँति[3]—अव्य० अनेक प्रकार से।

विभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रभा। कांति। चमक। २. किरण। रश्मि। ३. शोभा। सुंदरता।

विभाइⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विभाव] दे० 'विभाव'। उ०—रस दारुन भय संचरिग। घोर गँभीर विभाइ।—पृ० रा०, ६१। २८८।

विभाकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रकाशवाला। २. सूर्य। उ०—तिमिर ग्रसित सब लोक ओक लखि दुखित दयाकर। प्रगट कियो अद्भुत प्रभाउ भागवत विभाकर।—नंद० ग्रं०, पृ० ४। ३. आक का पौधा। मदार। ४. चित्रक। चीते का पेड़। ५. अग्नि। ६. राजा। ७. चंद्रमा का वह अंश जो सूर्य के प्रकाश से दीप्त होता है।

विभाग—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँटने की क्रिया या भाव। किसी वस्तु के कई भाग या हिस्से करना। बँटवारा। तकसीम। जैसे,—संपत्ति का विभाग।

क्रि० प्र०— करना। —होना।

२. कई वर्गों या खंडों में विभक्त वस्तु का एक एक खंड या वर्ग। भाग। अंश। हिस्सा। बखरा। ३. पैतृक संपत्ति का कोई अंश जो किसी को नियमानुसार दिया जाय। हिस्सा। बखरा। ४. प्रकरण। अध्याय। जैसे,—ग्रंथ का विभाग। ५. कार्यक्षेत्र। मुहकमा। जैसे,—शिक्षा विभाग। ६. व्यवस्था। प्रबंध। इंतजाम (को०)। ७. गणित में भिन्न का अंश (को०)। ८. न्यायशास्त्र के अनुसार २४ गुणों में से एक का नाम।

यौ०—विभागकल्पना = हिस्सा या अंश नियत करना (याज्ञवल्क्य स्मृति)। विभागज्ञ = अंतर का जाननेवाला। विभाग को समझनेवाला। विभागधर्म = दायभाग की विधि। बँटवारा

संबंधी नियम कानून। विभागपत्रिका = विभाजन का दस्तावेज। वह कागज जिसपर विभाग का विवरण दर्ज हो। विभागभाक्, विभागभाज् = पहले से बंटी हुई संपत्ति का हिस्सेदार। विभाग पानेवाला। विभागरेखा = विभाजन की रेखा। दो हिस्सों का अलगाव सूचित करनेवाला चिह्न या निशान।

विभागक—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवस्था करनेवाला व्यक्ति। २. हिस्से बाँटनेवाला [को०]।

विभागतः—क्रि० वि० [सं० विभागतस्] विभाग के अनुसार। हिस्से के मुताबिक।

विभागशः—क्रि० वि० [सं० विभागशस्] विभाग के अनुसार।

विभागात्मक नक्षत्र संज्ञा पुं० [सं०] रोहणी, आर्द्रा, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, स्वाती, ज्येष्ठा और श्रवण आदि आठ प्रकाशमय नक्षत्र।

विभागाध्यक्ष—संज्ञा पुं० [सं० विभाग+अध्यक्ष] विभाग (अं० डिपार्टमेंट) का प्रधान अधिकारी या अध्यक्ष जैसे, हिंदी विभागाध्यक्ष।

विभागी—संज्ञा पुं० [सं० विभागिन्] [स्त्री० विभागिनी] १. विभाग करनेवाला। २. विभाग या हिस्सा पानेवाला। हिस्सेदार।

विभाजक¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. विभाग करनेवाला। बाँटनेवाला। २. गणित में वह संख्या जिससे किसी दूसरी संख्या को भाग दें। भाजक।

विभाजक²—वि० विभाग या विच्छेद करनेवाला।

विभाजन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विभाजनीय, विभाजित, विभाज्य] १. विभाग करने की क्रिया या भाव। बाँटने का काम। २. पात्र। बरतन।

विभाजयिता—वि० [सं० विभाजयितृ] विभाजन करनेवाला [को०]।

विभाजित—वि० [सं०] जिसका विभाग किया गया हो। जो बाँटा गया हो। जिसके खंड या हिस्से किए गए हों।

विभाज्य—वि० [सं०] १. विभाग करने योग्य। २. जिसका विभाग करना हो। जिसे बाँटना हो। ३. (संख्या) जिसे किसी संख्या से बाँटना हो। भाज्य (गणित)।

विभाड़(पु)—वि० [प्रा० विब्भाड़] नाशक। नाश करनेवाला। उ०—बेमग्ग राइ दारिद विभाड़। अचगल्ल राइ जाड़ा उपाड़।—पृ० रा०, ५७।१६२।

विभात—संज्ञा पुं० [सं०] सबेरा। प्रभात।

विभाति—संज्ञा पुं० [सं० विभा] दीप्ति। शोभा। सुंदरता।

विभाती—संज्ञा स्त्री० [सं०] पौ फटना। प्रभात। सुबह (को०)। (पु) २. दीप्ति। शोभा। विभाति। उ०—और बनिता की ओर भूलेहूँ न देहौं मन तुम जो कहत आए सोह सीरी ताती में। ताको अब करिबो निबाह सो देखाऊँ तुम्हें रघुनाथ देखौ देह आपनी विभाती में।—रघुनाथ (शब्द०)।

विभाना(पु)—क्रि० अ० [सं० विभा+ना (प्रत्य०)] १. चमकना। झलकना। २. शोभा पाना। शोभित होना। उ०—मनु फूल्ल कमल के मधि कठौ सतगुन लता विभाति है।—गोपाल (शब्द०)।

विभारना(पु)—क्रि० अ० [हिं० विभाना या सं० वि०+√भ्राज्] चमकना। झलकना। उ०—स्याम बरन पट अरुन विभारैं। रवि सम तेज सुलच्छन धारैं।—पद्माकर (शब्द०)।

विभाव—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य में वह वस्तु जो रति आदि स्थायी भावों को आलंबन में उत्पन्न करनेवाली या उदीप्त करनेवाली हो। रसविधान में भाव का आलंबन या विभावक या उद्दीपक। उ०—इसी भाव (प्रेम) के विविध प्रकार के आलंबनों और उद्दीपनों का चित्रण इस भूमि के विभाव पक्ष में पाया जाता है।—रस०, पृ० ७४।

विशेष—विभाव दो कहे गए हैं—आलंबन और उद्दीपन। आलंबन वह है जिसके प्रति आश्रय या पात्र के हृदय में कोई भाव स्थित हो। जैसे नायक के लिये नायिका और नायिका के लिये नायक। उद्दीपन वह है जिससे आलंबन के प्रति स्थित भाव उद्दीप्त या उत्तेजित हो। रसभेद से आलंबन और उद्दीपन भिन्न भिन्न होंगे। जैसे, शृंगार में आलंबन होगे नायक नायिका; हास में कोई बढंगी आकृति या वाणी आदि वाला व्यक्ति; करुण में विनष्ट बंधु आदि या कोई पीड़ित अथवा शोचनीय व्यक्ति इत्यादि, इत्यादि। इस प्रकार उद्दीपन भी रसभेद से भिन्न होगे। जैसे, शृंगार में चाँदनी, फूल आदि; रौद्र मे आलबन की दुष्ट चेष्टा इत्यादि।

२. मित्र। परिचित व्यक्ति (को०)। ३. कोई भी उत्तेजक दशा, अवस्था या स्थिति जिससे भावों का उद्दीपन हो (को०)। ४. शिव का एक नाम (को०)।

विभावक—वि० [सं०] १. वहस करनेवाला। २. प्रकट करनेवाला। व्यक्त करनेवाला ३. संपादक। संघटित करनेवाला (को०)।

विभावन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विभावनीय] १. विशेष रूप से चिंतन। विचार। विमर्श। २. साहित्य के रसविधान में वह मानसिक व्यापार जिसके कारण पात्र में प्रदर्शित भाव का श्रोता या पाठक भी साधारणीकरण द्वारा भागी होता है, विभावन व्यापार उ०—पर विभावन द्वारा जब वस्तुप्रतिष्ठा पूर्ण रूप से हो ले तब आगे कुछ और होना चाहिए।—रस०, पृ० ११६। ३. स्पष्ट ज्ञान या निश्चय। विवेक। निर्णय (को०)। ४. प्रत्यय। कल्पना (को०)। ५. विकास। प्रसार (को०)। ६. पालन। रक्षण (को०)। ७. देखना। अवलोकन। दर्शन (को०)। ८. दिखाना। अभिव्यक्ति।

विभावना—संज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य में एक अर्थालंकार जिसमें (क) कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति या (ख) अपूर्ण कारण से कार्य की उत्पत्ति या (ग) प्रतिबंध होते हुए भी कार्य की सिद्धि या (घ) जो जिस कार्य का कारण नहीं हुआ करता, उससे उस कार्य की उत्पत्ति अथवा (ङ) विरुद्ध कारण से किसी कार्य की उत्पत्ति या (च) कार्य से कारण की उत्पत्ति दिखाई जाती है। उ०—(क) सुनत लखत श्रुति नैन बिनु, रसना बिनु रस लेत। (ख) राजकुमार सरोज से हाथन सों गहि शंभु शरासन तोड़्यो। (ग) तव बेनी नागिनि रहै, बाँधी गुनन बनाय। तऊ बाम ब्रजचंद को बदाबदी डसि जाय। (घ) कारे घन उमड़ि अंगारे

बरसत हैं। (ङ) अग्निधार स्रवत सुधाकर बिलोकिए। (च) और नदी नदन तें कोकनद होत तेरो कर कोकनद नदी नद प्रगटत हैं।

विभावनीय—वि० [सं०] भावना या चिंतन करने योग्य।

विभास्वर—वि० [सं०] उज्वल। प्रदीप्त [को०]।

विभावरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात्रि। रात। २. वह रात जिसमें तारे चमकते हों। ३. हरिद्रा। हलदी। ४. कुट्टनी। कुटनी। दूती। ५. टेढ़ी स्त्री। चाल की औरत। ६. मुखरा स्त्री। बहुत बड़ बड़ करनेवाली स्त्री। ७. मेदा वृक्ष। ८. प्रचेतस् की नगरी का नाम। ९. वेश्या। गणिका (को०। १०. एक प्रकार का वृत्त (को०)।

विभावरीकांत—संज्ञा पुं० [सं० विभावरीकान्त] निशापति। चंद्रमा। रजनीकांत [को०]।

विभावरीमुख—संज्ञा पुं० [सं०] संध्या [को०]।

विभावरीश—संज्ञा पुं० [सं०] निशापति। चंद्रमा।

विभावस(पु)—वि० [सं० विभावसु] दे० 'विभावसु'। उ०—हरि हरनछिछ सुअछिछ बछिछ वर जछिछ विभावस।—पृ० रा०, २।१४४।

विभावसु¹—वि० [सं०] जिसमें प्रकाश की अधिकता हो। अधिक प्रभावाला।

विभावसु²—संज्ञा पुं० १. वसुओं के एक पुत्र। २. सूर्य। ३. आक का पौधा। अर्क। मदार। ४. अग्नि। ५. चित्रक वृक्ष। चीता। ६. चंद्रमा। ७. एक प्रकार का हार। ८. एक दानव जो नरकासुर का पुत्र था। ९. एक ऋषि का नाम। (महाभारत)। १. एक गंधर्व जिसने गायत्री से वह सोम छीना था, जो वह देवताओं के लिये ले जा रही थी।

विभावाश्रित—वि० [सं०[विभाव पर आद्धृत वर्ण्य वस्तु पर आश्रित। उ०—जो भावपक्ष को महत्व देते हुए भी उसे विभावाश्रित देखना चाहती है।—आचार्य०, पृ० २२।

विभावित—वि० [सं०] १. चिंतन किया हुआ। सोचा या विचारा हुआ। २. कल्पित। अनुमित। संकेतित। ३. निश्चित। ४. स्वीकृत। मंजूर किया हुआ। ५. व्यक्त वा स्पष्ट किया हुआ। प्रकटीकृत (को०)। ६. सिद्ध। सर्वसंमत (को०)।

विभावी—वि० [सं० विभाविन्] १. भाव जाग्रत् करनेवाला। २. व्यक्त करनेवाला। ३. शक्तिमान् (को०)।

विभाव्य—वि० [सं०] १. अनुभव किया जाने योग्य। २. विवेच्य। ३. ध्यान देने योग्य [को०]।

विभाषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संस्कृत व्याकरण में वह स्थल जहाँ ऐसे वचन मिलते हैं कि 'ऐसा न होगा' तथा 'ऐसा हो भी सकता है'। विकल्प। २. किसी व्यापक साहित्यभाषा क्षेत्र के अंतर्गत अन्य साहित्यिक प्रतिष्ठाप्राप्त भाषा—उ०—ब्रजभाषा हिंदी की विभाषा है। ३. बोली। किसी प्रधान भाषा के भीतर आनेवाली जनभाषा (को०)। ४. एक रागिनी (को०)। ५. (बौद्ध) बृहत्कारिका (को०)।

विभाषित—वि० [सं०] वैकल्पिक। विकल्प से होनेवाला [को०]।

विभास—संज्ञा पुं० [सं०] १. चमक। तेज। २. एक राग जो सवेरे के समय गाया जाता है। इसे कुछ लोग भैरव राग का ही भेद मानते हैं। उ०—अशब्द हो गई वीणा, विभास बजता था।—बेला, पृ० २६। ३. तैत्तिरीय आरण्यक के अनुसार सप्तर्षियों में से एक। ४. मार्कंडेयपुराण के अनुसार एक देवयोनि। ५. सात सूर्यों में से एक सूर्य (को०।

विभासक वि० [सं०] [व० स्त्री० विभासिका] १. चमकनेवाला। प्रकाशयुक्त। २. चमकानेवाला। झलकानेवाला। ३. प्रकाशित करनेवाला। प्रकट या व्यक्त करनेवाला। जाहिर करनेवाला।

विभासना(पु)—क्रि० अ० [सं० विभास + हिं० ना (प्रत्य०)] चमकना। झलकना।

विभासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] चमक। दीप्ति। प्रभा [को०]।

विभासिका—वि० स्त्री० [सं०] चमकानेवाली। दीप्त करनेवाली। उ०—कंचनधाम अकास विभासिका।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० २८१।

विभासित—वि० [सं०] १. प्रकाशित। दीप्त। चमकता हुआ। २. प्रकट। जाहिर।

विभित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० उप० वि + √भिद् (= विदारण)] १. काटकर पृथक् करना। भेदना। २. टुकड़े टुकड़े करना [को०]।

विभिदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भेद। अंतर [को०]।

विभिन्न¹—वि० [सं०] १. छिदा हुआ। बँटा हुआ। काटकर अलग किया हुआ। २. बिलकुल अलग। पृथक्। जुदा। ३. अनेक प्रकार का। कई तरह का। ४. मिश्रित। मिला हुआ (को०)। ५. और का और किया हुआ। उलटा। ६. हताश। निराश। ७. हैरान। परेशान। व्याकुल (को०)। ८. इधर उधर घूमा हुआ (को०)। ९. प्रकाटत। प्रदर्शित (को०)। १०. जो विश्वास करने योग्य न हो। अविश्वसनीय। अविश्वासित (को०)। ११. विरोधी (को०)।

विभिन्न²—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०]।

विभिन्नता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विभिन्न होने का भाव। भेद। पार्थक्य। अलगाव। फर्क।

विभी—वि० [सं०] निर्भय। अभीत। विगतभय। बेडर [को०]।

विभीत¹— [सं०] [वि० स्त्री० विभीता] डरा हुआ। उ०—वे परंपराप्रेमी, परिवर्तन से विभीत; ईश्वर परोक्ष से ग्रस्त, भाग्य के दास क्रीत।—ग्राम्या, पृ० ९१।

विभीत²—संज्ञा पुं० विभीतक। बहेड़ा।

विभीतक—संज्ञा पुं० [सं०] बहेड़ा। बहेड़े का वृक्ष।

विभीतकी, विभीता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बहेड़ा [को०]।

विभीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. डर। भय। २. शंका। संदेह। उ०—नहिं तोरिहैं राम शिव को धनु यह विभीति परिहरहु।—रघुराज (शब्द०)।

विभीषक—संज्ञा पुं० [सं०] डरानेवाला। भयानक।

विभीषण¹—वि० [सं०] बहुत डरावना। बहुत भयानक।

विभीषण^{2} –संज्ञा पुं० १. एक राक्षस जो रावण का भाई था और रावण के मारे जाने पर राम द्वारा लंका का राजा बनाया गया था।

विशेष—यह विश्रवा मुनि द्वारा कैकसी राक्षसी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था और सुमाली नामक राक्षस का दौहित्र (नाती) था। एक दिन सुमाली ने कुबेर को पुष्पक विमान पर चढ़कर जाते देखा। उसे यह इच्छा हुई कि मेरे भी ऐसा ही दौहित्र होता। उसने अपनी परम रूपवती कन्या कैकसी को विश्रवा मुनि के पास भेजा। जिस समय वह गई, उस समय मुनि ध्यान में मग्न थे। वे उसका अभिप्राय समझकर बोले—'तू बड़े विकट समय में आई। इससे इस बार तुझे एक विकट आकृति का पुत्र उत्पन्न होगा।' कैकसी के बहुत विनय करने पर ऋषि ने फिर आशीर्वाद दिया—'अच्छा जा ! तेरा अंतिम पुत्र मेरे ही वंश का सा और परम धार्मिक होगा।' वही अंतिम पुत्र विभीषण हुआ। अपने बड़े भाइयों रावण और कुंभकर्ण के साथ विभीषण ने भी घोर तप किया। जब ब्रह्मा वर देने आए, तब विभीषण ने यही वर माँगा—'मेरो मति धर्म में सदा स्थिर रहे'। ब्रह्मा ने वर दिया—'तुम बड़े धार्मिक और अमर होगे'। वरप्राप्ति के उपरांत विभीषण भी रावण के साथ लंका में ही आकर रहने लगा। रावण ने जब सीताहरण किया, तब यह राम की ओर हो गया था।

२. नल तृण। नरसल का पौधा।

विभीषणा^{1}—वि० स्त्री० [सं०] डरावनी। भयानक।

विभीषणा^{2}—संज्ञा स्त्री० १. एक मुहूर्त का नाम। २. स्कंद की एक मातृका (को०)।

विभीषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भयालुता। भीरुता। भयभीत या शंकित होने की भावना [को०]।

विभीषिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भयप्रदर्शन। डर दिखाना। २. भयंकर बात। भयानक कांड या दृश्य। ३. आतंक। भय। खौफ (को०)। ४. भयभीत करनेका साधन (को०)।

विभु^{1}—वि० [सं०] १. जो सर्वत्र वर्तमान हो। जो सब मूर्त पदार्थों में रम रहा हो। जिससे कोई स्थान खाली न हो। सर्वगत। सर्वव्यापक। जैसे,—दिक्, काल और आत्मा।

विशेष—जीव की जाग्रत् आदि चारों अवस्थाओं के चार विभु माने गए हैं। जाग्रत् का विभु 'विश्व', स्वप्न का 'तेजस्', सुषुप्ति का 'प्राज्ञ' और तुरीय का 'ब्रह्म' कहा गया है।

२. जो सब जगह जा सकता हो। सर्वत्र गमनशील। जैसे, मन। ३. अत्यंत विस्तृत। बहुत बड़ा। महान्। ४. सब काल में रहनेवाला। सर्वकालव्यापी। नित्य। ५. दृढ़। अचल। चिरस्थायी। ६. शक्तिमान्। ऐश्वर्ययुक्त। ७. योग्य। समर्थ। क्षम (को०)। ८. आत्मसंयमी। जितेंद्रिय (को०)।

विभु^{2}—संज्ञा पुं० १. ब्रह्म। २. आत्मा। जीवात्मा। ३. प्रभु। स्वामी। ४. ईश्वर। उ०—विभु की बाट जोहते हैं सब ले लेकर अपने उपहार।—साकेत, पृ० ३७५। ५. शंकर। शिव। ६. विष्णु। ७. भृत्य। ८. सूर्य (को०)। ९. चंद्र (को०)। १०. कुबेर (को०)। ११. एक देव वर्ग (को०)। १२. बुद्ध का एक नाम (को०)। १३. आकाश (को०)। १४. अवकाश। अवसर (को०)। १५. काल (को०)।

विभुक्षित—वि० [सं० 'बुभुक्षित' का असाधु प्रयोग] भूखा। उ०—वह तीस कोटि विभुक्षित और नग्नतन संतान की माँ है।—हिं० का० प्र०, पृ० २३३।

विभुग्न—वि० [सं०] वक्र। टेढ़ा। कुटिल [को०]।

विभुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विभु होने का भाव। सर्वव्यापकता। उ०—युग युग की नव मानवता को। विस्तृत वसुधा की विभुता को।—लहर, पृ० ३१। २. ऐश्वर्य। शक्ति। ३. प्रभुता। ईश्वरता। ४. अधिकार।

विभुत्व –संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विभुता'।

विभू—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विभु'।

विभूत—वि० [सं०] १. उत्पन्न। जात। २. प्रकट। व्यक्त। ३. महान्। शक्तिमान्। ४. उत्थित। [को०]।

विभूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बहुतायत। वृद्धि। बढ़ती। २. विभव। ऐश्वर्य। ३. संपत्ति। धन। ४. दिव्य या अलौकिक शक्ति जिसके अंतर्गत अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व ये आठ सिद्धियाँ हैं।

विशेष—योगदर्शन के विभूतिपाद में इसका वर्णन है कि किन किन साधनाओं से कौन कौन सी विभूतियाँ प्राप्त होती हैं।

५. शिव के अंग में चढ़ाने की राख या भस्म।

विशेष—देवी भागवत, शिवपुराण आदि में भस्म या विभूति धारण करने का माहात्म्य विस्तार से वर्णित है।

६. भगवान् विष्णु का वह ऐश्वर्य जो नित्य और स्थायी माना जाता है। ७. लक्ष्मी। ८. विविध सृष्टि। ९. एक दिव्यास्त्र जो विश्वामित्र ने राम को दिया था। १०. प्रभुत्व। बड़ाई। ११. सृष्टि। १२. ताकत। शक्ति। महत्ता (को०)। १३. प्रतिष्ठा। उच्च पद (को०)। १४. विस्तार। प्रसार (को०)। १५. प्रवृत्ति। प्रकृति। स्वभाव (को०)।

विभूतिमान्—वि० [सं० विभूतिमत्] [वि० स्त्री० विभूतिमती] १. शक्ति सपन्न। ऐश्वर्यशाली। २. सपतिशाली। धनवान्। ३. विभूत। अलौकिक शक्ति से युक्त (को०)। ४. जिसने विभूति या भस्म धारण किया हो (को०)।

विभूमा—वि० [सं० वि + भूमन्] ऐश्वर्यवान्। शक्तिशाली।

विभूमा^{2}—संज्ञा पुं० १. श्रीकृष्ण। २. महत्व। शक्ति (को०)।

विभूमा^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं०] शक्ति। महत्ता। ऐश्वर्य [को०]।

विभूरसि—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि की एक मूर्ति।

विभूषण—संज्ञा पुं० [वि० विभूष्य, विभूषित] १. अलंकृत करने की क्रिया। गहने आदि से सजाने का काम। २. भूषण। अलंकार। जेवर। गहना।

विशेष—किसी शब्द के आगे लगकर यह शब्द श्रेष्ठतावाचक हो जाता है। जैसे, रघुवंशविभूषण।

३. मंजुश्री का एक नाम। (बौद्ध)। ४. सौंदर्य। द्युति। (को०)

विभूषणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गहनों आदि की सजावट। भूषा। २. शोभा।

विभूषना(पु)—क्रि० स० [सं० विभूषण] १. अलंकृत करना। गहने आदि से सजाना। २. सुशोभित करना। मंडित करना। ३. अपने आगमन द्वारा सुशोभित करना। उ०—कहा रीति रावरी जो रंक को विभूषो गेह, तुम सो प्रबीन गुरु सेवा ततपर कों।—दूलह (शब्द०)।

विभूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गहनों आदि की खूब सजावट। २. भूषण। अलंकार। गहना। ३. शोभा। सौंदर्य। कांति।

विभूषित¹—वि० [सं०] १. गहनों आदि से सजाया हुआ। २. अलंकृत ३. (अच्छी वस्तु, गुण आदि से) युक्त। सहित। जैसे,—वे सब गुणों से विभूषित हैं। ४. शोभित।

विभूषित²—संज्ञा पुं० [सं०] अलंकार। गहना [को०]।

विभूषी—वि० [सं० विभूषिन्] १. अलंकृत। सज्जित। २. (गुण से) शोभित। ३. सजानेवाला [को०]।

विभूष्णु¹—वि० [सं०] विभूतियुक्त। सर्वव्यापक।

विभूष्णु²—संज्ञा पुं० शिव।

विभूष्य—वि० [सं०] १. विभूषित करने योग्य। सजाने योग्य। २. जिसे गहनों आदि से सजाना हो।

विभृत—वि० [सं०] १. जो धारण किया गया हो। संभाला हुआ। २. पोषित। पालित [को०]।

विभेंटन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वि० + भेंट] आलिंगन करना। गले मिलना। भेंटना। उ०—एरे बाम नैन मेरे एरी भुज बाम आज रौरे फरकन तें जो बालम बिहारि हौं। करिहौं गुलाब उपकार गुन मानिना कै देखन विभेंटन मैं आगे बिस्तारिहौं।—पद्माकर (शब्द०)।

विभेद—संज्ञा पुं० [सं०] विभिन्नता। फरक। अंतर। उ०—दोनों तुल्य स्त्री वा पुरुष बन सके और कभी कोई विभेद न रहे।—प्रेमघन०, भा०२, पृ० २६७। २. अनेक भेद। कई प्रकार। ३. छेदकर घुसना। धँसना। ४. काटना, तोड़ना या छेदना। ५. कटाव। छेद। दरार। ६. दो या कई खंडों में करना। विभाग। ७. एकरूपता से अनेकरूपता की प्राप्ति। विकास। परिवर्तन। ८. मिश्रण। ९. आहत करना (को०)। १०. विरोध। वैर (को०)। ११. हस्तक्षेप। बाधा (को०)।

विभेदक¹—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] १. भेदन करनेवाला। काटने या छेदनेवाला। २. घुसनेवाला। धँसनेवाला। ३. दो वस्तुओं में भेद प्रकट करनेवाला। फर्क दिखाने या डालनेवाला। एक से दूसरे में विशेषता प्रकट करनेवाला।

विभेदक²—संज्ञा पुं० विभीतक। बहेड़ा।

विभेदकर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विभेदकरी] विलगाव, फर्क वा भेद पैदा करनेवाला। दे० 'विभेदकारी'। उ०—अब दीनदयाल दया करिए मति मोरि विभेदकरी हरिए।—मानस, ६। ११०।

विभेदकारी—वि० [सं० विभेदकारिन्] [वि० स्त्री० विभेदकारिणी] १. छेदने या का काटनेवाला। २. भेद या फर्क करनेवाला। ३. दो व्यक्तियों में विरोध उत्पन्न करनेवाला। फूट डालनेवाला।

विभेदन¹—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विभेदनीय, विभेद्य] १. छेदना। काटना या तोड़ना। २. छेदकर घुसना। धँसना। ३. काटकर दो या कई खंडों में करना। ४. पृथक् पृथक् करना। अलग अलग करना। ५. भेद या फर्क डालना या दिखाना।

विभेदन²—वि० दे० 'विभेदक'।¹

विभेदना(पु)—क्रि० स० [सं० विभेदन] १. भेदन करना। छेदना। काटना। २. घुसना। प्रवेश करना। उ०—लोक विभेदति वासना वासु परी मनु दीरघ में गनिए जू।—केशव (शब्द०)। ३. भेद या फर्क डालना।

विभेदिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विभेदिका] पृथक् पृथक् करनेवाला। विभक्त करनेवाला [को०]।

विभेदिनी—वि० स्त्री० [सं० विभेदिन्] १. छेदन या भेदन करनेवाली। २. छेदकर घुसनेवाली। ३. भेद या फर्क करनेवाली।

विभेदी—वि० [सं० विभेदिन्] [वि० स्त्री० विभेदिनी] १. छेदन करनेवाला। काटनेवाला। २. छेदकर घुसनेवाला। धँसनेवाला। ३. भेद या फर्क करनेवाला। ४. दूर, अलग या नष्ट करनेवाला (को०)।

विभेद्य—वि० [सं०] विभेद करने लायक। काटने या अलग करने लायक [को०]।

विभेष—संज्ञा पुं० [सं० वि + वेष√भेष] कुवेश। विकृत वेष। बुरा वेश। उ०—भोजन छोभ मलीन तन बसन विभेष बनाइ। रैनि दिवस छिन पावत कल नहीं जहँ तहँ जाइ।—कबीर सा०, पृ० ४०३।

विभो¹—संज्ञा पुं० [सं० 'विभु' का संबोधन रूप] हे विभु।

विभो(पु)²—संज्ञा पुं० [सं० विभव] दे० 'विभव'। उ०—फल आए तरवर झुकै झुकन मेघ जल आय। विभो पाय सज्जन झुकै यह परकाजि सुभाय।—शकुंतला, पृ० ८८।

विभोर—वि० [सं० विह्वल, बग० विभोर] आत्मविस्मृत। किसी भाव में तल्लीन या खोया हुआ।

विभौ(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विभव] दे० 'विभव'। उ०—जोधपुर विभौ जँवड़ियौ, मेल बहादर खान जूँ। हरि लखै अचंभा साहरा, दै थाँमा अपमान नूँ।—रा० रू०, पृ० २४।

विभ्रंश—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश। ध्वंस। २. पतन। अवनति। ३. ऊँचा कगार। ४ पहाड़ की चोटी पर का चौरस मैदान। ५. ह्रास। क्षय। बरबादी (को०)। ६ प्रवाहिका। संग्रहणी। अविस्तार (को०)। ७. अस्तव्यस्तता। अराजकता। विशृंखलता (को०)।

विभ्रंशयज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] एक दिन में पूर्ण होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ [को०]।

विभ्रंशित—वि० [सं०] १. विनष्ट। ध्वस्त। २. पतित। ३. गुमराह किया हुआ। बहकाया हुआ (को०)।

यौ०—विभ्रंशितज्ञान = जिसका ज्ञान नष्ट हो गया हो। मूर्ख। निर्बुद्धि।

विभ्रंशी—वि० [सं० विभ्रंशिन्] १. भ्रष्ट होनेवाला। २. खंड खंड होनेवाला [को०]।

विभ्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. भ्रमण। चक्कर। फेरा। २. भ्रम। भ्रांति। धोखा। भूल। ३. संदेह। संशय। ४. चकपकाहट। घबराहट। अस्थिरता। ५. स्त्रियों का हाव जिसमें वे भ्रम से उलटे पलटे भूषण वस्त्र पहन लेती हैं; तथा रह रहकर मतवाले की तरह कभी क्रोध, कभी हर्ष आदि भाव प्रकट करती हैं। ६. कांति। शोभा। ७. घमंड। अभिमान (को०)। ८. तरंग। सनक। मन की लहर (को०)। ९. विक्षोभ। उद्वेग (को०)।

विभ्रमवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] हाव विशेषवाली कन्या। बालिका [को०]।

विभ्रमा—संज्ञा स्त्री० [सं०, बुढ़ाई। बुढ़ापा। वार्धक्य।

विभ्रमी—वि० [सं० विभ्रमिन्] १. इधर उधर घूमनेवाला। भ्रमणकारी। घुमक्कड़। २, चक्कर करने या खानेवाला [को०]।

विभ्रष्ट—वि० [सं०] १. दूर किया हुआ। अलग किया हुआ। २. क्षीण। लुप्त। पतित। नष्ट। ३ ओझल। अंतर्हित। ४. वंचित। विरहित। ५. व्यर्थ। अनुपयुक्त। ६. सत्वहीन। निस्तत्व [को०]।

विभ्रांत—वि० [सं० विभ्रान्त] १. घूमता हुआ। चक्कर खाता हुआ। २. भ्रम में पड़ा हुआ। विभ्रमयुक्त। ३. विक्षुब्ध। व्याकुल (को०)। ४. चारों ओर फैला हुआ (को०)।

यौ०—विभ्रांतनयन = तिरछी चितवनवाला। विभ्रांतमना = हतबुद्धि। जड़। विभ्रांतशील = मत्त। मतवाला।

५. हतबुद्धि। ६. बंदर। ७. सूर्य या चंद्रमा का मंडल [को०]।

विभ्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० विभ्रान्ति] १. फेरा। चक्कर। २. भ्रम। संदेह। ३. हड़बड़ी। घबराहट।

विभ्राजित—वि० [सं०] चमकदार या दीप्तियुक्त किया हुआ [को०]।

विभ्राट्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विभ्राज्? तुल० बँ०] १. आपत्ति। विपत्ति। संकट। २. उपद्रव। बखेड़ा। उ०—(क) 'तिलक विभ्राट् के समय गोखले विलायत में थे।—सरस्वती (शब्द०)। (ख) कुछ न कुछ विघटित हुआ विभ्राट्।—साकेत, १६८।

विभ्राट्^{2}—वि० [सं० विभ्राज्] प्रकाशमान्। दीप्तिमान्। उ०—भर सको अगर तो प्रतिमा में चेतना भरो, यदि नहीं निमंत्रण दो जीवन के दानी को। विभ्राट् महाबल जहाँ थके से दीख रहे, आगे आने दो वहाँ क्षीणबल प्राणी को।—धूप०, ७।

विभ्रातृव्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैर। शत्रुता। २. होड़ा होड़ी। प्रतिद्वंद्विता [को०]।

विभ्रेष—संज्ञा पुं० [सं०] दुष्कर्म करना। अपराध करना [को०]।

विमंडन—संज्ञा पुं० [सं० विमण्डन] [वि० विमंडित] १. गहने आदि से सजाना। २. शृंगार करना। सँवारना। ३. अलंकार। भूषण। गहना।

विमंडित—वि० [सं० विमण्डित] १. अलंकृत। सजा हुआ। २. सुशोभित। ३. सहित। युक्त। (अच्छी वस्तु से)। उ०—देखि विमंडित दंडिन सो भुजदंड दुओ असि दंड विहीनो।—केशव (शब्द०)।

विमंथन—संज्ञा पुं० [सं० विमन्थन] खूब मथना।

विमंथित—वि० [सं०] मथा हुआ। विलोड़ित [को०]।

विमज्जित—वि० [सं०] डूबा हुआ। निमज्जित [को०]।

विमत^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरुद्ध मत। विपरीत सिद्धांत। उ०—छमत, विमत, न पुरान मत एक पथ नेति नेति नेति नित निगम करत।—तुलसी (शब्द०)। २. खिलाफ राय। प्रतिकूल संमति। ३. शत्रु। बैरी (को०)।

विमत^2—वि० १. विरुद्ध मतवाला। भिन्न मत का। २. विषम। असंगत (को०)। ३. अनादृत। उपेक्षित (को०)। ४. संशयास्पद। संदिग्ध (को०)।

विमति^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] विरुद्ध मति। खिलाफ राय। प्रतिकूल विचार। २. उचित के विपरीत विचार। कुमति। दुर्बुद्धि। बुरा विचार। ३ असंमति। अस्वीकृति। ४. वाद विवाद। वितर्क। वितंडा (को०)।

विमति^{2}—वि० मूढ़। मूर्ख। अज्ञ [को०]।

विमत्त—वि० [सं०] १. अभिमानी। उ०—जे ज्ञानमान विमत्त तव भय हरनि भगति न आदरी।—मानस, ७।१३। २. मतवाला या मस्त (हाथी)।

विमत्सर^1—संज्ञा पुं० [सं०] अधिक अहंकार। उ०—तजि काम क्रोध विमत्सरालस लोभ मोह निवारि कै। छल मल कुसंगति त्यागि मद दुरवासना सनमानि कै।—विश्राम (शब्द०)।

विमत्सर^2—वि० १. मत्सररहित। २. अहंकारशून्य।

विमद—वि० [सं०] १. मदरहित। उन्मादहीन। जो मतवाला न हो। २. (वह हाथी) जिसे मद न बहता हो। ३. आनंद, दुःख आदि से रहित। हर्षशून्य (को०)।

विमद्य—वि० [सं०] जिसने शराब पीना छोड़ दिया हो। जो मदिरा पान करना छोड़े हो [को०]।

विमध्यम—वि० [सं०] तटस्थ। मध्यवर्ती। उदासीन [को०]।

विमन^1—वि० [सं० विमनस्] अनमना। उदास। रंजीदा। खिन्न। उ०—विमन बैठि मुनि सुर सरि तीरा। तह आयो नारद मुनि धीरा। क्यों उदास अस पूछ्यो व्यासै। वर्ण्यो व्यास सकल निज आसै।—रघुराज (शब्द०)।

विमनस्क—वि० [सं०] १. जिसका मन उचटा हो। जिसका मन न लगता हो। अनमना। २ उदास। खिन्न। अप्रसन्न। रंजीदा। ३. परेशान। व्याकुल। हैरान (को०)।

विमना—वि० [सं० विमनस्] दे० 'विमनस्क' [को०]।

विमनिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० विमनिमन्] उदासी। विमनस्क होने का भाव खिन्नता [को०]।

विमन्यु—वि० [सं०] विगतमन्यु। क्रोधरहित [को०]।

विमय—संज्ञा पुं० [सं०] परिवर्तन। अदला बदली। लेन देन। विनिमय [को०]।

विमर्द—संज्ञा पुं० [सं०] १. चूर्ण करना। पीसना। २. मींजना। मसलना। रगड़ना। ३. संघर्ष। युद्ध। ४. बाधा। ५. संपर्क। स्पर्श। ६. खग्रास। ७. सूर्य और चंद्रमा का मेल। ८. एक वृक्ष। ९. संपीड़ित करना। कसना (आलिंगन करते समय)। १०. छीनना। अपहरण करना। बिगाड़ देना (को०)। ११. शरीर पर उबटन आदि लगाना या मलना (को०)। १२. विध्वंस। विनाश (को०)। १३. थकान। क्लांति (को०)।

विमर्दक^{1}—वि० [सं०] १. खूब मर्दन करनेवाला। मसल डालनेवाला। २. चूर चूर करनेवाला। पीस डालनेवाला। ३. नष्ट भ्रष्ट करनेवाला। ध्वस्त करनेवाला।

विमर्दक^{2}—संज्ञा पुं० १. विमर्दन करने की क्रिया। २. उपराग। ग्रहण। ३. एक पौधा। चक्रमर्द। चकवँड़ [को०]।

विमर्दन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विमर्दनीय, विमर्दित] १. खूब मर्दन करना। अच्छी तरह मलना। दलना। २. कुचलना। पीस डालना। ३. ध्वस्त करना। नष्ट करना। बरबाद करना। ४. मार डालना। ५. पीड़ित करना। ६. अभिभव। प्रस्फुटन। स्फुरण। जैसे,—बीज फूटकर अंकुर का प्रकट होना (सांख्य)। ७. युद्ध। लड़ाई। संघर्ष (को०)। ८. उपराग। ग्रहण (को०)। ९. एक राक्षस का नाम (को०)।

विमर्दना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विमर्दन' [को०]।

विमर्दनीय—वि० [सं०] मर्दन करने योग्य।

विमर्दित—वि० [सं०] १. मला दला हुआ। २. कुचला हुआ। ३. नष्ट किया हुआ। बरबाद किया हुआ। ४. पीड़ित। ५. अपमानित।

विमर्दिनि(पु)—वि० स्त्री० [सं०] नाश करनेवाली। ध्वस्त करनेवाली। उ०—जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिष विमर्दिनि।—भूषण ग्रं० पृ० ३।

विमर्दिनी—वि० स्त्री० [सं०] नाश करनेवाली। वध करनेवाली।

विमर्दी—वि० [सं० विमर्दिन्] [स्त्री० विमर्दिनी] १. खूब मर्दन करनेवाला। २. कुचलनेवाला। पीसनेवाला। ३. नष्ट करनेवाला। ४. बध करनेवाला। मारनेवाला।

विमर्दोत्थ—वि० [सं०] (सुगंध आदि) जो रगड़ने से उत्पन्न हो [को०]।

विमर्श—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी तथ्य का अनुसंधान। किसी बात का विवेचन या विचार। २. आलोचना। समीक्षा। ३. परखने की क्रिया। परीक्षा। ४. परामर्श। सलाह। ५. असंतोष। अधीरता। ६. संकोच। संदेह (को०)। ७. ज्ञान (को०)। ८. विपरीत निर्णय (को०)। ९. पिछले शुभाशुभ कर्मों की मन के ऊपर बनी हुई भावना या वासना (को०)। १०. शिव (को०)। ११. नाटक की पाँच प्रकार की संधियों में से एक। अवमर्श संधि (को०)।

विमर्शन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विमृष्ट, विमर्शी] १. विवेचन करना। तर्क वितर्क करना। २. आलोचना करना।

विमर्श संधि—संज्ञा स्त्री० [सं० विमर्श सन्धि] नाट्यशास्त्र के अनुसार पाँच प्रकार की संधियों में से एक। दे० 'अवमर्श संधि'।

विमर्शित—वि० [सं०] १. विचारित। विवेचित। २. आलोचित। समीक्षित [को०]।

विमर्शी—वि० [सं० विमर्शिन्] १. विचारक। विवेचक। २. आलोचक। समीक्षक [को०]।

विमर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. विवेचन। विचार। २. आलोचना। समीक्षा। ३. नाटक का एक अंग जिसके अंतर्गत अपवाद, संफेट, व्यवसाय, द्रव, द्युति, शक्ति, प्रसंग, खेद, प्रतिषेध, प्ररोचना, आदान और छादन का वर्णन होता है।

विशेष—दोष कथन को अपवाद, क्रोध से भरी बातचीत को संफेट, कार्य के हेतु के उद्भव को व्यवसाय, शोक आदि के वेग में गुरुजनों के आदर आदि का ध्यान न रखने को द्रव, भय-प्रदर्शन द्वा। उद्वेग उत्पन्न करने को द्युति, विरोध की शांति को शक्ति, अत्यंत गुणकीर्तन या दोषदर्शन को प्रसंग, शरीर या मन की थकावट को खेद, अभिलषित विषय में रुकावट को प्रतिषेध, कार्यध्वंस को विरोध, प्रस्तावना के समय नट, नटी नाटक या नाटककार आदि की प्रशंसा को प्ररोचना, संहार विषय के प्रदर्शित होने को आदान, तथा कार्योद्धार के लिये अपमान आदि सह लेने को छादन कहते हैं।

४ उद्वेग। व्याकुलता। क्षोभ (को०)।

विमर्षित—वि० [सं०] अशांत। क्षुब्ध। व्याकुल। परेशान। उ०—अर्ध जीवित सा, औ' मृत सा, न हर्षित सा, न विमर्षित सा।—पल्लव, पृ० १११।

विमल^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विमला] १. निर्मल। मलरहित। स्वच्छ। साफ। जैसे, जल। २. बिना ऐब का। निर्दोष। जैसे, विमल मति। ३. रमणीय। सुंदर। मनोहर ४ श्वेत। उज्वल।

यौ०—विमलकीर्ति। विमलगर्भ। विमलदंन। विमलनिर्भास = दे० 'विमलभास'। विमलमणि। विमलमति।

विमल^{2}—संज्ञा पुं० १. एक उपधातु जिसके शोधन आदि की विधि रसेंद्रसार में लिखी है। २. चाँदी। ३. गत उत्सर्पिणी के ५वें और वर्तमान अवसर्पिणी के १३वें अर्हत् या तीर्थंकर। (जैन)। ४, सुद्युम्न का पुत्र। ५. पद्मकाष्ठ। पद्म काठ। ६. सेंधा नमक। ७. चांद्र वर्ष (को०)। ८. अस्त्र संबंधी एक मंत्र (को०)। ९. एक लोक का नाम (को०)। १०. समधि का एक प्रकार (को०)। ११. सिलखड़ी। खड़िया (को०)।

विमलक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नग या बहुमूल्य पत्थर [को०]।

विमलकीर्ति—संज्ञा पुं० [सं०] १. महायान पंथ के एक बौद्ध आचार्य जिन्होंने कई सूत्रों की रचना की है, जो उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हैं। २. वह जिसकी कीर्ति विमल हो।

विमलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. निर्मलता। स्वच्छता। सफाई। २. पवित्रता। ३. शुद्धता। निर्दोषता। ४. रमणीयता। मनोहरता।

विमलदान—संज्ञा पुं० [सं०] वह दान जो नित्य नैमित्तिक और काम्य के अतिरिक्त हो और केवल ईश्वर के प्रीत्यर्थ दिया जाय। (गरुड़पुराण)।

विमलध्वनि—संज्ञा पुं० [सं०] छह चरणों का एक छंद जो एक दोहे और समान सवैया से मिलकर बनता है।

विमलनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम [को०]।

विमलप्रदीप—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की समाधि। २. एक बुद्ध का नाम [को०]।

विमलभास—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की समाधि [को०]।

विमलमणि—संज्ञा पुं० [सं०] स्फटिक [को०]।

विमलमति—वि० [सं०] पवित्र अंत:करणवाला। जिसकी मति शुद्ध हो शुद्ध बुद्धिवाला[को०]।

विमला[1]—वि० स्त्री० [सं०] निर्मल। स्वच्छ।

विमला[2]—संज्ञा स्त्री० १. सप्तला का पेड़। कोची। सातला। चर्मकषा। २. सिद्धि की दस भूमियों (अवस्थायों) में से एक प्रकार की भूमि। ३. एक देवी का नाम जो कालिकापुराण में वासुदेव की नायिका कही गई है। ४. शारदा। सरस्वती। ५. चाँदी का मुलम्मा (को०)।

विमलाक्ष—वि० [सं०] वह घोड़ा जिसके शरीर पर बालों की दस भौंरी हो। इस प्रकार का घोड़ा बहुत उत्तम माना जाता है [को०]।

विमलात्मक—वि० [सं०] शुद्ध। साफ। विमल [को०]।

विमलात्मा[1]—वि० [सं० विमलात्मन्] शुद्ध हृदयवाला। शुद्ध मनवाला।

विमलात्मा[2]—संज्ञा पुं० चंद्रमा।

विमलाद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] गिरनार नामक पर्वत जो गुजरात में स्थित है [को०]।

विमलापति—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा। उ०—जानत हो जिय सोदर दोऊ। कै कमला विमलापति कोऊ।—केशव (शब्द०)।

विमलार्थक—वि० [सं०] विमल। निर्मल [को०]।

विमलाशोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. संन्यासियों का एक भेद। २. एक तीर्थ स्थान।

विमलीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विमल करने की क्रिया। शुद्ध करने की क्रिया। २. सर्वदर्शनसंग्रह के अनुसार मन में विचार कर ज्योति मंत्र से तीनों मलों का नाश करना।

विमलोदका, विमलोदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम।

विमांस—संज्ञा पुं० [सं०] अशुद्ध, अपवित्र या न खाने योग्य मांस। (जैसे, कुत्ते आदि का)।

विमाँन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विमान] दे० 'विमान'। उ०—परमानंद निरखि लीला थके सुर विमाँनि।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० २३०।

विमाई†—संज्ञा स्त्री० [सं० विपादिका, हिं० बिवाई] दे० 'बिवाई'। उ०—तुम्हरे पग तो भई विमाई सो भल जानहु।—श्यामा०, पृ० १५९।

विमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० विमातृ] अपनी माता के अतिरिक्त पिता की दूसरी विवाहिता स्त्री। सौतेली माँ।

विमातृज—संज्ञा पुं० [सं०] विमाता का पुत्र। सौतेला भाई।

विमात्र, विमात्रा—वि० [सं०] जिसकी मात्रा समान न हो [को०]।

विमान—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकाशमार्ग से गमन करनेवाला रथ जो देवताओं आदि के पास होता है। देवयान। जैसे, पुष्पक विमान। २. हवाई जहाज। वायुयान। उड़न खटोला (अँ० एयरोप्लेन)। ३. मरे हुए वृद्ध मनुष्य की अर्थी जो सजधज के साथ निकाली जाती है। ४. रथ। गाड़ी। ५. अश्व। घोड़ा। ६. सात खंड का मकान। सात मंजिल का घर। ७. अपमान। अनादर। ८. जलपोत। जहाज (को०)। ९. परिमाण। माप। १०. रामलीला आदि में सजाई हुई एक सवारी। ११. राजप्रासाद (को०)। १२. एक प्रकार का बुर्ज या मीनार (को०)। १३. उपवन। वृक्षवाटिका (को०)। १४ विस्तार। फैलाव। वितति (को०)। १५. सभाभवन या कक्ष (को०)। १६. प्राचीन वास्तु विद्या के अनुसार वह देवमंदिर जो ऊपर की ओर गावदुम या पतला होता हुआ चला जाय।

विशेष 'मानसार' नामक प्राचीन ग्रंथ के अनुसार विमान गोल, चौपहला और अठपहला होता है। गोल को 'बेसर', चौपहले को 'नागर' और अठपहले को 'द्राविड़' कहते हैं।

विमानगति—संज्ञा पुं० [सं० विमान + गति] देवता।—अनेकार्थ०, पृ० ४१।

विमानच्छंद—संज्ञा पुं० [सं० विमानच्छन्द] प्रासाद विशेष। उ०—विमानच्छंद प्रासाद का नाम है।—बृहत्संहिता, पृ० २८२।

विमानचारी—वि० [सं० विमानचारिन्] विमान पर चलनेवाला। वायुयान से यात्रा करनेवाला [को०]।

विमानचालक—संज्ञा पुं० [सं०] विमान या वायुयान चलानेवाला।

विमानधुर्य—संज्ञा पुं० [सं०] तामजान, पालकी आदि ढोनेवाला व्यक्ति। (कहार आदि)।

विमानना—संज्ञा स्त्री० [सं०] अपमान। अवमानना। तिरस्कार।

विमाननिर्व्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] एक समाधि [को०]।

विमानयान—वि० [सं०] दे० 'विमानचारी' [को०]।

विमानराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रेष्ठ व्योमयान। २. देवविमान का चालक [को०]।

विमानवाह—संज्ञा पुं० [सं०] पालकी ढोनेवाला व्यक्ति [को०]।

विमानित—वि० [सं०] तिरस्कृत। उपेक्षित [को०]।

विमानीकृत—वि० [सं०] १. तिरस्कृत। अनादृत। २. विमान की तरह व्यवहृत। विमान बनाया हुआ [को०]।

विमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुरा रास्ता। २. कदाचार। बुरी चाल। ३. झाड़ू। कूचा।

विमार्गगा—संज्ञा स्त्री० [सं०] असती या कुलटा स्त्री [को०]।

विमार्गगामी—वि० [सं० विमार्गगामिन्] कुमार्ग पर जानेवाला [को०]।

विमार्गण—संज्ञा पुं० [सं०] अन्वेषण। खोज। तलाश [को०]।

विमार्गदृष्टि—वि० [सं०] असत् पथ पर दृष्टि डालनेवाला [को०]।

विमार्गप्रस्थित—वि० [सं०] कुमार्ग की ओर प्रस्थित। विमार्गगामी। कदाचारी [को०]।

विमार्गस्थ—वि० [सं०] दे० 'विमार्गगामी' [को०]।

विमार्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. पवित्र करना। शुद्ध करना। २. मार्जन करना। धोना [को०]।

विमासनाⓅ—क्रि० स० [सं० विमर्शन, प्रा० विमस्प] विचार विमर्श करना। सोचना। सलाह मशविरा करना। उ०—राणी राय विमासियउ, तेड़इ साल्हकुमार।—ढोला०, दू० १००।

विमित^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह चौकोर शाला या इमारत जो चार खंभों पर टिकी हो। २. बड़ा कमरा या इमारत।

विमित^2—वि० १. जिसकी सीमा या हद हो। परिमित। निश्चित। २. निर्मित।

विमिश्र—वि० [सं०] १. मिला हुआ। मिश्रित। २. जिसमें कई प्रकार की वस्तुओं का मेल हो। मिला जुला। ३. (मूल या धन) जो सूद के साथ मिला हो (को०)

विमिश्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मृगशिरा, आर्द्रा, मघा, और अश्लेषा नक्षत्र में बुध की गति का नाम जो ३० दिनों तक रहती है।

विमिश्रित—वि० [सं०] १. मिलाया हुआ। २. मिला जुला। विमिश्र।

विमुक्त—वि० [सं०] १. अच्छी तरह मुक्त। छूटा हुआ। जो बंधन से अलग हुआ हो। २. जिसे किसी प्रकार का प्रतिबंध या रुकावट न रह गई हो। ३. स्वच्छंद। आजाद। ४. (हानि, दंड आदि से) बचा हुआ। ५. अलग किया हुआ। बरी। ६. पकड़ से छूटकर चला हुआ। फेंका हुआ। छोड़ा हुआ। जैसे,—विमुक्त बाण। ७. अभिव्यक्त (को०)। ८ मुक्तकंचुक। (सर्प) जिसने केंचुली छोड़ी हो (को०)। ९. युक्त। सहित (को०)। १०. जो जल में उतरा गया हो। जैसे, जलपोत (को०)।

विमुक्तकंठ—वि० [सं० विमुक्तकण्ठ] १. जोर से चिल्लानेवाला। २. उच्च स्वर से रोनेवाला।

विमुक्तप्रग्रह—वि० [सं०] ढीली लगामवाला या जिसकी लगाम को ढील दे दी गई हो [को०]।

विमुक्तमौन—वि० [सं०] जिसने मौन व्रत समाप्त कर दिया हो [को०]।

विमुक्तशाप—वि० [सं०] जिसे शाप से छुटकारा मिल गया हो। शापमुक्त [को०]।

विमुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. छुटकारा। रिहाई। २. मुक्ति। मोक्ष। ३. पृथक्ता। अलगाव। वियोग (को०)।

यौ०—विमुक्तिपथ = मुक्ति का मार्ग।

विमुख—वि० [सं०] १. मुखरहित। जिसके मुँह न हो। २. जिसने किसी बात से मुँह फेर लिया हो। जो किसी कार्य या विषय में दत्तचित्त न हो। जो किसी काम से हटा या अलग हो। अतत्पर। विरत। निवृत्त। जैसे,—कर्तव्य से विमुख होना। ३. जो अनुरक्त न हो। जिसे परवाह न हो। जिसने मन न लगाया हो। उदासीन। जैसे,—हरिपद विमुख। ४. जो किसी के हित के प्रतिकूल हो। जिसकी स्थिति या आचरण अनुकूल न हो। विरुद्ध। खिलाफ। अप्रसन्न। जैसे—जब ईश्वर ही विमुख है, तब क्या हो सकता है। ५. मुखरहित। छिद्ररहित। ६. जिसकी चाह या माँग पूरी न हुई हो। अप्राप्तमनोरथ। निराश। जैसे—उनके यहाँ से कोई याचक विमुख नहीं गया। उ०—जो ऐहैं सो भोजन पैहैं। विमुख कोउ इनतें नहिं जैहैं।—रघुराज (शब्द०)।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

विमुखता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी बात से दूर रहना। अतत्परता। विरति। २. विपरीतता। विरोध। अप्रसन्नता।

विमुग्ध—वि० [सं०] १. मोहित। आसक्त। २. भ्रम में पड़ा हुआ। भूला हुआ। भ्रांत। ३. घबराया हुआ। डरा हुआ। ४. उन्मत्त। मतवाला। ५. पागल। बावला। ६. बेसुध।

विमुग्धक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोहनेवाला। २. एक प्रकार का छोटा अभिनय या नकल। (नाट्यशास्त्र)।

विमुग्धकर—वि० [सं०] मोहक। आनंदप्रद। उ०—रस का विवेचन जितना ही विमुग्धकर है उतना ही पांडित्यपूर्ण।—रस क०, पृ० २४।

विमुग्धकारी—संज्ञा पुं० [सं० विमुग्धकारिन्], [स्त्री० विमुग्धकारिणी] १. मोहित करनेवाला। २. भ्रम में डालनेवाला।

विमुद^1—वि० [सं०] आनंदरहित। उदास। खिन्न। उ०—करति केलि पिय हिय लगी, कोक कलनि अवरेखि। विमुद कुमुद लौं ह्वै रही चंदु मंद दुति देखि।—पद्माकर (शब्द०)।

विमुद^2—संज्ञा पुं० एक बड़ी संख्या का नाम।

विमुद्र—वि० [सं०] १. जो मुद्रांकित न हो। बिना मुहर का। २. विकसित। खिला हुआ। ३. अत्यधिक। प्रचुर। बहुत ज्यादा [को०]।

विमुद्रण—संज्ञा पुं० [सं०] १. खोलना। अनावृत्त करना। विकसित करना। खिलाना [को०]।

विमूढ़^{1}—वि० [सं० विमूढ] [स्त्री० विमूढ़ा] १. विशेष रूप से मुग्ध। अत्यंत मोहित। २. मोहप्राप्त। भ्रम में पड़ा हुआ। चकराया हुआ। ३. बेसुध। अचेत। ४. ज्ञानरहित। जिसे समझ न पड़ता हो। जैसे,—किंकर्तव्यविमूढ़। ५. बहुत मूर्ख। जड़बुद्धि। नादान। नासमझ। ६. चतुर। बुद्धिमान् (को०)।

विमूढ़^{2}—संज्ञा पुं० १. एक प्रकार की संगीत कला। २. एक देवयोनि (को०)।

विमूढ़क—संज्ञा पुं० [सं० विमूढक] एक प्रकार का प्रहसन [को०]।

विमूढ़गर्भ—संज्ञा पुं० [सं० विमूढगर्भ] वह गर्भ जिसमें बच्चा मरा या बेहोश हो और प्रसव में बड़ी कठिनता हो।

विमूढ़चेता—वि० [सं० विमूढचेतस्] १. हतबुद्धि। अज्ञ। मूर्ख [को०]।

विमूढ़धी—वि० [सं० विमूढधी] दे० 'विमूढ़चेता' [को०]।

विमूढ़भाव—संज्ञा पुं० [सं० विमूढभाव] विमूढ़ होने की स्थिति [को०]।

विमूढ़संज्ञ—वि० [सं० विमूढसंज्ञ] विभ्रमित। घबराया हुआ। व्याकुल [को०]।

विमूढ़ात्मा—वि० [सं० विमूढात्मन्] दे० 'विमूढ़संज्ञ' [को०]।

विमूर्च्छित^{1}—वि॰ [सं॰] बेहोश या अचेत पड़ा हुआ। उ॰—दीर्घकाल से सुप्त और विमूर्च्छित राष्ट्र में नवचेतना के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे।—हि॰ आं॰ प्र॰, पृ॰ ३३। २. भरा हुआ। पूर्ण (को॰)। ३. जो जमकर गाढ़ा हो गया हो (को॰)।

विमूर्च्छित^{2}—संज्ञा पुं॰ मूर्च्छा। बेहोशी। गश [को॰]।

विमूर्छन—वि॰ [सं॰ विमूच्छर्न] बेहोश करनेवाला। उ॰—सामर्थ्य दर्प से उन्मद, मैंने जब तुझे पुकारा। किस ओर से बही उच्छल, यह दीप्त विमूर्छन धारा।—विश्वप्रिया, पृ॰ २२।

विमूर्त—वि॰ [सं॰] जमा हुआ। ठोस [को॰]।

विमूर्घ, विमूर्धज—वि॰ [सं॰] गंजा। खल्वाट [को॰]।

विमूल—वि॰ [सं॰] १. मूलरहित। विना जड़ का। २. मूल से रहित। उच्छिन्न। निर्मूल। ३. बरबाद। नष्ट।

क्रि॰ प्र॰—करना।—होना।

विमूलन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. जड़ से उखाड़ना। उन्मूलन। २. विनाश। ध्वंस।

विमृग—वि॰ [सं॰] मृगरहित। जिसमें हिरन न हों। जैसे, जंगल [को॰]।

विमृत्यु—वि॰ [सं॰] जिसकी मृत्यु न हो। अमर [को॰]।

विमृदित—वि॰ [सं॰] मसला हुआ। [को॰]।

विमृश—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चिंता। विमर्श। विचार [को॰]।

विमृशित—वि॰ [सं॰] विचारित। चिंतित [को॰]।

विमृश्य^{1}—वि॰ [सं॰] १. विवेचन के योग्य। आलोचना या समीक्षा के योग्य। २. जिसपर विवेचना या विचार करना हो। जिसकी समीक्षा करनी हो।

विमृश्य^{2}—क्रि॰ वि॰ विचारोपरांत। विचार करके। विचार विमर्श के अनंतर [को॰]।

विमृश्यकारी—वि॰ [सं॰ विमृश्यकारिन्] [वि॰ स्त्री॰ विमृश्यकारिणी] सोच विचारकर कार्य करनेवाला। विचारपूर्वक काम करनेवाला [को॰]।

विमृष्ट^{1}—वि॰ [सं॰] जिसपर तर्क वितर्क या सम्यक् विचार हुआ हो। २. जिसकी पूरी आलोचना या समीक्षा हुई हो। ३. परिच्छन्न। ४. मर्दित। मला हुआ। रगड़ हुआ (को॰)।

विमृष्ट^{2}—संज्ञा पुं॰ चिंतन। विचार [को॰]।

विमोक^{1}—वि॰ [सं॰] १. मलरहित। रागरहित। दुर्वासनारहित। (जैन)। २. ऊपरी आवरणरहित। ३. साफ। स्पष्ट।

विमोक^{2}—संज्ञा पुं॰ १. मुक्ति। छुटकारा। रिहाई। २. मुक्त करने, छोड़ने या खोलने की क्रिया।

विमोक्ता—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विमोक्तृ] मुक्त करनेवाला। छुड़ानेवाला।

विमोक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बंधन, गाँठ आदि का खुलना। २. छुटकारा। मुक्ति। रिहाई। ३. जन्म मरण के बंधन से छूटना। आवागमन से छुट्टी पाना। मुक्ति। निर्वाण। ४. सूर्य या चंद्रमा का ग्रहण से छूटना। ग्रहण का हटना। उग्रह ५. किसी वस्तु का पकड़ से इस प्रकार छूटना कि वह दूर जा पड़े। प्रक्षेपण। ६. मेरु पर्वत का एक नाम। ७. दान। उपहार (को॰)।

विमोक्षक—वि॰ [सं॰] मुक्त करने या बंधन से छुड़ानेवाला [को॰]।

विमोक्षण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ विमोक्षणा] १. बंधन आदि खोलना। २. मुक्त करना। रिहा करना। ३. हाथ से छोड़ना जिसमें कोई वस्तु दूर जा पड़े। प्रक्षेपण। ४. अंडे देना (को॰)।

विमोक्षी—वि॰ [सं॰ विमोक्षिन्] मोक्षप्राप्त। मुक्ति पानेवाला [को॰]।

विमोघ—वि॰ [सं॰] १. व्यर्थ न होनेवाला। न चूकनेवाला। खाली न जानेवाला। अमोघ। २ व्यर्थ। बेकार। निष्फल (को॰)।

विमोचक—वि॰ [सं॰] १. मुक्त करनेवाला। छुड़ानेवाला। २. बंधन खोलनेवाला। ३. गिरानेवाला। छोड़नेवाला। डालनेवाला।

विमोचन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [वि॰ विमोचनीय, विमोचित, विमोच्य] १. बंधन, गाँठ आदि खोलना। २. बंधन से छुड़ाना। मुक्त करना। रिहा करना। ३. गाड़ी से बैल आदि को खोलना। ४. निकालना। बाहर करना। जैसे,—अश्रुविमोचन। ५. इस प्रकार अलग करना कि कोई वस्तु दूर जा पड़े। छोड़ना। फेंकना। जैसे,—धनुष से बाण। ६. गिराना। ढालना। ७. शिव का एक नाम (को॰)।

विमोचनाⓅ—क्रि॰ स॰ [सं॰ विमोचन] १. बंधन आदि खोलना। २. छुटकारा देना। रिहा करना। मुक्त करना। छोड़ना। ३. गिराना। टपकाना। ४. निकालना। बाहर करना। उ॰—जब तें परदेश सिधारे पिया अँसुआ अँखियानि विमोचति सी।—बेनीप्रवीन (शब्द॰)।

विमोचनीय—वि॰ [सं॰] विमोचन के योग्य। छोड़ने के योग्य। मुक्त करने योग्य।

विमोचित^{1}—वि॰ [सं॰] १. खुला हुआ। जो बँधा न हो। २. जो छोड़ दिया गया हो। मुक्त किया हुआ।

विमोचित^{2}—संज्ञा पुं॰ शिव का एक नाम [को॰]।

विमोचितावास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जैनों के अनुसार ऐसे स्थान में निवास करना जिसे किसी ने रहने के अयोग्य समझकर छोड़ दिया हो।

विमोच्य—वि॰ [सं॰] १. छोड़ने योग्य। मुक्त करने योग्य। २. जिसे छोंड़ना, खोलना या मुक्त करना हो।

विमोह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मोह। अज्ञान। भ्रम। भ्रांति। उ॰—मन वसुदेव विमोह कंस से। मोचक माधव दुविद ध्वंस से।—रघुराज (शब्द॰)। २. बेसुध होना। अचेत होना। आसक्ति। ४. एक नरक का नाम।

विमोहक^{1}—वि॰ संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मोहनेवाला। लुभावना। २. मन में लोभ उत्पन्न करनेवाला। ललचानेवाला। ३. ज्ञान या सुध हरनेवाला।

विमोहक^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक राग जो हिंडोल राग का पुत्र माना जाता है।

विमोहन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [वि॰ विमोहित, विमोही] १. मोहित करना। मन लुभाना। मुग्ध करना। २. दूसरे का मन वश में

करना। ३. सुध बुध भुलाना। ऐसा प्रभाव डालना कि चित्त-ठिकाने न रहे। मतिभ्रंश करना। ४. कामदेव के पाँच बाणों में से एक। ५. एक नरक का नाम। ६ भ्रम। चक्कर (को०)।

विमोहनशील—वि० [सं० विमोहन + शील] [वि० स्त्री० विमोहनशीला] १ भ्रमकारी। धोखा देनेवाला। चक्कर में डालनेवाला। भ्रांत करनेवाला। उ०—गिरिजा सुनहु राम कै लीला। सुर हित दनुज विमोहनशीला।—तुलसी (शब्द०)। २. मोहित करनेवाला। लुभानेवाला।

विमोहना(पु)¹—क्रि० अ० [सं० विमोहन] मोहित होना। लुभा जाना। आसक्त होना। उ०—एक नयन कवि मुहमद गुनी। सोइ विमोहा जो कवि सुनी।—जायसी (शब्द०)। २ बेसुध होना। तन मन की सुध न रखना। भ्रांत होना। धोखा खाना।

विमोहना²—क्रि० स० १. मोहित करना। लुभाना। २. ऐसा प्रभाव डालना कि तन मन की सुधि न रहे। बेसुध करना। ३. भ्रांति में करना। धोखे में डालना। ४. वशीभूत करना (को०)।

विमोहा—संज्ञा स्त्री० [देश०] एक छंद जिसके प्रत्येक चरण में दो रगण (SIS) होते हैं। इसे 'जोहा', 'विजोहा' और 'विज्जोहा' भी कहते हैं। विशेष दे० 'विजोहा'।

विमोहित—वि० [सं०] १. लुभाया हुआ। मुग्ध। उ०—तुम अस बहुत विमोहित भए। धुन धुन सीस जीव दै गए।—(शब्द०)। २. तन मन की सुध भूला हुआ। ३. मूर्छित। उ०—यह सुनना न पड़े सोई अच्छा है और यही कहते कहते वह विमोहित हो गई।—कादंबरी (शब्द०)। ४. वशीकृत (को०)।

विमोही—वि० [सं० बिमोहिन्] [वि० स्त्री० विमोहिनी] १. मोहित करनेवाला। जी लुभानेवाला। मन आकर्षित करनेवाला। २. सुध बुध भुलानेवाला। ऐसा प्रभाव डालनेवाला कि तन मन की सुध न रहे। ३. मूर्छित या बेहोश करनेवाला। ४. भ्रम मे डालनेवाला। भ्रांत करनेवाला। ५. जिसे मोह या दया न हो। जिसे ममता या स्नेह न हो। निष्ठुर। कठोरहृदय। उ०—जिउ गँवाइ सो गएउ विमोही। भा विनु जिउ, जिउ दीन्हेसि ओही।—जायसी (शब्द०)।

विमौट—संज्ञा पुं० [सं० वल्मीक, प्रा० बम्बी + औट (प्रत्य०)] दीमकों का उठाया हुआ मिट्टी का ढूह। बाँबी। उ०—गोहर ह्वै तुम पूरब जनमा। बसे विमौट एक कहुँ बन माँ—रघुराज (शब्द०)।

विम्लान—वि० [सं०] १. मुरझाया हुआ। विवर्ण। शुष्क। २. ताजा। हरा भरा [को०]।

विम्लापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. ताजगी। अम्लानता। २. विशुद्धि। परिष्कृति। ३. म्लान करनेवाला। मुरझा देनेवाला [को०]।

वियंग(पु)—संज्ञा पुं० [हिं० विय + अंग] दो अंगवाले, महादेव। उ०—करहि वियंगा आलिंगन। तेहि चंद्रहि कबहूँ सालिगन।—शं० दि० (शब्द०)।

वियंता—वि० [सं० वियन्तृ] १. जिसका कोई नियंता न हो। नियामकरहित। २. सारथिहीन [को०]।

विय(पु)—वि० [सं० द्वि, द्वितीय, प्रा० विय] १. दो। जोड़ा। २. दूसरा। उ०—कहत सबै कवि कमल से, मो मत नैन पखान। नातरु कत इनि विय लगत उपजत विरह कृशान।—बिहारी (शब्द०)।

वियच्चारी—संज्ञा पुं० [सं० वियत्चारिन्] चील पक्षी [को०]।

वियत्¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकाश। २. वायुमंडल।

वियत्²—वि० गमनशील।

वियत्पताका—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्युत्। बिजली।

वियत्पथ—संज्ञा पुं० [सं०] आकाशमार्ग। वायुमंडल [को०]।

वियति—संज्ञा पुं० [सं०] १. भागवत के अनुसार नहुष राजा के एक पुत्र का नाम। २. चिड़िया। पक्षी (को०)।

वियद्गंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० वियद्गङ्गा] आकाशगंगा।

वियद्गति—वि० [सं०] आकाशचारा [को०]।

वियद्ध(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वियत्]। दे० 'वियत्'। उ०—उठति एहि हल्लिता। वियद्ध चंद्र चल्लिता।—पृ० रा०, २५।१३१।

वियद्व्यापी—वि० [सं० वियत् + व्यापिन्] आकाशव्यापी। उ०—शब्द वियद्व्यापी सत्ता है।—संपूर्णानंद अभि० ग्रं०, पृ० ११२।

वियद्भूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] अँधेरा। अंधकार [को०]।

वियन्मणि—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

वियन्मध्यहंस—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०]।

वियम—संज्ञा पुं० [सं०] १. संयम। इंद्रियदमन। २. दुःख। क्लेश। यातना। ३. प्रतिबंध। रोक। नियंत्रण (को०)। ४. विराम। पड़ाव (को०)।

वियव—संज्ञा पुं० [सं०] आँत में उत्पन्न होनेवाला एक प्रकार का कीड़ा [को०]।

वियात—वि० [सं०] १. रास्ते से भटका हुआ। पथभ्रष्ट। २. गया गुजरा। गया बीता। ३. ढीठ। हिम्मती। धृष्ट (को०)। ४. निर्लज्ज। बेहया। ५. दुश्चरित्र। व्यसनी (को०)।

वियान—संज्ञा पुं० [सं० व्यान] शरीरस्थ एक वायु का नाम। दे० 'व्यान'। उ०—पाँचई बानी सिगन लेखा। वियान व्यान सो कीन्ह विवेखा।—कबीर सा०, पृ० ८८०।

वियाम—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रियनिग्रह। संयम। २. दे० 'वियम' (को०)। ३. एक प्रकार की नाप जो विस्तृत दोनों भुजाओं की लंबाई के बराबर कही गई है (को०)।

वियास—क्रि० अ० [सं० व्यास] १. विस्तृत होना। बढ़ना। फैलना। २. उगना। हरा भरा होना। उ०—मन वच कर्म लगाय संत की सेवा लावै। उकठा काठ वियास साच जो दिल में आवै।—पलटू०, पृ० १०४।

वियुक्त—वि० [सं०] १. जो संयुक्त न हो। जिसकी जुदाई हो गई हो। विछुड़ा हुआ। वियोगप्राप्त। २. जुदा। अलग। पृथक्। ३. रहित। हीन। वंचित। ४. अभावग्रस्त (को०)।

वियुत—वि० [सं०] १. वियुक्त। अलग। २. रहित। हीन।

वियुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] गणित में दो राशियों का अंतर [को०]।

वियूथ—वि० [सं०] जो अपने दल से अलग हो गया हो। यूथभ्रष्ट [को०]।

वियो(पु)—वि० [सं० द्वितीय, प्रा० वीय] दूसरा। अन्य। उ०—ज्ञान स्मारत पक्ष को नाहिन कोउ खंडन वियो।—नाभादास। (शब्द०)।

वियोग—संज्ञा पुं० [सं०] १. संयोग का अभाव। मिलाप का न होना। विच्छेद। २. पृथक् होने का भाव। अलगाव। ३. दो प्रेमियों का एक दूसरे से अलग होना। विरह। जुदाई।

विशेष—साहित्य में शृंगार रस दो प्रकार का माना गया है—संयोग शृंगार (या संभोग शृंगार) और वियोग शृंगार (या विप्रलंभ शृंगार)। वियोग की दशा तीन प्रकार की होती है—पूर्वराग, मान और प्रवास।

४. गणित में राशि का व्यवकलन। ५. अभाव। हानि (को०)।

वियोगभाक्—वि० [सं० वियोगभाज्] वियोगी। विरही [को०]।

वियोगांत—वि० [सं० वियोगान्त] (उपन्यास, नाटक या कथा आदि) जिसकी कथा का अंत दुःखपूर्ण हो।

विशेष—आधुनिक नाटक दो प्रकार के माने जाते हैं—सुखांत और दुःखांत। इन्हीं का कुछ लोग संयोगांत और वियोगांत भी कहते हैं। भारतवर्ष में संयोगांत या सुखांत नाटक लिखने की ही चाल पाई जाती है; दुःखांत का निषेध ही मिलता है। पर पूर्वकाल में दुःखांत नाटक भी लिखे जाते थे, इसका आभास कालिदास के पूर्ववर्ती महाकवि भास के नाटकों से मिलता है।

वियोगावसान—वि० [सं०] जिसका अंत वियोग हो [को०]।

वियोगावह—वि० [सं०] वियोगजनक। वियोग करने या देनेवाला [को०]।

वियोगिन(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वियोगिनी] दे० 'वियोगिनी'।

वियोगिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो अपने पति या प्रिय से वियुक्त हो। जो अपने प्यारे से बिछुड़ी हुई हो। वह स्त्री जिसका पति या नायक पास में न हो और जो उसके न रहने से दुःखी हो। २. एक प्रकार का छंद।

विशेष—इसे वैतालीय और सुंदरी भी कहते हैं। इसके विषम चरणों में स स ज ग और सम चरणों में स भ र ल ग होते हैं।

वियोगी[१]—वि० [सं० वियोगिन्] [वि० स्त्री० वियोगिनी] जो प्रिया से वियुक्त हो। जो प्रियतमा से बिछुड़ा हो। विरही। २. पृथक् किया हुआ। जुदा किया हुआ (को०)। ३. अनुपस्थित (को०)।

वियोगी[२]—संज्ञा पुं० १. वियोगी पुरुष। २. चक्रवाक। चकवा।

वियोजक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अलग करनेवाला। दो मिली हुई वस्तुओं को पृथक् करनेवाला। २. गणित में वह संख्या जिसे किसी दूसरी बड़ी संख्या में से घटाना हो।

वियोजन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वियोजनीय, वियोजित, वियोज्य] १. मिली हुई वस्तुओं को अलग करना। जुदा करना। पृथक् करना। २. गणित में एक संख्या में से उससे कुछ छोटी दूसरी संख्या निकालने या घटाने की क्रिया। बाकी।

वियोजित—वि० [सं०] १. पृथक् किया हुआ। अगल किया हुआ। २. रहित। शून्य।

वियोज्य[१]—वि० [सं०] १. वियोजन के योग्य। पृथक् करने योग्य। २. जिसे अलग करना हो। जिसे जुदा करना हो।

वियोज्य[२]—संज्ञा पुं० गणित में वह संख्या जिसमें से कोई संख्या घटानी हो।

वियोनि[१]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनेक जन्म। बहु जन्म। नाना जन्म। २. पशुओं का गर्भाशय। ३. हीन जन्म। निकृष्ट या कलंकपूर्ण पैदाइश। ४. अन्य जातीय स्त्री। विजातीय महिला [को०]।

वियोनि[२]—वि० १. हीनजन्मा। जारज। २. हीन या तिर्यक् योनिवाला [को०]।

वियोनिज—वि० [सं०] जो तिर्यक्योनि से उत्पन्न हो (पक्षी, पशु आदि) [को०]।

वियोनी—संज्ञा स्त्री०, वि० [सं० वियोगिनि] दे० 'वियोनि'।

विरंग[१]—वि० [सं० विरङ्ग] १. बुरे रंग का। बदरंग। विवर्ण। फीका। उ०—क्वैला करी कोकिल कुरंग बार कोर कोर कुढ़ि कुढ़ि केहरि कलंक लंक हदली। जरि जरि जंबूनद विद्रुम विरंग होत, अंग फारि दाडिम त्वचा भुजंग बदली—(शब्द०)। २. अनेक रंगों का। कई वर्णों का।

यौ०—रंग बिरंग, रंग बिरंगा।

विरंग[२]—संज्ञा पुं० कंकुष्ठ। एक प्रकार की पहाड़ी मिट्टी। विशेष दे० 'कंकुष्ठ'।

विरंग[३]—संज्ञा पुं० [सं० विराग] वैराग्य। विराग। विरक्ति।

विरंग काबुली—संज्ञा पुं० [फा०] बायविडंग। भाभीरंग।

विरंच—संज्ञा पुं० [सं० विरञ्च] ब्रह्मा।

विरंचन—संज्ञा पुं० [सं० विरञ्चन] ब्रह्मा। विधाता [को०]।

विरंचि—संज्ञा पुं० [सं० विरञ्चि] सृष्टि रचनेवाला, ब्रह्मा। विधाता। उ०—संचि विरंचि निकाई मनोहर लाजति मूरतिवंत बनाई। तापर तो बड़ भाग बड़े मतिराम लसैं पति प्रीति सुहाई।—मतिराम (शब्द०)।

विरंचिसुत—संज्ञा पुं० [सं० विरञ्चि+सुत] ब्रह्मा के पुत्र, नारद। उ०—मुनि विरंचिसुत अति हरषाए। कहत सुनहु जो चहत सुहाए।—गोपाल (शब्द०)।

विरंच्य—संज्ञा पुं० [सं० विरञ्च्य] ब्रह्मा [को०]।

विरंज फूल—संज्ञा पुं० [हिं० विरंज+फूल] एक प्रकार का धान या जड़हन।

विरंजित—वि० [सं० विरञ्जित] विगतानुराग। जिसका प्रेम मंद पड़ गया हो [को०]।

विरकत(पु)†—वि० [सं० विरक्त] दे० 'विरक्त'। उ०—जन रामा विरकत सोई चौथे पद विश्राम जी—राम० धर्म०, पृ० ६८।

विरक्त[१]—वि० [सं०] १. जो अनुरक्त न हो। जिसका जी हटा हो। जिसे चाह न हो। विमुख। जैसे,—ऐसी बातों से वे सदा

विरक्त रहते हैं। २. जो कुछ प्रयोजन न रखता हो। उदासीन। ३. अप्रसन्न। खिन्न। जैसे,—उनकी बातें सुनकर वे और भी विरक्त हो गए। ४. अत्यंत लाल रंग का (को०)। ५. बदरंग (को०)। ६. आविष्ट। आसक्त। आवेशयुक्त (को०)।

विरक्त^2—संज्ञा पुं० ऐसे बाजे जो केवल ताल देने के काम में आते हैं।

विरक्तता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनुराग का अभाव। विरक्त होने का भाव। २. उदासीनता।

विरक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भाग्यहीन या खिन्न स्त्री। दुखियारी औरत। २. अननुकूला स्त्री [को०]।

विरक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनुराग का अभाव। चाह का न होना। जी का हटा रहना। विराग। विमुखता। २. उदासीनता। ३. अप्रसन्नता। खिन्नता।

विरचन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विरचनीय विरचित] १. प्रणयन। निर्माण। बनाना। २. क्रमपूर्वक रचना या बनाना (को०)। ३. धारण करना (को०)।

विरचना(पु)^1—क्रि० स० [सं० विरचन] १. रचना। बनाना। निर्माण करना। २. अलंकृत करना। सजाना।

विरचना^{2}—क्रि० अ० [सं० वि०+रञ्जन] विरक्त होना। जी का हटना। उचटना। उ०—विरचि मन फेरि राच्यो जाइ।—सूर० (शब्द०)।

विरचयिता—संज्ञा पुं० [सं० विरचयितृ] रचनेवाला। बनानेवाला।

विरचित—वि० [सं०] १. बनाया हुआ। निर्मित। २. रचा हुआ। जैसे,—कालिदास विरचित शकुंतला नाटक। ३. घटित किया हुआ। संरचित। खचित। जटित (को०)। ४. सँवारा हुआ। अलंकृत (को०)। ५. धारण किया हुआ। पहनाया हुआ (को०)।

विरछ(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृक्ष] दे० 'वृक्ष'। उ०—अरणव सांते उदर, विरछ रोमांच विचालें।—रघु० रू०, पृ० ४४।

विरज^1—वि० [सं० विरजस्] १. रजोगुणरहित। सुख, वासना आदि से मुक्त। २. जिसपर धूल या गर्द न हो। निर्मल। स्वच्छ। साफ। ३. निर्दोष। बेऐब। ४. (स्त्री) जिसका रजोधर्म बंद हो गया हो।

विरज^2—संज्ञा पुं० १. विष्णु। २. शिव। ३. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ४. वसिष्ठ के एक पुत्र का नाम (को०)। ५. एक ऋषि (को०)।

विरजतमा—वि० [सं० विरजतमस्] जो रजोगुण और तमोगुण से रहित हो [को०]।

विरजप्रभ—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

विरजमंडल—संज्ञा पुं० [सं० विरजमण्डल] एक तीर्थ जो उड़ीसा में जाजपुर के पास माना गया है। यहाँ देवी की महाजया नामक मूर्ति है। (प्रभास खंड)।

विरजस्क—वि० [सं०] दे० 'विरज' को०।

विरजस्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसका मासिक धर्म रुक गया हो [को०]।

विरजा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कपित्थानी का पौधा जिसकी पत्तियाँ कैथ की पत्तियों के समान होती हैं। २. श्रीकृष्ण की एक प्रेमिका सखी जिसने राधा के भय से नदी का रूप धारण कर लिया था।

विशेष—इसकी कथा ब्रह्मवैवर्तपुराण के श्रीकृष्ण जन्म खंड में दी हुई है। गोलोक में एक बार कृष्ण जी राधा को न देखकर विरजा नाम की एक गोपी के पास चले गए। खबर पाते ही राधा दौड़ीं। श्रीकृष्ण तो अंतर्धान हो गए; और विरजा बेचारी डर के मारे नदी हो गई। जब कृष्ण इसके विरह में बहुत व्याकुल हुए, तब इसने फिर अपना पूर्व रूप धारण कर लिया। ३. दूब। दूर्वा (को०)। ४. राजा नहुष की पत्नी (को०)। ५. जगन्नाथ क्षेत्र (को०)।

विरजा^{2}—वि० [सं० विरजस्] दे० 'विरज'।

विरजा^{3}—संज्ञा स्त्री० गतार्तवा स्त्री। वह स्त्री जिसका मासिक धर्म बंद हो गया हो।

विरजाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] मार्कंडेयपुराण के अनुसार एक पर्वत जो मेरु के उत्तर ओर है।

विरजाक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] उड़ीसा में एक तीर्थ स्थान जो जाजपुर के पास माना जाता है। विरज मंडल।

विरझ(पु)—संज्ञा पुं० [देश०] समूह। उ०—नंद० ग्रं०, पृ० ११४।

विरट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंधा। २. अगरु। अगर वृक्ष।

विरण—संज्ञा पुं० [सं०] वरिन नाम की घास।

विरण्य—वि० [सं०] विस्तृत। विस्तीर्ण [को०]।

विरतंत(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तान्त] वृत्तांत। हाल। कथा। उ०—ढोल्यू मनि आरति हुई सांभलि ए विरतंत। जे दिन मारू विण गया, दई न ग्याँन गिणंत।—ढोला०, दू० २०८।

विरत—वि० [सं०] १. जो अनुरक्त न हो। जिसे चाह न हो। जिसका मन हटा हो। विमुख। जैसे,—स्त्री या भोग विलास से विरत होना। २. जो लगा हुआ न हो। जिसने अपना हाथ हटा लिया हो। निवृत्त। जैसे,—किसी कार्य से विरत होना। ३. जिसने सांसारिक विषयों से अपना मन हटा लिया हो। विरक्त। वैरागी। ४. विशेष रूप से रत। बहुत लीन। बिल्कुल लगा हुआ। उ०—कहुँ गनक गनत, जोगी जपत जंत्र मंत्र मन विरत नित।—गुमान। (शब्द०)। ५. जिसका अंत या समाप्ति हो गई हो। समाप्त। उपसंहृत (को०)। ६. विश्रांत। थका या ठहरा हुआ (को०)।

विरति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनुराग का अभाव। चाह का न होना। २. जी का उचटना। उदासीनता। ३. सांसारिक विषयों से जी का हटना। वैराग्य। उ०—जोग तें विरति, विरति तें ज्ञाना।—तुलसी (शब्द०)। ४. विश्राम। अवसान। यति (को०)।

विरत्त(पु)—वि० [सं० विरक्त, प्रा० विरत्त] विरत। अप्रसन्न। उ०—साह विरत्तो मारवाँ ग्राह जही गज वार। जठै सदरसण चक्र ज्यों रिणमल्लां पणधार।—रा० रू०, पृ० ७०।

विरथ—वि० [सं०] १. बिना रथ का। जिसके पास रथ या सवारी न हो। उ०—रावण रथी विरथ रघुबीरा।—तुलसी (शब्द०)। २. रथ से गिरा हुआ। ३. पैदल।

विरथीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध में रथ नष्ट करके शत्रु को रथहीन करना।

विरथ्य—संज्ञा पुं० [सं०] शिव (को०)।

विरथ्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुमार्ग। खराब राह। २. उपमार्ग। गली। लेन (को०)।

विरद^१—संज्ञा पुं० [सं० विरुद] १. बड़ा नाम। लंबा चौड़ा या सुंदर नाम। २. ख्याति। प्रसिद्धि। उ०—बड़े न हूजै गुनन बिनु विरद बड़ाई पाय। कहत धतूरा को कनक गहनों गढ़्यो न जाय।—बिहारी (शब्द०)। ३. यश। कीर्ति। विशेष दे० 'विरुद'।

विरद^२—वि० [सं०] बिना दाँत का।

विरदावली—संज्ञा स्त्री० [सं० विरुदावली] यश की कथा। कीर्ति की कथा। प्रशंसा के गीत।

विरदैत(पु)—वि० [हिं० विरद+ऐत (प्रत्य०)] बड़े विरदवाला। कीर्ति या यशवाला। बड़े नामवाला।

विरध(पु)†—वि० [सं० वृद्ध] दे० 'वृद्ध'। उ०—विरध भया कफ वाय ने घेरा। खाट पड़ा नहिं जाय खिसका रे।—कबीर श०, पृ० २९।

विरम—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्यास्त। २. समाप्ति। अंत। ३. निवृत्ति। त्याग (को०)।

विरमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विराम करना। रुकना। ठहरना। थमना। २. रम जाना। मन लगाना। ३. संभोग। विलास। ४. विरत होना। निवृत्त होना। त्याग। जैसे,—अदत्तदानविरमण। (जैन)।

विरमना^{१}—(पु) क्रि० अ० [सं० विरमण] १. रम जाना। मन लगाना। अनुरक्त हो जाना। २. विराम करना। ठहरना। रुकना। ३. मोहित होकर रुक जाना। उ०—सूरदास कित विरमि रहे प्रभु आवत नाहिं चले।—सूर (शब्द०)। ४. वेग आदि का थमना या कम होना। उ०—विरमै नहिं ताप जताए बिन, जगजीवन की अहै रीति यही। करैं जाहिर जीभ सो लाज लगै जो अकाज न आज फिरै उमही।—(शब्द०)।

विरमना^{२}—क्रि० अ० [सं० विलम्बन अथवा सं० विरम से हिं० नामिक धातु] दे० 'विलंबना'।

विरमाना—(पु)^१ क्रि० स० [हिं० विरमना का सक० रूप] १. दूसरे का मन लगाना। अनुरक्त करना। २. मोहित करके रोक लेना। फँसाना। उ०—उत कुबजा विरमायो श्यामहि, इत यह दशा भई।—सूर (शब्द०)। ३. फँसा रखना। मशगूल रखना। उ०—देति न लेति कछू हँसिकै बड़ी बेर लौं बातन ही विरमावति।—(शब्द०)। ४. भुलावे में रखना। भ्रम में डाले रखना।

विरमाना^{२}—क्रि० स० [सं० विलम्बन] दे० 'विलंबाना'।

विरर—वि० [सं० विरल] दे० 'विरल'। उ०—विरर चिकुर मुख चुंब सनेही—कबीर सा०, पृ० १५९७।

विरल^१—वि० [सं०] १. जो घना न हो। जिसके बीच बीच में अवकाश हो। जिसके बीच बीच में खाली जगह हो। 'सघन' का उलटा। जैसे,—आगे चलकर यह बन विरल होता गया है। २. जो पास पास न हों। जो दूर दूर पर हों। ३. जो अधिकता से न मिले। जो केवल कहीं कहीं पाया जाय। दुर्लभ। जैसे,—ऐसे लोग संसार में बहुत विरल हैं। ४. जो गाढ़ा न हो। पतला। ढीला। ५. शून्य। निर्जन। ६. अल्प। थोड़ा।

विरल^२—संज्ञा पुं० जमाया हुआ दूध। दही।

विरल^३—अव्य० कठिनाई से। कभी कभी।

विरलजानुक—वि० [सं०] जिसके दोनों घुटनों में अधिक दूरी हो। जिसके घुटने आपस में मिल न सकें। धनुःपदी (को०)।

विरलद्रवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लपसी (को०)।

विरलपातक—वि० [सं०] जो बहुत कम पाप करे (को०)।

विरलपार्श्वग—वि० [सं०] जो कम अनुचर या सेवक रखता हो (को०)।

विरलभक्ति—वि० [सं०] जिसमें विविधता न हो। एक समान। नीरस। उबानेवाला (को०)।

विरला—वि० [सं० विरल] कोई एक। इक्का दुक्का। दे० 'बिरला'। उ०—चित्र खींचती थी जब चपला। नीलमेघ पट पर वह विरला।—लहर, पृ० २६।

विरलागत—वि० [सं०] जो शायद ही कभी घटित होने। विरल रूप में आनेवाला (को०)।

विरलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का झीना या महीन वस्त्र।

विरलित—वि० [सं०] जो सघन न हो (को०)।

विरलीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] सघन को विरल करना।

विरव^१—संज्ञा पुं० [सं०] अनेक प्रकार के शब्द।

विरव^२—वि० शब्दरहित। नीरव।

विरश्मि—वि० [सं०] रश्मि या किरणों से रहित (को०)।

विरष(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृक्ष] दे० 'वृक्ष'। उ० भएँ विरष पुनि हाथ न आवै। जो बल करै सोई दुख पावै।—चित्रा०, पृ० ५२।

विरस^१—वि० [सं०] १. रसहीन। फीका। नीरस। बिना स्वाद का। उ०—जल पय सरिस बिकाय, देखहु प्रीति की रीति यह। विरस तुरत ह्वै जाय, कपट खटाई परत ही।—तुलसी (शब्द०)। २. जो अच्छा न लगे। विरक्तिजनक। जी हटानेवाला। अप्रिय। अरुचिकर। उ०—चहुँटो चिबुक चाँपि चूँवि लोल लोयन कौं, रस में विरस कलो वचन मलीनो है। गहि भरि लीनो कछू उत्तर न बाल दीनो हाल से हवाल राउ अंक भरि लीनो है।—सूदन (शब्द०)। ३. (काव्य) जो रसहीन हो गया हो। जिसमें रस का निर्वाह न हो सका हो। ४. क्रूर। निर्दय (को०)।

विरस^{२}—संज्ञा पुं० १. काव्य में रसभंग।

विशेष—केशव ने इसे 'अनरस' के पाँच भेदों में से एक माना है।

२. पीड़ा। वेदना (को०)।

विरसता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नीरसता। फीकापन। २. रसभंग। मजा किरकिरा होना।

विरसा—संज्ञा पुं० [अ०] मीरास। मृतक की संपत्ति। मरे हुए आदमी की जायदाद [को०]।

विरह^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु से रहित होने का भाव। किसी वस्तु का अभाव। किसी वस्तु के बिना स्थिति। २. किसी प्रिय व्यक्ति का पास से अलग होना। विच्छेद। वियोग। जुदाई। ३. वियोग का दुःख। जुदाई का रंज। ४. अंतर। व्यवधान। अविद्यमानता। उ०—नव नवय प्रातय विरह प्रावय संष दिव घुनि बज्जियं।—पृ० रा०, २४।११८। ५. परित्याग। छोड़ देना (को०)।

विरह^{२}—वि० रहित। शून्य। बगैर। बिना।

विरहज, विरहजनित, विरहजन्य—वि० [सं०] जो विरह के कारण उत्पन्न हो [को०]।

विरहज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] विरह से उत्पन्न ताप या पीड़ा [को०]।

विरहन†—वि० स्त्री० [सं० विरहिणी] दे० 'विरहिणी'। उ०—तजे सुग्रह धन धाम सहेली। पिय विरहन उठि चलै अकेली।—कबीर सा०, पृ० ६।

विरहविधुर—वि० [सं०] विरह के कारण व्यथित या अकेला। उ०—क्या आँसू सा ढुलक गया वह, विरहविधुर उर का उद्गार?—अपरा, पृ० १०२।

विरहा†—संज्ञा पुं० [सं० विरहक या हिं० विरह] एक प्रकार का गीत जिसे अहीर और गड़रिए गाते हैं। विशेष दे० 'बिरहा'। २. विरह। वियोग।

विरहागि(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विरहाग्नि] दे० 'विरहाग्नि'।

विरहाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विरह से उत्पन्न ताप [को०]।

विरहानल—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विरहाग्नि' [को०]।

विरहिणी—वि० स्त्री० [सं०] १. जिसे प्रिय या पति का वियोग हो। जो पति या नायक से अलग होने के कारण दुःखी हो। २. पारिश्रमिक। मजूरी [को०]।

विरहित—वि० [सं०] १. रहित। शून्य। बिना। उ०—आश्रम बरन धरम विरहित जग लोक वेद मरजाद गई है।—तुलसी (शब्द०)। २. छोड़ा हुआ। परित्यक्त (को०)। ३. वियुक्त (को०)। ४. अकेला। एकाकी (को०)।

विरही^{१}—वि० [सं० विरहिन्] [वि० स्त्री० विरहिणी] १. जिसे प्रिया का वियोग हो। जो प्रियतमा से अलग होने के कारण दुःखी हो। उ०—बिरही कहँ लौ आयु सँभारै?—सूर। (शब्द०)। २. अकेला। एकाकी (को०)।

विरही‡^{२}—संज्ञा पुं० [देश०] भींगा हुआ अन्न। उ०—नवरात्र में घटस्थापन के साथ साथ, भूमि पर बाँस की आयताकार चौहद्दी बनाकर अनाज भिगोए जाते हैं, जिन्हें विरही कहते हैं।—शुक्ल अभि० ग्रं० पृ० १३६।

विरहोत्कंठिता—संज्ञा स्त्री० [सं० विरहोत्कण्ठिता] नायिकाभेद के अनुसार प्रिय के न आने से दुखी वह नायिका जिसके मन में पूरा विश्वास हो कि पति या नायक आवेगा, पर फिर भी किसी कारणवश वह न आवे।

विराग^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अनुराग का अभाव। चाह का न होना। लगन न होना। २. किसी वस्तु से न विशेष प्रेम होना न द्वेष। उदासीन भाव। ३. सांसारिक सुखों की चाह न करना। विषयभोग आदि से निवृत्ति। वैराग्य। उ०—राजभोग्य के योग्य, विपिन में बैठा आज विराग लिए।—पंचवटी, पृ० ६। ४. एक में मिले हुए दो राग।

विशेष—एक राग में जब दूसरा राग मिल जाता है, तब उसे विराग कहते हैं।

५. वर्ण या रंग का परिवर्तन (को०)। ६. असंतुष्टि। असंतोष (को०)।

विराग^{२}—वि० १. राग से रहित। उदासीन। विरागी। २. वर्ण या रंगहीन [को०]।

विरागी—वि० [सं० विरागिन्] [वि० स्त्री० विरागिनी] १. जिसे राग न हो। जिसे चाह न हो। जिसने मन न लगाया हो। उदासीन। विमुख। २. जिसने सांसारिक विषयों से मन हटा लिया हो। संसारत्यागी। विरक्त।

विराज्—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विराट्'।

विराज^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंदिर का एक विशेष प्रकार। २. एक पौधा। ३. एक प्रजापति का नाम (को०)।

विराज^{२}—वि० १. अत्युत्तम। अत्यंत उत्कृष्ट। २. शासन करनेवाला। ३. चमकने वा द्योतित होनेवाला [को०]।

विराजन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विराजमान, विराजित] १. शोभित होना। २. शासक का कार्य करना। शासन करना (को०)। ३. वर्तमान होना। रहना।

विराजना—क्रि० अ० [सं० विराजन] १. शोभित होना। प्रकाशित होना। सोहना। फबना। २ वर्तमान होना। मौजूद रहना। उपस्थित रहना। होना। रहना। ३. बैठना। जैसे,—आइए, विराजिए।

विराजमान—वि० [सं०] १. प्रकाशमान। चमकता हुआ। चमक दमकवाला। २. विद्यमान। उपस्थित। मौजूद। जैसे,—पंडित जी यहाँ पहले ही से विराजमान हैं। ३. बैठा हुआ। उपविष्ट।

विराजित—वि० [सं०] १. सुशोभित। २. प्रकाशित। ३. उपस्थित। विद्यमान।

विराज्ञी—संज्ञा स्त्री० [सं०] साम्राज्ञी। रानी [को०]।

विराज्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शासन। हुकूमत। २. राज्य [को०]।

विराट्^{१}—संज्ञा पुं० [सं० विराज्], ब्रह्म का वह स्थूल स्वरूप जिसके अंदर अखिल विश्व है अर्थात् संपूर्ण विश्व जिसका शरीर है। विश्वशरीरमय अनंत पुरुष।

विशेष—इस भावना का निरूपण इस प्रकार है—'उस पुरुष के सहस्रों मस्तक, सहस्रों आँखें और सहस्रों चरण हैं। वह पृथ्वी में सर्वत्र व्याप्त रहने पर भी दस अंगुल ऊपर अवस्थित है। पुरुष ही सब कुछ है—जो हुआ है और जो होगा। उसकी

इतनी बड़ी महिमा है, पर वह इससे कहीं बड़ा है। संपूर्ण विश्व और भूत एक पाद है, आकाश का अमर अंश त्रिपाद है। उससे विराट् उत्पन्न हुए और विराट् से अधिपुरुष। उन्होंने आविर्भूत होकर संपूर्ण पृथ्वी को आगे पीछे घेर लिया'। भगवद्गीता के अनुसार भगवान् ने जो अपना विराट् स्वरूप दिखाया था, उसमें समस्त लोक, पर्वत, समुद्र, नद, नदी, देवता आदि दिखाई पड़े थे। बलि को छलने के लिये भगवान् ने जो त्रिविक्रम रूप धारण किया था, उसे भी विराट् कहते हैं। पुराणों में विराट् को ब्रह्मा का प्रथम पुत्र कहा है। ब्रह्मा दो भागों में विभक्त हुए—स्त्री और पुरुष। स्त्री अंश से विराट् की उत्पत्ति हुई जिसने स्वायंभुव मनु को उत्पन्न किया। स्वायंभुव मनु से प्रजापतियों की उत्पत्ति हुई।

२. लड़ाकू जाति। क्षत्रिय। ३. कांति। दीप्ति। सौंदर्य। ४. शरीर। देह (को०)। ५. प्रज्ञान। प्रतिभा। प्रज्ञा। (वेदांत दर्शन)। ६. ब्रह्मांड (को०)।

विराट्^{२}—वि० १. बहुत बड़ा। बहुत भारी। जैसे,—विराट् सभा, विराट् आयोजन। २. शासन करनेवाला। प्रधान (को०)।

विराट्^{३}—संज्ञा स्त्री० १. एक वैदिक वृत्ति का नाम। २. उत्कृष्टता। दीप्तिमत्ता। सुंदरता [को०]।

विराट् स्वराज—संज्ञा पुं० [सं०] एक दिन में होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ। एक प्रकार का एकाह। (श्रौत सूत्र)।

विराट—संज्ञा पुं० [सं०] १. मत्स्य देश जहाँ के राजा के यहाँ पाँचों पांडव अज्ञातवास के समय छिपे थे।

विशेष—मनुस्मृति में मत्स्य देश का उल्लेख कुरुक्षेत्र और पांचाल के साथ है; इससे अनुमान होता था कि वह थानेसर के आस पास होगा। पर अब यह बात एक प्रकार से निश्चित हो गई है कि अलवर और जयपुर के बीच का प्रदेश ही महाभारत के समय मत्स्य देश कहलाता था। उक्त प्रदेश के अंतर्गत 'बैराट' और 'माचड़ी' दो स्थान अब तक 'विराट' और 'मत्स्य' का स्मरण दिलाते हैं।

२. मत्स्य देश का राजा।

विशेष—इनके यहाँ अज्ञातवास के समय पांडव नौकर के रूप में रहते थे। इनकी कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु से हुआ था जिससे परीक्षित की उत्पत्ति हुई।

३. महाभारत का एक पर्व। ४. संगीत में एक ताल का नाम।

विराटक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का निम्न कोटि का हीरा या नग जो विराट देश में निकलता था। राजपट्ट। राजावर्त।

विराटज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विराटक'।

विराटपर्व—संज्ञा पुं० [सं० विराटपर्वन्] महाभारत के अठारह पर्वों में से एक पर्व का नाम [को०]।

विराणी—संज्ञा पुं० [सं० विराणिन्] हस्ती। हाथी।

विरातक—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन वृक्ष।

विरात्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. रात का अवसान। प्रातःकाल। २. रात का द्वितीय तृतीय प्रहर। बहुरात्र। अपरात्र [को०]।

विराद्ध—वि० [सं०] १. तिरस्कृत। २. जिसका विरोध किया गया हो। ३. अपकृत। जिसका अपकार किया गया हो [को०]।

विराध—संज्ञा पुं० [सं०] १. पीड़ा। क्लेश। तकलीफ। २. पीड़ित करनेवाला। सतानेवाला। ३. विरोध। खिलाफत (को०)। ४. एक राक्षस जिसे दंडकारण्य में लक्ष्मण ने मारा था।

विशेष—अग्निपुराण के अनुसार इसके पिता का नाम सुपर्यन्य और माता का नाम शतद्रुता था। यह राक्षस पूर्व जन्म में तुंबुरु नामक गंधर्व था, जो वैश्रवण या कुबेर के शाप से राक्षस योनि में उत्पन्न हुआ था। इसके बहुत प्रार्थना करने पर वैश्रवण ने कहा था—'अच्छा, जाओ। जब दशरथ के यहाँ भगवान् अवतार लेंगे, तब तुम्हारा शाप छूटेगा'।

रामायण में लिखा है कि दंडकारण्य में विराध सीता को लेकर भागने लगा। राम ने बहुत बाण चलाए, पर वह युद्ध में न मारा गया और राम तथा लक्ष्मण दोनों को उठाकर ले चला। रास्ते में फिर युद्ध होने लगा और दोनों भाइयों ने मिलकर उसकी भुजाएँ काट डालीं। पर वह जल्दी मरता नहीं था। अंत में लक्ष्मण ने एक बड़ा सा गड्ढा खोदा और उसका शरीर उसमें डाल दिया गया। मरने के पहले इसे अपने पूर्वशरीर और शाप का स्मरण हो आया था।

विराधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अपकार करना। हानि करना। २. विरोध (को०)। ३. पीड़ित करना। सताना। तंग करना। ४. वेदना। पीड़ा (को०)।

विराधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अपकार। दूसरे की हानि करना [को०]।

विराधान—संज्ञा पुं० [सं०] कष्ट। व्यथा। दुःख [को०]।

विराना—वि० [फा० बेगानह्] दे० 'बिराना'। उ०—फिर बिराने देश में किससे पूछें।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १५६।

विराम—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी क्रिया या व्यापार का कुछ देर के लिये बद होना, रुकना या थमना। ठहराव। ठहरना।

यौ०—विरामसंधि = युद्ध में लिप्त दोनों पक्षों की ओर कुछ समय के लिये युद्ध बंद करने का समझौता। युद्ध बंद करने की संधि। उ०—हंगेरी ने विरामसंधि कर ली।—आ० अ० रा०, पृ० ५२।

२. चलने की थकावट दूर करने के लिये रास्ते में ठहरना। चलना रोकना। सुस्ताना। दम मारना। विश्राम।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

३. वाक्य के अंतर्गत वह स्थान जहाँ बोलते समय ठहरना पड़ता हो। ४. छंद के चरण में वह स्थान जहाँ पढ़ते समय कुछ ठहरना पड़े। यति। ५. विष्णु का एक नाम (को०)। ६. अंत। समाप्ति। उपसंहार।

यौ०—विरामचिह्न = वह निशान वा चिह्न जिससे रुकाव, ठहराव या समाप्ति सूचित हो।

विरामण^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] ठहराव [को०]।

विरामण^{२}—संज्ञा पुं० [सं० ब्राह्मण] ब्राह्मण।

विरामताल—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्म ताल का एक प्रकार या भेद [को०]।

विरामदायिनी—वि० स्त्री० [सं०] विश्राम देनेवाली। आराम पहुँचानेवाली। उ०—और विरामदायिनी अपनी संध्या को दे जाता है।—पंचवटी, पृ० ६।

विरामब्रह्म—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में ब्रह्म ताल के चार भेदों में से एक भेद ।

विराल—संज्ञा पुं० [सं०] विडाल । बिल्ली । उ०—नेतक मांडल गेंडुआ एक सफुर विराल एक ।—वर्ण०, पृ० १४ ।

विराव^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शब्द । बोली । कलरव । उ०—कान परी कोकिला की काकली कलित जो कलापिन की कूक कल कोमल विराव की ।—देव (शब्द०) । २. हल्ला गुल्ला । शोर गुल ।

विराव^{2}—वि० शब्दरहित ।

विरावण—संज्ञा पुं० [सं०] जिससे बहुत शोर गुल हो । बहुत हल्ला करने या करानेवाला [को०] ।

विराविणी^{1}—वि० स्त्री० [सं०] १. बोलनेवाली । शब्द करनेवाली । २. रोने चिल्लानेवाली ।

विराविणी^{2}—संज्ञा स्त्री० १. झाड़ू । २. चिल्लाहट । रुदन । ३. ध्वनि (को०) । ४. नर्द ।

विरावित—वि० [सं०] ध्वनित किया हुआ [को०] ।

विरावी—वि० [सं० विराविन्] [वि० स्त्री० विराविणी] १. शब्द करनेवाला । बोलनेवाला । ध्वनि करनेवाला । गूँजनेवाला । २. रोने चिल्लानेवाला । विलाप करनेवाला ।

विरावृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] काली मिर्च [को०] ।

विरासⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विलास] दे० 'विलास' ।

विरासत—संज्ञा स्त्री० [अ०] उत्तराधिकार । वरासत । विरसा । उ०—जो मिली विरासत तुम्हें, आँख उसकी आँसू से गीली है ।—धूप०, पृ० ६३ ।

विरासीⓅ—वि० [सं० विलासिन्] दे० 'विलासी' । उ०—जौ लगि कालिंदि होसि विरासी । पुनि सुरसरि होइ समुद परासी ।—जायसी (शब्द०) ।

विरिंच—संज्ञा पुं० [सं० विरिञ्च] १. ब्रह्मा । २. विष्णु । ३. शिव ।

विरिंचन—संज्ञा पुं० [सं० विरिञ्चन] १. ब्रह्मा । २. विष्णु (को०) । ३. शिव (को०) ।

विरिंचि—संज्ञा पुं० [सं० विरिञ्चि] दे० 'विरिंच' ।

विरिक्त—वि० [सं०] १. जिसे विरेचन दिया गया हो । २. जिसका पेट छूटा हो । जिसे दस्त आ रहे हों । ३. निकालकर साफ या रिक्त किया हुआ (को०) ।

विरिक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विरेचन । २. रिक्त करने की क्रिया [को०] ।

विरिब्ध—संज्ञा पुं० [सं०] ध्वनि । स्वर [को०] ।

विरुक्मान्—संज्ञा पुं० [सं० विरुक्मत्] १. दीप्तिमय या चमकीला आभूषण । २. दीप्त या ज्योतित शस्त्र [को०] ।

विरुखा—वि० [फा० बेरुख] दे० 'बेरुखा' या 'बेरुख' ।

विरुग्ण—वि० [सं०] १. विशेष रोगी । २. सुस्त । ३. खंडित । टुकड़ों में विभक्त । कटा फटा । विदीर्ण । ४. झुका हुआ । ५. विध्वस्त । विनष्ट । ६. कुंठित । भोथरा [को०] ।

विरुच—संज्ञा पुं० [सं०] मंत्रविशेष जिससे अभिमंत्रित कर अस्त्रक्षेपण किया जाय [को०] ।

विरुज्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अत्यधिक पीड़ा । भीषण वेदना । २. विशिष्ट रोग । बड़ी व्याधि [को०] ।

विरुज—वि० [सं०] रोगरहित । नीरोग । स्वस्थ ।

विरुझनाⓅ†—क्रि० अ० [सं० वि + रुन्धन] दे० 'उलझना' ।

विरुझानाⓅ—क्रि० स० [हिं० विरुझना] दे० 'उलझाना' ।

विरुत^{1}—वि० [सं०] रवयुक्त । अव्यक्त शब्दयुक्त । कूजित । गूँजता हुआ ।

विरुत^{2}—संज्ञा पुं० १. चीखना । चिल्लाना । २. चिल्लाहट । ध्वनि । शोर । कोलाहल । ३. कलरव । गुंजार [को०] ।

विरुति—संज्ञा स्त्री० उत्क्रोश । क्रंदन । चीख । चिल्लाहट [को०] ।

विरुद—संज्ञा पुं० [सं०] १. गुण, प्रताप आदि का वर्णन । राजाओं की स्तुति या प्रशंसा जो सुंदर भाषा में की गई हो । यशकीर्तन । प्रशस्ति । २. यश या प्रशंसासूचक पदवी जो राजा लोग प्राचीन काल में धारण करते थे । जैसे, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य । (इसमें चंद्रगुप्त तो नाम है और विक्रमादित्य विरुद है ।) ३. यश । कीर्ति । ४. उच्चारण करना । घोषित करना । प्रख्यापन (को०) । ५. जोर से चिल्लाना । चिल्लाहट (को०) ।

विरुदध्वज संज्ञा सं० [सं०] राज्य या शासन की पताका । शासकीय ध्वज [को०] ।

विरुदावली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी के गुण, प्रताप, पराक्रम आदि का सविस्तर कथन । यशवर्णन । प्रशंसा । २. धार्मिक स्तुतियों का संग्रह । स्तुतिसंग्रह (को०) ।

विरुदित—संज्ञा पुं० [सं०] रुदन । रोना । शोक, संताप करना [को०] ।

विरुद्ध^{1}—वि० [सं०] १. जो हित के अनुकूल न हो । विरोधयुक्त । प्रतिकूल । खिलाफ । जैसे,—आजकल वह हमारे विरुद्ध है । २. अप्रसन्न । वाम । ३. जो मेल में न हो । जो एकदम भिन्न या उलटा हो । विपरीत । जैसे,—यह बात उस बात से सर्वथा विरुद्ध है । ४. जो उचित से सर्वथा भिन्न हो । जो न्याय या नीति के अनुकूल न हो । विपरीत । अनुचित । जैसे,—विरुद्ध आचरण । ५. बाधित । जिसका विरोध किया गया हो (को०) । ६ घेरा हुआ । नाकेबंदी किया हुआ (को०) । ७. प्रतिषिद्ध । वर्जित (को०) । ८. अनिश्चित । संदेहपूर्ण (को०) । ९. बहिष्कृत । निराकृत । वंचित (को०) ।

विरुद्ध^{2}—क्रि० वि० प्रतिकूल स्थिति में । खिलाफ । जैसे,—आजकल वह हमारे विरुद्ध चल रहा है ।

विरुद्ध^{3}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरोध । वैपरीत्य । शत्रुता । २. विरोध नामक एक अलंकार (साहित्य) । ३. वैमत्य । असहमति [को०] ।

विरुद्धकर्मा -संज्ञा सं० [सं० विरुद्धकर्मन्] १. विरुद्ध कर्म करनेवाला व्यक्ति । विपरीत आचरण का मनुष्य । बुरे चाल चलन का आदमी । २. केशव के अनुसार श्लेष अलंकार का एक भेद, जिसमें एक ही क्रिया के कई परस्पर विरुद्ध फल दिखाए जाते हैं । उ०—वारुणी को राग होत, सूरज करत अस्त, उदौ द्विजराज को जु होत यह कैसो है ?—केशव (शब्द०) इस पद का साधारण अर्थ तो यह है कि पश्चिम दिशा के लाल होते ही सूर्य

तो अस्त होता है और चंद्रमा उदय, यह कैसी बात है ! पर श्लेष से इसका अर्थ होता है कि वारुणी (शराब) की चाह होते ही शूरवीर का तो पराभव होता है, पर वारुणी (उपनिषद् की एक विद्या) की चाह होते ही ब्राह्मण की उन्नति होती है।

विरुद्धता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विरुद्ध होने का भाव । २. प्रतिकूलता । विपरीतता । उलटापन ।

विरुद्धधी—वि॰ [सं॰] वैर भाव रखनेवाला । दुष्ट । खोटा [को॰]।

विरुद्धप्रसंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विरुद्धप्रसङ्ग] अकरणीय कार्य । न करने योग्य काम [को॰]।

विरुद्धमतिकारिता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक काव्यदोष, जो ऐसे पद या वाक्य के प्रयोग से होता है जिससे वाच्य के संबंध में विरुद्ध या अनुचित बुद्धि हो सकती है; जैसे, 'भवानीश' शब्द के प्रयोग से । 'भवानी' शब्द का अर्थ ही है 'शिव' की पत्नी । उसमें ईश लगाने से सहसा यह ध्यान हो सकता है कि 'शिव की पत्नी' का कोई और भी पति है ।

विरुद्धमतिकृत्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विरुद्धमतिकारिता' ।

विरुद्धरूपक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] केशव के अनुसार रूपक अलंकार का एक भेद, जिसमें कही हुई बात बिलकुल 'अनमिल' अर्थात् असंगत या असंबद्ध सी जान पड़ती है, पर विचार करने पर अर्थात् रूपक के दोनों पक्षों (उपमेय, उपमान) का ध्यान करने पर अर्थ संगत ठहरता है ।

विशेष—इसमें उपमेय का कथन नहीं होता, इससे यह 'रूपकातिशयोक्ति' ही है ।

विरुद्ध हेत्वाभास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] न्याय में वह हेत्वाभास जहाँ साध्य के साधक होने के स्थान पर साध्य के अभाव का साधक हेतु हो । जैसे,—यह द्रव्य वह्निमान् है; क्योंकि यह महा ह्रद है । यहाँ महा ह्रद होना वह्नि के होने का हेतु नहीं है, वरन् वह्नि के अभाव का हेतु है ।

विरुद्धाचरण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अनुचित, प्रतिषिद्ध या विरुद्ध आचरण और व्यवहार । [को॰]।

विरुद्धार्थ—वि॰ [सं॰] विपरीत अर्थवाला [को॰]।

विरुद्धार्थदीपक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] काव्यादर्श के अनुसार दीपक अलंकार का एक भेद जिसमें एक ही बात से दो परस्पर विरुद्ध क्रियाओं का एक साथ होना दिखाया जाता है । जैसे;—जलकण मिली वायु 'ग्रीष्मताप' को घटाती और 'विरहताप' को बढ़ाती है ।

विरुद्धाशन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वर्जित आहार । अखाद्य भोजन [को॰]।

विरुद्धोक्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विरोधपूर्ण कथन । प्रतिकूल कथन ।

विरुध (पु)—वि॰ [सं॰ विरुद्ध] दे॰ 'विरुद्ध' । उ॰— कहे बले छवकाल विरुध भाषा विसतारैं ।—रघु॰ रू॰, पृ॰ १४ ।

विरुल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का साँप [को॰]।

विरुला (पु)†—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विरुह] दे॰ 'विरवा' । उ॰—कलियाय कुरै को रह्यो विरुला परि लेत नहीं छवि फूलि भली ।—शकुंतला, पृ॰ १०७ ।

विरूक्ष—वि॰ [सं॰] कठोर । कर्कश [को॰]।

विरूक्षण^1 संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. रूखा करना । २. गर्हण । निंदा । ३. शाप । अभिशाप । ४. रक्तस्राव को रोकनेवाली दवा [को॰]।

विरूक्षण^2—वि॰ १. सुखाने या रूक्ष करनेवाला । २. संकोचक [को॰]।

विरूक्षित—वि॰ [सं॰] १. जो रूखा किया हुआ हो । २. लेपन किया हुआ । आवृत्त [को॰]।

विरूज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक अग्नि जिसका जल में होना कहा गया है ।

विरूढ़—वि॰ [सं॰ विरूढ] १. आरूढ़ । चढ़ा हुआ । २. अंकुरित । जमा हुआ । बीज से फूटा हुआ । ३. जात । उत्पन्न । पैदा । ४. खूब जमा हुआ । खूब बैठा हुआ । खूब गड़ा या धँसा हुआ । ५. मुकुलित । खिला हुआ । (को॰ । ६. भरा हुआ (घाव) (को॰) ।

विरूढ़क—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विरूढक] १. इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम । २. एक शाक्यवंशीय राजा का नाम । ३. एक लोकपाल का नाम । ४. अंकुरित अन्न (को॰) ।

विरूढ़ि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विरूढि] १. भेद या फोड़कर ऊपर उठना । २. अंकुरित होना । अंखुआ फूटना (को॰) ।

विरूथिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वैशाख कृष्ण एकादशी । वरूथिनी एकादशी ।

विरूप^1— वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ विरूपा, विरूपी] १. कई रंग रूप का । कई शकलों का । तरह तरह का । २. कुरूप । बदसूरत । भद्दा । ३. विकटाकार । ३. बदला हुआ । परिवर्तित । ४. शोभाहीन । शोभारहित । ५. जो अनुरूप न हो । विरुद्ध । अप्राकृतिक । उलटा । ६. दूसरी तरह का । बिलकुल भिन्न । ७. जिसमें एक कम हो (को॰) ।

विरूप^2—संज्ञा पुं॰ १. पिपरामूल । २. पांडुरोग (को॰) । ३. शिव का एक नाम (को॰) । ४. एक असुर (को॰ । ५. कुरूपता । भद्दी आकृति (को॰) । ६. रूप, प्रकृति या चरित्र की भिन्नता (को॰) ।

विरूपक^1—वि॰ १. कुरूप । २. भयंकर । कराल । ३. अनुमित [को॰]।

विरूपक^2—संज्ञा पुं॰ १. एक असुर । २. पुकारने का अथवा उपाधिनाम [को॰]।

विरूपकरण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कुरूप बनाने की क्रिया । २. क्षति या हानि पहुँचाना [को॰]।

विरूपचक्षु—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विरूपचक्षुस्] त्रिनेत्र । शिव [को॰]।

विरूपता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विरूप होने का भाव । २. कुरूपता । बदसूरती । ३. भद्दापन । बेढंगापन ।

विरूप परिणाम—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एकरूपता से अनेकरूपता अर्थात् निर्विशेषता से विशेषता की ओर परिवर्तन । एक मूल प्रकृति से अनेक विकृतियों की ओर गति ।

विशेष—सांख्य में परिणाम दो प्रकार के कहे गए हैं—स्वरूप परिणाम और विरूप परिणाम । 'विरूप परिणाम' द्वारा प्रकृति से नाना रूप पदार्थों का विकास होता है; और 'स्वरूप परिणाम' द्वारा फिर नाना पदार्थ क्रमशः अपने रूप खोते हुए प्रकृति में लीन होते हैं । एक परिणाम सृष्टि की ओर अग्रसर होता है और दूसरा लय की ओर ।

विरूपरूप—वि॰ [सं॰] कुरूप । बदशक्ल [को॰]।

विरूपा¹—वि० स्त्री० [सं०] कुरूप। बदसूरत। उ०—शूर्पणखै जो विरूपा करी तुम तातें दियो हमहूँ दुख भारी।—केशव (शब्द०)।

विरूपा²—संज्ञा स्त्री० १. दुरालभा। २. अतिविषा। ३. यम की पत्नी का नाम।

विरूपाक्ष¹—वि० [सं०] जिसके नेत्र बेढंगे या डरावने हों।

विरूपाक्ष²—संज्ञा पुं० १. शिव। शंकर। २. शिव के एक गण का नाम। ३. रावण का एक सेनानायक जिसे हनुमान ने प्रमोद वन उजाड़ने के समय मारा था। ४. एक राक्षस का नाम जिसे सुग्रीव ने राम-रावण-युद्ध में मारा था। ५. रावण का एक मंत्री। ६. एक दिग्गज का नाम। ७. एक नाग का नाम।

विरूपिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुरूप स्त्री। बदसूरत औरत।

विरूपी¹—वि० [सं० विरूपिन्] [वि० स्त्री० विरूपिणी] १. बदसूरत। कुरूप। उ०—हरि रुकमिनि मुख देखि छाँड़ि तब दीन्हेउ। मोछ गोछ शिर मुंडि विरूपी कीन्हेउ।—अकबरी०, पृ० ३४४। २. डरावनी सूरत का।

विरूपी²—संज्ञा पुं० कृकलास। गिरगिट।

विरूर—[सं० (उप०) वि० + हिं० रूरि या सं० विरूढ, विरूह (=अंकुरित, जमा हुआ)] १. अत्यंत सुंदर। हृदयहारी। २. जमा हुआ। एकत्र। उ०—अग्गैं सुदंति पंतिय विरूर। षलकंत अंदु मद झरत भूर।—पृ० रा०, १।६३४।

विरेक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दस्तावर दवा। जुलाब। विरेचन। २. आँत की सफाई। मल के निकालने की क्रिया (को०)।

विरेचक—वि० [सं०] दस्त लानेवाला। मलभेदक। दस्तावर।

विरेचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मलभेदक औषध। दस्त लानेवाली दवा। जैसे,—रेंड़ी का तेल। २. दस्त लाना। मलभेद करने की क्रिया।

विशेष—वैद्यक के ग्रंथों में विरेचन की विधि विशेष विस्तार से लिखी है; क्योंकि कुपित मल ही सब रोगों का कारण कहा गया है। पूरी विधि के साथ विरेचन का विधान स्नेहन, स्वेदन और वमन के उपरांत किया गया है। शरद और वसंत में विरेचन विधेय ठहराया गया है। बालक, वृद्ध, क्षतग्रस्त, रोग से अत्यंत क्षीण, भयार्त, श्रांत, पिपासार्त और मतवाले को विरेचन नहीं कराना चाहिए।

विरेचित—वि० [सं०] विरेचन कराया हुआ। दस्त लाया हुआ [को०]।

विरेची—वि० [सं० विरेचिन्] दस्त लानेवाला [को०]।

विरेच्य—वि० [सं०] विरेचन के योग्य। जो दस्तावर दवा देने के योग्य हो।

विशेष—वैद्यक के ग्रंथों में नीचे लिखे रोगियों को विरेचन के योग्य कहा है— गुल्म, बवासीर, विस्फोटक (चेचक), कमल रोग, जीर्णज्वार, उदररोग, विष, पेट की पीड़ा, योनि और शुक्रगत रोग, प्लीहा, कुष्ठ, मेह, श्लीपद (फीलपाँव), उन्माद, काश, श्वास, विसर्प इत्यादि से पीड़ित रोगियों को विरेचन देना चाहिए।

विरेफ—संज्ञा पुं० [सं०] १. सरिता। नदी। २. 'र' वर्ण का अभाव या अनुपस्थिति [को०]।

विरेभित—वि० [सं०] ध्वनित। शब्दित [को०]।

विरोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. चमक। दीप्ति। २. रश्मि। किरण। ३. छिद्र। छेद। ४. चंद्रमा। ५. विष्णु। ६. प्रभात। प्रातःकाल (ऋग्वेद)।

विरोग¹—संज्ञा पुं० [सं०] स्वस्थता। निरोगता [को०]।

विरोग²—वि० स्वस्थ। तंदुरुस्त [को०]।

विरोचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. चमकना। प्रकाशित होना। २. दीप्तियुक्त। प्रकाशमान। ३. सूर्य। ४. चंद्र। ५. अग्नि। ६. मदार का पौधा। आक। ७. विष्णु। ८. रोहित वृक्ष। ९. श्योनाक वृक्ष। १०. घृत करंज। ११. प्रह्लाद के पुत्र और बलि के पिता। १२. आलोचना। स्थापन (को०)।

विरोचनसुत—संज्ञा पुं० [सं०] राजा बलि।

विरोचिष्णु—वि० [सं०] चमकीला। दीप्तिमान् [को०]।

विरोद्धा—वि० [सं० विरोद्धृ] विरोध करनेवाला [को०]।

विरोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेल न होना। किसी दूसरी वस्तु के साथ अत्यंत भिन्नता। विपरीत भाव। अनैक्य। जैसे,—इन दोनों भावों का परस्पर विरोध है। २. मेल का न होना। वैर। शत्रुता। बिगाड़। अनबन। जैसे,—उन दोनों का विरोध बहुत पुराना है।

यौ०—वैर विरोध।

३. दो बातों का एक साथ न हो सकना। विप्रतिपत्ति। व्याघात। असहभाव। जैसे,—आपके कथन में पूर्वापर विरोध है। ४. उलटी स्थिति। सर्वथा दूसरे प्रकार की स्थिति। ५. नाश। ६. नाटक का एक अंग, जिसमें किसी बात का वर्णन करते समय विपत्ति का आभास दिखाया जाता है। ७. एक अर्थालंकार जिसमें जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य में से किसी एक का दूसरी जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य में से किसी एक के साथ विरोध होता है। जैसे,—तुम्हारे वियोग में उस कामिनी का मलयानल दावानल हो रहा है। यहाँ जाति के साथ जाति का विरोध है। इसी प्रकार यह कहना गुण का द्रव्य के साथ जातिविरोध होगा —'तुम्हारे बिना चंद्रमा विष की ज्वाला से पूर्ण हो गया'। ८. प्रतिरोध। रुकावट (को०)। ९. नाकेबंदी। घेरा। आवरण (को०)। १०. संकट। दुर्भाग्य (को०)। ११. कलह। असहमति (को०)।

विरोधक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरोध करनेवाला। २. नाटक में वे विषय जिनका वर्णन निषिद्ध हो।

विरोधकारक—वि० [सं०] झगड़ालू। विरोधी।

विरोधकारी—वि० [सं० विरोधकारिन्] विरोध उत्पन्न करनेवाला।

विरोधकृत्—वि० संज्ञा पुं० [सं०] विरोधी। शत्रु [को०]।

विरोधक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] शत्रुता। झगड़ा। कलह [को०]।

विरोधन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विरोधी, विरोधित, विरोध्य] १. विरोध करना। बैर करना। २. नाश। बरबादी। ३. नाटक में विमर्ष का एक अंग जो उस समय होता है, जब किसी कारण-वश कार्यध्वंस का उपक्रम (सामान) होता है। जैसे—कुरुक्षेत्र के युद्ध के अंत होने के निकट जब दुर्योधन बच रहा था, तब भीम का यह प्रतिज्ञा करना कि 'यदि दुर्योधन को न मारूँगा तो अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा'। सब बात बन जाने पर भी भीम का यह कहना युधिष्ठिर आदि के मन में यह विचार लाया कि यदि दुर्योधन न मारा गया तो हम सब लोग भी भीम के बिना कैसे रहेंगे। ४. बाधा। रुकावट (को०)। ५. प्रतिरोध। मुकाबिला (को०)। ६. परस्पर विरोध। असंगति (को०)। ७. कलह (को०)।

विरोधना (पु)—क्रि० स० [सं० विरोधन] विरोध करना। अपने विरुद्ध करना। वैर करना। शत्रुता या झगड़ा करना। उ०—साईं ये न विरोधिए गुरु, पंडित, कवि, यार।—गिरिधर (शब्द०)।

विरोधपरिहार—संज्ञा पुं० [सं०] झगड़ा मिटना। असामंजस्य या विरोध का दूर होना [को०]।

विरोधवचन—संज्ञा पुं० [सं०] विरुद्ध कथन। किसी के विरोध में कही गई बात [को०]।

विरोधशमन—संज्ञा पुं० [सं०] झगड़ा मिटना।

विरोधाचरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. हित के प्रतिकूल आचरण। खिलाफ काररवाई। २. शत्रुता का व्यवहार।

विरोधाभास—संज्ञा पुं० [सं०] एक अर्थालंकार जिसमें जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य का विरोध दिखाई पड़ता है। विशेष दे० 'विरोध'।

विरोधित—वि० [सं०] १. जिसका विरोध किया गया हो। २. क्षति-ग्रस्त (को०)। ३. अस्वीकृत। निराकृत (को०)।

विरोधिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विरोध। शत्रुता। वैर। २. नक्षत्रों की प्रतिकूल दृष्टि। (फलित ज्योतिष)।

विरोधिनी—वि० स्त्री० [सं०] १. विरोध करनेवाली। वैरिन। २. विरोध करानेवाली। दो आदमियों में झगड़ा लगानेवाली। ३. एक राक्षसी जो दुःसह की पुत्री थी (को०)।

विरोधिश्लेष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विरोधीश्लेष'।

विरोधी^{1}—वि० [सं० विरोधिन्] [स्त्री० विरोधिनी] १. विरोध करनेवाला। हित के प्रतिकूल चलनेवाला। कार्यसिद्धि में बाधा डालनेवाला। २. प्रतिद्वंद्वी। विपक्षी। शत्रु। बैरी। दुश्मन। ३. मुकाबिला करनेवाला। घेरा डालनेवाला (को०)। ४. झगड़ालू (को०)। ५. अनुकूल न पड़नेवाला। (अन्न) (को०)।

विरोधी^{2}—संज्ञा पुं० १. साठ संवत्सरों में से पचीसवाँ संवत्सर। २. शत्रु। बैरी (को०)।

विरोधी श्लेष—संज्ञा पुं० [सं०] केशव के अनुसार श्लेष अलंकार का एक भेद, जिसमें श्लिष्ट शब्दों द्वारा दो पदार्थों में भेद, विरोध या न्यूनाधिकता दिखाई जाती है। जैसे, उ०—कृष्ण हरे हरये हरैं संपति, शंभु विपत्ति यहै अधिकाई। जातक काम अकामन के हित, घातक काम सकाम सहाई। इसमें यह दिखाया गया है कि हर (शिव) दासों पर हरि की अपेक्षा अधिक कृपा करते हैं। कृष्ण धीरे धीरे संपत्ति हरते हैं और शिव विपत्ति। हरि काम को उत्पन्न करनेवाले हैं और निष्काम लोगों के हितू हैं; शिव काम के घातक हैं, पर कामना रखनेवालों के सहायक हैं। यहाँ 'काम' शब्द के 'कामदेव' और 'कामना' दो अर्थ हैं।

विरोधोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विरोधी उक्ति। विरोध में कही गई बात [को०]।

विरोधोपमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] उपमा अलंकार का एक भेद, जिसमें किसी वस्तु की उपमा एक साथ दो विरोधी पदार्थों से दी जाती है। जैसे,—'तुम्हारा मुख चंद्रमा और कमल के समान है।' यहाँ कमल और चंद्रमा इन दोनों उपमानों में विरोध है।

विरोध्य—वि० [सं०] १. विरोध के योग्य। २. जिसका विरोध करना हो।

विरोपण^1—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विरोपणीय, विरोपित, विरोप्य] १. लेपन। लेप करना। २. लीपना। पोतना। तह चढ़ाना। लेव चढ़ाना। ३. जमीन में पौधा लगाना। रोपना। ४. घाव का भरना (को०)।

विरोपण^2—वि० १. पौधा रोपनेवाला। २. (औषधादि) जिससे घाव भर जाय (को०)।

विरोपित—वि० [सं०] १. रोपा हुआ। २. भरा हुआ।

यौ०—विरोपितव्रण = जिसका घाव भर गया हो।

विरोम—वि० [सं० विरोमन्] रोमरहित। बिना रोएँ का।

विरोमा—वि० [सं० विरोमन्] दे० 'विरोम' [को०]।

विरोलना (पु)†—क्रि० सं० [सं० विलोडन] विलोड़ना। मंथन करना। विवेचित करना। उ०—मुंद्रा संतोष शर्म पति झोली। गुरमुखि जोगी तत्तु विरोली।—प्राण०, पृ० १०६।

विरोलित—वि० [सं०] अस्तव्यस्त। तितर बितर किया हुआ [को०]।

विरोस (पु)—वि० [सं० विरोष] रोष से पूर्ण। उ०—मुष हास नेन विरोस। नासाग्र उग्र न जोस।—पृ० रा०, ६१।१४६।

विरोह—संज्ञा पुं० [सं०] १. उद्भव स्थान। उद्गम। बुनियाद। मूल। २. अंकुरित होना। उगना [को०]।

विरोहण^1—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विरोहणीय विरोहित] १. एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर लगाना। रोपना। २. अंकुरित होना (को०)। ३. एक नाग (को०)।

विरोहण^2—वि० १. दे० 'विरोही'। २. जिससे घाव भर जाय (को०)।

विरोही—वि० [सं० विरोहिन्] [वि० स्त्री० विरोहिणी] १. रोपनेवाला। पौधा लगानेवाला। २. अँखुआ फोड़नेवाला। अंकुरित होनेवाला (को०)।

विरौनी—संज्ञा स्त्री० [देश०] बाजरा, मड़ुवा, कोदो वगैरह की एक प्रकार की जोताई जो उनके पौधे कुछ ऊंचे होने पर की जाती है।

विर्त‡—संज्ञा स्त्री० [सं० वृत्ति] दे० 'वृत्ति'। उ०—तस वह मोती आइ निसारै। तोहि संग परमद विर्त सवारैं।—इंद्रा०, पृ० ३९।

विलंघन—संज्ञा पुं० [सं० विलङ्घन] १. कूद या लाँघकर पार करने की क्रिया। २. उपवास करना। लंघन करना। ३. किसी वस्तु के भोग से अपने आपको रोक रखना। वंचित रखना। ४. अपराध। अतिक्रमण। क्षति (को०)।

विलंघना—संज्ञा स्त्री० [सं० विलङ्घना] १. फाँदना। उल्लंघन करना। २. उपवास या लंघन करना। ३. नीचा दिखाना या पराजित करना [को०]।

विलंघनीय—वि० [सं० विलङ्घनीय] १. पार करने योग्य। लाँघने योग्य। २. नीचा दिखाने योग्य। परास्त करने योग्य।

विलंघित^{1}—वि० [सं० विलङ्घित] १. जो परास्त हुआ हो। जिसने नीचा देखा हो २. जो विफल हुआ हो। निष्फल। ३. लाँघा हुआ। ४. अतिक्रांत। आगे बढ़ा हुआ (को०)।

विलंघित^{2}—संज्ञा पुं० उपवास। भोजनादि न करना [को०]।

विलंघी—वि० [सं० विलङ्घिन्] १. लाँघनेवाला। डाक जानेवाला। अतिक्रमण करनेवाला। २. चढ़नेवाला [को०]।

विलंघ्य—वि० [सं० विलङ्घ्य] १. पार करने योग्य। (नदी आदि)। २. परास्त होने योग्य। वश में आने योग्य। ३. करने योग्य। सहज।

विलंब^{1}—वि० [सं० विलम्ब] आवश्यकता, अनुमान आदि से अधिक समय (जो किसी बात में लगे)। बहुत काल। अतिकाल। देर।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

विलंब^{2}—संज्ञा पुं० १. लटकना। टँगना। २. धीमापन। देरी। दीर्घसूत्रता। सुस्ती। ३. एक संवत्सर का नाम।

विलंबन—संज्ञा पुं० [सं० विलम्बन] [वि० विलंबनीय, विलंबी, विलंबित] १. देर करना। विलंब करना। २. लटकना। टँगना। ३. सहारा पकड़ना। टेकना।

विलंबना (पु)—क्रि० अ० [सं० विलम्बन] १. देर करना। विलंब करना। आवश्यकता से अधिक समय लगाना। २. रम जाना। मन लगने के कारण बस जाना। उ०—भंवर कँवल रस बेधिया, अनत न भरमै जाइ। तहाँ वास विलंबिया, मगन भया रस खाइ।—दादू (शब्द०)। ३. लटकना। ४. सहारा लेना।

विलंबिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विलम्बिका] एक प्रकार का रोग जो विदग्धाजीर्ण द्वारा उत्पन्न होता है। उ०—जिस (अजीर्ण) की चिकित्सा नहीं हो सके उसे विलंबिका रोग कहते हैं।—माधव०, पृ० ६७।

विशेष—इस रोग में खाया हुआ अन्न कफ और वायु से दूषित होकर पेट में दुःख देता है। न तो वमन होता है, न मल निकलता है।

विलंबित^{1}—वि० [सं० विलम्बित] लटकता हुआ। झूलता हुआ। उ०—राजत गोमक की तन राजि वहै रस बीच नदी सुख देनी। आगे भई प्रतिबिंबित पाइ विलंबित जो मृगनैनी कि बेनी।—द्विज (शब्द०)। २. जिसमें विलंब या देर हुई हो। ३. आश्रित। सुसंबद्ध (को०)। ४. मंद। दीर्घसूत्री (को०)। ५. मंथर। संगीत में द्रुत का उलटा जैसे, विलंबित लय या ताल।

यौ०—विलंबितगति = एक छंद। एक वर्णवृत्त। विलंबितफल = जिसका फल विलंब से प्राप्त हो।

विलंबित^{2}—संज्ञा पुं० १. सुस्त चलनेवाला जानवर। जैसे,—हाथी, गैंड़ा, भैंस इत्यादि। २. सुस्ती। देरी (को०)।

विलंबित^{3}—क्रि० वि० शनैः शनैः। मंद मंद [को०]।

विलंबी^{1}—वि० [सं० विलम्बिन्] [वि० स्त्री० विलंबिनी] १. लटकता हुआ। झूलता हुआ। २. विलंब करनेवाला। देरी करनेवाला। दीर्घसूत्री (को०)।

विलंबी^{1}—संज्ञा पुं० साठ संवत्सरों में से बत्तीसवाँ संवत्सर।

विलंभ—संज्ञा पुं० [सं० विलम्भ] १. उदारता। २. दान। ३. उपहार। भेंट।

विल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'बिल'^{1}।

विलक्खा (पु)—वि० [सं० वि० + लक्ष्य, प्रा० विलक्ख, हिं० बिलखना] उदास। व्याकुल। बिलखता हुआ। व्यथित। उ०—सालूरा पाँणी विना, रहइ बिलक्खा जेम।—ढोला०, दू० १७३।

विलक्ष—वि० [सं०] १. अचंभे में पड़ा हुआ। आश्चर्यचकित। २. लज्जित। ३. घबराया हुआ। व्याकुल। विह्वल। व्यस्त। ४. जिसके कोई विशेष लक्षण या चिह्न न हों (को०)। ५. उद्देश्य या लक्ष्यरहित (को०)। ६. निशाना चूक जानेवाला (को०)। ७. असाधारण। अपूर्व। ८. कृत्रिम। बनावटी (को०)।

विलक्षण^{1}—वि० [सं०] १. साधारण से भिन्न। असाधारण। अपूर्व। अद्भुत। उ०—इस युग में न केवल राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से ही देश को उन्नति हुई वरन् हिंदी काव्य का भी विलक्षण उत्कर्ष हुआ।—अकबरी०, पृ० ६। २. अनोखा। अनूठा। ३. भिन्न। इतर (को०)। ४. जिसमें कोई विशेष लक्षण या चिह्न न हो (को०)। ५. अशुभ लक्षणों से युक्त (को०)। ६. निस्तेज। बुझी हुई। निष्प्रभ (को०)।

विलक्षण^{2}—संज्ञा पुं० १. निष्फल या व्यर्थ स्थिति। २. गौर से देखना। अवेक्षण करना [को०]।

विलक्षणता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विलक्षण होने का भाव। अपूर्वता। अद्भुतता। अनोखापन।

विलक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की शय्या [को०]।

विलक्षन—वि० [सं० विलक्षण] दे० 'विलक्षण'। उ०—आपके बिना या प्रकार निवेदन कौ विलक्षन मार्ग दिखायो, सो आप प्रभु हो।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० २४०।

विलक्षित—वि० [सं०] १. जो विशेष रूप से लक्षित किया गया हो। २. चिह्नरहित। ३. रुष्ट। क्षुब्ध। ४. अभेदित। जिसका भेदन न किया गया हो। ५. हतबुद्धि। आश्चर्यचकित। ६. उद्विग्न। घबराया हुआ। व्याकुल [को०]।

विलक्ष्य—वि० [सं०] १. लक्ष्यहीन। २. लक्ष्य चूक जानेवाला। जैसे, बाण या लक्ष्य पर फेंकी हुई कोई वस्तु [को०]।

विलखना^{1}— क्रि० अ० [सं० विकल, या विलक्ष्य, प्रा० विलक्ख] दुःखी होना। दे० 'बिलखना'।

विलखना(पु)^2—क्रि० अ० [सं० लक्ष] ताड़ना। पता पाना। लक्ष करना।

विलखाना क्रि० स० [हिं० बिलखना] विलखना का सकर्मक रूप। विकल करना। दे० 'बिलखाना'^{1}।

विलग^1—वि० [हिं० वि (उप०)+लगना] अलग। पृथक्।

विलग^2—संज्ञा पुं० अंतर। भेद। फरक।

विलगाना^{1}—क्रि० अ० [हिं० विलग+ना (प्रत्य०)] १. अलग होना। पृथक् होना। २. पृथक् पृथक् दिखाई पड़ना। विभक्त या अलग दिखाई पड़ना।

विलगाना^{2}—क्रि० स० पृथक् करना। अलग करना। दे० 'बिलगाना'।

विलगित—वि० [सं०] लगा हुआ। लग्न। संबद्ध [को०]।

विलग्न^1—वि० [सं०] १. विशेष रूप से लगा या जुड़ा हुआ। २. आद्धृत। ३. लटकता हुआ। ४. पिंजरे में बंद। ५. पतला। कोमल। ६. व्यतीत (को०)। ७. संलग्न। स्थिर (को०)।

विलग्न^2—संज्ञा पुं० १. जन्मकुंडली। जन्मपत्री। २. राशि का उदय। ३. कटि। कमर। ४. नितंब [को०]।

विलग्नता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विलगता। अलग होने की क्रिया। अलगाव। उ०—कांग्रेस से अपनी विलग्नता सूचन की।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २७१।

विलच्छन—वि० [सं० विलक्षण, प्रा० विलक्खन, विलच्छन] दे० 'विलक्षण'।

विलछाना(पु)—क्रि० अ० [सं० वि+लक्ष (देखना)] दे० 'बिलछाना'। उ०—धर्मनी यह अनुराग की बानी। तुत तत देख कहूँ बिलछानी।—कबीर सा०, पृ० ७।

विलज्ज—वि० [सं०] निर्लज्ज। बेशर्म [को०]।

विलज्जित—वि० [सं०] लजाया हुआ। शर्मिंदा [को०]।

विलपन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बातचीत या गपशप करना। २. विलाप करना। शोक प्रकट करना। ३. चोकट। तलछट।

यौ०—विलपनविनोद = रोकर दुःख हलका करना।

विलपना(पु)—क्रि० अ० [सं० विलाप] विलाप करना। रोना।

विलपाना(पु)—क्रि० स० [हिं० विलपना का सक० रूप] दूसरे को विलाप करने में प्रवृत्त करना। रुलाना।

विलपित^1—वि० [सं०] जो विलाप कर रहा हो। जिसने रुदन किया हो।

विलपित^2—संज्ञा पुं० विलाप। रुदन [को०]।

विलब्ध - वि० [सं०] १. दिया हुआ। पाया हुआ। २. अलग किया हुआ।

विलब्धि—संज्ञा [स्त्री०] १ दूर करना। हटाना। २. प्राप्ति [को०]।

विलम(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विलम्ब] देर। अबेर। विलंब।

विलमना(पु)—क्रि० अ० [सं० विलम्बन] दे० 'बिलमना'।

विलमाना—क्रि० स० [सं० विलम्बन>हिं० विलमना का सक० रूप] दे० 'बिलमाना'। उ०—मुझै नाहक श्यामसुंदर इतनी देर विलमाए रहे थे।—श्यामा०, पृ० ९२।

विलय—संज्ञा पुं० [सं०] १. विलीन होने की क्रिया या भाव। लोप। अस्त। २. मृत्यु। मौत। ३. नाश। ४. प्रलय। ५. द्रवित होना। पिघलना। विगलन (को०)।

विलयन—संज्ञा पुं० [सं०] १. लय को प्राप्त होना। विलीन होना। २. घुल जाना। मिलकर एक होना। ३. हटाना। दूर करना (को०)। ४. पतला करना (को०)। ५. पतला करनेवाली ओषधि (को०)।

विललंती(पु)—वि० स्त्री० [सं० विलपन] विलाप करती हुई। दुःखी। व्यग्र। व्याकुल। उ०—पंथी हाथ सँदेसड़इं, धन विललंती देह। पगसूँ काढ़इ लोहरी, उर आँसुआँ भरेह।—ढोला०, दू० १३७।

विलवंती—वि० [सं० विलप्, प्रा० विलव (= रोना)] विलाप करती हुई।—पृ० रा०, ६१।११६५।

विलसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. चमकने की क्रिया। २. क्रीड़ा। प्रमोद।

विलसना(पु)—क्रि० अ० [सं० विलस] १. शोभा पाना। २. विलास करना। क्रीड़ा करना। ३. आनंद मनाना। दे० 'बिलसना'।

विलसाना(पु)—क्रि० स० [हिं० बिलसना] दे० 'बिलसाना'।

विलसित^1—वि० [सं०] १. चमकीला। चमकता हुआ। २. प्रकट। व्यक्त। ३. शोभित। ४. विनोदी [को०]।

विलसित^2—संज्ञा पुं० १ चमक। दीप्ति। २. प्राकट्य। अभिव्यक्ति। ३. क्रीड़ा। विनोद। ४ फल। परिणाम ५. भंगिमा [को०]।

विलस्त—संज्ञा पुं० [फा० बालिस्त] बित्ता। अँगूठे के सिरे से छिगुनी के सिरे तक की लंबाई का परिमाण। उ०—सवा विलस्त की जाकी देही। तामें प्रस्थित जीव सनेही।—अष्टांग०, पृ० ७९।

विलहबंदी—संज्ञा स्त्री० [?] जिले के बंदोबस्त का वह संक्षिप्त ब्योरा जिसमें प्रत्येक महाल का नाम, काश्तकारों के नाम और उनके लगान आदि का ब्योरा लिखा होता है। इसे वितरबंदी भी कहते हैं।

विला—संज्ञा स्त्री० [सं० इरा, इडा (= पृथ्वी)] पृथ्वी। वसुंधरा।

विलाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की चिड़िया।

विलाना—क्रि० अ० [सं० विलयन] दे० 'बिलाना'।

विलाप—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिलख बिलखकर या विकल होकर रोने की क्रिया। रोकर दुःख प्रकट करने की क्रिया। क्रंदन। रुदन। २. शोक व्यक्त करना। रंजीदा होना।

विलापन^{१}— वि० [सं०] १. रुलानेवाला। २. द्रवित करनेवाला। पिघला देनेवाला। ३. नाशक। नष्ट करनेवाला [को०]।

विलापन^{२}—संज्ञा पुं० १. रुलानेवाला कार्य। २. नाश। विध्वंस। ३. नष्ट करने या द्रवित करने का साधन। ४. मृत्यु। ५. शिव का एक गण (को०)।

विलापनाⓟ^{१}—क्रि० अ० [सं० विलापन] शोक करना। विलाप करना। रुदन करना।

विलापना^{२}—क्रि० स० [सं० विरोपण] वृक्ष रोपना या लगाना।

विलापयिता—वि० [सं० विलापयितृ] १. द्रवित करने या पिघलानेवाला। २. विलाप करनेवाला [को०]।

विलापित—वि० [सं०] पिघलाया हुआ [को०]।

विलापी—वि० [सं० विलापिन्] विलाप करनेवाला [को०]।

विलायत—संज्ञा पुं० [अ०] १. पराया देश। दूसरों का देश। दूरस्थ देश। दूर का देश। विशेषत: आजकल की बोलचाल में यूरोप या अमेरिका का कोई देश। (पहले इस शब्द का प्रयोग ईरान, तुर्किस्तान आदि के लिये होता था।) जैसे—आप दो बार विलायत हो आए हैं। उ०—एक बड़े बाप के बेटे विलायत जाकर वहाँ की……।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ७४। ३. वली होने का भाव या पद (को०)।

विलायती—वि० [अ०] १. विलायत का। विदेशी। २. दूसरे देश का बना हुआ। २. अन्य देश का रहनेवाला। परदेशी। उ०—अब विदेशी राजा के होने से नौकरियाँ विलायतियों को विशेषकर दी जाती हैं।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २६८।

विलायती अनन्नास—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + अनन्नास] रामबाँस। रामबान। विशेष दे० 'रामबाँस'।

विलायती कद्दू—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + कद्दू] एक विशेष प्रकार का कद्दू जो तरकारी के काम में आता है।

विलायती कपड़ा—संज्ञा पुं० [हिं०] विदेशी वस्त्र। विशेषत: यूरोप का बना हुआ।

विलायती कासनी—संज्ञा स्त्री० [हिं० विलायती + कासनी] एक प्रकार की कासनी जिसकी पत्तियाँ दवा के काम में आती हैं।

विलायती कीकर—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + कीकर] पहाड़ी कीकर जो हिमालय पर पाँच हजार फुट की ऊँचाई तक होता है।

विशेष—यह बाड़ लगाने के काम आता है। यह जाड़े के दिनों में खूब फूलता है और इसके फूलों से बहुत अच्छी महक निकलती है। यूरोप में इन फूलों से कई प्रकार के इत्र आदि बनाए जाते हैं। इसे पर्स्सी बबूल भी कहते हैं।

विलायती छछूँदर—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + छछूँदर] एक प्रकार का छछूँदर जो इंगलैंड के पश्चिमी ओर के प्रदेशों में बहुत पाया जाता है।

विशेष—यह पृथ्वी के नीचे सुरंग में रहता है और प्रायः दूध पीता है। इसे अंधकार अधिक प्रिय होता है। इसके अगले पैर चौड़े और पट्टेदार तिरछे होते हैं। इसकी आँखें छोटी, थुथना लंबा और नोकदार, बाल सघन और कोमल होते हैं। इसकी श्रवणशक्ति बहुत तेज होती है।

विलायती नील—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + नील] एक विशेष प्रकार का नीला रंग जो चीन से आता है।

विलायती पटुआ—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + पटुआ] लाल पटुआ। लाल सन।

विलायती पात—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + पटुआ] रामबाँस। कृष्ण केतकी।

विलायती पानी—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + पानी] शराब। मदिरा। उ०—तौ भी भाँति भाँति के विलायती पानी।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २३३।

विलायती प्याज—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + प्याज] एक प्रकार का प्याज जिसमें गाँठ नहीं होती, सिर्फ गूदेदार जड़ होती है।

विलायती बैंगन—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + बैंगन] एक प्रकार का बैंगन या भंटा जो इस देश में यूरोप से आया है।

विशेष—यह क्षुप जाति की वनस्पति है जो प्रतिवर्ष बोई जाती है। इसका क्षुप दो ढाई हाथ ऊँचा होता है। इसकी डालियाँ भूमि की ओर झुकी अथवा भूमि पर पसरी रहती हैं। पत्ते आलू के पत्तों के से होते हैं। डंडियों के बीच बीच से सींकें निकलते हैं जिनपर गुच्छे में फूल आते हैं। ये फूल साधारण बैंगन के फूलों के सदृश, पर उनसे छोटे होते हैं। इनका रंग पीला होता है। फल प्राय: दो से चार इंच तक के गोलाकार और कुछ चिपटे (नारंगी के समान) होते हैं। कच्चे रहने पर उनका रंग हरा और पकने पर लाल चमकीला हो जाता है। इसकी तरकारी, चटनी आदि बनती है। स्वाद में यह कुछ खट्टापन लिए होता है। रासायनिक विश्लेषण से पता लगता है कि इसमें २३ सैकड़े लोहे का अंश होता है। इसमें 'ए' और 'सी' विटामिन होता है। अत: यह रक्तवर्धक है। अँगरेज लोग इसका अधिक व्यवहार करते हैं। इसे अंगरेजी में टोमैटो और हिंदी में टमाटर कहते हैं।

विलायती भंटा—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'विलायती बैगन'।

विलायती मिट्टी—संज्ञा स्त्री० [हिं०] विदेश में होनेवाली ऐसी मिट्टी जिससे पात्र और खिलौने बनते हैं। उ०—विलायती मिट्टी, पत्थर, ईंट।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २३३।

विलायती मेंहदी—संज्ञा स्त्री० [हिं० विलायती + मेंहदी] मेंहदी की जाति का एक प्रकार का पौधा। सनट्ट।

विशेष—यह पौधा प्रायः बाढ़ के रूप में लगाया जाता है। यह भारत, बलोचिस्तान, अफगानिस्तान, अरब, अफ्रिका आदि सभी स्थानों में होता है। यह वर्षा और शीतकाल में फूलता है। इसकी लकड़ी बहुत कड़ी होती है और इसपर खुदाई का काम बहुत अच्छा होता है।

विलायती लहसुन—संज्ञा पुं० [हिं० विलायती + लहसुन] एक प्रकार का लहसुन जो मसाले के काम में आता है।

विलायती सिरिस—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ विलायती + सिरिस] एक प्रकार का सिरिस वृक्ष ।

विशेष—यह पौदा विदेश से यहाँ आया है, पर अब यहाँ भी होने लगा है। यह नीलगिरि पर्वत पर बहुतायत से होता है। पंजाब में भी यह पाया जाता है। इसकी छाल प्राय: चमड़ा सिझाने के काम में आती है।

विलायती सेम—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ विलायती + सेम] एक प्रकार की सेम जिसकी फलियाँ साधारण सेम से कुछ बड़ी होती हैं।

विलायन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] प्राचीन काल का एक अस्त्र ।

विशेष—कहते हैं, जब इस अस्त्र का उपयोग किया जाता था, तब शत्रु की सेना विश्राम करने लगती थी।

विलायित—वि॰ [सं॰] पिघलाया या द्रवित किया हुआ [को॰]।

विलाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विडाल'।

विलावल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक राग। दे॰ 'बिलावल'।

विलावली—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ विलावल] एक रागिनी जो हिंडोल राग की स्त्री मानी जाती है। (संगीत)।

विलास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. प्रसन्न या प्रफुल्लित करने की क्रिया। २. सुखभोग। आनंदमय क्रीड़ा। मनोरंजन। मनोविनोद। ३. आनंद। हर्ष। ४. संयोग के समय में अनेक हाव भाव अथवा प्रेमसूचक क्रियाएँ जिनसे स्त्रियाँ पुरुषों को अपनी ओर अनुरक्त करती हैं। हाव भाव। नाज नखरा। ५. किसी अंग की मनोहर चेष्टा। जैसे; भ्रूविलास, करविलास। उ॰—भृकुटि विलास जासु जग होई। राम बाम दिस सीता सोई।—तुलसी (शब्द॰)। ६. किसी चीज का हिलना डोलना। जैसे; चपला का विलास। चमक दमक। ७. चमकना। दीप्त होना। ८. आरामतलबी। अतिशय सुखभोग। ९. प्रफुल्लता। उत्साहशीलता। तेजस्विता। (दशरूपक में पुरुष का एक गुण कहा गया है।)

यौ॰—विलासकानन = प्रमदवन। विलासकोदंड, विलासचाप, विलासधन्वा, विलासबाण = कामदेव। विलासमंदिर = केलिभवन। विलासवातायन = बरामदा। छज्जा। विलासविपिन = क्रीड़ाउपवन। विलासवेश्म = क्रीड़ागृह।

विलासक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ विलासिका] १. इधर उधर फिरनेवाला। भ्रमणशील। २. लास्य करनेवाला। नृत्यकर्ता (को॰)।

विलासन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. क्रीड़ा। मनोरंजन। २. रँगरेली। ३. विमोहन [को॰]।

विलासमयी—वि॰ स्त्री॰ [सं॰] विलास से प्रेम करनेवाली। क्रीड़ाशीला। कामवती। उ॰—ज्योतिमयी, हासमयी, विकल विलासमयी।—लहर, पृ॰ ६७।

विलासवती—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] स्वेच्छाचारिणी वा कामुक स्त्री [को॰]।

विलाससामग्री—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] विलास का सामान। प्रसाधन की वस्तुएँ। उ॰—विलास सामग्री मँगाने में शासक वर्ग को फायदा जरूर हुआ।—भा॰ इ॰ रू॰, पृ॰ २७८।

विलासिका^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का रूपक जिसमें एक ही अंक होता है। इसका विषय संक्षिप्त और साधारण होता है।

विलासिका^{2}—वि॰ स्त्री॰ आनंद देनेवाली।

विलासिता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सुखभोग की अनुरक्तता। विलासी का भाव या कार्य। विलास की भावना। उ॰—भोले थे, हाँ तिरते केवल, सब विलासिता के नद में।—कामायनी, पृ॰ ७।

विलासिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. सुंदरी युवा स्त्री। २. कामिनी। हाव भाव करनेवाली स्त्री (को॰)। ३. वेश्या। गणिका। ४. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में ज, र, ज, ग, ग, (।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽऽ) होते हैं।

विलासी^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलासिन्] [स्त्री॰ विलासिनी] १. सुखभोग में अनुरक्त पुरुष। कामी। २. जिसे आमोद प्रमोद पसंद हो। क्रीड़ाशील हँसोड़। कौतुकशील। ३. ऐश-आराम-पसंद। आरामतलब। ४. वरुण वृक्ष। बरुन। ५. सर्प। साँप (को॰)। ६. अग्नि (को॰)। ७. चंद्रमा (को॰)। ८. विष्णु (को॰)। ९. कृष्ण (को॰)। १० शिव (को॰)। ११. वार। कामदेव (को॰)।

विलासी^{2}—वि॰ आमोदप्रिय। क्रीड़ाशील। ऐयाश [को॰]।

विलास्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिसमें बजाने के लिये तार लगे होते हैं।

विलिंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलिङ्ग] १. वह जो भिन्न लिंग का हो। २. लिंग का अभाव [को॰]।

यौ॰—विलिंगस्थ = जो समझा न जा सके। जो समझने लायक न हो।

विलिंपित—वि॰ [सं॰ विलिम्पित] लेपा हुआ। लेप किया हुआ [को॰]।

विलिखन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. खरोचना। रेखांकित करना। २. लिखना। ३. विश्लेषण। विभाजन। ४. नदी का प्रवाह या सरणि [को॰]।

विलिखित—वि॰ [सं॰] १. खरोंचा हुआ। २. लिखा हुआ। ३. खुदा हुआ।

विलिगी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का साँप।

विलिप्त—वि॰ [सं॰] १. पुता हुआ। लिपा हुआ। २. कलुषित। मैला। दागदार (को॰)।

विलिष्ट—वि॰ [सं॰] १. टूटा हुआ। उखड़ा हुआ। २. जो ठीक अवस्था में न हो। अस्तव्यस्त।

यौ॰—विलिष्टभेषज = हड्डी आदि टूटने की चिकित्सा।

विलीकⓅ—वि॰ पुं॰ [सं॰ व्यलीक] अनुचित। नामुनासिब।

विलीन—वि॰ [सं॰] १. जो अदृश्य हो गया हो। लुप्त। २. जो घुल गया या मिल गया हो। जैसे—पानी में नमक विलीन हो गया। ३. छिपा हुआ। ४. संबद्ध। संलग्न। अनुषक्त [को॰]। ५. अड्डे पर उतरा हुआ या बैठा हुआ (पक्षी आदि)। ६. नष्ट। मृत। क्षयप्राप्त।

विलीयन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विलीन होना। मिल जाना [को॰]।

विलुंचन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलुण्चन] उखाड़ना। नोचना। फाड़ना। छीलना [को॰]।

विलुंठन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलुण्ठन] १. छीनना। लूटना। २. लुंठन लुठन। लोटना [को॰]।

विलुंठित—वि॰ [सं॰ विलुण्ठित] १. लूटा हुआ। जो लूटा गया हो। २. लुढ़कता हुआ। लोटता हुआ [को॰]।

विलुंपक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलुम्पक] चोर। डाकू। लुटेरा। लूटपाट करनेवाला [को॰]।

विलुठित—वि॰ [सं॰] १. दे॰ 'विलुंठित'। २. क्षुब्ध [को॰]।

विलुप्तायोनि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का योनिरोग। इस रोग में योनि में सदा पीड़ा होती है।

विलुभित—वि॰ [सं॰] आकुल। अस्तव्यस्त। अव्यवस्थित। विलोड़ित। क्षुब्ध [को॰]।

यौ॰—विलुभितप्लव = आकुल या क्षुब्ध गति।

विलुलक संज्ञा पुं॰ [सं॰] नाश करनेवाला।

विलुलित—वि॰ [सं॰] १. अस्तव्यस्त। २. उद्विग्न। ३. लहराता हुआ। हिलता हुआ। उ॰—प्रिय! जब मेरे गात्रों में आकर छिप जाता है मलयानिल, तब किस ध्वनि से मुखरित हो उठता है मेरा विलुलित आँचल।—इत्यलम्, पृ॰ २६।

यौ॰—विलुलितकेश = अस्तव्यस्त केशवाला। बिखरे बालोंवाला।

विलूधन(पु)†—क्रि॰ अ॰ [सं॰ वि॰ + लुब्ध, प्रा॰ वि + लुद्ध] विशेष लुब्ध होना। रम जाना। मोहित होना। आसक्त होना। उ॰—आपस्वारथ येह विलूधा रे, आगम मरम न जाणैं। जम कर माँथै बाण धरीला, ते तौ मनि न आणौं।—दादू॰ पृ॰ ५५३।

विलून—वि॰ [सं॰] कटा हुआ। अलग किया हुआ।

विलूला(पु)†—संज्ञा पुं॰ [देश॰] बुद्बुद। बुल्ला। उ॰—वारि के विलूलन की सेज रचि कौन सोयो, ओसकन पिए हिए कौन तोस पायो है।—दीन॰ ग्रं॰, पृ॰ १४०।

विलेख—संज्ञा पुं॰ [सं॰] छिद्र। विवर। गुफा। २. फाड़ना। खरोचना। ३. विदारण। विलेखन [को॰]।

विलेखन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. लेखन। लिखना। २. खरोचना। रेखांकित करना। चिह्न बनाना। ३. उत्पाटन। उखाड़ना। ४. खोदना। खनना। ५. विभाग करना। विश्लेषण करना। ६. नदी की सरणि वा मार्ग [को॰]।

विलेखा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. चिह्न। खरोच। निशान। २. लिखित अनुबंध या करार [को॰]।

विलेखी—वि॰ [सं॰ विलेखिन] विलेखन करनेवाला। लकीर, खरोच या चिह्न बनानेवाला [को॰]।

विलेप—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शरीर आदि पर चुपड़कर लगाने की चीज। लेप। अंगराग। २. पलस्तर। गारा। २. लेप करना। गारा आदि लगाना [को॰]।

विलेपन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. लेप करने या लगाने की क्रिया। अच्छी तरह लीपना। लगाना। २. लगाने या लेप करने का पदार्थ। जैसे,—चंदन, केसर आदि।

विलेपनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] [पुं॰] १. वह स्त्री जो परिमल द्रव्य (इत्र आदि) से सुवासित हो। २. सुवेशा स्त्री। सुंदर वेशभूषा-वाली महिला। ३. माँड़। चावल का माँड़ [को॰]।

विलेपिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. अंगराग आदि लेपन करनेवाली महिला। प्रसाधिका। २. दे॰ 'विलेप्य' [को॰]।

विलेपी^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] माँड़। चावल का माँड़ [को॰]।

विलेपी^{2}—वि॰ [सं॰ विलेपिन्] १. लेप या पलस्तर करनेवाला। २. लसदार। लसीला। चिपकने या संबद्ध होनेवाला [को॰]।

विलेप्य^{1}—वि॰ [सं॰] १. जिसका लेप किया जाय। जैसे, विलेप्यौषध। २. जिसपर लेप किया जाय। जैसे, विलेप्य स्थान [को॰]।

विलेप्य^{2}—संज्ञा पुं॰ [स्त्री॰ विलेप्या] चावल का माँड़ [को॰]।

विलेवासी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलेवासिन्] विलेशय। सर्प [को॰]।

विलेशय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विल या दरार में रहनेवाले जीव। जैसे, साँप, बिच्छू, गोह आदि। २. सर्प। साँप। उ॰—आशीविष विषधर फणी मणी विलेशय व्याल।—नंददास (शब्द॰)।

विलै(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विलय] दे॰ 'विलय'। उ॰—दियो है न दान कछू कियो है न पुन्य रंच ऐसे हो प्रपंच बीच वै सबै विलै भई।—दीन ग्रं॰, पृ॰ १२८।

विलोक^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'विलोकन'।

विलोक^{2}—वि॰ लोकरहित। जनहीन। निर्जन। एकांत। शून्य [को॰]।

विलोकन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विचार करना। २. खोजना। ३. परिचय पाना। जानकारी पाना। ४. दृष्टि। निगाह। नजर (को॰)। ५. अवलोकन। अच्छी प्रकार से देखना। उ॰—वह अपलक लोचन अपने पादाग्र विलोकन करती, पथ-प्रदर्शिका सी चलती धीरे धीरे डग भरती।—कामायनी, पृ॰ २८०।

विलोकना(पु)—क्रि॰ स॰ [सं॰ विलोकन] १. देखना। २. अवलोकन करना। दे॰ 'बिलोकना'।

विलोकनि(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विलोकन] दे॰ 'बिलोकनि'।

विलोकनीय—वि॰ [सं॰] १. आकर्षक। सुंदर। २. दर्शनीय। ३. समझने योग्य [को॰]।

विलोकित^{1}—वि॰ [सं॰] १. देखा हुआ। २. परिचित। ३. परीक्षित। विचारित [को॰]।

विलोकित^{2}—संज्ञा पुं॰ १. परीक्षण। विवेचन। २. दृष्टि। ३. ताल विशेष [को॰]।

विलोकी—वि॰ [सं॰ विलोकिन्] १. देखने या अवलोकन करनेवाला। २. जानकारी हासिल करनेवाला। परिचय पानेवाला [को॰]।

विलोक्य—वि॰ [सं॰] देखने योग्य। दर्शनीय [को॰]।

विलोचन^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. नेत्र। नयन। आँख। उ॰—धिक् ढोंग कर रहे हैं अब व्यर्थ ही विलोचन।—शकुं॰, पृ॰ ३५। २. दृष्टि। अवलोकन।

यौ॰—विलोचन पथ = नेत्रव्यापार का क्षेत्र। दृष्टिपथ। लोचन-मग। विलोचनपात = दृष्टिपात। अवलोकन। निगाह करना।

३. पुराणानुसार एक नरक का नाम, जिसमें मनुष्य अंधा हो जाता है और न देखने के कारण अनेक यातनाएँ भोगता है। ३. लोचनरहित करने की क्रिया। आँखें फोड़ने की क्रिया। नेत्ररहित कर देने की क्रिया।

विलोचन^{2}—वि० विपरीतदृष्टि। वक्रदृष्टि। विकृतदृष्टि [को०]।

विलोचनांबु—संज्ञा पुं० [सं० विलोचनाम्बु] नेत्रजल। आँसू [को०]।

विलोट—संज्ञा पुं० [सं०] विलोटन, लुढ़कना [को०]।

विलोटक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली। बेला मछली।

विलोटन—संज्ञा पुं० [सं०] लुढ़कना [को०]।

विलोड—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिलना डुलना। लहराना। २. लुढ़कना। लोटना। ३. मथने की क्रिया। मथन [को०]।

विलोडक—संज्ञा पुं० [सं०] चोर। तस्कर [को०]।

विलोडन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंथन करना। २. हिलाना डुलाना। आंदोलित करना। इतस्ततः करना [को०]।

विलोड़ना(पु)—क्रि० स० [सं० विलोडन] दे० 'बिलोड़ना'।

विलोडित^{1}—वि० [सं०] १, कंपित। क्षुब्ध। आंदोलित। मथित उ०—हुआ विलोडित गृह, तब प्राणी, कौन! कहाँ! कब! सुख पाते?—कामायनी, पृ० १६। २. लुठित। लुढ़का हुआ [को०]।

विलोडित^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] मठा। छाछ [को०]।

विलोना—क्रि० स० [हिं०] दे० 'बिलोना'।

विलोप—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु को लेकर भाग जाने की क्रिया। २. रुकावट। ३. विघ्न। बाधा। ४. आघात। ५. नाश। लोप। ६. हानि। नुकसान।

विलोपक—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाश करनेवाला। २. दूर करनेवाला। ३. लेकर भागनेवाला।

विलोपन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विलोप करने की क्रिया। २. काटना या छिन्न करना। तोड़कर अलग करना।

विलोपना(पु)—क्रि० स० [सं० विलोपन] १. लोप करना। नाश करना। २. लेकर भागना। ३. विघ्न डालना। बाधा उपस्थित करना।

विलोपभृत—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र द्वारा निर्दिष्ट वह सेना जो केवल लूटमार का लालच देकर इकट्ठी की गई हो।

विलोपित—वि० [सं०] दे० 'विलु'। उ०—यदि मैं उसे इसी समय विलोपित कर दूँ...।—कबीर मं०, पृ० ११।

विलोपी—संज्ञा [सं० विलोपिन्] [स्त्री० विलोपिनी] १. विलोप करनेवाला। २. नाश करनेवाला।

विलोप्ता—वि० [सं० विलोप्तृ] लुटेरा। चोर। दस्यु। डाकू [को०]।

विलोप्य—वि० [सं०] विलोप करने या होने योग्य।

विलोभ^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकर्षण। प्रलोभन। २. बहकावा। छलावा (को०)। ३. मोह। माया। भ्रम।

विलोभ^{2}—वि० जिसके मन में किसी प्रकार का लालच न हो। लोभरहित।

विलोभन—संज्ञा पुं० [सं०] १. लोभ दिखाने की क्रिया। २. मोहित या आकर्षित करने का व्यापार। ३. प्रशंसा। स्तवन। चाटुकारिता (को०)। ४. कोई बुरा कार्य करने के लिये किसी को लोभ दिलाने का काम। ललचाना।

विलोभनीय—वि० [सं०] लुभानेवाला [को०]।

विलोभित—वि० [सं०] १. लुब्ध किया हुआ। लुभाया हुआ। २. छला हुआ। बहकाया हुआ। ३. प्रशंसा किया हुआ। प्रशंसित [को०]।

विलोम^{1} वि० [सं०] [वि० स्त्री० विलोमी] १. विपरीत। उलटा। प्रतिकूल। उ०—तुम सन कही बचन कटु बानी। अपने हाथ मीचु वहि माँगी। कहेसि विलोम वचन तजि ज्ञाना। यहिकर काल आय नियराना।—सबल (शब्द०)। २. प्रतिकूल या विपरीत क्रम में उत्पन्न (को०)। ३. पिछड़ा हुआ (को०)। ४. नियम वा रीति के विरुद्ध। ५. केशविहीन। रोमरहित (को०)।

विलोम^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. सर्प। २. वरुण। ३. कुत्ता। ४. रहट। ५. क्रमविपर्यय। उलटा क्रम (को०)। ६. संगीत में ऊँचे स्वर से नीचे स्वर की ओर आना। स्वर का अवरोह। उतार। ७. ऊँचे की ओर से नीचे की ओर आना।

विलोमक—वि० [सं०] विपरीत। प्रतिकूल।

विलोम काव्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह काव्य या कविता जिसके अक्षरों को उलटकर भी पढ़ा जा सके और जो पहले से भिन्न एक विशेष अर्थ दे। संस्कृत में इस प्रकार के कई काव्य प्राप्त होते हैं।

विलोम क्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह क्रिया जो अंत से आदि की ओर की जाय। उलटी ओर से होनेवाली क्रिया।

विलोमज—वि० [सं०] वह संतान जिसकी माता पिता से उच्च वर्ण की हो [को०]।

विलोमजात—वि० [सं०] दे० 'विलोमज' [को०]।

विलोमजिह्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का हाथी।

विलोमन—संज्ञा पुं० [सं०] नाट्यशास्त्र के अनुसार मुखसंधि के बारह अंगों में से एक। नायक का मन नायिका की ओर अथवा नायिका का मन नायक की ओर आकृष्ट करने के लिये उसके गुणों का कथन। जैसे,—रत्नावली में वैतालिक का सागरिका को लुभाने के लिये राजा उदयन के गुणों का कथन।

विलोमपाठ—संज्ञा पुं० [सं०] आखीर से पढ़ना। उलटा पढ़ना। विपरीत क्रम से पढ़ना।

विलोमरसन—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी [को०]।

विलोमवर्ण^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] एक संकर जाति। दोगली जाति।

विलोमवर्ण^{2}—वि० दे० 'विलोमज'।

विलोमविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उलटी ओर से होनेवाली क्रिया या अनुष्ठान। विलोम क्रिया। २. गणित में प्रतिलोम नियम (को०)।

विलोमा—वि० [सं० विलोमन्] १. रोमरहित। केशहीन। २. विपरीत दिशा की ओर घूमा या मुड़ा हुआ।

विलोमाक्षर काव्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विलोम काव्य'।

विलोमित—वि० [सं०] विलोम या उलटा किया हुआ [को०]।

विलोमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँवला। आमलकी।

विलोल—वि० [सं०] १. चंचल। हिलता डुलता। अस्थिर। २. सुंदर। उ०—चपल विलोल डोल वह लागी। थिर न रहे चंचल बैरागी।—जायसी (शब्द०)। ३. स्रस्त। ढीला। अस्तव्यस्त। बिखरा हुआ (केश)। जैसे, विलोलकबरी = स्रस्त वेणी या केश (को०)।

विलोलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिलाना। कँपाना। २. मथना। आलोड़न [को०]।

विलोलित[1]—वि० [सं०] १. हिलाया हुआ। कंपाया हुआ। २. मथित। क्षुब्ध किया हुआ। क्षुभित [को०]।

विलोलुप—वि० [सं०] निर्लोभ। लोभरहित [को०]।

विलोहित[1]—वि० [सं०] १. नीललोहित या धूम्रवर्ण का। २. लाल रंग का [को०]।

विलोहित[2]—संज्ञा पुं० १. शिव। रुद्र। २. लाल रंग का प्याज। ३. एक नरक का नाम [को०]।

विलोहितक—संज्ञा पुं० [सं०] वह मुर्दा जो लाल वर्ण का हो गया हो। लाल रंग का शव [को०]।

विलोहिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक का नाम [को०]।

विल्ल—संज्ञा पुं० [सं०] १. थाला। आलबाल। २. गर्त। गड्ढा। ३. हींग [को०]।

विल्लसू—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह माता जो दस बच्चों को जन्म दे चुकी हो। दस संतानों की माँ [को०]।

विल्व—संज्ञा पुं० [सं०] बेल वृक्ष। बेल का पेड़।

विल्व तैल—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल।

विशेष—इसे बनाने के लिये बेल की जड़ का रस, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, अपामार्ग का क्षार और जवाखार को कूटकर गोमूत्र के साथ तेल में डालकर मंद आँच पर पकाते हैं। रस जलने और तेल मात्र रहने पर इसे उतार लेते हैं। कहते हैं कि इससे कान से वधिरता, कर्णस्राव आदि रोग अच्छे हो जाते हैं।

विल्वपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बेल का पत्ता, जो शिव जी पर चढ़ाने के काम आता है। बेलपत्र।

विल्वमंगल—संज्ञा पुं० [सं० विल्वमङ्गल] भक्त और महाकवि सूरदास का अंधे होने से पूर्व का नाम।

विल्वांतर—संज्ञा पुं० [सं० विल्वान्तर] एक वृक्ष [को०]।

विल्वेश—संज्ञा पुं० [सं०] आधुनिक भिलसा नगरी का प्राचीन नाम।

विशेष—यह नगरी ग्वालियर के दक्षिण में बेतवा नदी के दाहिने किनारे पर बसी है। इसका पुराना नाम भद्रावत भी कहा जाता है।

विल्हन—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का घोड़ा। विलहान। बोल्लाह। उ०—सामंतन कारन विल्हन, समपि समर जस कज्ज।—पृ० रा०, ६१। १४०।

विवंचिषु—वि० [सं० विवञ्चिषु] वंचक। धूर्त [को०]।

विवंदिषु—वि० [सं० विवन्दिषु] प्रशंसा करने को उत्सुक। वंदना की इच्छा रखनेवाला [को०]।

विवंधक—संज्ञा पुं० [सं० विवन्धक] १. रोकनेवाला। कोष्ठवद्धता। कब्जियत। कब्ज।

विवंधन—संज्ञा पुं० [सं० विवन्धन] रोक। बंधन। रुकावट।

विव—वि० [सं० द्वि] १. दो। २. द्वितीय। दूसरा। दे० 'विवि'।

विवक्कत—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत बोलनेवाला। वाचाल। २. स्पष्ट बोलनेवाला। ३. वक्ता। वाग्मी।

विवक्ता—संज्ञा पुं० [सं० विवक्तृ] १. कहनेवाला। २. किसी बात को प्रकट करनेवाला। ३. दुरुस्त करने या सुधारनेवाला। संशोधन करनेवाला।

विवक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कोई बात कहने की इच्छा। बोलने की इच्छा। २. अर्थ। तात्पर्य। आशय। ३. अनिश्चय। शक। संदेह। ४. इच्छा। अभिलाषा (को०)।

विवक्षित[1]—वि० [सं०] १. जिसकी आवश्यकता या इच्छा हो। इच्छित। अपेक्षित। २. कहे जाने या बोले जाने के लिये अभिप्रेता। कथनीय (को०)। ३. उक्त। कथित। ४. अनुकूल। इष्ट। प्रिय (को०)।

विवक्षित[2]—संज्ञा पुं० १. प्रयोजन। अभिप्राय। उद्देश्य। आशय। २. जो कहने की इच्छा हो। मतलब। अर्थ [को०]।

विवक्षु—वि० [सं०] कहने बोलने को इच्छुक या तत्पर [को०]।

विवट्ट(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वि + वर्त्मन, प्रा० वट्ट] कुराह। बुरी राह। वह राह जो प्रचलित न हो। उ०—अति बहुत भाँति विवट्ट वट्टहि भुलेओ बड्डेओ चेतना।—कीर्ति०, पृ० २६।

विवत्स—वि० [सं०] वत्सरहित। पुत्रहीन [को०]।

विवत्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह गौ जिसे वत्स न हो। बिना बछड़े-वाली गाय [को०]।

विवत्सु—वि० [सं०] बोलने को इच्छुक या तत्पर [को०]।

विवदन—संज्ञा पुं० [सं०] विवाद। झगड़ा। मुकदमेबाजी [को०]।

विवदना(पु)—क्रि० अ० [सं० विवाद + हिं० ना] किसी वस्तु या विषय पर जबानी झगड़ा करना। शास्त्रार्थ करना। विवाद करना। जबानी झगड़ना। उ०—इमि विवदहिं शारद यति राजा। सुनि विस्मित सब विदुष समाजा।—शं० दि० (शब्द०)।

विवदित—वि० [सं०] १. विवाद में पड़ा हुआ। विवादग्रस्त। २. विवाद करनेवाला। ३. जिसके लिये वाद किया गया हो [को०]।

विवदिषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कहने या बोलने की आकांक्षा [को०]।

विवदिषु—वि० [सं०] बोलने की इच्छावाला। बोलने या कुछ कहने के लिये तत्पर [को०]। विवाद करने की इच्छावाला।

विवध—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह लकड़ी जो बैलों के कंधों पर उस समय रखी जाती है, जब उन्हें कोई वस्तु खींचकर ले जानी होती है। जुआठा। २. भूसे या अनाज की राशि। ३. चौड़ी सड़क। राजमार्ग। ४. बोझ। भार (को०)। ५. घट। घड़ा (को०)। ६. वह आय जा शासक का प्रजा या विषय से प्राप्त होता हो। राजकर (को०)।

विवधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बंधन। २. जुआ। जुआठा [को०]।

विवधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिसाती। फेरीवाला वैवधिक। आवाज लगाकर बेचनेवाला। २. बोझा ढोनेवाला। भारवाहक [को०]।

विवर[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. छिद्र। बिल। २. गड्ढा। दरार। गर्त। ३. गुफा। ४. कंदरा। अंतराल। बीच की जगह (को०)। ५. एकांत स्थान (को०)। ६. दोष। त्रुटि। ऐब (को०)। ७. विच्छेदजन्य घाव (को०)। ८. नौ की संख्या (को०)। ९. फैलाव। विस्तार (को०)। १०. पाताल (को०)।

विवर(पु)†[2]—संज्ञा पुं० [सं० विवरण] ब्यौरा। विवरण। उ०—आखी जंग तणो कथ एतां। सारी विवर अकब्बर सेती।—रा० रू०, पृ० ८९।

विवरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु को स्पष्ट रूप से समझाने की क्रिया। विवेचन। व्याख्या। २. सविस्तर वर्णन। वृत्तांत। बयान। हाल। ब्यौरा। ३. भाष्य। टीका। ४. उद्घाटन। प्रदर्शन (को०)। ५. वाक्य (को०)। ६. खोलना। व्यक्त करना (को०)।

विवरणिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विवरण] लेखाजोखा। क्रमबद्ध विवरण।

विवरदर्शक—वि० [सं०] छिद्र देखनेवाला। दोषदर्शक [को०]।

विवरना—क्रि० अ० [सं० विवरण] दे० 'बिवरना'।

विवरनालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाँसुरी। वंशी [को०]।

विवरप्रवेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. छिद्र आदि में प्रवेश करना। २. दूसरे की आकांक्षा या हृदय की बात जान लेना [को०]।

विवरानुग—वि० [सं०] दोषदर्शी [को०]।

विवर्चा—वि० [सं० विवर्चस्] निष्प्रभ। कांतिहीन [को०]।

विवर्जक—वि० [सं०] विवर्जित करनेवाला [को०]।

विवर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. त्याग करने की क्रिया। परित्याग। २. अनादर। उपेक्षा।

विवर्जित—वि० [सं०] १. मना किया हुआ। वर्जित। निषिद्ध। २. परित्यक्त। छोड़ा हुआ (को०)। ३. उपेक्षित। अनादरित। ४. वंचित। रहित। ५. प्रदत्त। वितरित (को०)। ६. जिसमें से कुछ घटाया या छोड़ा जाय (को०)।

विवर्ण[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. साहित्य में एक भाव का नाम, जिसमें भय, मोह, क्रोध, लज्जा आदि के कारण नायक या नायिका के मुख का रंग बदल जाता है। २. वह जो जातिबहिष्कृत हो (को०)। ३. अवर जाति का व्यक्ति (को०)। ४. खराब रंगवाला।

विवर्ण[2]—वि० [सं०] १. नीच। कमीना। २. नीच जाति का। ३. नीच पेशा या व्यवसाय करनेवाला। ४. कुजाति। ५. जिसका रंग खराब हो गया हो। उ०—उल्का वज्र व धूमादि से हत विवर्ण ज्योतिहीन होने पर। बृहत्संहिता, पृ० ८२। ६. रंग बदलनेवाला। ७. बदरंग। बुरे रंग का। ८. जिसके चेहरे का रंग उतरा हो। कांतिहीन। ९. अज्ञानी। मूढ़। निरक्षर (को०)।

विवर्णित—वि० [सं०] निंद्य। गर्हित [को०]।

विवर्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. समुदाय। समूह। राशि। २. नाच। नृत्य। ३. रूपांतर। परिवर्तन। ४. आकाश। ५. आगे जाना या पीछे लौटना (को०)। ६. भ्रांति। भ्रम। ७. अविद्या द्वरा उत्पन्न मिथ्या रूप या भ्रमात्मक ज्ञान (वेदांत)। ८. गोलाई में चक्कर खाना। वृत्त में घूमना (को०)। ९. आवर्त। भंवर (को०)।

विवर्त कल्प—संज्ञा पुं० [सं०] वह कल्प जिसमें लोक क्रमशः उन्नति से अवनति को प्राप्त होता है।

विवर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] १. परिभ्रमण। घूमना। फिरना। २. नाच। नृत्य। ३. चक्कर काटना। परिक्रमण। ४. लुढ़कना। ५. इधर से उधर करवटें बदलना। विविध प्रकार के संतापों और स्थितियों में से गुजरना। उ०—विकल विवर्तनों से श्रमित नमित सा।—लहर, पृ० ६२। ७. विद्यमान रहना। रहना (को०)। ८. संमान के साथ अभिवादन (को०)। ९. परिवर्तित दशा (को०)। १०. प्रदक्षिणा। परिक्रमा (को०)।

विवर्तमान—वि० [सं० विवर्तमत्] १. जो घूम रहा हो। भ्रममय। आवर्तशील। २. परिवर्तित होता हुआ। परिवर्तनशील। उ०—जिसकी प्रसरणशीला प्रतिभा विभूति से विवर्तमान समस्त (वाङ्मय) काव्य गीतादिक उत्पन्न होकर सनातनी चेतना की भाँति जगत् में फैल रहे हैं।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०. पृ० ११२।

विवर्तवाद—संज्ञा पुं० [सं०] वेदांत में एक सिद्धांत जिसके अनुसार ब्रह्मा को सृष्टि का मुख्य उत्पत्तिस्थान और संसार को माया मानते हैं। परिणामवाद।

विवर्तस्थायी कल्प—संज्ञा पुं० [सं० विवर्तस्थायि कल्प] वह समय जब लोक अवनति की पराकाष्ठा को पहुँचकर शून्य दशा में रहता है। कल्पांत। प्रलय।

विवर्तित—वि० [सं०] १. परिवर्तित। बदला हुआ। २. भ्रमित। घूमा हुआ। ३. उखड़ा हुआ। सरका हुआ। ४. अंग जिसमें मोच आ गई हो। जैसे, हाथ पैर का विवर्तित होना। ५. निवारित (को०)। ६. स्थानभ्रष्ट (को०)। ७. तोड़ा हुआ। खंडित (को०)। ८. उन्मीलित। प्रकट किया हुआ। व्यक्त (को०)। ९. संकोचित। सिकोड़ा हुआ (को०)।

विवर्तिताक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] आँख घुमानेवाला, मुर्गा। अरुणशिखा। कुक्कुट।

विवर्ती—वि० [सं० विवर्तिन्] १. परिवर्तित होनेवाला। २. घूमनेवाला ३. रहनेवाला। ४. चक्कर खानेवाला।

विवर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० विवर्त्मन्] कुराह। कुपथ [को०]।

विवर्द्धन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बढ़ाने या वृद्धि करने की क्रिया। २. वृद्धि। बढ़ती। उन्नति। ३. विभाजन। विखंडन (को०)।

विवर्द्धित—वि० [सं०] १. बढ़ा हुआ। वृद्धिप्राप्त। २. उन्नतिप्राप्त। उन्नत। ३. संतुष्ट। प्रसन्न (को०)। ४. विभक्त। खंडित (को०)।

विवर्धन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विवर्द्धन'।

विवर्धित—वि० [सं०] दे० 'विवर्द्धित'।

विवश—वि० [सं०] जिसका कुछ वश न चले। लाचार। बेबस। मजबूर। उ०—विवश आया बिछड़ने का समय दोनों ओर। विछड़कर भी वे परस्पर बन गए चित चोर।—शकुं०, पृ० ६। २. पराधीन। परवश। ३. जो काबू में न आवे। स्वाधीन। ४. जिसमें कोई शक्ति या बल न हो। अशक्त। ५. मृत। नष्ट (को०)। ६. मृत्युकामी। मृत्यु की आशंका करनेवाला (को०)। ७. जिसका अपने ऊपर वश न हो। बेहोश (को०)।

विवशता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. परवशता। पराधीनता। २. लाचारी। मजबूरी [को०]।

विवस—वि० [सं० विवश] दे० 'विवश'। उ०—पाछे केतेक दिन कों नारायनदास वार्ता के रस में विवस भए।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० ११८।

विवसता(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० विवशता] दे० 'विवशता'।

विवसन[1]—संज्ञा पुं० [सं०] दिगंबर जैन।

विवसन[2]—वि० [वि० स्त्री० विवसना] दे० 'विवस्त्र'। उ०—पीली पड़, निर्बल, कोमल कृश देहलता कुम्हलाई। विवसना, लाज में लिपटी साँसों में शून्य समाई।—गुंजन, पृ० २६।

विवसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भोज के मत से प्रवाहिका या अतीसार रोग का एक भेद। उ०—भोज ने इस रोग (प्रवाहिका) का नाम विवसी कहा है।—माधव०, पृ० ४८।

विवस्तु(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं०] अपदार्थ। नाचीज। उ०—न तहाँ तत्व अतत्व विभेदा। न तहाँ वस्तु विवस्तु न वेदा।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ११३।

विवस्त्र—वि० [सं०] जिसके शरीर पर वस्त्र न हो। वस्त्ररहित। नग्न। नंगा।

विवस्था†—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यवस्था] दे० 'व्यवस्था'। उ०—परदेस में जो कहूँ ऐसे पत्र जात रहे तो कहाँ विवस्था होइ।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० २०५।

विवस्वती—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य की नगरी।

विवस्वत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य। २. अर्क वृक्ष। ३. सूर्य का सारथी, अरुण। ४. पंद्रहवें प्रजापति। वर्तमान मनु का नाम। ५. देवता। देव (को०)। ६. एक दैत्य (को०)।

विवस्वान्—संज्ञा पुं० [सं० विवस्वत् शब्द का कर्ता एकवचन का रूप] दे० 'विवस्वत्'।

विवह[1]—वि० [सं० विविध; प्रा० विविह] दे० 'विविध'। उ०—(क) दीसइ विवह चरीयं, जाणिज्जइ सयण दुज्जण सहावों। अप्पाणं च कलिज्जइ हिंडिज्जई तेणा पुहवीए।—ढोला०, दू०, २३४। (ख) वारोठ विवह वस्तह समभि, सह चक्रत पिष्पत रहिय।—पृ० रा०, १४। २४।

विवह[2]—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक का नाम। २. सात पवनों में से एक का नाम [को०]।

विवहार(पु)—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्यवहार'। उ०—(क) विवहार वरैं वरनं सु बरं। पढ़ि पिंगल वाहन केन हरं।—पृ० रा०, २५। २०७। (ख) विवहार विवुध जोतिग गिनत सलष सुष्ष जात न कहिय।—पृ० रा०, १४। २४।

विवाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. जो शास्त्रार्थ में दोनों पक्षों के तर्क को देखकर न्याय करे। न्यायाधीश। २. मध्यस्थ।

विवाचन—संज्ञा पुं० [सं०] बिचवई। मध्यस्थता [को०]।

विवाच्य—वि० [सं०] सुधारने लायक। [को०]।

विवात—संज्ञा पुं० [सं०] आँधी। प्रबल पवन। प्रभंजन [को०]।

विवाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी बात या वस्तु पर जबानी झगड़ा। वाक्युद्ध। २. झगड़ा। कलह।

मुहा०—विवाद उठाना = किसी बात पर मतभेद प्रकट करना और उसके उत्तर की आशा करना। झगड़ा उठाना।

३. मतभेद। ४. मुकदमेबाजी। अदालत की लड़ाई। ५. जोर से चिल्लाना (को०)। ६. आदेश। आज्ञा (को०)।

विवादक—संज्ञा पुं० [सं०] विवाद करनेवाला। झगड़ालू।

विवादपद—संज्ञा पुं० [सं०] विवाद का विषय [को०]।

विवादवस्तु—संज्ञा स्त्री० [सं०] विवाद या झगड़े का विषय [को०]।

विवादार्थी—संज्ञा पुं० [सं० विवादार्थिन्] १. वादी। २. मुकदमा चलानेवाला व्यक्ति। अभियोक्ता [को०]।

विवादास्पद—वि० [सं०] जिसपर विवाद या झगड़ा हो। विवाद योग्य। विवादयुक्त। जैसे,—अभी इस विषय में कुछ निश्चय नहीं हुआ है; यह विवादास्पद है।

विवादी—संज्ञा पुं० [सं० विवादिन्] १. विवाद करनेवाला। कहा सुनी या झगड़ा करनेवाला। २. मुकदमा लड़नेवालों में से कोई एक पक्ष। मुद्दई और मुद्दालेह। ३. संगीत में वह स्वर जिसका किसी राग में बहुत कम व्यवहार हो।

विवाधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. जो कंधे पर चीजें ढोकर ले जाय। २. घूम घूमकर चीजें बेचनेवाला। फेरीवाला। दे० 'विवधिक'।

विवान(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विमान] दे० 'विमान'। उ०—ठनंकि घंट घंटिय परहि कज्जल कूट विवान अर —पृ० रा०, २५। ७४६।

विवार—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यादन। फैलाना। २. अक्षर के उच्चारण में होनेवाला कंठ का फैलाव। ३. एक आभ्यंतर प्रयत्न जो संवार प्रयत्न के विपरीत होता है। उ०—अल्पप्राण, महाप्राण, विवार, संवार, बाह्य, आभ्यंतर प्रयत्नादिक अक्षरोच्चारों की एवं उदात्तानुदात्त स्वरितादिक स्वरोच्चारों की शुद्धता कितनी महत्वपूर्ण मानी जाती थी।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २८० ।

विवारी—वि० [सं० विवारिन्] वारण करनेवाला। रोकनेवाला [को०]।

विवास—संज्ञा पुं० [सं०] १. निर्वासन। निष्कासन। २ वियोग [को०]।

विवासकरण—संज्ञा पुं० [सं०] निष्कासन। निर्वासन [को०]।

विवासकाल—संज्ञा पुं० [सं०] प्रातःकाल। सूर्योदय वेला [को०]।

विवासन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विवास'।

विवासित—वि० [सं०] निष्कासित। निर्वासित [को०]।

विवास्य—वि० [सं०] निकाल देने योग्य।

विवाह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रथा जिसके अनुसार स्त्री और पुरुष आपस में दांपत्य सूत्र में बँधते हैं। कहीं यह प्रथा सामाजिक होती है, कहीं धार्मिक और कहीं कानून के अनुसार होती है। यह हिंदुओं के सोलह संस्कारों में से एक संस्कार है। शादी। ब्याह।

विशेष—मनुष्य जाति जब आदिम असभ्यावस्था में थी, उस समय उसमें विवाह या पतिसंवरण की प्रथा न थी। केवल कामवेग के कारण स्त्री पुरुषों का समागम हुआ करता था। यह प्रथा अब भी कुछ असभ्य जातियों में प्रचलित है। महाभारत में लिखा है—'प्राचीन काल में स्त्रियाँ नंगी रहती थीं। वे स्वतंत्र और विहारिणी होती थीं और बिना ब्याह किए ही अनेक पुरुषों से समागम करती थीं।' उनका यह कृत्य अधर्म नहीं समझा जाता था। सभ्यता बढ़ने पर लोगों को घर बनाने और एक ऐसे व्यक्ति को अपने यहाँ रखने की आवश्यकता हुई जो उसका प्रबंध कर सके। इसके लिये स्त्रियाँ उपयुक्त समझी गईं। अतः लोगों ने उनको फुसलाकर अथवा बलात् अपने यहाँ रखना आरंभ किया। उन दिनों स्त्री एक पुरुष के अधिकार में तबतक रहती थी जबतक कोई दूसरा उससे बली पुरुष उसे बलपूर्वक छीन न ले जाता था। अतः अब ऐसा नियम बनाने की आवश्यकता हुई कि एक दूसरे की स्त्री को हरण न कर सके। पर स्त्रीस्वतंत्रता में बाधा नहीं थी। जब आर्यों की सभ्यता बढ़ी और उनमें वर्णधर्म स्थापित हो चला, तब लोग संभुक्त स्त्री को अपने यहाँ रखने की अपेक्षा असंभुक्त या कन्या को अच्छा समझने थे। कन्या के लिये कभी कभी युद्ध भी हुआ करते थे। धीरे धीरे सभ्यता बढ़ती गई और लोगों में स्त्री पुरुष की ममता अधिक होती गई। पर स्त्रियों की स्वतंत्रता बनी रही। वे एक पुरुष के अधिकार में रहते हुए भी अन्य की कामना करती थीं। उस समय यह व्यभिचार नहीं समझा जाता था। महाभारत से पता चलता है कि इस प्रथा को उद्दालक ऋषि के पुत्र श्वेतकेतु ने उठा दिया। उन्होंने यह मर्यादा बाँधी कि पति के रहते हुए कोई स्त्री उसकी आज्ञा के विरुद्ध अन्य पुरुष से संभोग न करे। पर उस समय भी पति की अयोग्यता की अवस्था में उसके रहते स्त्रियाँ दूसरा पति कर लेती थीं। महर्षि दीर्घतमा ने यह प्रथा निकाली कि 'यावत् जीवन स्त्रियाँ पति के अधीन रहें। पति के जीवनकाल में तथा उसके मरने पर भी वे कभी परपुरुष का आश्रय न लें और यदि आश्रय लें, तो पतित समझी जायँ।' धीरे धीरे स्त्रियों की स्वतंत्रता जाती रही और वे उपभोग की सामग्री समझी जाने लगीं। यहाँ तक कि लोग उन्हें पति के मरने पर उसके शव के साथ अन्य आमोद प्रमोद की वस्तुओं की भाँति जलाने लगे जिसमें मरे हुए व्यक्ति को वे स्वर्ग में मिलें इसी प्रथा ने पीछे सती की प्रथा का रूप धारण किया। पीछे से आर्य जाति व्यसनी हो गई। एक पुरुष अनेक स्त्रियाँ रखने लगा; यहाँ तक कि तपस्वी भी इससे नहीं बचे थे। याज्ञवल्क्य के दो स्त्रियाँ (मैत्रेयी और गार्गी) थीं। आर्य लोग अनार्य स्त्रियों को भी नहीं छोड़ते थे। इस कारण यह नियम बनाना पड़ा कि यज्ञदीक्षा के समय रामा अर्थात् शूद्रा से गमन न करे। पीछे से राजा वेणु ने अपने वंश की रक्षा के लिये जबर्दस्ती 'नियोग' की प्रथा चलाई। मनु जी ने उनकी निंदा की है। वे लिखते हैं—'राजर्षि वेणु के समय में विद्वान् द्विजों ने मनुष्यों के लिये इस पशु धर्म (नियोग) का उपदेश किया था। राजर्षिप्रवर वेणु समस्त भूमंडल का राजा था। उसी कामी ने वर्णों का घालमेल किया।'

उस समय तक विवाह दो प्रकार के होते थे। एक तो छीन झपटकर, लड़ भिड़कर या यों ही कन्या को फुसलाकर अपने यहाँ ले आते थे। दूसरे यज्ञों के समय यजमान अपनी कन्याएँ पुरोहितों को चाहे दक्षिणा के रूप में या धर्म समझकर दे देते थे। धीरे धीरे जब विवाह की यह प्रथा अनुचित मालूम हुई, तब विवाह का अधिकार पिता के हाथ में दे दिया गया और पिता योग्य वरों को एक समाज में बुलाकर कन्याओं को उनमें से एक को चुनने का अधिकार देता था। यही आगे चलकर स्वयंवर हुआ। कभी कभी स्वयंवर के मौके पर भी क्षत्रिय लोग लड़कियाँ उठा ले जाते थे। विवाह के समय प्रायः वर की २५ वर्ष और कन्या की १६ वर्ष की अवस्था होती थी; अतः विधवा होने की कम संभावना रहती थी। धीरे धीरे 'नियोग' की प्रथा मिट गई। विधवा का विवाह भी बुरा समझा जाने लगा। सभ्यता के बढ़ने पर पुरुष लोग स्त्रियों पर कड़ी दृष्टि रखने लगे और उनकी स्वतंत्रता जाती रही। स्त्रियों को अस्वतंत्रता हो जाने पर पुरुषों में बहुविवाह की प्रथा चल पड़ी। पीछे बुद्ध के समय में एक बार स्त्रियों की स्वतंत्रता फिर बढ़ी। पर बौद्ध मत का लोप होने पर वह फिर जाती रही। मुसलमानों के आने पर स्त्रियों की रक्षा करने के लिये हिंदुओं ने उनका जल्दी विवाह करना आरंभ किया, क्योंकि उस समय मुसलमान लोग विवाहित स्त्रियों पर बलात्कार करना धर्मविरुद्ध समझते थे। इसी से

बाल विवाह की प्रथा चली। विवाह आठ प्रकार के माने गए हैं—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैशाच। पर आजकल केवल ब्राह्म विवाह प्रचलित है।

पर्या०—दारकर्म। परिणय। पाणिग्रहण।

यौ०—विवाहकाम = विवाह की इच्छा रखनेवाला। विवाहार्थी। विवाहचतुष्टय = चार विवाह करना। विवाहदीक्षा = विवाहविधि। विवाह नेपथ्य = विवाह के समय वर और वधू द्वारा धारण किया जानेवाला वेश। विवाहबंधन। विवाहविच्छेद = पालक। पतिपाली का परस्पर संबंध तोड़ना। विवाहविधि = विवाह का विधान या नियम। विवाहवेष = विवाह के समय वर वधू की वेशभूषा। विवाहनेपथ्य।

विवाहना—क्रि० स० [सं० विवाह + हिं० ना० (प्रत्य०)] दे० 'व्याहना'।

विवाहबंधन—संज्ञा पुं० [सं० विवाह + बन्धन] विवाह के द्वारा पत्नी के साथ हो जानेवाला दृढ़ संबंध। पति और पत्नी का धार्मिक संबंध। उ०—मैं पुनः हुआ चेतन। सोचता हुआ विवाहबंधन।—अपरा, पृ० १७५।

विवाहित—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विवाहिता] जिसका विवाह हो गया हो। व्याहा हुआ।

विवाहिता—वि० स्त्री० [सं०] जिसका पाणिग्रहण हो चुका हो। व्याही हुई स्त्री।

विवाही—वि० स्त्री० [सं० बिवाहिता] जिसका विवाह हो चुका हो। उ०—और सहेली सबै विवाहीं। मों कह देव कतहुँ बर नाहीं।—जायसी (शब्द०)।

विवाह्य^1—वि० [सं०] पाणिग्रहण करने योग्य। व्याह करने योग्य। व्याहने लायक।

विवाह्य^2—संज्ञा पुं० १. दामाद। जामाता। २. दूल्हा। वर [को०]।

विवि(पु) वि० [सं० द्वि] १. दो। २. दूसरा। उ०—श्रीफल कंजकली से विराजत कै विवि मौनी बसे ढिग गंग के। कै गिरि हेम कै संपुट साने कै राजत संभु मनो रस रंग के।—द्विज (शब्द०)।

विविक्त^1—वि० [सं०] १. पृथक् किया हुआ। उ०—साध्य और साधनों को विविक्त करके काव्य के नित्य स्वरूप या मर्मशरीर को अलग निकालने का प्रयास बढ़ता गया।—रस०, पृ० ५०। २. बिखरा हुआ। ३. पवित्र। ४. विजन। निर्जन। ५. एकाकी। अकेला (को०)। ६. विवेकशील। विवेकयुक्त (को०)। ७. विवेचित। व्याख्यात (को०)। ८. गूढ़। गहन। सूक्ष्म (विचार या निर्णय)। ९. मुक्त। रहित (को०)। १०. ज्ञात। व्यक्त। सुस्पष्ट। उ०—दर्शकों को ऐसा विविक्त रसानुभव होता है जो और रसों के समकक्ष है।—रस०, पृ० १८५।

विविक्त^2—संज्ञा पुं० [स्त्री० विविक्ता] १. संन्यासी। त्यागी। २. एकांत स्थान। ३. अकेलापन। एकाकीपन (को०)। ४. स्वच्छता। शुद्धता। पवित्रता (को०)।

विविक्तचरित—वि० [सं०] जिसका आचरण बहुत अच्छा और पवित्र हो। शुद्ध चरित्रवाला।

विविक्तचेता वि० [सं० विविक्तचेतस्] स्वच्छ हृदयवाला [को०]।

विविक्तदृष्टि—वि० [सं०] १. स्पष्ट दृष्टिवाला। २. सूक्ष्मदर्शी [को०]

विविक्तनाम—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार हिरण्यरेता के सात पुत्रों में से एक। २. इसके द्वारा शासित वर्ष का नाम।

विविक्त शय्यासन—संज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार वह आचार जिसमें त्यागी सदा किसी एकांत स्थान में रहता और सोता है।

विविक्तशरण—वि० [सं०] एकांतवास चाहनेवाला [को०]।

विविक्तसेवी—वि० [सं० विविक्तसेविन्] एकांत में या अकेला रहनेवाला [को०]।

विविक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह भाग्यहीना स्त्री जिसे उसका पति न चाहता हो। दुर्भगा [को०]।

विविक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अलगाव। पार्थक्य। २. विवेक करना। विवेचन [को०]।

विविग्न—वि० [सं०] १. उद्विग्न। क्षुब्ध। २. अत्यंत क्रुद्ध। ३. शंकायुक्त। बहुत डरा हुआ (को०)।

विविचार—वि० [सं०] १. विचाररहित। विवेकरहित। उ०—हौं अपने विविचार विचार अचार विचार अपार बहाऊँ धीरज धूरि मिलै कहि केशव धर्म के धामिन धूरि जमाऊँ।—केशव (शब्द०)। २. आचाररहित। आचारहीन।

विविचारी—संज्ञा पुं० [सं० विविचारिन्] [स्त्री० विविचारिणी] १. अविवेकी। मूर्ख। बेवकूफ। २. दुराचारी। दुश्चरित्र। बदचलन।

विविच्च—वि० [सं० विविक्त√विविच् + क्त], [प्रा० विविक्क] विविक्त। पृथग्भूत। विविध। उ०—विविच्च रोम रंगयं। पदील सुत्त रंगयं। पृ० रा०. ५७। १२९।

विवित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्राप्ति। उपलब्धि [को०]।

विवित्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जिज्ञासा। जानने की इच्छा [को०]।

विवित्सु—वि० [सं०] जिज्ञासु। जानने को इच्छा रखनेवाला [को०]।

विविदिषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्ञानप्राप्ति की इच्छा जानने की कामना। उ०—इनके अलावा धृति, श्रद्धा, सुखा, विविदिषा, अविविदिषा, इत्यादि की भी विस्तृत व्याख्या की है।—हिंदु० सभ्यता, पृ० १९८।

विविदिषु—वि० [सं०] जानने की इच्छा रखनेवाला। ज्ञानप्राप्ति का अभिलाषी [को०]।

विविध^1—वि० [सं०] बहुत प्रकार का। अनेक तरह का। भाँति भाँति का। जैसे,—विविध विषयों से विभूषित मासिक पत्रिका। उ०—अति रति गति मति एक करि, विविध विवेक विलास। रसिकन को रसिकप्रिया कीन्हीं केशवदास।—केशव (शब्द०)।

विविध^2— संज्ञा पुं० कार्य गा चेष्टा का वैविध्य।

विविर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. खोह। गुफा उ॰—विविर जाय सुख पाय, पायो महाप्रसाद पुनि। तहँ के तीर्थ निकाय जाय जाय सादर कियो।—(शब्द॰)। २. बिल। ३. दरार।

विविह—वि॰ [सं॰ विविध, प्रा॰ विविह, विवह] अनेक प्रकार का। भाँति भाँति का। उ॰—दीसै विविह चरियं। जानिज्जै सज्जन दुज्जन।—पृ॰ रा॰,६१। ५०७।

विवीत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह स्थान जो चारों ओर से घिरा हो। बाड़ा। २. पशुओं के चराने का स्थान जो चारों ओर से घिरा हो।

विवीतभर्ता—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विवीतभर्तृ] चरागाह का मालिक [को॰]।

विवीताध्यक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार चरागाहों का निरीक्षक कर्मचारी।

विवुध(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विबुध] १. देवता। २ पंडित। ज्ञानी। उ॰—इसलिये पहिले पहल दृश्य काव्य के आधार से ही इसकी ओर विवुधों का विचार आकर्षित हुआ।—रस॰, पृ॰ १९।

विवुधपुर(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विबुधपुर] देवताओं का देश, स्वर्ग।

विवुधप्रिया—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विबुधप्रिया] एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में र, स, ज, ज, भ, और र गण होते हैं। इसे 'चंचरी', 'चंचली' और 'चर्चरी' भी कहते हैं।

विवुधवैद(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विवुधवैद्य] दे॰ 'विबुधवैद्य'।

विवुधवन(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विबुधवन] देवताओं का प्रमोदवन, नंदनकानन।

विवुधवैद्य(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विबुधवैद्य] देवताओं के चिकित्सक, अश्विनी कुमार।

विवुधेश(पु)—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विबुध+ईश] देवताओं का राजा। इंद्र।

विवृक्त—वि॰ [सं॰] परित्यक्त। त्यागा हुआ [को॰]।

विवृक्ता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दुर्भगा स्त्री। पति द्वारा परित्यक्ता स्त्री। विविक्ता [को॰]।

विवृत^1—वि॰ [सं॰] १. विस्तृत। फैला या फैलाया हुआ। २. खुला हुआ। अनावृत। ३. नग्न। ४. तृण, तरु से विहीन (को॰)। ५. प्रदर्शित। प्रकटीकृत। अभिव्यक्त(को॰)। ६. जिसकी व्याख्या या टीका की गई हो। व्याख्यात (को॰)। ७. स्पष्ट। प्रत्यक्ष (को॰)। ८. उद्घोषित। घोषित (को॰)।

विवृत^2—संज्ञा पुं॰ १. व्याकरण और भाषाविज्ञान के अनुसार कतिपय ध्वनियों के उच्चारण करने का एक प्रयत्न। २. प्रदर्शित या व्यक्त करने की क्रिया। प्रकाशन (को॰)। ३. खुली जमीन। अनावृत भूमि। परती जमीन (को॰)।

विवृतद्वार—वि॰ [सं॰] १. उन्मुक्त। अनियंत्रित। २. जिसका द्वार खुला हो। ३. सीमाहीन [को॰]।

विवृतपौरुप—वि॰ [सं॰] शक्ति का प्रदर्शन करनेवाला [को॰]।

विवृतभाव—वि॰ [सं॰] खुले हुए हृदयवाला। साफ दिल का। निष्कपट का भाव [को॰]।

विवृतस्मयन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह हंसी जिसमें सभी दाँत दिखाई पड़ जायँ। खुली हंसी [को॰]।

विवृता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] योनि का एक रोग, जिसमें गूलर के फल के सदृश मंडलाकार फुंसियाँ होती हैं और योनि में बहुत जलन होती है।

विवृताक्ष^1—वि॰ [सं॰] विशाल नेत्रवाला। बड़ी आँखोंवाला [को॰]।

विवृताक्ष^2—संज्ञा पुं॰ मुरगा। ताम्रचूड़। तमचुर। कुक्कुट [को॰]।

विवृतानन—वि॰[सं॰] जिसका मुख खुला हो। खुले मुँहवाला [को॰]।

विवृतास्य—वि॰ [सं॰] दे॰ 'विवृतानन'।

विवृति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. चक्र के समान घूमने की क्रिया। परिभ्रमण। २. टीका। भाष्य। ३. विस्तार। ४. प्रदर्शन। प्रकटीकरण। अनावरण। व्यक्तीकरण। उ॰—वेदना की अधिक विवृत्ति हम काव्यशिष्टता के विरुद्ध समझते हैं।—चिंतामणि, भा॰ २, पृ॰ १०१।

विवृतोक्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक अलंकार जिसमें श्लेष से छिपाया हुआ अर्थ कवि स्वयं अपने शब्दों द्वारा प्रकट कर देता है।

विवृत्त—वि॰ [सं॰] १. परावर्तित। लौटा हुआ। २. भ्रमण करता हुआ। ३. चतुर्दिक् चक्कर खाता हुआ। ४. निरावृत। अनावृत। व्यक्त। ५. ऐंठा या मुड़ा हुआ [को॰]।

विवृत्तदंष्ट्र—वि॰ [सं॰] जिसके दाँत दिखाई पड़ते हों। खुले हुए मुँहवाला [को॰]।

विवृत्तवदन—वि॰ [सं॰] मुँह मोड़ लेनेवाला [को॰]।

विवृत्तांग—वि॰ [सं॰ विवृत्त+अङ्ग] पीड़ा से जिसके शरीर में ऐंठन हो रही हो [को॰]।

विवृत्ता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का चर्मरोग [को॰]।

विवृत्ताक्ष—वि॰ [सं॰] मुर्गा। कुक्कुट। विवृताक्ष [को॰]।

विवृत्तास्य—वि॰ [सं॰] जिसका मुँह खुला हो।

विवृत्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विवृत्त होने का भाव या क्रिया। विस्तार। फैलाव। २. चक्कर खाना। घूमना। ३. लुढ़कना। ४. व्याकरण में उच्चारणभंग [को॰]।

विवृद्ध—वि॰ [सं॰] १. वृद्धिगत। बढ़ा हुआ। तीव्र। २. पूर्ण विकसित। प्रौढ़। ३. शक्तिमान्। ४. विपुल। बहुत अधिक। प्रचुर [को॰]।

विवृद्धमत्सर—वि॰ [सं॰] जिसका मत्सर या द्वेष अधिक बढ़ गया हो। विवृद्धमन्यु [को॰]।

विवृद्धमन्यु—वि॰ [सं॰] क्रुद्ध। विवृद्धमत्सर।

विवृद्धि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. उन्नति। २. समृद्धि। ३. वर्धन। वृद्धि। ४. बढ़ाव। बाढ़ [को॰]।

यौ॰—विवृद्धिभाक् = उन्नतिशील। वर्धनशील।

विवृह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अलग होनेवाला। जो अन्य या दूसरों से स्वयं अलग हो जाय [को॰]।

विवेक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. भली बुरी वस्तु का ज्ञान। सत् असत् का ज्ञान। २. मन की वह शक्ति जिससे भले बुरे का ज्ञान होता हो। अच्छे और बुरे को पहचानने की शक्ति। ३. समझ। विचार। बुद्धि। ४. सत्य ज्ञान। ५. प्रकृति और

पुरुष की विभिन्नता का ज्ञान । ६. पानी रखने का एक प्रकार का बरतन । जलपात्र । ७. जैनों के अनुसार बहुत ही प्रिय पदार्थों का त्याग । ८. भेद । अंतर । प्रभेद (को०) ।

यौ० —विवेकख्याति = यथार्थ या वास्तविक ज्ञान । विवेकज्ञान = विवेचन की योग्यता । न्यायबुद्धि । विवेकपदवी = विचारणा । विवेचना । चिंतन । विवेकपरिपंथी = न्याय में बाधक । विवेकभाक् = विवेकी । बुद्धिमान् । विवेकमंथरता = विवेक की दुर्बलता । विवेकविरह = विवेक से रहित होना । अविवेकिता । मूर्खता । विवेकविश्रांत = मूर्ख । बुद्धिहीन । विवेकशील । विवेकशून्य ।

विवेकज्ञ—वि० [सं०] विवेक करनेवाला । विवेकी [को०] ।

विवेकता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १ विवेक का भाव । ज्ञान । २. सत् और असत् का विचार ।

विवेकदृश्वा—संज्ञा पुं० [सं० विवेकदृश्वन्] विचारवान् या दूरदर्शी व्यक्ति । विवेकी पुरुष [को०] ।

विवेकवान्—संज्ञा पुं० [सं० विवेकवत्] १. वह जिसे सत् और असत् का ज्ञान हो । अच्छे बुरे को पहचाननेवाला । २. बुद्धिमान् । अक्लमंद । विवेकी ।

विवेकशील—वि० [सं०] विवेकवान् । सत् और असत् का ज्ञान रखनेवाला । उ०—उसे ही सत्य का अंतिम बिंदु क्या कोई विवेकशील साहित्यकार स्वीकार कर सकता है ।—हिंदी का०, पृ० ४ ।

विवेकशून्य—वि० [सं०] भले और बुरे का ज्ञान न रखनेवाला । उ० उद्धत—विवेकशून्य, चाहिए उन्हें कि शक्ति अपनी वे पहचानें ।—अपरा०, पृ० ६४ ।

विवेकी—संज्ञा पुं० [सं० विवेकिन्] १. वह जिसे विवेक हो । भले बुरे का ज्ञान रखनेवाला । २. विचारवान् । बुद्धिमान् । समझदार । ३. ज्ञानी । ४. न्यायशील । ५ वह जो अभियोगों आदि का न्याय करता हो । न्यायाधीश । ६. दार्शनिक (को०) ।

विवेख, विवेखा†—संज्ञा पुं० [सं० विवेक] दे० 'विवेक' । उ०—और सुनो गुरुमुख का लेखा । भक्त होय सो करै विवेखा ।—कबीर सा०, पृ० ८२३ ।

विवेचक—संज्ञा पुं० [सं०] विवेचना करनेवाला । विवेकी ।

विवेचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु की भली भाँति परीक्षा करना । जाँचना । २. यह देखना कि कौन सी बात ठीक है और कौन नहीं । निर्णय । ३. व्याख्या । तर्क वितर्क । ४. अनुसंधान । ५. परीक्षा । ६. सत् असत् का विचार । ७. मीमांसा ।

विवेचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विवेचन' ।

विवेचनीय—वि० [सं०] विवेचन करने योग्य । विचार करने लायक ।

विवेचित—वि० [सं०] १. जिसकी विवेचना की गई हो । जिसका अनुसंधान किया गया हो । निर्णय किया हुआ । २. तै किया हुआ । निश्चित ।

विवेष㊦—संज्ञा पुं० [सं० विवेक] दे० 'विवेक' । उ०—पढ़ै गुणैं औ घट पड़ै जो गुर पंथ त्र विवेष पायक चेतन कोटवालं ।—रामानंद०, पृ० १५ ।

विव्वोक—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य शास्त्र के अनुसार एक हाव जिसमें स्त्रियाँ संभोग के समय प्रिय का अनादर करती हैं ।

विशंक—वि० [सं० विशङ्क] जिसे किसी प्रकार की शंका या भय न हो । निःशंक । निर्भय । निडर ।

विशंकट—वि० [सं० विशङ्कट] [वि० स्त्री० विशंकटा, विशंकटी] १. बहुत बड़ा या विस्तृत । विशाल । २. प्रचंड । शक्तिशाली (को०) । ३. भयानक । डरावना ।

विशंकनीय—वि० [सं० विशङ्कनीय] जिससे किसी प्रकार की शंका हो । डरने योग्य । संदेहास्पद । शंकनीय ।

विशंका—संज्ञा स्त्री० [सं० विशङ्का] १. आशंका । भय । डर । २. आशंका का अभाव ।

विशंकी—वि० [सं० विशङ्किन्] जिसे किसी प्रकार की आशंका या भय हो ।

विशंक्य—वि० [सं० विशङ्क्य] आशंका या भय करने योग्य ।

विशंभर㊦—संज्ञा पुं० [सं० विश्वम्भर] दे० 'विश्वंभर' । उ०—द्वंद हरण गोविंद तरण भव सिंधु विशंभर ।—राम० धर्म०, पृ० ३०२ ।

विशंवरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा गाँव । पुरा । पुरवा [को०] ।

विश^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल की डंडी । मृणाल । २. चाँदी । ३. मनुष्य । आदमी । ४. मृणालसूत्र या तंतु । कमल की डंठी का रेशा (को०) ।

विश^2—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्] कन्या । लड़की ।

विशकंठा—संज्ञा स्त्री० [सं० विशकण्ठा] १. बक पक्षी । बलाका । २. कमल के नाल के समान कंठवाली स्त्री [को०] ।

विशकलित—वि० [सं०] जो अलग अलग या विभक्त हो । विभिन्न । सुस्पष्ट [को०] ।

विशद^1—वि० [सं०] १. स्वच्छ । विमल । २. साफ । स्पष्ट । ३. जो दिखाई पड़ता हो । व्यक्त । ४. सफेद । ५. प्रसन्न । खुश । ६. सुंदर । मनोहर । खूबसूरत । ७. अनुकूल । ८. शांत । निश्चित (को०) । ९. कोमल । मुलायम ।

विशद^2—संज्ञा पुं० १. सफेद रंग । २. भागवत के अनुसार जयद्रथ के एक पुत्र का नाम । ३. कसीस । ४. बृहती । बड़ी कटाई । बनभंटा । ५. एक प्रकार की गंध (को०) । ६. एक प्रकार का स्पर्श । कोमल स्पर्श (को०) ।

विशदप्रज्ञ—वि० [सं०] तीव्र बुद्धिवाला । विचक्षण [को०] ।

विशदप्रभ—वि० [सं०] स्वच्छ या निर्मल प्रभावाला । श्वेत कांति युक्त [को०] ।

विशदित—वि० [सं०] विशद या स्वच्छ किया हुआ [को०] ।

विशब्दित—वि० [सं०] कहा हुआ । ध्वनित । कथित [को०] ।

विशय—संज्ञा पुं० [सं०] १. संशय । संदेह । शक । २. आश्रय । सहारा । ३. केंद्र (को०) ।

विशयी संज्ञा पुं० [सं० विशयिन्] १. वह जिसे किसी प्रकार की शंका या संदेह हो। संशयात्मा। २. संदिग्ध। संदेहास्पद। अनिश्चित।

विशर—संज्ञा पुं० [सं०] मार डालना। वध। २. टुकड़े टुकड़े करना। विदारण (को०)।

विशरण^1—संज्ञा पुं० [सं०] मार डालना। हत्या करना। वध करना।

विशरण^2—वि० अशरण। असहाय [को०]।

विशरद—संज्ञा पुं० [सं० विशारद] दे० 'विशारद'।

विशरारु—वि० [सं०] नाशवान्। क्षणभंगुर [को०]।

विशर्द्धन—संज्ञा पुं० [सं०] वायुत्याग। पादना।

विशल्य—वि० [सं०] १. जिससे काँटा निकल गया हो। २. शल्यरहित (वाण)। ३. कष्ट से मुक्त। ४. जिसका शस्त्रास्त्रों का घाव अच्छा हो गया हो [को०]।

विशल्यकरण—वि० [सं०] शस्त्रादि का घाव भरनेवाला [को०]।

विशल्यकरणी, विशल्यकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्विषी।

विशल्यकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. पलासी लता। २. आस्फोता या हरपरवाली (?) नामक लता।

विशल्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गुड़ूच। २. अग्निशिखा नामक वृक्ष। ३. दंती वृक्ष। ४. नागदंती। ५. एक प्रकार की तुलसी जिसे रामदंती भी कहते हैं। ६. एक नदी का नाम। ७. लक्ष्मण की स्त्री का नाम। ८. निशोथ। ९. पाटला। १०. खेसारी। ११. अजवायन। अजमोदा (को०)।

विशस—संज्ञा पुं० [सं०] १. मार डालना। हत्या करना। वध। २. खड्ग।

विशसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मार डालना। हत्या करना। २. भागवत के अनुसार एक नरक का नाम। ३. खड्ग। ४. विनाश। बर्बादी (को०)। ५. युद्ध (को०)। ६. काटना। चीरना (को०)। ७. कठोर व्यवहार (को०)।

विशसित—वि० [सं०] काटा हुआ। विदारित। चीरा हुआ [को०]।

विशसिता—संज्ञा पुं० [सं० विशासितृ] १. चांडाल। २. काटने, चीरने, या मार डालनेवाला व्यक्ति [को०]।

विशस्त—वि० [सं०] १. जो मार डाला गया हो। २. काटा हुआ। ३. जिसे किसी प्रकार का भय न हो। ४. उजड्ड। अशिष्ट (को०)। ५. प्रख्यात। विख्यात (को०)।

विशस्ता—संज्ञा पुं० [सं० विशस्तृ] १. मार डालनेवाला। हत्या करनेवाला। २. यज्ञादि मे बलिप्रदान करनेवाला। ३. चांडाल।

विशस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] मार डालना। हत्या।

विशस्त्र—वि० [सं०] शस्त्ररहित। अशस्त्र [को०]।

विशस्पति—संज्ञा पुं० [सं०] राजा।

विशांपति—संज्ञा पुं० [सं० विशाम्पति] १. राजा। २. जामाता। दामाद (को०)। ३. व्यापारियों का प्रधान या मुखिया (को०)।

विशाकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. भद्रचूड़। लंकासीज। २. दंती। ३. हाथी शुंडी। ४. पाढर या पाटला का वृक्ष।

विशाख^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय। २. धनुष चलाने के समय एक पैर आगे और एक पैर उससे कुछ पीछे रखना। ३. माँगनेवाला। याचक। ४. पुनर्नवा। गदहपूरना। ५. सुश्रुत के अनुसार वह अपस्मार रोग जो स्कंद नामक ग्रह के प्रकोप से हो। ६. पुराणानुसार एक देवता का नाम जिनका जन्म कार्तिकेय के वज्र चलाने से हुआ था। ७. कार्तिकेय के छोटे भाई का नाम। ८. शिव। ९. तर्कु। टेकुआ। तकुवा (को०)।

विशाख^2—वि० १. जिसमें शाखाएँ आदि न हों। २. हाथ से रहित (को०)। ३. विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न (को०)।

विशाखक—वि० [सं०] दे० 'विशाख^2' [को०]।

विशाखग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] बेल का पेड़।

विशाखज—संज्ञा पुं० [सं०] नारंगी का पेड़।

विशाखदत्त—संज्ञा पुं० [सं०] संस्कृत के एक प्रसिद्ध नाटककार का नाम, जिन्होंने मुद्राराक्षस नाटक की रचना की थी।

विशाखपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बालकों को होनेवाला एक प्रकार का रोग। (वैद्यक)।

विशाखयूप—संज्ञा पुं० [सं०] नृसिहपुराण के अनुसार एक प्राचीन देश का नाम। कुछ लोग इसे मदरास प्रांत का आधुनिक विशाखपत्तन मानते हैं।

विशाखल—संज्ञा पुं० [सं०] बाण चलाने के समय की एक मुद्रा। दे० विशाख १-२ [को०]।

विशाखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्रों में से सोलहवाँ नक्षत्र।

विशेष—यह नक्षत्र मित्रगण के अतर्गत है और इसे राधा भी कहते हैं। इसमें चार तारे हैं और इसका आकार तोरण का सा है। यह नक्षत्र दो भागों में बंटा हुआ है, इसलिये इसके दो देवता इंद्र और अग्नि है।

२. एक प्राचीन जनपद जो कौशांबी के पास था। ३. सफेद गदहपूरना। ४. काली अपराजिता। ५ दूब। दूर्वा (को०)।

विशाखिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुनर्नवा। गदहपूरना। २ नीली अपराजिता। ३. करेला। ४. दंड जिसमें शाखाएँ हों (को०)।

विशातन^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. टुकड़े टुकड़े करना। काटना। नष्ट करना। २. निर्बंध करना। मुक्त करना। छोड़ना। ३. विष्णु [को०]।

विशातन^2—वि० १. काटने या खंडित करनेवाला। २. बंधनमुक्त करनेवाला (को०)।

विशाप^1—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

विशाप^2—वि० शापमुक्त [को०]।

विशाय—संज्ञा पुं० [सं०] पहरेदारों का पारी पारी से सोना।

विशायक संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की लता जिसे विशाकर भी कहते हैं।

विशारण—संज्ञा पुं० [सं०] १. हत्या। वध। २. काटना। फाड़ना। टुकड़े टुकड़े करना [को०]।

विशारद^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो किसी विषय का अच्छा पंडित या विद्वान् हो। २. वह जो किसी काम में बहुत कुशल हो। दक्ष। ३. वह जिसे अपनी शक्ति पर भरोसा हो। ४. वकुल वृक्ष। मौलसिरी।

विशारद^{२}—वि० १. विख्यात। प्रसिद्ध। मशहूर। २. श्रेष्ठ। उत्तम। ३. प्रगल्भ। साहसी। भरोसे का (को०)। ४. अभिमानी। घमंडी। ५. चतुरतापूर्ण (को०)। ६. वचन या वक्तृत्व शक्ति से हीन (को०)।

विशारदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. केवाँच कौंछ। २. धमासा। दुरालभा।

विशाल^{१}—वि० [सं०] १. जो बहुत बड़ा और विस्तृत हो। लंबा चौड़ा। २. जो देखने में सुंदर और भव्य हो। ३. प्रसिद्ध। मशहूर। ४. समृद्ध। भरा पूरा (को०)। ५. युक्त। सहित (को०)। ३. स्तंभरहित (को०)।

विशाल^{२}—संज्ञा स्त्री० १. एक प्रकार का मृग। २. चिड़िया। पक्षी। ३. पेड़। वृक्ष। ४. रामायण के अनुसार राजा इक्ष्वाकु के पुत्र का नाम, जिसने विशाला नाम की नगरी स्थापित की थी। ५. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम। ६. एक नाग जो तक्षक का पिता है (को०)।

विशालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कैथ। कपित्थ। २. गरुड़। ३. एक यक्ष का नाम।

विशालकुल—संज्ञा पुं० [सं०] ख्यात वंश। प्रसिद्ध कुल [को०]।

विशालता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विशाल होने का भाव। बड़ापन। २. फैलाव। विस्तार (को०)। ३. उत्कर्ष। ख्याति (को०)।

विशालतैलगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] अंकोट वृक्ष। अखरोट [को०]।

विशालत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विशालता' [को०]।

विशालत्वक्—संज्ञा पुं० [सं०] विशालत्वच्। छतिवन।

विशालदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लता।

विशालनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम।

विशालनेत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आयत नेत्रोंवाली स्त्री। विशालाक्षी।

विशालपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीताल नामक वृक्ष। हिंताल। २. मानकंद। मानकच्चु।

विशालपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक कंद। मानकंद। (को०)।

विशालफलक—वि० [सं०] बड़े बड़े फलोंवाला [को०]।

विशालफलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] निष्पार्वा। बरसेमा।

विशाललोचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विशालनेत्रा'।

विशालविजय—संज्ञा पुं० [सं०] सेना का एक विशेष व्यूह [को०]।

विशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रवारुणी नामक लता। इंद्रायण। २. महेंद्रवारुणी। ३. पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम। ४. दक्ष की एक कन्या का नाम। ५. पोई का साग। ६. एकांगी। मुरामांसी। ७. कलगा नामक घास। ८. उज्जयिनी का एक नाम (को०)। ९. एक नदी का नाम (को०)। १. संगीत में एक मूर्छना (को०)।

विशालाक्ष^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. महादेव। शिव। २. विष्णु। ३. गरुड़। ४. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ५. एक प्रकार का उल्लू (को०)। ६. एक नाग का नाम (को०)। ७. कौटिल्य द्वारा उल्लिखित प्राचीन काल की एक प्रकार की राजकीय सत्ता (को०)।

विशालाक्ष^{२}—वि० जिसकी आँखें बड़ी और सुदर हों।

विशालाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्त्री जिसकी आँखें बड़ी और सुंदर हों। २. पार्वती। ३. देवी का एक रूप या मूर्ति। ४. चौसठ योगिनियों में से एक योगिनी का नाम। ५. नागदंती। हाथीशुंडी।

विशाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अजमोदा। २. पलाशी लता।

विशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बालू। रेत।

विशिख^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. रामसर या भद्रमुंज नामक घास। २. बाण। उ०—राक्षस तेरे तुच्छ बाण क्या? मेरे इस उर में है शेल। उसे झेलने के पहले तूँ मेरा एक विशिख ही झेल।—साकेत, पृ० ४९४। ३. वह स्थान जिसमें रोगी रहता हो। ४. एक शास्त्र। तोमर (को०)। ५. लोहे का कौवा (को०)। ६. गणित में बाण की आकृति का चिह्न (को०)।

विशिख^{२}—वि० १. जिसे शिखा न हो। २. खल्वाट। गंजा। ३. भोथरी नोकवाला शस्त्र आदि। ४. अग्नि जिसमें लपट न हो। लपट से हीन। ५. धूमकेतु जिसमें पूँछ न हो [को०]।

विशिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कौटिल्य द्वारा उल्लिखित एक प्रकार की रथ्या। राज्य की वह बड़ी सड़क जिसपर बड़े बड़े जौहरियों तथा सुनारों की दुकाने हों। २. कुदाल। फावड़ा। ३. रास्ता। पथ। ४. छोटा बाण। ५. तकुँ। तकुवा। ६. रोगियों के रहने का स्थान। ७. सुई या पिन (को०)। ८. नापित की नाइन स्त्री। नाउन। [को०]।

विशिखाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] तूणीर। तरकस [को०]।

विशित—वि० [सं०] तीक्ष्ण। निशित [को०]।

विशिप—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजमहल। २. देवमंदिर। ३. भवन। आवास स्थान [को०]।

विशिरस्क—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार मेरु पर्वत के पास के एक पर्वत का नाम। २. कबंध। सिरविहीन धड़।

विशिरा—वि० [सं० विशिरस्] जिसे सिर न हो [को०]।

विशिष्ट^{१}—वि० [सं०] १. मिला हुआ। युक्त। २. जिसमें किसी प्रकार की विशेषता हो। विशेषतायुक्त। जैसे,—कुछ विशिष्ट कर्म ऐसे होते हैं, जिनके लिये मनुष्य को प्रायश्चित्त तक करना होता है। ३. विलक्षण। अद्भुत। ४. जो बहुत अधिक शिष्ट हो। ५. यशस्वी। कीर्तिशाली। ६. प्रसिद्ध। मशहूर।

विशिष्ट—संज्ञा पुं० १. सीसा नामक धातु। २. विष्णु का एक नाम (को०)।

विशिष्टकुल^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] प्रतिष्ठित वंश [को०]।

विशिष्टकुल^{२}—वि० विशिष्ट कुल का। कुलीन [को०]।

विशिष्टचरित्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम।

विशिष्टचारी—संज्ञा पुं० [सं० विशिष्टचारिन्] एक बोधिसत्व ।

विशिष्टता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विशिष्ट का भाव या धर्म । २. विशेषता ।

विशिष्टपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] ग्रंथिपर्णो, गठिवन ।

विशिष्टबुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] सदसद् विवेकिनी प्रज्ञा । विवेक । प्रभेदक ज्ञान [को०] ।

विशिष्टलिंग—वि० [सं० विशिष्टलिङ्ग] भिन्न लिंगवाला [को०] ।

विशिष्टवर्ण—वि० [सं०] जो उत्कृष्ट या चोखे रंग का हो । उत्तम वर्ण या रंगवाला [को०] ।

विशिष्टाद्वैत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रसिद्ध वेदांत दर्शन का दार्शनिक जिसके सिद्धांत अनुसार यह माना जाता है कि जीवात्मा और जगत् दोनों ब्रह्म से भिन्न होने पर भी वास्तव में भिन्न नहीं हैं ।

विशेष—इस सिद्धांत में यद्यपि ब्रह्म, जीवात्मा और जगत् तीनों मूलतः एक ही माने जाते हैं, पर फिर भी तीनों कार्यरूप में एक दूसरे से भिन्न और कुछ विशिष्ट गुणों से युक्त माने जाते हैं । इस सिद्धांत के अनुसार जीव और ब्रह्म का वही संबंध है, जो किरण और सूर्य का है, अर्थात् किरण जिस प्रकार सूर्य से निकला हुई है, उसी प्रकार जीव भी ब्रह्म से निकला हुआ है; और जिस प्रकार किरण से सूर्य बहुत बड़ा है, उसी प्रकार जीव से ब्रह्म भी बहुत बड़ा है । इसमें ब्रह्म को एक भी माना जाता है और अनेक भी । वास्तव में द्वैत और अद्वैत दोनों वादों के मध्य का यह मार्ग है; अर्थात् इसमें उन दोनों वादों में सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा की गई है । यह वाद रामानुजाचार्य का चलाया हुआ है और 'भेदाभेदवाद' या 'द्वैताद्वैतवाद' भी कहलाता है ।

विशिष्टाद्वैतवादी—वि० [सं० विशिष्टाद्वैतवादिन्] विशिष्टाद्वैत मत का माननेवाला । रामानुज संप्रदाय को माननेवाला ।

विशिष्टी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शंकराचार्य की माता का नाम ।

विशीर्ण—वि० [सं०] १. सूखा हुआ । २. दुबला पतला । ३. बहुत पुराना । जीर्ण । ४. छिन्न भिन्न । टुकड़े टुकड़े किया हुआ (को०) । ५. मुरझाया हुआ । कुम्हिलाया हुआ (को०) । ६. मर्दित हुआ (को०) । ८. सिकुड़ा हुआ । झुर्रियोंवाला (को०) । ९. अपव्यय किया हुआ । उड़ाया हुआ (को०) । ९. गला या रगड़ा हुआ (सुगंधित द्रव्य) । १०. जो सफल न हो । विफलीभूत (को०) । ११. नष्ट । ध्वस्त (को०) ।

विशीर्णपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] नीम का पेड़ ।

विशीर्णमूर्ति^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कामदेव । २. वह जिसका शरीर विशीर्ण या छिन्न भिन्न हो [को०] ।

विशील—वि० [सं०] १. जिसका शील या चरित्र अच्छा न हो । २. दुष्ट । पाजी ।

विशुंडि—संज्ञा पुं० [सं० विशुण्डि] कश्यप के एक पुत्र का नाम ।

विशुद्ध^{१}—वि० [सं०] १. जो बिलकुल शुद्ध हो । जिसमें किसी प्रकार की मिलावट आदि न हो । २. सत्य । सच्चा । ३. पवित्र । निष्पाप (को०) । ४. बेदाग । निष्कलंक (को०) । ५. विनीत । नम्र (को०) । ६. चमकता हुआ । उज्वल । जैसे, दाँत (को०) । ७. खर्च किया हुआ । अपव्ययित । जैसे, निधि (को०) ।

विशुद्ध^{२}—संज्ञा पुं० तंत्र के अनुसार शरीर के अंदर के छह चक्रों में से पाँचवाँ चक्र, जो गले में माना जाता है । कहते हैं, इसमें सोलह दल होते हैं और शिव तथा आकाश इसमें निवास करते हैं ।

विशुद्धकरण—वि० [सं०] पवित्र कार्य करनेवाला (को०) ।

विशुद्धचरित्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।

विशुद्धचरित्र^{२}—वि० जिसका चरित्र बहुत शुद्ध हो ।

विशुद्धचारी—संज्ञा पुं० [सं० विशुद्धचारिन्] वह जिसका चरित्र बहुत शुद्ध हो ।

विशुद्धता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विशुद्ध होने का भाव या धर्म । पवित्रता ।

विशुद्धधी—वि० [सं०] जिसकी बुद्धि धार्मिक हो [को०] ।

विशुद्धप्रकृति—वि० [सं०] जो स्वभावतः धर्मपरायण हो [को०] ।

विशुद्धसत्त्व—वि० [सं०] शुद्ध मनवाला । पवित्र आचरणवाला [को०] ।

विशुद्धात्मा—वि० [सं०] जिसकी आत्मा या मन निर्मल और विकारहीन हो [को०] ।

विशुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विशुद्ध होने की क्रिया या भाव । शुद्धता । पवित्रता । २. यथार्थता । सत्यता (को०) । ३. परिष्कार । भूल सुधार (को०) । ४. ऋण, बैर आदि का परिशोध (को०) । ५. सादृश्य । समानता (को०) । बीजगणित । ६. घटाने की संख्या (को०) । ७. प्रायश्चित्त । पश्चात्ताप (को०) । ८. संदेह का निराकरण (को०) । ९. पूर्ण ज्ञान (को०) ।

विशुद्धिचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] गले में स्थित एक चक्र । दे० 'विशुद्ध'^{२} ।

विशूचिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विसूचिका] दे० 'विसूचिका' ।

विशून्य—वि० [सं०] पूर्णतः रिक्त । बिल्कुल खाली । उ०—शून्य विशून्य न तहाँ होई अगाध महिमा सो कहो ।—कबीर सा०, पृ० ४ ।

विशूल—वि० [सं०] १. भाले से रहित । कुंतविहीन । २. पीड़ा या व्यथारहित [को०] ।

विशृंखल—वि० [सं० विशृङ्खल] १. जिसमें शृंखला न हो या न रह गई हो । उ०—स्वयं देव थे हम सब तो फिर क्यों न विशृंखल होती सृष्टि ।—कामायनी, पृ० ९ । २. जो किसी प्रकार दबाया या रोका न जा सके । ३. सब प्रकार के नैतिक बंधनों से मुक्त । लंपट (को०) ।

विशृंग—वि० [सं० विशृङ्ग] जिसे शृंग न हो । शृंगरहित ।

विशेष^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. भेद । अंतर । फर्क । २. प्रकार । तरह । ढंग । ३. नियम । कायदा । ४. विचित्रता । ५. व्यक्ति । ६. सार । निचोड़ । ७. तारतम्य । मुनासिब । ८. वह जो साधारण के अतिरिक्त और उससे अधिक हो । अधिकता । ज्यादती । ९. अवयव । अंग । १०. वस्तु । पदार्थ । चीज । ११. तिल का पौधा । १२. साहित्य में एक प्रकार का अलंकार । विशेष नामक अलंकार ।

विशेष—मम्मट ने अपने ग्रंथ काव्यप्रकाश में इसका विवरण दिया है। इसके तीन भेद कहे गए हैं। पहला वह भेद है जिसमें बिना किसी आधार के ही आधेय का वर्णन होता है। जैसे—बिनु बारिद बिजुरी बिना बारि लसत युग मीन। विधु ऊपर तम तोम यह निरखी रीति नवीन। दूसरा भेद वह है जिसमें थोड़ा सा ही काम करने पर बहुत बड़ा काम या लाभ हो। जैसे—पाइ चुके फल चारिहू करत गंगजल पान। तीसरा भेद वह है जिसमें एक चीज का अनेक स्थानों में होना वर्णित होता है। जैसे—घर बाहर अध ऊरधौ सब ठाँ राम लखाय।

१३. वैशेषिक दर्शन के अनुसार सात प्रकार के पदार्थों में से एक प्रकार का पदार्थ।

विशेष—कणाद ने द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव ये सात पदार्थ माने हैं। 'विशेष' वे गुण हैं जिनके कारण कोई एक पदार्थ शेष दूसरे पदार्थों से भिन्न समझा जाता है। दो वस्तुओं में रूप, रस और गंध आदि में जो अंतर होता है वह इसो 'विशेष' गुण के कारण होता है। रूप, रस, गध, स्पर्श, स्नेह, द्रवत्व, बुद्धि, सुख, दु.ख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, संस्कार और शब्द ये वैशेषिक गुण या विशेष गुण कहलाते हैं। कणाद के दर्शन में इन्हीं विशेष पदार्थों या गुणों आदि का विवेचन है इसी लिये वह 'वैशेषिक दर्शन' कहलाता है। १४. प्रवर्ग। वर्ग (को०)। १५. मस्तक पर लगाया जानेवाला चंदन या केसर का तिलक (को०)। १६. वह शब्द जो किसी दूसरे शब्द के अर्थ को सीमित कर देता है (को०)। १७. ज्यामिति में कर्ण (को०)। १८. परिचायक चिह्न। प्रभेदक चिह्न (को०)। १९. रोग की वह अवस्था जब सुधार आरंभ होता है (को०)।

विशेष^{2}—वि० १. असाधारण। असामान्य। २. अधिक। प्रचुर।

विशेषक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. माथे पर लगाया जानेवाला तिलक। टीका। २. तिलक वृक्ष। तिलपुष्पी। ३. चित्रक। ४. साहित्य में एक प्रकार का पद्य जिसमें तीन श्लोकों या पदों में एक ही क्रिया रहती है; इस लिये उन तीनों श्लोकों या पद्यों का साथ ही अन्वय होता है। ५. चंदन आदि है। सुगंधित या रंगीन पदार्थों से मुख या शरीर पर रेखांकन करना (को०)। ६. भेद करनेवाला गुण। विशिष्टता (को०)। ७. विशेषोक्ति अलंकार (को०)।

विशेषक^{2}—वि० विशेषता उत्पन्न करनेवाला। विशेष रूप देनेवाला।

विशेषकच्छेद्य—संज्ञा पुं० [सं०] चौंसठ कलाओं में से एक माथे पर तिलक बनाने की कला [को०]।

विशेषकृत्—वि० [सं०] अंतर करनेवाला। विवेकी [को०]।

विशेषज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसे किसी विषय का विशेष ज्ञान हो। वह जो किसी बात का खास तौर पर जानकर हो। किसी विषय का पारदर्शी।

विशेषण^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो किसी प्रकार की विशेषता उत्पन्न करता या बतलाता हो। विभेदक लक्षण या चिह्न। २. व्याकरण में वह विकारी शब्द जिससे किसी संज्ञा की कोई विशेषता सूचित होती है; अथवा उसकी व्याप्ति मर्यादित होती है। जैसे,—'वीर मराठे' या 'चपल बालक' में वीर और 'चपल' शब्द विशेषण हैं।

विशेष—जब विशेषण किसी संज्ञा के साथ लगता है तब उसे विशेष्य विशेषण कहते हैं, और जब वह क्रिया के साथ लगता है, तब उसे विधेय विशेषण कहते हैं। जैसे—'हमें तो संसार सूना देख पड़ता है'। यहाँ 'सूना' विधेय विशेषण है। साधारणतः विशेषण तीन प्रकार के होते हैं—(१) सार्वनामिक विशेषण; जैसे,—'वह आदमी चला गया। में 'वह' सार्वनामिक विशेषण है। (२) गुणवाचक विशेषण; जैसे, नया, पुराना, सुडौल, सूखा, खराव आदि; और (३) संख्यावाचक विशेषण; जैसे—आधा, एक, चार, दसवाँ।

३. प्रकार। किस्म। जाति (को०)। ४. भेद। अंतर। पार्थक्य (को०)। ५. गुणवर्णन या गुणोत्कर्ष (को०)।

विशेषण^{2}—वि० १. गुण बतानेवाला। विशेषता बतानेवाला। २. प्रभेदक। व्यवच्छेदक [को०]।

विशेषणीय—वि० [सं०] दे० 'विशेष्य'।^{2}

विशेषतः—अव्य० [सं० विशेषतस्] १. विशेष रूप से। खास तौर से। २. समानुपात में। ३. एकमात्र [को०]।

विशेषता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विशेष का भाव या धर्म। खसूसियत। खासपन। जैसे,—आपकी बातों में यह विशेषता है कि तुरंत प्रभाव डालती हैं।

विशेषदृश्य—वि० [सं०] विशेष रूप से दर्शनीय। सुंदर आकृतिवाला [को०]।

विशेषना(पु)—क्रि० अ० [सं० विशेष + हिं० ना (प्रत्य०)] १. निश्चित करना। निर्णय करना। उ०—अनंत गुण गावै, विशेषहि न पावै।—केशव (शब्द०)। २. विशेष रूप देना। उ०—ताहि पूछत बोलि कै। तदपि भाँति भाँति विशेष कै।—केशव (शब्द०)।

विशेषपतनीय—संज्ञा पुं० [सं०] विशिष्ट पाप। विशेष प्रकार का पाप [को०]।

विशेषप्रतिपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] संमानार्थ दिया गया विशेष चिह्न [को०]।

विशेषभाग—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी के माथे का एक भाग [को०]।

विशेषमति—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम।

विशेषलक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विशेषलिंग'।

विशेषलिंग—संज्ञा पुं० [सं० विशेषलिङ्ग] विशिष्टतासूचक लक्षण वा चिह्न [को०]।

विशेषवचन—संज्ञा पुं० [सं०] विशेषता द्योतन करनेवाला कथन [को०]।

विशेषविद्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विशेषज्ञ'।

विशेषविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विशेष शास्त्र'।

विशेषशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय पर विशिष्ट विधान वा नियमपरक शास्त्र [को०]।

विशेषित—वि० [सं०] १. जो खास तौर पर अलग किया गया हो। जो 'विशेष' किया या बनाया गया हो। २. जिसमें विशेषण लगा हो। ३. विलक्षण। विचित्र (को०)। ४. परिभाषित। लक्षित (को०)। ५. श्रेष्ठ। उत्तम। बढ़िया (को०)।

विशेषांक—संज्ञा पुं० [सं० विशेष+अङ्क] पत्र पत्रिकाओं का वह अंक जो किसी पर्व आदि विशिष्ट अवसर, व्यक्ति, घटना, वस्तु या विषय आदि के पूर्ण विवेचन और जानकारी के साथ तत्संबंधी किसी विशिष्ट अवसर पर प्रकाशित हो।

विशेषी—वि० [सं० विशेषिन्] १. जिसमें कोई विशेष बात हो। विशेषतायुक्त। २. पृथक्। अलग। भिन्न (को०)। ३. स्पर्धा करनेवाला। प्रतिद्वंद्विता करनेवाला (को०)।

विशेषोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] काव्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें पूर्ण कारण के रहते हुए भी कार्य के न होने का वर्णन रहता है। जैसे;—(क) अलि इन लोयन की कछू उपजी बड़ी बलाय। नीर भरे नित प्रति रहैं, तऊ न प्यास बुझाय। (ख) तमकि ताकि तकि शिव धनु धरहीं। उठत न कोटि भाँति बल करहीं —तुलसी (शब्द०)।

विशेषोन्मुख—वि० [सं० विशेष+उन्मुख] विशेष की ओर झुका हुआ। जो सामान्य से भिन्न हो। उ०—यह अंतिम शक्ति उनमें है पर वह विशेषोन्मुख है।—आचार्य०, पृ० १४१।

विशेष्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्याकरण में वह संज्ञा जिसके साथ कोई विशेषण लगा होता है। वह संज्ञा जिसकी विशेषता विशेषण लगाकर सूचित की जाय। जैसे,—मोटा आदमी या काला कुत्ता में आदमी और कुत्ता विशेष्य हैं। २. नाम। संज्ञा (को०)।

विशेष्य^{2}—वि० १. विशिष्ट या विशेषतायुक्त होने योग्य। २. मुख्य। प्रधान। उत्तम (को०)।

विशेष्यसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह हेत्वाभास जिसके द्वारा स्वरूप की असिद्धि हो।

विशेस(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विशेष] दे० 'विशेष'। उ०—मिश्रत माँहो माँह मिल, बाँधे उकत विशेस।—रघु० रू०, पृ० ४६।

विशोक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशोक वृक्ष। २. युधिष्ठिर के एक अनुचर का नाम। ३. पुराणानुसार ब्रह्मा के एक मानस पुत्र का नाम। ४. शोक का अंत या अपनयन (को०)। ५. एक दानव (को०)। ६. भीम के सारथि का नाम। ८. एक पर्वत-श्रेणी (को०)।

यौ०—विशोककोट=एक पर्वत का प्राचीन नाम।

विशोक^{2}—वि० जिसे शोक न हो। शोकरहित।

विशोकता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शोकरहित होने का भाव या धर्म

विशोकषष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चैत्र शुक्ला षष्ठी।

विशेष—कहते हैं कि इस दिन व्रत करने से मनुष्य को शोक नहीं होता।

विशोका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. योग दर्शन के अनुसार वह चित्तवृत्ति जो संप्रज्ञात समाधि से पहले होती है। इसे ज्योतिष्मती भी कहते हैं। २. दुःख से छुटकारा। शोक से मुक्ति (को०)। ३. स्कंद की मातृकाओं में एक का नाम (को०)।

विशोणित—वि० [सं०] जिसमें रक्त न हो (को०)।

विशोध—वि० [सं०] विशुद्ध करने योग्य। साफ करने लायक।

विशोधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अच्छी तरह साफ करना। २. विष्णु। ३. पाप या दोष आदि से रहित होना (को०)। ४. प्रायश्चित्त (को०)। ५. निश्चित वा निर्णीत होना (को०)। ६. रेचन (को०)। ७. इधर उधर फैली पेड़ की शाखाओं को छाँटना या काटना (को०)।

विशोधनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ब्रह्मा की पुरी का नाम। २. नागदंती। ३. नीली नामक पौधा। ४. पान। तांबूल।

विशोधनीय—वि० [सं०] १. शुद्ध करने योग्य। २. सुधार करने लायक। ३. रेचन के योग्य (को०)।

विशोधित—वि० [सं०] १. शुद्ध किया हुआ। साफ किया हुआ। २. निर्मल (को०)।

विशोधिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नागदंती। २. नीली। ३. जमालगोटा।

विशोधिन बीज—संज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटा।

विशोधी—वि० [सं० विशोधिन्] बिलकुल शुद्ध करनेवाला। विशुद्धि करनेवाला।

विशोध्य^{1}—वि० [सं०] १. शुद्ध या पवित्र करने योग्य। साफ करने योग्य। २. जो घटाया या कम किया जाय। घटाने लायक।

विशोध्य^{2}—संज्ञा पुं० ऋण। कर्ज (को०)।

विशोभित—वि० [सं०] सुसज्जित (को०)।

विशोष—संज्ञा पुं० [सं०] नीरसता। शुष्कता। रूखापन।

विशोषण—संज्ञा पुं० [सं०] अच्छी तरह सोखना।

विशोषित—वि० [सं०] १. सुखाया हुआ। शुष्क किया हुआ। २. म्लान। मुर्झाया हुआ (को०)।

विशोषी—संज्ञा पुं० [सं० विशोषिन्] अच्छी तरह सोखनेवाला।

विश्^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह जिसने जन्म लिया हो। प्रजा। २. कन्या। लड़की। ३. प्रवेश। रसाई (को०)। ४. कुल। वंश। खानदान (को०)। ५. निवास। टिकान (को०)। ६. संपत्ति। धन दौलत।

विश्^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. तृतीय वर्ण। वैश्य। २. आदमी। मनुष्य। ३. जनता (को०)।

विश्न—संज्ञा पुं० [सं०] दीप्ति। कांति (को०)।

विश्पति—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विश्पत्नी] १. राजा। २. वैश्यों का प्रधान, मुखिया या पंच। उ०—अग्नि विश्पति था। ये अपनी बस्ती को विश् कहते थे।—प्र० भा० प०, पृ० ६६।

विश्यापर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ।

विश्रंभ—संज्ञा पुं० [सं० विश्रम्भ] १. विश्वास। एतबार। २. प्रेमी और प्रेमिका में रति के समय होनेवाला झगड़ा। रतिकालीन प्रेमकलह। ३. प्रेम। मुहब्बत। ४. हत्या। मार डालना। ५. स्वच्छंदतापूर्वक घूमना फिरना। ६. गुप्त बात। रहस्य (को०)। ७ आराम। विश्राम (को०)। ८. घनिष्ठता। आत्मीयता (को०)। ९. स्नेह से पूछना। प्रेम से पूछना (को०)।

विश्रंभ कथा—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्रम्भकथा] प्रेमी और प्रेमिका के बीच एकांत में होनेवाली प्रेमचर्चा। प्रेमपूर्ण बातचीत। उ०—सुख रजनी की विश्रंभ कथा सुनती।—लहर, पृ० ६७।

विश्रंभण—संज्ञा पुं० [सं० विश्रम्भण] विश्वास पाना [को०]।

विश्रंभभूमि—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्रम्भभूमि] १. विश्वसनीय व्यक्ति। २. विश्वास के योग्य विषय [को०]।

विश्रंभस्थान—संज्ञा पुं० [सं० विश्रम्भस्थान] दे० 'विश्रंभभूमि'।

विश्रंभी—वि० [सं० विश्रम्भिन्] १. विश्वासी। विश्वस्त। २. विश्वासप्राप्त। ३. प्रेम संबंधी। प्रेमविषयक। ४. गोप्य [को०]।

विश्रणन—संज्ञा पुं० [सं०] दान। दान करना। उपहार देना [को०]।

विश्रब्ध—वि० [सं०] १. जो उद्धत न हो। शांत। २ जिसका विश्वास किया जाय। विश्वसनीय। ३. जिसे किसी प्रकार का भय न हो। निर्भय। निडर। ४. दृढ़। स्थिर (को०)। ५. नम्र। विनीत। विनत (को०)। ६. अत्यधिक। बहुतज्यादा। ७. धीर (को०)।

विश्रब्धनवोढा—संज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य में नवोढा नायिका जिसका अपने पति पर कुछ कुछ अनुराग और कुछ कुछ विश्वास होने लगा हो। जैसे, जाहि न चाह कहूँ रति की सु कछू पति को पतियान लगी है। त्यों पदमाकर आनन में रुचि, कानन भौंह कमान लगी है। देति पिया न छुवै छतियाँ बतियान में तो मुस्क्यान लगी है। प्रीतम पान खवाइबे को परजंक के पास लौं जान लगी है।—पद्माकर। (शब्द०)।

विश्रब्धप्रलापी—वि० [सं० विश्रब्धप्रलापिन्] गोपनीय बातें कहनेवाला [को०]।

विश्रम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्राम'।

विश्रमकर—वि० [सं०] विश्राम करनेवाला। उ०—श्रम कर तू विश्रमकर।—अर्चना, पृ०। ९२।

विश्रमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. आराम। विश्राम। २. विराम। समाप्ति। विरति [को०]।

विश्रमित—वि० [सं०] १ जिसे विश्राम दिया गया हो। २. जिसने विश्राम किया हो [को०]।

विश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरण। आश्रय। सहारा। २. अवलंबन [को०]।

विश्रयी—वि० [सं० विश्रयिन्] जो सहारे पर हो। आश्रय लेनेवाला [को०]।

विश्रवण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

विश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० विश्रवस्] एक प्राचीन ऋषि जो पुलस्त्य मुनि के पुत्र थे और उनकी पत्नी हविर्भू के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। कुबेर इन्हीं के पुत्र थे और इन्हीं की पत्नी इलविड़ा के गर्भ से जनमे थे। इन्हीं की दूसरी पत्नी कैकसी के गर्भ से रावण, कुंभकर्ण, विभीषण और सूर्पणखा का जन्म हुआ था।

विश्रांत¹—वि० [सं० विश्रान्त] १. जिसने विश्राम कर लिया हो। जो थकावट उतार चुका हो। २. विरमित। रुका या रोका हुआ (को०)। ३. सौम्य। शांत। स्वस्थ (को०)। ४. समाप्त (को०)। ५. रहित। वंचित (को०)। ६. क्लांत। अत्यंत थका हुआ (को०)। ७. घटा हुआ (दुःखादि)।

विश्रांत²—संज्ञा पुं० [सं० विश्रान्त] यमुना तट का एक घाट विश्रामघाट। उ०—श्री जमुना जी के तीर विश्रांत पर जाइ बैठे। - दो सौ बावन०, भा० १, पृ० १८१।

यौ०—विश्रांतकथ = जो चुप हो। मौन। मूक। रुद्धवाक्। विश्रांतकर्णयुगल = जो कानों तक पहुँचता हो। कानों तक पहुँचनेवाला। विश्रांतपुष्पोद्गम = जिसमें फूल आना बंद हो गया हो। विश्रांतविलास = क्रीड़ा कौतुक का त्याग कर देनेवाला। विश्रांतवैर = शत्रुता त्याग देनेवाला।

विश्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्रान्ति] १. विश्राम। आराम। २. पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम।

विशेष—कहते हैं, जनार्दन ने यहीं आकर विश्राम किया था।

३. विराम। रोक (को०)। ४. दुःख शोकादि का न्यून होना। समाप्ति। अंत (को०)।

यौ० = विश्रांतिकृत = आराम पहुँचानेवाला। विश्रांतिभूमि = विश्राम देनेवाली वस्तु या स्थान।

विश्राणन—संज्ञा पुं० [सं०] दान देना। दान [को०]।

विश्राणित—वि० [सं०] १. प्रदत्त। दान स्वरूप दिया हुआ। २. बाँटा हुआ। विभक्त [को०]।

विश्राम—संज्ञा पुं० [सं०] १. अधिक समय तक कोई काम या परिश्रम करने के कारण थक जाने पर रुकना या ठहरना। श्रम मिटाना। थकावट दूर करना। आराम करना। उ०—किय विश्रामन मगु महिपाला।—तुलसी (शब्द०)। २. ठहरने का स्थान। विश्राम करने का स्थान। ३. शांति। आराम। चैन। सुख। स्वस्थता। उ०—कोउ विश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिन। चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिय।—तुलसी (शब्द०)। ४. विराम। रोक (को०)। ५ न्यूनता। कमी (को०)। ६. समाप्ति। अंत (को०)। ७. श्रम दूर करने के लिये गहरी साँस लेना। ८. मकान। गृह (को०)।

विश्रामण—संज्ञा पुं० [सं०] विश्राम देना। आराम कराना [को०]।

यौ०—विश्रामकक्ष, विश्रामवेश्म = आराम करने का स्थान या कमरा। विश्रामस्थान = विश्राम या विराम करने की जगह।

विश्रामालय—संज्ञा पुं० [सं० विश्राम + आलय] यात्रियों के आराम करने का भवन। उ०—जिसमें अनेक कूप, वापी, विश्रामालय, लताकुंज।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ७०।

विश्राव—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत अधिक प्रसिद्धि। शोहरत। २. ध्वनि। ३. झरना, बहना या रसना। क्षरण।

विश्रावण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वर्णन करना। सुनाना। २. प्रवाहित करना। बहाना। ३. खून बहाना [को०]।

विश्री¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्यु। मौत।

विश्री²—वि० [सं०] १. जिसकी श्री नष्ट हो गई हो। शोभाहीन। उ०—लगती विश्री और विकृत आज मानवकृति। एकत्वशून्य है विश्वमानवी संस्कृति।—युगांत, पृ० ११। २. भद्दा। कुरूप।

विश्रुत^1—वि० [सं०] १. जो जाना या सुना हुआ हो। २. प्रसिद्ध। विख्यात। मशहूर। ३. प्रसन्न। आनंदित। खुश (को०)। ४. बहता हुआ (को०)।

विश्रुत^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रसिद्धि। ख्याति। २. विद्या। शिक्षा (को०)। ३. वसुदेव का एक पुत्र। ४. भवभूति का एक नाम [को०]।

विश्रुतात्मा—संज्ञा पु० [सं० विश्रुतात्मन्] विष्णु।

विश्रुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रसिद्धि। शोहरत। २. झरना, बहना या रसना। ३. संगीत में एक श्रुति (को०)।

विश्लथ—वि० [सं०] १. विशेष श्लथ। ढीला। २. निर्बंध। बंधनमुक्त। ३. थका हुआ। मंद। स्फूर्तिहीन। उ०—चूर्ण नील कुंतल छहरा दिक् सौरभ विश्लथ।—रजत०, पृ० ६७।

विश्लथित—वि० [सं०] विश्लथ किया हुआ [को०]।

विश्लिष्ट—वि० [सं०] १. जो अलग हो गया हो। जो मिला हुआ न हो। जिसका विश्लेषण हो चुका हो। २. विकसित। खिला हुआ। ३. जो प्रकट हो। प्रकाशित। ४. जो खुला हुआ हो। मुक्त। ५. थका हुआ। शिथिल। ६. अपने समूह से अलग किया हुआ (को०)। ७. (अंग या अवयव) जो स्थानभ्रष्ट हो (को०)।

विश्लिष्टसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्लिष्टसन्धि] १. वैद्यक के अनुसार हड्डी टूटने का एक प्रकार। २. शरीर के अंगों की किसी संधि का चोट आदि के कारण टूटना।

विश्लेष—संज्ञा पुं० [सं०] १. अलग होना। पृथक् होना। २. वियोग। (पति पत्नी या प्रेमी प्रेमिका का)। ३. बिछोह। बिलगाव। ४. शिथिलता। थकावट। ५. किसी की ओर से मन हट जाना। ६. विकास। ७. अपाय। हानि। अभाव (को०)। ८. दरार। छिद्र (को०)। ९. (गणित में) योग का विपर्यय (को०)।

विश्लेषण—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पदार्थ के संयोजक द्रव्यों का अलग अलग करना। २. आलोचना। विवेचन। व्याख्यान (को०)। ३. वायु के प्रकोप से फोड़े या घाव में होनेवाली एक प्रकार की वेदना।

विश्लेषित—वि० [सं०] १. अलग किया हुआ। २. तोड़ा हुआ। भग्न। ३. विदीर्ण या फाड़ा हुआ [को०]।

विश्लेषी—वि० [सं० विश्लेषिन्] १. वियुक्त। पृथक्। २. ढीला किया हुआ। ३. अलग अलग होनेवाला। बिखरनेवाला [को०]।

विश्लोक—वि० [सं०] जो ख्यात न हो। अप्रसिद्ध [को०]।

विश्वंकर^1—संज्ञा पुं० [सं० विश्वङ्कर] आँख। चक्षु [को०]।

विश्वंकर^2—वि० सृष्टिकर्ता [को०]।

विश्वंतर—संज्ञा पुं० [सं० विश्वन्तर] वह जो सबको पराभूत कर दे। भगवान् बुद्ध का एक नाम।

विश्वंभर—संज्ञा पुं० [सं० विश्वम्भर] १. सारे विश्व का पालन या धारण करनेवाला, परमेश्वर। २. विष्णु। ३. एक उपनिषद् का नाम। ४. अग्नि (को०)। ५. एक प्रकार का विच्छू या उससे मिलता जुलता जानवर (को०)।

विश्वंभरक—संज्ञा पुं० [मं० विश्वम्भरक] एक तरह का विच्छू या उस आकार का जीव। एक प्रकार का जीव उ०—प्रथम एक पुरुष खोदने पर श्वेत रंग का विश्वंभरक दिखाई देता है।—बृहत्०, पृ० २५९।

विश्वंभरा—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वम्भरा] पृथ्वी।

यो०—विश्वंभरा पुत्र—मंगल ग्रह। कुज।

विश्वंभरी—संज्ञा [सं० विश्वम्भरी] पृथ्वी [को०]।

विश्वंभरेश्वर—संज्ञा पुं० [सं० विश्वम्भरेश्वर] १. पुराणानुसार हिमालय के एक शिवलिंग का नाम। २. राजा। भूपति (को०)।

विश्व^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. चौदहों भुवनों का समूह। समस्त ब्रह्मांड। विशेष दे० 'ब्रह्मांड'। २. संसार। जगत्। दुनिया। ३ सोंठ। ४. बोल नामक गंधद्रव्य। ५. देवताओं का एक गण।

विशेष—इसमें दस देवता हैं—वसु, सत्य, क्रतु, दक्ष, काल, काम, धृति, कुरु, पुरूरवा और माद्रवा। ये धर्म के पुत्र और दक्ष की कन्या विश्वा के गर्भ से उत्पन्न माने जाते हैं।

६. जीवात्मा। ७. विष्णु। ८. शिव। ९. शरीर। देह। १०. नागरिक। शहराती। नागर (को०)। ११. तेरह की संख्या का वाचक शब्द (को०)। १२ संस्कृत का एक अभिधान ग्रंथ जिसका नाम विश्वप्रकाश है। १३. पितृगणों का एक वर्ग (को०)।

विश्व^2—वि० १. समस्त। सब। २. बहुत अधिक। ३. हर एक। प्रत्येक (को०)।

विशेष—इन अर्थों में इस शब्द का व्यवहार यौगिक शब्द बनाने के लिये उनके आरंभ में होता है।

विश्वक—वि० [सं०] १. संपूर्ण। समस्त। पूरा। २. सबमें व्याप्त। सर्वव्यापक (को०)।

विश्वकद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिकारी कुत्ता। २. खल। दुष्ट। पाजी। ३. शब्द। आवाज।

विश्वकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वकर्तृ] संसार को उत्पन्न करनेवाला, परमेश्वर।

विश्वकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो सब प्रकार के कार्य करने में चतुर हो।

विश्वकर्मजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य की पत्नी संज्ञा का एक नाम।

विश्वकर्मसुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य की पत्नी, संज्ञा।

विश्वकर्मा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वकर्म्मन्] १. समस्त संसार की रचना करनेवाला, ईश्वर। २. ब्रह्मा। ३. सूर्य। ४. एक प्रसिद्ध आचार्य अथवा देवता जो सब प्रकार के शिल्पशास्त्र के आविष्कर्ता और सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता माने जाते हैं।

विशेष—पुराणानुसार ये आठ वसुओं में से प्रभास नामक वसु के पुत्र थे और देवताओं के लिये विमान तथा प्रासाद आदि बनाया करते थे। आग्नेयास्त्र इन्हीं का बनाया हुआ माना जाता है। महाभारत में ये सर्वश्रेष्ठ शिल्पी और अमर कहे गए हैं रामायण के अनुसार इन्होंने राक्षसों के लिये लंका बनाई थी। वेदों में ये सर्वदर्शी, सर्वनियंता और विश्वज्ञ कहे

गए हैं। वेदों में कहीं कहीं 'विश्वकर्मा' शब्द इंद्र, सूर्य, प्रजापति, विष्णु आदि के अर्थ में भी आया है। महाभारत के अनुसार इनकी माता का नाम लावण्यमयी था और सूर्य की पत्नी संज्ञा इन्हीं की कन्या थी। कहते हैं, जब सूर्य के प्रखर ताप को संज्ञा न सह सकी, तब इन्होंने उसका आठवाँ अंग काट लिया और उससे सुदर्शन चक्र, त्रिशूल आदि बनाकर देवताओं में बाँटे। सृष्टि की रचना करने के कारण ये प्रजापति और त्वष्टा भी कहे जाते हैं। भाद्रपद की संक्रांति को इनकी पूजा हुआ करती है।

५. शिव का एक नाम। ६. चरक के अनुसार शरीर में की चेतना नामक धातु। ७. बढ़ई। ८. मेमार। राज। ९. लोहार। १०. सूर्य की सात किरणों में से एक किरण (को०)। ११. एक मुनि का नाम (को०)। १२. एक परिमाण। एक माप (को०)।

विश्वकर्मेश—संज्ञा पुं० [सं०] एक शिवलिंग का नाम।

विश्वकवि—संज्ञा पुं० [सं०] १. विश्वविश्रुत कवि। सर्वश्रेष्ठ कवि। महाकवि। उ०—अस्ताचल रवि, जल छल छल छवि, स्तब्ध विश्वकवि, जीवन उन्मन।—अपरा, पृ० २४। २. बंग भाषा के ख्यात कवि रवींद्रनाथ ठाकुर का एक उपाधि।

विश्वका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक जलपक्षी। गंगाचिल्ली [को०]।

विश्वकाय—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मांड जिनका शरीर है, विष्णु।

विश्वकाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा। उ०—तुम्हीं में है महामाया, जुड़ी छुटकर विश्वकाया।—अर्चना, पृ० ८।

विश्वकारक—संज्ञा पुं० [सं०] शिव।

विश्वकारु—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वकर्मा'।

विश्वकार्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य की सात प्रधान किरणों में से एक का नाम। २. सूर्य की सात प्रधान ज्योतियों का समूह।

विश्वकाव्य—संज्ञा पुं० [सं० विश्व + काव्य] ब्रह्मा का बनाया हुआ विश्वरूपी काव्य। काव्य के समान रमणीय, विश्व। संसार। उ०—इस विश्वकाव्य की रसधारा में जो थोड़ी देर के लिये निमग्न न हुआ, उसके जीवन को मरुस्थल की यात्रा ही समझना चाहिए।—रस०, पृ० ८।

विश्वकूट—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार हिमालय की एक चोटी का नाम।

विश्वकृत—वि० [सं०] विश्वकर्मा द्वारा निर्मित या रचित [को०]।

विश्वकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. विश्वकर्मा का एक नाम। २. जगत् का निर्माता, ब्रह्मा (को०)।

विश्वकृष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सब लोगों को अपने सगे संबंधी के समान समझता हो। २. वह जो सबमें रहता हो या व्याप्त हो (को०)।

विश्वकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अनिरुद्ध का एक नाम। २. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

विश्वकोश—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह कोश या भांडार जिसमें संसार भर के सब पदार्थ आदि संगृहीत हों। २. वह ग्रंथ जिसमें संसार भर के सब प्रकार के विषयों आदि का विस्तृत विवेचन या वर्णन हो। (अं० इन्साइक्लोपीडिया)।

विश्वकोष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वकोश'।

विश्वक्शेन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. पुराणानुसार तेरहवें मनु का नाम। ३ कालिकापुराण के अनुसार एक चतुर्भुज देवता जो शंख, चक्र गदा और पद्म धारण किए रहते हैं और जो विष्णु का निर्माल्य धारण करनेवाले माने जाते हैं। दे० 'विष्वक्सेन'।

विश्वक्शेना—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रियंगु नामक वृक्ष। कँगनी।

विश्वक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] विश्व या ब्रह्मांड का नाश। प्रलय।

विश्वक्षिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विश्वकृष्टि' [को०]।

विश्वगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वगङ्गा] बरार प्रदेश की एक छोटी नदी का नाम।

विश्वगंध—संज्ञा पुं० [सं० विश्वगन्ध] १. सर्वत्र गंध देनेवाला। बोल नामक गंधद्रव्य। २. जिसके सभी अंग गंधमय हों, प्याज।

विश्वगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वगन्धा] पृथ्वी।

विश्वगंधि—संज्ञा पुं० [सं० विश्वगन्धि] भागवत के अनुसार पृथु के पुत्र का नाम।

विश्वग—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मा। २. भागवत के अनुसार मरीचि के पुत्र का नाम जिसका जन्म पूर्णिमा के गर्भ से हुआ था।

विश्वगत—वि० [सं०] सर्वव्यापक। सर्वगत।

विश्वगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सबको धारण करता हो, विष्णु। २. शिव। ३. पुराणानुसार रैवत के एक पुत्र का नाम।

विश्वगाथ—संज्ञा पुं० [सं०] विश्व जिसकी गाथा है, ईश्वर। परमात्मा। उ०—जीवन के विपुल व्याल, मुक्त करो, विश्वगाथ।—अर्चना, पृ० ६।

विश्वगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

विश्वगोचर—वि० [सं०] सर्वविदित। जो सबके समझने योग्य हो [को०]।

विश्वगोप्ता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वगोप्तृ] १. विष्णु। २. इंद्र। ३. वह जो समस्त विश्व का पालन करता हो।

विश्वग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वग्रन्थि] हंसपदी लता। २. लाल लजालू।

विश्वग्वात—संज्ञा पुं० [स्त्री०] दे० 'विश्वग्वायु'।

विश्वग्वायु—संज्ञा पुं० [स्त्री०] वह वायु जो सब जगह समान रूप से चलती है।

विशेष—ऐसी वायु अनेक प्रकार के दोष और उत्पात उत्पन्न करनेवाली मानी जाती है।

विश्वचंद्र—वि० [सं० विश्वचन्द्र] पूर्णतः दीप्त या प्रभामय [को०]।

विश्वचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार बारह प्रकार के महादानों में से एक प्रकार का महादान।

विशेष—इसमें एक हजार पल का सोने का एक चक्र या पहिया बनवाया जाता है जिसमें सोलह आरे होते हैं; और तब यह चक्र कुछ विशिष्ट विधानों के अनुसार दान किया जाता है।

विश्वचक्रात्मा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वचक्रात्मन्] वह जिसका स्वरूप या आत्मा विश्वचक्र अर्थात् ब्रह्मांड है ; विष्णु ।

विश्वचक्ष—वि० [सं०] सब कुछ देनेवाला [को०] ।

विश्वचक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वचक्षु' [को०] ।

विश्वचक्षा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वचक्षुस्] सब देखनेवाला, नेत्र [को०] ।

विश्वचक्षु—संज्ञा पुं० [सं० विश्वचक्षुस्] १. ईश्वर । २. लोकचक्षु । सूर्य । ३. सबको देखनेवाला, नेत्र । आँख (को०) ।

विश्वचर—वि० [सं०] विश्वव्याप्त । उ०—आनंद का विश्वचर रूप 'यज्ञ' है । अन्नाद का अन्नग्रहण करना ही यज्ञ कहाता है इसलिये अन्न नाम से भी इस रूप का व्यवहार करते हैं ।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ६२२ ।

विश्वचर्षणि—वि० [सं०] सर्वव्यापक । सर्वत्र व्याप्त [को०] ।

विश्वच्यवा—संज्ञा पुं० [सं०] सुर्य की सप्त रश्मियों में से एक का नाम [को०] ।

विश्वछवि—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्व + छवि] संसार की शोभा । उ०—रश्मि नभ नील पर, सतत शत रूप धर, विश्वछवि में उतर ।—अपरा, पृ० १२ ।

विश्वजन—संज्ञा पुं० [सं०] मानव । मनुष्य [को०] ।

विश्वजनीन—वि० [सं०] विश्व भर के लिये हितकर । सबके लिये सुखदायक । उ०—इतना आकस्मिक उत्थान और पतन ! जहाँ एक विश्वजनीन धर्म की उत्पत्ति की सूचना हुई ।—इंद्र०, पृ० ३६ ।

विश्वजनीय—वि० [सं०] विश्वजन का । सर्वहितकारी । सबके उपयोग में आनेवाला [को०] ।

विश्वजन्य—वि० [सं०] दे० 'विश्वजनीन' ।

विश्वजयी—वि० [सं० विश्वजयिन्] संसार को जीतनेवाला । उ०—जीत न सका एक अबला का मन तू विश्वजयी कैसा ?— साकेत, पृ० ३८८ ।

विश्वजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोंठ ।

विश्वजित्—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का यज्ञ । उ०—किसने मख विश्वजित् किया ? रख मृत्पात्र सभी लुटा दिया ?—साकेत, पृ० ३२६ । २. वरुण का पाश । ३. महाभारत के अनुसार एक प्रकार की अग्नि । ४. विष्णु का एक नाम (को०) । ५. एक दानव का नाम । ६. सत्यजित् के पुत्र का नाम । ७. वह जिसने सारे विश्व पर विजय प्राप्त की हो ।

विश्वजीव—संज्ञा पुं० [सं०] ईश्वर ।

विश्वज्योति^{1}—वि० [सं०] पूर्णतः दीप्त वा द्योतित [को०] ।

विश्वज्योति^{2}—संज्ञा पुं० १. एक साम । २. एक एकाह यज्ञ । सूर्य ।

विश्वज्योतिष—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

विश्वतः—अव्य० [सं० विश्वतस्] चारो ओर । सभी ओर । सर्वत्र । [illegible]ब जगह [को०] ।

विश्वतनु—संज्ञा पुं० [सं०] समग्र विश्व जिनका शरीर माना गया है—विष्णु ।

विश्वतुलसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बबुई तुलसी । बनतुलसी ।

विश्वतृप्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु । २. वह जो प्रत्येक से तुष्ट और प्रसन्न हो (को०) ।

विश्वतोमुख—वि० [सं०] जिसे चारों ओर मुँह हो [को०] ।

विश्वतोया—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंगा नदी ।

विश्वत्रय—संज्ञा पुं० [सं०] तीन लोक—आकाश, पाताल और मर्त्यलोक । त्रिलोक [को०] ।

विश्वथा—अव्य० [सं०] १. सर्वत्र । सब जगह । २. सदा । सर्वदा [को०] ।

विश्वदंष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक असुर का नाम [को०] ।

विश्वदानि—वि० [सं०] सबका दाता । सबको देनेवाला [को०] ।

विश्वदाव—वि० [सं०] जगत् को जलानेवाला [को०] ।

विश्वदासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि की सातो जिह्वाओं का एक नाम ।

विश्वदेव—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार के देवता जिनकी पूजा नांदीमुख श्राद्ध में होती है । विश्वदेवा ।

विश्वदेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नागबला । गँगेरन । २. लाल दंडोत्पल । ३. कसा । गवेधुक (को०) ।

विश्वदैव—संज्ञा पुं० [सं०] उत्तराषाढ़ा नक्षत्र, जिसके देवता विश्वदेव माने जाते हैं ।

विश्वदैवत—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वदैव' ।

विश्वधर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

विश्वधरण—संज्ञा पुं० [सं०] सबका भरण पोषण [को०] ।

विश्वधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विश्वधरण' ।

विश्वधाता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वधातृ] विश्व को धारण करनेवाला । ईश्वर [को०] ।

विश्वधाम—संज्ञा पुं० [सं० विश्वधामन्] १. ईश्वर । २. स्वदेश । अपना देश ।

विश्वधार—संज्ञा पुं० [सं०] शाकद्वीप के राजा मेधातिथि के एक पुत्र का नाम ।

विश्वधारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

विश्वधारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी ।

विश्वधारी—संज्ञा पुं० [सं० विश्वधारिन्] देवता । सुर [को०] ।

विश्वधेना—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी । धरित्री ।

विश्वधेनु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

विश्वनंद—संज्ञा पुं० [सं० विश्वनन्द] ब्रह्मा के एक मानसपुत्र [को०] ।

विश्वनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । महादेव । २. काशी का प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग ।

यौ०—विश्वनाथधाम, विश्वनाथनगरी, विश्वनाथपुरी = काशी । वाराणसी ।

३. संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान् जो 'साहित्यदर्पण' नामक रीतिग्रंथ के प्रणेता हैं ।

विशेष—ये उत्कल के भट्ट ब्राह्मण थे। आलंकारिक चक्रवर्ती और कविराज इनकी उपाधि थी। इनके पिता का नाम चंद्रशेखर था। कविराज विश्वनाथ विद्वान् होने के साथ राज्य के उच्च पदाधिकारी थे और सांधिविग्रहिक महापात्र थे। इनका समय विक्रम की चौदहवीं शताब्दी है।

विश्वनाभ—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

विश्वनाभि—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णु का चक्र।

विश्वपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. ईश्वर। २. एक अग्नि (को०)। ३. श्रीकृष्ण।

विश्वपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुईं आँवला।

विश्वपा—संज्ञा पुं० [सं०] १. सबकी रक्षा करनेवाला, ईश्वर। २. सूर्य (को०)। ३. चंद्रमा (को०)। ४. अग्नि (को०)।

विश्वपावक—वि० [सं०] जो सबको पकाता हो। (अग्नि) सबको पकानेवाला (को०)।

विश्वपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम।

विश्वपाता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वपातृ] एक पितृवर्ग [को०]।

विश्वपाल—संज्ञा पुं० [सं०] ईश्वर।

विश्वपावन—वि० [सं०] सबको पवित्र करनेवाला।

विश्वपावनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तुलसी।

विश्वपूजित—वि० [सं०] जो सबके द्वारा पूजित हो। विश्व द्वारा पूज्य। सर्वसंमान्य।

विश्वपूजिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] तुलसी।

विश्वप्रकाशक—संज्ञा सं० [सं०] वह जो समग्र विश्व को प्रकाशित करता हो। सूर्य।

विश्वप्रबोध—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

विश्वप्स—संज्ञा पुं० [सं० विश्वप्सन्] १. अग्नि। २. चंद्रमा। ३. सूर्य। ४. देवता। ५. विश्वकर्मा।

विश्वप्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि।

विश्वबंधु—संज्ञा पुं० [सं० विश्वबन्धु] १. विश्व का बंधु। संसार का मित्र। २. शिव। महादेव।

विश्वबंधुता—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वबन्धुता] दे० 'विश्वबंधुत्व'।

विश्वबंधुत्व—संज्ञा पुं० [सं० विश्वबन्धुत्व] १. शिवत्व। शिवता। २. सारे विश्व के मानवों में बंधु का भाव। सब को भाई समझने का भाव।

विश्वबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. महादेव।

विश्वबीज—संज्ञा पुं० [सं०] विश्व की मूल प्रकृति या माया।

विश्वबोध—संज्ञा पुं० [सं०] भगवान् बुद्ध का एक नाम।

विश्वभद्र[१]—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'सर्वतोभद्र'।

विश्वभद्र[२]—वि० पूर्णतया अनुकूल [को०]।

विश्वभरणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सारे संसार का पालन करनेवाली जगदंबिका। उमा। दुर्गा। उ०—भज भिखारी, विश्वभरणा सदा अशरण शरण शरणा।—अर्चना, पृ० ३।

विश्वभरनⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विश्व+भरण] १. संसार का पालन। उ०—विश्वभरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।—मानस० १। २. विश्वपालक। भगवान्। उ०—भजे न विश्वभरन बनवारी। अइया मनुषहुँ बूझ तुम्हारी।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ३२८।

विश्वभर्ता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वभर्तृ] ईश्वर।

विश्वभव—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्म जिससे सारे विश्व की सृष्टि हुई है।

विश्वभाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. ईश्वर। २. विष्णु का नाम (को०)।

विश्वभावन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वभाव'।

विश्वभुक्[१]—संज्ञा पुं० [सं० विश्वभुज्] दे० 'विश्वभुज्'।

विश्वभुज्[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. ईश्वर। २. इंद्र। ३. अग्नि। ४. इंद्र का पुत्र। ५. पितरों का एक गण (को०)।

विश्वभुज्[२]—वि० सर्वभोक्ता। सब कुछ खानेवाला। सबका भोग करनेवाला [को०]।

विश्वभुजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक देवी का नाम।

विश्वभू—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध [को०]।

विश्वभेषज—संज्ञा पुं० [सं०] सोंठ।

विश्वभोग—संज्ञा पुं० [सं०] वह भोग जो सारे संसार के लिये हो। सबका सुख। उ०—तुम धन्य! तुम्हारा निःस्व त्याग। है विश्वभोग का वर साधन।—युगांत, पृ० ५४।

विश्वभोजा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वभोजस] १. वह जो सब कुछ भोग कर सकता हो। २. वह जो सबकी रक्षा करता हो [को०]।

विश्वमंच—संज्ञा पुं० [सं० विश्व+मञ्च] विश्वरूपी मंच। संसार। दुनिया। जगत्। उ०—तुम विश्वमंच पर हुए उदित, बन जगजीवन के सूत्रधार।—युगांत, पृ० ५६।

विश्वमवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक जिह्वा का नाम।

विश्वमय—संज्ञा पुं० [सं०] ईश्वर। वह जिसका रूप समस्त विश्व में है। उ०—विश्वमय का जो विशद निवास, व्याप्त उसमें मेरे चिर प्राण।—मधुज्वाल, पृ० ६७।

विश्वमहेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] महादेव।

विश्वमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वमातृ] समस्त विश्व की माता, दुर्गा।

विश्वमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती का एक नाम।

विश्वमूर्ति[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २. ईश्वर (को०)। ३. शिव (को०)।

विश्वमूर्ति[२]—वि० सब रूपों में रहनेवाला। सर्वव्यापक [को०]।

विश्वमोहन—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

विश्वयु—संज्ञा पुं० [सं०] वायु [को०]।

विश्वयुद्ध—संज्ञा पुं० [सं० विश्व+युद्ध] जिसमें दुनिया के अधिकांश राष्ट्र दो गुटों में विभक्त होकर आपस में लड़ें (अं० वर्ल्डवार)।

विश्वयोनि—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मा। २. विष्णु (को०)।

विश्वरथ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार राजा गाधि के पुत्र का नाम जो विश्वामित्र नाम से प्रसिद्ध हैं। विशेष दे० 'विश्वामित्र'।

विश्वरद—संज्ञा पुं० [सं०] मग या भोजक ब्राह्मणों का एक धार्मिक ग्रंथ जिसे वे अपना वेद मानते थे और जो भारतीय आर्यों के वेद का विरोधी था।

विश्वराज, विश्वराट्—संज्ञा पुं० [सं०] सारे संसार का राजा [को०]।

विश्वरुचि¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्रकार की देवयोनि। २. एक दानव का नाम।

विश्वरुचि²—संज्ञा स्त्री० अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक जिह्वा का नाम।

विश्वरुची—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विश्वरुचि' [को०]।

विश्वरूप¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. शिव। ३. पुराणानुसार त्वष्टा के एक पुत्र का नाम। ४. भगवान् श्रीकृष्ण का वह स्वरूप जो उन्होंने गीता का उपदेश करते समय अर्जुन को दिखलाया था।

विशेष—श्रीकृष्ण ने उस अवसर पर अर्जुन को यह दिखलाया या समझाया था कि इस समस्त विश्व या ब्रह्मांड में सूर्य, चंद्रमा, तारे, ग्रह आदि जो कुछ हैं, वे सब मेरे ही स्वरूप हैं।

५. पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम। ६. काला अगर (को०)। ७. एक प्रकार का पुच्छल तारा। ८. देवता। उ०—भूपन को रूप धरि विश्वरूप आए हैं।—केशव (शब्द०)।

विश्वरूप²—वि० सर्वत्र विद्यमान। सर्वव्यापक [को०]।

विश्वरूपक—संज्ञा पुं० [सं०] १. काला अगर। २. खिरनी।

विश्वरूपिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आद्या शक्ति। महाशक्ति। उ०—विश्वरूपिणी तुम हो, तुम्हे मूर्ति में रचकर। पूजा की बसंत के दिन दीनता विकच कर।—अपरा पृ० १९७।

विश्वरूपी¹—संज्ञा पुं० [सं० विश्वरूपिन्] [स्त्री० विश्वरूपिणी] विष्णु। जनार्दन।

विश्वरूपी²—संज्ञा स्त्री० अग्नि की एक जिह्वा।

विश्वरेता—संज्ञा पुं० [सं० विश्वरेतस्] १. ब्रह्मा। २. विष्णु [को०]।

विश्वरोचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. नाड़ी या नारीच नामक साग। २. कचूर या पेचुक नामक साग।

विश्वलोचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य। २. चंद्रमा।

विश्वलोप—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषि का नाम।

विश्ववयन—संज्ञा पुं० [सं०] संसार की रचना। विश्वसृष्टि। उ०—उद्धृत शिति दीन हुई दिखा नवल विश्ववयन।—अर्चना, पृ० १०।

विश्ववर्ण—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला।

विश्ववसु—संज्ञा पुं० [सं०] राजा पुरुरवा के एक पुत्र का नाम।

विश्ववाक्—संज्ञा पुं० [सं० विश्ववाच्] असाधारण पुरुष [को०]।

विश्ववाद—संज्ञा पुं० [सं० विश्व+वाद] वह मत या वाद जिसके अनुसार सारे संसार के मानवों को परस्पर भाई भाई माना जाता है। विश्वबंधुत्व।—उ०—यह विश्ववाद साम्राज्यवादियो के प्रभुत्व का साधन है।—आचार्य०, पृ० २२।

विश्ववार—संज्ञा पुं० [पुं०] यज्ञ में सोम का एक संस्कार।

विश्ववारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अत्रि गोत्र की एक स्त्री जो ऋग्वेद के पाँचवें मंडल की कुछ ऋचाओं की ऋषि मानी जाती है।

विश्ववास—संज्ञा पुं० [सं०] संसार। जगत्। दुनिया।

विश्ववाह—वि० [सं०] [वि० स्त्री० विश्वौही] सबको धारण करनेवाला। सबका भरण पोषण करनेवाला [को०]।

विश्ववाहु—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

विश्वविख्यात—वि० [सं०] संसारप्रसिद्ध। विश्वविश्रुत। जगद्विख्यात।

विश्वविजयी—वि० [सं० विश्वविजयिन्] जिसने समग्र संसार को जीत लिया हो। सारी दुनिया को जीत लेनेवाला।

विश्वविद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विश्व की सब बातें जानता हो। बहुत बड़ा पंडित। २. ईश्वर।

विश्वविद्यालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह संस्था जिसमें सभी प्रकार की विद्याओं की उच्च कोटि की शिक्षा दी जाती हो, परीक्षाएँ ली जाती हों और जो लोगों को विद्या संबंधी उपाधियाँ आदि प्रदान करती हो। (अँ० यूनिवर्सिटी)।

विश्वविधायी—संज्ञा पुं० [सं० विश्वविधायिन्] १. देवता। विबुध। २. ब्रह्मा [को०]।

विश्वविभावन—संज्ञा पुं० [सं०] विश्व का विभावन या निर्माण। संसार की रचना [को०]।

विश्वविश्रुत—वि० [सं०] जो संसार भर में प्रसिद्ध हो। जगद्विख्यात।

विश्वविस्व—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

विश्वविस्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैशाख मास की पूर्णिमा [को०]।

विश्ववृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

विश्ववेदा—वि० [सं० विश्ववेदस्] १. सर्वज्ञ। सब कुछ जाननेवाला। २. संत। महात्मा। तपस्वी [को०]।

विश्वव्यचा—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वव्यचस्]

विश्वव्यापक—वि० [सं०] दे० 'विश्वव्यापी'।

विश्वव्यापी¹—संज्ञा पुं० [सं० विश्वव्यापिन्] ईश्वर।

विश्वव्यापी²—वि० जो सारे विश्व में व्याप्त हो।

विश्वश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वश्रवस्] एक मुनि जो कुबेर और रावण आदि के पिता थे।

विश्वश्री—वि० [सं०] जो सबके लिये लाभकर हो (अग्नि)। जो सबको समान रूप से उपयोगी हो [को०]।

विश्वसंप्लव—संज्ञा पुं० [सं० विश्वसम्प्लव] विश्व का विनाश। प्रलय [को०]।

विश्वसंभव—संज्ञा पुं० [सं० विश्वसम्भव] जिससे समग्र संसार उत्पन्न हुआ है, ईश्वर।

विश्वसंवनन—संज्ञा पुं० [सं०] समग्र विश्व का मोहन करना या हरण करना [को०]।

विश्वसंहार—संज्ञा पुं० [सं०] महाप्रलय। विश्व का विनाश [को०]।

विश्वसख—संज्ञा पुं० [सं०] सबका मित्र। सबका सखा।

विश्वसत्तम—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। वासुदेव। श्रीकृष्ण [को०]।

विश्वसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह स्थान जहाँ ऋषि मुनि विश्राम करते हों। २. विश्वास। एतबार।

विश्वसनीय—वि० [सं०] विश्वास करने के योग्य। विश्वास उत्पन्न करने योग्य। जिसका एतबार किया जा सके। जैसे,—(क) हमें यह समाचार विश्वसनीय सूत्र से मिला है। (ख) आपकी सब बातें बहुत घिश्वसनीय हैं।

विश्वसहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक जिह्वा का नाम। २. पृथ्वी (को०)।

विश्वसाक्षी—संज्ञा पुं० [सं० विश्वसाक्षिन्] वह जो सब कुछ देखता है। ईश्वर।

विश्वसाम—संज्ञा पुं० [सं० विश्वसामन्] एक वैदिक ऋषि का नाम जो आत्रेय गोत्र के थे और जो अनेक वैदिक मंत्रों के द्रष्टा थे।

विश्वसार—संज्ञा पुं० [सं०] एक तंत्र का नाम [को०]।

विश्वसारक—संज्ञा पुं० [सं०] कंकारी वृक्ष। बिदर वृक्ष।

विश्वसित—वि० [सं०] विश्वास करने के योग्य। विश्वसनीय। जिसपर विश्वास किया गया हो। विश्वस्त।—उ० उनकी संमति सर्वसाधारण को विश्वसित प्रमाण रूप होती है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ४४०। २. निर्भय। निडर (को०)।

विश्वसृक्—संज्ञा पुं० [सं० विश्वसृज्] १. स्रष्टा। ब्रह्म। २. मयासुर। मय नामक असुर (को०)।

विश्वसृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] संसार की रचना या निर्माण।

विश्वस्त—वि० [सं०] १. जिसका विश्वास किया जाय। विश्वसनीय। २. विश्वास करनेवाला। भरोसा करनेवाला (को०)। ३. निडर। विश्रुब्ध (को०)। ४. जिसपर विश्वास किया गया हो। निष्ठ (को०)।

विश्वस्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विधवा।

विश्वस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतावर।

विश्वस्रष्टा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वस्रष्ट] ब्रह्मा जो सृष्टि का निर्माण करते हैं।

विश्वहर्त्ता—संज्ञा स्त्री० [सं० विश्वहर्तृ] शिव।

विश्वहृदय—संज्ञा पुं० [सं०] अखिल विश्व से प्रेम करनेवाला हृदय। चराचर जगत् में अनुरक्त हृदय। सर्वभूतमय हृदय। उ०—भावयोग की सबसे उच्च कक्षा पर पहुँचे हुए मनुष्य का जगत् के साथ पूर्ण तादात्म्य हो जाता है, उसकी अलग भावसत्ता नहीं रह जाती है, उसका हृदय विश्वहृदय हो जाता है।—रस०, पृ० ७५।

विश्वहेतु—संज्ञा पुं० [सं०] विश्व को उत्पन्न करनेवाले, विष्णु।

विश्वांड—संज्ञा पुं० [सं० विश्वाण्ड] ब्रह्मांड [को०]।

विश्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दक्ष की एक कन्या जो धर्म को ब्याही थी और जिससे सत्य, क्रतु आदि दस पुत्र उत्पन्न हुए थे। २. एक मान जो २० पल का होता है। ३. अतिविषा। अतीस। ४. शतावर। ५. पीपल। ६. सोंठ। उ०—विश्वा, नागर, जगभिषक, महा औषधी नाउँ।—नंद० ग्रं०, पृ० १०४। ७. शंखिनी। चोरपुष्पी। ८. पृथ्वी। भूमि (को०)। ९. अग्नि की सात जिह्वा या अर्चियों में से एक जिह्वा (को०)। १०. एक नदी (को०)।

विश्वाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] ईश्वर।

विश्वाची—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक वैदिक अप्सरा का नाम। २. एक प्रकार का रोग जिसमें वायु के कारण कंधे से उँगलियों तक सारा हाथ न तो फैलाया जा सकता है और न सिकोड़ा जा सकता है।

विश्वातिथि—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो सबका अतिथि हो। संन्यासी [को०]।

विश्वातीत—संज्ञा पुं० [सं०] जो सबसे परे हो, ईश्वर।

विश्वात्मवाद—संज्ञा पुं० [सं०] संपूर्ण संसार को अपनी आत्मा समझने का सिद्धांत। उ०—अहंकारमूलक आत्मवाद का खंडन करके गौतम ने विश्वात्मवाद को नष्ट नहीं किया।—शैली, पृ० १८९।

विश्वात्मा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वात्मन्] १. विष्णु। २. शिव। ३. ब्रह्मा। ४. ईश्वर। परमात्मा (को०)। ५. सूर्य (को०)।

विश्वाद्—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि जो सब कुछ भक्षण करता है।

विश्वादि—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का कषाय।

विशेष—यह कषाय जो सोंठ, वाला, क्षेत्रपर्पटी, मोथा, लालचंदन आदि से बनाया जाता है और जो ज्वर की प्यास, कै तथा दाह आदि को कम करनेवाला माना जाता है।

विश्वाधाया—संज्ञा पुं० [सं० विश्वाधायस्] देवता [को०]।

विश्वाधार—संज्ञा पुं० [सं०] समग्र संसार का आधार। परमेश्वर। उ०—मन का समाहार करो विश्वाधार।—आराधना, पृ० ४६।

विश्वाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] परमेश्वर

विश्वानर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैश्वानर'।

विश्वानुरक्त वि० [सं०] समस्त विश्व से अनुराग रखनेवाला। विश्वहितैषी। उ०—विश्वानुरक्त है अनासक्त।—युगांत, पृ० ५५।

विश्वाप्सु—वि० [सं०] अनेक रूप धारण करनेवाला [को०]।

विश्वाभ्—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. ईश्वर, जो सर्वव्यापक है (को०)।

विश्वामित्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि जो गाधिज, गाधेय और कौशिक भी कहे जाते हैं।

विशेष—विश्वामित्र कान्यकुब्ज के पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र थे, परंतु क्षत्रिय कुल में जन्म लेने पर भी अपने तपोबल से ब्रह्मर्षियों में परिगणित हुए। ऋग्वेद के अनेक मंत्र ऐसे हैं जिनके द्रष्टा विश्वामित्र अथवा उनके वंशज माने जाते हैं। इनका विश्वामित्र नाम ब्राह्मणत्व प्राप्त करने पर पड़ा था; नहीं तो इनका पहला क्षत्रिय दशा का नाम 'विश्वरथ' था। ऋग्वेद में अनेक मंत्र ऐसे मिलते हैं जिनसे सिद्ध होता है कि ये यज्ञों में पुरोहित का कार्य करते थे, और वृत्ति के संबंध में

इनमें तथा वशिष्ठ में बहुत समय तक बराबर झगड़े बखेड़े होते रहते थे। पुराणों में लिखा है कि राजा गाधि को सत्यवती नाम की एक सुंदरी कन्या उत्पन्न हुई थी। वह कन्या उन्होंने ऋचीक ऋषि को दे दी थी। ऋचीक ने एक बार दो अलग अलग चरु तैयार करके अपनी स्त्री सत्यवती को दिए थे और कहा था कि इसमें से यह एक चरु तो तुम खा लेना जिसमे तुम्हें ब्राह्मणों के गुण से संपन्न एक पुत्र होगा; और एक दूसरा चरु अपनी माता को दे देना जिससे उन्हें क्षत्रियों के गुणवाला एक बहुत तेजस्वी पुत्र उत्पन्न होगा। इसी बीच में राजा गाधि अपनी स्त्री सहित वहाँ आए। सत्यवती ने वे दोनों चरु अपनी माता के सामने रख दिए और उनका गुण बतला दिया। माता ने समझा कि ऋचीक ने अपनी स्त्री के लिये बढ़िया चरु तैयार किया होगा; इसलिये उसने उसका चरु तो आप खा लिया और अपना उसे खिला दिया। इससे उसके गर्भ से तो विश्वामित्र का जन्म हुआ, जिसमें क्षत्रिय होने पर भी ब्राह्मणों के से गुण थे, और सत्यवती के गर्भ से जमदग्नि का जन्म हुआ जो ब्राह्मण होने पर भी क्षत्रियों के गुणों से संपन्न थे। विश्वामित्र को शुनःशेफ, देवरात, देवश्रवा, हिरण्याक्ष, गालव, जय, अष्टक, कच्छप, नारायण, नर आदि सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे, जिनके कारण इनके कौशिक वंश की बहुत अधिक वृद्धि हुई थी। कहते हैं, एक बार जब विश्वामित्र ने बहुत बड़ा तप किया था, तब इंद्र तथा समस्त देवताओंने भयभीत होकर मेनका नामक अप्सरा को उनका तप भंग करने के लिये भेजा था। इसी मेनका से विश्वामित्र को शकुंतला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी जो दुष्यंत को ब्याही गई थी। यह भी प्रसिद्ध है कि इक्ष्वाकु वंश के राजा त्रिशंकु ने एक बार सशरीर स्वर्ग जाने की कामना से एक यज्ञ करना चाहा था। परंतु उनके पुरोहित वशिष्ठ ने कहा कि ऐसा होना असंभव है। इसपर त्रिशंकु ने विश्वामित्र की शरण ली और विश्वामित्र ने उन्हें सशरीर स्वर्ग पहुँचा दिया। यह भी कहा जाता है कि विश्वामित्र बहुत बड़े क्रोधी थे और प्रायः लोगों को शाप दे दिया करते थे। राजा हरिश्चंद्र के सत्य की सुप्रसिद्ध परीक्षा लेनेवाले भी यही माने जाते हैं। पुराणों में इनके संबंध मे इसी प्रकार की और भी अनेक कथाएं प्रचलित हैं।

विश्वामित्रप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. नारियल का पेड़। २. भगवान् रामचंद्र। ३. कार्तिकेय [को०]।

विश्वामित्रसृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] तालवृक्ष, भैंस, गधा आदि जिनकी रचना विश्वामित्र ऋषि ने की थी।

विश्वामित्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम।

विश्वामृत—वि० [सं०] अमर। मृत्युंजय [को०]।

विश्वायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विश्व की सब बातें जानता हो। सर्वज्ञ। २. ब्रह्मा।

विश्वराज, विश्वाराट्—संज्ञा पुं० [सं०] समग्र विश्व का शासन करनेवाला। ईश्वर।

विश्वावसु^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार एक गंधर्व का नाम। २. विष्णु। ३. एक संवत्सर का नाम।

विश्वावसु^{2}—संज्ञा स्त्री० रात।

विश्वावास—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विश्वाधार' [को०]।

विश्वाश्रय—संज्ञा पुं० [सं० विश्व + आश्रय] वह जो सबका आश्रय स्वरूप है। ईश्वर।

विश्वाश्रय—वि० विश्व में परिव्याप्त। विश्व की आश्रयभूत। उ०—जागो विश्वाश्रय महिमा धर, फिर देखा।—अपरा, पृ० २०९।

विश्वास—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह धारणा जो मन में किसी व्यक्ति के प्रति उसका सद्भाव, हितैषिता, सत्यता, दृढ़ता आदि अथवा किसी सिद्धांत आदि की सत्यता अथवा उत्तमता का ज्ञान होने के कारण होता है। किसी के गुणों आदि का निश्चय होने पर उसके प्रति उत्पन्न होनेवाला मन का भाव। एतबार। यकीन। जैसे,—(क) मैं तो सदा ईश्वर पर विश्वास रखता हूँ। (ख) उन्हें आपका पूरा पूरा विश्वास है। (ग) आप विश्वास रखें, ऐसा कभी न होगा।

क्रि० प्र०—करना।—मानना।—रखना।—होना।

मुहा०—विश्वास जमाना = किसी के मन में विश्वास उत्पन्न करना या दृढ़ करना। विश्वास दिलाना = किसी के मन में विश्वास उत्पन्न करना।

२. मन की वह धारणा जो विषय या सिद्धांत आदि की सत्यता का पूरा पूरा प्रमाण न मिलने पर भी उसकी सत्यता के संबंध में होती है। जैसे— (क) बहुत से अशिक्षित भूत प्रेत पर विश्वास रखते हैं। (ख) और धर्मों की अपेक्षा बौद्ध धर्म पर उनका कुछ अधिक विश्वास है। ३. केवल अनुमान के आधार पर होनेवाला मन का दृढ़ निश्चय। जैसे,—मेरा तो यही विश्वास है कि वह अवश्य आवेगा। ४. गुप्त भेद या समाचार।

विश्वासकारक—वि० [सं०] १. विश्वास करनेवाला। यकीन करनेवाला। २. मन में विश्वास उत्पन्न करनेवाला। जिससे विश्वास उत्पन्न हो।

विश्वासकार्य—संज्ञा पुं० [सं०] गोपनीय कार्य [को०]।

विश्वासकृत्—वि० [सं०] दे० 'विश्वासकारक' [को०]।

विश्वासघात—संज्ञा पुं० [सं०] किसी के विश्वास के विरुद्ध की हुई क्रिया। अपने पर विश्वास करनेवाले के साथ ऐसा कार्य करना जो उसके विश्वास के बिल्कुल विपरीत हो।

विश्वासघातक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी के मन में अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करके भी उसका अपकार करे। विश्वास करने पर भी धोखा देनेवाला। धोखेबाज।

विश्वासघाती—संज्ञा पुं० [सं० विश्वासघातिन्] [स्त्री० विश्वासघातिनी] दे० 'विश्वासघातक' [को०]।

विश्वासन—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वास। एतबार। यकीन।

विश्वासपरम—वि० [सं०] विश्वास से पूर्ण [को०]।

विश्वासपात्र—संज्ञा पुं० [सं०] जिसपर भरोसा किया जाय। विश्वास करने के योग्य। विश्वसनीय।

विश्वासप्रद—वि० [सं०] विश्वास देनेवाला। भरोसा पैदा करनेवाला।

विश्वासभंग—संज्ञा पुं० [सं० विश्वासभङ्ग] विश्वासघात। विश्वास न रहना।

विश्वासभाजन—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वस्त। विश्वासपात्र। विश्वसनीय व्यक्ति [को०]।

विश्वासभूमि—संज्ञा पुं० [सं०] वह व्यक्ति जिसका विश्वास किया जाय। विश्वास का स्थान या भूमि [को०]।

विश्वासस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका विश्वास किया जाय। विश्वासभाजन।

विश्वासस्थित—वि० [सं०] विश्वासी। विश्वासपूर्ण। दृढ़ विश्वासवाला। उ०—बोले आवेगरहित स्वर से विश्वासस्थित।—अपरा, पृ० ४६।

विश्वासिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका विश्वास किया जाय। विश्वसनीय।

विश्वासित—वि० [सं०] जिसे विश्वास दिलाया गया हो [को०]।

विश्वासी—संज्ञा पुं० [सं० विश्वासिन्] १. वह जो किसी पर विश्वास करता हो। विश्वास करनेवाला। २. वह जिसका विश्वास किया जाय।

विश्वास्य—वि० [सं०] १. विश्वास करने योग्य। विश्वसनीय। २. जिसका विश्वास किया जाय। विश्वासभाजन।

विश्वाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोंठ।

विश्वेक्षिता—वि० [सं० विश्वेक्षितृ] सर्वदर्शी [को०]।

विश्वेदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १ अग्नि। २. देवताओं का एक गण जिसमें इंद्र, अग्नि आदि नौ देवता माने जाते हैं।

विशेष—वैदिक युग में लोग इन्हें मनुष्यों के रक्षक, शुभ कर्मों के फल देनेवाले और विश्व के अधिपति मानते थे। अग्निपुराण में ये दस कहे गए हैं और इनके नाम इस प्रकार बतलाए गए हैं—क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काम, काल, ध्वनि, रोचक, आद्रव और पुरूरवा।

३. पुराणानुसार एक असुर का नाम। ४. एक देवता (को०)। ५. महान् व्यक्ति। महत् पुरुष (को०)। ६. तेरह की संख्या (को०)।

विश्वेभोजा—संज्ञा पुं० [सं० विश्वेभोजस्] इंद्र।

विश्ववेदा—संज्ञा पुं० [सं० विश्ववेदस्] अग्नि।

विश्वेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. विष्णु। ३. ब्रह्मा (को०)। ४. ईश्वर। ५. उत्तराषाढा नक्षत्र जिसके अधिपति विश्व नामक देवता माने जाते हैं।

विश्वेशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रजापति दक्ष की एक पुत्री का नाम [को०]।

विश्वेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. ईश्वर। २. शिव की एक मूर्ति का नाम।

विश्वैकसार—संज्ञा पुं० [सं०] काश्मीर के एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

विश्वोषध—संज्ञा पुं० [सं०] सोंठ।

विषंग—वि० [सं० विषङ्ग] १. लगा हुआ। २. जो लटकता हो [को०]।

विषंग(पु)२—वि० [सं० विषाङ्ग] विषयुक्त। विषधर। उ०—काहर कंधन कितक कितक स्वानन मुष टुट्टन। बिच्छी सर्प विषंग मंत्रवादी मिल लुट्टत।—पृ० रा०, ६। १०५।

विषंगी—वि० [सं० विषङ्गी] साथ लगनेवाला। सलग्न रहनेवाला [को०]।

विषंड—संज्ञा पुं० [सं० विषण्ड] कमल की नाल। मृणाल।

विष—संज्ञा पुं० [सं०] वह पदार्थ जो किसी प्राणी के शरीर में किसी प्रकार पहुँचने पर उसके प्राण ले लेता हो अथवा उसका स्वास्थ्य नष्ट करता हो। गरल। जहर।

विशेष—वैद्यक में स्थावर और जंगम ये दो प्रकार के विष माने गए हैं। स्थावर विष वृक्षों, पौधों और खानों आदि में से निकला हुआ माना जाता है; और जंगम विष वह कहलाता है जो अनेक प्रकार के जीवों के शरीर, नख, दाँत या डंक आदि में होता हैं। कुछ विष कृत्रिम भी होते हैं और रासायनिक क्रियाओं से बनाए जाते हैं। चिकित्सा में अनेक विषों का प्रयोग, बहुत थोड़ी मात्रा में, अनेक रोगों को दूर करने और दुर्बल रोगी के शरीर में बल लाने के लिये किया जाता है।

मुहा०—के लिये दे० 'जहर'।

२. वह जो किसी की सुख शांति आदि में बाधक हो।

मुहा०—विष की गाँठ=वह जो अनेक प्रकार के उपद्रव और अपकार आदि करता हो। खराबी पैदा करनेवाला। जैसे—यही तो विष की गाँठ हैं, सब का झगड़ा इन्हीं का खड़ा किया हुआ है।

३. जल। ४. पद्मकेशर। ५. कमल की नाल। ६. बोल नामक गंधद्रव्य। ७. बछनाग। वत्सनाभ (को०)। ८. अतीस। ९. कलिहारी। १०. जहरीला तीर। विषाक्त वाण (को०)। ११. तंत्र में 'म' का बोधक शब्द। 'म' की ध्वनि (को०)। १२ अनुचर (को०)।

विषई(पु)—वि० [सं० विषयिन्] दे० 'विषयी'। उ०—विषई विषै सब विष की खानी। ए सब कहिये जम सहदानी।—कबीर सा०, पृ० ८०६।

विषकंट—संज्ञा पुं० [सं० विषकण्ट] इंगुदी।

विषकंटक—संज्ञा पुं० [सं० विषकण्टक] दुरालभा।

विषकंटका—संज्ञा स्त्री० [स० विषकण्टका] वंध्या कर्कोटी। बाँझ ककोटी।

विषकंटकी—संज्ञा स्त्री० [सं० विषकण्टकी] बाँझ ककोटी।

विषकंठ—संज्ञा पुं० [सं० विषकण्ठ] शिव। महादेव।

विषकंठिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विषकण्ठिका] बगला।

विषकंद—संज्ञा पुं० [सं० विषकन्द] १. भैंसा कंद। नील कंद। २. हिंगोट। इंगुदी।

विषकन्यका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विषकन्या [को०]।

विषकन्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह कन्या या स्त्री जिसके शरीर में इस आशय से कुछ विष प्रविष्ट कर दिए गए हों कि जो उसके साथ संभोग करे, वह मर जाय।

विशेष—प्राचीन काल में राजाओं के यहाँ बाल्यावस्था से ही कुछ कन्याओं के शरीर में अनेक प्रकार से विष प्रविष्ट करा दिए जाते थे। जिनके कारण उनके शरीर में ऐसा प्रभाव आ जाता था कि जो उनके साथ विषय करता था, वह मर जाता था। जब राजा को अपने किसी शत्रु को गुप्त रूप से मारना अभीष्ट होता था, तब वह इस प्रकार की विषकन्या उसके पास भेज देता था, जिसके साथ संभोग करके वह शत्रु मर जाता था।

विषकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० विषकुम्भ] जहर का घड़ा। कुंभ जो विष से भरा हो [को०]।

विषकृत—वि० [सं०] विषैला। विषयुक्त [को०]।

विषकृमि—संज्ञा पुं० [सं०] विष से उत्पन्न कीड़ा [को०]।

विषकृमि न्याय—संज्ञा पुं० [सं०] एक न्याय विशेष, जिसके द्वारा यह प्रकट किया जाता है कि दूसरों के लिये प्राणहारक वस्तु अपने में से उत्पन्न जीव के लिये घातक नहीं होती [को०]।

विषक्त—वि० [सं०] १. दृढतापूर्वक जमा हुआ। जड़ा हुआ। २. संलग्न। चिपका या चिपटा हुआ। ३. लटका हुआ। अवलंबित। ४. उत्पादित। ५. अधिकृत। ६. फैला हुआ। विस्तृत। प्रसरित [को०]।

विषगंधक—संज्ञा पुं० [सं० विषगन्धक] एक प्रकार का तृण जिसमें भीनी गंध होती है।

विषगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० विषगन्धा] काली अपराजिता।

विषगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] वह पर्वत जिसपर उत्पन्न होनेवाले वृक्ष और पौधे आदि जहरीले होते हों।

विषग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० विषग्रन्थि] एक जहरीला क्षुप [को०]।

विषघ—वि० [सं०] विष का नाश करनेवाला।

विषघटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक सौर मास का नाम [को०]।

विषघा—संज्ञा पुं० [सं०] गुड़ुच।

विषघात—संज्ञा पुं० [सं०] विष का घातन करनेवाला। जहर का असर दूर करनेवाला। विषवैद्य [को०]।

विषघातक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिससे विष का प्रभाव दूर होता हो।

विषघाती—संज्ञा पुं० [सं० विषघातिन्] १. वह जिससे विष का प्रभाव नष्ट होता हो। २. सिरिस का पेड़।

विषघ्न¹—वि० [सं०] विष का प्रभाव दूर करनेवाला। विषनाशक।

विषघ्न²—संज्ञा पुं० १. सिरिस का वृक्ष। २. भिलावाँ। ३. चंपा का वृक्ष। भूकदंब। ५. गंध तुलसी। ६. जवासा। घमासा (को०)।

विषघ्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] अतिविषा। अतीस।

विषघ्निका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद अपामार्ग या चिचड़ा।

विषघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हिलमोचिका या हिलंच नामक साग। २. बनतुलसी। बबुई तुलसी। ३. इंद्रवारुणी। ४. भुइँ आँवला। ५. लाल पुनर्नवा। गदहपूरना। ६. हलदी। ७. महाकरंज। ८. वृश्चिकाली नाम की लता। ९. देवदाली या पीतघोषा नाम की लता। १. कठकेला। ११. सफेद अपामार्ग। १२. रास्ना।

विषचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] चकोर पक्षी।

विषज—वि० [सं०] विष से उत्पन्न। विष से होनेवाला [को०]।

विषजल—संज्ञा पुं० [सं०] विषयुक्त जल [को०]।

विषजित्—संज्ञा पुं० [सं०] एक तरह का शहद [को०]।

विषजिह्व—संज्ञा पुं० [सं०] देवताड़ नामक वृक्ष।

विषजुष्ट—वि० [सं०] १. विषाक्त। जहरीला। २. विष से प्रभावित। विषयुक्त [को०]।

विषज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैद्यक के अनुसार वह ज्वर जो विष के कारण उत्पन्न हुआ हो।

विशेष—ऐसे ज्वर में दाह होती है, दस्त आते हैं, भोजन की ओर रुचि नहीं होती, प्यास बहुत लगती है और रोगी मूर्छित हो जाता है।

२. भैंसा। महिष।

विषझाल पु—संज्ञा स्त्री० [हिं० विष+झाल] विष की ज्वाला। विषयरूपी विष की आग। उ०—पंच चोर चितवत रहीं, मया मोह विषझाल। चेतन पहरै आपणो, कर गहि खड़ग सँभाल।—दादू० पृ० ३८०।

विषणि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप।

विषण्ण—वि० [सं०] १. जिसका चित्त दुःखी हो। जिसे विषाद, शोक या रंज हो। २. दुःखपूर्ण। वेदनायुक्त। खिन्न। उ०—विफलता में भी एक निराला ही विषण्ण सौंदर्य होता है।—रस०, पृ० ६०।

यौ०—विषण्णचेता = खिन्न। उदास। विषण्णमना = उदास। विषण्णमुख, विषण्णवदन = जिसके मुख पर उदासी छाई हो। विषण्णरूप = उदासी की दशा या अवस्था।

विषण्णता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विषण्ण या दुःखी होने का भाव। २. मूर्खता। बेवकूफी। जड़ता।

विषण्णांग—संज्ञा पुं० [सं० विषण्णाङ्ग] शिव।

विषतंत्र—संज्ञा पुं० [सं० विषतन्त्र] वैद्यक के अनुसार वह प्रक्रिया जिसके द्वारा साँप आदि का विष दूर किया जाता है।

विषतरु—संज्ञा पुं० [सं०] १ कुचला। २. जहरीला वृक्ष। विषवृक्ष।

विषता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष का भाव या धर्म। जहरीलापन।

विषतिंदु—संज्ञा पुं० [सं० विषतिन्दु] १. कुच लता। २. कुपीलु।

विषतिंदुक—संज्ञा पुं० [सं० विषतिन्दुक] एक प्रकार का जहरीला पौधा [को०]।

विषतुल्य—वि० [सं०] प्राणहारक [को०]।

विषतैल—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल जो कड़ुए तेल में गोमूत्र, हलदी, दारु हल्दी, बच, लालचंदन, मजीठ आदि डालकर बनाया जाता है और जिसका व्यवहार कुष्ठ आदि रोग दूर करने के लिये होता है।

विषदंड—संज्ञा पुं० [सं० विषदण्ड] १. कमल की नाल। उ०—केशव कोदंड विषदंड ऐसो खंडै अब मेरे भुजदंडन की बड़ी है विडंबना।—केशव (शब्द०)। २. विष दूर करनेवाला ऐंद्र जालिक डंडा।

विषदंत—संज्ञा पुं० [सं० विषदन्त] १. बिल्ली। २. वह जिसके दाँतों में जहर हो।

विषदंतक—संज्ञा पुं० [सं० विषदन्तक] साँप।

विषदंश—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्ली।

विषदंष्ट्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. साँप का वह दाँत जिसमें जहर होता है। २. सर्पकंकालिका नाम की लता। ३. नागदमनी।

विषद^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. हीरा कसीस। २. सफेद रंग। ३. अतिविषा। अतीस। ४. बादल।

विषद^2—वि० निर्मल। स्वच्छ। साफ। उ०—विषद वासों के विभूषण, चरण के तल तू तरेगा।—अर्चना, पृ० ८६।

विषदमूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] माकंदा नामक पौधा जिसके पत्तों का साग होता है।

विषदर्शनमृत्यु, विषदर्शनमृत्युक—संज्ञा पुं० [सं०] चकोर पक्षी [को०]।

विषदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अतिविषा। अतीस।

विषदाता—संज्ञा पुं० [सं० विषदातृ] वह जो किसी को मार डालने या बेहोश करने के अभिप्राय से जहर दे।

विषदायक—संज्ञा पुं० [सं०] जहर देनेवाला।

विषदायी—संज्ञा पुं० [सं० विषदायिन्] दे० 'विषदाता'।

विषदिग्ध—वि० [सं०] विष में बुझाया हुआ। जहरीला। विषाक्त [को०]।

विषदुष्ट—वि० [सं०] जो जहर मिलाकर खराब कर दिया गया हो।

विषदूषण^1—वि० [सं०] विष दूर करनेवाला।

विषदूषण^2—संज्ञा पुं० [सं०] भोज्य या पेय वस्तु में विष मिलाना [को०]।

विषद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] कुचला। कारस्कर।

विषद्विषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की गुरुच [को०]।

विषधर^1—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विषधरी] १. सर्प। साँप। २. जलधर। बादल।

यौ०—विषधरनिलय = पाताल। नागलोक।

विषधर^2—वि० विषैला। जहरीला [को०]।

विषधरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सर्पिणी। साँपिन।

विषधर्मा—संज्ञा स्त्री० [सं०] केवाँच [को०]।

विषधात्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] जरत्कारु ऋषि की स्त्री मनसा देवी का एक नाम।

विषध्वंसी—संज्ञा पुं० [सं० विषध्वंसिन्] नागरमोथा।

विषनाडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक मुहूर्त जिसमें जनन अशुभ कहा गया है [को०]।

विषनाशन^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरिस का पेड़। २. मानकंद। ३. विष को दूर करना।

विषनाशन^2—वि० जो विष को दूर करता हो। विषनाशक।

विषनाशिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सर्पकंकाली नाम की लता। २. बाँझ ककोटी। ३. गंधनाकुली।

विषनुत्—संज्ञा पुं० [सं०] सोनापाठा। श्योनाक [को०]।

विषन्न(पु)—वि० [सं० विषण्ण] दे० 'विषण्ण'। उ०—रोते रोते कंठरोध जब है हो जाता। उस विषन्न नीरव क्षण में हो कहती गिरा तुम्हारी।—चिंता, पृ० १४८।

विषपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी जहरीले बीज का छिलका। २. कोई जहरीला पत्ता।

विषपन्नग—संज्ञा पुं० [सं०] जहरीला साँप।

विषपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] न्यग्रोध। वट वृक्ष [को०]।

विषपादप—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषवृक्ष'।

विषपीत—वि० [सं०] जिसने जहर पी लिया हो। विष पीनेवाला [को०]।

विषपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० विषपुच्छी] बिच्छू जिसकी पूँछ में विष होता है।

विषपुट—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

विषपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. नीला पद्म। २. अलसी का फूल। ३. मैनफल का पेड़। ४. विषयुक्त फूल (को०)।

विषपुष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मदन नामक वृक्ष। मैनफल। २. विषैले फूलों के खाने से होनेवाला रोग (को०)।

विषप्रदिग्ध—वि० [सं०] दे० 'विषदिग्ध' [को०]।

विषप्रयोग—संज्ञा पुं० [सं०] १. दवा में विष का उपयोग करना। २. जहर देना [को०]।

विषप्रशमनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाँझ ककोड़ी।

विषप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक पर्वत का नाम।

विषभक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] जहर खाना।

विषभद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी दंती।

विषभद्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] लघु दंती।

विषभिषक्—संज्ञा पुं० [सं० विषभिषज्] साँप आदि के विष को मंत्र द्वारा दूर करनेवाला व्यक्ति। विषवैद्य [को०]।

विषभुजंग—संज्ञा पुं० [सं० विषभुजङ्ग] जहरीला साँप।

विषभृत्^{1}—वि० [सं०] जहरीला। विषयुक्त।

विषभृत्^{2}—संज्ञा पुं० सर्प। साँप [को०]।

विषमंजरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष संबंधी चिकित्सापरक एक आयुर्वेद कृति [को०]।

विषमंत्र—संज्ञा पुं० [सं० विषमन्त्र] १. वह जो विष उतारने का मंत्र जानता हो। २. सँपेरा। ३. साँप के विष को उतारने का मंत्र (को०)।

विषम[1]—वि० [सं०] १. जो सम या समान न हो। जो बराबर न हो। असमान। २. (वह संख्या) जिसमें दो से भाग देने पर एक बचे। सम या जूस का उल्टा। ताक। ३. जिसकी मीमांसा सहज में न हो सके। बहुत कठिन। जैसे,—विषम समस्या। ४. बहुत तीव्र। बहुत तेज। ५. भीषण। विकट। जैसे,—विषम विपत्ति। उ०—करें न मेरे पीछे स्वामी विषम कष्ट साहस के काम। यही दुःखिनी सीता का सुख सुखी रहें उसके प्रिय राम।—साकेत, पृ० २८६। ६. जो समतल न हो। खुरदरा। ऊबड़ खाबड़ (को०)। ७. अनियमित (को०)। ८. अगम। दुर्गम (को०) ९. मोटा। स्थूल (को०)। १०. तिरछा। वक्र (को०)। ११. पीड़াप्रद। कष्टदायक (को०)। १२. बहुत मजबूत। उत्कट (को०)। १३. बुरा। प्रतिकूल। विपरीत (को०)। १४. अजीब। विचित्र। अनुपम। (को०)। १५. बेईमान (को०)। १६. विरामशील। विरत (को०)। १७. दुष्ट (को०)। १८. भिन्न (को०)। १९. अनुपयुक्त। अननुकूल (को०)।

विषम[2]—संज्ञा पुं० [सं०] १. संकट। विपत्ति। आफत। २. वह वृत्त जिसके चारों चरणों में बराबर बराबर अक्षर न हों, बल्कि कम और ज्यादा अक्षर हों। ३. एक अर्थालंकार जिसमें दो विरोधी वस्तुओं का संबंध वर्णन किया जाता है या यथायोग्य का अभाव कहा जाता है। उ०—(क) कहाँ मृदुल तन तीय को सिरस प्रसून महान। कहाँ मदन की लाय यह अँव सम दुसह समान। (ख) खड़गलता अति स्याम तें उपजी कीरति सेत। ४. संगीत में ताल का प्रकार। ५. पहली, तीसरी, पाँचवीं आदि विषम संख्याओं पर पड़नेवाली राशियाँ। ६. वैद्यक के अनुसार चार प्रकार की जठराग्नियों में से एक प्रकार को जठराग्नि जो वायु की अधिकता से उत्पन्न होती है। कहते हैं, जब जठराग्नि विषम होती है, तब कभी तो भोजन बहुत अच्छी तरह पच जाता है और कभी बिल्कुल नहीं पचता। ७. विष्णु का एक नाम (को०)। ८. असमता (को०) ९. अनोखापन (को०)। १० दुर्गम स्थान। जैसे,—चट्टान, गड्ढा आदि (को०)। ११. कठिन या भयावह स्थिति। कठिनाई। दुर्भाग्य (को०)।

विषमक—वि० [सं०] १. असम। २. (मोती आदि) जिसकी पालिश सर्वत्र समान रूप से न हुई हो (को०)।

विषमकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. चारों समकोणोंवाले चतुर्भुज में किन्हीं दो कोणों को मिलाती हुई त्रिकोण बनानेवाली रेखा। समकोण त्रिकोण का कर्ण। २. असमान कर्णवाला चतुर्भुज।

विषमकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] असाधारण कार्य।

विषमकाल—संज्ञा पुं० [सं०] प्रतिकूल समय। भयंकर समय [को०]।

विष[illegible]ोण—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो सम न हो। समकोण से भिन्न और कोई कोण।

विषमखात—संज्ञा पुं० [सं०] असमान खात [को०]।

विषमचक्रवाल—संज्ञा पुं० [सं०] गणित में दीर्घवृत्त। अंडवृत्त [को०]।

विषमचतुरस्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषम चतुष्कोण'।

विषमचतुर्भुज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषम चतुष्कोण'।

विषमचतुष्कोण—संज्ञा पुं० [सं०] वह चौकोर क्षेत्र जिसके चारो कोण समान न हों। विषम कोणवाला चतुष्कोण।

विषमच्छेद—संज्ञा पुं० [सं०] छतिवन का पेड़।

विषमच्छाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] धूपघड़ी के शंकु की दोपहर को छाया [को०]।

विषमज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का ज्वर जो होता तो नित्य है, पर जिसके आने का कोई समय नियत नहीं होता। उ०—जो ज्वर छोड़ दे और फिर आ जावे उसको विषमज्वर कहते हैं।—माधव०, पृ० २०।

विशेष—इस ज्वर मे तापमान भी समान नहीं रहता और नाड़ी की गति भी सदा एक सी नहीं रहती, बराबर बदलती रहती है। इसलिये इसे विषमज्वर कहते हैं। ज्वर का यह रूप किसी साधारण ज्वर के बिगड़ने अथवा पूरी तरह अच्छे न होने पर कुपथ्य करने के कारण होता है। वैद्यक में इसके अनेक भेद कहे गए हैं। जैसे—संतत, सतत, तृतीयक, चतुर्थक आदि।

२. जाड़ा देकर आनेवाला ज्वर। जूड़ी बुखार। ३. क्षयी रोग में होनेवाला ज्वर।

विषमता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विषम होने का भाव। असमानता। २. वैर। विरोध। द्रोह। ३. अंतर। भेद। फर्क (को०)। ४. उलझन। जटिलता (को०)। ५. भीषणता। भयंकरता।

विषमत्रिभुज—संज्ञा पुं० [सं०] वह त्रिभुज जिसके तीनों भुज छोटे बड़े हों, समान न हों।

विषमत्व—संज्ञा पुं० [सं०] विषम होने का भाव। विषमता।

विषमदृष्टि—वि० [सं०] ऐंचाताना [को०]।

विषमधातु—वि० [सं०] जिसकी शरीरस्थ धातुएँ असंतुलित हों। रोगी। अस्वस्थ [को०]।

विषमनयन—संज्ञा पुं० [सं०] महादेव। शिव।

विषमनेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

विषमपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] सप्तपर्ण वृक्ष [को०]।

विषमपद—वि० [सं०] १. जिसमें असमान पद या चरण हों। जैसे—छंद, कविता। २. असमान या अस्तव्यस्त पैर रखनेवाली।

विषमपलाश—संज्ञा पुं० [सं०] छतिवन का वृक्ष।

विषमबाण—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव [को०]।

विषमर्द्दनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंधनाकुली।

विषमलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुसमय। दुर्दिन। दुर्भाग्य [को०]।

विषमवल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] नारंगी।

विषमवाणा—संज्ञा पुं० [सं० विषमबाण] कामदेव का एक नाम।

विषम विभाजन—संज्ञा पुं० [सं०] संपत्ति आदि का असमान विभाजन [को०]।

विषमविलोचन—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। त्र्यंबक [को०]।

विषमविशिख—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव का एक नाम ।

विषमवृत्ता—संज्ञा पुं० [सं०] वह वृत्त या छंद जिसके चरण या पद समान न हों । असमान पदोंवाला वृत्त ।

विषम व्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सैनिक व्यूह । समव्यूह का उलटा व्यूह विशेष दे० 'समव्यूह' ।

विषमशर—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव [को०] ।

विषमशिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] प्रायश्चित्त आदि के लिये व्यस्था देने के संबंध का एक दोष ।

विशेष—यह दोष उस समय माना जाता है, जब कोई भारी पाप करने पर हल्का प्रायश्चित्त करने की या हलका पाप करने पर भारी प्रायश्चित करने की व्यवस्था दी जाती है ।

विषमशील^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] विक्रमादित्य का एक नाम [को०] ।

विषमशील^{2}—वि० क्रोधी स्वभाववाला । असमान शीलवाला [को०] ।

विषमसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० विषमसन्धि] वह संधि जिसमें शक्ति के अनुसार तत्काल सहायता न दी जाय । समसंधि का उलटा । 'तुम आगे से हमारे मित्र रहोगे' इस प्रकार की संधि ।

विषमसाहस—संज्ञा पुं० [सं०] उद्धतपन । उद्दंडता [को०] ।

विषमस्थ—वि० [सं०] संकट में फँसा हुआ [को०] ।

विषमस्पृहा—संज्ञा पुं० [सं०] दूसरे का धन हड़पने का लालच [को०] ।

विषमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. झरबेरी । २. एक प्रकार का बछनाग ।

विषमाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] शिव । महादेव ।

विषमाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की जठराग्नि ।

विशेष—कहते हैं, यह अग्नि कभी तो खाए हुए पदार्थों की अच्छी तरह पचा देती है और कभी बिल्कुल नहीं पचाती

विषमाधुर—संज्ञा पुं० [सं०] शृंगी विष । सींगिया ।

विषमान्न—संज्ञा पुं० [सं० विषम+अन्न] अनियमित आहार [को०] ।

विषमायुध—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

विषमावतार—संज्ञा पुं० [सं० विषम+अवतार] १. असमतल भूमि पर उतरना । २. खतरा मोल लेना [को०] ।

विषमावरणⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विषमवर्ण] दग्धाक्षर । उ०—धुररूपक ज्यौंही धरे, विषमावरण विशेष ।—रघु० रू०, पृ० ११ ।

विषमाशन—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार ठीक समय पर भोजन न करके समय के पहले या पीछे अथवा थोड़ा या अधिक भोजन करना जिसके कारण शरीर में आलस्य या दुर्बलता होती है ।

विषमित—वि० [सं०] जो विषम किया गया हो । विषम बनाया हुआ [को०] ।

विषमुक्—संज्ञा पुं० [सं० विषमुच्] सर्प । साँप [को०] ।

विषमुष्कक—संज्ञा पुं० [सं०] मैनफल ।

विषमुष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] १. जीवंती । २. बकायन । ३. मीठी नीम । घोड़ा नीम । ४. कलिहारी । ५. कुचला ।

विषमुष्टिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बकायन ।

विषमूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिरामलक । शिर आँवला ।

विषमृत्यु—संज्ञा पुं० [सं०] चकोर पक्षी ।

विषमेक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] महादेव ।

विषमेषु—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

विषय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह बड़ा प्रदेश जिसपर कोई शासन व्यवस्था हो ।

विशेष—ग्राम से बड़ा राष्ट्र और राष्ट्र से बड़ा विषय माना जाता था । कितने बड़े भूभाग को विषय कह सकते थे, इसका कोई निर्दिष्ट मान नहीं था ।

२. वह पदार्थ जिसका ग्रहण ज्ञानेंद्रियों द्वारा होता हो । रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द जिनका संबंध क्रमशः आँख, जिह्वा, नाक, त्वचा और कान से है । इंद्रियार्थ (को०) । ३. भौतिक वस्तु (को०) । ४. कारोबार । व्यवसाय (को०) । ५. इंद्रियसुख । वासनात्मक आनंद (को०) । ६. विभागक्षेत्र । ७. पहुँच । परिधि । विस्तार (को०) । ८. लक्ष्य । उद्देश्य (को०) । ९. प्रसंग । प्रकरण (को०) १०. वीर्य । शुक्र (को०) । ११. स्वामी (को०) । १२. धार्मिक कृत्य (को०) । १३. पांच की संख्या (को०) । १४. उपमेय । वर्ण्य पदार्थ (को०) । १५. राज्य (को०) । १६. आश्रयस्थल, शरणस्थल (को०) । १७. ग्रामों का समूह (को०) । १८. प्रेमी पति (को०) । १९. शृंगार विषयक ग्रंथ (को०) ।

यौ०—विषयकर्म = भौतिक कृत्य । सांसारिक कार्य । विषयकाम = भौतिक पदार्थों या सुखों की कामना । विषयग्राम = ऐंद्रिक विषयों का समूह । विषयज्ञ । विषयज्ञान = सांसारिक सुखों का ज्ञान । वासनात्मक ज्ञान । विषयनिरत । विषयनिर्धारिणी समिति । विषयनिह्नुति । विषयपति । विषयरस । विषयसमिति । विषयस्पृहा ।

विषयक—अव्य० [सं०] विषय का । संबंधी । जैसे,—इस पत्र में राजनीति विषयक बातें अधिक रहती हैं ।

विषयज्ञ—वि० [सं०] विषय का ज्ञाता । किसी विशिष्ट विषय का जानकार [को०] ।

विषयता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विषय का भाव या धर्म ।

विषयनिरत—वि० [सं०] विषयासक्त । इंद्रियासक्त [को०] ।

विषयनिरति—संज्ञा स्त्री० [सं०] भोग विलास के प्रति लगाव । सांसारिक उपभोग्य पदार्थों के प्रति आसक्ति । विषयासक्ति [को०] ।

विषयनिर्द्धारिणी समिति—संज्ञा स्त्री० [सं० विषय+निर्द्धारिणी+समिति] दे० 'विषयनिर्वाचिनी समिति' ।

विषयनिर्वाचिनी समिति—संज्ञा स्त्री० [सं० विषय+निर्वाचिनी+समिति] कुछ विशिष्ट सदस्यों की वह सभा जो किसी महासभा या संमेलन में उपस्थित किए जानेवाले विषय या प्रस्ताव आदि निश्चित या प्रस्तुत करती है । (अं० 'सबजेक्ट कमिटी' ।)

विषयनिह्नुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी विषय के प्रति गोपनीयता का भाव [को०] ।

विषयपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी जनपद या छोटे प्रांत का राजा या शासक । उ०—श्रेष्ठी नगरशासन तथा जिले के शासन में नगरपति (जिलाधीश) की सहायता किया करता था ।—पू० म० भा०, पृ० १२७ । २. राज्यपाल (को०) ।

विषयपराङ्मुख—वि० [सं०] सांसारिक सुखों से विमुख। जो विषयों से विमुख हो [को०]।

विषयप्रवण—वि० [सं०] भोगलिप्सु। विषयासक्त [को०]।

विषयप्रसंग—संज्ञा पुं० [सं० विषयप्रसङ्ग] विषय में आसक्ति। भोगविलास में रति [को०]।

विषयरत वि० [सं०] विषयासक्त [को०]।

विषयरस—संज्ञा पुं० [सं० विषय+रस] लौकिक भोग विलास का सुख। विषयानंद। उ०—हुआ इस जग में ऐसा कौन विषयरस किया न जिसने पान ?—मधुज्वाल, पृ० ८४।

विषयलोलुप—वि० [सं०] विषयेच्छु। भोगेच्छु [को०]।

विषयविरत—वि० [सं०] जो लौकिक विषयों से विरक्त हो। विषयों से पराङ्मुख।

विषयसंग—संज्ञा पुं० [सं० विषयसङ्ग] विषयों में रति [को०]।

विषयसमिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विषयनिर्वाचिनी समिति।'

विषयसुख—संज्ञा पुं० [सं०] विषयानंद। इंद्रिय संबंधी सुख [को०]।

विषयस्नेह—संज्ञा पुं० [सं०] विषयैषणा। इंद्रिय संबंधी पदार्थों की कामना [को०]।

विषयस्पृहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विषयस्नेह'।

विषयांत—संज्ञा पुं० [सं० विषयांत] विषय या प्रदेश की सीमा [को०]।

विषयांतर—संज्ञा पुं० [सं० विषयान्तर] १. प्रस्तुत वर्ण्य विषय को त्याग कर अन्य विषय का ग्रहण या प्रवर्तन। २. प्रस्तुत या वर्ण्य विषय की उपेक्षा [को०]।

विषया(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विषय] सांसारिक भोग्य पदार्थ। उ०—तनमन ताको दीजिए, जाके विषया नाहिं। आपा सबही डारि कै, राखै साहेब माहिं।—कबीर सा० सं०, पृ० २।

विषयाज्ञान—संज्ञा पुं० [सं० विषय+अज्ञान] १. विषय को न जानना। तंद्रा [को०]।

विषयात्मक—वि० [सं०] १. विषय, प्रकरण या प्रसंगवाला। २. २. आलस्य। थकावट। इंद्रिय संबंधी।

विषयाधार—संज्ञा पुं० [सं० विषय+आधार] विषयों का आश्रय। उ०—आत्मा को विषयाधार बना, दिशि पल के दृश्यों को संवार। गा, गा, एकोहं बहु स्याम, हर लिए भेद, भव भीति भार।—युगांत, पृ० ५६।

विषयाधिकृत—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय या प्रांत का सर्वश्रेष्ठ अधिकारी [को०]।

विषयाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] किसी छोटे प्रांत का राजा या शासक।

विषयाधिपति—संज्ञा पुं० [सं०] राजा। विषयाधिप [को०]।

विषयाभिरति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विषयों या सांसारिक सुखों के प्रति अनुराग [को०]।

विषयानुक्रमणिका, विषयानुक्रमणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] ग्रंथादि की विषयसूची।

विषयायी—संज्ञा पुं० [सं० विषयायिन्] १. भौतिकवादी। नास्तिक। २. सांसारिक व्यक्ति। इंद्रियसुखों में लिप्त व्यक्ति। विलासी मनुष्य। ३. प्रेम का देवता। कामदेव। ४. राजा। ५. ज्ञानेंद्रिय।

विषयासक्त—वि० [सं० विषय+आसक्त] भोगरत। विलासी [को०]।

विषयासक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० विषय+आसक्ति] सांसारिक विषयों के प्रति आसक्त होना। लोगों के प्रति लगाव या प्रेम [को०]।

विषयी[1]—संज्ञा पुं० [सं० विषयिन्] १. वह जो भोग विलास या विषय आदि में बहुत अधिक आसक्त हो। विलासी। कामी। २. राजा। ३. कामदेव। ४. जिसके पास बहुत अधिक विषय या धन संपत्ति हो। धनवान। अमीर। ५. विषय को जाननेवाला। विषयज्ञ। उ०—विषयी या ज्ञाता अपने चारों ओर उपस्थित वस्तुओं को कभी कभी अपने तत्कालीन भावों के रंग मे देखता है।—चिंतामणि, भा० २, पृ० १८।१९। ६. भौतिकवादी। ७. ज्ञानेंद्रिय (को०)। ८. ज्ञान (को०)। ९. उपमेय। (अलकारशास्त्र)।

विषयी[2]— वि० कामुक। इंद्रियपरायण।

विषयीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वस्तु को विचार का विषय बनाना [को०]।

विषयीय[1]—संज्ञा पुं० [सं०] विषय। सांसारिक पदार्थ।

विषयीय[2]—वि० विषय संबंधी [को०]।

विषयैषी—वि० [सं० विषयैषिन्] विषयलोलुप। भोगेच्छु [को०]।

विषयोपरम—संज्ञा पुं० [सं०] विषयों से उपरम या विरक्ति [को०]।

विषयोपसेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विषयों के प्रति आसक्ति [को०]।

विषरूपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अतिविषा। अतीस। २. मीठी नीम। घोड़ानीम। ३. खेकसा।

विषल—संज्ञा पुं० [सं०] विष। जहर।

विषलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रवारुणी नाम की लता। २. मृणाल। कमलनाल।

विषलांगल—संज्ञा पुं० [सं० विषलाङ्गल] कलिहारी।

विषवंचिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विषवञ्चिका] बिच्छू नामक पौधा।

विषवल्लरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विषवल्ली'।

विषवल्लि, विषवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी नाम की लता।

विषविटपी—संज्ञा पुं० [सं० विषविटपिन्] जहरीला पेड़ [को०]।

विषविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] मंत्र आदि की सहायता से झाड़ फूँककर विष उतारने की विद्या।

विषविधान—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषविधि'।

विषविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्राचीन व्यवहारशास्त्र के अनुसार एक प्रकार की परीक्षा या दिव्य जिससे यह जाना जाता था कि अमुक व्यक्ति अपराधी है या नहीं। विशेष दे० 'दिव्य'।

विषवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. गूलर। २. विष का वृक्ष। विषमय फल देनेवाला वृक्ष। उ०—माँ, क्या कठोर और क्रूर हाथों से ही राज्य सुशासित होता है ? ऐसा विषवृक्ष लगाना क्या ठीक होगा।—अजात, पृ० २५।

विषवृक्ष न्याय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का न्याय जिसके अनुसार अपनी उत्पन्न की हुई हानिकारक वस्तु भी स्वयं नष्ट नहीं करनी चाहिए [को०]।

विषवेग—संज्ञा पुं० [सं०] विष की व्याप्ति। विष की लहर। विष का प्रभाव [को०]।

विषवैद्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो मंत्र तंत्र आदि की सहायता से विष उतारता हो।

विषवैरिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्विषी नामक घास।

विष व्यवस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] १, शरीर में विष भिदने की अवस्था। २. विष का प्रभाव [को०]।

विषव्रण—संज्ञा पुं० [सं०] जहरीला फोड़ा। जहरबाद [को०]।

विषशालूक—संज्ञा पुं० [सं०] कमलकद। भसींड़।

विषशूक—संज्ञा पुं० [सं०] भीमरोल नामक कीड़ा।

विषशृंगी—संज्ञा पुं० [सं० विषशृङ्गिन्] भीमरोल नामक कीड़ा।

विषसंयोग—संज्ञा पुं० [सं०] सिंदूर। सेंदुर।

विषसूचक—संज्ञा पुं० [सं०] चकोर नामक पक्षी।

विषसृक्क—संज्ञा पुं० [सं० विषसृक्कन्] विषशूक। भृंगरोल [को०]।

विषहंता^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विषहन्तृ] सिरिस का पेड़।

विषहंता^{2}—वि० जिससे विष का प्रभाव दूर हो। विषनाशक।

विषहंत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० विषहन्त्री] १. अपराजिता। २. निर्विषी।

विषह^1—वि० [सं०] जो विष का नाश करता हो। विषघ्न।

विषह^2—संज्ञा पुं० १. देवदाली। २. निर्विषी।

विषहर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह औषध या मंत्र आदि जिससे विष का प्रभाव दूर होता हो। २. भटेउर। चोरक। धनहर।

विषहरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देवदाली। बंदाल। २. निर्विषी। ३. मनसादेवी का एक नाम।

विषहरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मनसा देवी का एक नाम।

विषहा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देवदाली। बंदाल। २. निर्विषी।

विषहा^{2}—संज्ञा पुं० [सं० विषहन्] १. वह जो विषघ्न हो या विष दूर करनेवाला हो। २. एक प्रकार का कदंब वृक्ष। भुंइकदंब। [को०]।

विषहारक—संज्ञा पुं० [सं०] भुइंकदंब।

विषहारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्विषी नामक घास।

विषहीन—वि० [सं०] जिसमें विष न हो [को०]।

विषहृदय—वि० [सं०] कुटिल मनवाला। कपटी [को०]।

विषहेति—संज्ञा पुं० [सं०] सर्प [को०]।

विषह्य—वि० [सं० वि+सह्य (षह्य)] १. सहन करने योग्य। जो बर्दाश्त किया जा सके। २. जिसका निर्धारण या निश्चय किया जा सके। ३. संभव। शक्य। ४. पराभूत करने योग्य [को०]।

विषांकुर—संज्ञा पुं० [सं० विषाङ्कुर] १. तीर जिसकी नोक विष युक्त हो। २. भाला। कुंत (को०)।

विषांगना—संज्ञा स्त्री० [सं० विषाङ्गना] दे० 'विषकन्या'।

विषांतक—संज्ञा पुं० [सं० विषान्तक] १, वह जिससे विष का नाश हो। २. शिव का एक नाम।

विषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अतिविषा। अतीस। २. कलिहारी। ३. कड़वी कँदूरी। ४. कड़वी तरोई। ५. काकोली। ६. बुद्धि। अक्ल।

विषाक्त—वि० [सं०] जिसमें विष मिला हो। विषयुक्त। विषपूर्ण। जहरीला।

विषाख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] अतीस।

विषाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं० विष+अग्नि] विष की ज्वाला या दाह विषप्रयोगजन्य शरीरदाह [को०]।

विषाग्रज—संज्ञा पुं० [सं०] कृपाण। तलवार [को०]।

विषाण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुट या कूट नामक ओषधि। २. हाथी दाँत। ३. पशु का सींग। ४. मेढ़ासिंगी। ५. वाराहीकंद। गेंठी। ६. ऋषभक नामक ओषधि। ७. सूअर का दाँत। ८. इमली। ९. फूँककर बजाया जानेवाला एक प्रकार का सींग का बाजा। शृंगी। उ०—क्वणित मंजु विषाण हुए कई। रणित शृंग हुए बहु साथ ही।—प्रिय०, पृ० २। १०. चोटी। सिरा (को०)। ११. कुचाग्र। चुचुक (को०)। १२. अपने वर्ग का प्रधान। १३. तलवार या चाकू (को०)। १४. केकड़े का पंजा (को०)। १५. सींग जैसी शिव के सिर पर बँधी हुई जटा (को०)।

विषाणक—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथी। २. सींग [को०]।

विषाणकोश—संज्ञा पुं० [सं०] सींग का खोखला भाग [को०]।

विषाणांत—संज्ञा पुं० [सं० विषाणान्त] गणेश जी का दाँत।

विषाणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मेढ़ासिंगी। २. सातला नाम का थूहर। ३. काकड़ासिंगी। ४. आवर्तकी या भगवतवल्ली नाम की लता। ५. सिंघाड़ा। ६. ऋषभक नामक ओषधि। ७. काकोली।

विषाणी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विषाणिन्] १. वह जिसे सींग हो। सींगवाला। २. हाथी। ३. सूअर। ४. साँड़। सिंघाड़ा। ६. ऋषभक नामक ओषधि।

विषाणी^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. क्षीर काकोली। २. ऋषभक नामक ओषधि। ३. मेढ़ासिंगी। ४. वृश्चिकाली। बिछाती। ५. इमली। ६. सिंघाड़ा। ७. विष। जहर। ८. भगवतवल्ली या आवर्तकी नाम की लता।

विषाद्—संज्ञा पुं० [सं०] हलाहल विष खानेवाले, शिव।

विषाद^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. खेद। दुःख। रंज। २. निराशा। हताशा। नैराश्य (को०)। ३. जड़ या निश्चेष्ट होने का भाव। ४. काम करने को बिलकुल जी न चाहना। थकना। म्लान अवस्था (को०)। ५. मूर्खता। बेवकूफी। ६. एक प्रकार का संचारी भाव (को०)।

विषाद^2—संज्ञा पुं० [सं० विष+√अद् (=भक्षण)] विष पीनेवाले शिव। शंकर [को०]।

विषाद^1—वि० विषभक्षी। विष खानेवाला [को०]।

विषादन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कष्ट। दुःख। खेद। रंज। २. निराशा। ३. एक काव्यालंकार, जो वहाँ होता है जहाँ इच्छा के विपरीत निराशा हाथ लगती है। जैसे—हौं सोई सखि सुपन में मन भावन के पास। छोर छरा को छुवत ही आनि जगाओ सास।—मति० ग्रं०, पृ० ६०।

विषादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पलाशी नाम की लता। २. इंद्रवारुणी।

विषादित—वि० [सं०] विषण्ण। विषादयुक्त। खिन्न [को०]।

विषादिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विषाद का धर्म या भाव।

विषादित्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषादिता' [को०]।

विषादिनी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पलाशी नाम की लता। २. इंद्रवारुणी।

विषादिनी^{2}—वि० स्त्री० [सं०] विष पीनेवाली। उ०—विचर रही निर्मम अबाध तुम, विश्व विषादिनी, लोकप्रसादिनी।—रजत०, पृ० ७६।

विषादी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विषादिन्] वह जिसे विषाद हो। विषाद युक्त। दुःखी व्यक्ति।

विषादी^{2}—वि० विष खानेवाला [को०]।

विषादाश्रु—संज्ञा पुं० [सं०] दुःख या निराशा के कारण उत्पन्न आँसू।

विषानन—संज्ञा पुं० [सं०] साँप।

विषान्न—संज्ञा पुं० [सं० विष+अन्न] विषमिश्रित भोजन [को०]।

विषापवादिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष का प्रभाव दूर करने की एक मांत्रिक क्रिया [को०]।

विषापवादी—वि० [सं० विषापवादिन्] विष को दूर करनेवाला [को०]।

विषापह^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोखा नामक वृक्ष। मुष्कक। २. वह जिसमें विष का नाश हो। ३. गरुड़ (को०)।

विषापह^2—वि० विष का प्रभाव नष्ट कर देनेवाला [को०]

विषापहरण—संज्ञा पुं० [सं०] विष का प्रभाव हटाना [को०]।

विषापहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रवारुणी। इंद्रायन। २. निर्विषी। ३. नागदमन। ४. अर्कपत्रा। इसरौल। ५. सर्पकंकाली। ६. सर्पदंष्ट्रा। इस्पंद। ७. त्रिपर्णी नामक कंद।

विषाभावा—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्विषी [को०]।

विषायका—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्विषी।

विषायुध—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँप। २. वह अस्त्र जो जहर में बुझाया गया हो। ३. विषैला जंतु (को०)।

विषार—संज्ञा पुं० [सं०] विषैला साँप।

विषाराति—संज्ञा पुं० [सं०] काला धतूरा।

विषारि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाचंचु या चेंच नामक साग। २. घीकरंज।

विषारि^{2}—वि० जिससे विष का नाश होता हो।

विषाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की मछली जिसका मांस वायु और कफ बढ़ानेवाला माना जाता है।

विषालु—वि० [सं०] विषैला। जहरीला [को०]।

विषासहि—वि० [सं०] विजेता। जयी। विजयी [को०]।

विषास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँप। २. जहर में बुझाया हुआ अस्त्र।

विषास्य—संज्ञा पुं० [सं०] साँप।

विषास्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] भिलावाँ।

विषी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विषिन्] १. विषपूर्ण वस्तु। जहरीली चीज। २. विषधर सर्प। जहरीला साँप।

विषी^{2}—वि० [हिं० विष ?] विषयुक्त। जहरीला।

विषु—वि० [सं०] १. समान रूप से। २. विविध प्रकार से। अनेक प्रकार से। ३. समान। तुल्य [को०]।

विषुण^1—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषुव'।

विषुण^2—वि० १. अनेक रूप का। बहुरूपी। २. सर्वग। सर्वगत। ३. विप्रकीर्ण। बिखरा हुआ। ४. पराङ्मुख [को०]।

विषुद्रुह—संज्ञा पुं० [सं०] बाण। तीर।

विषुप—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषुव'।

विषुप्त—वि० [सं०] गहरी नींद में पड़ा हुआ। विसुप्त [को०]।

विषुव—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के अनुसार वह समय जब सूर्य विषुव रेखा पर पहुँचता है और दिन तथा रात दोनों बराबर होती हैं।

विशेष—ऐसा समय वर्ष में दो बार आता है। एक तो सौर चैत मास की नवीं तिथि या अंग्रेजी २१ मार्च को, और दूसरा सौर आश्विन को नवीं तिथि या अंग्रेजी २२ सितंबर को। विशेष दे० 'विषुव रेखा'।

यौ०—विषुवच्छाया। विषुवदिन। विषुवरेखा। विषुवसमय।

विषुवच्छाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दोपहर के समय पड़नेवाली धूपघड़ी के शंकु की छाया [को०]।

विषुवत्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विषुव'।

विषुवत्रेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विषुवरेखा'।

विषुवद्वलय—संज्ञा पुं० [सं०] विषुवरेखा।

विषुवद्वृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] विषुवरेखा।

विषुवद्दिन, विषुवद्दिवस—संज्ञा पुं० [सं०] वह दिन जब दिन और रात बराबर हों (को०)।

विषुवद्देश—संज्ञा पुं० [सं०] विषुवरेखा के नीचे आनेवाले देश या भूभाग [को०]।

विषुवरेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिष के कार्य के लिये कल्पित एक रेखा जो पृथ्वीतल पर उसके ठीक मध्यभाग में बेड़े बल में या पूर्व पश्चिम पृथ्वी के चारों मानी जाती है।

विशेष—यह रेखा दोनों मेरुओं के ठीक मध्य में दोनों से समान अंतर पर है। आकाश में इस रेखा से उत्तर की ओर मेष से कन्या तक की पहली छह् राशियाँ और दक्षिण की ओर तुला से मीन तक की छह् राशियाँ हैं। इसे 'निरक्ष वृत्त' भी कहते हैं।

विषूचक—संज्ञा पुं० [सं०] विसूचिका नामक रोग।

विषूचिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विसूचिका'। उ०—जिस अजीर्ण में बादी देह को सुई के सदृश पीड़ा देय अर्थात् सुई सी चुभे उसको वैद्य विषूचिका कहते हैं।—माधव०, पृ० ६६।

विषै(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विषय] दे० 'विषय' उ०—विषई विषै सब विष की खानी। ए सब कहिए जम सहिदानी।—कबीर सा०, पृ० ८०६।

विषैक(पु)—वि० [सं० विषयक] दे० 'विषयक'। उ०—(क) सुत विषैक तव पद रति होऊ।—मानस, १।१५१। (ख) अब सुनि कृष्ण विषैक निरोध। जदपि अनंत अखंडित बोध।—नंद० ग्रं०, पृ० २१७।

विषैला—वि० [सं० विष + हिं० एला (प्रत्य०)] विषवाला। जहरीला।

विषौषधी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नागदंती।

विष्कंद—संज्ञा पुं० [सं० विष्कन्द] १. तितर बितर होना। बिखरना। २. जाना। गमन। दूर गमन [को०]।

विष्कंध—संज्ञा पुं० [सं० विष्कन्ध] १. वह जो गति को रोकता हो। २. बाधा। विघ्न।

विष्कंधाजीर्ण—संज्ञा पुं० [सं० विष्कन्धाजीर्ण] एक प्रकार का अजीर्ण रोग।

विशेष—रोग जिसमें रोगी के शरीर में शूल के समान पीड़ा होती है, उसका पेट फूल जाता है और वह मल या अपान वायु का त्याग नहीं कर सकता।

विष्कंभ—संज्ञा पुं० [सं० विष्कम्भ] १. फलित ज्योतिष के अनुसार सत्ताईस योगों में से पहला योग।

विशेष—आरंभ के पाँच दंडों को छोड़कर शुभ कार्य के लिये यह योग बहुत अच्छा समझा जाता है। कहते हैं, इस योग में जन्म लेनेवाला मनुष्य सब बातों में स्वाधीन और भाई बंधु आदि से सदा सुखी रहता है।

२. विस्तार। ३. बाधा। विघ्न। ४. साहित्यदर्पण के अनुसार नाटक का एक प्रकार का अंक जो प्रायः गर्भांक के समीप होता है। उ०—आज अमरता का जीवित हूँ मैं वह भीषण जर्जर दंभ, आह सर्ग के प्रथम अंक का अधम पात्र मय सा विष्कंभ।—कामायनी, पृ० १८।

विशेष—जो कथा पहले हो चुकी हो अथवा जो अभी होनेवाली हो, उसकी इसमें मध्यम पात्रों द्वारा सूचना दी जाती है। यह दो प्रकार का होता है—शुद्ध और संकीर्ण। जब एक या अनेक मध्यम पात्र इसका प्रयोग करते हैं, तब यह शुद्ध कहलाता है। और जब मध्यम तथा नीच पात्रों द्वारा इसका प्रयोग होता है, तब इसे संकीर्ण कहते हैं। शुद्ध विष्कंभ में मध्यम पात्रों का वार्तालाप संस्कृत भाषा में और संकीर्ण विष्कंभ में मध्यम तथा नीच पात्रों का वार्तालाप प्राकृत भाषा में होता है। शुद्ध का उदाहरण मालतीमाधव के पाँचवें अंक में कुंडलाकृत प्रयोग और संकीर्ण का रामाभिनंद में क्षपणक और कापालिककृत प्रयोग है।

५. योगियों का एक प्रकार का बंध। ६. वाराहपुराण के अनुसार एक पर्वत का नाम। ७. वृक्ष। पेड़। ८. अर्गल। ब्योंड़ा। ९. दे० 'बड़ेरा।' बँड़ेरी (को०)। १०. स्तंभ। खंभा (को०)। ११. मंथनदंड जिसमें रस्सी लपेटकर दधिमंथन करते हैं (को०)। १२. किसी वृत्त या घेरे का व्यास (को०)। १३. क्रियाशीलता। कार्य में निरत रहना (को०)।

विष्कंभक—संज्ञा पुं० [सं० विष्कम्भक] दे० 'विष्कंभ'।

विष्कंभन—संज्ञा पुं० [सं० विष्कम्भन] १. बाधा उपस्थित करना। २. विस्तृत करना। ३. विदारण करने, खोलने या फाड़ने का उपकरण [को०]।

विष्कंभित—वि० [सं० विष्कम्भित] १. बाधायुक्त। अवरुद्ध २. दूरीकृत। अस्वीकृत। ३. (किसी वस्तु से) पूर्णतः युक्त [को०]।

विष्कंभी¹—संज्ञा पुं० [सं० विष्कम्भिन्] १. शिव जी का एक नाम। २. अर्गल। ब्योंड़ा। ३. एक तांत्रिक देवी (को०)। ४. एक बोधिसत्व (को०)।

विष्कंभी²—वि० बाधा डालनेवाला। बाधक [को०]।

विष्क—संज्ञा पुं० [सं०] वह हाथी जिसकी अवस्था बीस वर्ष की हो गई हो।

विष्कन्न—वि० [सं०] १. इतस्ततः। बिखरा हुआ। २. गत। जो चला गया हो [को०]।

विष्कब्ध—वि० [सं०] स्थिर किया हुआ। जिसे टिकाया गया हो। अवलंबित [को०]।

विष्कर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षी। चिड़िया। २. अर्गल। ब्योंड़ा। ३. एक दानव का नाम। ४. युद्ध का एक ढंग (को०)।

विष्कल—संज्ञा पुं० [सं०] सूअर। ग्रामशूकर।

विष्कलन—संज्ञा पुं० [सं०] भोजन। आहार।

विष्किर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षी। चिड़िया। २. वे पक्षी जो अन्न को इधर उधर छिनराकर नखों से कुरेदकर खाते हैं। जैसे,—कबूतर, मुरगा, तीतर, बटेर आदि। ३. दर्वीकर नामक जाति के साँपों के अंतर्गत एक प्रकार का साँप। ४. एक अग्निविशेष (को०)। ५. फाड़कर टुकड़े टुकड़े करना (को०)।

विष्कुंभ—संज्ञा पुं० [सं० विष्कुम्भ] दे० 'विष्कंभ' -१।

विष्टंभ—संज्ञा पुं० [सं० विष्टम्भ] १. बाधा। रुकावट। २. एक प्रकार का रोग जिसमें मल रुकने के कारण रोगी का पेट फूल जाता है। अनाह। बिबंध। ३. आक्रमण। चढ़ाई। ४. अच्छी तरह से जमाना। ७. कदम रखना। डग भरना (को०)। ८. अवलंब। आसरा। सहारा (को०)। ९. सहन। बरदाश्त (को०)।

विष्टंभन—संज्ञा पुं० [सं० विष्टंभन] १. रोकने या संकुचित करने की क्रिया। २. वह जो रोकता या संकुचित करता हो।

विष्टंभित—वि० [सं० विष्टम्भित] १. मजबूती से खड़ा किया हुआ। अचल किया हुआ। २. (किसी वस्तु से) भरा या पूर्ण ढका हुआ [को०]।

विष्टंभी¹—संज्ञा पुं० [सं० विष्टम्भिन्] वह पदार्थ जिससे पेट का मल रुके (वैद्यक)।

विष्टंभी²—वि० १. सहारा देनेवाला। २. स्तंभित करने या रोकनेवाला। ३. विष्टंभ रोग युक्त। ४. विष्टंभ रोग पैदा करनेवाला [को०]।

विष्ट—वि० [सं० विश्+क्त (प्रत्य०)] १. प्रविष्ट। घुसा हुआ। २. सहित। युक्त [को०]।

विष्टप—संज्ञा पुं० [सं०] १. भुवन। लोक। २. पात्र। प्याला (को०)।

विष्टपहारी—वि० [सं० विष्टपहारिन्] भुवनमोहन। सबको लुभानेवाला [को०]।

विष्टप्^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर्ग लोक। २. जगत्। दुनिया। भुवन। संसार (को०)।

विष्टप्^{2}—संज्ञा स्त्री० सिरा चोटी। ऊँचाई [को०]।

विष्टब्ध—वि० [सं०] १. अच्छी तरह से जमाया हुआ। २. टेक लगा हुआ। सहारा दिया हुआ। ३. रोका हुआ। अवरुद्ध। स्तंभित। गतिहीन। ५. भरा हुआ। ६. जो पचा न हो। ७. कठोर। कर्कश। कड़ा [को०]।

विष्टब्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] टेक लगाना या देना। सहारा देना। मजबूती से स्थिर करना [को०]।

विष्टभ—संज्ञा पुं० [सं०] लोक। संसार [को०]।

विष्टभित—वि० [सं०] जो घर अपनी जगह दृढ़तापूर्वक स्थापित किया हुआ हो [को०]।

विष्टर^1—वि० [सं०] विस्तृत। लंबा चौड़ा [को०]।

विष्टर^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. आक। मदार। २. वृक्ष। पेड़। ३. पीठ। ४. कुश का बना हुआ आसन। कुशास्तर। आसन। ५. मुट्ठी भर कुश (को०)। ६. यज्ञ में ब्रह्मा का आसन (को०)। ७. पचीस कुशाओं से बना हुआ एक आसन। ८. एक देवता (को०)।

विष्टरपंक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्टरपङ्क्ति] एक वैदिक छंद।

विष्टरबृहती—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक छंद।

विष्टरभाक्—वि० [सं० विष्टरभाज्] जो आसन पर उपविष्ट हो। आसन पर बैठा हुआ [को०]।

विष्टरश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० विष्टरश्रवस्] १. विष्णु। नारायण। २. २. कृष्ण (को०)। ३. शिव (को०)।

विष्टरस्थ—वि० [सं०] आसन पर बैठा हुआ [को०]।

विष्टरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुंडासिनी नामक घास।

विष्टराश्र—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार पृथु के एक पुत्र का नाम।

विष्टरुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पीली केतकी।

विष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विष्ठा'।

विष्टार—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुश या घास का आस्तरण। २. एक वैदिक छंद [को०]।

विष्टारपंक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्टारपङ्क्ति] एक प्रकार का वैदिक छंद जिसके प्रथम और चतुर्थ चरणों में १२ वर्ण होते हैं।

विष्टारबृहती—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक छंद का नाम जिसके पहले और चौथे चरणों में ८ और दूसरे तथा तीसरे चरणों में १० वर्ण होते हैं।

विष्टारी—वि० [सं० विष्टारिन्] विस्तारयुक्त। विस्तृत। आयामयुक्त। फैला हुआ [को०]।

विष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह काम जो बिना कुछ पुरस्कार दिए कराया जाय। बेगार। २. वेतन। तनख्वाह। ३. काम। ४. वर्षा। ५. फलित ज्योतिष के ग्यारह करणों में से सातवाँ करण जिसे विष्टिभद्रा भी कहते हैं। उ०—विष्टि करण नाम से कही जाती है।—बृहत्०, पृ० ४४२। ६. व्याप्ति। फैलाव (को०)। ७. प्रेषण। भेजना (को०)। ८. दे० विष्टिकारी' (को०)। ९. नरकवास। नरक में पड़ना (को०)।

विष्टिकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल में राज्य का वह बड़ा सैनिक कर्मचारी जिसे अपनी सेना रखने के लिये राज्य की ओर से जागीर मिला करती थी। २. अत्याचारी। ३. बेगारों या दासों का अधिकारी (को०)।

विष्टिकर्मांतिक—संज्ञा पुं० [सं० विष्टिकर्मान्तिक] विष्टिकारी। वह जिससे बिना भृति दिए काम कराया जाय [को०]।

विष्टिकारी—संज्ञा पुं० [सं० विष्टिकारिन्] दे० 'विष्टिकर्मांतिक' [को०]।

विष्टिकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] बेगार। सेवक। दास [को०]।

विष्टिभद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विष्टि'—५।

विष्टिव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का व्रत।

विष्ठल—संज्ञा पुं० [सं०] दूर का स्थान। दूरवर्ती स्थान। वह जगह जो निकट न हो [को०]।

विष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मल। मैला। गुह। पाखाना। २. पेट। उदर (को०)। ३. मध्यभाग। अंतर (को०)।

विष्ठाभुक्—संज्ञा पुं० [सं०] सूअर।

विष्ठाभू—संज्ञा पुं० [सं०] मल में उत्पन्न होनेवाला कृमि [को०]।

विष्ठाभूदारक—संज्ञा पुं० [सं०] ग्रामशूकर [को०]।

विष्ठारुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पीली केतकी।

विष्ठाशी—संज्ञा पुं० [सं० विष्ठाशिन्] सूअर।

विष्ठित—वि० [सं०] उपस्थित। पार्श्ववर्ती [को०]।

विष्ठेष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हल्दी।

विष्णु—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंदुओं के एक प्रधान और बहुत बड़े देवता जो सृष्टि का भरण, पोषण और पालन करनेवाले तथा ब्रह्मा के एक विशेष रूप माने जाते हैं।

विशेष—भारतवर्ष में विष्णु को देवता के रूप में बहुत दिनों से मानते चले आते हैं और इनकी उपासना बहुत अधिकता से होती आई है। ऋग्वेद में यद्यपि विष्णु गौण देवता माने गए हैं, पर ब्राह्मण ग्रंथों में इनका महत्व बहुत अधिक है। ऋग्वेद में विष्णु विशाल शरीरवाले और युवक माने गए हैं और कहा गया है कि ये त्रि+वि+क्रम अर्थात् तीन कदमों या डगों से सारे विश्व को अतिक्रमण करनेवाले हैं। पुराणों के वामन अवतार का यही बीज रूप है। कुछ लोगों ने इन तीनों डगों या कदमों का अर्थ सूर्य का दैनिक उदय और अस्त माना है और कुछ लोग इसका अर्थ भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्गलोक लेते हैं। इसके अतिरिक्त ये नियमित रूप, बहुत दूर तक और जल्दी जल्दी चलनेवाले माने गए हैं। यह भी कहा गया है कि ये इंद्र के मित्र थे और वृत्र के साथ युद्ध करने में इन्होंने इंद्र को सहायता दी थी। विष्णु और इंद्र दोनों मिलकर वातावरण,

अंतरिक्ष, सूर्य, उषा और अग्नि के उत्पादक माने गए हैं और विष्णु इस पृथ्वी, स्वर्ग और सब जीवों के मुख्य आधार कहे गए हैं। ऋग्वेद और शतपथ ब्राह्मण में कुछ ऐसी कथाएँ भी हैं जो पौराणिक काल के वराह, मत्स्य तथा कूर्म अवतार का भी मूल या आरंभिक रूप मानी जा सकती हैं। वैदिक काल में विष्णु धन, वीर्य और बल देनेवाले तथा सब लोगों का अभीष्ट सिद्ध करनेवाले माने जाते थे। पुराणों के अनुसार विष्णु समय पर पृथ्वी का भार हलका करने के लिये, संसार में शांति और सुख की स्थापना करने के लिये और दुष्टों तथा पापियों का नाश करने के लिये अवतार धारण किया करते हैं। विष्णु के कुल चौबीस अवतार कहे गए हैं, जिनमें से दस मुख्य माने गए हैं (दे० 'अवतार')।

भिन्न भिन्न पुराणों में विष्णु के संबंध में अनेक प्रकार की कथाएँ और उनकी उपासना आदि का बहुत अधिक माहात्म्य मिलता है। विष्णु के उपासक वैष्णव कहलाते हैं। इनकी स्त्री का नाम श्री या लक्ष्मी कहा गया है। ये युवक, श्यामवर्ण और चतुर्भुज माने गए हैं। ये चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण किए रहते हैं। इनके शंख का नाम पांचजन्य, चक्र का नाम सुदर्शन और गदा का नाम कौमोदकी है। इनकी तलवार का नाम नंदक और धनुष का नाम शार्ङ्ग है। इनका वाहन वैनतेय नामक गरुड़ माना जाता है। पुराणों में इनके एक हजार नाम माने गए हैं, और उन नामों का जप बहुत शुभ फल देनेवाला माना जाता है। नारायण, कृष्ण, वैकुंठ, दामोदर, केशव, माधव, मुरारि, अच्युत, हृषीकेश, गोविंद, पीतांबर, जनार्दन, चक्रपाणि, श्रीपति, मधुसूदन, हरि आदि इनके प्रसिद्ध नाम हैं।

२. अग्नि। ३. वसु देवता। ४. बारह आदित्यों में से पहले आदित्य का नाम। ५. एक प्राचीन ऋषि जिनका बनाया हुआ धर्मशास्त्र प्रचलित है। ६. श्रवण नाम का नक्षत्र (को०)। ७. वह जो पुण्यात्मा हो। संत (को०)।

विष्णुऋक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] श्रवण नक्षत्र का एक नाम।

विष्णुकंद—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुकन्द] एक प्रकार का बड़ा कंद जो प्रायः कोंकण प्रदेश में होता है। वैद्यक में यह मधुर, शीतल, रुचिकारी, तृप्तिकारक तथा दाह, पित्त और सूजन को दूर करनेवाला माना जाता है।

पर्या०—विष्णुगुप्त। सुपुष्ट ? (सुपुट)। बहुसंपुट। जलवासा। बृहत्कंद। दीर्घपत्र। हरिप्रिय।

विष्णुकांची—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुकाञ्ची] दक्षिण के एक प्राचीन तीर्थ का नाम। कहते हैं कि इसकी स्थापना शंकराचार्य ने की थी।

विष्णुकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुकान्ता] नीली अपराजिता। नीली कोयल लता।

विष्णुकांती—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुकान्ती] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

विष्णुकाक—संज्ञा पुं० [सं०] नीला अपराजिता। नीली कोयल लता।

विष्णुक्रांत—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुक्रान्त] १. इश्कपेंचा नामक लता या उसका फूल। २. संगीत में एक प्रकार का ताल।

विष्णुक्रांता—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुक्रान्ता] १. नीली अपराजिता या कोयल नाम की लता। २. वाराहीकंद। गेंठी। ३. नीले फूलवाली शंखाहुली।

विष्णुक्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुक्रान्ति] अपराजिता या कोयल नाम की लता।

विष्णुक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

विष्णुगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुगङ्गा] एक प्राचीन नदी का नाम।

विष्णुगंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुगन्धि] लाल फूल की शंखाहुली।

विष्णुगुप्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रसिद्ध ऋषि और वैयाकरण जो लोक में कौटिल्य के नाम से प्रसिद्ध थे। कहते हैं, एक बार शिव जी इनपर बहुत कुपित हुए थे। उस समय विष्णु ने इनकी रक्षा की थी। २. प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ चाणक्य का असली नाम। विशेष दे० 'चाणक्य'। ३. बड़ी मूली। ४. विष्णुकंद। ५. वात्स्यायन मुनि का नाम (को०)।

विष्णुगुप्तक—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ी मूली।

विष्णुगृह—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु भगवान का मंदिर। २. एक नगर। स्तंबपुर। ताम्रलिप्त [को०]।

विष्णुगोल—संज्ञा पुं० [सं०] विषुवत् रेखा [को०]।

विष्णुग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुग्रन्थि] शरीर की एक संधि [को०]।

विष्णुचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु के हाथ का चक्र। सुदर्शन चक्र।

विष्णुज—संज्ञा पुं० [सं०] अठारहवें कल्प का नाम [को०]।

विष्णुज²—वि० जो विष्णु नक्षत्र में उत्पन्न हो। श्रवण नक्षत्र में जन्म लेनेवाला [को०]।

विष्णुजन—संज्ञा पुं० [सं०] संत। महात्मा। तपस्वी [को०]।

विष्णुतिथि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एकादशी और द्वादशी दोनों तिथियाँ जिनके स्वामी विष्णु माने जाते हैं।

विष्णुतैल—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल जो वातरोगों के लिये बहुत उपकारी माना जाता है।

विष्णुत्व—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का भाव या धर्म।

विष्णुदत्त—संज्ञा पुं० [सं०] राजा परीक्षित का एक नाम [को०]।

विष्णुदेवत—संज्ञा पुं० [सं०] श्रवण नामक नक्षत्र जिसके स्वामी विष्णु माने जाते हैं।

विष्णुदैवत्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसके अधिष्ठाता देवता विष्णु हों। २. श्रवण नक्षत्र [को०]।

विष्णुदैवत्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] मास के प्रत्येक पक्ष की एकादशी और द्वादशी तिथि। विष्णु तिथि [को०]।

विष्णुद्वीप—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक द्वीप का नाम।

विष्णुधर्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह धर्म जिसमें विष्णु की वैदिक उपासना होती है। २. एक प्रकार का श्राद्ध [को०]।

विष्णुधर्मोत्तर—संज्ञा पुं० [सं०] एक उपपुराण का नाम जो विष्णुपुराण का एक अंग माना जाता है।

विष्णुधारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्राचीन तीर्थ का नाम। २. पुराणानुसार हिमालय से निकली हुई एक नदी का नाम।

विष्णुपंजर—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुपञ्जर] पुराणानुसार विष्णु का एक कवच ।

विशेष--कहते हैं, यह कवच धारण करने से सब प्रकार के भय दूर हो जाते हैं ।

विष्णुपत्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विष्णु की स्त्री, लक्ष्मी । २. अदिति का एक नाम ।

विष्णुपद—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल । २. आकाश । आसमान । वियद् । ३. विष्णु का चरणचिह्न जो गया में है (को०) । ४. क्षीरसागर, दुग्ध समुद्र (को०) । ४. महाभारत के अनुसार एक तीर्थ का नाम (को०) । ६. एक पर्वत (को०) । ७. भौंहों का मध्य भाग । भ्रूमध्य (को०) ।

विष्णुपदी —संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गंगा नदी जो विष्णु के पैरों से निकली हुई मानी जाती है । २. वृष, वृश्चिक, कुंभ और सिंह इनमें से प्रत्येक की संक्रांति । ३. द्वारिका पुरी (को०) ।

विष्णुपदीचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में शुभाशुभ फल का ज्ञापक एक नराकार चक्र [को०] ।

विष्णुपरायण—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का भक्त, वैष्णव ।

विष्णुपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृश्निपर्णी । पिठवन ।

विष्णुपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला ।

विष्णुपीठ—संज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार एक पीठ या तीर्थस्थान का नाम ।

विष्णुपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] अठारह प्रमुख पुराणों में से एक ।

विष्णुपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णु के रहने का स्थान, वैकुंठ ।

विष्णुप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. तुलसी का पौधा । २. लक्ष्मी ।

विष्णुप्रीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णु की पूजा के निमित्त ब्राह्मण को दी जानेवाली भूमि [को०] ।

विष्णुभ—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु नक्षत्र । श्रवण नक्षत्र [को०] ।

विष्णुभक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] भगवत्सेवा [को०] ।

विष्णुमाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।

विष्णुमित्र—संज्ञा पुं० [सं०] सार्वलौकिक नाम । अमुक । फलाँ [को०] ।

विष्णुयशा—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुयशस्] पुराणानुसार वह व्यक्ति जो ब्रह्मयशा का पुत्र और कल्कि अवतार का पिता होगा ।

विष्णुयान—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ [को०] ।

विष्णुरथ—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ ।

विष्णुरात—संज्ञा पुं० [सं०] राजा परीक्षित का एक नाम ।

विशेष—कहते हैं, अश्वत्थामा ने इन्हें गर्भ में ही मार डाला था; पर विष्णु ने इन्हें फिर से जिला दिया; इसी से इनका यह नाम पड़ा ।

विष्णुलिंगी—संज्ञा स्त्री० [सं० विष्णुलिङ्गी] बटेर ।

विष्णुलोक—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का निवासस्थान, वैकुंठ । गोलोक ।

विष्णुवल्लभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. तुलसी का पौधा । २. लक्ष्मी (को०) । ३. अग्निशिखा । कलिहारी ।

विष्णुवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ ।

विष्णुवाह्य — संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विष्णुवाहन' ।

विष्णुवृद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

विष्णुशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] लक्ष्मी ।

विष्णुशिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शालिग्राम ।

विष्णुशृंखल—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुशृङ्खल] वह द्वादशी जो श्रवण नक्षत्र में हो । इसकी गणना योग और पुण्यकाल में होती है ।

विष्णुश्रुत—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम । २. एक प्रकार का आशीर्वाद वचन जिसका अभिप्राय है कि यह सुनकर विष्णु तुम्हारा मंगल करें ।

विष्णुसंहिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रसिद्ध स्मृति का नाम ।

विष्णुसर्वज्ञ —संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रसिद्ध आचार्य जो सायण के गुरु माने जाते हैं ।

विष्णुस्मृति —संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रसिद्ध स्मृति जिसका उल्लेख याज्ञवल्क्य आदि ने किया है ।

विष्णुस्वामी—संज्ञा पुं० [सं० विष्णुस्वामिन्] कृष्णभक्तिपरक विष्णुस्वामी संप्रदाय के प्रवर्तक का नाम । उ०—इन विष्णु स्वामी संप्रदाय दृढ़ करि ताको सार जो सेवा प्रकार ताको प्रकास कियो है ।—दो सौ बावन०, भ० १, पृ० १४४ ।

विष्णुहिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. तुलसी का पौधा । २. मरुआ ।

विष्णूत्तर—संज्ञा पुं० [सं०] वह भूदान जो विष्णुपूजा के निमित्त किया जाय [को०] ।

विष्पंद—संज्ञा पुं० [सं० विष्पन्द] १. स्पंदन । धड़कन । २. आटे, घी और चीनी से बना हुआ एक व्यंजन [को०] ।

विष्पंदन —संज्ञा पुं० [सं० विष्पन्दन] दे० 'विष्पंद' ।

विष्पत्री—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी । चिड़िया ।

विष्पर्धा[1]—संज्ञा पुं० [सं० विष्पर्धस्] स्वर्ग ।

विष्पर्धा[2]—वि० जिसे किसी प्रकार की स्पर्धा या मत्सर आदि न हो ।

विष्पर्धा[3]—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्पर्धा । होड़ । लाग डाँट [को०] ।

विष्पित—संज्ञा पुं० [सं०] कठिनता । कठिनाई । मुश्किल [को०] ।

विष्पुलिंगक—वि० [सं०] चिनगारी या स्फुलिंग युक्त [को०] ।

विष्फार—संज्ञा पुं० [सं०] १. धनुष की टंकार । २, विस्तार । फैलाव । विस्फार (को०) ।

विष्फुलिंग—संज्ञा पुं० [सं०] आग की चिनगारी । अग्निकण [को०] ।

विष्यंद—संज्ञा पुं० [सं० विष्यन्द] १. बूँद । बिंदु । २ बहना । क्षरण । प्रवाह ।

विष्यंदन—संज्ञा पुं० [सं० विष्यन्दन] १. बहना । चूना । २. एक मिठाई । दे० 'विष्यंद' । ३. उफनकर बहना । ४. पिघलना । तरल होना (को०) । ५. विलीन होना । मिल जाना ।

विष्यंदी—वि० [सं० विष्यन्दिन्] प्रवाही । तरल [को०] ।

विष्य—वि० [सं०] जो विष देकर मार डालने के योग्य हो । जहर देकर मार डालने के लायक ।

विष्व—वि० [सं०] १, हानिकर । पीड़ाकर । उत्पातकारी । २. हिंसक । हिंस्र [को०] ।

विष्वक्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विष्वच्] १. वह जो सदा इधर उधर घूमता फिरता रहे। २. दे० 'विषुव'।

विष्वक्^{2}—क्रि० वि० सर्वत्र। चारों ओर [को०]।

विष्वक्^{3}—वि० सर्वत्र जानेवाला। सर्वव्यापक। २. विभागों में अलग अलग करनेवाला। ३. भिन्न।

विष्वक्पर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला।

विष्वक्सेन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २. एक मनु का नाम जो मत्स्यपुराण के अनुसार तेरहवें और विष्णुपुराण के अनुसार चौदहवें हैं। ३. शिव का एक नाम। ४. एक प्राचीन ऋषि का नाम। ५. पुराणानुसार शंकर के एक पुत्र का नाम। ६. विष्णु का एक पार्षद (को०)।

यौ०—विष्वक्सेनकांता = प्रियंगु। विष्वक्सेनप्रिया = (१) प्रियंगु। (२) लक्ष्मी।

विष्वक्सेना—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रियंगु।

विष्वग्गति—वि० [सं०] सर्वत्र गमन करनेवाला [को०]।

विष्वग्लोप—संज्ञा पुं० [सं०] दुबधा। संभ्रम। संक्षोभ। विघ्न।

विष्वग्वात, विष्वग्वायु—संज्ञा पुं० [सं०] सब ओर से बहनेवाली एक प्रकार की वायु।

विष्वाणन—संज्ञा पुं० [सं०] १. भोजन। २. क्वणित करना। शब्द उत्पन्न करना [को०]।

विष्वाण—संज्ञा पुं० [सं०] भोजन। खाना [को०]।

विसंकट^1—संज्ञा पुं० [सं० विसङ्कट] १. इंगुदी या हिंगोट नामक वृक्ष। २. सिंह। शेर।

विसंकट^2—वि० विशाल। खौफनाक। बड़ा। डरावना।

विसंकुल^1—वि० [सं० विसङ्कुल] संकुलतारहित। आकुलतारहित। धैर्यवान्। सुस्थिर।

विसंकुल^2—संज्ञा पुं० अव्यग्रता। व्यग्र न होना। घबराहट न होना [को०]।

विसंगत—वि० [सं० विसङ्गत] असंगत। बेमेल [को०]।

विसंगति—संज्ञा स्त्री० [सं० विसङ्गति] असंगति। अनमिलपन।

विसंचारी—वि० [सं० विसञ्चारिन्] इतस्ततः भ्रमणशील। इधर उधर घूमनेवाला।

विसंज्ञ—वि० [सं०] जिसे संज्ञा न हो। बेहोश।

विसंज्ञित—वि० [सं०] संज्ञाहीन [को०]।

विसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० बिसन्धि] १. बुरी संधि। अभिसंधि। अनभिमत संधि। २. संधि का अभाव जो साहित्य में एक दोष है [को०]।

विसंधिक—वि० [सं० विसन्धिक] जिनकी संधि न हो सकती हो।

विसंभरⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विश्वम्भर] दे० 'विश्वंभर'। उ०—तू मेरो बालक हो नंदनंदन, तोहि विसंभर राखैं।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० २३४।

विसंभरा—संज्ञा स्त्री० [सं० विसम्भरा] पल्ली। छिपकली [को०]।

विसंभोग—संज्ञा पुं० [सं० विसम्भोग] विरह। पार्थक्य [को०]।

विसंमूढ़—वि० [सं० विसम्मूढ] पूर्णतः उन्मत्त [को०]।

विसंयुक्त—वि० [सं०] असंयुक्त। पृथक् [को०]।

विसंवाद^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरोध। २. डाँट डपट। ३. धोखा। प्रतिज्ञाभंग (को०)। ४. असंगति। असंबद्धता। असहमति (को०)। ५. निराश करना (को०)।

विसंवाद^2—वि० विलक्षण। अद्भुत।

विसंवादक—वि० [सं०] १. वचन भंग करनेवाला। कहकर मुकर जानेवाला। २. छली। धोखेबाज [को०]।

विसंवादन—संज्ञा पुं० [सं०] प्रतिज्ञा भंग करना [को०]।

विसंवादी^{1}—वि० [सं० विसंवादिन्] १. वंचक। धूर्त। २. वचन या प्रतिज्ञा का पालन न करनेवाला। ३. निराश करनेवाला। ४. खंडन करनेवाला। भिन्न मत रखनेवाला। असहमत [को०]।

विसंवादी^{2}—संज्ञा पुं० राग में अल्पप्रयुक्त स्वर जो संवादी के विरुद्ध होता है (संगीत)।

विसंष्ठुल—वि० [सं०] १. अस्थिर। क्षुब्ध। व्यग्र। २. जो हमवार न हो। असमतल [को०]।

विसंहत—वि० [सं०] १. अलग किया हुआ। ढीला किया हुआ [को०]।

विस^1—संज्ञा पुं० [सं०] कमल की नाल। मृणाल।

विस†^{2}—सर्व० [सं० युष्मद् > वस्] दे० 'उस'।

विसकंठिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विसकण्ठिका] एक प्रकार का छोटा बगला।

विसकुसुम—संज्ञा पुं० [सं०] कमल।

विसक्खⓅ—संज्ञा पुं० [सं० विशिख] विशिख। बाण। उ०—उभे दले उचारयं, मचे सु मार मारयं। विसक्ख, पारवारए, भड़ां सनाह मारए।—रा० रू०, पृ० ८३।

विसग्रंथि—संज्ञा पुं० [सं० विसग्रन्थि] कमलकंद। भसींड़।

विसज—संज्ञा पुं० [सं०] कमल।

विसटी†—संज्ञा स्त्री० [देश० तुल० विष्टी] १. ताँबे या पीतल का वह चक्र जिससे नागेसाधु लँगोटी की तरह बाँधते हैं। उ०—कवन मेखला कवन विसटी। कवन सेली कवन किसती।—प्राण०, पृ० ७६। २. कौपीन। चिट। चीरा।

विसतरनाⓅ—क्रि० अ० [सं० विस्तरण] फैलना। विस्तृत होना। उ०—विसतरी बात सारी विसव अणकारी उतपात सी।—रा० रू०, पृ० ६४।

विसदृश—वि० [सं०] १. जो सदृश या समान न हो। विपरीत। विरुद्ध। उलटा। २. विलक्षण। अद्भुत। अजीब।

विसद्दⓅ—वि० [सं० विशद] निर्मल। स्वच्छ। दे० 'विशद'। उ०—गुलिक्क कर्ण राजहीं। विसद्द हार साजहो। पदिक्क सीस शोभयं रिषीस पुंज लोभयं।—प० रासो, पृ० १०।

विसनⓅ†—संज्ञा पुं० [सं० विष्णु] दे० 'विष्णु'।

विसनाभि—संज्ञा पुं० [सं०] कमलिनी। पद्मिनी।

विसन्नⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्यसन, प्रा० विसन] १. आदत। दे० 'व्यसन'। उ०—वाघ डरै नह वैर सुँ नाघा वैर विसन्न।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० १६। २. विपत्ति। संकट। उ०—वेढ़ां नणैं विसन्न।—रा० रू०, पृ० १३७।

विसप्रसून—संज्ञा पुं० [सं०] कमल।—नंद० ग्रं०, पृ० ११०।

विसभाग—वि० [सं०] जिसका विभाग या हिस्सा न हो [को०]।

विसम(पु)—वि० [सं० विषम] दे० 'विषम'।

विसमता—संज्ञा स्त्री० [सं० विषमता] दे० 'विषमता'।

विसमाद(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विस्मय+ता] १. संशय। शंका। २. दुःख। वेदना। उ०—कड़िहारी और गृही कौ, कोई ना जाने अंत। बिन परचै बिसमाद है, हरषत परचै संत।—कबीर सा०, पृ० ९५।

विसमाध†—संज्ञा पुं० [हिं० विस्माद] दे० 'विस्माद'।

विसमाधना—क्रि० अ० [हिं० विसमाध+ना (प्रत्य०)] मसूसना। दुःखी होना। शोकाकुल होना।

विसमाप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] असमाप्ति। पूर्ण न होना [को०]।

विसमै(पु)¹—संज्ञा पुं० [सं० वि०+समय] विकट समय। उ०—सोनागिर चाँपावत हाथ खग तोले। विसमै मैं द्रढ़ देण कोप बैण बोले।—रा० रू०, पृ० ११४।

विसमै(पु)²—संज्ञा पुं० [सं० विस्मय] अचंभा। आश्चर्य। उ०—कहनै मै विसमै सी देखे बन आवै।—रा० रू०, पृ० ४२।

विसयना†—क्रि० अ० [सं० वि+शयन ?] डूबना। समाप्त होना। अस्त होना।

विसर—संज्ञा पुं० [सं०] १. आगे जाना। गमन करना। जाना। २. फैलना। बढ़ना। विस्तृत होना। ३. भीड़। समूह। झुंड। ४. राशि। ढेर [को०]।

विसरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. फैलना। विस्तृत होना। २. स्रस्त होना। ढीला पड़ना [को०]।

विसराम(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विश्राम] दे० 'विश्राम'। उ०—तन को विसराम अराम घनो करि दीजतु है पै न दीजतु है।—ठाकुर०, पृ० ९।

विसर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. दान। २. त्याग। ३. मल का त्याग करना। शौच। ४. व्याकरण के अनुसार एक वर्ण जिसमें ऊपर नीचे दो बिंदु होते हैं और जिनका उच्चारण प्रायः अर्ध ह् के समान होता है। इसका रूप यह (:) होता है। ५. सूर्य का एक अयन। ६. मोक्ष। ७. मृत्यु। ८. प्रलय। ९. वियोग। विछोह। १०. दीप्ति। चमक। ११. सूर्य का दक्षिणायन। वर्षा, शरद और हेमंत ये तीनों ऋतुएँ। १२. भेजना। प्रेषण। विसर्जन। (को०)। १३. गिराना। उड़ेलना। बूँद बूँद करके गिराना (को०)। १४. क्षेपण। डालना। फेंकना (को०)। १५. निर्माण। रचना (को०)। १६. शिश्न (को०)। १७. सृष्टि का व्यापार (को०)। १८. शिव का नाम (को०)।

विसर्गी—वि० [सं० विसर्गिन्] दान या त्याग करनेवाला [को०]।

विसर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. परित्याग। छोड़ना। उ०—अब मुझे प्राण विसर्जन करने में भी आगा पीछा नहीं है।—राधाकृष्ण (शब्द०)। २. किसी को यह कहकर भेजना कि तुम जाकर अमुक कार्य करो। ३. विदा होना। चला जाना। प्रस्थान करना। ४. षोडशोपचार पूजन में अंतिम उपचार अर्थात् आवाहन किए हुए देवता से पुनः स्वस्थान गमन की प्रार्थना करना। ५. समाप्ति। अंत। उ०—कथा विसर्जन होति है सुनौ बीर हनुमान।—(शब्द०)। ६. दान। ७. मलत्याग (को०)। ८. डालना। गिराना (को०)। ९. चराने के लिये पशुओं का हाँकना (को०)। १०. प्रतिमा को जल में बहाना (को०)। ११. वृषोत्सर्ग। साँड़ छोड़ना (को०)। १२. निर्माण। रचना (को०)। १३. क्षतिग्रस्त करना (को०)। १४. उत्तर देना (को०)।

विसर्जनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुदा के ऊपरी भाग में स्थित तीन वलयों में से एक [को०]।

विसर्जनीय¹—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विसर्ग'।

विसर्जनीय²—वि० विसर्जन किया जानेवाला। त्यागने योग्य [को०]।

विसर्जयिता—वि० [सं० विसर्जयितृ] विसर्जन करनेवाला। त्यागनेवाला [को०]।

विसर्जिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] त्रेता युग [को०]।

विसर्जित—वि० [सं०] १. त्यागा हुआ। त्यक्त। २. प्रेषित। भेजा हुआ। ३. हटाया हुआ। च्युत। ४. प्रदत्त।

दिसर्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का रोग, जिसमें ज्वर के साथ सारे शरीर में छोटी छोटी फुंसियाँ हो जाती हैं। २. रेंगना। सरकना (को०)। २. इधर उधर जाना। हिलना डुलना (को०)। ४. फैलाव। संचार (को०)। ५. किसी कर्म का अप्रत्याशित या अनपेक्षित दुःखद फल (को०)।

विसर्पघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] मोम [को०]।

विसर्पण—संज्ञा पुं० [सं०] १. फैलना। फैलाव। वृद्धि। बाढ़। २. फोड़े आदि का फूटना। ३. फेंकना। ४. रेंगना। सरकना। धीरे धीरे चलना (को०)। ५. परित्याग (को०)।

विसर्पि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विसर्पिका'।

विसर्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] विसर्प नामक रोग।

विसर्पिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] यवतिक्ता नाम की लता। विशेष दे० 'शंखिनी'।

विसर्पी—वि० [सं० विसर्पिन्] १. प्रसरणशील। फैलनेवाला। उ०—उठ उठ ह्याँ ते भागु तौ लौं अभागे। मम बचन विसर्पी सर्प जौ लौं न लागे।—केशव (शब्द०)। २. रेंगने या सरकनेवाला (को०)। ३. विसर्प रोग से पीड़ित (को०)।

विसल—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्ष का नया पत्ता। पल्लव। बिसल।

विसल्वकृत—संज्ञा पुं० [सं०] भद्रवल्ली।

विसव(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० विश्व] जगत्। दुनियाँ। उ०—(क) विसतरी बात सारी विसव अणकारी उतपात सी।—रा० रू०, पृ० ९४। (ख) विसव अवर जवनाँ वसू करे सको मिल काज।—रा० रू०, पृ० ३६०।

विसवना†—क्रि० अ० [सं० विश्रमण ? या, विस्त्रवण] १. अस्त होना। जैसे, दिन विसवना। २. व्यतीत होना। बीतना। जैसे, बेर विसवना।

विसवर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० विसवर्त्मन्] वैद्यक के अनुसार आँखों का एक प्रकार का रोग जिसमें त्रिदोष के प्रकोप के कारण पलकों में सूजन हो आती है और उसमें छोटी छोटी फुंसियाँ हो आती हैं जिनमें से पानी बहा करता है।

विसवासह—संज्ञा पुं० [सं०] जावित्री।

विसवासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जावित्री।

विसशालूक—संज्ञा पुं० [सं०] कमलकंद। भसीड़।

विसाति(पु)—संज्ञा स्त्री० [अ० बिसात] १. शक्ति। हकीकत। २. गणना। उ०— मुनि सुरपती नाचि बहु भाँति। नर वपुरे की काह बिसाति।—जग० श०, पृ० ६६।

विसामग्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सामग्री या साधन का अभाव। २. कारण का न होना जिससे कार्य की उत्पत्ति हो [को०]।

विसार संज्ञा पुं० [सं०] १. मछली। २. निर्गम। निकलना। ३. विस्तार। फैलाव। ४. प्रवाह। बहाव। ५. उत्पत्ति। ६. रेंगना या सरकना (को०)। ७. लकड़ी। काष्ठ (को०)। ८. बल्ली। शहतीर (को०)।

विसारथि—वि० [सं०] जिसके पास सारथी न हो [को०]।

विसारिणी¹—वि० [सं० विसारिन्] फैलनेवाली। प्रसरणशील [को०]।

विसारिणी²—संज्ञा स्त्री० [सं०] माषपर्णी। मखवन।

विसारित—वि० [सं०] १. जिसका विसार किया गया हो। २. संपादित [को०]।

विसारी¹—वि० [सं० विसारिन्] १. फैलनेवाला। प्रसार करनेवाला। २. विसार करनेवाला। निकलनेवाला। ३. रेंगने या सरकने वाला। ४. विस्तृत [को०]।

विसारी²—संज्ञा पुं० मछली [को०]।

विसारी³—संज्ञा पुं० [सं०] वायुमंडल।

विसाल¹—संज्ञा पुं० [अ०] १. संयोग। मिलाप। २. आत्मा का ईश्वर में मिलना। मृत्यु। मौत। ३. प्रेमी और प्रेमिका का मिलाप।

विसाल(पु)²—वि० [सं० विशाल] दे० 'विशाल'।

विसावण(पु)†—क्रि० स० [हिं०] दे० 'बिसाहना'। उ०— वैर हमेस विसावणा वाड़ बिना वसणौह।—बाकी ग्रं०, भा० १, पृ० २३।

विसासी†—वि० [सं० अविश्वासी] [वि० स्त्री० विसासिनी] दे० 'बिसासी'। उ०—……तू उसी विमासी से पूछ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १४।

विसिंचित – वि० [सं० वि+हिं० सिंचन (सं० सेचन)] सींचा हुआ। उ०—सुकृत के जल से विसिंचित कल्प किंचित् विश्व उपवन।—अपरा, पृ० १६५।

विसिख†—संज्ञा पुं० [सं० विशिख] दे० 'विशिख'। उ०—वर्षा वधिक ने उसे आज तेरे विरह के विसिख से मारा।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १७।

विसिनी¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कमलिनी। पद्मिनी। मृणाल। २. पद्मसमूह (को०)।

विसिनी†²—संज्ञा पुं० [सं० व्यसनी] दे० 'व्यसनी'।

विसिल—वि० [सं०] मृणाल संबंधी [को०]।

विसुकर्मा(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विश्वकर्मा] दे० 'विश्वकर्मा'। उ०— विसुकर्मा रुचि धवल श्रमन सोभा सुनि जानिय।—प० रासो, पृ० १६६।

विसुकृत—संज्ञा पुं० [सं०] धर्म के विरुद्ध कार्य। पाप। गुनाह।

विसुख—वि० [सं०] सुखहीन। आनंदरहित [को०]।

विसुध—वि० [हिं० बे+सुध] दे० 'बेसुध। उ०—तुममें ही आश्रय पाते, ये प्रणय विसुध मतवाले। कितनी आहों के शोले तुमने शीतल कर डाले।—हिल्लोल, पृ० ९३।

विसुहृद्—वि० [सं०] जिसे कोई सुहृद् न हो। मित्रहीन [को०]।

विसूचन—संज्ञा पुं० [सं०] जनाने की क्रिया। सूचित करना [को०]।

विसूचिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसे हैजा मानते हैं।

विशेष—वैद्यक के अनुसार इसमें पहले पेट में दर्द होता है और फिर रोगी को बहुत से दस्त आते हैं। शरीर में जलन होती है और प्यास बहुत लगती है, छाती और सिर में पीड़ा होती है; भ्रम, मूर्छा और कंप होता है, जँभाई आती है; निर्बलता बहुत होती है, मूत्र बंद हो जाता है; नाड़ी मंद पड़ जाती है, आँखें बैठ जाती हैं, शरीर का रंग पीला पड़ जाता है और आवाज बदल जाती है। साथ ही वायु आदि के प्रकोप के कारण सारे शरीर में सुइयाँ चुभने की सी पीड़ा होती है; इसी से इसे विसूचिका कहते हैं। कुछ लोग इसे हैजा भी मानते हैं, पर अधिकांश डाक्टर आदि इसे हैजे से भिन्न समझते हैं। उनका मत है कि यह विसूचिका रोग अजीर्ण के कारण होता है; और हैजा एक प्रकार के विषाक्त जीवाणुओं के शरीर में प्रवेश करने से होता है।

विसूची—संज्ञा स्त्री० [सं०] विसूचिका नामक रोग।

विसूत्र—वि० [सं०] १. अव्यवस्थित। उद्विग्न। व्याकुल। २. उदास। रागहीन। विरक्त [को०]।

विसूरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुःख। रंज। शोक। २. चिंता। फिक्र। ३. विरक्ति। वैराग्य।

विसूरणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'विसूरण'।

विसूरित—संज्ञा पुं० [सं०] पश्चात्ताप। व्यथा। शोक [को०]।

विसूरिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्वर [को०]।

विसृज्य¹—वि० [सं०] १. जिसका विसर्जन किया जाय। भेजा जानेवाला। २. उत्पन्न किया जानेवाला [को०]।

विसृज्य²—संज्ञा पुं० [सं०] सृष्टिनिर्माण। सृष्टि का उत्पादन [को०]।

विसृत—वि० [सं०] १. कहा हुआ। २. विस्तृत। फैला हुआ। ३. विस्तारित। तना हुआ [को०]।

विसृत्वर – वि० [सं०] [स्त्री० विसृत्वरी] १. इधर उधर फैलने या व्याप्त होनेवाला। २. विसर्पण करने, रेंगने या सरकनेवाला [को०]।

विसृमर—वि० [सं०] १. फैलनेवाला। प्रसरणशील। २. विसर्पण करनेवाला। रेंगनेवाला [को०]।

विसृष्ट¹—वि० [सं०] १. जिसकी सृष्टि या रचना विशेष प्रकार से हुई हो। विशेष रूप से बनाया हुआ। २. फेंका हुआ। ३. त्यागा हुआ। छोड़ा हुआ। ढलकाया या टपकाया हुआ। ४.

भेजा हुआ। ५. उत्पन्न। निःसृत (को०)। ६ जो कार्यभार से मुक्त किया गया हो (को०)। ७. दिया हुआ। प्रदत्त (को०)।

विसृष्ट^{२}—संज्ञा पुं० विसर्ग जो इस प्रकार लिखा जाता है (:)।

विसृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. निर्माण। रचना। २. प्रेषण। भेजना। ३. परित्याग। ४. दान। प्रदान। ५. निषेक। स्राव। क्षरण (शुक्र का)। ६. संतान। संतति [को०]।

विसेस†—संज्ञा पुं० [सं० विशेष] दे० 'विशेष'। उ०—तब प्रभुन की बिसेस कृपा जाननी।—दो सौ बावन०, पृ० १५५।

विसेसन (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विशेषण] दे० 'विशेषण'। उ०—होत विसेसन में बहुत, समझहु कबि कुल कांत।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ५३५।

विसोंटा†—संज्ञा पुं० [सं० वासक] अड़ूसा।

विसोढ—वि० [सं०] जो सह्य हो। सहन किया हुआ [को०]।

विसोम—वि० [सं०] चंद्रहीन (रात्रि)। चंद्रमा से रहित [को०]।

विसौख्य—संज्ञा पुं० [सं०] सुख न होना। सौख्य का अभाव। कष्ट। पीड़ा। दुःख [को०]।

विस्खलित—वि० [सं०] १. भटका हुआ। २. ठीक तरह से न निकला हुआ। लड़खड़ाता हुआ (स्वर)। ३. त्रुटिपूर्ण। गलत। ४. गिरा हुआ। पतित। च्युत [को०]।

विस्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोना। २. एक प्रकार का परिमाण जो एक कर्ष के बराबर होता है। ३. ८० रत्ती।

विस्तज—संज्ञा पुं० [सं०] कुंदुरु।

विस्तर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रसार। फैलाव। दे० 'विस्तार'। २. प्रेम। ३. समूह। ४. आसन। ५. संख्या। ६ आधार। ७. शिव का एक नाम। ८. विवरण (को०)।

विस्तर^{२}—वि० बहुत। अधिक। विशेष।

विस्तरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बहुत या अधिक होने का भाव।

विस्तार—संज्ञा पुं० [सं०] १. लंबे या चौड़े होने का भाव। फैले होने का भाव। फैलाव। जैसे—(क) इस मकान का विस्तार कम है। (ख) तुम बातों का बहुत अधिक विस्तार करते हो। २. पेड़ की शाखा। ३. गुच्छा। ४. शिव का एक नाम। ५. विष्णु का एक नाम। ६. विवरण। पूरा ब्योरा (को०)। ७. वृत्त का व्यास (को०)। ८. झाड़ी (को०)।

विस्तारण—संज्ञा पुं० [सं०] फैलाने की क्रिया [को०]।

विस्तारता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विस्तार का भाव। फैलाव।

विस्तारना (पु)—क्रि० स० [सं० विस्तरण] फैलाना। विस्तृत या व्याप्त करना।

विस्तारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] संगीत की एक श्रुति [को०]।

विस्तारित—वि० [सं०] विस्तृत किया हुआ। फैलाया हुआ। बढ़ाया हुआ [को०]।

विस्तारी—संज्ञा पुं० [सं० विस्तारिन्] १. वह जिसका विस्तार अधिक हो। बड़ा। विशाल। २. वह जिसकी शक्ति अधिक हो। ३. बरगद। बड़।

विस्तीर्ण—वि० [सं०] १. जो दूर तक फैला हुआ हो। विस्तृत। २. विशाल। बहुत बड़ा। ३. विपुल। बहुत अधिक।

विस्तीर्णकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी।

विस्तीर्णजानु—संज्ञा स्त्री० [सं०] टेढ़े पैरोंवाली लड़की। प्रगतजानु कन्या, जिसे विवाह के अयोग्य कहा गया है [को०]।

विस्तीर्णता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विस्तीर्ण होने का भाव। विस्तार। फैलाव। उ०—क्षितिज की विस्तीर्णता का पवन अंचल हिल गया है।—क्वासि, पृ० १००।

विस्तीर्णपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] मानकंद।

विस्तीर्णभेद—संज्ञा पुं० [सं०] ललितविस्तर के अनुसार एक बुद्ध का नाम।

विस्तुर†—वि० [देश०] दूर। ओझल। बिहतुर। उ०—एको रोंवा बिस्तुर होइ हैं, धीर धीर मुर्गारन्ह पीटो।—संत० दरिया, पृ० १२६।

विस्तृत—वि० [सं०] १. जो अधिक दूर तक फैला हुआ हो। लंबा-चौड़ा। विस्तारवाला। जैसे, वहाँ आप लोगों के लिये बहुत विस्तृत स्थान है। २. यथेष्ट विवरणवाला। जिसके सब अंग या सब बातें बतलाई गई हों। जैसे,—इस ग्रंथ में नाटक के स्वरूप का बहुत विस्तृत वर्णन है। ३. बहुत बड़ा या लंबा चौड़ा। विशाल। ४. बढ़ा हुआ। विकसित (को०)। ५. प्रचुर। अधिक (को०)। ६. व्याप्त (को०)।

विस्तृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. फैलाव। विस्तार। २. व्याप्ति। ३. लंबाई, चौड़ाई और ऊँचाई या गहराई। ४. वृत्त का व्यास।

विस्थान—वि० [सं०] १. दूसरे से संबंध रखनेवाला। २. अन्य स्थान से संबद्ध। अन्य लिंग का। जैसे, वर्ण या ध्वनि [को०]।

विस्थापन—संज्ञा पुं० [सं०] दूसरे स्थान पर ले जाने की क्रिया [को०]।

विस्थापित—वि० [सं०] दूसरे स्थान से लाकर बसाया गया। उ०—विस्थापित हैं, हम धरती के विस्थापित हैं।—रजत०, पृ० २८। २. जिन्हें उत्पीड़ित कर घर द्वार से रहित कर दिया गया हो।

विस्नु (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विष्णु] दे० 'विष्णु'। उ०—विस्नु, नराइन, नरपती, वनमलीं हरि स्याम।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ५४४।

विस्पंद—संज्ञा पुं० [सं० विस्पन्द] १. धड़कन। २. एक प्रकार का व्यंजन। ३. बूँद। कण [को०]।

विस्पष्ट—वि० [सं०] १. सीधा। साफ। सुबोध। २. प्रकट। स्फुट। प्रत्यक्ष। खुला हुआ [को०]।

विस्फार—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० विस्फारित] १. धनुष की टंकार। कमान का शब्द। २. धनुष की डोरी। ज्या। ३. विस्तार। फैलाव। ४. स्फूर्ति। तेजी। ५. विकास। ६. काँपना। बार बार हिलना।

विस्फारक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर जो बहुत ही भयंकर होता है और जिसमें रोगी को खाँसी, मूर्छा, मोह और कंप आदि होता है।

विस्फारण—संज्ञा पुं० [सं०] १. खोलना। २. प्रसारित करना या फैलाना (पंख) [को०]।

विस्फारित[1]—वि० [सं०] १. खोला हुआ। फैलाया हुआ। २. फैला हुआ या फाड़ा हुआ। जैसे, विस्फारित नेत्र। ३. प्रकट किया हुआ। ४. जिसे कँपाया गया हो। जिसमें थरथराहट पैदा की गई हो। ५. काँपता हुआ। कंपमान। थरथराता हुआ। ६. टंकारयुक्त [को०]।

विस्फारित[2]—संज्ञा पुं० धनुष चढ़ाना या वाण चलाना [को०]।

विस्फीत—वि० [सं०] अधिक। प्रचुर। बहुत ज्यादा [को०]।

विस्फुट—वि० [सं०] १. सुस्पष्ट। खुला हुआ। व्यक्त। प्रकट किया हुआ। २. विकसित। खिला हुआ [को०]।

विस्फुटित—वि० [सं०] दे० 'विस्फुट'।

विस्फुर—वि० [सं०] चपल नेत्रवाला। खुली आँखोंवाला [को०]।

विस्फुरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंपन। २. कौंधना। (बिजली का)। ३. फड़कना। उ०—ठहर गए नृप वहीं विटप की छाँह में। हुआ विस्फुरण शकुन रूप धर बाँह में।—शकुं० पृ० ४७।

विस्फुरणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तेंदुआ या तिंदुक नामक वृक्ष।

विस्फुरित—वि० [सं०] १. कंपित। काँपता हुआ। २. फड़कता हुआ। विस्तारित। चंचल। जैसे, विस्फुरित नेत्र। ३. विकसित। फूला हुआ [को०]।

विस्फुलिंग—संज्ञा पुं० [सं० विस्फुलिङ्ग] १. एक प्रकार का विष। २. आग की चिनगारी। अग्निकण। उ० विस्फुलिंग से जग दुख तजि तव बिरह अगिन तन ताचौं।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ५३९।

विस्फुलिङ्गक—वि० [सं० विस्फुलिङ्गक] दीप्तिमान। चमकीला [को०]।

विस्फूर्ज—संज्ञा पुं० [सं०] गर्जन। कड़क [को०]।

विस्फूर्जथु संज्ञा पुं० [सं०] १. दहाड़ना। गरजना। कड़कना। २. बादल की गरज। बिजली की कड़क। ३. वज्रपात जैसा आकस्मिक आघात। ४. लहरों का आंदोलित होना या उठना गिरना [को०]।

विस्फूर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. पदार्थ का फैलना या बढ़ना। विकास। २. गर्जन। कड़क।

विस्फूर्जनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तेंदुआ या तिंदुक नामक वृक्ष।

विस्फूर्जित[1]—वि० [सं०] १. प्रस्फुटित। २. गरजता हुआ। शब्दायमान। ३. प्रसारित। फैलाया हुआ। ४. क्षुब्ध। कंपित [को०]।

विस्फूर्जित[2]—संज्ञा पुं० १. दहाड़। चीत्कार। २. घूर्णन। परिभ्रमण। ३. फल। परिणाम। ४. वायु का वेग। ५. संकोच। भौहों का सिकोड़ना। ६. स्फुटन [को०]।

विस्फोट—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पदार्थ का गरमी आदि के कारण उछल या फूट पड़ना। जैसे,—ज्वालामुखी पर्वत का विस्फोट। उ०—क्षुब्ध नक्र जैसे पानी में पर्वत में जैसे विस्फोट। अरि समूह में विभु वैसे ही करते थे चोटों पर चोट।—साकेत, पृ० ३९४। २. कोई जहरीला और बहुत खराब फोड़ा। ३. विस्फोटक रोग। चेचक (को०)।

विस्फोटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. फोड़ा, विशेषतः जहरीला फोड़ा। २. वह पदार्थ जो गरमी या आघात के कारण भभक उठे। भभकनेवाला पदार्थ। ३. शीतला का रोग। चेचक। उ०—डाक्टर और विद्वान् इसी विस्फोटक के नाश का उपाय टीका लगाना आदि कहेंगे।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ५७९। ४. एक प्रकार का कुष्ठ (को०)।

विस्फोटन—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पदार्थ का उबाल आदि के कारण फूट बहना। २. जोरों का शब्द।

विस्फोटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पादस्फोट। विपादिका [को०]।

विस्फोटित—वि० [सं० विस्फुटित] गर्जन के साथ फूटा हुआ। विस्फोटयुक्त। उ०—सुनता हूँ जब, विस्फोटित है चहुँ ओर भयंकर महा नाश।—दैनिकी, पृ० २५।

विस्मयंकर—वि० [सं० विस्मयङ्कर] आश्चर्य में डालनेवाला [को०]।

विस्मयंगम—वि० [सं० विस्मयङ्गम] आश्चर्यजनक [को०]।

विस्मय[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. आश्चर्य। ताज्जुब। २. साहित्य में अद्भुत रस का एक स्थायी भाव जो अनेक प्रकार के अलौकिक और विलक्षण पदार्थों के वर्णन के कारण मन में उत्पन्न होता है। ३. अभिमान। गर्व। शेखी। ४. ऊहापोह। संदेह। शक।

यौ०—विस्मयकर, विस्मयकारी = आश्चर्यजनक। विस्मयपद = आश्चर्य का भाजन। जिससे विस्मय हो। आश्चर्य का विषय।

विस्मय[2]—वि० १. जिसका गर्व नष्ट या चूर्ण हो गया हो। २. जो गर्वयुक्त न हो। निरभिमान।

विस्मयन संज्ञा पुं० [सं०] आश्चर्य। ताज्जुब [को०]।

विस्मयाकुल—वि० [सं०] आश्चर्य से चकित [को०]।

विस्मयाहत—वि० [सं०] आश्चर्यचकित। आश्चर्य से आहत। दुःख मिश्रित आश्चर्य की भावना से युक्त। उ०—विस्मयाहत हो पूछा—'इस धूप में ?—भस्मावृत०, पृ० ११।

विस्मयी वि० [सं०] विस्मययुक्त। आश्चर्य करनेवाला। विस्मय में पड़ा हुआ।

विस्मरण—संज्ञा पुं० [सं०] स्मरण न रहना। भूल जाना।

विस्मापक—वि० [सं०] आश्चर्यजनक। हैरत अंगेज [को०]।

विस्मापन[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधर्वनगर। २. कामदेव का एक नाम। ३. बाजीगर। जादूगर। ४. चाल। छलना। (अं०) ट्रिक (को०)। ५. आश्चर्य पैदा करना (को०)। कोई भी आश्चर्य में डालनेवाली वस्तु (को०)।

विस्मापन[2]—वि० [वि० स्त्री० विस्मापनी] जिसे देखकर विस्मय हो। आश्चर्य उत्पन्न करनेवाला।

विस्मारक—वि० [सं०] भुला देनेवाला। विस्मरण करानेवाला।

विस्मारण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] लीन हो जाना । लय हो जाना । नष्ट हो जाना ।

विस्मारित—वि॰ [सं॰] भुलाया हुआ । विस्मृत किया हुआ [को॰] ।

विस्मित^1—वि॰ [सं॰] १. जिसे विस्मय या आश्चर्य हुआ हो । चकित । उ॰—सो मुरारीदास को देखि के नरायनदास और सब कोई विस्मित होइ रहे ।—दो सौ बावन॰, भा॰ १, पृ॰ १०० ।

विस्मित^2—संज्ञा पुं॰ १. एक वृत्त का नाम । २. घमंडी । अभिमानी ३. उलट पुलट । अस्तव्यस्त ।

विस्मिति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विस्मय । आश्चर्य । २. दे॰ 'विस्मरण' [को॰] ।

विस्मृत—वि॰ [सं॰] जो स्मरण न हो जो याद न हो । भूला हुआ ।

विस्मृति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] भूल जाना । विस्मरण ।

विस्मेर—वि॰ [दे॰] भौचक्का । आश्चर्यान्वित । चकित [को॰] ।

विस्रंभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विस्रम्भ] १. विश्वास । यकीन । एतबार । २. केलि के समय स्त्री पुरुष में होनेवाला झगड़ा । ३. वध । हत्या ।

विस्रंभालाप—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. प्रेमालाप । प्रेमवार्ता । २. विश्वस्त होकर बातें करना ।

विस्रंभी—वि॰ [सं॰ विस्रम्भिन्] १. विश्वासी । विश्वस्त । २. प्रेमी । प्रणयी [को॰] ।

विस्रंस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ विस्रंसा] १. नीचे गिरना । पतन । २. क्षय । शिथिलता । दुर्बलता । ३. क्षरण [को॰] ।

विस्रंसन^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. अधःपतन । नीचे गिरना । २. बहना । टपकना । ३ खोलना या ढीला करना । ४. रेचक । दस्त लानेवाला [को॰] ।

विस्रंसन^2—वि॰ १. पतनशील । २. खोलनेवाला । ढीला करनेवाला । जैसे,—नीवीविस्रंसन [को॰] ।

विस्रंसिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] प्राचीन काल का एक प्रकार का उपकरण जिससे यज्ञ में आहुति दी जाती थी ।

विस्रंसी—वि॰ [सं॰ विस्रंसिन्] सरक या फिसलकर गिर जानेवाला । जैसे—हार [को॰] ।

विस्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बड़ी मूली । २. मांस के जलने की गंध । चिरायँध । ३. आमगंध । कच्चे मांस की गंध ।

विस्रगंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विस्रगन्ध] १. प्याज । २. गोदंती हरताल । ३. वह जिसमें कच्चे घास की महक हो (को॰) ।

विस्रगंधा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. गोदंती हरताल । २. प्याज । ३. हाऊबेर । हवुषा ।

विस्रगंधि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] गोदंती हरताल ।

विस्रब्ध—वि॰ [सं॰] दे॰ 'विश्रब्ध' ।

विस्रव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बहना । बूँद बूँद टपकना [को॰] ।

विस्रवण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. बहना । २. झरना । क्षरण । रसना ।

विस्रसा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. वृद्धावस्था । बुढ़ापा । २. अशक्तता । जर्जरता (को॰) ।

विस्रस्त—वि॰ [सं॰] १. ढीला किया हुआ । २. दुर्बल । कमजोर । ३. बिखरा हुआ [को॰] ।

यौ॰—विस्रस्तचेता = उदास । खिन्न । विस्रस्तबंधन = जिसके बंधन खुल गए हों । विस्रस्तवसन = जिसके वस्त्र अस्तव्यस्त हो गए हों ।

विस्रस्य—वि॰ [सं॰] ढीला किया जाने या खोला जानेवाला [को॰] ।

विस्रा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. हाऊबेर । हवुषा । २. चरबी ।

विस्राम (पु)†—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विश्राम] दे॰ 'विश्राम' ।

विस्राव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. भात का माँड़ । पीच । २. बहना । दे॰ 'विस्रव' (को॰) ।

विस्रावण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. रक्त का बहना । २. चूना । रिसना । ३. एक प्रकार की गुड़ की शराब [को॰] ।

विस्रावित—वि॰ [सं॰] बहाया हुआ [को॰] ।

विस्रुत—वि॰ [सं॰] बहा हुआ ।

विस्रुति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] बहना । चूना । रसना ।

विस्वर—वि॰ [सं॰] १. स्वरहीन । २. बेसुरा । बेमेल (स्वर) । कर्कश । ३. कठोर ।

विस्वसा (पु)‡—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विश्वास] दे॰ 'विश्वास' । उ॰—सुन्या बात राजा हँसा खिलखिला, कहा मेरे दिल का टूट्या । विस्वसा ।—दक्खिनी॰, पृ॰ ३७७ ।

विस्वा (पु)‡—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वेश्या] दे॰ 'वेश्या' । उ॰—साधु लोग कहँ धका चुगुल कहँ आदर किज्जिअ । बहुत प्रीति मसधरहि दानु विस्वा कहँ दिज्जिअ ।—अकबरी॰, पृ॰ ३२२ ।

विस्वाद—वि॰ [सं॰] स्वादरहित । फीका [को॰] ।

विस्वास†—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विश्वास] दे॰ 'विश्वास' । उ॰—तब वा वैष्णवन ने वाही समै दंडवत करी । तब वाके मन में विस्वास आयो ।—दो सौ बावन॰, भा॰ २, पृ॰ ६ ।

विस्साल (पु)—वि॰ [सं॰ विशाल] दे॰ 'विशाल' । उ॰—मोतिन्न माल विस्साल अति हीरा पौवी सुद्धरिय । जसराज सुवन अरचे अधिक मिलि मारु मंगल करिय ।—प॰ र॰सा॰, पृ॰ १३१ ।

विहंग^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विहङ्ग] १. पक्षी । चिड़िया । उ॰—सुखी परेवा जगत में एकै तुही विहँग ।—बिहारी (शब्द॰) २. सोनामक्खी । ३. बाण । तीर । ४. मेघ । बादल । ५. चंद्रमा । ६. सूर्य । ७. एक नाग का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है ।

विहंग^2—वि॰ [सं॰] आकाशगामी । आकाशचारी ।

विहंगक^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विहङ्गक] छोटी चिड़िया [को॰] ।

विहंगक^2—वि॰ आकाशचारी [को॰] ।

विहंगम^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विहङ्गम] १. पक्षी । चिड़िया । २. सूर्य ।

विहंगम^2—वि॰ आकाश में विचरण करनेवाला । उड़नेवाला [को॰] ।

विहंगमा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विहङ्गमा] १. सूर्य की एक प्रकार की किरण । २. ग्यारहवें मन्वंतर के देवताओं का एक गण । ३. बहँगी में की वह लकड़ी जिसके दोनों सिरों पर बोझ लटकाया जाता है ।

विहंगमिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विहङ्गमिका] दे० 'विहंगिका'।

विहंगय (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विहाग] दे० 'विहागराग'। उ०—भणंत श्री विनोदयं, कल्याण केक मोदयं। खँभायची पटंगयं वगेसरी विहंगयं।—रा० रू०, पृ० ३७९।

विहंगराज—संज्ञा पुं० [सं० विहङ्गराज] गरुड़।

विहंगहा—संज्ञा पुं० [सं० विहङ्गहन्] बहेलिया। चिड़ीमार।

विहंगिका—संज्ञा स्त्री० [सं० विहङ्गिका] बहँगी जिसपर कहार बोझ ढोते हैं।

विहंडण (पु)—वि० [सं० विखण्डन] नाश करनेवाला। उच्छेद करनेवाला। उ०—सभा सिँगार सकल कुल मडण। धरम सथापक पाप विहंडण।—सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० ६२।

विहंतव्य—वि० [सं० विहन्तव्य] मार डालने योग्य [को०]।

विहँड़ना (पु)—क्रि० स० [सं० विखण्डन, प्रा० विहंडण] १. नष्ट करना। २. खंडन करना। मार डालना। ३. मथना। अस्तव्यस्त करना। हिड़ोरना [को०]।

विहँसना—क्रि० अ० [सं० विहसन] दिल खोलकर हंसना। उच्च स्वर से हँसना।

विह—संज्ञा पुं० [सं०] अकाश। गगन। (समस्त पद के प्रारंभ में प्रयुक्त। जैसे, विहग) [को०]।

विहग—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षी। चिड़िया। उ०—उ०—पाहन पशु विटप विहग अपने कर लीन्हें। महाराज दशरथ के रंकराव कीन्हें।—तुलसी (शब्द०)। २. वाण। तीर। ३. सूर्य। ४. चंद्रमा। ५. ग्रह। ६. बादल (को०)। ७. ग्रहों की एक विशेष अवस्थिति (को०)।

यौ०—विहगपति = पक्षियों का स्वामी। गरुड़। विहगराज = गरुड़। विहगवेग = (१) पक्षियों के समान वेग या गतिवाला (२) एक विद्याधर का नाम [को०]।

विहगेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० विहगेन्द्र] गरुड़ [को०]।

विहगेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़।

विहड (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विकट] विकट या ऊँची नीची भूमि। बेहड़। उ०—जमुन विहड बर विकट हक्क बज्जिय चावद्दिसि।—पृ० रा०, ५५। १२७।

विहत्‌—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बाँझ गाय। बंध्या गौ। २. गर्भघातिनी गौ [को०]।

विहत[1]—वि० [सं०] १. बधित। काटा हुआ। मारा हुआ। २. चुटीला। आहत। ३. प्रतिरुद्ध। ४. विदीर्ण [को०]।

विहत[2]—संज्ञा पुं० जैन मंदिर [को०]।

विहति[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वध। २. चोट। आघात। ३. प्रतिरोध। निवारण। ४. पराजय। ५. असफलता। विफलता। ६. असंहत करना। भगा देना [को०]।

विहति—संज्ञा पुं० [सं०] सखा। मित्र। दोस्त [को०]।

विहनन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हत्या करना। वध। चोट। २. क्षति। ३. रुकावट डालना। अवरोध। अड़चन। ४. धुनिया की धुनकी (को०)।

विहर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वियोग। बिछोह। २. दे० 'विहार'।

विहरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विहार करने की क्रिया। चलना। फिरना। घूमना। २. वियोग। बिछोह। ३. खोलना। फैलाना। ४. दूर करना। ले जाना। अपहरण करना (को०)। ५. आमोद प्रमोद। मनोरंजन (को०)। ६. बाहर जाना। निकल जाना (को०)।

विहरना (पु)—क्रि० अ० [सं० विहरण] विहार करना।

विहर्ता—संज्ञा पुं० [सं० विहर्तृ] १. दस्यु। लुटेरा। २. इधर उधर घूमने या विहार करनेवाला व्यक्ति। घुमक्कड़। मौजी [को०]।

विहर्ष-संज्ञा पुं० [सं०] १. विशेष हर्ष। उल्लास। २. हर्षरहित व्यक्ति [को०]।

विहव—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ। २. युद्ध। लड़ाई।

विहसतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्मित। मृसकान [को०]।

विहसन—संज्ञा पुं० [सं०] मीठी हंसी। मुस्कान [को०]।

विहसित—संज्ञा पुं० [सं०] वह हास्य, जो न बहुत उच्च हो, न बहुत मधुर। मध्यम हास्य।

विहसित—वि० १. हंसता हुआ। मुस्कराता हुआ। २. जिसपर हँसा जाय [को०]।

विहस्त[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. पंडित। विद्वान्। २. क्लीब। नपुंसक (को०)।

विहस्त[2]—वि० १. घबराया हुआ। व्याकुल। २. जिसका हाथ टूटा हुआ हो। ३. कार्य करने में अशक्त। अक्षम (को०)। ४. निपुण। चतुर। कुशल (को०)। ५. बुद्धिमान। शिक्षित (को०)।

विहस्तित—वि० [सं०] व्याकुल। घबड़ाया हुआ [को०]।

विहाँगड़ा (पु)—संज्ञा पुं० [सं० विहंग + ड़ा (प्रत्य०)] दे० 'विहंग'।—ढोला०, पृ० ४६५।

विहाँण (पु)—संज्ञा पुं० [देश० या सं० विभानु अथवा हिं० विहान] दे० 'विहान'। उ०—ढाढी गाया निसह भरि सुणियउ साल्ह सुजाँण। ओछइ पाणी मच्छ ज्यँउ, वेलत थयड विहाँण।—ढोला०, दू० १६२।

विहाँणी†—संज्ञा स्त्री० [सं० विहाना (छोड़ना)] वह जो गुजरी या व्यतीत हुई हो। वारदात। घटना। उ०—हाजर बुलाए साह सुण दूत वाँणी। देखत ही फुरमाया कहो सो बिहाँणी।—रा० रू०, पृ० ११०।

विहा—अव्य० [सं०] स्वर्ग।

विहाई†—संज्ञा पुं० [सं० विहायस् > विहाय (= आकाश)] आकाश। व्योम। अनंत। उ०—माप का विहाई सा, प्रतप्त का निदान।—रा० रू०, पृ० ६७।

विहाग—संज्ञा पुं० [सं० विभाग] १. एक राग। दे० 'विहाग' (यह वियोग का राग है)। २. वियोग। जुदाई। विछोह। (लाक्ष०)। उ०—तू अबतक सोई है आली आँखों में भरे विहाग री।—लहर, पृ० १६।

विहान—संज्ञा पुं० [सं०] प्रातःकाल। सबेरा। भोर [को०]।

विहापित^{1}—वि० [सं०] त्यक्त करने या देने के लिये प्रेरित किया हुआ [को०]।

विहापित^{2}—संज्ञा पुं० दान। त्याग [को०]।

विहाय^{1}—संज्ञा पुं० [सं० विहायस्] दे० 'विहायस' [को०]।

विहाय^{2}—अव्य० [सं०] दे० 'विना'।

विहायगति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आकाश में चलने की क्रिया या शक्ति (जैन)।

विहायस्, विहायस—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकाश। व्योम। २. दान। ३. पक्षी। चिड़िया।

विहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. मनबहलाव के लिए धीरे धीरे चलना। टहलना। घूमना। फिरना। २. रतिक्रीड़ा। संभोग। ३. रतिक्रीड़ा करने का स्थान। ४. बौद्ध वा जैन श्रमणों के रहने का मठ। संघाराम। ५. दूर करना। हटाना (को०)। क्रीड़ा। खेल (को०)। ६. गतिशीलता। गतिमयता। जैसे, चरणविहार, पाणिविहार (को०)। ७. उद्यान। उपवन। क्रीड़ोद्यान (को०)। ८. स्कंध। कंधा (को०)। ९. देवालय। मंदिर (को०)। १०. इंद्र का प्रासाद (को०)। ११. इंद्र की ध्वजा। वैजयंत (को०)। १२. महल। प्रासाद (को०)। १३. एक प्रकार का पक्षी। बिंदुरेखक पक्षी (को०)। १४. मीमांसकों के अनुसार अग्नित्रय—गार्हपत्य आहवनीय और दक्षिणाग्नि (को०)। १५. यजमान का गृह (को०)। १६. विस्तार। प्रसार (को०)। १७. वागिंद्रिय का प्रसार (को०)। १८. मगध का एक नाम। आधुनिक बिहार प्रदेश (को०)।

यौ०—विहारगृह = क्रीड़ाभवन। विहारदेश = मनोरंजन का स्थान। विहारदासी = सन्यासिनी। भिक्षुणी। विहारभूमि = (१) मनोरंजन का स्थान। (२) चरागाह। विहारवन = क्रीड़ोद्यान। विहारवापी = क्रीड़ा के लिये बना हुआ तालाब। विहारस्थली = क्रीड़ाभूमि।

विहारक—वि० [सं०] १. विहार करनेवाला विहरणशील। २. विहार या बौद्ध मठ संबंधी [को०]।

विहारण—संज्ञा पुं० [सं०] आमोद प्रमोद [को०]।

विहारवान्—वि० [सं० विहारवत्] विहार करनेवाला [को०]।

विहारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] संघाराम। विहार [को०]।

विहारी—संज्ञा पुं० [सं० विहारिन्] १. वह जो विहार करता हो। विहार करनेवाला। २. श्रीकृष्ण का एक नाम। ३. विस्तारशील। फैलनेवाला (को०)। ४. मनोरम। सुंदर (को०)।

विहारचा(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्योहरिया'। उ०—हाट विहारचा कइ जोवज्यो, कई जोवज्यो राजदुवारि।—बी० रासो०, पृ० ७८।

विहावणी†—वि० स्त्री० [सं० √भी, प्रा० विह + हिं० आवनी (प्रत्य०)] भयावना। भयंकर। उ०—सुणि तूँ मनारे मूरखि मूठ विचार। आवैं लहरि विहावणी दमैं देह अपार।—दादू०, पृ० ५८६।

विहास—संज्ञा पुं० [सं०] स्मित। मुसकान [को०]।

विहिंसक—वि० [सं०] हानि पहुँचानेवाला। हिंसक [को०]।

विहिंसन—संज्ञा पुं० [सं०] हानि करना। कष्ट देना [को०]।

विहिंस्र—वि० [सं०] क्षति या हानि करनेवाला। विहिंसक [को०]।

विहित^{1}—वि० [सं०] १. जिसका विधान किया गया हो। जैसे,—यह कार्य शास्त्रविहित है। २. किया हुआ। ३. दिया हुआ। ४. क्रमवद्ध। स्थिर किया हुआ। निर्धारित। नियोजित (को०)। ५. निर्मित। संरचित (को०)। ६. रखा हुआ। जमा किया हुआ। (को०)। ७. सुसज्जित। संपन्न (को०)। ८ करणीय। करने योग्य (को०)। ९. विभक्त। विभाजित (को०)।

विहित^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] आदेश। आज्ञा।

विहिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कोई काम करने की आज्ञा। विधान। २. अनुष्ठान। क्रिया कर्म (को०)। ३. व्यवस्था (को०)।

विहीन—वि० [सं०] १. रहित। बगैर। बिना। २. त्यागा हुआ। छोड़ा हुआ। ३. अधम। नीच (को०)।

यौ०—विहीनजाति, विहीनयोनि, विहीनवर्ण = नीच जातिवाला।

विहीनता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विहीन होने का भाव या धर्म।

विहीनर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

विहीनित—वि० [सं०] वंचित। रहित।

विहुंडन—संज्ञा पुं० [सं० विहुण्डन] शिव के एक अनुचर का नाम।

विहूण, विहून(पु)—वि० [सं० विहीन] [वि० स्त्री० विहूणी, विहूनी] रहित। वंचित। विहीन। उ०—इसो चरित्र तिहां अति घणउ, साँड़ विहूणो व्यावइ छइ गाई।—बी० रासो, पृ० ७९।

विहृत^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. साहित्य में स्त्रियों के दस प्रकार के स्वाभाविक अलंकारों में से एक प्रकार का अलंकार। २. क्रीड़ा। खेल (को०)। ३. टहलना। घूमना। सैर (को०)। ४. हिचकिचाहट। झिझक (को०)।

विहृत^{2}—वि० १. खेला हुआ। क्रीड़ित। २. फैलाया हुआ। ३. हटाया हुआ। दूर किया हुआ। ४. वितरित। विभक्त [को०]।

विहृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जबरदस्ती या बलपूर्वक कुछ ले लेना या कोई काम करना। २. विहार। क्रीड़ा। ३. खोलने की क्रिया। प्रसार। फैलाव (को०)।

विहेठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्षति। पीडा। दुःख। २. सताना। उत्पीड़न [को०]।

विहेठक—वि० [सं०] १. उत्पीड़क। सतानेवाला। २. बुराई करनेवाला। निंदक [को०]।

विहेठन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हानि करना। क्षति पहुंचाना। पेषण। पीसना। २. रगड़ना। ३. उत्पीड़न। पीड़ा। कष्ट। सताना। उत्पीड़न करना [को०]।

विह्वल—वि० [सं०] १. भय या इसी प्रकार के मनोवेग के कारण जिसका चित्त ठिकाने न हो। घबराया हुआ। अशांत। क्षुब्ध। व्याकुल। २. डरा हुआ। भय से अभिभूत (को०)। ३. उन्मत्त।

जो आपे से बाहर हो (को०) । ४. पीड़ाग्रस्त । कष्ट में पड़ा हुआ (को०) । ५. विषादयुक्त । हतोत्साह । हताश (को०) । ६. द्रवित । तरल । पिघला हुआ (को०) ।

यौ०—विह्वलचेतन, विह्वलचेता = व्याकुल । विह्वलतनु = शिथिल शरीरवाला । विह्वलदृष्टि, विह्वलनेत्र, विह्वललोचन = अस्थिर दृष्टिवाला । जिसकी दृष्टि चंचल हो ।

विह्वलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] विह्वल होने की क्रिया या भाव । व्याकुलता । घबराहट । चिंता । परीशानी ।

विह्वलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विह्वलता' ।

विह्वलित—वि० [सं०] विह्वलतायुक्त । विह्वल (को०) ।

यौ०—विह्वलितदृष्टि = दे० 'विह्वलदृष्टि' । विह्वलित सर्वांग = व्याकुल शरीरवाला । अत्यंत क्षुब्ध । विह्वलितांग = पीड़ित अंगों या अवयवोंवाला ।

विह्वली—संज्ञा पुं० [सं० विह्वलिन्] वह जो विह्वल हो गया हो । वह जो बहुत घबरा गया हो ।

वींखा—संज्ञा स्त्री० [सं० वीङ्खा] १. नृत्य । नाच । २. घोड़े की एक चाल । ३. शूकशिम्बी । ४. संगम । संधि । ५. गति । गमन । चाल (को०) ।

वींदा—संज्ञा पुं० [देश०] [स्त्री० वींदणी] पति । खाविंद । उ०—मह बाल मारां चित विचारा दरी दारां दे सिला । सभ आय सारां धणी धारा विमल तारा वींद ।—रघु० रू०, पृ० १४६ ।

वीक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु । २. पक्षी । चिड़िया । ३. मन ।

वीक^2—संज्ञा पुं० [अं०] सप्ताह । हफ्ता ।

वीका^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँख की मैल । कीचड़ (को०) ।

वीकाश—संज्ञा पुं० [सं०] १. एकांत स्थान । २. प्रकाश । रोशनी ।

वीक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. दृष्टि । देखना । ताकना । २. दृश्य पदार्थ (को०) । ३. अचंभा । आश्चर्य (को०) । ४. अवेक्षण । निरूपण (को०) । ५. वैदग्ध्य । ज्ञान । बोध (को०) । ६. निःसंज्ञता । अनभिज्ञता (को०) ।

वीक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० वीक्षणीय] १. देखने की क्रिया । निरीक्षण । दृष्टि । उ०—वीक्षण अराल, बज रहे जहाँ जीवन का स्वर भर छंद, ताल, मौन में मंद्र ।—अनामिका, पृ० १८ । २. जाँच (को०) । ३. आँख (को०) ।

वीक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वीक्षण' (को०) ।

वीक्षणीय—वि० [सं०] १. जो देखने योग्य हो । दर्शनीय । २. विचारणीय (को०) । विवेचनीय ।

वीक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देखने की क्रिया । वीक्षण । दर्शन । २. जाँच । परीक्षा (को०) । ३. ज्ञान । प्रतिभा (को०) । ४. बेसुधी । बेहोशी (को०) ।

वीक्षित^1—वि० [सं०] दृष्ट । देखा हुआ ।

विक्षित^2—संज्ञा पुं० दृष्टि (को०) ।

वीक्षिता—वि० [सं० वीक्षितृ] दर्शक (को०) ।

वीक्ष्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विस्मय । आश्चर्य । २. वह जो कुछ देखा जाय । दृश्य । ३. वह जो नाचता हो । नाचनेवाला । नर्तक । अभिनेता । ४. घोड़ा ।

वीक्ष्य^2—वि० देखने योग्य । दर्शनीय । दृश्य । उ०—अब सी हंत न किंतु वीक्ष्य थी ।—साकेत, पृ० ३३९ । २. प्रत्यक्ष । दृष्टिगोचर । व्यक्त (को०) । ३. विस्मय (को०) ।

वीचि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लहर । तरंग । २. बीच की खाली जगह । अवकाश । ३. सुख । आनंद । विश्रांति । ४, दीप्ति । चमक । ५. अविवेक । विचारशून्यता (को०) । ६. प्रकाश की किरण (को०) । ७. अल्पता । लघुता (को०) ।

यौ०—वीचिकाक = दे० 'वीचीकाक' । वीचिक्षोभ = लहरों का वेग से उठना गिरना । वीचितरंगन्याय । वीचिमाली ।

वीचितरंग न्याय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का न्याय । विशेष दे० 'न्याय'—४ (९३) ।

वीचिमाली—संज्ञा पुं० [सं० वीचिमालिन्] समुद्र ।

वीची^{1}—संज्ञा [सं०] तरंग । लहर । दे० 'वीचि' ।

वीची^{2}—संज्ञा स्त्री० [देश०] छोटी राह । रथ्या । गली ।—देशी०, पृ० ३०२ ।

वीचीकाक—संज्ञा पुं० [सं०] जलकौआ ।

वीज—संज्ञा पुं० [सं०] १. मूल कारण । २. शुक्र । वीर्य । ३. तेज । उ०—मनु पावक माझ वीज आनि अनरगन जग्गिय ।—पृ० रा०, ६१ । १६७८ । ४. अन्न आदि का बीज । बीआ । ५. अंकुर । ६. फल । ७. आधार । ८. निधि । खजाना । ९. तत्व । १०. मूल । ११. मज्जा । १२. तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार के मंत्र जो बड़े बड़े मत्रों के मूल तत्व के रूप में माने जाते हैं । प्रत्येक देवी या देवता के लिये ये मंत्र अलग अलग होते हैं । जैसे,—ह्रीं, श्रीं, क्लीं आदि । १३. बीजगणित ।

वीजक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विजयसार या पियासाल नामक वृक्ष । २. बिजौरा नीबू । ३. सफेद सहिजन ४. बीज । बीआ । ५. दे० 'बीजक' ।

वीजकर—संज्ञा पुं० [सं०] उड़द की दाल जो बहुत पुष्टिकारक मानी जाती है ।

वीजकर्कटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] ककड़ी ।

वीजकसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. विजयसार के बीज । २. बिजौरा नीबू का सार या सत्त ।

वीजका—संज्ञा स्त्री० [सं०] मुनक्का ।

वीजकाह्व—संज्ञा पुं० [सं०] बिजौरा नीबू का पेड़ ।

वीजकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] वह औषध जिसके खाने से वीर्य बढ़ता हो । वीर्य बढ़ानेवाली दवा । वाजीकरण ।

वीजकोश—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमलगट्टा । २. सिघाड़ा । ३. फल, जिनमें बीज रहते हैं ।

वीजकोशक—संज्ञा पुं० [सं०] अंडकोश ।

वीजगणित—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गणित, जिसमें अज्ञात राशियों को जानने के लिये उनके स्थान पर अक्षर आदि रखकर कुछ सांकेतिक चिह्नों आदि की सहायता से गणना की जाती है। यह साधारण अंकगणित की अपेक्षा जटिल होता है, पर इसके द्वारा अज्ञात राशियों का पता लगाने में बहुत सहायता मिलती है।

वीजगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] परवल। पटोल।

वीजगुप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेम।

वीजद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] विजयसार या असन नामक वृक्ष।

वीजधान्य—संज्ञा पुं० [सं०] धनियाँ.

वीजन—संज्ञा पुं० [सं०] १. पंखा झलना। हवा करना। २. पंखा। ३. चंवर। ४. चकवा। चकोर। चक्रवाक। ५. लोध का पेड़। ६. पदार्थ। वस्तु (को०)।

वीजपाद—संज्ञा पुं० [सं०] पियासाल। विजयसार। २. भिलावाँ।

वीजपुरुष—संज्ञा पुं० [सं०] किसी वंश का आदि या मूल पुरुष जिससे वह वंश चला हो।

वीजपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. महुआ। २. मैनफल। ३. ज्वार।

वीजपूर, वीजपूरक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिजौरा नीबू। २. चकोतरा। ३. गलगल।

वीजपूर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिजौरा नीबू। २. चकोतरा।

वीजपेशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंडकोश।

वीजफलक—संज्ञा पुं० [सं०] बिजौरा नीबू।

वीजमंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वीजमन्त्र] दे० 'वीज-१२'।

वीजमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कमलगट्टा।

वीजमार्गी—संज्ञा पुं० [सं० वीजमार्गिन्] एक प्रकार के वैष्णव जो पश्चिम भारत में पाए जाते हैं। ये लोग निर्गुण उपासक होते हैं और देवी देवताओं का पूजन नहीं करते।

वीजरत्न—संज्ञा पुं० [सं०] उड़द की दाल।

वीजरेचक—संज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटा।

वीजरेचन—संज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटा।

वीजलि(ळि)†—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत्, प्रा० बिज्ज] दे० 'बिजली'। उ०—ज्यारइ पासइ घण घणउ वीजलि खिवइ अकास।—ढोला०, दू० २६०।

वीजवर—संज्ञा पुं० [सं०] उड़द। माष।

वीजवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] महादेव। शिव।

वीजवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. विजयसार। पियासाल। २. भिलावाँ।

वीजसार—संज्ञा पुं० [सं०] वायविडंग।

वीजसू—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी।

वीजस्नेह—संज्ञा पुं० [सं०] पलाश। ढाक।

वीजांकुर—संज्ञा पुं० [सं० वीजाङ्कुर] अँखुआ। अंकुर।

वीजांकुरन्याय—संज्ञा पुं० [सं० वीजाङ्कुर न्याय] एक न्याय। विशेष दे० 'न्याय'—४ (६४)।

वीजाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटा।

वीजाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्षाम्ल। महादा।

वीजाविक—संज्ञा पुं० [सं०] ऊँट।

वीजित—वि० [सं०] १. जिसे पंखा झला गया हो। पंखा झला हुआ। २. सिंचित (को०)।

वीजी—संज्ञा पुं० [सं० वीजिन्] १. वह जिसमें बीज हों। २. पिता। ३. चौलाई का साग।

वीजूझल†—संज्ञा स्त्री० [सं० विद्युत्, प्रा०, विज्जु, विज्जू, विजू + सं० ज्वल, प्रा० झल] बिजली सी चमकनेवाली, तलवार। उ०—जवनांण दले वीजूझले देख भले कुल देस रौ।—रा० रू०, पृ० ८६।

वीजोदक—संज्ञा पुं० [सं०] आकाश से गिरनेवाला ओला। वर्षोपल। करका। बिनौरी।

वीज्य—वि० [सं०] १. जो बोने के योग्य हो। २. जो अच्छे कुल में उत्पन्न हुआ हो। कुलीन। ३. वीजन करने योग्य। जिसे पंखा झला जाय (को०)।

वीझण†—संज्ञा पुं० [सं० वीजन, व्यजन; प्रा० वीजण] दे० 'बीजन'। उ०—छाँटी पाँणी कुमकुमई, वीझण वीझया वाइ। हुई सचेती मालवी, प्री आगलि विललाइ।—ढोला०, दू० २४०।

वीझना†—क्रि० स० [सं० वीजन, प्रा० वीजण] पंखा डुलाना। हवा करना। उ०—छाँटी पाँणी कुमकुमई वीझण वीझया वाइ।—ढोला०, दू० २४०।

वीटक—संज्ञा पुं० [सं०] (पान का) बीड़ा (को०)।

वीटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का खेल जो बालक लकड़ी के एक छोटे टुकड़े या डंडे से खेला करते थे।

विशेष—संभवतः यह खेल गुल्ली डंडा की तरह था। कुछ लोगों का यह भी मत है कि यह खेलने के लिये बना हुआ धातु का एक गोला होता था।

२. धातु या पत्थर का बना हुआ गोला जिसके कायक्लेश या प्रायश्चित्त के लिये मुँह में रखते थे (को०)।

वीटि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पान का बीड़ा। २. नागवल्ली (को०)। ३. धोती की गाँठ (को०)। ४. कंचुकी की गाँठ जो पीछे रहती है (को०)।

वीटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लगाया हुआ पान का बीड़ा। २. दे० 'वीटि'।

वीटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पान का बीड़ा। २. दे० 'वीटि'।

वीटुली†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेष्टन] पगड़ी। उ०—सकती बाँधे वीटुली, ढीली मेल्हे लज्ज। सरढो पेट न लेटियउ, मूध न मेलउँ अज्ज।—ढोला, दू० ५००।

वीटो—संज्ञा पुं० [अं०] किसी व्यवस्थापिका सभा के स्वीकृत प्रस्ताव या मंतव्य को अस्वीकृत करने का अधिकार। वह अधिकार जिससे व्यवस्थापक मंडल की एक शाखा दूसरी शाखा के स्वीकृत प्रस्ताव या मंतव्य को अस्वीकृत कर सकती है। अस्वीकृति या निषेधाधिकार। नामंजूरी। मनाही। रोक।

यौ०—वीटोपावर = रोकने की शक्ति।

वीणⓅ—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वीणा] दे॰ 'वीणा'।

वीणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. प्राचीन काल का एक प्रसिद्ध बाजा। बीन।

विशेष—यह तत जातीय वाद्य है और इसका प्रचार अब तक भारत के पुराने ढंग के गवैयों में है। इसमें बीच में एक लंबा पोला दंड होता है, जिसके दोनों सिरों पर दो बड़े बड़े तूंबे लगे होते हैं और एक तूंबे से दूसरे तूंबे तक, बीच के दंड पर से होते हुए, लोहे के तीन और पीतल के चार तार लगे रहते हैं। लोहे के तार पक्के और पीतल के कच्चे कहलाते हैं। इन सातों तारों को कसने या ढीला करने के लिये सात खूंटिया रहती हैं। इन्हीं तारों को झनकारकर स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। प्राचीन भारत के तत जाति के बाजों में वीणा सब से पुरानी और अच्छी मानी जाती है। कहते हैं, अनेक देवताओं के हाथ में यही वीणा रहती है। भिन्न भिन्न देवताओं आदि के हाथ में रहनेवाली वीणाओं के नाम अलग अलग हैं। जैसे;—महादेव के हाथ की वीणा लंबी, सरस्वती के हाथ की कच्छपी, नारद के हाथ की महती, विश्वावसु की बृहती और तुंबुरु के हाथ की कलावती कहलाती है। वत्सव उदयन की वीणा का नाम घोषवती या घोषा था। इसके अतिरिक्त वीणा के और भी कई भेद हैं। जैसे,—त्रितंत्री, किन्नरी, विपंचा, रंजनी, शारदी, रुद्र और नादेश्वर आदि। इन सबकी आकृति आदि में भी थोड़ा बहुत अंतर रहता है।

पर्या॰—वल्लकी। परिवादिनी। ध्वनिमाला। वंगमल्ली। घोषवती। कंठकूणिका।

२. विद्युत्। बिजली। ३. ज्योतिष में ग्रहों की एक विशेष अवस्थिति (को॰)। ४. एक योगिनी का नाम (को॰)।

वीणागणकी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणागणकिन्] वह जो गायक दल का प्रमुख [को॰] हो।

वीणागणिगी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणागणगिन्] दे॰ 'वीणागणकी'।

वीणागाथी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणागाथिन्] वीणा बजानेवाला [को॰]।

वीणातंत्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणातन्त्र] तंत्रविशेष [को॰]।

वीणादंड—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणादंड] वीणा में का लंबा दंड या तुंबी का बना हुआ वह अश जो मध्य में होता है। इसे प्रवाल भी कहते हैं।

वीणानुबंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वीणानुबन्ध] वीणा का वह निचला भाग जहाँ तार बँधे रहते हैं। उपनाह [को॰]।

वीणापाणि^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सरस्वती।

वीणापाणि^{2}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] नारद [को॰]।

वाणापाणि^{3}—वि॰ जिसके हाथ में वीणा हो। वीणा लिए हुए।

वीणाप्रसेव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह गिलाफ जो वीणा पर उसकी रक्षा के लिये चढ़ाया जाता है।

वीणाभिद्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार की वीणा।

वीणारव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वीणावादन की ध्वनि।

वीणावंशशलाका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] उपनाह। वीणानुबंध [को॰]।

वीणावती—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. सरस्वती। २. एक अप्सरा का नाम।

वीणावरा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार की मक्खी।

वीणावाद, वीणावादक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह जो वीणा बजाता हो। वीनकार।

वीणावादन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वीणा बजाना। २. वीणा बजाने का कोणाकार छल्ला। मिजराब [को॰]।

वीणावादिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सरस्वती [को॰]।

वीणावाद्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वीणा नामक तंत्री वाद्य। वीणा बाजा। उ॰—इंद्रजाल, आकरज्ञान, रत्नपरीक्षा, तौर्यत्रिक, वीणावाद्य, हस्मेषला, अश्ववंध, मृगवंध, मीनवध, लीनवंध, चट।—वर्ण॰, पृ॰ ३।

वीणाविनोद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक विद्याधर का नाम [को॰]।

वीणाशिल्प—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वीणावादन की कला [को॰]।

वीणास्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] नारद।

वीणाहस्त—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शिव। महादेव।

वीणी—वि॰ [सं॰ वीणिन्] १. वीणावादक। वीणा बजानेवाला। २. जो वीणा लिए हो। वीणावाला [को॰]।

वीतंस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जाल, फंदा या इसी प्रकार की और सामग्री जिससे पशु और पक्षी आदि फँसाए जाते हैं। २. चिड़ियाघर। खगालय (को॰)। ३. शिकार के पशुओं को पालने की जगह (को॰)।

वीत^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वे हाथी, घोड़े और सैनिक आदि जो युद्ध करने के योग्य न रह गए हों। २. अंकुश के द्वारा मारना। अंकुश का प्रहार करना। ३. सांख्य के अनुसार अनुमान के दो प्रकारों में से एक।

विशेष—सांख्य में अनुमान के तीन भेद कहे गए हैं—पूर्ववत् या केवलान्वयी, शेषवत् या व्यतिरेकी और सामान्यतो दृष्ट या अन्वयव्यतिरेकी। इनमें से पूर्ववत् और सामान्यतोदृष्ट अनुमान तो 'वीत' कहलाते हैं और शषवत् को अवीत कहते हैं। विशेष दे॰ 'अनुमान'।

वीत^{2}—वि॰ जिसका परित्याग कर दिया गया हो। जो छोड़ दिया हो। २. जो छूट गया हो। मुक्त। ३. जो बीत गया हो। जो समाप्त हो चुका हो। अंतर्हित। गत। लुप्त। ४. जो निवृत्त हो चुका हो। जो (किसी बात से) रहित हो। मुक्त। शून्य। जैसे—बीतभय, वीतराग वीतशंक। ५. इच्छित अनुमोदित। पसंद किया हुआ। सुंदर। जिसको अलगाया गया हो (को॰)। ७. जो युद्ध के योग्य न हो (को॰)। ८. पालतू (को॰)। ९. ओढ़ा या धारण किया हुआ। पहना हुआ (को॰)।

वीतक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. घिरी हुई भूमि। बाड़ा। २. चंदन और कपूर का चूर्ण रखने का पात्र [को॰]।

वीतकल्मष—वि॰ [सं॰] निष्पाप। पापमुक्त [को॰]।

वीतकाम—वि॰ [सं॰] कामनाहीन [को॰]।

वीतघृण—वि० [सं०] निर्दय [को०]।

वीतजन्म—वि० [सं०] अजन्मा [को०]।

वीततृष्णु—वि० [सं०] तृष्णारहित। वासनाहीन [को०]।

वीतत्रसरेणु—वि० [सं०] निर्विकार [को०]।

वीतदंभ—संज्ञा पुं० [सं० वीतदम्भ] वह जिसने दंभ या अहंकार का परित्याग कर दिया हो। जिसका अभिमान नष्ट हो गया हो।

वीतन—संज्ञा पुं० [सं०] कंठ के दोनों पार्श्व [को०]।

वीतभय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसका भय छूट गया हो। २. विष्णु। ३. शिव का एक नाम (को०)।

वीतभीन—संज्ञा पुं० [सं०] एक असुर का नाम।

वीतमत्सर—वि० [सं०] मत्सरहीन [को०]।

वीतमल—वि० [सं०] १. जो कोई पाप न करे। पापरहित। २. जिसमें किसी प्रकार का कलंक या मल आदि न हो। विमल।

वीतमोह—वि० [सं०] निर्मोही [को०]

वीतराग¹—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने राग या आसक्ति आदि का परित्याग कर दिया हो। वह जो निस्पृह हो गया हो। उ०—निरुद्देश्य मेरे प्राण, दूर तक फैले उस विपुल अज्ञान में, खोजते थे प्राणों को जड़ में ज्यों वीतराग चेतन को खोजते।—अनामिका, पृ० ७१। २. बुद्ध का एक नाम। ३. जैनों के प्रधान देवता का एक नाम।

वीतराग²—वि० १. वासनाहीन। इच्छारहित। शांत। ३. रागरहित। बिना रंग का [को०]।

वीतविष—वि० [सं०] विशुद्ध। निर्मल [को०]।

वीतव्रीड—वि० [सं०] निर्लज्ज [को०]।

वीतशोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने शोक आदि का परित्याग कर दिया हो। २. अशोक नामक वृक्ष।

वीतसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] यज्ञोपवीत। जनेऊ।

वीतद्रव्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रसिद्ध वैदिक ऋषि जो अंगिरा के वंश में थे। २. शुनक के पुत्र का नाम।

वीतद्रव्य²—वि० यज्ञ में आहुति देनेवाला। जो यज्ञकुंड में आहुति या हव्य देता हो।

वीतहिरण्यमय—वि० [सं०] स्वर्णपात्र से हीन [को०]।

वीतहोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वीतिहोत्र'।

वीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गति। चाल। २. दीप्ति। चमक। आभा। ३. गर्भ धारण करने की क्रिया। ४. खाने या पीने की क्रिया। ५. यज्ञ। ६. फोड़ा। ७. प्रजनन। उत्पादन (को०)। ८. आनंदोपभोग (को०)। ९. सफाई। परिमार्जन (को०)। १०. निवृत्ति। पार्थक्य (को०)। ११. प्राप्ति (को०)।

वीतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जेठी मधु। मुलेठी। २. नीलिका।

वीतिहोत्र¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. सूर्य। ३. पुराणानुसार राजा प्रियव्रत के एक पुत्र का नाम। ४. हैहयवंश के एक राजा का नाम। ५. वह जो यज्ञ करता हो।

वीतिहोत्रदयिता, वीतिहोत्रप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्वाहा [को०]।

वीती—संज्ञा पुं० [सं० वीतिन्] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वीथि—संज्ञा स्त्री० [सं०, दे० वीथी'] [को०]।

वीथिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वीथी'।

वीथी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दृश्य काव्य या रूपक के २७ भेदों में से एक भेद।

विशेष—यह एक ही अंक का होता है और इसमें एक ही नायक होता है। इसमें आकाशभाषित और शृंगार रस की अधिकता रहती है। प्राचीन काल में ऐसे रूपक अलग भी खेले जाते थे और दूसरे नाटकों के साथ भी। इसके नीचे लिखे १३ अंग माने गए हैं—(१) उद्घातक। (२) अदलगित, (३) प्रपंच, (४) त्रिगत, (५) छलन, (६) वाक्केली, (७) अधिबल, (८) गंड, (९) अवश्यंदित, (१०) नालिका, (११) असत्प्रलाप, (१२) व्याहार और (१३) मृदद। धनंजय ने अपने दशरूपक में वीथी के उक्त तेरह अंगों का उल्लेख करके कहा है कि सुत्रधार इन वीथ्यंगों के द्वारा अर्थ और पात्र का प्रस्ताव करके प्रस्तावना के अंत मे चला जाय और तब वस्तुप्रपंचन आरंभ हो। साहित्यदर्पण के अनुसार वीथी के अंग ही प्रहसन के भी अंग हो सकते हैं। अंतर केवल यही है कि वीथी में तो इनका होना आवश्यक है, पर प्रहसन में ऐच्छिक होता है। अतः कहा जा सकता है, वीथी और प्रहसन दोनों प्रस्तावना के ऐसे अंशों को कहते थे, जिनमें हास्य रस की अधिकता होती थी और जिनके द्वारा सामाजिकों या दर्शकों के मन में अभिनय के प्रति रुचि या उत्कंठा उत्पन्न की जाती थी।

२. मार्ग। रास्ता। सड़क। ३. वह आकाशमार्ग जिससे होकर सूर्य चलता है। रविमार्ग। ४. आकाश में नक्षत्रों के रहने के स्थानों के कुछ विशिष्ट भाग जो वीथी या सड़क के रूप में माने गए हैं। जैसे,—नागवीथी, गजवीथी, ऐरावती वीथी, गोवीथी, मृगवीथी आदि।

विशेष—आकाश में उत्तर, मध्य और दक्षिण में क्रमशः ऐरावत, जरद्भव और वैश्वानर नामक तीन स्थान माने गए हैं; और इनमें से प्रत्येक स्थान में तीन तीन वीथियाँ हैं। इस प्रकार कुल नौ वीथियों में सत्ताईस नक्षत्र समान भागों में विभक्त हैं; अर्थात् प्रत्येक वीथी में तीन तीन नक्षत्रों का अवस्थान माना गया है।

५. पंक्ति। कतार (को०)। ६. हाट। पण्यवीथिका (को०)। ७. मकान में सामने का छज्जा (को०)। ८. घुड़दौड़ का चक्राकार मार्ग (को०)। ९. चित्रों की पंक्ति (को०)।

वीथीकृत—वि० [सं०] पंक्ति या राशि के रूप में रखा हुआ अथवा व्यवस्थित [को०]।

वीथ्यंग—संज्ञा पुं० [सं० वीथ्यङ्ग] रूपक में वीथी के अंग जो १३ माने गए हैं। विशेष दे० 'वीथी—१'।

वीदग(पु)†—संज्ञा स्त्री० [देश०] कविता। उ०—सुरभूम पाठ पिंगल मता साहित वीदग सार नै।—रघु० रू०, पृ० १४।

वीदेस(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विदेश] दे० 'विदेश।' उ०—सूनी सेज वीदेस पीउ, दुइ दुख नाल्ह कहइयो कूण।—वीं० रासो, पृ० ४३।

वीध्र¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकाश। २. अग्नि। ३. वायु।

वीध्र²—वि० शुद्ध। स्वच्छ [को०]।

वीनाह—संज्ञा पुं० [सं०] वह जँगला या ढकना आदि जो कुएं के ऊपर लगाया जाता है।

वीनाही—संज्ञा पुं० [सं० वीनाहिन्] वह जिसमें वीनाह लगा हो। कूप। कुआँ [को०]।

वीप—वि० [सं०] जलहीन। निर्जल [को०]।

वीपसा(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वीप्सा] दे० 'वीप्सा'।

वीपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिजली।

वीप्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक शब्दालंकार जहाँ आश्चर्य, आदर, घृणा, आदि भावों को व्यक्त करने के लिये एक ही शब्द अनेक बार प्रयुक्त होता है।

विशेष—हिंदी साहित्य में सर्वप्रथम भिखारीदास ने 'वीप्सालंकार' के नाम से इसे ग्रहण किया है।

२. परिव्याप्ति (को०)। ३. पुनः पुनः कथन। पुनरुक्ति (को०)। ४. कार्य की निरंतरता सूचित करने के लिये शब्दों की की जानेवाली द्विरुक्ति (को०)।

वीबुकोश—संज्ञा पुं० [सं०] चामर। चँवर [को०]।

वीरंकरा—संज्ञा स्त्री० [सं० वीरङ्करा] पुराणानुसार एक नदी का नाम, जिसे वीरकरा भी कहते हैं।

वीरंधर—संज्ञा पुं० [सं० वीरन्धर] १. मयूर। मोर। २. जंगली पशुओं के साथ होनेवाला युद्ध। ३. एक प्राचीन नदी का नाम। चमड़े का कंचुक या सदरी (को०)।

वीर¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो साहसी और बलवान् हो। शूर। बहादुर। २. योद्धा। सैनिक। सिपाही। ३. वह जो किसी विकट परिस्थिति में भी आगे बढ़कर उत्तमतापूर्वक अपने कर्तव्य का पालन करे। ४. वह जो किसी काम में और लोगों से बहुत बढ़कर हो। जैसे,—दानवीर, कर्मवीर। ५. पुत्र। लड़का। ६. पति। खसम। ७. भाई (स्त्रियाँ)। ८. महाभारत के अनुसार दनायु नामक दैत्य के पुत्र का नाम। ९. विष्णु। १०. जिन ११. साहित्य में श्रृंगार आदि नौ रसों मे से एक रस।

विशेष—इसमें उत्साह और वीरता आदि की परिपुष्टि होती है। इसका वर्ण गौर और देवता इंद्र माने गए हैं। उत्साह इसका स्थायी भाव है और धृति, मति, गर्व, स्मृति, तर्क और रोमांच आदि इसके संचारी भाव हैं। भयानक, शांत और श्रृंगार रस का यह रस विरोधी है।

१२. तांत्रिकों के अनुसार साधना के तीन भावों में से एक भाव।

विशेष—कहते हैं, दिन के पहले दस दंड में पशु भाव से, बीच के दस दंड में वीर भाव से और अंतिम दस दंड में दिव्य भाव से साधना करनी चाहिए। रुद्रयामल के ग्यारहवें पटल में इसका विवरण है। वामकेश्वर तंत्र के अनुसार कुछ लोगों का यह भी मत है कि पहले १६ वर्ष की आयु तक पशु भाव से, फिर ५० वर्ष की आयु तक वीर भाव से और इसके उपरांत दिव्य भाव से साधना करनी चाहिए।

१३. तांत्रिकों के अनुसार वह साधक जो इस प्रकार वीर भाव से साधना करता है।

विशेष—दिन रात मद्य पीना, पागलों की सी चेष्टा रखना, शरीर में भस्म लगाए रहना और अपने इष्टदेव को मनुष्य, बकरी, भेड़े या भैंसे आदि का बलिदान चढ़ाना इनका मुख्य कर्तव्य होता है।

१४. वह जो किसी काम में बहुत चतुर हो। होशियार। १५. कर्मठ। कर्मशील। १६. यज्ञ की अग्नि। १६. सींगिया नामक विष। १८. काली मिर्च। १९ पुष्करमूल। २० काँजी। २१. खस। उशीर। २२. आलूबुखारा। २३. पीली कटसरैया। २४. चौलाई का साग। २५. वाराहीकंद। गेंठी। २६. लताकरंज। २७. कनेर। २८. अर्जुन नामक वृक्ष। २९. काकोली। ३०. सिंदूर। ३१. शालिपर्णी। सरिवन। ३२. लोहा। ३३ नरसल। नरकट। ३४. भिलावाँ। ३५. कुश। ३६. ऋषभक नामक ओषधि। ३७. तोरई। ३८. अग्नि (को०)। ३९. नट। अभिनेता (को०)। ४०. चावल का माँड़ (को०)।

वीर²—वि० १. शूर। बहादुर। २. शक्तिशाली। ताकतवर ३. श्रेष्ठ। सर्वोत्कृष्ट [को०]।

वीर(पु)**³**—संज्ञा स्त्री० सखी। सहेली। दे० 'बीर'।

वीरकंठ—संज्ञा पुं० [सं० वीरकण्ठ] एक प्रकार का डिंगल गीत। —रघु० रू०, पृ० १९५।

वीरक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सफेद कनेर। २. वह जो किसी निर्दिष्ट देश का निवासी हो। ३. पुराणानुसार चाक्षुष मन्वंतर के एक मनु का नाम। ४. योद्धा। शूर। बहादुर। विक्रांत (को०)।

वीरकरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम जिसे वीरंकरा भी कहते हैं।

वीरकर्मा—संज्ञा पुं० [सं० वीरकर्मन्] वह जो वीरों की भाँति काम करता हो। वीरोचित कार्य करनेवाला।

वीरकाम—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसे पुत्र की कामना हो। पुत्र की इच्छा रखनेवाला।

वीरकीट—संज्ञा पुं० [सं०] नगण्य सैनिक। नाम मात्र का सैनिक [को०]।

वीरकुक्षि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो वीर पुत्र प्रसव करती हो।

वीरकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार पांचाल के एक राजकुमार का नाम।

वीरकेशरी—वि० [सं० वीरकेशरिन्] वह जो वीरों में सिंह के समान अथवा बहुत श्रेष्ठ हो।

वीरकेसरी—वि० [सं० वीरकेसरिन्] दे० 'वीरकेशरी'।

वीरक्षुरिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कृपाणी । कटार [को०] ।

वीरगति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्वर्ग । २. वह उत्तम गति जो वीरों को रणक्षेत्र में मरने से प्राप्त होती है ।

विशेष—कहते हैं, युद्धक्षेत्र में वीरतापूर्वक लड़कर मरनेवाले लोग सूर्यमंडल का भेद न कर सीधे स्वर्ग जाते हैं ।

वीरगोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वीरों का खानदान या कुल [को०] ।

वीरगोष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] योद्धाओं की गोठ । वीरों की आपसी वार्ता [को०] ।

वीरचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. तंत्र के अनुसार एक चक्र । २. वीरों का सैन्य दल । ३. विष्णु [को०] । ४. स्वतंत्राप्राप्ति के अनंतर भारत सरकार द्वारा सैनिकों की वीरता पर प्रसन्न होकर उन्हें प्रदान किया जानेवाला एक विशेष प्रकार का पदक ।

वीरचक्रेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

वीरचक्षुष्मान्—संज्ञा पुं० [सं० वीरचक्षुष्मत्] विष्णु । [को०] ।

वीरचर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीरता का कार्य । शूरकर्म ।

वीरजनन—वि० [सं०] वीर को उत्पन्न करनेवाला ।

वीरजननी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वीरप्रसू' ।

वीरजयंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वीरजयन्तिका] १. युद्ध । संग्राम । २. रण में योद्धाओं का नृत्य [को०] ।

वीरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुश, दर्भ, काँस और दूब आदि की जाति के तृण । २. उशीर । खस । ३. पुराणानुसार एक प्रजापति का नाम ।

विशेष—इनकी कन्या असिक्नी का विवाह दक्ष से हुआ था । इस कन्या के गर्भ से पाँच हजार वीर पुत्र उत्पन्न हुए थे जिनसे सृष्टि बढ़ी थी ।

४. एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

वीरणक—संज्ञा पुं० [सं०] एक नाग का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है ।

वीरणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कटाक्ष । तिरछी चितवन । २. गहरी भूमि । ३. वीरण की पुत्री और चाक्षुष की माता का नाम [को०] ।

वीरतर[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. शर । तीर । बाण । २. उशीर । खस ।

वीरतर[2]—वि० शूरों में प्रधान । वीरश्रेष्ठ । सामर्थ्यवान् [को०] ।

वीरतरु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अर्जुनवृक्ष । २. तालमखाना । ३. भिलावाँ । ४. शर नामक तृण । ५. पियासार या पियासाल नामक वृक्ष । ६. विल्व वृक्ष (को०) ।

वीरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीर होने का भाव । शूरता । बहादुरी ।

वीरताडक—संज्ञा पुं० [सं०] विधारा नाम की लता [को०] ।

वीरतृण—संज्ञा पुं० [सं०] सरकंडा [को०] ।

वीरत्त⑤—संज्ञा पुं० [सं० वीरत्व] वीरत्व । वीर होने का भाव । वीरता । उ०—आए सुमहल सामंत सूर पूरंन तेज वीरत्त पूर । अनभंग अंग, अनभूल वांन जिन दिट्ठ अरिय पावै न जान । —पृ० रा०, ६।१३३ ।

वीरत्तण⑤—संज्ञा पुं० [अप०] वीरत्व । वीरता । उ०—उग्गर वपुरा को करेग्रा वीरत्तण नित ठाम ।—कीर्त्ति०, पृ० ६० ।

वीरत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वीरता' ।

वीरदर्प—संज्ञा पुं० [सं०] वीरता का जोश । वीरता का उत्साह या उमंग । उ०—जहाँ आल्हा गानेवाले सैकड़ों सुननेवालों को घंटों वीरदर्प से पूर्ण किए रहते हैं, वहाँ भेदभूमि से परे एक सामान्य हृदयसत्ता की झनक दिखाई पड़ती है ।—चिंतामणि, भा० २, पृ० ९१ ।

वीरद्युम्न—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजकुमार का नाम ।

वीरद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन नामक वृक्ष [को०] ।

वीरधन्वा—संज्ञा पुं० [सं० वीरधन्वन्] कामदेव का एक नाम ।

वीरनाथ—वि० [सं०] १. वीरों में श्रेष्ठ । २ जिसके सहायक शूर वीर हों [को०] ।

वीरनायक—संज्ञा पुं० [सं०] उशीर । खस ।

वीरपट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक विशेष प्रकार का पहनावा जो युद्ध के समय पहना जाता था ।

वीरपट्टिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] ललाट पर बाँधी जानेवाली सोने की पट्टी [को०] ।

वीरपत्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैदिक काल की एक नदी का नाम । २. वह जो किसी वीर की पत्नी हो ।

वीरपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भाँग । भंग । २. एक प्रकार का महाकंद जिसे धारणी भी कहते हैं ।

वीरपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक कंद [को०] ।

वीरपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] सुरपर्णा । माचीपत्री ।

वीरपाण, वीरपाणक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वीरपान' ।

वीरपान,वीरपानक—संज्ञा पुं० [सं०] वह पान जो वीर लोग युद्ध का श्रम मिटाने के लिये करते हैं ।

वीरपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक क्षुप [को०] ।

वीरपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. महाबला । सहदेई । २. सिंदुरपुष्पी । लटकन ।

वीरप्रजायिनी, वीरप्रजावती—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीरप्रसू । वीर पुत्र को जन्म देनेवाली नारी । वीरमाता [को०] ।

वीरप्रमोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

वीरप्रसवा,वीरप्रसविनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वीरप्रसू' [को०] ।

वीरप्रसू—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो वीर संतान उत्पन्न करती हो ।

वीरबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु । २. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम । ३. एक बानर का नाम (को०) । ४. रावण के एक पुत्र का नाम ।

वीरभद्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा । २. उशीर । खस । ३. प्रख्यात वीर । प्रसिद्ध योद्धा । श्रेष्ठ वीर (को०) । ४. शिव के एक प्रसिद्ध गण का नाम जो उनके पुत्र और अवतार माने जाते हैं । उ०—शिव जी के शरीर से अग्नि बहिर्गत हुई

कि मानों वह तीनों लोकों को भस्म किया चाहती है और इस अग्नि में से वीरभद्र उत्पन्न हुआ।—कबीर मं०, पृ० २१८।

विशेष—कहते हैं, दक्ष का यज्ञ नष्ट करने लिये शिव जी ने अपने मुँह में इनकी सृष्टि की थी। वीरभद्र ने बहुत से रुद्रों की सृष्टि करके दक्ष का यज्ञ नष्ट किया था।

वीरभद्रक—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

वीरभद्र रस—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो सन्निपात के लिये बहुत उपकारी माना जाता है।

वीरभवंती—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी बहिन [को०]।

वीरभार्या संज्ञा स्त्री० [सं०] वीर की पत्नी [को०]।

वीरभाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीरों की प्रकृति या स्वभाव। २. तंत्र में एक भाव। वीरशैव संप्रदाय का एक भाव। विशेष दे० 'वीर'–१२।

वीरभुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] आधुनिक वीरभूम का प्राचीन नाम।

वीरमणि—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार देवपुर के एक प्राचीन राजा का नाम।

विशेष—इस नरेश के पुत्र रुक्मांगद ने रामचंद्र जी के यज्ञ का घोड़ा पकड़ लिया था। इसपर शत्रुघ्न और हनुमान आदि ने इससे युद्ध किया था। कहते हैं, इस युद्ध में महादेव जी भी वीरमणि की ओर से लड़े थे और उन्होंने शत्रुघ्न को अपने पाश में बाँध लिया था। तब रामचंद्र ने आकर उन्हें और अपना घोड़ा छुड़ाया था।

वीरमत्स्य—संज्ञा पुं० [सं०] रामायण के अनुसार एक प्राचीन जाति का नाम।

वीरमर्दन—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक दानव का नाम।

वीरमर्दल, वीरमर्दलक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का ढोल जो युद्ध के समय बजाया जाता था।

वीरमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० वीरमातृ] वह स्त्री जो वीर पुत्र प्रसव करती हो। वीरजननी। वीरप्रसू।

वीरमानी—वि० [सं० वीरमानिन्] अपने को वीर माननेवाला [को०]।

वीरमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ग।

वीरमुद्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का छल्ला जो प्राचीन काल में पैर की बीचवाली उँगली में पहना जाता था।

वीररज—संज्ञा पुं० [सं० वीररजस्] सिंदूर।

वीररस—संज्ञा पुं० [सं०] १. काव्य के नौ रसों में एक का नाम। विशेष दे० 'वीर'—११। २. वीर भाव [को०]।

वीरराघव—संज्ञा पुं० [सं०] १. रामचंद्र का नाम। २. संस्कृत का एक नाटक।

वीररेणु—संज्ञा पुं० [सं०] भीमसेन का एक नाम।

वीरललित—संज्ञा पुं० [सं०] वीरों का सा, पर साथ ही कोमल स्वभाव। वीरता के साथ ही कोमल स्वभाव।

वीरलोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर्ग। २. वीरों का समुदाय।

वीरवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मांसरोहिणी नाम की लता। २. वह स्त्री जिसके पति और पुत्र जीवित हों [को०]।

वरवत्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वीरमाता [को०]।

वीरवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] देवदाली नाम की लता।

वीरवह—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो घोड़ों द्वारा खींचा जाय। २. रथ। स्यंदन।

वीरवाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] ललकार [को०]।

वीरवाद—संज्ञा पुं० [सं०] वीरता के कारण प्राप्त यश, प्रतिष्ठा। ख्याति [को०]।

वीरवाह—संज्ञा पुं० [सं०] वीरवह। रथ। स्यंदन [को०]।

वीरविक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में एक ताल का नाम [को०]।

वीरविप्लावक—संज्ञा पुं० [सं०] वह ब्राह्मण जो शूद्रों से धन आदि लेकर हवन करता हो।

वीरवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. भिलावाँ। २. अर्जुन नामक वृक्ष। ३. महाशालि। देवधान्य। ४. विल्वांतर या बलतर नामक वृक्ष। ५. सावाँ नामक धान्य। ६. शाल वृक्ष।

वीरवेतस—संज्ञा पुं० [सं०] अमलवेत।

वीरव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] वीरों का व्यूह सैनिकों का एक व्यूह [को०]।

वीरव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो अपने संकल्प पर सदा दृढ़ रहता हो। वीरतापूर्वक अपने संकल्प का पालन करनेवाला। २. वह ब्रह्मचारी जो बहुत ही निष्ठा तथा आचारपूर्वक रहता हो। ३. पुराणानुसार मधु के एक पुत्र का नाम जो सुमना के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। ४. शूरता। वीरता (को०)।

वीरशंकु—संज्ञा पुं० [सं० वीरशङ्कु] तीर। बाण [को०]।

वीरशय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीरों के सोने का स्थान, रणभूमि। युद्धक्षेत्र। लड़ाई का मैदान। २. बाण की शय्या—जैसी पितामह भीष्म के लिये अर्जुन ने शरों से बनाई थी (को०)।

वीरशयन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीरों का सोने का स्थान, रणभूमि। २. तीर की शय्या।

वीरशय्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रणभूमि। २. दे० 'वीरशय'।

वीरशाक—संज्ञा पुं० [सं०] बथुआ नामक साग।

वीरशायी वि० [सं० वीरशायिन्] वीरशय्या पर सोनेवाला [को०]।

वीरशैव संज्ञा पुं० [सं०] शैवों का एक भेद।

वीरश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] अद्वितीय योद्धा [को०]।

वीरसू—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह स्त्री जो पुत्रों का ही जन्म दे। २. वह स्त्री जो वीर पुत्र प्रसव करती हो। वीरजननी। उ०—अंब, रहे यह रुदन वीर सू तुम, व्रत पालो। ठहरो प्रस्तुत वैर वह्नि पर नीर न डालो।—साकेत, पृ० ४०४।

वीरसेन—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजा नल के पिता का नाम। २. आरूक या आड़ नाम की जड़ी जो हिमालय में होती है। ३. आलूबुखारा। ४. एक दानव का नाम (को०)। ५. हस्तवैद्यक ग्रंथ के लेखक का नाम जिन्हें वीरसोम भी कहते हैं (को०)।

वीरसेनज, वीरसेनसुत—संज्ञा पुं० [सं०] राजा नल [को०]।

वीरसैन्य—संज्ञा पुं० [सं०] लहसुन [को०]।

वीरस्कंध—संज्ञा पुं० [सं० वीरस्कन्ध] महिष [को०]।

वीरस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] वह पशु जिसका यज्ञ में बलिदान हो।

वीरस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. साधकों का एक प्रकार का आसन जिसे वीरासन कहते हैं। २. स्वर्ग, जहाँ वीर लोग मरने पर जाते हैं।

वीरस्नाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेतस या नरसल की बनी हुई रेहल जिसपर रखकर पुस्तकें पढ़ी जाती थीं [को०]।

वीरहत्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मनुष्य की हत्या करना। नरवध। २. पुत्रवध [को०]।

वीरहा[1]—संज्ञा पुं० [सं० वीरहन्] १. विष्णु। २. वह अग्निहोत्री ब्राह्मण जिसकी अग्निहोत्रवाली अग्नि आलस्य आदि के कारण बुझ गई हो।

वीरहा[2]—वि० मनुष्यों या शत्रु के वीरों को मारनेवाला।

वीरहोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन प्रदेश का नाम जो विंध्य पर्वत पर था।

वीरांतक—संज्ञा पुं० [सं० वीरान्तक] १. वह जो वीरों का अंत या नाश करता हो। २. अर्जुन नामक वृक्ष।

वीरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुरामांसी। मुरा। २. क्षीर काकोली। ३. भुईआँवला। ४. एलुवा। ५. केला। ६. बिदारीकंद। ७. काकोली। ८. शतावर। ९. घीकुंआर। १०. ब्राह्मी। ११. अतीस। अतिविषा। १२. मदिरा। शराब। १३. शीशम का पेड़। १४. गंभारी नामक वृक्ष। ५. पृश्निपर्णी। पिठवन। १६. खिरेंटी। १७. कुटकी। १८. जटामांसी। बालछड़। १९. आँवला। २०. वह स्त्री जिसके पति और पुत्र हों। २१, वीरपत्नी। वीरभार्या (को०)। २२. पत्नी (को०)। २३. माता (को०)। २४. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम।

वीराचारी—संज्ञा पुं० [सं० वीराचारिन्] एक प्रकार के वाममार्गी या शाक्त उपासक।

विशेष—वीराचारी अपने इष्ट देवताओं की वीर भाव से उपासना करते हैं। ये लोग मद्य को शक्ति और मांस को शिव स्वरूप मानते हैं; और इन दोनों के भक्तों को भैरव समझते हैं। ये लोग चक्र में बैठकर पूजन करते हैं और बीच बीच में किसी स्त्री को काली मानकर उसपर मद्य, मांस आदि चढ़ाते हैं। ये लोग प्रायः शव या मृत शरीर लाकर उसकी पूजा करते और उसी के द्वारा अनेक प्रकार के साधन और पूजन करते हैं।

वीराद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन नामक वृक्ष।

वीरान—वि० [फ़ा०] उजड़ा हुआ। जिसमें आबादी न रह गई हो। निर्जन। जैसे—यह बस्ती बिलकुल वीरान हो गई है। २. जिसकी शोभा नष्ट हो गई हो। श्रीहीन। ३. (भूमि) जिसमें कुछ पैदा न हो। बंजर।

वीराना—संज्ञा पुं० [फ़ा० वीरानह्] वह स्थान जहाँ किसी प्रकार की आबादी न हो। उजाड़। जंगल।

वीरानी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] वीरान या उजाड़ होने का भाव।

वीराम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] अमलबेत।

वीरारुक—संज्ञा पुं० [सं०] आरुक या आड़ नाम की जड़ी जो हिमालय में होती है।

वीराशंसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह युद्धभूमि जो बहुत ही भीषण और भयानक जान पड़ती है। युद्ध में जोखिम से भरी जगह। २. युद्ध का मैदान। रणक्षेत्र (को०)। ३. निगरानी रखना (को०) ४. अगतिक या निरवलंब आशा [को०]।

वीराष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम।

वीरासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैठने का एक प्रकार का आसन या मुद्रा जिसका व्यवहार प्रायः पूजन और तांत्रिकों आदि के साधन में होता है। इसमें बाएँ पैर और रखने पर दाहिनी जाँघ रखकर बैठते हैं। २. कोई एक जानु मोड़कर बैठना (को०)। ३. युद्धक्षेत्र। रणभूमि (को०)। ४. निगरानी करने की जगह। संतरी की चौकी (को०)।

वीरिण—संज्ञा पुं० [सं०] ईरिण भूमि। ऊसर भूमि [को०]।

वीरिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वीरण प्रजापति की कन्या असिक्नी जो दक्ष को ब्याही थी। २. वह स्त्री जिसे पुत्र हो। पुत्रवती। ३. एक प्राचीन नदी का नाम।

वीरी (पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वैरिन्] वैरी। शत्रु। उ०—वीरी जणह न चालइ वाट।—बी० रासो, पृ० ६७।

वीरुध—संज्ञा पुं० [सं० वीरुत्, वीरुध्] १. वृक्ष। २. लता और वनस्पति आदि। ३. ओषधि। ४. विस्तृता या गुल्मिनी नाम की लता। ५. शाखा। टहनी (को०)। ६. काटने पर पुनः बढ़ जानेवाला पौधा (को०)।

वीरुधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दवा के रूप में काम में आनेवाली वनस्पति। ओषधि। ३. दे० 'वीरुध'।

वीरेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वीरेन्द्र] श्रेष्ठ वीर [को०]।

वीरेंद्री—संज्ञा स्त्री० [सं० वीरेन्द्री] एक योगिनी का नाम [को०]।

वीरेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. श्रेष्ठ वीर। बड़ा योद्धा (को०)। ३. शिव की एक लिंगमूर्ति (को०)।

वीरेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। दे० 'वीरेश'।

यौ०—वीरेश्वर लिंग = शिव की एक लिंगमूर्ति। वीरेश।

वीरोज्झ—संज्ञा पुं० [सं०] वह ब्राह्मण जो अग्निहोत्र करने में आलस्य करता हो [को०]।

वीरोपजीवक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वीरोपजीविक' [को०]।

वीरोपजीविक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो अग्निहोत्र के द्वारा अपनी जीविका का निर्वाह करता हो।

वीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर के सात धातुओं में से एक धातु जिसका निर्माण सबके अंत में होता है और जिसके कारण शरीर में बल और कांति आती है।

विशेष—वीर्य को चरम धातु भी कहते हैं। यह स्त्रीप्रसंग के समय अथवा रोग आदि के कारण यों ही मूत्रेंद्रिय से निकलता है। कुछ लोगों का मत है कि वीर्य दो प्रकार का है—शीत और उष्ण। और कुछ लोगों का मत है कि यह आठ प्रकार का होता है—उष्ण, शीत, स्निग्ध, रुक्ष, विशद, पिच्छिल, मृदु और तीव्र। विशेष दे० 'शुक्र'।

पर्या०—शुक्र। तेज। रेत। वीज। इंद्रिय।

२. दे० 'रज'। ३. वैद्यक के अनुसार किसी पदार्थ का वह सार भाग जिसके कारण उस पदार्थ में शक्ति रहती है। किसी वस्तु का मूल तत्व। ४. पराक्रम। बल। शक्ति। सामर्थ्य। ५. अन्न आदि का बीज। बीआ। ६. पुंस्त्व (को०)। ७. साहस। दृढ़ता (को०)। ८. (ओषधियों की) अचूकता। प्रभावकारिता (को०)। ९. आभा। दीप्ति। कांति (को०)। १०. गौरव। महत्ता। महिमा (को०)। ११. गरल। विष (को०)। १२. सोना। सुवर्ण (को०)।

वीर्यंकर—संज्ञा पुं० [सं०] मज्जा। मेद। वसा। वपा [को०]।

वीर्यकाम—वि० [सं०] पुंस्त्व का अभिलाषी [को०]।

वीर्यकृत—संज्ञा पुं० [सं०] बलवान्। ताकतवर।

वीर्यकृत्—वि० [सं०] जो बल या वीर्य उत्पन्न करता हो। बलकारक।

वीर्यज—संज्ञा पुं० [सं०] लड़का। बेटा। पुत्र।

वीर्यतम—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत बड़ा बलवान् हो।

वीर्यधर—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार प्लक्ष द्वीप में रहनेवाले एक प्रकार के क्षत्रिय।

वीर्यपण—वि० [सं०] वीरता द्वारा क्रीत या खरीदा हुआ [को०]।

वीर्यपारमिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों के अनुसार छह सिद्धियों में से एक। शक्ति की पराकाष्ठा [को०]।

वीर्यप्रपात—संज्ञा पुं० [सं०] वीर्य का पतन। वीर्य का स्खलन [को०]।

वीर्यवत्—वि० [सं०] १. बलवान्। मजबूत। प्रबल। समर्थ। २. मांसल। हृष्ट पुष्ट।

वीर्यवान्—वि० [सं० वीर्यवत्] दे० 'वीर्यवत्'।

वीर्यवाही—वि० [सं० वीर्यवाहिन्] बीज अथवा वीर्य उत्पन्न करनेवाला [को०]।

वीर्यवृद्धिकर—संज्ञा पुं० [सं०] वीर्य बढ़ानेवाली ओषधि। बाजीकरण [को०]।

वीर्यशुल्क[1]—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वीर्यशुल्का] वह प्रतिज्ञा या प्रण जो वीर्य संबंधी हो। जैसे,—यह प्रतिज्ञा करना कि जो पुरुष (या स्त्री) अमुक कार्य करेगा, उसके साथ इस स्त्री (या पुरुष) का विवाह होगा।

वीर्यशुल्क[2]—वि० जिसका मूल्य वीर्य हो। शक्ति द्वारा क्रीत [को०]।

वीर्यसह—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्यवंशी राजा सौदास के पुत्र कल्माषपाद का एक नाम।

वीर्यहारी—संज्ञा पुं० [सं० वीर्य्यहारिन्] एक यक्ष का नाम जो दुःसह नामक यक्ष की कन्या के गर्भ से किसी चोर के वीर्य से उत्पन्न हुआ था।

विशेष—कहते हैं, जो लोग कदाचारी होते हैं, या बिना हाथ पैर धोए रसोईघर में जाते हैं, उनके घर में यह यक्ष अपने और दो भाइयों के साथ रहता है।

वीर्यहीन—वि० [सं०] १. निर्वीर्य। कातर। कापुरुष। शक्तिहीन। २. पुंस्त्वहीन। नपुंसक। क्लीव। ३. बीजरहित। जिसमें बीज न हो [को०]।

वीर्यांतराय—संज्ञा पुं० [सं० वीर्यान्तराय] जैनियों के अनुसार वह पाप कर्म जिसका उदय होने से जीव पुष्टांग होते हुए भी शक्तिविहीन हो जाता है और कुछ पराक्रम नहीं कर सकता।

वीर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'वीर्य'। २. एक नागकन्या (को०)।

वीर्याधान—संज्ञा पुं० [सं०] गर्भाधान [को०]।

वीर्यान्वित, वीर्ययुक्त—वि० [सं०] वीर्यवान्। शक्तिमान् [को०]।

वीर्यावदान—संज्ञा पुं० [सं०] किसी कार्य को वीरतापूर्वक संपन्न करना [को०]।

वीर्यावधूत—वि० [सं०] वीर्य द्वारा तिरस्कृत वा कंपित। शक्ति द्वारा पराजित [को०]।

वीवध—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्न की राशि। २. भूसे का ढेर। ३. सड़क। ४. राजकर। ५. शकट आदि का जुआ। ६. घट। घड़ा। ७. बोझा [को०]।

वीवधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिसाती। बिसातखाने की दूकान करनेवाला। २. वह जो बहँगी आदि द्वारा बोझ ढोता हो। बहँगी ढोनेवाला व्यक्ति [को०]।

वीवाह(पु)—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विवाह'।

वीश—संज्ञा पुं० [सं०] २० पल या ५ तोले का एक परिमाण [को०]।

वीषित—वि० [सं०] बिखरा हुआ। विस्तृत। फैला हुआ [को०]

वीस[1]—संज्ञा पुं० [सं०] नृत्य का एक प्रकार [को०]।

वीस(पु)†[2]—वि० संज्ञा स्त्री० [सं० विंशति, विंश] दे० 'बीस'। जैसे, वीस वसा = बीस बिस्वा।

वीसरना†—क्रि० अ०, क्रि० स० [सं० विस्मरण] दे० 'बिसरना'। उ०—ढोला मिलिसि न वीसारसि नवि आविसि ना लेसि।—ढोला०, दू० १७५।

वीसवसा(पु)†—क्रि० वि० [हिं वीस + बिस्वा] पूरी तौर से। पूर्णतः। उ०—बेली तरलाँ तराँ बिलँबी बण हरियाली वीसवसा।—बाँकी० ग्रं०, भा० ३, पृ० १२२।

वीसारना†—क्रि० स० [सं० विस्मारण] दे० 'बिसारना'। उ०—(क) संभारियाँ संताप, वीसारिया न वीसरइ।—ढोला०, दू० १८०। (ख) वीसारियाँ न वीसरइ चितारियाँ नावंत।—ढोला०, दू० ६१२।

वीस्न(पु)—संज्ञा पुं० [सं० विष्णु] दे० 'विष्णु'। उ०—ब्रह्मा वीस्न महादेव जानी। तिनते उतपत सकल पसारा उपजावत पालत करत संघारा।—रामानंद०, पृ० ३१।

वीहंगड़ा -संज्ञा पुं० [सं० विहङ्ग] १. पक्षी। २. विहायस। आकाश। उ०—जे सावण वीहंगड़े वीहंगड़उ न दूरि। —ढोला०, दू० ४६४।

वीह ⓟ—संज्ञा पुं० [सं० भीः, प्रा० बीह, वीह] दे० 'बीह'। उ०—बोलि न सक्कूँ वाहतउ हेक ज वात हुई। राजि अपूठा वाहुड़उ माल वणीं मूई।—ढोला०, दू० ४०४।

वीहार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'विहार'।

वुकूअ—संज्ञा पुं० [अ वुक़ूअ्] १. घटित होना। प्रकट होना। २. घटना। वाकिया। ३. पक्षियों का नीचे उतरना [को०]।

वुकूआ —संज्ञा स्त्री० [उर्दू वुक़ूअह्] दे० 'वाकिया', 'वाका'।

वुकूद—संज्ञा पुं० [अ० वुक़ूद] अग्नि को दीप्त करना। जलाना [को०]।

वुकूफ —संज्ञा पुं० [अ० वुक़ूफ़] ज्ञान। जानकारी [को०]।

वुजू—संज्ञा पुं० [अ० वुजू] दे० 'वजू'। [को०]।

वुजूद—संज्ञा पुं० [अ० वुज़ूद] दे० 'वजूद' [को०]।

वुडित—वि० [सं०] निमग्न। निमज्जित [को०]।

वुरुद -संज्ञा पुं० [अ०] आगमन। आना। पधारना। २. प्रवेश [को०]।

वूर्ण -वि० [सं०] वरण किया हुआ। चुना हुआ [को०]।

वुवूर्षु— वि० [सं०] चुनने या वरण करने की इच्छावाला। जो चयन करना चाहता हो [को०]।

वुसूल—वि०, संज्ञा पुं० [अ०] १. 'वसूल'। २. दे० 'उसूल [को०]।

वुसूली —संज्ञा स्त्री० [अ०] वसूली। प्राप्ति।

वृंत—संज्ञा पुं० [सं० वृन्त] १. स्तन का अगला भाग। कुचाग्र। चूचुक। २. बौंड़ी। ढेंड़ा। ३. शाखा का वह अंश जिससे पुष्प, फल, पत्ते आदि संयुक्त होते हैं। प्रसवबंधन (को०)। ४. घटीधारा। घड़ा रखने की तिपाई (को०)। ५. वृंताक। भंटा। बैंगन (को०)। ६. कोशधारी एक कीट। जैसे, रेशम का कीड़ा (को०)।

यौ० —वृंततुंबी = गोल कद्दू या लौकी। वृंतफल = बैंगन। भंटा। वृंतयमक।

वृंतक —संज्ञा पुं० [सं० वृन्तक] डंठल [को०]।

वृंतयमक—संज्ञा पुं० [सं० वृन्तयमक] यमक अलंकार का एक प्रकार जहाँ एक ही कविता में अनेक यमकों का प्रयोग होता है [को०]।

वृंताक —संज्ञा पुं० [सं० वृन्ताक] १. बैंगन। २. पोई का साग।

वृंताकी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्ताकी] १. बनभटा। २. बैगन।

वृंतासन —संज्ञा पुं० [सं० वृन्त+आसन] वृंतरूपी पीठिका या आसन। उ०—वृंतासन हिलता डुलता है। इधर उधर मृदु तनु तुलता है।—कुणाल०, पृ० ११६।

वृंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्तिका] लघु वृंतक। छोटा डंठल [को०]।

वृंतिता—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्तिता] कटुका [को०]।

वृंद—संज्ञा पुं० [सं० वृन्द] १. समूह। झुंड। राशि। ढेर। २. सौ करोड़ की संख्या। ३. एक मुहूर्त का नाम। उ०—माघ शुक्ल भूता दिन जानो वृंद मुहूरत में पहिचानों।—विश्राम (शब्द०)। ४. गुच्छा। स्तवक (को०)। ५. कोरस (को०)। सहगान। वृंदगान (को०)। ६. गले का फोड़ा, अर्बुद या ग्रंथि (को०)। ७ आयुर्वेद के एक विद्वान् (को०)।

यौ०—वृंदगान = समवेत गायन। कई गायकों का एक साथ गाना। वृंदगायक = अनेक गायकों के साथ साथ गानेवाला। वृंदगीत। वृंदमाधव = चिकित्सापरक एक ग्रंथ। वृंदवाद्य। वृंदसंहिता, वृंदसिंधु = आयुर्वेद के ग्रंथ का नाम।

वृंद—वि० अत्यधिक। बेशुमार [को०]।

वृंदगीत —संज्ञा पुं० [सं० वृन्द+गीत] समवेत गान। कोरस गीत। वह गीत जिसे एक साथ कई गायक गाते हैं। उ०—जो वृंदगीत युत वृंदवाद्य से रखते महलों को मुखरित, ले अमित, पीन वीणा, मृदंग आदिक वाद्यों के उपादान।—भूमि०, पृ० ६५।

वृंदवाद्य—संज्ञा पुं० [सं० वृन्द+वाद्य] कई वाद्यों का एक साथ बजनेवाला समूह। (अँ०) आर्केस्ट्रा।

वृंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्दा] १. तुलसी। २. राधिका के सोलह नामों में से एक नाम। ३. गोकुल के समीप की एक अरण्यानी (को०)।

वृंदाक—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दाक] परगाछा नाम का पेड़।

वृंदार—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दार] १. मनोज्ञ। सुंदर। आकर्षक। २. अधिक। बड़ा। विशाल। ३. प्रमुख। उत्तम। श्रेष्ठ [को०]।

वृंदारक[1]—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दारक] १. देवता। २. श्रेष्ठ व्यक्ति। समादरणीय व्यक्ति (को०)। ३. धृतराष्ट्र का एक पुत्र (को०)।

वृंदारक[2]— वि० [स्त्री० वृन्दारका, वृंदारिका] १. दे० 'वृंदार'। २. आदरणीय। समान्य [को०]।

वृंदारका ⓟ—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दारक] देवता। वृंदारक। —अनेकार्थ०, पृ० ४१।

वृंदारण्य—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दारण्य] वृंदावन।

वृंदावन—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दावन] मथुरा जिले का एक प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ जो भगवान् श्रीकृष्णचंद्र का क्रीड़ाक्षेत्र माना जाता हैं।

विशेष—कहते हैं, श्रीकृष्ण ने अपनी अधिकांश बाललीलाएँ यहीं की थीं। पुराणों में वृंदावन के संबंध में अनेक प्रकार की विलक्षण कथाएँ आदि पाई जाती हैं। महमूद गजनवी ने वृंदावन और उसके आस पास के अनेक स्थानों को बिलकुल नष्ट भ्रष्ट कर डाला था, और बहुत दिनों तक यह उसी दशा में पड़ा रहा। पर पीछे से चैतन्य महाप्रभु ने यमुना के किनारे वर्तमान वृंदावन नामक नगर की स्थापना की थी। इस नगर में इस समय हजारों बड़े बड़े मंदिर हैं और दूर दूर से यात्री लोग यहाँ दर्शनों के लिये आते हैं।

वृंदावनी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्दावनी] तुलसी [को०]।

वृंदावनेश्वर—संज्ञा पुं० [सं० वृन्दावनेश्वर] श्रीकृष्ण का एक नाम।

वृंदावनेश्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृन्दावनेश्वरी] राधिका का एक नाम।

वृंदिष्ठ—वि० [सं० वृन्दिष्ठ] १. अत्यत बड़ा। विशालतम। २. सुंदरतम। मनोज्ञतम [को०]।

वृंदी—वि० [सं० वृन्दिन्] वृंदवाला। समूहवाला [को०]।

वृंदीयान्—वि० [सं० वृन्दीयस्] १. दे० 'वृंदिष्ठ'। २. सुदरतर [को०]।

वृंहण१—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह पदार्थ जो पुष्टिकारक हो। वलवर्धक द्रव्य। २. भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का धूम्रपान। ३. असगंध। ४. मुनक्का। ५. भुइं कुम्हड़ा। ६. चरक के अनुसार सूअर के मांस में पकाया हुआ जौ का सत्तू। ७. पुष्ट करना (को०)। ८. हाथी की चिग्घाड़ (को०)।

वृंहण—वि० [सं०] पुष्ट करनेवाला। पुष्टिकारक [को०]।

वृंहणवस्ति-संज्ञा स्त्री० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार की वस्ति जिसे निरुह या निरुढ भी कहते हैं। बिशेष दे० निरुढ़-वस्ति'।

वृंहित२—वि० [सं०] परिवर्धित। पुष्ट किया हुआ [को०]।

वृंहित२—संज्ञा पुं० हाथी की चिग्घाड़। बींड [को०]।

वृ—संज्ञा पुं० [सं०] सेना की एक टुकड़ी। उ०—वेद काल में 'वृ' सेना के एक गुल्म को कहते थे।—प्रा० भा० प०, पृ० १४०।

वृक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ते की जाति का एक मांसाहारी पशु। भेड़िया। उ०—महा महिष बर। बरद वृकहु बहु हनत सहित श्रम।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ६४। २. शृगाल। गीदड़। ३. कौवा। ४. क्षत्रिय। ५. चोर। लुटेरा। ६. वज्र। ७. अगस्त का पेड़। ८. गंधाबिरोजा। ९. उलूक। उल्लू (को०)। १०. सुगंधित द्रव्यों का मिश्रण (को०)। ११. एक राक्षस का नाम। १२. जठराग्नि (को०)। १३. हल (को०)। १४. सूर्य (को०)। १५. चंद्रमा (को०)। १६. कृष्ण का एक पुत्र (को०)।

वृककर्मा१—संज्ञा पुं० [सं० वृककर्म्मन्] एक असुर का नाम।

वृककर्मा२—वि० भेड़िए के समान या तुल्य। अत्यंत क्रूर [को०]।

वृकखंड—संज्ञा पुं० [सं० वृकखण्ड] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृकगर्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जनपद का नाम।

वृकग्राह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृकजंभ—संज्ञा पुं० [सं० वृकजम्भ] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृकदंत-संज्ञा पुं० [सं० वृकदन्त] पुराणानुसार एक राक्षस का नाम। इसी की कन्या सानंदिनी कुंभकर्ण को ब्याही थी।

वृकदंश—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता।

वृकदीप्त—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।

वृकदेव—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार वसुदेव के एक पुत्र का नाम।

वृकदेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार देवक की कन्या और वसुदेव की पत्नी, देवकी का एक नाम।

वृकदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वृकदेवा' [को०]।

वृकधूप—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह धूप जो अनेक प्रकार के सुगंधित द्रव्यों की सहायता से तैयार किया गया हो। २. सरल वृक्ष का निर्यास। तारपीन।

वृकधूमक—संज्ञा पुं० [सं०] एक क्षुप [को०]।

वृकधूर्त-संज्ञा पुं० [सं०] गीदड़।

वृकधूर्तक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गीदड़। २. रीछ [को०]।

वृकधोरण—संज्ञा पुं० [सं०] एक पशु [को०]।

वृकनिवृत्ति—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।

वृकप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक ग्राम का नाम।

वृकप्रेक्षी—वि० [सं० वृकप्रेक्षित्] भेड़िए की तरह देखनेवाला [को०]।

वृकबंधु—संज्ञा पुं० [सं० वृकबन्धु] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृकरथ—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार कर्ण के एक भाई का नाम।

वृकल—संज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार श्लिष्टि के एक पुत्र का नाम। २. वल्कल का वस्त्र या परिधान (को०)।

वृकला—संज्ञा स्त्री० [सं०] नाड़ी।

वृकवंचिक—संज्ञा पुं० [सं० वृकवञ्चिक] एक वैदिक ऋषि का नाम।

वृकवाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] द्वार के दोनों ओर लगाई जानेवाली लकड़ी। बाजू [को०]।

वृकस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] माहिष्मती नगरी [को०]।

वृका संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अंबष्ठा या पाढ़ा नाम की लता। २. प्राचीन काल का एक परिमाण जो दो सूपों के बराबर होता था।

वृकाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निसोथ।

वृकाजिन—संज्ञा पुं० [सं०] १. भेड़िए का चमड़ा। २. वैदिक काल के एक ऋषि का नाम।

वृकाम्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का खट्टा नीबू [को०]।

वृकायु१—संज्ञा पुं० [सं०] १. जंगली कुत्ता। २. चोर।

वृकायु२—वि० भेड़िए जैसी प्रकृतिवाला, हिंसक, क्रूर [को०]।

वृकाराति—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता।

वृकारि—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता।

वृकाश्व—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक ऋषि का नाम।

वृकाश्वकि-संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

वृकास्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार कृष्ण के एक पुत्र का नाम जिन्हें वृकाश्व भी कहते थे। २ वह जिसका मुंह भेड़िए जैसा हो (को०)।

वृकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मादा भेड़िया। २. सियारिन। ३. अंबष्ठा। पाढ़ा [को०]।

वृकोदर—संज्ञा पुं० [सं०] १. भीमसेन का एक नाम।

विशेष—कहते हैं, भीमसेन के पेट में वृक नाम की विकट अग्नि थी। इसी से उनका यह नाम पड़ा।

२. ब्राह्मण (को०)। ३. शिव के गणों का एक वर्ग (को०)।

वृक्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. गुरदा। उ०—वृक्क जो कुक्षि गोल हैं सो उदर में स्थित मेद की पुष्टि करनेवाले कहे हैं।—शार्ङ्गधर०, पृ० १५३। २. हृदय (को०)।

वृक्कक—संज्ञा पुं० [सं०] मूत्राशय। गुरदा।

वृक्का संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हृदय। २. गुरदा (को०)।

वृक्ण—वि० वि० [सं०] १. कटा या काटा हुआ। छिन्न। २. विदारित। फाड़ा हुआ। ३. टुटा या तोड़ा हुआ [को०]।

वृक्त—वि० [सं०] १. निर्मल किया हुआ। २. फैलाया या विखेरा हुआ। विकीर्ण [को०]।

वृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. वनस्पति या उद्भिज्ज के अंतर्गत वह बड़ा क्षुप जिसका एक ही मोटा और भारी तना होता है और जो जमीन से प्रायः सीधा ऊपर की ओर जाता है। पेड़। दरख्त। द्रुम। विटप।

विशेष—प्रायः लोग बोलचाल में वृक्ष और क्षुप अथवा वृक्ष और दूसरी छोटी वनस्पतियों में कोई अंतर नहीं रखते और उनमें से अधिकांश को प्रायः वृक्ष ही कहा करते हैं। पर क्षुप और वृक्ष में यह अंतर है कि क्षुप तीन चार हाथ से अधिक ऊँचा नहीं होता; और न उसमें कोई एक मुख्य तना होता है। उसकी जड़ से ही कई डालियाँ निकलकर इधर उधर फैल जाती हैं। परंतु वृक्ष में एक मुख्य और भारी तना होता है जो पहले कुछ ऊँचाई तक सीधा ऊपर की ओर जाता है; और तब उसमें से चारों ओर डालियाँ निकलती हैं। पर फिर भी कुछ बड़े क्षुप ऐसे होते हैं जो अपने आकार प्रकार के कारण ही वृक्ष कहलाते हैं। वृक्ष में कुछ ठोस काठ का रहना भी आवश्यक होता है। पर केले में काठ का कोई अंश न रहने पर भी उसे लोग प्रायः वृक्ष ही कहते हैं। कुछ वृक्ष ऐसे होते हैं जिनके सब पत्ते वसंत ऋतु के आरंभ में झड़ जाते हैं, और तब फिर नए पत्ते निकलते हैं। ऐसे वृक्ष 'पतझड़' वाले वृक्ष कहलाते हैं जिनमें पुराने पक्के पत्तों के गिरने से पहले ही नए पत्ते निकल आते हैं। ऐसे वृक्ष सदाबहार कहलाते हैं। वृक्षों में प्रायः अनेक प्रकार के फल लगते हैं जिन्हें लोग खाते हैं, और उसकी लकड़ी से तरह तरह की चीजें (जैसे,—मेज, कुरसी, दरवाजा, हल, गाड़ी आदि) बनाई जाती हैं। इनकी पत्तियाँ आदि ओषधि रूप में, रंग निकालने और चमड़ा सिझाने के काम में आती हैं। वृक्ष प्रायः बीजों से और कभी कभी पनीरी के द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं।

पर्या०—महीरुह। शाखी। विटपी। पादप। तरु। पलाशी। द्रुम। आगम। स्थिर। नग। अग। कुज। क्षितिरुह। महीज। शाल।

२. किसी प्रकार का क्षुप या पौधा अथवा कोई कुछ बड़ी और ऊँची वनस्पति। ३. वृक्ष से मिलती जुलती वह आकृति जिसमें किसी चीज का मूल अथवा उद्गम और उसकी अनेक शाखाएँ प्रशाखाएँ आदि दिखलाई गई हों। वंशवृक्ष। ४. वृक्ष का तना (को०)। ५. कुटज। इंद्रजव (को०)। ६. कफन। मृतचीवर (को०)।

वृक्षकंद—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षकन्द] विदारीकंद।

वृक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] १. छोटा पेड़। २. पेड़। दरख्त। ३. कुटज का पेड़।

वृक्षकुक्कुट—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली मुर्गा।

वृक्षकोटर—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्ष का खोड़रा [को०]।

वृक्षखंड—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षखण्ड] निकुंज। वृक्षों का समूह [को०]।

वृक्षगुल्म—वि० [सं०] जो वृक्षों से आवृत हो। वृक्षों से ढका हुआ [को०]।

वृक्षगृह—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी, जिनका निवास वृक्ष हैं।

वृक्षचर—संज्ञा पुं० [सं०] बंदर।

वृक्षच्छाय—संज्ञा पुं० [सं०] जो वृक्ष की छाया युक्त हो, कुंज [को०]।

वृक्षच्छाया—संज्ञा स्त्री० [सं०] पेड़ की छाया [को०]।

वृक्षज—वि० [सं०] वृक्ष से उत्पन्न (फल, फूल, काष्ठ आदि)।

वृक्षतक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गिलहरी। २. वृक्ष को काटनेवाला लकड़हारा। काष्ठक्रेता।

वृक्षदल, वृक्षपत्र, वृक्षपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] पत्ता। पेड़ का पत्ता [को०]।

वृक्षदोहद—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्ष को फूल लगना। विशेष दे० 'दोहद-६।'

वृक्षधूप—संज्ञा पुं० [सं०] सरल या चीड़ का पेड़।

वृक्षनाथ, वृक्षनाथक—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ का पेड़। वट वृक्ष।

वृक्षनिर्यास—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ में से निकलनेवाला किसी प्रकार का रस या तरल द्रव्य।

वृक्षपाक—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ का पेड़। वट।

वृक्षपाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. जंगली शाल वृक्ष। २. वनरखा। वन का रक्षक (को०)।

वृक्षप्रतिष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्मृतियों आदि के अनुसार पुण्यफल की प्राप्ति के लिये अश्वत्थ आदि के वृक्ष लगने की क्रिया।

वृक्षभक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. परगाछा नाम का पौधा। वि० दे० 'परगाछा'। २. वंदाक. बंदा।

वृक्षभवन—संज्ञा पुं० [सं०] कोटर। वृक्ष का खोड़रा [को०]।

वृक्षभित्—संज्ञा स्त्री० [सं०] टाँगा, कुल्हाड़ी आदि जिससे वृक्ष काटा जाय [को०]।

वृक्षभेदी—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षभेदिन्] १. कुठार। कुल्हाड़ी। २. बढ़ई की तक्षणी, रुखानी आदि (को०)।

वृक्षमर्कटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] गिलहरी [को०]।

वृक्षमार्जार—संज्ञा पुं० [सं०] काष्ठबेडाल। पेड़ पर रहनेवाला एक जानवर।

वृक्षमूल—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ की जड़।

वृक्षमूलिक—वि० [सं०] वृक्ष की जड़ या मूल से संबंध रखनेवाला।

वृक्षमृद्भू—संज्ञा पुं० [सं०] पानी में उगनेवाला बेत [को०]।

वृक्षराज—संज्ञा पुं० [सं०] परजाता। पारिजात।

वृक्षराट्—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षराज्] पीपल का पेड़।

वृक्षरुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. परगाछा नाम का पौधा। २. रुद्रवंती। वंदष्टा। वंदाक। ३. अमरबेल। ४. जतुका नाम की लता। ५. विदारीकंद। ककही या कंघी नाम का पौधा। ७. पुष्करमूल।

वृक्षरोपक—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्षादि को लगानेवाला व्यक्ति।

वृक्षरोपण—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्ष रोपना। पेड़ लगाना [को०]।

वृक्षरोपयिता—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षरोपयितृ] वह जो वृक्ष आदि लगाने का काम करता हो [को०]।

वृक्षवाटिका, वृक्षवाटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाग। बगीचा। उपवन।

वृक्षवासी—वि० [सं० वृक्षवासिन्] वृक्ष पर रहनेवाला। जंगली। उ०—यक्ख अंगुलिमाल (बौद्धकाल) पहले एक वृक्षवासी नरभक्षक था, परवर्ती रूप में द्वारपाल हो गया।—प्रा० भा० प०, पृ० ८७।

वृक्षश संज्ञा पुं० [सं०] गिरगिट। प्रतिसूर्यक [को०]।

वृक्षशायिक—संज्ञा पुं० [सं०] लंगूर।

वृक्षशायिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] गिलहरी।

वृक्षसंकट—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षसङ्कट] वह पगडंडी जो घने वृक्षों के बीच से गई हो।

वृक्षसारक—संज्ञा पुं० [सं०] द्रोणपुष्पी। गूमा।

वृक्षसेचन—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ की सिचाई। पेड़ों में पानी देना [को०]।

वृक्षस्नेह—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ में से निकलनेवाला निर्यास या तरल द्रव्य।

वृक्षांघ्रि—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षाङ्घ्रि] पेड़ का निचला भाग या चरण। वृक्षमूल [को०]।

वृक्षादन—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुठार। कुल्हाड़। २. बढ़ई का बसूला या रुखानी (को०)। ३. अश्वत्थ वृक्ष। ४. पियाल का पेड़। ५. मधुमक्खी का छत्ता।

वृक्षादनी, वृक्षादिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विदारी। २. बंदा। बंझा। बंदाक।

वृक्षाधिरुहक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का आलिंगन [को०]।

वृक्षाधिरूढ—संज्ञा पुं० [सं०] आलिंगन का एक प्रकार, जिसमें नारी पुरुष से उसी प्रकार लिपट जाती है जिस प्रकार लता वृक्ष से [को०]।

वृक्षाधिरूढक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृक्षाधिरूढ' [को०]।

वृक्षाधिरुढि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लता का वृक्ष में लिपटना। २. आलिंगन का एक प्रकार [को०]।

वृक्षामय—संज्ञा पुं० [सं०] लाख।

वृक्षाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] १. इमली। २. चुक नामक खटाई। ३. अमड़ा। ४. अमलबेत। ५. अम्लकूटा। अंवलकुटा।

वृक्षायुर्वेद—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें वृक्षों के रोगों आदि की चिकित्सा का वर्णन हो।

वृक्षार्हा संज्ञा स्त्री० [सं०] महामेदा।

वृक्षालय—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी। चिड़िया।

वृक्षावली—संज्ञा स्त्री० [सं० वृक्ष+अवलि] पेड़ों की कतार। वृक्षसमूह। उ०—तातें वृंदावन को ब्रज की वृक्षावली सर्वथा तोरनी नाहीं।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० ३०२।

वृक्षावास—संज्ञा पुं० [सं०] १. वनवासी। तपस्वी। २. पक्षी [को०]।

वृक्षाश्रयी—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षाश्रयिन्] छोटा उल्लू। २. पक्षी [को०]।

वृक्षिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वृक्ष] वह पुतली जो वृक्ष के आधार पर हो। शालभंजिका। पुतली। उ०—यहाँ बौद्ध तोरणों में प्रयुक्त वृक्षका यक्षिणी के प्रतीक का प्रभाव स्पष्ट दीखता है, किंतु हिंदू शैली में निर्मित होने के कारण इनके आकार और विषय में परिवर्तन आ गया।—शुक्ल अभि० ग्रं०, पृ० १९५।

वृक्षोत्थ—वि० [सं०] पेड़ पर उगा हुआ। वृक्ष पर उगनेवाला [को०]।

वृक्षोत्पल—संज्ञा पुं० [सं०] कनियारी या कनकचंपा का पेड़।

वृक्षौका—संज्ञा पुं० [सं० वृक्षौकस्] बनमानुष [को०]।

वृक्ष्य—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ का फल।

वृज—संज्ञा पुं० [सं० व्रज] दे० 'व्रज'।

विशेष—'वृज' शब्द के यौगिक आदि के लिये दे० 'व्रज' शब्द के यौगिक।

वृजन^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. आकाश। आसमान। २. दुष्कर्म। पाप। ३. लड़ाई। युद्ध। ४. निपटारा। निराकरण। ५. ताकत। शक्ति। बल। ६. बाल। ७. शत्रु। दुश्मन। ८. रक्षित या घेरी हुई भूमि या चरागाह (को०)। ९. घुंघराले बाल (को०)। १०. विपत्ति। आपत्ति। दुःख। संकट (को०)।

वृजन^{2}—वि० १. कुटिल। टेढ़ा। २. शक्तिशाली। मजबूत (को०)। ३. जो अचल न हो। चल। स्थायी (को०)। ४. विनश्वर। क्षयिष्णु (को०)।

वृजन्य—संज्ञा पुं० [सं०] ग्राम में रहनेवाला बहुत ही सीधा सादा आदमी। वह जो परम साधु हो।

वृजि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्रज भूमि। २. मिथिला प्रदेश। तिरहुत।

वृजिन^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पाप। गुनाह। उ०—देव अखिल मंगल भवन निविड संसय समन दमन वृजिनाटवी कष्टहर्ता।—तुलसी (शब्द०)। २. दुःख। कष्ट। तकलीफ। ३. रक्त चर्म। लाल खाल या चमड़ा। ४. खून। लहू। रक्त। ५. बाल। कुंचित केश। ६. दुष्ट व्यक्ति (को०)।

वृजिन^{2}—वि० १. कुटिल। टेढ़ा। २. पापयुक्त।

वृज्य—वि० [सं०] जो मोड़ा जाय। जो ऐंठा या घुमाया जाय [को०]।

वृतंत ㉁—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तान्त] दे० 'वृत्तांत'। उ० इम आतम उद्धार करि जनम लिया भुप आइ। सो वृतंत कवि चंद कहि बरन्यौ कवित बनाइ।—पृ० रा०, १।५७८।

वृत—वि० [सं०] १. जो किसी काम के लिये नयुक्त किया गया हो। मुकर्रर किया हुआ। २ ढका हुआ। छाया हुआ। ३. जिसके संबंध में प्रार्थना की गई हो। ४. जो मंजूर किया गया हो। स्वीकृत। ५. गोल। ६. वरण किया हुआ। चुना हुआ (को०)। ७. चारों ओर से घेरा हुआ। आवृत (को०)। ८. जो दूषित किया गया हो (को०)। ९. सेवित (को०)।

वृतपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुत्रदात्री नाम की लता।

वृताक्ष संज्ञा पुं० [सं०] मुरगा।

वृतिंकर—संज्ञा पुं० [सं० वृतिङ्कर] विकंतक नाम का वृक्ष।

वृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह जिससे कोई चीज घेरी या ढकी जाय। २. नियुक्त करने की क्रिया। नियुक्ति। ३. छिपाने की क्रिया। ४. वरण। चुनाव (को०)। ५. याचना। प्रार्थना (को०)।

वृत्त^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चरित्र। चरित। २. वेदों और शास्त्रों के अनुकुल आचार रखना। ३. आचार। चाल चलन। ४. स्तन के आगे का भाग। चूचुक। ५. सफेद ज्वार। ६. गुंडा या गुंड नाम की घास। ७. अंजीर। ८. सतिवन। ९. कछुआ। १०. समाचार। वृत्तांत। हाल। उ०—अब जो वृत्त नवीन; होय कहहु सो करि कृपा।—प्रेमघन०, भा० १, पृ०८२। ११. बड़ों के आदर, इंद्रियनिग्रह और सत्य आदि को ओर होनेवाली प्रवृत्ति। १२. महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम। १३. जीविका का साधन। वृत्ति। १४. वह छंद जिसके प्रत्येक पद में अक्षरों की संख्या और लघु गुरु के क्रम का नियम हो। वर्णिक छंद। जैसे,—इंद्रवज्रा, उपेंद्रवज्रा, मालिनी आदि। उ०—नूतन वृत्तों में कविकोविद नए गीत रच लाते हैं। नव रागों में, नव तालों में, गायक उन्हें जगाते हैं।—साकेत, पृ० २७३।

विशेष—पदों के विचार से वृत्त तीन प्रकार के होते हैं। जिस वृत्त के चारों पद समान हों, वह 'सम वृत्त' कहलाता है; जिसमें चारों पद असमान हों, वह 'विषम वृत्त' कहलाता है; और जिसके पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे पद समान हों, उसे 'अर्ध समवृत्त' कहते हैं।

१५. एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में बीस वर्ण होते हैं। इसे गंडका और दंडिका भी कहते हैं। १६. वह क्षेत्र जिसका घेरा या परिधि गोल हो। मंडल। १७. वह गोल रेखा जिसका प्रत्येक विंदु उसके अंदर के मध्यविंदु से समान अंतर पर हो। १८. दे० 'वृत्तासुर'।

वृत्त^{2}— वि० १. बीता हुआ। गुजरा हुआ। २. दृढ़। मजबूत। ३. जिसका आकार गोल हो। वर्तुल। ४. मृत। मरा हुआ। ५. जो उत्पन्न हुआ हो। जात। अस्तित्वमय। विद्यमान। ६. निष्पन्न। सिद्ध। ७. ढका हुआ। आच्छादित। ८. अनुष्ठित। कृत (को०)। ९. पठित। अधीत (को०)। १०. प्रसिद्ध। ख्यात (को०)। ११. घटित। संभूत (को०)।

वृत्तक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह गद्य जिसमें कोमल तथा मधुर अक्षरों और छोटे छोटे समासों का व्यवहार किया गया हो। २. छंद। ३. बौद्ध या जैन गृहस्थ (को०)।

वृत्तकर्कटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] खरबूजा।

वृत्तकोशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] देवदाली नाम की लता।

वृत्तकोष—संज्ञा पुं० [सं०] पीली देवदाली।

वृत्तखंड—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तखण्ड] १. किसी वृत्त या गोलाई का कोई अंश। २. मेहराब।

वृत्तगंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० वृत्तगन्धि] वह गद्य जिसमें अनुप्रासों और समासों की अधिकता हो। वह गद्य जिसमें पद्य का आनंद आता हो।

वृत्तगंधी—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तगन्धिन्] दे० 'वृत्तगंधि'।

वृत्तगुंड—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तगुण्ड] दीर्घनाल या गोंदला नाम की घास।

वृत्तचूड—वि० [सं०] १. मेहराबनुमा (झरोखा)। २. दे० 'वृत्तचौल' [को०]।

वृत्तचेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्वभाव। प्रकृति। मिजाज। २. आचरण। चालचलन।

वृत्तचौल—वि० [सं०] जिसका चूड़ाकरण संस्कार हो चुका हो [को०]।

वृत्तज्ञ—वि० [सं०] रीतिरिवाज, घटना, इतिहास, वृत्तांत आदि जाननेवाला [को०]।

वृत्ततंडुल—संज्ञा पुं० [सं० वृत्ततण्डुल] यवनाल। जवनाल।

वृत्तपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] पुत्रदात्री नाम की लता।

वृत्तपरिणाह—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्त की परिधि या घेरा [को०]।

वृत्तपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पाठा। पाढ़ा। २. बड़ी शणपुष्पी।

वृत्तपुच्छा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का चमड़ा [को०]।

वृत्तपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरिस का पेड़। २. कदम या कदंब का पेड़। ३. जलबेंत। ४. भुइँ कदंब। ५. सदागुलाब। सेवती। ६. मोतिया। मोगरा। मुग्दर। ७. मल्लिका। कुब्जक। मालती।

वृत्तपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नागदमनी। २. सदागुलाब। सेवती।

वृत्तपूरण—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्त या छंद को पुरा करना। छंद की पूर्ति [को०]।

वृत्तप्रत्यभिज्ञ—वि० [सं०] धर्मकृत्यों में अत्यंत दक्ष [को०]।

वृत्तफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. कोई गोलाकार फल। २. काली मिर्च। ३. अनार। ४. बेर। ५. कैथ। कपित्थ। ६. लाल अपामार्ग। लाल चिचड़ा। ७. करंज का पेड़। ८. तरबूज। ९. खरबूजा।

वृत्तफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बैंगन। भंटा। २. कड़वी ककड़ी। ३. आँवला।

वृत्तबंध—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तबन्ध] वह जो वृत्त या छंद के रूप में बाँधा गया हो।

वृत्तबीज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृत्तबीज'।

वृत्तबीजका, वृत्तबीजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वृत्तबीजका'।

वृत्तभंग—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तभङ्ग] १. छंदोभंग। २. आचरण या व्यवहार की भ्रष्टता [को०]।

वृत्तभोजन संज्ञा पुं० [सं०] गंडीर या गिडनी नाम का साग।

वृत्तमल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सफेद आक। २. त्रिपुरमल्लिका।

वृत्तमाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृत्तांतों की माला। घटनाओं की श्रृंखला। उ०—भिन्न भिन्न शाखाओं के हजारों कवियों की केवल वृत्तमालाएँ साहित्य के इतिहास के अध्ययन में कहाँतक सहायता पहुँचा सकती थीं ?—इतिहास, पृ० २।

वृत्तयुक्त—वि० [सं०] आचरणयुक्त। सदाचारी [को०]।

वृत्तवत्—वि० [सं०] १. जिसका आचरण उत्तम हो। सदाचारी। २. वृत्त के समान। गोलवर्तुलाकार (को०)।

वृत्तविधान—संज्ञा पुं० [सं० वृत्त+विधान] छंदोविधान। छंदों की योजना। उ०—श्रुतिकटु मानकर कुछ वर्णों का त्याग, वृत्तविधान, लय, अंत्यानुप्रास आदि नाद-सौंदर्य-साधन के लिये ही है।—रस०, पृ० ४६।

वृत्तबीज—संज्ञा पुं० [सं०] १. भिंडी। तरोई। २. लोबिया। राजमाष।

वृत्तबीजका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अरहर नामक दाल। २. पांडुफली। पांडुरफली।

वृत्तबीजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अरहर नाम का अन्न।

वृत्तशस्त्र—वि० [सं०] जो शस्त्रविद्या में निष्णात हो। शस्त्र विद्या में निपुण। धनुर्वेदज्ञ [को०]।

वृत्तशाली—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तशालिन्] वह जिसका आचरण उत्तम हो। सदाचारी।

वृत्तश्लाघी—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तश्लाघिन्] १. वह जिसे अपने काम का अभिमान या श्लाघा हो। २. क्षत्रिय।

वृत्तसंकेत—वि० [सं० वृत्तसङ्केत] जिसने अपनी सहमति या स्वीकृति दे दी हो [को०]।

वृत्तसंग्रह—संज्ञा पुं० [सं० वृत्त+सङ्ग्रह] १. जीवनवृत्तांतों का संग्रह। २. ऐसा ग्रंथ जिसमें केवल जीवनी दे दी गई हो। उ०—सारे रचनाकाल को आदि, मध्य, पूर्व, उत्तर इत्यादि खंडों में आँख मूँदकर बाँट देना किसी वृत्तसंग्रह को इतिहास नहीं बना सकता।—इतिहास, पृ० २।

वृत्तसंपन्न—वि० [सं०] आचारवान्। वृत्तयुक्त।

वृत्तसादी—वि० [सं० वृत्तसादिन्] आचार व्यवहार को नष्ट करनेवाला अनाचारी। कमीना [को०]।

वृत्तस्क, वृत्तस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसका चरित्र शुद्ध हो। सदाचारी। २. वह जो दूसरों का उपकार करता हो। परोपकारी।

वृत्तहीन—वि० [सं०] आचारहीन। आचाररहित [को०]।

वृत्तांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृत्ताङ्गी] प्रियंगु लता [को०]।

वृत्तांत—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तान्त] १. किसी बीती हुई बात या घटी हुई घटना का विवरण। समाचार। हाल। जैसे,—(क) इस घटना का सारा वृत्तांत समाचारपत्रों में छप गया है। (ख) अब आप अपना कुछ वृत्तांत सुनाइए। २. प्रक्रिया। ३. संपूर्णता। समस्तता। ४. प्रस्ताव। ग्रंथ का अध्याय। ५. आख्यान। ६. अवसर। मौका। ७. भाव। ८. चालू विषय या प्रकरण। ९. प्रकार। किस्म (को०)। १०. ढंग। रीति (को०)। ११. अवस्था। दशा (को०)। १२. अवकाश (को०)। १३. गुण। प्रकृति (को०)। १४. एकांत (को०)। १५. बीती या घटी हुई स्थिति। घटना (को०)।

वृत्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. झिंझरीट नाम का क्षुप। २. रेणुका। रेणुबीज। ३. प्रियंगु। ४. मांसरोहिणी। ५. सफेद सेम। ६. नागदमनी। ७. नतुआ।

वृत्तानुपूर्व—वि० [सं०] गोलाई के अनुरूप।

वृत्तानुवर्ती—संज्ञा पुं० [सं० वृत्तानुवर्तिन्] वह जिसका आचरण शुद्ध हो। सदाचारी।

वृत्तानुसारी—वि० [सं० वृत्त+अनुसारिन्] विहित रीति से कार्य करनेवाला [को०]।

वृत्तार्द्ध—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्त का आधा भाग [को०]।

वृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह कार्य जिसके द्वारा जीविकानिर्वाह होता हो। जीविका। रोजी।

क्रि० प्र०—करना।—लगना। होना।

२. वह धन जो किसी दीन, विधवा या छात्र आदि को बराबर, कुछ निश्चित समय पर उसके सहायतार्थ दिया जाय। उपजीविका।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

३. सूत्रों आदि का वह विवरण या व्याख्या जो उनका अर्थ स्पष्ट करने के लिये की जाती है।

विशेष—हमारे यहाँ सूत्रों आदि की व्याख्या के वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका और टिप्पणी ये पाँच भेद किए गए हैं। इनमें से वृत्ति उस व्याख्या को कहते हैं जो कुछ संक्षिप्त होती है और जिसकी रचना गंभीर होती है।

४. विवरण। वृत्तांत। हाल। ५. नाटकों में विषय के विचार से वर्णन करने की शैली।

विशेष—यह चार प्रकार की कही गई है और भिन्न भिन्न रसों के लिये उपयुक्त मानी गई है। जैसे—कौशिकी वृत्ति शृंगार रस के लिये, सात्वती वृत्ति वीर रस के लिये, आरभटी वृत्ति रौद्र और वीभत्स रस के लिये और भारती वृत्ति शेष अन्य रसों के लिये। जहाँ अच्छी वेशभूषावाली नायिका, बहुत सी स्त्रियों और नृत्यगीत तथा भोगविलास आदि का वर्णन हो, उसे कौशिकी; जहाँ वीरता, दानशक्ति, दया, सरलता आदि का वर्णन हो उसे सात्वती; जहाँ माया, इंद्रजाल, संग्राम, क्रोध आदि का वर्णन हो, उसे आरभटी, और जहाँ संस्कृतबहुल कथोपकथन हो उसे भारती वृत्ति कहते हैं। इन चारों वृत्तियों के भी कई अवांतर भेद माने गए हैं।

६. व्यवहार। ७. वह जो किसी दूसरे पर आश्रित या अवलंबित हो। आधेय। ८. योग के अनुसार चित्त की अवस्था जो पाँच प्रकार की मानी गई है—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। ९. व्यापार। कार्य। १०. स्वभाव। प्रकृति। ११. कर्तव्य। १२. संहार करने का एक प्रकार का शस्त्र। उ०—सारचि माली वृत्ति नाम पुनि अतिमाली नौ।—पद्माकर (शब्द०)। १३. अस्तित्व। सत्ता। १४. टिकना। किसी विशेष स्थिति में होना या रहना (को०)। १५. अवस्था। दशा (को०)। १६. क्रम। प्रणाली (को०)। १७. मजदूरी (को०) १८. संमानपूर्ण बर्ताव (को०)। १९. चक्कर काटना। मुड़ना (को०)। २०. किसी वृत्त या पहिए की परिधि (को०)। २१. शब्द की शक्ति—अभिधा, लक्षणा और व्यंजना (को०)। २२. विचार करने की प्रक्रिया विचारसरणि (को०)। २३. अनुप्रास अलंकार का एक भेद (को०)। २४. रुद्र की पत्नी (को०)।

वृत्तिकर^{१}—वि॰ [सं॰] वृत्ति या जीविका देनेवाला [को॰]।

वृत्तिकर^{२}—संज्ञा पुं॰ पेशे के ऊपर लगाया जानेवाला एक प्रकार का सरकारी कर। (अं॰ प्रोफेशन टैक्स)।

वृत्तिकर्षित—वि॰ [सं॰] जीविका के अभाव में दुःखी [को॰]।

वृत्तिकार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जिसने किसी सूत्रग्रंथ पर वृत्ति लिखी हो।

वृत्तिकृत्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'वृत्तिकार'।

वृत्तिक्षीण—वि॰ [सं॰] दे॰ 'वृत्तिकर्षित'।

वृत्तिचक्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] क्रियाओं या व्यापारों का समूह। व्यवहारसमुच्चय। (अं॰ सिस्टम) उ॰—वह एक वृत्तिचक्र है जिसके अंतर्गत प्रत्यय, अनुभूति, इच्छा, गति या प्रवृत्ति, शरीर-धर्म सबका योग रहता है। चिंतामणि, भा॰ २, पृ॰८८।

वृत्तिच्छेद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वृत्ति या जीविका से रहित होना। २. दे॰ 'वृत्तिच्छेदन'।

वृत्तिच्छेदन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] किसी की वृत्ति या जीविका का अपघात करना जो एक दोष माना गया है।

वृत्तिता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वृत्ति का भाव या धर्म।

वृत्तिदाता—वि॰ [सं॰ वृत्तिदातृ] वृत्ति देनेवाला। जीविका चलानेवाला। आश्रयदाता [को॰]।

वृत्तिनिबंधन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वृत्तिनिबन्धन] जीविकाप्राप्ति का साधन [को॰]।

वृत्तिनिरोध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वृत्ति में उपस्थित होनेवाली बाधा [को॰]।

वृत्तिभंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वृत्तिभङ्ग] जीविका की हानि [को॰]।

वृत्तिमूल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] रोजी का सहारा। जीविका का आधार [को॰]।

वृत्तिरुशना—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] पुराणानुसार रुद्र की एक स्त्री का नाम।

वृत्तिवैकल्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वृत्ति की हानि। दे॰ 'वृत्तिभंग' [को॰]।

वृत्तिसाम्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वृत्ति+साम्य] भावानुभूति की समान स्थिति। उ॰—संभवतः काल के साथ तादात्म्य करके कवि से वृत्तिसाम्य स्थापन के द्वारा आलोचना के क्षेत्र में हमारा यह प्रयास है।—बी॰ श॰ महा॰, पृ॰ 'ग'।

वृत्तिस्थ^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जो अपनी वृत्ति या जीविका पर स्थित हो। २. वह जो आचारवान् या वृत्तियुक्त हो। ३. गिरगिट।

वृत्तिस्थ^{२}—वि॰ १. आचारवान्। २. किसी भी स्थिति या नियुक्ति में रहनेवाला (को॰)।

वृत्तिहंता—वि॰ [सं॰ वृत्तिहन्तृ] किसी की आजीविका के साधन को नष्ट करनेवाला [को॰]।

वृत्तिहा—वि॰ [सं॰ वृत्तिहन्] किसी की जीविका के साधन को नष्ट करनेवाला [को॰]।

वृत्तिहानि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'वृत्तिभंग'।

वृत्तिह्रास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जीविका छूटना। वृत्ति या जीविका न रहना [को॰]।

वृत्तेर्वारु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] खरबूजे की बेल।

वृत्त्यनुप्रास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पाँच प्रकार के अनुप्रासों में से एक प्रकार का अनुप्रास जो काव्य में एक शब्दालंकार माना जाता है। इसमें एक या कई व्यंजन वर्ण एक ही या भिन्न भिन्न रूपों में बार बार आते हैं। जैसे, अति भारी कारो घटा, कारी बारी बैस। इसमें र और ब ये दो व्यंजन कई बार आए हैं, अतः यह वृत्त्यनुप्रास हुआ।

वृत्त्युपरोध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जीविका में पड़नेवाला विघ्न [को॰]।

वृत्त्युपाय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वृत्ति या जीविका का आधार।

वृत्य^{१}—वि॰ [सं॰ वृत्य] १. जो नियुक्त करने के योग्य हो। मुकर्रर करने के काबिल। २. वरणीय। वरण करने योग्य (को॰)। ३. जिसे घेरा जाय। जो आवृत किया जाय (को॰)। ४. रक्षणीय, रखने योग्य (को॰)।

वृत्य^{२}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वृत्ति] दे॰'वृत्ति' (व्यापार)। उ॰—तीन गुननि की वृत्य जे तिन मैं तैसों होइ। —सुंदर॰ ग्रं॰, भा॰ १, पृ॰ १७३।

वृत्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. अँधेरा। २. मेघ। बादल। ३. शत्रु। दुश्मन। ४. पुराणानुसार त्वष्टा के पुत्र एक दानव या असुर का नाम वृत्रासुर।

विशेष—इसे इंद्र ने मारा था। इसी का मारने के लिये दधीचि का हड्डियों का वज्र बनाया गया था। कहते हैं, एक बार इंद्र ने विश्वरूप पुरोहित को मार डाला था। उसके पिता त्वष्टा ऋषि ने इसका बदला चुकाने के लिये यज्ञ करके उसे उत्पन्न किया। जब इसने इंद्र पर आक्रमण किया, तब इंद्र देवताओं सहित इंद्रपुरी में भाग गए। पर अंत में विष्णु की संमति से इंद्र ने दधीचि ऋषि से उनकी हड्डियाँ माँगीं और उन्हीं हड्डियों का वज्र बनाकर इससे लड़ना आरंभ किया। जब इंद्र न इसके दोनों हाथ काट डाले, तब यह इंद्र को उनके हाथी ऐरावत सहित निगल गया। तब इंद्र इसका पेट फाड़कर बाहर निकले और इसका सिर काट डाला। देवीभागवत में इसकी कथा विस्तार के साथ दी गई है। वेदों मे भी 'वृत्र असुर' का उल्लेख है; पर वहाँ जो कुछ वर्णन मिलता है, उससे आलंकारिक रूप में मेघ और अंधकार आदि के संबंध में ही 'वृत्र' शब्द आया हुआ जान पड़ता है।

५. एक पर्वत का नाम। ६. ध्वनि (को॰)। ७. चक्र (को॰)। ८. इंद्र (को॰)। ९. पर्वत। पहाड़ (को॰)। १०. पत्थर (को॰)। ११. धन (को॰)। १२. चर्म। चमड़ा (को॰)।

वृत्रखाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] इंद्र का एक नाम, जिन्होंने वृत्र नामक असुर को मारा था।

वृत्रघ्न—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वृत्र नामक असुर को मारनेवाले, इंद्र। २. वैदिक काल के एक देश का नाम जो गंगा के तट पर था।

वृत्रघ्नी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] पुराणानुसार पारियात्र नामक कुलपर्वत से निकली हुई एक नदी का नाम।

वृत्रतूर्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] युद्ध। लड़ाई।

वृत्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृत्र का भाव या धर्म। २. शत्रुता। दुश्मनी।

वृत्रद्रुट्—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रद्रुह्] इंद्र। दे० 'वृत्रघ्न' [को०]।

वृत्रद्विट्—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रद्विष्] इंद्र [को०]।

वृत्रनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्र नामक असुर को मारनेवाला, इंद्र।

वृत्रभोजन—संज्ञा पुं० [सं०] गंडोर या गुंदरी नामक साग।

वृत्ररिपु—संज्ञा पुं० [सं०] वृत्र के रिपु। इंद्र।

वृत्रवैरी—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रवैरिन्] वृत्र को मारनेवाले, इंद्र।

वृत्रशंकु—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रशङ्कु] एक प्रकार का पत्थर का खंभा। (वैदिक)।

वृत्रशत्रु—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र।

वृत्रहंता—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रहन्तृ] इंद्र [को०]।

वृत्रहा—संज्ञा पुं० [सं० वृत्रहन्] वृत्रासुर को मारनेवाले, इंद्र।

वृत्रारि—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र।

वृत्रासुर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृत्र'—४।

वृत्वा—संज्ञा पुं० [सं० वृत्वन्] आकाश। आसमान [को०]।

वृथा^{1}—वि० [सं०] बिना मतलब का। निष्प्रयोजन। व्यर्थ। फजूल।

वृथा^{2}—क्रि० वि० १. बिना मतलब के। बेफायदा। २. अनावश्यक रूप से (को०)। ३. मूर्खता से। आलस्यपूर्वक (को०)। ४. गलत या अनुचित रूप से (को०)।

वृथाकथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेकार की बात। गप शप [को०]।

वृथाकार—संज्ञा पुं० [सं०] मिथ्या रूप। खाली तमाशा (को०)।

वृथात्व—संज्ञा पुं० [सं०] वृथा होने का भाव या धर्म।

वृथादान (ऋण)—संज्ञा पुं० [सं०] वह ऋण जो चालबाज, धूर्त आदि लोगों को दिया गया हो।

वृथापक्व—वि० [सं०] जैसे तैसे अपने लिये पकाया हुआ [को०]।

वृथापलित—वि० [सं०] वयोवृद्ध होते हुए भी नासमझ [को०]।

वृथाप्रजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह माता जिसने व्यर्थ ही संतान उत्पन्न की हो [को०]।

वृथाप्रतिज्ञ—वि० [सं०] सहसा प्रतिज्ञा कर लेनेवाला। गंभीरतापूर्वक प्रतिज्ञा न करनेवाला [को०]।

वृथामति—वि० [सं०] नासमझ। निर्बुद्धि [को०]।

वृथामांस—संज्ञा पुं० [सं०] वह मांस जो किसी देवी या देवता को अभिप्रेत न हो या चढ़ाया न गया हो। ऐसा मांस खाने का निषेध है।

वृथार्तवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वंध्या स्त्री [को०]।

वृथालंभ—संज्ञा पुं० [सं० वृथालम्भ] ओषधियों को अनावश्यक रूप से काटना [को०]।

वृथालिंग—वि० [सं० वृथालिङ्ग] जिसका मूल कारण अविदित हो [को०]।

वृथालिंगी—वि० [सं० वृथालिङ्गिन्] व्यर्थ ही अनधिकारपूर्वक किसी संप्रदाय का चिह्न धारण करनेवाला [को०]।

वृथावादी—वि० [सं० वृथावादिन्] असत्यवक्ता [को०]।

वृथावृद्ध—वि० [सं०] बुद्धिहीन [को०]।

वृथोक्त—वि० [सं०] निष्प्रयोजन कहा हुआ। बेकार कहा हुआ [को०]।

वृथोत्पन्न—वि० [सं०] जिसका जन्म व्यर्थ हुआ हो [को०]।

वृथोद्यम—वि० [सं०] निरर्थक उद्यम करनेवाला [को०]।

वृद्ध^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मनुष्य की तीन अवस्थाओं में से एक अवस्था जो युवावस्था के उपरांत और सबके अंत में आती है। बुढ़ापा। जरा।

विशेष—यह अवस्था प्रायः ६० वर्ष के उपरांत आती है। इसमें मनुष्य दुर्बल और क्षीण हो जाता है, उसके सब अंग शिथिल हो जाते हैं, शरीर की धातुएँ तथा इंद्रियाँ आदि भी बराबर क्षीण होती जाती हैं, और इनके अंत में मृत्यु आ जाती है।

२. वह जो इस अवस्था में पहुँच गया हो। बुड्ढा। ३. संमानित व्यक्ति। पंडित। विद्वान्। ४. शैलज नामक गंधद्रव्य। ५. वृद्धावस्था। ६. ऋषि। संत (को०)। ७. वंशज। संतान (को०)। ८. व्याकरण में वह शब्द जिसके प्रथम स्वर का वृद्धि हुई हो (को०)। ९. गुग्गुल (को०)। १०. अस्सी साल का हाथी (को०)।

वृद्ध^{2}—वि० १. बढ़ा हुआ। पूर्णतः बढ़ा हुआ। ३. अधिक अवस्था का। ४. बड़ा। विशाल। ५. विकसित। ६ एकत्रित। संचित। ७. पठित। बुद्धिमान्। अधीत। शिक्षित। ८. योग्य। विशिष्ट [को०]।

वृद्धकंट—संज्ञा पुं० [सं० वृद्धकण्ट] इंगुदी का पेड़।

वृद्धक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृद्ध व्यक्ति। बूढ़ा आदमी। २ आख्यान। उपाख्यान। कथा वार्ता [को०]।

वृद्धकाक—संज्ञा पुं० [सं०] द्रोणकाक। पहाड़ी कौवा।

वृद्धकाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृद्धावस्था। बुढ़ापा। २. काशी का एक शिवलिंग। वृतकाल। वृद्धिकालेश्वर।

वृद्धकावेरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम।

वृद्धकृच्छ्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कृच्छ्र रोग।

वृद्धकेशव—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार सूर्य की एक मूर्ति का नाम।

वृद्धकोश—संज्ञा पुं० [सं०] बहुत धनाढ्य व्यक्ति [को०]।

वृद्धक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] वृद्ध का क्रम या पद [को०]।

वृद्धगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृद्धगङ्गा] हिमालय को एक छोटी नदी का नाम।

वृद्धगर्भा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह गर्भिणी नारी जिसका गर्भस्थ शिशु बड़ा हो गया है [को०]।

वृद्धगोनस—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप।

वृद्धता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वृद्ध का भाव या धर्म। बूढ़ापन। २. पांडित्य।

वृद्धतिक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाठा। पाढ़ा।

वृद्धत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृद्ध होने का भाव या धर्म। बुढ़ापा। २. पांडित्य।

वृद्धदार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृद्धदारक'।

वृद्धदारक—संज्ञा पुं० [सं०] विधारा नामक क्षुप।

वृद्धदारु—संज्ञा पुं० [सं०] विधारा [को०]।

वृद्धद्युम्न—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृद्धधूप—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरिस का पेड़। २. सरल का वृक्ष।

वृद्धधूमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] लिसोड़ा।

वृद्धनाभि—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी तोंद आगे को निकली हो। तोंदल। तुंदिल।

वृद्धपराशर—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धप्रधान—संज्ञा पुं० [सं०] दादा का दादा [को०]।

वृद्धप्रपितामह—संज्ञा पुं० [सं०] दादा का दादा। परदादा का पिता।

वृद्धप्रमातामह—संज्ञा पुं० [सं०] परनाना का पिता।

वृद्धबला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ककही या कंघी नामक पेड़। २. महाबला।

वृद्धबृहस्पति—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धबौधायन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धभाव—संज्ञा पुं० [सं०] वृद्धावस्था। बुढ़ापा [को०]।

वृद्धमत—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन मत [को०]।

वृद्धमनु—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धयाज्ञवल्क्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धयुवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुटनी। २. धात्री। दाई।

वृद्धराज—संज्ञा पुं० [सं०] अमलबेत।

वृद्धवय—वि० [सं० वृद्धवयस्] जो अवस्था में अधिक हो [को०]।

वृद्धवशिष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धवासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गीदड़ी।

वृद्धवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] आम का पेड़।

वृद्धविभीतक—संज्ञा पुं० [सं०] अमड़ा।

वृद्धविष्णु—संज्ञा पुं० [सं०] एक धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धवीवधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुरातन रूढ़ि का बंधन [को०]।

वृद्धवृष्णीय—वि० [सं०] अत्यंत शक्तिमान् [को०]।

वृद्धवेग—वि० [सं०] तीव्र गतिवाला। जिसमें प्रचंड वेग हो [को०]।

वृद्धशाकल्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृद्धशीली—वि० [सं० वृद्धशीलिन्] जो वृद्धों के समान शील और स्वभाववाला हो [को०]।

वृद्धश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० वृद्धश्रवस्] इंद्र।

वृद्धश्रावक—संज्ञा पुं० [सं०] कापालिक।

वृद्धसंघ—संज्ञा पुं० [सं० वृद्धसङ्घ] वृद्ध जनों की सभा [को०]।

वृद्धसूत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] कपास।

वृद्धसेवी—वि० [सं० वृद्धसेविन्] वृद्धजनों की सेवा करनेवाला जो वृद्ध लोगों की सेवा करता हो [को०]।

वृद्धहारीत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन धर्मशास्त्रकार का नाम।

वृद्धांगुलि—संज्ञा स्त्री० [सं० वृद्धाङ्गुलि] १. अंगुष्ठ। अँगूठा। २. पैर का अँगूठा।

वृद्धांगुष्ठ—संज्ञा पुं० [सं० वृद्ध + अङ्गुष्ठ] अँगूठा। उ०—महाभारत के मनीषियों ने उनके प्रति वृद्धांगुष्ठ प्रदर्शित करके प्रबल फूत्कार से उन्हें उड़ा दिया है।—प्र० सा०, पृ० ३९।

वृद्धांत—संज्ञा पुं० [सं० वृद्धान्त] वह जो संमान या प्रतिष्ठा करने योग्य हो। आदरणीय।

वृद्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्त्री जो अवस्था में वृद्ध हो गई हो। बुड्ढी औरत। २. अंगुष्ठा। अँगूठा। ३. महाश्रावणिका। ४. वंशजा स्त्री (को०)।

वृद्धाचल—संज्ञा पुं० [सं०] मदरास प्रांत के एक तीर्थ का नाम।

वृद्धाचार—संज्ञा पुं० [सं०] परंपरागत प्रथा [को०]।

वृद्धात्रि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृद्धार्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. अस्त होता हुआ सूर्य। २. संध्या। सायंकाल। साँझ [को०]।

वृद्धावस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] बुढ़ापा [को०]।

वृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बढ़ने या अधिक होने की क्रिया या भाव। बढ़ती। ज्यादती। अधिकता। जैसे,—धन धान्य की वृद्धि, संतान की वृद्धि, यश की वृद्धि। २. ब्याज। सूद। ३. वह अशौच जो घर में संतान उत्पन्न होने पर होता है। ४. अभ्युदय। समृद्धि। ५. एक प्रसिद्ध लता।

विशेष—यह लता अष्टवर्ग के अंतर्गत मानी गई है। कहते हैं, यह कोशयामल देश में कोशल पर्वत पर पाई जाती है। इसके कंद पर सफेद रोएँ और कहीं कहीं छेद होते हैं। इसका फल कपास की गाँठ के समान होता है, आजकल यह औषधि नहीं मिलती। वैद्यक में यह मधुर, शीतल, वीर्यवर्धक, गर्भ धारण करानेवाला और रक्तपित्त, खाँसी तथा क्षय रोग को नष्ट करनेवाला मानी गई है।

पर्या०—योग्या। ऋद्धि। सिद्धि। लक्ष्मी। पुष्टिदा। वृद्धिदात्री। मंगल्या। श्री। सम्पद्। जनेष्टा। भूति। सुख। जीवभद्रा।

६. राजनीति में कृषि, वाणिज्य, दुर्ग, सेतु, कुंजरबंधन, कन्याकर, बलादान, और सैन्यसंनिवेश इन आठों वर्गों का उपचय। वर्धन। स्फाति। ७. फलित ज्योतिष के विष्कंभ आदि २७ योगों के अंतर्गत ग्यारहवाँ योग।

विशेष—कहते हैं, इस योग में जन्म लेनेवाला व्यक्ति विनयी, धन का अच्छा उपयोग करनेवाला और माल खरीदने तथा बेचने में बहुत चतुर होता है।

८. संस्कृत व्याकरण में संधि का एक प्रकार जिसके अनुसार अ अथवा आ के पश्चात् दूसरे शब्द के आरंभ में ए, ऐ, तथा ओ, औ के आने पर दोनों मिलकर क्रमशः ऐ और औ हो जाते हैं। जैसे,—पुत्र + एषणा से 'पुत्रैषणा' तथा शुद्ध + ओदन से 'शुद्धोदन'। उ०—संस्कृत वैयाकरणों ने भी संस्कृत भाषा में धातु के स्वर में इसी प्रकार के परिवर्तन को लक्ष्य करके इन तीन क्रमों का गुण, वृद्धि, एवं संप्रसारण नामकरण किया था।

--भोज० भा० सा०, पृ० १०। ९. सफलता। उन्नति। (को०)। १०. धनदौलत। जायदाद (को०)। ११. ढेर। राशि। परिमाण (को०)। १२. चंद्रमा की कला का बढ़ना (को०)। १३. सूदखोरी (को०)। १४. लाभ। फायदा (को०)। १५. शक्ति या कर की वृद्धि (को०)। १६. अंडकोश वृद्धि (को०)। १७. छेदन। कर्तन (को०)। १८. संपत्ति का हरण (को०)। १९. पीड़ा (को०)। २०. ऊँचाई। उच्चता (को०)।

वृद्धिकर--वि० [सं०] [वि० स्त्री० वृद्धिकरी] बढ़ानेवाला। वृद्धि। करनेवाला। परिवर्धन करनेवाला। उ०--अल्प मूल्य की वृद्धिकरी हो।--अर्चना, पृ० २४।

वृद्धिकर्म--संज्ञा पुं० [सं० वृद्धिकर्मन्] नांदीमुख श्राद्ध। वृद्धश्राद्ध।

वृद्धिका--संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ऋद्धि नाम की ओषधि। २. सफेद अपराजिता। ३. अर्कपुष्पी।

वृद्धिजीवक, वृद्धिजीवन--संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वृद्धि (ब्याज) से अपना निर्वाह करता हो। सूद से अपना निर्वाह करनेवाला।

वृद्धिजीविका--संज्ञा स्त्री० [सं०] सूद से जीवन यापन करना [को०]।

वृद्धिद¹--संज्ञा पुं० [सं०] १. जीवक नामक क्षुप। २. शूकरकंद।

वृद्धिद²--वि० वृद्धि देनेवाला।

वृद्धिदात्री--संज्ञा स्त्री० [सं०] वृद्धि नाम की एक प्रकार को ओषधि। लताविशेष। दे० 'वृद्धि'--५।

वृद्धिपत्र--संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का शस्त्र जो सात अंगुल का होता था और जिसका व्यवहार चीरफाड़ में छेदने आदि के लिये होता था। इसका आकार प्रायः छुरे के समान होता था।

वृद्धिमान्--वि० [सं० वृद्धिमत्] १. अभिवर्धनशील। बढ़नेवाला। उन्नतिशील। २. धनाढ्य (को०)।

वृद्धियोग--संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के सत्ताइस योगों में से एक योग। विशेष दे० 'वृद्धि'--७।

वृद्धिश्राद्ध--संज्ञा पुं० [सं०] नांदीमुख नाम का श्राद्ध। विशेष दे० 'नांदीमुख'।

वृद्धोक्ष--संज्ञा पुं० [सं०] बूढ़ा बैल। उ०--बुड्ढे बैल के लिये वृद्धोक्ष शब्द प्रचलित था।--संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २४८।

वृद्ध्याजीव--संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृद्धिजीवक' [को०]।

वृद्ध्याजीवी--संज्ञा पुं० [सं० वृद्धि+आजीविन्] कुसीदक। वृद्धिजीवक।

वृद्ध्युदय--संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी प्राप्ति या उदय से लाभ ही लाभ हो।

वृद्ध्युपजीवी--संज्ञा पुं० [सं० वृद्धि+उपजीविन्] दे० 'वृद्ध्याजीव' [को०]।

वृध³--संज्ञा पुं० [सं० वृद्ध] दे० 'वृद्ध'। उ०--कुटल कुसील हीण जड़ कोढ़ी, अंधन वृध खल पंगु अजैं।--रघु० रू०, पृ० १०२।

वृधसान--संज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य [को०]।

वृधसानु--संज्ञा पुं० [सं०] १. पुरुष। आदमी। २. काम। कार्य। कृति। क्रिया। ३. पत्ता। पर्ण (को०)।

वृधु--संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक सूत्रकार जिससे भरद्वाज मुनि को बहुत सी गौएँ मिली थीं।

वृध्य--वि० [सं०] बढ़ाने के लायक। वर्धनयोग्य [को०]।

वृध्र--वि० १. कटा हुआ या नष्ट किया हुआ (को०)।

वृश¹--संज्ञा पुं० [सं०] १. अडूसा। २. अदरक। आदी (को०)। ३. चूहा। मूषक।

वृश²--संज्ञा पुं० [सं० वृष] दे० 'वृष'।

वृशा--संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की ओषधि।

वृश्चन--संज्ञा पुं० [सं०] १. वृश्चिक। बिच्छू। २. दे० 'व्रश्चन (को०)।

वृश्चि--संज्ञा पुं० [सं०] लाल गदहपूरना।

वृश्चिक--संज्ञा पुं० [सं०] १. बिच्छू नामक प्रसिद्ध कीड़ा जिसके डंक में बहुत तेज जहर होता है। विशेष दे० 'बिच्छू'। २. गोबर में उत्पन्न होनेवाला कीड़ा। शूककीट। ३. पुनर्नवा। गदहपूरना। ४. मदन वृक्ष। मैनफल। ५. वृश्चिकाली या बिच्छू नाम की लता। ६. ज्योतिष में मेष आदि बारह राशियों में से आठवीं राशि।

विशेष--इसके सब तारों से प्रायः बिच्छू का सा आकार बनता है। विशाखा नक्षत्र के अंतिम पाद से आरंभ होकर अनुराधा और ज्येष्ठा नक्षत्रों के स्थितिकाल तक यह राशि मानी जाती है। भारतीय फलित ज्योतिष के अनुसार यह राशि शीर्षोदय, श्वेतकर्ण, कफ प्रकृति, जलचर, उत्तर दिशा की अधिपति और अनेक पुत्रों तथा स्त्रियों से युक्त मानी गई है। कहते हैं, इस राशि में जन्म लेनेवाला मनुष्य धन जन से युक्त, भाग्यवान्, खल, राजसेवा करनेवाला, सदा दूसरों के धन का अभिलाषा करनेवाला, उत्साही और वीर होता है।

पर्या०--सौम्य। अंगना। युग्म। सम। स्थिर। पुष्कर। सरीसृपजाति। ग्राम्य।

७. फलित ज्योतिष के अनुसार मेष आदि बारह लग्नों में से आठवाँ लग्न।

विशेष--यह वृश्चिक राशि के उदय के समय माना जाता है। कहते हैं, जो बालक इस लग्न में जन्म लेता है, वह बहुत मोटा ताजा, खर्चीला, कुटिल, मातापिता के लिये अनिष्टकर, गंभीर और स्थिर प्रकृतिवाला, उग्र स्वभाव का, विश्वासी, हंसमुख, साहसी, गुरु और मित्रों से शत्रुता रखनेवाला, राजसेवा करनेवाला, दुःखी, दाता, नीच प्रकृति और पित्तरोगी होता है।

८. अगहन मास जिसमें प्रायः सूर्योदय के समय वृश्चिक राशि का उदय होता है। ९. कर्कट। केकड़ा (को०)। १०, गोजर। कनखजूरा (को०)। ११. एक कीड़ा जो रोएँदार होता है (को०)।

वृश्चिकपत्रा--संज्ञा स्त्री० [सं०] पूतिका शाक। पोय या पोई [को०]।

वृश्चिकपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पोई नाम का साग।

वृश्चिकपर्णी संज्ञा स्त्री० [सं०] वृश्चिकाली। नागदंतिका [को०]।

वृश्चिकप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] पोई नाम का साग।

वृश्चिकराशि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वृश्चिक'—७।

वृश्चिकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मूसाकानी। आखुकर्णी।

वृश्चिकविषापहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नकुलकंद। २. रास्ना।

वृश्चिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बिछुआ या बिच्छू नाम की घास। २ पिठवन। ३. सफेद पुनर्नवा। ४. पैर की अँगुलियों में पहनने का गहना। बिछुवा (को०)।

वृश्चिकाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिच्छू नाम की लता।

विशेष—यह लता प्राय: सारे भारत में पाई जाती और बारहों मास हरी रहती है। इसके पत्ते ५-६ अंगुल लंबे, नुकीले और अंडाकार होते हैं और उनपर तथा डंठलों पर एक प्रकार के रोएँ होते हैं, जिनके शरीर में लगने से बहुत तेज जलन होती है। इसकी जड़ का प्रयोग ओषधि रूप में होता है। वैद्यक में यह कडवी, चरपरी, बल तथा रुचि बढ़ानेवाली, तथा खाँसी, श्वास और ज्वर को दूर करनेवाली मानी गई है।

वृश्चिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पैर के अँगूठे का एक आभूषण। दे० 'वृश्चिका'—४ [को०]।

वृश्चिकेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृश्चिक राशि के अधिष्ठाता देवता—मंगल। २. बुध ग्रह का एक नाम (को०)।

वृश्चिपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पूतिका। पोई।

वृश्चिपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वृश्चिकाली। २. मेढ़ासिंगी।

वृश्चिपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वृश्चिकाली। २. मेढ़ासिंगी।

वृश्ची—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुनर्नवा। गदहपूरना।

वृश्चीक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक विशेष प्रकार की ओषधि का नाम। [को०]।

वृश्चीर—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद गदहपूरना।

वृश्चीव—संज्ञा पुं० [सं०] गदहपूरना। पुनर्नवा।

वृष—संज्ञा पुं० [सं०] १. गौ का नर। साँड़। २. कामशास्त्र के अनुसार चार प्रकार के पुरुषों में से एक प्रकार का पुरुष।

विशेष—काम शास्त्र के अनुसार वृष जातीय पुरुष शंखिनी जाति की स्त्री के लिये उपयुक्त समझा जाता है। कहते हैं, ऐसा पुरुष अनेक गुणों से युक्त, अनेक प्रकार के रतिबंधों का ज्ञाता, सुंदर और सत्यवादी होता है।

३. धर्म, जिसके चार पैर माने जाते हैं और जो इसी कारण साँड़ के रूप में माना जाता है। ४. पुराणानुसार ग्यारहवें मन्वंतर के इंद्र का नाम। ५. चूहा। ६ अड़ूसा। ७. श्रीकृष्ण या विष्णु का एक नाम। ८. शत्रु। दुश्मन। वैरी। ९. काम। १०, ऋषभ नामक ओषधि। ११. पति। स्वामी। १२. गेहूँ। १३. धमासा। १४. नदी में होनेवाला भिलावाँ। १५. ज्योतिष में मेष आदि बारह राशियों में से दूसरी राशि।

विशेष—इस राशि में कृत्तिका नक्षत्र के तीन पाद, पूरा रोहिणी नक्षत्र और मृगशिरा नक्षत्र के पहले दो पाद हैं। यह राशि श्वेतवर्ण, वातप्रकृति, वैश्य, चार पैरोंवाली और दक्षिण दिशा की स्वामिनी मानी जाती है। कहते हैं, जो व्यक्ति इस राशि में जन्म लेता है, वह सुंदर, दाता, क्षमाशील, स्त्रैण और निर्भय होता है तथा आरंभिक अवस्था में धन, बंधु, संतति आदि से रहित और अंतिम अवस्था में इन सब बातों से सुखी रहता है।

१६. फलित ज्योतिष में मेष आदि बारह लग्नों में से दूसरा लग्न।

विशेष—कहते हैं, इस लग्न में जन्म लेनेवाले मनुष्य के ओंठ और नाक मोटी तथा ललाट बहुत चौड़ा होता है, वह वातश्लेष्म प्रकृति का; भाग्यवान्, खर्चीला, माता पिता को कष्ट देनेवाला और बुरे कामों की ओर प्रवृत्ति रखनेवाला होता है। ऐसे मनुष्य को पुत्र कम और कन्याएँ अधिक होती हैं। इसकी मृत्यु किसी पशु या बलवान् व्यक्ति के द्वारा अथवा जल, शूल, पर्यटन आदि के कारण अथवा भूखों रहने से होती है।

१७. किसी वर्ग का मुख्य या प्रधान जैसे, मुनिवृष, कपिवृष (को०)। १८. सुदृढ़ या व्यायामशील व्यक्ति (को०)। १९. शिव का वृष, नंदी (को०)। २०. पुण्य। सत्कर्म (को०)। २१. कर्ण का एक नाम (को०)। २२. मुख्य अक्ष या पासा (को०)। २३. जल (को०)। २४. मंदिर की एक विशेष आकृति (को०)। २५. भवन-निर्माण के योग्य भूमि (को०)। २६. नर जाति का पशु (को०)। २७. मयूरपंख (को०)। २८. स्त्रीकक्ष। अंत:पुर (को०)। २९. शिव (को०)। ३०. सूर्य (को०)। ३१. अंगूठा। ३२. शुक्र। वीर्य (को०)। ३३. स्कंद का एक अनुचर (को०)। ३४. एक असुर (को०)। ३५. चंद्रमा के १० घोड़ों में से एक घोड़ा (को०)। ३६. कर्ण के पौत्र का नाम जो वृषसेन का पुत्र था (को०)।

वृषक—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँड़। २. महाभारत के अनुसार गांधार के एक राजकुमार का नाम। ३. एक प्रकार का आम। ४. अड़ूसा। ५. ऋषभ नामक ओषधि। ६. धमासा। दुरालभा। ७. भिलावाँ। ८. गेहूँ। ९. चूहा।

वृषकर्णिका, वृषकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुदर्शन नाम की लता। २. एक प्रकार की विधारा।

वृषकर्मा—वि० [सं० वृषकर्म्मन्] परिश्रमी बैल की तरह काम करनेवाला [को०]।

वृषका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम।

वृषकेतन—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

वृषकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव या महादेव, जिनकी ध्वजा पर बैल का चिह्न माना जाता है। २. कर्ण के एक पुत्र का नाम। ३. लाल गदहपूरना।

यौ०—वृषकेतुसुत = शिव के पुत्र। स्कंद। षण्मुख।

वृषक्रतु—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा करनेवाले, इंद्र।

वृषखादि—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सोमपान करता हो। २. कुंडल पहननेवाला (को०)।

वृषगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृषगन्धा] १. ककही या कंघी नाम का पौधा। २. एक प्रकार का विधारा।

वृषगंधिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वृषगन्धिका] दे० 'वृषगंधा'।

वृषग—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभवाहन, शिव [को०]।

वृषगण—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक ऋषियों का एक गण या समूह। उ०—वृषगण ऋग्वेद में गायक थे।—प्रा० भा० प०, पृ० १४४।

वृषचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में एक प्रकार का चक्र जिसमें एक बैल बनाकर उसके भिन्न भिन्न अंगों में नक्षत्र आदि रखते हैं और तब उसके द्वारा खेती संबंधी शुभाशुभ फल आदि निकालते हैं।

वृषण^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. कर्ण। ३. विष्णु। ४. साँड़। ५. घोड़ा। ६. वृक्ष। ७. पीड़ा का ज्ञान या उससे होनेवाली बेहोशी। ८. अंडकोष। पोता।

वृषण^2—वि० १. सींचनेवाला। उपजाऊ बनानेवाला। २. दृढ़। कठोर [को०]।

वृषणकच्छू—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंडकोश के आस पास होनेवाली वे फुंसियाँ आदि जो मैल और पसीने आदि के कारण हो जाती हैं और जिसमें खुजली होती है।

वृषणश्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रसिद्ध वैदिक राजा का नाम। २. इंद्र के घोड़े का नाम। ३. एक गंधर्व (को०)।

वृषणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] घोड़ी [को०]।

वृषणवसु—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का खजाना या कोष [को०]।

वृषदंत—संज्ञा पुं० [सं० वृषदन्त] विडाल। बिल्ली [को०]।

वृषदंश—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्ली [को०]।

वृषदंशक—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्ली।

वृषदर्भ^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार कश्मीर के एक राजकुमार का नाम। २. पुराणानुसार शिवि के एक पुत्र का नाम। ३. श्रीकृष्ण का एक नाम।

वृषदर्भ^2—वि० [सं०] इंद्र के अभिमान को दूर करनेवाला। इंद्र के दर्प को चूर करनेवाला [को०]।

वृषदेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वायुपुराण के अनुसार वासुदेव की एक स्त्री का नाम।

वृषद्वीप संज्ञा पुं० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार एक द्वीप का नाम।

वृषधर—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभध्वज शिव [को०]।

वृषध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. गणेश। ३. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम। ४. वह व्यक्ति जो बहुत पुण्यशील हो। पुण्यात्मा।

वृषध्वजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा का एक नाम।

वृषध्वांक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृषध्वाङ्क्षा] नागरमोथा।

वृषध्वांक्षी संज्ञा स्त्री० [सं० वृषध्वाङ्क्षी] दे० 'वृषध्वांक्षा'।

वृषनादी वि० [सं० वृषनादिन्] बैल की भाँति बोलनेवाला। उच्च ध्वनि करनेवाला [को०]।

वृषनामा—संज्ञा पुं० [सं० वृषनामन्] अड़ूसा।

वृषनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विडंग। बायबिडंग। २. पुराणानुसार विष्णु या श्रीकृष्ण का एक नाम।

वृषपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. नपुंसक। हिजड़ा। षंड। ३. छोड़ा हुआ साँड़ (को०)।

वृषपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वस्तांत्री या छागलांकी नाम की ओषधि जो विधारा का एक भेद है।

वृषपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] भारंगी। ब्राह्मणयष्टिका।

वृषपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मूसाकानी। आखुकर्णी। २. उदुंबरपर्णी। दंती। ३. सुदर्शना नाम की लता।

वृषपर्वा—संज्ञा पुं० [सं० वृषपर्वन्] १. शिव। महादेव। २. महाभारत के अनुसार एक दैत्य का नाम जिसकी कन्या शर्मिष्ठा का विवाह ययाति से हुआ था। ३. विष्णु का एक नाम। ४. कसेरू। ५. एक प्रकार का तृण। ६. भँगरा। ७. एक बंदर (को०)। ८. जलपात्र। लोटा (को०)। ९. मार्कंडेयपुराण में वर्णित एक राजा (को०)।

वृषपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का क्षुप [को०]।

वृषप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

वृषभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैल या सांड़। २. साहित्य में वैदर्भी रीति का एक भेद। ३. कान का छेद। ४. ऋषभ नाम की ओषधि। कामशास्त्र के अनुसार चार प्रकार के पुरुषों में श्रेष्ठ पुरुष जो शंखिनी जाति की स्त्री के लिये उपयुक्त कहा गया है। ६. सूर्य की वीथियों में से एक वीथी का नाम। उ०—चौथा वीथी का नाम वृषभ है।—बृहत्०, पृ० ५४। ७. एक प्राचीन तीर्थ का नाम। ८. श्रीकृष्ण के एक सखा का नाम। ९. एक यूथपति बंदर का नाम जो राम रावण-युद्ध में लड़ा था। १०. नर जातीय या पुंवर्गीय पशु (को०)। ११. वह जो अपने वर्ग में प्रधान हो (को०)। १२. वृष राशि का चिह्न (को०)। १३. हाथी का कान (को०)। १४. कान का छिद्र। कर्णरंध्र (को०)। १५. न्याय। धर्म (को०)।

वृषभकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

वृषभगति—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. वह सवारी जो बैल द्वारा खींची जाती हो।

वृषभता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वृषभत्व'।

वृषभतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

वृषभत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभ होने का भाव या धर्म। वृषभता।

वृषभधुज(पु)—संज्ञा पुं० [वृषभध्वज] दे० 'वृषभध्वज'।

वृषभध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. एक प्राचीन पर्वत का नाम।

वृषभध्वजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी दंती। बँगडेरा।

वृषभपल्लव—संज्ञा पुं० [सं०] अडूसा।

वृषभयान—संज्ञा पुं० [सं०] बैलगाड़ी [को०]।

वृषभवीथि—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य की वीथियों में से एक वीथी का नाम। दे० 'वृषभ'–६।

वृषभस्कंध—वि० [सं० वृषभ+स्कन्ध] जिसके कंधे चौड़े और मजबूत हों। पुष्ट कंधोंवाला [को०]।

वृषभांक—संज्ञा पुं० [सं० वृषभाङ्क] शिव। महादेव।

वृषभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुराणानुसार एक प्राचीन नदी का नाम। २. मघा, पूर्वा और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र (को०)।

वृषभाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. वह जिसकी आँखें बैल की तरह हों (को०)।

वृषभाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी लता। इनारू।

वृषभाद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम [को०]।

वृषभान(प)—संज्ञा पुं० [सं० वृषभानु] दे० 'वृषभानु'।

वृषभानु—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्री राधिका जी के पिता का नाम।

विशेष(१)—पुराणानुसार वृषभानु नारायण के अंश से उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम सुरभानु और माता का नाम पद्मावती था। ये गोकुल के बड़े सरदार थे और पहले रावल ग्राम में रहते थे, जहाँ राधिका का जन्म हुआ था। पर अंत में कंस के उपद्रव के कारण वहाँ से बरसाने में जा बसे थे।

(२) 'वृषभानु' शब्द के साथ 'कन्या' या उसका पर्यायवाची शब्द लगाने से उसका 'राधिका' अर्थ होता है। जैसे,—वृषभानुसुता, वृषभानुनंदिनी।

२. वृष राशि का सूर्य (को०)।

वृषभानुजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृषभानु की पुत्री, राधा।

वृषभानुनंदिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृषभानुनन्दिनी] राधिका।

वृषभानुसुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृषभानु की कन्या, श्रीराधिका।

वृषभासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्र की पुरी अमरावती का एक नाम।

वृषभी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विधवा स्त्री। राँड़। २. कपिकच्छु। केवाँच [को०]।

वृषभेक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

वृषमन्यु—वि० [सं०] वीर। हिम्मतवाला। साहसी [को०]।

वृषमूल—संज्ञा पुं० [सं०] अडूसे की जड़।

वृषय—संज्ञा पुं० [सं०] १. आश्रय। शरण। २. आश्रम (को०)।

वृषरवि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृषभानु'।

वृषराजकेतन—संज्ञा पुं० [सं०] वृषभध्वज शिव [को०]।

वृषराशि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिष शास्त्र के अनुसार बारह राशियों में से दूसरी राशि। उ०—वृषराशि में स्थित हो तो पैदा होते ही अग्नि का नाश होता है।—वृहत्०, पृ० १६३।

वृषरक्ष—संज्ञा पुं० [सं० वृषरक्षन्] शिव। महादेव।

वृषल—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूद्र।

यौ०—वृषलपाचक=शूद्र की रसोई बनानेवाला। वृषलयाजक=वृषल का पुरोहित। शूद्र का यज्ञादि करानेवाला।

२. वह जिसे धर्म आदि का कुछ भी ध्यान न हो। पाप और दुष्कर्म करनेवाला। ३. घोड़ा। ४. चाणक्य द्वारा प्रयुक्त सम्राट् चंद्रगुप्त का एक नाम। ५. गाजर। ६. शलगम। ७. नट। नर्तक (को०)। ८. वृषभ। बैल (को०)। ९. लहसुन (को०)। १०. वह जो जाति से बहिष्कृत हो। ब्राह्मण, क्षत्रिय या शूद्र वर्ग का वह व्यक्ति जो अपने कर्तव्य से च्युत हो (को०)। ११. बड़ी पिप्पली (को०)।

वृषलक—संज्ञा पुं० [सं०] निम्न कोटि का शूद्र [को०]।

वृषलक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुरुषलक्षण से संपन्न नारी। वह स्त्री जिसका रंग रूप पुरुष की तरह हो। ऋषभी [को०]।

वृषलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृषल होने का भाव या धर्म। वृषलपन।

वृषलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृषलता'।

वृषलांछन—संज्ञा पुं० [सं० वृषलाञ्छन] शिव। महादेव।

वृषली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्मृतियों आदि के अनुसार वह कन्या जो रजस्वला तो हो गई हो, पर जिसका अभी विवाह न हुआ हो।

विशेष—कहते हैं, ऐसी कन्या का पिता बड़ा पातकी होता है और उसे उस कन्या की भ्रूणहत्या करने का पाप लगता है।

२. वह स्त्री जो अपने पति को छोड़कर परपुरुष से प्रेम करती हो। ३. शूद्र जाति की स्त्री। वृषल की स्त्री। उ०—सोतौ वृषली पति भयौ कुलहि लगाई गारि।—सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० १९१। ४. वह स्त्री जो पाप या दुष्कर्म करती हो। ५. नीच जाति की स्त्री। ६. वह स्त्री जो मासिकधर्म से हो। रजस्वला स्त्री। ७. वह स्त्री जो मरी हुई संतान उत्पन्न करती हो। ८. वंध्या स्त्री (को०)। ९. सद्यःप्रसूता स्त्री (को०)।

वृषलीपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूद्र जाति या वर्ण की औरत का पति। २. वह पुरुष जिसने ऐसी कन्या के साथ विवाह किया हो जो विवाह से पहले ही रजस्वला हो चुकी हो। वृषली का पति।

विशेष—कहते हैं, ऐसे पुरुष को श्राद्ध आदि करने का अधिकार नहीं होता।

वृषलीफेन—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रा स्त्री का अधररस [को०]।

वृषलीसेवन—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रा के साथ संभोग करना।

वृषलोचन—संज्ञा पुं० [सं०] चूहा। मूसा।

वृषवत्—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

वृषवासी—संज्ञा पुं० [सं० वृषवासिन्] केरल देश के वृष पर्वत पर बसनेवाले शिव जी। उ०—इनके घर लेहौ अवतारा। वृषवासी हर हृदय विचारा।—शं० दि० (शब्द०)।

वृषवाह—संज्ञा पुं० [सं०] बैल पर सवार होना [को०]।

वृषवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

वृषवीभत्स—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की कौंछ या केवाँच।

वृषवृष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम ।

वृषशत्रु—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

वृषशिप्त—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक असुर का नाम ।

वृषशील—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृषल' ।

वृषशुष्म—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम जो जतुकर्ण के पोते थे ।

वृषषंड—संज्ञा पुं० [सं० वृषषण्ड] एक प्रवरकार ऋषि का नाम ।

वृषसव—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने यज्ञ करने के लिये मंगलस्नान किया हो ।

वृषसानु संज्ञा पुं० [सं०] १. मानव । आदमी । २. मृत्यु । मौत । (को०) ।

वृषसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. सफेद बड़ । २. देवकुंभी । बड़ा गूमा ।

वृषसाह्वया—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है ।

वृषसृक्की—संज्ञा पुं० [सं० वृषसृक्किन्] भीमरोल या भृंगरोल नाम का कीड़ा ।

वृषसेन—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार कर्ण के एक पुत्र का नाम ।

वृषस्कंध[1]—संज्ञा पुं० [सं० वृषस्कन्ध] शिव । महादेव ।

वृषस्कंध[2]—वि० बैल की तरह पुष्ट और ऊँचे कंधोंवाला [को०]।

वृषस्यंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वृषस्यन्ती] किसी व्यक्ति से संभोग कराने की इच्छा से आतुर । २. कामुका या लंपट औरत । कामपीड़िता स्त्री । ३. उठी हुई गाय । वृष की कामना करनेवाली गौ [को०] ।

वृषांक—संज्ञा पुं० [सं० वृषाङ्क] १. शिव । महादेव । २. साधु । धर्मात्मा । ३. जल में होनेवाला भिलावाँ । ४. नपुंसक । हिजड़ा । ५. मोर ।

वृषांकज—संज्ञा पुं० [सं० वृषाङ्कज] डमरू ।

वृषांचन—संज्ञा पुं० [सं० वृषाञ्चन] शिव । महादेव ।

वृषांड—संज्ञा पुं० [सं० वृषाण्ड] महाभारत के अनुसार एक असुर का नाम ।

वृषांतक—संज्ञा पुं० [सं० वृषान्तक] विष्णु ।

वृषा[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मूसाकाना । आखुकर्णी । २. केवाँच कैंरछ । ३. उदुंवरपर्णी । दंती । ४. बड़ी दंती । ५. असगंध । ६. मालकंगनी । ७. गौ ।

वृषा[2]—संज्ञा पुं० [सं० वृषन्] १. वृष राशि । २. साँड़ । ३. घोड़ा । ४. पीड़ा । व्यथा । ५. इंद्र । ६. कर्ण । ७. चंद्रमा । ८. अग्नि । ९. दल का मुखिया या प्रधान । १०. पीड़ा का ज्ञान न होना । ११. पुंजातीय पशु [को०] ।

वृषाकपायी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जीवंती । डोडी । २. शतावरी । ३. लक्ष्मी । ४. गौरी । ५. इंद्र की पत्नी, शची । ६. अग्नि की पत्नी, स्वाहा (को०) । ७. सूर्य का पत्नी, उषा (को०) । ८. इंद्र की माता (को०) ।

वृषाकपि—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. विष्णु । ३. अग्नि । ४. इंद्र । ५. सूर्य । ६. एक ऋषि का नाम । ७. ग्यारह रुद्रों में से एक । —प्रा० भा० प०, पृ० १२७ ।

वृषाकर—संज्ञा पुं० [सं०] उड़द । माष ।

वृषाकृति—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

वृषाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०] ।

वृषाण—संज्ञा पुं० [सं०] शिव के एक अनुचर वरण का नाम [को०] ।

वृषाणक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । महादेव । २. शिव के एक अनुचर का नाम ।

वृषाणी—संज्ञा पुं० [सं० वृषाणिन्] ऋषभक नाम की ओषधि जो अष्टवर्ग में है ।

वृषादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी । इनारुन ।

वृषादर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार शिवि के एक पुत्र का नाम ।

वृषादित ⓟ—संज्ञा पुं० [सं० वृषा दित्य] वृष राशि के सूर्य । उ०—विषम वृषादित की तृषा जिए मतीरनु सोधि । अमित, अपार, अगाध जल, मारौ मूड़ पयोधि ।—बिहारी र०, दो०, ३१७ ।

वृषादित्य—संज्ञा पुं० [सं०] वृष राशि के सूर्य । सौर ज्येष्ठ मास की संक्रांति के सूर्य ।

वृषाद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम जो केरल देश में है ।

वृषान्न—संज्ञा पुं० [सं०] पुष्टिकर भोजन [को०] ।

वृषायण—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । महादेव । २. चटक या गौरैया नामक पक्षी ।

वृषारणी—संज्ञा पुं० [सं०] गंगा का एक नाम ।

वृषारव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वे जंतु जिनकी बोली बहुत कर्कश हो । जैसे,—झिल्ली, मेढक आदि । २. एक प्रकार का मुंगरा या ताशा, नगाड़ा आदि बजाने की लकड़ी । चोब (को०) ।

वृषावाह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का जंगली धान्य [को०] ।

वृषाशील—संज्ञा पुं० [सं०] वृषशील । दे० 'वृषल' ।

वृषाश्रिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंगा का एक नाम ।

वृषासुर—संज्ञा पुं० [सं०] भस्मासुर दैत्य का एक नाम जिसने शिव से वर पाकर शिव ही का भस्म करके पार्वती को लेना चाहा था । वृकासुर । विशेष दे० 'भस्मासुर' ।

वृषाहार—संज्ञा पुं० [सं०] चूहों को खानेवाला, बिल्ली । मार्जार ।

वृषाही—संज्ञा पुं० [सं० वृषाहिन्] विष्णु ।

वृषी[1]—संज्ञा पुं० [सं० वृषिन्] मोर ।

वृषी[2]—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋषि या ब्रह्मचारी का आसन जो कुश से बना होता है [को०] ।

वृषेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० वृषेन्द्र] १. साँड़ । २. बैल ।

वृषोत्सर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का धार्मिक कृत्य ।

विशेष—वृषोत्सर्ग के इस धार्मिक कृत्य में लोग अपने मृत पिता आदि के नाम पर साँड़ पर चक्र दागकर उसे छोड़ देते हैं ।

ऐसे छोड़े हुए साँड़ों से किसी प्रकार का काम नहीं लिया जाता। कहते हैं, जिन पितरों के नाम पर साँड़ छोड़े जाते हैं, वे स्वर्ग पहुँच जाते हैं। अशौच समाप्त होने के दूसरे दिन यह कृत्य करने का विधान है।

वृषोत्साह—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

वृषोदर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

वृष्ट^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार कुकुर के एक पुत्र का नाम।

वृष्ट^{२}—वि० [सं०] १. बरसा हुआ। जो बरस चुका हो। २. जो बरस रहा हो। बरसता हुआ। ३. वर्षा की बूंदों की तरह ऊपर से नीचे गिराया हुआ [को०]।

वृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आकाश से जल बरसना। वर्षा। बारिश। मेह। २. ऊपर से बहुत सी चीजों का एक साथ गिरना या गिराया जाना। जैसे,—पुष्पवृष्टि। उ०—कर रही थी जो अलौकिक रूपरस की वृष्टि।—शंकु०, पृ० ६। ३. किसी क्रिया का कुछ समय तक लगातार होना। जैसे,—उनके बैठते ही चारों ओर से कटु वचनों की वृष्टि होने लगी।

वृष्टिकर—वि० [सं०] बरसनेवाला। वर्षा करनेवाला [को०]।

वृष्टिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शणपुष्पी। बनसनई।

वृष्टिकाम—वि० [सं०] बरसा की कामना करनेवाला [को०]।

वृष्टिकामना—संज्ञा स्त्री० [सं०] वर्षा की इच्छा [को०]।

वृष्टिकाल—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षाकाल। वर्षाऋतु [को०]।

वृष्टिघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी इलायची।

वृष्टिजीवन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह देश जहाँ की खेतीबारी केवल वर्षा पर ही निर्भर हो। देवमातृक देश या कृषिभूमि। २. चातक पक्षी।

वृष्टिदाता—संज्ञा पुं० [सं० वृष्टिदातृ] १. इंद्र। २. मेघ। बादल। ३. असुर। उ०—सायण ने असुर का अर्थ बलवान्, शत्रुहंता और वृष्टिदाता किया है।—प्रा० भा० प०, पृ० (ण)।

वृष्टिपात—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा होना। पानी बरसना [को०]।

वृष्टिभू—संज्ञा पुं० [सं०] मेढक।

वृष्टिमान^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] वह यंत्र जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि कितनी वृष्टि हुई।

विशेष—यह एक छोटा सा लंबा नल होता है, जिसमें वर्षा का जल भरता है। उसी जल की ऊँचाई इंचों आदि से नापकर निश्चय किया जाता है कि अमुक समय में इतने इंच वर्षा हुई।

वृष्टिमान्—संज्ञा पुं० [सं० वृष्टिमत्] बादल।

वृष्टिमान्^{२}—वि० बरसाऊ। बरसनेवाला [सं०]।

वृष्टिवैकृत—संज्ञा पुं० [सं०] वृहत्संहिता के अनुसार बहुत अधिक वृष्टि होना या बिलकुल वृष्टि न होना, जो उपद्रव आदि का सूचक समझा जाता है।

वृष्टिसंपात—संज्ञा पुं० [सं० वृष्टिसम्पात] पानी बरसना। वर्षा का होना [को०]।

वृष्ट्यंबु—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा का जल।

वृष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृष्णि^{१}—संज्ञा सं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. यादव वंश जिसमें श्रीकृष्ण उत्पन्न हुए थे। उ०—वृष्णि कुल कुमुद राकेश राधारमन कंस बंसाटवी धूमकेतू।—तुलसी (शब्द०)। ३. श्रीकृष्ण या विष्णु। ४. इंद्र। ५. अग्नि। ६. वायु। ७. ज्योति। प्रकाशरश्मि। ८. बैल या गौ। ९. मेढ़ा। मेष। १०. शिव (को०)। ११. एक साम (को०)।

वृष्णि^{२}—वि० १. प्रचंड। उग्र। तेज। २. पामर। नीच। ३. बली। शक्तिशाली (को०)। ४. पाखंडी (को०)। ५. क्रुद्ध। कोपाविष्ट (को०)। ६. बरसालू। वर्षणशील (को०)।

वृष्णिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वृष्णिगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

वृष्णिपाल—संज्ञा पुं० [सं०] मेषपाल। गड़ेरिया [को०]।

वृष्ण्य—संज्ञा पुं० [सं०] वीर्य।

वृष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह चीज जिससे वीर्य और बल बढ़ता हो। २. वह चीज जिसके सेवन से मन में आनंद उत्पन्न होता हो। ३. ईख। ऊख। ४. उड़द की दाल। ५. ऋषभ नामक ओषधि। ६. आँवला। ७. कमल की नाल। मृणाल। ८. शिव (को०)।

वृष्यकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृष्यकन्दा] १. बिदारी कंद। २. मूली।

वृष्यगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० वृष्यगन्धा] १. वृद्धदारक। विधारा। २. बस्तांत्री नाम की लता। ३. ककही। अतिबला।

वृष्यगंधिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वृष्यगन्धिका] ककही। अतिबला।

वृष्यचंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृष्यचण्डी] मूसाकानी। आखुकर्णी।

वृष्यपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिदारी कंद। भुइँ कुम्हड़ा।

वृष्यफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] आँवला।

वृष्यवल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिदारी कंद। भुइं कुम्हड़ा।

वृष्यवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिदारी कंद।

वृष्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अष्टवर्ग का ऋद्धि नामक ओषधि। २. शतावर। ३. आँवला। ४. केवाँच। कौंछ। ५. भुइँ आँवला। ६. बिदारी कंद। ७. ककही। अतिबला। ८ बड़ी दंती। बँगडेरा।

वृह—संज्ञा पुं० [सं० बृह, वृह] स्तवन। स्तुति। जैसे, बृहस्पति [को०]।

वृहच्चंचु—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्चञ्चु] महाचंचु नामक साग।

वृहच्चक्रभेद—संज्ञा पुं० [सं० बृहत्+चक्र+भेद] जयंती। जैंत।

वृहच्चित्त—संज्ञा पुं० [सं०] बिजौरा नीबू।

वृहच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] अखरोट।

वृहच्छफरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफरी नाम की मछली।

वृहच्छल्क—संज्ञा पुं० [सं०] झिंगवा नाम की मछली।

वृहच्छालपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाशालपर्णी। बड़ी सरिवन।

वृहच्छिंबी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृहच्छिम्बी] सेम।

वृहज्जीरक—संज्ञा पुं० [सं०] मँगरैला ।

वृहज्जीवंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वृहज्जीवन्ती] बड़ी जीवंती ।

वृहज्जीवा संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी जीवंती ।

वृहड्ढक्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का नगाड़ा या भेरी । २. पलाश भेद [को०] ।

वृहतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'वृहती' । २. उपरना । उत्तरीय वस्त्र (को०) ।

वृहती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कंटकारी । छोटी कटाई । २. बनभंटा । बड़ी कटाई । ३. बैंगन । ४. वैद्यक के अनुसार एक मर्मस्थान ।

विशेष—यह छातियों के ठीक पीछे पीठ में दोनों ओर होता है । इस मर्मस्थान पर आघात लगने से बहुत अधिक रक्त निकलता है और प्रायः मनुष्य मर जाता है ।

५. विश्वावसु नामक गंधर्व की वीणा का नाम ।

विशेष—कुछ लोगों के अनुसार 'वृहती' नारद की वीणा का नाम है ।

६. वाक्य । ७. एक प्रकार का छंद जिसके प्रत्येक चरण में भगण, मगण और सगण होता है । जैसे,—भाव सुपूजा कारज जू । प्रात गई सीता सरजू । कठमणी मध्ये सु जला । टूट परीं खोजैं अबला ।—काव्य प्र० (शब्द०) । ९. ३६ की संख्या (को०) । १०. दुपट्टा । उत्तरीय (को०) । ११. आशय । कुंड जैसे, जलाशय (को०) । दे० 'बृहती' ।

वृहतीपति—संज्ञा पुं० [सं०] बृहस्पति ।

वृहतीफल—संज्ञा पुं० [सं०] बनभटा ।

वृहत्—वि० [सं०] बड़ा भारी । महान् । जैसे,—आपने यह बहुत वृहत् कार्य उठाया है ।

वृहत्कंद—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्कन्द] १. विष्णुकंद । २. गाजर ।

वृहत्कालशाक—संज्ञा पुं० [सं०] महा कासमर्द नाम का क्षुप । कसौंदी ।

वृहत्काश—संज्ञा पुं० [सं०] उलूक नाम का तृण । खगड़ा ।

वृहत्कुक्षि—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका पेट आगे की ओर निकला हो । तोंदल ।

वृहत्कोशातकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नेनुआँ । तरोई ।

वृहत्खर्जूरिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] छुहारा ।

वृहत्ताल—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीताल या हिंताल नाम का वृक्ष ।

वृहत्तिक्त—संज्ञा पुं० [सं०] छोटा पाठा ।

वृहत्तिक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाठा । पाढ़ा ।

वृहत्तृण—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस ।

वृहत्त्रयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] संस्कृत के किरातार्जुनीय (भारवि), शिशुपालवध (माघ) और नैषध (श्रीहर्ष) महाकाव्य । उ०—महाकाव्यों की वृहत्त्रयी (किरात, माघ, नैषध) में इसका प्रमुख स्थान है ।—बी० श० महा०, पृ० २३ ।

वृहत्त्वक्—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्त्वच्] सप्तपर्ण या सतिवन नामक वृक्ष ।

वृहत्त्वच—संज्ञा पुं० [सं०] नीम का पेड़ ।

वृहत्पंचमूल—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्पञ्चमूल] बेल, सोनापाठा, गंभारी, पाँडर, और गनियारी इन पाँचों का समूह ।

वृहत्पत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथीकंद । २. पठानी लोध । ३. बथुआ नाम का साग ।

वृहत्पत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. त्रिपर्णी कंद । २. कासमर्द । कसौंदी ।

वृहत्पत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] त्रिपर्णी कंद ।

वृहत्पर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] पठानी लोध ।

वृहत्पर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] महा शणपुष्पी । बड़ी वनसनई ।

वृहत्पाटलि, वृहत्पाटली—संज्ञा स्त्री० [सं०] धतूरा ।

वृहत्पाद संज्ञा पुं० [सं०] वट का वृक्ष । बरगद ।

वृहत्पारेवत—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ा पारेवत वृक्ष ।

वृहत्पाली—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्पालिन्] बनजीरक । काली जीरी ।

वृहत्पीलु—संज्ञा पुं० [सं०] महापीलु नामक वृक्ष । पहाड़ी अखरोट ।

वृहत्पुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. केला । २. सफेद कुम्हड़ा । पेठा ।

वृहत्पुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शणपुष्पी । वनसनई ।

वृहत्पुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सन । सनई ।

वृहत्फल—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुम्हड़ा । २. कटहल । ३. जामुन । ४. चिचड़ा ।

वृहत्फला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कद्दू । लौकी । २. कड़वी लौकी । तितलौकी । ३. महेंद्रवारुणी । इनारुन । ४. बड़ा जामुन । ५. सफेद कुम्हड़ा । पेठा ।

वृहदंग—संज्ञा पुं० [सं० वृहदङ्ग] हाथी ।

वृहदम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] कमरख का पेड़ ।

वृहदश्ववार—संज्ञा पुं० [सं० वृहत्+अश्ववार] अश्वसेना का नायक । घुड़सवार सेना का संचालक । अश्वसेनाधिपति ।—प्रा० भा०, पृ० ४४४ ।

वृहदेला—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी इलायची ।

वृहद्—वि० [सं०] दे० 'वृहत्' ।

वृहद्गुह—संज्ञा पुं० [सं०] वृहद्गृह या कारुष नामक प्राचीन देश ।

वृहद्गृह—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक देश का नाम जो विंध्यपर्वत के पश्चिम में मालव देश के पास था । कारुष देश ।

वृहद्गोल—संज्ञा पुं० [सं०] तरबूज ।

वृहद्दंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वृहत्+दन्ती] बड़ी दंती । द्रवंती ।

वृहद्दल—संज्ञा पुं० [सं०] १. पठानी लोध । २. सप्तपर्ण । सतिवन । ३. श्रीताल या हिंताल नामक वृक्ष । ४. लाल लहसुन । ५. लजालू । लज्जावंती ।

वृहद्दला—संज्ञा स्त्री० [सं०] लाजवंती । लजालू ।

वृहद्द्रोणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] द्रोण नामक परिमाण ।

वृहद्ध्वल—संज्ञा पुं० [सं०] महालांगल [को०] ।

वृहद्धान्य—संज्ञा पुं० [सं०] यवनाल । ज्वार ।

वृहद्बदर—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ा बेर ।

वृहद्बला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पीतपुष्पा। सहदेई। २. पठानी लोध। ३. लजालू। लज्जावंती।

वृहद्बीज—संज्ञा पुं० [सं०] आम्रातक। अमड़ा।

वृहद्भंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० वृहद्भण्डी] त्रायमाणा नाम की लता।

वृहद्भट्टारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा का एक नाम।

वृहद्भानु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. सूर्य। ३. भागवत के अनुसार सत्यभामा के एक पुत्र का नाम। ४. चित्रक। चीता।

वृहद्रथ^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. यज्ञपात्र। ३. सामवेद के एक अंश का नाम। ४. भागवत के अनुसार शतधन्वा के एक पुत्र का नाम। ५. देवरात के एक पुत्र का नाम। ६. एक प्रकार का मंत्र।

वृहद्रथ^{2}—वि० [वि० स्त्री० वृहद्रथा] जिसके पास बहुत से रथ हों।

वृहद्रथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम।

वृहद्राय—संज्ञा पुं० [सं०] उल्लू पक्षी।

वृहद्रावी—संज्ञा पुं० [सं० वृहत् + राविन्] छोटा उल्लू [को०]।

वृहद्वर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] सोनामक्खी।

वृहद्वल्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. पठानी लोध। २. सप्तपर्ण। सतिवन।

वृहद्वल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वृहद्वल्क'।

वृहद्वल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] करेला।

वृहद्व्रात—संज्ञा पुं० [सं०] देवधान्य। पुनेरा।

वृहद्वारुणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] महेंद्रवारुणी। इनारू।

वृहद्वीज—संज्ञा पुं० [को०] अमड़ा। आम्रातक [को०]।

वृहन्नल—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाहु। बाँह। २. अर्जुन। दे० 'वृहन्नला'। ३. वृहन्नाल। बड़ा नरसल (को०)।

वृहन्नला—संज्ञा स्त्री० [सं०] अर्जुन का उस समय का नाम जब वे वनवास के उपरांत अज्ञातवास के समय राजा विराट के यहाँ स्त्री के वेश में रहकर उसकी कन्या को नाच गाना सिखलाते थे।

वृहन्नाल—संज्ञा पुं० [सं०] नरसल। नरकट।

वृहन्निब—संज्ञा पुं० [सं० वृहद्निम्ब] महानिंब। बकायन।

वृहन्मारिच—संज्ञा पुं० [सं०] गोल मिर्च।

वृहन्मरीच—संज्ञा पुं० [सं०] काली मिर्च [को०]।

वृहल्लोणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुलफा नामक साग।

वृहस्पति—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं के गुरु। विशेष दे० 'वृहस्पति'। (१, और २)।

वृही—संज्ञा पुं० [सं०] साठी धान्य।

वेंक—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्क] दक्षिण भारत का एक देश और वहाँ के निवासी [को०]।

वेंकट—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कट] द्रविड़ प्रदेश के एक पर्वत का नाम। वेंकटगिरि [को०]।

वेंकटगिरि—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कटगिरि] दक्षिण भारत के एक पर्वत का नाम जहाँ वेंकटेश्वर विष्णु का प्रसिद्ध मंदिर है।

वेंकटाचल—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कटाचल] दे० 'वेंकटगिरि'।

वेंकटाद्रि—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कटाद्रि] दे० 'वेंकटगिरि'।

वेंकटेश—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कटेश] विष्णु [को०]।

वेंकटेश्वर—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्कटेश्वर] विष्णु [को०]।

वेंघर—संज्ञा पुं० [सं० वेङ्घर] रूप यौवन का मद। सुंदरता का अभिमान [को०]।

वे—सर्व० [हिं० वह] १. वह का बहुवचन या संमानवाचक रूप। जैसे,—(क) वे लोग चले गए। (ख) वे आज न आवेंगे। २. पत्नी द्वारा पति के लिये प्रयुक्त अन्य पुरुष का सर्वनाम।

वेउ(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वेद] दे० 'वेद'। उ०—मुनिवर विप्र मंडत वेउ। मानती सकल साजत तेउ।—पृ० रा०, १८। ४३।

वेऊ—सर्व० [हिं वह + सं० अपि, हिं० भी] वह भी।

वेक—वि० [सं० एक] दे० 'एक'। उ०—जीते मरना पिव से मिलना जीना जीने का फल वेक।—दक्खिनी०, पृ० ४४१।

वेकट—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की मछली। भाकुर। २. युवक। जवान। ३. विदूषक। मसखरा। ४. जौहरी।

वेक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] अच्छी तरह ढूँढना या देखना।

वेखना†—क्रि० अ० [सं० वेक्षण, प्रा० वेक्खण > पं०] देखना उ०—हुण क्या कीजै लाडिले वेखन नहिं पावैं।—घनानंद, पृ० १८०।

वेखलाना†—क्रि० स० [सं० वेक्षण] दे० 'दिखलाना'। उ०—जिद निमाणी; तपदी, सौंहैणा मुख वेखलानी जानी।—घनानंद, पृ०, ५३६।

वेग—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रवाह। बहाव। २. शरीर में से मल मूत्र आदि निकलने की प्रवृत्ति। ३. किसी ओर प्रवृत होने का जोर। तेजी। ४. शीघ्रता। जल्दी। ५. आनंद। प्रसन्नता। खुशी। ६. कोई काम करने की दृढ़ प्रतिज्ञा या पक्का निश्चय। ७. उद्योग। उद्यम। ८. प्रवृत्ति। झुकाव। ९. वृद्धि। बढ़ती। १०. महाज्योतिष्मती। ११. लाल इनारू। १२. शुक्र। वीर्य। १३. न्याय के अनुसार चौबीस गुणों में से एक गुण।

विशेष—यह गुण आकाश, जल, तेज, वायु और मन में पाया जाता है। संसार में जो कुछ गति देखी जाती है, वह इसी गुण के कारण होती है और उक्त पाँचों में से किसी न किसी के द्वारा होती है।

१४. बाण की गति या चाल (को०)। १५. प्रेम। गाढ़ अनुराग (को०)। १६. रोग की तीव्रता (को०)। १७. विष आदि का संचार या फैलना (को०)। १८. आंतरिक भावों की बाह्य अभिव्यक्ति। २०. भावातिरेक (को०)।

वेगग—वि० [सं०] तेज चलनेवाला। तीव्रगामी [को०]।

वेगगा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेगपूर्वक चलनेवाली, नदी।

वेगघ्न—वि० [सं०] तीव्रता से प्रहार करनेवाला [को०]।

वेगदंड—संज्ञा पुं० [सं० वेगदण्ड] हाथी [को०]।

वेगदर्शी—संज्ञा पुं० [सं० वेगदर्शिन्] रामायण के अनुसार एक बंदर का नाम।

वेगधारण—संज्ञा पुं० [सं०] मल, मूत्र या शरीर के इसी प्रकार के और किसी वेग को रोकना जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है।

वेगनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] श्लेष्मा । कफ ।

विशेष—कहते हैं, शरीर से निकलनेवाला मल आदि इसी के कारण कुछ रुकता है; इसीलिये इसका यह नाम पड़ा है ।

वेगनिरोध—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर के मल मूत्र आदि वेगों को रोकना । वेगधारण ।

वेगपरिक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] रोग के वेग या तेजी का कम होना [को०] ।

वेगरोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर के मल मूत्र आदि वेगों को रोकना । वेगधारण । २. गति में बाधा । रुकावट । रोक ।

वेगवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] दक्षिण भारत की एक नदी का नाम ।

वेगवान्[1]—वि० [सं० वेगवत्] [वि० स्त्री० वेगवती] वेगपूर्वक चलनेवाला । तेज चलनेवाला ।

वेगवान्[2]—संज्ञा पुं० विष्णु ।

वेगवाहिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गंगा । २. पुराणानुसार एक प्राचीन नदी का नाम ।

वेगवाही—वि० [सं० वेगवाहिन्] वेग से युक्त । वेगी [को०] ।

वेगविघात—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर से निकलते हुए मल मूत्र आदि वेगों को सहसा रोक लेना जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक समझा जाता है ।

वेगविधारण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेगरोध' [को०] ।

वेगसर—संज्ञा पुं० [सं०] १. तेज चलनेवाला घोड़ा । २. खच्चर ।

वेगहरिण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मृग । वेगिहिरण [को०] ।

वेगा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी मालकँगनी । महाज्योतिष्मती ।

वेगाधात—संज्ञा पु० [सं०] १. अकस्मात् वेग या गति का रोकना । २. मलावरोध । कोष्ठबद्धता [को०] ।

वेगानिल—संज्ञा पुं० [सं०] वेगयुक्त वायु । आँधी । प्रचंड पवन [को०] ।

वेगार(पु)†—संज्ञा पुं० [फ़ा० बेगार।दे० 'बेगार' । उ०—वाँट जाइते वेगार घर ।—कीर्ति०, पृ० ४४ ।

वेगावतरण—संज्ञा पुं० [सं०] तीव्र गति से उतरना [को०] ।

वेगित—वि० [सं०] १. जिसमें वेग हो । वेगयुक्त । २. विलोडित । मथित । क्षुब्ध । ३. जिसमें गति लाई गई हो । तेज किया हुआ (को०) ।

वेगिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सरिता । नदी । २. एक प्रकार की नौका । युक्तिकल्पतरु के अनुसार १७६ हाथ लंबी, २२ हाथ ऊँची और १७$\frac{३}{५}$ हाथ चौड़ी नाव ।

वेगिहिरण—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकारी मृग ।

वेगी—संज्ञा पुं० [सं० वेगिन्] १. वह जिसमें बहुत अधिक वेग हो । २. धावन । हरकारा (को०) । ३. बाज नाम का पक्षी ।

वेगोदग्र—वि० [सं०] तीव्रता से प्रभाव फैलानेवाला (विष आदि)-शीघ्र असर करनेवाला [को०] ।

वेचा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भृति । मजदूरी । वेतन [को०] ।

वेजानी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोमराजी ।

वेजित—वि० [सं०] १. उत्तेजित । कंपित । क्षुब्ध । २. बढ़ाया हुआ । वर्धित [को०] ।

वेट्—संज्ञा पुं० [सं०] स्वाहा ।

विशेष—वैदिक काल में यज्ञों आदि में स्वाहा के स्थान में वेट् शब्द का व्यवहार होता था ।

वेट—संज्ञा पुं० [सं०] पीलु नामक वृक्ष [को०] ।

वेटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैश्यों की वसति या निवास । वैश्यों या वणिकों की बस्ती [को०] ।

वेटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नौका । नाव [को०] ।

वेटेरिनरी—वि० [अं०] बैल, घोड़े आदि पालतू पशुओं की चिकित्सा संबंधी । शालिहोत्र संबंधी । जैसे,—वेटेरिनरी अस्पताल ।

वेटेरिनरी अस्पताल—संज्ञा पुं० [अं० वेटेरिनरी हास्पिटल] वह स्थान या चिकित्सालय जहाँ घोड़े आदि पालतू पशुओं की चिकित्सा की जाती है । पशु चिकित्सालय ।

वेट्टचंदन—संज्ञा पुं० [सं० वेट्टचन्दन] मलयागिरि चंदन ।

वेड—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चंदन [को०] ।

वेडा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेड़ा । नाव [को०] ।

वेढ[1]—संज्ञा पुं० [प्रा०] १. आसन । स्थान । पीढ़ा । २. घेरा । लपेट । उ०—कोई मूँसारो मूँसो गयो, कंचु कसण ते लंक की वेढ, रात दिवस धनी पहरीयो ।—बी० रासो, पृ० ९७ ।

वेढ†[2]—संज्ञा पुं० [देश०] युद्ध । उ०—माह उजाली सपतमी, वेढ समीसर वार ।—रा० रू०, पृ० २७२ ।

वेढक†—वि० [देश०] लड़ाकू । उ०—बाघ फता वेढकाँ वीर वीराध विजावत ।—रा० रू०, पृ० १५७ ।

वेढमिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह रोटी या कचौड़ी जिसमें उड़द की पीठी भरी हो । बेढ़ई ।

वेढिअ†—वि० [सं० वेष्टित या देशी] ढका हुआ । आवृत ।—देशी०, पृ० ३०४ ।

वेण—संज्ञा पुं० [सं०] १. मनु के अनुसार एक प्राचीन वर्णसंकर जाति जिसकी उत्पत्ति वैदेहक माता और अंबष्ठ पिता से मानी गई है । २. सूर्यवंशी राजा पृथु के पिता का नाम । ३. बाँस की वस्तुओं को बनाने का काम करनेवाली एक जाति । बँसोर । धरिकार (को०) ।

वेणयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लता ।

वेणवी—संज्ञा पुं० [सं० वेणविन्] १. वह जिसके पास वेणु हो । २. शिव का एक नाम ।

वेणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रामायण के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम जिसे पर्णासा भी कहते हैं । २. उशीर । खस ।

वेणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देवदाली । बंदाल । २. वेणी गूँथना या बाँधना (को०) । ३. प्रोषितपतिका नायिका आदि को लटकती हुई चोटी जो एक हो (को०) । ४. जल का प्रवाह । जलधारा (को०) । ५. सरितसंगम (को०) । ६. एक नदी (को०) । ७. गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम (को०) । ८. पहले की विभक्त किंतु बाद में पुनः संयुक्त की गई संपत्ति (को०) । ९. बाँध । पुल (को०) । १०. मेंपी । मेंड़ (को०) । ११. प्रपात । निर्झर । उत्स (को०) ।

वेणिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक जनपद का नाम। २. इस देश का निवासी।

वेणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्रियों के बालों की गूँथी हुई चोटी। वेणी। २. बाँस, नरसल आदि का बना बेड़ा (को०)। ३. अनवरत प्रवाह। अटूट धारा (को०)।

वेणिनी संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसके बालों में चोटी की हुई हो [को०]।

वेणिबंध—संज्ञा पुं० [सं० वेणिबन्ध] बालों को बाँधकर बनाई गई चोटी [को०]।

वेणिमाधव—संज्ञा पुं० [सं०] त्रिवेणी संगम के देवता विष्णु की मूर्ति।

वेणिवेधनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जोंक।

वेणिवेधिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कंकतिका। कंघी [को०]।

वेणी[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्त्रियों के बालों की गूँथी हुई चोटी। २. जल का प्रवाह। पानी का बहाव। ३. भीड़ भाड़। ४. देवदाली। ५. एक प्राचीन नदी का नाम। ६. भेड़। ७ पुल। बाँध। बंधा (को०)। ८. देवताड। दे० 'वेणि'।

वेणी[2]—संज्ञा पुं० [सं० वेणिन्] नागविशेष [को०]।

वेणीग—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

वेणीदान—संज्ञा पुं० [सं०] वेणी या बाल कटवाने का एक संस्कार जो प्रयाग आदि तीर्थों में संपन्न कराते हैं [को०]।

वेणीफल—संज्ञा पुं० [सं०] देवदाली का फल।

वेणीमूल—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

वेणीमूलक—संज्ञा पुं० [सं०] उशीर। खस।

वेणीर—संज्ञा पुं० [सं०] १. नीम का पेड़। २. रीठा। अरिष्टक वृक्ष।

वेणीसंवरण—संज्ञा पुं० [सं०] वेणी को बाँधना। वेणीबंधन [को०]।

वेणीसंहरण—संज्ञा पुं० [सं०] चोटी बाँधना। जूड़ा बाँधना [को०]।

वेणीसंहार—संज्ञा पुं० [सं० वेणी + संहार] १. जूड़ा बाँधना। बिखरे केशों को सुधारकर चोटी बाँधना। २. भट्ट नारायण कृत संस्कृत का एक नाटक [को०]।

वेणीस्कंध—संज्ञा पुं० [सं० वेणीस्कन्ध] महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम।

वेणु—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस। २. बाँस की बनी हुई वंशी। ३. एक प्राचीन राजा का नाम। दे० 'वेण'। ४. बेंत। वेंस (को०)। ५. ध्वजा। केतु (को०)।

वेणुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह लकड़ी या छड़ी जिससे गौओं, बैलों आदि को हाँकते हैं। २. अंकुश। आँकुस। ३. छोटी वंशी। बाँसुरी। ४. इलायची। ५. एक जनपद (को०)।

वेणुकर्कर—संज्ञा पुं० [सं०] कनेर का पेड़। करवीर का पेड़।

वेणुका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बाँसुरी। वंशी। २. एक प्रकार का वृक्ष जिसका फल बहुत जहरीला होता है। ३. हाथी को चलाने का प्राचीन काल का एक प्रकार का अंकुश या दंड जिसमें बाँस का दस्ता लगा होता था।

वेणुकार—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बाँस से बाँसुरी बनाता हो। वंशी बनानेवाला।

वेणुकीय—वि० [सं०] वेणुसंबंधी। वेणु का।

वेणुकीया—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह जगह जहाँ बाँस बहुत अधिक उत्पन्न हो [को०]।

वेणुगुल्म—संज्ञा पुं० [सं०] बाँसों का झुरमुट। बाँस की कोठी [को०]।

वेणुग्रव—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की ओषधि।

वेणुजंघ—संज्ञा पुं० [सं० वेणुजङ्घ] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन मुनि का नाम।

वेणुज—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह चीज जो बाँस से उत्पन्न हुई हो। जैसे अग्नि आदि। २. बाँस के फूल में होनेवाले दाने, जो चावल कहलाते हैं और जो पीसकर ज्वार आदि के आटे के साथ खाए जाते हैं। बाँस का चावल। ३. गोल मिर्च।

वेणुजमुक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाँस में होनेवाला एक प्रकार का गोल दाना जो प्रायः मोती कहलाता है।

वेणुजाल—संज्ञा पुं० [सं० वेणु + जाल] बँसवारी। बाँस की कोठी। बाँसों का झुरमुट [को०]।

वेणुदत्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वेणुदल—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस को चीरकर बनाया हुआ फट्टा या बड़ी खपाची [को०]।

वेणुदारि—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजकुमार का नाम।

वेणुदारी[1]—संज्ञा पुं० [सं० वेणुदारिन्] दानवविशेष [को०]।

वेणुदारी[2]—वि० बाँस को चीरने या फाड़नेवाला [को०]।

वेणुध्म—संज्ञा पुं० [सं०] वंशीवादक। बाँसुरी बजानेवाला [को०]।

वेणुन—संज्ञा पुं० [सं०] मिर्च।

वेणुनिर्लेखन—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस की छाल।

वेणुनिस्रुति—संज्ञा पुं० [सं०] ईख। ऊख।

वेणुनृत्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] तंत्र के अनुसार एक देवी [को०]।

वेणुप—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश का नाम जो रेणुप भी कहलाता था। २. इस देश का निवासी।

वेणुपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस का पत्ता।

वेणुपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] सर्प की एक जाति। सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप।

वेणुपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वंशपत्री। हिंगुपर्णी।

वेणुपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वेणुपत्रिका' [को०]।

वेणुपुर—संज्ञा पुं० [सं०] आधुनिक बेलगाँव का प्राचीन नाम।

वेणुबीज—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस के फूल में होनेवाले छोटे दाने जो ज्वार आदि के आटे के साथ पीसकर खाए जाते हैं। बाँस का चावल।

वेणुमंडल—संज्ञा पुं० [सं० वेणुमण्डल] महाभारत के अनुसार कुशद्वीप के एक वर्ष का नाम।

वेणुमती—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार पश्चिमोत्तर देश की एक नदी का नाम ।

वेणुमय—वि० [सं०] बाँस का बना हुआ ।

वेणुमान्—संज्ञा पुं० [सं० वेणुमत्] १. पुराणानुसार एक वंश (वर्ष) का नाम । २. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम । ३. ज्योतिष्मान् के एक पुत्र का नाम (को०) । ४. वह जो बाँस का बना हुआ हो (को०) ।

वेणुमुद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] तांत्रिकों की एक प्रकार की मुद्रा ।

वेणुयव—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस के फूलों में होनेवाले दाने जो ज्वार आदि के साथ पीसकर खाए जाते हैं । बाँस का चावल ।

विशेष—वैद्यक में यह रुक्ष, शीतल, कषाय और कफ, पित्त, मेद, कृमि तथा विष आदि का नाशक तथा बल और वीर्यवर्धक कहा गया है ।

वेणुयष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाँस की लाठी या छड़ी [को०] ।

वेणुवंश—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक राजा का नाम ।

वेणुवन—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजगृह के पास का एक उपवन । राजा बिंबिसार ने गौतम बुद्ध को बुलाकर यहीं ठहराया था । उ०—जब भगवान् बुद्ध राजगृह के वेणुवन में विहार कर रहे थे ।—गो० ज०, पृ० ९१ । २. बाँसों का जंगल ।

वेणुवाद—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वंशी बजाता हो । बाँसुरी बजानेवाला ।

वेणुवादक—संज्ञा पुं० [सं०] बाँसुरी बजानेवाला । वंशीवादक [को०] ।

वेणुवादन, वेणुवाद्य—संज्ञा पुं० [सं०] वंशी बजाना [को०] ।

वेणुवादिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वंशी बजानेवाली स्त्री । २. बाँसुरी बजाती हुई यक्षिणी की प्रस्तरप्रतिमा । उ०—त्रिपुरी में वेणुवादिनी, सुदर्शना, नागी इत्यादि कई प्रकार की यक्षिणियों की प्रतिमाएँ रखी हैं ।—शुक्ल अभि० ग्रं०, पृ० १९४ ।

वेणुविदल—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस का फट्टा [को०] ।

वेणुवीणाधरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम ।

वेणुवैदल—वि० [सं०] वेणुविदल का बना हुआ । बाँस की खपाचियों का बना हुआ ।

वेणुशय्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाँस की बनी शय्या [को०] ।

वेणुहय—संज्ञा पुं० [सं०] एक यदुवंशी का नाम [को०] ।

वेणुहोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] धृष्टकेतु के एक पुत्र का नाम ।

वेण्य—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार विंध्य पर्वत से निकली हुई एक नदी का नाम ।

वेण्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार पारियात्र पर्वत की एक नदी का नाम ।

वेण्वातट—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश का नाम जो वेणा या वेण्वा नदी के तट पर था । २. इस देश का निवासी ।

वेतंड—संज्ञा पुं० [सं० वेतण्ड] गज । हाथी । दे० 'वितंड' [को०] ।

वेतंडा—संज्ञा स्त्री० [सं० वेतण्डा] देवी दुर्गा का एक रूप [को०] ।

वेतंद—संज्ञा पुं० [सं० वेतन्द] हाथी [को०] ।

वेत—संज्ञा पुं० [सं० वेतस्] दे० 'बेंत' ।

वेतन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह धन जो किसी को कोई काम करने के बदले में दिया जाय । पारिश्रमिक । उजरत । २. वह धन जो बराबर कुछ निश्चित समय तक, प्रायः एक मास तक, काम करने पर मिले । तनखाह । दरमाहा । महीना ।

क्रि० प्र०—देना । —पाना । —मिलना ।

३. चाँदी । रजत । ४. वृत्ति । जीविका (को०) ।

वेतनकल्पना—संज्ञा स्त्री० [सं०] तनखाह नियत करना ।

वेतनकालातिपातन—संज्ञा पुं० [सं०] तनखाह देने में देर करना ।

विशेष—चाणक्य के मत से यह व्यवस्थापकों का दोष है और एतदर्थ वे दंड्य कहे गए हैं ।

वेतननाश—संज्ञा पुं० [सं०] तनखाह या मजदूरी जब्त हो जाना ।

विशेष—चाणक्य के समय में यह राजनियम था कि जो कारीगर ठीक ढंग से काम नहीं करते थे या कहा कुछ जाय और करते कुछ थे, उनका वेतन जब्त हो जाता था ।

वेतनभुक्—संज्ञा पुं० [सं० वेतनभुज्] दे० 'वेतनभोगी' [को०] ।

वेतनभोगी—संज्ञा पुं० [सं० वेतनभोगिन्] वह जो वेतन लेकर काम करता हो । तनखाह पर काम करनेवाला ।

वेतनादान—संज्ञा पुं० [सं०] पारिश्रमिक न देना । वेतन न देना [को०] ।

वेतनी—वि० [सं० वेतनिन्] वेतनभोगी । वेतन पानेवाला [को०] ।

वेतस—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेंत । २. जलबेंत । ३. बड़वानल । ४. बिजौरा नीबू (को०) ।

वेतसक—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन जनपद का नाम ।

वेतसगृह—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत की बनी झोपड़ी या मंडप [को०] ।

वेतसपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस का पत्ता । २. दे० 'वेतसपत्रक' ।

वेतसपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र जो प्रायः एक अंगुल मोटा और चार अंगुल लंबा होता था । इसका व्यवहार चीरफाड़ में होता था ।

वेतसपरीक्षिप्त—वि० [सं०] बेंतों से घिरा हुआ । जैसे, स्थान या भूमि [को०] ।

वेतसवृत्ति—वि० [सं०] बेंत के समान झुक जाने का स्वभाव [को०] ।

वेतसाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] अम्लवेत ।

वेतसिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

वेतसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वेतस' ।

यौ०—वेतसीवृत्ति=बेंत के समान झुक जाने का स्वभाव या लचीलापन ।

वेतसु—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैदिक काल के एक असुर का नाम ।

वेतस्वान्—संज्ञा पुं० [सं० वेतस्वत्] प्रदेश या स्थान जो बेंतों से भरा हुआ हो [को०]।

वेता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वेतन'।

वेताल—संज्ञा पुं० [सं०] १. द्वारपाल। संतरी। २. शिव के एक गणाधिप। ३. पुराणों के अनुसार भूतों की एक प्रकार की योनि। बैताल। उ०—गुटिका, पादुका, रस, परस, खहु, वेताल, यक्षिणी आठह्नु ये उपसिद्धि तें समन्वित।—वर्ण०, पृ० ३।

विशेष—इस योनि के भूत साधारण भूतों के प्रधान माने जाते हैं। ये प्रायः श्मशानों आदि में रहते हैं।

४. वह शव जिसपर भूतों ने अधिकार कर लिया हो। ५. छप्पय के छठे भेद का नाम, जिसमें ६५ गुरु और २२ लघु, कुल ८७ वर्ण या १५२ मात्राएँ, अथवा ६५ गुरु और १८ लघु, कुल ८३ वर्ण या १४८ मात्राएँ होती हैं।

वेतालकर्मज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेतालकर्म जानता हो। वेताल कर्म का जानकार।

वेतालग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का भूतग्रह।

विशेष—कहते हैं, जिसपर इस ग्रह का आक्रमण होता है उसमें बहुत से दोष आ जाते हैं। वह प्रायः काँपता रहता है, सच बोलता है और फूल, माला तथा सुगंधि आदि बहुत पसंद करता है।

वेतालजननी—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्कंद की एक मातृका का नाम [को०]।

वेतालभट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] विक्रम की सभा के नौ रत्नों में से एक का नाम।

वेतालसाधन—संज्ञा पुं० [सं० वेताल+साधन] वेताल को सिद्ध करने का काम। साधना से वेताल को वश में करना [को०]।

वेतालसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बौद्ध तंत्रानुसार वेताल का अलौकिक सामर्थ्य। २. साधना द्वारा वेताल को वशीभूत करना जिससे अलौकिक एवं असंभव कार्य भी संभव कर दिखाते हैं [को०]।

वेताला, वेताली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा [को०]।

वेतालासन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का तंत्रोक्त आसन [को०]।

वेतासुरपु—संज्ञा पुं० [सं० वेत्रासुर, प्रा० वेत्तासुर] दे० 'वेत्रासुर'। उ०—किधौं इंद्र वेतासुरं जुद्ध बीयं। किधों तारका युद्ध सुर ससि कीयं।—पृ० रा०, ६१।२०६०।

वेत्ता[१]—वि० [सं० वेत्तृ] जाननेवाला। ज्ञाता। जानकार। जैसे,—तत्ववेत्ता, शास्त्रवेत्ता।

वेत्ता[२]—संज्ञा पुं० १. तत्वज्ञ ऋषि। २. ज्ञाता। ३. पति जो विवाह में कन्या रूप वधू पाता है। ४. प्राप्त करनेवाला व्यक्ति [को०]।

वेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेंत। २. दंड। विशेषकर द्वारपाल का दंड (को०)। ३. वृत्रासुर (को०)। ४. बाँसुरी की नली (को०)।

वेत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] रामसर। सरपत।

वेत्रकरीर—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत का कनखा या कोपल [को०]।

वेत्रकार—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बेंत के सामान बनाता हो।

वेत्रकीय—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान या देश जहाँ बेंत की अधिकता हो।

वेत्रकूट—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार हिमालय की एक चोटी का नाम।

वेत्रगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० वेत्रगङ्गा] हिमालय से निकली हुई एक नदी का नाम।

वेत्रग्रहण—संज्ञा पुं० [सं०] दरबान का काम। वेत्रधर या संतरी का काम [को०]।

वेत्रदंडिक—संज्ञा पुं० [सं० वेत्रदण्डक] द्वारपाल। संतरी [को०]।

वेत्रधर, वेत्रधारक—संज्ञा पुं० [सं०] १. द्वारपाल। संतरी। २. लठैत। लठबंद।

वेत्रधारी—संज्ञा पुं० [सं० वेत्रधारिन्] दे० 'वेत्रधर' [को०]।

वेत्रपट्टिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेंत की चटाई। वेत्र का बुना हुआ आस्तरण [को०]।

वेत्रपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] छड़ीबरदार। द्वाररक्षक [को०]।

वेत्रभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेत्रधर' [को०]।

वेत्रमूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] यवतिक्ता। शंखिनी।

वेत्रयष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेंत की छड़ी [को०]।

वेत्रलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेत्रयष्टि। बेंत की छड़ी [को०]।

वेत्रवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बेतवा नदी जो मालवे से निकलकर कालपी के पास यमुना में मिलती है। उ०—इक्क लक्ख दल मिलियव वेत्रवती के तीर।—प० रासो, पृ० ८८। २. द्वाररक्षिका।

वेत्रहस्त—संज्ञा पुं० [सं०] द्वारपाल। छड़ीबरदार। वेत्रधर [को०]।

वेत्रहा—संज्ञा पुं० [सं० वेत्रहन्] इंद्र।

वेत्राघात, वेत्राभिघात—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत से मारना [को०]।

वेत्राम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] अम्लबेंत। वेतसाम्ल [को०]।

वेत्रावती—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वेत्रवती'।

वेत्रासन—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत का बना हुआ किसी प्रकार का आसन।

वेत्रासुर—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रसिद्ध असुर का नाम जो प्राग्ज्योतिषपुर का राजा था।

विशेष—इसने पहले समस्त संसार को जीतकर फिर इंद्र, अग्नि, और यम पर विजय प्राप्त की थी। अंत में इंद्र ने इसे मार डाला था। कहते हैं, यह सिंधुद्वीप नामक राजा का पुत्र था और वेत्रवती नदी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

वेत्रिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार प्राचीन काल के एक जनपद का नाम। २. इस जनपद का निवासी। ३. द्वारपाल। संतरी।

वेत्री—संज्ञा पुं० [सं० वेत्रिन्] १. द्वारपाल। संतरी। चोबदार। असाबरदार। २. वह जिसके हाथ में वेत्र हो।

वेदंड—संज्ञा पुं० [सं० वेदण्ड] हाथी। वेतंड।

वेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी विषय का, विशेषतः धार्मिक या आध्यात्मिक विषय का सच्चा और वास्तविक ज्ञान। २. वृत। ३. वित्त। ४. यज्ञांग। ५. भारतीय आर्यों के सर्वप्रधान और सर्वमान्य धार्मिक ग्रंथ जिनकी संख्या चार है और जो ब्रह्मा के चारों मुखों से निकले हुए माने जाते हैं। आम्नाय। श्रुति।

विशेष—आरंभ में वेद केवल तीन ही थे—ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद (दे० उक्त तीनों शब्द)। इनमें ऋग्वेद पद्य में है और यजुर्वेद गद्य में और सामवेद गाने योग्य गीत या साम हैं। इसीलिये प्राचीन साहित्य में 'वेदत्रयी' शब्द का ही अधिक प्रयोग देखने में आता है, यहाँ तक की मनु ने भी अपने धर्मशास्त्र में अनेक स्थानों पर 'वेदत्रयी' शब्द का ही व्यवहार किया है। चौथा अथर्ववेद पीछे से वेदों में संमिलित हुआ था और तबसे वेद चार माने जाने लगे। इस चौथे या अंतिम वेद में शांति तथा पौष्टिक अभिचार, प्रायश्चित्त, तंत्र, मंत्र आदि विषय हैं। वेदों के तीन मुख्य भाग हैं जो संहिता, ब्राह्मण और आरण्यक या उपनिषद् कहलाते हैं। संहिता शब्द का अर्थ संग्रह है, और वेदों के संहिता भाग में स्तोत्र, प्रार्थना, मंत्रप्रयोग, आशीर्वादात्मक सूक्त, यज्ञविधि से संबंध रखनेवाले मंत्र और अरिष्ट आदि की शांति के लिये प्रार्थनाएँ आदि संमिलित हैं। वेदों का यही अंश मंत्र भाग भी कहलाता है। ब्राह्मण भाग में एक प्रकार से बड़े बड़े गद्य ग्रंथ आते हैं जिनमें अनेक देवताओं की कथाएँ, यज्ञ संबंधी विचार और भिन्न भिन्न ऋतुओं में होनेवाले धार्मिक कृत्यों के व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक महत्व का निरूपण है। इनमें कथाओं आदि का जो अंश है, वह अर्थवाद कहलाता है, और धार्मिक कृत्यों की विधियोंवाले अंश को विधि कहते हैं। वनों में रहनेवाले यति, संन्यासी आदि परमेश्वर, जगत् और मनुष्य इन तीनों के संबंध में जो विचार किया करते थे, वे उपनिषदों और आरण्यकों में संगृहीत हैं। इन्हीं में भारतवर्ष का प्राचीनतम तत्वज्ञान भरा हुआ है। यह मानो वेदों का अंतिम भाग है, और इसीलिये वेदांत कहलाता है।

वेदों का प्रचार बहुत प्राचीन काल से और बहुत विस्तृत प्रदेश में रहा है, इसलिये कालभेद, देशभेद और व्यक्तिभेद आदि के कारण वेदों के मंत्रों के उच्चारण आदि में अनेक पाठभेद हो गए हैं। साथ ही पाठ में कहीं कहीं कुछ न्यूनता और अधिकता भी हो गई है। इस पाठभेद के कारण संहिताओं को जो रूप प्राप्त हुए हैं, वे शाखा कहलाते हैं, और इस प्रकार प्रत्येक वेद की कई कई शाखाएँ हो गई हैं। चारों वेदों से निकली हुई चार विद्याएँ कही गई हैं, और जिन ग्रंथों में इन चारों विद्याओं का वर्णन है, वे उपवेद कहलाते हैं। प्रत्येक वेद का एक स्वतंत्र उपवेद माना जाता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद ये छह वेदों के अंग या वेदांग कहलाते हैं।

वेदों का स्थान संसार के प्राचीनतम इतिहास में बहुत उच्च है। इनमें भारतीय आर्यों की आरंभिक, आध्यात्मिक, सामाजिक और नैतिक सभ्यता का बहुत अच्छा दिग्दर्शन है। भारतीय आर्य या हिंदू लोग इन्हें अपौरुषेय और ईश्वरकृत मानते हैं। लोगों का विश्वास है कि ब्रह्मा ने अपने चारों मुखों से वेद कहे हैं; और जिन जिन ऋषियों ने जो मंत्र सुनकर संगृहीत किए हैं वे ऋषि उन मंत्रों के द्रष्टा हैं। प्रायः सभी संप्रदायों के लोग वेदों को परम प्रामाण्य मानते हैं। स्मृतियों और पुराणों आदि में वेद देवताओं आदि के मार्गदर्शक, नित्य, अपौरुषेय और अप्रमेय कहे गए हैं। ब्राह्मणों और उपनिषदों में तो यहाँ तक कहा गया है कि वेद सृष्टि से भी पहले के हैं और उनका निर्माण प्रजापति ने किया है। कहा जाता है, वेदों का वर्तमान रूप में संग्रह और संकलन महर्षि व्यास ने किया है; और इसीलिये वे वेदव्यास कहे जाते हैं। विष्णु और वायुपुराण में कहा गया है कि स्वयं विष्णु ने वेदव्यास का रूप धारण करके वेद के चार भाग किए और क्रमशः पैल, वैशंपायन, जैमिनि और सुमंत इन चार ऋषियों को दिए। वेदांती लोग वेदों को ब्रह्म से निकला हुआ मानते हैं, और जैमिनि तथा कपिल इन्हें स्वतःसिद्ध कहते हैं।

वेदों के रचनाकाल के संबंध में विद्वानों में बहुत अधिक मतभेद है। मैक्समूलर आदि कई पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि वेदों की रचना ईसा से प्रायः हजार डेढ़ हजार बरस पहले उस समय हुई थी, जिस समय आर्य लोग आकर पंजाब में बसे थे। परंतु लोकमान्य तिलक ने ज्योतिष संबंधी तथा अन्य कई आधारों पर वेदों का समय ईसा से लगभग ४५०० वर्ष पूर्व स्थिर किया है। बुह्लर आदि विद्वानों का मत है कि आर्य सभ्यता ईसा से प्रायः चार हजार वर्ष के पहले की है और वैदिक साहित्य की रचना ईसा से प्रायः तीन हजार वर्ष पहले हुई है; और अधिकांश लोग यही मत मानते हैं।

६. कुश का पूला (को०)। ७. विष्णु का एक नाम (को०)। ८. चार की संख्या (को०)। ९. विधि। कर्मकांड (को०)। १०. व्याख्या। कारिका (को०)। ११. एक छंद (को०)। १२. स्मृतिसाहित्य (को०)। १३. अनुभूति (को०)। १४. प्राप्ति (को०)। १५. वित्त (को०)।

वेदक—वि० [सं०] ज्ञान करानेवाला। परिचय करानेवाला। होश या चेतना में लानेवाला।

वेदकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० वेदकर्तृ] १. वह जिसने वेदों की रचना की। वेदों का रचयिता। २. सूर्य। ३. शिव। ४. विष्णु। ५. वर पक्ष के बड़े बूढ़े लोग जो विवाह हो चुकने के उपरांत वेदी पर बैठे हुए वर और वधू को आशीर्वाद देने के लिये जाते हैं।

वेदकार—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों का रचयिता।

वेदकारण—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम (को०)।

वेदकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० वेदकुम्भ] एक वैदिक आचार्य का नाम।

वेदकुशल—संज्ञा पुं० [सं०] वेदज्ञ (को०)।

वेदकौलेयक—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम ।

वेदगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० वेदगङ्गा] दक्षिण भारत की एक नदी का नाम जो कोल्हापुर राज्य से निकलकर कृष्णा नदी में मिलती हैं ।

वेदगत—वि० [सं०] चतुर्थ स्थान का । चौथे स्थानवाला [को०] ।

वेदगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मा । २. विष्णु (को०) । ३. ब्राह्मण ।

वेदगर्भा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सरस्वती नदी । २. रेवा नदी ।

वेदगर्भापुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

वेदगांभीर्य—संज्ञा पुं० [सं० वेदगाम्भीर्य] वेदों की गंभीरता या गूढ़ अर्थ ।

वेदगाथ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचोन ऋषि का नाम ।

वेदगुप्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीकृष्ण का एक नाम । २. भागवत के अनुसार पराशर के एक पुत्र का नाम ।

वेदगुह्य—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

वेदघोष—संज्ञा पुं० [सं०] वदध्वनि [को०] ।

वेदजननी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सावित्री जो वेद की माता मानी जाती है ।

वेदज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेदों का ज्ञाता हो । वेद जाननेवाला । २. वह जो ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर चुका हो । ब्रह्मज्ञानी ।

वेदतत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वेद का प्रमुख उद्देश्य । ब्रह्मज्ञान [को०] ।

वेदतात्पर्य—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों का वह अर्थ जो समुचित और अभिप्रेत हो [को०] ।

वेदतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

वेदत्रय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेदत्रयी' [को०] ।

वेदत्रयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋक्, यजुः तथा साम ये तीनों वेद । उ०—उ०—वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योगमयी है ।—केशव (शब्द०) ।

वेदत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वेद का भाव या धर्म ।

वेददक्षिणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेद विद्या पढ़ाने की दक्षिणा । वेदाध्ययन की दक्षिणा [को०] ।

वेददर्श—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन मुनि का नाम ।

वेददर्शन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो देखने में वेदों का स्वरूप जान पड़े ।

वेददर्शी—संज्ञा पुं० [सं० वेददर्शिन्] वह जो वेदों का ज्ञाता हो ।

वेददल—वि० [सं०] १. चार दलों या पत्तोंवाला । २. चार सेनाओं या समूहोंवाला [को०] ।

वेददान—संज्ञा पुं० [सं०] वेद पढ़ाना ।

वेददीप—संज्ञा पुं० [सं०] महीधर का किया हुआ शुक्लयजुर्वेद का भाष्य ।

वेददृष्ट—वि० [सं०] वेद द्वारा प्रमाणित [को०] ।

वेदधारण—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों को कंठाग्र रखना [को०] ।

वेदध्वनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] सस्वर वेदपाठ से होनेवाली ध्वनि । वेदघोष [को०] ।

वेदन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेदना' ।

वेदना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुःख या कष्ट आदि का होनेवाला अनुभव । पीड़ा । व्यथा । तकलीफ । २. बौद्धों के अनुसार पाँच स्कंधों में से एक स्कंध । ३. चिकित्सा । इलाज । ४. चमड़ा । ५. ज्ञान । प्रत्यक्ष ज्ञान (को०) । ६ अनुभूति । भावना (को०) । ७. प्राप्ति (को०) । ८. संपत्ति (को०) । ९. भेंट । उपहार (को०) । १०. विवाह (को०) । ११. उच्च वर्ग के पुरुष के साथ शूद्रा का विवाह (को०) ।

वेदनाद—संज्ञा पुं० [सं०] वेदध्वनि । वेदघोष [को०] ।

वेदनिंदक—संज्ञा पुं० [सं० वेदनिन्दक] १. वह जो वेदों की निंदा करता हो । वेदों की बुराई करनेवाला । २. नास्तिक । ३. भगवान् बुद्ध का एक नाम । ४. बौद्ध या जैन धर्म का अनुयायी ।

वेदनिंदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदों मे विश्वास न करना । वेदों की निंदा या बुराई [को०] ।

वेदनिंदी—वि० [सं० वेदनिन्दिन्] दे० 'वेदनिंदक' [को०] ।

वेदनिधि—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी निधि वेद हो । ब्राह्मण जो वेदज्ञ हो [को०] ।

वेदनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] त्वचा । चमड़ा [को०] ।

वेदनीय—वि० [सं०] १. जानने योग्य । २. कष्टदायक । जो वेदना उत्पन्न करे । ३. बताने योग्य । ज्ञान कराने योग्य । जताने योग्य (को०) ।

वेदपठिता—वि० [सं० वेदपठितृ] वेदपाठ करनेवाला [को०] ।

वेदपथ—संज्ञा पुं० [सं०] वेदविहित आचरण । वेदमार्ग [को०] ।

वेदपथी—संज्ञा पुं० [सं० वेदपथिन्] वेदपथ । वेदमार्ग [को०] ।

वेदपाठ—संज्ञा पुं० [सं०] वदों का सस्वर पठन [को०] ।

वेदपाठक—संज्ञा पुं० [सं०] वेदपाठी [को०] ।

वेदपाठी—संज्ञा पुं० [सं० वेदपाठिन्] वेदपाठ करनेवाला ब्राह्मण [को०] ।

वेदपारग—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेदों का ज्ञाता हो । २. वह जो वैदिक कर्मों का ज्ञाता हो ।

वेदपुण्य—संज्ञा पुं० [सं०] वेदपाठ का कार्य । वेदाध्ययन का शुभ कर्म [को०] ।

वेदप्रदान—संज्ञा पुं० [सं०] वेदाध्ययन कराना । वेददान करना [को०] ।

वेदप्लावी—संज्ञा पुं० [सं० वेदप्लाविन्] वह जो सार्वजनिक रूप से वेद की शिक्षा दे । सार्वजनिक वेदशिक्षक [को०] ।

वेदफल—संज्ञा पुं० [सं०] वह फल जो वैदिक कर्म करने से प्राप्त होता है ।

वेदबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. भागवत के अनुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम । ३. मनुरैवत के अधीन सात ऋषियों में से एक (को०) ।

वेदबाह्य—वि० [सं०] १. वेद के प्रतिकूल। वेद के विरुद्ध। २. वेदों के प्रति अविश्वास करनेवाला।

वेदबीज—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

वेदब्रह्मचर्य—संज्ञा पुं० [सं०] वेद पढ़ने की अवस्था [को०]।

वेदभू—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार देवताओं के एक गण का नाम।

वेदभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वेदमंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वेदमन्त्र] १. वेदों में आए हुए मंत्र। २. पुराणानुसार एक जनपद का नाम। ३. इस जनपद का निवासी।

वेदमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० वेदमातृ] १. गायत्री। सावित्री। २. दुर्गा। ३. सरस्वती।

वेदमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सावित्री।

वेदमित्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक आचार्य का नाम।

वेदमुंड—संज्ञा पुं० [सं० वेदमुण्ड] एक असुर का नाम।

वेदमुख्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का क्षुद्र कीट या खटमल [को०]।

वेदमूर्ति—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेदों का बहुत बड़ा ज्ञाता हो। २. आदित्य। सूर्य।

वेदमूल—वि० [सं०] वेद ही जिसका मूल आधार हो। वेद पर आधारित [को०]।

वेदयज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेद पढ़ना। वेदपाठ करना। २. वैदिक यज्ञ यागादि।

वेदयिता—वि० संज्ञा [सं० वेदयितृ] ज्ञाता। जानने या अनुभव करनेवाला [को०]।

वेदरक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मणों का प्रमुख कर्तव्य—वेदों की रक्षा करना।

वेदरहस्य—संज्ञा पुं० [सं०] उपनिषद्।

वेदरिचा(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वेदऋचा] वेदों की ऋचा। वेदमंत्र। उ०—जे वे गोप वधू हीं ब्रज में तेइ अब बेदरिचा भई येह।—छीत०, पृ० ७।

वेदल(पु)—वि० [सं० विदल] विकसित। दे० 'विदल'। उ०—मिलै पद पद्द सु वेदल चंप।—पृ० रा०, ६१।४३७।

वेदवचन—संज्ञा पुं० [सं०] वेदवाक्य। वेदमंत्र [को०]।

वेदवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजा कुशध्वज की कन्या का नाम। कहते हैं, यही दूसरे जन्म में सीता हुई थीं। २. पुराणानुसार पारियात्र पर्वत की एक नदी का नाम। ३. अप्सरा। ४. दक्षिण भारत की एक नदी का नाम।

वेदवदन—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मा। २. व्याकरण।

वेदवाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेद का कोई वाक्य। २. ऐसी बात जो पूर्ण रूप से प्रामाणिक हो और जिसका खंडन न हो सकता हो।

वेदवाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेदों पर होनेवाला शास्त्रार्थ। २. वेदज्ञान [को०]।

वेदवादी—संज्ञा पुं० [सं० वेदवादिन्] वह जो वेदों का अच्छा ज्ञाता हो।

वेदवास—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण।

वेदवाह—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेदों का ज्ञाता हो।

वेदवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

वेदविक्रयी^{1}—वि० [सं० वेद + विक्रयिन्] वेद को बेचनेवाला। धन लेकर वेद पढ़ानेवाला [को०]।

वेदविक्रयी^{2}—संज्ञा पुं० पतित वेदज्ञ [को०]।

वेदविद्—संज्ञा पुं० [सं० वेदवित्] १. वह जो वेदों का ज्ञाता हो। वेदज्ञ। २. विष्णु का एक नाम।

वेदविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेद का विधान या विधि। वेद में निर्धारित विधान। उ०—प्रच्छन्न बौद्ध ज्यों कहने लगे, वेदविधि के कर्मकांड के लोप से दुखी जन वे विधि के प्रत्याशी।—अपरा, पृ० २१४।

वेदविहित—वि० [सं०] वेद के अनुकूल [को०]।

वेदवृद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन आचार्य का नाम।

वेदवैनाशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम।

वेदव्यास—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यास'। उ०—कर्म फाँस तहवाँ लग राखा। जहँ लग वेदव्यास कछु भाषा।—कबीर सा०, पृ० ६६१।

वेदव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेदों का अध्ययन करता हो।

वेदशिर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. भागवत के अनुसार कृशाश्व के पुत्र का नाम। २. पुराणानुसार एक प्रकार का अस्त्र।

वेदशिर^2—संज्ञा पुं० [सं० वेदशिरस्] पुराणानुसार मार्कंडेय के एक पुत्र का नाम, जो मूर्द्धन्या के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। कहते हैं, भार्गव लोगों का मूल पुरुष यही था।

वेदशिरा—संज्ञा पुं० [सं० वेदशिरस्] दे० 'वेदशिर' [को०]।

वेदशीर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

वेदश्रवा—संज्ञा पुं० [सं० वेदश्रवस्] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वेदश्री—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वेदश्रुत—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार वसिष्ठ के एक पुत्र का नाम।

वेदश्रुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

वेदसम्मत—वि० [सं० वेदसम्मत] वेदानुकूल [को०]।

वेदसम्मित—वि० [सं० वेदसम्मित] वेद के समान। महत्वपूर्ण। वेद के द्वारा विहित [को०]।

वेदसार—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

वेदसिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

बेदस्पर्श—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन वैदिक आचार्य का नाम।

वेदस्मृता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

वेदस्मृति, वेदस्मृती—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदस्मृता नदी का नाम ।

वेदहीन—वि० [सं०] वेद के ज्ञान से रहित । वह जिसे वेद का ज्ञान न हो [को०] ।

वेदांग—संज्ञा पुं० [सं० वेदाङ्ग] १. वेदों के अंग या शास्त्र जो छह हैं और जिनके नाम इस प्रकार हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद ।

विशेष—इनमें से व्याकरण को लोग वेदों का मुख, शिक्षा को नाक, निरुक्त को कान, ज्योतिष को आँख, कल्प को हाथ और छंद को पैर मानते हैं ।

२. सूर्य का एक नाम । ३. बारह आदित्यों में से एक आदित्य ।

वेदांत—संज्ञा पुं० [सं० वेदान्त] १. उपनिषद् और आरण्यक आदि वेद के अंतिम भाग जिनमें आत्मा, परमात्मा, जगत् आदि के संबंध में निरूपण है । ब्रह्मविद्या । अध्यात्म विद्या । अध्यात्म शास्त्र । ज्ञानकांड । उ०—यद्यपि उपनिषदों को 'वेदांत' (वेद + अंत) संज्ञा दी गई है ।—संत० दरिया (भू०), पृ० ५६ । २. छह दर्शनों में से प्रधान दर्शन जिसमें चैतन्य या ब्रह्म ही एक मात्र पारमार्थिक सत्ता स्वीकार किया गया है; जड़ जगत् और जीव कोई अतिरिक्त या अन्य पदार्थ नहीं माने गए । उत्तर मीमांसा । अद्वैतवाद ।

विशेष—यद्यपि इस सिद्धांत का आभास वेद के मंत्रभाग में कहीं कहीं पाया जाता है, पर आगे चलकर ब्राह्मणों, आरण्यकों में अधिक से अधिकतर होता गया है । तथापि सर्वाधिक इसका आधार उपनिषद् ही हैं जिनमें जीव, जगत् और ब्रह्म आदि का निरूपण है । उपनिषदों में मुख्य वे दस कठ, केन, प्रश्न आदि उपनिषद् हैं जिनपर आद्य शंकराचार्य का भाष्य मिलता है । उनमें जिस प्रकार 'अहं ब्रह्मास्मि', 'तत्वमसि' आदि जीवात्मा और परमात्मा की एकता प्रतिपादित करनेवाले महावाक्य हैं, उसी प्रकार पंचमहाभूतों में से पृथ्वी, जल और अग्नि ब्रह्म के मूर्त रूप तथा वायु और आकाश अमूर्त रूप कहे गए हैं । इस प्रकार उनमें जीवात्मा और जड़जगत् दोनों का समावेश ब्रह्म के भीतर मिलता है जो अद्वैतवाद का आधार है । आगे चलकर उपनिषद् की इस ब्रह्मविद्या का दार्शनिक ढंग से निरूपण महर्षि बादरायण के 'ब्रह्मसूत्र' में हुआ है, जिनपर कई भाष्य भिन्न भिन्न आचार्यों ने अपने अपने मत के अनुसार रचे । इनमें अनेक भाष्य अत्यंत प्रसिद्ध हैं,—शंकराचार्य (शारीरक), रामानुज वल्लभ आदि अनेक आचार्यों ने इसपर भाष्य लिखे इनमें से शंकर का भाष्य ही सबसे प्रसिद्ध और चिंतनपद्धति में बहुत आगे बढ़ा हुआ है । अतः 'वेदांत' शब्द से साधारणतः शंकर का अद्वैतवाद ही समझा जाता है । शेष भाष्य अनेक विद्वानों के मत से सांप्रदायिक माने जाते हैं ।

जगत्, जीव और ब्रह्म या परमात्मा इन तीनों वस्तुओं के स्वरूप तथा इनके पारस्परिक संबंध का निर्णय ही वेदांत शास्त्र का विषय है । न्याय और वैशेषिक ने ईश्वर, जीव और जगत् (या जगत् के मूलद्रव्य परमाणु) ये तीन तत्व मानकर ईश्वर को जगत् का कर्ता ठहराया है, जो सर्वसाधारण की स्थूल भावना के अनुकूल है । वैशेषिक के अनुसार जगत् का मूल रूप परमाणु है जो नित्य है और जिनके ईश्वर-प्रेरित संयोग से सृष्टि होती है । इसके आगे बढ़कर सांख्य ने दो ही नित्य तत्व स्थिर किए—पुरुष (आत्मा) और प्रकृति; अर्थात् एक ओर असंख्य चेतन जीवात्माएँ और दूसरी ओर जड़जगत् का अव्यक्त मूल । ईश्वर या परमात्मा का समावेश सांख्यपद्धति में नहीं है । सृष्टि के विकास की सूक्ष्म तात्विक विवेचना सांख्य ने ही की है । किस प्रकार एक अव्यक्त प्रकृति से क्रमशः आपसे आप जगत् का विकास हुआ, इसका पूरा ब्योरा उसमें बताया गया है; और जगत् का कोई कर्ता है, नैयायिकों के इस सिद्धांत का खंडन किया गया है । पुरुष या आत्मा केवल द्रष्टा है, कर्ता नहीं । इसी प्रकार प्रकृति जड़ और क्रियामयी है । एक लँगड़ा है, दूसरी अंधा । असंख्य पुरुषों के संयोग या सान्निध्य से ही प्रकृति सृष्टि-क्रिया में तत्पर हुआ करती है ।

वेदांत ने और आगे बढ़कर प्रकृति तथा असंख्य पुरुषों का एक ही परमतत्व ब्रह्म में अविभक्त रूप से समावेश करके जड़ चेतन के द्वैत के स्थान पर अद्वैत की स्थापना की । वेदांत ने सांख्यों के अनेक पुरुषों का खंडन किया और चेतन तत्व को एक और अविच्छिन्न सिद्ध करते हुए बताया कि प्रकृति या माया का 'अहंकार' गुणरूपी उपाधि में ही एक के स्थान पर अनेक पुरुषों या आत्माओं की प्रतीति होती है । यह अनेकता मायाजन्य है । सांख्यों ने पुरुष और प्रकृति के संयोग से जो सृष्टि की उत्पत्ति कही है, वह भी असंगत है, क्योंकि यह संयोग या तो सत्य हो सकता है अथवा मिथ्या । यदि सत्य है, तो नित्य है; अतः कभी टूट नहीं सकता । इस दशा में आत्मा कभी मुक्त हो ही नहीं सकती । इसी प्रकार की युक्तियों से पुरुष और प्रकृति के द्वैत को न मानकर वेदांत ने उन्हें एक ही परम तत्व ब्रह्म की विभूतियाँ बताया । वेदांत के अनुसार ब्रह्म जगत् का निमित्त और उपादान दोनों है ।

नामरूपात्मक जगत् के मूल में आधारभूत होकर रहनेवाले इस नित्य और निर्विकार तत्व ब्रह्म का स्वरूप कैसा हो सकता है, इसका भी निरूपण वेदांत ने किया है । जगत् में जो नाना दृश्य दिखाई पड़ते हैं, वे सब परिणामी और अनित्य हैं । वे बदलते रहते हैं, पर उनका ज्ञान करनेवाला आत्मा या द्रष्टा सदा वही रहता है । यदि ऐसा न होता तो भूतकाल में अनुभव की हुई बात का वर्तमानकाल में अनुभूत विषय के साथ जो संबंध जोड़ा जाता है, वह असंभव होता है (पंचदशी) । इसी से ब्रह्म का स्वरूप भी ऐसा ही होना चाहिए । अर्थात् ब्रह्म चित्स्वरूप या आत्मस्वरूप है । नाना ज्ञेय पदार्थ भी ज्ञाता के ही सगुण, सोपाधि या मायात्मक रूप हैं, यह निश्चित करके ज्ञाता और ज्ञेय का द्वैत वेदांत ने हटा दिया है, ब्रह्म स्वरूप का विवेचन वेदांत के पिछले ग्रंथों में ब्योरे के साथ हुआ है ।

जगत् और सृष्टि के संबंध में वेदांतियों ने नैयायिकों के 'आरंभवाद' (ईश्वर सृष्टि उत्पन्न करता है) और सांख्य के 'परिणामवाद' (सृष्टि का विकास उत्तरोत्तर विकार या परिणाम द्वारा अव्यक्त प्रकृति से आपसे आप होता है) के स्थान पर 'विवर्तवाद' की स्थापना की है जिसके अनुसार जगत् ब्रह्म का विवर्त या कल्पित रूप है। रस्सी को यदि हम सर्प समझें तो रस्सी सत्य वस्तु है और सर्प उसका विवर्त या भ्रांतिजन्य प्रतीति है। इसी प्रकार ब्रह्म तो नित्य और वास्तविक सत्ता है और नामरूपात्मक जगत् उसका विवर्त है। यह विवर्त अध्यास द्वारा होता है। जो नामरूपात्मक दृश्य हम देखते हैं वह न तो ब्रह्म का वास्तव स्वरूप ही है, न कार्य या परिणाम ही क्योंकि ब्रह्म निर्विकार और अपरिणामी है। अध्यास के सबंध में कहा जा सकता है कि सर्प कोई अलग पदार्थ है तब तो उसका आरोप होता है। अतः इस विषय को और स्पष्ट करने के लिये 'दृष्टि-सृष्टि-वाद' उपस्थित किया जाता है जिसके अनुसार माया या नामरूप मन की वृत्ति है। इनको सृष्टि मन ही करता है और मन ही देखता है। ये नामरूप उसी प्रकार मन या वृत्तियों के बाहर की कोई वस्तु नहीं हैं, जिस प्रकार जड़ चित् के बाहर की कोई वस्तु नहीं है। इन वृत्तियों का शमन ही मोक्ष है।

इन दोनों वादों में कुछ त्रुटि देखकर कुछ वेदांती 'अवच्छेदवाद' का आश्रय लेते हैं। वे कहते हैं कि ब्रह्म के अतिरिक्त जगत् की जो प्रतीति होती है, वह एकरस या अनवच्छिन्न सत्ता के भीतर माया द्वारा अवच्छेद या परिमिति के आरोप के कारण होती है। कुछ अन्य वेदांती इन तीनों वादों के स्थान पर 'बिंब-प्रतिबिंब-वाद' उपस्थित करते हैं और कहते हैं कि ब्रह्म प्रकृति या माया के बीच अनेक प्रकार से प्रतिबिंबित होता है जिससे नामरूपात्मक दृश्यों की प्रतीति होती है। अंतिम वाद 'अजात वाद' है जिसे 'प्रौढ़िवाद' भी कहते हैं। यह सब प्रकार की उत्पत्ति को, चाहे वह विवर्त के रूप में कही जाय, चाहे दृष्टि सृष्टि या अवच्छेद या प्रतिबिंब के रूप में—अस्वीकार करता है और कहता है कि जो जैसा है वह वैसा ही है और सब ब्रह्म है। ब्रह्म अनिर्वचनीय है, उसका वर्णन शब्दों द्वारा हो ही नहीं सकता क्योंकि हमारे पास जो भाषा है, वह द्वैत ही की है; अर्थात् जो कुछ हम कहते हैं वह भेद के आधार पर ही।

यद्यपि ब्रह्म का वास्तविक या पारमार्थिक रूप अव्यक्त, निर्गुण और निर्विशेष है, तथापि व्यक्त और सगुण रूप भी उसके बाहर नहीं है। पंचदशी में इन सगुण रूपों का विभेद प्रतिबिंबवाद के शब्दों में इस प्रकार समझाया गया है : रजोगुण की प्रवृत्ति से प्रकृति दो रूपों में विभक्त होती है—सत्वप्रधान और तमः प्रधान। सत्वप्रधान के भी दो रूप हो जाते हैं—शुद्ध सत्व (जिसमें सत्व गुण पूर्ण हो) और अशुद्ध सत्व (जिसमें सत्व अंशतः हो)। प्रकृति के इन्हीं भेदों में प्रतिबिंबित होने के कारण ब्रह्म को 'जीव' कहते हैं।

वेदांत या अद्वैतवाद से साधारणतः शंकराचार्य प्रतिपादित अद्वैतवाद लिया जाता है जिसमें ब्रह्म स्वगत, सजातीय और विजातीय तीनों भेदों से परे कहा गया है। पर जैसा ऊपर कहा जा चुका है, बादरायण के ब्रह्मसूत्र पर रामानुजाचार्य और शंकराचार्य के भाष्य भी हैं। रामानुज के अद्वैतवाद को 'विशिष्टाद्वैत' कहते हैं; क्योंकि उसमें ब्रह्म को चित् और अचित् इन दो पक्षों से युक्त या विशिष्ट कहा है। ब्रह्म के इसी सूक्ष्म चित् और सूक्ष्म अचित् से स्थूल चित् (जीव) और स्थूल अचित् (जड़) उत्पन्न हुए। अतः रामानुज के अनुसार ब्रह्म केवल निमित्त कारण है; उपादान हैं जड़ (स्थूल अचित्) और जीव (स्थूल चित्)। इस मत के अनुसार जीव को ब्रह्म का अंश कह सकते हैं। पर शंकर मत से नहीं; क्योंकि उसमें ब्रह्म सब प्रकार के भेदों से परे कहा गया है।

वल्लभाचार्य जी का अद्वैत 'शुद्धाद्वैत' कहलाता है, क्योंकि उसमें रामानुजकृत दो पक्षों की विशिष्टता हटाकर अद्वैतवाद शुद्ध किया गया है। इस मत के अनुसार सत्, चित् और आनंद-स्वरूप ब्रह्म अपने इच्छानुसार इन तीनों स्वरूपों का आविर्भाव करता रहता है। जड़ जगत् भी ब्रह्म ही है, पर अपने चित् और आनंद स्वरूपों का पूर्ण तिरोभाव किए हुए तथा सत् स्वरूप का कुछ अंशतः आविर्भाव किए हुए है। चेतन जगत् भी ब्रह्म ही है जिसमें सत्, चित् और आनंद इन तीनों स्वरूपों का कुछ आविर्भाव और कुछ तिरोभाव रहता है। माया ब्रह्म ही की शक्ति है जो उसी की इच्छा से विभक्त होती है; अतः मायात्मक जगत् मिथ्या नहीं है। जीव अपने शुद्ध ब्रह्मस्वरूप को तभी प्राप्त करता है जब आविर्भाव और तिरोभाव दोनों मिट जाते हैं; और यह बात केवल ईश्वर के अनुग्रह से ही, जिसे 'पुष्टि' कहते हैं, हो सकती है।

यहाँ यह भी समझ लेना चाहिए कि रामानुज और वल्लभाचार्य केवल दार्शनिक ही न थे, वे भक्तिमार्गी भी थे।

वेदांतग[1]—संज्ञा पुं० [सं० वेदान्तग] वेदांत दर्शन का अनुगमन करनेवाला। वेदांत मत का अनुयायी [को०]।

वेदांतग[2]—वि० वेदवक्ता [को०]।

वेदांतज्ञ—वि० [सं० वेदान्तज्ञ] वेदांत दर्शन का ज्ञाता। वेदांतग [को०]।

वेदांतवादी—वि० [सं० वेदांतवादिन्] अद्वैतवादी [को०]।

वेदांतविद्—वि० [सं० वेदान्तवित्] वेदांत दर्शन का ज्ञाता [को०]।

वेदांतवेदी—वि० [सं० वेदांतवेदिन्] अद्वैत दर्शन या वेदांत का ज्ञाता। ब्रह्मवादी। वेदांती [को०]।

वेदांतसूत्र—संज्ञा पुं० [सं० वेदान्तसूत्र] महर्षि बादरायण कृत सूत्र जो वेदांत शास्त्र के मूल माने जाते हैं। विशेष द० 'वेदांत'।

वेदांती—संज्ञा पुं० [सं० वेदान्तिन्] वह जो वेदांत का अच्छा ज्ञाता हो। वेदांत का पूरा पंडित। ब्रह्मवादी।

वेदाग्रणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती।

वेदात्मा—संज्ञा पुं० [सं० वेदात्मन्] १. विष्णु। २. सूर्य।

वेदादि—संज्ञा पुं० [सं०] प्रणव या ओंकार का मंत्र।

यौ०—वेदादिबीज = प्रणव। वेदादिवर्ण = ओंकार मंत्र। प्रणव। वेदादिवीज।

वेदादिबीज—संज्ञा पुं० [सं०] प्रणव या ओंकार का मंत्र।

वेदाधिगम—संज्ञा पुं० [सं०] वेदाध्ययन [को०]।

वेदाधिदेव—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण।

वेदाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] १. चारों वेदों के अधिपति ग्रह जो इस प्रकार हैं—ऋग्वेद के अधिपति बृहस्पति, यजुर्वेद के शुक्र, सामवेद के मंगल और अथर्ववेद के बुध। २. विष्णु का एक नाम (को०)।

वेदाधिपति—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेदाधिप' [को०]।

वेदाध्यक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम।

वेदाध्ययन—संज्ञा पुं० [सं०] वेदाधिगम। वेदाध्ययन। वेदों का पढ़ना [को०]।

वेदाध्यापक—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों का अध्यापन करनेवाला [को०]।

वेदाध्यायी वि० [सं० वेदाध्यायिन्] वेदपाठ या वेद का अध्ययन करनेवाला [को०]

वेदानुवचन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेद का पाठ करना। २. वेद का वचन। वेदवाक्य [को०]।

वेदाप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदों पर पूर्ण अधिकार होना [को०]।

वेदार—संज्ञा पुं० [सं०] गिरगिट।

वेदार्ण—संज्ञा पुं० [सं०] तीर्थविशेष [को०]।

वेदार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] वेदवचन का अर्थ। वेदवाक्य का अर्थ [को०]।

वेदाश्र—संज्ञा पुं० [सं०] चतुष्कोण [को०]।

वेदाश्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

वेदि¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. यज्ञ कार्य के लिये साफ करके तैयार की हुई भूमि। वेदी। २. किसी शुभ कार्य के लिये बनाकर तैयार की हुई भूमि। ३. उँगली की एक प्रकार की मुद्रा। ४. अंबष्ठा। ५. वह अँगूठी जिसपर किसी का नाम अंकित हो। ६. किसी मंदिर या महल का चौकोर सहन। मंदिर या प्रासाद के प्रांगण में बना हुआ चौकोन स्थान या मंडप (को०)। ७. सरस्वती (को०)। ८. भूभाग। भूखंड (को०)। ९. कोई वस्तु रखने का आधार (को०)। १०. ज्ञान। विज्ञान (को०)। ११. एक तीर्थ का नाम (को०)।

वेदि²—संज्ञा पुं० [सं०] १. विद्वान् ऋषि। २. आचार्य [को०]।

वेदिकरण—संज्ञा पुं० [सं०] वेदी का निर्माण [को०]।

वेदिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी शुभ कार्य के लिये साफ करके तैयार की हुई भूमि। वेदी। २. जैन पुराणों के अनुसार एक नदी का नाम। ३. यज्ञभूमि (को०)। ४. चबूतरा। उच्च समतल भूमि (को०)। ५. आसन (को०)। ६. टीला। ढूहा (को०)। ७. लतामंडप। निकुंज (को०)।

वेदिजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] द्रौपदी का एक नाम।

वेदित—वि० [सं०] १. जो कुछ बतलाया या सूचित किया गया हो। निवेदित। २. जो देखा गया हो।

वेदितव्य—वि० [सं०] जो जानने के योग्य हो। ज्ञातव्य।

वेदिता—वि० [सं० वेदतृ] चतुर। कुशल। विद्वान्। ज्ञाता। जाननेवाला [को०]।

वेदित्व—संज्ञा पुं० [सं०] विदित होने का भाव। ज्ञान।

वेदिपुरीष—संज्ञा पुं० [सं०] वेदी की गीली या ढीली मिट्टी [को०]।

वेदिमध्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसकी कमर वेदी की भाँति हो [को०]।

वेदिमान, वेदिविमान—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों के लिये भूमि का परिमाण [को०]।

वेदिश्रोणि, वेदिश्रोणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदी का श्रोणि भाग जिसे वेदिमेखला भी कहते हैं [को०]।

वेदिष्ठ—वि० [सं०] जो सब बातें जानता हो। सर्वज्ञ।

वेदिसंभवा—संज्ञा स्त्री० [सं० वेदिसम्भवा] द्रौपदी का एक नाम [को०]।

वेदी¹—संज्ञा पुं० [सं० वेदिन्] [स्त्री० वेदिनी] १. पंडित। विद्वान्। आचार्य। २. ज्ञाता। जानकार। ३. वह जो विवाद करता हो। ४. ब्रह्म। ५. अंबष्ठा। पाढ़ा (को०)।

वेदी²—संज्ञा स्त्री० १. किसी शुभ कार्य के लिये, विशेषतः धार्मिक कार्य के लिये तैयार की हुई ऊँची भूमि। जैसे,—विवाह की वेदी, यज्ञ की वेदी। २. सरस्वती। ३. मंदिर या महल के आँगन में बना हुआ चौकोर स्थान या मंडप (को०)। ४. मुहर करने की अँगूठी (को०)। ५. अँगुलियों की एक विशेष मुद्रा (को०)। ६. भूखंड। भूभाग (को०)। ७. ज्ञान विज्ञान (को०)। ८. कोई वस्तु रखने का आधार (को०)। दे० 'वेदि'।

वेदी³—वि० १. जाननेवाला। ज्ञाता। २. अनुभव करनेवाला। ३. विवाह करनेवाला। ४ सूचना देनेवाला। सूचक। ५. विद्वान्। आचार्य [को०]।

वेदीतिथि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

वेदीश—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेदों के स्वामी, ब्रह्मा। २. अग्नि (को०)।

वेदुक—वि० [सं०] १. जाननेवाला। ज्ञाता। २. प्राप्त करनेवाला। पानेवाला। ३. जो कुछ मिला हो। प्राप्त।

वेदेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों के स्वामी, ब्रह्मा।

वेदोकतⓤ—वि० [सं० वेदोक्त] दे० 'वेदोक्त'। उ०—केसर अगर कपूर, चोक (व), वेदोकत चन्नण।—रा० रू०, पृ० ३५९।

वेदोक्त—वि० [सं०] वेदों में कहा गया। वेदविहित [को०]।

वेदोदय—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

वेदोदित—वि० [सं०] वेदविहित। वेद के अनुसार। वेदोक्त [को०]।

वेदोपकरण—संज्ञा पुं० [सं०] वेदांग।

वेदोपनिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

वेद्धव्य—वि० [सं०] जो वेधने या छेदने के योग्य हो। बेधा जाने के योग्य। वेध्य।

वेद्धा—वि० [सं० वेद्धृ] छेदने या भेदनेवाला। वेधन करनेवाला। लक्ष्य साधनेवाला।

वेद्य—वि० [सं०] १. जो जानने या समझने के योग्य हो। २. जो कहने के योग्य हो। ३. जो स्तुति करने योग्य हो। ४. जो प्राप्त करने के योग्य हो। ५. विवाह के योग्य (को०)।

वेद्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] ज्ञान। जानकारी।

वेध^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी नुकीली चीज से छेदने की क्रिया। वेधना। विद्ध करना। २. मंत्रों आदि की सहायता से ग्रहों, नक्षत्रों और तारों आदि को देखना अथवा उनका स्थान निश्चित करना।

यौ०—वेधशाला।

३. ज्योतिष के ग्रहों का किसी ऐसे स्थान में पहुँचना जहाँ से उनका किसी दूसरे ग्रह से सामना होता हो। जैसे,—युतवेध, पताकीवेध। ४. गहरापन। गंभीरता। पु ५. झगड़ा। रार। उ०—राण अनै समरेस रै, बले प्रगट्यो वेध।—रा० रू०, पृ० ३४५। ६. क्षत। घाव। ७. समय का एक मान (को०)। ८. गर्त। गहराई। गड्ढा (को०)। ९. ज्योतिष में परिधि का नवमांश (को०)। १०. अशांति। बाधा (को०)। ११. घोड़ों का एक रोग (को०)। १२. रसों का मिश्रण (को०)। १४. निशाना मारना। लक्ष्य भेद करना (को०)।

वेध^2—संज्ञा पुं० [सं० वेधस्] १. ब्रह्मा। २. विष्णु। ३. शिव। महादेव। ४. सूर्य। ५. पंडित। विद्वान्। ६. सफेद मदार। ७. दक्ष आदि प्रजापति।

वेधक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेध करनेवाला। २. लक्ष्य साधनेवाला। ३. वह जो मणियों आदि को वेधकर अपनी जीविका चलाता हो। ४. धनियाँ। ५. कपूर। ६. अम्लबेंत। ७. नरक का एक विभाग (को०)। ८. बाली में लगा हुआ धान। धान्य (को०)। ९. चंदन (को०)। १०. सेंधा नमक (को०)।

वेधगुप्त—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में एक राग का नाम [को०]।

वेधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बींधने की क्रिया। छेद कर देना। २. लक्ष्यवेध करना। ३. प्रवेश। ४. प्रभावित करना। ५. गहराई। ६. खोदना। खनना क्रिया [को०]।

वेधनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह औजार जिससे मणियों आदि में छेद करते हों।

वेधनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह औजार जिससे मणियों आदि में छेद करते हों। वेधनिका। २. हाथी का अंकुश। ३. गहराई (को०)।

वेधनीय—वि० [सं०] वेधने के योग्य। जो वेधा जा सके [को०]।

वेधमुख्य—संज्ञा सं० [सं०] कचूर।

वेधमुख्यक—संज्ञा पुं० [सं०] हलदी का पौधा।

वेधमुख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] कस्तूरी।

वेधशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ ग्रहों का वेध करने के यंत्र आदि रखे हों। वह स्थान जहाँ नक्षत्रों और तारों आदि को देखने और उनकी दूरी, गति आदि जानने के यंत्र हो।

वेधस—संज्ञा पुं० [सं०] हथेली के अँगूठे की जड़ के पास का स्थान।

विशेष—इसे ब्रह्मतीर्थ भी कहते हैं। आचमन के लिये इसी गड्ठे में जल लेने का विधान है।

वेधसी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

वेधा पु—संज्ञा पुं० [सं० वेधस्] १. ब्रह्मा। स्रष्टा। उ०—सहस शब्द बीते तब वेधा। वरं ब्रूहि भाखेउ अति मेधा।—गिरधर (शब्द०)। २. विष्णु। ३. शिव। ४. सूर्य। ५. पंडित। ६. सफेद मदार। ७. दक्ष आदि प्रजापति। ८. एक यादव का नाम जो अंगद या अंगत का पुत्र था। ९. पुरोहित (को०)। १०. चंद्रमा (को०)। ११. कवि (को०)।

वेधालय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेधशाला'।

वेधित—वि० [सं०] जो बेधा गया हो। जिसमें छेद किया गया हो। बिंधा हुआ।

वेधिनी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जलौका। जोंक। २. मेथी।

वेधिनी^{2}—वि० बेधनेवाली। छेदनेवाली।

वेधी—संज्ञा पुं० [सं० वेधिन्] [स्त्री० वेधिनी] १. वह जो वेध करता हो। वेध करनेवाला। २. अम्लबेंत। ३. जो लक्ष्यभेद करता हो। वह जो निशाना मारता हो (को०)।

वेध्य^1—वि० [सं०] १. जिसे वेध किया जाय। २ जो वेध करने के योग्य हो।

वेध्य^2—संज्ञा पुं० [सं०] लक्ष्य। निशाना [को०]।

वेध्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाद्य विशेष [को०]।

वेन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेण' [को०]।

वेनु पु—संज्ञा पुं० [सं० वेणु] बाँस की वंशी। बाँसुरी।

वेनुधारी पु—वि० [सं० वेणुधारिन्] वंशी धारण करने या बजानेवाले। उ०—या प्रकार वृंदावन के वृक्ष वृक्ष वेनुधारी श्री गोवर्धनधर रूप हैं।—दो सौ बावन०, भा० १. पृ० ३०२।

वेनुनाद पु—संज्ञा पुं० [सं० वेणुनाद] दे० 'वेणुनाद'। उ०—हमारे श्री कृष्णचंद्र जी तो वेनुनाद करि कै सब व्रज सुंदरीन को बुलाई कै रासरमन उन सों करत हैं।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० ९१।

वेन्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक पवित्र नदी।

वेन्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेन'।

वेन्य^2—वि० सुंदर। खूबसूरत।

वेप—संज्ञा पुं० [सं०] कँपकँपी [को०]।

वेपथु—संज्ञा पुं० [सं०] काँपने की क्रिया। कँपकँपी। कंप।

वेपथुपरीत—वि० [सं०] कंपनग्रस्त। कंपायमान। काँपता हुआ [को०]।

वेपथुभृत्—वि० [सं०] कंपित। काँपता हुआ [को०]।

वेपन—संज्ञा पुं० [सं०] १. काँपना। थरथरी। कंप। २. वात रोग।

वेपित—वि० [सं०] कंपित [को०]।

वेम—संज्ञा पुं० [सं०] करघा [को०]।

वेमक—संज्ञा पुं० [सं०] एक स्वर्गीय ऋषि।

वेमा—संज्ञा पुं० [सं० वेमन्] करघा। बामदंड [को०]।

वेर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर। देह। बदन। २. कुंकुम। केसर। ३. बैंगन। भंटा (को०)। ४. मुख (को०)।

वेरक—संज्ञा पुं० [सं०] कपूर।

वेरट[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेर नामक फल। २. निम्न वा संकर वर्ण का व्यक्ति (को०)।

वेरट[2]—वि० १. मिलाया हुआ। मिश्रित। २. नीच।

वेरि—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार बेंत आदि से बुनकर बना हुआ पहनावा या बकतर।

वेरो (पु)—संज्ञा पुं० [देश०] कूप। कुआँ। उ०—पाहण गल बाँधै पड़ो, वेरो बावड़ियाँह। पिण मंगण मत पारथो मुजलाँ मावड़ियाह।—बाँकी० ग्रं०, भा० २, पृ० १४।

वेल[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपवन। बाग। २. बौद्ध मतानुसार एक बड़ी संख्या। ३. आम का वृक्ष (को०)।

वेल(पु)†[2]—संज्ञा स्त्री० [सं० वेला] लहर। तरंग। उ०—ईडरिया आचार री, वीर चढ़ै तो वेल।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० ७५।

वेलज—वि० [सं०] नमकीन और चरपरा या कड़वा [को०]।

वेलड़ी(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वल्लरी] दे० 'वेल' या 'वल्ली'। उ०—घर अंबर विच वेलड़ी, तहुँ लाल सुगंधा बूल। झक्खर इक नाँ आयो, नानक नहीं क्बूल।—संतवाणी०, पृ० ७०।

वेलन—संज्ञा पुं० [सं०] हींग।

वेलना—क्रि० अ० [सं० वेल्ल, प्रा० वेल्ल] काँपना। तड़पना। हिलना। उ०—ओछइ पाँणी मच्छ ज्यऊँ, वेलत थयउ विहाँण।—ढोला०, दू० १९२।

वेलव—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्र पुरुष और क्षत्रिया स्त्री के संयोग से उत्पन्न पुत्र [को०]।

वेला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काल। समय। वक्त। २. समय का एक विभाग जो दिन और रात्रि का चौबीसवाँ भाग होता है। कुछ लोग दिनमान के आठवेँ भाग को भी वेला मानते हैं। ३. मर्यादा। ४. समुद्र का किनारा। ५. समुद्र की लहर। ६. वाक्। वाणी। ७. मसूड़ा। ८. भोजन। खाना। ९. रोग। बीमारी। १०. बुद्ध की स्त्री (को०)। ११. राग। आसक्ति (को०)। १२. अवसर। मौका (को०)। १३ विश्राम का अवकाश (को०)। १४. आसान या कष्ट-बाधा-विहीन मृत्यु (को०)। १५. मृत्यु का समय (को०)।

वेलाकूल—संज्ञा पुं० [सं०] १. ताम्रलिप्त देश का नाम। २. बेलामूल। समुद्रतट (को०)।

वेलाजल—संज्ञा पुं० [सं०] ज्वार का पानी [को०]।

वेलाज्वर—संज्ञा पुं० [सं०] मरने के समय आनेवाला ज्वर।

वेलातर—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र का किनारा [को०]।

वेलातिक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] निश्चित समय का अतिक्रमण। विलंब। देर [को०]।

वेलाद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रतटवर्ती पर्वत [को०]।

वेलाधर—संज्ञा पुं० [सं०] भारंड या भारद्वाज नामक पक्षी [को०]।

वेलाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में दिनमान के आठवें भाग या वेला के अधिपति देवता।

विशेष—रवि, शुक्र, बुध, चंद्र, शनि, वृहस्पति, और मंगल ये क्रमशः वेलाधिप होते हैं। जिस दिन जो वार होता है, उस दिन की पहली वेला का वेलाधिप उसी वार का ग्रह होता है; और फिर पीछे की वेलाओं के अधिपति उक्त क्रम से शेष ग्रह होते हैं। जैसे,—रविवार की पहली वेला के वेलाधिप रवि, दूसरी के शुक्र, तीसरी के बुध, चौथी के चंद्र आदि होंगे। इसी प्रकार बुधवार की पहली वेला के वेलाधिप बुध, दूसरी के चंद्र तीसरी के शनि, चौथी के वृहस्पति आदि होंगे।

वेलान—वि० [सं०] दे० 'वेलज'।

वेलामूल—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र का किनारा [को०]।

वेलायनि—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि।

वलावन—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रतटवर्ती जंगल [को०]।

वेलावलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] संगीत में एक राग। दे० 'बिलावल'।

वेलावित्त—संज्ञा पुं० [सं०] राजतंरगिणी के अनुसार प्राचीन काल के एक प्रकार के राजकर्मचारी।

वेलाविलासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वारवनिता। वेश्या [को०]।

वेलाहीन—वि० [सं०] असमय में होनेवाला। समय के पहले होनेवाला।

वेलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ताम्रलिप्त देश का एक नाम। २. नदी-तट के आस पास का प्रदेश।

वेलिभुक्प्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सुंगधित आम जिसे वलिभुक्प्रिय भी कहा गया है [को०]।

वेलियो†—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का डिंगल गीत जिसके विषम पदों में १६ मात्रा और सम पदों में १५ मात्राएं तथा आदि पद में १८ मात्राएं और तुकांत में लघु का विधान है।—रघु० रू०, पृ० १००।

वेलुव—संज्ञा पुं० [सं०] एक संख्या। दे० 'वेल' [को०]।

वेलोर्मि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्वार का पानी [को०]।

वेल्लंतर—संज्ञा पुं० [सं० वेल्लन्तर] वीरतरु नाम का एक वृक्ष [को०]।

वेल्ल—संज्ञा पुं० [सं०] १. विड़ंग । २. गमन । गति (को०) । ३. काँपना । हिलना । लहराना (को०) ।

वेल्लगिरिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रियंगु ।

वेल्लज—संज्ञा पुं० [सं०] काली मिर्च ।

वेल्लन—संज्ञा पुं० [सं०] १. घोड़ों का जमीन पर लोटना । २. कंपन । काँपना । गतिशील होना । हिलना डोलना (को०) । ३. तरंगों का ऊपर नीचे होना या लुढ़कना (को०) । ४. तेजी से मथना । तीव्र आलोड़न (को०) । ५. गुल्म (को०) । ६. बेलन । रोटी बनाने का काष्ठ का बेलन (को०) ।

वेल्लना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वेल्लन' [को०] ।

वेल्लनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वल्ली दूब । मालादूब । २. काली मिर्च (को०) ।

वेल्लभव—संज्ञा पुं० [सं०] काली मिर्च । वेल्लज । मिर्च ।

वेल्लरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काला विधारा । २. मालादूब ।

वेल्लहल—संज्ञा पुं० [सं०] लंपट । दुराचारी । बदचलन ।

वेल्लि—संज्ञा स्त्री० [सं०] लता । बेल ।

वेल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पोई का साग । उपोदिका ।

वेल्लिकाख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बेल का पेड़ । २. बेल के फल का गूदा ।

वेल्लित^{१}—वि० [सं०] १. हिलता डुलता हुआ । कंपित । २. कुटिल । वक्र । ३. गत । गया हुआ [को०] ।

वेल्लित^{२}—संज्ञा पुं० १. कंपन । काँपना । हिलना डुलना । २. गमन । गति । ३. लोटना । लुठन [को०] ।

वेल्लितक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप ।

वेल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं० वेल्ल] बेल । लता ।

वेल्हा†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेला] तट । किनारा । दे० 'वेला' । उ०—धण जीती प्रिव हारियउ, वेल्हा मिलण करेह ।—ढोला०, दू० ५९० ।

वेवहार(५)—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्यवहार' । उ०—उत्थि अपन वेवहार राँक ले राअहु चप्परि ।—कीर्ति०, पृ० ५० ।

वेवि(५)†—वि० [सं० द्वौ+अवि=द्वावदि] दोनों ही । उ०—वेवि संमत मिलिअ तवे एक्क वेवि सहोअर संग ।—कीर्ति०, पृ० २२ ।

वेशंत—संज्ञा पुं० [सं० वेशन्त] १. छोटा तालाब । उ०—बह गया है अश्रु बनकर कालकूट ज्वलंत । जा रहा भगता दया के दूध से वेशंत ।—सामधेनी, पृ० ४८ । २. अग्नि । आग ।

वेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपड़े लत्ते और गहने आदि पहनकर अपने आपको सजाना । २. किसी के कपड़े लत्ते आदि पहनने का ढंग ।

मुहा०—किसी का वेश धारण करना=किसी के ढंग के कपड़े लत्ते पहनना । किसी के रूप, रग और पहनावे आदि की नकल करना । जैसे,—(नटों आदि का) राजा का वेश धारण करना ।

३. पहनने के वस्त्र । पोशाक । जैसे,—अब आप अपना वेश उतारिए ।

यौ०—वेशभूषा=पहनने के कपड़े आदि । पोशाक ।

४. कपड़े का बना हुआ घर । खेमा । तंबू । ५. घर । मकान । ६. वेश्या का घर । ७. दे० 'प्रवेश'—१, २, ४ । ८. छद्म वेश । कपट रूप (को०) । ९. मजदूरी । भृति [को०] । १०. वेश्या जन (को०) । ११. वेश्या को दिया जानेवाला द्रव्य (को०) । १२. प्राचुर्य । अधिकता । अतिरेक (को०) ।

वेशक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] गृह । मकान [को०] ।

वेशक^{२}—वि० घुसने या प्रवेश करनेवाला [को०] ।

वेशकुल—संज्ञा पुं० [सं०] कुलटा स्त्री । दुश्चरित्रा स्त्री । २. वेश्या । रंडी । वेश्याओं का समूह [को०] ।

वेशता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश का भाव या धर्म । वेशत्व ।

वेशत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वेश का भाव या धर्म । वेशता ।

वेशदान—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्यमुखी फूल [को०] ।

वेशधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने किसी दूसरे का वेश धारण किया हो । वह जो भेस बदले हुए हो । छद्मवेशी । २. जैनों का एक संप्रदाय ।

वेशधारी—संज्ञा पुं० [सं० वेशधारिन्] १. वह जिसने वेश धारण किया हो । वेश धारण करनेवाला । २. वह तपस्वी न हो, पर तपस्वियों का सा वेश धारण करता हो । ३. पुराणानुसार एक संकर जाति । ४. अभिनेता । नट (को०) ।

वेशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रवेश करना । २. भवन । घर (को०) ।

वेशनद—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल की एक नदी का नाम ।

वेशनारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या [को०] ।

वेशनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] ड्योढ़ी । पौरी [को०] ।

वेशभगिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती [को०] ।

वेशभाव—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्या की प्रकृति या दशा । वेश्याओं का सा हाव भाव [को०] ।

वेशयुवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी ।

वेषयोषित, वेशयोषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या [को०] ।

वेशर—संज्ञा पुं० [सं०] खच्चर [को०] ।

वेशवधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी ।

वेशवनिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी ।

वेशवान्—संज्ञा पुं० [सं० वेशवत्] १. वेश्या की कमाई पर जीवित रहनेवाला व्यक्ति । २. चकला चलानेवाला [को०] ।

वेशवार—संज्ञा पुं० [सं०] नमक, मिर्च, धनिया आदि मसाले ।

वेशवास—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्या का घर । रंडी का मकान ।

वेशस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी ।

वेशस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी [को०] ।

वेशांत—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि । आग । २. छोटा तालाब [को०] ।

वेशिक—संज्ञा पुं० [सं०] शिल्पविद्या । हाथ की कारीगरी ।

वेशिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रवेशद्वार [को०] ।

वेशी—संज्ञा पुं० [सं० वेशिन्] १. वह जो वेश धारण किए हो । वेश धारण करनेवाला । २. वह जो प्रवेश करता हो । प्रवेश करनेवाला (को०) ।

वेशीजाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुत्रदात्री नाम की लता ।

वेश्म—संज्ञा पुं० [सं० वेश्मन्] १. घर । मकान । उ०—राजा किसी नगर में अवस्थित राजप्रासाद (वेश्म) में रहता था ।—आ० भा० १०६ । २. जन्मकुंडली के लग्नचक्र का चौथा स्थान (को०) ।

वेश्मकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वेश्यकर्मन्] मकान बनाने की विद्या । गृहनिर्माण [को०] ।

वेश्मकलिंग—संज्ञा पुं० [सं० वेश्मकलिङ्ग] चटक पक्षी । गौरैया ।

वेश्मकुलिंग—संज्ञा पुं० [सं० वेश्मकुलिङ्ग] गौरैया पक्षी [को०] ।

वेश्मकूल—संज्ञा पुं० [सं०] चिचिडा । चिचड़ा ।

वेश्मचटक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की गौरैया [को०] ।

वेश्मधूम—संज्ञा पुं० [सं०] एक क्षुप या पौधा [को०] ।

वेश्मनकुल—संज्ञा पुं० [सं०] छछूंदर ।

वेश्मपुरोधक—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार दूसरे के मकान को तोड़कर या उसमें सेंध लगाकर चोरी करनेवाला ।

वेश्मभू—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जो मकान बनाने के लिये उपयुक्त हो अथवा जिसपर मकान बनाया जाय ।

वेश्मवास—संज्ञा पुं० [सं०] १. रहने का घर । मकान । २. शयनकक्ष । शयनगृह ।

वेश्मस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रडी ।

वेश्मस्थूणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मकान का मुख्य स्तंभ या खंभा जिस पर छाजन रहता है [को०] ।

वेश्मांत—संज्ञा पुं० [सं० वेश्मान्त] घर के अंदर का वह भाग जिसमें स्त्रियाँ रहती हैं । अंतःपुर । जनानखाना ।

वेश्मादीपिक—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार मकान में आग लगानेवाला ।

वेश्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेश्या के रहने का मकान । रंडी का घर । २. आवास । निवास । मकान (को०) । ३. पड़ोस (को०) । ३. वेश्यावृत्ति (को०) ।

वेश्यकामिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रंडी । पुंश्चली । बदचलन औरत [को०] ।

वेश्यस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या [को०] ।

वेश्यांगना—संज्ञा स्त्री० [सं० वेश्याङ्गना] कुलटा स्त्री । बदचलन औरत ।

वेश्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो नाचती गाती और धन लेकर लोगों के साथ संभोग करती हो । गाने और कसब कमानेवाली औरत । रंडी ।

पर्या०—वारस्त्री । गणिका । रूपाजीवा । क्षुद्रा । शूला । वारविलासिनी । लज्जिका । कुंभा । कामरेखा । पण्यांगना । वारवधू । भोग्या । स्मरवीथिका ।

यौ०—वेश्यापण—वेश्या के साथ संभोग करने के बदले दी जानेवाला रकम । वेश्यापति = जार । वेश्यावृत्ति = धन लेकर परपुरुषों से संभोग कराना । वेश्यावेश्म = वेश्यालय ।

२. टुंटुका । पाढ़ा (को०) ।

वेश्यागमन—संज्ञा पुं० [सं०] रंडीबाजी [को०] ।

वेश्याघटक—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्या का दलाल । भंडुआ । वेश्याचार्य [को०] ।

वेश्याचार्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेश्याओं के साथ रहता और उन्हें परपुरुषों से मिलाता हो । रंडियों का दलाल । भंडुआ ।

वेश्याजन—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्याओं का समूह [को०] ।

वेश्याजन समाश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्याभवन । रंडियों का घर [को०] ।

वेश्यापण—संज्ञा पुं० [सं०] रंडी को भोग के निमित्त दिया जानेवाला धन [को०] ।

वेश्यापति—संज्ञा पुं० [सं०] रंडी का पति । जार [को०] ।

वेश्यापुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] रंडी का बेटा । दोगला [को०] ।

वेश्यायत्ता—वि० [सं०] वेश्या की कमाई खानेवाला [को०] ।

वेश्यालय—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्याश्रम ।

वेश्यावास—संज्ञा पुं० [सं०] शृंगारहाट । वेश्याओं का निवास [को०] ।

वेश्यावृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या की रोजी । रंडी की आजीविका । कसब कमाना [को०] ।

वेश्यावेश्म—संज्ञा पुं० [सं० वेश्यावेश्मन्] रंडी का घर । वेश्यालय [को०] ।

वेश्याश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्यालय [को०] ।

वेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] गदहा । खच्चर ।

वेष—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'वेश' । २. रंगमंच में पीछे का वह स्थान जहाँ नट लोग वेशरचना करते हैं । नेपथ्य । ३. वेश्या का घर । रंडी का मकान । ४. कर्म । ५. कार्यपरिचालन । काम चलाना ।

वेषकार—संज्ञा पुं० [सं०] किसी चीज को लपेटने का कपड़ा । वेष्टन । बेठन ।

वेषण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कासमर्द नाम का क्षुप । कसौंदी । २. परिचर्या । सेवा ।

वेषणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] धनियाँ ।

वेषदान—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्यमुखी का फुल [को०] ।

वेषधर—वि० [सं०] दूसरे का रूप या वेश धरनेवाला [को०] ।

वेषधारी—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वेशधारी' ।

नमक, मिर्च, धनियाँ आदि मसाले ।

वेषवार—संज्ञा पुं० [सं०] नमक, मिर्च, धनियाँ आदि मसाले ।

वेषश्री—वि० [सं०] १. (वेदमंत्र) जिसमें सुंदर और ललित वाक्य हों । २. मनोहर रूप में अलंकृत (को०) ।

वेषिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] चमेली ।

वेषी—संज्ञा पुं० [सं० वेषिन्] वेशधारी । दे० 'वेशी' ।

वेष्क—संज्ञा पुं० [सं०] बलिपशुओं का गला बाँधने की फँसरी या रस्सी [को०] ।

वेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृक्ष का किसी प्रकार का निर्यास । २. गोंद । ३. धूप का पेड़ । धूपसरल । ४. श्रीवेष्ट । गंधाबिरोजा । ५. सुश्रुत के अनुसार मुँह में होनेवाला एक प्रकार का रोग । ६. शिरोवेष्टन । दे० 'वेष्टन' । ७. बाड़ा । बाड़ (को०) । ८. बंधन । फँसरी (को०) । ९. दाँत का खोड़र या गड्ढा (को०) । १०. आकाश (को०) ।

वेष्टक¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधाबिरोजा । श्रीवेष्ट । २. गोंद । ३. वृक्ष का किसी प्रकार का निर्यास । ४. सफेद कुम्हड़ा । पेठा । ५. कुम्हड़ा । ६. छाल । वल्कल । ७. उष्णीष । पगड़ी । ८. प्राचीर । परकोटा । चहारदीवारी । ९. व्याकरण में पूर्वापर में लगनेवाला शब्द । जैसे, अथ, इति (को०) ।

वेष्टक²—वि० चारों ओर से ढकने या आवृत करनेवाला । वेष्टन करनेवाला ।

वेष्टकापथ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन शिवस्थान का नाम ।

वेष्टन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह कपड़ा आदि जिससे कोई चीज लपेटी जाय । बेठन । २. घेरने या लपेटने की क्रिया या भाव । ३. मुकुट । ४. उष्णीष । पगड़ी । ५. गुग्गुल । गूगल । ६. कान का छेद । ७. मेखला । कांची । कटिबंध (को०) । ८. घाव आदि बाँधने की पट्टी (को०) । ९. नृत्य की एक विशेष मुद्रा (को०) । १०. ग्रहण करना । अधिकार में रखना (को०) । ११. विस्तृति । विस्तार (को०) । १२. एक प्रकार का अस्त्र । १३. एक नृत्यमुद्रा (को०) । १४. यज्ञयूप को वेष्टित करनेवाला बंधन (को०) । १५. चहारदीवारी । घेरा (को०) ।

वेष्टनक—संज्ञा पुं० [सं०] स्त्रीप्रसंग करने का एक प्रकार । एक तरह का रतिबंध ।

वेष्टनवेष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार रतिबंध ।

वेष्टनीय—वि० [सं०] घेरने लायक । लपेटने योग्य [को०] ।

वेष्टवंश—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बाँस जिसे बेठर बाँस कहते हैं । रंध्रवंश ।

वेष्टव्य—वि० [सं०] वेष्टन करने योग्य । बेठन आदि से लपेटने लायक ।

वेष्टसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीवेष्ट । गंधाबिरोजा । २. धूप का पेड़ । सरल काष्ठ । धूपसरल ।

वेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हर्रे । हरीतकी ।

वेष्टित¹—वि० [सं०] १. नदी या परकोटे आदि से चारों ओर से घिरा हुआ । २. कपड़े आदि से लपेटा हुआ । ३. रुका हुआ । रुद्ध ।

वेष्टित²—संज्ञा पुं० [सं०] १. नृत्य की एक मुद्रा । २. घेरना । लपेटना । ३. एक रतिबंध । ४. पहाड़ी [को०] ।

वेष्टय—वि० [सं०] दे० 'वेष्टनीय' [को०] ।

वेष्प—संज्ञा पुं० [सं०] पानी । जल (को०) ।

वेष्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. परिश्रम । २. पगड़ी । ३. पानी । ४. कर्म । कार्य । ५. पट्टी [को०] ।

वेष्य²—वि० नट या अभिनेता जो वेश बदलनेवाला हो [को०] ।

वेसन—संज्ञा पुं० [सं०] मटर, चने आदि की दाल पीसकर तैयार किया हुआ आटा । बेसन ।

वेसर—संज्ञा पुं० [सं०] १. गदहा । २. खच्चर । अश्वतर (को०) ।

वेसवा(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेश्या] दे० 'वेश्या' । उ०—साध संत के उपाध रहत वेसवा के हाथ, बड़े कुटिल हैं कुााथ चलै पंथ ना निहार कै ।— संत तुरसी०, पृ० ३३६ ।

वेसवार—संज्ञा पुं० [सं०] १. पीसा हुआ जीरा, मिर्च लौंग आदि मसाला । २. एक प्रकार का पकाया हुआ मांस ।

विशेष—पहले हड्डियाँ आदि अलग करके खाली मांस पीस लेते हैं और तब गुड़, घी, पीपल, मिर्च आदि मिलाकर उसे पकाते हैं । यही पका हुआ मांस वेसवार कहलाता है ।

वेसा(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेश्या] दे० 'वेश्या' । उ०—जं गुणमंता अलहना गौरव लहइ भुअंग । वेसा मंदिर धुअ वसइ धुत्तह रुअ अनंग ।—कीर्ति० पृ० ३४ ।

वेसास†—संज्ञा पुं० [सं० विश्वास] दे० 'विश्वास' । उ०—मइ धणी थार मिल्हीय आस, मइला राजा थारउ कोसउ हो वेसास ।— बी० रासो, पृ० ३७ ।

वेस्ट—संज्ञा पुं० [अं०] पश्चिम दिशा ।

वेस्टकोट—संज्ञा पुं० [अं०] एक प्रकार की अँगरेजी कुरती या फतुही जिसमें बाहें नहीं होतीं और कमीज के उपर तथा कोट के नीचे पहनी जाती है ।

वेस्म(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वेश्म] दे० 'वेश्म' ।—नंद० ग्रं०, पृ० १०८ ।

वेस्या†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेश्या] दे० 'वेश्या' । उ०—जो वह वेस्या के घर रहत हैं ।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० ३२९ ।

वेस्वा†—संज्ञा स्त्री० [सं० वेश्या] दे० 'वेश्या' । उ०—वेस्वा तजा सिंगार सिद्ध की गइ सिद्धाई । रागी भूला राग जननि सुत दई बिहाई ।—पलटू०, पृ० १०४ ।

वेह†—संज्ञा पुं० [सं० वेधस्, प्रा० वेह] विधाता । ब्रह्मा । उ०—(क) जारा रजपूतां णाया, बीरत दाधी वह ।—बाँकी० ग्रं०, भाग १, पृ० ४ । (ख) सादूलो साचा गुणा वेह कियो वनराय । —बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० १५ ।

वेहत्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बाँझ गाय । वध्या गौ । २. वह गाय जिसका गर्भ असमय में गिर गया हो [को०] ।

वेहनड़ी†—संज्ञा स्त्री० [हिं० बहिन + ड़ी (प्रत्य०)] दे० 'बहन'। उ०—रहि रहि वेहनड़ी ! बच न तू रोई।—बी० रासो, पृ० ६४।

वेहना—संज्ञा पुं० [सं० वयन(=बुनना)] दे० 'बेहना'। —मैं अति नीच जाति कर वेहना, का कहुँ बूझि न सैना।—घट०, पृ० २०७।

वेहल(पु)‡—संज्ञा पुं० [देश०] चारण। उ०—बैरी वेहल वरणारा, दाठा जिण जिण देस।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० ८४।

वेहला‡—संज्ञा स्त्री० [सं० वेला, प्रा०, गुज० और प०राज० वेहला] वखत। समय। उ०—संभार्यो आवे रे वाहला, वेहला एहों जोई ठरूँ। साथी जी साथे थई ने, पेली तीरे तरूँ।—दादू०, पृ० ५२२।

वेहानस—संज्ञा पुं० [सं०] आत्महनन। जैन मतानुसार एक प्रकार की आत्महत्या [को०]।

वेहार—संज्ञा पुं० [सं०] बिहार प्रदेश का एक नाम [को०]।

वैंकि—संज्ञा पुं० [सं० वङ्कि] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वैंत†—संज्ञा पुं० [हिं० ब्योंत, बेंवत] दे० 'ब्योंत'। उ०—वैंत करै नह और विचारूँ। मार सुता मिरजा नू मारूँ।—रा० रू०, पृ० २७८।

वैंद—संज्ञा पुं० [सं० वैन्द] एक जाति का नाम। निषाद [को०]।

वैंदव—संज्ञा पुं० [सं० वैन्दव] विंदु का पुत्र [को०]।

वैंदवि—संज्ञा स्त्री० [सं० वैन्दवि] प्राचीन काल की एक जाति का नाम। इस जाति के लोग बहुत युद्धप्रिय होते थे।

वैंध्य—वि० [सं० वैन्ध्य] १. विंध्य प्रांत का। २. विंध्य पर्वत का।

वैंशतिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैंशतिका] जिसका मूल्य बीस हो। जो बीस में क्रय किया जाय। बीस में क्रीत [को०]।

वै(पु)¹—अव्य० [सं०] निश्चयसूचक शब्द या चिह्न। उ०—अदंडमान दीन, गर्व दंडमान भेद वै।—केशव (शब्द०)।

वै²—सर्व० [हिं० वह] वह ही। उसने। उ०—वै सब कीन्ह जहाँ लगि कोई।—जायसी ग्रं०, पृ० ३।

वै(पु)³—संज्ञा पुं० [सं० पति, प्रा० वइ] स्वामी। अधिपति। पति

वैकंक—संज्ञा पुं० [सं० वैकङ्क] एक पहाड़ [को०]।

वैकंकत¹—संज्ञा पुं० [सं० वैकङ्कत] दे० 'विकंकत'।

वैकंकत²—वि० जो विकंकत की लकड़ी आदि से बना हो। विकंकत का।

वैकक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह हार या माला जो एक ओर कंधे पर और दूसरी ओर हाथ के नीचे रहे। जनेऊ की तरह पहना जानेवाला हार या माला। २. इस प्रकार माला पहनने का ढंग। ३. उत्तरीय। दुपट्टा (को०)।

वैकक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] वह हार जो जनेऊ की तरह पहना गया हो। दे० 'वकक्ष' [को०]।

वैकक्षिक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैकक्षक' [को०]।

वैकाक्षकी—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैकक्षक' [सं०]।

वैकटिक¹—संज्ञा पुं० [सं०] रत्नपरीक्षक। जौहरी।

वैकटिक²—वि० विकट संबंधी। विकट का।

वैकट्य—संज्ञा पुं० [सं०] विकट होने का भाव या धर्म। विकटता। भीषणता। विशालता।

वैकतिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो रत्नों की परीक्षा करता हो। रत्नपरीक्षक। जौहरी।

वैकथिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो अपने संबंध में बहुत बढ़ाकर बातें कहा करता हो। शेखोबाज। सीटनेवाला।

वैकरंज—संज्ञा पुं० [सं० वैकरञ्ज] संकर जाति का एक प्रकार का साँप। ऐसा साँप जो फनवाले और बिना फनवाले साँपों के योग से उत्पन्न हुआ हो।

वैकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वात्स्य मुनि का एक नाम। २. एक प्राचीन जनपद का नाम जिसका उल्लेख वेदों में है।

वैकर्णायन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वैकर्ण या वात्स्य मुनि के वंश में उत्पन्न हुआ हो।

वैकर्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. बलिपशु के शरीर का भागविशेष। २. २. बलिपशु का वध करनेवाला। ३. यज्ञ में अध्वर्यु का सहायक। उ०—अध्वर्यु के तीन छोटे सहायक और होते थे—थमित्रा, वैकर्त और जमासाध्वर्यु।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ११८।

वैकर्तन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य के एक पुत्र का नाम। २. कर्ण का एक नाम। ३. सुग्रीव के एक पूर्वज का नाम। ४. वह जो सूर्यवंशी हो।

वैकर्तन²—वि० सूर्य संबंधी। सूर्य का।

वैकर्तनकुल—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य का वंश या कुल [को०]।

वैकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकर्म या अपकर्म का भाव। दुष्कृत्य।

वैकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] विकल्प का भाव। संशय। संदिग्धता। अनिश्चय। असमंजस।

वैकल्पिक—वि० [सं०] १. जो किसी एक पक्ष में हो। एकांगी। २. जिसमें किसी प्रकार का संदेह हो। संदिग्ध। अनिश्चित। अनिर्णीत। ३. जो अपने इच्छानुसार ग्रहण किया जा सके। जो चुना जा सके। ऐच्छिक। ४. जिसका विकल्प हो।

वैकल्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकल होने का भाव। विकलता। घबराहट। २. कातरता। ३. टेढ़ापन। ४. अंगहीन होने का भाव। ५. न्यूनता। कमी। ६. अभाव। न होना। ७. अक्षमता। शक्तिहीनता (को०)। ८. उत्तेजना (को०)।

वैकल्य²—वि० अधूरा। अपूर्ण।

वैकायन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

वैकारिक¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैकारिकी] १. जिसमें किसी प्रकार का विकार हुआ हो। बिगड़ा हुआ। विकृत। २. विकार संबंधी (को०)। ३. परिवर्तनशील (को०)। ४. सात्विक (को०)।

वैकारिक²—संज्ञा पुं० विकार। बिगाड़।

वैकारिककाल—संज्ञा पुं० [सं०] गर्भस्थ भ्रूण के बनने में या पूरा होने में लगनेवाला काल [को०]।

वैकारिक बंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकारिक बन्ध] सांख्य दर्शन के अनुसार तीन प्रकार के बंधनों में से एक [को॰]।

वैकार्य^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विकार का भाव या धर्म। विकार। २. परिवर्तनशीलता।

वैकार्य^{२}—वि॰ जिसमें विकार हो सकता या होता हो। विकार के योग्य।

वैकाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰; तुल॰ वंग॰ विकाल] अपराह्न काल। दोपहर के बाद का काल [को॰]।

वैकालिक—वि॰ [सं॰] १. जो अपने उपयुक्त समय पर न होकर असमय में उत्पन्न हो। २. अपराह्न संबंधी या अपराह्न काल में घटित होनेवाला।

वैकालीन—वि॰ [सं॰] दे॰ 'वैकालिक' [को॰]।

वैकिंकट—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकिङ्कट] मौत। काल। मृत्यु। विकिंकर [को॰]।

वैकिर—वि॰ [सं॰] क्षरित। चूआ हुआ। छना हुआ [को॰]।

वैकिरवारि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चुआकर या टपकाकर छाना हुआ जल आदि [को॰]।

वैकुंठ^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकुण्ठ] १. विष्णु का एक नाम। २. पुराणानुसार विष्णु का धाम या स्थान। वह स्थान जहाँ भगवान् या विष्णु रहते हैं।

विशेष—पुराणानुसार यह धाम सत्यलोक से भी ऊपर है। यह धाम सबसे श्रेष्ठ माना गया है और कहा गया है कि जिन्हें विष्णु मोक्ष देते हैं, वे इसी धाम में निवास करते हैं। यहाँ रहनेवाले न तो बुड्ढे होते हैं और न मरते हैं।

३. वैकुंठ में रहनेवाले देवता। ४. स्वर्ग (क्व॰)। ५. इंद्र। ६. सफेद पत्तोंवाली तुलसी। ७. अभ्रक। सितार्जक (को॰)। ८. ब्रह्मा के महीने का चौबीसवाँ दिन (को॰)। ९. संगीत में एक प्रकार का ताल (को॰)।

वैकुंठगति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वैकुण्ठगति] वैकुंठ लोक की प्राप्ति [को॰]।

वैकुंठ चतुर्दशी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वैकुण्ठ चतुर्दशी] कार्तिक शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी [को॰]।

वैकुंठत्व—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकुण्ठत्व] वैकुंठ का भाव या धर्म।

वैकुंठपुरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ वैकुण्ठपुरी] विष्णु नगरी [को॰]।

वैकुंठभुवन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकुण्ठभुवन] विष्णुलोक [को॰]।

वैकुंठलोक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैकुण्ठलोक] विष्णुलोक [को॰]।

वैकुंठीय—वि॰ [सं॰ वैकुण्ठीय] वैकुंठ संबंधी। वैकुंठ का।

वैकृत^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विकार। खराबी। २. वीभत्स रस। ३. बीभत्स रस का आलंबन। जैसे,—खून, गोश्त, हड्डी आदि। ४. विरूपता। विकृति (को॰)। ५. अपशकुन या अनिष्टसूचक घटना (को॰)। ६. कपट (को॰)। ७. उद्वेग (को॰)। ८. अहंकार (को॰)। ९. द्वेष। शत्रुता (को॰)।

वैकृत^{२}—वि॰ [वि॰ स्त्री॰ वैकृती] १. जो विकार से उत्पन्न हुआ हो। २. जो सहज में ठीक न हो सके। दुःसाध्य। ३. विकृत। विकारग्रस्त (को॰)। ४. सात्विक (को॰)। ५. अप्राकृतिक (को॰)।

वैकृतज्वर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह ज्वर जो ऋतु के अनुसार स्वाभाविक न हो, बल्कि किसी और ऋतु के अनुकूल हो। उ॰—इसके (वोताद क्रम के) विपरीत जो ज्वर हो उसको वैकृत ज्वर कहते हैं।—माधव॰, पृ॰ ३६।

विशेष—साधारणतः वर्षा ऋतु में वायु, शरद ऋतु में पित्त और वसंत ऋतु में कफ कुपित होता हैं। यदि वर्षा ऋतु में वायु के प्रकोप से ज्वर हो, तो वह वैकृत ज्वर कहा जायगा।

वैकृतविवर्त—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कष्ट। पीड़ा। दुर्दशा [को॰]।

वैकृतिक—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ वैकृतिकी] १. नैमित्तिक। २. परिवर्तित (को॰)। ३. विकृति संबंधी (को॰)।

वैकृत्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वीभत्स रस। २. परिवर्तन। विकार। ६. अपकर्षण। अपकर्ष (को॰)।

वैक्रम—वि॰ [सं॰] विक्रम संबंधी। पराक्रम संबंधी [को॰]।

वैक्रमीय—वि॰ [सं॰] विक्रम का। विक्रम संबंधी। जैसे,—वैक्रमीय संवत्।

वैक्रांत—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैक्रान्त] एक प्रकार की मणि जिसे चुन्नी कहते हैं।

वैक्रिय—वि॰ [सं॰] १. जो बिकने को हो। बेचा जाने योग्य। बिक्री का। २. विकारजन्या। विकारी। परिवर्तनशील।

वैक्लव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. व्याकुलता। घबराहट। अस्तव्यस्तता। २. शोक। ३. व्यथा [को॰]।

वैक्लव्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'वैक्लव' [को॰]।

वैखरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. कंठ से उत्पन्न होनेवाले स्वर का एक विशिष्ट प्रकार। उच्च तथा गंभीर और बहुत स्पष्ट स्वर। वह वाणी या वाक् जिसमें स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ स्पष्ट सुनाई देती हैं। व्याकरण दर्शन के अनुसार वाग् के चार भेदों (परा, पश्यंती, मध्यमा और वैखरी) में स्थूलतम श्रवणीय भेद। २. वक्तृत्वशक्ति। वाक्शक्ति। ३. वाग्देवी।

वैखान—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विष्णु [को॰]।

वैखानस^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जो वानप्रस्थ आश्रम में हो। २. प्राचीन काल के एक प्रकार के ब्रह्मचारी या तपस्वी जो प्रायः वन में रहा करते थे। ३. प्रजापति के नख एवं लोम से उत्पन्न एक ऋषि जिन्होंने वैखानस नामक धर्मसूत्र की रचना की थी। उ॰—वैखानस धर्मसूत्र एवं हिरण्यकेशिन् के धर्मसूत्र लगभग तीसरी ईस्वी सदी के हैं।—हिंदु॰ सभ्यता, पृ॰ १४६। ४. वैष्णव संप्रदाय की एक शाखा (को॰)।

वैखानस^{२}—वि॰ वानप्रस्थ आश्रम संबंधी [को॰]।

वैखानसि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

वैखानसीय—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक उपनिषद् का नाम।

वैखानसीयोपनिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद्। दे० वैखानसीय (को०)।

वैखारक१—संज्ञा पुं० [सं०] चरपरा और नमकीन स्वाद [को०]।

वैखारक२—वि० चरपरा और नमकीन [को०]।

वैगंधिक—संज्ञा पुं० [सं० वैगन्धिक] गंधक।

वैगंधिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वैगन्धिका] एक क्षुप का नाम [को०]।

वैगनेट—संज्ञा स्त्री० [अं०] एक प्रकार की हल्की बग्गी या घोड़ागाड़ी जिसमें पीछे की ओर दाहिने बाएँ बैठने की लंबी जगह होती है।

वैगलेय—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार भूतों का एक गण।

वैगुण्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. गुणहीन होने का भाव। विगुणता। २. अपराध। दोष। उ०—धन्य, भरत बोले गद्गद हो, दूर विकृति वैगुण्य हुआ। उस तपस्विनी मेरी माँ का आज पाप भी पुण्य हुआ।—साकेत पृ० ३८०। ३. नीचता। वाहियातपन। ४. गुणों की भिन्नता (को०)। ५. अकुशलता (को०)।

वैगुन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वैगुण्य] दे० 'वैगुण्य'। उ०—जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिए। गुन संकर वैगुन वै रहिए।—माधवानल०, पृ० २१६।

वैग्रहिक—संज्ञा पुं० [सं०] विग्रह या शरीर संबंधी। शरीर का।

वैघटिक—संज्ञा पुं० [सं०] रत्नपारखी। जौहरी [को०]।

वैघसिक—वि० [सं०] विघस अर्थात् जूठा खानेवाला [को०]।

वैघात्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो घात करने के योग्य हो। मार डालने लायक।

वैचक्षण्य—संज्ञा पुं० [सं०] विचक्षण या निपुण होने का भाव। निपुणता। होशियारी।

वैचित्य—संज्ञा पुं० [सं०] चित्त की भ्रांति। भ्रम। अन्यमनस्कता। दुःख। कष्ट।

वैचित्र—संज्ञा पुं० [सं०] विचित्रता। विलक्षणता। दे० 'वैचित्र्य'।

वैचित्रवीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] विचित्रवीर्य की संतान—१. धृतराष्ट्र। २. पांडु। ३. विदुर।

वैचित्रवीर्यक—वि० [सं०] विचित्रवीर्य का। विचित्रवीर्य संबंधी [को०]।

वैचित्र्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विचित्र होने का भाव। विचित्रता। विलक्षणता। २. विभिन्नता। भेद। फर्क। ३. सुंदरता। खूबसूरती। ४. शोक। दुःख। गम (को०)। ५. नैराश्य (को०)। ६. आश्चर्य (को०)।

वैचित्र्यवीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] विचित्रवीर्य की संतान, धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर आदि।

वैच्युत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वैच्युति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विच्युत होने का कार्य या भाव। विच्युति। पतन। गिरना।

वैजनन—संज्ञा पुं० [सं०] वह मास जिसमें किसी स्त्री को संतान उत्पन्न हो। प्रसवमास।

वैजन्य—संज्ञा पुं० [सं०] विजन होने का भाव। विजनता। एकांत।

वैजयंत—संज्ञा पुं० [सं० वैजयन्त] १. इंद्र की पुरी का नाम। २. इंद्र। ३. घर। ४ अग्निमंथ नामक वृक्ष। अरणी। ५. जैनों के अनुसार एक लोक जो सातों स्वर्गों से भी ऊपर है। ६. स्कंद (को०)। ७. पर्वतविशेष (को०)। ८. इंद्र की पताका (को०)। ९. पताका। झंडा (को०)। १०. भारत द्वारा निर्मित युद्ध में आक्रामक प्रकार विशेष के एक टैंक का नाम।

वैजयंतिक—संज्ञा पुं० [सं० वैजयन्तिक] वह जो पताका या झंडा उठाता हो। झंडा उठानेवाला।

वैजयंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० वैजयन्तिका] दे० 'वैजयंती'।

वैजयंती—संज्ञा स्त्री० [सं० वैजयन्ती] १. पताका। झंडा। २. जयंती नामक वृक्ष। ३. एक प्रकार की माला जो पाँच रंगों की और घुटनों तक लटकती हुई होती थी। कहते हैं, यह माला श्रीकृष्ण जी पहना करते थे। ४. चिह्न। लक्षण (को०)। ५. विजयमाल (को०)। ६. अग्निमंथ वृक्ष (को०)। ७. एक कोश का नाम (को०)। ८. हार। माला (को०)।

वैजयिक—वि० [सं०] विजय संबंधी। विजय का। २. विजय देनेवाला। जिससे जय प्राप्त हो (को०)। ३. विजय का आभास या सूचना देनेवाला (को०)।

वैजयी—संज्ञा पुं० [सं० वैजयिन्] दे० 'विजयी'।

वैजवन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि जो एक वैदिक शाखा के प्रवर्तक थे। पैजवन। वैजन।

वैजात्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विजातीय होने का भाव। जातिबहिष्कृति। २. विलक्षणता। अद्भुतता। ३. बदचलनी। लंपटता। ४. वर्ग या जातिगत भिन्नता। वर्णभेद। प्रकारभेद।

वैजिक१—संज्ञा पुं० [सं०] १. आत्मा। २. हेतु। कारण।

वैजिक२—वि० १. बीजसंबंधी। बीज का। २. वीर्यसंबंधी। वीर्य का।

वैज्ञानिक१—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विज्ञान का अच्छा ज्ञाता हो। विज्ञान जाननेवाला। २. निपुण। दक्ष। होशियार।

वैज्ञानिक२—वि० विज्ञान संबंधी। विज्ञान का। जैसे,—वैज्ञानिक खोज।

वैडाल—वि० [सं०] विडाल का। विडाल संबंधी [को०]।

वैडालव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] पाप और कुकर्मरत होते हुए भी ऊपर से साधु बने रहना।

वैडालव्रती—संज्ञा पुं० [सं० वैडालव्रतिन्] वह तपस्वी या साधु जो वास्तव में पापी और कुकर्मी हो। दुष्ट और नीच धर्मध्वजी।

वैडूर्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैदूर्य'।

वैडूर्यकांति—वि० [सं० वैडूर्यकान्ति] वैडूर्य की तरह दीप्त। वैडूर्य के समान कांतिवाला [को०]।

वैडूर्यप्रभ—संज्ञा पुं० [सं०] एक नाग का नाम [को०]।

वैडूर्यमणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैदूर्य नामक रत्नविशेष [को०]।

वैडूर्यशिखर—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम [को०]।

वैण१—वि० [सं०] वेणु संबंधी। बाँस का।

वैण^{२}—संज्ञा पुं० बाँस का कार्य करनेवाला। बंसोर या धरिकार [को०]।

वैण^{३} ⓟ- संज्ञा पुं० [सं० वचन, प्रा० वयण, अप० एवं राज० वैण] दे० 'वचन'। उ०—ढोला, खील्यौरी कहइ, सुणे कुढंगा वैण। —ढोला०, दू० ४३८।

वैणव^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाँस का फल। बाँस का चावल। २. बाँस का वह डंडा जो यज्ञोपवीत के समय धारण किया जाता है। ३. वंशी। वेणु। ४. बँसोरा। बाँस का काम करनेवाला (को०)। ५ वेणु नदी से प्राप्त सोना (को०)। ६ माहिष्य से उत्पन्न ब्राह्मणी का पुत्र। ७. पुराणानुसार कुशद्वीप का एक वर्ष (को०)।

वैणव—वि० १. वेणु संबंधी। बाँस का। २. बाँस से बना हुआ (को०)। ३. बाँसुरी संबंधी (को०)।

वैणविक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेणु बजाता हो। वंशी बजानेवाला। वंशीवादक।

वैणवी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वंशलोचन।

वैणवी^{२}—संज्ञा पुं० [सं० वैणविन्] १. वह जो वेणु बजाता हो। २. शिव का एक नाम।

वैणावत—संज्ञा पुं० [सं०] धनुष [को०]।

वैणिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वीणा बजाता हो। बीनवादक। बीनकार। २. विष्ठा सी गंध। (को०)।

वैणुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेणु बजाने में चतुर हो। वंशी बजानेवाला। २. हाथी का अंकुस।

वैणुकीय—वि० [सं०] १. वेणु संबधी। वेणु का। २. वैणुक संबंधी।

वैणेय—संज्ञा पुं० [सं०] वेद की एक शाखा का नाम।

वैण्य—संज्ञा पुं० [सं०] राजा वेणु के पुत्र पृथु का एक नाम।

वैतंडिक—संज्ञा पुं० [सं० वैतण्डिक] १. वह जो बहुत अधिक वितंडा करता हो। तार्किक। तर्कप्रिय। हरेक बात में तर्क उपस्थित करनेवाला। २. व्यर्थ का झगड़ा या बहस करनेवाला।

वैतंडी—संज्ञा पुं० [सं० वैतण्डिन्] पुराणानुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम।

वैतंसिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो मांस बेचता हो। मांसिक। बूचड़। कसाई। २. पक्षियों को फँसानेवाला। व्याध। बहेलिया (को०)। ३. व्याध का पेशा। पक्षियों को फँसाने का कार्य (को०)।

वैतत्य—संज्ञा पुं० [सं०] विततता। फैलाव। विस्तार [को०]।

वैतथ्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विफल होने का भाव। विफलता। २. वितथ होने का भाव। असत्यता।

वैतनिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेतन लेकर काम करता हो। तनखाह लेकर काम करनेवाला। कर्मचारी। नौकर। भृत्य। मजदूर।

वैतरण^{१}—वि० [सं०] १. नदी को पार करने का अभिलाषी। २. वैतरणी पार कराने का साधन [को०]।

वैतरण^{२} संज्ञा पुं० [सं०] वितरण करने का भाव या क्रिया। उ०—सविधि हो वैतरण, सुकृत कारण करण। —अर्चना, पृ० २६।

वैतरणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'वैतरणी'।

वैतरणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रसिद्ध पौराणिक नदी जो यम के द्वार पर मानी जाती है।

विशेष—कहते हैं, यह नदी बहुत तेज बहती है, इसका जल बहुत ही गरम और बदबूदार है और उसमें हड्डियाँ, लहू तथा बाल आदि भरे हुए हैं। यह भी माना जाना है कि प्राणी को मरने पर पहले यह नदी पार करनी पड़ती है, जिसमें उसे बहुत कष्ट होता है। परंतु यदि उसने अपनी जीवितावस्था में गोदान किया हो, तो वह उसी गौ की सहायता से सहज में इस नदी के पार उतर जाता है। पुराणों में लिखा है कि जब सती के वियोग में महादेव जी रोने लगे, तब उनके आँसुओं का प्रवाह देखकर देवता लोग बहुत डरे और उन्होंने शनि से प्रार्थना की कि तुम इस प्रवाह को ग्रहण करके सोख लो। शनि ने उस धारा को ग्रहण करना चाहा, पर उसे सफलता नहीं हुई। अंत में उसी धारा से यह वैतरणी नदी बनी। इसका विस्तार दो योजन माना गया है। पापियों को यह नदी पार करने में बहुत कष्ट होता है।

२. उड़ीसा की एक नदी का नाम जो बहुत पवित्र मानी जाती है।

वैतस^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुरुष की मूत्रेंद्रिय। लिंग। २. अम्लबेंत। ३. बेंत की बनी वस्तु। ४. बेंत की टोकरी (को०)।

वैतस^{२}—वि० १. बेंत सबंधी। बेंत जैसा [को०]।

वैतसीवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेंत की तरह झुक जाने की आदत। नम्रता की प्रवृत्ति [को०]।

वैतसेन—संज्ञा पुं० [सं०] राजा पुरूरवा का एक नाम जो वीतसेन के पुत्र थे।

वैतस्त—वि० [सं०] वितस्ता नदी से संबंधित या प्राप्त [को०]।

वैतस्तिक—वि० [सं०] वितस्ति परिमित (शर)। (बाण) जो एक बित्ता लंबा हो [को०]।

वैतस्त्य—वि० [सं०] वितस्ता नदी संबंधी। वितस्ता से मिला हुआ [को०]।

वैतहव्य—संज्ञा पुं० [सं०] आर्यों का एक प्रधान समूह जो वीतिहव्य के गोत्र का था। उ०—प्रधान आर्य समूहों में थे—शिवि, मत्स्य, वैतहव्य, विदर्भ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७६।

वैताढ्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

वैतान^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. खेमा। शिविर। समूह। तंबू। २. यज्ञ की एक विशेष विधि। ३. यज्ञीय हवि। यज्ञ में प्रयुक्त हवि [को०]।

वैतान^{२}—वि॰ [वि॰ स्त्री॰ वैतानी] १. शुद्ध । पवित्र । पुनीत । २. यज्ञसंबंधी । यज्ञ का । यज्ञीय [को॰] ।

वैतानिक^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह हवन या यज्ञ आदि जो श्रौत विधानों के अनुसार हो । २. वह अग्नि जिससे अग्निहोत्र आदि कृत्य किए जायँ ।

वैतानिक^{२}—वि॰ दे॰ ‘वैतान^{२}’ [को॰] ।

वैतानिकी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ ‘वैतान^{१}’ [को॰] ।

वैतान्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] निर्वेद [को॰] ।

वैताल^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] स्तुतिपाठक । वैतालिक ।

वैताल^{२} वि॰ वेताल संबंधी । वेताल का ।

वैतालकि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. एक प्राचीन आचार्य का नाम जो ऋग्वेद की एक शाखा के प्रवर्तक थे ।

वैतालरस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वैद्यक में एक प्रकार का रस ।

विशेष—यह रस गंधक, मिर्च और हरताल आदि के योग से बनता है और सन्निपातिक ज्वर तथा मूर्छा आदि में उपयोगी माना जाता है ।

वैतालिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. प्राचीन काल का वह स्तुतिपाठक जो प्रातःकाल राजाओं को उनकी स्तुति करके जगाया करता था । स्तुतिपाठक । उ॰—वैतालिक विहंग भाभी के, संप्रति ध्यानलग्न से हैं ।—पंचवटी, पृ॰ ६ । २. चौंसठ कलाओं में से किसी एक में प्रवीणता (को॰) । ३. बाजीगर (को॰) । ४. वह जो गाने में ताल का ध्यान न रखता हो । विताल गानेवाला । ५. वेताल का उपासक । वेताल को पूजनेवाला व्यक्ति [को॰] ।

वैतालिकव्रत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] स्तुतिपाठक की क्रिया या कार्य । वैतालिक का काम [को॰] ।

वैताली—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैतालिन्] कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम ।

वैतालीय^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक वर्णवृत्त जिसके पहले तथा तीसरे चरणों में चौदह और दूसरे तथा चौथे चरणों में सोलह मात्राएँ होती हैं ।

वैतालीय^{२}—वि॰ वेताल संबंधी । वेताल का ।

वैतुष्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] तुषरहित करना । भूसी निकालना [को॰] ।

वैतृष्ण्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. तृष्णा से रहित होने का भाव । तृष्णा का शमन । तृष्णाशांति । २. आकांक्षाओं, इच्छाओं से मुक्ति । निर्वेद (को॰) ।

वैत्तपाल्य—वि॰ [सं॰] १. वित्तपाल संबंधी । २. कुबेरसंबंधी [को॰] ।

वैत्रक—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ वैत्रकी] बेंत का । बेंत संबंधी [को॰] ।

वैत्रकीय—वि॰ [सं॰] बेंत का । वेत्रनिर्मित । बेंत संबंधी [को॰] ।

वैत्रासुर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक राक्षस । दे॰ ‘वेत्रासुर’ [को॰] ।

वैदंभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैदम्भ] शिव का एक नाम ।

वैद^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ वैदी] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम जो विदु नामक ऋषि के पुत्र थे । २. विद्वान् पुरुष (को॰) ।

वैद^{२}—वि॰ विद्वान् या पंडित संबंधी ।

वैद^{३}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैद्य, प्रा॰, वैद] दे॰ ‘वैद्य’ ।

वैदक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ वैद्यक] दे॰ ‘वैद्यक’ ।

वैदग्ध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विदग्ध या पूर्ण पंडित होने का भाव । पांडित्य । विद्वत्ता । २. कार्यकुशलता । पटुता । ३. चतुरता । धूर्तता । चालाकी । ४. रसिकता । ५. शोभा । सौंदर्य । ६. हावभाव । ७. प्रत्युत्पन्नमतित्व । प्रतिभा (को॰) ।

वैदग्धी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. चतुरता । २. प्रवीणता । ३. सुंदरता । ४. प्रत्युत्पन्न मतित्व । ५. सरसता । ६. विद्वत्ता [को॰] ।

वैदग्ध्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विदग्ध या पूर्ण पंडित होने का भाव । पांडित्य । विद्वत्ता । २. दे॰ ‘वैदग्ध’ ।

वैदत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह जो किसी विषय का अच्छा ज्ञाता हो । जानकार ।

वैदनृत—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का साम ।

वैदर्भ^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विदर्भ देश का राजा या शासक । २. दमयंती के पिता भीमसेन का एक नाम । ३. रुक्मिणी के पिता भीष्मक का एक नाम । ४. वह जो बातचीत करने में बहुत चतुर हो । ५. बातचीत करने की चतुराई । वाक्चातुरी । ६. एक रोग जिसमें मसूड़े फूल जाते हैं और उसमें पीड़ा होती है ।

वैदर्भ^{२}—वि॰ १. जो विदर्भ देश में उत्पन्न हुआ हो । २. विदर्भ देश का । ३. वाक्पटु । वार्ताकुशल (को॰) ।

वैदर्भक^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह जो विदर्भ देश का निवासी हो ।

वैदर्भक^{२}—वि॰ विदर्भ देश का । विदर्भ से संबद्ध [को॰] ।

वैदर्भी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. काव्य की एक रीति । वह रीति या शैली जिसमें मधुर वर्णों द्वारा मधुर रचना होती है । कालिदास वैदर्भी के उत्कृष्ट कवि माने जाते हैं ।

विशेष—वामन के मतानुसार जिस काव्य रीति में श्लेष, प्रसाद, समता, माधुर्य, सौकमार्य, अर्थव्यक्ति, उदारता, ओजस, कांति और समाधि आदि दस शब्दगुण रहते हैं वह काव्य रीति वैदर्भी कही गई है । यह सबसे अच्छी समझी जाती है ।

२. अगस्त्य ऋषि की स्त्री का एक नाम । ३. दमयंती । ४. रुक्मिणी । ५. विदर्भ देश की राजकुमारी (को॰) । ६. विदर्भ देश की राजनगरी । कुंडिनपुर (को॰) ।

वैदल^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मिट्टी का वह पात्र जिसमें भिखमगे भीख माँगते हैं । खप्पर । २. एक प्रकार की पीठी । ३. बेंत या बाँस की बनी डलिया या आसन (को॰) । ४. एक विषैला कीट (को॰) । ५. द्विदल अन्न । दाल (को॰) ।

वैदल^{२}—वि॰ १. बेंत का अथवा बाँस का बना हुआ [को॰] ।

वैदातिक—वि॰ [सं॰ वैदान्तिक] वेदांत का ज्ञाता । वेदांती [को॰] ।

वैदारिक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर ।

विशेष—इसमें वायु का प्रकोप कम, पित्त का मध्यम और कफ का अधिक होता है । रोगी को हड्डियों और कमर में पीड़ा होती है, उसे भ्रम, क्लांति, श्वास, खाँसी तथा हिचकी होती है, और सारा शरीर सुन्न हो जाता है । ऐसा सन्निपात जल्दी अच्छा नहीं होता ।

वैदिक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेदों में बतलाए हुए कर्मकांड का अनुष्ठान करता हो। वेद में कहे हुए कृत्यों को करनेवाला। २. वह जो वेदों आदि का अच्छा ज्ञाता हो। वेदों का पंडित।

वैदिक^2—वि० १. जो वेदों में कहा गया हो। वेदविहित। उ०—करनबेध चूड़ाकरन, लौकिक वैदिक काज। गुरु आयसु भूपति करत, मंगल साज समाज।—तुलसी ग्रं०, पृ० ८२। २. वेदसंबंधी। वेद का। जैसे, वैदिक काल। ३. धर्मात्मा (को०)। ४. वेदज्ञ। वेदों का ज्ञाता (को०)। ५. पूत। शुद्ध। पवित्र (को०)।

वैदिककर्म—संज्ञा पुं० [सं० वैदिककर्मन्] वेदानुकूल कर्म। वेदविहित कर्म (को०)।

वैदिकपाश—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो वेदविद्या में अल्पज्ञ हो। वेद का थोड़ा सा ज्ञान रखनेवाला व्यक्ति (को०)।

वैदिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बनजामुन (को०)।

वैदिश—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विदिशा का निवासी हो।

वैदिश्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन नगर का नाम जो विदिशा के पास था (को०)।

वैदुरिक—संज्ञा पुं० [सं०] विदुर का नीतिसिद्धांत। विदुरनीति (को०)।

वैदुल—संज्ञा पुं० [सं०] बेंत की जड़।

वैदुष—संज्ञा पुं० [सं०] विद्वान्। पंडित।

वैदुषी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विद्वत्ता। २. बुद्धिमत्ता (को०)।

वैदुष्य—संज्ञा पुं० [सं०] विद्वत्ता। पांडित्य।

वैदूर्य—संज्ञा पुं० [सं०] धूमिल रंग का एक प्रकार का रत्न या बहुमूल्य पत्थर जिसे 'लहसुनिया' कहते हैं। दे० 'लहसुनिया'। दीर्घ खंभे हैं बने वैदूर्य के; ध्वजपटों में चिह्न कुलगुरु सुर्य के।—साकेत, पृ० १६।

विशेष—फलित ज्योतिष के अनुसार इस रत्न के अधिष्ठाता देवता केतु माने गए हैं और कहा गया है कि जब केतु ग्रह खराब या बिगड़ा हुआ हो, तो यह रत्न धारण करना चाहिए। हमारे यहाँ इसकी गणना महारत्नों में है। सुतार, घन, अभ्रच्छ, कलिक और व्यंग ये पाँच इसके गुण और कर्कर, कर्कश, त्रास, कलंक और देह ये पाँच इसके दोष कहे गए हैं। कुछ लोगों का मत है कि यह रत्न विदूर पर्वत पर होता है, इसी से वैदूर्य कहलाता है। वैद्यक के अनुसार यह अम्ल, उष्ण, कफ तथा वायु का नाशक और गुल्म तथा शूल को शांत करनेवाला है।

पर्या०—केतुरत्न। अभ्ररोह। विदूररत्न। विदूरज। खराब्जांकुर।

वैदेशिक^1—वि० विदेश संबंधी। विदेश का।

वैदेशिक^2—वह जो अन्य देश का रहनेवाला हो। अन्य देशवासी व्यक्ति। उ०—श्रोत्रियपुत्र, पदिकपुत्र, वेदज्ञ, वैद्य, वैदेशिक, वार्तिक, वक्ता, व्यसनी, व्यावहारिक, विद्यामंत।—वर्ण०, पृ० १०।

यौ०—वैदेशिक नीति = विदेश संबंधी नीति। किसी राष्ट्र की वह नीति जो अन्य राष्ट्रों अर्थात् विदेशों के साथ बरती जाती है। उ०—उसे ठीक प्रकार से समझने के लिये हमें उसको वैदेशिक नीति को भली भाँति समझने का प्रयत्न करना चाहिए।—आ० अ० रा०, पृ० १०७।

वैदेश्य^1—वि० [सं०] 'वैदेशिक'।

वैदेश्य^2—संज्ञा पुं० विदेशी होना। अन्यदेशीय होने का भाव।

वैदेश्यसार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] (कौटिल्य अर्थशास्त्र द्वारा प्रयुक्त शब्द) विदेशी माल।

वैदेह^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजा निमि के पुत्र का नाम।

विशेष—कहते हैं, जब राजा निमि निःसंतान मर गए, तब धर्म का लोप हो जाने के भय से ऋषियों ने अरणी से मथकर इन्हें, राज्य करने के लिये, उत्पन्न किया था।

२. वणिक्। सौदागर। ३. विदेह देश का नरेश (को०)। ४. अंतःपुर का पहरुआ। रनिवास का प्रहरी (को०)। ५. प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति।

विशेष—इस जाति के जनों का काम अंतःपुर में पहरा देना था। मनु के अनुसार इस जाति की उत्पत्ति ब्राह्मणी माता और वैश्य पिता से है।

वैदेह^2—वि० १. विदेह देश से संबंधित। विदेह देश का। २. स्निग्धवर्ण और सुंदर आकृतिवाला (को०)।

वैदेहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वणिक्। व्यापारी। २. वैदेह नामक एक वर्णसंकर जाति। ३. विदेह देश का व्यक्ति। (को०)।

वैदेहक-व्यंजन—संज्ञा पुं० [सं० वैदेहकव्यञ्जन] कौटिल्य के अनुसार वह जासूस जो व्यापारी के छद्म वेश में हो। व्यापारी के वेश में गुप्तचर।

विशेष—ये गुप्तचर समाहर्ता के अधीन काम करते थे और व्यापारियों में मिलकर उनकी काररवाइयों की सूचना दिया करते थे।

वैदेहिक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैदेह'—२. और ३.।

वैदेही—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विदेहराज जनक की कन्या, सीता। २. वैदेह जाति की स्त्री। ३. रोचना। ४. पीपल। पिप्पली। ५. हरिद्रा। हल्दी (को०)। ६. गाय (को०)। ७. वणिक् जाति की स्त्री (को०)।

वैद्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. पंडित। विद्वान्। २. वह जो आयुर्वेद का ज्ञाता हो और उसके अनुसार रोगियों की चिकित्सा आदि करता हो। भिषक्। चिकित्सक। ३. वासक वृक्ष। अड़ूसा। ४. एक जाति जो प्रायः बंगाल में पाई जाती है। इस जाति के लोग अपने आपको 'अंबष्ठसंतान' कहते हैं। दे० 'अंबष्ठ—३'। ५. एक जाति जिसकी उत्पत्ति शूद्र पिता और वैश्य माता से कही गई है (को०)। ६. एक ऋषि (को०)।

वैद्य^2—वि० [वि० स्त्री० वैद्यी] १. वेद संबंधी। वेद का। २. आयुर्वेद संबंधी (को०)।

वैद्यक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह शास्त्र जिसमें रोगों के निदान और चिकित्सा आदि का विवेचन हो। चिकित्साशास्त्र। आयुर्वेद। विशेष दे० 'आयुर्वेद'। २. वैद्य। चिकित्सक (को०)।

वैद्यक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] चिकित्सा कर्म। वैदगी। डाक्टरी। वैद्य का कर्म [को०]।

वैद्यनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिहार का एक प्रसिद्ध तीर्थ जो सयाल परगने के अंतर्गत है। वहाँ इसी नाम का शिव का एक प्रसिद्ध मंदिर है। २. महादेव। शिव (को०)। ३. धन्वंतरि का एक नाम (को०)। ४. एक भैरव (को०)।

वैद्यबंधु—संज्ञा पुं० [सं० वैद्यवन्धु] १. आरग्वध नामक वृक्ष। अमलतास। २. वैद्य का भाई (को०)।

वैद्यमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० वैद्यमातृ] १. वासक वृक्ष। अड़ूसा। २. वैद्य की माता (को०)।

वैद्यमानी—वि० [सं० वैद्यमानिन्] ज्ञाता न होते हुए भी अपने को वैद्य माननेवाला [को०]।

वैद्यराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो अच्छा वैद्य हो। वैद्यों में श्रेष्ठ। २. धन्वंतरि का एक नाम (को०)। ३. शार्ङ्गधर के पिता का नाम।

वैद्यराट्—संज्ञा पुं० [सं० वैद्यराज्] दे० 'वैद्यराज' [को०]।

वैद्यविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] आयुर्वेद। चिकित्साशास्त्र [को०]।

वैद्यशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यविद्या। आयुर्वेद [को०]।

वैद्यसिंही—संज्ञा स्त्री० [सं०] वासक वृक्ष। अड़ूसा।

वैद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली। २. वैद्य की पत्नी (को०)। ३. वैद्य का कर्म करनेवाली स्त्री [को०]।

वैद्याधर—वि० [सं०] विद्याधर नामक देवयोनि संबंधी। विद्याधर का। विद्याधर संबंधी [को०]।

वैद्यानि—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषिपुत्र का नाम।

वैद्यावृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] फुटकर। खुदरा। थोक का उल्टा। जैसे—वैद्यावृत्य विक्रय।

वैद्युत^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैद्युती] विद्युत् संबंधी। बिजली का।

वैद्युत^2—संज्ञा पुं० १. विद्युत् का देवता। २. पुराणानुसार शाल्मलि द्वीप के एक वर्ष का नाम। ३. वपुष्मान् का पुत्र (को०)। ४. वज्राग्नि। बिजली की अग्नि (को०)।

वैद्युतगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

वैद्योत—वि० [सं०] क्रोधाविष्ट। क्रोध से भरा हुआ [को०]।

वैद्रुम—वि० [सं०] विद्रुम संबंधी। मूँगे का।

वैध^1—वि० [सं०] १. जो विधि के अनुसार हो। कायदे कानून के मुताबिक। कानून या विधिसमत। जैसे—वैध आंदोलन, वैध अधिकार। २. उचित। जायज। ठीक।

वैधर्मिक—वि० [सं०] धर्मविरुद्ध। विधर्म या विधर्मियों का। विधर्म संबधी [को०]।

वैधर्म्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विधर्मी होने का भाव। २. वह जो अपने धर्म के अतिरिक्त अन्यान्य धर्मों के सिद्धांतों का भी अच्छा ज्ञाता हो। ३. नास्तिकता। ४ असमानता। भिन्नता (को०)। ५. गुण, धर्म या कर्तव्य की भिन्नता (को०)। ६. वैपरीत्य। विपरीतता (को०)। ७. अवैधता (को०)।

वैधव^1—संज्ञा पुं० [सं०] विधु अर्थात् चंद्रमा के पुत्र, बुध।

वैधव^2—वि० विधु संबंधी। चंद्रमा संबंधी [को०]।

वैधवेय—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विधवा के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो। विधवा का पुत्र।

वैधव्य—संज्ञा पुं० [सं०] विधवा होने का भाव। रँड़ापा।

यौ०—वैधव्यलक्षण = विधवा होने का लक्षण या ग्रहयोग। वैधव्यलक्षणोपेता = वह कन्या जिसमें विधवा हो जाने के लक्षण हों। ज्योतिष के अनुसार ऐसी कन्या विवाह के अयोग्य समझी जाती है। वैधव्यवर्णी = विधवा वा सौभाग्यहीना स्त्री की वर्णी।

वैधस^1—संज्ञा पुं० [सं०] राजा हरिश्चंद्र का एक नाम जो इक्ष्वाकुवंशी राजा वेधस के पुत्र थे।

वैधस^2—वि० १ वेधा या ब्रह्मा द्वारा निर्मित। २. भाग्य या विधि द्वारा परिचालित [को०]।

वैधातकि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैधात्र'।

वैधात्र—संज्ञा पुं० [सं०] सनत्कुमार, जो विधाता के पुत्र माने जाते हैं।

वैधात्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्राह्मी नाम की जड़ी।

वैधानिक—वि० [सं०] १. विधान के अनुकुल। विधि के मुताबिक। २. विधान संबंधी [को०]।

वैधिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैधिकी] विधिविहित। विधि के अनुकूल। विधिसम्मत [को०]।

वैधुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भाग्य की प्रतिकूलता। विपत्ति [को०]।

वैधुर्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विधुर होने का भाव। हताश या कातर होने का भाव। २. भ्रम। संदेह। ३. कंपित होने का भाव। ४. वियोग (को०)। ५. अनुपस्थिति। अविद्यमानता (को०)। ६. कष्ट। क्लेश। क्षोभ (को०)।

वैधुमाग्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नगरी का नाम जो शाल्व देश में थी।

वैधृत—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विधृति का पुत्र या संतान हो। २. ग्यारहवें मन्वंतर के एक इंद्र का नाम। ३. एक अशुभ योग। वैधृति (को०)।

वैधृत वाशिष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम।

वैधृति—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्योतिष में विष्कंभ आदि सत्ताइस योगों मे से एक योग जो अशुभ माना जाता है। इस योग में यात्रा या कोई शुभ कार्य करना वर्जित है। २. भागवत के अनुसार एक देवता, जो विधृति के पुत्र हैं।

वैधृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. 'वैधृति'।

वैधेय—वि० [सं०] १. विधि संबंधी। विधि का। २. नियमानुकूल। ३. मूर्ख। बेवकूफ। नासमझ।

वैध्यत—संज्ञा पुं० [सं०] यम के एक प्रतिहार का नाम।

वैन[१]—संज्ञा पुं० [सं०] राजा वेन के पुत्र पृथु का एक नाम।

वैन[२]—वि० वेन राजा संबंधी [को०]।

वैनतक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का पात्र जिसमें घी रखा जाता था और जिसका व्यवहार यज्ञों में होता था।

वैनतेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनता की संतान। २ गरुड़। उ०—वैनतेय छठे आकाश के वासी बताए गए हैं।—प्रा० भा० प०, पृ० ८३। ३. अरुण।

वैनतेयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक शाखा का नाम।

वैनत्य—वि० [सं०] जिसका स्वभाव विनीत हो।

वैनदी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम।

वैनभृत—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम। २. एक वैदिक शाखा का नाम।

वैनयिक[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनय। प्रार्थना। २. वह जो शास्त्रों आदि का अध्ययन करता हो। ३. प्राचीन काल का एक प्रकार का रथ जिसका व्यवहार युद्ध में होता था। ४. शासन में नियम और अनुशासन की व्यवस्था करनेवाला व्यक्ति। नैतिकता का पालन करानेवाला। उ०—नियम और अनुशासन का अधिकारी वैनयिक कहलाता था।—हिंदु०, सभ्यता, पृ० १२७।

वैनयिक[२]—वि० विनय संबंधी। विनय का। शिष्टता या अनुशासन संबंधी।

वैनयिक रथ—संज्ञा पुं० [सं०] लड़ाई सिखाने के लिये बने हुए रथ।

वैनयिकवाद—संज्ञा पुं० [सं०] जैनमन का विरोधी मतविशेष। उ०—इन विरुद्ध मतों को जैनों ने क्रियावाद, अक्रियावाद, अज्ञानवाद और वैनयिकवाद कहा है।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २२७।

वैनाⓅ—संज्ञा स्त्री० [सं० वीणा] १. दे० 'वीणा'। २. दे० 'बेंदा' या 'बेना'। उ०—सीस पाग वैना धरे, राजमँदिर पगु दीन।—हिं० क० का०, पृ० १९२।

वैनायक[१]—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैनायकी] विनायक या गणेश संबंधी।

वैनायक[२]—संज्ञा पुं० भागवत के अनुसार भूतों का एक गण।

वैनायिक[१]—वि० [सं०] विनायक सबंधी।

वैनायिक[२]—संज्ञा पुं० १. वह जो बौद्ध धर्म का अनुयायी हो। बौद्ध। २. बौद्ध संप्रदाय का एक दार्शनिक सिद्धांत (को०)।

वैनाशिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. फलित ज्योतिष में जन्मनक्षत्र से तेईसवाँ नक्षत्र। २. जन्मनक्षत्र से सातवाँ, दसवाँ और अठारहवाँ नक्षत्र। ये तीनों नक्षत्र अशुभ समझे जाते हैं और निधनतारा कहलाते हैं। इन नक्षत्रों में यात्रा करना वर्जित है। ३. बौद्ध। ४. दास। सेवक (को०)। ५. मकड़ी (को०)। ६. ज्योतिषी (को०)। ७. बौद्ध संप्रदाय का दार्शनिक सिद्धांत (को०।

वैनाशिक[२]—वि० १. विनाश संबंधी। २. परतंत्र। पराधीन।

वैनाशिकतंत्र—संज्ञा पुं० [सं० वैनाशिकतन्त्र] बौद्ध दर्शन [को०]।

वैनाशिकसमय—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध धर्म [को०]।

वैनीतक—संज्ञा पुं० [सं०] ऐसी सवारी जिसे कई आदमी मिलकर उठाते हों। जैसे—डोली, पालकी, तामजाम आदि। विनीतक।

वैनेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक वैदिक शाखा का नाम। २. विनय या धर्म को शिक्षा प्राप्त करनेवाला छात्र (को०)।

वैन्य—संज्ञा पुं० [सं०] राजा वेन के पुत्र पृथु का एक नाम।

वैपंचमिक—संज्ञा पुं० [सं० वैपञ्चमिक] वह व्यक्ति जो भविष्यकथन करता हो [को०]।

वैपथक—संज्ञा पुं० [सं०] विपथ संबंधी [को०]।

वैपरीत्य—संज्ञा पुं० [सं०] विपरीत होने का भाव। विपरीतता। असंगति।

यौ०—वैपरीत्य लज्जालु = एक प्रकार का लजाधुर। लजालू पौधा।

वैपश्चित—संज्ञा पुं० [सं०] तार्क्ष्य नामक ऋषि का एक नाम जो विपश्चित् ऋषि के वंशज थे।

वैपश्यत—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम।

वैपादिक[१]—वि० [सं०] पैर के व्रण से व्यथित। विपादिका अर्थात् बिवाई से पीड़ित [को०]।

वैपादिक[२]—संज्ञा पुं० एक प्रकार का कुष्ठ रोग [को०]।

वैपादिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] विपादिका नामक रोग।

वैपारⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्यापार] दे० 'व्यापार'।

वैपारीⓅ—संज्ञा पुं० [सं० व्यापरिन्] दे० 'व्यापारी'।

वैपित्र—संज्ञा पुं० [सं०] वे भाई बहन आदि जिनकी माता तो एक ही हो, पर पिता अलग अलग हों।

वैपुल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विपुल होने का भाव। विपुलता। अधिकता। २. विस्तृति। विशालता (को०)।

वैप्रतिसम वि० [सं०] जो समान न हो। असम। विषम [को०]।

वैप्रोताख्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नृत्य [को०]।

वैप्लव—संज्ञा पुं० [सं०] सावन का महीना [को०]।

वैफल्य संज्ञा पुं० [सं०] १. विफल होने का भाव। विफलता। नाकामयाबी। २. निरर्थकता। अनुपयोगिता (को०)।

वैबाध—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का सिक्कड़। २. वह अश्वत्थ वृक्ष जो खैर के वृक्ष में से निकला हो।

वैबाधप्रणुत्त—वि० [सं०] (वह वृक्ष) जिसके ऊपर पीपल का पेड़ उगा हो [को०]।

वैबुध—वि० [सं०] देव संबंधी। विबुध संबंधी [को०]।

वैबोधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो रात के समय पहरा देता, घंटा बजाता और सोए हुए लोगों को जगाता हो। २. पहरुआ। पहरेदार (को०)। ३. स्तुतिपाठक जो प्रातःकाल स्तुतिपाठ द्वारा राजा को जगाता था (को०)।

वैभंडि—संज्ञा पुं० [सं० वैभण्डि] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम जिन्हें विभांडि भी कहते हैं।

वैभव—संज्ञा पुं० [सं०] १. धनसंपत्ति। दौलत। विभव। ऐश्वर्य। २. महिमा। महत्व। बड़प्पन। ३. सामर्थ्य। शक्ति। ताकत।

वैभवशाली संज्ञा पुं० [सं० वैभवशालिन्] वैभवयुक्त वह जिसके पास बहुत अधिक धन संपत्ति हो। विभववाला। मालदार।

वैभविक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो कोई काम करने का अच्छा सामर्थ्य रखता हो। समर्थ।

वैभांडकि—संज्ञा पुं० [सं० वैभाण्डकि] एक गोत्र प्रर्वतक ऋषि का नाम।

वैभाजन—वि० [सं०] अनेक मार्गों में विभक्त। जो कई मार्गों में विभक्त हो [को०]।

वैभाजिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विभक्त करता हो [को०]।

वैभाजित्र—संज्ञा पुं० [सं०] विभाजन। कई भागों में कर देना। बाँटना [को०]।

वैभातिक—वि० [सं०] विभात या प्रभात संबंधी। अरुणोदय संबंधी। उष:कालीन [को०]।

वैभार—संज्ञा पुं० [सं०] राजगृह के पास के एक पर्वत का नाम। इसे वैहार भी कहते थे।

वैभावर—वि० [सं०] विभावरी संबंधी। रात का। रात्रिसंबंधी [को०]।

वैभाषिक^{१}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैभाषिनी] १. विभाषा संबंधी। वैकल्पिक। २. वैभाषिक नामक बौद्ध संप्रदाय के एक वर्ग का अनुगामी या तत्संबंधी (को०)।

वैभाषिक^{२}—संज्ञा पुं० बौद्धों के एक संप्रदाय का नाम।

वैभाष्य—संज्ञा पुं० [सं०] बृहत् भाष्य। किसी सूत्र, कारिका वा वचन की विस्तृत व्याख्या [को०]।

वैभीत—वि० [सं०] बहेड़ा से बना हुआ। जिसमें बहेड़े का योग हो। विभीतक से निर्मित [को०]।

वैभीतक—वि० [सं०] दे० 'वैभीत' [को०]।

वैभूतिक—वि० [सं०] १. विभूतिजन्य। विभूतिमत्। २. विभूतिसंबंधी। विभूति का।

वैभोज—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम।

विशेष—महाभारत के अनुसार द्रुह्यु के वंशज वैभोज कहलाते थे। ये लोग सवारी आदि का व्यवहार करना नहीं जानते थे और न इन लोगों में कोई राजा हुआ करता था।

वैभ्र—संज्ञा पुं० [सं०] वैकुंठ लोक। विष्णुधाम [को०]।

वैभ्राज—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवताओं का उद्यान या बाग। २. पुराणानुसार मेरु के पश्चिम में सुपार्श्व पर्वत पर के एक जंगल का नाम। ३. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम। ४. एक लोक का नाम जो स्वर्ग माना जाता है।

वैभ्राजक—संज्ञा पुं० [सं०] देवताओं का उद्यान। नंदनवन [को०]।

वैमत्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक मत का अभाव। मतभेद। फूट। २. शुक्ल यजुर्वेद की एक शाखा का नाम। ३. नापसंदगी। अरुचि (को०)।

वैमनस्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विमन या अन्यमनस्क होने का भाव। २. वैर। द्वेष। दुश्मनी। ३. बीमारी। अस्वस्थता (को०)।

वैमल्य—संज्ञा पुं० [सं०] विमल होने का भाव। मलराहित्य। स्वच्छता। विमलता। निर्मलता।

वैमात्र^{१}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैमात्रा] विमाता से उत्पन्न। सौतेला। जैसे—वैमात्र भाई।

वैमात्र^{२}—संज्ञा पुं० सौतेला भाई [को०]।

वैमात्रक—संज्ञा पुं० [सं०] सौतेला भाई [को०]।

वैमात्रा, वैमात्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] सौतेली बहन [को०]।

वैमात्रेय—वि० [सं०] [वि० स्त्री० वैमात्रेयी] विमाता से उत्पन्न। विमातृज। सौतेला।

वैमात्रेयी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] सौतेली बहन [को०]।

वैमानिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो विमान पर चढ़कर अंतरिक्ष में विहार करता हो। २. वह जो आकाश में विहार करता हो। आकाशचारी। ३. वह जो उड़ सकता हो। उड्डयनशील। ४. जैनों के अनुसार वे जीव जो स्वर्गलोक में रहते हैं। ५. देवता (को०)।

वैमानिक^{२}—वि० १. विमान द्वारा ले जाया जाता हुआ। विमानारूढ़। २. विमानोत्पन्न। विमानजन्य। ३. वायुयान का चालक। विमान चलानेवाल। ४. विमान संबंधी [को०]।

वैमानिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] देवांगना [को०]।

वैमित्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

वैमुक्त^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] मुक्ति। विमुक्ति। मोक्ष [को०]।

वैमुक्त^{२}—वि० मुक्त [को०]।

वैमुख्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विमुख होने का भाव। विमुखता। २. विपरीतता। प्रतिकूलता। ३. अप्रसन्नता। नाराजगी। ४. विमुख होना। पलायन। भागना।

वैमूढक—संज्ञा पुं० [सं०] कालिदास के मालविकाग्निमित्र नाटक में वर्णित एक प्रकार का नृत्य। वह नृत्य जिसमें पुरुष नारी वेष में नाचते हैं [को०]।

वैमूल्य—संज्ञा पुं० [सं०] मूल्यों का अंतर [को०]।

वैमृध^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध करनेवाला, इंद्र।

वैमृध^{२}—वि० इंद्र का दिया हुआ। इंद्र को अर्पित [को०]।

वैमृध्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. युद्धकर्ता—इंद्र। वैमृध। २. वह जो युद्ध विद्या में बहुत निपुण हो। युद्धकुशल।

वैमेय—संज्ञा पुं० [सं०] विनिमय। परिवर्तन। बदला।

वैम्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

वैमुख(पु)—वि० [सं० वैमुख्य] दे० 'विमुख'। उ०—प्रभु वैमुख जिणरो रिपु प्राणी। ताह न कदै सतावै। रघु० रू०, पृ० २६।

वैयक्तिक—वि० [सं०] व्यक्तिगत। निजी। स्वगत। स्वकीय। उ०—हिंदी कविता छायावाद के रूप में ह्रास युग के वैयक्तिक अनुभवों, ऊर्ध्वमुखी विकास की प्रवृत्तियां, ऐहिक जीवन की आकांक्षाओं

संबंधी स्वप्नों आदि को अभिव्यक्त करने लगी।—हिं० आ० प्र०, पृ० १३३।

वैयक्तिक संपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० वैयक्तिक सम्पत्ति] निजी जायदाद। वह धन जिसे व्यापार आदि के द्वारा कोई व्यक्ति एकत्र करता है और उसपर उसके अतिरिक्त अन्य किसी का कोई अधिकार नहीं होता। उ०—आखिर वैयक्तिक संपत्ति के स्वामी कामचोर शासकों ने कानून भी तो अपने फायदे के लिये बनाए हैं। —मा० स०, पृ० २३२।

वैयग्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यग्रता। बेकली। तन्मय होना। २. तल्लीनता। अनन्यभक्ति [को०]।

वैयग्र्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैयग्र' [को०]।

वैयधिकरण्य—संज्ञा पुं० [सं०] व्यधिकरण का भाव। व्यधिकरणता। समानाधिकरणता का वैपरीत्य। अनेक स्थानों में होने का भाव। [को०]।

वैयमक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

वैयर्थ्य—संज्ञा पुं० [सं०] व्यर्थ होने का भाव। निरर्थकता। व्यर्थता। अनुत्पादकता। निष्फलता।

वैयवहारिक—वि० [सं०] व्यावहारिक [को०]।

वैयशन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

वैयश्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषि का नाम जो विश्वमनस् के पिता थे।

वैयसन—वि० [सं०] व्यसन से उत्पन्न। व्यसनजन्य। व्यसन का।

वैया†—प्रत्य० [हिं० ?] एक प्रत्यय जो क्रिया के अंत में लगकर 'वाला' अर्थ सूचित करता है; जैसे—करवैया, चलवैया, पढ़वैया आदि।

वैयाकरण^1—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो व्याकरण शास्त्र का अच्छा ज्ञाता हो। व्याकरण का पंडित।

वैयाकरण^2—वि० व्याकरण संबंधी। व्याकरण का।

यौ०—वैयाकरण खसूचि = वह वैयाकरण जो सूई से वायु में छेद करना चाहता है। व्याकरण का अल्प ज्ञाता। व्याकरण का साधारण जानकार। वैयाकरण पाश = व्याकरण का साधारण ज्ञाता। व्याकरण का साधारण जानकार। वैयाकरण भार्य = वह व्यक्ति जिसकी गृहिणी व्याकरण की पंडिता हो।

वैयाख्य^1—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'व्याख्या'।

वैयाख्य^2—वि० व्याख्यायुक्त। जिसकी व्याख्या की गई हो। व्याख्या संबंधी। व्याख्याजन्य [को०]।

वैयाघ्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का रथ जिसपर शेर या चीते की खाल मढ़ी होती थी। इसे द्वैप भी कहते थे।

वैयाघ्र^2—वि० १. व्याघ्र संबंधी। व्याघ्र का। २. व्याघ्रचर्मावृत। व्याघ्रचर्ममंडित (को०)।

वैयाघ्रपद—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैयाघ्रपद्य'।

वैयाघ्रपद्य—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

वैयाघ्रपाद—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैयाघ्रपद्य'।

वैयाघ्र्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का आसन। २. व्याघ्र की अवस्था (को०)।

वैयाघ्र्य^2—वि० [सं०] १. जो व्याघ्र के समान हो। व्याघ्रतुल्य। २. व्याघ्र का या व्याघ्रजन्य [को०]।

वैयात्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुर्विनीतता। अविनय। २. ढिठाई। ३. बेहयापन। निर्लज्जता। ४. उजड्डपन [को०]।

वैयावृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] जैनमतानुसार यतियों और साधुओं आदि की सेवा। उ०—दूसरे प्रकार के तप में प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य (सेवा), स्वाध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग (शरीरत्याग) की गणना होती है—आ० भा०, पृ० १४३।

वैयास—वि० [सं०] व्यास संबंधी। व्यास का।

वैयासकि—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो व्यास के गोत्र या वंश में उत्पन्न हो। २. व्यास के पुत्र। शुकदेव।

वैयासिक—वि० [सं०] व्यास का बनाया हुआ। व्यासरचित। (ग्रंथ आदि)। २. दे० 'वैयासकि'।

वैयास्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का वैदिक छंद। २. एक आचार्य का नाम [को०]।

वैयुष्ट—वि० [सं०] उषःकालीन। प्राभातिक। ऊषाकाल में होनेवाला [को०]।

वैरंकर^1—संज्ञा पुं० [सं० वैरङ्कर] वह जो किसी के साथ शत्रुता करता हो। दे० 'वैरकर' [को०]।

वैरंकर^2—वि० शत्रुता करनेवाला [को०]।

वैरंगिक—वि० [सं० वैरङ्गिक] वह जिसने समग्र इच्छाओं और वासनाओं का दमन कर लिया हो। इंद्रियनिग्रही। विरागी। संत। २. वह जो विराग के योग्य हो [को०]।

वैरंडेय—संज्ञा पुं० [वैरण्डेय] एक प्राचीन गोत्र संवर्तक ऋषि का नाम।

वैरंभ—संज्ञा पुं० [सं० वैरम्भ] एक वायु का नाम। एक प्रकार का पवन [को०]।

वैरंभक—संज्ञा पुं० [सं० वैरम्भक] वायु का एक भेद। एक प्रकार का पवन [को०]।

वैर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रुता। दुश्मनी। द्वेष। विरोध। २. घृणा (को०)। ३. शौर्य। पराक्रम (को०)।

क्रि० प्र०—करना।—मानना। रखना।—होना।

४. विपक्षी। शत्रु (को०)। ५. वह धन जो हत्या के लिये दंड के रूप में दिया जाय (को०)।

वैरक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैर' [को०]।

वैरकर—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी के साथ वैर करता हो। दुश्मनी करनेवाला।

वैरकरण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैरकारण'।

वैरकार, वैरकारक—संज्ञा पुं० [सं०] वैरी। दे० 'वैरकर'।

वैरकारण—संज्ञा पुं० [सं०] शत्रुता का कारण [को०]।

वैरकारी—वि० [सं० वैरकारिन्] शत्रुता करनेवाला [को०]।

वैरकृत्—वि० [सं०] दे० 'वैरकारी' [को०]।

वैरक्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरक्त होने का भाव। विरक्तता। वैराग्य। २. नापसंदगी। अरुचि (को०)।

वैरखंडी—वि० [सं० वैरखण्डिन्] शत्रुता दूर करनेवाला [को०]।

वैरखⓅ—संज्ञा पुं० [तु० वैरक़, हिं० बैरख] दे० 'बैरख'। उ०—उपंम तीय उद्धरं। कि मित्र कज्जलं गिरं। जु वैरखं विराजहीं वसंत वृष्ष लाजहीं।—रा०, ७।४१।

वैरत—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन जाति का नाम।

वैरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैर का भाव। शत्रुता। दुश्मनी।

वैरथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्योतिष्मन् का पुत्र। २. एक वर्ष का नाम जिसपर वैरथ ने राज्य किया था [को०]।

वैरदेय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह वैर या शत्रुता जो किसी के शत्रुता करने पर उत्पन्न हो। २. वैदिक काल के एक असुर का नाम।

वैरनिर्यातन—संज्ञा पुं० [सं०] वैर का बदला। वैरशोध [को०]।

वैरपुरुष—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसके साथ वैर हो। शत्रु। दुश्मन।

वैरप्रतिक्रिया—संज्ञा पुं० [सं०] वैर का बदला [को०]।

वैरप्रतिमोचन—संज्ञा पुं० [सं०] दुश्मनी न रहना। शत्रुता छूटना। वैरभाव दूर होना [को०]।

वैरप्रतियाचन—संज्ञा पुं० [सं०] वैरनिर्यातन। वैरप्रतीकार [को०]।

वैरप्रतीकार—संज्ञा पुं० [सं०] वैरशोधन [को०]।

वैरभाव—संज्ञा पुं० [सं०] शत्रुता। शत्रुभाव [को०]।

वैरमण—संज्ञा पुं० [सं०] वेद के अध्ययन की पूर्णता। ब्रह्मचर्य आश्रम की समाप्ति [को०]।

वैरयातना—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैर का शोधन या बदला [को०]।

वैररक्षी—वि० [सं० वैररक्षिन्] वैर को दूर करनेवाला [को०]।

वैरल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरल होने का भाव। विरलता। २. शून्य। एकांत।

वैरव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] किसी से शत्रुता की प्रतिज्ञा। वैरभाव रूपी व्रत [को०]।

वैरशुद्धि संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी के वैर का बदला चुकाना। दुश्मनी का बदला लेना।

वैरस—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैरस्य'

वैरसाधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रुता का लक्ष्य या उद्देश्य। २. शत्रुता का साधन [को०]।

वैरसेनि—संज्ञा पुं० [सं०] राजा वीरसेन का पुत्र, नल [को०]।

वैरस्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरस होने का भाव। विरसता। २. शत्रुता। वैपरीत्य। ३. इच्छा का न होना। अनिच्छा।

वैराग—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैराग्य'।

वैरागाⓅ—संज्ञा पुं० [सं० वैराग] दे० 'वैराग्य'। उ०—बीना गेडे बजावै रागा ध धन उपजावै वैरागा।—माधवानल०, पृ० १८९।

वैरागिक^1—वि० [सं०] जिसके कारण विराग उत्पन्न हो।

वैरागिक^2—संज्ञा पुं० विरागी। विरक्त।

वैरागी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वैरागिन्] १. वह जिसके मन में विराग उत्पन्न हो। वह जिसका मन संसार की ओर से हट गया हो। विरक्त। २. उदासीन वैष्णवों का एक संप्रदाय।

विशेष—इस संप्रदाय के लोग रामानुज के अनुयायी होते हैं और श्रीकृष्ण अथवा रामचंद्र की उपासना करते हैं। ये लोग प्रायः भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह करते हैं और अखाड़े बनाकर रहते हैं। बंगाल के कुछ वैरागी विवाह करके गृहस्थों की भाँति भी रहते हैं।

वैरागी^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] संगीत में एक रागिनी [को०]।

वैराग्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. मन की वह वृत्ति जिसके अनुसार संसार की विषयवासना तुच्छ प्रतीत होती है और लोग संसार की झंझटें छोड़कर एकांत में रहते और ईश्वर का भजन करते हैं। विरक्ति। २. असंतृप्ति। असंतोष (को०)। ३. अरुचि। नापसंदगी (को०)। ४. रंज। शोक। अफसोस (को०)। ५. बदरंग होना। विवर्णता (को०)।

वैराग्यशतक—संज्ञा पुं० [सं०] भर्तृहरि प्रणीत शतकत्रय (शृंगार, वैराग्य, और नीति) में से एक का नाम [को०]।

वैराज^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विराट् पुरुष। परमात्मा। २. एक मनु का नाम। ३. एक प्रकार का साम। ४. भागवत के अनुसार अजित के पिता का नाम। ५. सत्ताईसवें कल्प का नाम। ६. तपोलोक में रहनेवाले एक प्रकार के पितृ। कहते हैं, ये कभी आग से नहीं जल सकते। ७. दे० 'वैराज्य'।

वैराज^2—वि० विराज संबंधी। ब्रह्मा संबंधी [को०]।

वैराजक—संज्ञा पुं० [सं०] उन्नीसवें कल्प का नाम।

वैराज्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल की एक प्रकार की शासनप्रणाली जिसमें एक ही देश में दो राजा मिलकर शासन करते थे। एक देश में दो राजाओं का शासन। २. वह देश जहाँ इस प्रकार की शासनप्रणाली प्रचलित हो। ३. विदेशियों का राज्य। विदेशियों का शासन।

विशेष—वैराज्य और द्वैराज्य के गुणदोष का विचार करते हुए कहा गया है कि द्वैराज्य में अशांति रहती और वैराज्य में देश का धनधान्य निचोड़ लिया जाता है। दूसरी बात यह भी कही गई है कि विदेशी राजा अपनी अधिकृत भूमि कभी कभी बेच भी देता है और आपत्ति के समय असहाय अवस्था में छोड़ भी देता है।

वैराट^1—वि० [सं०] १. विराट् संबंधी। २. विराट देश संबंधी। विराट का। ३. विस्तृत। लंबा चौड़ा।

वैराट^2—संज्ञा पुं० १. इंद्रगोप नाम का कीड़ा। बीरबहूटी। २. महाभारत का विराट पर्व। ३. एक रत्न। ४. एक रंग अथवा उसी रंग की चीज। ५. देश विदेश (को०)।

वैराटक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार शरीर में किसी स्थान पर होनेवाली वह गाँठ जो जहरीली हो।

वैराटराज—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन वैराट देश का राजा। मत्स्य देश का नरेश [को०]।

वैराट्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों के अनुसार सोलह विद्यादेवियों में से एक विद्यादेवी का नाम।

वैरातंक—संज्ञा पुं० [सं० वैरातङ्क] अर्जुन या कोह नाम का वृक्ष।

वैराम—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन जाति का नाम।

वैराषित—संज्ञा पुं० [सं०] दुश्मनी। शत्रुता [को०]।

वैरिंच—वि० [सं० वैरिञ्च] विरिंचि या ब्रह्मा संबंधी [को०]।

वैरिंचि—वि० [सं० वैरिञ्चि] विरिंचि या ब्रह्मा संबंधी। ब्रह्मा का।

वैरिंच्य—संज्ञा पुं० [सं० वैरिञ्च्य] ब्रह्मा के पुत्र। सनक आदि ऋषि जो ब्रह्मा के पुत्र माने जाते हैं।

वैरि—संज्ञा पुं० [सं०] वैरी। शत्रु। दुश्मन।

वैरिण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैर। शत्रुता। दुश्मनी। २. वैरी। शत्रु। दुश्मन।

वैरिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैर का भाव। शत्रुता। दुश्मनी।

वैरिपणⓟ—संज्ञा पुं० [हिं० वैर+प्रा० पण, वण (प्रत्य०); हिं० वैरीपन] वैरत्व। वैरभाव। शत्रुता। उ०—किमि उँप्पन्नउँ वैरिपण किमि उँद्धरिउँ तेन।—कीर्ति० पृ० १६।

वैरिवीर—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार दशरथ के एक पुत्र जिनका दूसरा नाम इलविल भी है।

वैरी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वैरिन्] १. शत्रु। दुश्मन। वैरी। २. योद्धा। वीर [को०]।

वैरी^{2}—वि० वैरयुक्त। वैर करनेवाला। शत्रुता करनेवाला [को०]।

वैरूप—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन प्रवरकार ऋषि का नाम। २. पितरों का एक वर्ग (को०)। ३. एक प्रकार का साम।

वैरूपाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो विरूपाक्ष के गोत्र या वंश में उत्पन्न हुआ हो।

वैरूप्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विरूप का भाव या धर्म। विरूपता। २. विकृत होने का भाव।

वैरेकीय—वि० [सं०] विरेचक [को०]।

वैरेचन—वि० [सं०] विरेचन संबंधी। विरेचन का।

वैरेचनिक—वि० [सं०] विरेचन संबंधी [को०]।

वैरोचन^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुद्ध का एक नाम। २. राजा बलि का एक नाम। ३. विष्णु के एक पुत्र का नाम (को०)। ४. एक प्रकार की समाधि (को०)। ५. सूर्य के एक पुत्र का नाम। ५. एक प्रकार के सिद्ध (को०)। ६. बौद्ध मतानुसार एक लोक का नाम (को०)। ७. अग्नि के एक पुत्र का नाम।

वैरोचन^2—वि० १. विरोचन संबंधी। विरोचन से उत्पन्न [को०]।

यौ०—वैरोचन निकेतन = पाताल लोक। वैरोचनमुहूर्त = एक मुहूर्त जो दिन में पड़ता है। वैरोचन रश्मिप्रतिमंडित = बौद्धों के अनुसार एक लोक का नाम।

वैरोचनि—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुद्ध का एक नाम। २. राजा बलि का एक नाम। ३. सूर्य के एक पुत्र का नाम। ४ अग्नि के एक पुत्र का नाम। दे० 'वैरोचन'।

वैरोचि—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजा बलि के पुत्र बाण दैत्य का एक नाम। २. दे० वैरोचनि (को०)।

वैरोट्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों की सोलह विद्यादेवियों में से एक विद्यादेवी का नाम।

वैरोद्धार—संज्ञा पुं० [सं०] किसी के वैर का बदला चुकाना। वैरशुद्धि।

वैरोधक—वि० [सं०] विरोधी या प्रतिकूल (आहार आदि)।

वैरोधिक—वि० [सं०] दे० 'वैरोधक' [को०]।

वैल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेल नामक वृक्ष या उसका फल। २. छिद्र। विवर। बिल [को०]।

वैल^2—वि० १. बिल संबंधी। २. बेल संबंधी। ३. बिल में रहनेवाला। बिलवासी [को०]।

वैलक्षण्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विलक्षण होने का भाव। विलक्षणता। २. विभिन्न या अलग होने का भाव। विभिन्नता।

वैलक्ष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. लज्जा। संकोच। शर्म। २. विस्मय। आश्चर्य। ताज्जुब। ३. स्वभाव की विलक्षणता। ४. उलझन। गड़बड़ी (को०)। ५. अस्वाभाविकता। कृत्रिमता (को०)। ६. वैपरीत्य (को०)।

वैलस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] श्मशान। मरघट।

वैलिंग्य—संज्ञा पुं० [सं० वैलिङ्ग्य] परिचायक चिह्न, लक्षण या लिंग का अभाव [को०]।

वैलिⓟ†—सर्व० [देश० या वै० सं० अवार (= इधर, निकट), हिं० उरे] उरली। उरे। इधर। उ०—दादू सेख मसाइक औलिया, पैगंबर सब पीर। दर्शन सू परसन नहीं, अजहूँ वैली तीर।—दादू०, पृ० २७७।

वैलोम्य—संज्ञा पुं० [सं०] विलोमता। विपरीतता [को०]।

वैल्व^1—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्व या बेल नामक फल। श्रीफल।

वैल्व^2—वि० १. बिल्व या बेल संबंधी। बेल का। २. बिल्व वृक्ष से आच्छादित। अभिप्रेत। जिसे कहना आवश्यक हो [को०]।

वैवक्षिक—वि० [सं०] विवक्षायुक्त। कहने की इच्छावाला।

वैवधिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो अनाज आदि बेचकर अपना निर्वाह करता हो। गल्ले का व्यापारी। २. घूम घूमकर या फेरी लगाकर माल बेचनेवाला। ३. दूत। हरकारा। ४. बहँगी द्वारा बोझा ढोनेवाला। मजदूरा।

वैवर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. विवर्ण या मलिन होने का भाव। २. सौंदर्य या लावण्य का अभाव। ३. स्त्रियों के आठ प्रकार के सात्विक भावों में से एक प्रकार का भाव। ४. वह जो बिना किसी रंग के हो या जिसमें नीला, पीला आदि कोई रंग न हो (को०)।

वैर्वाणिक– वि० [सं०] चित्रकर्बुर। चितकबरा (मुख्यतः विद्रुम के लिये प्रयुक्त)। २. वर्णहीन। जातिच्युत। जो जाति बहिष्कृत किया गया हो।

वैवर्ण्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विवर्ण होने का भाव। रंग परिवर्तित होना। २. बदरंग होना। मलिनता। मालिन्य। ३. विभिन्नता। भिन्नता। विलगाव। ४. लावण्य का अभाव। ५. जातिच्युत होना। जातिवहिष्कृत होना। जातिच्युति [को०]।

वैवर्त—संज्ञा पुं० [सं०] किसी पदार्थ का चक्र या पहिए के समान घूमना।

वैवश्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विवश होने का भाव। विवशता। लाचारी। २. दुर्बलता। कमजोरी।

वैवस्वत—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य के एक पुत्र का नाम। यम। २. एक रुद्र का नाम। ३. शनैश्चर। ४. पुराणानुसार सातवें मनु का नाम।

विशेष—आजकल का मन्वतंर इन्हीं मनु का माना जाता है। इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट, करूषक, नरिष्यंत, पृषध्र, नाभाग और कवि ये दस इनके पुत्र माने गए हैं।

५. पुराणानुसार वर्तमान मन्वंतर का नाम।

विशेष—इस मन्वंतर के अवतार वामन, देवता पुरंदर इंद्र, आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, मरुद्गण आदि और ऋषि कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ. विश्वामित्र आदि कहे गए हैं।

६. अग्नि का एक नाम (को०)। ७. एक तीर्थ का नाम।

वैवस्वत—वि० १. सूर्य संबंधी। २. यम संबंधी। अग्निसंबंधी। ४. मनु संबंधी [को०]।

वैवस्वतद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] मोगरा चावल।

वैवस्वती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दक्षिण दिशा जो वैवस्वत मनु की दिशा मानी गई है। २. सूर्य की एक पुत्री। यमुना। यमी (को०)।

वैवस्वतीय—वि० [सं०] वैवस्वत संबंधी [को०]।

वैवाह—वि० [सं०] विवाह संबंधी। विवाह का।

वैवाहिक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कन्या अथवा वर का श्वसुर। समधी। २. विवाह (को०)। ३. विवाह की तैयारी या उत्सव (को०)। ४. वह संबंध जो विवाह के कारण हो (को०)।

वैवाहिक^{२}—वि० विवाह संबंधी। विवाह का।

वैवाह्य—वि० [सं०] १. विवाह संबंधी। विवाह का। २. जो विवाह के योग्य हो।

वैवाह्य^{२}—संज्ञा पुं० वह समारोह या उत्सव जो विवाह के अवसर पर हो।

वैविक्त्य—संज्ञा पुं० [सं०] विविक्तता। विभिन्नता। अलगाव। छुटकारा [को०]।

वैविध्य—संज्ञा पुं० [सं०] विविधता। अनेकरूपता। उ०—देशीय एवं बहुदेशीय अंतर्विरोधों ने इधर कितनी ही प्रकृतियों को जन्म दिया है जिनमें युगीन वैविध्य और असामान्य गुणयोग हैं।—हिं० का० आं०, पृ० २।

वैवृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] उदात्त आदि स्वरों का क्रम।

वैव्रद्ध पु†—वि० [सं० वयोवृद्ध] दे० 'वयोवृद्ध'। उ०—आरब्ब सेष लीनौ बुलाइ। वैव्रद्ध व्रद्ध बुद्धी सुताइ।—पृ० रा०, ६। ३१।

वैशंपायन—संज्ञा पुं० [सं० वैशम्पायन] एक प्रसिद्ध ऋषि का नाम जो वेदव्यास के शिष्य थे। कहते हैं, महर्षि व्यासदेव की आज्ञा से इन्हीं ने जनमेजय को महाभारत की कथा सुनाई थी।

वैशंफल्या—संज्ञा स्त्री० [सं० वैशम्फल्या] सरस्वती का एक नाम [को०]।

वैशद्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशद होने का भाव। विशदता। २. निर्मल या स्वच्छ होने का भाव। निर्मलता। ३. उज्वलता। शुभ्रता (को०)। ४. स्पष्टता (को०)। ५. मस्तिष्क की स्वस्थता।

वैशली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'वैशाली'। २. वसुदेव की एक पत्नी (को०)।

वैशल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशल्य होने का भाव या दशा। कष्टदायक भार से मुक्ति वा छुटकारा। जैसे, गर्भभार आदि से [को०]।

वैशस^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश। हत्या। वध। २. युद्ध। ३. विपत्ति। ४. कष्ट। ५. एक नरक का नाम। ६. हिंसा [को०]।

वैशस^{२}— वि० विनाशक। हिंसक। हिंसा या वध करनेवाला [को०]।

वैशसन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैशस'।

वैशस्त्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शस्त्रहीनता। २. अधिकार। शासन। असुरक्षित होने का भाव [को०]।

वैशस्त्र^{२}—वि० शस्त्ररहित। बिना शस्त्रवाला [को०]।

वैशाख—संज्ञा पुं० [सं०] १. मथनी में का डंडा। मंथनदंड। २. लाल गदहपूरना। ३. बारह महीनों में से एक महीना जो चांद्र गणना से दूसरा और सौर गणना के अनुसार पहला महीना होता है। इस मास की पूर्णिमा विशाखा नक्षत्र में पड़ती है, इसीलिये इसे वैशाख कहते हैं। चैत के बाद का और जेठ के पहले का महीना। ४. एक प्रकार का ग्रह जिसका प्रभाव घोड़ों पर पड़ता है और जिसके कारण उनका शरीर भारी हो जाता है और वे काँपने लगते हैं। ५. धनुष पर बाण चलाने के समय की एक मुद्रा। दे० 'विशाख' (को०)।

यौ०—वैशाखनंदन = (१) वैशाख में आनंदित होनेवाला। (२) गधा। खर। वैशाखरज्जु = मंथनदंड की रस्सी। नेत्र।

वैशाखी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह पूर्णिमा जो विशाखा नक्षत्र से युक्त हो। २. मेष की संक्रांति (वैशाखपूर्णिमा) के अवसर पर

इस नाम से पंजाबियों में मनाया जानेवाला एक उत्सव । बैशाख मास की पूर्णिमा । उ०—जबलों पृथ्वी है तबलों बोना और लोना सरदी गर्मी, अगहनी और वैशाखी दिन और रात बंद न होंगे।—कबीर मं०, पृ० १९५ । ३. लाल गदहपूर्ना । ४. पुराणानुसार वसुदेव की एक स्त्री का नाम ।

वैशाखी^{3}—संज्ञा पुं० [सं० वैशाखिन्] हाथी के पैर का अगला भाग [को०] ।

वैशाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

वैशारद^1—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी विषय का अच्छा ज्ञाता हो । विशारद । पंडित ।

वैशारद^2—वि० १. ज्ञाता । अनुभवी । २. पंडित । विद्वान् [को०] ।

वैशारद्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशारद या पंडित होने का भाव । २ निर्मलता । स्वच्छता । सफाई ।

वैशाल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

वैशालक—वि० [सं०] वैशाली नगरी का । वैशाली संबंधी । [को०] ।

वैशालाक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] शिव जी द्वारा निर्मित शास्त्रविशेष [को०] ।

वैशालिक—वि० [सं०] दे० 'वैशालक' [को०] ।

वैशाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्राचीन बौद्ध काल की एक प्रसिद्ध नगरी ।

विशेष—यह विशालनगरी या विशालपुरी भी कहलाती थी। कहते हैं, राजा तृणविंदु के पुत्र विशाल ने यह नगरी बसाई थी। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर का जन्म यहीं हुआ था और बुद्ध भगवान् कई बार यहाँ गए थे। किसी समय यह नगरी बहुत प्रसिद्ध था और यहाँ बौद्धों की बहुत प्रधानता थी। यहाँ का लिच्छवी राजवंश इतिहासों में प्रसिद्ध है। यहाँ जैनियों का भी तीर्थ था। विद्वानों का मत है कि आधुनिक मुजफ्फरपुर जिले का बसाढ़ नामक गाँव प्राचीन वैशाली का ही अवशेष है।

वैशालीय—संज्ञा पुं० [सं०] जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर का एक नाम ।

वैशालेय—संज्ञा पुं० [सं०] तक्षक जो विशाल के वंशज माने जाते हैं ।

वैशिक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. साहित्य के अनुसार तीन प्रकार के नायकों मे से एक प्रकार का नायक । वह नायक जो वेश्याओं के साथ भोग विलास करता हो । वेश्यागामी नायक । उ०—भूपाल, मंडलीक, सामंत, सेनापति, वैशिक, राजपुत्र, राजशिष्ट, वडलिआ ।—वर्ण०, पृ० ८ । २. वेश्या से संबंध रखनेवाला पुरुष । ३. वेश्या की वृत्ति या कला (को०) ।

वैशिक^2—वि० [वि० स्त्री० वैशिकी] १. वेश संबंधी । वेश का । २. वेश्या द्वारा व्यवहृत । ३. वेश्यागामी (को०) ।

वैशिक्य—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन जाति का नाम ।

वैशिजाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुत्रदात्री नाम की लता ।

वैशिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशेषता । खासियत । २. पृथक्त्वसूचक गुण । वैशिष्ट्य [को०] ।

वैशिष्ट्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशिष्टता । विशेषता । २. श्रेष्ठता । खूबी । ३. विशिष्ट लक्षण या गुण आदि से युक्त होना । ४. अंतर । फर्क [को०] ।

वैशीपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्या का पुत्र ।

वैशेषिक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. छह् दर्शनों में से एक जो महर्षि कणाद कृत है और जिसमें पदार्थों का विचार तथा द्रव्यों का निरूपण है । पदार्थ विद्या ।

विशेष—महर्षि कणाद का एक नाम उलूक भी है, इससे इसे औलूक्य दर्शन भी कहते हैं। यह दर्शन न्याय के ही अंतर्गत माना जाता है। सिद्धांत पक्ष में न्याय कहने से दोनों का बोध होता है, क्योंकि गौतम में प्रमाणपक्ष प्रधान है और इसमें प्रमेय पक्ष लिया गया है। ईश्वर, जगत् जीव आदि के संबंध के दोनों के सिद्धांत प्रायः एक ही हैं। यह दर्शन गौतम से पीछे का माना जाता है। गौतम ने मुख्यतः तर्कपद्धति और प्रमाणविषय का ही निरूपण किया है, पर कणाद उससे आगे बढ़कर द्रव्यों की परीक्षा में प्रवृत्त हुए हैं। नौ द्रव्यों को विशेषताएँ बताने के ही कारण इनके दर्शन का नाम वैशेषिक पड़ा। नौ द्रव्य ये हैं—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन। इनमें से पृथ्वी, जल, तेज और वायु नित्य भी हैं और अनित्य भी अर्थात् परमाणु अवस्था में तो वे नित्य हैं और स्थूल अवस्था मे अनित्य। आकाश, काल, दिक् और आत्मा नित्य और सर्वव्यापक हैं। मन नित्य तो है, पर व्यापक नहीं, क्योंकि वह अणुरूप है। द्रव्यों की विशेषता इसी प्रकार कणाद ने बताई है।

गौतम ने सोलह पदार्थ माने थे; पर कणाद ने छह् ही पदार्थ रखे—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय। अंधकार आदि को इन छह के अंतर्गत आता न समझकर पीछे से एक सातवाँ पदार्थ 'अभाव' भी बढ़ाया गया। द्रव्यों के उद्देश (परिगणन), लक्षण और परीक्षा के उपरांत कणाद ने गुण और कर्म को लिया है जो द्रव्यों में रहते हैं। संख्या, पृथक्त्व, बुद्धि, सुख, दुःख इत्यादि २४ गुण गिनाए गए हैं। उत्क्षपण, अवक्षेपण आदि पांच प्रकार की गतियाँ कर्म के अंतर्गत ली गई हैं। अब रहा 'सामान्य'। वह द्रव्य, गुण और कर्म इन्हीं तीनों में सत्ता के रूप में पाया जाता है। पांचवाँ पदार्थ 'विशेष' पृथ्वी, जल, तेज और वायु के परमाणुओं में तथा शेष पाँच द्रव्यों मे पाया जाता है। 'विशेष' अनंत होते हैं। 'समवाय' जहाँ कहीं पाया जायगा, वहीं रहेगा अतः वह एक ही है।

वैशेषिक का परमाणुवाद प्रसिद्ध है। द्रव्यखंड के टुकड़े करते करते जब ऐसा टुकड़ा रह जाता है जिसके और टुकड़े नहीं हो सकते, तब वह परमाणु कहलाता है। परमाणु नित्य और अक्षर हैं। इन्हीं की योजना से सब पदार्थ बनते हैं और सृष्टि होती है। आकाश को छोड़कर जितने प्रकार के भूत होते हैं उतने ही प्रकार के परमाणु होते हैं जैसे—पृथ्वी परमाणु, जल

परमाणु, तेज परमाणु और वायु परमाणु। वैशेषिक में दो परमाणुओं के योग को द्वयणुक कहते हैं। आगे चलकर यही द्वयणुक अधिक संख्या में मिलते जाते हैं, जिससे नाना प्रकार के पदार्थ बनते हैं, जैसे—तीन द्वयणुकों से त्रसरेणु, चार द्वयणुकों से चतुरणुक आदि। कारणगुण पूर्वक ही कार्य के गुण होते हैं, अतः जिस गुण के परमाणु होंगे, उसी गुण के उनसे बने पदार्थ होंगे। पदार्थों में जो नाना भेद दिखाई पड़ते हैं वे सन्निवेश भेद से होते हैं। तेज के संबंध से वस्तुओं के गुण में बहुत कुछ फेरफार हो जाता है।

परमाणुओं के बीच अंतर की धारणा न होने के कारण वैशेषिकों को 'पीलुपाक' नामक विलक्षण मत ग्रहण करना पड़ा। इस मत के अनुसार घड़ा आग में पड़कर इस प्रकार लाल होता है कि अग्नि के तेज से घड़े के परमाणु अलग अगल हो जाते हैं और फिर लाल होकर मिल जाते हैं। घड़े का यह बनना और बिगड़ना इतने सूक्ष्म काल में होता है कि कोई देख नहीं सकता।

परमाणुओं का संयोग सृष्टि के आदि में कैसे होता है, इस संवध में कहा गया है कि ईश्वर की इच्छा या प्रेरणा से परमाणुओं में गति या क्षोभ उत्पन्न होता है और वे परस्पर मिलकर सृष्टि की योजना करने लगते हैं। ऊपर जो नौ द्रव्य कहे गए हैं, उनमें 'आत्मा' भी है। आत्मा दो प्रकार का कहा गया है—ईश्वर और जीव। ईश्वर की सत्ता और कर्तृत्व मानने के कारण ही न्याय और वैशेषिक भक्तों एवं पौराणिकों के आक्षेपों से बचे रहे हैं।

और दर्शनों के समान इस दर्शन पर भाष्य नहीं मिलते। प्रशस्तपाद का 'पदार्थ-धर्म-संग्रह' नामक ग्रंथ वैशेषिक सूत्रों का भाष्य कहा जाता है; पर वह वास्तव में भाष्य नहीं है, सूत्रों के आधार पर बना हुआ अलग ग्रथ है।

२. कणाद का अनुयायी। वैशेषिक दर्शन का माननेवाला।

वैशेष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विशेष का भाव। विशेषता। सर्वोत्तमता। श्रेष्ठता। २. जाति या गुणगत प्राधान्य। प्रमुखता (को०)।

वैश्मिक—वि० [सं०] वेश्मवाला। घरवाला। घर में रहनेवाला [को०]।

वैश्य—संज्ञा पुं० [सं०] भारतीय आर्यों के चार वर्णों में से तीसरा वर्ण जो 'द्विजाति' के अंतर्गत और उसमें अंतिम है।

विशेष—'वैश्य' शब्द वैदिक विश् से निकला है। वैदिक काल में प्रजा मात्र को विश् कहते थे। पर बाद में जब वर्णव्यवस्था हुई, तब वाणिज्य व्यसाय और गोपालन आदि करनेवाले लोग वैश्य कहलाने लगे। इनका धर्म यजन, अध्ययन और पशुपालन तथा वृत्ति कृषि और वाणिज्य है। आजकल अधिकांश वैश्य प्रायः वाणिज्यव्यवसाय करके ही जीविकानिर्वाह करते हैं। इन वैश्यों में देश और वंश आदि के भेद से अनेक जातियाँ और उपजातियाँ पाई जाती है जैसे,—अग्रवाल, ओसवाल, रस्तोगी, भाटिए आदि।

वैश्यकर्म—संज्ञा पुं० [सं० वैश्यकर्मन्] वैश्य का कर्तव्य कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य आदि।

वैश्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैश्य का भाव या धर्म। वैश्यत्व।

वैश्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैश्यता'।

वैश्यध्वंसी—वि० [सं० वैश्यध्वंसिन्] वैश्यों का नाश करनेवाला।

वैश्यभद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों की वैश्या और भद्रा नाम की दो देवियाँ।

वैश्यभाव—संज्ञा पुं० [सं०] वैश्यत्व, वैश्यकर्म [को०]।

वैश्ययज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] वैश्यों द्वारा किया जानेवाला यज्ञ [को०]।

वैश्यवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैश्य की जीविका का साधन। व्यापार आदि वैश्यकर्म [को०]।

वैश्यसव—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सव या यज्ञ।

वैश्यस्तोम—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का एकाह यज्ञ।

वैश्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैश्य जाति की। २. हलदी। ३. बौद्धों की एक देवी (को०)।

वैश्रंभक[1]—संज्ञा पुं० [सं० वैश्रम्भक] पुराणानुसार देवताओं के एक उद्यान या बाग का नाम।

वैश्रंभक[2]—वि० १. विश्वस्त। विश्रंभयुक्त। २. जाग्रत या चेतन करनेवाला (को०)।

वैश्रवण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुबेर। २. शिव। महादेव। ३. रावण (को०)। ४. चौदहवाँ मुहूर्त (को०)।

वैश्रवणानुज—संज्ञा पुं० [सं०] कुबेर का भाई रावण, कुंभकर्ण आदि [को०]।

वैश्रवणालय—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुबेर के रहने का स्थान। २. वट वृक्ष। बड़ का का पेड़। बरगद।

वैश्रवणावास—संज्ञा पुं० [सं०] १. वट वृक्ष। बरगद का पेड़। २. दे० 'वैश्रवणालय' [को०]।

वैश्रवणोदय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वट वृक्ष। बरगद का पेड़। २. दे० 'वैश्रवणावास' (को०)।

वैश्रवन (पु)—संज्ञा पुं० [सं० वैश्रवण] कुबेर। वैश्रवण। उ०—पुन्य जनेश्वर वैश्रवन धनद ऐलविल होइ।—नंद० ग्रं०, पृ० ९०।

वैश्व[1]—वि० [सं०] विश्वदेव संबंधी। विश्वदेव का।

वैश्व[2]—संज्ञा पुं० उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का एक नाम।

वैश्वजनीन[1]—वि० [सं०] विश्व भर के लोगों से संबंध रखनेवाला। समस्त संसार के लोगों का।

वैश्वजनीन[2]—संज्ञा पुं० वह जो समस्त संसार के लोगों का कल्याण करता हो।

वैश्वज्योतिष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

वैश्वदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह होम या यज्ञ आदि जो विश्वदेव के उद्देश्य से किया जाय। इसमें केवल पके हुए अन्न से विश्वदेव के उद्देश्य से आहुति दी जाती है और ब्राह्मणों को भोजन कराने की आवश्यकता नहीं होती है। २. उत्तराषाढ़ा नक्षत्र (को०)।

वैश्वदेवत—संज्ञा पुं० [सं०] उत्तराषाढ़ा नक्षत्र जिसके अधिष्ठाता विश्वदेव माने जाते हैं।

वैश्वदेविक—वि० [सं०] विश्वदेव संबंधी। विश्वदेव का।

वैश्वदेव्य—वि० [सं०] विश्वदेव संबंधी [को०]।

वैश्वदैवत संज्ञा पुं० [सं०] उत्तराषाढ़ा नक्षत्र।

वैश्वमनस—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

वैश्वयुग—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार बृहस्पति के पाँच संवत्सरों का युग या समूह।

विशेष—इन पाँच संवत्सरों के नाम क्रमशः शोभकृत्, शुभकृत्, क्रोधी, विश्वावसु और पराभव हैं। इनमें से पहले दो संवत्सर शुभ और शेष अशुभ माने जाते हैं।

वैश्वरूप१—संज्ञा पुं० [सं०] संसार। विश्व [को०]।

वैश्वरूप२—वि० विविध रूपोंवाला। विविध प्रकार का। अनेक ढंग का [को०]।

वैश्वरूप्य—संज्ञा सं० [सं०] विविध रूप या विभिन्न प्रकार का होने का भाव। विविधरूपता। विभिन्नता [को०]।

वैश्वस्त्य संज्ञा पुं० [सं०] वैधव्य। विधवापन [को०]।

वैश्वानर१—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. चित्रक या चीता नाम का वृक्ष। ३. पित्त। पित्ता। ४. परमात्मा। ५. चेतन। ६. जठराग्नि (को०)।

वैश्वानर२—वि० १. सभी लोगों के लिये उपयुक्त। २. सार्वभौम। सार्वजनीन। सार्वलौकिक। ३. राशिचक्र का। राशिचक्रीय [को०]।

वैश्वानरचूर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का चूर्ण जो सेंधा नमक, अजवायन और हर्रे आदि से बनाया जाता है। यह आमवात, शूल और गुल्म आदि के लिये बहुत उपयोगी माना जाता है।

वैश्वानरपथ, वैश्वानरमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] अग्निकोण या पूर्व और दक्षिण के बीच का कोना जो वैश्वानर का मार्ग माना जाता है।

वैश्वानरमुख—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

वैश्वानरवटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की गोली जो पारे, गंधक, ताँबे, लोहे, शिलाजीत, सोंठ, पीपल, चित्रक तथा मिर्च आदि के योग से बनाई जाती है और जो पेट के रोग में उपकारी मानी जाती है।

वैश्वानरविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

वैश्वानरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अग्निकोण। चंद्रवीथी का एक भाग। २. प्रति वर्ष के प्रारंभ में की जानेवाली एक प्रकार की विशेष बलि [को०]।

वैश्वामित्र, वैश्वामित्रक—वि० [सं०] विश्वामित्र का। विश्वामित्र संबंधी [को०]।

वैश्वासिक—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वैश्वासिकी] वह जिसपर विश्वास किया जाय। एतबार करने के काबिल। विश्वस्त।

वैश्वी—संज्ञा स्त्री० [सं०] उत्तराषाढ़ा नक्षत्र।

वैष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] वधकर्ता। काटनेवाला। हिंसक [को०]।

वैषम—संज्ञा पुं० [सं०] १. विषम होने का भाव। विषमता। २. परिवर्तन। (को०)

वैषमेषव—वि० [सं०] विषमेषु संबधी। कामदेव संबंधी।

वैषम्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. विषम होने का भाव। विषमता। २. समतल न होना। ३. अनुपातरहित होना (को०)। ४. कठिनाई। संकट। विपत्ति (को०)। ५. अन्याय। अनौचित्य (को०)। ६. भूल (को०)। ७ एकाकीपन (को०)।

वैषयिक१—वि० [सं०] १. विषय संबंधी। विषय का। २. पदार्थ संबंधी (को०)।

वैषयिक२—संज्ञा पुं० वह जो सदा विषय वासना में रत रहता हो। विषयी। लंपट।

वैषुवत्—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैषुवत' [को०]।

वैषुवत१—संज्ञा पुं० [सं०] १. विषुवत संक्रांति। २. केंद्र। मध्य।

वैषुवत२—वि० [वि० स्त्री० वैषुवती] १. केंद्रवर्ती। २. विषुव रेखा संबंधी [को०]।

वैषुवतीय—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'वैषुवत' [को०]।

वैष्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंस्र पशु द्वारा मारे हुए पशु का मांस। २. जाल में फँसाए गए पशु का मांस [को०]।

वैष्किर१—संज्ञा पुं० [सं०] वह पशु या पक्षी जो चारों ओर घूम फिरकर आहार प्राप्त करता हो।

वैष्किर२—वि० १. जिसमें पशु पक्षी हों। २. चूजे के मांस का बना हुआ रसा [को०]।

वैष्टंभ—संज्ञा पुं० [सं० वैष्टम्भ] एक प्रकार का साम।

वैष्टिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिससे जबरदस्ती काम लिया जाय। बेगार में काम करनेवाला व्यक्ति [को०]।

वैष्टुत, वैष्टुभ—संज्ञा पुं० [सं०] होम की भस्म। भस्म [को०]।

वैष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर्ग। २. वायु। ३. विष्णु। ४. लोक। विश्व का एक प्रभाग (को०)। ५, संसार (को०)।

वैष्णव१—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० वैष्णवी] १. वह जो विष्णु की आराधना करता हो। विष्णु की उपासना करनेवाला। २. हिंदुओं का एक प्रसिद्ध धार्मिक संप्रदाय। इस संप्रदाय के लोग प्रधानतः विष्णु की उपासना करते हैं और अपेक्षाकृत बड़े आचार विचार से रहते हैं।

विशेष—भारतवर्ष में विष्णु की उपासना बहुत प्राचीन काल से चली आती है। महाभारत के समय में यह धर्म पांचरात्र या नारायणीय धर्म कहलाता था। पीछे यही भागवत धर्म के नाम से प्रसिद्ध हुआ और इसमें वासुदेव या कृष्ण की उपासना प्रधान हुई। नारायणीय आख्यान में लिखा है कि [illegible] नारायण ने इस धर्म का उपदेश ब्रह्मा को किया था। ब्रह्मा ने नारद को, नारद ने व्यास को और व्यास ने शुकदेव को यह धर्म बतलाया था, और तब शुकदेव से सर्वसाधारण में यह धर्म प्रचलित

हुआ था। शंकराचार्य ने इस मत को अवैदिक सिद्ध करना चाहा चाहा था, जिसका रामानुजाचार्य ने खंडन किया। बीच में इस धर्म का कुछ ह्रास हो गया था, पर चैतन्य, रामानुजाचार्य, वल्लभावाचार्य आदि आचार्यों ने इस धर्म का फिर से बहुत अधिक प्रचार किया, और इस समय यह भारत के मुख्य संप्रदायों में से एक है। यह धर्म भक्तिप्रधान है और इसमें विष्णु ही उपास्य हैं। आजकल इस संप्रदाय की अनेक शाखाएँ और प्रशाखाएँ निकल आई हैं—चैतन्य, वल्लभ इत्यादि। अधिक संप्रदाय विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण के उपासक हैं। कुछ संप्रदायवाले माथे पर के तिलक के अतिरिक्त शंख, चक्र, गदा, पद्म आदि चिह्न भी शरीर में अंकित कराते हैं।
३. यज्ञकुंड की भस्म। ४. विष्णुपुराण। ५. विष्णु का लोक। वैकुंठ (को०)। ६. श्रवण नक्षत्र (को०)।

वैष्णव२—वि० १. विष्णु संबंधी। विष्णु का। २. विष्णु को इष्टदेव माननेवाला।

वैष्णवत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वैष्णव होने का भाव या धर्म। वैष्णवता।

वैष्णवस्थानक—संज्ञा पुं० [सं०] नाटक में रंगमंच पर लंबे लंबे डग भरना [को०]।

वैष्णवाचार—संज्ञा पुं० [सं०] वैष्णवों का आचार [को०]।

वैष्णवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विष्णु की शक्ति। २. दुर्गा। ३. गंगा। ४. अपराजिता या कोयल नाम की लता। ५. शतावर। ६. तुलसी। ७. पृथ्वी। श्रवण नक्षत्र। ९. एक प्रकार का साम।

वैष्णव्य—वि० [सं०] विष्णु संबंधी। विष्णु का।

वैसंदर(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वैश्वानर, प्रा० हिं० वैसन्नर वैसंदर] दे० वैश्वानर। उ०—वैसंदर बिकार।—गोरख० पृ० २५५।

वैस(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० वयस दे० 'वंस' (वयस)। उ०—यों वरष्ष दुम्र वित्ति गय भइय वैस बर उंच।—पृ० रा०, २५।१७९।

वैसणहार(पु)†—वि० [हिं० बैठना-बैसना + हार (प्रत्य०)] १. डूबनेवाला। २. बैठनेवाला। उपवेशन करनेवाला। उ०—औघट दरिया क्यों तिरै, बोहिथ वैसणहार। दादू खेवट राम बिन, कौंण उतारै पार।—दादू०, पृ० ४६१।

वैसर्गिक—वि० [सं०] जो विसर्जन करने या त्यागने के योग्य हो। त्याज्य।

वैसर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विसर्जन करने या उत्सर्ग करने की क्रिया। २. वह जो विसर्जित या उत्सर्ग किया जाय। ३. यज्ञ की बलि।

वैसर्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. विसर्प नामक रोग। २. वह जो विसर्प रोग से आक्रांत हो।

वैसा—क्रि० वि० [सं०, एतादृश से व्युत्पन्न ऐसा के समान हिं० 'वह' से व्युत्पन्न रूप] १. उस प्रकार का। उस तरह का। जैसे—~~जैसा दूसरा~~ तुमने पहले भेजा था वैसा ही एक और भेज दो। २. उस प्रकार। ३. उतना।

वैसादृश्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. असदृश या असमान होने का भाव। असमानता। विषमता। २. फर्क। भेद। अंतर।

वैसाना†—क्रि० स० [हिं०] दे० 'बिठाना', 'बैठना'। उ०—माघ पडित ईम उचरई, चउरी कुँवर वैसाड़ी छई आँणि।—बी० रासो, पृ० २१।

वैसारिण—संज्ञा पुं० [सं०] मछली।
यौ०—वैसारिणकेतन = मीनकेतन। कामदेव।

वैसासणा†—क्रि० स० [सं० विश्वासन, प्रा० विस्सासण, वीसासण; राज० वैसासणो] विश्वास। उ०—पंथी एक संदेसणउ लग ढालइ पैहच्याइ। सावज संवल तोड़स्यइ, वैसासणइ न जाइ—ढोला०, दू० १३३।

वैसूचन—संज्ञा पुं० [सं०] नाटक में पुरुष द्वारा स्त्री का वेश बनाकर अभिनय करना [को०]।

वैसृप—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक दानव का नाम।

वैसे—क्रि० वि० [हिं०] १. उस तरह। उस प्रकार। २. उस प्रकार के।

वैसेषिक(पु)—संज्ञा पुं० [सं० वैशेषिक] दे० 'वैशेषिक'। उ०—वैसेषिक शास्त्रे पुनि कालवादी है प्रसिद्ध। पातंजलि शास्त्र माँहि योगवाद है लह्यो।—संतवाणी०, २। ११९।

वैस्तारिक—वि० [सं०] विस्तार सबंधी। विस्तार का।

वैस्नव(पु)—वि० [वैष्णव] दे० 'वैष्णव'। उ०—श्री बल्लभ कुल को रहौं चेरो, वैस्नव जन का दास कहाऊँ।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० २२९।

वैस्पष्ट्य—संज्ञा पुं० [सं०] स्पष्टता। स्पष्ट या साफ होने का भाव। सुस्पष्टता। विस्पष्टता [को०]।

वैस्वर्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वर का विकृत होना। गला बैठना। विस्वर होना। २. उच्चारण की विभिन्नता या उतार चढ़ाव (को०)।

वैहंग—वि० [सं० वैहङ्ग] विहंग संबंधी। विहंग का।

वैहग—वि० [सं०] दे० 'वैहंग'।

वैहस्त्य—संज्ञा पुं० [सं०] संभ्रम। व्याकुलता। व्यग्रता। मोह [को०]।

वैहायस१—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक सरोवर। २. आकाश। व्योम। गगन। ३. व्योमगमन करना। ४. देवता [को०]।

वैहायस२—वि० १. आकाशचारी। २. विहायस संबंधी। आकाश संबंधी। ३. वायु या पवन संबंधी। ३. आकाश में स्थित। व्योम में स्थित [को०]।

वैहार१—संज्ञा पुं० [सं० वैभार] एक पर्वत जो मगध में राजगृह के पास है। वैभार।

वैहार२—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार, हिं० व्योहार] दे० 'व्यवहार'। उ०—जीवन घड़ी तै नवि रहई। जाणसू कागली हुआ वैहार।—बी० रासो, पृ० ९३।

वैहारिक—वि० [सं०] विहार के काम में प्रयुक्त। विहार के योग्य विहार करने लायक [को०]।

वैहार्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसके साथ हँसी मजाक आदि का संबंध हो। जैसे,—साला, सरहज, साली आदि। २. हास परिहास। दिल्लगी (को०)।

वैहाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिकार। आखेट [को०]।

वैहासिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सबको हँसाता हो। विदूषक। भाँड़। २. नट। अभिनेता (को०)।

वैह्वल—संज्ञा पुं० [सं०] १. विह्वलता। व्याकुलता। २. शक्तिहीनता। कमजोरी [को०]।

वोंट—संज्ञा पुं० [सं० वोगट] डंठल। वृंत [को०]।

वोंतिस†—वि० [सं० ऊनत्रिंश, प्रा० ओणतिस] दे० 'उनतिस' और 'ओनतिस'।—इंद्रा०, पृ० १६१।

वो—सर्व० [हिं०] दे० 'वह'। उ०—वो प्रभु अविगत अविनासी। दास कहाय प्रगट भे वासी।—कबीर सा०, पृ० ४०१।

वोइल†—संज्ञा पुं० [देश०] जमानत। जामिन। दे० 'ओल'। उ०—तुम प्रभु दीनदयाल रघुपति वोइल दिवाइय।—कबीर सा०, पृ० १९०।

वोईⓅ†—सर्व० [हिं० वह+ही] दे० 'वही'। उ०—फली वो बदी याँ वो तेरी अथी। हुआ वोई च हासिल जो पेरी अथी।—दक्खिनी०, पृ० ९०।

वोक†^{1}—संज्ञा पुं० [सं० वर्कर, हिं० बकरा, बोकरा] बकरा। बोक। उ०—वोक निलज्ज चरत नित डोलैं। बकरी संग कामरन बोलैं।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ३३४।

वोकⓅ^{2}—संज्ञा पुं० [सं० ओकस्-ओक] निवास। घर। ओक।

वोक्काण—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम। २. इस देश का निवासी। ३. इस देश का अश्व। ४. दे० 'बोक्काण'।

वोछाⓅ†—वि० [देश०] हलका। साधारण। दे० 'ओछा'।

वोजⓅ—संज्ञा पुं० [देश०] दे० 'बोज'। अश्वविशेष। उ०—लीले लक्खी लक्ख वोज बादामी चीनी।—सुजान०, पृ० ८।

वोट^1—संज्ञा पुं० [अं०] वह संमति जो किसी सार्वजनिक पद पर किसी को निर्वाचित करने या न करने, अथवा सर्वसाधारण से संबंध रखनेवाले किसी नियम या कानून आदि के निर्धारित होने या न होने आदि के विषय में प्रकट की जाती है। किसी सार्वजनिक कार्य आदि के होने या न होने आदि के संबंध में दी हुई अलग अलग राय। छंद।

विशेष—आजकल सभा समितियों में निर्वाचन के संबंध में या और किसी विषय में सभासदों अथवा उपस्थित लोगों की संमतियाँ ली जाती हैं। यह संमति या तो हाथ उठाकर या खड़े होकर या कागज आदि पर लिखकर प्रकट की जाती है। इसी संमति को वोट कहते हैं। आजकल प्रायः म्युनिसिपल और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों तथा काउंसिलों (प्रांतीय विधानसभा, लोकसभा) आदि के चुनाव में कुछ विशिष्ट अधिकारप्राप्त लोगों से वोट लिया जाता है। भारतवर्ष में प्राचीन बौद्धकाल में और उसके पहले भी इससे मिलती जुलती संमति देने की प्रथा थी, जिसे छंदस् या छंद कहते थे।

क्रि० प्र०—देना।—माँगना।

वोट^2—संज्ञा स्त्री० [हिं० ओट] १. ओट। आड़। उ०—इक पट वोट वोरि सुख कीजै। आवहु वलि छिन छिन छबि छीजै।—नंद० ग्रं०, पृ० १६५। २. ओट करने का पट। दुपट्टा। चादर वा चूनरी आदि का वह अंश जिससे ओट या घूँघट किया जाता है। उ०—पहिरैं कनक कड़ा औ बागा। वोट गै पाट उपर मनि लागा।—इंद्रा०, पृ० ११४।

वोट आफ सेंसर—संज्ञा पुं० [अं०] निंदा का प्रस्ताव। निंदात्मक प्रस्ताव। जैसे,—परिषद् ने बहुमत से सरकार के विरुद्ध वोट आफ सेंसर पास किया।

वोटनाⓅ†—क्रि० स० [हिं० ओट+करना] आड़ करना। उ०—इक पट वोट वोटि सुख कीजै। आवहु बलि छिन छिन छबि छीजै। नंद० ग्रं०, पृ० १६५।

वोटर—संज्ञा पुं० [अं०] वह जिसे वोट या संमति देने का अधिकार प्राप्त हो। वोट या संमति देनेवाला।

यौ०—वोटर लिस्ट।

वोटर लिस्ट—संज्ञा स्त्री० [अं० वोटर+लिस्ट] वह सूची जिससे किसी विषय में वोट देने के अधिकारियों के नाम और पते आदि लिखे रहते हैं। वोट देनेवालों की सूची।

वोटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दासी। मजदूरनी। दाई। पोटा।

वोटिंग—संज्ञा स्त्री० [अं०] मतदान की क्रिया। मत देने की क्रिया। चुनाव में अपना वोट देने का कार्य।

वोड—संज्ञा पुं० [सं०] सुपारी।

वोड़नाⓅ—क्रि० स० [हिं० ओढ़ना] १. विस्तार करना। फैलाना। २. रोकना। सहना।

वोड्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. गोह नामक जंतु। गोनस सर्प। ३. एक प्रकार की मछली।

वोड्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] पण का चतुर्थांश [को०]।

वोढ^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वोढू ऋषि। २. कदम का पेड़। कदंब वृक्ष।

वोढ^2— वि० विवाहित। जिसका उद्वाह हो चुका हो [को०]।

वोढ़ना†—क्रि० स० [सं० आवेष्ठन या उपवेष्ठन; प्रा० आवठ्ठण] दे० 'ओढ़ना'। उ०—लाल कमलो वोढ़े पेनाए, वेसु हरि थे कंसे बनाए।—दक्खिनी०, पृ० १०३।

वोढ़नीⓅ†—संज्ञा पुं० [देशी ओड्ढण ओड्ढणिगा] ओढ़ने का वस्त्र। ओढ़ना। उ० वोढ़नी है नरलज्जता की अपकीरति नूपुर के सुर गावत। लोभ को छोर धरे लटुवा मन रे नटुवा भयो भाव बतावत।—सातसतक, पृ० ४, छंद १८।

वोढव्य—वि० [सं०] १. वहन करने योग्य। बाह्य। २. परिणेतव्य। परिणय करने योग्य। ३. धारण या सहन करने योग्य। ४. खींचने या ले जाने योग्य। ५. पूर्ण करने योग्य [को०]।

वोढव्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह औरत जो रखने या विवाह के योग्य हो अथवा जिसका विवाह होनेवाला हो [को०]।

वोढा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋषभक नाम की ओषधि।

वोढा^{2}—संज्ञा पुं० [सं० वोढृ] १. वहन करने, ढोने या ले जानेवाला। भारिक। भारवाहक। २. नेता। पथदर्शक। नायक। ३. पति। परिणेता। शौहर। ४. साँड। वृषभ। ५. सूत। सारथि। ६. कर्षक अश्व। खींचनेवाला घोड़ा। ७. मूढ़ [को०]।

वोढा³—वि० वहन करने या धारण करनेवाला [को०]।

वोढ़ाⓅ⁴—वि० स्त्री० [सं० वोढ़ृ] वहन या धारण करनेवाली। भरी हुई। निमग्न। उ०—यहि परकार कहै रस वोढा। सा स्वाधीन वल्लभा प्रौढा।—नंद० ग्रं०, पृ० १५।

वोढु—संज्ञा पुं० [सं०] वह बालक जो पिता के न रहने के कारण अपनी माता के साथ ननिहाल में रहता हो। पति के न रहने से मायके में रहनेवाली स्त्री का पुत्र [को०]।

वोढू—संज्ञा पुं० [सं० वोढु ?] एक प्राचीन ऋषि जिनके नाम से तर्पण के समय जल दिया जाता है।

वोतप्रोतⓅ—वि० [सं० ओत प्रोत] एक में एक बुना हुआ। गुथा हुआ। इतना मिला हुआ कि अलग करना असंभव सा हो। अनुस्यूत। उ०—जैसे तंतुहि पट लै बाना। वोत प्रोत सो तंतु समाना।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० १११।

वोद—वि० [सं०] आर्द्र। गीला।

वोदरⓅ†—संज्ञा स्त्री० [सं० उदर अथवा देश०] दे० 'उदर'। उ०—लौद लचीली लौं लचति घालत नहिं सकुचात। लगि जैहै वोदर लला वहै कृसोदर गात।—स० सप्तक, पृ० २६१।

वोदार—संज्ञा पुं० [सं०] मुरदासिंगी। कंकुष्ठ।

वोदारना†—क्रि० स० [सं० अवदारण] ओदारना। फाड़ना। उ०—खंभ ते फारि वोदार दोन्हौ नख ते डारेव चीर।—संत० दरिया, पृ० ११९।

वोदाल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली जिसे बोआरी कहते हैं।

घोद्रⓅ†—संज्ञा पुं० [सं० उदर] दे० 'उदर'।

वोधक—संज्ञा पुं० [सं०] कफ का एक भेद। उ०—कफ भी अवलुंपक, क्लेदक, वोधक, तर्पक और ओषक इन पाँच भेद से रहता है। —माधव०, पृ० ५८।

वोना†—संज्ञा स्त्री० [प्रा० वोड्डिया] कपर्दिका। कौड़ी। उ०—अवतंस इक स्रव स्रोन। दिसि कंक आमिय वोन।—पृ० रा०, ६१। १४८।

वोनतिस†—वि० [सं० ऊनत्रिंश, प्रा० ओणातिस] दे० 'उनतीस'। उ०—वोनतिस अच्छर तापर भेजा सिर्जनहार। तेहि करता कहँ सुमिरहु मेरवैं मित्र तोहार।—इंद्रा०, पृ० १६१।

वोपदेव—संज्ञा पुं० [सं०] संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान् जो व्याकरण के ज्ञाता एवं ग्रंथनिर्माता थे।

विशेष—इनका लिखा व्याकरण का प्रसिद्ध ग्रंथ मुग्धबोध है। कविकल्पद्रुम तथा और भी इनके लिखे अनेक ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। ये 'हेमाद्रि' के समकालीन थे और देवगिरि के यादव राजा के ~~दरबार~~ के मान्य विद्वान् रहे। इनका समय तेरहवीं शती का पूर्वार्ध मान्य है।

वोपना†—क्रि० अ० [प्रा० ओप्पा (=शाण), हिं० ओप] चमकना। दीप्त होना। ओपना। उ०—उबटन उबटि अँगन अन्हवाई। वोपी दामिनि लोपी माई।—नंद० ग्रं०, पृ० १२२।

वोबरा†—संज्ञा पुं० [सं० उपविवर, हिं० ओबरी अथवा सं० उपसगृह] छोटा घर। छोटा मकान। मकान का एक छोटा भाग। कोठरी। उ०—लाल वोबरा महल अटारी। अइया मनुषहुं बूझि तुम्हारी।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ३२५।

वोम†—संज्ञा पुं० [सं० व्योम] आकाश। अंतरिक्ष। उ०—वोम अरावैं गाजिऐ ढोल हुआ सब दौड़। आयौ रूपौ रामतण हाम वड़ी राठौड़।—रा० रू०, पृ० २४३।

वोर†¹—संज्ञा स्त्री० [सं० अवार(=किनारा)] तरफ। दिशा। ओर। उ०—गैयाँ मिलवन मिस उठि भोर। गहगोरी गमनी उहि वोर।—नंद० ग्रं०, पृ० १७२।

वोर†²—संज्ञा पुं० ओर। अंत। पार। छोर। उ०—परकाला अरु गजी गनत कहुँ वोर न लहिए।—सुंदर०, ग्रं०, भा० १, पृ० ७५।

वोरक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो लिखता हो। लेखक। २. कलाकार। चित्रकार (को०)।

वोरट—संज्ञा पुं० [सं०] कुंद का फूल या पौधा।

वोरता†—संज्ञा पुं० [देश०] अश्वविशेष। दे० 'बोज'। उ०—नुकुरा और दुवाज वोरता है छबि दूनी।—सुजान०, पृ० ८।

वोरपट्टी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गद्दा। तोसक। आस्तरण [को०]।

वोरव—संज्ञा पुं० [सं०] बोरो धान।

वोरुखान—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का घोड़ा। संभवतः वोरता या वोज [को०]।

विशेष—हेमचंद्र के अनुसार यह लाल रंग का या हलके भूरे रंग का होता था। इसे वोरता, बोज, वोर और वेरुहान भी कहते थे।

वोल—संज्ञा पुं० [सं०] रसगंध। एक गंध द्रव्य। दे० 'बोल' [को०]।

वोलक—संज्ञा पुं० [सं०] जलावर्त। जलगुल्म। भंवर [को०]।

वोल्लाह—संज्ञा पुं० [सं०] वह घोड़ा जिसकी दुम और अयाल के बाल पीले रंग के हों। वुनाह।

वोष्ठ†—संज्ञा पुं० [सं० ओष्ठ] दे० 'ओष्ठ'।

यौ०—वोष्ठपुठ=ओष्ठपुट। उ०—सत सहस्र संहिता भारत व्यास जी के वोष्ठपुठन तें निकसो है।—पोद्दार अभि० ग्रंथ, पृ०, ४८४।

वोसूल†—संज्ञा पुं० [अ० वसूल] दे० 'वसूल'। उ०—पाप तहसील वोसूल होने लगी।—पलटू०, भा० २, पृ० ३३।

वोहिⓅ—सर्व० [हिं० वह] दे० 'वह'। उ०—साँवरो पीतम जहाँ बसै सो कित है वोहि गाँव री।—नंद० ग्रं०, पृ० ३५१।

वोहित्थ—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ी नाव। जहाज।

वौकाना†—क्रि० स० [देश०] १. देना। प्रदान करना। हवाले करना। २. झुकाना। लचकाना। उ०—कोई न दिखा तब अपने कलेजे से पलाश की डार मय गुच्छे के मुझे हाथ से वौका दिया।—श्यामा० पृ० ८६।

वौद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध [को०]।

वौषट्—संज्ञा पुं० [सं०] अंगन्यास तथा पितरों या देवों को आहुति देने के समय प्रयुक्त होनेवाला एक उद्‌गार वा सांकेतिक मंत्रविशेष [को०]।

वौसाउ(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० व्यवसाय] व्यवसाय। व्यापार। उ०—कै काहू की इंछा पूरी। बल वौसाउ कीन्ह दुख दूरी।—चित्रा०, पृ० ३४।

व्यंकुश—वि० [सं० व्यङ्कुश] दे० 'निरंकुश'।

व्यंग^{1}—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्ग] १. मंडूक। मेंढक। २. भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिसमें क्रोध या परिश्रम आदि के कारण वायु कुपित होने से मुँह पर छोटी छोटी काली फुंसियाँ या दाने निकल आते हैं। ३. वह जिसका कोई अंग टूटा हुआ या विकृत हो। लुंजा। विकलांग। ४. दे० 'व्यंग'।

मुहा०—व्यंग की बौछार = बहुत से व्यंगभरे वाक्य। व्यंग की बहुत सी बातें। उ०—किसी ओर से कहीं सभ्य व्यंग की बौछार आती।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २९२।

५. एक रत्न लहसुनिया (को०) ६. लौह। इस्पात (को०)।

व्यंग^{2}—वि० १. शरीररहित। २. जो व्यवस्थित न हो। अव्यवस्थित। ३. चक्रहीन। ४. लँगड़ा [को०]।

व्यंगक—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्गक] पर्वत।

व्यंगता—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यङ्गता] व्यंग का भाव।

व्यंगत्व—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्गत्व] १. किसी अंग का न होना या खंडित होना। खंजता। २. दे० 'व्यंगता'।

व्यंगार—वि० [सं० व्यङ्गार] अंगारहीन। ज्वालारहित [को०]।

व्यंगार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] दे० व्यंग्य'।

व्यंगिता—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यङ्गिता] अंगहीनता। विकलांगता [को०]।

व्यंगी—वि० [सं० व्यङ्गिन्] अंगविशेष से रहित। अंगहीन [को०]।

व्यंगुल—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्गुल] एक अंगुल का साठवाँ भाग [को०]।

व्यंगुष्ठ—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्गुष्ठ] एक प्रकार का गुल्म।

व्यंग्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्ग्य] १. शब्द का वह अर्थ जो उसकी व्यंजना वृत्ति के द्वारा प्रकट हो। व्यंजना शक्ति के कारण प्रकट होनेवाला साधारण से कुछ विशिष्ट अर्थ। गूढ़ और छिपा हुआ अर्थ। विशेष दे० 'व्यंजना'। २. वह लगती हुई बात जिसका कुछ गूढ़ अर्थ हो। ताना। बोली। चुटकी।

क्रि० प्र०—कहना।—छोड़ना।—बोलना।—सुनना।

व्यंग्य^{2}—संज्ञा १. व्यंजना वृत्ति द्वारा बोधित। परोक्ष संकेत द्वारा सूचित वा उपलक्षित [को०]।

व्यंग्यचित्र—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्ग्य + चित्र] वह चित्र जो किसी व्यक्ति का परिहास करने के लिये बिगाड़कर इस प्रकार बनाया जाता है जिसे देखकर दर्शक को स्वभावतः हँसी आ जाय। (अँ० कार्टून)।

व्यंग्यदाम—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्ग्यदामन्] व्यंग्य का बंधन। उ०—शवरी, गज गणिकादिक, हुए कृष्ट प्रासारिक। पारिक मैं सांसारिक अविद्या हो व्यंग्यदाम।—आराधना, पृ० १४।

व्यंग्यरूपक—संज्ञा पुं० [सं० व्यङ्ग्यरूपक] वह रूपक जिसमें अप्रस्तुत योजना व्यक्त न होकर प्रच्छन्न हो। प्रच्छन्न रूपक। उ०—काव्य के वर्तमान समीक्षकों की दृष्टि में दबी हुई या प्रच्छन्न अप्रस्तुत योजना, जिसे हमारे यहाँ व्यंग्यरूपक कहेंगे, बहुत उत्कृष्ट मानी जाती है।—चिंतामणि, भा० २, पृ० २२३।

व्यंग्योक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यङ्ग्य + उक्ति] परिहास वचन। चुभती हुई बात। व्यंग्यपूर्वक कही गई बात [को०]।

व्यंज—संज्ञा पुं० [सं० व्यञ्जन] १. परिचायक चिह्न। २. प्रकाशन। उ०—चंदवधू सिर व्यंज धरे वसुमत्ति सु रज्जिय।—पृ० रा०, २५।३५।

व्यंजक^{1}—वि० [सं० व्यञ्जक] १. व्यंजित करनेवाला। २. प्रकाशक [को०]।

व्यंजक^{2}—संज्ञा पुं० १. भावप्रकाशन की चेष्टा। २. वह शब्द जो गूढ़ार्थ को प्रकट करे। ३. संकेत। ४. अभिनय [को०]।

व्यंजन—संज्ञा पुं० [सं० व्यञ्जन] १. व्यक्त या प्रकट करने अथवा होने की क्रिया। २. शब्द की तीन शक्तियों में एक का नाम। विशेष दे० 'व्यंजना'। ३. चिह्न। निशान। रूप। ४. अवयव। अंग। ५. मूँछ। ६. दिन। ७. पेड़ू के नीचे का स्थान। उपस्थ। ८. तरकारी और साग आदि जो दाल, चावल, रोटी आदि के साथ खाए जाते हैं। ९. (साधारण बोलचाल में) पका हुआ भोजन। १०. वर्णमाला में का वह वर्ण जो बिना स्वर की सहायता से न बोला जा सकता हो। हिंदी वर्णमाला में 'क' से 'ह' तक के सब वर्ण व्यंजन हैं। ११. गुप्तचर या गुप्तचरों का मंडल। वयस्कता। १२. उ०—जब पूर्वोक्त प्राग्रूप प्रकट हो जाय तब उसको रूप ऐसे कहते हैं और संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिह्न और आकृति यह छह शब्द रूप के पर्याय हैं।—माधव०, पृ० ५। १३. निदान। लक्षण (को०)। १४. लिंगद्योतक या स्मारक चिह्न। जैसे, मूँछ, दाढ़ी, स्तन आदि (को०)। १५. स्मारक (को०)। १६. कपट वेश। छद्म वेश (को०)। १७. बलि पशु का संस्कार या पूजन (को०)। १८. पंखा। व्यजन (को०)।

व्यंजनकार—संज्ञा पुं० [सं० व्यञ्जनकार] रसोइया। व्यंजन बनानेवाला व्यक्ति। सूपकार।

व्यंजनतालिका—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जन + तालिका (= सूची)] विक्रेतव्य भोज्य वस्तुओं की सूची। (अं०) मेनू। व्यंजनिका।

व्यंजनसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जनसन्धि] व्याकरण के अनुसार व्यंजन वर्ण का व्यंजन वर्ण के साथ होनेवाला संबंध।

व्यंजनहारिका—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जनहारिका] १. पुराणानुसार एक प्रकार की अमंगलकारिणी शक्ति जो विवाहिता लड़कियों के बनाए हुए खाद्य पदार्थ उठा ले जाती है। २. वह चुड़ैल जो स्त्रियों के भगस्थ बाल उड़ा ले जाती है।

व्यंजना—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जना] १. प्रकट करने की क्रिया। २. शब्द की तीन प्रकार की शक्तियों या वृत्तियों में से एक प्रकार की शक्ति या वृत्ति।

विशेष—व्यंजना शक्ति द्वारा शब्द या शब्दसमूह के वाच्यार्थ अथवा लक्ष्यार्थ से भिन्न किसी और ही अर्थ का बोध होता

है। जैसे यदि कोई कहे कि 'तुम्हारे चेहरे पर पाजीपन झलक रहा है'। दूसरा व्यक्ति कहे कि 'मुझे आज ही जान पड़ा है कि मेरे चेहरे में दर्पण का गुण है' तो इससे यह अर्थ निकलेगा कि तुमने मेरे दर्पण रूपी चेहरे में अपना प्रतिबिंब देखकर उसमें पाजीपन की झलक पाई है। शब्दों की जिस शक्ति से यह अभिप्राय निकला, वही व्यंजना शक्ति है। इसके शाब्दी और आर्थी ये दो भेद माने गए हैं और इन दोनों भेदों के भी कई उपभेद किए गए हैं।

व्यंजनावृत्ति संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जनावृत्ति] १. व्यंजनाशक्ति। २. साहित्य शास्त्र तथा अन्य शास्त्रों में स्वीकृत शब्द शक्ति का एक प्रकार जिसका बोधक शब्द व्यंजक कहा जाता है तथा जिससे बोध्य अर्थ व्यंग्य कहा गया है। इसी शक्ति का एक रूप ध्वनि या ध्वनित अर्थ होता है। शृंगारादि रस ध्वन्यर्थ हैं। ३. व्यंग्यपूर्ण लेखन वा कथन की शैली [को०]।

व्यंजनिका—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जनिका] जिसमें व्यंजन हो। व्यंजनतालिका।

व्यंजित—वि० [सं० व्यञ्जित] १. संकेतित। संकेत द्वारा कथित। २. चिह्नित। ३. व्यंजनावृत्ति द्वारा व्यक्त। व्यक्त [को०]।

व्यंजिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यञ्जिनी] १. व्यंजनसमूह। २. वह जो व्यंजन करे।

व्यंझⓅ†—संज्ञा पुं० [सं० विन्ध्य, प्रा० विंझ] दे० 'विंध्य'। उ०—किस्न सकल चल अचल, अदिठ अलसंत चलंतइ। चंदन नभ वन भवन, अंब गिरि व्यंझ वसंतइ।—पृ० रा०, २१। १५।

व्यंत—वि० [सं० व्यन्त] दूर रहनेवाला। दूरस्थ [को०]।

व्यंतर—१. संज्ञा पुं० [सं० व्यन्तर] जैनों के अनुसार एक प्रकार के पिशाच और यक्ष। २. अंतर। अवकाश (को०)। ३. अंतर न होना (को०)।

व्यंदनाⓅ—क्रि० स० [सं० विद्] जानना। जान पड़ना। ज्ञात होना। उ०—मृदु मृदंग धुनि संचरिय, अलि अलाप मुघ व्यंद।—पृ० रा०, ६१। १७००।

व्यंश- देश० पुं० [सं०] पुराणानुसार विप्रचित्ति के पुत्र का नाम जो सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

व्यंशक—संज्ञा पुं० [सं०] पर्वत। पहाड़।

व्यंशुक—वि० [सं०] अंशुक या वस्त्रहीन। नग्न। निर्वस्त्र [को०]।

व्यंस¹—संज्ञा पुं० [सं०] एक राक्षस का नाम।

व्यंस²—वि० विस्तृत अंसवाला। चौड़े कंधोंवाला [को०]।

व्यंसक—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूर्त। चालबाज। चालाक। २. ऐंद्रजालिक। बाजीगर (को०)।

व्यंसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. ठगने या धोखा देने की क्रिया। २. बाँटने की क्रिया। वितरण (को०)।

व्यंसित—वि० [सं०] १. जो छला गया हो। वंचित। प्रतारित। २. पराजित। पराभूत। ३. प्रभावित [को०]।

व्य—संज्ञा पुं० [सं०] ढकने या आवरण करनेवाला। आच्छादक। परदा करनेवाला [को०]।

व्यक्त¹—वि० [सं०] १. दिखाई देता या झलकता हुआ। प्रकट। जाहिर। २. साफ। स्पष्ट। ३. स्थूल। बड़ा। ४. दुष्ट। पाजी। ५. विकसित (को०)। ६. विशिष्ट। प्रसिद्ध। विख्यात (को०)। ७. एकाकी। अकेला (को०)। ८. बुद्धिमान। विद्वान् (को०)। ९. विभूषित। सुसज्जित (को०)। १०. उष्ण (को०)।

व्यक्त²—संज्ञा पुं० १. विष्णु। २. मनुष्य। आदमी। ३. कृत्य। कार्य। काम। ४. सांख्य के अनुसार प्रधान, अहंकार, इंद्रियाँ, तन्मात्र, महाभूत आदि चौबीस तत्व जो पुरुष से उद्भूत माने गए हैं।

विशेष—सांख्य के मत से प्रकृति अव्यक्त और पुरुष व्यक्त है।

५. उष्णता (को०)। ६. सुशिक्षित वा विद्वान् व्यक्ति (को०)। ७. जैन मतानुसार ग्यारह गणाधिपों में से एक (को०)।

व्यक्तकृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] लोककार्य [को०]।

व्यक्तगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यक्तगन्धा] १. नीली अपराजिता। २. सानजुही। ३. पिप्पली। पीपल।

व्यक्तगणित—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'अंकगणित'।

व्यक्तता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यक्त होने का भाव।

व्यक्ततारक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० व्यक्ततारका] १. जिसमें तारे चमकते हों। जैसे, आकाश। २. चमकते तारों या पुतलियोंवाला।

व्यक्तदृष्टार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो देखी हुई बात कहे। चश्मदीद गवाह।

व्यक्तभुक्—संज्ञा पुं० [सं० व्यक्तभुज्] वह जो व्यक्त एवं दृश्यमान् संसार को खाता हो। काल। समय [को०]।

व्यक्तभुज्—संज्ञा पुं० [सं०] समय। वक्त।

व्यक्तराशि—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंकगणित में वह राशि या अंक जो व्यक्त किया या बतला दिया गया हो। ज्ञात राशि।

व्यक्तरूप—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

व्यक्तलक्ष्मा—वि० [सं० व्यक्तलक्ष्मन्] जिसके लक्षण प्रकट हों। व्यक्त या प्रकट चिह्नोंवाला [को०]।

व्यक्तलवण—वि० [सं०] जिसमें लवण व्यक्त हो अर्थात् मात्रा से अधिक हो [को०]।

व्यक्तवाक्, व्यक्तवाच्—संज्ञा पुं० [सं०] सुस्पष्ट कथन। स्पष्ट वाक्यावली।

व्यक्तविक्रम—वि० [सं०] जिसका पराक्रम सबको विदित हो [को०]।

व्यक्ताव्यक्त—वि० [सं० व्यक्त+अव्यक्त] प्रकट और अप्रकट। जो इंद्रियातीत हो। उ०—उपनिषदों में ब्रह्म के लिये व्यक्ताव्यक्त शब्द का प्रयोग किया गया है।—आचार्य०, पृ० ७६।

व्यक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यक्त होने की क्रिया या भाव। प्रकाशित या दृश्य होना। प्रकट होना। २. मनुष्य या किसी और शरीरधारी का सारा शरीर, जिसकी पृथक् सत्ता मानी जाती है और जो किसी समूह या समाज का अंग समझा जाता है। समष्टि का उलटा। व्यष्टि। ३. मनुष्य। आदमी। जैसे,—कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो सदा दूसरों का अपकार ही किया करते हैं।

विशेष—यद्यपि यह शब्द संस्कृत में स्त्रीलिंग है तथापि हिंदी में मनुष्य या आदमी के अर्थ में यह प्रायः बोला और लिखा जाता है।

४. भूतमात्र। ५. वस्तु। पदार्थ। चीज। ६. प्रकाश। ७. भेद। विभेद (को०)। ८. वास्तविक रूप या प्रकृति (को०)। ९. व्याकरण में लिंग तथा विभक्ति में प्रयुक्त प्रत्यय (को०)।

व्यक्तिगत—वि० [सं०] १. स्वगत। २. निजी। एक व्यक्ति तक सीमित। उ०—इससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता कम होती है।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ५५।

व्यक्तित्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यक्ति होने का भाव। २. व्यक्ति का असामान्य गुण या असाधारण विशिष्टता। किसी में असामान्य या असाधारण रूप से पाई जानेवाली विशेषता।

व्यक्तिमुखी—वि० स्त्री० [सं०] व्यक्तिविशेष की रुचि या भावना से संबद्ध। एक व्यक्ति तक ही केंद्रित रहनेवाली। उ०—यह प्रणाली समीक्षक की व्यक्तिगत भावना या प्रतिक्रिया को व्यक्त करने का लक्ष्य रखती है, अतएव इसे व्यक्तिमुखी, भावात्मक या प्रभावाभिव्यंजक शैली कहते हैं।—नया०, पृ० ३८।

व्यक्तीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] प्रकाशन। प्रकटन। अभिव्यक्ति। उ०—साहित्य मनुष्य के विचारों, उसकी भावनाओं और कल्पनाओं का व्यक्तीकरण है।—पा० सा० सि०, पृ० १।

व्यक्तीकृत—वि० [सं०] जो व्यक्त किया गया हो। प्रकट किया हुआ।

व्यक्तीभूत—वि० [सं०] जो व्यक्त हुआ हो। प्रकट किया हुआ।

व्यग्र^1—वि० [सं०] १. घबराया हुआ। व्याकुल। २. डरा हुआ। भयभीत। ३. काम में फँसा हुआ। ४. उद्यमी। उद्योगी। ५. आसक्त। उ०—मार्ग में मिस से ठिठकती ठहरती सौ बार। गई व्यग्र शकुंतला नृप को निहार निहार।—शकुं०, पृ० ९। ६. आग्रही। ७. गतिशील। जैसे चक्र (को०)।

व्यग्र^2—संज्ञा पुं० विष्णु।

व्यग्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यग्र होने का भाव। २. व्याकुलता।

व्यग्रमना—वि० [सं० व्यग्रमनस्] व्याकुल मनवाला [को०]।

व्यग्रहस्त—वि० [सं०] जिसके हाथ किसी काम में लगे हों। काम में फँसा हुआ [को०]।

व्यज—संज्ञा पुं० [सं०] व्यजन। पंखा [को०]।

व्यजन—संज्ञा पुं० [सं०] १. हवा करने का पंखा। उ०—कभी विपिन में हमें व्यजन का पड़ता नहीं प्रयोजन है।—पंचवटी, पृ० १०। २. पंखे के काम में आनेवाली कोई वस्तु जिससे हवा की जा सके। ३. पंखा झलना (को०)।

व्यजनक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यजन' [को०]।

व्यजनक्रिया—संज्ञा पुं० [सं०] पंखा झलने का कार्य।

व्यजनचामर—संज्ञा पुं० [सं०] चमरी गाय की वह पूँछ जो पंखे की तरह झली जाती है। चँवर [को०]।

व्यजनी—संज्ञा पुं० [सं० व्यजनिन्] वह पशु जिसकी पूँछ के बालों से व्यजन (चामर) बनता हो [को०]।

व्यज्य^1—वि० [सं०] जिसका बोध शब्द की व्यंजना शक्ति के द्वारा हो।

व्यज्य^2—संज्ञा पुं० दे० 'व्यंग्य'।

व्यडंबक—संज्ञा पुं० [सं० व्यडम्बक] रेंड़ का पेड़। एरंड।

व्यडंबन—संज्ञा पुं० [सं० व्यडम्बन] रेंड़ का पेड़।

व्यड़—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्याडि'।

व्यति—संज्ञा पुं० [सं०] घोड़ा।

व्यतिकर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यसन। २. विनाश। बरबादी। ३. मिश्रण। मिलावट। ४. व्याप्ति। संबंध। लगाव। तअल्लुक़। ६. समूह। झुंड। ७. रगड़। घर्षण (को०)। ८. अंतराय। विघ्न। रुकावट (को०)। ९. घटना। वृत्तांत (को०)। १०. सुअवसर। सुयोग (को०)। ११. विनिमय। परिवर्तन। अदल बदल (को०)। १२. क्षोभ (को०)। १३. ध्यानाकर्षण (को०)।

व्यतिकर^2—वि० १. पारस्परिक। २. व्यापक विस्तारवाला। ३. निकट। समीप। आसन्न [को०]।

व्यतिकरित—वि० [सं०] १. व्यतिकर युक्त। २. मिश्रित। ३. आपूर्ण। अभिव्याप्त [को०]।

व्यतिकीर्ण—वि० [सं०] १. घुला मिला। मिश्रित। २. संयुक्त। एकीभूत (को०)। ३. प्रकंपित। संक्षुब्ध (को०)।

व्यतिकृत—वि० [सं०] परिव्याप्त [को०]।

व्यतिक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रम में होनेवाला विपर्यय। सिलसिले में होनेवाला उलटफेर। २. बाधा। विघ्न। ३. उल्लंघन। अतिक्रमण (को०)। ४. उदासीनता। उपेक्षा। अवहेलना (को०)। ५. असंगति (को०)। ६. पाप। अपराध (को०)। ७. विपत्ति। दुर्भाग्य (को०)। ८. रीतिभंग (को०)।

व्यतिक्रमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रम में विपर्यय करना। सिलसिले में उलट फेर करना। २. पाप या अपराध करना (को०)।

व्यतिक्रमी—वि० [सं० व्यतिक्रमिन्] व्यतिक्रम या रीति भंग करनेवाला। अपराधी [को०]।

व्यतिक्रांत^1—वि० [सं० व्यतिक्रान्त] १. जिसमें किसी प्रकार का विपर्यय हुआ हो। २. बिताया हुआ (को०)।

व्यतिक्रांत^2—संज्ञा पुं० १. उल्लंघन। २. पाप [को०]।

व्यतिक्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यतिक्रान्ति] १. क्रम में होनेवाला विपर्यय। व्यतिक्रम। २. बुराई (को०)।

व्यतिक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. कहासुनी। वाद विवाद। २. अदल बदल विनिमय [को०]।

व्यतिगत—वि० [सं०] बीता हुआ। व्यतीत [को०]।

व्यतिचार—संज्ञा पुं० [सं०] १. पाप कर्म करना। पाप का आचरण करना। २. दोष। ऐब।

व्यतिपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत बड़ा उत्पात। भारी उपद्रव या खराबी। २. ज्योतिष के अनुसार योगविशेष। दे० 'व्यतीपात'।

व्यतिभिन्न—वि० [सं०] जो अलग न हो सके। परस्पर मिला हुआ। पूर्णतः घुला मिला [को०]।

व्यतिभेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रवेश। व्याप्ति। २. एक साथ होनेवाला। स्फोट [को०]।

व्यतिमूढ़—वि० [सं०] कर्तव्यमूढ। अचकचाया हुआ [को०]।

व्यतियात—वि० [सं०] गत। गुजरा हुआ।

व्यतिरिक्त^1—वि० [सं०] १. भिन्न। अलग। २. अधिक। अतिशय। बढ़ा हुआ। ३. रुद्ध। रोका हुआ (को०)। ४. मुक्त (को०)। ५. अपवादित। जिसका अपवाद किया गया हो (को०)।

व्यतिरिक्त^2—क्रि० वि० अतिरिक्त। सिवा। अलावा।

व्यतिरिक्तक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की उड़ान [को०]।

व्यतिरिक्तता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यतिरिक्त होने का भाव या धर्म। विभिन्नता।

व्यतिरेक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अभाव। २. भेद। अंतर। भिन्नता। वैषम्य। असमानता। ३. वृद्धि। बढ़ती। ४. अतिक्रम। ५. एक प्रकार का अर्थालंकार जिसमें उपमान की अपेक्षा उपमेय में कुछ और भी विशेषता या अधिकता का वर्णन होता है। उ०—(क) कहत सबै बेंदी दिए अंक दस गुनो होत। तिय लिलार बेंदी दिए अगनित बढ़त उदोत। (ख) निज परताप द्रवहिं नवनीता। पर दुख द्रवहिं सो संत पुनीता। ६. वियोग। राहित्य (को०)। ७. निष्कासन। अपवर्जन (को०)। ८. न्याय में असंबंधरूप पदार्थ। अन्वय का उलटा (को०)। ९. तुलना में वैपरीत्य दिखाना (को०)। १०. एक प्रकार की व्याप्ति (को०)।

व्यतिरेकी—संज्ञा पुं० [सं० व्यतिरेकिन्] १. वह जो किसी को अतिक्रमण करके जाता हो। २. वह जो पदार्थों में विभिन्नता या विशेषता उत्पन्न करता हो। ३. अभावात्मक (को०)। ४. भिन्न। विपरीत (को०)।

व्यतिरेचन—संज्ञा पुं० [सं०] दो वस्तुओं या व्यक्तियों में अंतर दिखाने की क्रिया [को०]।

व्यतिरोपित—वि० [सं०] १. अधिकार रहित किया हुआ। २. निकाला हुआ [को०]।

व्यतिलंघी—वि० [सं० व्यतिलङ्घिन्] फिसलनेवाला [को०]।

व्यतिविद्ध—वि० [सं०] १. आलिंगित। गुंफित। २. विद्ध। छिद्रित [को०]।

व्यतिव्यस्त—वि० [सं०] उलझा हुआ। अत्यंत व्यस्त [को०]।

व्यतिषंग—संज्ञा पुं० [सं० व्यतिषङ्ग] [वि० व्यतिषक्त] १. मिलाना। २. विनिमय। बदला। ६. संयोग (को०)। ४. परस्पर बाँधना। एक साथ गूँथना (को०)। ५. परस्पर भिड़ना (को०)। ६. अभिशोषण। शोषण (को०)।

व्यतिषक्त—वि० [सं०] १. मिला हुआ। मिश्रित। २. आसक्त। ३. एकमेक। ओतप्रोत। अनुस्यूत (को०)। ४. जिनमें अंतर्विवाह हुआ हो (को०)।

व्यतिहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनिमय। परिवर्तन। बदला। २. गाली गलौज। ३. मारपीट।

व्यतीकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यसन। २. विनाश। बरबादी। ३. मिश्रण। ४. लड़ना भिड़ना (को०)।

व्यतीत—वि० [सं०] १. बीता हुआ। गत। जैसे,—बहुत दिन व्यतीत हो गए, वहाँ से कोई उत्तर नहीं आया। उ०—इसी प्रकार कभी व्यतीत वर्ष से लेकर।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३४१। २. मृत। मरा हुआ (को०)। ३. विसर्जित। परित्यक्त (को०)। ४. उपेक्षित। अवज्ञात (को०)। ५. लापरवाह। दीर्घसूत्री (को०)।

व्यतीतकाल—वि० [सं०] जिसका समय या अवसर बीत चुका हो। असामयिक [को०]।

व्यतीतना (पु)—क्रि० अ० [सं० व्यतीत + हिं० ना (प्रत्य०)] बीतना। गत होना। व्यतीत होना।

व्यतीपात—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत बड़ा उत्पात। भारी उपद्रव। जैसे—भूकंप, उल्कापात आदि। २. अपमान। बेइज्जती। ३. ज्योतिष में विष्कंभ आदि सत्ताइस योगों में से १७वाँ योग जिसमें यात्रा अथवा शुभ काम करने का निषेध है। ४. एक प्रकार का योग जो अमावास्या के दिन रविवार या श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा अथवा मृगशिरा नक्षत्र होने पर होता है। इस योग में गंगास्नान का बहुत माहात्म्य है। ५. पूर्णतः विचलन या प्रयाण (को०)।

व्यतीहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनिमय। परिवर्तन। बदला। २. आपस में गाली गलौज, मारपीट या इसी प्रकार का और काम करना।

व्यत्यय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यतिक्रम'।

व्यत्ययग—वि० [सं०] विपरीतगामी। उलटा चलनेवाला [को०]।

व्यत्यस्त—वि० [सं०] १. व्यतिक्रांत। २. असंगत। ३. विपरीत। विरोधी। ४. इस प्रकार रखी हुई दो वस्तुएँ जो एक दूसरो को काटती हों।

व्यत्यास—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यतिक्रम'।

व्यथक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो व्यथा उत्पन्न करता हो। पीड़ा देनेवाला।

व्यथन—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यथा। पीड़ा। तकलीफ। २. वह जो व्यथा उत्पन्न करता हो। पीड़ा देनेवाला। ३. कंपन (को०)। ४. स्वर का परिवर्तन (को०)। ५. छेदना (को०)।

व्यथयिता—वि० [सं० व्यथयितृ] १. पीड़ा देनेवाला। २. दंडित करनेवाला [को०]।

व्यथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पीड़ा। वेदना। तकलीफ। २. दुःख। क्लेश। ३. भय। डर। ४. विक्षोभ। अशांति (को०)। ५. रोग (को०)। ६. हानि। क्षति (को०)।

व्यथातुर—वि० [सं०] पीड़ित।

व्यथान्वित—वि० [सं०] १. व्यथायुक्त। पीड़ायुक्त। २. भयग्रस्त। भीत। ३. क्षुब्ध। ४. दुःखित [को०]।

व्यथित—वि० [सं०] १. जिसे किसी प्रकार की व्यथा या तकलीफ हो। २. दुःखित। रंजीदा। ३. जिसे किसी प्रकार का शोक प्राप्त हुआ हो। ४. भीत। डरा हुआ।

व्यथी—वि० [सं० व्यथिन्] व्यथित [को०]।

व्यथ्य—वि० [सं०] १. व्यथा देने योग्य। २. भय उत्पन्न करनेवाला। भयानक।

व्यध—संज्ञा पुं० [सं०] १. चोट पहुँचाना। आहत करना। २. भेदन। छिद्र करना। ३. आघात [को०]।

व्यधन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेधने की क्रिया। विद्ध करना। बींधना। २. आखेट (को०)। ३. वह जो विद्ध करता हो। बेधक (को०)।

व्यधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रक्त का गिरना या बहना। रक्तस्राव [को०]।

व्यधिकरण¹—संज्ञा पुं० [सं०] भिन्न आधार पर होना।

व्यधिकरण²—वि० १. व्याकरण में अन्य कारक से संबद्ध। २. भिन्न आधारवाला [को०]।

व्यधिक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] निंदा। शिकायत।

व्यध्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रत्यंचा। २. लक्ष्य [को०]।

व्यध्य²—वि० बेधने योग्य। भेदन करने योग्य [को०]।

व्यध्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. गलत रास्ता। बुरी राह। कुपथ। २. मार्ग का मध्य [को०]।

व्यनुनाद—संज्ञा पुं० [सं०] तीव्र प्रतिध्वनि। ऊँची गूँज [को०]।

व्यपकर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] निंदा। अपवाद [को०]।

व्यपकृष्ट—वि० [सं०] १. दूर हटाया हुआ। पृथक् किया हुआ। २. अपवादित जिसकी निंदा की गई हो [को०]।

व्यपगत—वि० [सं०] १. बीता हुआ। गया हुआ। २. रहित। वंचित। ३. गिराया हुआ। मुक्त। ४. हटाया हुआ। दूर किया हुआ।

व्यपगम—संज्ञा पुं० [सं०] १. बीतना। व्यतीत होना। ३. गमन। जाना। प्रस्थान [को०]।

व्यपत्रप—वि० [सं०] लज्जाहीन। बेहया [को०]।

व्यपदिष्ट—वि० [सं०] १. निंदित। तिरस्कृत। २. दिखाया हुआ। निर्दिष्ट। ३. बहाने या व्याज के रूप में प्रतिपादित [को०]।

व्यपदेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. निंदा। शिकायत। २. व्याख्या। विवरण। (जैन)। ३. सूचना। संदेश (को०)। ४. नामकरण। नाम रखना (को०)। ५. नाम। अल्ल। उपाधि (को०)। ६. परिवार। वंश (को०)। ७. ख्यात। यशी। प्रसिद्ध (को०)। ८. छल। कपट। चाल (को०)। ९. जालसाजी। चालाकी (को०)। १०. संगुप्ति। संगोपन। छिपाव (को०)।

व्यपदेशक—वि० [सं०] व्यपदेश करनेवाला। नाम का निर्देश करनेवाला [को०]।

व्यपदेशी—वि० [सं० व्यपदेशिन्] १. सूचक। २. नाम वा उपाधिवाला। ३. सलाह या निर्देशानुसार चलनेवाला [को०]।

व्यपदेश्य—वि० [सं०] १. व्यपदेश या निंदा के लायक। निंद्य। २. जिसका निर्देश किया जाय [को०]।

व्यपदेष्टा—वि० [सं० व्यपदेष्टृ] १. निर्देशक। निर्देश करनेवाला। २. छली। कपटी। वंचक [को०]।

व्यपनय—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश। बरबादी। २. छोड़ देना। त्याग। ३. दुर्व्यवहार। अविनय (को०)। ४. हटाना। दूरीकरण (को०)।

व्यपनयन—संज्ञा पुं० [सं०] छोड़ देना। त्याग।

व्यपनीत—वि० [सं०] दूर हटाया हुआ। दूरीकृत [को०]।

व्यपह्नुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] त्याग। दूर करना या हटाना [को०]।

व्यपमूर्धा—वि० [सं० व्यपमूर्धन्] भूर्धाहीन। शिरोरहित [को०]।

व्यपयान—संज्ञा पुं० [सं०] परावृत्त होना। भागना करना। पलायन। हवा होना [को०]।

व्यपरोपण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० व्यपरोपित] १. झुकाना। २. काटना। ३. जड़ से काटना। ४. दूर करना। हटाना। ५. आघात पहुँचाना। पीड़ा पहुँचाना। (जैन)।

व्यपवर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. अलग होना। विभाजन। विभाग। २. छोड़ना। त्याग। ३. पृथक्ता। अंतर।

व्यपवर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० व्यपवर्जित] १. छोड़ना। त्याग। २. निवारण। ३. देना। दान।

व्यपवर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] व्यावर्तन। लौटना [को०]।

व्यपवृक्त—वि० [सं०] १. अलग या पृथक् किया हुआ। २. विभाजित। बाँटा हुआ [को०]।

व्यपसारण—संज्ञा पुं० [सं०] दूर करना। निकाल देना [को०]।

व्यपाकृत—वि० [सं०] वंचित। रहित [को०]।

व्यपाकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दूर करना। निकालना। २. अपह्लव। गोपन। छिपाव। ३. अस्वीकृति। अस्वीकरण। इनकार करना [को०]।

व्यपाय—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंत। लोप। समाप्ति। २. अनुपस्थिति। गमन [को०]।

व्यपाश्रय¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. आश्रयस्थान। २. आसन। ३. विराम। ४. प्रस्थान। ५. अनुक्रम। परंपरा। ६. शरण लेना। सहारा लेना। निर्भर होना। ७. आशा।

व्यपाश्रय²—वि० १. आश्रयहीन। २. अपना भरोसा रखनेवाला [को०]।

व्यपाश्रयणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] निवेदन। विनय [को०]।

व्यपाश्रित—वि० [सं०] जिसने आश्रय प्राप्त किया हो। जिसने सहारा पा लिया हो [को०]।

व्यपास्त—वि० [सं०] निष्कासित। बहिष्कृत [को०]।

व्यपेक्ष—वि० [सं०] १. अपेक्षा या आशा रखनेवाला। अपेक्षी। आकांक्षी। २. उत्सुक। लोलुप। लालस। सावधान। सचेत। ४. निरपेक्ष। निरभिलाष [को०]।

व्यपेक्षक—वि० [सं०] सावधान। अवहित। जागरूक [को०]।

व्यपेक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] आशा। अकांक्षा। उन्माद [को०]।

व्यपेक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आकांक्षा। इच्छा। चाह। २. अनुरोध। आग्रह। ३. पारस्परिक संबंध (को०)। ४. एक दूसरे का ध्यान। लिहाज। मुरव्वत। मुलाहिजा (को०)। ५. व्यवहार (को०)। ६. व्याकरण में दो नियमों का पारस्परिक प्रयोग (को०)।

व्यपेक्षित—वि० [सं०] १. जिसकी आशा या आकांक्षा की गई हो। २. जिसपर विशेष रूप से ध्यान दिया गया हो। ३. परस्पर संबद्ध। ४. प्रयुक्त। नियुक्त। व्यवहृत [को०]।

व्यपेत—वि० [सं०] १. मुक्त। अलग किया हुआ। २. गत। ३. नष्ट। ४. प्रतीप। विपरीत। असाधु। दुष्ट [को०]।

यौ०—व्यपेतकल्मष = जो दोष या पापमुक्त हो। व्यपेतघृण = दयारहित। व्यपेतधैर्य = धैर्यहीन। धीरतारहित। जिसे ढाढ़स न हो। व्यपेतभय = निर्भय। व्यपेतभी = निडर। निर्भय। व्यपेतमद = जिसका गर्व नष्ट हो गया हो। निरभिमान। व्यपेतहर्ष = हर्षरहित। विगतहर्ष।

व्यपोढ—वि० [सं०] १. दूरीकृत। दूर किया हुआ। २. प्रकटित। व्यक्त। दिखाया हुआ। ३. विपरीत। अननुकूल [को०]।

व्यपोह—संज्ञा पुं० [सं०] १. विनाश। बरबादी। २. दूर करना। निवारण [को०]। ३. प्रत्याख्यान। अस्वीकार (को०)। ४. समूह। निश्चय। चय (को०)।

व्यपोह्य—वि० [सं०] स्वीकार न करने योग्य [को०]।

व्यभिचरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'व्यभिचार'। २. निश्चयहीनता। अनिश्चय। संदेह [को०]।

व्यभिचार—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुरा या दूषित आचार। दुष्कर्म। कदाचार। बदचलनी। २. स्त्री का परपुरुष से अथवा पुरुष का परस्त्री से अनुचित संबंध। छिनाला। २. न्याय के अनुसार साध्य के न होने पर भी हेतु की उपस्थिति। साध्यरहित हेतु (को०)। ४. अतिक्रमण। उल्लंघन (को०)। ५. अलग होन की शक्ति। विच्छेद्यता (को०)। ६. असंगति। अपवाद। ७. पाप। दोष (को०)।

व्यभिचारकृत्—वि० [सं०] परस्त्रीगामी। व्यभिचारी [को०]।

व्यभिचारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुराचार करनेवाली स्त्री। असती। कुलटा। पुंश्चली। २. अस्थिर बुद्धि। बुद्धि जो स्थिर न रहे [को०]।

व्यभिचारिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'व्यभिचार'।

व्यभिचारित्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्यभिचारी होने का भाव। दे० 'व्यभिचार'।

व्यभिचारिभाव—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य में मुख्य भाव की पुष्टि करनेवाले वे भाव जो इसके उपयोगी होकर जल के तरंगों की भाँति उनमें संचरण करते हैं। इनकी संख्या ३३ है। दे० 'संचारी'।

व्यभिचारी—संज्ञा पुं० [सं० व्यभिचारिन्] [स्त्री० व्यभिचारिणी] १. वह जो अपने मार्ग से गिर गया हो। मार्गभ्रष्ट। उ०—हे प्रभु अविगत कला तुम्हारी। हम हैं कीट जीव व्यभिचारी।—कबीर सा०, पृ० ४३९। २. वह जिसकी चालचलन अच्छी न हो। बदचलन। ३. वह जो परस्त्रियों से संबंध रखता हो। परस्त्रीगामी। ४. दे० 'संचारी' या 'व्यभिचारिभाव'। ५. वह जो नियमविरुद्ध हो। असंगत (को०)। ६. असत्य। मिथ्या व्यती[illegible]०)। ७. वह जो स्थिर न रहे। अस्थायी (को०)। ८. वह जो किसी व्यवस्था, नियम आदि का भंग या उल्लंघन करता हो (को०)। ९. वह शब्द जिसके कई गौण अर्थ हों।

व्यभिहास—संज्ञा पुं० [सं०] उपहास। ठट्ठा। मजाक।

व्यभीचार—संज्ञा पुं० [सं०] १. अतिक्रमण। उल्लंघन। २. कुकर्म। अनैतिक आचरण। ३. परिवर्तन। दे० 'व्यभिचार' [को०]।

व्यभीमान—संज्ञा पुं० [सं०] भ्रांत या गलत धारणा [को०]।

व्यभ्र—वि० [सं०] निर्मेघ। निरभ्र। बिना बादल का [को०]।

व्यम्ल—वि० [सं०] अम्लरहित। जिसमें अम्लता न हो [को०]।

व्यय—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पदार्थ का, विशेषतः धन आदि का, इस प्रकार काम में आना कि वह समाप्त हो जाय। किसी चीज का किसी काम में लगना। खर्च। सरफा। खफत। जैसे,—(क) उनका व्यय १००) मासिक है। (ख) व्यर्थ अपनी शक्ति व्यय मत करो। २. नाश। बरबादी। ३. दान। ४. छोड़ देना। परित्याग। ५. बृहस्पति के चार के एक वर्ष या संवत्सर का नाम। ६. महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम। ७. रुकावट। अड़चन (को०)। ८. अपव्यय। फजूलखर्ची (को०)। ९. धन। संपत्ति। १०. जन्मकुंडली में लग्न से १२वाँ स्थान (को०)। ११. व्याकरण में विभक्ति में प्रयुक्त प्रत्यय। शब्दरूपांतर (को०)।

व्ययक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो व्यय करता हो। व्यय करनेवाला।

व्ययकरण, व्ययकरणक—संज्ञा पुं० [सं०] वह कर्मचारी जो वेतन बाँटने का काम करे [को०]।

व्ययगत—वि० [सं०] सब कुछ व्यय कर डालनेवाला [को०]।

व्ययगामी—वि० [सं० व्ययगामिन्] ज्योतिष शास्त्र के अनुसार लग्न से १२ वें स्थान में गमन करनेवाला। उ०—उनका सौम्य ग्रह बुध व्ययगामी होकर निर्बल हो गया है।—शुक्ल अभि० ग्रं०, पृ० ६८।

व्ययगुण—वि० [सं०] सब कुछ खर्च करनेवाला।

व्ययगृह—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के अनुसार लग्न से बारहवाँ स्थान [को०]।

व्ययन—संज्ञा पुं० [सं०] खर्च करना। २. बर्बाद करना। नष्ट करना [को०]।

व्ययपराङ्मुख—वि० [सं०] कृपण [को०]।

व्ययमान—वि० [सं०] अपव्यय करनेवाला [को०]।

व्ययशाली—वि० [सं० व्ययशालिन्] खर्च करनेवाला। शाहखर्च। अमितव्ययी [को०]।

व्ययशील—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत अधिक खर्च करता हो। खर्चीले स्वभाव का। शाहखर्च।

व्ययसह—वि० [सं०] (वह कोश या खजाना) जो रिक्त न हो [को०]।

व्ययसहिष्णु—वि० [सं०] धन की हानि या अधिक व्यय को बर्दाश्त करनवाला [को०]।

व्ययित—वि० [सं०] १. खर्च किया हुआ। व्यय किया हुआ। २. बर्बाद। नष्ट [को०]।

व्ययी—संज्ञा पुं० [सं० व्ययिन्] वह जो बहुत व्यय करता हो। खूब खर्च करनेवाला। शाहखर्च।

व्यर्ण—वि० [सं०] १. जलरहित। जलहीन। २. सताया हुआ। उत्पीड़ित [को०]।

व्यर्थ^{१}—वि० [सं०] १. जिसका कोई अर्थ या प्रयोजन न हो। बिना मतलब का। निरर्थक। २. जिसका कोई अर्थ या मतलब न हो। बिना माने का। अर्थरहित। ३. जिसमें किसी प्रकार लाभ न हो। ४. संपत्तिहीन। धनहीन (को०)। ५. असंगत (को०)।

व्यर्थ^{२}—क्रि० वि० बिना किसी मतलब के। फजूल। यों ही। जैसे,—वह दिन भर व्यर्थ घूमा करता है।

व्यर्थक—वि० [सं०] व्यर्थ। निष्फल [को०]।

व्यर्थता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यर्थ होने का भाव।

व्यर्थनामक—वि० [सं०] दे० 'व्यर्थनामा' [को०]।

व्यर्थनामा—वि० [सं० व्यर्थनामन्] जिसमें नाम के अनुरूप गुण न हो। जिसका नाम व्यर्थ हो [को०]।

व्यर्थयत्न—वि० [सं०] जिसके लिये प्रयत्न बेकार हो [को०]।

व्यलीक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह अपराध जो काम के आवेग के कारण किया जाय। अपराध। कसूर। ३. डाँट डपट। फटकार। ४. दुःख। कष्ट। तकलीफ। ५. पीठमर्द। विट। ६. विलक्षणता। अद्भुतता। ७. कपट। छल। उ०—भोर भयो जागहु रघुनंदन। गत व्यलीक भगतनि उर चंदन। —तुलसी (शब्द०)। ८. मिथ्यापन (को०)। ९. व्युत्क्रम। वैपरीत्य (को०)। १० कोई भी अप्रिय या असुखद वस्तु (को०)। ११. कामुक। रसिक नागर (को०)। १२. वह जो अप्राकृतिक मैथुन कराए। लौंडा (को०)। १३. दोष। पाप (को०)।

व्यलीक^{२}—वि० १. जो अच्छा न हो। अप्रिय। २. दुःख देनेवाला। कष्टदायक। ३. बिना जान पहिचान का। अपरिचित। ४. विलक्षण। अद्भुत। अजीब। ५. मिथ्या। झूठा। असत्य (को०)। ६. जो असत्य या अलीक न हो (को०)। ७. अकरणीय (को०)।

व्यलीक निःश्वास—संज्ञा पुं० [सं०] शोक का उच्छ्वास। लंबी साँस [को०]।

व्यवकलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक अंक या रकम में से दूसरा अंक या रकम घटाना। बाकी निकालना। २. अलग करना। पृथक्ता। अलगाव (को०)।

व्यवकलित^{१}—वि० [सं०] १. घटाया हुआ। बाकी निकाला हुआ। २. पृथक् किया हुआ। वियोजित [को०]।

व्यवकलित^{२}—संज्ञा पुं० दे० 'व्यवकलन' [को०]।

व्यवकिरणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] घालमेल। मिश्रण [को०]।

व्यवकीर्ण—वि० [सं०] १. अलग किया हुआ। निकाला हुआ। जुदा किया हुआ। फैलाया हुआ। २. मिश्रित। पूरित। भरा हुआ [को०]।

व्यवक्रोशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. निंदा। २. कहासुनी। गालीगलौज। तू तू मैं मैं [को०]।

व्यवगाढ़—वि० [सं० व्यवगाढ़] डूबा हुआ। निमज्जित। निमग्न [को०]।

व्यवगृहीत—वि० [सं०] नम्रीकृत। विनत किया हुआ। झुकाया या नीचा किया हुआ [को०]।

व्यवच्छिन्न—वि० [सं०] १. अलग अलग। जुदा। २. विभाग करके अलग किया हुआ। विभक्त। ३. निर्धारण किया हुआ। निर्धारित। निश्चित। ४. अवरुद्ध। बाधित (को०)। ५. विशेषित। विशिष्ट। अंकित (को)।

व्यवच्छेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. पृथक्ता। पार्थक्य। अलगाव। २. विभाग। खंड। हिस्सा। ३. विराम। ठहरना। ४. निवृत्ति। छुटकारा। उ०—अपने को समझना चाहती हूँ, इससे अपना ही व्यवच्छेद करती चलूँगी।—सुखदा, पृ० १३। ५. (वाण आदि) छोड़ना। चलाना। नंखना (को०)। ६. नाश (को०)। ७. निर्धारण। निश्चयन (को०)। ८. ग्रंथादि का अध्याय, खंड या विभाग (को०)। ९. विशेष निर्देश। विशिष्टता निर्देशन (को०)। १०. (शव आदि का) काटना। चीरफाड़। अंग छेदन (को०)। ११. विशिष्टता। वैशिष्ट्य (को०)।

व्यवच्छेदक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो व्यवच्छेद या अलग करता हो।

व्यच्छेदविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर विज्ञान। शरीर-रचना-विज्ञान [को०]।

व्यवदात—वि० [सं०] स्वच्छ। अवदात। निर्मल [को०]।

व्यवदान—संज्ञा पुं० [सं०] किसी पदार्थ को शुद्ध और साफ करने की क्रिया। संस्कार। सफाई।

व्यवदीर्ण—वि० [सं०] १. विदीर्ण। टुकड़े टुकड़े किया हुआ। छिन्न भिन्न। २. व्यग्र। विह्वल। विक्षिप्त। भ्रांत [को०]।

व्यवधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यवधान। परदा। २. वह जो बीच में आ पड़े (को०)। ३. छिपाव। गोपन। दुराव (को०)।

व्यवधाता—वि० [सं० व्यवधातृ] १. व्यवधान उपस्थित करनेवाला। २. अलग करनेवाला [को०]।

व्यवधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह चीज जो बीच में पड़कर आड़ करती हो। परदा। उ०—समाधि शरीर के व्यवधान को पार कर आत्मा से परमात्मा का संयोग कराने का साधन है।—ज्ञानदान, पृ० १७। २. भेद। विभाग। खंड। ३. विच्छेद। अलग होना। ४. खतम होना। समाप्ति। ५. बाधा (को०)। ६. अंतराल। अवकाश (को०)। ७. छिपाव। दुराव (को०)। ८. ढकना। आवरण (को०)। ९. व्याकरण में किसी मात्रा या अक्षर का बीच में आ पड़ना (को०)।

व्यवधायक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो आड़ में जाता हो। छिपनेवाला। गायब होनेवाला। २. वह जो किसी को ढकता या छिपाता हो। आड़ करने या छिपानेवाला। ३. वह जो मध्य में स्थित हो। मध्यवर्ती।

व्यवधारण—संज्ञा पुं० [सं०] अच्छी तरह अवधारण या निश्चय करना।

व्यवधि—संज्ञा पुं० [सं०] व्यवधान। परदा। आड़। ओट।

व्यवधूत—वि० [सं०] वीतराग [को०]।

व्यवभासित—वि० [सं०] प्रकाशित किया हुआ [को०]।

व्यवलोकित—वि० [सं०] देखा हुआ। दृश्य [को०]।

व्यवशाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. छोड़ देना । २. त्याग । ३. पीछे की ओर गिरना या हटना ।

व्यवसर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी पदार्थ का विभाग करने की क्रिया । बाँट । २. मुक्ति । छुटकारा । ३. देना (को०) । ४. त्याग । परित्याग (को०) ।

व्यवसाय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह कार्य जिसके द्वारा किसी की जीविका का निर्वाह होता हो । जीविका । जैसे,—दूसरों की सेवा करना ही उसका व्यवसाय है । २. रोजगार । व्यापार । जैसे०—आजकल कपड़े का व्यवसाय कुछ मंदा है । ३. कोई कार्य आरंभ करना । ४. निश्चय । ५. प्रयत्न । उद्योग । कोशिश । ६. उद्यम । काम धंधा । ७. इच्छा । विचार । कल्पना । ८. अभिप्राय । मतत्त्व । ६. विष्णु का एक नाम । १०. शिव का एक नाम । ११. अवस्था । परिस्थिति (को०) । १२. आचरण । १३. कौशल । कूटयुक्ति (को०) । १४. डींग । शेखी (को०) । १५. प्रथम अनुभूति (को०) । १६. धर्म के एक पुत्र का नाम जो दक्ष की एक कन्या वपुष् से उत्पन्न हुआ था (को०) ।

व्यवसायबुद्धि—वि० [सं०] पक्के इरादावाला । दृढ़निश्चयी [को०] ।

व्यवसायवर्ती—वि० [सं० व्यवसायवर्तिन्] पक्के इरादे से काम करनेवाला [को०] ।

व्ययसायात्मक—वि० [सं०] १. संकल्पयुक्त । निश्चयात्मक । दृढ़ । २. उत्साहयुक्त [को०] ।

व्यवसायात्मिका—वि० स्त्री० [सं०] संकल्पमय । दृढ़ [को०] ।

व्यवसायात्मिकाबुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह बुद्धि जो निश्चयात्मक या दृढ़ हो । निश्चयात्मिका बुद्धि [को०] ।

व्यवसायी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० व्यवसायिन्] १. वह जो किसी प्रकार का व्यवसाय करता हो । व्यवसाय करनेवाला । २. रोजगार करनेवाला । रोजगारी । ३. वह जो किसी कार्य का अनुष्ठान करता हो ।

व्यवसायी^{2}—वि० १. उत्साही । उद्यमी । परिश्रमी । २. दृढ़ संकल्पवाला । धैर्यशाली । ३. किसी कार्य में संलग्न [को०] ।

व्यवसित^{1}—वि० [सं०] १. जिसका अनुष्ठान किया गया हो । व्यवसाय किया हुआ । २. जो कोई काम करने के लिये तैयार हो । उद्यत । तत्पर । ३. जो निश्चय किया जा चुका हो । निश्चित । ५. धैर्यवान् । ६. ठगा हुआ । वंचित (को०) । ७. उत्तरदायित्व लेनेवाला (को०) ।

व्यवसित^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. निश्चय । निर्धारण । २. छल । वंचना [को०] ।

व्यवसिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यवसाय । रोजगार । २. संकल्प । निश्चय (को०) । ३. प्रयास । प्रयत्न । उद्यम (को०) ।

व्यवस्तक—संज्ञा पुं० [सं०] किसी उक्ति या रचना के क्रम को बदल देना । उ०—किसी अन्य कवि की उक्ति के पहले और पीछे आनेवाले क्रम को बदलकर ग्रहण करना व्यवस्तक है ।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २६३ ।

व्यवस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी कार्य का वह विधान जो शास्त्रों आदि के द्वारा निश्चत या निर्धारित हुआ हो ।

मुहा०—व्यवस्था देना = पंडितों आदि का यह बतलाना कि अमुक विषय में शास्त्रों का क्या मत अथवा आज्ञा है । किसी विषय में शास्त्रों का विधान बतलाना ।

२. चीजों को अलग अलग सजाकर या ठिकाने से रखना । ३. प्रबंध । इंतजाम । जैसे,—विवाह की सब व्यवस्था अपने ही हाथ में है । ४. स्थिर होने का भाव । स्थिरता । स्थिति । ५. कानून । जैसे—भारत सरकार के व्यवस्था सदस्य । ६. दृढ़ता । दृढ़ आधार (को०) । ७. सहमति (को०) । ८. अवस्था । दशा (को०) । ६. संबंध । स्थिति (को०) । १०. पृथक्ता । अलगाव (को०) । ११. निश्चित सीमा (को०) । १२. अव्यवसाय (को०) । १३. शर्त (को०) ।

व्यवस्थाता—संज्ञा पुं० [सं० व्यवस्थातृ] १. वह जो व्यवस्था करता हो । व्यवस्था या इंतजाम करनेवाला । २. निश्चय करनेवाला । वह जो किसी व्यवस्था का निश्चय करे । ३. वह जो यह बतलाता हो कि अमुक विषय में शास्त्रों की क्या आज्ञा है । शास्त्रीय व्यवस्था देनेवाला ।

व्यवस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपस्थित या अस्थिर होना । व्यवस्थिति । २. व्यवस्था । इंतजाम । प्रबंध । ३. विष्णु का एक नाम । ४. विधान (को०) । ५. दृढ़ता (को०) । ६. अव्यवसाय (को०) । ७. पार्थक्य (को०) । ८. अवस्था (को०) ।

व्यवस्थानप्रज्ञप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बहुत बड़ी संख्या का नाम ।

व्यवस्थापक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो यह बतलाता हो कि अमुक विषय में शास्त्रों का क्या मत है । व्यवस्था देनेवाला । २. वह जो किसी कार्य आदि को नियमपूर्वक चलाता हो । ३. वह जो व्यवस्था या इंतजाम करता हो । प्रबंधकर्ता । इंतजामकार । मैनेजर (आधुनिक प्रयोग) । ४. व्यवस्थापिका सभा का सदस्य (को०) । ५. निश्चय करनेवाला (को०) ।

व्यवस्थापक मंडल—संज्ञा पुं० [सं०] वह समाज या समूह जिसे कानून कायदे बनाने और रद्द करने का अधिकार प्राप्त हो ।

व्यवस्थापक सभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विधान सभा । व्यवस्थापिका सभा । उ०—स्वयं, राज्य करने को अचांचक प्रस्तुत हो गई थी, या व्यवस्थापक सभाओं को तोड़ स्वयं, व्यवस्था करने को उठ खड़ी हुई थी ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २७० ।

व्यवस्थापत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह पत्र जिसमें किसी विषय की शास्त्रीय व्यवस्था या यह विधान लिखा हो कि अमुक विषय में शास्त्र की क्या आज्ञा या मत है ।

व्यवस्थापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी विषय में शास्त्रीय व्यवस्था देना या बतलाना । यह बतलाना कि अमुक विषय में शास्त्रों को क्या आज्ञा अथवा मत है । २. किसी विषय में कुछ निश्चय, निर्धारण या निरूपण करना ।

व्यवस्थापनीय—वि० [सं०] व्यवस्थापन करने के योग्य ।

व्यवस्थापिका परिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंग्रेजी शासनकाल की वह सभा या परिषद् जिसमें देश के लिये कानून कायदे आदि बनते थे। देश के लिये कानून कायदे बनानेवाली सभा। बड़ी व्यवस्थापिका सभा। (अं०) 'लेजिस्लेटिव एसेंबली', 'लोअर चेंबर', 'लोअर हाउस'।

विशेष—ब्रिटिश भारत भर के लिये कानून कायदे बनानेवाली सभा व्यवस्थापिका परिषद् या लेजिस्लेटिव कहलाती थी। इसके सदस्यों की संख्या १४३ होती थी, जिनमें से १०३ लोक निर्वाचित और ४० सरकार द्वारा मनोनीत (२५ सरकारी और १५ गैर सरकारी) सदस्य होते थे।

व्यवस्थापिका सभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह सभा जिसमें किसी प्रदेश-विशेष के लिये कानून कायदे आदि बनते थे। कानून कायदे बनानेवाली सभा। लेजिस्लेटिव कौंसिल।

व्यवस्थापित—वि० [सं०] १. जिसके संबंध में कुछ निश्चय या निरूपण किया गया हो। व्यवस्था किया हुआ। जो नियमपूर्वक लगाया, रखा या किया गया हो। ३. जो नियम के अनुसार हो। नियमित।

व्यवस्थाप्य—वि० [सं०] जो व्यवस्थापन करने के योग्य हो।

व्यवस्थावादी—वि० [सं० व्यवस्थावादिन्] व्यवस्था को माननेवाला। मर्यादावादी। उ०—तुलसी यदि घोर व्यवस्थावादी थे तो वह प्रेम को सारे नियमों के, समूची व्यवस्था के, ऊपर क्यों मानते हैं।—आचार्य०, पृ० १०६।

व्यवस्थित—वि० [सं०] १. जिसमें किसी प्रकार की व्यवस्था या नियम हो। जो ठीक नियम के अनुसार हो। कायदे का। जैसे,—वे सभी काम व्यवस्थित रूप से किया करते हैं। २. व्यूहबद्ध (को०)। ३. स्थिर (को०)। ४. अलग या एक ओर रखा हुआ। (को०)। ५. (रस आदि) निकाला हुआ (को०)। ६. आधारित। अवलंबित (को०)।

व्यवस्थित विभाषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्याकरण शास्त्र के अनुसार निश्चित विकल्प [को०]।

व्यवस्थित विषय—वि० [सं०] सीमित क्षेत्रवाला [को०]।

व्यवस्थिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उपस्थित या स्थिर होना। व्यवस्था। इंतजाम। ३. दे० व्यवस्थान (को०)।

व्यवहरण—संज्ञा पुं० [सं०] अभियोगों आदि का नियमानुसार विचार। मुकदमे की सुनाई या पेशी। व्यवहार।

व्यवहर्ता—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहर्तृ] वह जो व्यवहार शास्त्र के अनुसार किसी अभियोग आदि का विचार करता हो। न्यायकर्ता।

व्यवहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रिया। कार्य। काम। २. आपस में एक दूसरे के साथ बरतना। बरताव। जैसे,—हमारा उनका इस तरह का व्यवहार नहीं है। ३. व्यापार। रोजगार। ४. लेनदेन का काम। महाजनी। ५. झगड़ा। विवाद। ६. न्याय। ७. शर्त। पण। ८. स्थिति। ९. दो पक्षों में होनेवाला वह झगड़ा जिसका फैसला अदालत से हो। मुकदमा। १०. प्रयोग (को०)। ११. आचरण (को०)। १२. रीति। प्रथा। रिवाज (को०)। १३. पेशा। धंधा (को०)। १४ संबंध। मेलजोल (को०)। १५. कामधाम सम्हालने की योग्यता (को०)। १६. पद (को०)। १७. तलवार। खड्ग (को०)। १८. अभियोग या मामले की छानबीन (को०)। १९. दंड (को०)। २०. एक वृक्ष (को०)।

व्यवहारक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसकी जीविका व्यवहार से चलती हो। वह जो न्याय या वकालत आदि करता हो। २. वह जो वयस्क हो गया हो। बालिग।

व्यवहारजीवी—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहारजीविन्] वह जो व्यवहार या वकालत आदि के द्वारा अपनी जीविका चलाता हो।

व्यवहारज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो व्यवहार शास्त्र का ज्ञाता हो। २. व्यवहार या तौर तरीका जाननेवाला। ३. वह जो पूर्ण वयस्क हो गया हो। बालिग।

व्यवहार तंत्र—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार तन्त्र] आचार शास्त्र [को०]।

व्यवहारत्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्यवहार का भाव या धर्म।

व्यवहारदर्शन—संज्ञा पुं० [सं०] किसी अभियोग में न्याय और अन्याय अथवा सत्य और मिथ्या का निर्णय करना।

व्यवहारद्रष्टा—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहारद्रष्टृ] न्यायाधीश [को०]।

व्यवहारपद—संज्ञा पुं० [सं०] विवाद का विषय। मुकदमे का मामला।

व्यवहारपाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवहार के पूर्वपक्ष, उत्तर, क्रियापाद और निर्णय इन चारों का समूह। २. इन चारों में से कोई एक जो व्यवहार का एक पाद या अंश माना जाता है।

व्यवहारप्राप्त—वि० [सं०] बालिग। वयस्क [को०]।

व्यवहारमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वे क्रियाएँ जिनका व्यवहार में उपयोग होता है। व्यवहार शास्त्र के अनुसार होनेवाली काररवाइयाँ। जैसे,—मुकदमा दायर होना, पेश होना, गवाहों का बुलाया जाना, उनकी गवाही होना, जिरह और बहस होना, फैसला होना, आदि। मिताक्षरा के अनुसार ऐसी क्रियाएँ संख्या में तीस हैं।

व्यवहारमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] मुकदमे का विषय।

व्यवहारमूल—संज्ञा पुं० [सं०] अकरकरा। अकरकरहा।

व्यवहार लक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] व्यवहार या मुकदमे की जाँच विषयक विशेषता [को०]।

व्यवहार विधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह शास्त्र जिसमें व्यवहार संबंधी बातों का उल्लेख हो। वह शास्त्र जिसमें व्यवहार या मुकदमों आदि का विधान हो। धर्मशास्त्र।

व्यवहार विषय—संज्ञा पुं० [सं०] मुकदमे की कार्यवाही का क्रम [को०]।

व्यवहारशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिससें यह बतलाया गया हो कि वादी और प्रतिवादी के विवाद का किस प्रकार निर्णय करना चाहिए, अभियोग किस प्रकार सुनना चाहिए और किस अपराध के लिये कितना दंड देना चाहिए। धर्मशास्त्र।

व्यवहारसंहिता—संज्ञा स्त्री० [सं० यौ०] व्यवहार संबंधी विधान।

व्यवहारसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यवहारशास्त्र के अनुसार अभियोगों का निर्णय करना।

व्यवहारस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवहार का विषय या पद। २. कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार लेन देन, इकरारनामे आदि के संबंध में यह निर्णय कि वे उचित रूप में हुए हैं या नहीं।

विशेष—चंद्रगुप्त के समय में तीन धर्मस्थ और तीन अमात्य व्यवहारों की निगरानी करते थे।

व्यवहारस्थिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यवहार या मुकदमे से संबद्ध कार्यवाही [को०]।

व्यवहारांग—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहाराङ्ग] दीवानी और फौजदारी के कानून [को०]।

व्यवहाराभिशस्त—वि० [सं०] प्रतिवादी। जिसके विरुद्ध मुकदमा चलाया गया हो [को०]।

व्यवहारार्थी—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहारार्थिन्] वादी। वह जो मुकदमा चलाए [को०]।

व्यवहारासन—संज्ञा पुं० [सं०] वह आसन जिसपर अभियोगों का विचार करते समय विचार करनेवाला बैठता है। विचारासन। न्यायासन।

व्यवहारास्पद—संज्ञा पुं० [सं०] वह निवेदन जो वादी अपने अभियोग के संबंध में राजा अथवा न्यायकर्ता के संमुख करता हो। नालिश। फरियाद।

व्यवहारिक—वि० [सं०] १. जो व्यवहार के लिये उपयुक्त या ठीक हो। व्यवहार योग्य। २. इंगुदी। हिंगोट। ३. कानून, विधान या व्यवसाय संबंधी। ४. मुकदमा लड़नेवाला (को०)। ५. व्यापार में लगा हुआ (को०)।

व्यवहारिकजीव—संज्ञा पुं० [सं०] वेदांत के अनुसार विज्ञानमय कोष जो ज्ञानेंद्रिय के साथ बुद्धि के संयुक्त होने से होता है।

व्यवहारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. संसार में रहकर उसके सब व्यवहार या कार्य करना। २. इंगुदी का पेड़। ३. झाड़ू।

व्यवहारी—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहारिन्] १. व्यवहार या वाद करनेवाला। २. वह जो व्यवहार व्यापार में लगा हुआ हो (को०)। ३. व्यवहार में प्रयुक्त (को०)।

व्यवहार्य[1]—वि० [सं०] १. जो व्यवहार करने के योग्य हो। २. काम में लाने लायक। ३. करणीय (को०)। ४. जो मुकदमे या वाद में लाया जा सके (को०)।

व्यवहार्य[2]—संज्ञा पुं० निधि। खजाना [को०]।

व्यवहित—वि० [सं०] १. जिसके आगे किसी प्रकार का व्यवधान या परदा पड़ गया हो। आड़ या ओट में गया हुआ। छिपा हुआ। २. बाधित। रोका हुआ (को०)। ३. जो पृथक् किया गया हो (को०)। ४. जिसके संबंध का कोई सिलसिला न हो (को०)। ५. जो पूर्ण कर दिया गया हो (को०)। ६. अंतरयुक्त। दूर का। दूरवर्ती (को०)। ७. जिसकी उपेक्षा की गई हो। जिसे छोड़ दिया गया हो। त्यक्त (को०)। ८. विरोध या शत्रुता करनेवाला (को०)। ९. जिसे नीचा दिखाया गया हो (को०)।

व्यवहृत[1]—वि० [सं०] १. जिसका आचरण या अनुष्ठान किया गया हो। २. जिसका व्यवहार शास्त्र के अनुसार विचार किया गया हो। ३. जो काम में लाया गया हो।

व्यवहृत[2]—संज्ञा पुं० १. व्यवहार। व्यापार। २. संपर्क। संबंध। लगाव [को०]।

व्यवहृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह लाभ जो व्यापार में होता है। रोजगार में होनेवाला नफा। २. वाणिज्य। व्यापार। रोजगार। कुशलता। होशियारी। ४. वाद। व्यवहार (को०)। ५. बात। चर्चा। ६. क्रिया। चेष्टित। प्रवृत्ति (को०)।

व्यवाय—संज्ञा पुं० [सं०] १. तेज। प्रकाश। २. स्त्रीप्रसंग। संभोग। मैथुन। ३. शुद्धि। ४. परिणाम। फल। नतीजा। ५ आड़। ओट। परदा। ६. विघ्न। बाधा। खलल। ७. अलगाव। पृथक्ता (को०)। ८. परिव्याप्ति। प्रवेशन (को०)। ९. अवकाश। अंतराल (को०)। १०. विलयन। लोप (को०)। ११. परिवर्तन (को०)। १२. बेवाई। चर्मविश्लेष से पैर फटना।

व्यवायशोष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का राजयक्ष्मा या तपेदिक जो बहुत अधिक स्त्रीप्रसंग करने से होता है।

व्यवायी—संज्ञा पुं० [सं० व्यवायिन्] १. वह जिसे स्त्रीप्रसंग की बहुत अधिक कामना रहती हो। कामुक। २. वह जो बीच में किसी प्रकार का व्यवधान या परदा करता हो। आड़ या रोक करनेवाला। ३. वह ओषधि जो शरीर में पहुँचकर पहले सब नाड़ियों में फैल जाय और तब पचे। जैसे,—भाँग या अफीम। उ०—जो औषध पहले संपूर्ण शरीर में व्याप्त हो पीछे मदिरा के विष के समान पाक को प्राप्त होवे जिसको व्यवायी कहते हैं।—शाङ्र्गधर०, पृ० ४०। ४. कामोद्दीपक औषध (को०)। ५. जो विघटित या विगलित हो (को०)।

व्यवेत—वि० [सं०] १. पृथक्कृत। अलग किया हुआ। २. भिन्न [को०]।

व्यशन—वि० [सं०] जो बिना अशन के हो। भोजन त्यागनेवाला [को०]।

व्यश्च—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम जो ऋग्वेद के कई मंत्रों के द्रष्टा थे। २. एक प्राचीन राजा का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

व्यष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] राई। काली छोटी सरसों [को०]।

व्यष्टका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा।

व्यष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. समूह या समाज में से अलग किया हुआ प्रत्येक व्यक्ति या पदार्थ। वह जिसका विचार अकेले हो, औरों के साथ न हो। समष्टि का एक विशिष्ट और पृथक् अंश।

समष्टि का उलटा । २. व्यापकता का अभाव । अव्यापकता (को०) । ३. प्राप्ति (को०) । ४. सफलता ।

व्यष्टिवाद—संज्ञा पुं० [सं०] वह सिद्धांत जिसमें व्यक्ति को स्वतंत्र सत्ता तथा उसके अधिकार को मान्यता दी जाती है।

व्यष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] ताँबा [को०] ।

व्यसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विपत्ति । आफत । २. दुःख । कष्ट । तकलीफ । ३. पतन । गिरना । ४. विनाश । नष्ट होना । ५. कोई बुरी या अमंगल बात । वह प्रयत्न जिसका कोई फल न हो । ६. व्यर्थ का उद्योग । ७. विषय वासना के प्रति होनेवाला अनुराग । विषयों के प्रति आसक्ति । ८. दुर्भाग्य । बदकिस्मती । ९. अयोग्य या असमर्थ होने का भाव । १०. वह दोष जो काम या क्रोध आदि विकारों से उत्पन्न हुआ हो । जैसे,—शिकार, जूआ, स्त्रीप्रसंग, नृत्य आदि देखना और गीत आदि सुनना ।

विशेष—मनु ने व्यसनों की संख्या १८ बतलाई है और उनमें से १० व्यसन कामज तथा ८ क्रोधज कहे हैं । मनु की यह भी आज्ञा है कि राजा को इन सब प्रकार के व्यसनों से बचना चाहिए ।

११. किसी प्रकार का शौक । किसी विषय के प्रति विशेष रुचि या प्रवृत्ति । जैसे—उन्हें केवल लिखने पढ़ने का व्यसन है । १२. दूर करना । फेंकना (को०) । १३. विभाजन । पृथक्करण (को०) । १४. सूर्य का अस्त होना या नीचे जाना (को०) । १५. दंड (को०) । १६. वायु । हवा (को०) । १७. एकता । व्यष्टि (को०) । १८. कदाचार । दुराचार । पाप (को०) । १९. उल्लंघन । अतिक्रमण (को०) ।

व्यसनकाल—संज्ञा पुं० [सं०] विपत्ति का समय । दुर्दिन [को०] ।

व्यसनपीड़ित—वि० [सं० व्यसनपीडित] व्यसन से आर्त । विपद्ग्रस्त ।

व्यसनप्रहारी—वि० [सं० व्यसनप्रहारिन्] १. शत्रु के दुर्बल पक्ष पर प्रहार करनेवाला । २. कष्टदायक । दुःखद [को०] ।

व्यसनप्राप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्दिन आना । बुरे दिन आना । विपत्ति का आगमन [को०] ।

व्यसनब्रह्मचारी—संज्ञा पुं० [सं० व्यसनब्रह्मचारिन्] साथ साथ समान रूप से कष्ट उठानेवाला । वह जो व्यसन या विपत्ति के दिनों का साथी हो [को०] ।

व्यसनमहार्णव—संज्ञा पुं० [सं०] दुःखसागर [को०] ।

व्यसनरक्षी—संज्ञा पुं० [सं० व्यसनरक्षिन्] विपत्ति से बचानेवाला । वह जो कष्टों से त्राण करे [को०] ।

व्यसनवर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] विपत्तिपुंज । दुःखों का समूह [को०] ।

व्यसनवागुरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुःख का बंधन । व्यसनों का जाल [को०] ।

व्यसनसंस्थित—वि० [सं०] व्यसनों में लिप्त रहनेवाला [को०] ।

व्यसनातिक्रांत—वि० [सं० व्यसनातिक्रान्त] विपद्ग्रस्त [को०] ।

व्यसनातिभार—संज्ञा पुं० [सं०] १. भयंकर विपत्ति या बड़ी आफत । २. वह जो संकट से ग्रस्त हो [को०] ।

व्यसनात्यय—संज्ञा पुं० [सं०] व्यसन या विपत्ति का दूर होना [को०] ।

व्यसनान्वित, व्यसनाप्लुत—वि० [सं०] विपत्तिग्रस्त । व्यसनयुक्त [को०] ।

व्यसनार्त्त—वि० [सं०] जिसे किसी प्रकार की दैवी या मानुषी पीड़ा पहुँची हो ।

व्यसनिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यसनी होने का भाव या धर्म । व्यसनित्व ।

व्यसनित्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्यसनिता । व्यसनी होने का भाव ।

व्यसनी[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसे किसी प्रकार का व्यसन या शौक हो । २. वेश्यागामी । रंडीबाज ।

व्यसनी[2]—वि० १. विषयासक्त । लंपट । २. दुर्व्यसनग्रस्त । दुश्चरित्र । ३. किसी कार्य में अत्यंत संलग्न । ४ अभागा । भाग्यहीन (को०) ।

व्यसनोत्सव—संज्ञा पुं० [सं०] मधुपान का उत्सव [को०] ।

व्यसनोदय—संज्ञा पुं० [सं०] १. विपत्ति का आना । २. अस्तोदय [को०] ।

व्यसि—वि० [सं०] असिविहीन, तलवार से रहित [को०] ।

व्यसु—वि० [सं०] मृत । जीवनरहित [को०] ।

व्यस्त—वि० [सं०] १. घबराया हुआ । व्याकुल । २. काम में लगा या फँसा हुआ । उ०—व्यस्त रहेंगे, हम सबको भी मानो विवश बिसारेंगे ।—पंचवटी, पृ० ७ । ३. फैला या छाया हुआ । व्याप्त । ४. फेंका हुआ । ५. इधर उधर, आगे पीछे या ऊपर नीचे किया हुआ । तितर बितर किया हुआ । विपर्यस्त । क्रमहीन । ६. हर एक । अलग अलग । पृथक् (व्याकरण) । ७. वियुक्त । विभक्त । अलगाया हुआ (को०) । ८. सरल । समास रहित (को०) । ९. बहुत प्रकार का । बहुविध (को०) । १०. उलझा हुआ (को०) । ११. परिवर्तित (को०) । १२. विभिन्न (को०) ।

व्यस्तक—वि० [सं०] जिसमें हड्डी न हो । बिना हड्डी का ।

व्यस्तकेश—वि० [सं०] बिखरे हुए बालोंवाला [को०] ।

व्यस्तन्यास—वि० [सं०] अस्तव्यस्त । सिकुड़ा हुआ (वस्त्रादि) । २. ऊबड़खाबड़ । असमतल [को०] ।

व्यस्तपद—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवहारशास्त्र में नालिश होने पर ऋण न चुकाना, बल्कि कुछ उज्र करना । २. न्यायालय में दिया गया अव्यवस्थित बयान । ३. व्याकरण में वह पद जो समासरहित हो (को०) ।

व्यस्तवृत्ति—वि० [सं०] १. बहुधंधा । जो भी वृत्ति मिले उसे स्वीकार करनेवाला २. जिसका मूल अर्थ बदला हुआ हो । [को०] ।

व्यस्तार—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी के मस्तक से मद चूना । मदस्राव [को०] ।

व्यस्थक—वि० [सं०] अस्थिहीन [को०] ।

व्यह्न—संज्ञा पुं० [सं०] कल का बीता हुआ दिन ।

व्याकरण—संज्ञा पुं० [सं०] वह विद्या या शास्त्र जिसमें किसी भाषा के शब्दों के शुद्ध रूपों और वाक्यों के प्रयोग के नियमों आदि का निरूपण होता है। भाषा का शुद्ध प्रयोग और नियम आदि बतलानेवाला शास्त्र ।

विशेष—व्याकरण में वर्णों, शब्दों और वाक्यों का विचार होता है; इसीलिये इसके वर्णविचार, शब्दसाधन और वाक्यविन्यास, ये तीन मुख्य विभाग होते हैं। व्याकरण के नियम प्रायः लिखी हुई और प्रचलित भाषा के आधार पर निश्चित किए जाते हैं; क्योंकि बोलने में लोग प्रायः प्रयोगों की शुद्धता पर उतना अधिक ध्यान नहीं रखते। व्याकरण में शब्दों के अलग भेद कर लिए जाते हैं; जैसे, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम आदि, और तब इस बात का विचार किया जाता है कि इन शब्दभेदों का ठीक ठीक और शुद्ध प्रयोग क्या है। हमारे यहाँ व्याकरण की गणना वेदांग में की गई है।

२. विग्रह । विश्लेषण (को०)। ३. व्याख्या । स्पष्ट करना । प्रकाशन (को०) । ४. अंतर । विभेद । भेद (को०) । ५. धनुष की टंकार (को०) । ६. भविष्यकथन । अनागत कथन (को७) । ७. विस्तार (को०)।

व्याकरणक—संज्ञा पुं० [सं०] हीन कोटि का व्याकरण [को०] ।

व्याकरणप्रक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] शब्द की व्युत्पत्ति [को०] ।

व्याकरणसिद्ध—वि० [सं०] व्याकरण के नियमानुसार व्युत्पन्न [को०] ।

व्याकरणोत्तर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

व्याकर्त्ता—संज्ञा पुं० [सं० व्याकर्तृ] १. सृष्टि की रचना करनेवाला, परमेश्वर । २. व्याख्या या विश्लेषण करनेवाला ।

व्याकर्षण—संज्ञा पुं० [सं०] विशेष रूप से अपनी ओर खींचना । आकृष्ट करना [को०] ।

व्याकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकृत वा परिवर्तित आकार। किसी पदार्थ का बिगड़ा या बदला हुआ आकार। २. व्याख्या ।

व्याकर्ण—वि० [सं०] १. जो चारों ओर अच्छी तरह फैलाया गया हो। २. विकीर्ण । अस्तव्यस्त (को०) । ३. क्षुब्ध । घबड़ाया हुआ । व्याकुल (को०) ।

व्याकुंचित—वि० [सं० व्याकुञ्चित] १. मुड़ा हुआ । सिमटा हुआ । २. कुटिल । टेढ़ामेढ़ा । वक्र [को०] ।

व्याकुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो भय या दुःख के कारण इतना घबरा गया हो कि कुछ समझ न सके। बहुत घबराया हुआ। विकल। २. जिसे किसी बात की बहुत अधिक उत्कंठा या कामना हो। ३. कातर । ४. वह जो इधर उधर चलता, दमकता या हिलता डुलता हो। (को०) । ५. वह जो किसी से व्यावृत्त वा पूरित हो (को०) ।

यौ०—व्याकुलचित्त = व्याकुलचेता । व्याकुलमना । व्याकुललोचन ।

व्याकुलचेता—वि० [सं० व्याकुलचेतस्] व्याकुल चित्तवाला । घबराया हुआ [को०] ।

व्याकुलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्याकुल होने का भाव। विकलता। घबराहट। २. कातरता ।

व्याकुलमना—वि० [सं० व्याकुलमनस्] व्यग्रचित्त । उद्विग्नहृदय [को०] ।

व्याकुलमूर्धज—वि० [सं०] बिखरे हुए केशोंवाला [को०] ।

व्याकुललोचन—वि० [सं०] मंद दृष्टिवाला [को०] ।

व्याकुलात्मा—वि० [सं० व्याकुलात्मन्] उद्विग्न । चिंताकुल [को०] ।

व्याकुलित—वि० [सं०] १. व्याकुल चित्तवाला । २. डरा हुआ [को०] ।

यौ०—व्याकुलितचित्त, व्याकुलितमना, व्याकुलितहृदय = (१) आक्रांत । अभिभूत । (२) भयभीत । (३) घबराया हुआ ।

व्याकुलितेंद्रिय—वि० [सं० व्याकुलितेन्द्रिय] व्यग्रचित्त [को०] ।

व्याकुलेंद्रिय—वि० [सं० व्याकुलेन्द्रिय] दे० 'व्याकुलितेंद्रिय' ।

व्याकूत—संज्ञा पुं० [सं०] चिंता । खेद [को०] ।

व्याकूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] छल । धोखा । फरेब ।

व्याकृत—वि० [सं०] १. विश्लिष्ट । विग्रह किया हुआ । २. व्याख्या किया हुआ । व्याख्यात । ३. अभिव्यक्त । प्रकाशित । ४. परिवर्तित । बदला हुआ । विकृत । उ०—प्राज्ञ अभिमानी जु व्याकृत तम गुण रूप । ईश्वर तहँ देवता भोग आनंद स्वरूप । —सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ६८ ।

व्याकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रकाश में लाने का काम । २. व्याख्या करने का काम । व्याख्यान । ३. व्याकरण (को०) । ४. रूप में परिवर्तन करने का काम ।

व्याकोच—वि० [सं०] प्रफुल्लित । पूर्ण विकसित [को०] ।

व्याकोप—संज्ञा पुं० [सं०] विरोध । प्रत्याख्यान [को०] ।

व्याकोश, व्याकोष—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकास । २. स्फुटित होना । खिलना ।

व्याक्रंन(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० व्याकरण, प्रा० वागरण अप० बागरण] दे० 'व्याकरण'। उ०—त कवि आय कवि पहि संपत्ते । गुरु व्याक्रन्न कहै मन मत्ते ।—पृ० रा०, ६१।४६७ ।

व्याक्रन्न(पु)—संज्ञा पुं० [सं० व्याकरण] व्याकरण विद्या या शास्त्र । उ०—व्याक्रन्न कथा नाटक्क छंद ।—पृ० रा०, १।७३६ ।

व्याक्रोश—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी का तिरस्कार करते हुए कटाक्ष करना । २. चिल्लाना । चिल्लाहट ।

व्याक्रोशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'व्याक्रोश' [को०] ।

व्याक्षिप्त—वि० [सं०] १. व्याकुल । हतबुद्धि । घबड़ाया हुआ । २. फैलाया हुआ । विकीर्ण । ३. भरा हुआ । आवृत [को०] ।

व्याक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिलंब । देर । २. आकुल होने का भाव । घबराहट । ३. अवरोध । बाधा । रुकावट । विघ्न (को०) । ४. इतस्ततः क्षपण । जैसे, कटाक्षव्याक्षेप (को०) । ५. तिरस्कार । भर्त्सना (को०) ।

व्याक्षेपी—वि० [सं० व्याक्षेपिन्] हटानेवाला । दूर करनेवाला [को०] ।

व्याक्षोभ—संज्ञा पुं० [सं०] क्षोभ । अशांति । मानसिक विक्षोभ [को०] ।

व्याख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह वाक्य आदि जो किसी जटिल पद या वाक्य आदि का अर्थ स्पष्ट करता हो। किसी बात को समझाने के लिये किया हुआ उसका विस्तृत और स्पष्ट अर्थ। टीका। व्याख्यान।

विशेष—शास्त्रों या सूत्रों आदि की जो व्याख्या होती है, उसके वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका, टिप्पणी आदि अनेक भेद माने गए हैं।

२. वह ग्रंथ जिसमें इस प्रकार अर्थविस्तार किया गया हो। ३. कहना। वर्णन।

व्याख्यागम्य^{1} संज्ञा पुं० [सं०] व्यवहार शास्त्र के अनुसार वादी के अभियोग का ठीक ठीक उत्तर न देकर इधर उधर की बातें कहना।

व्याख्यागम्य^{2}—वि० जो व्याख्या अथवा टीका आदि की सहायता से समझा जा सके।

व्याख्यात—वि० [सं०] १. जिसकी व्याख्या की गई हो। २. कथित। वर्णित (को०)। ३. आक्रांत। अभिभूत। आकुल (को०)। ४. पराजित। वशीकृत (को०)।

व्याख्यातव्य—वि० [सं०] जो व्याख्या करने के योग्य हो या जिसकी व्याख्या की गई हो।

व्याख्याता—संज्ञा पुं० [सं० व्याख्यातृ] १. वह जो किसी विषय की व्याख्या करता हो। व्याख्या करनेवाला। २. वह जो व्याख्यान देता हो। भाषण करनेवाला।

व्याख्यात्मक—वि० [सं०] व्याख्या विषयक। जिसमें मूल विषय को व्याख्या की गई हो। उ०—रचनात्मक और व्याख्यात्मक आलोचनाओं के प्रतिपादन में भी जो दूसरे और तीसरे प्रकरणों के विषय हैं, मैं बराबर उनकी तुलना निर्णयात्मक आलोचना से करता रहा हूँ।—पा० सा० सि०, पृ० ४।

व्याख्यान—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी विषय की व्याख्या या टीका करने अथवा विवरण बतलाने का काम। २. बोलकर कोई विषय समझाने का काम। भाषण। ३. वह जो कुछ व्याख्या रूप में या समझाने के लिये कहा जाय। भाषण। वक्तृता।

व्याख्यानशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्थान जहाँ किसी प्रकार का व्याख्यान आदि होता है। २. स्कूल या विद्यालय जहाँ विषय को व्याख्या करके समझाया जाता है (को०)।

व्याख्यास्थान—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्याख्यानशाला'।

व्याख्यास्वर—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्वर जो न बहुत ऊँचा हो और न बहुत नीचा। मध्यम स्वर।

व्याख्येय—वि० [सं०] जो व्याख्या करने के योग्य हो। वर्णन करने या समझाने लायक।

व्याघट्टन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अच्छी तरह रगड़ने का काम। संघर्षण। रगड़। २. मथना। बिलोना।

व्याघात—संज्ञा पुं० [सं०] १. विघ्न। खलबल। बाधा।

क्रि० प्र०—पड़ना।—होना।

२. आघात। प्रहार। मार। ३. ज्योतिष के विष्कंभ आदि सत्ताइस योगों में से तेरहवाँ योग जिसमें किसी प्रकार का शुभ कार्य करना वर्जित है।

विशेष—कुछ लोगों का मत है कि इसके पहले छह दंडों को छोड़कर शेष समय में शुभ काम किए जा सकते हैं। कहते हैं, इस योग में जो बालक जन्म ग्रहण करता है, वह साधुओं के काम में विघ्न करनेवाला, कठोर, झूठा और निर्दय होता है।

४. काव्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें एक ही उपाय के द्वारा अथवा एक ही साधन के द्वारा दो विरोधी कार्यों के होने का वर्णन होता है। उ०—(क) जासों काटत जगत के बंधन दीन दयाल। ता चितवनि सों तियन के मन बाँधे गोपाल। (ख) नाम प्रभाव जान शिव नीके। कालकूट फल दीन अमी के। (ग) रण स हूबे को अमर भागत कादर कूर। यहै चाह चित कार नहीं विचलत साँचे सूर। (घ) मिलत एक दारुन दुख देहीं। बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं। ५. विप्रतिषेध। वचनविरोध। ६. विरोधी आचरण (को०)। ७. पराजय। हार (को०)। ८. क्षोभ (को०)।

व्याघातक—वि० [सं०] १. बाधक। विरोधी। २. आघात या प्रहार करनेवाला [को०]।

व्याघातिम—संज्ञा पुं० [सं०] आघात से होनेवाली तात्कालिक मृत्यु [को०]।

व्याघाती—वि० [सं० व्याघातिन्] दे० 'व्याघातक'।

व्याघारण—संज्ञा पुं० [सं०] छौंकना। छींटा देना। बघारना [को०]।

व्याघारित—वि० [सं०] बघारा हुआ। तेल या घी को गरम करके उससे छौंका हुआ [को०]।

व्याघुटन—संज्ञा पुं० [सं०] परावर्तन। लौटना। वापस होना [को०]।

व्याघुष्ट—वि० [सं०] ध्वनित। गूँजता हुआ। शब्दित [को०]।

व्याघूर्णित—वि० [सं०] १. चक्कर खाया हुआ। २. गिरा हुआ [को०]।

व्याघ्र^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाघ या शेर नामक प्रसिद्ध हिंसक जंतु। विशेष दे० 'शेर'। २. लाल रेंड़। ३. करंज। ४. एक राक्षस का नाम (को०)।

व्याघ्र^{2}—वि० सर्वोत्तम। श्रेष्ठ। प्रधान।

विशेष—इसका प्रयोग समासांत में ही मिलता है; जैसे, नरव्याघ्र, पुरुषव्याघ्र।

व्याघ्रकड—संज्ञा पुं० [सं०] लाल रेंड़।

व्याघ्रखड्डा—संज्ञा पुं० [सं०] बाघ या शेर का नाखून जो प्रायः बालकों के गले में उन्हें नजर लगने से बचाने के लिये पहनाया जाता है।

व्याघ्रगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणवर्णित एक पर्वत का नाम [को०]।

व्याघ्रग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन देश का नाम। २. इस देश का निवासी।

व्याघ्रघंटा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याघ्रघण्टा] किङ्किणी या गोविंदी नाम की लता जो कोंकण प्रदेश में अधिकता से होती है। वैद्यक के अनुसार यह पित्तवर्धक, उष्ण, रुचिकर और विष तथा कफ की नाशक मानी गई है।

व्याघ्रघंटी—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याघ्रघण्टी] दे० 'व्याघ्रघंटा'।

व्याघ्रचर्म—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्रचर्मन्] बाघ या शेर की खाल जिसपर प्रायः लोग बैठते हैं, या जो शोभा के लिये कमरों आदि में लटकाई जाती है।

व्याघ्रतरु—संज्ञा पुं० [सं०] लाल रेंड़।

व्याघ्रतल—संज्ञा पुं० [सं०] १. लाल रेंड। २. नखी या व्याघ्रनख नामक गंधद्रव्य।

व्याघ्रतला—संज्ञा स्त्री० [सं०] नख या व्याघ्रनख नामक गंधद्रव्य। बगनहा।

व्याघ्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्याघ्र का भाव या धर्म।

व्याघ्रदंष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गुल्म।

व्याघ्रदल—संज्ञा पुं० [सं०] १. नख या व्याघ्रनख नामक गंधद्रव्य। बगनहा। २. लाल रेंड़।

व्याघ्रदला—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'व्याघ्रदल'।

व्याघ्रनख—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाघ या शेर का नाखून जो प्रायः बच्चों के गले में उन्हें नजर से बचाने के लिये पहनाया जाता है। २. नख या बगनहा नामक प्रसिद्ध गंधद्रव्य। विशेष दे० 'नख'। ३. थूहर। ४. बाघ के नख का आघात (को०)। ५. एक प्रकार का कंद। ६.† एक प्रकार का शस्त्र। बघनख।

व्याघ्रनखक—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्याघ्रनख। २. नाखून के द्वारा लगी हुई चोट। एक प्रकार का नखक्षत।

व्याघ्रनखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य। विशेष दे० 'नख'।

व्याघ्रनायक—संज्ञा पुं० [सं०] गीदड़।

व्याघ्रपद—संज्ञा पुं० [सं०] वृहत्संहिता में वर्णित एक प्रकार का पेड़।

व्याघ्रपद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का गुल्म। २. वशिष्ठ गोत्र के एक प्राचीन ऋषि का नाम जो ऋग्वेद के कई मंत्रों के द्रष्टा थे। ३. वह जिसके पैर व्याघ्रवत् हों। व्याघ्रपाद।

व्याघ्रपाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकंकत या कंटाई नामक वृक्ष। २. एक प्राचीन ऋषि का नाम।

व्याघ्रपादपी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विकंटक। गर्जाहुल।

व्याघ्रपाद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. विकंकत या कंटाई नामक वृक्ष। २. विकंटक। गर्जाहुल। ३. एक प्राचीन ऋषि का नाम। ४. वह जिसके पैर व्याघ्र से हों (को०)।

व्याघ्रपुच्छ, व्याघ्रपुच्छक—संज्ञा पुं० [सं०] १. रेंड़। २. बाघ की पूँछ (को०)।

व्याघ्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्याघ्रपुष्पि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

व्याघ्रभट—संज्ञा पुं० [सं०] एक राक्षस का नाम।

व्याघ्रमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिल्ली। २. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम। ३. वृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम। ४. इस देश का निवासी। ५. वास्तुशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का मकान जो अशुभ होता है ?

व्याघ्ररूपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वंध्या कर्कटी। बन ककोड़ा।

व्याघ्रलोम—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्रलोमन्] १. ऊपरी ओंठ पर के बाल। मूँछ। २. बाघ के शरीर के रोएँ (को०)।

व्याघ्रवक्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिल्ली। २. शिव का एक नाम। ३. शिव के एक गण। दे० 'व्याघ्रमुख'।

व्याघ्रवक्ता—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्रवक्तृ] दे० 'व्याघ्रास्या'।

व्याघ्रश्वा—संज्ञा पुं० [सं० व्याघ्रश्वन्] बाघ जैसा कुत्ता [को०]।

व्याघ्रसेवक—संज्ञा पुं० [सं०] शृगाल। गीदड़।

व्याघ्रहस्त—संज्ञा पुं० [सं०] लाल रेंड़।

व्याघ्राक्ष¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम। २. पुराणानुसार एक राक्षस का नाम।

व्याघ्राक्ष²—वि० बाघ जैसी आँखोंवाला [को०]।

व्याघ्राजिन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

व्याघ्राट—संज्ञा पुं० [सं०] लवा नामक पक्षी। अगिन चिड़िया। विशेष दे० 'लवा'।

व्याघ्राण—संज्ञा पुं० [सं०] सूँघने की क्रिया [को०]।

व्याघ्रादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निसोथ।

व्याघ्रादिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] निसोथ। त्रिवृता [को०]।

व्याघ्रायुध—संज्ञा पुं० [सं०] नख नामक गंधद्रव्य।

व्याघ्रास्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाघ का मुख (को०)। २. वह जिसका मुँह बाघ सदृश हो। ३. बिल्ली।

व्याघ्रास्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों की एक देवी [को०]।

व्याघ्रिस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों की एक देवी का नाम।

व्याघ्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कंटकारी। छोटी कँटाई। २. एक प्रकार की कौड़ी। ३. नखी नामक गंधद्रव्य। ४. बाघिन (को०)। ५. एक बौद्ध देवी। व्याघ्रिस्त्री (को०)।

व्याघ्रीयुग—संज्ञा पुं० [सं०] बृहती या बनभंटा और कंटकारी, इन दोनों का समूह।

व्याज¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. मन में कोई और बात रखकर ऊपर से कुछ और करना या कहना। कपट। छल। धोखा।

यौ०—व्याजनिंदा। व्याजस्तुति। व्याजोक्ति।

२. बाधा। विघ्न। खलल। ३. विलंब। देर। ४. बहाना। व्यपदेश। उ०—जब तक वह अपने कुटीर में बैठता किसी न किसी व्याज से मैं उसे देख लेती।—श्यामा०, पृ० ५६। ५. कला। कौशल (को०)। ६. युक्ति। चाल। कूटयुक्ति (को०)।

व्याज²—संज्ञा पुं० दे० 'व्याज' ।

व्याजउकुतिⓊ—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याजोक्ति] एक अलंकार । दे० 'व्याजोक्ति' । उ०—व्याज उकुति तासों कहत, भूषन सुकवि अनूप ।—भूषण ग्रं०, पृ० ७० ।

व्याजखेद—संज्ञा पुं० [सं०] बनावटी खिन्नता [को०] ।

व्याजगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] बनावटी गुरु [को०] ।

व्याजतपोधन—संज्ञा पुं० [सं०] नकली तपस्वी [को०] ।

व्याजनिंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याजनिन्दा] १. वह निंदा जो व्याज अर्थात् छल या कपट से की जाय । निंदा जो ऊपर से देखने में स्पष्ट निंदा न जान पड़े । २. एक प्रकार का शब्दालंकार जिसमें इस प्रकार निंदा की जाती है ।

व्याजव्यवहार—संज्ञा पुं० [सं०] कपटपूर्ण बर्ताव [को०] ।

व्याजसुप्त—वि० [सं०] सोने का बहाना बनानेवाला [को०] ।

व्याजस्तुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्तुति जो व्याज अथवा किसी बहाने से की जाय और ऊपर से देखने में स्तुति न जान पड़े । २. एक प्रकार का शब्दालंकार जिसमें इस प्रकार स्तुति की जाती है, वह ऊपर से देखने में निंदा सी जान पड़ती है ।

व्याजहत—वि० [सं०] छल द्वारा मारा हुआ [को०] ।

व्याजोह्वय—संज्ञा पुं० [सं०] बनावटी नाम [को०] ।

व्याजिह्म—वि० [सं०] कुटिल । टेढ़ा [को०] ।

व्याजी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बिक्री में माप या तौल के ऊपर कुछ थोड़ा सा और देना । घाल । घलुवा ।

व्याजीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] धूर्तता । चालबाजी । प्रवंचना [को०] ।

व्याजोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह कथन जिसमें किसी प्रकार का छल हो । कपटभरी बात । २. एक प्रकार का अलंकार जिसमें किसी स्पष्ट या प्रकट को छिपाने लिये किसी प्रकार का बहाना किया जाता है । छेकापह्नुति से इसमें यह अंतर है कि छेकापह्नुति में निषेधपूर्वक बात छिपाई जाती है और इसमें बिना निषेध किए ही छिपाई जाती है । उ०—(क) भूप प्रतापभानु अवनीसा । तासु सचिव मैं सुनहु मुनीसा । (ख) बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू । भूपकिशोर देखि किन लेहु ।

व्याडंब—संज्ञा पुं० [सं० व्याडम्ब] लाल रेंड़ ।

व्याड¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँप । २. बाघ । शेर । ३. इंद्र का एक नाम । ४. शिकार करनेवाला और उसका मांस खानेवाला कोई पशु । जैसे, चीता, सिंह आदि (को०) ।

व्याड²—वि० धूर्त । वंचक । २. दुष्ट । खल । निंदा या बुराई करनेवाला ।

व्याडायुध—संज्ञा पुं० [सं०] नख नामक गंध द्रव्य ।

व्याडि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम जिन्होंने एक व्याकरण बनाया था ।

विशेष—ये महाभाष्यकार पतंजलि के पूर्ववर्ती महावैयाकरण थे । परंपरागत मान्यतानुसार इन्होंने 'संग्रह' नामक महाग्रंथ लिखा था जो संभवतः लक्षश्लोकात्मक था और उसमें व्याकरण के दार्शनिक पक्ष का भी विस्तृत विवेचन था ।

२. एक कोशकार का नाम [को०] ।

व्यात्त¹—वि० [सं०] खुला हुआ या फैलाया हुआ [को०] ।

व्यात्त²—संज्ञा पुं० फैलाया हुआ मुख [को०] ।

व्यात्तानन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका मुख खुला हो [को०] ।

व्यात्तास्य—वि० [सं०] दे० 'व्यात्तानन' [को०] ।

व्यात्युक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलक्रीड़ा ।

व्यादन—संज्ञा पुं० [सं० व्यादान] खोलना । उ०—वदन व्यादन पूर्वक प्रेतिनी । भय प्रदर्शन थी करती महा । निकलती जिससे अविराम थी । अनल की अति त्रासकरी शिखा ।—प्रिय०, पृ० २३ ।

व्यादान—संज्ञा पुं० [सं०] १. फैलाव । विस्तार । २. उद्घाटन । खोलना ।

व्यादिश—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम ।

व्यादिष्ट—वि० [सं०] १. जिसे आदेश दिया गया हो । २. पूर्वकथित । ३. निश्चित । ४. व्याख्यात [को०] ।

व्यादीर्ण—वि० [सं०] खुला या फैलाया हुआ [को०] ।

व्यादीर्णास्य—संज्ञा पुं० [सं०] सिंह [को०] ।

व्यादेश—संज्ञा पुं० [सं०] विशेष आज्ञा [को०] ।

व्याध¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो जंगली पशुओं आदि को मारकर अपना निर्वाह करता हो । शिकारी । २. प्राचीन काल की एक जाति जो जंगली पशुओं को मारकर अपना निर्वाह करती थी । ब्रह्मवैवर्तपुराण के अनुसार इसकी उत्पत्ति सर्वस्वी माता और क्षत्रिय पिता से है । ३. प्राचीन काल की शबर नामक नीच जाति । ४. नीच या कमीना आदमी (को०) ।

व्याध²—वि० दुष्ट । पाजी । लुच्चा ।

व्याधक—संज्ञा पुं० [सं०] शिकारी । बहेलिया [को०] ।

व्याधभीत—संज्ञा पुं० [सं०] मृग । हिरन ।

व्याधाम—संज्ञा पुं० [सं०] वज्र ।

व्याधाव—संज्ञा पुं० [सं०] वज्र (को०) ।

व्याधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रोग । बीमारी । २. आफत । झंझट । ३. कुड़ या कट्ठ नाम की ओषधि । ४. साहित्य में एक संचारी भाव । विरह या काम आदि के कारण शरीर में किसी प्रकार रोग होना । ५. कोढ़ । कुष्ठ (को०) । ६. कष्ट पहुँचानेवाली वस्तु (को०) । ७. वह जो आधि वा मानसिक रोग से मुक्त हो (को०) ।

व्याधिकर—वि० [सं०] रोग उपजानेवाला । बीमारी पैदा करनेवाला [को०] ।

व्याधिखड्ग—संज्ञा पुं० [सं०] नख नामक गंधद्रव्य ।

व्याधिग्रस्त—वि० [सं०] रोगी [को०] ।

व्याधिघात—संज्ञा पुं० [सं०] १. अमलतास । २. वाराही कंद । गेंठी (को०) ।

व्याधिघातक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अमलतास वृक्ष । आरग्वध । २. वाराही कंद [को०] ।

व्याधिघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिससे किसी प्रकार की व्याधि का नाश होता हो । २. वाराही कंद । गेंठी (को०) । ३. अमलतास ।

व्याधिजित्—संज्ञा पुं० [सं०] अमलतास।

व्याधित—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसे किसी प्रकार की व्याधि हुई हो। रोगी। बीमार।

व्याधिनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] चोबचीनी।

व्याधिनिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] रोग को दबाना। रोग की रोक थाम [को०]।

व्याधिनिर्जय—संज्ञा स्त्री० [सं०] रोग को वश में करना [को०]।

व्याधिबहुल—वि० [सं०] (स्थान, ग्राम आदि) जहाँ रोगों की अधिकता हो। [को०]।

व्याधिमंदिर—संज्ञा पुं० [सं०] तन। शरीर। जिस्म। देह, जो रोग का स्थान है [को०]।

व्याधिरिपु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अमलतास। २. एक प्रकार का अमलतास जिसे कर्णिकर कहते हैं।

व्याधिविपरीत—संज्ञा पुं० [सं०] ऐसी औषधि जो व्याधि के विपरीत गुण करनेवाली हो। जैसे,—दस्त लाने के समय कब्जियात करनेवाली दवा।

व्याधिसमुद्देशीय—वि० [सं०] रोग का स्वरूप और लक्षण बतानेवाला [को०]।

व्याधिस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर। बदन। जिस्म।

व्याधिहंता^{१}—संज्ञा पुं० [सं० व्याधिहन्तृ] वाराही कंद। शूकर कंद। गेंठी।

व्याधिहंता^{२}—वि० जिससे रोग का नाश हो। रोगनाशक।

व्याधिहर—वि० [सं०] व्याधि को दूर करनेवाला। जिससे रोग नष्ट होता हो।

व्यावी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याधि] दे० 'व्याधि'।

व्यावी^{२}—वि० [सं० व्याधिन्] १. आखेटकों से संबद्ध (स्थान)। २ रोगी। ३. भेदक। भेदन करनेवाला [को०]।

व्याधूत—वि० [सं०] काँपता हुआ। कंपित [को०]।

व्याघ्मातक—संज्ञा पुं० [सं०] फूला हुआ शव [को०]।

व्याध्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

व्याध्य^{२}—वि० १. व्याधि संबंधी। व्याधि का। २. (नस आदि) जिसका भेदन किया जाय (को०)।

व्याध्यार्त—वि० [सं०] रोगी। रोगग्रस्त। व्याधि पीड़ित।

व्याध्युपशम—संज्ञा पुं० [सं०] रोग का शांत होना।

व्याध्युपशमन—संज्ञा पुं० [सं०] रोग दूर करना। व्याधि को शांत करना।

व्यान—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर में रहनेवाली पाँच वायुओं में से एक वायु जो सारे शरीर में संचार करनेवाली मानी जाती है।

विशेष—कहते हैं, इसी के द्वारा शरीर की सब क्रियाएँ होती हैं; सारे शरीर में रस पहुँचता है, पसीना बहता है और खून चलता है, आदमी उठना, बैठता और चलता फिरता है और आँखें खोलता तथा बंद करता है। भावप्रकाश के मत से जब यह वायु कुपित होती है, तब प्रायः सारे शरीर में एक न एक रोग हो जाता है।

व्यानत^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] रतिबंध का एक प्रकार [को०]।

व्यानत^{२}—वि० झुका हुआ। नत [को०]।

व्यानतकरण—संज्ञा पुं० [सं०] रतिबंध का एक भेद [को०]।

व्यानदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह शक्ति जो व्यान वायु प्रदान करती है।

व्यानभृत्—वि० [सं०] व्यान वायु को भरनेवाला। जिससे उक्त वायु बनी रहे [को०]।

व्यापक^{१}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० व्यापिका] १. जो बहुत दूर तक व्याप्त हो। चारों ओर फैला हुआ। जैसे,—यह एक सर्वव्यापक सिद्धांत है। २. जो ऊपर या चारों ओर से घेरे हुए हो। घेरने या ढकनेवाला। आच्छादक। ३. किसी में हमेशा एक भाव से स्थित रहनेवाला (को०)। ४. वाद के समग्र विचारणीय विषयों से युक्त। जिसमें विवाद संबंधी सभी विचारणीय विषय आ गए हों (को०)। ५. तर्क शास्त्र के अनुसार व्याप्य से अधिक (को०)।

व्यापक^{२}—संज्ञा पुं० १. पदार्थ में सर्वदा विद्यमान रहनेवाला गुण या धर्म। २. नित्य सहवर्ती [को०]।

व्यापकन्यास—संज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार का अगन्यास। इसमें किसी देवता का मूल मंत्र पढ़ते हुए सिर से पैर तक न्यास करते हैं।

व्यापत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मृत्यु। मौत। २. विपत्ति में पड़ना। संकट में पड़ना (को०)। ३. क्षति। हानि। ४. विनाश। बरबादी (को०)। ५. असफलता (को०)। ६. व्याकरण के अनुसार स्थानापन्नता। किसी वर्ण का लोप या उसके स्थान में दूसरे का आगम (को०)।

व्यापद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मृत्यु। मौत। विनाश। २. संकट। दुर्दिन। विपत्ति (को०)। ३. रोग। व्याधि (को०)। ४. चित्तविक्षेप (को०)।

व्यापन—संज्ञा पुं० [सं०] १. फैलाव। विस्तार। २. दूर तक फैलना। विस्तृत होना। ३. चारों ओर से या ऊपर से घेरना या ढकना। आच्छादन करना।

व्यापना—क्रि० अ० [सं० व्यापन] किसी चीज के अंदर फैलना। व्याप्त होना। जैसे,—(क) तुम्हें भी इस समय मोह व्यापता है। (ख) ईश्वर घट घट में व्यापता है। (ग) उसके सारे शरीर में विष व्याप गया है।

संयो० क्रि०—जाना।—रहना।

व्यापनीय—वि० [सं०] व्यापन करने या व्याप्त होने के योग्य।

व्यापन्न—वि० [सं०] १. जो किसी प्रकार की विपत्ति में पड़ा हुआ हो। आफत में फँसा हुआ। २. मरा हुआ। मृत। ३. विनष्ट। लुप्त (को०)। ४. स्वरादि के आगम के कारण परिवर्तित (को०)। ६. विफल (को०)। ७. घायल (को०)। ८. विक्षिप्त। विकृत (को०)।

व्यापाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. मन में दूसरे के अपकार की भावना करना। किसी की बुराई सोचना। २. मार डालना। ३. नष्ट करना। बरबाद करना। ४. बौद्धमतानुसार दस पापों में से एक पाप (को०)।

व्यापादक—वि० पुं० [सं०] १. वह जो दूसरों की बुराई करने की इच्छा रखता हो। २. वह जो हत्या या विनाश करता हो। ३. वह (व्याधि) जो घातक हो।

व्यापादन—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी को कष्ट पहुँचाने का उपाय सोचना। २. मार डालना। वध। हत्या। ३. नष्ट करना। बरबाद करना।

व्यापादनीय—वि० [सं०] मार डालने या नष्ट करने योग्य।

व्यापादित—वि० [सं०] १. हत। २. अपकार बुद्धि से चिंतित। ३. विनष्ट। ध्वस्त [को०]।

व्यापाद्य—वि० [सं०] दे० 'व्यापादनीय'।

व्यापार—संज्ञा पुं० [सं०] १. कर्म। कार्य। काम। जैसे,—(क) संसार में दिन रात अनेक प्रकार के व्यापार होते रहते हैं। (ख) सोचना मस्तिष्क का व्यापार है। २. न्याय के अनुसार विषय के साथ होनेवाला इंद्रियों का संयोग। पदार्थों अथवा धन के बदले में पदार्थ लेना और देना। क्रय विक्रय का कार्य। रोजगार। व्यवसाय जैसे—(क) आजकल कपड़े का व्यापार बहुत चमक रहा है। (ख) वे रुई, सोने, चाँदी आदि कई चीजों का व्यापार करते हैं। ४. सहायता। मदद। ५. कार्यपद्धति। प्रक्रिया (को०)। ६. उद्योग। प्रयत्न। चेष्टा (को०)। ७. प्रभाव। दखल (को०)। ८. अभ्यास। कौशल (को०)। कारबार। पेशा (को०)। ९. प्रयोग (को०)।

यौ०—व्यापारचिह्न = निर्माताओं द्वारा अपने माल की पहिचान के लिये अंकित विशेष चिह्न जिसका प्रयोग अन्य निर्माता द्वारा करना अपराध है [अं० ट्रेड मार्क]। व्यापारमंडल = व्यापारियों का मंडल। व्यापारियों की संस्था। व्यवसायियों का प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था या समाज (अं० चेंबर आव कामर्स)।

व्यापारक—वि० [सं०] व्यवसाय करनेवाला [को०]।

व्यापारगर्त—संज्ञा पुं० [सं०] सांसारिक क्रियाकलापों या व्यापारों का झंझट या गड्ढा। दुनियाँ की झंझट। काम धंधा। उ०—इसस स्पष्ट है कि मनुष्य को उसके व्यापारगर्त से बाहर प्रकृति के विशाल और विस्तृत क्षेत्र में ले जाने की शक्ति फारस की परिमित काव्यपद्धति में नहीं है—भारत और योरप की पद्धति में है।—चिंतामणि, भा० २, पृ० ८।

व्यापारण—संज्ञा पुं० [सं०] १ आज्ञा देना। २. किसी काम में नियुक्त करना।

व्यापारिक—वि० [सं०] व्यापार संबंधी। व्यावसायिक।

व्यापारित—वि० [सं०] १. किसी कार्य में नियोजित। २. किसी स्थान पर स्थापित [को०]।

व्यापारी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० व्यापारिन्] १. वह जो किसी प्रकार का व्यापार करता हो। २. व्यवसाय या रोजगार करनेवाला। व्यवसायी। रोजगारी। ३. अभ्यास करनेवाला (को०)।

व्यापारी^{2}—वि० [सं० व्यापार + ई (प्रत्य०)] १. जो किसी प्रकार का व्यापार करता हो। २. व्यवसाय या रोजगार करनेवाला। व्यवसायी। रोजगारी।

व्यापारी^{3}—वि० [सं० व्यापार + हिं० ई (प्रत्य०)] व्यापार संबंधी। व्यापार का। जैसे,—व्यापारी बोलचाल, व्यापारी भाव।

व्यापित—वि० [सं०] जो व्याप्त कराया गया हो [को०]।

व्यापी^{1}—वि० [सं० व्यापिन्] [वि० स्त्री० व्यापिनी] १. चारों ओर फैलनेवाला। छा जानेवाला। २. व्याप्त करने या होनेवाला। ३. आच्छादन करनेवाला। आवृत करनेवाला [को०]।

व्यापी^{2}—संज्ञा पुं० १. आवृत करने या व्याप्त होनेवाला पदार्थ। २. विष्णु का एक नाम [को०]।

व्यापीत—वि० [सं०] जो एकदम पीला हो। गहरे पीत वर्ण का [को०]।

व्यापृत^1—वि० [सं०] १. किसी कार्य में लगा हुआ। संलग्न। २. स्थिर किया हुआ। स्थापित, जमाया हुआ [को०]।

व्यापृत^2—संज्ञा पुं० वह जो कार्य करता हो। कर्मचारी। सचिव। मंत्री [को०]।

व्यापृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्यवसाय। व्यापार। २. जीविका। पेशा। ३. अभ्यास। ४. उद्योग। क्रिया।

व्याप्त—वि० [सं०] १. पूरित। भरा हुआ। २. ढका हुआ। आच्छादित। ३. सर्वत्र फैला हुआ या प्रसृत ४. परिवेष्टित। ५. स्थापित। ६. प्राप्त। अधिकृत। ७. संमिलित। ८. प्रसिद्ध। विख्यात। ९. अंतर्भूत। नितांत संसक्त। १०. फैलाया हुआ [को०]।

व्याप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. व्याप्त होने की क्रिया या भाव। चारों ओर या सब जगह फैला हुआ होना। २. न्याय के अनुसार किसी एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ का पूर्ण रूप से मिला या फैला हुआ होना। एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में अथवा उसके साथ सदा पाया जाना। जैसे—आग में धूंए की या तिल में तेल की व्याप्ति है।

यौ०—व्याप्तिज्ञान।

३. आठ प्रकार के ऐश्वर्यों में से एक प्रकार का ऐश्वर्य।

विशेष—शेष सात ऐश्वर्यों के नाम ये हैं—अणिमा, लघिमा, प्राकाम्य, महिमा, ईशित्व, वशित्व और कामावसायिता।

४. सार्वजनिक नियम। सर्वव्यापक नियम (को०)। ५. पूर्णता (को०)। ६. प्राप्ति (को०)।

व्याप्तिकर्मा—संज्ञा पुं० [सं० व्याप्तिकर्मन्] वह जिसका कर्म व्याप्ति विशिष्ट हो। वह जो व्यापन क्रिया से युक्त हो [को०]।

व्याप्तिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] विशेष बातों के आधार पर लोक[illegible] नियमों का निर्धारण [को०]।

व्याप्तिज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] न्याय के अनुसार वह ज्ञान जो साध्य को देखकर साध्यवान् के अस्तित्व के संबंध में अथवा

साधनवान् को देखकर साध्य के अस्तित्व के संबंध में होना है। जैसे, धूएँ को देखकर यह समझना कि यहाँ आग भी होगी'

व्याप्तित्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्याप्ति का धर्म या भाव।

व्याप्तिनिश्चय—संज्ञा पुं० [सं०] सर्वतः व्याप्त पदार्थ का निश्चयन [को०]।

व्याप्तिलक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] नित्य सहचर भाव या प्रमाण [को०]।

व्याप्य^{१}—वि० [सं०] व्याप्त करने योग्य। व्यापनीय।

व्याप्य^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] १. जिसके द्वारा कोई काम हो। साधन। हेतु। २. कुट या कुड़ नामक औषधि। ३. दे० 'व्याप्ति'।

व्याबाध—संज्ञा पुं० [सं०] बीमारी। रोग [को०]।

व्याभाषण—संज्ञा पुं० [सं०] बोलने या भाषण की शैली [को०]।

व्याभुग्न—वि० [सं०] झुका हुआ। टेढ़ा [को०]।

व्याभ्युक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलक्रीड़ा। जलकेलि [को०]।

व्याम^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] लंबाई की एक नाप।

विशेष—दोनों हाथों को जहाँ तक हो सके, दोनों बगल में फैलाने पर एक हाथ की उँगलियों के सिरे से दूसरे हाथ की उँगलियों के सिरे तक जितनी दूरी होती है, वह व्याम कहलाती है।

व्याम (पु)^{२}—संज्ञा पुं० [सं० व्यायाम] दे० 'व्यायाम'।

उ०—व्याम करत पुहमी जो हली। पीठि न लाइ सकै कोउ बली।
—चित्रा०, पृ० १२३।

व्यामन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्याम'।

व्यामर्श—संज्ञा पुं० [सं०] १. धैर्यहीनता। औत्सुक्य। व्यग्रता। २. उच्छेद या मार्जन करना। रगड़कर साफ करना [को०]।

व्यामर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यामर्श'।

व्यामिश्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] दो प्रकार के पदार्थों या कार्यों को एक में मिलाने की क्रिया।

व्यामिश्र^{२}—वि० १. मिला हुआ। मिश्रित। २. विभिन्न प्रकार का। ३. संदेहास्पद (को०)। ४. अस्थिर। पीड़ित। क्षुब्ध (को०)।

व्यामिश्रक—संज्ञा पुं० [सं०] ग्रंथ, पुस्तक आदि, मुख्यतः रूपक जिसमें विभिन्न भाषाओं का मिश्रण हो [को०]।

व्यामिश्रवान—संज्ञा पुं० [सं०] मोटा वस्त्र जिसमें सूत्र, ऊर्ण, तंतु आदि मिश्रित हों [को०]।

व्यामिश्रव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] मिला जुला व्यूह। वह व्यूह जिसमें पैदल के अतिरिक्त हाथी घोड़े और रथ भी संमिलित हों।

विशेष—कौटिल्य ने इसके दो भेद कहे हैं—मध्यभेदी और अंतभेदी। मध्यभेदी वह है जिसके अंत में हाथी, इधर उधर घोड़े, मुख्य भाग या केंद्र में रथ तथा उरस्य में हाथी और रथ हों। इससे भिन्न अंतभेदी है।

व्यामिश्रसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौटिल्य के अनुसार शत्रु और मित्र दोनों की स्थिति का अपने अनुकूल होना।

व्यामूढ—वि० [सं०] बहुत घबड़ाया हुआ [को०]।

व्यामृष्ट—वि० [सं०] रगड़कर मिटाया हुआ [को०]।

व्यामोक—संज्ञा पुं० [सं०] छुटकारा। मुक्ति [को०]।

व्यामोह—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोह। २. अज्ञान। २. व्याकुलता। घबड़ाहट (को०)।

व्याय—संज्ञा पुं० [सं०] वाण चलाने के समय धनुष की प्रत्यंचा को तानने की पद्धति वा क्रिया [को०]।

व्यायत—वि० [सं०] १. लंबा। फैला या फैलाया हुआ। २. खुला हुआ। ३. कार्य में लगा हुआ। व्यस्त। ४. कठोर। दृढ़। ५. कृताभ्यास। जिसने अभ्यास किया हो। अभ्यस्त। ६. प्रखर। प्रचंड। तीव्र। ७. शक्तिशाली। ८. गहरा। गंभीर [को०]।

व्यायतत्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्यायत होने का भाव। शरीर की पेशियों का विकसन या फैलाव [को०]।

व्यायतपाती—वि० [सं० व्यायतपातिन्] दूर तक दौड़नेवाला। विस्तृत मार्ग को तय करनेवाला। जैसे, अश्व आदि [को०]।

व्यायाम—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह शारीरिक श्रम जो केवल शरीर का बल बढ़ाने के उद्देश्य से किया जाता है। कसरत। जोर। जैसे,—डंड, बैठको करना या मुगदर, डंबल आदि हिलाना। २. पौरुष। ३. परिश्रम। मेहनत। ४. व्यापार। काम। ५. युद्ध की तैयारी। ६. सेना की कवायद आदि। ७. विस्तार करना। फैलाना (को०)। ८. आयास। प्रयत्न। चेष्टा (को०)। ९. युद्ध। कलह। विवाद। संघर्ष (को०)। १०. कठिनाई। ११. लंबाई की एक माप। व्याम (को०)। १२. क्लांति। थकान (को०)। १३. अभ्यास। कौशल (को०)। १४. दुर्गम मार्ग

यौ०—व्यायामकर्शित = व्यायाम के कारण दुर्बल। व्यायामभूमि = व्यायाम करने की जगह। व्यायामयुद्ध। व्यायामयोग। व्यायामशाला = व्यायाम करने की जगह। व्यायामशील = कसरती। (२) परिश्रमी। [को०]। व्यायामशोषी।

व्यायामयुद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] आमने सामने की लड़ाई।

विशेष—अर्थशास्त्र में चाणक्य का मत है कि व्यायामयुद्ध अर्थात् आमने सामने की लड़ाई में दोनों ही पक्षों को बहुत हानि पहुँचती है। जो राजा जीत भी जाता है, वह भी इतना कमजोर हो जाता है कि उसको एक प्रकार से पराजित ही समझना चहिए। (को०)।

व्यायामयोग—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रास्त्रों के प्रयोग का अभ्यास।

व्यायामशोषी—वि० [सं० व्यायामशोषिन्] जो अत्यंत कसरत या श्रम करने से क्षीणकाय हो गया हो। उ०—व्यायामशोषी (अत्यंत दंड कसरत आदि से क्षीण) मनुष्य स्रस्तांगतादियुक्त होय है।—माधव०, पृ० ८६।

व्यायामिक—वि० [सं०] व्यायाम का। व्यायाम संबंधी।

व्यायामी—संज्ञा पुं० [सं० व्यायामिन्] १. वह जो व्यायाम करता हो। कसरत करनेवाला। कसरती। २. वह जो बहुत परिश्रम करता हो। परिश्रमी। मेहनती।

व्यायुक—वि० [सं०] भाग निकलनेवाला [को०]।

व्यायुक्त—वि० [सं०] १. अलग अलग किया हुआ। २. मिला जुला। उ०—लोहित, श्वेत (ओदात्त) या मिश्रित (न्यायुक्त) वर्णों की

वेशभूषा और साजसज्जा धारण करते थे।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २०१।

व्यायुध —वि० [सं०] शस्त्ररहित। निःशस्त्र [को०]।

व्यायोग—संज्ञा पुं० [सं०] साहित्य में दस प्रकार के रूपकों में से एक प्रकार का रूपक या दृश्य काव्य।

विशेष—इसकी कथावस्तु किसी ऐसे ग्रंथ से ली जानी चाहिए, जिससे सब लोग भली भाँति परिचित हों। इसके पात्रों में स्त्रियाँ कम और पुरुष अधिक होते हैं। व्यायोग में स्त्री के कारण युद्ध नहीं होता और इसमें गर्भ और विमर्ष संधि नहीं होती। इसमें एक ही अंक रहता है और कैशिकी वृत्ति का व्यवहार नहीं होता है। इसका नायक कोई प्रसिद्ध राजर्षि, दिव्य और धीरोदात्त होना चाहिए। इसमें शृंगार, हास्य और शांत के सिवा और सब रसों का वर्णन होता है। जैसे, भास कवि का मध्यम व्यायोग।

व्यायोजिम—वि० [सं०] (बंधन या पट्टी) जो खुली हुई या ढीली हो गई हो [को०]।

व्यारब्ध—वि० [सं०] समुचित ढंग से रक्षित [को०]।

व्यारोष—संज्ञा पुं० [सं०] क्रोध। गुस्सा।

व्यार्त वि० [सं०] विशेष रूप से आर्त या दुःखी। क्लेशग्रस्त [को०]।

व्यालंब—संज्ञा पुं० [सं० व्यालम्ब] लाल रेंड़।

व्यालंबी वि० [सं० व्यालम्बिन्] जो लटक रहा हो। लटकता हुआ। अवलंबी [को०]।

व्याल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँप। २. दुष्ट या पाजी हाथी। ३. बाघ। शेर। ४. वह बाघ जो शिकार करने के लिये सधाया गया हो। ५. राजा। ६. विष्णु का एक नाम। ७. दंडक छंद का एक भेद। ८. कोई हिंसक जंतु। ९. चीता (को०)। १०. ठग। धूर्त (को०)। ११. आठ की संख्या (को०)।

व्याल²—वि० १. दूसरों का अपकार करनेवाला। २. दुष्ट। पाजी। ३. बुरा। पापिष्ठ (को०)। ४. क्रूर। भीषण (को०)।

व्यालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दुष्ट या पाजी हाथी। २. हिंसक जंतु। ३. सर्प। व्याल (को०)।

व्यालकरज—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालखड्ग—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यालगन्धा] नाकुली नामक कंद।

व्यालग्राह—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो साँपों को पकड़ता हो। सँपेरा।

व्यालग्राही—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो साँप पकड़ने का काम करता हो। मदारी। सँपेरा।

व्यालग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहस्पति के अनुसार एक देश का नाम। २. इस देश का निवासी।

व्यालजिह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कँगही या कंघी नामक पौधा। महासमंगा।

व्यालता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्याल का भाव या धर्म। व्यालत्व। व्यालपन।

व्यालत्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्याल का भाव या धर्म। व्यालपन।

व्यालदंष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] गोखरू का पौधा।

व्यालदंष्ट्रक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यालदंष्ट्र' [को०]।

व्यालनख—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] खेतपापड़ा।

व्यालपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] खेतपापड़ा।

व्यालपाणिज—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालप्रहरण—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालबल—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालमृग—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाघ। शेर। २. शिकारी चीता (को०)। ३. जंगली जानवर (को०)।

व्यालरूप—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

व्यालवल -संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यालबल'।

व्यालसूदन—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़। उ०—जयति भीमार्जुन व्यालसूदन गर्वहर धनंजय रथत्रान केतू।—तुलसी (शब्द०)।

व्यालाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सर्पों को खाता हो। गरुड़। २. मोर। मयूर [को०]।

व्यालायुध—संज्ञा पुं० [सं०] नख या बगनहा नामक गंधद्रव्य।

व्यालारि -संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़। उ०—पुनु व्यालारि, कराल कलि, बिनु प्रयास निस्तार।—भक्तमाल (प्रि०), पृ० ५७६।

व्यालि -संज्ञा पुं० [सं०] व्याडि नामक एक प्राचीन ऋषि जिन्होंने एक व्याकरण बनाया था।

व्यालिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो साँपों को पकड़कर अपनी जीविका चलाता हो। सँपेरा।

व्यालिनि (पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याली] सर्पिणी। साँपिनी। उ०—सरित की लहरें असु लेहिनो, लहरने खलु व्यालिनी सी लगीं।—बी० श० महा०, पृ० २०१।

व्याली¹—संज्ञा पुं० [सं० व्यालिन्] शिव [को०]।

व्याली²—संज्ञा स्त्री० [सं० व्याल + ई] सर्पिणी। उ०—ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व वन की व्याली—कामायनी, पृ० ५।

व्यालीढ -संज्ञा पुं० [सं०] साँप के काटने का एक प्रकार। साँप का वह काटना जिसमें केवल एक या दो दाँत लगे हों और घाव में से खून न बहा हो।

व्यालीन—वि० [सं०] संश्लिष्ट। चिपका हुआ। घना [को०]।

व्यालुप्त—संज्ञा पुं० [सं०] साँप के काटने का एक प्रकार। साँप का वह काटना जिसमें दो दाँत भरपूर बैठे हों और घाव में से खून भी निकला हो।

व्यालू—संज्ञा पुं० स्त्री० [सं० वेला] रात के समय का भोजन। रात का खाना। उ०—जो कुछ बन पड़ा व्यालू करके लंबी तान अपने बिछौना में जा पड़ा।—श्यामा०, पृ० ६।

व्यालून—वि० [सं०] छिन्न। कटा हुआ [को०]।

व्यालोक—संज्ञा पुं० [सं०] प्रकाश। उ०—अकस्मात् उस खिड़की में से एक सुंदर मुख निकला। व्यालोक डालकर देखा कि रासना एक पात्र हाथ में लिए है और कुछ कह रहा है।—आँधी, पृ० ३८

व्यालोल—वि० [सं०] १. चंचल। २. परिक्रांत। चक्कर खाता हुआ। ३. अस्तव्यस्त। बिखरा हुआ। जैसे, व्यालोलकेश। ४. काँपता हुआ [को०]।

व्यालोलन—संज्ञा पुं० [सं०] इधर उधर हिलना। काँपना [को०]।

व्यावकलन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्यवकलन' [को०]।

व्यावक्रोशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कहा सुनी। वादविवाद। झगड़ा [को०]।

व्यावचर्ची—संज्ञा स्त्री० [सं०] आपस में कही हुई अथवा सामान्य बात, पुनरुक्ति [को०]।

व्यावचोरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आपस में होनेवाली चोरी [को०]।

व्यावभाषी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आपस में अपशब्दों का व्यवहार। कहासुनी [को०]।

व्यावर—वि० [हिं० बिआना, बिआउर] ब्यानेवाली। उत्पन्न करनेवाला। उ०—दादू कापा व्यावर गुणमयी, मनमुख उपजै ज्ञान। चौरासी लख जीवकौं, इस माया का ध्यान।—दादू०, पृ० ४१८।

व्यावर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. विभाग करना। हिस्सा लगाना। विभक्त करना। बाटना। २. हिस्सा। विभाग (को०)।

व्यावर्जित—वि० [सं०] आवर्जित। भुग्न। नत। झुका या लटका हुआ [को०]।

व्यावर्त्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. चकवड़। चक्रमर्द। २. घेरना। लपेटना। परिवेष्टित करना (को०)। ३. चारों ओर भ्रमण करना। चक्कर खाना (को०)। ४. अलग करना। चुनना (को०)। ५. आगे की ओर निकली हुई नाभि। नाभिकंटक।

व्यावर्त्तक—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० व्यावर्त्तिका] १. वह जो व्यावर्तन करता हो। चक्कर खानेवाला। पीछे की ओर लौटानेवाला। २. दूर हटानेवाला। अलग करनेवाला (को०)। ३. भेदक। अंतर करनेवाला (को०)।

व्यावर्त्तन—संज्ञा पुं० [सं०] १. जो पराङ्मुख किया गया हो। २. पीछे की ओर लौटाया या मोड़ा हुआ। ३. सर्प का कुंडली (को०)। ४. घुमाव। मोड़। जैसे, पथ का व्यावर्तन (को०)। ५. परिवेष्टन (को०)।

व्यावर्तनीय—वि० [सं०] जिसका व्यावर्तन किया जा सके। व्यावर्तन के योग्य [को०]।

व्यावर्तित—वि० [सं०] १. पराङ्मुख किया हुआ। लौटाया हुआ। जिसे चक्कर दिया गया हो। २. परिवर्तित [को०]।

व्यावल्गित—वि० [सं०] तेजी या झटके से चलता हुआ [को०]।

व्यावहारक—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवहार। २. वह जो व्यवहार शास्त्र के अनुसार अभियोगों का विचार करता हो। ३. राजा का वह अमात्य या मंत्री जिसके अधिकार में भीतरी और बाहरी सब तरह के काम हों। ४. व्यापार। कारबार (को०)।

व्यावहारिक¹—वि० १. व्यवहार संबंधी। व्यवहार या बरताव का। २. व्यवहार शास्त्र संबंधी। व्यवहार शास्त्र का। ३. प्रचलित। ४. व्यवहारपटु। मिलनसार। ५. व्यापारिक। प्रातिभासिक। भ्रमात्मक (को०)।

व्यावहारिक ऋण—संज्ञा पुं० [सं०] वह ऋण जो किसी कारबार के संबंध में लिया गया हो।

व्यावहारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यौहार संबंधी बंधन। आपसी व्यवहार-जन्य लेनदेन [को०]।

व्यावहार्य—वि० [सं०] १. व्यवहार में लाने योग्य। २. शक्त। क्षम। समर्थ [को०]।

व्यावहासी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आपस में होनेवाली हँसी [को०]।

व्यावाध—संज्ञा पुं० [सं०] रोग। व्याधि [को०]।

व्याविद्ध—वि० [सं०] १. परस्पर विरुद्ध। २. प्रविष्ट या घुसा हुआ। बेधा हुआ। ३. फेंका हुआ। क्षिप्त। ४ घूर्णित। ५. बिगाड़ा हुआ [को०]।

व्याविध—वि० [सं०] तरह तरह का। अनेक प्रकार का [को०]।

व्यावृत्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रधानता। २. विरमण। विराम। ३. अंतर। फर्क। भेद [को०]।

यौ०—व्यावृत्काम=जो प्रधानता पाने की इच्छा रखता हो।

व्यावृत—वि० [सं०] १. जो आवृत न हो। खुला हुआ। दे० 'व्यावृत्त'। २. आच्छादित। आवृत। ३. हटाया या अलग किया हुआ। ४. अपवादित। अपवाद किया हुआ [को०]।

व्यावृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चयन करना। छाँटना। चुनना। २. आवृत या आच्छादित करना। ३. अनावृत करना। अनाच्छादित करना [को०]।

व्यावृत्त—वि० [सं०] छूटा हुआ। मुक्त। निवृत्त। २. मना किया हुआ। निषिद्ध। ३. टूटा हुआ। खंडित। ४. अलग किया हुआ। विभक्त। ५. जो मन में पसंद किया गया हो। मनोनीत। ६. चारों ओर से घेरा हुआ। ७. ऊपर से ढका हुआ। आच्छादित। ८. असंगत (को०))। ९. जो विद्यमान न हो (को०)। १० लौटा हुआ (को०)। ११. चक्कर खाता हुआ (को०)। १२. जिसकी प्रशंसा या स्तुति की गई हो।

यौ०—व्यावृत्तगति=मंद गति। धीमी चाल। व्यावृत्तचेता=जिसका मन किसी ओर से पराङ्मुख हो। व्यावृत्त देह=पर्वत आदि जो फट गए हों।

व्यावृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. खंडन। २. आवृत्ति। ३. मन से चुनने या पसंद करने का काम। ४. चारों ओर से फेरना। ५. स्तुति। प्रशंसा। तारीफ। ६. मनाही। निषेध। ७. बाधा। खलल। ८. निराकरण। निर्णय। मीमांसा। ९. नियोग। १०. एक प्रकार का यज्ञ (को०)। ११. पृथक्ता। भिन्नता (को०)। १२. स्पष्टता (को०)। १३. (नेत्रादि) घुमाना (को०)। १४. अविद्यमान होना (को०)। १५. घेरना (को०)। १६. ढकना (को०)।

व्याशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विदिशा। दिशाओं का कोण या मध्यवर्ती भाग [को०]।

व्याश्रय—संज्ञा पुं० [सं०] १. सहारा। आश्रय। साहाय्य। २. वह जो दूसरे का सहारा लेता हो [को०]।

व्यासंग—संज्ञा पुं० [सं० व्यासङ्ग] १. भक्ति (को०)। २. बहुत अधिक आसक्ति। ३. आसक्तिपूर्ण अध्ययन (को०)। ४. पार्थक्य। अलग होना (को०)। ५. योग (को०)। ६. घबड़ाने की स्थिति या भाव (को०)। ७. घनिष्ठ संबंध वा संपर्क (को०)। ८. मनोयोग।

व्यासंगी—वि० [सं० व्यसङ्गिन्] १. विशेष रूप में आसक्त। २. जो मनोयोगपूर्वक संलग्न हो [को०]।

व्यास—संज्ञा पुं० [सं०] १. पराशर के पुत्र कृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों का संग्रह, विभाग और संपादन किया था। कहा जाता है, अठारहों पुराणों महाभारत, भागवत और वेदांत आदि की रचना भी इन्होंने की थी।

विशेष—इनके जन्म आदि की कथा महाभारत में बहुत विस्तार के साथ दी है। उसमें कहा गया है कि एक बार मत्स्यगंधा सत्यवती नाव खे रही थी। उसी समय पराशर मुनि वहाँ जा पहुँचे और उसे देखकर आसक्त हो गए। वे उससे बोले कि तुम मेरी कामना पूरी करो। सत्यवती ने कहा—महाराज नदी के दोनों ओर ऋषि, मुनि आदि बैठे हुए हैं और हम लोग को देख रहे हैं। मैं कैसे आपकी कामना पूरी करूँ। इसपर पराशर मुनि के अपने तप के बल से कुहरा खड़ा कर दिया जिससे चारों ओर अँधेरा छा गया। उस समय सत्यवती ने फिर कहा महाराज, मैं अभी कुमारी हूँ; और आपकी कामना पूरी करने से मेरा कौमार नष्ट हो जायगा। उस दशा में मैं किस प्रकार अपने घर में रह सकूँगी। पराशर ने उत्तर दिया नहीं, इससे तुम्हारा कौमार्य नष्ट नहीं होगा। तुम मुझसे वर माँगो। सत्यवती ने कहा कि मेरे शरीर से मछली की जो गंध आती है, वह न आवे। पराशर ने कहा कि ऐसा ही होगा। उसी समय से उसके शरीर से सुगंध निकलने लगी और तबसे उसका नाम गंधवती या योजनगंधा पड़ा। इसके उपरांत पराशर मुनि ने उसके साथ संभोग किया जिससे उसे गर्भ रह गया और उस गर्भ से इन्हीं व्यासदेव की उत्पत्ति हुई। इनका जन्म नदी के बीच के एक टापू में हुआ था और इनका रंग बिलकुल काला था; इसलिये इनका नाम कृष्ण द्वैपायन पड़ा। इन्होंने बचपन से ही तपस्या आरंभ की और बड़े होने पर वेदों का संग्रह तथा विभाग किया; इसीलिये ये वेदव्यास कहलाए। पीछे से जब शांतनु से सत्यवती का विवाह हुआ, तब अपने पुत्र विचित्रवीर्य के मरने पर सत्यवती ने इन्हें बुलाकर विचित्रवीर्य की विधवा पत्नियों (अंबिका और अंबालिका) के साथ नियोग करने की आज्ञा दी जिससे धृतराष्ट्र और पांडु का जन्म हुआ। विदुर भी इन्हीं के वीर्य से उत्पन्न हुए थे। ये पाराशर्य, कानीन, बादरायण, सत्यभारत, सत्यव्रत और सत्यरत भी कहलाते हैं।

२. पुराणानुसार वे अट्ठाईस महर्षि, जिन्होंने भिन्न भिन्न कल्पों में जन्म ग्रहण करके वेदों का संग्रह और विभाग किया था।

विशेष—ये सब ब्रह्मा और विष्णु के अवतार माने जाते हैं; और इनके नाम इस प्रकार हैं—स्वयंभुव, प्रजापति या मनु, उशना, बृहस्पति, सविता, मृत्यु या यम, इंद्र, वसिष्ठ, सारस्वत, त्रिधाम, ऋषभ या त्रिवृष, सुतेजा या भारद्वाज, अंतरिक्ष या धर्म, वपृवन् या सुचक्षु, त्रय्यारुणि, धनजय, कृतंजय, ऋतजय, भरद्वाज, गौतम, उत्तम या हर्यंतम, वाचश्रवा या नारायण (इन्हें वेण भी कहते हैं), सोममुख्यायन या तृणबिंदु, ऋक्ष या वाल्मीकि, शक्ति, पराशर, जातुकर्ण और कृष्ण द्वैपायन।

३. वह ब्राह्मण जो रामायण, महाभारत या पुराणों आदि की कथाएँ लोगों को सुनाता हो। कथावाचक। उ०—वो कभी व्यास बन पुरानी प्रयोजनीय वृत्तांतों की कथा कह सुनाती है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३४१। ४. वह रेखा जो किसी बिल्कुल गोल रेखा या वृत्त के किसी एक बिंदु से बिलकुल सीधी चलकर केंद्र से होती हुई दूसरे सिर तक पहुँची हो। ५. विस्तार। प्रसार। फैलाव। ६. वितरण। विभाजन (को०)। ७. समासयुक्त पदों का विश्लेषण या विग्रह (को०)। ८. पृथक्ता। अलगाव (को०)। ९. चौड़ाई। १०. उच्चारण का एक दोष (को०)। ११. व्यवस्थापक। संकलन करनेवाला। वह जो संकलन करता हो (को०)। १२. व्यवस्था। संकलन करने का काम (को०)। १३. विस्तारयुक्त विवरण। विस्तृत विवरण (को०)। १४. एक प्रकार का धनुष जिसकी तौल या वजन १०० पल का होता थी (को०)।

व्यासकूट—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत से आए हुए वेदव्यास के कूट श्लोक। २. वे कूट श्लोक जो सीताहरण होने पर रामचंद्र जी ने माल्यवान् पर्वत पर कहे थे और जिनसे उन्हें कुछ शांति मिली थी।

व्यासक्त—वि० [सं०] १. जो आसक्त हुआ हो। जिसका मन बेतरह आ गया हो। २. संबद्ध। लगा हुआ। जुड़ा हुआ (को०)। ३. पृथक्कृत। अलग किया हुआ। ४. व्याकुल। परेशान (को०)। ५. आलिंगित। आलिंगनबद्ध (को०)। ६. अनासक्त (को०)।

व्यासगीता—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

व्यासता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यास का भाव या धर्म। व्यासत्व।

व्यासतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम।

व्यासत्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्यास का भाव या धर्म।

व्यासदेव—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण द्वैपायन। वेदव्यास [को०]।

व्यासपीठ—संज्ञा पुं० [सं०] पुराण के व्याख्याता का आसन। व्यासासन [को०]।

व्यासपूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आषाढ़ मास की पूर्णिमा को होनेवाली गुरु की पूजा जिसे व्यासपूजा भी कहते हैं।

व्यासमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यासमातृ] व्यास की माता, सत्यवती [को०]।

व्यासमूर्ति—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

व्यासयति—संज्ञा पुं० [सं०] एक तीर्थ का नाम जिसे व्यासतीर्थ भी कहते हैं [को०]।

व्यासराज—संज्ञा पुं० [सं०] एक तीर्थ [को०]।

व्यासवन—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन वन का नाम।

व्यास समास—संज्ञा पुं० [सं०] विस्तार और संक्षेप [को०]।

व्यास सरोवर—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार वह सरोवर जिसमें युद्ध के अंत में दुर्योधन छिपा था [को०]।

व्याससू—संज्ञा स्त्री० [सं०] सत्यवती [को०]।

व्याससूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वेदांतसूत्र।

व्यासस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन पवित्र तीर्थ का नाम।

व्यासस्मृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक स्मृति का नाम [को०]।

व्यासारण्य—संज्ञा पुं० [सं०] व्यासवन नामक प्राचीन वन।

व्यासार्द्ध—संज्ञा पुं० [सं०] व्यास का आधा भाग। किसी वृत्त के केंद्र से उसके किसी छोर तक की रेखा।

व्यासासन—संज्ञा पुं० [सं०] वह आसन जिसपर कथा कहनेवाले व्यास बैठकर कथा कहते हैं। व्यासपीठ।

व्यासिद्ध—वि० [सं०] १. मना किया हुआ। वर्जित। निषिद्ध (माल आदि)। २. रुका हुआ। अवरुद्ध।

व्यासीय—वि० [सं०] व्यास संबंधी। व्यास का।

व्यासेध—संज्ञा पुं० [सं०] निषेध। वर्जन। प्रतिबंध [को०]।

व्याहंतव्य—वि० [सं० व्याहन्तव्य] उल्लघन करने योग्य [को०]।

व्याहत—वि० [सं०] १. मना किया हुआ। निवारित। निषिद्ध। २. व्यर्थ। ३. हताश। निराश (को०)। ४. भ्रमित। व्याकुल। चकराया हुआ (को०)। ५. जिसपर चोट की गई हो (को०)। ६. परस्पर विरुद्ध। परस्पर विरोधी (को०)। ७. रोका हुआ। बाधित। विफल या निष्फल किया हुआ। ८. भयभीत। भयालु। भययुक्त (को०)।

व्याहतार्थता—संज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य के अनुसार एक रचनागत दोष जिसमें उत्तरवर्ती कथन से पूर्ववर्ती कथन की हीनता वा व्यर्थता व्यक्त हो। पहले कही हुई बात का आगे कही हुई बात से उत्कर्ष न रहना।

व्याहति—संज्ञा स्त्री० [सं०] खलल पहुँचाना। बाधा डालना। २. न्याय में परस्पर असंगति या वचन विरोध (को०)।

व्याहनस्य—वि० [सं०] [वि० स्त्री० व्याहनस्या] अत्यंत अश्लील [को०]।

व्याहरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कथन। उक्ति। २. उच्चारण (को०)।

व्याहार—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाक्य। जुमला। वचन। कथन। २. ध्वनि। स्वर। आवाज (को०)। ३. हास परिहास। मजाक। परिहास भरी उक्ति (को०)। ४. पक्षियों का चहचहाना। कलरव (को०)।

व्याहाव—संज्ञा पुं० [सं०] व्यक्त वा परिस्फुट ध्वनि। स्पष्ट पुकार [को०]।

व्याहित—वि० [सं०] व्याधिग्रस्त। रोगयुक्त [को०]।

व्याहृत[1]—वि० [सं०] १. कहा हुआ। कथित। उक्त। २. खादित। भक्षित (को०)। ३. जिसने कुछ कहा हो। जिसने ध्वनि की हो (को०)।

व्याहृत[2]—संज्ञा पुं० १. बोलना। कहना। वार्ता करना। २. अस्पष्ट कथन। कल कूजन। अस्फुट ध्वनि (विशेषतः पशुपक्षियों की)। ३. निर्देश। नियोग। बाधन। ख्यापन [को०]।

व्याहृत संदेश—संज्ञा पुं० [सं० व्याहृत सन्देश] वह जो सूचना या समाचार कहे। संदेशहारक। दूत [को०]।

व्याहृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कथन। उक्ति। २. उच्चारण। वचन (को०)। ३. भूः, भुवः, स्वः इन तीनों का मंत्र।

विशेष—कहते हैं, जहाँ और कोई मंत्र न हो, वहाँ इसी व्याहृति मंत्र से काम लेना चाहिए। कुछ विद्वानों के मतानुसार व्याहृतियाँ सात हैं—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्यम्। इनमें प्रारंभिक तीन महाव्याहृति कही गई हैं और ये सवितृ और पृश्नि की कन्या मानी जाती हैं।

व्युंदन—संज्ञा पुं० [सं० व्युन्दन] अच्छी तरह तर करना। आर्द्र करना। गीला करना [को०]।

व्युच्चरण—संज्ञा पुं० [सं०] अत्यय। उल्लंघन। अतिक्रमण [को०]।

व्युच्छित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] विनाश। बरबादी। उन्मूलन।

व्युच्छेत्ता—वि०, संज्ञा पुं० [सं० व्युच्छेत्तृ] १. विनाश करनेवाला। बरबाद करनेवाला। २. (वह) जो काटा गया हो। (वह) जिसे उन्मूलित किया गया हो (को०)।

व्युच्छेद—संज्ञा पुं० [सं०] विनाश। पूर्णतः उन्मूलन। व्युच्छित्ति [को०]।

व्युत—वि० [सं०] १. बुना हुआ। व्यूत। गूँथा हुआ। २. जो समतल किया गया हो। जैसे, मार्ग (को०)।

व्युति—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'व्यूति'। २. बुनाई की मजदूरी। बुनाई। सिलाई [को०]।

व्युत्क्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रम में उलटफेर होना। व्यतिक्रम। गड़बड़ी। २. निश्चित वा उचित का परित्याग करना (को०)। ३. अतिक्रमण। उल्लंघन (को०)। ४. अस्तव्यस्त होना (को०)। ५. मृत्यु। मरण (को०)।

व्युत्क्रमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. अलग होना। अलगाव। २. अतिक्रमण। उल्लंघन। [को०]।

व्युत्क्रांत—वि० [सं० व्युत्क्रान्त] १. लांघा हुआ। लंघित। उल्लंघित। २. गत। गया हुआ। प्रस्थित। ३. तिरस्कृत। निरादृत। उपेक्षित। ४. विपरीत दिशा में जानेवाला। प्रतिकूल पथगामी [को०]।

यौ०—व्युत्क्रांत जीवित = मृत। निर्जीव। गतप्राण। व्युत्क्रांतधर्म = कर्तव्य कर्म की उपेक्षा करनेवाला। धर्म का उल्लंघन करनेवाला। व्युत्क्रांतरजा। व्युत्क्रांतवर्त्मा।

व्युत्क्रांतरजा—वि० [सं० व्युत्क्रान्तरजस्] १. रजोगुण से रहित । वासनाहीन । २. निष्पाप । अकलुष [को०] ।

व्युत्क्रांतवर्त्मा—वि० [सं० व्युत्क्रान्तवर्त्मन्] सत्पथ से च्युत । विहित एवं उचित मार्ग का परित्याग करनेवाला [को०] ।

व्युत्क्रांतसमापत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० व्युत्क्रान्त समापत्ति] १. बौद्ध मतानुसार अनन्यमनस्कता की स्थिति । समाधि या एकाग्रता की अवस्था । २. एकीकरण वा एकत्र समाहरण की स्थिति [को०] ।

व्युत्क्रांता—संज्ञा स्त्री० [सं० व्युत्क्रान्ता] एक प्रकार की प्रहेलिका । पहेली का एक भेद । पहेली ।

व्युत्त—वि० [सं०] आर्द्र या तर किया हुआ । जिसका व्युंदन किया गया हो [को०] ।

व्युत्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्वतंत्र या स्वाधीन होकर काम करना । २. किसी के विरुद्ध आचरण करना । खिलाफ चलना । ३. रुकावट डालना । रोकना । ४. समाधि । ५. एक प्रकार का नृत्य । ६. योग के अनुसार चित्त की क्षिप्त, मूढ़ और विक्षिप्त ये तीन अवस्थाएँ या चित्तभूमियाँ जिनमें योग का साधन नहीं हो सकता । इन भूमियों में चित्त बहुत चंचल रहता है । ७. महत् सक्रियता । सचेष्टता (को०) । ८. हाथी को उठने के लिये प्रेरित करना (को०) । ९. किसी से दबना या नीचा देखना (को०) । १०. खंडन । विरोध (को०) ।

व्युत्थापित—वि० [सं०] उठाया हुआ । जगाया हुआ । जिसे उठने या जगने के लिये प्रेरित किया गया हो [को०] ।

व्युत्थित—वि० [सं०] १. कर्तव्य मार्ग से विचलित । उच्छास्त्रवर्ती । २. जिसकी बुद्धि स्थिर न हो । ३. जो बहुत क्षुब्ध हो [को०] ।

व्युत्पत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी पदार्थ आदि की विशिष्ट उत्पति । किसी चीज का मूल उद्गम या उत्पत्ति स्थान । २. शब्द का मूल रूप । वह शब्द जिससे कोई दूसरा शब्द निकला हो । ३ किसी विज्ञान या शास्त्र आदि का अच्छा ज्ञान वा प्रगाढ़ पांडित्य । जैसे,—दर्शन शास्त्र में उनकी अच्छी व्युत्पत्ति है । ४. विद्वत्ता । ज्ञान (को०) । ५. ध्वनि या उच्चारण की भिन्नता (को०) । ६. बाढ़ । विकास (को०) ।

व्युत्पन्न—वि० [सं०] १. जिसका संस्कार हो चुका हो । संस्कृत । २. जिसका किसी विज्ञान या शास्त्र में अच्छा प्रवेश हो । जो किसी शास्त्र आदि का अच्छा ज्ञाता हो । ३. उत्पादित । पैदा किया हुआ (को०) । ४. अव्युत्पन्न का विपरीतार्थबोधक । जिसकी व्युत्पत्ति की गई हो (को०) । ५. जो निरुक्ति या निर्वचन द्वारा निर्मित हो (को०) । ६. पूर्ण किया हुआ । संपन्न (को०) ।

व्युत्पादक—वि० [सं०] १. व्युत्पत्ति या निर्वचन । करनेवाला । २. उत्पन्न करनेवाला ।

व्युत्पादन—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्युत्पत्ति । मूल रूप या शब्द का निर्वचन । २. निर्देशन । शिक्षण (को०) ।

व्युत्पाद्य—वि० [सं०] जिसकी निरुक्ति की जा सके । व्युत्पत्ति के योग्य [को०] ।

व्युत्सर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुमार शरीर का मोह या चिंता का परित्याग । उ०—दूसरे प्रकार के तप में प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य (सेवा), स्वाध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग (शरीरत्याग) की गणना होती है ।—आ०, भा०, पृ० १४३ । २. विरक्ति । त्याग (को०) ।

व्युत्सेक—संज्ञा पुं० [सं०] चारों ओर छिड़कना या उड़ेलना [को०] ।

व्युद, व्युदक—वि० [सं०] उदकविहीन । जलरहित [को०] ।

व्युदस्त—वि० [सं०] १. फेंका हुआ । दूर किया हुआ । क्षिप्त । २. अस्वीकृत किया हुआ । ३. विकीर्ण [को०] ।

व्युदास—संज्ञा पुं० [सं०] १. हटाना । निकाल देना । निरसन । परित्याग । (व्याकरण) । २. हत्या । विनाश । वध । ३. प्रतिषेध । निषेध । ४. उदासीनता । उपेक्षा । ५. फेंकना । दूर करना । अस्वीकृत करना । ६. अंत । समाप्ति । विराम [को०] ।

व्युदित—वि० [सं०] जिसपर वाद विवाद किया गया हो [को०] ।

व्युन्मिश्र—वि० [सं०] मिलाया हुआ । मिश्रित किया हुआ । संकीर्ण [को०] ।

व्युप—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो अपने हाथों को स्वयं चबाता या खाता हो [को०] ।

व्युपदेश—संज्ञा पुं० [सं०] ठगने या धोखा देने का काम । ठगी । व्यपदेश ।

व्युपद्रव—वि० [सं०] जो भाग्य के फेर से या दुर्दिन से अशांत एवं क्षुब्ध न हो ।

व्युपपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] फिर से जन्म होना । पुनर्जन्म [को०] ।

व्युपरत—वि० [सं०] शांत । निश्चल । रुद्ध [को०] ।

व्युपरम—संज्ञा पुं० [सं०] १. शांति । विराम । समाप्ति । २. छुटकारा । निवृत्ति । ३. स्थिति ।

व्युपवीत—वि० [सं०] उपवीतरहित । यज्ञोपवीत विहीन [को०] ।

व्युपशम—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशांति । २. विराम का अभाव (को०) । ३. पूर्ण विराम, शांति या समाप्ति (को०) ।

व्युप्त—वि० [सं०] १. विकीर्ण किया हुआ । बिखेरा हुआ । २. कटाया हुआ । क्षौर किया हुआ । मुंडित [को०] ।

व्युप्तकेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव का एक नाम । २. अग्नि । ३. वह जिसने क्षौर कराया हो । ४. वह जिसके बाल बिखरे हों । अस्तव्यस्त केशोंवाला [को०] ।

व्युष—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य के उदय होने का समय । भोरहरी प्रातःकाल । सबेरा ।

व्युषित—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्युष्ट' (को०] ।

व्युषिताश्व संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम ।

व्युष्ट^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रभात । तड़का । सबेरा । २. दिन । दिवस । ३. फल । परिणाम । ४. कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार श्रावण में नए वर्ष का प्रथम् दिवस (को०) ।

व्युष्ट²—वि० १. जला या झुलसा हुआ। २. द्योतित, प्रकाशयुक्त या जो स्पष्ट हो गया हो (को०)। ३. व्यतीत। बीता अथवा गुजरा हुआ (को०)। ४. उषःकालीन प्रकाश से युक्त। प्राभातिक सूर्य किरणों से युक्त। प्रभातीभूत। ५. बिताया हुआ। गुजारा हुआ। रहा हुआ। निवास द्वारा गुजारा हुआ (को०)।

व्युष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. फल। नतीजा। परिणाम। २. समृद्धि। ३ स्तुति। प्रशंसा। ४. प्रकाश। उजाला। ५. प्रभात। तड़का। ६. दाह। जलन। ७. इच्छा। कामना। खाहिश। ८. सौंदर्य। सुंदरता (को०)। ९. आठवें दिन भोजन करना (को०)।

व्यूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन देश का नाम। २. इस देश का निवासी।

व्यूढ¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो व्यूह बनाकर खड़ा हो। २. वह जिसका विवाह हो चुका हो।

व्यूढ़²—वि० १. स्थूल। मोटा। २. उत्तम। बढ़िया। ३. तुल्य। समान। ४. दृढ़। मजबूत। ५ क्रमबद्ध। व्यवस्थित। जैसे, सेना (को०)। ६. विवाहित। ७. अव्यवस्थित। क्रमहीन। ८. विकसित (को०)। ९. फैला हुआ। विशाल (को०)।

यौ०—व्यूढकंकट = वर्म आदि को धारण किए हुए। जिसने कवच आदि पहना हो।

व्यूढि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विन्यास। सजावट। २. स्थूलता। मोटाई। ३. सैन्यविन्यास। दे० 'व्यूह' (को०)।

व्यूढोरस्क—वि० [सं०] विशाल या चौड़ी छातीवाला [को०]।

व्यूत—वि० [सं०] १. बुना हुआ। २. समतल या बराबर किया हुआ (को०)।

व्यूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कपड़े आदि बुनने की क्रिया। बुनाई। २. बुनने की मजदूरी (को०)।

व्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] १. समूह। जमघट। २. निर्माण। रचना। ३. तर्क। ४. शरीर। बदन। ५. सेना। फौज। ६. परिणाम। नतीजा। ७. युद्ध के समय को जानेवाली सेना की स्थापना। लड़ाई के समय की अलग अलग उपयुक्त स्थानों पर की हुई सेना के भिन्न भिन्न अंगों की नियुक्ति। सेना का विन्यास। बलविन्यास।

विशेष—प्राचीन काल में युद्धक्षेत्र में लड़ने के लिये पैदल, अश्वारोही, रथ और हाथी आदि कुछ खास ढंग से और खास खास मौकों पर रखे जाते थे, और सेना का यही स्थापन व्यूह कहलाता था। आकार आदि के विचार से ये व्यूह कई प्रकार के होते थे। जैसे,—दंड व्यूह, शकटव्यूह, वराहव्यूह, मकरव्यूह, सूचीव्यूह, पद्मव्यूह, चक्रव्यूह, वज्रव्यूह, गरुड़व्यूह, श्येनव्यूह, मंडलव्यूह, धनुर्व्यूह, सर्वतोभद्रव्यूह आदि। राजा या सेना का प्रधान सेनापति प्रायः व्यूह के मध्य में रहता था; और उसपर सहसा आक्रमण नहीं हो सकता था। जब इस प्रकार सेना के सब अंग स्थापित कर दिए जाते थे, तब शत्रु सहसा उन्हें छिन्न भिन्न नहीं कर सकते थे।

८. किसी प्रकार के आक्रमण या विपत्ति आदि से रक्षित रहने के लिये की हुई ऊपरी योजनाएँ। ९. उपशीर्ष। अध्याय। भाग। अंश (को०)। १०. अलग अलग करना। विभाग करना (को०)। ११. अस्तव्यस्त करना (को०)। १२. स्थान बदलना (को०)। १३, विस्तृत व्याख्या (को०)। १४. श्वास प्रश्वास (को०)।

यौ०—व्यूहपार्ष्णि, व्यूहपृष्ठ = सेना का पिछला भाग। चंदावल। व्यूहभंग, व्यूहभेद = सैनिकों की स्थिति का क्रम टूटना। सैनिकों की व्यूहस्थिति का छिन्नभिन्न होना। व्यूहरचना, व्यूहराज, व्यूहविभाग = सेना की एक विशिष्ट एवं पृथक् पंक्ति।

व्यूहक—संज्ञा पुं० [सं०] आकार। रूप [को०]।

व्यूहन—संज्ञा पुं० [सं०] १. युद्ध के लिये भिन्न भिन्न स्थानों पर सैनिकों को नियुक्ति करना। सेना को स्थापित करना। व्यूह रचना। २. मिलाना। ३. शरीर के अंगों की बनावट (को०)। ४. स्थानपरिवर्तन (को०)। ५. (भ्रूण का) विकास (को०)।

व्यूहमति—संज्ञा पुं० [सं०] ललितविस्तर के अनुसार एक देवपुत्र का नाम।

व्यूहरचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] सैनिकों को योजनानुसार उपयुक्त स्थान पर खड़ा करना। मोरचेबंदी [को०]।

व्यूहराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक बोधिसत्व का नाम। २. सर्वोत्कृष्ट व्यूह। श्रेष्ठ व्यूह (को०)। ३. एक प्रकार को समाधि (को०)।

व्यूहित—वि० [सं०] १. समूहबद्ध। २. व्यूह के आकार में स्थित। व्यूहबद्ध [को०]।

व्यृद्ध—वि० [सं०] १. ऋद्धिहीन। समृद्धिरहित वा वंचित। दुर्भाग्यग्रस्त। बदकिस्मत। २. किसी वस्तु से पृथक् किया हुआ। पृथक्कृत या वंचित। ३. दोषयुक्त। सदोष। अपूर्ण। ४. विफल किया हुआ। विमलीकृत। ५. सापराध [को०]।

व्यृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अभाग्य। बदकिस्मती। २. न्यूनता। दुर्लभता। अभाव [को०]।

व्येक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० व्येका] जिसमें एक की कमी हो। एक से ऊन। ऐकोन [को०]।

व्येनस्—वि० [सं०] दोषरहित। अनपराध [को०]

व्येनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह जिसमें अनेक रंग हों। उषा, जिसमें विविध वर्ण होते हैं [को०]।

व्योकस्—वि० [सं०] अलग रहनेवाला। जो संपृक्त न हो [को०]।

व्योकार—संज्ञा पुं० [सं०] लौहकार। लोहार [को०]।

व्योम—संज्ञा पुं० [सं० व्योमन्] १. आकाश। अंतरिक्ष। आसमान। २. मेघ। बादल। ३. जल। पानी। ४. अवकाश। अंतर (को०)। ५. सूर्य का मंदिर। सूर्यमंदिर (को०)। ६. अभ्रक (को०)। ७. शरीरस्थ वायु (को०)। ८. एक बड़ी संख्या का सूचक शब्द (को०)। ९. कल्याण। सुरक्षा (को०)। १०. हार।

विष्णु (को०)। ११. एक एकाह कृत्य (को०)। १२. वर्षदेवता अथवा प्रजापति का नाम (को०)। १३. हरिवंश पुराण में वर्णित दशार्ह के एक पुत्र का नाम (को०)।

व्योमक—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध मतानुसार एक आभूषण [को०]।

व्योमकेश—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

व्योमकेशी—संज्ञा पुं० [सं० व्योमकेशिन्] शिव का एक नाम।

व्योमगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्योमगङ्गा] आकाशगंगा।

व्योमग—वि० [सं०] आकाशचारी [को०]।

व्योमगमनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह विद्या जिसके द्वारा मनुष्य आकाश में उड़ सकता हो। आसमान में उड़ने की विद्या।

व्योमगमनीविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'व्योमगमनी'।

व्योमगामी—वि० [सं० व्योमगामिन्] आकाशचारी [को०]।

व्योमगुण—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द [को०]।

व्योमचर—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो आकाश में विचरण करता हो। आकाशचारी।

व्योमचारी—संज्ञा पुं० [सं० व्योमचारिन्] १. देवता। २. पक्षी। चिड़िया। ३ वह जो आकाश में विचरण करता हो। ४. संत (को०)। ५. आकाशीय पिंड (को०)। ६. ब्राह्मण (को०)।

व्योमदेव—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

व्योमधारण—संज्ञा पुं० [सं०] पारा [को०]।

व्योमधूम—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

व्योमध्वनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाशवाणी [को०]।

व्योमनाशिका, व्योमनासिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] भारती नामक पक्षी।

व्योमपंचक—संज्ञा पुं० [सं० व्योमपञ्चक] शरीर में रहनेवाले पाँच छिद्र [को०]।

व्योमपाद—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

व्योमपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] असंभव पदार्थ। आकाशकुसुम [को०]।

व्योममंजर—संज्ञा पुं० [सं० व्योममञ्जर] दे० 'व्योममंडल' [को०]।

व्योममंडल—संज्ञा पुं० [सं० व्योममण्डल] १. आकाश। आसमान। उ०—व्योममंडल में—जगतीतल में सोती शांत सरोवर पर उस अमल कमलिनी दल में।—अपरा, पृ० १४। २. पताका। ध्वजा। झंडा।

व्योममाय—वि० [सं०] आकाशचुंबी [को०]।

व्योममुद्गर—संज्ञा पुं० [सं०] वह शब्द जो हवा के बहुत जोर से चलने से होता है। हूका।

व्योममृग—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा के दसवें घोड़े का नाम।

व्योमयान—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह यान या सवारी जिसपर चढ़कर मनुष्य आकाश में उड़ सकता। हो। विमान। २. हवाई जहाज।

व्योमरत्न—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

व्योमवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाशवल्ली या अमरबेल नाम की लता।

व्योमवृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] अंतरिक्ष, आकाश से होनेवाली वर्षा। उ०—मंजरित प्रकृति, मुकुलित दिगंत, कूजन गुंजन की व्योमवृष्टि।—युगांत, पृ० ९।

व्योमसंभवा—संज्ञा स्त्री० [सं० व्योमसम्भवा] विचित्रवर्ण की गौ। चितकबरी गाय [को०]।

व्योमसद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवता। सुर। २. एक देवयोनि। गधर्व। ३. भूत, प्रेत [को०]।

व्योमसरित्—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाशगंगा [को०]।

व्योमसरिता—संज्ञा स्त्री० [सं० व्योमसरित्] आकाशगंगा। मंदाकिनी।

व्योमस्थल—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाश। उ०—विद्युन्मयी घटा है घन की। छिपा रत्नदीपक अञ्चल में, शोभित है वह व्योमस्थल में, ज्योति झलकती है पल पल में, वर्षा ऋतु ने दिखलाई है ज्योतिर्मयी विभूति गगन की।—प्रेमांजलि, पृ० ११९।

व्योमस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी। जमीन।

व्योमाख्या—संज्ञा पुं० [सं०] १. अबरक अभ्रक। २. मूल या आदि कारण [को०]।

व्योमाधिप—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

व्योमाभ—संज्ञा पुं० [सं०] गौतम बुद्ध का एक नाम।

व्योमारि—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वेदेवता।

व्योमी—संज्ञा पुं० [सं० व्योमिन्] चंद्रमा के दस घोड़ों में से एक का नाम [को०]।

व्योमोदक—संज्ञा पुं० [सं०] वर्षा का जल। बरसात का पानी।

व्योम्निक—वि० [सं०] व्योम संबंधी। व्योम या आकाश का।

व्योरना†—क्रि० स० [हिं० व्योरा] दे० 'ब्योरना'

व्योरापु—संज्ञा पुं० [सं० विवरण] दे० 'ब्योरा'। उ०—मैं हूँ जीव मती का भौंरा। कहँ जानूँ चौका के व्योरा।—कबीर सा०, पृ० ५४८।

व्योरेवार—अव्य० [हिं० ब्योरा] तफसील के साथ। ब्योरेवार। सविस्तर। उ०—इन तमाम ग्रंथों को रचना काल का ठीक ठीक पता लग सकता तो हिंदुस्तान का धार्मिक, सामाजिक, और आर्थिक इतिहास श्रमपूर्वक व्योरेवार लिखा जाता। - हिंदु० सभ्यता, पृ० १४३।

व्योष—संज्ञा पुं० [सं०] सोंठ, पीपल और मिर्च इन तीनों का समूह। त्रिकटु।

व्योहरनी†—संज्ञा स्त्री० [सं० व्यवहारणीय] व्यवहार। बर्ताव। उ०—कहै मित्र की बात करै दुसमन का करनी। ना कीजै विस्वास करै कैसो व्योहरनी।—पलटू०, पृ० ६७।

व्योहार†—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्यवहार'। उ०—देष्या चाह जग व्यवहार।—रामानंद०, पृ० ४९।

व्यौपारी†—संज्ञा पुं० [सं० व्यापारिन्] दे० 'व्यापारी'। उ०—तब वह वैष्णवन वा व्यौपारी के साथ घर रह्यो।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० १०४।

ब्यौरना†—क्रि० स० [सं० विवरण] दे० 'ब्योरना'। उ०—आदित वार ब्यौरि ले आप। आपा ब्योरत पुंनि न पाप। गोरख०, पृ० २४४।

ब्यौहार†—संज्ञा पुं० [सं० व्यवहार] दे० 'व्यवहार'। उ०—और माविक चंद सो प्रभु कहे, जो तुम ब्यौहार करो।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० १६५।

ब्रंद (पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृन्द] दे० 'वृंद'। उ०—भिक्षुक ब्रंद दान तिहि दिन्नव।—प० रासो, पृ० १५६।

ब्रच्छ (पु)—संज्ञा पुं० [सं० वृक्ष] दे० 'वृक्ष'। उ०—सावण आयउ साहिवा पगइ विलंबी गार। ब्रच्छ विलंबी बेलड्याँ, नरा विलंबी नार।--ढोला०, दू० २६९।

व्रज—संज्ञा पुं० [सं०] १. जाना या चलना। व्रजन। गमन। २. समूह। झुंड ३. मथुरा और वृंदावन के आसपास का प्रांत जो भगवान् श्रीकृष्ण का लीलाक्षेत्र है और जो इसी कारण बहुत पवित्र माना जाता है। पुराणों आदि के अनुसार मथुरा से चारों ओर ८४-८४ कोस तक की भूमि ब्रजभूमि कही गई है; और इसकी प्रदक्षिणा का बहुत अधिक माहात्म्य कहा गया है। ४. अहीरों का टोला या बाड़ा। उ०—नयननि को फल लेति निरखि खग मृग सुरभी व्रजवधू अहीर।—तुलसी (शब्द०)। ५. गोष्ठ। गोकुल। गोशाला (को०)। ६. आवास। विश्राम करने की जगह (को०)। ७. पथ। सड़क। मार्ग (को०)। ८. बादल (को०)।

व्रजक—संज्ञा पुं० [सं०] भिक्षा के निमित्त भ्रमणशील संन्यासी [को०]।

व्रजकिशोर—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण [को०]।

व्रजन—संज्ञा पुं० [सं०] १. चलना। जाना। गमन। २. निर्वासन। देशनिकाला (को०)। ३. मार्ग। सड़क (को०)। ४. आकाश (को०)। ५. अजामीढ़ के एक पुत्र का नाम (को०)।

व्रजनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजपर्यग्र—संज्ञा पुं० [सं०] पशुओं की गणना।

विशेष—चंद्रगुप्त के समय में अध्यक्ष को राजकीय पशुओं की पूरे निशान आदि के साथ बही में गिनती रखनी पड़ती थी।

व्रजभाषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मथुरा, आगरा, इटावा और इनके आसपास के प्रदेशों मे बोली जानेवाली एक प्रसिद्ध भाषा, जिसकी उत्पत्ति शौरसेनी प्राकृत से हुई है। उक्त जिलों के पश्चिम या दक्षिण में यही राजस्थानी का रूप धारण कर लेती है।

विशेष—इस भाषा का प्राचीन साहित्य बहुत उच्च और बड़ा है और इधर चार पाँच सौ वर्षों में उत्तर भारत के अधिकांश कवियों ने प्रायः इसी भाषा में कविताएँ की हैं, जिनमें से सूर, तुलसी, बिहारी आदि अनेक कवियों ने तो बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है। यह भाषा बहुत ही कर्णमधुर मानी जाती है। खड़ी बोली में जो संज्ञाएँ, विशेषण और भूतकृदंत आदि आकारांत होते हैं, वे इस भाषा में प्रायः ओकारांत हो जाते हैं। और कारकचिह्न भी प्रायः ओकारांत ही होते हैं। जैसे,—घोड़ो, चल्यो, को. सों, मों आदि। इसके कारकचिह्न निज के हैं, जो न खड़ी बोली में मिलते हैं और न अवधी में। भाषाविज्ञान की दृष्टि से यह भाषा अंतरंग समुदाय की सब भाषाओं में मुख्य मानी जाती है।

व्रजभू^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रजमंडल की भूमि [को०]।

व्रजभू^{२}—संज्ञा पुं० एक प्रकार का कदंब [को०]।

व्रजभू^{३}—वि० व्रज में होनेवाला [को०]।

व्रजभूमिक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन भारत में धर्म महामात्र का एक पद। उ०—ये धर्म महामात्र कई प्रकार के थे, स्त्री-अध्यक्ष-महामात्र, व्रजभूमिक, अंतमहामात्र आदि।—प्रा० भा०, पृ० २५२।

व्रजमंडल—संज्ञा पुं० [सं० व्रजमण्डल] व्रज और उसके आस पास का प्रदेश।

व्रजमोहन—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजयुवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोपिका [को०]।

व्रजराज—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीकृष्ण। नंद महर। २. नंदजी। उ०—कुँवर कन्हाई दृगनि सुखदाई नखसिख मनि गननि अलंकृत राजत श्री व्रजराज के निकट।—घनानंद, पृ० ५५६।

व्रजरामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रज की गोपी [को०]।

व्रजलाल—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजलीला—संज्ञा स्त्री० [सं०] कृष्णलीला। व्रज में की गई कृष्ण भगवान् की लीला। उ०—सो इनकी जा प्रकार व्रजलीला में प्राप्ति भई सो ऊपर कहि आए हैं।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० ८९।

व्रजवधू, व्रजवनिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोपी [को०]।

व्रजवर—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण [को०]।

व्रजवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजवीर (पु)—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजसान—संज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य [को०]।

व्रजसुंदरी—संज्ञा स्त्री० [सं० व्रजसुन्दरी] गोपी [को०]।

व्रजस्त्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोपी [को०]।

व्रजस्पति—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रजांगन—संज्ञा पुं० [सं० व्रजाङ्गन] गोशाला। गोष्ठ [को०]।

व्रजांगना—संज्ञा स्त्री० [सं० व्रजाङ्गना] गोपिका। व्रजवनिता।

व्रजाजिर—संज्ञा पुं० [सं०] गोष्ठ। गोशाला [को०]।

व्रजावास—संज्ञा पुं० [सं०] गोपों की बस्ती। ग्वालों का गाँव [को०]।

व्रजित^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] गमन। जाना। घूमना [को०]।

व्रजित^{२}—वि० गत। प्रस्थित। गया हुआ [को०]।

व्रजी—वि० [सं० व्रजिन] समूह के रूप में एकत्र [को०]।

व्रजेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० व्रजेन्द्र] १. नंदराय। २. श्रीकृष्ण।

व्रजेश—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण। व्रजेंद्र [को०]।

व्रजेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

व्रज्य—वि० [सं०] गोशाला या गोष्ठ से संबंधित [को०]।

व्रज्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. घूमना। फिरना। पर्यटन। प्रव्रजन। उ०—सुरलोक जहाँ नगण्य है वह व्रज्या व्रत धन्य धन्य है।—साकेत, पृ० ३५८। २. गमन। जाना। ३. आक्रमण। चढ़ाई। ४. एक ही तरह की बहुत सी चीजें एक जगह एकत्र करना। ५. दल। ६. रंगभूमि। नाट्यशाला। ७. जाति। वर्ग श्रेणी (को०)।

व्रण—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर में होनेवाला फोड़ा। २. घाव। जख्म। चोट (को०)। ३. अस्थिभंग (को०)। ४. दाग। छिद्र। रंध्र (को०)।

यौ०—व्रणकृत्। व्रणकेतुघ्नी = दुग्धफेनी नाम का पौधा। व्रणग्रंथि। व्रणचिंतक। व्रणजिता। व्रणद्विट् = (१) ब्राह्मणयष्टिका नाम का क्षुप। (२) व्रण का शत्रु। जिससे घाव ठीक हो जाय। व्रणधूपन = चिकित्सार्थ व्रण को भाप से उपचार। व्रण का वाष्प द्वारा उपचार करना। व्रणपट्ट, व्रणपट्टक, व्रणपट्टिका = घाव बाँधने का चीर या पट्टी। व्रणभृत् = चोटैल। आहत। व्रणयुक्त = जिसे घाव लगा हो। फोड़े आदि से युक्त। व्रणरोपण। व्रणवास्तु। व्रणविरोपण = दे० 'व्रणरोपण'। व्रणशोधन। व्रणशोथ। व्रणशोषी = घाव, फोड़ा आदि के कारण दुर्बल या क्षीण होनेवाला। व्रणसंरोहण = दे० 'व्रणरोहण'। व्रणह। व्रणहा। व्रणहृत्।

व्रणकृत्[1]—संज्ञा पुं० [सं०] भिलावाँ।

व्रणकृत्[2]—वि० १. घाव करनेवाला। २. खुरचनेवाला। धीरे धीरे क्षय करनेवाला [को०]।

व्रणग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० व्रणग्रन्थि] वह गाँठ जो फोड़े के ऊपर हो जाती है। वैद्यक में इसकी गणना रोगों में होती है।

व्रणचिंतक—संज्ञा पुं० [सं० व्रणचिन्तक] शल्यक्रिया या चीरफाड़ करनेवाला जर्राह [को०]।

व्रणजिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोरखमुंडी।

व्रणन—संज्ञा पुं० [सं०] बेधन। भेदना। व्रण करना [को०]।

व्रणरोपण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैद्यक के अनुसार फोड़े में से दूषित मांस आदि निकल जाने पर ऐसी क्रिया करना जिससे वह भर जाय। फोड़े का घाव भरने की क्रिया। २. वह औषध जिससे क्षत या फोड़ा ठीक हो जाय।

व्रणवास्तु—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ फोड़ा हो [को०]।

व्रणशोधन—संज्ञा पुं० [सं०] कमीला।

व्रणशोथ—संज्ञा पुं० [सं०] फोड़े या घाव में होनेवाली वह सूजन जिसके साथ में पीड़ा भी हो।

व्रणह—संज्ञा पुं० [सं०] रेंड़ का वृक्ष।

व्रणहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुडुच।

व्रणहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] कलिहारी या कलियारी नामक पेड़।

व्रणायाम—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का वातरोग जिसमें मर्मस्थान के फोड़े में सारे शरीर की वायु एकत्र होकर व्याप्त हो जाती है। यह रोग असाध्य माना जाता है।

व्रणारि—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाल नामक गंधद्रव्य। २. अगस्त नामक वृक्ष।

व्रणित—वि० [सं०] व्रणयुक्त। आहत। घायल [को०]।

व्रणिल—वि० [सं०] (वृक्ष) जिसे क्षति पहुँची हो। काटा हुआ। छिन्न [को०]।

व्रणी—संज्ञा पुं० [सं० व्रणिन्] वह जिसे व्रण हुआ हो। व्रण का रोगी।

व्रणीय—वि० [सं०] व्रण संबंधी। व्रण या फोड़े का।

व्रण्य—वि० [सं०] फोड़े को अच्छा करनेवाला [को०]।

व्रत—संज्ञा पुं० [सं०] १. भोजन करना। भक्षण। खाना। २. किसी पुण्य तिथि को अथवा पुण्य की प्राप्ति के विचार से नियमपूर्वक उपवास करना।

विशेष—प्रायः हिंदू लोग या तो व्रत के दिन कुछ नहीं खाते, या केवल फल खाते हैं और या केवल कोई एक विशिष्ट पदार्थ खाकर रहते हैं। साधारणतः प्रत्येक एकादशी को जो व्रत किया जाता है, उसमें लोग केवल फल ही खाते हैं, पर प्रदोष आदि के व्रत में अन्न भी खाया करते हैं। कुछ विशिष्ट तिथियों के व्रत भी विशिष्ट हुआ करते हैं। जैसे—निर्जला एकादशी के व्रत में जल तक न ग्रहण करने का विधान है। कुछ विशिष्ट वारों को उनके देवताओं के उद्देश्य से भी व्रत किया जाता है। कुछ व्रत ऐसे भी होते हैं जो कई कई दिनों बल्कि महीनों तक चलते हैं। जैसे,—चांद्रायण, चातुर्मास्य व्रत आदि। कुछ बड़े बड़े ऐसे भी व्रत होते हैं जिनके अंत अथवा दूसरे दिन विशेष विधानपूर्वक पारण किया जाता है। कुछ व्रत ऐसे भी हैं जिनका विधान केवल स्त्रियों के लिये है। जैसे,—जीवपुत्री (जीवत्पुत्रिका) या हरितालिका व्रत। व्रत के एक दिन पहले से ही लोग कुछ विशेष आचारपूर्वक रहते हैं।

क्रि० प्र०—करना।—रखना।

३. कोई काम करने अथवा न करने का नियमपूर्वक दृढ़ निश्चय। किसी बात का पक्का संकल्प। जैसे,—ब्रह्मचर्य व्रत, पातिव्रत, पत्नीव्रत। उ०—किस व्रत में है व्रती वीर यह निद्रा का यों त्याग किए।—पंचवटी, पृ०, ६। ४. धार्मिक अनुष्ठान। धार्मिक नियम संयम आदि (को०)। ५. जीवनचर्या। आचरण। चालचलन (को०)। ६. विधि। विधान। नियम (को०)। ७. यज्ञ (को०)। ८. कर्म। कर्तव्य (को०)। ९. योजना (को०)। १०. मानसिक स्फूर्ति (को०)। ११. कामोद्य। ब्रह्मचर्य (को०)। १२. एक ही प्रकार के भोजन का अभ्यास (को०)। १३. दुग्धाहार (को०)।

व्रतग्रहण—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी धार्मिक अनुष्ठान को करने के लिये संकल्प लेना। २. संन्यास लेना [को०]।

व्रतचर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी प्रकार का व्रत करने या रहने का काम।

व्रतचारिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रतचारी होने का भाव या धर्म।

व्रतचारी—संज्ञा पुं० [सं० व्रतचारिन्] वह जो किसी प्रकार के व्रत का आचरण या अनुष्ठान करता हो। व्रत करनेवाला।

व्रतति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विस्तार। २. लता। उ०—डोलने लगी मधुर मधुवात, हिला तृण, व्रतति कुंज, तरु पात।—गुंजन, पृ० ४७।

यौ०—व्रततिवलय = (१) लताओं का कंकण। (२) लताओं का घेरा वा आवेष्टन।

व्रतती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विस्तार। फैलाव। २. लता।

व्रतदंडी—संज्ञा पुं० [सं० व्रतदण्डिन्] वह जो दंडधारण का व्रत पालन करता हो।

व्रतदान—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत के निमित्त किया हुआ दान। वह दान जो व्रत सबंधी हो [को०]।

व्रतधर—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने किसी प्रकार का व्रत धारण किया हो। व्रत करनेवाला।

व्रतधारण—संज्ञा पुं० [सं०] किसी धार्मिक अनुष्ठान को विधिवत् करना या विधिवत् व्रत रखना [को०]।

व्रतपक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. भाद्रपद मास का शुक्लपक्ष। २. एक प्रकार का साम।

व्रतपारण—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० व्रतपारणा] व्रत या उपवास की विधिवत् समाप्ति [को०]।

व्रतप्रतिष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी व्रत की प्रतिष्ठा करना। व्रत का पालन करना [को०]।

व्रतबंध—संज्ञा पुं० [सं० व्रत+बन्ध] यज्ञोपवीत। जनेऊ। उ०—सुदिन सोधि मंगल किए, दिए भूप व्रतबंध।—तुलसी ग्रं० पृ० ८२।

व्रतभंग—संज्ञा पुं० [सं० व्रतभङ्ग] व्रत, नियम वा प्रतिज्ञा का टूट जाना [को०]।

व्रतभिक्षा—संज्ञा पुं० [सं०] वह भिक्षा जो बालक को यज्ञोपवीत के समय माँगनी पड़ती है।

व्रतरुचि—वि० [सं०] व्रत में आनंद लेनेवाला [को०]।

व्रतलुप्त—वि० [सं०] अपना व्रत तोड़नेवाला [को०]।

व्रतलोपन—संज्ञा पुं० [सं०] व्रतभंग [को०]।

व्रतविसर्ग, व्रतविसर्जन—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत की समाप्ति।

व्रतवैकल्य—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत पूरा न होना।

व्रतसंग्रह—संज्ञा पुं० [सं० व्रतसङ्ग्रह] वह दीक्षा जो यज्ञोपवीत के समय गुरु से ली जाती है।

व्रतसंपादन—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत पूरा करना [को०]।

व्रतसंरक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] व्रतपालन [को०]।

व्रतसमापन—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत पूरा होना। व्रतसंपादन [को०]।

व्रतस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने किसी प्रकार व्रत धारण किया हो। २. ब्रह्मचारी।

व्रतस्नात—वि० [सं०] व्रत पूरा करने के बाद स्नान करनेवाला [को०]।

व्रतस्नातक—संज्ञा पुं० [सं०] तीन प्रकार के ब्रह्मचारियों में से एक प्रकार का ब्रह्मचारी। वह ब्रह्मचारी जिसने गुरु के यहाँ रहकर व्रत को समाप्त कर लिया हो पर बिना वेद समाप्त किए ही घर लौट आया हो।

व्रतस्नान—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्नान जो व्रतसमाप्ति के बाद किया जाता है [को०]।

व्रतहानि—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रत का त्याग करना। व्रत छोड़ देना [को०]।

व्रताचरण—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत का पालन [को०]।

व्रताचारी—वि० [सं० व्रताचारिन्] व्रत का पालन करनेवाला [को०]।

व्रतादान—संज्ञा पुं० [सं०] कोई व्रत ग्रहण करना। व्रत लेना [को०]।

व्रतादेश—संज्ञा पुं० [सं०] उपनयन नामक संस्कार। यज्ञोपवीत।

व्रतादेशन—संज्ञा पुं० [सं०] वेदों का वह उपदेश जो उपनयन संस्कार के बाद ब्रह्मचारी को दिया जाता है।

व्रतापत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रत छोड़ना। व्रत का त्यागना [को०]।

व्रतिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने किसी प्रकार का व्रत धारण किया हो। व्रत का आचरण करनेवाला। २. ब्रह्मचारी (को०)। ३. संन्यासी (को०)। ४. यजमान (को०)।

व्रतिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] तपस्विनी [को०]।

व्रती—संज्ञा पुं० [सं० व्रतिन्] १. वह जिसने किसी प्रकार का व्रत धारण किया हो। व्रत का आचरण करनेवाला। २. वह जो यज्ञ आदि करता हो। यजमान। ३. ब्रह्मचारी। ४. एक प्राचीन ऋषि का नाम। ५. संन्यासी (को०)।

व्रतेयु—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार रौद्राश्व के एक पुत्र का नाम।

व्रतेश—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

व्रतोपनयन—संज्ञा पुं० [सं०] यज्ञोपवीत संस्कार [को०]।

व्रतोपवास—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत के निमित्त किया जानेवाला उपवास। व्रत सबंधी उपवास [को०]।

व्रतोपायन—संज्ञा पुं० [सं०] व्रत का प्रारंभ [को०]।

व्रतोपोह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

व्रत्तामन(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० वर्तमान] दे० 'वर्त्तमान'। उ०—भूतह भविष्य अरु व्रत्तामन इह अपुब मे कथ सुनिय।—पृ० रा०, २४१४।

व्रत्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने किसी प्रकार का व्रत धारण किया हो। २. ब्रह्मचारी। ३. व्रत के उपयुक्त आहार (को०)।

व्रध्न—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'ब्रध्न' [को०]।

व्रम्म(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० ब्रह्मा, प्रा० व्रम्म] दे० 'ब्रह्मा'। उ०—गंगा व्रम्म कमंडली, पावनता विणपार।—बाँकी० ग्रं०, भा० २, पृ० ११५।

व्रश्चन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोना, चाँदी आदि काटने की छेनी। २. वह बुरादा जो लकड़ी आदि चीरने पर गिरता है। ३. कुल्हाड़ी। ४. छेदने या काटने की क्रिया। ५. छोटी आरी (को०)। ६. पेड़ में छेद करने से उसमें से निकलनेवाला निर्यास (को०)।

व्रश्चन²—वि० काटनेवाला। जिससे काटा जाय या जो काट सके।

व्रहासन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० ब्रह्म, अप० ब्रह (ब्रह्म = अर्थात् देवता) + अशन (= भोजन) या सं० वर्ह (= श्रेष्ठ, अग्र) + अशन (= भोजन)] दे० 'अग्राशन'। उ०—किय भोजन सब सथ्य व्रहासन ग्रास दिय।—पृ० रा०, ६१।१६३।

व्रह्म—संज्ञा पुं० [सं० ब्रह्मन्] दे० 'ब्रह्म'।

व्रह्मपुर—संज्ञा पुं० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम।—बृहत्०, पृ० ८६।

व्रह्ममणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार एक रत्न का नाम।—बृहत्०, पृ० ३७७।

व्रह्मानंद—संज्ञा पुं० [सं० ब्रह्मानन्द] दे० 'ब्रह्मास्वाद'। उ०—इसका आस्वाद ब्रह्मानंद के समान होता है।—रस० क०, पृ० ३३।

व्रह्मास्वाद—संज्ञा पुं० [सं० ब्रह्मास्वाद] ब्रह्मसाक्षात्कार करने का आनंद।

व्राचट, व्राचड—संज्ञा स्त्री० [अप०] १. अपभ्रंश भाषा का एक भेद जिसका व्यवहार आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक सिंध प्रांत में था। २. पैशाचिका भाषा का एक भेद।

व्राज—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता। २. दल। समूह। ३. जाना। गमन। ४. कुक्कुट। मुर्गा (को०)।

व्राजपति—संज्ञा पुं० [सं०] दल या समूह का नायक।

व्राजि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बवंडर। तूफान। आँधी (को०)।

व्राजक—संज्ञा पुं० [सं०] संन्यासियों का एक व्रतोपवास जिसमें वे केवल दूध पीते हैं (को०)।

व्रात—संज्ञा पुं० [सं०] १. दल। समूह। २. मनुष्य। आदमी। ३. वह परिश्रम जो जीविका के लिये किया जाय। ४. वह जिसका कोई निश्चित वृत्ति न हो या जो चोरी, डाके से निर्वाह करता हो। जरायम पेशा। दुर्जीवी। ५. बराती (को०)। ६. दैनिक मजदूरी। ७. यदाकदा कार्य में नियुक्त (को०)। ७. जातिच्युत ब्राह्मण की संतति (को०)।

व्रातजाति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दल के रूप में इधर उधर रहनेवाली जाति (को०)।

व्रातजीवन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शारीरिक परिश्रम करके अपना निर्वाह करता हो।

व्रातपति—संज्ञा पुं० [सं०] किसी समूह या संघ का अध्यक्ष (को०)।

व्रातिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धार्मिक कृत्य (को०)।

व्रातीन—वि० [सं०] १. श्रमजीवी मजदूर। २. लूट मार करनेवाला। जो लूटमार द्वारा जीविकार्जन करता हो। ३. संघबद्ध होकर रोजी कमानेवाला (को०)।

व्रात्य¹—वि० [सं०] व्रत संबंधी। व्रत का।

व्रात्य²—संज्ञा पुं० १. वह जिसके दस संस्कार न हुए हों। संस्कारहीन। उ०—अथर्ववेद में मगध के निवासियों को व्रात्य कहा गया है।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ९६। २. वह जिसका उपनयन या यज्ञोपवीत संस्कार न हुआ हो।

विशेष—ऐसा मनुष्य पतित और अनार्य समझा जाता है और उसे वैदिक कृत्य आदि करने का अधिकार नहीं होता। शास्त्रों में ऐसे व्यक्ति के लिये प्रायश्चित्त का विधान किया गया है। प्राचीन वैदिक काल में 'व्रात्य' शब्द प्रायः परब्रह्म का वाचक माना जाता था; और अथर्ववेद में 'व्रात्य' की बहुत अधिक महिमा कही गई है। उसमें वह वैदिक कार्यों का अधिकारी, देवप्रिय, ब्राह्मणों और क्षत्रियों का पूज्य, यहाँ तक की स्वयं देवाधिदेव कहा गया है। परंतु परवर्ती काल में यह शब्द संस्कारभ्रष्ट, पतित और निकृष्ट व्यक्ति का वाचक हो गया है।

३. नीच या बदमाश व्यक्ति। ४. वह मनुष्य जो असवर्ण माता पिता से उत्पन्न हो। दोगला। वर्णसंकर।

यौ०—व्रात्यगण = इधर उधर घूमनेवाली जाति या वर्ग। व्रात्यचर्या = नीचतापूर्ण आचार व्यवहार। व्रात्यों का सा रहन सहन। खानाबदोश व्यक्ति का आचार विचार। व्रात्यब्रुव = वह व्यक्ति जो अपने को व्रात्य कहता हो। व्रात्ययज्ञ = एक प्रकार का यज्ञ। व्रात्ययाजक। व्रात्यस्तोम।

व्रात्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रात्य का भाव या धर्म। व्रात्यत्व।

व्रात्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] व्रात्य का भाव या धर्म। व्रात्यता।

व्रात्ययाजक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो व्रात्यों का यज्ञ कराता हो।

व्रात्यस्तोम—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का यज्ञ जो व्रात्य या संस्कारहीन लोग किया करते थे।

व्रात्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्रात्य की कन्या। जातिच्युत व्यक्ति की कन्या (को०)।

व्रिद†—संज्ञा पुं० [सं० विरद] विरद। सुजस। उ०—मंछ कीव कहैं पुन सरन सधार व्रिद याहि ते सरन लयो रावरे चरन को।—रघु० रू०, पृ० २८५।

व्राखो†—संज्ञा पुं० [देश०] कदम। डग। उ०—भागां लार भरंतनह, व्राखां वाकड़ियांह।—बाँकी० ग्रं०, भा० १, पृ० २८।

व्रीड—संज्ञा पुं० [सं०] लज्जा। शरम।

व्रीडन—संज्ञा पुं० [सं०] १. लज्जा। शर्म। हया। २. शिष्टता। विनम्रता। ३. निम्नता। अवनति। अपकर्ष (को०)।

व्रीडा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लज्जा। शरम। २. नम्रता। शिष्टता। संकोच (को०)।

यौ०—व्रीडानत, व्रीडान्वित = (१) विनम्र। लज्जित। संकुचित। व्रीडादान = नम्रता के कारण मिलनेवाला पुरस्कार।

व्रीध(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० वृद्धि] दे० 'वृद्धि'। उ०—वांका हरख न व्रीध सूं हाण हुवां नँह सोक। हरि संताप दिया हिए तिणनूं दीध त्रिलोक।—बाँकी० ग्रं०, भा० ३, पृ० ६३।

व्रीडित¹—वि० [सं०] लज्जित। शर्मिंदा। २. विनीत। नम्र (को०)।

व्रीडित[2]—संज्ञा पुं० १. लज्जा। शर्म। २. विनय। नम्रता [को०]।

व्रील—संज्ञा पुं० [सं०] लज्जा। शरम [को०]।

व्रीलस—वि० [सं०] लज्जित [को०]।

व्रीहि—संज्ञा पुं० [सं०] १. धान। २. चावल। ३. अन्न (को०)। ४. धान का खेत (को०)। ५. चावल का बीज या दाना (को०)।

व्रीहिक—वि० [सं०] १. जिसके पास धान हो। २. धान रोपनेवाला [को०]।

व्रीहिकांचन—संज्ञा पुं० [सं० व्रीहिकाञ्चन] मसूर।

व्रीहितुंदिका—संज्ञा स्त्री० [सं० व्रीहितुन्दिका] देवधान्य।

व्रीहिद्रोण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गुल्म।

व्रीहिपार्णिका—संज्ञा संज्ञा [सं०] शालिपर्णी।

व्रीहिपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शालिपर्णी [को०]।

व्रीहिभेद—संज्ञा पुं० [सं०] चेना धान।

व्रीहिमय—संज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ में आहुति के लिये निर्मित चावल का खोर। पुरोडाश [को०]।

व्रीहिमुख—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र जिसका व्यवहार शस्त्रचिकित्सा में होता था।

व्रीहिराजिक—संज्ञा पुं० [सं०] चेना धान।

व्रीहिल—वि० [सं०] दे० 'व्रीहिक' [को०]।

व्रीहीवाप—संज्ञा पुं० [सं०] धान की बुवाई। धान रोपना [को०]।

व्रीहिवापी—वि० [सं० व्रीहिवापिन्] धान रोपनेवाला। धान बोनेवाला [को०]।

व्रीहिश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] शालि धान्य।

व्रीही[1]—संज्ञा पुं० [सं० व्रीहिन्] वह खेत जिसमें धान बोया गया हो।

व्रीही[2]—संज्ञा पुं० दे० 'व्रीहि'।

व्रीह्यगार—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ पर बहुत सा धान रखा जाता हो। धान का गोदाम।

व्रीह्यपूप—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का पूआ जो चावल को पीसकर बनाया जाता था।

व्रीह्यागार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'व्रीह्यगार'।

व्रीह्याग्रयण—संज्ञा पुं० [सं०] व्रीहि का अग्रभाग वा अँगौगा [को०]।

व्रीह्युर्वरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह खेत या भूमि जो धान से उर्वर हो। धान का खेत [को०]।

व्रुडित—वि० [सं०] १. डूबा हुआ। निमग्न। २. भूला वा भटका हुआ [को०]।

व्रैह—वि० [सं०] चावल का बना हुआ [को०]।

व्रैहिक—वि० [सं०] धान के साथ उत्पन्न किया हुआ [को०]।

व्रैहेय[1] वि० [सं०] १. जो धान के साथ बोया गया हो। २. धान बोने योग्य [को०]।

व्रैहेय[2] संज्ञा पुं० [सं०] १. धान का खेत। शालि का खेत। धान बोने योग्य भूमि [को०]।

व्लीन—वि० [सं०] १. सँभाला हुआ। सहारा वा भरोसा दिया हुआ। २. कुचला हुआ। पददलित। ३. गया हुआ। निगत। गत [को०]।

व्लेष्क—संज्ञा पुं० [सं०] जाल। फंदा [को०]।

यौ०—व्लेष्कहत = जो फंदे द्वारा हत हो।

व्हाँ—क्रि० वि० [हिं० वहाँ] दे० 'वहाँ'। उ०—चले मजल दर मजल आया बेदर के मिसल। व्हाँ हुई वो नक्कल सो सकल तुम सुनो।—दक्खिनी०, पृ० ४५।

व्हाला†—संज्ञा पुं० [देश०] १. प्यारा। प्रिय। २. ज्वाला। ३. बरसाती नाला। उ०—झमकि पइठा झालि, सुंदरि दोंठा सासविण। जिमि व्हाला विच वाल, प्रिव जाइ मारू नहीं।—ढोला०, दू० ६०४।

व्हिस्की—संज्ञा स्त्री० [अं०] एक अंग्रेजी शराब। उ०—इसके बाद उसने मुझसे पूछा—'कहो, क्या पिओगे? शेरी, शंपेन, व्हिस्की, ब्रांडी या और कोई दूसरा'।—संन्यासी, पृ० २३९।

व्हे—सर्व० [हिं० वह] दे० 'वह'। उ०—पंथ असंदे पूगणा, अलगा घणा अकथ्थ। व्हे विण जाणिया हालणा, संबल (जा) विण सथ्थ।—बाँकी० ग्रं०, भा० २, पृ० ४५।

श

श—हिंदी वर्णमाला में व्यंजन का तीसवाँ वर्ण। इसका उच्चारण प्रधानतया तालु की सहायता से होता है, इससे इसे तालव्य श कहते हैं। यह महाप्राण है और इसके उच्चारण में एक प्रकार का घर्षण होता है; इसलिये इसे ऊष्म भी कहते हैं। आभ्यंतर प्रयत्न के विचार से यह ईषत्स्पृष्ट है; और इसमें बाह्य प्रयत्न श्वास और घोष होता है।

शं[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. कल्याण। मंगल। २. सुख। ३. शांति। ४. रोग का अभाव। बाह्य वस्तुओं से वैराग्य। ५. शास्त्र।

शं[2]—वि० शुभ।

शंक[1]—संज्ञा पुं० [सं० शङ्क] १. बैल, जो छकड़ा खींचता है। २. भय। डर। आशंका।

शंक[2]पु[1]—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्का] संदेह। खटका। आशंका।

शंकन—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कन] १. वह जो भयकारक हो। वह जिससे संत्रात या विस्मयाकुल हो। २. भय, शंका या संदेह उत्पन्न करने की क्रिया।

शंकना पु[1]—क्रि० अ० [सं० शङ्का या शङ्कन] १. शंका करना। २. भय करना। डरना। उ०—(क) सींसति शोक चलीं, डरपैंहु ते किंकर से करनी मुख मोर।—तुलसी (शब्द०)। (ख) शंक्यो शंभु शैलजा समेत देत मेरी शैल शक्र देत हो सुशंक्यो सुरपाल है।—भक्तमाल (शब्द०)।

शंकनीय—[सं० शङ्कनीय] १. शंका करने योग्य। संदेहास्पद। २. भय के योग्य। ३. अनुमान के योग्य। जिसका अनुमान किया जा सके।

शंकर[1]—वि० [सं० शङ्कर] १. मंगल करनेवाला। २. शुभ। ३. लाभदायक।

शंकर^१—संज्ञा पुं० १. शिव का एक नाम जो कल्याण करनेवाले माने जाते हैं। महादेव। शंभु।

यौ०- शंकर की लकड़ी = कहारों की परिभाषा में ऊख।

विशेष—जब कहार पालकी लेकर चलते हैं और रास्ते में उन्हें ऊख पड़ी हुई मिलती है, तब आगेवाला कहार पीछेवाले कहार को सचेत करने के लिये इस पद का प्रयोग करता है।

२. दे० 'शंकराचार्य'। ३. भीमसेनी कपूर। ४. कबूतर। ५. एक छंद का नाम जिसके प्रत्येक चरण में १६ और १० के विश्राम से २६ मात्राएँ होती हैं और अंत में गुरु लघु होता है। ६. एक राग जो मेघ राग का आठवाँ पुत्र कहा गया है।

विशेष—कहते हैं कि इसका रंग गोरा है; श्वेत वस्त्र धारण किए हुए है; तीक्ष्ण त्रिशूल इसके हाथ में है; पान खाए और अरगजा लगाए स्त्री के साथ विहार करता है। शास्त्रों में यह संपूर्ण जाति का कहा गया है। रात्रि का प्रथम पहर इसके गाने का समय है; और यों रात्रि में किसी समय गाया जा सकता है।

शंकर^२—संज्ञा पुं० [सं० सङ्कर] दे० 'संकर' उ०—शंकर बरण पशु पच्छी में ही पाइयत अलकही पारत अरु भंग निरधारही।—गुमान (शब्द०)।

शंकर का फूल—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कर + हिं० फूल] शंखोदरी। गुलपरी।

शंकरकिंकर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करकिङ्कर] शंकर का दास। शिवभक्त।

शंकरचूर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करचूर (< सं० चूड = चूडा)] एक प्रकार का सर्प।

विशेष—कहते हैं, इसकी उत्पत्ति पातराज और दूधराज सर्प के जोड़े से होती है। यह कभी कभी ९, १० हाथ लंबा होता है। इसके जहर के दाँत बड़े होते हैं, इसी से इसका काटना सांघातिक होता है, यह बहुत कम देखने में आता है और वंग देश में केवल सुंदरवन में होता है। यह बहुत ही भयंकर होता और इसका पकड़ना बड़ा कठिन है।

शंकरजटा— संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्करजटा] १. रुद्रजटा। जटाधारी नाम का पौधा। २. सागूदाना। साबूदाना। ३. एक प्रकार की पिठवन।

शंकरताल—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करताल] संगीत में एक प्रकार का ताल। इसमें ११ मात्राएँ होती हैं। इसमें ९ आघात और २ खाली होते हैं। इसके मृदंग की बोल इस प्रकार है—

+ १ ० २ ३ ४ ० 2
धा धिन ता देत खून्ना केटे ताग धाधिन ता, देत खून्ना तेंदे केटे
६ ७ ८ +
नाग् देत तेंटे कता गदि धेने। धा।

शंकरतीर्थ संज्ञा पुं० [सं० शङ्करतीर्थ] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

शंकरप्रिय—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करप्रिय] १. तीतर पच्छी। २. धतूरा। ३. गूमा। द्रोणपुष्पी। गोम।

शंकरमत्त—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करमत्त] एक प्रकार का लोहा जिसे शंकरलोह भी कहते हैं।

शंकरवाणी—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्करवाणी] शंकर का वाक्य अर्थात् ब्रह्मवाक्य जिसका सत्य होना परम निश्चित माना जाता है। सदा ठीक घटनेवाली बात।

शंकरशुक्र—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करशुक्र] पारा। पारद।

शंकरशैल—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करशैल] महादेव जी का पर्वत, कैलास। उ०—शंकरशैल शिला तल मध्य किधौं शुक की अवली फिरि आई।—केशव (शब्द०)। (ख) शंकरशैल चढ़ी मन मोहति। सिद्धन की तनया जनु सोहति।—केशव (शब्द०)।

शंकरश्वशुर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करश्वशुर] हिमवान् पर्वत।

शंकरस्वामी—संज्ञा पुं० [शङ्करस्वामिन्] दे० 'शंकराचार्य'।

शंकरा^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कर] १. एक प्रकार का राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। यह दीपक राग का पुत्र माना जाता है। विशेष दे० 'शंकर'-७. और 'शंकराभरण'। २. शमी। सफेद कीकर। ३. मजीठ। ४. शिवा। भवानी। पार्वती।

शंकरा^{२}—वि० स्त्री० [सं० शङ्करा] कल्याण करनेवाली। मंगल करनेवाली।

शंकराचारी—संज्ञा पुं०, वि० [सं० शङ्कराचारिन्] श्रीशंकराचार्य द्वारा संस्थापित शैव धर्म का अनुयायी।

शंकराचार्य -संज्ञा पुं० [सं०] अद्वैत मत के प्रवर्तक एक प्रसिद्ध शैव आचार्य।

विशेष—इनका जन्म सन् ७८८ ई० में केरल देश में कालपी अथवा काषल नामक ग्राम में नंबूदरीपाद ब्राह्मण के घर हुआ था; और ये ३२ वर्ष की अल्प आयु में सन् ८२० ई० में केदारनाथ के समीप स्वर्गवासी हुए थे। इनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का नाम सुभद्रा था। बहुत दिनों तक सपत्नीक शिव की आराधना करने के अनंतर शिवगुरु ने पुत्ररत्न पाया था, अतः उसका नाम शंकर रखा। जब ये तीन ही वर्ष के थे, तब इनके पिता का देहांत हो गया था। ये बड़े ही मेधावी तथा प्रतिभाशाली थे। छह् वर्ष की अवस्था में ही ये प्रकांड पंडित हो गए थे और आठ वर्ष की अवस्था में इन्होंने संन्यास ग्रहण किया था। इनके संन्यास ग्रहण करने के समय की कथा बड़ी विचित्र है। कहते हैं, माता अपने एकमात्र पुत्र को संन्यासी बनने की आज्ञा नहीं देती थी। एक दिन जब शंकर अपनी माता के साथ किसी आत्मीय के यहाँ से लौट रहे थे, तब नदी पार करने के लिये वे उसमें घुसे। गले भर पानी में पहुँचकर इन्होंने माता को संन्यास ग्रहण करने की आज्ञा न देने पर डूब मरने की धमकी दी। इससे भयभीत होकर माता ने तुरंत इन्हें संन्यासी होन की आज्ञा प्रदान की और इन्होंने गोविंद स्वामी से संन्यास ग्रहण किया।

शंकराचार्य ने ब्रह्मसूत्रों की बड़ी ही विशद और रोचक व्याख्या की है। पहले ये कुछ दिनों तक काशी में रहे थे और तब इन्होंने विजिलविंदु के तालवन में मंडन मिश्र को सपत्नीक

शास्त्रार्थ में परास्त किया। इन्होंने समस्त भारतवर्ष में भ्रमण करके बौद्ध धर्म को मिथ्या प्रमाणित करके वैदिक धर्म को पुनरुज्जीवित किया था। उपनिषदों और वेदांतसूत्र पर लिखी हुई इनकी टीकाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। इन्होंने भारतवर्ष में चार मठों की स्थापना की थी जो अभी तक बहुत प्रसिद्ध और पवित्र माने जाते हैं और जिनके प्रबंधक तथा गद्दी के अधिकारी शंकराचार्य कहे जाते हैं। वे चारों स्थान निम्नलिखित हैं—(१) बद्रिकाश्रम, (२) करवीरपीठ, (३) द्वारिकापीठ और (४) शारदापीठ। इन्होंने अनेक विधर्मियों को भी अपने धर्म में दीक्षित किया था। ये शंकर के अवतार माने जाते हैं।

शंकरादि—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करादि] सफेद आक। सफेद मदार।

शंकराभरण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कराभरण] संपूर्ण जाति का एक प्रकार का राग जो नटनारायण राग का पुत्र माना जाता है। इसके गाने का समय प्रभात है, और किसी किसी के मत से सायंकाल में १६ दंड से २० दंड तक भी गाया जा सकता है।. उ०—गाऊँ कैसे शंकराभरण, दरसाऊँ कैसे स्वर लक्षण।—क्वासि, पृ० ७३।

शंकरालय—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करालय] कैलास।

शंकरावास—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करावास] १. कैलास। २. कपूर (को०)।

शंकरावास कर्पूर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्करावास कर्पूर] भीमसेनी कपूर। बरास।

शंकराह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कराह्वा] शमी का वृक्ष।

शंकरी¹—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्करी] १. शिव की पत्नी पार्वती। २. मंजिष्ठा। मजीठ। ३. शमी का वृक्ष। ४ एक रागिनी जो मालकोश राग की सहचरी मानी जाती है।

शंकरी²—वि० कल्याण करनेवाली। मंगल करनेवाली।

शंकर्षण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कर्षण] १. विष्णु का एक नाम। २. रोहिणी के पुत्र का नाम। दे० 'संकर्षण।

शंकव—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कव] सकुची मछली। विशेष दे० 'सकुची'।

शंकव्य—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कव्य] १. वह वस्तु जो शंकु या कील के योग्य हो। जैसे, काष्ठ आदि। २. वह जिसके संबंध में शंका या संदेह किया जा सके [को०]।

शंका—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्का] १. मन में होनेवाला अनिष्ट का भय। डर। खौफ। खटक। उ०—(क) टेढ़ जान शंका सब काहू। वक्र चंद्रमहि ग्रसै न राहू।—तुलसी (शब्द०)। (ख) शंका है दशानन को हंका दै सुबंका बीर, डंका दै विजय को कपि कूद परयो लंका में।—पद्माकर (शब्द०)। २. किसी विषय की सत्यता या असत्यता के संबंध में होनवाला संदेह। आशंका। संशय। शक। उ०—(क) नृप विलोकि शंका उपजावा। सजल नयन मुख बचन न आवा।—सबल (शब्द०)। (ख) तुमहि वरण चाहत हौं आपहि। पै हिडंब शंका मन आवहि।—सबल (शब्द०)। ३. साहित्य के अनुसार एक संचारी भाव। अपने किसी अनुचित व्यवहार अथवा किसी और कारण से होनेवाली इष्टहानि की चिंता। ४. भ्रांतविश्वास। मिथ्या धारणा (को०)। ५. तर्कवितर्क या वादविवाद में आपत्ति खड़ा करना (को०)। ६. परिकल्पना। संभावना (को०)।

यौ०—शंकाजनक = संदेह उत्पन्न करनेवाला। शंकानिवारण = संदेह, भय आदि का दूर होना। शंकानिवृत्त = संदेह दूर होना। खटका मिटना। शंकाशंकु = संदेह का काँटा। शंकाशील = प्रत्येक बात में संदेह करनेवाला। शंकालु।

शंका अतिचार—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कातिचार] जैनियों के अनुसार एक प्रकार का पाप या अतिचार जो जिनवचन में शंका करने से होता है।

शंकाकुल—वि० [सं० शङ्काकुल] शंकित। संदेहयुक्त। उ०—लख शंकाकुल हो गए अतुल बल शेषशयन। खिंच गए दृगों में सीता के राममय नयन।—अनामिका, पृ० १२२।

शंकान्वित—वि० [सं० शङ्कान्वित] दे० 'शंकाकुल'।

शंकाभियोग—संज्ञा पुं० [सं० शङ्काभियोग] संदेह वा शंका का दोषारापण [को०]।

शंकालु—वि० [सं० शङ्कालु] जो प्रायः शंका या संदेह करता हो। शंकाशील।

शंकासमाधान—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कासमाधान] शंका या संदेह का निवारण या निराकरण। २. शंका और समाधान। संदेह और उसका निवारण [को०]।

शंकास्पद—वि० [सं० शङ्कास्पद] संदेह, खटका वा भय का विषय [को०]।

शंकित¹—वि०—[सं० शङ्कित] [वि० स्त्री० शंकिता] १. डरा हुआ। भयभीत। त्रस्त। जिसे संदेह हुआ हो। ३. अनिश्चित। संदेहयुक्त। संदिग्ध। उ०—दशन धरि धरनि चिक्करत दिग्गज कमठ, शेष संकुचित, शंकित पिनाकी।—तुलसी (शब्द)। ४. विचलित। अदृढ़। अस्थिर (को०)।

यौ०—शंकितचित्त, शंकितमना = (१) शंकाकुल। संशयालु। (२) भीरु। कातरहृदय। डरपोक। (३) संदिग्ध। शंकितवर्ण। शंकितवर्णक।

शंकित²—संज्ञा पुं० भटेउर या चोरक नाम का गंधद्रव्य।

शंकितवर्ण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कितवर्ण] दे० 'शंकितवर्णक'।

शंकितवर्णक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कितवर्णक] तस्कर। चोर।

शंकिनी—वि० स्त्री० [सं० शङ्किनी] शंकायुक्त। संदेहास्पद। उ०—प्रिये, ठीक कहती हो तुम यह, सदा शंकिनी आशा है।—साकेत, पृ० ३६६। २. संदेह करनेवाली। शंका करनेवाली।

शंकी—वि० [सं० शङ्किन्] [वि० स्त्री० शंकिनी] १. शंका या संदेह करनेवाली। शंका से पूर्ण (को०)। २. खतरनाक।

शंकु—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कु] १. कोई नुकीली वस्तु। २. मेख। कील। ३. खूँटी। ४. भाला। बरछा। ५. गाँसी। फल।

६. लीलावती के अनुसार दस लक्ष कोटि की एक संख्या। शंख। ७. एक प्रकार की मछली। सकुची मछली। ८. कामदेव। ९. शिव। १०. राक्षस। ११. विष। १२. हंस। १३. वल्मीक। बाँबी। १४. कलुष। पाप। १५. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा। १६. बारह अंगुल की एक नाप। १७. बारह अंगुल की एक खूँटी, जिसका व्यवहार प्राचीन काल में सूर्य या दीए की छाया आदि नापने में होता था। १८. वृक्षों में की रस खींचने की शक्ति। १९. गावदुम खंभा जिसके ऊपर का हिस्सा नुकीला और नीचे का मोटा हो। २०. पुराणानुसार उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के नवरत्न पंडितों में से एक। २१. उग्रसेन का एक पुत्र। २२. दाँव। २३. पत्तों की नसें। २४. नखी नामक गंधद्रव्य। २५. लिंग। २६. शिव के अनुचर एक गंधर्व का नाम। २७. कटे हुए वृक्ष का तना। ठूँठ (को०)। २८. बाण का अग्रभाग। तीर की गाँसी (को०)। २९. साल का वृक्ष (को०)। ३०. (ज्योतिष में) लंब रेखा या ऊँचाई (को०)।

शंकुक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुक] १. संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान् जिनका मत रसविवेचन के संबंध में समादृत साहित्यशास्त्रों में है। २. छोटी खूँटी।

शंकुकर्ण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुकर्ण] १. वह जिसके कान शंकु के समान लंबे और नुकीले हों। २. गदहा। ३. एक नाग का नाम।

शंकुकर्णी—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुकर्णिन्] शिव। महादेव।

शंकुचि—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुचि] सकुची मछली।

शंकुच्छाया—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुच्छाया] १. शंकु की छाया। २. प्राचीन काल की बारह अंगुल की एक नुकीली खूँटी जिसका ऊपरी भाग नुकीला होता था। इसकी छाया से समय का परिमाण मालूम किया जाता था।

शंकुजीवा—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुजीवा] ज्योतिष के अनुसार शंकु की ज्या या ज्यापिंड।

शंकुतरु—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुतरु] शाल का वृक्ष। साखू का पेड़।

शंकुद्वार—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुद्वार] गुजरात के समीप के एक छोटे टापू का नाम। यहाँ शंकु नारायण की मूर्ति है।

शंकुधान—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुधान] वह सूराख जिसमें शंकु बैठाई वा जड़ी जाय [को०]।

शंकुनारायण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुनारायण] नारायण की वह मूर्ति जो शंकुद्वार टापू में है।

शंकुपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं० शंङ्कुपुच्छ] भौंरे आदि का डंक [को०]।

शंकुफणी—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुफणिन्] जल में रहनेवाले जंतु। जलचर।

शंकुफलिका, शंकुफली—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुफलिका, शङ्कुफली] सफेद कीकर। शमी।

शंकुमती—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुमती] एक वैदिक छंद जिसके पहले पाद में पाँच और शेष तीनों में छह छह या इससे कुछ न्यूनाधिक वर्ण होते हैं।

शंकुमुख—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुमुख] १. मगर। २. चूहा।

शंकुमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुमुखी] जोंक।

शंकुमूली—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुमूली] अगहन मास के शुक्ल पक्ष का १५वाँ दिन [को०]।

शंकुयंत्र—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुयन्त्र] एक यंत्र जिसके द्वारा सूर्य चंद्र के दिगंश और उन्नतांश का ज्ञान होता है (ज्योतिष)।

शंकुर¹—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुर] पुराणानुसार एक दानव का नाम।

शंकुर²—वि० भयंकर। भीषण।

शंकुला—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुला] १. सुपारी काटने का सरौता। २. एक प्रकार का चाकू या शलाका। उत्पलपत्र। उत्पलपत्रिका (को०)।

शंकुवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कुवृक्ष] शाल का वृक्ष।

शंकुशिर—संज्ञा पुं० [सं० सङ्कुशिरस्] भागवत के अनुसार एक असुर का नाम।

शंकुश्रवण—संज्ञा पुं० [शङ्कुश्रवण] दे० 'शंकुकर्ण'।

शंकोच, शंकोचि—संज्ञा पुं० [सं० शङ्कोच, शङ्कोचि] सकुची मछली।

शंकोशिक—वि० [सं० शङ्कोशिक] नैमित्तिक। (सांख्य)।

शंक्य—वि० [सं० शङ्क्य] दे० 'शंकनीय'।

शंख—संज्ञा पुं० [सं० शङ्ख] १. एक प्रकार का बड़ा घोंघा जो समुद्र में पाया जाता है।

विशेष—इसे एक प्रकार का जलजंतु, जिसे शंख कहते हैं, अपने रहने के लिये तैयार करता है। लोग इस जंतु को मारकर उसका यह कलेवर बजाने के उपयोग में लाते हैं। यह बहुत पवित्र समझा जाता है और देवता आदि के सामने तथा लड़ाई के समय मुँह से फूँककर बजाया जाता है। पुराणों के अनुसार विष्णु भगवान् के चारों हाथों में से एक हाथ में शंख भी रहता है। इसके दो भेद होते हैं। एक दक्षिणावर्त्त और दूसरा वामावर्त्त। इनमें से दक्षिणावर्त्त बहुत कम मिलता है। वैद्यक के अनुसार यह नेत्रों को हितकारी, पित्त, कफ, रुधिरविकार, विषविकार, वायुगोला, शूल, श्वास, अजीर्ण, संग्रहणी और मुँहासे को नष्ट करनेवाला माना गया है। दक्षिणावर्त्त में इससे भी अधिक गुण होते हैं। कहते हैं, जिसके घर में यह रहता है, उसके धन की अधिक वृद्धि होती है। वामावर्त्त ही अधिक मिलता है और यही औषध के काम आता है। जो शंख उज्वल और चमकदार होता है, वह उत्तम समझा जाता है। इसको विधिपूर्वक शुद्ध कर भस्म बनाकर देने से सब प्रकार के ज्वर, सब प्रकार की खाँसी, श्वास, अतिसार आदि रोगों में उचित अनुपान से अत्यंत लाभकारी है। यह स्तंभक और वाजीकरण भी है। इसकी मात्रा चार रत्ती से डेढ़ माशे तक है।

मुहा०—शंख बजना = विजय प्राप्त होना। सफलता मिलना शंख बजाना = (१) सफल होने पर अथवा कृतकार्य होने पर आनंद मनाना। (२) किसी की बुराई या हानि देखकर आनंद मनाना। (३) असफल एवं अकृतकार्य होने पर दुःखी होना। झंखना (व्यंग्य)।

यौ०—शंख का मोती = एक प्रकार का कल्पित मोती। कहते हैं, यह समुद्र के अंतर्गत दुर्गम स्थानों में शंख के अंदर उत्पन्न होता है।

पर्या०—कंबु कंबोज। पावनध्वनि अंतःकुटिल। सुनाद। महानाद। मुखर। बहुनाद। दीर्घनाद। हरिप्रिय।

२. दस खर्व की एक संख्या। एक लाख करोड़। ३. कनपटी। ४. हाथी का गंडस्थल, अथवा दाँतों के बीच का भाग। ५. चरणचिह्न। ६. एक दैत्य का नाम जो देवताओं को जीतकर वेदों को चुरा ले गया था और जिसके हाथों से वेदों का उद्धार करने के लिये भगवान् को मत्स्यावतार धारण करना पड़ा था। शंखासुर ७ नखी नाम का सुगंधित द्रव्य। ८. एक निधि। उ०—शंख खर्व नीलाठए नवई निद्धि जु कुंद। विश्राम (शब्द०)। ९ राजा विराट् का पुत्र जिसे द्रोणाचार्य ने मारा था। इसके भाई का नाम उत्तर था उ०—उत्तर शंख नृपति सुख वीरा। औरा सजे अमित रणधीरा।—सबल (शब्द०)। १० एक राजमंत्री का नाम। उ०—सुरति सुधन्वा जू सों दोष के करत मरे शंख औ लिखित विप्र भयो मैलो मन है।—नाभादास (शब्द०)। ११. कुवेर की निधि के देवता १२. चंपकपुरी के राजा हंसध्वज का उपरोहित और लिखित का भाई जो स्मृतिकार थे। उ०—शंख लिखित उपरोहित दोई। रहे तहाँ जानत सब कोई।—सबल (शब्द०)। १३. धारा नगर के राजा गंधर्वसेन का बड़ा लड़का और राजा विक्रमादित्य का बड़ा भाई जिसे मारकर विक्रम ने गद्दी प्राप्त की थी। १४. छप्पय के ७१ भेदों में से एक भेद। इसमें १५२ मात्राएँ या १४९ वर्ण होते हैं, जिनमें से ३ गुरु और शेष १४६ लघु होते हैं। १५. दंडक वृत्त के अंतर्गत प्रचित का एक भेद। इसमें दो नगण और चौदह रगण होते हैं। १६. कपाल। लिलार। १७ पवन के चलने से होनेवाला शब्द। १८. मस्तक की हड्डी (को०)। १९. सैनिक ढोल या मारू बाजा (को०)। २०. नागो के आठ नायको में से एक का नाम (को०)। २१. शंख का बना हुआ वलय (को०)।

शंखकंद—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खकन्द] शंखालु। साँक।

शंखक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खक] १. वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का असाध्य रोग। शंखवात।

विशेष—इस रोग में बहुत गरमी होती है और त्रिदोष बिगड़ने से कनपटी में दाह सहित लाल रंग की गिल्टी निकल आती है, जिससे सिर और गला जकड़ जाता है। कहते हैं, यह असाध्य रोग है और तीन दिन के अंदर इसका इलाज संभव है, इसके बाद नहीं।

२. हवा के चलने का शब्द। ३. हीरा कसीस। ४. मस्तक। माथा। ५. नौ निधियों में से एक निधि। ६. शंख का बना कंकण या वलय।

शंखकर्ण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खकर्ण] शिव के एक अनुचर का नाम। शिव का एक गण।

शंखकार शंखकारक—संज्ञा सं० [सं० शङ्खकार, शंखकारक]। पुराणानुसार एक वर्णसंकर जाति जिसकी उत्पत्ति शूद्रा माता और विश्वकर्मा पिता से मानी गई है। इस जाति के लोग शंख की चीजें बनाने का काम करते हैं।

शंखकुसुमा—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खकुसुमा] १. शंखपुष्पी। २. सफेद अपराजिता। सफेद कोयल लता।

शंखकूट—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खकूट] १. एक नाग का नाम। २. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

शंखक्षीर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खक्षीर] शंख का दूध अर्थात् कोई असंभव और अनहोनी बात।

शंखचरी, शंखचर्ची—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खचरी, शङ्खचर्ची] १. चंदन का तिलक (ललाट पर का)। २. भाल। मस्तक। ललाट।

शंखचूड़—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खचूड़] १. एक राक्षस का नाम जिसे कंस ने कृष्ण को मारने के लिये भेजा था।

विशेष—कहते हैं, यह सुदामा नामक गोप था जो राधा के शाप से असुर हो गया था इसका विवाह तुलसी से हुआ था। ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है कि इसका संहार महादेव जी ने अपने शूल से किया था।

२. कुवेर के दूत और सखा का नाम। ३. एक यक्ष का नाम। ४. पुराणानुसार द्वारिका निवासी एक गृहस्थ का नाम जिसके पुत्र उत्पन्न होकर अदृश्य हो जाते थे। ५. एक नाग का नाम। ६. एक तीर्थस्थान।

शंखचूर्ण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खचूर्ण] शंख की बुकनी। शंख का चूरा (को०)।

शंखज—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खज] बड़ा मोती जो शंख से निकलता है।

शंखजीरा—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खजीरा] संग जराहत।

विशेष—जान पड़ता है, यह शब्द फारसी संग जराहत का बनाया हुआ संस्कृत रूप है।

शंखण—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खण] रामायण के अनुसार प्रवृद्ध के लड़के का नाम।

शंखतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खतीर्थ] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

शंखदारक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खदारक] एक वर्णसंकर जाति। दे० 'शंखकार'।

शंखद्राव१—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खद्राव] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का अर्क जिसमें शंख भी गल जाता है।

विशेष—आध सेर हीरा कसीस, सेर भर सेंधा नमक और सेर भर शोरा चूर्ण करके ढेकली यंत्र से रस निकाल लिया जाता है, जो शंखद्राव कहलाता है। कहते हैं, इसके सेवन से शूल, गुल्म

अर्श, प्लीहा, उदररोग, अजीर्ण और वातरोग सब दूर होते हैं। इसे काँच या चीनी की शीशी में रखना चाहिए; अन्यथा पात्र गल जायगा। इसके सेवन के समय मुँह में घी लगा देना चाहिए, नहीं तो जिह्वा और दाँतों को हानि पहुँचेगी।

शंखद्राव²—वि॰ कोई ऐसा तीक्ष्ण रस या क्षार जिसमें डालने से शंख गल जाय।

शंखद्रावक—संज्ञा पुं॰ वि॰ [सं॰ शङ्खद्रावक] दे॰ 'शंखद्राव'।

शंखद्रावी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खद्राविन्] अमलबेत। चुक्र।

शंखद्वीप—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खद्वीप] पुराणानुसार एक द्वीप का नाम। (संभवतः यह आधुनिक अफ्रीका है)

शंखधर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खधर] १. शंख को धारण करनेवाले, अर्थात् विष्णु। २. श्रीकृष्ण। उ॰—गिरिधर वज्रधर धरनीधर पीतांबरधर मुकुटधर गोपधर शंखधर सारंगधर चक्रधर रस धरें अधर सुधाधर।—सूर (शब्द॰)।

शंखधरा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खधरा] हुरहुर का साग। हिलमोचिका।

शंखधवना—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खधवना] जूही। यूथिका।

शंखध्म, शंखध्मा—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खध्म, शङ्खध्मा] शंखवादक। वह जो शंख बजावे [को॰]।

शंखध्वनि—संज्ञा स्त्री॰ [शङ्खध्वनि] शंख की आवाज जो विजय, सफलता या कभी कभी आतंक और निराशा व्यक्त करती है।

शंखन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खन] १. अयोध्या के राजा कल्माषपाद के एक पुत्र का नाम। २. वज्रनाभ के पुत्र का नाम।

शंखनक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खनक] छोटा शंख। घोंघा [को॰]।

शंखनख—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खनख] १. घोंघा। छोटा शंख। २. व्याघ्रनख। नखी नाम का गंधद्रव्य।

शंखनखा, शंखनखी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खनखा, शङ्खनखी] १. घोंघा। छोटा शंख। २. नखी नामक गंधद्रव्य।

शंखनाभि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खनाभि] १. एक प्रकार का शंख। २. एक प्रकार का गंधद्रव्य।

शंखनाम्नी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खनाम्नी] शंखाहुली। शंखपुष्पी।

शंखनारी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खनारी] एक वृत्त का नाम जिसमें छह वर्ण होते हैं। यह दो यगण का वृत्त है। इसे सोमराजी वृत्त भी कहते हैं।

शंखनी(पु)—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खिनी] दे॰ 'शंखिनी'।

शंखपलीता—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्ख+हिं॰ पलीता] एक प्रकार का रेशेदार खनिज पदार्थ जो ज्वालामुखी पर्वतों से निकलता है।

विशेष—इसका रंग सफेद या हरा होता है और इसमें रेशम की सी चमक होती है। इसका विशेष गुण यह है कि यह जल्दी जल्दी जलता नहीं; इसी लिये गैस के भट्ठे बनाने में इसका बहुत उपयोग होता है। आग से न जलनेवाले कपड़े तैयार करने में भी यह काम में लाया जाता है। गरमी और बिजली का प्रवेश इसमें बहुत कम होता है; इसी से यह बिजली के तार आदि लपेटने में भी काम आता है। इंजिनों के जोड़ इसी से भरे या बंद दिए जाते हैं। यह कारसिका, स्काटलैंड कनाडा, इटली आदि देशों में अधिक मिलता है।

शंखपाणि—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खपाणि] हाथ में शंख धारण करनेवाले विष्णु।

शंखपाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खपाल] १. शकरपारा नाम की मिठाई। विशेष दे॰ 'शकरपारा'। २. एक प्रकार का साँप। ३. एक नाग का नाम। ४. कर्दम के पुत्र का नाम। ५. सूर्य का एक नाम (को॰)।

शंखपाषाण—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खपाषाण] संखिया।

शंखपुष्पिका—संज्ञा स्त्री॰ [शङ्खपुष्पिका] दे॰ 'शंखपुष्पी'।

शंखपुष्पी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खपुष्पी] १. सफेद अपराजिता श्वेत-अपराजिता। सफेद कायल लता। २. जूही यूथिका। ३. शंखाहुली। शंखाह्वा।

शंखप्रस्थ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खप्रस्थ] चंद्रमा का कलंक।

शंखभस्म—संज्ञा पुं॰ [शङ्खभस्म] १. चूना। २. शंख का वैद्यक विधि से निर्मित भस्म।

शंखभृत्—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खभृत्] शंख धारण करनेवाले विष्णु।

शंखमालिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खमालिनी] शंखाहुली। शंखपुष्पी।

शंखमुक्ता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खमुक्ता] शंखज नाम का बड़ा मोती।

शंखमुख—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खमुख] कुंभीर। घड़ियाल। ग्राह।

शंखमूलक—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खमूलक] मूली।

शंखयूथिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खयूथिका] जूही। यूथिका।

शंखरी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खरी] वह जो शंख की चूड़ी बनाने का व्यवसाय करता हो।

शंखलिखित¹—वि॰ [सं॰ शङ्खलिखित] निर्दोष। दोषरहित। बेऐब।

शंखलिखित²—संज्ञा पुं॰ १. न्यायशील राजा। २. शंख और लिखित नाम के दो ऋषि जिन्होंने एक स्मृति बनाई थी।

शंखलिखित³—संज्ञा स्त्री॰ शंख और लिखित ऋषियों द्वारा लिखी हुई स्मृति। उ॰—सचिव सुधन्वै चह्यो जरावा। शंखलिखित फल आपुइ पावा।—रघुनाथ (शब्द॰)।

शंखवटी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शङ्खवटी] वैद्यक में एक प्रकार की बटी या गोली।

विशेष—इसके प्रस्तुत करने की प्रणाली यह है—नीबू के रस में बुझाई हुई शंख की भस्म टके भर और जवाखार, सेंकी हींग, पाँचों नमक, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, शुद्ध सिंगी मुहरा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक की कजली ये सब दस दस टंक एक में मिलाकर सबका चूर्ण करके नीबू के रस में खरल करके चने के बराबर गोलियाँ बनाते हैं। कहते हैं, लौंग के जल के साथ इसका एक गोली सेवन करने से संग्रहणी, शूल और वायुगोला आदि रोग दूर होते हैं।

शंखवटी रस—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शङ्खवटी रस] वैद्यक में एक प्रकार की वटी या गोली जो शूल रोग को तत्काल दूर करनेवाली मानी जाती है।

विशेष—इसके प्रस्तुत करने की विधि यह है,—बड़े शंख को तपा तपाकर ग्यारह बार नीबू के रस में बुझाते हैं, और इस शंख के चूर्ण में टके भर इमली का खार, ५ टंक साँचर नमक, टके भर सेंधा नमक, टके भर विड़ नोन, ६ माशे सोंठ, ६ माशे काली मिर्च, ६ माशे पिप्पली, टके भर सेंको हींग, टके भर शुद्ध गंधक, टके भर शुद्ध पारा, १ टंक शुद्ध सिंगी मुहरा, इन सबको मिलाकर जल के साथ घोंटकर छोटे बेर के बराबर गोलियाँ बना लेते हैं।

शंखवात—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खवात] सिर की पीड़ा। विशेष दे० 'शंखक'—१।

शंखविष—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खविष] संखिया।

शंखवेलान्याय—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खवेलान्याय] एक प्रकार का न्याय जिसमें किसी एक कार्य के होने से किसी दूसरी बात का वैसे ही ज्ञान होता है, जैसे शख बजने से समय का ज्ञान होता है।

शंखशुक्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खशुक्तिका] सीप।

शंखसंकाश—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खसङ्काश] संखालु। सफेद शकरकंद।

शंखस—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खस] शंख की चूड़ी या कड़ा।

शंखस्वन—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खस्वन] शंख का शब्द या ध्वनि [को०]।

शंखांतर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खान्तर] ललाट। मस्तक [को०]।

शंखाख्य—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खाख्य] वृहन्नखी या बघनखा नामक गंधद्रव्य।

शंखारु, शंखालु—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खारु, शङ्खालु] शंखालुक। शंखकंद। सफेद शकरकंद।

शंखालुक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खालुक] शंखालु। सफेद शकरकंद।

शंखावर्त—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खावर्त] एक प्रकार का भगंदर रोग जिसे शंबुकावर्त भी कहते है। विशेष दे० 'शंबुकावर्त्त'।

शंखासुर—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खासुर] एक दैत्य जो ब्रह्मा के पास से वेद चुराकर समुद्र के गर्भ म जा छिपा था। इसी को मारने के लिये विष्णु ने मत्स्यावतार धारण किया था। उ०—बहुरो किलाल बंठ मारयो जिन शंखासुर ताते वेद अनेक विधाता को दिख हैं।—हनुमन्नाटक (शब्द०)। २. दैत्य का पिता। उ०—शंखासुर सुत पितु वध जान्यो। तब बन जाइ तहाँ तप ठान्यो।—रघुनाथ (शब्द०)।

शंखास्थि—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खास्थि] १. सिर की हड्डी। २. पीठ की हड्डी।

शंखाहुली—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खपुष्पी या शङ्खफुल्ल] १. शंखाहुली। शंखपुष्पी। विशेष दे० 'कौड़ियाला'—४। २. सफेद अपराजिता या कोयल लता।

शंखाहोली—संज्ञा स्त्री० [सं० शंखपुष्पी, शंखफुल्ली, हिं० शंखाहुली] शखपुष्पी। कौड़ियाला। कौड़ेना।

शंखाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खाह्वा] शंखपुष्पी [को०]।

शंखिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खिका] अंधाहुली। चोरपुष्पी।

शंखिन—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खिन] सिरस। शिरिष का वृक्ष।

शंखिनिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खिनिका] ग्रंथिपर्णी। गठिवन।

शंखिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खिनी] १. एक प्रकार की वनौषधि।

विशेष—इसकी लता और फल शिवलिंगी के समान होते हैं। अंतर केवल यही है कि शिवलिंगी के फल पर सफेद छींटे होते हैं जो शंखिनी के फल पर नहीं होते। इसके बीज शंख के समान होते हैं जिनका तेल निकलता है। वैद्यक में यह चरपरी, स्निग्ध और कड़वी, भारी, तीक्ष्ण, गरम, अग्निदीपक, बलकारक, रुचिकारी और विषविकार, आमदोष, क्षय, रुधिरविकार तथा उदरदोष आदि को शांत करनेवाली मानी जाती है।

पर्या०—यवतिक्ता। महातिक्ता। भद्रतिक्ता। सूक्ष्मपुष्पी। दृढ़पादा। विसर्पिणी। नाकुली। नेत्रमीला। अक्षपीड़ा। माहेश्वरी। तिक्ता। यावी।

२. पद्मिनी आदि स्त्रियों के चार भेदों में से एक भेद। उ०—कोइ शंखिनि युत रोष दया बिन बेगि प्रचारे।—विश्राम (शब्द०)।

विशेष—कहते हैं, ऐसी स्त्री कोपशील, कोविद, सलाम शरीरवाली, बड़ी बड़ी और सजल आँखोंवाली, देखने में सुंदर, लज्जा और शंकारहित, अधीर, रतिप्रिय, क्षार गंधयुक्त और अरुण नखवाली होती है, यह वृषभ जाति के पुरुष के लिये उपयुक्त होती है।

३. गुदाद्वार की नस। ४. मुँह की नाड़ी। उ०—मुख अस्थान शंखिनी केरा। ये नाड़िन के नाम निबेरा।—विश्राम (शब्द०)। ५. एक देवी का नाम। ६. सीप। ७. एक शक्ति जिसकी पूजा बौद्ध लोग करते हैं। ८. एक तीर्थस्थान का नाम। ९. एक प्रकार की अप्सरा। १०. शंखाहुली।

शंखिनी डंकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्खिनी] एक प्रकार का उन्माद।

विशेष—इस उन्माद रोग के लक्षण इस प्रकार कहे गए हैं—सर्वांग में पीड़ा होना, नेत्र बहुत दुखना, मूर्छा होना, शरीर काँपना, रोना, हँसना, बकना, भोजन में अरुचि, गला बैठना, शरीर के बल तथा भूख का नाश, ज्वर चढ़ना और सिर में चक्कर आना, आदि।

शंखिनी फ़ल—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खिनीफल] सिरस का वृक्ष।

शंखिनीवास—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खिनीवास] शाखोट वृक्ष। सहोरा।

शंखिया—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'संखिया'।

शंखी—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खिन्] १. विष्णु। २. समुद्र। ३. एक प्रकार का साँप। ४. शंख बजानेवाला।

शंखोदक—संज्ञा पुं० [सं० शङ्खोदक] शंख में भरा हुआ जल जो पवित्र माना जाता है।

शंखोदधिमल—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रफेन।

शंखोदरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मध्यम आकार का एक प्रकार का बीज जो बागों में शोभा के लिये लगाते हैं। गुलपरो। गुलतुरां। सिद्धेकर।

विशेष—इसके पत्ते चकवँड़ के पत्तो के समान होते हैं। पीले और लाल फूलों के भेद से यह वृक्ष दो प्रकार का होता है।

इसकी कलियाँ उँगली के समान मोटी, चिपटी तथा चार पाँच अंगुल लंबी होती हैं और इसमें ७-८ दाने होते हैं। इसके फूल गुच्छों में लगते हैं जो बारहों महीने रहते हैं, परंतु और महीनों की अपेक्षा आषाढ़ में अधिक फूल लगते हैं। फूलों में गंध नहीं होती। इसकी लकड़ी मजबूत होती है। इसके वृक्ष बीज और कलम दोनों से ही लगते हैं। कई प्रकार के रोगों में इसका क्वाथ भी दिया जाता है। वैद्यक के अनुसार यह गरम, कफ, वात, शूल, आमवात और नेत्ररोग को दूर करनेवाली है।

शंगजराहत—संज्ञा पुं० [सं० शङ्ख, फ़ा० संग + जदाहत] दे० 'संग जराहत'।

शंगर—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का बहुत ऊँचा वृक्ष जो मदरास और सुंदरबन में अधिकता से होता है।

विशेष—इसकी लकड़ी लाल और मजबूत होती है और मकान तथा गाड़ी आदि बनाने के काम मे आती है। इसके पत्तों से रंग भी निकाला जाता है।

शंगरफ^1—संज्ञा पुं० [फ़ा० शंगर्फ़, शंगरफ़] ईंगुर। शिगरफ [को०]।

शंगरफ^2—वि० ईंगुर के रंग का लाल [को०]।

शंजरफ—संज्ञा पुं० [फा० शंजर्फ़ शंज़रफ़] दे० 'शिगरफ'।

शंठ—संज्ञा पुं० [सं० शण्ठ] १. अविवाहित। २. नपुंसक। हींजड़ा। ३. मूर्ख। बेवकूफ। उ०—मुग्ध मूढ़ जड़ मूक नर अज्ञ अबुध वद शंठ।—नंददास (शब्द०)।

शंड—संज्ञा [सं० शण्ड] १. नपुंसक। हींजड़ा। २. वह पुरुष जिसे संतान न होती हो। वंध्या पुरुष। ३. साँड़। ४. उन्मत्त। पागल। ५. कमलिनी। पद्मिनी। ६. दही (को०)। ७. प्राचीन काल में अंतःपुर का परिचारक जो हींजड़ा होता था (को०)। ८. एक दैत्य का नाम। ९. पद्म आदि का समूह या राशि (को०)।

शंडता—संज्ञा स्त्री० [सं० शण्डता] शंड का भाव या धर्म। नपुंसकत्व। हिजड़ापन।

शंडा—संज्ञा पुं० [सं० शण्डा] १. फटा हुआ खट्टा दूध अथवा दही। २. शुक्राचार्य का पुत्र जो असुरों का पुरोहित था। ३. एक यक्ष का नाम।

शंडाकी मद्य—संज्ञा स्त्री० [सं० शण्डाकी मद्य] अर्कप्रकाश के अनुसार एक प्रकार की शराब जो राई, मूली और सरसों के पत्तों का रस चावलों की पीठी मे मिलाकर अर्क निकालने से तैयार होती है।

शंडामर्क—संज्ञा पुं० [सं० शण्डामर्क] शंड और मर्क नाम के दो दैत्य जिनका नाम साथ ही साथ लिया जाता है। उ०—शंडामर्क से कहियो जाय।—शब्दावली (शब्द०)।

शंडिल—संज्ञा पुं० [सं० शण्डिल] एक ऋषि। दे० 'शंडील' [को०]।

शंडील—संज्ञा पुं० [सं० शण्डील] एक प्राचीन गोत्रकार ऋषि जिनके गोत्र के लोग शांडिल्य कहलाते हैं।

शंढ—संज्ञा पुं० [सं० षण्ढ] १. नपुंसक। वंध्या पुरुष। २. वृष। साँड़। ३. उन्मत्त साँड़। ४. राजाओं के अंतःपुर का वह सेवक जो पुंस्त्वविहीन हिजड़ा होता था। ५. उन्मत्त पुरुष। पागल व्यक्ति [को०]।

शंतनु (पु)—संज्ञा पुं० [सं० शन्तनु] दे० 'शांतनु'।—(क) बरणी शंतनु की कथा, पुनि ययाति कर भोग।—रघुनाथ (शब्द०)। (ख) बिष्णुसुता सत्य सुत माहीं। तासु पुत्र शंतनु नृप आहीं।—सबल (शब्द०)।

शंतनुसुत (पु)—संज्ञा पुं० [सं० शन्तनुसुत] गंगा के गर्भ से उत्पन्न शांतनु के पुत्र, भीष्म पितामह। विशेष दे० 'भीष्म'।

शंपा—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्पा] १. बिजली। उ०—उन्नत सिर पर जब तक हो शंपा का प्रहार। सोओ तब तक जाज्वल्यमान मेरे विचार।—सामधेनी, पृ० ५२। २. कमरबंद। मेखला। करधनी।

शंपाक, शंपात—संज्ञा पुं० [सं० शम्पाक, शम्पात] आरग्वध वृक्ष। अमलतास।

शंब^1—संज्ञा पुं० [सं० शम्ब] १. इंद्र का वज्र। २. लोहे की जंजीर जो कमर के चारों तरफ पहनी जाय। ३. प्राचीन काल की एक माप। ४. नियमित रूप से हल जोतने की क्रिया। ५. दुहरी जुताई। दुबारा हल चलाने की क्रिया। ६. मुसल के सिरे पर लगी हुई लोहे की गोल पट्टी। साम (को०)।

शंब^2—वि० १. सुखी। भाग्यवान्। २. दरिद्र। अभागा [को०]।

शंबपाणि—संज्ञा पुं० [सं० शम्बपाणि] इंद्र जिनका आयुध वज्र है [को०]।

शंबर^1—संज्ञा पुं० [सं० शम्बर] १. एक दैत्य जो वेद के अनुसार दिवोदास का बड़ा शत्रु था। दिवोदास की रक्षा के लिये इंद्र ने इसे पहाड़ पर से नीचे गिराकर मार डाला था। २. एक दैत्य जो रामायण और महाभारत में कामदेव का शत्रु कहा गया है। ३. प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र। ४. युद्ध। समर। लड़ाई। ५. एक प्रकार का मृग। ६. मछली। ७. एक पर्वत का नाम। ८. जल। पानी। ९. चीता नामक पेड़। चितउर। १०. लोध वृक्ष। ११. अर्जुन वृक्ष। १२. ताल वृक्ष। १३. साबर हिरन। १४. मुश्क जमीं। १५. एक जिन देव (को०)। १६. बौद्धों का एक व्रत (को०)। १७. एक प्रकार का व्रत (को०)। १८. मेघ। बादल (को०)। १९. चित्र। तस्वीर (को०)। २०. धन। संपत्ति (को०)। २१. एक प्रकार के शैव (को०)।

यौ०—शंबरघ्न, शंबरदारण. शंबररिपु = कामदेव या प्रद्युम्न।

शंबर^2—वि० १. अति उत्तम। बहुत बढ़िया। २. भाग्यवान्। ३. सुखी।

शंबरकंद—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरकन्द] बाराही कंद। शूकर कंद।

शंबरघ्न—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरघ्न] दे० 'शंबरारि' [को०]।

शंबरचंदन—संज्ञा पुं० [सं० शम्बर चन्दन] एक प्रकार का चंदन जिसे कैरात, बहलगंध और गंधकाष्ठ भी कहते हैं।

शंबरमाया—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्बरमाया] १. इंद्रजाल। जादू। २. शक्ति।

शंबरसूदन—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरसूदन] १. कामदेव। २. प्रद्युम्न।

शंबरहा—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरहन्] दे० 'शंबरारि'।

शंबरारि—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरारि] १. शंबर का शत्रु अर्थात् कामदेव। मदन। उ०—शंबर ज्यों शंबरारि दुःख देह को दहै।—केशव (शब्द०)। २. प्रद्युम्न जो कामदेव के अवतार कहे जाते हैं। उ०—मुरछि मुरछि गिरावो भूमि पर शंबरारि ललकारि।—गर्गसंहिता (शब्द०)।

शंबरासुर—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरासुर] शंबर नाम का दैत्य [को०]।

शंबराहार—संज्ञा पुं० [सं० शम्बराहार] झरबेरी। भूबदरी।

शंबरी—संज्ञा [सं० शम्बरी] मूसाकानी। आखुपर्णी लता। २. बड़ी दंती। बगरेंडा। ३. माया। ४. मायाविनी। जादूगरनी (को०)।

शंबरीगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्बरीगन्धा] बनतुलसी। बर्बरी।

शंबरोद्भव—संज्ञा पुं० [सं० शम्बरोद्भव] सफेद लोध।

शंबल—संज्ञा पुं० [सं० शम्बल] १. यात्रा के समय रास्ते के लिये भोजनसामग्री। संवल। पाथेय। २. तट। किनारा। ३. कूल। ४. ईर्ष्या। द्वेष। ५. दे० 'शंवर'।

शंबली—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्बली] शंभली। कुटनी [को०]।

शंबसादन—संज्ञा पुं० [सं० शम्बसादन] वाल्मीकीय रामायण के अनुसार एक दैत्य जिसे केशरी वानर ने मारा था।

शंबा—संज्ञा पुं० [अ० शंबह्] १. शनिवार। शनैश्चरवार। २. वार। दिन (को०)।

शंबाकृत—संज्ञा पुं० [सं० शम्बाकृत] वह खेत जो दो बार जोता गया हो। वह खेत जिसकी दुहरी जुताई हुई हो [को०]।

शंबु—संज्ञा पुं० [सं० शम्बु] सीपा। घोंघा।

शंबुक, शंबुक्क—संज्ञा पुं० [सं० शम्बुक, शम्बुक्क] १. घोंघा। २. छोटा शंख।

शंबुकपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्बुकपुष्पी] दे० 'शंखपुष्पी'।

शंबुकावर्त¹—वि० [सं० शम्बुकावर्त] घोंघे या छोटे शंख की भँवरी के सदृश घूमा हुआ।

शंबुकावर्त²—संज्ञा पुं० पाँच प्रकार के भगंदरों में से एक प्रकार का भगंदर।

विशेष—इसका कई प्रकार का वर्ण होता है और इसमें सदैव पीव बहा करता है। इसके फोड़ने से अनेक प्रकार की पीड़ा होती है। इसका फोड़ा गौ के थन के आकार का हो जाता है और उसका छिद्र घोंघे के घेरे के समान घूमता हुआ होता है। इसे शंखावर्त भी कहते हैं।

शंबूक—संज्ञा पुं० [सं० शम्बूक] १. एक तपस्वी शूद्र।

विशेष—शूद्र होने के कारण इसकी कठोर तपस्या के प्रभाव से त्रेतायुग में रामराज्य में एक ब्राह्मण का पुत्र अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ था; अतः इसे राम ने मारकर मृत ब्राह्मणपुत्र को पुनरुज्जीवित किया था।

२. घोंघा। ३. शंख। ४. एक दैत्य का नाम। ५. हाथी के सूँड़ का अगला भाग।

शंबूकपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शंखपुष्पी'।

शंबूका—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्बूका] सीपी।

शंभ—संज्ञा पुं०, वि० [सं० शम्भ] दे० 'शंब' [को०]।

शंभली—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्भली] कुटनी। शंबली [को०]।

शंभु¹—संज्ञा पुं० [सं० शम्भु] १. शिव। महादेव। २. ग्यारह रुद्रों में से एक जो प्रधान रुद्र हैं। विशेष दे० 'महादेव' और 'रुद्र'। ३. रामायण के अनुसार एक दैत्य का नाम। ४. एक वृत्त का नाम। जिसके प्रत्येक चरण में १९ वर्ण होते हैं; और उनका क्रम इस प्रकार होता है—स, त, य, भ, म, म और ग (।।S, SS।, ।SS, S।।, SSS, SSS, S)। ५. ब्रह्मा। ६. विष्णु। ७. सफेद आक। ८. पारा। ९. ऋषि। संत। तपस्वी (को०)। १०. एक प्रकार के सिद्ध (को०)। ११. बुद्ध (को०)। १२. अग्नि (को०)।

शंभु(पु)²—संज्ञा पुं० [सं० स्वायम्भुव] दे० 'स्वायंभुव'। उ०—कह शौनक शंभू मनु पाछे। कीन्ह राज्य केहि कहिए आछे।—रघुनाथ (शब्द०)।

शंभुकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्भुकांता] १. शंभु की स्त्री, पार्वती। २. दुर्गा।

शंभुगिरि—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुगिरि] शम्भु का पर्वत, कैलास।

शंभुतनय—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुतनय] १. कार्तिकेय। २. गणेश [को०]।

शंभुतेज—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुतेजस्] पारा। पारद।

शंभुनंदन—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुनन्दन] दे० 'शंभुतनय'।

शंभुबीज—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुबीज] पारा। पारद।

शंभुप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं० शम्भुप्रिया] १. दुर्गा। शंभुकांता। २. आमलकी [को०]।

शंभुभूषण—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुभूषण] महादेव जी का भूषण, चंद्रमा।

शंभुमनु(पु)—संज्ञा पुं० [सं० स्वायम्भुव मनु] स्वायभुव मन्वंतर जो सबसे पहला मन्वंतर है। विशेष दे० 'स्वायंभुव' और मनु।

शंभुलोक—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुलोक] महादेव जी का लोक, कैलास।

शंभुवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं० शम्भुवल्लभ] श्वेत कमल जो शिव को विशेष प्रिय है [को०]।

शंयु¹—वि० [सं०] प्रसन्न। शुभान्वित। सुखी [को०]।

शंयु²—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार यज्ञ के अधिष्ठातृ देव अग्नि जो बृहस्पति के पुत्र रूप कहे गए हैं [को०]।

शंव—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'शंब' [को०]।

शंस—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रतिज्ञा। इकरार। २. शपथ। कसम। ३. जादू। ४. प्रशंसा। तारीफ। ५. इच्छा। ख्वाहिश। ६.

चापलूसी। चाटुता। ७ घोषणा। ८. वक्तृता। ९. किसी के प्रति शुभ वा मंगल की कामना (को०)।

शंसन--संज्ञा पुं० [सं०] १. कथन। कहना। वर्णन करना। २. प्रशंसा करना। प्रशंसन। ३. पाठ करना [को०]।

शंसनीय--वि० [सं०] कथन या प्रशंसा के योग्य [को०]।

शंसा--संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रशंसा। २. अभिलाषा। आशा। इच्छा। ३. वर्णन। कथन। ४. दुहराना। ५. पाठ करना। ६. अनुमान। कल्पना [को०]।

शंसित—वि० [सं०] १ कथित। घोषित। २. प्रशंसित। ३. इच्छित। काम्य। ४. निश्चित किया हुआ। निर्धारित। ५. जिसपर झूठा दोष मढ़ा गया हो। कलंकित। ६. अनुष्ठित [को०]।

यौ०--शंसितव्रत = व्रत करनेवाला। व्रत अनुष्ठित करनेवाला।

शंसी–वि० [सं० शंसिन्] १. कहनेवाला। २. प्रशंसक। ३. संकेत करनेवाला। सूचक। व्यंजक। ४. भविष्यसूचक। भविष्यवक्ता [को०]।

शंस्ता—संज्ञा पुं०, वि० [सं० शंस्तृ] १. स्तुति करनेवाला। प्रशंसक। स्तुतिपाठक। २. ऋचाओं का पाठ करनेवाला। मंत्रपाठक [को०]।

शंस्य[१]--वि० [सं०] १. प्रशंसा के योग्य। २. इच्छित। चाहा हुआ। ३. उच्च स्वर से पठित (को०)। ४. कहने योग्य (को०)।

शंस्य[२]--संज्ञा स्त्री० अग्नि।

श—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. कल्याण। मंगल। ३. शस्त्र। हथियार। ४. विनाशक। काटनेवाला (को०)। ५. शास्त्र (को०)। ६. आनंद। सौख्य (को०)।

शअबान—संज्ञा पुं० [अ० शअ़बान] अरबी आठवाँ महीना जिसकी चौदहवीं तारीख को मुसलमानों का शब्बरात नामक त्योहार होता है। यह रजब के बाद आता है।

शऊर–संज्ञा पुं० [अ० शुऊर] १. किसी चीज की पहचान या जानकारी २. काम करने की योग्यता। ढंग। ३. बुद्धि। अक्ल। ४. सभ्यता। तमीज (को०)।

क्रि० प्र०—आना। –सीखना।

मुहा०—शऊर पकड़ना = ढंग सीखना। अक्ल सीखना। बुद्धिमान् होना।

शऊरदार—संज्ञा वि० [अ० शुऊर + फा० दार (प्रत्य०)] [संज्ञा स्त्री० शऊरदारी] जिसमें शऊर हो। काम करने की योग्यता रखनेवाला। हुनरमंद। समझदार।

शक[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन जाति।

विशेष—पुराणों में इस जाति की उत्पत्ति सूर्यवंशी राजा नरिष्यंत से कही गई है। राजा सगर ने राजा नरिष्यंत को राज्यच्युत तथा देश से निर्वासित किया था। वर्णाश्रम आदि के नियमों का पालन न करने के कारण तथा ब्राह्मणों से अलग रहने के कारण वे म्लेच्छ हो गए थे। उन्हीं के वंशज शक कहलाए। आधुनिक विद्वनों का मत है कि मध्य एशिया पहले शकद्वीप के नाम से प्रसिद्ध था। यूनानी इस देश को सीथिया कहते थे। उसी मध्य एशिया के रहनेवाला शक कहे जाते हैं। एक समय यह जाति बड़ी प्रतापशालिनी हो गई थी। ईसा से दो सौ वर्ष पहले इसने मथुरा और महाराष्ट्र पर अपना अधिकार कर लिया था। ये लोग अपने को देवपुत्र कहते थे। इन्होंने १९० वर्ष तक भारत पर राज्य किया था। इनमें कनिष्क और हुविष्क आदि बड़े बड़े प्रतापशाली राजा हुए हैं।

२. वह राजा या शासक जिसके नाम से कोई संवत चले। ३. राजा शालिवाहन का चलाया हुआ संवत् जो ईसा के ७८ वर्ष पश्चात् आरंभ हुआ था। ४. शालिवाहन के अनुयायी अथवा उसके वंशज। ५. संवत्।

यौ० शककर्ता, शककृत् = दे० 'शककारक'। शककाल = दे० 'शक संवत्'। शक संवत् = राजा शालिवाहन का चलाया हुआ संवत्। दे० 'शक'–३।

६. तातार देश। ७. जल। ८. मल। गोमय। ९. एक प्रकार का पशु। १०. संदेह। आशंका। भय। त्रास। डर।

शक[३]—संज्ञा पुं० [अ०] शंका। संदेह। द्विविधा।

क्रि० प्र०—करना।—डालना।—निकालना।—पड़ना।—मिटना।—मिटाना।

शककारक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने कोई नया संवत् (शक) चलाया हो। संवत् का प्रवर्तक।

शकट—संज्ञा पुं० [सं०] १. छकड़ा। बैलगाड़ी। २. भार। बोझ। ३. शकटासुर नामक दैत्य जिसे कृष्ण ने मारा था। ४. तिनिश वृक्ष। ५. धव का वृक्ष। धौ। ६. शरीर। देह। ७. दो हजार पल की तौल। ८. रोहिणी नक्षत्र, जिसकी आकृति शकट या छकड़े के समान है। ९. शकट के आकार का सैनिक व्यूह। दे० 'शकट व्यूह' (को०)। १०. एक गाड़ी भार। बोझ जो दो हजार पल के बराबर होता है (को०)। ११. अन्न सिद्ध करने का एक उपकरण (को०)।

शकटकर्म–संज्ञा पुं० [सं०] गाड़ी या और कोई सवारी हाँकने का काम। २. गाड़ी आदि सवारियों की सामग्री बनाने और बेचने का काम।

शकटधूम–संज्ञा पुं० [सं०] १. गोबर या उपले आदि का धूआँ। २. एक नक्षत्र का नाम।

शकटभिद्—संज्ञा पुं० [सं०] १. शकटासुर को मारनेवाले, श्रीकृष्ण। २ विष्णु [को०]।

शकटभेद—संज्ञा पुं० [सं०] किसी ग्रह द्वारा शकट अर्थात् रोहिणी नक्षत्र का विभाजन। यदि यह भेदन शनि ग्रह द्वारा हो तो १२ वर्ष अनावृष्टि होती है [को०]।

शकटविल—संज्ञा पुं० [सं०] जलकुक्कुट [को०]।

शकटव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] १. शकट के आकार का सेना का निवेश। सेना को इस प्रकार रखना कि आगे का भाग पतला और पीछे

का मोटा हो; और वह देखने में शकट के आकार का जान पड़े। २. कौटिल्य के अनुसार वह भोग व्यूह जिसके अंदर उरस्थ में दोहरी पंक्तियाँ हों और पक्ष स्थिर हो।

शकटव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] एक विशेष प्रकार का व्रत [को०]।

शकटसार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] गाड़ियों का कारवाँ [को०]।

शकटहा—संज्ञा पुं० [सं० शकटहन्] शकटासुर नामक दैत्य के मारनेवाले, श्रीकृष्ण।

शकटाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] गाड़ी का धुरा।

शकटाख्य, शकटाख्यक—संज्ञा पुं० [सं०] धौ या धव का वृक्ष।

शकटार—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजा महानंद का प्रधान मंत्री।

विशेष—इसने अपने अपमान का बदला चुकाने के लिये चाणक्य से मिलकर षड्यंत्र रचा था और इस प्रकार नंदवंश का नाश किया था।

२. एक प्रकार की शिकारी चिड़िया।

शकटारि—संज्ञा पुं० [सं०] शकट दैत्य के शत्रु, श्रीकृष्ण।

शकटाल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शकटार'।

शकटासुर—संज्ञा पुं० [सं०] एक दैत्य जिसे कंस ने कृष्ण को मारने के लिये भेजा था और जो स्वयं ही कृष्ण द्वारा मारा गया था।

शकटाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रोहिणी नक्षत्र [को०]।

शकटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. छोटी बैलगाड़ी। २. बच्चों के खेलने की गाड़ी।

शकटोर्वी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कोई चौरस भूभाग [को०]।

शकटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी गाड़ी।

शकठ—संज्ञा पुं० [सं० शकट] मचान। उ०—कृष्णचंद्र के समय में भी वृंदावन वन गिना जाता था, और गोप लोग उसमें शकठों पर रहते थे।—शिवप्रसाद (शब्द०)।

शकर[1]—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०; मि० सं० शर्करा] कच्ची चीनी। शर्करा। शक्कर।

यौ०—शकरकंद। शकरखोरा। शकरख्वाब=मीठी नींद। शकरगुड़। शकरपा। शकरपारा। शकरपूरा। शकरबादाम। शकररंगी, शकररंजी=नाराजी। मनमुटाव। शकररेज=(१) न्योछावर। (२) खुशी का रोना। शकरलब=(१) मीठे अधरवाला। (२) मिष्टभाषी। (३) माशूक (लाक्ष०)।

शकर[2]—संज्ञा पुं० [सं०] टुकड़ा। खंड। शकल [को०]।

शकरकंद—संज्ञा पुं० [हिं० शकर+सं० कन्द] एक प्रकार का प्रसिद्ध कंद।

विशेष—इसकी खेती प्रायः सारे भारत में होती है। यह साधारणतः सूखी जमीन में बोया जाता है। इसका कंद दो प्रकार का होता है—एक लाल दूसरा सफेद। लाल शकरकंद रतालू या पिंडालू कहलाता है और सफेद का शकरकंद या कंदा कहते हैं। यह भूनकर वा उबालकर खाया जाता है। प्रायः हिंदू लोग व्रत के दिन फलाहार रूप में इसका व्यवहार करते हैं। यह कंद बहुत मीठा होता है और इसमें से एक प्रकार की चीनी निकलती है। अनेक पाश्चत्य देशों में इससे चीनी भी निकाली जाती है, और इसी लिये इसकी बहुत अधिक खेती होती है। वनस्पति शास्त्र के आधुनिक विद्वानों का अनुमान है कि यह मूलतः अमेरिका का कंद है, और वहीं से सारे संसार में फैला है।

शकरखोरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शकर+खोर(=खानेवाला)] एक प्रकार का छोटा सुंदर पक्षी।

विशेष—इसकी लंबाई प्रायः एक बालिश्त से भी कम होती है और यह भारत, फारस तथा चीन में पाया जाता है। इसका रंग नीला और चोंच काली होती है और यह पेड़ों में लटकता हुआ घोंसला बनाता है। यह प्रायः खेतों में रहता और खेती को हानि पहुँचानेवाले कीड़े मकोड़े आदि खाता है। यह सफेद रंग के दो या तीन अंडे एक साथ देता है पर इसके अंडा देने का कोई निश्चित समय नहीं है।

शकरख्वारा—वि० [फ़ा० शकरख्वारह्] १. मीठी चीजें खानेवाला। तर माल खानेवाला। २. रस लेनेवाला। आनंद लेनेवाला। रसग्राही [को०]।

शकरपा—वि० [फ़ा०] जिसका एक पाँव टेढ़ा हो। लँगड़ा [को०]।

शकरपारा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शकरपारह्] १. एक प्रकार का फल जो नीबू से कुछ बड़ा होता है।

विशेष—इसका वृक्ष नीबू के वृक्ष के समान होता है, पर पत्ते नीबू से कुछ बड़े होते हैं। फूल कुछ लाल रंग के होते हैं, फल सुगंधित और खट्टा मीठा होता है।

२. एक प्रकार का प्रसिद्ध पकवान जो बरफी की तरह चौकोर कटा हुआ होता है।

विशेष—यह मीठा भी बनता है और नमकीन भी। इसके बनाने के लिये पहले मैदे में मोयन डालकर उसे दूध या पानी से गूँथते हैं और तब उसे मोटी रोटी की तरह बेलकर छूरी आदि से छोटे छोटे चौकोर टुकड़ों में काटकर घी में तल लेते हैं। यदि नमकीन बनाना होता है तो मैदा गूँधते समय ही उसमें नमक, अजवायन आदि डाल देते हैं और यदि मीठा बनाना होता है, तो कटी हुई टुकड़ियों को तलने के बाद चीनी के शीरे में पाग लेते हैं।

३. रूईदार कपड़े पर की एक प्रकार की सिलाई जो शकरपारे के आकार की चौकोर होती है। ४. माशूक, जिसकी अदाएँ मीठी लगती हैं (को०)।

शकरपाला—संज्ञा पुं० [फ़ा० शकरपारा] दे० 'शकरपारा'।

शकरपीटन—संज्ञा पुं० [देशी] एक प्रकार की कँटीली झाड़ी।

विशेष—यह हिमालय पर्वत की पथरीली और सूखी, जमीन में कुमायूँ और उसके पश्चिम ओर बोई जाती है। यह थूहर का ही एक भेद है; पर साधारण सेंहुड़ या थूहड़ के वृक्ष से कुछ भिन्न होता है।

शकरपूरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शकरपूरह्] मीठा समोसा। पिराक। गुझिया [को०]।

शकरबादाम--संज्ञा पुं० [फ़ा० शकर+बादाम] खूबानी या जर्दआलू नामक फल जो पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत में होता है।

शकरबार--वि० [फ़ा०] १. शकर बरसानेवाला, बहुत मीठा। २. मिष्टभाषी (को०)।

शकरबूजा--संज्ञा पुं० [फ़ा० शकरबूज़ट्] दे० 'शकरपूरा' (को०)।

शकरी¹--संज्ञा पुं० [फा० शकर] फालसा नामक फल।

शकरी²--वि० शकर संबंधी। शकर की (को०)।

शकल¹--संज्ञा पुं० [सं०] १. त्वचा। चमड़ा। २. छाल। छिलका। दालचीनी। ४. आँवला। ५. कमल को नाल। कमलदंड। ६. खाँड़। शक्कर। ७. खंड। टुकड़ा। ८. मनु के अनुसार एक प्राचीन देश का नाम। ९. घड़े या पात्र का एक अंश (को०)। १०. स्फुलिंग। चिनगारी (को०)। ११. मछली की चोइयाँ। मछली के शरीर के ऊपर का छिलका (को०)। १३. अर्धांश। आधा भाग। जैसे, चंद्रशकल (को०)।

शकल²--संज्ञा स्त्री० [अ० शक्ल] १. मुख की बनावट। आकृति। चेहरा। रूप। जैसे,--शकल न सूरत, गधे की मूरत।

मुहा०--शकल बिगाड़ना = मारते मारते चेहरे का रूप बिगाड़ना। बहुत मारना।

यौ०--सूरत शकल = चेहरे की बनावट। आकृति।

२. मुख का भाव। चेष्टा। ३. किसी चीज की बनावट। गढ़न। ढाँचा।

मुहा०--शकल बनाना = कोई चीज बनाकर उसका स्वरूप तैयार करना। रूपरेखा या ढाँचा तैयार करना।

४. किसी चीज का बनाया हुआ आकार। आकृति। स्वरूप। ५. उपाय। तरकीब। ढब। जैसे--अब इस मुकदमें से पीछा छुड़ाने की कोई शकल निकालनी चाहिए।

क्रि० प्र०--निकलना। निकालना।

६. मूर्ति।

शकलित--वि० [सं०] खंड खंड किया हुआ। जो टुकड़ों में विभक्त किया गया हो (को०)।

शकली--संज्ञा स्त्री० [सं० शकलिन्] १. सकुची मछली। २. मछली।

शकलीकृत--वि० [सं०] विभक्त। टुकड़े टुकड़े किया हुआ (को०)।

शकव--संज्ञा पुं० [सं०] राजहंस।

शकांतक--संज्ञा पुं० [सं० शकान्तक] शक जाति का अंत करनेवाला, विक्रमादित्य।

शकाकुल--संज्ञा पुं० [अ० शक़ाक़ुल] शतावर की जाति की एक प्रकार की वनस्पति। शकाकुल मिस्री। धुधली। दुधली। गर्सदस्ती।

विशेष--यह प्रायः मिस्र देश में अधिकता से होती है और भारत के भी कुछ स्थानों, विशेषतः काश्मीर और अफगानिस्तान में पाई जाती है। यह प्रायः नम जमीन में वृक्षों के नीचे उगती है। यह बारहों मास रहती है। इसके डंठल डेढ़ दो हाथ ऊँचे होते है। इसके पत्ते प्रायः तीन अंगुल चौड़े और एक बालिश्त लंबे होते हैं। इसके पौधे को प्रत्येक गाँठ पर पत्ते होते हैं। इसमें नीले या लाल रंग के छोटे छोटे फूल गुच्छों में होते और काले रंग के फल लगते हैं। इसकी जड़ कंद के रूप में होती और बाजार में प्रायः 'शकाकुल मिस्री' के नाम से मिलती है। यह जड़ कामोद्दीपक तथा स्नायुओं के लिये बलकारक मानी जाती है और विविध प्रकार का पौष्टिक औषधों में डाली जाती है। कंवार में इसके बीज ओषधि के काम में आते हैं। इसकी राख का क्षार (नमक) अर्श रोग में लाभदायक समझा जाता है। यह जड़ प्रायः काबुल से आती है और वहीं सबसे अच्छी भी होती है।

शकाब्द--संज्ञा पुं० [सं०] राजा शालिवाहन का चलाया हुआ शक संवत्।

विशेष--ईसवी सन् संवत् में से ७८, ७९ घटाने से शकाब्द निकल आता है।

शकार--संज्ञा पुं० [सं०] १. शकवंशीय व्यक्ति। वह जो शक वंश का हो। २. संस्कृत नाटकों की परिभाषा में राजा का वह साला जो नीच जाति का हो।

विशेष--नाटक में इस पात्र को बेवकूफ, चंचल, घमंडी, नीच तथा कठोर हृदयवाला दिखलाया जाता है। जैसे,--मृच्छकटिक में संस्थानक।

शकारि--संज्ञा पुं० [सं०] शक जाति का शत्रु विक्रमादित्य।

शकील--वि० [अ०] [वि० स्त्री० शकीला] अच्छी शक्लवाला। खूबसूरत। सुंदर।

शकुंत--संज्ञा पुं० [सं० शकुन्त] १. पक्षी। चिड़िया। उ०--जिस पर निज पक्षों की छाया रक्खी शकुंत द्विजवर ने। मृदु कोंपल सी वह मुनिकन्या देखा कण्व मुनीश्वर ने।--शकुं०, पृ० २। २. एक प्रकार का कीड़ा। ३. विश्वामित्र के लड़के का नाम। ४. नीला चाष पक्षी। नीलकंठ (को०)। ५. भास नाम का पक्षीविशेष (को०)।

शकुंतक--संज्ञा पुं० [सं० शकुन्तक] १. एक प्रकारकी छोटी चिड़िया। २. पक्षी। चिड़िया।

शकुंतला--संज्ञा स्त्री० [सं० शकुन्तला] १. राजा दुष्यंत की स्त्री जो भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध राजा भरत की माता और मेनका अप्सरा की कन्या थी।

विशेष--महाभारत में लिखा है कि शकुंतला का जन्म विश्वामित्र के वीर्य से मेनका अप्सरा के गर्भ से हुआ था जो इसे वन में छोड़कर चली गई थी। वन में शकुंतों (पक्षियों) आदि ने हिंसक पशुओं से इसकी रक्षा की थी इसी से इसका नाम शकुंतला पड़ा। वन में से इसे कण्व ऋषि उठा लाए थे और अपने आश्रम में रखकर कन्या के समान पालते थे। एक बार राजा दुष्यंत अपने साथ कुछ सैनिकों को लेकर शिकार खेलने

निकले और घूमते फिरते कण्व ऋषि के आश्रम में पहुंचे। ऋषि उस समय वहाँ उपस्थित नहीं थे, इससे युवती शकुंतला ने ही राजा दुष्यंत का आतिथ्य सत्कार किया था। उसी अवसर पर दोनों में पहले प्रेम और फिर गंधर्व विवाह हो गया। कुछ दिनों के बाद राजा दुष्यंत वहाँ से अपने राज्य को चले गए। कण्व मुनि जब लौटकर अपने आश्रम में आए, तब वे यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए कि शकुंतला का विवाह दुष्यंत से हो गया। शकुंतला उस समय गर्भवती हो चुकी थी अतः समय पाकर उसके गर्भ से बहुत ही बलवान् और तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम भरत रखा गया। कहते हैं, इस देश का भारतवर्ष नाम इसी के कारण पड़ा कुछ दिनों बाद शकुंतला अपने पुत्र को लेकर राजा दुष्यंत के दरबार में पहुँची। परंत शकुंतला को बीच में दुर्वासा ऋषि का शाप मिल चुका था, इससे राजा ने बिलकुल न पहचाना और स्पष्ट कह दिया कि न तो मैं तुम्हें जानता हूँ और न तुम्हें अपने यहाँ आश्रय दे सकता हूँ। परंतु उसी अवसर पर एक आकाश वाणी हुई जिससे राजा को विदित हुआ कि यह मेरी ही पत्नी है और यह पुत्र भी मेरा ही है। उसी समय उन्हें कण्व मुनि के आश्रम की भी सब बातें स्मरण हो आईं और उन्होंने शकुंतला को अपनी प्रधान रानी बनाकर अपने यहाँ रख लिया।

२. महाकवि कालिदास का लिखा हुआ एक प्रसिद्ध नाटक जिसमें राजा दुष्यंत और शकुंतला के प्रेम, विवाह, प्रत्याख्यान और ग्रहण आदि का वर्णन है।

शकुंति—संज्ञा पुं० [सं० शकुन्ति] १. भास नाम की चिड़िया। २. चिड़िया। पक्षी [को०]।

शकुंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शकुन्तिका] १. छोटी चिड़िया। २. रिआया। प्रजा। ३. एक प्रकार का पक्षी (को०)। ४. टिड्डी। झींगुर (को०)।

शकुंद—संज्ञा पुं० [सं० शकुन्द, सफेद कनेर।

शकुची—संज्ञा स्त्री० [सं० शङ्कुच] दे० 'सकुची'।

शकुन—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी काम के समय दिखाई देनेवाले लक्षण जो उस काम के संबंध में शुभ या अशुभ माने जाते हैं। वे चिह्न आदि जो किसी काम के संबंध में शुभ या अशुभ माने जाते हैं।

विशेष—प्रायः लोग कुछ घटनाओं को देखकर उनका शुभ या अशुभ फल होना मानते हैं, और उन घटनाओं को शकुन कहते हैं। जैसे,—कहीं जाते समय रास्ते में बिल्ली का रास्ता काट जाना अशुभ शकुन समझा जाता है और जलपूर्ण कलश या मृतक आदि का मिलना शुभ शकुन माना जाता है। इसी प्रकार अंगों का फड़कना, विशिष्ट पशुओं या पक्षियों आदि का बोलना या कुछ विशिष्ट वस्तुओं का दिखाई पड़ना भी शकुन समझा जाता है। हमारे यहाँ इस विषय का एक अलग शास्त्र ही बन गया है; और उसके अनुसार दही, घी, दूब, चंदन, शीशा, शंख, मछली, देवमूर्ति, फल, फूल, पान, सोना, चाँदी, रत्न, वेश्या आदि का दिखाई पड़ना शुभ और साँप, चमड़ा, नमक, खाली बरतन आदि दिखाई पड़ना अशुभ समझा जाता है। प्रायः लोग अशुभ शकुन देखकर काम रोक या टाल देते हैं। साधारणतः बोलचाल में लोग शकुन से प्रायः शुभ शकुन का ही अभिप्राय लेते हैं; अशुभ शकुन को अपशकुन, असगुन कहते हैं।

मुहा०—शकुन विचारना या देखना = कोई कार्य करने से पहले किसी उपाय से लक्षण आदि देखकर यह निश्चय करना कि यह काम होगा या नहीं; अथवा काम अभी करना चाहिए या नहीं।

२. शुभ मुहूर्त या उसमें होनेवाला कार्य। ३. पक्षी। चिड़िया। ४. गिद्ध नामक शिकारी पक्षी। ५. मंगल अवसरों पर गाए जानेवाले गीत (को०)।

शकुनक—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी। खग [को०]।

शकुनज्ञ संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शकुनों का शुभाशुभ फल जानता हो।

शकुनज्ञा—संज्ञा स्त्री० [सं०] गिरगिट। गृहगोधा [को०]।

शकुनज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] शकुन की जानकारी [को०]।

शकुनद्वार—संज्ञा पुं० [सं०] शकुन शास्त्र के अनुसार एक साथ ही शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के शकुन होना जो यात्रा आदि के लिये बहुत शुभ माना जाता है।

शकुनशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें शकुनों के शुभ और अशुभ फलों का विवेचन हो। शकुन बतानेवाला शास्त्र।

शकुनाहृत—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का चावल जिसे दाऊदखानी कहते हैं। २. एक प्रकार की मछली। ३. एक प्रकार का बालरोग। शकुनी ग्रह। विशेष दे० 'शकुनी—१'। ४. वह पदार्थ जो चिड़ियों द्वारा लाया गया हो।

शकुनाहृता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चिड़ियों द्वारा लाई हुई वस्तु। २. एक प्रकार का चावल।

शकुनि—संज्ञा पुं० [सं०] १. पक्षी। चिड़िया। २. गिद्ध पक्षी। ३. एक नाग का नाम। ४. एक दैत्य जो हिरण्याक्ष का पुत्र और वृक का पिता था। ५. पुराणानुसार दुःसह के आठ पुत्रों में से एक जो निर्माष्टि के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। ६. पुराणानुसार विकुक्षि के पाँच पुत्रों में से एक। ७. गांधारी का भाई और कौरवों का मामा जो सुवलराज का पुत्र था और इसी लिये सौवल कहलाता था।

विशेष—यह बहुत ही दुष्ट और पापाचारी था। दुर्योधन ने इसे अपना मंत्री बना रखा था और इसके परामर्श से उसने पांडवों के साथ अनेक कपटपूर्ण व्यवहार किए थे। कौरव कुल के नाश का मुख्य कारण यही शकुनि था। यह अपने पुत्र सहित सहदेव के हाथ से मारा गया था।

८. बड़ा भारी दुष्ट और पाजी आदमी। ९. फलित ज्योतिष के अनुसार बव आदि ग्यारह करणों में से आठवाँ करण।

विशेष—कहते हैं, जो बालक इस करण में जन्म लेता है, वह बड़ा भारी धूर्त, ठग, क्रूर, कृतघ्न, क्रोधी और लंपट होता है। १०. चील पक्षी (को०)। ११. मुर्गा (को०)।

शकुनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार स्कंद की अनुचरी एक मातृका का नाम।

शकुनिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार स्कंद के एक अनुचर का नाम। २. एक बालग्रह। शकुनी।

शकुनिप्रपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] चिड़ियों के पानी पीने का बर्तन या स्थान (को०)।

शकुनिवाद—संज्ञा पुं० [सं०] उषा काल के समय चिड़ियों का चहचहाना।

शकुनी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. श्यामा पक्षी। २. गौरैया पक्षी की मादा। ३. पुराणानुसार एक पूतना का नाम जो बहुत क्रूर और भयंकर कही गई है। ४. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बालग्रह।

विशेष—कहते हैं, जिस बालक पर इसका आक्रमण होता है, उसके अंग शिथिल पड़ जाते है, शरीर में जलन होती है, फोड़े फुंसियाँ आदि निकल आती हैं, शरीर से पक्षियों की सी गंध आने लगती है और वह रह रहकर चौंक उठता है।

शकुनी^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शकुन+ई (प्रत्य०)] वह जो शकुनों का शुभ और अशुभ फल जानता हो। शकुनज्ञ।

शकुनी^{3}—संज्ञा पुं० [सं० शकुनि] दुर्योधन का मामा सौबल। विशेष दे० 'शकुनि'। उ०—वे दुःशासन और शकुनी बन गए।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३०७।

शकुनीमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बालकों की एक प्रकार की व्याधि।

विशेष—यह बालकों के जन्म से छठे दिन, छठे मास या छठे वर्ष होती है और इसमें उन्हें ज्वर तथा कंप होता है, दृष्टि ऊर्द्ध्व हो जाती हैं और हरदम बहुत कष्ट बना रहता हैं।

शकुनीश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षियों का स्वामी, अर्थात् गरुड़।

शकुर—वि० [सं०] पालतू (पशु आदि) (को०)।

शकुल, शकुलगंड—संज्ञा पुं० [सं० शकुल, शकुलगण्ड] सौरी मछली।

शकुला—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुटकी। कटुकी।

शकुलाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. सफेद दूब। श्वेत दूर्वा। २. गाँडर दूब। गंडदूर्वा।

शकुलाक्षका, शकुलाक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शकुलाक्ष'।

शकुलाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गाँडर दूब।

शकुलादनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुटकी। कटुकी। २. जलपिप्पली। जल चौलाई। कंचट शाक। ४. कायफल। कटफल। ५. गजपीपल। गजपिप्पली। ६. गाँडर दूब। गंडदूर्वा। ७. जटामासी। बालछड़। ८. केंचुआ। गंडूपद।

शकुलार्भक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली। गडुई मछली।

शकुलाह्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलपीपल।

शकुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सकुची मछली। २. पुराणानुसार एक नदी का नाम।

शकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्ठा। गुह। २. गोबर गोमय।

शकृत्करि—संज्ञा पुं० [सं०] गाय का बच्चा। बछड़ा।

शकृत्करी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बछिया। वत्सतरी (को०)।

शकृत्कीट—संज्ञा पुं० [सं०] १. मल का कीड़ा। विष्टकीट। २. गुबरैला।

शकृत्पिंड, शकृत्पिंडक—संज्ञा पुं० [सं० शकृत्पिण्ड, शकृत्पिण्डक] मल का पिंड। लेंड़। लेंड़ा (को०)।

शकृद्देश—संज्ञा पुं० [सं०] मलद्वार। गुदा।

शकृद्द्वार—संज्ञा पुं० [सं०] मलद्वार। गुदा।

शकृद्भेद—संज्ञा पुं० [सं०] अतिसार। ग्रहणी रोग (को०)।

शक्क—संज्ञा पुं० [अ०] संदेह। शंका। दे० 'शक' (को०)।

शक्कर^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० शर्करा, प्रा० सक्कर सक्करा; मि० फा० शकर (=चीनी)] १. चीनी। २. कच्ची चीनी। खाँड़।

शक्कर^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] बैल। वृष।

शक्करि—संज्ञा पुं० [सं०] बैल। वृष।

शक्करी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वर्णवृत्त के अंतर्गत चौदह अक्षरोंवाले छंदों की संज्ञा जिनके नाम इस प्रकार हैं—वसंततिलका, असंबाधा, अपराजिता, प्रहरणकलिका, वासंती, मंजरी, कुटिल, इंदुवदना, चक्र नांदीमुख, लाली और अनद। इनमें से वसंततिलका सबसे अधिक प्रसिद्ध है। २. मेखला। ३. एक प्राचीन नदी का नाम। ४. अँगुली। उँगली (को०)। ५. निम्न वर्ण की महिला। नीच जाति की स्त्री (को०)।

शक्की—वि० [अ० शक्क+ई (प्रत्य०)] जिसे हर बात में संदेह होता हो। सदा शक करनेवाला। उ०—इनका मिजाज निहायत शक्की है, ये सबको बेवफा समझते हैं।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ११५।

शक्त^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसमें शक्ति हो। शक्तिसंपन्न। समर्थ। ताकतवर। २. वह जो प्रिय बातें कहता हो। मिष्टभाषी।

शक्त^{2}—वि० १. योग्य। काबिल। समर्थ। २. शक्तिसंपन्न। ताकतवर। ३. धनाढ्य। समृद्धियुक्त। ४. अर्थ का अभिव्यंजक या अर्थद्योतक, जैसे कोई शब्द। ५. प्रियभाषी। मिष्टभाषी। ६. चतुर। चालाक। पटु (को०)।

शक्तव—संज्ञा पुं० [सं०] भुने हुए अनाज का आटा। सत्तू।

शक्ति^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह शारीरिक गुण या धर्म जिसके द्वारा अंगों का संचालन तथा दूसरे काम होते हैं। बल। पराक्रम। ताकत। जोर। जैसे—(क) उसमें दो मन बोझ उठाने की शक्ति है। (ख) अब तो उनमें उठने बैठने की भी शक्ति नहीं रह गई। (ग) दुर्बलों पर शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

क्रि० प्र०—देखना।—रखना। लगना।—लगाना।

२. किसी प्रकार का बल या ताकत जिससे कोई काम हो। जैसे,—मानसिक शक्ति, स्मरण शक्ति, सैनिक शक्ति, शब्द शक्ति। ३. किसी पदार्थ के संयोजक अंगों या द्रव्यों आदि का प्रक

होनेवाला बल। दूसरे पदार्थों पर प्रभाव डालनेवाला बल। जैसे,—(क) इस औषध में ऐसी शक्ति है कि मृत्यु को भी कुछ देर के लिये रोक देती है। (ख) इस इंजन में बीस घोड़ों की शक्ति है। (ग) पानी के बहाव में बड़ी बड़ी चट्टानों तक को तोड़ने की शक्ति होती है। ४. वश। अधिकार। जैसे,—इसकी रक्षा करना मेरी शक्ति के बाहर है। ५. राज्य के वे साधन जिनसे शत्रुओं पर विजय प्राप्त की जाती है।

विशेष—हमारे यहाँ राजाओं की तीन प्रकार की शक्ति कही गई है—प्रभुशक्ति, मंत्रशक्ति, और उत्साहशक्ति। कोश और दंड आदि के संबंध की शक्ति प्रभुशक्ति, संधि, विग्रह आदि के संबंध की शक्ति मंत्रशक्ति और पराक्रम प्रकट करने तथा विजय प्राप्त करने की शक्ति उत्साहशक्ति कहलाती है।

६. बड़ा और पराक्रमी राज्य जिसमें यथेष्ट धन और सेना आदि हो। जैसे,—इस समय युरोप में इंगलैंड, फ्रांस, जर्मनी, और रूस आदि कई बड़ी बड़ी शक्तियाँ हैं। ७. न्याय के अनुसार वह संबंध जो किसी पदार्थ और उसका बोध करानेवाले शब्द में होता है। इस शब्द का यह अर्थ बोद्धव्य है—इस प्रकार का अनादि संकेत। जैसे घट शब्द के कहने मात्र से श्रोता को घट शब्द के रूपाकार आदि का ज्ञान हो जाता है। ८. ईश्वर की वह कल्पित माया जो उसकी आज्ञा से सब काम करनेवाली मानी जाती है। प्रकृति। माया। ९. किसी देवता का पराक्रम या बल जो कुछ विशिष्ट कार्यों का साधक माना जाता है। जैसे,—रौद्री शक्ति, वैष्णवी शक्ति।

विशेष—हमारे यहाँ पुराणों में भिन्न भिन्न देवताओं की अनेक शक्तियों की कल्पना की गई है और ये शक्तियाँ बहुधा देवी के रूप में और मूर्तिमती मानी गई हैं। जैसे, विष्णु की कीर्ति, कांति, तुष्टि, पुष्टि, शांति, प्रीति आदि शक्तियाँ; रुद्र का गुणोदरी, गोमुखी, दीर्घजिह्वा, ज्वालामुखी, लंबोदरी खेचरी, मजरी आदि शक्तियाँ; देवी की इंद्राणी, वैष्णवी, ब्रह्माणी, कौमारी, नारसिंही, वाराही, माहेश्वरी और सर्वमंगला आदि शक्तियाँ।

१०. तंत्र के अनुसार किसी पीठ की अधिष्ठात्री देवी।

विशेष—इनकी उपासना करनेवाले शाक्त कहे जाते हैं। ऐसी शाक्त समस्त सृष्टि की रचना करनेवाली और सब तरह की सामर्थ्य रखनेवाली मानी जाती है।

११. दुर्गा। भगवती। १२. गौरी। १३. लक्ष्मी। १४. तांत्रिकों की परिभाषा में वह नटी, कापालिका, वेश्या, धोबिन, नाउन, ब्राह्मणी, शूद्रा, ग्वालिन या मालिन जो युवती, रूपवती और सौभाग्यवती हो। ऐसी स्त्रियों का विधिपूर्वक पूजन सिद्धिप्रद और मोक्षदायक माना जाता है। १५. स्त्री की मूत्रेंद्रिय। भग। (तांत्रिक)। १६. एक प्रकार का शस्त्र। साँग। १७. तलवार। १८. क्षमता। योग्यता (को०)। १९. साहित्य में शब्द के अर्थ की बोधक शक्ति। अभिधा, लक्षणा और व्यंजना नाम की शब्दशक्ति (को०)। २०. काव्यादि निर्माण की क्षमता। रचनाशक्ति। कवित्वशक्ति (को०)। २१. द्यूतक्रीड़ा का उपकरण वा यंत्र (को०)।

शक्ति²—संज्ञा पुं० प्राचीन ऋषि का नाम जो पराशर के पिता थे।

शक्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] गंधक।

शक्तिकुंठन—संज्ञा पुं० [सं० शक्तिकुण्ठन] शक्ति का दब जाना। नरम पड़ जाना [को०]।

शक्तिग्रह¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. कार्तिकेय। ३. शब्द का अर्थ बतलानेवाली शक्ति या वृत्ति का ज्ञान। ४. वह जो भाला या बरछी चलाता हो। भालाबरदार।

शक्तिग्रह²—वि० १. शक्ति या अर्थ को ग्रहण करनेवाला। २. बर्छाधारी (को०)।

शक्तिग्राहक¹—वि० [सं०] शब्दार्थ का निश्चय अथवा निर्धारण करनेवाला [को०]।

शक्तिग्राहक²—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय।

शक्तिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शक्ति का भाव या धर्म, शक्तित्व।

शक्तितः—अव्य० [सं० शक्तितस्] यथाशक्ति। शक्ति के अनुसार [को०]।

शक्तित्रय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शक्ति'—५।

शक्तिधर¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्कंद। कार्तिकेय। उ०—शक्ति शक्तिधर पार्सहि पासी।—गर्गसंहिता (शब्द०)। २. भालाबरदार। बर्छीधारी (को०)।

शक्तिधर²—वि० शक्तिशाली। ताकतवर। मजबूत [को०]।

शक्तिध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय। स्कंद। २. वह जो शक्ति नामक अस्त्र धारण करता हो (को०)।

शक्तिनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

शक्तिपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] छतिवन। सतिवन। सप्तपर्ण वृक्ष।

शक्तिपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय। स्कंद। २. शक्ति नामक अस्त्र या बर्छा धारण करनेवाला व्यक्ति (को०)।

शक्तिपात—संज्ञा पुं० [सं०] शक्ति का क्षय। पराजय। २. योग दर्शन में एक आध्यात्मिक प्रक्रिया जिसके द्वारा गुरु अपना आध्यात्मिक शक्ति शिष्य में स्थापित करता है [को०]।

शक्तिपूजक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शक्ति की उपासना करता हो। शाक्त। २. तांत्रिक। वाममार्गी।

शक्तिपूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शक्ति का शाक्तों द्वारा होनेवाला पूजन।

शक्तिपूर्व—संज्ञा पुं० [सं०] पराशर का एक नाम।

शक्तिबोध—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दशक्ति का ज्ञान। शब्द के अर्थ का बोध।

शक्तिभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय। स्कंद। २. साँग या भाला धारण करनेवाला पुरुष (को०)।

शक्तिमत्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शक्तिमान् होने का भाव या धर्म।

शक्तिमत्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शक्तिमत्ता'।

शक्तिमान्—वि० [सं० शक्तिमत्] [वि० स्त्री० शक्तिमती] १. बलवान्। बलिष्ठ। ताकतवर। २. सामर्थ्य वा योग्यता का अतिक्रमण करनेवाला (को०)। ३. बाणधारी (को०)।

शक्तिवन—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक वन का नाम जो तीर्थ कहा गया है।

शक्तिवादी—संज्ञा पुं० [शक्तिवादिन्] वह जो शक्ति की उपासना करता हो। शाक्त।

शक्तिवीर—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शक्ति की उपासना करता हो। वाममार्गी।

शक्तिवैकल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शक्ति का नाश। दौर्बल्य कमजोरी। २. असमर्थता।

शक्तिशोधन—संज्ञा पुं० [सं०] शाक्तों का एक संस्कार जिसमें वे किसी स्त्री को शक्ति की प्रतिनिधि बनाने से पहले कुल विशिष्ट क्रियाएँ करके उसे शुद्ध करते हैं।

शक्तिष्ठ—वि० [सं०] जिसमें शक्ति हो। शक्तिशाली। मजबूत। ताकतवर। बलवान्।

शक्तिसंपन्न—वि० [सं० शक्तिसम्पन्न] शक्ति से युक्त। बलवान्। ताकतवर। मजबूत।

शक्तिहीन—वि० [सं०] १. जिसमें शक्ति का अभाव हो। निर्बल। बलहीन। असमर्थ। नाताकत। २. हींजड़ा। नपुंसक। नामर्द।

शक्ती^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शक्ति] एक प्रकार के मात्रिक छंद का नाम।

विशेष—इसके प्रत्येक चरण में १८ मात्राएँ होता हैं और इसकी रचना ३ + ३ + ४ + ३ + ५ होती है। अंत में सगण, रगण, या नगण में से कोई एक और आदि में एक लघु होना चाहिए। इसकी १, ६, ११ और १७वीं मात्रा लघु रहती है। यह भुजंगी और चंद्रिका वृत्त की चाल पर होता है। अंतर यह है कि वे गणबद्ध होते हैं और यह स्वतंत्र है। यह छंद फारसी के 'करीमा बबख्शाय बर हाल मा। कि हस्तम् असीरे कमंदे हवा' की बहर से मिलता है। जैसे, उ०—शिवा शंभु के पाँव पंकज गहौं। विनायक सहायक सदा दिन चहौं।—काव्य प्र० (शब्द०)।

शक्ती^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शक्तिन्] शक्तिवाला। शक्तिशाली। बलवान्।

शक्ती^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं० शक्ति] दे० 'शक्ति'।

शक्तु—संज्ञा पुं० [सं०] भुने हुए जौ चने आदि का आटा। सत्तू।

शक्तुक—संज्ञा पुं० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का बहुत तीव्र और उग्र विष जो भसोड़ के समान होता है। पीसने से यह सहज ही में पिसकर सत्तू के समान हो जाता है।

शक्तुफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमी वृक्ष। सफेद कीकर। छिकुर का पेड़।

शक्तुफलिका, शक्तुफली—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमी का वृक्ष।

शक्त्यपेक्ष दायन—संज्ञा पुं० [सं०] ऋणी की सामर्थ्य के अनुसार ऋण थोड़ा थोड़ा करके चुकता कराना।

शक्तृ—संज्ञा पुं० [सं०] वशिष्ठ मुनि के सबसे बड़े लड़के का नाम।

विशेष—महाभारत में लिखा है कि एक बार रास्ते में राजा कल्माषपाद से इनको कहा सुनी हो गई, जिसपर राजा ने इन्हें एक कोड़ा जमा दिया। इसपर इन्होंने राजा को शाप दिया कि तुम राक्षस हो जाओ। तदनुसार राजा राक्षस हो गया और पहले उसने इन्हीं को भक्षण कर लिया।

शक्न, शक्नु—वि० [सं०] प्रिय बोलनेवाला, प्रियंवद [को०]।

शक्मा—संज्ञा पुं० [सं० शक्मन्] १. पराक्रम। शक्ति। सामर्थ्य। २. इंद्र। संक्रंदन। ३. कर्म।

शक्य^{1}—वि० [सं०] १. किया जाने योग्य। जो किया जा सके। संभव। क्रियात्मक। २. जिसमें शक्ति हो।

शक्य^{2}—संज्ञा पुं० शब्दशक्ति के द्वारा प्रकट होनेवाला अर्थ। जैसे—'अग्नि' पद में अंगार रूप की शक्ति है अतः अग्निपद का अंगार शक्य अथवा वाच्य है। (व्याकरण)।

शक्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शक्य होने का भाव या धर्म। क्रियात्मकता। २. क्षमता। समर्थता (को०)।

शक्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शक्यता' [को०]।

शक्यप्रतीकार—वि० [सं०] जिसका प्रतीकार किया जा सके [को०]।

शक्यप्राप्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] न्याय दर्शन के अनुसार प्रमाता के वे प्रमाण जिनसे प्रमेय सिद्ध होता है।

शक्यसामंतता—संज्ञा स्त्री० [सं० शक्यसामन्तता] पड़ोसी राजाओं को जीतने योग्य क्षमता [को०]।

शक्यार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] वह अर्थ जो शब्द को अभिधाशक्ति द्वारा व्यक्त हो। अभिधेयार्थ [को०]।

शक्र^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. दैत्यों का नाश करनेवाले, इंद्र। उ०—भरत शोक बरन्यो नहि जाई। मनहु शक्र द्विज हत्या पाई।—लवकुशचरित्र (शब्द०)। २. कुटज वृक्ष। कोरैया। ३. अर्जुन वृक्ष। कोह वृक्ष। ४. इंद्रजौ। कुटज बीज। ५. रगण के चौथे भेद अर्थात् (ऽ।।ऽ) की संज्ञा, जिसमें छह मात्राएँ होती हैं। जैसे—लोकवती। ६. ज्येष्ठा नक्षत्र, जिसके अधिष्ठता देवता इंद्र हैं। ७. उलूक पक्षी (को०)। ८. चौदह की संख्या (को०)। ९. शिव का एक नाम (को०)। १०. स्वामी। राजा (को०)।

शक्र^{2}—वि० समर्थ। योग्य।

शक्रकार्मुक—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रधनुष।

शक्रकाष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्राची दिशा। पूर्व दिशा जिसका अधिपति इंद्र है [को०]।

शक्रकुमारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शक्रमातृका'।

शक्रकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रध्वज।

शक्रक्रीड़ाचल—संज्ञा पुं० [सं० शक्रक्रीडाचल] इंद्र के क्रीड़ा करने का पर्वत अर्थात् सुमेरु पर्वत।

शक्रगोप, शक्रगोपक—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रगोप नामक कीड़ा। बीरबहूटी।

शक्रचाप—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रधनुष।

शक्रज, शक्रजात—संज्ञा पुं० [सं०] कौआ। काक पक्षी।

शक्रजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी लता। इंद्रायण। इनारुन।

शक्रजानु—संज्ञा पुं० [सं०] रामायण के अनुसार एक वानर का नाम।

शक्रजाल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'इंद्रजाल'।

शक्रजित्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने इंद्र पर विजय प्राप्त की हो। २. इंद्र को जीतनेवाले मेघनाद का एक नाम।

शक्रतरु—संज्ञा पुं० [सं०] भाँग का पेड़।

शक्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शक्र का भाव या धर्म।

शक्रदारु—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवदारु। २. साखू का पेड़। शाल।

शक्रदिक्—संज्ञा स्त्री० [सं० शक्रदिश्] पूर्व दिशा जिसके स्वामी इंद्र माने जाते हैं।

शक्रदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. हरिवंश के अनुसार शृंगाल के एक पुत्र का नाम।

शक्रदैवत—संज्ञा पुं० [सं०] ज्येष्ठा नामक नक्षत्र जिसके स्वामी इंद्र माने जाते हैं।

शक्रद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] १. देवदारु। २. मौलसिरी। बकुल वृक्ष। ३. साखू का पेड़। शाल वृक्ष।

शक्रधनु, शक्रधनुष—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रधनुष।

शक्रध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'इंद्रध्वज'।

शक्रनंदन—संज्ञा पुं० [सं० शक्रनन्दन] इंद्र का पुत्र अर्थात् अर्जुन।

शक्रनेमी—संज्ञा पुं० [सं० शक्रनेमिन्] १. देवदार का वृक्ष। २. मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी। ३. कुड़ा। कोरैया। कुटज वृक्ष।

शक्रपर्याय, शक्रपादप—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुड़ा। कुटज वृक्ष। २. देवदार का पेड़।

शक्रपुर—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र के रहने की पुरी, अमरावती।

शक्रपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शक्रपुर। अमरावती।

शक्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रजौ। कुटज बीज।

शक्रपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० शक्रपुष्पिका'।

शक्रपुष्पिका, शक्रपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अग्निशिखा नाम का वृक्ष। २. कलिहारी। लांगली। ३. नागदमनी। नागदौन।

शक्रप्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] एक नगर जिसे पांडवों ने खांडव वन जलाकर बसाया था। इद्रप्रस्थ। उ०—उठे सुनत हरि उद्धव वानी। भे पुनि शक्रप्रस्थ प्रस्थानी।—सबल (शब्द०)।

शक्रबीज—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रजौ।

शक्रभवन—संज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ग।

शक्रभिद्—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र को दबानेवाला, मेघनाद। इंद्रजित्।

शक्रभुवन—संज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ग।

शक्रभूभवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी नाम की लता। इनारुन। इंद्रायण।

शक्रभूरुह—संज्ञा पुं० [सं०] कुटज वृक्ष। कुड़ा। कोरैया।

शक्रमाता—संज्ञा स्त्री० [सं० शक्रमातृ] इंद्र की माता अर्थात् भार्गी।

शक्रमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. इंद्रध्वज। २. भार्गी।

शक्रमूर्द्धा—संज्ञा पुं० [सं० शक्रमूर्द्धन्] वल्मीक। बाँबी।

शक्रयव—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रजौ। कुटज बीज।

शक्रलोक—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रलोक। स्वर्ग।

शक्रवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रवारुणी नाम की लता। इनारुन। इंद्रायण।

शक्रवापी—संज्ञा पुं० [सं० शक्रवापिन्] महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम।

शक्रवास—संज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ग। शक्रभवन [को०]।

शक्रवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का वाहन अर्थात् मेघ। बादल।

शक्रवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] कुटज। कोरैया।

शक्रशरासन—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रधनुष।

शक्रशाखी—संज्ञा पुं० [सं० शक्रशाखिन्] कुड़ा। कुटज वृक्ष।

शक्रशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञभूमि में वह स्थान जहाँ इंद्र के उद्देश्य से बलि दी जाती हो।

शक्रशिर—संज्ञा पुं० [सं० शक्रशिरस्] बाँबी। वल्मीक।

शक्रसारथी—संज्ञा पुं० [सं० शक्रसारथि] इंद्र का सारथी अर्थात् मातलि।

शक्रसुत—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का पुत्र बालि, जिसे राम ने मारा था। २. जयंत (को०)। ३. अर्जुन (को०)।

शक्रसुधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुंदरू। गुंदवरोसा।

शक्रसृष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हरीतकी। हर्रे।

शक्राख्य—संज्ञा पुं० [सं०] उल्लू। पेचक पक्षी।

शक्राग्नि—संज्ञा पुं० [सं०] विशाखा नक्षत्र जिसके स्वामी इंद्र और अग्नि माने जाते हैं।

शक्राणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्र की पत्नी शची। इंद्राणी। २. निर्गुंडी। शेफालिका। सेनुआर।

शक्रात्मज—संज्ञा पुं० [सं०] १. अर्जुन। २. जयंत (को०)।

शक्रादन—संज्ञा पुं० [सं०] भाँग। भंग।

शक्रानिल—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में प्रभव आदि साठ संवत्सरों के बारह युगों में से दसवें युग के अधिपति। इनके युग में ये पाँच संवत्सर होते हैं,—पारधावी, प्रमादी, आनंद, राक्षस और अनल।

शक्रावर्त्त—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

शक्राशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. भाँग। विजया। भंग। २. कुड़ा। कुटज। कोरैया। ३. इंद्रजौ। कुटज बीज।

शक्रासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र का आसन। २. सिंहासन।

शक्राह्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्रजौ। कुटज बीज। २. कुटज वृक्ष।

शक्राह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शक्राह्व'।

शाक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. वज्र। ३. हाथी। ४. पर्वत। पहाड़।

शक्रुक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का विष [को०]।

शक्रेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शक्रेन्द्र] बीरबहूटी या इंद्रगोप नाम का कीड़ा।

शक्रोत्थान—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्रध्वज नाम का उत्सव जो भाद्र शुक्ल द्वादशी को होता था। दे० 'इंद्रध्वज'—२, ३।

शक्रोत्सव—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शक्रोत्थान'।

शक्ल—संज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'शकल²'।

मुहा०—शक्ल चिड़ियों की नाज परियों का = हैसियत के बाहर गुमान रखना। उ०—ऐसी तो सूरत भी नहीं पाई है बीबी, शक्ल चिड़ियों की नाज परियों का।—फिसाना०, भा० ३, पृ० १६। शक्ल दिखाना = (१) मिलना। (२) सामने आना। शक्ल देखते रह जाना = (१) चकित होना। (२) मुग्ध होना। शक्ल देखा करना = दे० 'शक्ल देखते रह जाना'। शक्ल न दिखाना = (१) न मिलना। (२) मुँह छिपाना। शक्ल पकड़ना = मूर्त होना। आकार ग्रहण करना। शक्ल पहचानना = (१) रूपरेखा से परिचित होना (२) देखकर चरित्र की बारीकियाँ जानना। शक्ल बनाना = असुंदर या विचित्र हो जाना। शक्ल बिगाड़ना = (१) चेहरे को कुरूप या विचित्र कर लेना। (२) पीटते पीटते मुँह सुजा देना।

शक्व—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी [को०]।

शक्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैल। २. आकाश।

शक्वरी संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उँगली। २. एक प्राचीन नदी का नाम। ३. मेखला। ४. गौ। गाय। ५. अंगूठी। मुद्रिका (को०)। ६. एक साम (को०)। ७. शक्करी नामक छंद। विशेष दे० 'शक्करी'।

शक्वा¹—संज्ञा पुं० [सं० शक्वन्] १. हाथी। गज। २. शिल्पी। निर्माता (को०)।

शक्वा²—वि० शक्तिमान्। ताकतवर। मजबूत [को०]।

शखस—संज्ञा पुं० [अ० शख्स] दे० 'शख्स'।

शख्स—संज्ञा पुं० [अ० शख्स्] व्यक्ति। जन। मनुष्य। आदमी।

शख्सियत—संज्ञा स्त्री० [अ० शख्सियत] शख्स का भाव या धर्म। व्यक्तिता। व्यक्तित्व।

शख्सी—वि० [अ० शख्सी] शख्स का। मनुष्य का। व्यक्तिगत।

शगल—संज्ञा पुं० [अ० शग़ल; शग़्ल, शुग़ल] १. व्यापार। कामधंधा। जैसे,—कहिए आजकल क्या शगल है। उ०—शगल बेहतर है इश्कबाजो का। क्या हकीकी व क्या मजाजी का।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ४। २. वह काम जो यों ही समय बिताने या मन बहलाने के लिये किया जाय। मनोविनोद। उ०—मनियर को एक नये शगल में तल्लीन देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।—जिप्सी, पृ० ११९।

शगुन—संज्ञा पुं० [सं० शकुन (मि० फ़ा० शगून, शुगुन, शुगून)] १. किसी काम के समय होनेवाले लक्षणों का शुभाशुभ विचार। शकुन। विशेष दे० 'शकुन'।

मुहा०—शगुन लेना या विचारना = कोई काम करने से पहले कुछ विशिष्ट क्रियाओं द्वारा यह जानना कि यह काम होगा कि नहीं।

२. किसी काम के आरंभ में होनेवाले शुभ लक्षण। ३. एक प्रकार की रसम जो विवाह की बातचीत पक्की होने पर होती है। इसमें कन्या पक्ष के लोग वर पक्ष के लोगों के यहाँ कुछ मिठाई और नगद आदि भेजते हैं। तिलक। टीका।

क्रि० प्र०—देना।—भेजना।—लेना।

४. नजराना। भेंट। (क्व०)। ५ बहला में वह स्थान जहाँ बैल हाँकनेवाला बैठता है।

शगुनियाँ—संज्ञा पुं० [हिं० शगुन + इयाँ (प्रत्य०)] वह जो ज्योतिष या रमल आदि के द्वारा शुभाशुभ शगुनों आदि का विचार करता हो। साधारण कोटि का ज्यातिषी। रम्माल।

शगून—संज्ञा पुं० [फ़ा० शुगून] दे० 'शगुन'।

शगूनियाँ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शुगून + हिं० इया] दे० 'शगुनियाँ'।

शगूफा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शिगूफह्] १. बिना खिला हुआ फूल। कली। २. पुष्प। फूल। ३. कोई नई और विलक्षण घटना। ४. कसीदा। बेलबूटा (को०)।

मुहा०—शगूफा खिलना = कोई नई और विलक्षण घटना होना। शगूफा खिलाना = कोई ऐसी नई और विलक्षण बात कर बैठना जिससे सब लोग चकित हो जायँ। शगूफा छोड़ना = झगड़े फसादवाली बात करना।

विशेष—इस मुहावरे का प्रयोग प्रायः ऐसी बातों के संबंध में ही होता है जिनसे कोई लड़ाई झगड़ा या झंझट आदि पैदा हो।

शचि, शची—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्र की पत्नी, इंद्राणी जो दानवराज पुलोमा की कन्या थी।

पर्या०—सची। ऐंद्री। पुलोमजा। माहेंद्री। जयवाहिनी।

२. सतावर। शतावरी। शतमूली। ३. स्पृक्का। असबरग। ४. वक्तृत्व शक्ति। वाग्मिता। ५. प्रज्ञा। बुद्धि। अक्ल। ६. बल। शक्ति (को०)। ७. क्षिप्रकारिता। क्रियात्मकता (को०)। ८. भक्ति। प्रीति (को०)। ९. पवित्र क्रिया (को०)।

शचीतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

शचीपति—संज्ञा पुं० [सं०] शची के पति, इंद्र।

शचीपती—संज्ञा पुं० [सं०] अश्विनीकुमार।

शचीबल—संज्ञा पुं० [सं०] नाटक में वह पात्र जो इंद्र के समान वेशभूषा धारण करता हो।

शचीभर्ता—संज्ञा पुं० [सं० शचीभर्तृ] शची के पति, इंद्र [को०]।

शचीश—संज्ञा पुं० [सं०] शची के पति, इंद्र।

शजर—संज्ञा पुं० [अ०] दरख्त। वृक्ष। पेड़।

शजरा—संज्ञा पुं० [अ० शज़रह्, शज्रह्] १. वह कागज जिसमें किसी की वंशपरंपरा लिखी हो। वंशवृक्ष। पुश्तनामा। कुर्सीनामा। वंशावली। २. वृक्ष। पौधा। ३. पटवारी का तैयार हुआ खेतों का नक्शा।

शट¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. खटाई। अम्ल रस। २. एक प्राचीन देश का नाम।

शट²—वि० [सं०] अम्ल। खट्टा [को०]।

शटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जटा। २. शेर की गर्दन का बाल। सटा। केसर (को०)।

शटि, शटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कचूर। कर्चूर। २. गंधपलाशी। कपूरकचरी। ३. अमिया हल्दी। आम्रहरिद्रा। आमा हलदी। ४. सुगंधबाला। नेत्रबाला।

शट्टक—संज्ञा पुं० [सं०] घी और पानी में सना हुआ चावल का आटा जिसका व्यवहार वैद्यक में होता है।

शठ^1—वि० [सं०] १. धूर्त। चालाक। धोखेबाज। २. पाजी। लुच्चा। बदमाश।

शठ^2—संज्ञा पुं० १. तगर का फूल। २. केसर। कुंकुम। जाफरान। ३. लोहा। ४. इस्पात। फौलाद। ५. धतूरे का वृक्ष। ६. चीता चित्रक। चितउर। ७. तालवृक्ष। ८. अमला का वृक्ष। ९. साहित्य में पाँच प्रकार के पतियों या नायकों में से एक प्रकार का पति या नायक। वह नायक जो छलपूर्वक अपना अपराध छिपाने में चतुर और किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेम करते हुए भी अपनी स्त्री से प्रेम प्रदर्शित करने का बहाना करता हो। उ०—सहित काज मधुरै मधुर, बैननि कहै बनाय। उर अंतर घट कपटमय, सो शठ नायक आय।—(शब्द०)। १०. छलिया वा धूर्त जन (को०)। ११. बेवकूफ। जड़बुद्धि। १२. आलसी। १३. वह जो दो आदमियों के बीच में पड़कर उनके झगड़े का निपटारा करता हो। मध्यस्थ।

यौ०—शठधी, शठबुद्धि, शठमति = जिसकी बुद्धि शठतापूर्ण हो। शठ या दुष्ट व्यक्ति। धूर्त आदमी।

शठता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शठ का भाव या धर्म। धूर्तता। २. बदमाशी। पाजीपन।

शठत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शठ का भाव या धर्म। शठता।

शठांगा, शठान्वा—संज्ञा स्त्री० [सं० शठाङ्गा, शठान्वा] ब्राह्मणी लता। अंबष्ठा। पाढ़ा।

शठांबा—संज्ञा स्त्री० [सं० शठाम्बा] अंबष्ठा। पाढ़ा (को०)।

शठिका, शठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कचूर। २. गंधपलाशी। कपूरकचरी। ३. बन अदरक। पेऊ।

शठीरूपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कंद गिलोय। कंद गुड़ूची।

शठोदरक—वि० [सं० शठोदर्क] अंत में धोखा देनेवाला। धोखेबाज। धूर्त।

शड़ाप—संज्ञा पुं० [अनुध्व०] कोड़े, चाबुक आदि के मारने से होनेवाली ध्वनि।

मुहा०—शड़ाप शड़ाप कोड़े जमाना = तेजी से कोड़ा मारना। उ०—और आदमी इधर उधर से शड़ाप शड़ाप से कोड़े जमाते जाते हैं।—फिसाना०, भा० ३, पृ० ४।

शण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सन नामक पौधा। विशेष दे० 'सन'। २. भंग। विजया। ३. शणपुष्पी। बनसनई।

शणई—संज्ञा स्त्री० [सं० शण + हिं० ई] दे० 'सन'।

शणकंद—संज्ञा पुं० [सं० शणकन्द] चर्मकषा नाम का सुगंधि द्रव्य।

शणकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० शणकन्दा] एक प्रकार का थूहड़ जिसे सातला कहते हैं।

शणक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम। सनक।

शणघंटा, शणघंटिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शणघण्टा, शणघण्टिका] शणपुष्पी नाम की लता। विशेष दे० 'शणपुष्पी'।

शणचूर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] सनई का वह बचा हुआ भाग जो उसे कूटकर सन निकाल लेने के बाद रह जाता।

शणतांतव—वि० [सं० शणतान्तव] [वि० स्त्री० शणतांतवी] सन के रेशे का बना हुआ (को०)।

शणपट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] सन का बना हुआ वस्त्र वा पट्ट (को०)।

शणपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पटसन। अशनपर्णी (को०)।

शणपुष्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शणपुष्पी'।

शणपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की वनस्पति जो साधारणतः बनसनई कहलाती है।

विशेष—यह छोटी और बड़ी दो प्रकार की होती है। छोटी शणपुष्पी प्रायः सब प्रांतों में पाई जाती है। इसका क्षुप, पत्ते, फूल इत्यादि सन के ही समान होते हैं, किंतु क्षुप सन से छोटा होता है। इसके फूल पीले, फलियाँ मटर के समान गोल और लंबी होती हैं। यह कड़वी, वमनकारक और पारे को बाँधनेवाली कही गई है। इसके फल सूख जाने पर अंदर के बीजों के कारण झन झन शब्द करते हैं; इसी से इसे झुनझुनियाँ कहते हैं। बड़ी शणपुष्पी प्रायः वाटिकाओं में लगाते हैं। इसका क्षुप, पत्ते आदि छोटी शणपुष्पी से बड़े होते हैं और फूल सफेद रंग के होते हैं। यह कसैली, गरम और पारे को बाँधनेवाली कही गई है और मोहन, स्तंभन आदि में व्यवहार की जाती है।

१. अरहर। आढकी। रहर।

शणशिफा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सनई या सन की जड़। शणमूल।

शणसमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] बनसनई। शणपुष्पी।

शणसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] कुश आदि की बनी हुई पवित्री जो श्राद्ध, तर्पण आदि कृत्यों के समय कनिष्ठिका की बगलवाली उँगली में पहनी जाती है। पवित्रक। पवित्री। पैंती।

शणाल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शणालुक'।

शणालुक—संज्ञा पुं० [सं०] अमलतास का वृक्ष।

शणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शणपुष्पी। बनसनई।

शणीर—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोन नदी के मध्य का उपजाऊ स्थल। २. सरयू नदी की शाखाओं से घिरा हुआ छपरे के समीप का एक द्वीप। दर्दरी तट।

शत^1—वि० [सं०] दस का दस गुना। सौ।

शत^2—संज्ञा पुं० १. सौ की संख्या। दस की दस गुनी संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—१००। २. कोई बड़ी संख्या। जैसे, शतपत्र।

शतक^1—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शतिका] १. सौ का समूह। २. एक ही तरह की सौ चीजों का संग्रह। जैसे,—नीतिशतक, रहिमन

शतक। ३. वह जिसमें सौ भाग या अवयव हों। ४. सौ वर्षों का समूह। शताब्दी। ५. विष्णु का एक नाम।

शतक^2—वि० १. सौ। दस का दस गुना। २. जिसमें सौ का समावेश हो। सौ की संख्या से संबद्ध [को०]।

शतकपालेश—संज्ञा पुं० [सं०] शिव की एक मूर्ति का नाम।

शतकर्मा—संज्ञा पुं० [सं० शतकर्मन्] शनि ग्रह।

शतकिरण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की समाधि।

शतकीर्ति—संज्ञा पुं० [सं०] जैन पुराणानुसार एक भावी अर्हत् का नाम।

शतकुंत, शतकुंद—संज्ञा पुं० [सं० शतकुन्त, शतकुन्द] सफेद कनेर। करवीर।

शतकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० शतकुम्भ] १. एक प्राचीन पर्वत का नाम। २. सफेद कनेर। शतकुंत। ३. सुवर्ण। सोना।

शतकुंभा—पंज्ञा स्त्री० [सं० शतकुम्भा] महाभारत में वर्णित एक नदी का नाम।

शतकुलीरक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का कीड़ा।

शतकुसुमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतपुष्पा। सौंफ।

शतकेसर—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुवार एक वर्षपर्वत का नाम।

शतकोटि—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौ करोड़ की संख्या। अर्बुद। २. इंद्र का वज्र। ३. हीरा। हीरक।

शतकौंभ, शतकौंभक—संज्ञा पुं० [शतकौम्भ, शतकौम्भक] स्वर्ण। सोना।

शतक्रतु—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. वह जिसने सौ यज्ञ किए हों।

शतक्रतुद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] काली कुड़ा। कृष्ण कुटज।

शतकातुयव—संज्ञा पुं० [सं०] कुटज। बीज इंद्रजौ।

शतखंड—संज्ञा पुं० [सं० शतखण्ड] १. सोना। स्वर्ण। २. सोने की बनी हुई कोई चीज। ३. सौ भाग। सौ टुकड़ा।

शतगु—वि० [सं०] मनु के अनुसार सौ गौओं का स्वामी। सौ गायों का रखनेवाला।

शतगुण, शतगुणित—वि० [सं०] सौगुना।

शतग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० शतग्रन्थि] १. सफेद दूब। दूर्वा। २. नीली दूब।

शतग्रीव—संज्ञा पुं० [मं०] एक प्रकार की भूतयोनि।

शतघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०]।

शतघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का शस्त्र।

विशेष—किसी बड़े पत्थर या लकड़ी के कुंदे में बहुत से कीलकाँटे ठोंककर यह शस्त्र बनाया जाता था और इसका व्यवहार युद्ध के समय शत्रुओं पर फेंकने में होता था। लोग इसे तोप या राकेट जैसा शस्त्र कहते हैं जिसमे सैकड़ों व्यक्ति मारे जा सकते थे।

२. वृश्चिकाली। बिछाती। ३. एक प्रकार की घास। ४. करंज या कंजे का पेड़। ५. भावप्रकाश के अनुसार गले में होनेवाला एक प्रकार का रोग।

विशेष—इसमें त्रिदोष के कारण गले में बत्ती के समान लंबी और मोटी तथा कंठ को रोकनेवाली, मांस के अंकुरों से भरी हुई और बहुत पीड़ा देनेवाली सूजन हो जाती है। यह रोग प्राणनाशक कहा गया है।

शतचंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शतचन्द्र] महाभारत के अनुसार वह तलवार या चर्म (ढाल) जिसपर चंद्रमा के समान चमकते हुए आकार बने हों [को०]।

यौ०—शतचंद्रवर्त्म = (१) तलवार चलाने की एक विधि या पद्धति। (२) तलवार की धार।

शतचरणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कनखजूरा। गोजर। शतपदी [को०]।

शतच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] १. कठफोड़वा या काठ ठोका नामक पक्षी। २. सौ पत्तों या पंखड़ियोंवाला कमल। शतदल पद्म।

शतजटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सतावर। शतमूली।

शतजित्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २. भागवत के अनुपार विराज के एक पुत्र का नाम। ३. एक यज्ञ का नाम।

शतजिह्व संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

शततम—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शततम] सौवाँ। सौ की संख्या पर पड़नेवाला [को०]।

शततारका, शततारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतभिषा नाम का नक्षत्र जिसमें सौ तारे हैं। विशेष दे० 'शतभिषा'।

शतदंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शतदन्तिका] नखी नामक गंधद्रव्य। हाथीशुंडी। नागदंती।

शतदल—संज्ञा पुं० [सं०] पद्म। शतपत्र।

शतदला—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेवती। शतपत्री।

शतद्रु—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पंजाब की सतलज नाम की नदी।

विशेष—यह नदी हिमालय पर्वत के दक्षिण पश्चिमी भाग में बहती हुई व्यास या विपासा से मिलकर मुल्तान के दक्षिण ओर सिंधु में मिलती है।

२. गंगा नदी का एक नाम (को०)।

शतधन्वा—संज्ञा पुं० [सं० शतधन्वन्] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. एक योद्धा जिसे कृष्ण ने सत्राजित के मारने के अपराध में मारा था।

शतधा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] दूब। दूर्वा।

शतधा^{2}—क्रि० वि० [सं०] सौ टुकड़ों में। सौ पर्तों में। सौ प्रकार से। सैकड़ों बार। उ०—मूर्त प्रेरणा सी लहराती नभ में शतधा विद्युत्।—प्रतिमा, पृ० १३९।

शतधामा—संज्ञा पुं० [सं० शतधामन्] विष्णु का एक नाम।

शतधार^1—संज्ञा पुं० [सं०] वज्र ।

शतधार^2—वि० सैकड़ों धाराओं मे प्रवहमान । २. जिसमें सौ कोण वा धाराएँ हों [को०] ।

शतधार वन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

शतधृति—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र । २. ब्रह्मा । ३. स्वर्ग ।

शतधौत—वि [सं०] सैकड़ों बार धोया हुआ । पूर्णतः स्वच्छ [को०] ।

शतनेत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतावर ।

शतपति—संज्ञा पुं० [सं०] सौ मनुष्यों का मालिक या सरदार ।

शतपत्र^1—वि० [सं०] १. सौ दलों या पत्तोंवाला । २. सौ पंखोंवाला ।

शतपत्र^2—संज्ञा पुं० १ कमल । २. सेवती । शतपत्री । ३. मोर नामक पक्षी । ४. कठफोड़वा नामक पक्षी । ५. सारस पक्षी । ६. मैना । शारिका । ७. बृहस्पति । ८. तोता या तोते की जाति का एक पक्षी (को०) ।

शतपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कठफोड़वा नाम का पक्षी । २. एक प्रकार का विषैला कीड़ा । ३. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।

शतपत्रनिवास—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा ।

शतपत्रभेदन्याय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'न्याय'—४ (९७) ।

शतपत्रयोनि—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा ।

शतपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दूब । दूर्वा । २. नारी । स्त्री (को०) ।

शतपत्रिक, शतपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का गुलाब । श्वेत गुलाब ।

शतपत्री केसर—संज्ञा पुं० [सं०] गुलाब का जीरा । गुलाबकेसर ।

शतपथ—वि० [सं०] १. असंख्य मार्गोंवाला । २. बहुत सी शाखाओं-वाला ।

शतपथ ब्राह्मण—संज्ञा पुं० [सं०] यजुर्वेद का एक ब्राह्मण ।

विशेष—इसके कर्ता महर्षि याज्ञवल्क्य माने जाते हैं । इसकी माध्यंदिन और काण्व शाखाएँ मिलती हैं । इनमें से पहली की विशेष प्रतिष्ठा है । एक प्रणाली के अनुसार इसमें ६८ प्रपाठक हैं, और दूसरी के अनुसार यह १७ कांडों और १०० अध्यायों में विभक्त है । चारों ब्राह्मणों में से यह अधिक क्रमपूर्ण और रोचक है । इसमें अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यंत कर्मकांड का बड़ा ही विशद और सुंदर वर्णन है ।

शतपथिक—वि० [सं०] १. बहुत से मतों का अनुगामी । २. शतपथ ब्राह्मण का जानने या पढ़नेवाला ।

शतपद् वि० [सं०] सैकड़ों पैरोंवाला [को०] ।

शतपद—संज्ञा पुं० [सं०] १. कनखजूरा । गोजर । २. च्यूंटी ।

शतपद चक्र—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में सौ कोष्ठोंवाला एक प्रकार का चक्र जिसकी सहायता से नक्षत्रों का ज्ञान सुगमतापूर्वक हो जाता है ।

शतपदी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कनखजूरा । गोजर । २. सतावर । शतमूली । ३. मरसे की जाति का एक पौधा जिसके ऊपर कँलगी के आकार के लाल फूल लगते हैं । जटाधर । ४. नीली कोयल नाम की लता ।

शतपद्म संज्ञा पुं० [सं०] १. सफेद कमल । श्वेतकमल । २. सौ पंखुड़ियोंवाला कमल (को० ।

शतपरिवार—संज्ञा पुं० [सं०] समाधि का एक भेद ।

शतपर्वा^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शतपर्वन्] १. बाँस । वंश । २. पौंढ़ा । गन्ना । केतारा ।

शतपर्वा^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दूर्वा घास । दूब । २. बच । ३. कुटकी । ४. सुगंधिद्रव्य । ५. भार्गव की पत्नी का नाम । ६. कलंबी । करेमू का साग । ७. क्वार या आश्विन की पूर्णिमा । कोजागर पूर्णिमा (को०) ।

शतपर्विका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दूब । २. बच । ३. यव । जौ ।

शतपर्वेश—संज्ञा पुं० [सं०] भार्गव या शुक्र ग्रह [को०] ।

शतपाद्—वि० [सं०] सैकड़ों पैरवाला । जिसे सैकड़ों पैर हो [को०] ।

शदपाद—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शतपद' ।

शतपादिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली नामक अष्टवर्गीय ओषधि । २. कनखजूरा । गोजर ।

शतपादी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शतपादिका' [को०] ।

शतपाल—संज्ञा पुं० [सं०] सौ गाँवों का अध्यक्ष वा अधिकारी [को०] ।

शतपुत्रिका, शतपुत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सतपुतिया । तरोई । २. सतावर । शतावरी ।

शतपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. साठी धान्य । २. किरातार्जुनीय महाकाव्य के रचयिता संस्कृत कवि 'भारवि' का एक नाम । इनका शतलुंपक और शतलुप नाम भी प्राप्त होता है (को०) ।

शतपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सोआ नाम का साग । २. सौंफ । ३. गवेधुक ।

शतपुष्पादल—संज्ञा पुं० [सं०] १ सौंफ का साग । शताह्वा ।

शतपुष्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शतपुष्पा' ।

शतपोद, शतपोदक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का वातजन्य भगंदर ।

विशेष—इसमें गुदा के समीप फोड़ा उत्पन्न होता है जिसके पकने पर बहुत से छेद हो जाते हैं और उनमें से मल, मूत्र, वीर्य निकलता है ।

२. एक प्रकार का रोग जिसमें वात और रक्त के कुपित होने से लिंग पर अनेक छेद हो जाते हैं ।

शतपोन—संज्ञा पुं० [सं०] चलनी । छनना [को०] ।

शतपोरक, शतपौर—संज्ञा पुं० [सं०] पौंढ़ा । गन्ना ।

शतप्रसूना—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शतपुष्पा' ।

शतप्रास—संज्ञा पुं० [सं०] कनेर का वृक्ष । करवीर वृक्ष ।

शतफल—संज्ञा पुं० [सं०] बाँस ।

शतफली—संज्ञा पुं० [सं० शतफलिन्] बाँस । शतफल [को०] ।

शतबला—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम ।

शतबलाक—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक आचार्य का नाम।

शतबलि—संज्ञा पुं० [सं०] १. मछली। २. रामायण के अनुसार एक बंदर का नाम।

शतबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का कीड़ा। २. भागवत के अनुसार एक असुर का नाम। ३. बौद्धों के अनुसार मार के पुत्र का नाम।

शतभिष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शतभिषा'।

शतभिषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्विनी आदि सताइस नक्षत्रों में से चौबीसवाँ नक्षत्र।

विशेष—यह सौ तारों का समूह है और इसकी आकृति मंडलाकार है। इसके अधिष्ठाता देवता वरुण कहे गए हैं, और यह ऊर्ध्वमुख माना गया है। कहते हैं, जो बालक इस नक्षत्र में जन्म लेता है, वह साहसी, निष्ठुर, चतुर और अपने वैरी का नाश करनेवाला होता है।

शतभीरु—संज्ञा पुं० [सं०] मल्लिका। चमेली।

शतमख—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। शतक्रतु। २. उल्लू। कौशिक।

शतमन्यु[1]—वि० [सं०] १. क्रोधी। गुस्सावर। २. उत्साही।

शतमन्यु[2]—संज्ञा पुं० १. इंद्र। २. उल्लू।

शतमयूख—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शतमल्ल—संज्ञा पुं० [सं०] संखिया नामक विष।

शतमान—संज्ञा पुं० [सं०] १. सुवर्ण की कोई वस्तु जो तौल में सौ मान की हो। २. सोना या चाँदी तौलने के लिये सौ मान की तौल या बाट। ३. चाँदी का एक पल। ४. आढ़क नाम की प्राचीन काल की तौल जो प्रायः पौने चार सेर की होती थी। ५. रूपामाखी या तारमाक्षिक नाम की उपधातु।

शतमार्ज—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो अस्त्र आदि बनाता या उन्हें ठीक करता हो।

शतमुख[1]—वि० [सं०] जिसमें सैकड़ों मार्ग हों। सैकड़ों मुख या निकास रखनेवाला [को०]।

शतमुख[2]—क्रि० वि० [सं०] सौ खंडों या धाराओं में। अनेक ओर से। चारों ओर से। उ०—ताम्रपर्णी पीपल से, शतमुख झरते चंचल स्वर्णिम निर्झर।—ग्राम्या, पृ० ६३।

शतमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कूर्चिका। मार्जनी। झाड़ू [को०]।

शतमूर्धा—संज्ञा पुं० [सं० शतमूर्धन्] बिमौट। बाँबी [को०]।

शतमूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बड़ी सतावर। २. बच। ३. नीली दूर्वा। नीली दूब।

शतमूलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आखुपर्णी नाम की लता। २. बड़ी दंती। बँगरेड़ा।

शतमूली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शतावरी नाम की ओषधि। २. तालमूली। मूसली। ३. बच।

शतयज्वा—संज्ञा पुं० [सं० शतयज्वन्] शतक्रतु। इंद्र [को०]।

शतयाष्टिक—संज्ञा पुं० [सं०] वह हार जिसमें सौ लड़ें हों।

शतयातु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन वैदिक ऋषि का नाम।

शतरंज—संज्ञा पुं० [फ़ा०; मि० सं० चतुरङ्ग] एक प्रकार का प्रसिद्ध खेल जो चौंसठ खानों की बिसात पर खेला जाता है।

विशेष—यह खेल दो आदमी खेलते हैं जिनमें से प्रत्येक के पास १६-१६ मुहरे होते हैं। इन सोलह मुहरों में एक बादशाह, एक वजीर, दो ऊँट, दो घोड़े, दो हाथी या किश्तियाँ तथा आठ प्यादे होते हैं। इनमें से प्रत्येक मुहरे की कुछ विशिष्ट चाल होती है, अर्थात् उसके चलने के कुछ विशिष्ट नियम होते हैं। उन्हीं नियमों के अनुसार विपक्षी के मुहरे मारे जाते हैं। जब बादशाह किसी ऐसे घर में पहुँच जाता है जहाँ से उसके चलने की जगह नहीं रहती, तब बाजी मात समझी जाती है। इसकी बिसात में आठ आठ खानों की आठ पंक्तियाँ होती हैं। विशेष दे० 'चतुरंग' शब्द।

शतरंजबाज—संज्ञा पुं० [फ़ा० शतरंज+बाज] शतरंज का खिलाड़ी। शातिर।

शतरंजबाजी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शतरंज+बाज़ी] १. शतरंज खेलने का व्यसन। २. शतरंज खेलने का काम या भाव।

शतरंजी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] वह दरी जो शतरंज की बिसात की तरह कई प्रकार के रंग बिरंगे सूतों से बनी हो। २. शतरंज खेलने की बिसात। ३. वह रोटी जो कई प्रकार के अनाजों को मिलाकर बनाई गई हो। मिस्सी रोटी। ४. वह जो शतरंज का अच्छा खिलाड़ी हो।

शतरथ—संज्ञा पुं० [सं०] एक राजा का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

शतरात्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ जो सौ रातों में समाप्त होता था।

शतरुद्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. रुद्र का एक रूप जिसके सौ मुँह माने जाते हैं। २. शैव दर्शन के अनुसार एक शक्ति जो आत्मा की उत्पादक कही गई है।

शतरुद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हिमालय की एक नदी का नाम।

शतरुद्रिय, शतरुद्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. यज्ञ का हवि। २. यजुर्वेद का एक अंश जिसमें रुद्र के स्तोत्र हैं। ३. महाभारत में वर्णित शिव की एक स्तुति (को०)।

शतरूप—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शतरूपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्रह्मा की मानसी कन्या तथा पत्नी का नाम।

विशेष—इसी के गर्भ से स्वायंभुव मनु की उत्पत्ति हुई थी। पर विष्णुपुराण में लिखा है कि शतरूपा स्वायंभुव मनु की स्त्री थी, न कि माता।

शतर्च्ची—संज्ञा पुं० [सं० शतर्च्चिन्] ऋग्वेद के प्रथम मंडल के मंत्रद्रष्टा ऋषियों की उपाधि।

शतलुपक—संज्ञा पुं० [सं० शतलुम्पक] भारवि का एक नाम [को०]।

शतलुप—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शतलुंपक'।

शतलोचन^1—वि॰ [सं॰] सौ नेत्रोंवाला ।

शतलोचन^2—संज्ञा पुं॰ १. स्कंद के एक गण या अनुचर का नाम । २. पुराणानुसार एक असुर का नाम । ३. महाभारत के अनुसार इंद्र का एक नाम (को॰) ।

शतवनि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

शतवर्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. सौ वर्ष । एक शताब्दी । २. वह जो सौ वर्ष पुराना हो । ३. वह जो सौ वर्ष तक टिक सके । सौ वर्ष तक रहनेवाला [को॰] ।

शतवल्ली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. नीली दूब । २. काकोली नामक अष्टवर्गीय ओषधि ।

शतवादन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बहुत से बाजों का एक साथ बजना ।

शतवार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक कवच का नाम जो अथर्ववेद में है ।

शतवार्षिक—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शतवार्षिकी] १. प्रति सौ वर्ष पर होनेवाला । २. सौ वर्ष तक रहने या होनेवाला ।

शतवार्षिकी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. पानी न बरसना । अनावृष्टि । २. वह उत्सव जो सौ वर्ष बीतने पर मनाया जाय (को॰) ।

शतवाही—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वह स्त्री जो मैके से बहुत सा धन साथ लेकर ससुराल आई हो ।

शतविध—वि॰ [सं॰] सौ या अनंत प्रकार का । उ॰—शंकर, जय कृष्ण, राम, शतविध नामानुबंध, बांधव हे निराकार ।—आराधना, पृ॰ ६७ ।

शतवीर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] विष्णु का एक नाम ।

शतवीर्या—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. सफेद दूब । सतावर । शतमूली । ३. मुनक्का । कपिलद्राक्षा । ४. सफेद मूसली । ५. किसमिश ।

शतवृषभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ज्योतिष में एक मुहूर्त का नाम ।

शतवेधिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] चूका या चुक्रिका नामक साग ।

शतवेधी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शतवेधिन्] १. अमलवेंत । २. चूका या चुक्रिका नामक साग ।

शतशः—क्रि॰ वि॰ [सं॰ शतशस्] १. सैकड़ों । २. सौ बार । ३. वैविध्यपूर्ण । अनेकानेक । उ॰—अविकतः बाँधता वह ध्यान था । व्रजविभूषण हैं शतशः बने ।—प्रिय प्र॰, पृ॰ १६३ ।

शतशत—वि॰ [सं॰ शत का द्वित्व प्रयोग] सैकड़ों । अनंत । उ॰—जग के सर से सरस्वती शतशत रूपों की निकली क्षिप्र, मंद, गति रंकों की, भूपों की ।—अपरा, पृ॰ १९४ ।

शतशलाका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] छत्र ।

शतशाख—वि॰ [सं॰] १. सैकड़ों । २. शताधिक । जिसमें सैकड़ों शाखाएँ हों । ३. अनेक प्रकार का । वैविध्यपूर्ण [को॰] ।

शतशीर्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. विष्णु का एक नाम । २. रामायण के अनुसार एक प्रकार का अभिमंत्रित अस्त्र ।

शतशीर्षा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वासुकी देवी का एक नाम ।

शतशृंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शतशृङ्ग] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।

विशेष—यह पर्वत महाभद्र के उत्तर में अवस्थित बतलाया गया है । अनुमान है कि यह वर्तमान मैसूर राज्य के एक पर्वत का प्राचीन नाम है ।

शतसंख्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शतसङ्ख्य] विष्णुपुराण के अनुसार दसवें मन्वंतर के एक देवता का नाम ।

शतसहस्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. सौ हजार की संख्या । एक लाख की संख्या । २. कई सौ की संख्या अर्थात् एक बड़ी संख्या [को॰] ।

शतसहस्रक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

शतसाहस्र—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शतसाहस्री] १. सौ हजार से युक्त वा सौ हजार संबंधी । २. सौ हजार अर्थात् एक लाख मूल्य द्वारा क्रीत वा प्राप्त [को॰] ।

शतसुख—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अंतहीन आनंद । अनंत सुख [को॰] ।

शतसुता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सतावर । शतमूली ।

शतह्रद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हरिवंश के अनुसार एक असुर का नाम ।

शतह्रदा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. विद्युत् । बिजली । २. वज्र । ३. दक्ष की एक कन्या का नाम जो बहुपुत्र की स्त्री थी । ४. विराध राक्षस की माता का नाम ।

शतांग^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शताङ्ग] १. रथ । युद्ध का रथ । २. तिनिश । तिरिछ वृक्ष । ३. हरिवंश के अनुसार एक दानव का नाम (को॰) ।

शतांग^2—वि॰ सौ अंगों या अवयवोंवाला ।

शतांगुल—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शताङ्गुल] १. ताल या ताड़ का वृक्ष । २. वह जो माप में सौ अंगुल हो ।

शतांश—संज्ञा पुं॰ [सं॰] सौ भागों में से एक भाग । १००वाँ हिस्सा ।

शता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सतावर ।

शताकरा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक किन्नरी का नाम ।

शताकारा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक गंधर्व की स्त्री का नाम ।

शताक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हरिवंश के अनुसार एक दानव का नाम ।

शताक्षी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. रात्रि । रात । २. शतपुष्पा नामक वनस्पति । सौंफ । ३. पार्वती । ४. दुर्गा ।

शतानंद—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शतानन्द] १. ब्रह्मा । २. विष्णु । ३. विष्णु का रथ । ४. कृष्ण । ५. गौतम मुनि । ६. राजा जनक के एक पुरोहित का नाम । उ॰—शतानंद तब वंदि प्रभु बैठे गुरु पहँ जाय ।—तुलसी (शब्द॰) ।

शतानंदा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शतानन्दा] १. कार्तिकेय की एक मातृका का नाम । २. पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

शतानक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह स्थान जहाँ मुरदे जलाए जाते हों । मसान । श्मशान । मरघट ।

शतानन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बेल । श्रीफल ।

शतानना—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक देवी का नाम ।

शतानीक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वृद्ध पुरुष । बुड्ढा आदमी । २. एक मुनि का नाम जो व्यास के शिष्य थे । ३. श्वसुर । ससुर । ४.

पुराणानुसार चौथे युग में चंद्रवंश का द्वितीय राजा। इसका पिता जनमेजय और पुत्र सहस्रानीक था। ५. भागवत के अनुसार सुदास राजा का पुत्र। ६. महाभारत के अनुसार नकुल के एक पुत्र का नाम जो द्रौपदी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। एक असुर का नाम। ८. सौ सिपाहियों का नायक।

शताब्द[1]—वि० [सं०] सौ वर्षवाला।

शताब्द[2]—संज्ञा पुं० सौ वर्ष। शताब्दी। सदी।

शताब्दी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सौ वर्षों का समय। २. किसी संवत् में सैकड़े के अनुसार एक से सौ वर्ष तक का समय। जैसे,—ईसवी पाँचवीं शताब्दी अर्थात् ई० सन् ४०१ से ५०० तक का समय।

शतामघ—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का एक नाम।

शतायु—संज्ञा पुं० [सं० शतायुस्] १. वह जिसकी आयु सौ वर्षों की हो। सौ वर्षों तक जीवित रहनेवाला। २. महाभारत के अनुसार पुरुरवा के एक पुत्र का नाम। ३. विष्णुपुराण के अनुसार उशना के एक पुत्र का नाम।

शतायुध—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो सौ अस्त्र धारण करता हो। सौ अस्त्रोंवाला।

शतायुधा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक किन्नरी का नाम।

शतार—संज्ञा पुं० [सं०] १. वज्र। २. सुदर्शन चक्र।

शतारु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कोढ़।

विशेष—इस रोग में खाल पर लाल, काली और दाहयुक्त फुंसियाँ हो जाती हैं।

शतारुषी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शतारु'।

शतावधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह मनुष्य जो एक साथ बहुत सी बातें सुनकर उन्हें सिलसिलेवार याद रख सकता हो और बहुत से काम एक साथ कर सकता हो। श्रुतिधर।

विशेष—कुछ मेधावी लोग ऐसे होते हैं जो एक साथ बहुत से काम करने का अभ्यास करते हैं। जैसे,—एक आदमी रह रहकर कुछ संख्या या अंकों का नाम लेता है। दूसरा आदमी रह रहकर घड़ियाल बजाता है। तीसरा आदमी किसी ऐसी भाषा के वाक्य के शब्द बोलता है जिससे शतावधान करनेवाला मनुष्य अपरिचित होता है। एक आदमी पूर्ति के लिये कोई समस्या देता है। एक ओर शतरंज का खेल होता रहता है। शतावधान का यह कर्तव्य होता है कि वह संख्याएँ और अपरिचित भाषा के वाक्य के शब्द याद रख, समस्या की पूर्ति करे और शतरंज खेलता चले, और इसी प्रकार और जितने काम होते हों, उन सबमें संमिलित; और अंत में सबका ठीक ठीक उत्तर दे और सब काम ठीक ठीक पूरे उतारे।

२. शतावधान का काम।

शतावधानी[1]—संज्ञा पुं० [सं० शतावधानिन्] दे० 'शतावधान'।

शतावधानी[2]—संज्ञा स्त्री० [सं० शतावधान] शतावधान का काम।

शतावर—संज्ञा पुं० [सं० शतावरी] शतावर नाम की ओषधि। सफेद मूसली।

शतावरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शतमूली। सतावर। सफेद मूसली। २. कचूर। शटी। ३. इंद्र की भार्या, इंद्राणी।

शतावर्त्त—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. महादेव। ३. हरिवंश के अनुसार एक पवित्र वन का नाम।

शतावर्त्ती—संज्ञा पुं० [सं० शतावर्त्तिन्] विष्णु।

शताशिन—संज्ञा पुं० [सं०] वज्र।

शताह्वया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सौंफ। २. सोआ। मधुरिका। ३. सतावर।

शताह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सौंफ। २. सतावर। ३. अजमोदा। ४. एक प्राचीन नदी का नाम। ५. एक तीर्थ का नाम।

शतिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शतिकी] १. सौ संबंधी। सौ का। २. सौ से क्रीत (को०)। ३. जिसमें या जिसके पास सौ हों। सौ वाला (को०)। ४. सौ के बदले में परिवर्तित हुआ या प्राप्त (को०)। ५. (राशि) जिसपर प्रतिशत व्याज या कर निर्धारित हो (को०)। ६. सौ या सौ की प्राप्ति का द्योतक (को०)।

शती[1]—संज्ञा स्त्री० [सं० शतिन्] सौ का समूह। सैकड़ा। जैसे,—दुर्गासप्तशती। २. दे० 'शताब्दी'।

शती[2]—वि० १. सौ गुना। शतगुणित। २. संख्यातीत। असंख्य (को०)।

शती[3]—संज्ञा पुं० वह जो सौ का स्वामी हो। सौ का स्वामी (को०)।

शतेर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रु। २. घाव। जख्म। ३. हिंसा।

शतोदर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव का एक नाम। २. शिव के एक गण का नाम। ३. रामायण के अनुसार एक अस्त्र का नाम।

शतोदरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

शतौदना—संज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञ में होनेवाला एक प्रकार का कृत्य।

शत्य—वि० [सं०] दे० 'शतिक' (को०)।

शत्रि—संज्ञा पुं० [सं०] १. गज। हाथी। २. बल। ताकत। ३. एक राजर्षि का नाम।

शत्रुंजय[1]—संज्ञा पुं० [सं० शत्रुञ्जय] १. काठियावाड़ प्रांत का एक प्रसिद्ध पर्वत जो विमलाद्रि भी कहलाता है। यह जैनियों का एक प्रसिद्ध तीर्थ है। गिरनार। २. रामायण के अनुसार एक नाग (हाथी) का नाम। ३. परमेश्वर।

शत्रुंजय[2]—वि० शत्रुओं को जीतनेवाला।

शत्रुंतप—वि० [सं० शत्रुन्तप] शत्रुओं को परास्त करने नष्ट करनेवाला (को०)।

शत्रु—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसके साथ भारी विरोध या वैमनस्य हो। रिपु। अरि। दुश्मन। २. एक असुर का नाम। ३. नागदवन या मारछोबा नाम की वनस्पति।

शत्रुकंटक—संज्ञा पुं० [सं० शत्रुकण्टक] पुंगीफल। सुपारी।

शत्रुकंटका—संज्ञा स्त्री० [सं० शत्रुकण्टका] सुपारी।

शत्रुक—संज्ञा पुं० [सं०] अरि। रिपु। शत्रु (को०)।

शत्रुकर्षण—वि० [सं०] दे० 'शत्रुदमन' (को०)।

शत्रुकुल—संज्ञा पुं० [सं०] वैरी का घर। शत्रु का निवासस्थान [को०]।

शत्रुगृह—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में लग्न से छठा स्थान [को०]।

शत्रुघात—वि० [सं०] शत्रुघाती। शत्रुहंता [को०]।

शत्रुघाती[१]—संज्ञा पुं० [सं० शत्रुघातिन्] राजा दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न का एक पुत्र।

शत्रुघाती[२]—वि० शत्रु का नाश करनेवाला।

शत्रुघ्न[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. राम के एक भाई जो सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। इनका भरत के साथ वैसा ही प्रेम था जैसा लक्ष्मण का राम के साथ। २. श्वफल्क का एक पुत्र। ३. देवश्रवा के एक पुत्र का नाम।

शत्रुघ्न[२]—वि० शत्रु को मारनेवाला। अरि को नष्ट करनेवाला।

शत्रुघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] हथियार।

शत्रुजित्[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. ऋतुध्वज या कुवलयाश्व के पिता का नाम।

शत्रुजित्[२]—वि० शत्रु को जीतनेवाला।

शत्रुतपन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. एक दैत्य का नाम। कहते हैं, यह रोग फैलाता है।

शत्रुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शत्रु का भाव या धर्म। दुश्मनी। वैर भाव।

क्रि० प्र०—करना।—दिखलाना।—रखना।—होना।

शत्रुताई(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शत्रुता + हिं० ई (प्रत्य०) या सं० शत्रु + ताति (प्रत्य०) ?] दे० 'शत्रुता'।

शत्रुतापन—वि० [सं०] शत्रुओं को जलानेवाला। शत्रुहंता।

शत्रुत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शत्रु का भाव या धर्म। शत्रुता। दुश्मनी।

शत्रुदमन[१]—वि० [सं०] दुश्मनों को वश में करनेवाला।

शत्रुदमन[२]—संज्ञा पुं० दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न का एक नाम।

शत्रुद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] अमलबेंत।

शत्रुनिवर्हण—वि० [सं०] शत्रुओं का नाश करनेवाला [को०]।

शत्रुपक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रु का दल या दिशा। २. दुश्मन। वैरी। विरोधी [को०]।

शत्रुभंग—संज्ञा पुं० [सं० शत्रुभङ्ग] मूँज नामक तृण।

शत्रुभूमिज—संज्ञा पुं० [सं०] आँखों में लगाने का सुरमा।

शत्रुमर्दन[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. शत्रुघ्न का एक नाम। २. कुवलयाश्व के पुत्र का नाम।

शत्रुमर्दन[२]—वि० शत्रुओं का मर्दन या नाश करनेवाला।

शत्रुलाव—वि० [सं०] शत्रुओं को मारनेवाला [को०]।

शत्रुविग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] शत्रु की चढ़ाई या आक्रमण [को०]।

शत्रुविनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

शत्रुशाल(पु)—वि० [सं० शत्रु + शल्य] शत्रु के हृदय में शूल उत्पन्न करनेवाला। उ०—नृप शत्रुशाल नंदन नवल भावसिंह भुआल मान।—मतिराम (शब्द०)।

शत्रुसह, शत्रुसाह—वि० [सं०] शत्रु से लड़ने या भिड़नेवाला। शत्रु का सामना करनेवाला [को०]।

शत्रुसूदन—संज्ञा पुं० [सं०] शत्रुघ्न का एक नाम।

शत्रुसेवी—वि० [सं० शत्रुसेविन्] शत्रु राजा की सेवा करनेवाला [को०]।

शत्रुहंता—वि० [सं० शत्रुहन्तृ] शत्रु का नाश करनेवाला।

शत्रुहत्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] शत्रु का वध या हनन। दुश्मन को मार डालना [को०]।

शत्रुहा[१]—संज्ञा पुं० [सं० शत्रुहन्] दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न का एक नाम।

शत्रुहा[२]—वि० शत्रु का नाश करनेवाला।

शत्वरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात्रि। रात।

शद—संज्ञा पुं० [सं०] १. फल मूलादि। २. कर। महसूल। लगान। ३. तरकारी।

शदक—संज्ञा पुं० [सं०] वह अनाज जिसकी भूसी न निकाली गई हो।

शदीद—वि० [अ०] बहुत ज्यादह। जोर का। भारी। सख्त। जैसे,—उसको चोट शदीद है।

शदेवी—संज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'सहदेवी'।

शद्द(पु)[१]—संज्ञा पुं० [सं० शब्द, प्रा० सद्द; तुल० अ० शद, शद्द] आवाज ध्वनि। शब्द। उ०—सन्मुख्ख सारस शद्द। आह जीवनी फलमद्द।—पृ० रासो०, पृ० ५८।

शद्द[२]—संज्ञा पुं० [अ०] १. किसी अक्षर को दुहराकर या दो बार पढ़ना। दृढ़ करना। मजबूत करना। २. स्वर का ऊँचा करना। आवाज पर जोर देना। ३. स्वर का आरोहावरोह या उतार चढ़ाव [को०]।

यौ०—शद्द व मद, शद्दामद = (१) धूमधाम। (२) जोर शोर। तेजी।

शद्दाद—संज्ञा पुं० [अ०] १. वह व्यक्ति जो बहुत अत्याचारी हो। २. एक प्राचीन शक्तिशाली सम्राट् जिसने ईश्वरत्व का दावा किया और खुद को ईश्वर कहलवाता था। इसने एक कृत्रिम स्वर्ग भी बनावाया था परंतु उसमें प्रवेश करते समय घोड़े से गिरकर इसकी मृत्यु हो गई [को०]।

शद्रि[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. हाथी। ३. अर्जुन का का एक नाम (को०)।

शद्रि[२]—संज्ञा स्त्री० १. खंड। टुकड़ा। २. बिजली। दामिनी। तड़ित। सौदामिनी। ३. घनीभूत शर्करा। जमाई हुई चीनी। मिस्री। खंडमोदक (को०)।

शद्रु[१]—वि० [सं०] १. गिरानेवाला। नष्ट करनेवाला। पतन करनेवाला। २. जानेवाला। चलनेवाला। गतिशील (को०)।

शद्रु[२]—संज्ञा पुं० विष्णु।

शद्वला—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

शन[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. शांति। २. चुप्पी। खामोशी। मौनता।

शन[२]—संज्ञा पुं० [सं० शण] दे० 'सन' (पौधा)।

शनई(पु)—अव्य० [सं० शनैः] दे० 'शनैः'।

शनई शनई—क्रि० वि० [सं० शनैः शनैः] शनैः शनैः । धीरे धीरे । उ०—शनई शनई ताहि चढ़ावै । चक्कर चक्कर में पहुँचावै । —अष्टांग योग, पृ० ७६ ।

शनक—संज्ञा पुं० [सं०] हरिवंश के अनुसार शंबर के एक पुत्र का नाम ।

शनकावलि—संज्ञा स्त्री० [सं०] गजपीपल ।

शनपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कटुकी नाम की ओषधि ।

शनपुष्पी संज्ञा स्त्री० [सं०] बन सनई ।

शनवा—वि० [फ़ा०] श्रोता । सुननेवाला [को०] ।

शनवाई—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शनवा + ई] सुनवाई [को०] ।

शनहुली संज्ञा स्त्री० [सं० शणपुष्पी] १. दे० 'शनपुष्पी' २. अरहर ।

शनाख्त—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शनाख़्त] पहचान । परख । दे० 'शिनाख्त' । उ०—जो इनको आदमी की ही शनाख्त होती तो नुक्स क्या था ।—श्रीनिवास ग्रं०, पृ० ११८ ।

क्रि० प्र०—करना— पहचानना । परखना ।

शनावर—वि० [फ़ा० शनावर, शिनावर] तैराक । तैरनेवाला [को०] ।

शनावर—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शनावरी, शिनावरी] तैराकी । तैरने का काम ।

शनास—वि० [फ़ा० (प्रत्य०)] पहचाननेवाला । भले बुरे का विवेक करनेवाला । पारखी ।

विशेष—यह समास वा शब्द के अंत में आता है जैसे—मर्दुमशनास, हकशनास । उ०—निहायत किसी ने कहा शाह पास, है यहाँ एक मेहराँ इसम हकशनास ।—दक्खिनी०, पृ० ३०० ।

शनासा—वि० [फ़ा०] १. पहचाननेवाला । जानकार । २. परिचित । वाकिफ [को०] ।

शनासाई—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] जान पहचान । परिचय [को०] ।

शनि—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौर जगत् के नौ ग्रहों में से सातवाँ ग्रह । शनैश्चर ।

विशेष—सूर्य से इस ग्रह का अंतर ८८३,०००,००० मील अथवा पृथ्वी के अंतर से ९½ गुना है । इसका व्यास ७५८०० मील का है । प्रति सेकेंड ६ मील की चाल से सूर्य की परिक्रमा में इसको २९ वर्ष और १६७ दिन अर्थात् कुल १०७५९ दिन लगते हैं । इसका ताप १५° सें० है । बृहस्पति को छोड़कर यह सबसे बड़ा ग्रह है पृथ्वी से इसका व्यास ९ गुना, विस्तार ६९७ गुना और मान ९३ गुना है । इसके साथ नौ उपग्रह या चंद्रमा हैं । जिनमें एक उपग्रह 'टाइटेन' बुध ग्रह से भी बड़ा है । बृहस्पति से छोटा होने पर भी यह सब ग्रहों से अधिक चमकदार है, जिससे इसका आकार सबसे बड़ा प्रतीत होता है । यह ३७८ दिन में एक बार अपनी धुरी पर घूमता है । यह ग्रह विचित्र आकार का है । इसके बाहर चारों ओर कम से कम ३ एककेंद्रीय बहुत बड़े वलय हैं; और उस बाह्य वलय से इसके पिंड की दूरी ५,९०० मील है । इसके बाह्य वलय की चौड़ाई ११,२०० मील है । उस वलय का व्यास १,७२,८०० मील और मोटाई सौ मील से कुछ कम है । इस ग्रह पर पृथ्वी जैसा जीवन संभव नहीं है ।

फलित ज्योतिष के अनुसार यह ग्रह काले रंग का, शूद्र वर्ण और सूर्यमुख है तथा इसका वाहन गृध्र है । यह सौराष्ट्र देश का स्वामी, नपुंसक (मंदगामी) और तमोगुण से युक्त तथा कषाय रस का अधिपति है । यह मकर और कुंभराशि तथा नीलकांत मणि (नीलम) का भी अधिपति है । यह चतुर्भुज है और इसके हाथों मे बाण, शूल, धनुष और भल्ल है । इसके अधिपति देवता यम और प्रत्यधिदेवता प्रजापति हैं । इसका परिमाण चार अंगुल है । पद्मपुराण के अनुसार सूर्य की स्त्री छाया के गर्भ से इसकी उत्पत्ति हुई थी । अपनी स्त्री के शाप से इसकी दृष्टि क्रूर हो गई और पार्वती के शाप के कारण यह खंज हो गया । इसे कश्यप मुनि की संतान भी मानते हैं । फलित के अनुसार शनि का फल इस प्रकार है यह पापग्रह और अशुभ फल का देनेवाला है, परंतु राशि और स्थानविशेष में शुभ फल भी प्रदान करता है । शनि और मंगल दोनों ग्रह स्थानविशेष पर एक साथ होने से राजयोग कारक होते हैं । यह भी माना जाता है कि लोगों पर जो भारी विपत्तियाँ आती हैं, वे प्रायः इसी की कुदृष्टि के कारण होती हैं । इसका फल साढ़े सात दिन, साढ़े सात मास या साढ़े सात वर्ष तक रहता है ।

पर्या०—सौरि । शनिश्चर । नीलवासा । मंद । छायात्मज । पातगि । ग्रहनायक । छायासुत । भास्करी । नीलांबर । आर । क्रोड़ । वक्र । कोल । सप्तांशु । पंगु । काल । सूर्यपुत्र । असित ।

२. शिव का एक नाम (को०) । ३. दुर्भाग्य । अभाग्य । बदकिस्मती । ४. दे० 'शनिवार' ।

शनिचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में मनुष्य के शरीर के आकार का एक प्रकार का चक्र ।

विशेष—इसमें शनिभोग्य नक्षत्र से आरंभ करके चक्ररूपी मनुष्य के भिन्न भिन्न अंगों में २७ नक्षत्रों की स्थापना करके शुभाशुभ फल जाने जाते हैं ।

शनिज—संज्ञा पुं० [सं०] काली मिर्च ।

शनिप्रदोष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रदोष (पर्व) जो शनिवार के दिन किसी मास के कृष्णपक्ष की त्रयोदशी पड़ने पर होता है । इस दिन व्रत रहते हैं और शिव का पूजन किया जाता है ।

शनिप्रसू—संज्ञा स्त्री० [सं०] शनि की माता छाया जो सूर्य की पत्नी कही गई है ।

शनिप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] नीलमणि । नीलकांत मणि । नीलम ।

शनिरुह—संज्ञा पुं० [सं०] १. शनिग्रह का वाहन । २. भैंसा । महिष ।

शनिरुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भैंस । महिषी ।

शनिर्भाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंदता । शिथिलता । २. क्रमबद्धता । क्रमिकता (को०) ।

शनिवार—संज्ञा पुं० [सं०] वह वार जो रविवार से पहले और शुक्रवार के बाद पड़ता है ।

शनिश्चर—संज्ञा पुं० [सं० शनिश्चर] दे० 'शनि' ।

शनैः१—अव्य० [सं०] १. धीरे । आहिस्ता । हौले । २. उत्तरोत्तर । ३. क्रमशः । क्रमानुसार (को०) । ४. धीमे धीमे । मृदुता या मुला-

यमियत से (को०)। ५. शिथिलता से (को०)। ६. स्वतंत्र या स्वच्छंद रूप से (को०)।

यौ० —शनै: शनै: = धीरे धीरे ; आहिस्ते आहिस्ते।

शनै:^{२}—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'शनिवार'।

शनै:प्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रमेह रोग।

विशेष—इस प्रमेह में रोगी को धीरे धीरे, थमकर और बहुत पतली धार में थोड़ा थोड़ा पेशाब आता है।

शनैर्मेह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शनै:प्रमेह'।

शनैर्मेही—संज्ञा पुं० [सं० शनैर्मेहिन्] वह रोगी जिसे शनै:प्रमेह का रोग हो।

शनैश्चर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शनि'।

शनैश्चर^{२}—वि० धीरे धीरे गमन करनेवाला [को०]।

शन्न—वि० [सं०] १. पतित। गिरा हुआ। २. परिक्षीण। क्षीण। ३. मुरझाया हुआ। कुम्हलाया हुआ [को०]।

शन्नाह—संज्ञा पुं० [फ़ा०] एक डोरी में बँधी हुई दो तुंबियाँ अथवा मशक जिसके सहारे तैरना सीखते हैं [को०]।

शप्^{१}—[सं०] पाणिनि द्वारा प्रयुक्त एक विकरण जो भ्वादि गण में प्रयुक्त होता है। धातुओं के बाद और तिङन्त प्रत्ययों के पूर्व इसका प्रयोग होता है जिसका रूप 'अ' शेष रहता है। जैसे, √भू + शप् + ति = √भू + अ + ति = भवति।

शप्^{२}—अव्य० [सं०] स्वीकरणसूचक शब्द। स्वीकार [को०]।

शप^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शाप। निर्भत्सना। २. शपथ। कसम [को०]।

शप^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० अनुध्व०] १. बेंत, छड़ी, चाबुक आदि के मारने की आवाज। २. कोई गाढ़ा और तरल पदार्थ तेजी से सुड़कते हुए निगलने की ध्वनि। ३. कुत्ते, बिल्ली आदि के द्वारा किसी वस्तु के चाटने की आवाज।

शप^{३}—क्रि० वि० जल्दी से। झटपट। तुरत।

यौ०—शपशप, शप से, शपाशप = शीघ्रतापूर्वक। जल्दी से।

शपथ—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह कथन जिसके अनुसार कहनेवाला इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि यदि मेरा कथन असत्य हो, मैंने अमुक काम किया हो, मैं अमुक काम करूँ या न करूँ इत्यादि, तो मुझपर अमुक देवता का शाप पड़े अथवा मैं अमुक पाप का भागी होऊँ आदि। कसम। दिव्य। सौगंध। उ०—दुर्बलता का ही चिह्नविशेष शपथ है।—साकेत, पृ० २२६।

क्रि० प्र०—खाना।—देना।—लेना।

मुहा०—दे० 'कसम' शब्द के मुहा०।

२. दिव्य। विशेष दे० 'दिव्य'- २१। ३. अभिशाप। शाप (को०)। ४. प्रतिज्ञा या दृढ़तापूर्वक कोई काम करने या न करने आदि के संबंध में कथन। कौल। वचन।

यौ०—शपथपत्र = हलफनामा।

शपन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शपथ। कसम। २. गाली। कुवाच्य।

शपशप शपाशप—संज्ञा स्त्री० [अनुध्व०] दे० 'शप^{३}' का यौगिक।

शपित—वि० [सं०] दे० 'शप्त'।

शप्त^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. उलूक अथवा उलप नामक तृण। २. वह व्यक्ति जिसे शाप दिया गया हो।

शप्त^{२}—वि० १. शापग्रस्त। अभिशप्त। २. भर्त्सित। जिसकी भर्त्सना की गई हो [को०]।

शफ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृक्ष की जड़ २. पशुओं का खुर। ३. नखी नामक गंधद्रव्य।

शफक—संज्ञा स्त्री० [अ० शफ़क़] प्रात:काल या सायंकाल आकाश में दिखाई पड़नेवाली ललाई, विशेषत: संध्या के समय दिखाई पड़नेवाली लालिमा जो बहुत ही मनोहर होती है। उ०—चढ़ा शाम को बाम पर गर वो माह। शफक का नया रंग लाई घटा।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ४६०।

मुहा०—शफक फूलना = प्रात:काल या संध्या के समय आकाश में लालिमा फैलना।

शफकत—संज्ञा स्त्री० [अ० शफ़क़त] १. कृपा। दया। मेहरबानी। २. प्यार। मुहब्बत। प्रेम। उ०—जो बात माने तो ऐन शफकत न माने तो ऐन हुस्ने खूबी।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ८५७।

क्रि० प्र०—दिखलाना।—रखना।

शफगोल—संज्ञा स्त्री० [हिं०] हिं० 'इसबगोल'।

शफतालू—संज्ञा पुं० [फ़ा० शफ़तालू] एक प्रकार का बड़ा आड़ू जिसे सप्तालुक या सतालू भी कहते हैं। विशेष दे० 'सतालू'।

शफर—संज्ञा पुं० [सं०] पोठी या पोठिया नाम की मछली। उ०—भरत सिहरे शफरवारि समान।—साकेत, पृ० १७१।

शफराधिप—संज्ञा पुं० [सं०] हिलसा मछली।

शफरी—संज्ञा संज्ञा [सं०] एक प्रकार की छोटी मछली। पोठी या पोठिया। उ०—शफरी, अरी, बता तू तड़प रही क्यों निमग्न भो इस सर में ? जो रस निज गागर में सो रस गोरस नहीं स्वयं सागर में।—साकेत, पृ० २७८।

शफरुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. संदूक। बक्स। २. पात्र। बरतन।

शफह—संज्ञा पुं० [अ० शफ़ह] ओष्ठ। ओठ। अधर [को०]।

शफा—संज्ञा स्त्री० [अ० शफ़ा] शरीर का स्वस्थ होना। नीरोगता। आरोग्यता। तंदुरुस्ती। उ०—जो पीएगा दो दिन की बीमारी में शफा पाएगा।—पिंजरे०, पृ० ७६।

क्रि० प्र०—(किसी को) शफा देना = किसी का रोग दूर करना। अच्छा करना। आराम देना। नीरोग करना।

शफाखाना—संज्ञा पुं० [अ० शफ़ा + फ़ा० खाना] वह स्थान जहाँ रोगियों की चिकित्सा होती है। चिकित्सालय। अस्पताल।

शफाअत—संज्ञा स्त्री० [अ० शफ़ाअत] सिफारिश [को०]।

शफीक—वि० [अ० शफ़ीक़] १. कृपालु। दयालु। मित्र। दोस्त [को०]।

शफोरु^{१}—वि० [सं०] जिसकी जाँघ गाय के खुर के समान हो।

शफोरु^{२}—संज्ञा स्त्री० १. गाय के खुर के समान जाँघवाली स्त्री। २. वह स्त्री जिसकी जाँघ पर खुर का चिह्न हो (को०)।

शफ्फाफ—वि० [अ० शफ्फ़ाफ़] १. निर्मल। शुद्ध। २. उज्वल। चमकदार। ३. पारदर्शी [को०]।

शब—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] रात। रात्रि। रजनी। निशा। उ०—मौका पाकर एक शब उसको सोते हुए गिरफ्तार कर लाना।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ५२१।

शबकोर—वि० [फ़ा०] जिसे रात में दिखाई न दे। रतौंधी का रोगी [को०]।

शबकोरी—संज्ञा पुं० [फ़ा०] रतौंधी [को०]।

शबखून—संज्ञा पुं० [फ़ा० शबखून] सेना का रात के अँधेरे में अचानक हमला। वह आक्रमण जो रात को असावधान शत्रु पर किया जाय [को०]।

शबख्वाँ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शबख्वाँ] बुलबुल नाम का पक्षी [को०]।

शबगर्द¹—वि० [फ़ा०] रात को घूमने या पहरा देनेवाला [को०]।

शबगिर्द—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. चंद्रमा। २. पहरेदार। चौकीदार। ३. कोतवाल। ४. चोर [को०]।

शबगीर¹—१. वि० [फ़ा०] रात को जागनेवाला। उ०—सो आशक के नालए शबगीर में देखो।—कबीर मं०, पृ० ४६७।

शबगीर²—संज्ञा पुं० १. पिछली रात की यात्रा। २. झींगुर।

शबचिराग—संज्ञा पुं० [फ़ा० शबचिराग़] १. एक बहुमूल्य रत्न जो रात में दीप सा चमकता है। २. रात में चमकनेवाला या प्रकाशित होनेवाला, चाँद [को०]।

शबताब—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. रात का प्रकाश। २. खद्योत। जुगुनू। ३. दीपक। ४. चंद्रमा। ५. वह जो रात में चमकता हो। ६. काली बिल्ली।

शबनम—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. ओस। तुषार। २. एक प्रकार का सफेद रंग का बहुत ही बारीक कपड़ा।

मुहा०—शबनम का रोना = ओस गिरना।

शबनमी¹—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. चारपाई के ऊपर का वह ढाँचा जिसपर रात के समय ओस से बचने के लिये मसहरी टाँगी जाती है। मसहरी। छपरखट। २. दे० 'शबनम'।

शबनमी²—वि० [फ़ा०] शबनम या ओस जैसी। उ०—पुलकित पलकों की प्रिय पाँखुरियों पर, लो सहसा ढलक गई शबनमी नजर, अँगड़ाई ली बह चले पवन, गूँजे भँवरों के गान।—ठंडा०, पृ० ३२।

शबबरात—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] मुसलमानों के आठवें मास की चौदहवीं अथवा पंद्रहवीं रात।

विशेष—इस रात को मुसलमानों के विश्वास के अनुसार फरिश्ते परमात्मा की आज्ञा से भोजन बाँटते और आयु का हिसाब लगाते हैं। इस दिन मुसलमान अपने मृत पूर्वजों के उद्देश्य से प्रार्थना करते, हलुआ पूरी बाँटते, रोशनी करते और आतिशबाजी छोड़ते हैं।

शबबाश—वि० [फ़ा०] १. रात में टिकने या निवास करनेवाला। २. सहवास करनेवाला [को०]।

शबबेदारी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] [वि० शबबेदार] रतजगा [को०]।

शबमेराज—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शब + अ० मेराज] वह रात जब हजरत पैगंबर साहब ने अर्श पर जाकर अल्लाह का साक्षात्कार किया था। यह समय अरबी रजब महीने की २६ और २७ तारीखों के बीच पड़ता है [को०]।

शबरंग—संज्ञा पुं० [फ़ा०] वह जो रात के रंगवाला अर्थात् काला हो। सियाह। काला। २. काला घोड़ा [को०]।

शबर¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. दक्षिण में रहनेवाली एक जंगली या पहाड़ी जाति। २. जंगली। वहशी। ३. शूद्र तथा भील से उत्पन्न संतान। ४. लोध नामक वृक्ष। ५. शिव। ६. हस्त। हाथ (को०)। ७. मीमांसा के एक प्रसिद्ध आचार्य (को०)। ८. जल (को०)।

शबर²—वि० १. चितकबरा। २ रंग बिरंगा।

शबरकंद—संज्ञा पुं० [सं० शबरकन्द] एक प्रकार का मीठा कंद।

शबरक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शबरिका] जंगली। वहशी।

शबरचंदन—संज्ञा पुं० [सं० शबर + चंदन] एक प्रकार का चंदन जो लाल और सफेद दोनों मिले हुए रंगों का होता है।

विशेष—वैद्यक के अनुसार यह शीतल तथा कड़वा, और वात, पित्त कफ, विस्फोटक, खुजली, कुष्ठ, मोहादि को नष्ट करनेवाला माना जाता है।

शबरजंबु—संज्ञा पुं० [सं० शबरजम्बु] एक प्राचीन नगर का नाम।

शबरबल—संज्ञा पुं० [सं०] पर्वतीय जातियों की सेना [को०]।

शबरलोध्र—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद लोध।

शबरालय, शबरावास—संज्ञा पुं० [सं०] शबर लोगों का निवास। पक्कण [को०]।

शबरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शबर जाति की स्त्री। २. रामायण में वर्णित शबर या किरात जाति की एक रामभक्त स्त्री [को०]।

शबल¹—वि० [सं०] १. चितकबरा। २. रंग बिरंगा। चित्र विचित्र। २. अनेक हिस्सों में विभक्त (को०)। ३. किसी की अनुकृति पर बना हुआ। अनुकृत (को०)। ३. घालमेल किया हुआ। मिश्रित (को०)। ४. विकृताकार। विकृत। विवर्ण (को०)। ५. आर्त। दुःखित। पीड़ित (को०)।

शबल²—संज्ञा पुं० १. एक नाग का नाम। २. बौद्धों का एक प्रकार का धार्मिक कृत्य। ३. अगिया घास। गंधतृण। ४. चित्रक। चितउर वृक्ष। ५. अनेक प्रकार का रंग। विविध वर्ण (को०)। ६. जल (को०)।

शबलक—वि० [सं०] १. चितकबरा। २. रंग बिरंगा। चित्र विचित्र।

शबलचेतन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी प्रकार की पीड़ा या कष्ट आदि के कारण बहुत घबराया हुआ हो। जो संतप्त या व्यथित होने के कारण अन्यमनस्क हो।

शबलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. शबल का भाव या धर्म। २. रंगबिरंगापन। ३. मिलावट।

शबलहृदय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शबलचेतन' [को०]।

शबला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चितकबरी गौ। २. कामधेनु।

शबलाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक ऋषि का नाम।

शबलाश्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. दक्ष के एक पुत्र का नाम।

शबलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पक्षी।

शबलित—वि० [सं०] चितकबरा। रंग बिरंगा।

शबलिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० शबलिमन्] रंग बिरंगा या शबल होने की क्रिया या भाव [को०]।

शबली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कामधेनु। २. चितकबरी गाय।

शबान—संज्ञा पुं० [फ़ा०] वह जो ढोर चराता हो। चरवाहा [को०]।

शबाना—वि० [फ़ा० शब नह्] १. रात का। रातवाला। २. रात्रि सबंधी। ३. बासी। पर्युषित [को०]।

यौ०—शबाना रोज = अहर्निश। रात दिन।

शबाब संज्ञा पुं० [अ०] १. यौवन काल। जवानी। २. किसी वस्तु की वह मध्य की अवस्था जिसमें वह बहुत अच्छा या सुंदर जान पड़े। ३. बहुत अधिक सौंदर्य।

क्रि० प्र०—आना।—उतरना।—चढ़ना।—जाना।

मुहा०—शबाब फट पड़ना = जवानी का पूरी तरह खिल उठना या जोर पर होना।

शबाहत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. समानता। अनुरूपता। २. सूरत। शक्ल। आकृति।

शबीना—वि० [फ़ा० शबीनह्] १. रात संबंधी। रात का। २. जो ताजा न हो। बासी। दे० 'शबाना' [को०]।

शबीह—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. वह चित्र जो किसी व्यक्ति की सूरत शक्ल के ठीक अनुरूप बना हो।

क्रि० प्र०—खींचना।—बनाना।

२. समानता। अनुरूपता।

शबेइंतजार—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शबे इंतज़ार] प्रतीक्षा की रात [को०]।

शबेऔवल—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] सुहागरात [को०]।

शबेकद्र—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] रमजान की २७ वीं रात जो अति पवित्र मानी जाती है [को०]।

शबेजवानी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] युवावस्था का उन्माद [को०]।

शबेतार, शबेतारीक, शबेदैजूर—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] तमिस्रा। कुहूनिशा। अँधेरी रात [को०]।

शबेबरात—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] दे० 'शब बरात'।

शबेमहताब, शबेमाह—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] ज्योत्स्ना या राकायुक्त रात्रि। चाँदनी रात [को०]।

शबेवस्ल—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] नायिका और नायक के मिलने की रात।

शबेहिज्र—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] वियोगरात्रि। जुदाई की रात [को०]।

शबेशबादत—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] मुहर्रम की नवीं रात जिसके बीत जाने पर इमाम हुसेन मारे गए [को०]।

शबोरोज—अव्य० [फा० शब = (रात) + रोज़ (= दिन)] १. अहर्निश। रातदिन। २. हर समय। हरदम। ३. निरंतर। लगातार।

शब्द संज्ञा पुं० [सं०] १. वायु में होनेवाला वह कंप जो किसी पदार्थ पर आघात पड़ने के कारण अथवा स्वयं वायु पर आघात पड़ने के कारण उत्पन्न होकर कान या श्रवणेंद्रिय तक पहुँचता और उसमें एक विशेष प्रकार का क्षोभ उत्पन्न करता है। ध्वनि। आवाज।

विशेष—प्रायः सभी पदार्थों से, उनपर आघात आदि करके या उनमें जल्दी जल्दी गति उत्पन्न करके, शब्द उत्पन्न किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, मृदंग, ढोल, घंटा, कुरसी, किवाड़, कलम, थाली, जूता, हथौड़ा आदि। जब किसी पदार्थ पर दूसरा कोई पदार्थ आकर गिरता है अथवा किसी पदार्थ में बार-बार गति उत्पन्न की जाती है, तब वायु में एक प्रकार की ठेस लगती है जो सब ओर कुछ दूर तक जाती है; और जहाँ कान या श्रवणेंद्रिय होती है, वहाँ वह उसे ग्रहण करके मस्तिष्क को उसकी सूचना देती है। वायु तो शब्द का वहन करता ही है, पर इसके अतिरिक्त और अनेक प्रकार की गैसें, जल तथा अनेक लचीले ठोस पदार्थ भी शब्द वहन करते हैं पर इनमें से मुख्य वाहक वायु ही है। तो भी वायु की अपेक्षा जल में शब्द बहुत अधिक दूर तक जाता है। जिस स्थान में वायु बिलकुल नहीं होती, वहाँ शब्द का वहन भी किसी प्रकार नहीं हो सकता। वायु की अपेक्षा जल में शब्द की गति और भी अधिक होती है। शब्द धीमा या हलका भी होता है, और भारी या तेज भी। यदि वायु में कंप बहुत अधिक होता है तो शब्द भी तेज या ऊँचा होता है। यदि वायु या शब्द के वाहक दूसरे साधन का घनत्व कम हो, तो भी शब्द हलका या धीमा हो जाता है। इसके अतिरिक्त दूरी भी शब्द को हलका या धीमा कर देती है। प्रकाश की भाँति शब्द का भी परावर्तन होता है। अर्थात् शब्द एक स्थान से उत्पन्न होकर किसी ओर जाता है, और मार्ग में अवरोध पाकर फिर पीछे की ओर लौट आता है। पहाड़ के नीचे या गुंबदों आदि में बोलने के समय शब्द की जो गूँज या प्रतिध्वनि होती है, वह इसी परावर्तन के कारण होती है। यदि वातावरण का तापमान ६२° हो तो शब्द की गति प्रति सेकंड ११२५ फुट या प्रति मिनट प्रायः १२ मील होती है। यदि प्रायः एक ही तरह के बहुत से शब्द लगातार रह रहकर हों, तो उनसे 'शोर' पैदा होता है।

शब्द के दो मुख्य भेद होते हैं,—वर्णात्मक और ध्वन्यात्मक। ध्वन्यात्मक शब्द वह है जो कंठ और तालु आदि की सहायता से उत्पन्न होता है। इसको भी दो भेद हैं—व्यक्त और अव्यक्त। जो शब्द सुनने में स्पष्ट हो और जिसका कोई अर्थ हो वह व्यक्त कहलाता है, (दे० 'शब्द'—२) और जो स्पष्ट सुनाई न दे और जिसका कोई अर्थ न हो, वह अव्यक्त कहलाता है। जैसे, हाँ,

ऊँ, खों। वर्णात्मक शब्द के अतिरिक्त और जितने प्रकार के शब्द होते हैं, वे ध्वन्यात्मक कहलाते हैं। जैसे, मृदंग या घंटे आदि से अथवा जोर से हवा चलने के कारण उत्पन्न होनेवाला शब्द। 'मीमांसाकार' ने शब्द को नित्य और सांख्यकार ने उसे आकाश का गुण माना है। न्याय आदि ने शब्द को आकाश का गुण माना है। भारतीय वैयाकरणों ने उसे द्रव्य माना है। व्याकरण दर्शन में शब्द को नित्य, कूटस्थ—यहाँ तक कि शब्दब्रह्म भी कहा है जो स्फोटात्मक है। विशेष दे० 'ध्वनि'।

पर्या०—निनाद। रव। राव। निर्घोष। नाद। घोष। निनद। ध्वनि। ध्वान। स्वन। स्वान। निर्ह्राद। आरव। आराव। निःस्वम। निःस्वान। संरव। संराव। विराव।

२. वह स्वतंत्र, व्यक्त और सार्थक ध्वनि जो एक या अधिक वर्णों के संयोग से, कंठ और तालु आदि के द्वारा, उत्पन्न हो और जिससे सुननेवाले को किसी पदार्थ, कार्य या भाव आदि का बोध हो। लफ्ज। जैसे, मैं, क्या, सोना, घोड़ा, मोटाई, काला आदि। ३. अमृतोपनिषद् के अनुसार 'ओऽम्' जो परमात्मा का मुख्य नाम है। ४. किसी साधु या महात्मा के बनाए हुए पद या गीत आदि। जैसे, गुरु नानक के शब्द, कबीर के शब्द। ५. नाम। संज्ञा (को०)। ६. व्याकरण (को०)। ७. ख्यात। मशहूर (को०)। ८. केवल नाम। शुद्ध नाम। जैसे, शब्दपति में (को०)।

शब्द अतीत—संज्ञा पुं० [सं० शब्दातीत] जिसका वर्णन शब्दों के द्वारा न हो सके। शब्दातीत। उ०—शब्द अतीत शब्द से अपना बूझै बिरला कोई।—कबीर श०, भा० १, पृ० ५४।

शब्दकार—वि० [सं०] १. वह जो सार्थक शब्दों को किसी छंद के लय ताल पर क्रमबद्ध करता हो। गीतकार या कवि। उ०—ह्रस्व दीर्घ की घट बढ़ के कारण पूर्ववर्ती गवैए शब्दकारों पर जो लांछन लगता है, उससे भी बचने का प्रयत्न किया है।—गीतिका (भू०), पृ० ६। २. वह जो शब्द या ध्वनि उत्पन्न करे। शब्द करनेवाला।

शब्दकारी—वि० [सं० शब्दकारिन्] शब्द करनेवाला [को०]।

शब्दकोश, शब्दकोष—संज्ञा पुं० [सं०] ऐसा ग्रंथ जिसमें शब्दों की वर्तनी, उनकी व्युत्पत्ति, व्याकरणनिर्देश, अर्थ, परिभाषा, प्रयोग और पदार्थ आदि का संनिवेश हो। अभिधान। लुगत। (अं०) डिक्शनरी।

शब्दगत—वि० [सं०] शब्द में निहित या स्थित [को०]।

शब्दग्रह¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. कान, जिससे शब्द का ग्रहण होता है। २. एक प्रकार का काल्पनिक बाण।

शब्दग्रह²—वि० शब्द को ग्रहण करनेवाला।

शब्दग्राम—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दसमूह [को०]।

शब्दचातुर्य—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दों के प्रयोग करने की चतुरता। बोल चाल की प्रवीणता। वाग्मता।

शब्दचालि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का नृत्य।

शब्दचित्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. अनुप्रास नामक अलंकार। २. एक शब्दालंकार जिसमें प्रयुक्त वर्णों को इस प्रकार से रखते हैं कि किसी न किसी वस्तु का रूप बन जाता है। ३. काव्य के तीन भेदों में अंतिम श्रेणी के दो उपभेदों में से एक जिसे मम्मट ने अवर या अधम माना है। इस प्रकार के काव्य में सौंदर्य उन शब्दों या अक्षरों के बारबार प्रयोग करने में होता है और वे श्रुतिमधुर होते हैं। ४. शब्दों के माध्यम से किसी स्थान, व्यक्ति, घटना आदि का ऐसा वर्णन प्रस्तुत करना जिससे उसका रूप-चित्र भासित हो उठे। (अँ० स्केच)।

शब्दचोर—संज्ञा पुं० [सं०] दूसरों की कविता में प्रयुक्त विशिष्टता-मूलक शब्दों या पदों को अपनी कविता में रख लेनेवाला कवि या रचनाकार। राजशेखर, क्षेमेंद्र आदि ने अपने ग्रंथ में इस प्रकार के कवियों की कई श्रेणियाँ निर्धारित की हैं [को०]।

शब्दता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शब्दत्व'।

शब्दत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द का भाव या धर्म। शब्दता।

शब्दन¹—वि० [सं०] शब्द या ध्वनि करनेवाला। ध्वननशील।

शब्दन²—संज्ञा पुं० शब्द या ध्वनि करना। २. ध्वनि। ३. शब्द। ४. नाम लेना। ५. पुकारना। बुलाना। आह्वान [को०]।

शब्दनृत्य—संज्ञा पुं० [ ] एक प्रकार का नृत्य।

शब्दनेता—संज्ञा पुं० [सं० शब्दनेतृ] पाणिनि का एक नाम [को०]।

शब्दपति—संज्ञा पुं० [सं०] नाम मात्र का नेता। वह नेता जिसके अनुयायी न हों। जिसमें शब्द के अलावा पति या राजा का कोई भाव न हो।

शब्दपाती—वि० [सं० शब्दपातिन्] किसी प्रकार के शब्द या ध्वनि का सुनकर उसी के आधार पर दिशा और दूरी का अंदाज करते हुए शब्द करनेवाले पर निशाना मारनेवाला। विशेष दे० 'शब्दबेधी' [को०]।

शब्दप्रमाण—संज्ञा पुं० [सं०] वह प्रमाण जो किसी के केवल शब्दों या कथन के ही आधार पर हो। आप्त या विश्वासपात्र पुरुष की बात जो प्रमाणस्वरूप मानी जाती हो। विशेष दे० 'प्रमाण'। मौखिक प्रमाण।

शब्दप्राण—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द के अर्थों का अनुसंधान। शब्दार्थ का जिज्ञासा।

शब्दबिरोध—संज्ञा पुं० [सं०] वह विरोध जो वास्तविक या भाव में न हो बल्कि केवल शब्दों में जान पड़ता हो।

शब्दबोध—संज्ञा पुं० [सं०] शाब्दिक साक्ष्य द्वारा प्राप्त ज्ञान। वह ज्ञान जो जबानी गवाही से प्राप्त हो।

शब्दब्रह्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. वेद जो अपौरुषेय और ईश्वर का रूप हुआ माना जाता है। २. ब्रह्मज्ञान जो शब्दरूप हो (को०)। ३. शब्द का एक गुण जिसकी संज्ञा स्फोट है (को०)।

शब्दभेद—संज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण के अनुसार शब्द का वह विवेचन जो उनके कार्य, स्थिति और संबंध आदि के आधार पर किया गया हो। इससे शब्द के संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण, संबंधसूचक, अव्यय, संयोजक, विस्मयादिवाचक आदि रूपों का ज्ञान होता है।

शब्दभेदी¹—वि० [सं० शब्दभेदिन्] दे० 'शब्दवेधी'।

शब्दभेदी^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. अर्जुन का एक नाम (को०)। २. एक प्रकार का वाण (को०)। ३. गुदा। मलद्वार।

शब्दमहेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव।

विशेष—कहते हैं, पाणिनि को व्याकरण का आदेश शिव ने ही किया था। आरंभिक चौदह सूत्रों को महेश्वर सुत्र (इति माहेश्वराणि अर्थात् महेश्वरप्रणीत सूत्र) कहा गया है। इसी से शिव का यह नाम पड़ा।

शब्दमाधुर्य—संज्ञा पुं० [सं० शब्द+माधुर्य] शब्द की मधुरता। शब्दों की विशेष योजना से निष्पन्न सौंदर्य या माधुर्य। उ०—रूप-सौंदर्य से मध्यम कोटि की वस्तु नादसौंदर्य या शब्दमाधुर्य है।—रस०, पृ० ७२।

शब्दमाल—संज्ञा पुं० [सं०] पोला बाँस।

शब्दयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जड़। मूल। २. धातु। ३. शब्द की उत्पत्ति। ४. वह शब्द जो अपने मूल अथवा प्रारंभिक रूप में हो।

शब्दरोचन—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की घास।

शब्दवारिधि—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दों का सागर। शब्दकोश [को०]।

शब्दविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्याकरण। शब्दशास्त्र।

शब्दविधान—संज्ञा पुं० [सं० शब्द+विधान] शब्दों की क्रमबद्ध योजना। पदयोजना। उ०—हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्दविधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।—रस०, पृ० ६।

शब्दवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. साहित्य में शब्द का कार्य या प्रयोग। २. शब्द की शक्ति। द्योतक शक्ति। अभिधा, लक्षणा, व्यंजना आदि [को०]।

शब्दवेध—संज्ञा पुं० [सं० शब्द+वेधस] शब्द सुनकर ही निशाना लगाना। उ०—देखा चाहा शब्दवेध तुम, तो कहो।—साकेत, पृ० १३८।

शब्दवेधी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शब्दवेधिन्] १. वह मनुष्य जो आँखों से बिना देखे हुए केवल शब्द से दिशा का ज्ञान करके किसी व्यक्ति या वस्तु का वाण से मारता हो।

विशेष—हमारे यहाँ प्राचीन काल में ऐसे धनुर्धर हुआ करते थे जो आँखों पर पट्टी बाँधकर किसी व्यक्ति का शब्द सुनकर या लक्ष्य पर की हुई टंकार सुनकर ही यह समझ लेते थे कि वह व्यक्ति अथवा वस्तु अमुक ओर है, और तब ठीक उसी पर वाण चलाते थे।

२. अर्जुन। ३. दशरथ। ४. एक प्रकार का वाण (को०)। ५. धनुष्क। धनुर्धर व्यक्ति (को०)

शब्दवेधी^{2}—वि० दे० 'शब्दपाती'।

शब्दशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा उसका कोई विशेष भाव प्रदर्शित होता है।

विशेष—जब शब्द किसी वाक्य या वाक्यांश का अंग होता है, तब उसका अर्थ या तो साधारण और या वाक्य के तात्पर्य के अनुसार और अपने साधारण अर्थ से कुछ भिन्न होता। उसकी जिस शक्ति के अनुसार वह साधारण या उससे कुछ भिन्न अर्थ प्रकट होता है, वह शब्दशक्ति कहलाती है। यह शब्दशक्ति तीन प्रकार की मानी गई है—अभिधा, लक्षणा और व्यंजना। विशेष दे० ये तीनों शब्द इन तीनों से प्रकट होनेवाले अर्थ क्रमशः वाक्य, लक्ष्य और व्यंग्य कहे गए हैं तथा इन्हें प्रकट करनेवाले शब्द वाचक, लक्षक और व्यंजक कहलाते हैं।

शब्दशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें भाषा के भिन्न भिन्न अगों और स्वरूपों का विवेचन तथा निरूपण किया जाय। व्याकरण।

शब्दशः—अव्य० [सं०] अक्षर अक्षर। किसी के कहे या लिखे हुए प्रत्येक शब्द के अनुसार। किसी के शब्दों का ठीक ठीक अनुकरण करते हुए। जैसा किसी ने कहा या लिखा हो ठीक वैसा ही। अक्षरशः।

शब्दश्लेष—संज्ञा पुं० [सं०] श्लेश अलंकार का एक भेद। वह शब्द जो दो या अधिक अर्थों में प्रयुक्त किया जाय।

विशेष—साहित्यशास्त्रियों ने श्लेषालंकार के दो भेद कहे हैं। एक शब्दश्लेष और दूसरा अर्थश्लेष। शब्दश्लेष में श्लिष्ट शब्द को समानार्थक शब्द रखकर हटाया नहीं जा सकता। वह परिवृत्तिसह नहीं होता क्योंकि इससे उसकी श्लिष्टता नष्ट हो जाती है। अर्थश्लेष शब्द की परिवृत्ति सह सकता है अर्थात् समानार्थ शब्द द्वारा हटाया भी जा सकता है।

शब्दसंग्रह—संज्ञा पुं० [सं० शब्दशङ्ग्रह] शब्दों का संचयन। शब्दकोश [को०]।

शब्दसंभव—संज्ञा पुं० [सं० शब्दसम्भव] वायु जो शब्द की उत्पत्ति का कारण है; अथवा जिससे शब्द का अस्तित्व संभव होता है।

शब्दसाधन—संज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण का वह अंग जिसमें शब्दों की व्युत्पत्ति, भेद और रूपांतर आदि का विवेचन होता है। शब्दों के संज्ञा, क्रिया, विशेषण, क्रियाविशेषण, सर्वनाम आदि जो भेद होते हैं, वे भी इसी के अंतर्गत हैं।

शब्दसौंदर्य—संज्ञा पुं० [सं० शब्दसौन्दर्य] शब्दों के उच्चारण की सुगमता। दे० 'शब्दसौष्ठय'।

शब्दसौकर्य—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दों के उच्चारण की सुगमता।

शब्दसौष्ठव—संज्ञा पुं० [सं०] किसी लेख या शैली आदि में प्रयुक्त किए हुए शब्दों की कोमलता या सुंदरता।

शब्दहीन^1—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दों का वह रूप या प्रयोग जिसे आचार्यों ने नप्रयुक्त किया हो।

शब्दहीन^2—वि० [सं०] शब्दरहित। निःशब्द। [को०]।

शब्दांतर—संज्ञा पुं० [सं० शब्दान्तर] शब्द का ही अंतर या परिवर्तन। ऐसी उक्ति या रचना जो किसी उक्ति या रचना को समानार्थक शब्द सर्वथा परिवर्तन करके रखती हो।

शदांतरकरण—संज्ञा पुं० [सं० शब्दान्तर+करण] शाब्दिक परिवर्तन करना। उ०—डान्टे का 'डिवाइना कामेडिया' तो सेंट टामस का कथोलिक नीति पर कहीं कहीं तो केवल शब्दांतरकरण है।—पा० सा० सि०, पृ० ८।

शब्दाक्षर—संज्ञा पुं० [सं०] ध्वनिपूर्वक उच्चरित 'ओम्' शब्द।

शब्दाख्येय—वि० [सं०] १. जोर से या चिल्लाकर कहा जानेवाला। २. शब्द द्वारा कहा जाने योग्य। जिसे शब्दों द्वारा व्यक्त किया जा सके। ३. (संदेश या समाचार आदि) जो मौखिक वा शाब्दिक हो (को०)।

शब्दाडंबर—संज्ञा पुं० [सं० शब्दाडम्बर] बड़े बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग जिसमें भाव की बहुत ही न्यूनता हो। केवल शब्दों की सहायता से खड़ा किया जानेवाला आडंबर। शब्दजाल।

शब्दाढ्य—संज्ञा पुं० [सं०] काँसा नाम की धातु।

शब्दातिग—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

शब्दातीत^1—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शब्द से परे हो; अर्थात् ईश्वर।

शब्दातीत^2—वि० शब्दों द्वारा जिसका वर्णन न हो सके। जो शब्दों द्वारा व्यक्त न हो सके। वर्णनातीत [को०]।

शब्दात्मक—वि० [सं०] शब्द संबंधी। शाब्दिक। उ०—केवल शब्दात्मक साम्य को लेकर यदि हम किसी पहाड़ को कहें कि वह बैल है क्योंकि इसे भी 'शृंग' है, तो वह काव्यकला नहीं होगी।—आचार्य०, पृ० १२४।

शब्दाधिष्ठान—संज्ञा पुं० [सं०] कर्ण। कान।

शब्दाध्याहार—संज्ञा पुं० [सं०] वाक्य को पूरा करने के लिये उसमें अपनी ओर से शब्द जोड़ना।

शब्दानुकरण—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द या पदयोजना का अनुकरण करना [को०]।

शब्दानुकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शब्दानुकरण'।

शब्दानुशासन—संज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण। जैसे, हिंदी शब्दानुशासन।

शब्दायमान—वि० [सं०] शब्द करता हुआ। शब्दित। शब्द या ध्वनियुक्त [को०]।

शब्दार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] शब्द का अर्थ या अभिप्राय। वाच्य। मानी [को०]।

शब्दालंकार—संज्ञा पुं० [सं० शब्दालङ्कार] साहित्य में वह अलंकार जिसमें केवल शब्दों या वर्णों के विन्यास से भाषा में लालित्य उत्पन्न किया जाय। जैसे,—अनुप्रास, यमक आदि।

शब्दाल—वि० [सं०] ध्वनिकारक। शब्द करनेवाला [को०]।

शब्दावली—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी कथन या रचना में प्रयुक्त होनेवाला शब्दसमूह [को०]।

शब्दित^1—वि० [सं०] १. ध्वनियुक्त। शब्दायमान। ध्वनित। उ०—(क) सतत शब्दित गेह समूह में, विजनता परिवर्धित थी हुई।—प्रिय०, पृ० २२। (ख) मुझे प्रेम का नीरव मानस सुंदर शब्दित करने दो।—वीणा, पृ० २७। २. बजाया हुआ या बजता हुआ। ३. पुकारा हुआ। आहूत। ४. व्याख्या किया हुआ। व्याख्यात। ५. घोषित। प्रचारित [को०]।

शब्दित^2—संज्ञा पुं० कोलाहल। शोर। हल्ला [को०]।

शब्दी (पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शब्द] १. सबद। आध्यात्मिक भजन या पद। २. उपदेश। शिक्षा। उ०—सतगुरु शब्दी सेल है सहै धमूका साध।—चरण० बानी, पृ० ३।

शब्देंद्रिय—संज्ञा स्त्री० [सं० शब्देन्द्रिय] कर्ण। कान।

शब्दोद्भावक—वि० [सं०] शब्दों की उद्भावना करनेवाला। शब्द का निर्माता। शब्दस्रष्टा। उ०—इस दिशा में समालोचक ही न रहकर वे शब्दोद्भावक भी हुए —आचार्य०, पृ० २०९।

शम—संज्ञा पुं० [सं०] १. शांति। उ०—सतिगुरु शरन महाँ शम पाई ऐसो आकुल रिदै पियारा।—प्राण०, पृ० २३२। २. मोक्ष। ३. कर। हस्त। हाथ। ४. उपचार। रोगमुक्ति। सुस्थता। ५. अंतःकरण तथा अंतर इंद्रिय को वश में करना। ६. बाह्य इंद्रियों का निग्रह। ७. निवृत्ति। निःसंगता। निरपेक्षता। ८. साहित्य में शांत रस का स्थायी भाव। ९. क्षमा। १०. तिरस्कार। ११. मनःस्थैर्य। मन की स्थिरता। मानसिक स्थिरता (को०)।

शमई^1—वि० [अ० शम्अ] १. शमा संबंधी। शमा का। मोमबत्ती या दीपक संबंधी। २. शमा के रंग का [को०]।

शमई^2—संज्ञा स्त्री० दीपाधार। शमादान। उ०—सप्तशती के पाठ के लिये १४ ब्राह्मण, दुर्गा के मंदिर में चाँदी की शमईयों में घी के दिए जलाए।—झाँसी०, पृ० ३२२।

शमक—वि० [सं०] १. शांत या शांति करानेवाला। २. संधि या समझौता करनेवाला [को०]।

शमठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का तूत या शहतूत। २. गंडीर नामक शाक।

शमता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शम का भाव या धर्म। शमत्व।

शमत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शमता'।

शमथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. शांति। मनःशांति। २. वह जो मंत्रणा वा सलाह देता हो। मंत्री।

शमन—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ के लिये होनेवाला पशुओं का बलिदान। २. यम। ३. एक प्रकार का मृग। ४. हनन। हिंसा। ५. शम। शांति। जैसे,—रोग का शमन। ७. अन्न। ८. मटर। ९. वह ओषधि जो वातादि दोषों का वमन, विरेचनादि द्वारा दूर करे। जैसे—गिलोय। १०. तिरस्कार। ११. आघात। चोट। १२. वैद्यक में एक प्रकार का धूम्रपान।

विशेष—इस धूम्रपान में इलायची, तगर, कुड़ा, जटामासी, गंधतृण, दालचीनी, तेजपत्ता, नागकेशर, नखा, सरल, बाला, शिलारस आदि कई ओषधियों का मिश्रण किया जाता है, इसका धूआँ नली या सटक आदि के द्वारा पीते हैं। इससे वात आदि दोषों का नाश होना माना जाता है।

१३. एक प्रकार का वस्ति कर्म जो मोथा और रसांजन आदि मिले हुए दूध से किया जाता है। १४. रात्रि। रात। १५. शांत करना। बुझाना (को०)। १६. प्रसन्न करना (को०)। १७. अंत।

ठहराव। समाप्ति। विनाश (को०)। १८. निगल जाना। चबाना (को०)।

शमनवस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का वस्ति कर्म जिसमें फूल प्रियगु मुलेठी, नागरमोथा और रसौत को दूध में पीसकर मलद्वार से पिचकारी देते हैं।

शमनस्वसा—संज्ञा स्त्री० [सं० शमनस्वसृ] यम की भगिनी अर्थात् यमुना।

शमनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात। रात्रि।

शमनीय—वि० [सं०] शमन करने योग्य। दबाने या शांत करने योग्य।

शमनीषद्, शमनीसद—संज्ञा पुं० [सं०] निशाचर। राक्षस।

शमपर—वि० [सं०] शांतिपरायण। शांत (को०)।

शमप्रधान—वि० [सं०] जिसमें शम की प्रधानता हो। जो शम को ही मुख्य मानता हो। शांत। विषयराग से रहित (को०)।

शमर (पु)—संज्ञा पुं० [अ० समर] फल। उ०—सरसब्ज हुआ फज्ले सनम से शमर आया।—कबीर म०, पृ० ३८६।

शमल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्ठा। मल। गुह। २. पाप। गुनाह। ३. अशुचिता। अपवित्रता (को०)। ४. अभाग्य। बदकिस्मती। दुर्भाग्य (को०)।

शमल²—वि० पापात्मा। पापी (को०)।

शमला—संज्ञा पुं० [अ०] १. एक छोटी शाल जिसे कंधों पर डालते या सिर पर लपेटकर पगड़ी की तरह बाँधते हैं। उ०—मुंशी जी की सज धज निराली। सिर पर एक हरा शमला था, देह पर एक अबा।—काया०, पृ० १३२। २. पुराने वकीलों के पहनने की पगड़ी जिसे वे गाऊन के ऊपर पहन लेते थे। ३. तुर्रा। पगड़ी का सिरा या छोर। ४. एक प्रकार की बनी हुई गोल पगड़ी जिसे सिर पर टोपी की तरह पहना जाता है।

शमशम—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

शमशाद—संज्ञा पुं० [फ़ा०] सव या सरो का वृक्ष जो सीधा होता है और अपनी लंबाई और सुंदरता के लिये प्रसिद्ध है, इसकी उपमा माशूक के कद से दी जाती है। उ०—चमन पर देख कर उस दुख का पहाड़; दिया है खोल बालाँ सर्व शमशाद।—दक्खिनी०, पृ० १६१।

शमशीर—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] दे० 'शमशेर'। (क) उधर शमशीर खींची हो इधर गर्दन झुकाई हो।—श्यामा०, पृ० ७३। (ख) जानता हूँ पंखुरी, शमशीर का भी; जानता हूँ प्यार, उसका पीर का भी।—मिलन०, पृ० ४८।

शमशेर—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. वह हथियार जो शेर की पूँछ अथवा नख के समान हो अर्थात् तलवार, खड्ग आदि। २. तलवार।

मुहा०—शमशेर का खत = युद्धक्षेत्र।

यौ०—शमशेरजन = तलवार चलानेवाला। असिवाही। शमशेरजनी = (१) सिपाही का पेशा। (२) तलवार की लड़ाई। असियुद्ध। शमशेरदम = तलवार की तरह बाढ़ रखनेवाला। तलवार जैसी काट करनेवाला। शमशेरजंग = वीरतासूचक उपाधि। शमशेर वक्फ = शस्त्रपाणि। जिसके हाथ में तलवार हो। शमशेर बहादुर = तलवार चलाने में कुशल।

शमश्रु (पु)†—संज्ञा पुं० [सं० श्मश्रु] दाढ़ी। श्मश्रु। उ०—अरु शमश्रु जो दाढ़ी है सो चाँदीवत चमत्कार करती है।—प्राण०, पृ० २६२।

शमांतक—संज्ञा पुं० [सं० शमान्तक] वह जो शम को, मनःशांति को नष्ट कर दे, अर्थात् कामदेव।

शमा—संज्ञा स्त्री० [अ० शमअ़] १. मोम। २. मोम या चर्बी की बनी हुई बत्ती जो जलाने के काम में आती है। मोमबत्ती। उ०—झिलमिलाकर और जलाकर तन शमा ने दो, अब शलभ की गोद में आराम से सोई हुई।—ठंडा० पृ० १२। ३. दीपक। दीया। उ०—सुबह तक शमा सर को धुनती रही। क्या पतंगे ने इल्तमास किया।—कविता को०, भा० ४, पृ० १७२।

यौ०—शमादान।

शमादान—संज्ञा पुं० [फ़ा०] वह आधार जिसमें मोम की बत्ती लगाकर जलाते हैं। यह प्रायः धातु का बना हुआ अनेक आकार प्रकार का होता है।

शमामचा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शमामचह्] सूँघने का कोई सुगंधित पदार्थ (को०)।

शमामा—संज्ञा पुं० [अ० शमामह्] सुगंध। खुशबू। महक (को०)।

शमारुख, शमारुखसार—वि० [फ़ा० शमारुख, शमारुखसार] १. शमा की तरह प्रकाशमान चेहरा। २. सुंदर। उ०—शमारुख का तेरे ये गुल कोई परवाना नहीं, और अगर हूँ तो नहीं।—श्यामा०, पृ० १०२।

शमारू—वि० [फ़ा०] दे० 'शमारुख'।

शमि¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शिंबी धान्य।

विशेष—इस धान्य में मूँग, मसूर, मोठ, उड़द, चना, अरहर, मटर, कुलथा, लोबिया इत्यादि वे अन्न आते हैं, जिनमें छीमियाँ लगती हैं।

२. सफेद कीकर। विशेष दे० 'शमी'।

शमि²—संज्ञा पुं० १. भागवत के अनुसार उशीनर के पुत्र का नाम। २. यज्ञ।

शमिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शमिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमी वृक्ष।

शमिज—संज्ञा पुं० [सं०] लाल कुलथी।

शमिजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लाल कुलथी। २. शिंबी धान्य।

शमित—वि० [सं०] १. जिसका शमन किया गया हो। २. शांत। ठहरा हुआ। ३. विश्रमित। आराम किया हुआ (को०)। ४. मारा हुआ। नष्ट या विध्वस्त किया हुआ (को०)।

शमिता¹—संज्ञा पुं० [सं० शमितृ] वह जो यज्ञ में पशु का बलिदान करता हो।

शमिता^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] चौरेठा। चावल का चूर्ण [को०]।

शमिपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] पानी में होनेवाली लजालू नाम की लता।

शमिपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शमिपत्र'।

शमिर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शमी वृक्ष। २. बकुची। सोमराजी।

शमिरोह—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

शमिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] चमेली की जाति का एक प्रकार का पौधा।

शमी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कर्म। क्रिया (को०)। २. एक प्रकार का बड़ा वृक्ष। सफेद कीकर। छिकुर। छोंकर।

विशेष—शमी का वृक्ष पंजाब, सिंध, राजपूताना, गुजरात, और दक्षिण के प्रांतों में पाया जाता है। इसे बागों में भी लगाते हैं। इसका वृक्ष ३०–४० फुट तक ऊंचा होता है; परंतु सिंध में यह ६० फुट का भी होता है। इसकी शाखें पतली, खाकी रंग की, चित्तीदार और भूमि की ओर लटकती हुई होती हैं। इसकी जड़ कहीं कहीं ६० फुट तक भूमि के भीतर नीचे चली जाती है, और चारों ओर बहुत दूर तक बढ़ती है, जिससे नए अंकुर निकलकर और पौधे उत्पन्न होते हैं। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है। इसके वृक्ष पर काँटे होते हैं। डालियों पर विषमवर्ती सींके रहते हैं। इन सींकों पर ७ से १२ जोड़े तक छोटे छोटे पत्ते रहते हैं। शाखों के अंत में ३–४ इंच लंबे सींकों पर नन्हें नन्हें पीले तथा गुलाबी रंग के फूल आते हैं। इसकी फलियाँ ५ से १० इंच तक लंबी और चिपटी होती हैं। प्रत्येक फली में १०–१५ बीज रहते हैं जो अंडाकार और भूरे रंग के होते हैं। इसकी छाल और फलियाँ ओषधि के काम में आती हैं। लोग इसकी फलियों का अचार और साग बनाकर खाते हैं। दुर्भिक्ष के समय इसकी छाल के आटे की रोटी बनाकर भी खाई जाती है। इसका भस्म बुद्धि, केश तथा नखों का नाश करनेवाला होता है। अतिसार में इसका काढ़ा लाभदायक होता है। गठिया पर इसकी छाल पीसकर गरम करके लगाने से लाभ होता है। लोग विजयादशमी आदि कुछ विशिष्ट अवसरों पर इसका पूजन भी करते हैं।

पर्या०—शक्तुफला। शिवा। केशहंत्री। शांता। हविर्गंधा। मेध्या। ईशानी। लक्ष्मी। तपनतनया। शुभदा। पवित्रा। बागुजि। पापनाशिनी। शंकरी। पापशमनी। इष्टा। तुंगा। शिवाफला। सुपत्रा। सुखदा।

शमी^{२}—वि० [सं० शमिन्] शांत।

शमीक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रसिद्ध क्षमाशील ऋषि का नाम।

विशेष—कहते हैं, परीक्षित ने उनके गले में एक बार मरा हुआ साँप डाल दिया, परंतु ये कुछ न बोले। इनके लड़के शृंगी ऋषि ने अपने पिता की दुर्दशा देखकर क्रुद्ध हो शाप दिया कि आज के सातवें दिन मेरे पिता के गले में सर्प डालनेवाले को तक्षक नाग डसेगा। कहा जाता है, इसी शाप के द्वारा तक्षक के काटने से राजा परीक्षित की मृत्यु हुई थी।

शमीगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्राह्मण। २. अग्नि।

शमीजाति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमीधान्य।

शमीधान, शमीधान्य—संज्ञा पुं० [सं०] शिंबी धान्य। मूँग, मसूर, उड़द आदि।

शमीपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] लजालू नाम की लता।

शमीम^{१}—संज्ञा स्त्री० [अ० शमीमह्] सूँघने की वस्तु। सुगंध। उ०—मगजे जाँ को जँबतो राहत का शमीम। याद उसका दिल के गुंचे को नसीम।—दक्खिनी०, पृ० २०१।

शमीम^{२}—संज्ञा पुं० [अ०] सुगंध। खुशबू।

शमीर—संज्ञा पुं० [सं०] शमी वृक्ष।

शमीरकंद—संज्ञा पुं० [सं० शमीरकन्द] बाराही कंद। चमार आलू। शूकर कंद।

शमीरमा—संज्ञा स्त्री० [सं० शमी + रमा] लक्ष्मीदेवी जो शमी वृक्ष में निवास करती हैं। उ०—शमी वृक्ष में शमीरमा रानी की पूजा वीरपूजा ही का जाज्वल्य प्रमाण है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २०६।

शमीरोह—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

शम्मा—सं० पुं० [अ०] किंचिन्मात्र वस्तु। बहुत थोड़ा सामान।

शम्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लगुड। यष्टि। लाठी। २. काठ का स्तंभ। ३. ३६ अंगुल लंबा एक परिमाण या मानदंड। ४. जुए का सैला। ५. झाँझ। ६. एक यज्ञपात्र। ७. वैद्यों का एक यंत्र या औजार। ८. संगीत में तालविशेष [को०]।

यौ०—शम्याक्षेप। शम्याग्राह = झाँझ बजानेवाला। झालर बनानेवाला। शम्यापात = दे० 'शम्याक्षेप'।

शम्याक—संज्ञा पुं० [सं०] आरग्वध वृक्ष। अमलतास।

शम्याक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह दूरी जहाँ तक घुमाकर तेजी से फेंकी हुई छड़ी गिरे। २. एक यज्ञ जिसका मंडप बलिष्ठ पुरुष द्वारा क्षिप्त छड़ी गिरने की दूरी तक हो [को०]।

शम्श(पु)—संज्ञा पुं० [अ० शम्स] १. सूरज। रवि। सूर्य। उ०—तकरीम को शम्शो महे अनवार झुका।—कबीर मं०, पृ० ४६८।

शम्शी(पु)—वि० [अ० शम्सी] १. सूर्य का। सौर। २. सूर्य संबंधी। उ०—आखिर कुछ धन माह न दीना, शम्शी कमरी घटा महीना।—दक्खिनी०, पृ० ३११।

शम्स—संज्ञा पुं० [अ०] १. सूर्य। जैसे, शम्स-उल-उलेमा अर्थात् विद्वानों में सूर्यवत्। २. सुमिरनी का फुँदना जो तसबीह (माला) में लगाया गया हो। [को०]।

शम्सा—संज्ञा पुं० [अ० शम्सह्] गवाक्ष। झरोखा। रोशनदान [को०]।

शम्सी^{१}—वि० [अ०] दे० 'शम्शी'।

शम्सी^{२}—संज्ञा स्त्री० छमाही वेतन।

शयंड^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शयण्ड] १. एक प्राचीन जनपद का नाम। २. इस देश का निवासी।

शयंड^{२}—वि० सोनेवाला। निद्रालु [को०]।

शयंडक—संज्ञा पुं० [सं० शयण्डक] गिरगिट ।

शय¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. शय्या । २. सर्प । साँप । ३. निद्रा । नींद । उ०—दृगों में ज्योति है, शय है, हृदय में स्पंद है, भय है ।—अर्चना, पृ० १०७ । ४. पण । ५. हाथ । ६ लंबाई की एक माप (को०) । ७. बद्दुआ । शाप (को०) । ८. भर्त्सना (को०) ।

शय²—वि० लेटनेवाला । सोनेवाला (विशेषतः समास में, जैसे दिवाशय, उत्तानशय) ।

शय³—संज्ञा स्त्री० [अ०, फ़ा० शै] १. वस्तु । पदार्थ । चीज । २. भूत । प्रेत । आसेब । जैसे,—इस मकान में कोई शय है ।

शय⁴—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शह] दे० 'शह' ।

शयत—संज्ञा पुं० [सं०] १. निद्रालु व्यक्ति । वह जिसे नींद आई हो । २. चंद्रमा (को०) ।

शयतान—संज्ञा पुं० [अ० शैतान] दे० 'शैतान' ।

शयतानी—संज्ञा स्त्री० [अ० शैतानी] दे० 'शैतानी' ।

शयथ¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँप । सर्प । अजगर । २. सूअर । सूकर । वाराह । ३. मछली । मीन । ४. गाढ़ी नींद । ५. मृत्यु । मौत । ६. यम । ७. शयनीय स्थल (को०) ।

शयथ²—वि० सोया हुआ । सुषुप्त (को०) ।

शयन—संज्ञा पुं० [सं०] १. निद्रा लेने या सोने की क्रिया । सोना । २. शय्या । बिछौना । ३. मैथुन । स्त्रीप्रसंग । संभोग ।

शयनआरती—संज्ञा स्त्री० [सं० शयन+आरती] । देवताओं की वह आरती जो रात को सोने के समय होती है ।

शयनकक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] सोने का कमरा या घर । शयनागार ।

शयनगृह—संज्ञा पुं० [सं०] सोने का स्थान । शयनमंदिर । शयनागार ।

शयनतलगत—वि० [सं०] शय्या पर लेटा हुआ (को०) ।

शयनपाल—संज्ञा पुं० [सं०] निद्राकाल में पहरा देनेवाला व्यक्ति या अंतरंग अंगरक्षक ।—वर्ण०, पृ० ६ ।

शयनपालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो शय्या की रक्षिका हो शयनकक्ष की रक्षा करनेवाली । (को०) ।

शयनबोधिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अगहन मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी । उ०—अगहन असित एकादसि केरा । शयनबोधिनो नाम निबेरा ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

शयनभूमि—संज्ञा स्त्री० [सं०] शयनमंदिर । शयन का स्थान (को०) ।

शयनमंदिर—संज्ञा पुं० [सं० शयनमन्दिर] सोने का स्थान । सोने का कमरा । शयनगृह । शयनागार ।

शयनरचन—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शयनरचना] ६४ कलाओं में से एक कला । सेज तैयार करना या सजाना (को०) ।

शयनवास—संज्ञा पुं० [सं० शयनवासस्] वे कपड़े जो सोने के समय पहने जायँ ।

शयनशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शयनगृह । शयनागार । उ०—इन क्षत्रियों को आलस्य की शयनशाला से उठाओ ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ६६ ।

शयनसखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शय्या पर साथ सोनेवाली सहेली (को०) ।

शयनस्थ—वि० [सं०] बिछौने पर बैठा या सोया हुआ (को०) ।

शयनस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] सोने की जगह (को०) ।

शयनागार—संज्ञा पुं० [सं०] सोने का स्थान । शयनमंदिर । शयनगृह ।

शयनीय¹—वि० [सं०] सोने के योग्य ।

शयनीय² संज्ञा पुं० १. सेज । शय्या । २. शयनगृह । शयनागार (को०) ।

शयनीयक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शयनीय' ।

शयनैकादशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी ।

विशेष—विष्णु भगवान् के शयन का प्रारंभ इसी दिन से माना जाता है ।

शयांड—संज्ञा पुं० [सं० शयाण्ड] १. एक प्राचीन देश या जनपद का नाम । २. इस देश का निवासी ।

शयांडक—संज्ञा पुं० [सं० शयाण्डक] गिरगिट । कृकलास ।

शयातीन—संज्ञा पुं० [अ० शैतान का बहु व०] शैतान । उ०—बस है यह उसको अज उफ़ुरे अयाल, के शयातीन हों उसके मालामाल ।—दक्खिनी०, पृ० २१६ ।

शयान¹—वि० [सं०] सोया हुआ । स्थित । पड़ा हुआ । उ०—कुंद के शेष पूज्यार्घदान, मल्लिका प्रथमयौवन शयान ।—अनामिका, पृ० २२ ।

शयान²—संज्ञा पुं० दे० 'शयानक' ।

शयानक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सर्प । साँप । अजगर । २. गिरगिट । कृकलास ।

शयालु¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसे नींद आई हो । निद्रालु । २. अजगर । ३. कुत्ता । ४. शृगाल । गीदड़ । सियार ।

शयालु²—वि० निद्रालु । निद्राशील । शयित (को०) ।

शयित¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. अजगर । २ लिसोड़ा । श्लेष्मांतक । ३. निद्रा । नींद (को०) । ४. सोने का स्थान (को०) ।

शयित²—वि० १. सोया हुआ । निद्रित । २. लेटा हुआ (को०) ।

शयिता—संज्ञा पुं० [सं० शयितृ] वह जो सोया हुआ हो । सोनेवाला ।

शयु—संज्ञा पुं० [सं०] १. अजगर । २. एक प्राचीन वैदिक ऋषि का नाम ।

शयुन—संज्ञा पुं० [सं०] अजगर । साँप ।

शय्यांत—संज्ञा पुं० [सं० शय्यान्त] शयनकक्ष (को०) ।

शय्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह बिछी हुई वस्तु जो सोने के काम में लाई जाय । बिस्तर । बिछौना । बिछावन । २. पलंग । खाट । खटिया । ३. बाँधना । नत्थी करना (को०) ।

शय्याकाल—संज्ञा पुं० [सं०] सोने का समय । शय्या पर जाने का काल (को०) ।

शय्यागत—वि० [सं०] १. जो बीमार होने के कारण खाट पर पड़ा हो । रोगी । २. सोया या लेटा हुआ (को०) ।

शय्यागृह—संज्ञा पुं० [सं०] शयनगृह । शयन का कक्ष या स्थान [को०]।

शय्याच्छादन—संज्ञा पुं० [सं०] पलंग पर बिछाने की चादर ।

शय्याद—वि० [अ०] छली । धूर्त । मक्कार । वंचक [को०] ।

शय्यादान—संज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु के अनंतर मृतक के संबंधियों का महापात्र को चारपाई, बिछावन आदि दान देना । सज्जादान ।

शय्याध्यक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शय्यापाल' ।

शय्यापाल, शय्यापालक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो राजाओं के शयनागार की व्यवस्था करता हो ।

शय्यामूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक रोग जो प्राय: बालकों को होता है । इसमें उन्हें निद्रावस्था में ही शय्या पर पड़े पड़े पेशाब हो जाता है ।

शरंड—संज्ञा पुं० [सं० शरण्ड] १. पक्षी । विहंग । चिड़िया । २. कामुक । ३. धूर्त । चालाक । ४. एक प्रकार का गहना । ५. छिपकली । ६. गिरगिट । ७. चतुष्पद । चतुष्पाद । चौपाया (को०) ।

शर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाण । तीर । नाराच । २. सरकंडा । सरई । ३. सरपत । रामशर । ४. दूध की मलाई । ५. दही की मलाई । ६. सामुद्रिक के अनुसार शरीर में का एक चिह्न । ७. उशीर । खस । ८. भाले का फल । उ०—मूआ है मरि जाहुगे, बिन शर थोथे भाल ।—कबीर (शब्द०) । ९. चिता । उ०—सूहो पैन्हि पी सँग सुहागिन बधू ह्वै लीजो सुख के समूहै बैठि सेज पै कि शर पै ।—देव (शब्द०) । १. हिंसा । ११. पाँच की संख्या । १२. पुराणानुसार एक असुर का नाम । १३. जल (को०) । १४ कुश नाम की घास (को०) ।

शर^2—संज्ञा पुं० [अ०] १. उपद्रव । शरारत । झगड़ा । बखेड़ा । २. बदी । बुराई । उ०—रहो कायम अपस इकरार ऊपर; खयाले कत्ल में लिए दीन का शर ।—दक्खिनी०, पृ० ३४० ।

शरअ—संज्ञा स्त्री० [अ०शरअ्] १. वह सीधा रास्ता जो ईश्वर ने भक्तों के लिये बतलाया हो । २. सीधा राह । राजमार्ग (को०) । ३. कुरान में दी हुई आज्ञा । ४. दीन । मजहब । धर्म । ५. दस्तूर । तौर । तरीका । ६. मुसलमानों का धर्मशास्त्र ।

शरई^1—वि० [अ०] शरअ के अनुसार । मुसलमानी धर्म के अनुसार ।

यौ० —शरई पैजामा = ऊँचा पैजामा । शरई दाढ़ी = बहुत लंबी दाढ़ी । शरई शादी = बिना बाजे गाजे का विवाह (मुसल०) ।

शरई^2—संज्ञा पुं० शरअ पर चलनेवाला मनुष्य ।

शरकांड—संज्ञा पुं० [सं० शरकाण्ड] १. सरपत । सरकंडा । २. बाण की लकड़ी ।

शरकार—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो तीर बनाता हो ।

शरक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाण का लक्ष्य स्थान । बाणप्रहार । तीर का चलाना । उ०—देखता रहा मैं खड़ा अपल वह शरक्षेप, वह रणकौशल ।—अनामिका, पृ० १२० ।

शरखंगक—संज्ञा पुं० [सं० शरखङ्गक] उलूक तृण । उलप ।

शरगा—संज्ञा पुं० [अ० शरग़ा] बादामी रंग का घोड़ा [को०] ।

शरगुल्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. सरकंडा । २. रामायण के अनुसार एक यूथपति बंदर का नाम ।

शरघात—संज्ञा पुं० [सं०] बाण चलाने का कार्य । तीरंदाजी [को०] ।

शरच्चद्र—संज्ञा पुं० [सं० शरत् + चन्द्र] शरद ऋतु का चंद्रमा ।

शरच्चंद्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शरत् + चन्द्रिका] शरत् की चाँदनी ।

शरज^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. मक्खन । नवनीत । २. कार्तिकेय । शरजन्मा (को०) ।

शरज^2—वि० सरकंडे से उत्पन्न या बना हुआ ।

शरजन्मा—संज्ञा पुं० [सं० शरजन्मन्] कार्तिकेय ।

शरजाल, शरजालक—संज्ञा पुं० [सं०] बाणों का जाल । बाणसमूह [को०] ।

शरज्ज्योत्स्ना—संज्ञा स्त्री० [सं० शरत् + ज्योत्स्ना] शरद् ऋतु की चाँदनी । शरद की जुन्हाई [को०] ।

शरट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुसुंभ नाम का साग । २. कृकलास । गिरगिट । ३. करंज । ४. प्रागैतिहासिक काल का एक भयावना जानवर ।

शरटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] लज्जालुक । लाजवंती । लजाधुर ।

शरटु—वि० [सं०] भयानक । भीषण । रौद्र [को०] ।

शरण^1—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रक्षा । आड़ । आश्रय । पनाह । जैसे,—अब तो मैं आपकी ही शरण में आया हूँ । उ०—(क) वपु कृष्ण कृष्ण करुना करण जग व्यापक हम तव शरण । —गिरधर (शब्द०) । (ख) जिनकी शरण विश्व बुध जिनको निरभिलाष बतलाते हैं ।—द्विवेदी (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—में आना ।—जाना ।—पाना ।—लेना ।

२. आश्रय का स्थान । बचाव की जगह । ३. घर । मकान । ४. जो शरण में आवे, उसके वैरी को मारना । ५. अधीन । मातहत । ६. शाहाबाद के उत्तर सारन नाम का जिला ।

शरण^2—वि० [सं०] दे० 'शरण्य' [को०] ।

शरणद—वि० [सं०] शरण देनेवाला । रक्षा करनेवाला । रक्षक ।

शरणदाता—वि० [सं० शरणदातृ] दे० 'शरणद' [को०] ।

शरणप्रद—वि० [सं०] दे० 'शरणद' ।

शरणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंधप्रसारिणी नाम की लता ।

शरणागत^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरण में आया हुआ व्यक्ति । किसी के भय से अपने पास रक्षा के लिये आया हुआ मनुष्य । २. शिष्य । चेला ।

शरणागत^2—वि० शरण में आया हुआ ।

शरणागति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरण में जाने का कार्य या स्थिति [को०] ।

शरणापन्न—वि० [सं०] शरण में आया हुआ । शरणागत ।

शरणार्थी—वि० [सं० शरणार्थिन्] १. शरण माँगनेवाला । अपनी

रक्षा की प्रार्थना करनेवाला। २. विस्थापित। एक स्थान छोड़कर दूसरे स्थान पर जा बसनेवाला। उ०—शरणार्थी, नवभू जीवन के शरणार्थी हैं।—रजत०, पृ० २८।

शरणार्पक—वि० [सं०] शरणापन्न। शरणागत [को०]।

शरणि^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रास्ता। मार्ग। पथ। २. पृथ्वी। जमीन ३. हिंसा। ४. पंक्ति [को०]।

शरणि^{२} संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गंधप्रसारिणी नाम की लता। २. पथ। मार्ग। रास्ता। ३. जयंती लता। ४. पृथ्वी (को०)। ५. पंक्ति। अवली (को०)। ६. इंद्र की पुत्री, जयंती (को०)।

शरणी^{२}(पु)—वि० शरण देनेवाली।

शरण्य^{१} —वि० [सं०] १. शरण में आए हुए की रक्षा करनेवाला। उ०—रक्षण करिहैं अवशि हमारा। प्रभु ब्रह्मण्य शरण्य उदारा।—भक्तमाल (शब्द०)। २. रक्षणीय। शरण देने योग्य (को०)। ३. दुःखी। अवलंबहीन (को०)।

शरण्य^{२} संज्ञा पुं० १. आश्रयस्थान। २. रक्षा। त्राण। ३. हिंसा। ४. वह जो रक्षा कार्य करे। ५. शिव [को०]।

शरण्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरण्य का भाव।

शरण्या - संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

शरण्यु^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. वायु। हवा। ३. वह जो पालन वा रक्षण करे अथवा शरण दे। रक्षक। ४. दे० 'भरण्यु'।

शरण्यु^{२}—संज्ञा स्त्री० सूर्य की पत्नी।

शरण्यु^{३}—वि० [सं०] रक्षक। पालक। त्राता।

शरत् -संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वर्ष। साल। २. एक ऋतु जो आजकल आश्विन और कार्तिक मास में मानी जाती है। पहले वैदिक काल में यह ऋतु भाद्रपद और आश्विन मास में मानी जाती थी। उ०—वर्षा विगत शरत् ऋतु आई।—तुलसी (शब्द०)।

पर्या०—शारदा। कालप्रभाव। मेघांत। वर्षाविसान।

शरत^{१}—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] दे० 'शर्त'।

शरत^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० शरत्] दे० 'शरत्'।

शरतल्प—संज्ञा पुं० [सं०] वाणों की शय्या। शर पंजर।

शरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बाण फेकने की क्रिया। तीरंदाजी।

शरत्कामी—संज्ञा पुं० [सं० शरत्कामिन्] कुत्ता। कुक्कुर। श्वान।

शरत्काल—संज्ञा पुं० [सं०] कन्या संक्रांति से तुला संक्रांति तक का अथवा आश्विन और कार्तिक का समय। शरद् ऋतु।

शरत्त्रियामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरत् ऋतु की रात [को०]।

शरतपद्म संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत पद्म।

शरतपर्व—संज्ञा पुं० [सं० शरत्पर्वन्] आश्विन मास की पूर्णिमा। कोजागर। शरद्पूर्णिमा।

शरत्पुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक क्षुप। आहुल्य।

शरदंड—संज्ञा पुं० [सं० शरदण्ड] १. चाबुक। २. सरकंडा।

शरदंडा—संज्ञा स्त्री० [सं० शरदण्डा] १. एक प्राचीन नदी का नाम। २. एक प्राचीन देश का नाम।

शरदंत—संज्ञा पुं० [सं० शरदन्त] शरद ऋतु का अंत अर्थात् हेमंत ऋतु।

शरद –संज्ञा स्त्री० [सं० शरद्] दे० 'शरत्'।

शरदई -संज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'सरदई'।

शरदपूर्णिमा--संज्ञा स्त्री० [सं० शरत्पूर्णिमा] कुआर मास की पूर्णमासी। शरद् पूनो।

शरदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शरद ऋतु। २. वर्ष। साल।

शरदिंदु—संज्ञा पुं० [सं० शरदिन्दु] शरद् ऋतु का चंद्र। उ०—प्रतनु शरदिंदु वर।—गीतिका, पृ० १२।

शरदिज—वि० [सं०] जो शरत् ऋतु में उत्पन्न हो।

शरदुद्भव—संज्ञा पुं० [मं०] वृत्तपत्र नाम का साग।

शरदुर्दिन--संज्ञा पुं० [सं०] बाणों की वर्षा या झड़ी [को०]।

शरदेंदु—संज्ञा पुं० [सं० शरदिन्दु, हिं० शरद+इंदु] शरद ऋतु का चंद्रमा। शरच्चंद्र।

शरद्घन—संज्ञा पुं० [सं०] शरद् ऋतु के मेघ। शरत्काल के बादल [को०]।

शरद्चंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शरच्चन्द्र] शरद् ऋतु का चंद्रमा। उ०—शरद्चंद्र की चाँदनी मंद परत सी जान।—पद्माकर (शब्द०)।

शरद्वत्—संज्ञा पुं० [सं०] शरत् ऋतु। २. एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शरद्वसु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शरद्वीप—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक द्वीप का नाम जो जलद्वीप भी कहलाता है।

शरधा(पु)†—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रद्धा] दे० 'श्रद्धा'। उ०—यदि शरधा हो तो।—मैला०, पृ० ८८।

शरधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम। २. इस देश का निवासी।

शरधि—संज्ञा पुं० [सं०] तीर रखने का चोंगा। तूणीर। तरकस।

शरनाई(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शरण] दे० 'शरण'। उ०—यहि मुर्दा को लेहु हँकराई। हम सब तब रहें तुव शरनाई।—कबीर सा०, पृ० १५१५।

शरनी(पु)^{१}—वि० स्त्री० [सं० शरण] शरण देनेवाली। उ०—अशरण शरनी भवभय हरनी वेद पुरान बखानी।—सूर (शब्द०)।

शरनी(पु)†^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं० शरण] दे० 'शरण'। उ०—तीरथ व्रत कीन्ह बहु करनी। रूपदास गुरु की गहि शरनी।—कबीर सा०, पृ० ४२०।

शरन्मुख—संज्ञा पुं० [सं०] शरद् ऋतु का आरंभ।

शरन्मेघ --संज्ञा पुं० [सं०] शरत्काल के बादल।

शरपंख—संज्ञा पुं० [सं० शरपङ्ख] जवासा। हिंगुआ। धमासा।

शरपट्टा(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शर+हिं० पट्टा] एक प्रकार का शस्त्र। उ०—असि शर भिंडिपाल शरपट्टा।—गिरधर (शब्द०)।

शरपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पौधा।

शरपुंख—संज्ञा पुं० [सं० शरपुङ्ख] १. नील की तरह का एक प्रकार

का पौधा । सरफोंका । २. बाण या तीर में लगा हुआ पंख । ३. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का यंत्र ।

शरपुंखा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शरपुङ्खा] दे॰ 'शरपुंख' [को॰] ।

शरप्रवेग—संज्ञा पुं॰ [सं॰] तीव्रगामी या तीक्ष्ण बाण [को॰] ।

शरफल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बाण का फल या नोक [को॰] ।

शरबत—संज्ञा पुं॰ [अ॰] १. पीने की मीठी वस्तु । रस । २. चीनी आदि में पका हुआ किसी ओषधि का अर्क जो दवा के काम आता है । जैसे,—शरबत बनफशा, शरबत अनार । ३. पानी में घोली हुई शक्कर या खाँड़ । ४. मुसलमानों की एक रस्म जो विवाह के पश्चात् शरबत पिलाकर पूरी की जाती है और उसके बदले में वधू के पक्षवालों को कुछ धन दिया जाता है । ५. सगाई की रस्म । (मुसल॰) ।

मुहा॰—शरबत पिलाना = व्याह के पहले या बाद में शरबत पिलाने की रीति । शरबत के प्याले पर निकाह पढ़ाना या करना = बिना कुछ भी खर्च किए व्याह करना ।

शरबत पिलाई—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ शरबत + पिलाना] वह धन जो वर और कन्या पक्ष के लोग एक दूसरे को शरबत पिलाकर देते हैं । (मुसल॰) ।

शरबती^{१}—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ शरबत + ई (प्रत्य॰)] १. एक प्रकार का हलका पीला रंग जिसमें साधारण लाली भी होती है । यह प्रायः हरसिंगार के फूल और शहाब मिलाकर बनाया जाता है । २. एक प्रकार का नगीना जो पीलापन लिए लाल रंग का होता है । ३. एक प्रकार का नीबू जिसे मीठा नीबू भी कहते हैं । ज्वर में लोग प्रायः इसका रस चूसते हैं । चकोतरा । मधुकर्कटी । ४. एक प्रकार का बढ़िया कपड़ा जो तनजब से कुछ मोटा और अद्धी से कुछ पतला होता हैं । ५. एक प्रकार का फालसा जो बड़ा और मीठा होता है ।

शरबती^{२}—वि॰ १. रसीला । रसदार । रस भरा हुआ । २. हलका गुलाबी ।

शरबती डाँक—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ शरबती + डाँक] नगीने के नीचे रखने का शरबती रंग का बहुत पतला चाँदी या ताँबे का पत्तर विशेष दे॰ 'डाँक' ।

शरबती नीबू—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ शरबत + नीबू] १. चकोतरा । २. गलगल । ६. जंबीरी नीबू । मीठा नीबू ।

शरबती फालसा—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ शरबती + फालसा] एक प्रकार का फालसा जो बड़ा और मीठा होता है ।

शरबान—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शर + बान] भूतृण । अगिया घास ।

शरबीज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. सरपत्त के बीज । चारुक । २. भद्रमुंज ।

शरभंग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शरभङ्ग] एक प्राचीन महर्षि जो दक्षिण में रहते थे । वनवास के समय रामचंद्र इनके दर्शन करने गए थे ।

शरभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. राम की सेना का एक यूथपति बंदर । उ॰—ऋषभ शरभ अरु नील गवाक्षु गँधमादन हू पाँचो ।—रघुराज (शब्द॰) । २. टिड्डा । ३. हाथी का बच्चा । ४. विष्णु । ५. ऊँट । ६. एक प्रकार का पक्षी । ७. आठ पैरोंवाला एक कल्पित मृग । कहते हैं, यह सिंह से भी अधिक बलवान् होता है । ८. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में ४ नगण और १ सगण होता है । इसे 'शशिकला' और 'मणिगुण' भी कहते हैं । ९. दोहे का एक भेद जिसमें बीस गुरु और आठ लघु मात्राएँ होती हैं । १०. शेर । सिंह । ११ दनुज के एक पुत्र का नाम । १२. महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम ।

शरभता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शरभ का भाव या धर्म । शरभत्व ।

शरभलील—संज्ञा पुं॰ [सं॰] संगीत में ताल का एक भेद [को॰] ।

शरभा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. शुष्क अवयवोंवाली और विवाह के अयोग्य कन्या । २. लकड़ी का एक प्रकार का यंत्र ।

शरभू—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कार्तिकेय ।

शरभृष्टि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] बाण की नोक [को॰] ।

शरभेद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बाण का घाव [को॰] ।

शरभेश्वर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक शिवलिंग का नाम ।

शरम—संज्ञा स्त्री॰ [फ़ा॰ शर्म] १. लज्जा । हया । गैरत ।

क्रि॰ प्र॰—आना ।—करना ।—रखना ।—होना ।

मुहा॰—शरम से गड़ना = मारे लज्जा के दबे या झुके जाना । बहुत लज्जित होना । शरम से पानी पानी होना = बहुत लज्जित होना ।

२. लिहाज । संकोच । ३. प्रतिष्ठा । इज्जत ।

मुहा॰—शरम रखना = इज्जत रखना । लाज रखना । शरम रहना = प्रतिष्ठा रहना । आबरू रहना ।

शरमनाक—वि॰ [फ़ा॰ शर्मनाक] लज्जाजनक । शर्मनाक ।

शरमल्ल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शारिका पक्षी । मैना । २. वह जो तीर चलाने में निपुण हो । धनुर्धारी ।

शरमसार—वि॰ [फ़ा॰ शर्मसार] १. जिसे शर्म हो । लज्जावाला । हयादार । २. लज्जित । शर्मिंदा । ३. पछतानेवाला (को॰)

शरमसारी^{१}—संज्ञा स्त्री॰ [फ़ा॰ शर्मसारी] १. शर्मिंदा होने का भाव या क्रिया । २. लज्जा । शर्मिंदगी । ३. पछतावा । पश्चात्ताप (को॰) ।

शरमसारी^{१}—संज्ञा पुं॰ वह जो वास्तव में लज्जा या मुरव्वत न करता हो, केवल किसी के सामने आ जाने पर लज्जा या मुरव्वत करता हो । मुँह देखे की लज्जा करनेवाला ।

शरमहुजूरी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शर्म॰ + फ़ा॰ हुज़ूर] ऐसी लज्जा या मुरव्वत जो वास्तविक न हो, केवल किसी के सामने आ जाने से उत्पन्न हो । मुँह देखे की लाज ।

शरमाऊ—वि॰ [हिं॰ शरम + आऊ (प्रत्य॰)] जिसे बहुत लज्जा मालूम होती हो । शरमीला ।

शरमाना^{१}—क्रि॰ अ॰ [अ॰ शर्म + हिं॰ आना (प्रत्य॰)] शर्मिंदा होना । लज्जित होना । लाज करना । हया करना । जैसे,—वे तुम्हारे

सामने शरमाते हैं। उ०—वह न शरमावे कब तलक आखिर। दोस्ती यारी आशनाई है।—कविता कौ०, भा० ४, पृ०, १६६।

शरमाना^{2}—क्रि० स० शरमिंदा करना। लज्जित करना। जैसे—अब उन्हें ज्यादा मत शरमाओ।

शरमालू‡—वि० [फ़ा० शर्मआलूद अथवा हिं० शरम+आलु (प्रत्य०)] दे० 'शरमाऊ'।

शरमा शरमी—क्रि० वि० [फ़ा० शर्म] लज्जा के कारण। शरमिंदा होकर। जैसे,—आप शरमा शरमी साथ हो लिए हैं।

शरमिंदगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] शरमिंदा या लज्जित होने का भाव या धर्म। नदामत। लाज। झेंप।

मुहा०—शरमिंदगी उठाना=ऐसा काम करना जिसमें लज्जित होना पड़े।

शरमिंदा-वि० [फ़ा० शरमिंदह्] जिसे शरम या लज्जा आई हो। लज्जित।

शरमीला—वि० [फ़ा० शर्म+ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० शरमीली] जिसे जल्दी शरम या लज्जा आवे। शरम करनेवाला। लज्जालु।

शरयंत्रक—संज्ञा पुं० [सं० शरयन्त्रक] वह डोरी जिससे प्राचीन काल में लिखे हुए ताड़पत्रों को ग्रथित किया जाता था। लिखे हुए ताड़पत्रों को नत्थी करने की डोरी [को०]।

शरयु, शरयू—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'सरयू'।

शरर—संज्ञा स्त्री० [अ०] अग्निकण। चिनगारी। स्फुलिंग। उ०—क्या आग की चिनगारियाँ सीने में भरी हैं। जो आँसू मेरी आँख से गिरता है शरर है।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० १६४।

शररबार—संज्ञा पुं० [अ० शरर+फ़ा० बार] चिनगारी बरसानेवाला। उ०—दरबार में वह तेगे शररबार न चमके।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ५२२।

शरल^1—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'सरल^2'।

शरल^2—वि० १. वक्र। टेढ़ा। कुटिल। २. दे० 'सरल'^{1}।

शरलक—संज्ञा पुं० [सं०] जल। पानी।

शरलोमा—संज्ञा पुं० [सं० शरलोमन्] एक प्राचीन ऋषि जिन्होंने कई ऋषियों के साथ भारद्वाज जी से आयुर्वेद संहिता लाने के लिये प्रार्थना की थी।

शरवण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शरवन' [को०]।

शरवणी†—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रवण+ई] कान में पहनी जानेवाली छोटे छोटे दानों की माला। उ०—माला ताहि गले महँ दीन्हा। श्रवण शरवणी बाँधन लीन्हा।—कबीर सा०, पृ० २७०।

शरवन—संज्ञा पुं० [सं०] १. नरसल या नरकुलों का झुरमुट। २. कुश की चटाई [को०]।

शरवनोद्भव—स्त्री० पुं० [सं०] कार्तिकेय।

शरवर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] वाणवृष्टि। वाणों की बौछार [को०]।

शरवाणि—संज्ञा पुं० [सं०] १. शर का अगला भाग। तीर का फल। २. वह जो शर चलाकर जीविका निर्वाह करता हो। तीर चलानेवाला सिपाही। ३. पैदल सिपाही। ४. वाण बनानेवाला (को०)।

शरवारण—संज्ञा पुं० [सं०] चर्म या ढाल जिससे तीरों की बौछार रोकी जाती है।

शरवृष्टि^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाणों की वर्षा [को०]।

शरवृष्टि^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] एक मरुत्वान् [को०]।

शरव्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसपर शर का संधान किया जाय। वह जो तीर का निशाना बनाया जाय। लक्ष्य।

शरव्यीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] निशाना ठीक करना [को०]।

शरव्रात—संज्ञा पुं० [सं०] वाणों का समूह [को०]।

शरशोर—संज्ञा पुं० [अ० शर्र, शर+फ़ा० शोर] झगड़ा। फसाद। शोर गुल। उ०—फिर न बाकी रहे कोई शरशोर। मेह कर जब कबीर बंदिछोर।—कबीर म०, पृ० ३७४।

शरसंधान—संज्ञा पुं० [सं० शरसन्धान] निशाना लगाना [को०]।

शरसंबाध—वि० [सं० शरसम्बाध] वाणों से ढँका हुआ [को०]।

शरस्तंब—संज्ञा पुं० [सं० शरस्तम्ब] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन स्थान का नाम। २. एक प्राचीन प्रवरकार ऋषि का नाम। ३. नरकुलों का संचय वा समूह (को०)।

शरह—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. वह कथन या वर्णन जो किसी बात को स्पष्ट करने के लिये किया जाय। २. टीका। भाष्य। व्याख्या।

यौ०—शरहनवीस, शरहनिगार=व्याख्याकार। टीकाकार।

३. दर। भाव। ४. दे० 'शरह लगान'।

यौ०—शरहनामा=दर या भाव की सूची। निर्खनामा। शरहबंदी=दर या भाव निश्चित करना। मूल्य पर कंट्रोल करना। शरह मुअय्यन। शरह लगान।

शरहमुअय्यन, शरहमुऐयन—संज्ञा पुं० [अ०] वह काश्तकार जो दवामी बंदोबस्त के समय से मुकर्रर एक ही लगान देता हो। विशेष दे० 'काश्तकार'।

शरह लगान—संज्ञा स्त्री० [अ० शरह+हिं० लगान] भूकर की दर। जमीन की पड़ती। बिघौती।

शरा‡—संज्ञा स्त्री० [अ० शरअ, या शरीअत का बहु व० 'शराए'] दे० 'शरअ'। उ०—शरा का खेल मुहम्मद से कर कहैं, यही विध तुरक तकरीर लावा।—तुरसी० श०, पृ० १५।

शराकत—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. शरीक या सम्मिलित होने का भाव। २. साझा। हिस्सेदारी।

यौ०—शराकनतामा=हिस्सेदारी की शर्तोंवाला दस्तावेज।

शराटि—संज्ञा स्त्री० [सं०] टिटिहरी।

शराटिका, शराति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. टिटिहरी। २. लज्जालुक। लजालू। लाजवंती।

शराडि, शराति—संज्ञा स्त्री० [सं०] टिटिहरी। टिट्टिभ।

शराध—संज्ञा पुं० [सं० श्राद्ध] दे० 'श्राद्ध'।

शरापां—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शाप] दे॰ 'शाप'।

शरापनाⓅ†—क्रि॰ स॰ [सं॰ शाप+ना (प्रत्य॰)] किसी को शाप देना। सरापना।

शराफ—संज्ञा पुं॰ [अ॰ सर्राफ, गुज॰ श्राफ] दे॰ 'सराफ'।

शराफत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शराफ़त] १. शरीफ या सज्जन होने का भाव। भलमनसी। सज्जनता। २. कुलीनता। कुल की शुद्धता (को॰)।

यौ॰—शराफत पनाह=शराफत की रक्षा करनेवाला। शरीफ जनों को शरण देनेवाला। शराफत पेशा=उच्च वंश का। कुलीन। शरीफ।

शराफा—संज्ञा पुं॰ [अ॰ सर्राफ़ह्] दे॰ 'सराफा'।

शराफी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ सर्राफ़ी] दे॰ 'सराफी'।

शराब—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] १. मदिरा। सुरा। वारुणी। मद्य। दारू। विशेष दे॰ 'मदिरा'।

क्रि॰ प्र॰—खींचना।–ढालना।–पिलाना।–पीना।

मुहा॰—शराब का दौर चलना=मदिरा पीने का क्रम चालू रहना। शराब पीते जाना।

२. हकीमों की परिभाषा में, शरबत। जैसे—शराब बनफशा।

शराबखाना—संज्ञा पुं॰ [अ॰ शराब+फ़ा॰ खानह्] शराब बनने तथा बिकने की जगह। वह स्थान जहाँ शराब मिलती हो।

शराबखोर—वि॰ [अ॰ शराब+फ़ा॰ खोर] शराब पीनेवाला। मद्यप (को॰)।

शराबखोरी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शराब+फ़ा॰ खोर+ई (प्रत्य॰)] १. शराब पीने का कृत्य। मदिरापान। २ शराब पीने की लत।

शराबख्वार—संज्ञा पुं॰ [अ॰ शराब+फ़ा॰ ख़्वार] वह जो शराब-पीता हो। मदिरा पीनेवाला। मद्यप। शराबी।

शराबख्वारी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शराब+फ़ा॰ ख़्वारी] शराब पीने की लत [को॰]।

शराबजदा—वि॰ [अ॰ शराब+ज़दह्] मत्त। मतवाला।

शराबी—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ शराब+ई (प्रत्य॰)] वह जो शराब पीता हो। शराब पीनेवाला। मद्यप।

शराबेतहूर—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] स्वर्ग की पवित्र शराब [को॰]।

शराबोर—वि॰ [फ़ा॰] जल आदि से बिल्कुल भीगा हुआ। लथपथ। तरबतर। जैसे—रंग से शराबोर, पानी से शराबोर।

शरायुध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] धनुष [को॰]।

शरारत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] शरीर या पाजी होने का भाव। पाजी-पन। दुष्टता। बदमाशी। नटखटी।

शरारती—वि॰ [अ॰ शरारत+ई (प्रत्य॰)] पाजी। दुष्ट। नटखट।

शरारि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. राम की सेना का एक यूथपति बंदर। २. 'शरारिमुख'।

शरारिमुख—संज्ञा पुं॰ [सं॰] टिटिहरी नाम की छोटी चिड़िया जो जलाशयों के पास रहती है।

शरारी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] टिटिहरी नाम की छोटी चिड़िया।

शरारीमुखी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] कैंची जैसा एक प्राचीन औजार।

शरारु¹—वि॰ [सं॰] १. हानिकारक। २. आघात या चोट पहुँचानेवाला [को॰]।

शरारु²—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चोट या हानि पहुँचानेवाला जानवर [को॰]।

शरारोप—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जिसपर शर चढ़ाया जाता है, धनुष। जिसपर रखकर तीर चलाते हैं, कमान।

शरालि, शराली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] टिटिहरी नाम की छोटी चिड़िया।

शराव संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मिट्टी का एक प्रकार का पुरवा। कुल्हड़। २. वैद्यक में एक प्रकार का परिमाण या तौल जो चौंसठ तोले या एक सेर की होती थी। (वैद्यक में सेर चौंसठ तोले का ही माना जाता है)। ३. ढकना। ढक्कन (को॰)।

शरावक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ढकना। ढक्कन [को॰]।

शरावती—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. एक नदी जो आजकल वाण-गंगा कहलाती हैं। २. एक प्राचीन नगरी जो लव की राजधानी थी।

शरावर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. ढाल। २. कवच। वर्म। ३. तरकश। भाथा। तूणीर (को॰)।

शरावरण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ढाल जिससे तीर का वार रोकते हैं।

शरावाप—संज्ञा पुं॰ [सं॰] धनुष। कमान। ३. तूणीर। भाथा (को॰)।

शराविका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. वह फुंसी जो ऊपर से ऊँचा और बीच में गहरी हो। २. एक प्रकार का कोढ़।

शराश्रय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] तरकस। भाथा। तूणीर [को॰]।

शरास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] धनुष। उ॰—दीखते उनसे विचित्र तरंग हैं, कोटि शक्रशरास होते भंग हैं।—साकेत, पृ॰ ६।

यौ॰—शक्रशरास=इंद्रधनुष।

शरासन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. धनुष। कमान। चाप। २. महाभारत के अनुसार धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

शरास्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] धनुष। कमान।

शरियत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शरीअत] दे॰ 'शरीअत'। उ॰—उसको छोड़ राह विचार शरियत जिसइँ कहना। इन्साफ उपर सभी काम फरमूद के सूँ रहना।—दक्खिनी॰, पृ॰ ५५।

शरिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का प्रासाद।

शरिष्ठⓅ—वि॰ [सं॰ श्रेष्ठ>शरिष्ठ (वरिष्ठ के वजन पर)] दे॰ 'श्रेष्ठ'। उ॰—कन्या कहउ सुनौ मतिमंता। जो शरिष्ठ सोई मम कंता।—सबल (शब्द॰)।

शरी¹—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एरका या मोथा नाम का तृण।

शरी²—वि॰ [सं॰ शरिन्] वाणधारी। वाणयुक्त [को॰]।

शरीअत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ शरीअ़त] १. मुसलमानों के अनुसार वह पथ जो परमात्मा ने अपने भक्तों के लिये निश्चित किया हो। २. धर्मशास्त्र। (मुसल॰)। ३. खुला हुआ और चौड़ा रास्ता। राजमार्ग (को॰)।

यौ०—शरीअते मुहम्मदी = मुहम्मद साहब के चलाए हुए नियम या कानून।

शरीक^{1}—वि० [अ०] शामिल। संमिलित। मिला हुआ।

शरीक^{2}—संज्ञा पुं० १. वह जो किसी बात में साथ रहता हो। साथी। २. साझी। हिस्सेदार। पट्टीदार। ३. सहायक। मददगार। ४. रिश्तेदार। संबंधी। (पश्चिम)।

यौ०—शरीके जलसा = सभा में उपस्थित लोग। शरीके राय = सहमत। शरीके हाल सुख दुःख का साथी।

शरीफ^{1}—संज्ञा पुं० [अ० शरीफ़] १. ऊँचे घराने का व्यक्ति। कुलीन मनुष्य। २. सभ्य पुरुष। भला मानुस। भला आदमी। ३. मक्के के प्रधान अधिकारी की उपाधि।

शरीफ^{2}—वि० १. पाक। पवित्र जैसे,—मिजाज शरीफ। कुरान शरीफ। २. भला। नेक (को०)। ३. शिष्ट। सभ्य (को०)। ४. प्रतिष्ठित। संमानित (को०)।

यौ०—शरीफजादा = कुलीन व्यक्ति। शिष्ट एवं कुलीन परिवार का। शरीफजादी = कुलीन महिला। ऊँचे खानदान की स्त्री।

शरीफ^{3}—संज्ञा पुं० [अं० शेरिफ] ब्रिटिश शासनकाल में कलकत्ते, बंबई और मद्रास में सरकार की ओर से नियुक्त किए जानेवाले एक प्रकार के अवैतनिक अधिकारी।

विशेष—प्रायः नगर के बड़े बड़े रईस और प्रतिष्ठित व्यक्ति कुछ निश्चित समय के लिये 'शरीफ' बनाए जाते हैं। इनके सुपुर्द शांतिरक्षा तथा इसी प्रकार के और कुछ काम होते हैं। यूरोप और अमेरिका आदि में भी इस प्रकार के अधिकारी नियुक्त किए जाते हैं जिन्हें कुछ शासन संबंधी कार्य भी सौंपे जाते हैं। इनके अधिकार प्रायः मजिस्ट्रेटों से कुछ मिलते जुलते होते हैं।

शरीफा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीफल या सीताफल] १. मझोले आकार का एक प्रकार का प्रसिद्ध फलवाला वृक्ष।

विशेष—यह वृक्ष प्रायः सारे भारतवर्ष में फल के लिये लगाया जाता है और मध्य तथा पश्चिमी भारत के जंगली प्रदेशों में बहुत अधिकता से पाया जाता है। कहते हैं, यह वृक्ष वेस्ट-इंडीज से यहाँ आया है। इस वृक्ष की छाल पतली और खाकी रंग की, और लकड़ी कुछ मटमैलापन लिए सफेद रंग की होती है। इसके फल अमरूद के फल के सदृश, अंडाकार तथा अनीदार होते हैं। इसमें एक प्रकार के त्रिदल फूल लगते हैं जो नीचे की ओर झुके हुए होते हैं। ये फूल तरकारी बनाने के काम में आते हैं। यह वृक्ष गरमी के दिनों में फूलता है और कार्तिक अगहन में इसमें अमरूद के आकार के खाकी रंग के गोल फल लगते हैं। यह वृक्ष बीजों से उगता है और बहुत जल्दी बढ़कर फूलने लगता है। इसके पौधे जब कुछ बड़े हो जाते हैं, तब उखाड़कर दूसरे स्थान पर रोपे जाते हैं। इसकी छाल, जड़ और पत्तियों का व्यवहार औषधों में होता है। इसकी छाल बहुत दस्तावर होती है। इसके बीज में से एक प्रकार का तेल भी निकलता है और इसमें तीन तरह के गोंद भी लगते हैं।

२. इस वृक्ष का फल जो अमरूद के सदृश गोल और खाकी रंग का होता है। श्रीफल। सीताफल। रामसीता।

विशेष—इसके तल पर आँख के आकार के बड़े बड़े दाने होते हैं जिनके अंदर सफेद गूदे में लिपटे हुए काले लंबोतरे बीज होते हैं। इसका गूदा बहुत मीठा होता है; और इसी के लिये यह फल खाया जाता है। अकाल के दिनों में गरीब लोग प्रायः जंगली शरीफे के फल खाकर निर्वाह करते हैं। वैद्यक में इसे मधुर, हृदय के लिये हितकारी, बलवर्धक, वातकारक, शक्तिवर्धक, तृप्तिकारक, मांसवर्धक और दाह, पित्त, रक्तपित्त, प्यास, वमन, रुधिरविकार आदि के लिये लाभदायक माना है।

शरीर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य या पशु आदि के समस्त अंगों की समष्टि। सिर से पैर तक के सब अंगों का समूह। देह। तन। बदन। जिस्म।

विशेष—'शरीर' शब्द से प्रायः आत्मा से भिन्न और सब अंगों या अवयवों का ही भाव ग्रहण किया जाता है। पर हमारे यहाँ शास्त्रों में शरीर के दो भेद किए गए हैं—सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर। बुद्धि, अहंकार, मन, पाँचों ज्ञानेंद्रियाँ, पाँचों कर्मेंद्रियाँ और पंच तन्मात्र के समूह को सूक्ष्म या लिंगशरीर कहते हैं। और, हाथ, पैर, मुँह, सिर, पेट, पीठ आदि अंगों का समूह स्थूल शरीर कहलाता है। इसी स्थूल शरीर में सूक्ष्म या लिंगशरीर का वास होता है। कहते हैं, जब जीव मर जाता है, तब उसका सूक्ष्म शरीर या लिंग शरीर उसके स्थूल शरीर में से निकलकर परलोक को जाता है।

पर्या०—कलेवर। गात्र। विग्रह। काय। मूर्ति। तनु। क्षेत्र। पिंड। स्कंध। पंजर। करण। बंध। मुद्गल।

२. शारीरिक शक्ति (को०)। ३. जीवात्मा (को०)। ४. शव (को०)।

शरीर^{2}—वि० [अ०] [संज्ञा शरारत] पाजी। दुष्ट। नटखट।

शरीरक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर। तन। गात्र। २. लघु या छोटा शरीर। ३. आत्मा (को०)।

शरीरकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० शरीरकर्तृ] १. शरीर को बनानेवाला, परमेश्वर। सृष्टिकर्ता। २. पिता। जनक (को०)।

शरीरकृत—संज्ञा पुं० [सं०] १. परमेश्वर। २. पिता (को०)।

शरीरग्रहण—संज्ञा पुं० [सं०] शरीरयुक्त होना या जन्म लेना (को०)।

शरीरज^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. रोग। बीमारी। २. कामदेव। ३. कामवासना। कामेच्छा (को०)। ४. पुत्र। लड़का। बेटा।

शरीरज^{2}—वि० शरीर से उत्पन्न।

शरीरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर का भाव या धर्म।

शरीरत्याग—संज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु। मौत।

शरीरत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर का भाव या धर्म। शरीरता।

शरीरदंड—संज्ञा पुं० [सं० शरीरदण्ड] १. शारीरिक दंड। कायक्लेश (को०)।

शरीरदेश—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर का कोई अवयव या अंग [को०]।

शरीरधर्म—संज्ञा पुं० [अ० शरीर+धर्म] चेष्टा। शरीरगत लक्षण। अनुभाव। (अं० सिस्टम्स)। उ०—वह एक वृत्तिचक्र है, जिसके अंतर्गत प्रत्यय, अनुभूति, इच्छा, गति या प्रवृत्ति, शरीरधर्म सबका योग रहता है।—चिंतामणि, भा० २, पृ० ८८।

शरीरधातु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर का घटक एक मुख्य तत्व। २. बुद्ध के शरीर का अवशेष (जैसे दाँत, हड्डी, बाल आदि)

शरीरनिपात—संज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु [को०]।

शरीरपतन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर का धीरे धीरे क्षीण होना। २. मृत्यु। मौत।

शरीरपाक—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर का धीरे धीरे क्षीण होना।

शरीरपात—संज्ञा पुं० [सं०] देह का अंत या नाश। शरीरांत। देहावसान। मृत्यु। मौत।

शरीरप्रभव—संज्ञा पुं० [सं०] पिता। जनक [को०]।

शरीरबंध—संज्ञा पुं० [सं० शरीरबन्ध] शरीर की बनावट शरीर का गठन या ढाँचा [को०]।

शरीरबंधक—संज्ञा पुं० [सं० शरीरबन्धक] ओल या प्रतिभू [को०]।

शरीरबद्ध—वि० [सं०] शरीरधारी [को०]।

शरीरभाज्—वि० [सं०] शरीरी। शरीरधारी। जीवधारी।

शरीरभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शरीर धारण किए हो। शरीरी। २. विष्णु। ३. जीवात्मा।

शरीरभेद—संज्ञा पुं० [सं०] (आत्मा या जीव का) शरीर से भिन्न या अलग होना। मृत्यु [को०]।

शरीरयष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर का आकार। २. पतला या क्षीण शरीर [को०]।

शरीरयात्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जीवननिर्वाह के साधन। वे साधन जिससे जीवन का पोषण हो। उ०—वहाँ वे शरीरयात्रा के स्थूल स्वार्थ से संश्लिष्ट होकर कलुषित नहीं होते।—रस०, पृ० १४८। २. जीवन। जिंदगी।

शरीररक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो राजा आदि के साथ उसके शरीर की रक्षा करने के लिये रहता हो। अंगरक्षक।

शरीररत्न—संज्ञा पुं० [सं०] भव्य एवं आकर्षक शरीर [को०]।

शरीरवान्—संज्ञा पुं० [सं० शरीरवत्] शरीरवाला। देहधारी।

शरीरविज्ञान—संज्ञा पुं० [सं० शरीर+विज्ञान] शरीररचना के सभी अंगों और उपांगों के विवेचन से संबंध रखनेवाला विज्ञान। शरीरशास्त्र। (अं० एनाटमी)। उ०—पशुओं के शरीर विज्ञान को भी वे भली भाँति जानते थे।—पू० म० भा०, पृ० २७१।

शरीरविमोक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] आत्मा का शरीर से अलग होना। शरीरत्याग [को०]

शरीरवृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] वे पदार्थ जो शरीर का सौंदर्य बढ़ाने के लिये आवश्यक हों।

शरीरवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जीवन निर्वाह करने की वृत्ति। जीविका। २. दे० 'शरीरस्थिति'।

शरीरवेग—संज्ञा पुं० [सं० शरीर+वेग] शरीर की प्राकृतिक आवश्यकता या माँग। उ०—'भाव' मन की वेगयुक्त अवस्थाविशेष है वह क्षुत्पिपासा कामवेग आदि शरीरवेगों से भिन्न है।—रस०, पृ० १६४।

शरीरवैकल्य संज्ञा पुं० [सं०] शरीर की विकलता। अस्वस्थता [को०]।

शरीरशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें शरीर के सब अवयवों नसों, नाड़ियों आदि का विवेचन होता है और जिससे यह जाना जाता है कि शरीर का कौन सा अंग कैसा है और क्या काम करता है। शरीरविज्ञान।

शरीरशुश्रूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर की सेवा करना। अपनी देह की सेवा करना। व्यक्तिगत सेवा [को०]।

शरीरशोधन—संज्ञा पुं० [सं०] वह औषध जो कुपित मल, पित्त, तथा कफ को हटाकर उर्द्ध्व अथवा अधोमार्ग से निकाल दे।

शरीरसंपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं० शरीरसम्पत्ति] शरीर की समृद्धि। अच्छा स्वास्थ्य।

विशेष—शरीरसंपत्ति के भीतर शरीर का सौंदर्य, गठन, उसकी महाप्राणता, स्वास्थ्य एवं आकर्षक व्यक्तित्व आदि शरीररचना के सभी उत्तमोत्तम गुण आते हैं।

शरीरसंबंध—संज्ञा पुं० [सं० शरीरसम्बन्ध] १. विवाह का संबंध। २. नरनारी का परस्पर लैंगिक संबंध [को०]।

शरीरसंस्कार—संज्ञा पुं० [सं०] १. गर्भाधान से लेकर अंत्येष्टि तक के मनुष्य के वेदविहित सोलह संस्कार। २. शरीर की शोभा तथा मार्जन। नाना प्रकार के अनुष्ठानों द्वारा शरीर को निर्मल करना [को०]।

शरीरसाद—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर की क्लांति या थकान। शारीरिक थकावट [को०]।

शरीरस्थ—वि० [सं०] १. शरीर में रहनेवाला। २. जीवित। जीता हुआ।

शरीरस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] शरीर संबंधी सिद्धांत या तत्व [को०]।

शरीरस्थिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शरीर का पालन पोषण या वृत्ति। २. भोजन करना। खाना [को०]।

शरीरांत—संज्ञा पुं० [सं० शरीरान्त] १. देह का अंत अथवा नाश। मृत्यु। देहांत। मौत। २. रोम। बाल। केश (को०)।

शरीरांतर—संज्ञा पुं० [सं० शरीरान्तर] १. दूसरा शरीर। दूसरा जन्म लेना। २. शरीर का भीतरी भाग [को०]।

शरीराधीन—वि० [सं०] देह के वश में रहनेवाला। शरीर का वशवर्ती उ०—रेणु वह किस दिगंत में लीन। वेणु ध्वनि सी न शरीराधीन।—अपरा, पृ० २२१।

शरीरार्पण—संज्ञा पुं० [सं०] किसी कार्य के निमित्त अपने शरीर को इस प्रकार लगा देना मानो उसपर अपना कोई स्वत्व ही न हो। उ०—कियो शरीरार्पण परकाजा। संतन सेवन कियो दराजा।—रघुराज (शब्द०)

शरीरावरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. खाल। चमड़ा। २. वर्म। ढाल। ३. शरीर को ढकने की कोई चीज।

शरीरास्थि—संज्ञा पुं० [सं० शरीर+अस्थि] कंकाल। पिंजर।

शरीरी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शरीरिन्] [वि० स्त्री० शरीरिणी] १. वह जो शरीर धारण किए हो। शरीरवाला। शरीरवान्। २. आत्मा। जीव। ३. प्राणी। जीवधारी। ४. मनुष्य (को०)।

शरीरी^{2}—वि० १. शरीरधारी। शरीरयुक्त। २. जीवित। जीता हुआ [को०]।

शरीष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] आम का पेड़।

विशेष—संस्कृत व्याकरण के अनुसार यह शब्द साध्य नहीं है। इसका साधु रूप शरेष्ट है।

शरु^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्रोध। गुस्सा। २. वज्र। ३. बाण। तीर। ४. आयुध। शस्त्र। हथियार। ५. हिंसा। हत्या। मार डालना। ६. वह जो हिंसा करता हो। हिंसक। ७. महाभारत के अनुसार एक गंधर्व का नाम। ८. विष्णु (को०)। ९. बाण चलाने का अभ्यास (को०)।

शरु^{2}—वि० १. बहुत पतला। २. जिसका अगला भाग बहुत ही छोटा या नुकीला हो।

शरेज—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय।

शरेष्ट^1—संज्ञा पुं० [सं०] आम। आम्र।

शरेष्ट(पु)^2—वि० [सं० श्रेष्ठ] दे० 'श्रेष्ठ'।

शरैं‡(पु)—संज्ञा स्त्री० [अ० शरअ्] दे० 'शरअ'। उ०—परदे पैगंबर की सुन्नी, कायम करी साबित शरैं।—तुरसी० श०, पृ०, २६।

शर्क—संज्ञा पुं० [अ० शर्क़] पूर्व। पूरब दिशा।

शर्कर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंकड़। २. बालू का कण। ३. जल में उत्पन्न होनेवाला एक प्रकार का प्राणी। ४. पुराणानुसार एक देश का नाम। ५. इस देश का निवासी। ६. दे० 'शर्करा'। ७. एक तरह का ढोल (को०)।

शर्करक—संज्ञा पुं० [सं०] मीठा नीबू। शरबती नीबू।

शर्करकंद—संज्ञा पुं० [सं० शर्करकन्द] दे० 'शकरकंद'।

शर्करजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] चीनी।

शर्करा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शक्कर। चीनी। खाँड़। २. बालू का कण। ३. पथरी नामक रोग। ४ कंकड़। ५. ठीकरा। ६. कंकरीली मट्टी। कंकड़ से युक्त मिट्टी (को०)। ७. खंड। टुकड़ा (को०)। ८. पुराणानुसार एक देश का नाम जो कूर्म्म चक्र के पुच्छ भाग में है। ९. एक प्रकार का रोग।

विशेष—इसमें त्रिदोष के कारण मांस, शिरा और स्नायु में गाँठ उत्पन्न होती है। गाँठ के फूटने से शहद, घी और चर्बी के समान पीब निकलता है और वायु के बढ़ने से अनेक गाँठें उत्पन्न होती हैं।

शर्कराकर्षी—वि० [सं० शर्कराकर्षिन्] बालुकायुक्त। बालू, कंकड़ आदि को उड़ाने या खींचनेवाला [को०]।

शर्कराक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] चरक के अनुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शर्कराचल—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार चीनी का वह पहाड़ जो दान करने के लिये लगाया जाता है।

शर्कराधेनु—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार चीनी की वह गौ जो दान करने के लिये बनाई जाती है।

शर्कराप्रभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैनों के अनुसार एक नरक का नाम।

शर्करा प्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रमेह जिसमें मूत्र का रंग मिस्री का सा हो जाता है और उसके साथ शरीर की शर्करा निकलती है।

शर्करार्बुद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग। विशेष दे० 'शर्करा'—९।

शर्कराल—वि० [सं०] जो कंकड़ से भरी हुई हो (हवा)। कंकड़ीली (आँधी) [को०]।

शर्करावत्^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग। विशेष दे० 'शर्करा'—९।

शर्करावत्^{2}—वि० कँकरीला। कर्कर से युक्त। बालुकामय [को०]।

शर्करा सप्तमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैशाख शुक्ला सप्तमी।

विशेष—पुराणानुसार उस दिन सुवर्ण का पूजन किया जाता है और उसके आगे घड़े में चीनी भरकर रखी जाती है।

शर्करासव—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मद्य या शराब।

विशेष—यह चीनी से तैयार की जाती है। चरक के अनुसार यह स्वादिष्ट, सुगंधित, पाचक और वायुरोगनाशक है।

शर्करासुरभि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शर्करासव'।

शर्करिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शर्करिकी] १. शर्करायुक्त। शर्कर सहित। २. कँकड़ीला [को०]।

शर्करिल—वि० [सं०] दे० 'शर्करावत्'।

शर्करी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वर्णवृत्त के अंतर्गत चौदह अक्षरों का एक वृत्त। इसके कुल १६, ३८४ भेद होते हैं जिनमें १३ मुख्य हैं। २. नदी। दरिया। ३. मेखला। ४. लिखने की कलम। लेखनी।

शर्करी^{2}—वि० [सं० शर्करिन्] पथरी नामक रोग से आक्रांत। शर्करा रोग से ग्रस्त [को०]।

शर्करीय—वि० [सं०] शर्करा संबंधी। चीनी का।

शर्करोदक—संज्ञा पुं० [सं०] १. चीनी घोला हुआ पानी। शरबत। २. वह शरबत जिसमें इलायची, लौंग, कपूर और गोल मिर्च मिली हो।

विशेष—वैद्यक में इसे बलवर्धक, रुचिकारक, वायु, पित्त तथा रक्तदोष का नाशक और वमन, मूर्छा, दाह और तृष्णा आदि को शमन करनेवाला माना गया है।

शर्की—वि० [अ० शर्क़ी] पूरब का। पूर्वीय [को०]।

शर्कुर—वि० [सं०] तरुण। युवक। जवान [को०]।

शर्कोटि—संज्ञा पुं० [सं०] सर्प। साँप।

शर्जा—संज्ञा पुं० [फा० शर्ज़ह्] चीता। शेर। उ०—कमर के क्यों कहूँ इसके यो शर्जा। कमर को किए सामने शर्जा भी हुर्जा।—दक्खिनी०, पृ० २८०।

शर्ट—संज्ञा स्त्री० [अं०] पहनने का सिला हुआ एक कपड़ा। कमीज।

शर्णंचापिलि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शर्त—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. दो व्यक्तियों या दलों में होनेवाली ऐसी प्रतिज्ञा कि अमुक बात होने या न होने पर हम तुमको इतना धन देंगे, अथवा तुमसे इतना धन लेंगे। बाजी जिसमें हार जीत के अनुसार कुछ लेन देन भी हो। बाजी। दाँव। बदान।

क्रि० प्र०—जीतना।—बदना।—बाँधना।—रहना।—लगना।—हारना।

२. किसी कार्य की सिद्धि के लिये आवश्यक या अपेक्षित होनेवाली बात या कार्य जिसके न होने से उस काम में बाधा उपस्थित हो। जैसे,—मैं चलने के लिये तैयार हूँ; पर शर्त यह है कि आप भी मेरे साथ चलें। (ख) हम इस शर्त पर रुपया देंगे कि आप उसके जिम्मेदार हों। (ग) उन्होंने कई ऐसी शर्तें लगाई हैं कि जिनके कारण काम होना बहुत कठिन है। ३. संधि या समझौता आदि के अंगभूत नियम। जैसे,—भारत और रूस की संधि की शर्तें इस प्रकार है।

क्रि० प्र०—रखना।—लगाना।

मुहा०—शर्त बदकर सोना = देर तक या लंबी नींद सोना। शर्त बदना या बाँधना = बाजी रखना या लगाना। शर्त होना = शर्त या बाजी करना।

शर्तबंद—वि० [अ० शर्त + फा० बंद] १. शर्त से युक्त या बँधा हुआ। २. प्रतिज्ञापत्र के अनुसार निश्चित समय तक अनिवार्य मजदूरी करनेवाला। दे० 'गिरमिटिया'।

शर्तिया¹—क्रि० वि० [अ० शर्तियह्] शर्त बदकर। बहुत ही निश्चय या दृढ़तापूर्वक। जैसे,—मैं शर्तिया कहता हूँ कि आपका काम जरूर हो जायगा।

शर्तिया²—वि० १. बिलकुल ठीक। निश्चित। जैसे,—यह तो इस बीमारी की शर्तिया दवा है। २. अनिवार्य। लाजिम।

शर्ती¹—वि० [अ०] १. शर्तवाला। २. शर्तसंबंधी [को०]।

शर्ती²—क्रि० वि० दे० 'शर्तिया'।

शर्दि—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्राचीन नगर का नाम।

शर्द्धंजह, शर्धंजह—संज्ञा पुं० [सं० शर्द्धञ्जह] १. वह जो वायुकारक हो। २. माष। उरद [को०]।

शर्द्ध, शर्ध—संज्ञा पुं० [सं०] १. तेज। शक्ति। २. सेना। फौज। ३. अपान वायु का त्याग करना। पादना।

शर्द्धन, शर्धन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अधोवायु। पाद। २. पादने की क्रिया। पादना (को०)।

शर्बत—संज्ञा पुं० [अ०] दे० 'शरबत'।

शर्बती—संज्ञा पुं० [अ०] दे० 'शरबती'।

शर्म¹—संज्ञा स्त्री० [फा०] दे० 'शरम'। उ०—मुद्रा संतोष शर्म पति झोली। गुरमुखि जोगी तत्तु विरोली।—प्राण०, पृ० १०९।

मुहा०—शर्म आना, शर्म करना = लाज या लिहाज करना। शर्म की बात = लज्जाकारक कार्य। शर्म से गठरी हो जाना = (१) नई बहू का लाज से सिकुड़कर बैठना। (२) लज्जा से गड़ जाना। शर्म और दया भून खाना = शर्म को जान बूझकर छोड़ देना। उ०—उस छोकरी ने तीखी चितवन करके कहा—ओ मरदूये शर्म और हय भून खाई। आँखें बंद कर ले।—फिसाना०, भा० ३, पृ० १४६।

यौ०—शर्मगाह = (१) गोपनीय या आवृत किए जानेवाले अंग। भग। योनि। शर्मनाक = लज्जाजनक। शर्मिंदा करनेवाला। उ०—प्रत्येक शर्मनाक और जलील स्थिति में वह मनुष्य की निकृष्ट से निकृष्ट भावनाओं का एक कलाकार की पैनी दृष्टि से विश्लेषण करता था।—प्रेम० और गोर्की, पृ० १०। शर्मसार = लज्जित। शर्मिंदा। उ०—हव्वा और होर आदम कहे यूँ पुकार। हमें तो मेरे मुक सूँ है शर्मसार।—दक्खिनी०, पृ० ३३४। शर्मेहजूर, शर्मेहुजूरी = दे० 'शरम हजूरी।'

शर्म²—संज्ञा पुं० [सं०] १. सुख। आनंद। २. वह जो सुखी हो। ३. गृह। घर। ४. आशीर्वाद। दुआ। (को०)। ५. रक्षण। रक्षा। आश्रय (को०)।

शर्मण्य—वि० [सं०] भाला। रक्षक। शरण देनेवाला [को०]।

शर्मद, शर्मप्रद¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शर्मदा] आनंद देनेवाला। सुखदायक। उ०—कृष्णचंद को प्रिय अविकारी। शर्मद धरा धर्म धुरधारी।—कबीर (शब्द०)। (ख) तीर शर्मदा नर्मदा करत भयो नृप वास।—(शब्द०)।

शर्मद, शर्मप्रद²—संज्ञा पुं० विष्णु का एक नाम।

शर्मन्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शर्मा'।

शर्मर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वस्त्र वा पहनावा।

शर्मरा, शर्मरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दारु हल्दी।

शर्मा¹—संज्ञा पुं० [सं० शर्मन्] ब्राह्मणों की उपाधि। जैसे,—ब्रह्मदेव शर्मा।

शर्मा²—वि० आनंदित। प्रसन्न। सुखी।

शर्माऊ†—वि० [फ़ा० शर्म + हिं० आऊ (प्रत्य०)] शर्मानेवाला। शर्मीले स्वभाव का।

शर्माख्य—संज्ञा पुं० [सं०] मसूर।

शर्माना—क्रि० अ०, क्रि० स० [फा० शर्म + हिं० आना] दे० 'शरमाना'।

शर्मालू—वि० [फ़ा० शर्म + हिं० आलू (प्रत्य०)]। शर्मानेवाला। शरमीला।

शर्माशर्मी—क्रि० वि० [फा० शर्म] लज्जावश। लज्जापूर्वक।

शर्मिंदा—वि० [फ़ा० शर्मिंदह्] दे० 'शरमिंदा'।

शर्मिष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दैत्यों के राजा वृषपर्वा की कन्या का नाम

जो शुक्राचार्य की कन्या देवयानी की सखी थी। विशेष दे० 'देवयानी'।

शर्मीला—वि० [फ़ा० शर्म+हिं० ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० शर्मीली] दे० 'शरमीला'।

शर्य^{1}—वि० [सं०] हिंस्र। हिंसक। घातक [को०]।

शर्य^{2}—संज्ञा पुं० १. शत्रु। योद्धा। २. बाण।

शर्यण—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक जनपद का नाम जो कुरुक्षेत्र के अंतर्गत था।

शर्यणावत्—संज्ञा पुं० [सं०] शर्यण नामक जनपद के पास का एक प्राचीन सरोवर जो तीर्थ माना जाता था।

शर्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात्रि। रात। २. उँगली। अंगुली। ३. तीर इषु। बाण।

शर्यात—संज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य। आदमी।

शर्याति—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक राजा का नाम जिसकी कन्या 'सुकन्या' महर्षि च्यवन को ब्याही गई थी। २. भागवत के अनुसार वैवस्वत मनु के एक पुत्र का नाम।

शर्र—संज्ञा पुं० [अ०] १. झगड़ा। कलह। २. दुष्टता। बुराई [को०]।

यौ०—शर्रोफसाद=कलह। झगड़ा।

शर्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। शंकर। महादेव। उ०—यों थल के बिनु कष्ट सों नाचत शर्व हरौ दुख सर्व तुम्हारे।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० १३५। २. विष्णु।

शर्वक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शर्वपत्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पार्वती। २. लक्ष्मी।

शर्वपर्वत—संज्ञा पुं० [सं०] कैलास।

शर्वर—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंधकार। अँधेरा। २. कामदेव। ३. संध्या।

शर्वरी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात। रात्रि। निशा। २. साँझ। संध्या। शाम। ३. हल्दी। दरिद्रा। ४. स्त्री। औरत।

शर्वरी^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शर्वरिन्] बृहस्पति के साठ संवत्सरों में से चौंतीसवाँ संवत्सर। कहते हैं, इस संवत्सर में दुर्भिक्ष का भय होता है।

शर्वरीक—वि० [सं०] नुकसान करनेवाला। हानिकारक।

शर्वरीकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. चंद्रमा (को०)।

शर्वरीदीपक—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शर्वरीनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०]।

शर्वरीपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. शिव। महादेव।

शर्वरीश, शर्वरीश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शर्वला, शर्वली—संज्ञा स्त्री० [सं०] तोमर नामक अस्त्र। लौहदंड [को०]।

शर्वाक्ष संज्ञा पुं० [सं०] रुद्राक्ष। शिवाक्ष।

शर्वाचल—संज्ञा पुं० [सं०] कैलास।

शर्वाणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती।

शर्शरीक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंसक। २. खल। दुष्ट। पाजी। ३. घोड़ा। ४. अग्नि।

शर्शरीक^{2}—वि० दुष्ट [को०]।

शलंकट—संज्ञा पुं० [सं० शलङ्कट] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शलंकु—संज्ञा पुं० [सं० शलङ्कु] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शलंग—संज्ञा पुं० [सं० शलङ्ग] १. लोकपाल। राजा। प्रभु। २. एक प्रकार का नमक।

शलंदा—संज्ञा पुं० [देश०] पाताल गारुड़ी। जल जमुनी। छिरेंटा। छिरइटा।

शल^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कंस के एक मल्ल का नाम। उ०—और मल्ल मारे शल तोशल बहुत गए सब भाज।—सूर (शब्द०)। २. ब्रह्मा। ३. ऊँट। ४. एक प्रकार का वृक्ष। ५. शल्यराज का एक नाम। विशेष दे० 'शल्यराज'। ६. भाला। ७. साही का काँटा। उ०—ठीक, यहाँ पर शल्य छोड़कर शल गया। नाम रहे पर काम बराबर चल गया।—साकेत, पृ० १३७। ८. शृंगी या भृंगी जो शिव के पारिषद् हैं। ९. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ११. वासुकी के वंश के एक नाग का नाम।

शल^{2}—वि० [अ० शल्ल] निश्चेष्ट। सुन्न। जो हिलाया न जा सके। उ०—हाथ लट जाय, शल हथेली हो। उँगलियाँ पोर पोर कट जावें।—चुभते०, पृ० ३९।

शलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मकड़ी। २. ताल। ताड़ वृक्ष। ३. साही का काँटा। ४. पक्षी (को०)।

शलकर—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम।

शलगम—संज्ञा पुं० [फ़ा० शलग़म] दे० 'शलजम'।

शलजम—संज्ञा पुं० [फ़ा०] गाजर की तरह का एक प्रकार का कंद शलगम।

विशेष—यह कंद प्रायः सारे भारत में जाड़े के दिनों में होता है। यह गाजर से कुछ बड़ा और प्रायः गोल होता है और तरकारी, अचार और मुरब्बे आदि बनाने के काम आता है। यूरोप में इससे चीनी भी निकाली जाती है।

शलजमी—वि० [फा० शलजम] १. शलजम जैसा या शलजम से मिलता जुलता। २. शलजम के समान (रंग)।

यौ०—शलजमी आँखें=बड़ी आँखें।

शलभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. टीड़ी। टिड्डी। शरभ। २. एक असुर का नाम। ३. पतंगा। फतिंगा। उ०—किंतु शलभवर! उसे न छेड़ो, सोने दो उसको उस पार। वहीं स्वप्न में पा लेगी वह, अपने प्रियतम का उपहार।—वीणा, पृ० ३३।

विशेष—कविता में यह प्रेमी का प्रतीक माना जाता है।

४. छप्पय के ३१ वें भेद का नाम। इसमें ४० गुरु और ७२ लघु, कुल ११२ वर्ण या १५२ मात्राएँ होती हैं।

शलभता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शलभ का भाव या धर्म।

शलभत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शलभ का भाव या धर्म। शलभता।

शलल—संज्ञा पुं० [सं०] १. साही। २. साही का काँटा।

शललचंचु—संज्ञा पुं० [सं० शललचञ्चु] शल्लकीलोम या साही के काँटे की लेखनी [को०]।

शलाकधूर्त—संज्ञा पुं० [सं०] १, वह जो शलाकाओं आदि की सहायता से पक्षियों को पकड़ता हो। चिड़ीमार। बहेलिया। २. बेईमान जुआड़ी (को०)।

शलाका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लोहे या लकड़ी आदि की लंबी सलाई। सलाख। सीख। २. वह सलाई जिससे घाव की गहराई आदि नापी जाती है। ३. बाण। शर। तीर। ४. अस्थि। हड्डी। ५. मदनवृक्ष। मैनफल। ६. तिनका। तृण। ७. शारिका पक्षी। मैना। ८. सलई। शल्लकी वृक्ष। ९. सुरमा लगाने की सलाई। १०. खेलने का पासा। ११. बच। वचा। १२. रामायण के अनुसार एक प्राचीन नगरी का नाम। १३. नली की हड्डी। १४. मतदान के लिये परचियों की भाँति काम में आनेवाली लकड़ी की सलाइयाँ।—उ०—एक पुरुष सदस्यों को रंग रंग की लकड़ी की सलाकाएँ बाँट देता था और समझा देता था कि प्रत्येक रंग का अर्थ क्या है।—हिंदु० स०, पृ० २५६। १५. साँग। नेजा। भाला (को०)। १६. तीली। जैसे, छत्रशलाका (को०)। १७. तूलिका। कूँचा (को०)। १८. साही नामक जानवर (को०)। १९. अंकुर। अंखुआ (को०)। २०. उँगली। जैसे, शलाकानख (को०)। २१. दाँत साफ करने की कूँची (को०)। २२. शासक। शास्ता (को०)। २३. कील। खूँटी (को०)। २४. पिंजड़े या खिड़की आदि का छड़ (को०)। २५. रेखा खींचने की नोकदार सिलाई (को०)।

शलाका ग्राहापक—संज्ञा पुं० [सं०] मतदान के लिये बँटी हुई शलाकाओं को एकत्रित करनेवाला अधिकारी। उ०—जो अधिकारी शलाकाओं को फिर एकत्रित करते थे उनका नाम शलाका ग्राहापक होता था।—हिंदु० स०, पृ० २१०।

शलाकाधूर्त—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शलाकधूर्त'।

शलाका परीक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] विद्यार्थी की वह परीक्षा जिसमें ग्रंथ में शलाका डालने से जो पृष्ठ सामने आ जाय उसी की परीक्षा ली जाती थी।

शलाकापुरुष—संज्ञा पुं० [सं०] १. बौद्धों जैनों के तिरसठ अवतारी पुरुष। देवपुरुष। जैसे, त्रिषष्ठि शलाकापुरुष चरित्र। उ०—कभी किसी शलाकापुरुष ने ब्राह्मण कुल में जन्म नहीं लिया।—हिंदु० स०, पृ० २७३।

विशेष—इन शलाकापुरुषों में १२ चक्रवर्ती, २४ जिन, ९ वासुदेव, ९ बलदेव और ९ प्रतिवासुदेव माने जाते हैं। इस प्रकार ६३ शलाकापुरुष माने गए हैं।

शलाकायंत्र—संज्ञा पुं० [सं० शलाकायन्त्र] एक नोकदार शल्योपकरण (को०)।

शलाख—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० सलाख] दे० 'सलाख'।

शलाट—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार दो हजार पल का परिमाण। शकट।

शलाटु[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. कच्चा फल। २. बेल। बिल्व। ३. एक प्रकार का कंद (को०)।

शलाटु[२]—वि० जो पका न हो। कच्चा। अपक्व (को०)।

शलातुर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जनपद का नाम जो पाणिनि का निवासस्थान था।

शलाथल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शलाभोलि—संज्ञा पुं० [सं०] ऊँट।

शलालु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सुगंधिद्रव्य।

शली—संज्ञा स्त्री० [सं०] साही नामक जंतु जिसके सारे शरीर पर काँटे होते हैं।

शलीता—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का वस्त्र। दे० 'सलीता'।

शलूका—संज्ञा पुं० [फ़ा०] आधी या पूरी बाँह की एक प्रकार की कुरती जो प्राय: स्त्रियाँ पहना करती हैं।

शल्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. टुकड़ा। खंड। २ छिलका। ३. वृक्ष की छाल। वल्कल। ४. मछली के ऊपर का छिलका।

शल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मछली का छिलका। २. वृक्ष की छाल। ३. छिलका। ४. खंड। टुकड़ा।

शल्कली—संज्ञा पुं० [सं० शल्कलिन्] मछली। मत्स्य। मीन।

शल्की—संज्ञा पुं० [सं० शल्किन्] मत्स्य। मीन (को०)।

शल्प—संज्ञा पुं० [देश०] १. बाढ़। २. बौछार। भरमार। ३. धड़ाका। कड़ाका।

शल्पदा, शल्पपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] मेदा नामक अष्टवर्गीय औषध।

शल्मलि—संज्ञा पुं० [सं०] शाल्मली वृक्ष। सेमल।

शल्मली—संज्ञा स्त्री० [सं०] शाल्मली वृक्ष।

शल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. मद्र देश के एक राजा का नाम।

विशेष—राजा पांडु की दूसरी स्त्री माद्री (जिसके पुत्र नकुल और सहदेव थे) के ये भाई थे और इस संबंध से ये पांडवों के मातुल होते थे। द्रौपदी के स्वयंवर के समय ये भीमसेन के साथ मल्लयुद्ध में हार गए थे। कुरुक्षेत्र के युद्ध में ये पांडवों की ओर से लड़ने के लिये जा रहे थे पर दुर्योधन ने अपनी चातुरी से इन्हें अपनी ओर कर लिया था। फलस्वरूप इन्होंने दुर्योधन का ही पक्ष ग्रहण किया था। युद्ध के १६ वें और १७ वें दिन महावीर कर्ण के ये सारथी हुए थे। कर्ण की मृत्यु के अनंतर १८ वें दिन ये सेनापति बनाए गए थे और युधिष्ठिर द्वारा मारे गए थे।

२. एक प्रकार का बाण। ३. अस्त्रचिकित्सा। चीरफाड़ का इलाज। (अँ०) सर्जरी। उ०—सुश्रुत में शल्यचिकित्सा का चरम उत्कर्ष देखने को मिलता है।—पू० म० भा०, पृ० २६७। ४. छप्पय के ५६ वें भेद का नाम। इसमें १५ गुरु और १२२ लघु, कुल १३७ वर्ण या १५२ मात्राएँ होती हैं। ५. हड्डी। अस्थि। ६. अंजन लगाने की सलाई। शलाका। ७. मैनफल। मदार वृक्ष। ८. सफेद खैर। ९. शिलिंद मछली। १०. लोध। लोध्र वृक्ष। ११. बेल। बिल्व वृक्ष। १२. साही नामक जंतु। उ०—ठीक, यहाँ पर शल्य छोड़कर शाल

गया। नाम रहै पर काम बराबर चल गया। —साकेत, पृ० १३७। १३. साँग नामक अस्त्र। १४. दुर्वाक्य। १५. पाप। १६. जमीन में गड़ो हुई जानवरों आदि की हड्डियाँ जो मकान बनाने के समय निकालकर फेंकी जाती हैं। १७. जैन सिद्धांत के अनुसार वे भ्रमात्मक धारणाएँ जिनसे बचना धर्माचरण के लिये अनिवार्य माना गया है। उ०— व्रत या धर्म के पालन के लिये तीन तीन शल्यों का अभाव आवश्यक है। —हिंदु० स०, पृ० २३२। १८. वे पदार्थ जिनसे शरीर में किसी प्रकार की पीड़ा या रोग आदि उत्पन्न होता है।

विशेष – सुश्रुत के अनुसार ये शल्य दो प्रकार के होते हैं—शरीर और आगंतु। यदि वात, पित्त आदि के दोष से रोएँ, नाखून, शरीर के धातु, अन्न, मल आदि कुपित होकर पीड़ा या रोग उत्पन्न करें तो उसे शारीर शल्य कहते हैं। और इनके अतिरिक्त जो और बाहरी पदार्थ (लोहा, लकड़ी, सींग आदि) शरीर में पीड़ा या रोग उत्पन्न करें, तो उन्हें आगंतु शल्य कहते हैं।

१९. काँटा। खपची। २०. कील। मेख। खूँटी (को०)। २१. घेरा। बाड़ (को०)।

शल्यकंठ—संज्ञा पुं० [सं० शल्यकण्ठ] साही नामक जंतु।

शल्यक—संज्ञा पुं० [सं०] १. साही नामक जंतु। २. मैनफल। मदन वृक्ष। ३. सफेद खैर। ४. लाल खैर। ५. एक प्रकार की मछली। ६. लोध वृक्ष। ७. बेल। विल्व। ८. भाला (को०)। ९. काँटा (को०)। १०. व्याध। बहेलिया (को०)।

शल्यकर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] रामायण के अनुसार एक प्राचीन जनपद का नाम।

शल्यकर्त्ता—संज्ञा पुं० [सं० शल्यकर्तृ] वह जो शस्त्रचिकित्सा करता हो। चीरफाड़ का इलाज करनेवाला।

शल्यकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शल्लकी ? या सं० शल्यक(=साही)+ई (स्त्री० प्रत्य०)] साही नामक जंतु। उ०— रोम रोम बेध्यो तनु वाणन। भयो शल्यकी सरिस दशानन।—रघुराज (शब्द०)।

शल्यक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] चीरफाड़ का इलाज। शस्त्रचिकित्सा।

शल्यचिकित्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शल्यक्रिया'।

शल्यज—वि० [सं०] व्रण या घाव आदि से उत्पन्न।

शल्यज नाडीव्रण—संज्ञा पुं० [सं०] नाड़ी में होनेवाला एक प्रकार का व्रण या घाव।

विशेष—जब किसी घाव में काँटा या कंकड़ आदि पड़कर किसी नाड़ी में पहुँच जाता और वहीं रह जाता है, तब जो व्रण होता है, वह शल्यज नाड़ीव्रण कहलाता है। इसमें घाव में से गरम खून के साथ मवाद निकलता है।

शल्यज मूत्रकृच्छ्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मूत्रकृच्छ्र। विशेष दे० 'मूत्रकृच्छ्र'।

शल्यतंत्र—संज्ञा पुं० [सं० शल्यतन्त्र] सुश्रुत के अनुसार आठ प्रकार के तंत्रों में से एक तंत्र जिसमें चीरफाड़ के यंत्रों, शस्त्रों, क्षारों और अग्निकर्म आदि के प्रयोगों का वर्णन होता है।

शल्यदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मेदा नाम की ओषधि।

शल्यपर्णिका, शल्यपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मेदा नाम की ओषधि।

शल्यपर्व—संज्ञा पुं० [सं० शल्यपर्वन्] महाभारत का नवाँ पर्व [को०]।

शल्यप्रोत—वि० [सं०] जिसके शरीर में बाण घुसा हो।

शल्यलोम—संज्ञा पुं० [सं० शल्यलोमन्] साही नामक जंतु का काँटा।

शल्यविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] चीरफाड़ की चिकित्सा। सर्जरी।

शल्यशालक—संज्ञा स्त्री० [सं०] फोड़ों आदि की चीरफाड़ का काम।

शल्यशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. चिकित्सा शास्त्र का वह अंग जिसमें शरीर में गड़े हुए काँटों आदि के निकालने का विधान रहता है। २. दे० 'शल्यक्रिया'।

शल्यहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो कुश कंटक आदि को काटकर साफ कर दे। २. शल्य चिकित्सक। चीरफाड़ करनेवाला चिकित्सक। (अं०) सर्जन।

शल्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मेदा नाम की ओषधि। २. नागवल्ली नाम की लता। ३. विकंकत वृक्ष। ४. एक प्रकार का नृत्य (को०)।

शल्यारि—संज्ञा पुं० [सं०] शल्य को मारनेवाले युधिष्ठिर।

शल्याहरण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शल्योद्धार'।

शल्यित—वि० [सं०] शल्ययुक्त। विद्ध [को०]।

शल्योद्धरण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शल्योद्धार'।

शल्योद्धार—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर में लगे हुए बाण या काँटे आदि निकालने की क्रिया। २. वास्तुविद्या के अनुसार नया मकान बनवाने के समय जमीन को साफ करना और उसमें की हड्डियाँ आदि निकलवाकर फेंकवाना।

शल्ल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. चमड़ा। २. वृक्ष की छाल। ३. मेंढक।

शल्ल²—वि० [अ०] १. (अंग) जो दुर्बलता या थकावट आदि के कारण बिलकुल शिथिल, सुस्त या सुन्न हो गया हो। २. काहिल। आलसी (को०)।

शल्लक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शोण वृक्ष। सलई। २. साही नामक जंतु। ३. चमड़ा।

शल्लकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. साही नामक जंतु। २. सलई का वृक्ष।

शल्लकीद्रव—संज्ञा पुं० [सं०] शिलारस। सलहक।

शल्लकीरस—संज्ञा पुं० [सं०] शिलारस। सिल्हक।

शल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] नाव। नौका।

शल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. साही नामक जंतु। २. शल्लकी का वृक्ष। सलई।

शल्व(पु)—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शाल्व'। उ०—निराकरन जब भीष्म किय, तब अंबिका उदास। लौट गई अपने भवन, शल्व भूप के पास।—रघुराज (शब्द०)।

शव—संज्ञा पुं० [सं०] १. मृत शरीर। प्राणरहित देह। लाश। मुर्दा।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग केवल मनुष्य के मृत शरीर के लिये होता है।

२. जल। पानी।

शवकर्म—संज्ञा पुं० [सं० शवकर्मन्] मृतक कर्म। दाह आदि मृतक संस्कार।

शवकाम्य—संज्ञा पुं० [सं०] कुक्कुर। कुत्ता।

शवक्रत्—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम।

शवता—संज्ञा स्त्री० [सं०] निष्प्राणता। निर्जीवता। उ०—जिसमें सब कुछ ले लेना हो हत! बची क्या शवता।—बी० श० महा०, पृ० १७३।

शवदहन, शवदाह—संज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य के मृत शरीर को जलाने की क्रिया या भाव।

यौ०—शवदहन स्थान, शवदाह स्थान = मरघट। मसान।

शवधान—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रदेश का नाम जिसे शरधान भी कहते हैं।

शवभस्म—संज्ञा पुं० [सं०] चिता का भस्म। मरघट की राख। उ०—शवभस्म विभूषित भूरि गण।—रघुनाथ (शब्द०)।

शवमंदिर—संज्ञा पुं० [सं०] श्मशान। मरघट।

शवयान—संज्ञा पुं० [सं०] अरथी जिसपर शव ले जाते हैं। टिकठी।

शवर—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शवरी] १. एक पहाड़ी जंगली जाति।

विशेष—इस जाति के लोग मोरपंख से अपने को सजाते हैं। ये लोग अब तक मध्यप्रदेश और हजारीबाग आदि जिलों में रहते और 'सौर' कहलाते हैं।

२. शव। ३. जल।

शवरथ—संज्ञा पुं० [सं०] शवयान। अरथी। टिकठी।

शवरलोध्र—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद लोध।

शवरालय—संज्ञा पुं० [सं०] शवरों का गृह। पक्कण [को०]।

शवरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शवर जाति की श्रमणा नाम की एक तपस्विनी।

विशेष—सीता जी को ढूँढ़ते हुए रामचंद्र जी इस तपसी के आश्रम में पहुँचे थे। इसने राम की अभ्यर्थना की थी और उन्हीं की अनुमति से उनके सामने ही चिता में प्रविष्ट होकर यह स्वर्ग को सिधारी थी।

२. शवर जाति की स्त्री।

शवल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. चीता। चित्रक। २. जल। पानी।

शवल²—वि० [वि० स्त्री० शवली] चितकबरा। चित्तल। चीतल।

शवला—संज्ञा स्त्री० [सं०] चितकबरी गाय।

शवलित—वि० [सं०] १. मिश्रित। मिला हुआ। २. चित्रविचित्र। चित्रकर्बुर। चितकबरा।

शवली¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] चितकबरी गाय।

शवली²—वि० चितकबरी। उ०—अथवा मधुकरों की शवली अवली नवली नलिनी के चारों ओर गूँजती जान पड़ती थी।—श्यामा०, पृ० २५।

शवशय—संज्ञा पुं० [सं०] कमल [को०]।

शवशयनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

शवशयन—संज्ञा पुं० [सं०] श्मशान। मरघट।

शवशिविका—संज्ञा स्त्री० [सं०] अरथी [को०]।

शवस्—संज्ञा पुं० [सं०] शक्ति। बल। ताकत [को०]।

शवसमाधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] शव को मिट्टी में गाड़ना या पानी में डुबो देना।

शवसाधन—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शवसाधना] तंत्र के अनुसार एक प्रकार का साधन।

विशेष—यह तांत्रिक साधन है जो श्मशान में किसी व्यक्ति के शव या मृत शरीर पर बैठकर अथवा उसे सामने रखकर किया जाता है। कहते हैं, इस प्रकार के साधन से साधक को सिद्धि और अनंत पद प्राप्त होता है।

शवसान—संज्ञा पुं० [सं०] १. पथिक। यात्री। २. मार्ग। पथ (को०)। ३. श्मशान। कबरिस्तान (को०)। ४. अग्नि (को०)।

शवाग्नि—संज्ञा स्त्री० [सं०] चिता की आग [को०]।

शवाच्छादन—संज्ञा पुं० [सं०] कफन [को०]।

शवान्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह अन्न जो बिलकुल खराब हो गया हो और किसी काम का न रह गया हो। २. मनुष्य के शव या मृत शरीर का मांस।

शवाश—वि० [सं०] शव का मांस खानेवाला। शवभक्षी [को०]।

शव्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] वह कृत्य या उत्सव जो शव को अंत्येष्टि क्रिया के लिये ले जाने के समय होता है।

शव्य²—वि० शव संबंधी [को०]।

शव्वाल—संज्ञा पुं० [अ०] मुसलमानों का दसवाँ महीना। हिजरी का दसवाँ महीना।

शश¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. खरहा। खरगोश। २. चंद्रमा का लांछन या कलंक। ३. लोध्रवृक्ष। लोध। ४. कामशास्त्र के अनुसार मनुष्य के चार भेदों में से एक भेद।

विशेष—रतिमंजरी के अनुसार जो मनुष्य मृदु वचन बोलता हो, सुशील, कोमलांग, सुंदर केशोंवाला, सत्यवादी और सकलगुण-निधान हो, वह शश जाति का माना जाता है।

५. बाल नामक गंध द्रव्य। गंध रस। ६. मृग। हरिण (को०)।

शश²—वि० [फ़ा०] छह्। षट्।

यौ०—शशखाना = मकान जिसमें छह कोठरियाँ हों। शशदर = (१) चौसर के खेल में एक घर जहाँ गोटी बंद हो जाती है। (२) चकित। शशपंज = संकोच। उधेड़बुन। शशपहलू = षट्कोण। शशपाया = जिसमें छह पाए हों। शशमाहा = छह मास का। शशमाही = षाण्मासिक। छमाही।

शशक—संज्ञा पुं० [सं०] १. खरगोश। खरहा। २. कामशास्त्रानुसार पुरुष का एक भेद। विशेष दे० 'शश' [को०]।

शशगानी—संज्ञा पुं० [फ़ा० शश (= छह् + गानी] चाँदी का एक प्रकार का सिक्का जो फिरोजशाह के राज्य में प्रचलित था। यह लगभग दुअन्नी के बराबर होता था।

शशघातक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शशघाती'।

शशघाती—संज्ञा पुं० [सं० शशघातिन्] बाज या श्येन नामक पक्षी। हरगोला।

शशदर—वि० [फ़ा०] हक्का बक्का। चकित। आश्चर्यपूर्ण। उ०—देख लेगा अगर वह रुख की तजल्ली तेरे, आइना खानए मायूसी में शशदर होगा।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ८५७।

शशधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर। कर्पूर।

यौ०—शशधरमुखी = चंद्रमा की तरह सुंदर मुखवाली। चंद्रमुखी। शशधरमौलि = शिव। शंकर [को०]।

शशपद—संज्ञा पुं० [सं०] खरगोश के पैरों का चिह्न [को०]।

शशप्लुतक—संज्ञा पुं० [सं०] नखक्षत [को०]।

शशबिंदु—संज्ञा पुं० [सं० शशबिन्दु] १. विष्णु। २. चित्ररथ के एक पुत्र का नाम। ३. चंद्रमा (को०)।

शशभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

यौ०—शशभृत्भृत = शिव। चंद्रमौलि।

शशमाही—वि० [फ़ा०] हर छह महीने पर होनेवाला। छमाही। अर्धवार्षिक।

शशमुंड—संज्ञा पुं० [सं० शशमुण्ड] वैद्यक में एक प्रकार का रस।

शशमौलि—संज्ञा पुं० [सं०] शिव, जिनके मौलि पर चंद्रलांछन है।

शशयान—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक तीर्थ का नाम।

शशरज—संज्ञा पुं० [सं० शशरजस्] एक प्रकार की विशेष माप।

शशलक्षण, शशलक्ष्मण—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शशलांछन—संज्ञा पुं० [सं० शशलाञ्छन] १. चंद्रमा। २. कपूर [को०]।

शशविंदु—संज्ञा पुं० [सं० शशविन्दु] दे० 'शशबिंदु'।

शशविषाण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शशशृङ्ग'।

शशशिंबिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शशशिम्बिका] जीवंती। डोडी।

शशशृंग—संज्ञा पुं० [सं० शशशृङ्ग] कोई असंभव और अनहोनी बात। वैसा ही असंभव कार्य जैसा खरगोश को सींग होना होता है। आकाशकुसुम की सी असंभव बात।

शशस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंगा और यमुना के मध्य का प्रदेश। दोआब।

शशांक—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्क] १. चंद्रमा। २. कपूर। ३. हर्षवर्धन का समकालीन गुप्तवंशीय एक प्रतापी राजा जो गौड़ देश का अधिपति था।

शशांकज—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कज] बुध जो चंद्रमा का पुत्र माना जाता है।

शशांकमुकुट—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कमुकुट] शिव। महादेव।

शशांकमूर्ति—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कमूर्ति] चंद्रमा का एक नाम [को०]।

शशांकलेखा—संज्ञा स्त्री० [सं० शशाङ्कलेखा] चंद्रमा की रेखा या कला [को०]।

शशांकशत्रु—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कशत्रु] राहु [को०]।

शशांकशेखर—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कशेखर] महादेव। शिव।

शशांकसुत—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कसुत] बुध ग्रह जो शशांक या चंद्रमा का पुत्र माना जाता है।

शशांकार्ध—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कार्ध] १. शिव। २. अर्ध चंद्र।

शशांकार्धमुख—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कार्धमुख] अर्धचंद्र के आकार का वाण [को०]।

शशांकित—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कित] १. वह जिसमें शश का चिह्न हो। चंद्रमा। २. वह जो शशांक से युक्त हो।

शशांकोपल—संज्ञा पुं० [सं० शशाङ्कोपल] चंद्रकांत मणि।

शशांडुलि, शशांडुली—संज्ञा स्त्री० [सं० शशाण्डुलि, शशाण्डुली] कड़ुवी ककड़ी।

शशाउ—संज्ञा पुं० [सं० शशक] दे० 'शश'।

शशाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाज। श्येन पक्षी। २. भागवत के अनुसार इक्ष्वाकु के एक पुत्र का नाम।

शशादन—संज्ञा पुं० [सं०] बाज नाम का पक्षी।

शशि—संज्ञा पुं० [सं० शशिन्] १. चंद्रमा। इंदु। २. छप्पय के ५४वें भेद का नाम। इसमें १७ गुरु और ११८ लघु, कुल १३५ वर्ण या १५२ मात्राएँ होती हैं। ३. रगण के दूसरे भेद (।।ऽऽ) की संज्ञा। ४. मोती। ५. एक की संख्या। उ०—एहि भांति कीन्हचां युद्ध शिव शशि मास तब हहरयो हिया।—रघुनाथ (शब्द०)।

शशिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन जनपद का नाम। २. इस जनपद में रहनेवाली जाति।

शशिकर—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा की रश्मि या किरण।

शशिकला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चंद्रमा की कला। २. एक प्रकार का वृत्त। इसके प्रत्येक चरण में चार नगण और एक सगण होता है। इसको 'मणिगुण' और 'शरभ' भी कहते हैं।

शशिकांत—संज्ञा पुं० [सं० शशिकान्त] १. चंद्रकांत मणि। २. कुमुद। काईं। बवाला।

शशिकुल—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रवंश। उ०—शशिकुल छत्र शिरोमणि आहीं।—गर्गसंहिता (शब्द०)।

शशिकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

शशिकोटि—संज्ञा पुं० [सं०] द्वितीया के चंद्रमा के दोनों नुकीले कोण या कोटि। चंद्रशृंग [को०]।

शशिक्षय—संज्ञा पुं० [सं०] द्वितीया का नया चाँद [को०]।

शशिखंड—संज्ञा पुं० [सं० शशिखण्ड] १. शिव। महादेव। २. चंद्रमा की कला। ३. एक विद्याधर का नाम।

शशिखंडिक—संज्ञा पुं० [सं० शशिखण्डिक] पुराणानुसार एक देश का नाम।

शशिगुह्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] मुलेठी।

शशिग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रग्रहण [को०]।

शशिज—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा का पुत्र, बुध ग्रह। उ०—प्रथम शुक्र दूजे रवि शशिजहु राहु चतुर्थ गवाई।—रघुराज (शब्द०)।

शशितनय— संज्ञा पुं० [सं०] बुध ग्रह [को०]।

शशितिथि—संज्ञा स्त्री० [सं०] पूर्णिमा। पूर्णमासी।

शशिदेव—संज्ञा पुं० [सं०] राजा रंतिदेव का एक नाम [को०]।

शशिदेव—संज्ञा पुं० [सं०] मृगशिरा नक्षत्र जिसके अधिष्ठाता देवता चंद्रमा माने जाते हैं।

शशिधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. एक प्राचीन नगर का नाम। उ०—शशिधर नगर जाहु प्रियकारी।—शं० दि० (शब्द०)।

शशिध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक असुर का नाम।

शशिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्रमा की सोलह कलाओं में से एक का नाम [को०]।

शशिपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] परवल। पटोल।

शशिपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बुध ग्रह जो चंद्रमा का पुत्र माना जाता है।

शशिपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] कमल। पद्म।

शशिपोषक—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा का पोषण करनेवाला, शुक्ल पक्ष।

शशिप्रभ--संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसकी प्रभा चंद्रमा के समान हो। २. कुमुद। कोईं। ३. मुक्ता। मोती।

शशिप्रभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योत्सना। चाँदनी।

शशिप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुमुद। कोईं। २. मुक्ता। मोती।

शशिप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] सत्ताइसों नक्षत्र जो चंद्रमा की पत्नियाँ माने जाते हैं।

शशिभागा—संज्ञा स्त्री० [सं०] राजा मुचकुंद की कन्या का नाम। उ०—सुनत कहेउ पति ते शशिभागा।—रघुनाथ (शब्द०)।

शशिमाल—संज्ञा पुं० [सं०] मस्तक पर चंद्रमा धारण करनेवाले, शिव। महादेव। उ०—जय सज्जन रिपु काल, जयति पाल शशिमाल अज। रघुराज (शब्द०)।

शशिभूषण—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

शशिभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। महादेव।

शशिमंडल—संज्ञा पुं० [सं० शशिमण्डल] चंद्रमा का घेरा या मंडल। उ०—सब नक्षत्र को राजा दीन्हों शशिमंडल में छाप।—सूर (शब्द०)।

शशिमणि—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रकांत मणि।

शशिमुख—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शशिमुखी] (वह व्यक्ति) जिसका मुख चंद्रमा के सदृश सुंदर हो। अति सुंदर, उ०—(क) राग सुनि भक्तन को भयो, अनुराग वश शशिमुख लाल जू को जाइके सुनाइये।—नाभादास (शब्द०)। (ख) शशिमुख पर घूँघट डाले।

शशिमौलि—संज्ञा सं० [सं०] शिव। महादेव।

शशिरस—संज्ञा पुं० [सं०] अमृत।

शशिरेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्रमा की एक कला।

शशिलेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चंद्रमा की कला। २. बकुची। सोमराजी। ३. गिलोय। गुरुच।

शशिवदना^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में एक नगण (।।।) और एक यगण (।SS) होता है। इसे चौवंसा, चंडरसा और पादांकुलक भी कहते है। उ०—पिक द्विज देखे। कुपित विशेषे। नयन निराते। बचन निताते।—गुमान (शब्द०)।

शशिवदना^{2}—वि० स्त्री० चंद्रमा के समान सुंदर मुखवाली। शशिमुखी।

शशिवाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुनर्नवा। गदहपूरना।

शशिशाला (पु)—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शीशा + सं० शाला (=आलय)] वह घर जो बहुत से शीशों का बना हुआ हो या जिसमें बहुत से शीशे लगे हुए हों। शीशमहल। उ०—(क) अति उतंग सुंदर शशिशाला सात मरातिब वोर।—रघुराज (शब्द०)। (ख) पूरित सस्य प्रमोद मही सब शशि भूपति शशिशाला।—रघुराज (शब्द०)। (ग) शशिशाला अंतःपुरशाला शाला सभा सदन के।—रघुराज (शब्द०)।

शशिशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। उ०—(क) शिला एक बिच लसत चिह्न तहँ पद शशिशेखर।—लक्ष्मण (शब्द०)। (ख) अंबर में हुए दिगंबर अर्चित शशिशेखर।—अपरा, पृ० ८०। २. एक बुद्ध का नाम।

शशिशोषक—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा को क्षीण करनेवाला, कृष्ण पक्ष।

शशिसुत—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा का पुत्र, बुध ग्रह।

शशिहासिनी--वि० स्त्री० [सं० शशि + हासिनी] चंद्रमा की तरह हँसनेवाली या हासयुक्त (स्त्री)। उ०—मेरा मानस तो शशिहासिनि तेरी क्रीड़ा का स्थल है।—वीणा, पृ० ८।

शशिहीरा (पु)—संज्ञा पुं० [सं० शशि + हिं० हीरा] चद्रंकात मणि। उ०—शशिहीरा की एक बात। कलीन कील तब लजानौं गात।—रत्नपरीक्षा (शब्द०)।

शशी—संज्ञा पुं० [सं० शशिन्] चंद्रमा। उ०—सहजी दसवें दार की कथा सुनीजै संत। तहँ प्रगास अति घना तहँ शशी अर सुर अनंत।—प्राण०, पृ० १८।

शशीअर (पु)†—संज्ञा पुं० [सं० शशधर] चंद्रमा।

शशीकर—संज्ञा पुं० [सं० शशिकर] चंद्रमा की किरण।

शशीश—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। महादेव। २. कार्तिकेय।

शश्वत्^{1}—अव्य० [सं०] १. सर्वदा। हमेशा। अनादि काल से। २. पुनः पुनः। बार बार [को०]।

शश्वत्^{2}— वि० [सं० शश्वत्] दे० 'शाश्वत'।

शष्कुल—संज्ञा पुं० [सं०] करंज।

शष्कुलि, शष्कुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पूरी, पक्वान्न आदि। २. कान का छेद। ३. सौरी मछली। ४. माँड़ (को०)। ५. करंज (को०)। ६. कर्णरोग। कान का रोग (को०)।

शष्प—संज्ञा स्त्री० [सं०] १, नई घास। नीली दूब। ३. बौद्धिक चेतना न रहना। प्रतिभाक्षय (को०)। ४. पशम। रोयाँ (बोलचाल)।
यौ०—शुष्पबृसी = कुश की चटोई। शष्पभुक्, शष्पभोजन = घास खानेवाला। पशु।

शसन—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ के लिये पशुओं की हत्या करना। २. वह स्थान जहाँ पशुओं का बलिदान होता हो। ३. वध। हिंसा। हत्या (को०)।

शसा(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शशक] खरगोश। खरहा।

शसि(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शशि] दे० 'शशि'।

शसी(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शशि] दे० 'शशि'।

शस्कुली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शष्कुली' (को०)।

शस्त^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर। बदन। जिस्म। २. कल्याण। मंगल। भलाई। ३. अंगुलित्राण (को०)। ४. उत्कृष्टता। प्रशस्तता। उत्तमता (को०)। ५. वधिक। हत्यारा (को०)।

शस्त^{2}—वि० १. जिसकी प्रशंसा की गई हो। २. अच्छा। उत्तम। श्रेष्ठ। ३. प्रशस्त। ४. जो मार डाला गया हो। निहत। ५. घायल। जख्मी। चुटैल (को०)। ६. कल्याणयुक्त। मगलयुक्त। ७. बार बार कहा गया (को०)।

शस्त^{3}—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. वह हड्डी या बालों का छल्ला जो तीर चलाने के समय अँगूठे मे पहना जाता है। अँगुलित्राण। २. वह जिसपर तीर या गोली आदि चलाई जाती है। लक्ष्य। निशाना।

मुहा०—शस्त बाँधना या लगाना = निशाना बेधने के लिये सीध या ताक लगाना।

३. जमीन की पैमाइश करनेवालों की दूरबीन के आकार का वह यंत्र जिसको सहायता से जमीन की सीध देखी जाती है। ४. मछली पकड़ने का काँटा।

शस्तक—संज्ञा पुं० [सं०] हाथ में पहनने का चमड़े का दस्ताना। अंगुलित्राण।

शस्तर(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्र] शस्त्र। हथियार। उ०—दरिया शस्तर बाँधकर, बहुत कहावैं सूर।—दरिया० बानी, पृ० ११।

शस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्तुति। स्तोत्र। २. प्रशंसा। तारीफ। ३. अंगुलित्राण (को०)।

शस्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हथियार। आयुध। लोहा। २. उपकरण। औजार। ३. इस्पात। ४. स्तोत्र। ५. बार बार कथन। पाठ [को०]।

शस्त्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. लोहा। लौह। २. इस्पात। चित्रायस। पिंडायस। सारलोह (को०)। ३. औजार। शस्त्र (को०)।

शस्त्रकर्म—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्रकर्म्मन्] घाव या फोड़े में नश्तर लगाना। फोड़ों आदि की चीर फाड़ का काम।

शस्त्रकार—संज्ञा पुं० [सं०] हथियार बनानेवाला। शस्त्रों का निर्माण करनेवाला कारीगर [को०]।

शस्त्रकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का केतु जो पूर्व में उदय होता है। कहते हैं, इसके उदय होने पर महामारी फैलती है।

शस्त्रकोप—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध। लड़ाई।

शस्त्रकोश—संज्ञा पुं० [सं०] म्यान [को०]।

शस्त्रकोशतरु—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ा मैनफल।

शस्त्रकोष—संज्ञा पुं० [सं०] हथियार रखने का खाना। म्यान [को०]।

शस्त्रक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] फोड़ों आदि की चीरफाड़। नशतर लगाने की क्रिया।

शस्त्रक्षार—संज्ञा पुं० [पुं०] सोहागा [को०]।

शस्त्रगृह—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ अनेक प्रकार के शस्त्र आदि रहते हों। शस्त्रशाला। हथियार घर। सिलहखाना।

शस्त्रग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] युद्ध। लड़ाई [को०]।

शस्त्रग्राही—वि० [सं० शस्त्रग्राहिन्] हथियार धारण करनेवाला। शस्त्रपाणि [को०]।

शस्त्रचिकित्सा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शस्त्र द्वारा उपचार करना।

शस्त्रचूर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] मंडूर।

शस्त्रजीवी—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्रजीविन्] योद्धा। सैनिक। सिपाही।

शस्त्रत्याग—संज्ञा पुं० [सं०] आयुधों का परित्याग। हथियार डालना [को०]।

शस्त्रधर—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शस्त्रधारी' [को०]।

शस्त्रधारी^{1}—वि० [सं० शस्त्रधारिन्] [स्त्री० शस्त्रधारिणी] शस्त्र धारण करनेवाला। हथियारबंद।

शस्त्रधारी^{2}—संज्ञा पुं० १. योद्धा। सिपाही। सैनिक। २. एक प्रकार का जंतु जिसे सिलहपोश भी कहते हैं। ३. एक प्राचीन देश का नाम।

शस्त्रनिपातन—संज्ञा पुं० [सं०] शल्यक्रिया। चीरफाड़ [को०]।

शस्त्रन्यास—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रत्याग। हथियार डाल देना [को०]।

शस्त्रपाणि^{1}—वि० [सं०] हथियारबंद [को०]।

शस्त्रपाणि^{2}—संज्ञा पुं० योद्धा। सिपाही।

शस्त्रपूत—वि० [सं०] शस्त्रों द्वारा पवित्रीकृत। युद्ध क्षेत्र में मारे जाने से मुक्त [को०]।

शस्त्रप्रहार—संज्ञा पुं० [सं०] हथियार की चोट [को०]।

शस्त्रबल—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्र, सेना आदि की शक्ति। सैन्यबल। उ०—अगर हम आपको स्वेच्छा से यह करोड़ों रुपया न दें तो आप हमसे शस्त्रवल के जरिये छीन सकते हैं।—अखबार।

शस्त्रभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शस्त्र धारण करता हो। शस्त्रधारी।

शस्त्रमार्ज—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो हथियार की सफाई करता हो। सिकलीगर [को०]।

शस्त्रवार्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन देश का नाम।

शस्त्रवार्त्त—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रजीवी। दे० 'शस्त्रवृत्ति' [को०]।

शस्त्रविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हथियार चलाने की विद्या। २. यजुर्वेद का उपवेद्र, धनुर्वेद, जिसमें सब प्रकार के अस्त्र चलाने की विधियों और लड़ाई के संपूर्ण भेदों का वर्णन दिया गया है।

शस्त्रविधान—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्र+विधान] सुरक्षा के लिये शरीर के किसी अंग का शस्त्र जैसा होना। प्रकृतिदत्त आंगिक शस्त्रयुक्तता या शस्त्र जैसी स्थिति। उ०—जिन क्षुद्र से क्षुद्र जीवों के शरीर में बचाव के लिये शस्त्रविधान होता है वे बाधा पहुँचने पर आपसे आप संस्कारवश जिधर से बाधा आती हुई जान पड़ती है उस ओर झपट पड़ते हैं।—रस०, पृ० १६२।

शस्त्रवृत्ति—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शस्त्र आदि चलाकर अपना निर्वाह करता हो। योद्धा। सैनिक। सिपाही।

शस्त्रशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ बहुत से शस्त्र आदि रखे हों। शस्त्रगृह। शस्त्रागार। सिलहखाना।

शस्त्रशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह शास्त्र जिसमें हथियार चलाने आदि का निरूपण हो। २. धनुर्वेद।

शस्त्रहत—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी हत्या शस्त्र द्वारा हुई हो।

शस्त्रहत चतुर्दशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गौण आश्विन कृष्ण चतुर्दशी और गौण कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी।

विशेष—इन दोनों चतुर्दशियों को उन लोगों का श्राद्ध किया जाता है, जिनकी हत्या शस्त्रों द्वारा हुई रहती है।

शस्त्रहस्त—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शस्त्रधारी'।

शस्त्रांगा—संज्ञा स्त्री० [सं० शस्त्राङ्गा] खट्टी लोनी या अमलोनी जिसका साग होता है। चांगेरी।

शस्त्राख्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. बृहत्संहिता के अनुसार एक प्रकार का केतु। २. लौह। लोहा (को०)।

शस्त्रागार—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रों के रखने का स्थान। शस्त्रशाला। शस्त्रालय। सिलहखाना।

शस्त्राजीव—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रजीवी। योद्धा [को०]।

शस्त्राभ्यास—संज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रास्त्र चलाने का अभ्यास। सैनिक शिक्षा में निपुणता [को०]।

शस्त्रायस—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह लोहा जिससे शस्त्र बनाए जाते हैं। इस्पात। फौलाद। २. लोहा (को०)।

शस्त्रास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] हाथ में रहनेवाले (शस्त्र) और फेंककर मारे जानेवाले (अस्त्र) हथियार।

शस्त्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] छुरिका। कृपाणी। असिपुत्रिका [को०]।

शस्त्री^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्रिन्] १. वह जो शस्त्र आदि चलाना जानता हो। २. वह जिसके पास शस्त्र हों। शस्त्रसज्ज व्यक्ति।

शस्त्री^{२}—संज्ञा स्त्री० [सं०] छुरी। चाकू।

शस्त्रीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] सैनिकों को विविध शस्त्रास्त्रों से सज्जित करना। युद्ध वा शांति के नाम पर सेना और युद्ध सामग्री की प्रवृद्धि। उ०—आज के शस्त्रीकरण में वे भी धीमे धीमे लोप हो रही हैं।—अखबार।

शस्त्रोपजीवी—संज्ञा पुं० [सं० शस्त्रोपजीविन्] दे० 'शस्त्रजीवी' [को०]।

शस्प—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शष्प' [को०]।

शस्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. नई घास। कोमल तृण। २. वृक्षों का फल। ३. खेती। फसल। ४. प्रतिभा की हानि या नाश। ५. धान्य। अन्न। ६. सद्गुण।

शस्य^{२}—वि० १. उत्तम। श्रेष्ठ। अच्छा। २. प्रशंसा के योग्य। तारीफ के लायक। ३. काटकर गिराने योग्य (को०)।

शस्यक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का रत्न। २. असि। तलवार (को०)।

शस्यक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] अनाज का खेत [को०]।

शस्यघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चोरहुली। चोर पुष्पी।

शस्यध्वंसी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शस्यध्वंसिन्] तून का पेड़। तूर्णवृक्ष।

शस्यध्वंसी^{२}—वि० जिससे शस्य का नाश हो।

शस्यपाल—संज्ञा पुं० [सं०] खेत का रखवाला [को०]।

शस्यभक्षक—वि० [सं०] अनाज या खेत खानेवाला [को०]।

शस्यमंजरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शस्यमञ्जरी] १. गेहूँ, जौ आदि अनाज की बाली। २. फल का वह अंश जिससे वे डाल से लगे रहते हैं। वृंत। फल। कांड [को०]।

शस्यमारी—संज्ञा पुं० [शस्यमारिन्] एक प्रकार का बड़ा मूषक या चूहा [को०]।

शस्यमाली—वि० [सं० शस्यमालिन्] फसल से हरा भरा। लहलाता हुआ [को०]।

शस्यरक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] खेती का रखवाला। शस्यपाल [को०]।

शस्यवेद—संज्ञा पुं० [सं०] कृषि संबंधी ज्ञान। कृषि शास्त्र [को०]।

शस्यशाली—वि० [सं० शस्यशलिन्] अन्न से युक्त। धान्य से परिपूर्ण [को०]।

शस्यशूक—संज्ञा पुं० [सं०] धान, यव की बाली का नुकीला अगला भाग [को०]।

शस्यसंपन्न—वि० [सं० शस्यसम्पन्न] दे० 'शस्यशाली' [को०]।

शस्यसंपद्—संज्ञा स्त्री० [सं० शस्यसम्पद्] शस्य वा अन्न रूपी संपत्ति। धान्य की अधिकता [को०]।

शस्यसंवर—संज्ञा पुं० [सं० शस्यसम्वर] १. शालवृक्ष। २. अश्वकर्ण वृक्ष।

शस्यहंता^{१}—वि० [सं० शस्यहन्तृ] फसल या खेती को नष्ट करनेवाला [को०]।

शस्यहंता^{२}—संज्ञा पुं० एक दैत्य का नाम [को०]।

शस्यहा—वि०, संज्ञा पुं० [सं० शस्यहन्] दे० 'शस्यहंता'।

शस्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेद की ऋचा [को०]।

शस्यागार—संज्ञा पुं० [सं०] खलिहान [को०]।

शस्यारु—संज्ञा पुं० [सं०] छोटी शमी।

शहंशा—संज्ञा पुं० [सं०] राजाधिराज। शाहंशाह।

शहंशाह—संज्ञा पुं० [फ़ा०] बादशाहों का बादशाह। सम्राट्। महाराजाधिराज। शाहंशाह।

शहंशाही^{१}—वि० [फ़ा०] शाहों का सा। शाही। राजसी।

शहंशाही^{2}—संज्ञा स्त्री० १. शाहंशाह का भाव या धर्म। २. शाहंशाह का पद। ३. लेने देने में खरापन। (बाजारू)।

क्रि० प्र०—दिखलाना।— रखना।

शह^1—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाह का संक्षिप्त रूप] १. बहुत बड़ा राजा। बादशाह। २. वर। दूल्हा।

यौ०—शहबाला।

शह^2—वि० बढ़ा चढ़ा। श्रेष्ठतर।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग केवल यौगिक शब्द बनाने के समय उसके आरंभ में होता है। जैसे,—शहजोर, शहबाज, शहसवार।

शह^3—संज्ञा स्त्री० १. शतरंज के खेल में कोई मुहरा किसी ऐसे स्थान पर रखना जहाँ से विपक्षी बादशाह उसकी मार में हो। किश्त। उ०—राजा पील देइ शह माँगा। शह दै चाहि मरे रथ खागा।—जायसी (शब्द०)।

क्रि० प्र०—खाना।—देना।—बचाना।—लगाना।

२. गुप्त रूप से किसी के भड़काने या उभारने की क्रिया या भाव। बढ़ावा। हुशकारी। जैसे,—ये तुम्हारी शह पाकर ही तो इतना उछलते हैं।

क्रि० प्र०—देना = बढ़ावा देना। उभारना। उ०—मिर्जा साहब ने मुहम्मद अस्करी को अब मैदान खाली पाकर और भी शह दी और चंग पर चढाया।—सैर०, भा० १, पृ० २३।—पाना।—मिलना।

३. गुड्डी, पतंग या कनकौवे आदि को धीरे धीरे, डोर ढीली करते हुए, आगे बढ़ाने की क्रिया या भाव।

क्रि० प्र०—देना।

शहकार—संज्ञा पुं० [फ़ा०] किसी कलाकार की सर्वोत्कृष्ट कृति [को०]।

शहकारा—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] बदचलन औरत।

शहखर्च—वि० [फा०] बहुत अधिक व्यय करनेवाला। शाह की तरह खर्च करनेवाला [को०]।

शहचाल—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शह + हिं० चाल] शतरंज में बादशाह की वह चाल जो और मोहरों के मारे जाने पर चली जाती है।

शहजादगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शहजादगी] शहजादा होने का भाव। राजकुमारपन [को०]।

शहजादा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शहजादह्] [स्त्री० शहजादी] १. राजपुत्र। राजकुमार। २. राज्य का उत्तराधिकारी। युवराज।

शहजादी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शहज़ादी] दे० 'शाहजादी'। उ०—आज न बस में, विह्वल रस में, कुछ ऐसा बेकाबू मन, क्या जादू कर गया नया किस शहजादी का भोलापन।—ठंडा०, पृ० २५।

शहजोर—वि० [फ़ा० शहज़ोर] बली। बलवान। ताकतवर।

शहजोरी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शहज़ोरी] बल। ताकत। जबरदस्ती।

शहत—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'शहद'।

शहतरा—संज्ञा पुं० [फ़ा०] पितपापड़ा। शाहतरा [को०]।

शहतीर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] लकड़ी का चीरा हुआ बहुत बड़ा और लंबा लट्ठा जो प्रायः इमारत के काम में आता है।

शहतूत—संज्ञा पुं० [फ़ा०] तूत नाम का पेड़ और उसका फल। विशेष दे० 'तूत'।

शहद—संज्ञा पुं० [अ०] शीरे की तरह का एक बहुत प्रसिद्ध मीठा, गाढ़ा, तरल पदार्थ जो कई प्रकार के कीड़े और विशेषतः मधुमक्खियाँ अनेक प्रकार के फूलों के मकरंद से संग्रह करके अपने छत्तों में रखती हैं। मधु।

विशेष—शहद अनेक रंग के होते हैं। यह जब अपने शुद्ध रूप में रहता है, तब इसका रंग सफेदी लिए कुछ लाल या पीला होता है। यह पानी में सहज में घुल जाता है। यह बहुत बलवर्धक माना जाता है और प्रायः औषधों के साथ, दूध में मिलाकर अथवा यों ही खाया जाता है। इसमें फल आदि भी रक्षित रखे जाते हैं; अथवा उनका मुरब्बा डाला जाता है। योरप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि अनेक देशों में इसका जलपान के साथ पर्याप्त प्रयोग होता है। कभी कभी ऐसा शहद भी मिलता है जो मादक या विष होता है। वैद्यक में यह शीतवीर्य, लघु, रुक्ष, धारक, आँखों के लिये हतकारी, अग्निदीपक, स्वास्थ्यवर्धक, वर्णप्रसादक, चित्त को प्रसन्न करनेवाला, मेधा और वीर्य बढ़ानेवाला, रुचिकारक और कोढ़, बवासीर, खाँसी, कफ, प्रमेह, प्यास, कै, हिचकी, अतीसार, मलरोध और दाह को दूर करनेवाला माना गया है।

मुहा०—शहद लगाकर चाटना = किसी निरर्थक पदार्थ को यों ही लिए रहना और उसका कुछ भी उपयोग न कर सकना। (व्यंग्य)। जैसे—उसका दिवाला हो गया, अब आप अपना तमस्सुक शहद लगाकर चाटिए। शहद लगाकर अलग होना = उपद्रव का सूत्रपात करके अलग होना। आग लगाकर दूर होना।

यौ०—शहद की छुरी = जो जबान का मीठा पर दिल का बुरा हो। शहद की मक्खी = (१) मधुमक्षिका। (२) वह जो लोभ के कारण पीछे लगा रहे।

शहनगी—संज्ञा पुं० [अ० शहनह् + गी] १. शस्त्ररक्षक का कार्य। २. वह धन जो चौकीदार को देने के लिये असामियों से वसूल किया जाता है। चौकीदारी।

शहना—संज्ञा पुं० [अ० शहनह्] १. खेत की चौकसी करनेवाला। शस्यरक्षक। २. वह व्यक्ति जो जमींदार की ओर से असामियों को बिना पोत दिए, खेत की उपज उठाने से रोकने और उसकी रक्षा के लिये नियुक्त किया जाता है। ३. कोतवाल। नगररक्षक।

शहनाई—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] बाँसुरी या अलगोजे के आकार का, पर उससे कुछ बड़ा, मुँह से फूंककर बजाया जानेवाला एक प्रकार का बाजा जो प्रायः रोशनचौकी के साथ बजाया जाता है। नफीरी। २. दे० 'रोशनचौकी।

शहनाज—वि० [फ़ा० शहनाज़] दुलहन। नवविवाहिता।

शहनामाⓅ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहनामह्] दे० 'शाहनामा'।

शहपर—संज्ञा पुं° [फ़ा०] पक्षी का डैना जिसमें पंख या पर होते हैं [को०]।

मुहा०—शहपर झाड़ना = कमजोर और खराब पर गिराने के लिये पक्षियों का अपने डैनों को हिलाना।

शहबाज—संज्ञा पुं° [फ़ा० शहबाज़] एक प्रकार का शिकारी बाज। बड़ा बाज। उ०—किस पर छोड़े निगाह का शहबाज, क्या करे है शिकार को बातें।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २४। २. वीर। बहादुर। योद्धा।

शहबाजी—संज्ञा स्त्री° [फ़ा० शाहबाज़ी] वीरता। बहादुरी।

शहबाला—संज्ञा पुं° [फ़ा०] वह छोटा बालक जो विवाह के समय दूल्हे के साथ पालकी पर अथवा उसके पीछे घोड़े पर बैठकर जाता है। यह प्रायः वर का छोटा भाई या उसका कोई निकट संबंधी हुआ करता है।

शहबुलबुल—संज्ञा स्त्री° [फ़ा०] एक प्रकार की बुलबुल।

विशेष—इसका सारा शरीर लाल होता है, केवल कंठ काला होता है, और सिर पर सुनहले रंग की चोटी होती है।

शहमात—संज्ञा स्त्री° [फ़ा०] १. शतरंज के खेल में एक प्रकार की मात।

विशेष—इसमें बादशाह को केवल शह या किश्त देकर इस प्रकार मात किया जाता है कि बादशाह के चलने के लिये और कोई घर ही नहीं रह जाता। उ०—राजा चहे बुर्द भा, शाह चहै शहमात।—जायसी। २. निरुत्तर या चुप कर देनेवाली बात।

शहर—संज्ञा पुं° [फ़ा० शहर, शह्र] मनुष्यों की वह बड़ी बस्ती जो कस्बे से बहुत बड़ी हो, जहाँ हर पेशे के लोग रहते हों और जिसमें अधिकतर पक्के मकान हों। उ०—रघुराज गरीब नवाज दोऊ अवलोकन काज चले शहरैं।—रघुराज (शब्द०)।

मुहा०—शहर की दाई = सबके घर का हाल चाल जानने या रखनेवाली स्त्री।

शहरग—सं० पुं° [फ़ा० शाहरग का संक्षिप्त रूप] शरीर की सबसे बड़ी रग या नाड़ी जो हृदय में मिलता है। सुषुम्ना। सुखमना। उ०—क्या भटकता फिर रहा तू है तलाश यार में। रास्ता शहरग में है दिलवर पै जाने के लिये।—तुरसी० श०, पृ० ५।

यौ०—शहरखबरी = घर घर की या पूरे नगर का हाल चाल रखनेवाला। शहरगश्त, शहरगिर्द = (१) पतरौल। (२) शहर में घूमनेवाला। शहरदार = नगर का निवासी। शहरपनाह। शहरबंद। शहरबदर = दे० 'शहर बदल'। शहर ब शहर = (१) एक से दूसरे नगर तक। (२) स्थान स्थान में। जगह जगह। शहरबाश = शहरी। नागरिक। शहरयार। शहरयारी। शहरशमला = जहाँ न्याय की जगह अन्याय होता हो। अँधेर नगरी।

शहरपनाह—संज्ञा स्त्री° [फ़ा०] नगर के चारों ओर बनी हुई पक्की दीवार। वह दीवार जो किसी नगर के चारों ओर रक्षा के लिये बनाई जाय। शहर की चारदीवारी। प्राचीर। नगरकोटा। उ०—गमनत बरात सुहात ऐहि विधि निकट शहरपनाह के।—रघुराज (शब्द०)।

शहरबंद—संज्ञा पुं° [फ़ा०] १. जेल। कारा। २. दुर्ग। कोट। किला। ३. वह व्यक्ति जिसे राज्य की ओर से शहर से बाहर जाने की आज्ञा न हो। ४. किसी शुभ अवसर पर होनेवाली शहर की सजावट [को०]।

शहरबदल—वि° [फ़ा०] जिसे शहर से निकाले जाने का दंड मिला हो। निर्वासित।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

शहरयार—संज्ञा पुं° [फ़ा०] नृपति। बादशाह। शासक। उ०—तो फिर उसका क्या पूछना है ऐ यार। जो दोनों जहाँ का हुआ शहरयार।—दक्खिनी०, पृ० २३२।

शहरयारी—संज्ञा स्त्री° [फ़ा०] बादशाहत। शहंशाही। शाही दबदबा [को०]।

शहराती—वि° [फ़ा० शहर + हिं० आती (प्रत्य०)] नागरिक। शहर का निवासी। शहरी। उ०—आज हम शहरातियों को, पालतू मालंच पर सँवरी जुही के फूल से।—हरी घास०, पृ० ५८।

शहरी—वि° [फ़ा०] १. शहर से संबंध रखनेवाला। शहर का। २. शहर का रहनेवाला। नगर का निवासी। नागरिक। ३. सभ्य शिष्ट [को०]।

शहवत—संज्ञा स्त्री° [अ०] १. कामातुरता। काम का उद्रेक। स्त्रीप्रसंग की प्रबल आकांक्षा। उ०—ना जोरू ना मर्द है ना शहवत ना साख। ना माय ना बाप है ना बेटा ना आख।—दक्खिनी०, पृ० ३८४।

क्रि० प्र०—उठना।—होना।

२. भोग विलास। विषय। मैथुन।

यौ०—शहवतपरस्त = कामुक। भोगी। विषयी। शहवतपरस्ती = कामुकता। ऐयाशी।

शहवात—संज्ञा स्त्री° [अ० शहवत का बहुवचन] इच्छाएँ। कामवासनाएँ। उ०—यह कहने का ही है सब आदमी जाद। किया शहवात ने अक्ल उनकी बरबाद।—कबीर म०, पृ० २०८।

शहसवार—संज्ञा पुं° [सं०] वह जो घोड़े पर अच्छी तरह सवारी कर सकता हो। अच्छा सवार। सवारी में चतुर। उ०—यह अच्छे अच्छे शहसवारों को मात करती है।—फिसाना०, भा० ३, पृ० २।

शहादत—संज्ञा स्त्री° [अ०] १. गवाही। साक्ष्य।

क्रि० प्र०—गुजरना।—देना।—मिलना।—लेना।

२. सबूत। प्रमाण। ३. धर्म या देश के लिये लड़ाई आदि में मारा जाना। शहीद होना (मुसल०)।

यौ०—शहादतकदा, शहादतगाह = शहीद होने का स्थान। शहादतनामा = (१) वह ग्रंथ जिसमें धर्म के लिये शहीद होने का वर्णन हो। (२) शहादत का कलमा जो वस्त्र पर लिखा रहता और कफन के साथ रखा जाता है। (३) प्रमाणपत्र। सनद।

शहाना^{१}–संज्ञा पुं० [देश० या फ़ा० शाह] संपूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

विशेष- यह राग फरोदस्त और कान्हड़ा को मिलाकर बनाया गया है और इसका व्यवहार प्रायः उत्सवों तथा धर्म सबंधी कार्यों में होता है। शास्त्र के अनुसार यह मालकोश राग की रागिनी है। इसके गाने का समय ११ दंड से १५ दंड तक है।

शहाना^{२}—वि० [फ़ा० शहानह्] शाहों या बादशाहों का सा। राजाओं के योग्य। शाहो। राजसी। २. बहुत बढ़िया। उत्तम।

शहाना^{३}—संज्ञा पुं० वह जोड़ा जो विवाह के समय दूल्हे को पहनाया जाता है।

यौ०—शहाना जोड़ा = (१) लाल रंग का पहनावा या पोशाक। (२) दूल्हे का जोड़ा जामा जो लाल रंग का होता है। शहाना वक्त = सायंकाल। सुहावना समय। शहानी चूड़ो = विवाह के समय दुलहन के हाथ को लाल रंग की चूड़ियाँ। शहानी मेहँदी = गहरे लाल रंग की मेहँदी। विवाह के अवसर पर दुलहन के हाथों में लगाई मेहँदी।

शहाना कान्हड़ा—संज्ञा पुं० [हिं० शहाना + कान्हड़ा] संपूर्ण जाति का एक प्रकार का कान्हड़ा राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

शहाब—संज्ञा पुं० [फ़ा०] एक प्रकार का गहरा लाल रंग। उ०—त्योरी में बल वालों के ताब के बदले। खून में रँगना कपड़ा शहाब के बदले।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० २०३।

विशेष—यह रंग कुसुम के खूब अच्छे और गहरे लाल रंग में आम या इमली की छाल मिलाकर बनाया जाता है।

शहाबा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शहाब = (गहरा लाल)] दे० 'अगिया बैताल'—२।

शहाबी—वि० [फ़ा० शहाब + ई (प्रत्य०)] शहाब के रंग का। गहरा लाल।

शहाबुद्दीन (गोरी)—संज्ञा पुं० [फ़ा०] गजनी का एक शाह जिसने चौहान नरेश पृथ्वीराज (११९७ ई० में) को पराजित कर भारत में मुसलिम साम्राज्य कायम किया।

शहिजदाⓅ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहज़ादह्] [स्त्री० शहिजादी] दे० 'शहजादा'। उ०—(क) पठयो कबरू नाम जेह, शहिजादा को शाह।—रघुराज (शब्द०)। (ख) रही शाह की एक शाहजादी। लखि सो मूरत छबि मरयादी।—रघुराज (शब्द०)।

शही—वि० [फ़ा०] शाही। राजा का। राजा सबंधी [को०]।

शहीद—संज्ञा पुं० [अ०] वह व्यक्ति जो धर्म या इसी प्रकार के और किसी शुभ कार्य के लिये युद्ध आदि में मारा गया हो। न्योछावर या बलिदान होनेवाला व्यक्ति।

शहीद मर्द—संज्ञा पुं० [अ० शहीद + फ़ा० मर्द] धर्म या ईश्वर के नाम पर जान देनेवाला [को०]।

शहीदाना—वि० [फ़ा० शहीदानह्] शहीद के ढंग का। शहीदों जैसा। उ०—शहीदाना तंतुओं से भरा हुआ, विधायकता से रहित व्यक्ति, अपनी शहीदी प्रवृत्ति के लिये, काल और पात्र की उपयुक्तता अनुपयुक्तता के लिये नहीं ठहरता।—शुक्ल अभि० ग्रं० (जी०), पृ० ५५।

शहीदी—वि० [फ़ा०] १. जो शहीद होने को तैयार हो। रक्त (वर्ण)। लाल।

यौ०—शहीदी जत्था = शहीद होने को तैयार लोगों का समूह। शहीदी तरबूज = एक प्रकार का गहरा लाल तरबूज। उ०—तुम आप जाओ और एक अच्छा सा शहीदी तरबूज देख कर लाओ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २६१।

शहीदेकर्बला—संज्ञा पुं० [फ़ा०] कर्बला के युद्ध में शहीद होनेवाले, हजरत इमाम हुसेन।

शहना—संज्ञा पुं० [अ०] १. चौकीदार। २. कोतवाल। ३. शस्यपाल [को०]।

शह्नाई—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] दे० 'शहनाई'।

शांकर^{१}—वि० [सं० शाङ्कर] १. शंकर संबंधी। २. शंकराचार्य का। जैसे,—शांकर भाष्य, शांकर व्रत।

शांकर^{२}—संज्ञा पुं० १. वृष। साँड़। ३. शंकराचार्य का अनुयायी। ३. आर्द्रा नक्षत्र, जिसके देवता शिव जी माने गए हैं। ४. एक छंद का नाम। ५. सोमलता का भेद।

शांकरि—संज्ञा पुं० [सं० शाङ्करि] १. शिव के पुत्र, गणेश। २. कार्तिकेय। ३. अग्नि। ४. एक मुनि का नाम। ५. शमी का पेड़।

शांकरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शाङ्करी] शिव द्वारा निर्धारित अक्षरों का क्रम। शिवसूत्र। माहेश्वर सूत्र।

शांकित—संज्ञा पुं० [सं० शाङ्कित] चोरक नामक गंधद्रव्य।

शांकुची—संज्ञा स्त्री० [सं० शाङ्कुची] शकुची मछली।

शांख^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शाङ्ख] शंख की ध्वनि।

शांख^{२}—वि० शंख संबंधी। शंख का बना हुआ।

शांखायन—संज्ञा पुं० [सं० शाङ्खायन] एक गृह्य और श्रौत सूत्रकार ऋषि जिनका कौशातकी ब्राह्मण भी है।

शांखारि—संज्ञा पुं० [सं० शाङ्खारि] शंख बेचनेवाली जाति।

शांखिक^{१}—वि० [सं० शाङ्खिक] [वि० स्त्री० शांखिकी] १. शंख संबंधी। २. शंख का बना हुआ।

शांखिक^{२}—संज्ञा पुं० १. शंख बनाने और बेचनेवाला। शांखारि। २. शंख बजानेवाला व्यक्ति। ३ एक संकर जाति (को०)।

शांख्य—वि० [सं० शाङ्ख्य] १. शंख का। शंख संबंधी। २. शंख का बना हुआ।

शांगुष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं० शाङ्गुष्ठा] गुंफा। दे० 'सांगुष्ठा'।

शांची—संज्ञा स्त्री० [सं० शाञ्ची] एक प्रकार का शाक।

शांडदूर्वा—संज्ञा स्त्री० [सं० शाण्डदूर्वा] एक प्रकार की दूब। पाक दूर्वा।

शांडाकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शाण्डाकी] एक प्रकार का पशु।

शांडिक—संज्ञा पुं० [सं० शाण्डिक] माँद में रहनेवाला साँडा नामक जंतु।

शांडिली—संज्ञा स्त्री० [सं० शाण्डिली] एक ब्राह्मणी जो अग्नि की माता मानकर पूजी जाती थी। (महाभारत)।

शांडिल्य—संज्ञा पुं० [सं० शाण्डिल्य] १. बेल। श्रीफल। २. अग्नि। ३. एक मुनि जिनकी रची एक स्मृति है और जो भक्तिसूत्र के कर्ता माने जाते हैं। ४. शांडिल्य के कुल में उत्पन्न पुरुष। ५. सरयूपारीण ब्राह्मणों के तीन प्रधान गोत्रों में से एक गोत्र।

यौ०—शांडिल्य गोत्र = शांडिल्य के कुल में उत्पन्न।

शांत¹—वि० [सं० शान्त] १. जिसमें वेग, क्षोभ या क्रिया न हो। ठहरा हुआ। रुका हुआ। बंद। जैसे,—अंधड़ शांत होना, उपद्रव शांत होना, झगड़ा शांत होना। २. (कोई पीड़ा, रोग, मानसिक वेग आदि) जो जारी न हो। बंद। मिटा हुआ। जैसे,—क्रोध शांत होना, पीड़ा शांत होना, ताप शांत होना। ३. जिसमें क्रोध आदि का वेग न रह गया हो। जिसमें जोश न रह गया हो। स्थिर। जैसे,—जब हमने समझाया, तब वे शांत हुए। ४. जिसमें जीवन की चेष्टा न रह गई हो। मृत। मरा हुआ। ५. जो चंचल न हो। धीर। उग्रता या चंचलता से रहित। सौम्य। गंभीर। जैसे,—शांत प्रकृति, शांत आदमी। ६. मौन। चुप। खामोश। ७. जिसने मन और इंद्रियों के वेग को रोका हो। मनोविकारों से रहित। रागादिशून्य। जितेंद्रिय। ८. उत्साह या तत्परतारहित। जिसमें कुछ करने की उमंग न रह गई हो। शिथिल। ढीला। ९. हारा हुआ। थका हुआ। श्रांत। १०. जो दहकता न हो। बुझा हुआ। जैसे,—अग्नि शांत होना। ११. विघ्न-बाधा-रहित। स्थिर। १२. जिसकी घबराहट दूर हो गई हो। जिसका जी ठिकाने हो गया हो। स्वस्थचित्त। १३. जिसपर असर न पड़ा हो। अप्रभावित। १४. निःशब्द। सुनसान। जैसे, शांत तपोवन (को०)। १५. पूत। पवित्रीकृत (को०)। १६. शुभ (को०)। १७. (अस्त्र, शस्त्र आदि) जिसका प्रभाव नष्ट कर दिया गया हो। प्रभावविहीन किया हुआ (को०)।

शांत²—संज्ञा पुं० १. काव्य के नौ रसों में से एक रस जिसका स्थायी भाव 'निर्वेद' (काम, क्रोधादि वेगों का शमन) है।

विशेष—इस रस में संसार की अनित्यता, दुःखपूर्णता, असारता आदि का ज्ञान अथवा परमात्मा का स्वरूप आलंबन होता है; तपोवन, ऋषि, आश्रम, रमणीय तीर्थादि, साधुओं का सत्संग आदि उद्दीपन, रोमांच आदि अनुभाव तथा निर्वेद, हर्ष, स्मरण, मति, दया आदि संचारी भाव होते हैं। शांत को रस कहने में यह बाधा उपस्थित की जाती है कि यदि सब मनोविकारों का शमन ही शांत रस है, तो विभाव, अनुभाव और संचारी द्वारा उसकी निष्पत्ति कैसे हो सकती है। इसका उत्तर यह दिया जाता है कि शांत दशा में जो सुखादि का अभाव कहा गया है, वह विषयजन्य सुख का है। योगियों को एक अलौकिक प्रकार का आनंद होता है जिसमें संचारी आदि भावों की स्थिति हो सकती है। नाटक में आठ ही रस माने जाते हैं; शांत रस नहीं माना जाता। कारण यह कि नाटक में अभिनय क्रिया ही मुख्य है, अतः उसमें 'शांत' का समावेश (जिसमें क्रिया, मनोविकार आदि की शांति कही जाती है) नहीं हो सकता। पर बाद के विवेचकों ने नाट्य में भी शांत रस की स्थिति मान्य ठहराई है।

२. इंद्रियनिग्रही। योगी। विरक्त पुरुष। ३. मनु का एक पुत्र। ४. संतोषण। सांत्वन। तुष्टि करना। तोषना। ५. शांति। निस्तब्धता (को०)।

शांत³—अव्य० बस बस। ऐसा नहीं। छिः छिः। अधिक नहीं आदि अर्थों का सूचक अव्यय [को०]।

शांतक—वि० [सं० शांतक] तोष करनेवाला। शांत करनेवाला। प्रसादक [को०]।

शांत गुण—वि० [सं० शान्तगुण] मरा हुआ। मृत [को०]।

शांत चेता—वि० [सं० शांतचेतस्] शांतात्मा। स्थिर मनवाला [को०]।

शांतता—संज्ञा स्त्री० [सं० शान्त + ता] १. शांति। शमन। २. खामोशी। नीरवता। ३. रागादि का अभाव। विराग। ४. हलचल का न होना। उपद्रव आदि का अभाव।

शांतनव—संज्ञा पुं० [सं० शान्तनव] [स्त्री० शांतनवी] १. राजा शांतनु के पुत्र, भीष्म। २. मेधातिथि का पुत्र।

शांतनु—संज्ञा पुं० [सं० शांतनु] १ द्वापर युग के इक्कीसवें चंद्रवंशी राजा।

विशेष—ये राजा प्रतीप के पुत्र और महाभारत युद्ध के प्रसिद्ध योद्धा भीष्म पितामह के पिता थे। शांतनु की स्त्री गंगादेवी के गर्भ से भीष्म (गांगेय) की उत्पत्ति हुई थी। वसुराज नामक धीवर की कन्या सत्यवती के रूप पर मोहित होकर शांतनु ने उसे ब्याहने की इच्छा प्रकट की। वसुराज ने सत्यवती के पुत्र को राज्य देने की प्रतिज्ञा लेकर कन्या ब्याह दी। कन्या के गर्भ से विचित्रवीर्य और चित्रांगद। उत्पन्न हुए थे।

२. ककड़ी। ३. एक कदन्न (को०)।

शांता—संज्ञा स्त्री० [सं० शान्ता] १. अयोध्या के राजा दशरथ की कन्या और महर्षि ऋष्यशृंग की पत्नी।

विशेष—दशरथ ने अपने मित्र अंग देश के राजा लोमपाद (रोमपाद) को अपनी कन्या शांता पोष्यपुत्रिका के रूप में दी थी।

२. रेणुका। ३. दूर्वा। दूब। ४. शमी। छिकुर। ५. आँवला। ६. संगीत में एक श्रुति।

शांति—संज्ञा स्त्री० [सं० शान्ति] १. वेग, क्षोभ या क्रिया का अभाव। किसी प्रकार की गति, हलचल या उपद्रव का न होना। स्थिरता। २. नीरवता। स्तब्धता। सन्नाटा। ३. चित्त का ठिकाने होना। स्वस्थता। चैन। इतमीनान। आराम। ४. रोग आदि का दूर होना। मनोवेग, पीड़ा, शारीरिक उपद्रव या विकार आदि का न रह जाना। जैसे—रोगशांति, तापशांति, क्रोधशांति। ५. जीवन की चेष्टा का रुक जाना। मृत्यु। मरण। ६. चंचलता का अभाव। धीरता। गंभीरता। सौम्यता। ७. रागादि की निवृत्ति। वासनाओं से छुटकारा। तृष्णा का क्षय। विराग। ८. एक गोपी का नाम। ९. दुर्गा। १०. अशुभ या अनिष्ट का निवारण। अमंगल दूर करने का उपचार। जैसे—ग्रहशांति, पापशांति, मूलशांति। ११. क्षुधातृप्ति। क्षुधानिवृत्ति (को०)। १२. सौभाग्य (को०)। १३. युद्धादि का रुक जाना या [illegible]त होना (को०)। १४. सांत्वना। ढाढ़स (को०)।

शांतिक^1—वि० [सं० शान्तिक] शांति संबंधी। शांति का। शांतिकर।

शांतिक^2—संज्ञा पुं० विपत्ति एवं दुष्ट ग्रहों की शांति के लिये किया जानेवाला यज्ञ, पूजन आदि। शांति कर्म।

शांतिकर—वि० [सं० शान्तिकर] शांति करनेवाला।

शांतिकरणिक—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिकरणिक] राजाओं में शांति या संधि करानेवाला व्यक्ति।—वर्ण०, पृ० ८।

शांतिकर्म—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिकर्म] बुरे ग्रह, प्रेतबाधा, पाप आदि द्वारा होनेवाले अमंगल के निवारण का उपचार।

शांतिकलश—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिकलश] किसी मांगलिक उत्सव या पूजा आदि के समय स्थापित जलपूर्ण घट (को०)।

शांतिकाम वि० [सं० शान्तिकाम] शांति का इच्छुक (को०)।

शांतिकारी—वि० [सं० शान्तिकारिन्] [वि० स्त्री० शांतिकारिणी] दे० 'शांतिकर'।

शांतिकार्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शांतिकर्म'।

शांतिगृह—संज्ञा पुं० [शान्तिगृह] यज्ञ के अंत में पाप तथा अशुभ आदि की शांति के लिये, स्नान करने का स्नानागार।

शांतिघट—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिघट] दे० 'शांतिकलश'।

शांतिजल—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिजल] यज्ञ, पूजा आदि में शांतिदायक मंत्रपूत जल, जिससे अभिषेक किया जाता है (को०)।

शांतिद^1—वि० [सं० शान्तिद] [वि० स्त्री० शांतिदा] शांति देनेवाला।

शांतिद^2—संज्ञा पुं० विष्णु।

शांतिदाता—वि०, संज्ञा पुं० [सं० शान्तिदातृ] [स्त्री० शांतिदात्री] शांति देनेवाला।

शांतिदायक—वि०, संज्ञा पुं० [सं० शान्तिदायक] [स्त्री० शांतिदायिका] शांति देनेवाला।

शांतिदायी—वि० [सं० शान्तिदायिन्] [वि० स्त्री० शांतिदायिनी] शांति देनेवाला।

शांतिनाथ—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिनाथ] जैनों के एक तीर्थंकर या अर्हत् का नाम।

शांतिनिकेतन—संज्ञा पुं० [सं० शान्ति + निकेतन] १. शांतिदायक स्थान। २. पश्चिम बंगाल का बोलपुर स्थान जहाँ विश्वकवि ने अंतरराष्ट्रीय शिक्षा संस्थान की स्थापना की थी।

शांतिपर्व—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिपर्वन्] महाभारत का बारहवाँ और सबसे बड़ा पर्व जिसमें युद्ध के उपरांत युधिष्ठिर की चित्तशांति के लिये कही हुई बहुत सी कथाएं, उपदेश और ज्ञानचर्चा है।

शांतिपात्र—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिपात्र] वह पात्र जिसमें ग्रह, पाप आदि की शांति के लिये जल रखा जाय।

शांतिप्रद—वि० [सं० शान्तिप्रद] शांति देनेवाला।

शांतिप्रिय—वि० [सं० शान्तिप्रिय] शांति का अभिलाषी (को०)।

शांतिभंग—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिभङ्ग] १. शांति का नाश। शोरगुल २. उपद्रव (को०)।

शांतिमय—वि० [सं० शान्तिमय] [वि० स्त्री० शांतिमयी] शांति से पूर्ण। शांति से भरा हुआ।

शांतिमार्ग—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिमार्ग] मोक्ष की ओर ले जानेवाला पथ (को०)।

शांतिवाचन—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिवाचन] ग्रह, प्रेतबाधा, पाप आदि से होनेवाले अमंगल को दूर करने के लिये मंत्रपाठ।

शांतिवादी—वि० [सं० शान्ति + वादिन्] विश्व के राष्ट्रों में परस्पर व्यवहार में शांति को मानकर चलनेवाला। उ०—युद्ध के संबंध में हमारा दृष्टिकोण सैद्धांतिक दृष्टि से पूँजीवादी, शांतिवादी, अथवा अराजकतावादियों से भिन्न है।—आ० अ० रा, पृ०, २२।

शांतिसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० शान्ति + सन्धि] परस्पर शांत रहने या संघर्ष न करने की संधि। उ०—शांतिसंधियों और समझौतों में, जिनसे महासमर का अंत होगा।—आ० अ० रा०, पृ० ८।

शांतिसद्म—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिसद्मन्] दे० 'शांतिगृह'।

शांतिहोम—संज्ञा पुं० [सं० शान्तिहोम] अमंगल, पाप, दोषादि के निवारणार्थ किया जानेवाला हवन (को०)।

शांत्वति—संज्ञा स्त्री० [सं० शान्त्वति] भारंगी। बभनेटी। ब्राह्मणयष्टिका।

शांब—संज्ञा पुं० [सं० शाम्ब] १. एक राजा का नाम। २. श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम। विशेष दे० 'सांब'।

शांबर^1—वि० [सं० शाम्बर] १. शंबर दैत्य संबधी। २. साँभर मृग का।

शांबर^2—संज्ञा पुं० १. लोध्र वृक्ष। लोध। २. एक प्रकार का चंदन (को०)।

शांबरशिल्प—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बर शिल्प] इंद्रजाल। जादू।

शांबरिक—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बरिक] जादूगर। मायावी।

शांबरी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० शाम्बरी] १. माया। इंद्रजाल।

विशेष—कहते हैं, शंबर दैत्य ने पहले पहल इसका प्रयोग किया था, इसी कारण इसका नाम शांबरी पड़ा।

२. जादूगरनी। मायाविनी।

शांबरी^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शाबरिन्] १. एक प्रकार का चंदन। २. लोध्र। लोध। ३. मूसाकानी नाम की लता।

शांबविक—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बविक] शंख का व्यवसाय करनेवाला।

शांबव्य—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बव्य] गृह्यसूत्रों में से एक सूत्र। उ०—शांबव्य सूत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्र में भारत एवं महाभारत का उल्लेख है।—हिंदु० स०, पृ० १५३।

शांबुक—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बुक] घोंघा।

शांबूक—संज्ञा पुं० [सं० शाम्बूक] घोंघा।

शांभर^1—संज्ञा स्त्री० [सं० शाम्भर] राजपूताने की एक झील जिसमें साँभर नमक होता है। साँभर झील।

शांभर^2—संज्ञा पुं० साँभर नमक।

शांभव^1—वि० [सं० शाम्भव] शंभु संबंधी। शिव का।

शांभव^2—संज्ञा पुं० १. देवदार वृक्ष। २. कपूर। ३. शिवमल्लिका का पौधा। वसु। ४. गूगल। गुग्गुल।

शांभवी—संज्ञा स्त्री० [सं० शाम्भवी] १. नीली दूब। २. दुर्गा। ३. ब्रह्मरंध्र (को०)। ४. तंत्र के अनुसार एक प्रकार की मुद्रा-

जिसमें नेत्र अपलक खुले रहते हैं किंतु वाह्य विषयों के ज्ञान से वे शून्य होते हैं [को०]।

शांभवीय—वि० [सं० शाम्भवीय] शिव से संबंधित [को०]।

शाइर—संज्ञा पुं० [अ०] [स्त्री० शाइरा] दे० 'शायर'। उ०—कई तो शाइर जो शेर और गजल बनाते हैं।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ८७।

शाइरी—संज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'शायरी'।

शाइस्तगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. शिष्टता। सभ्यता। तहजीब। २. भलमनसी। आदमीयत। मनुष्यत्व। ३. योग्यता। पात्रता (को०)। ४. संस्कृति। संस्कार (को०)।

शाइस्ता—वि० [फ़ा० शाइस्तह्] १. शिष्ट। सभ्य। तहजीबवाला। २. विनीत। नम्र। ३. जो अच्छी चाल सीखा हो। अदब कायदा जाननेवाला। शिक्षित। जैसे,—शाइस्ता घोड़ा। ४. उत्ताम। श्रेष्ठ (को०)। ५. योग्य। काबिल। पात्र।

शाकंट—संज्ञा पुं० [सं० शाकण्ट] बथुआ नाम का साग।

शाकंभरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शाकम्भरी] १. दुर्गा। २. साँभर नामक प्रदेश या नगर।

शाकंभरीय^{1}—वि० [सं० शाकम्भरीय] साँभर झील से उत्पन्न।

शाकंभरीय^{2}—संज्ञा पुं० साँभर नमक।

शाक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पत्ती, फूल, फल आदि जो पकाकर खाए जायँ। भाजी। तरकारी। साग।

विशेष—शाक छह प्रकार का कहा गया है—(१) पत्रशाक—चौलाई, बथुआ, मेथी आदि; (२) पुष्पशाक—केले का फूल, अगस्त का फूल आदि; (३) फलशाक—बैंगन, करेला आदि; (४) नालशाक—करेमू आदि; (५) कंदशाक—जमींकंद, कच्चू आदि; (६) संस्वेदज शाक—ढिंगरी, भुइँफोड़, गोबर-छत्ता आदि। ये शाक अनुक्रम से एक दूसरे से भारी होते हैं। सब प्रकार के पत्रशाक विष्टंभकारक, भारी, रूखे, मलकारक, अधोगत, वातकारी तथा शरीर, हड्डी, नेत्र, रुधिर, वीर्य, बुद्धि, स्मरणशक्ति और गति शक्ति का नाश करनेवाले तथा समय से पहले बालों को सफेद करनेवाले कहे गए हैं। परंतु जीवंती, बथुआ और चौलाई हानिकारक नहीं हैं।

२. सागौन का पेड़। ३. भोजपत्र। भूर्ज वृक्ष। ४. सिरिस का पेड़। ५. पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक द्वीप। विशेष दे० 'शाकद्वीप'। ६. एक प्राचीन जाति। विशेष दे० 'शक' (को०)। ७. शक राजा शालिवाहन का संवत्। ८. शक्ति। बल। ताकत।

शाक^{2}—वि० [सं०] १. शक जाति संबंधी। २. शक राजा का। जैसे,—शाक संवत्।

शाक^{3}—वि० [अ० शाक़] १. भारी। दूभर। कठिन।

मुहा०—शाक़ गुजरना = कष्टकर होना। खलना।

२. दुःख देनेवाला। कड़ा। (काम)।

शाककलंबक—संज्ञा पुं० [सं० शाककलम्बक] १. प्याज। २. लहसुन।

शाकचुक्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अमलोनी का साग। नोनिया। २. इमली।

शाकट^{1}—वि० [सं०] १. शकट या गाड़ी संबंधी। गाड़ी का। २. गाड़ी में लदा हुआ या जाता हुआ (को०)।

शाकट^{2}—संज्ञा पुं० १. गाड़ी का बैल या जानवर। २. गाड़ी का बोझ। ३. लिसोड़ा। लगेरा। ४. धव वृक्ष। ५. खेत। क्षेत्र। जैसे,—शाकशाकट।

शाकटपोतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पोई या पोय का पौधा।

शाकटायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शकट का पुत्र। २. एक बहुत प्राचीन वैयाकरण जिनका उल्लेख पाणिनि एवं निरुक्तकार यास्क ने किया है। ३. एक दूसरे अर्वाचीन वैयाकरण जिनके व्याकरण का प्रचार जैनों में है।

शाकटिक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. गाड़ीवाला। २. गाड़ीवान।

शाकटिक^{2}—वि० [वि० स्त्री० शाकटिकी] दे० 'शाकट^{1}' [को०]।

शाकटीन—संज्ञा पुं० [सं०] १. गाड़ी का बोझ। २. प्राचीन काल की एक तौल जो बीस तुला या दो सहस्र पल की होती थी।

शाकतरु—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शाकद्रुम' [को०]।

शाकदीक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] केवल शाक के आधार पर रहना।

शाकद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] १. वरुण वृक्ष। २. सागौन का पेड़।

शाकद्वीप—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक द्वीप।

विशेष—इसमें एक बहुत बड़ा शाक या सागौन का पेड़ माना गया है और यह चारों ओर क्षीरसमुद्र से घिरा हुआ कहा गया है। कहते हैं, इसमें ऋतुव्रत, सत्यव्रत, दानव्रत और अनुव्रत बसते हैं।

२. ईरान और तुर्किस्तान के बीच में पड़नेवाले उस प्रदेश का नाम जिसमें होकर वंक्षु नद या आक्सस नदी बहती है। इस प्रदेश में आर्य और शक जातियाँ बसती थीं।

शाकद्वीपीय^{1}—वि० [सं०] शाकद्वीप का रहनेवाला।

शाकद्वीपीय^{2}—संज्ञा पुं० ब्राह्मणों का एक भेद। मग ब्राह्मण।

विशेष—शाकद्वीपीय ब्राह्मणों के जंबूद्वीप में आने की कथा हरिवंश में इस प्रकार मिलती है—एक बार कृष्ण के पुत्र सांब ने सूर्य का मंदिर बनवाया और सौर यज्ञ करना चाहा। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि सूर्य की उपासनाविधि के अच्छे जाननेवाले शाकद्वीप में मिलेंगे, तब उन्होंने वहाँ से कुछ ब्राह्मण बुलवाए। यह उस समय की बात है जब भारत और ईरान में एक ही आर्य सभ्यता प्रचलित थी और एक देश के ऋत्विज दूसरे देश में जाकर बराबर यज्ञ कराया करते थे। फारस में यज्ञ करनेवाले पुरोहित 'मग' कहलाते थे, इसी से इन शाकद्वीपीय ब्राह्मणों को 'मग ब्राह्मण' भी कहते थे।

शाकपण—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक मुट्ठी का परिमाण। २. एक मुट्ठी शाक या सब्जी [को०]।

शाकपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] सहिजन। शोभांजन वृक्ष।

शाकपार्थिव—संज्ञा पुं० [सं०] संवत् चलाने का इच्छुक एक राजा ।

शाकपूणि, शाकपूर्णि—संज्ञा पुं० [सं०] वेद का भाष्य करनेवाले एक प्राचीन ऋषि ।

शाकवालेय—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मयष्टि । भारंगी [को०] ।

शाकबिल्व, शाकबिल्वक—संज्ञा पुं० [सं०] बैगन । भंटा । भाँटा ।

शाकभक्ष—वि० [सं०] मांस न खानेवाला । शाकाहारी ।

शाकयोग्य—संज्ञा स्त्री० [सं०] धनिया । धान्याक ।

शाकराज—संज्ञा पुं० [सं०] बथुआ । वास्तूक साग ।

विशेष—निर्दोष होने के कारण बथुआ शाकों का राजा कहा गया है ।

शाकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शाकारी' ।

शाकल^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाकली] १. शाकल नामक द्रव्य से रँगा हुआ । २. खंड या अंश संबंधी ।

शाकल^2—संज्ञा पुं० १. खंड । टुकड़ा । चिप्पड़ । २. एक प्रकार का साँप । ३. ऋग्वेद की एक शाखा या संहिता । ४. लकड़ी का बना हुआ तावीज । ५. मद्र देश का एक नगर । ६. पातंजलि महाभाष्य के अनुसार वाहीक (पंजाब) देश का एक ग्राम । ७. उक्त ग्राम या नगर का निवासी । ८. एक प्रकार का पीताभ चंदन (को०) । ९. हवन की सामग्री जिसमें जौ, तिल, घी, मधु आदि का मेल रहता है ।

शाकल प्रातिशाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] ऋग्वेद का एक प्रातिशाख्य ।

शाकल शाखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋग्वेद की वह शाखा या संहिता जो शाकल्य ऋषि के गोत्रजों में चली ।

विशेष—आजकल ऋग्वेद की यही शाखा मिलती और प्रचलित है ।

शाकलहोम—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का हवन [को०] ।

शाकलि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शाकली' ।

शाकलिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाकलिकी] १. टुकड़ा या खंड सबंधी । अंश संबंधी । २. शाकल से संबंध रखनेवाला [को०] ।

शाकली—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली ।

शाकल्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक बहुत प्राचीन ऋषि जो ऋग्वेद की एक शाखा के प्रचारक थे और जिन्होंने पहले पहल उसका पदपाठ ठीक किया था ।

शाकवर—संज्ञा पुं० [सं०] जीवशाक ।

शाकवरा—संज्ञा पुं० [सं०] जीवंती या डोडी नामक लता ।

शाकवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] लताकरंज । सागर । गोटा ।

शाकवालेय—संज्ञा पुं० [सं०] बभनेटी । भारंगी । ब्राह्मणयष्टिका ।

शाकवाट, शाकवाटक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शाकवाटी, शाकवाटिका] साग सब्जी आदि के लगाने का घेरा हुआ क्षेत्र [को०] ।

शाकविंदक—संज्ञा पुं० [सं० शाकविन्दक] बेल का पेड़ ।

शाकवीर—संज्ञा पुं० [सं०] १. बथुआ । वास्तूक शाक । २. पुनर्नवा । गदहपूरना । ३. जीवशाक ।

शाकवृक्ष—संज्ञा पुं० सागौन । शाकद्रुम [को०] ।

शाकशाकट, शाकशाकिन—संज्ञा पुं० [सं०] शाकसब्जी का खेत । शाकवाट [को०] ।

शाकशाल—संज्ञा पुं० [सं०] बकायन । महानिंब वृक्ष ।

शाकश्रेष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] बथुआ । वास्तूक शाक ।

शाकश्रेष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जीवंती । डाडी शाक । २. डोडी । ३. भंटा । बैगन । ४. पेठा । भतुआ । ५. तरबूज ।

शाकांग—संज्ञा पुं० [सं० शाकाङ्ग] गोल मिर्च । काली मिर्च ।

शाका^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] हरीतकी । हड़ । हर्रे ।

शाका^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शाक (= शक सबंधी)] शक संवत् । उ०—जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनका शाका और संवत् है ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २२६ ।

शाकाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] सागौन का पेड़ ।

शाकाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] १. महादा । वृक्षाम्ल । २. इमली ।

शाकाम्लभेद, शाकाम्लभेदक—संज्ञा पुं० [सं०] चूक । चुक ।

शाकारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शकों अथवा शकारों की भाषा, जो प्राकृत का एक भेद है । इसका प्रयोग मृच्छकटिक में द्रष्टव्य है ।

शाकाष्टका—संज्ञा स्त्री० [सं०] फाल्गुन कृष्ण पक्ष की अष्टमी ।

विशेष—इस दिन पितरों के उद्देश्य से शाक दान किया जाता है ।

शाकाष्टमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शाकाष्टका' ।

शाकाशन—संज्ञा पुं० [सं०] 'शाकाहार' ।

शाकाहार—संज्ञा पुं० [सं०] अनाज अथवा, फल, फूल, पत्ते आदि का भोजन । मांसाहार का उलटा ।

शाकाहारी—वि० [सं० शाकाहारिन्] [वि० स्त्री० शाकाहारिणी] केवल अनाज या साग भाजी खानेवाला । मांस न खानेवाला ।

शाकिन—संज्ञा पुं० [सं०] खेत । बाडी । जैसे, शाकशाकिन = साग का खेत ।

शाकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह भूमि जिसमें शाक बोया हुआ हो । साग की क्यारी । २. एक पिशाची या देवी जो दुर्गा के गणों में समझी जाती है । डाइन । चुड़ैल ।

शाकिर—वि० [अ०] १. कृतज्ञता प्रकाशित करनेवाला । शुक्रगुजार । २. संतोष रखनेवाला ।

शाकी—वि० [अ०] १. शिकायत करनेवाला । २. नालिश करनेवाला । ३. चुगली खानेवाला ।

शाकुंतल—वि० संज्ञा पुं० [सं० शाकुन्तल] दे० 'शाकुंतलेय' । जैसे अभिज्ञान शाकुंतल ।

शाकुंतलेय^1—संज्ञा पुं० [सं० शाकुन्तलेय] १. शकुंतला का पुत्र, भरत । २. कालिदासविरचित एक नाटक का नाम ।

शाकुंतलेय^2—वि० शकुंतला संबंधी । शकुंतला का ।

शाकुंतिक—संज्ञा पुं० [सं० शाकुन्तिक] चिड़ीमार । बहेलिया ।

शाकुण—वि० [सं०] [स्त्री० शाकुणी] १. अनुतापयुक्त। अनुतप्त। २. दूसरे को पीड़ित करने या ताप देनेवाला। परोपतापी। परतापक [को०]।

शाकुन^1—वि० [सं०] १. पक्षी संबंधी। चिड़ियों का। २. शुभाशुभ लक्षण संबंधी। सगुनवाला।

शाकुन^2—संज्ञा पुं० १. चिड़िया पकड़नेवाला। बहेलिया। २. यात्रा आदि में कुछ विशेष पक्षियों, जंतुओं या और पदार्थों के मिलने से शुभाशुभ का निर्णय। शकुन। सगुन। ३. शुभाशुभ निर्णय या सगुन विचार करनेवाला शकुनज्ञ (को०)।

शाकुनि—संज्ञा पुं० [सं०] बहेलिया।

शाकुनी—संज्ञा पुं० [सं० शाकुनिन्] १. मछवाहा। मछली पकड़नेवाला। २. एक प्रकार का प्रेत। ३. सगुन विचारनेवाला।

शाकुनेय^1—वि० [सं०] पक्षी संबंधी।

शाकुनेय^2—संज्ञा पुं० १. एक प्रकार का छोटा उल्लू। २. बकासुर नामक दैत्य। ३. एक मुनि का नाम।

शाकुल—वि० संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शाकुलिक' [को०]।

शाकुलिक^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. मछवाहा। ५. मछलियों का समूह।

शाकुलिक^2—वि० मछली संबंधी। मछली का [को०]।

शाकेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शाकेन्द्र] शाकाप्रवर्तक। दे० 'शाकेश्वर' [को०]।

शाकेक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] ईख का एक भेद।

शाकेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] वह राजा जिसके नाम से संवत् चले। जैसे,—युधिष्ठिर, विक्रमादित्य, शालिवाहन।

शाकोल—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की लता।

शाक्कर—संज्ञा पुं० [सं०] बैल। वृष। दे० 'शाक्वर'।

शाक्की—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाँच विभाषाएँ।

शाक्त^1—वि० [सं०] १. प्रभाव, प्रताप या शक्ति संबंधी। २. दैविक शक्ति (देवी) संबंधी।

शाक्त^2—संज्ञा पुं० शक्ति का उपासक। तंत्रपद्धति से देवी की पूजा करनेवाला।

विशेष—शाक्तों के पूजन का विधान वैदिक पूजनविधि से भिन्न होता है। ये ईश्वर की शक्ति का शिव की पत्नी दुर्गा के रूप में उपासना करते हैं। यह उपासनापद्धति दो प्रकार की है—दक्षिणाचार। और वामाचार। वामाचारियों या वाममार्गियों की पूजा में मद्य, मांस, स्त्री आदि पंचमकार का व्यवहार होता है। स्त्रियों की जननेंद्रिय को शक्ति का प्रतीक मानकर ये लोग उसकी विशेष रीति से पूजा करते हैं।

शाक्तमत—संज्ञा पुं० [सं०] शक्ति के उपासकों का मत या सिद्धांत। विशेष दे० 'शाक्त'।

शाक्तागम—संज्ञा पुं० [सं०] तंत्रशास्त्र।

शाक्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शक्ति का उपासक। शाक्त। २. शक्ति नाम का अस्त्र या भाला बाँधनेवाला।

शाक्तीक^1—वि० [सं०] शक्ति या भाला संबंधी।

शाक्तीक^2—संज्ञा पुं० भाला चलानेवाला।

शाक्तेय, शाक्त्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शक्ति का उपासक। २. पराशर ऋषि का एक नाम (को०)।

शाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन क्षत्रिय जाति जो नेपाल की तराई में बसती थी और जिसमें गौतम बुद्ध उत्पन्न हुए थे।

विशेष—बौद्ध ग्रंथों में शाक्य इक्ष्वाकुवंशी कहे गए हैं। जिस स्थान में वे रहते थे, उसमें 'शाक' या सागौन के पेड़ अधिक थे; इसी से उसका 'शाक्य' नाम पड़ा। विद्वानों का अनुमान है कि लिच्छवियों के समान शाक्य भी व्रात्य क्षत्रिय थे।

२. बुद्ध का एक नाम (को०)। ३. शाक्यनरेश शुद्धोदन जो बुद्ध के पिता थे (को०)। ४. बौद्ध भिक्षु (को०)।

यौ०—शाक्यकेतु = बुद्ध। शाक्यपुंगव = दे० 'शाक्यमुनि'। शाक्यपुत्रीय = बौद्ध यति। शाक्यभिक्षु, शाक्यभिक्षुक = बौद्ध मतानुयायी संन्यासी। शाक्यमुनि। शाक्यसिंह। शाक्यशासन = बुद्ध का उपदेश।

शाक्य मुनि, शाक्य सिंह—संज्ञा पुं० [सं०] गौतम बुद्ध।

शाक्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. ज्येष्ठा नक्षत्र जिसके अधिपति इंद्र हैं। २. इंद्र के निमित्त अर्पित हवि आदि (को०)।

शाक्र^2—वि० शक्र संबंधी। इंद्र संबंधी। शक्र का [को०]।

शाक्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. इंद्राणी। शक्रपत्नी। शची।

शाक्वर^1—वि० [सं०] शक्तिशाली। पराक्रमी। बलवान्।

शाक्वर^2—संज्ञा पुं० १. इंद्र। २. इंद्र का वज्र। ३. साँड़। बैल। ४. प्राचीन काल की एक रीति या संस्कार।

शाख^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. कृत्तिका का पुत्र, कार्तिकेय। २. भाग। ३. करंज।

शाख^2—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शाख] १. टहनी। डाल। डाली।

मुहा०—शाख लगाना = (१) कलम लगाना। टहनी लगाना। (२) सिंगी लगाना। (३) पद बढ़ाना। संमान करना। शाख लगना = घमंड होना। इतराना। शाख निकालना = दोष देना। कलंक लगाना। नुक्ताचीनी करना। झगड़ा खड़ा करना। शाख निकालना = ऐब निकालना झगड़ा निकालना। बखेड़ा निकालना।

२. सींग। ३. लगा हुआ टुकड़ा। खंड। फाँक। ४. कमान की लकड़ी (को०)। ५. एक पकवान (को०)। ६. वंश। कुलपरंपरा। ७. नदी आदि की बड़ी धारा में से निकली हुई छोटी धारा।

शाखचा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाखचह्] छोटी शाखा। टहनी। डाली। कौंचा [को०]।

यौ०—शाखचाबंदी = (१) लांछन लगाना। दोषारोपण। २. पेड़ की कलम लगाना।

शाखदार^1—वि० [फ़ा० शाखदार] १. जिसमें बहुत सी शाखाएँ हों। टहनीदार। २. सींगवाला। सींगदार।

शाखदार^{2}—संज्ञा पुं० वह व्यक्ति जो स्त्री की कमाई खाय [को०]।

शाखशाना—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाखशानह्] १. बाधा। अड़चन। पख। २. बात में बात। बात का ढंग। ३. बहस मुबाहिसा। ४. एक प्रकार के फकीर जो अपने को घायल कर देने की धमकी देकर भीख माँगते हैं [को०]।

शाखा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पेड़ के धड़ से चारों ओर निकली हुई लकड़ी या छड़। टहनी। डाल। २. शरीर का अवयव। हाथ और पैर। ३. उँगली। ४. चौखट। बृहत्०, पृ० २८१। ५. घर का पाख। ६. किसी मूल वस्तु से निकले हुए उसके भेद। प्रकार। ७. विभाग। हिस्सा। ८. अंग। अवयव। ९. किसी शास्त्र या विद्या के अंतर्गत उसका कोई भेद। १०. वेद की संहिताओं के पाठ और क्रमभेद जो कई ऋषियों ने अपने गोत्र या शिष्यपरंपरा में चलाए।

विशेष—शौनक ने अपने 'चरणव्यूह' में वेदों की जो शाखाएँ गिनाई हैं, उसके अनुसार ऋग्वेद की पाँच शाखाएँ हैं—शाकल्य, वाष्कल, आश्वलायन, शांखायन और मांडूक्य। वायुपुराण में यजुर्वेद की ८६ शाखाएँ कही गई हैं जिनमें ४३ के नाम चरणव्यूह में आए हैं। इन ४३ में माध्यंदिन और कण्व को लेकर ३७ शाखाएँ वाजसनेयी के अंतर्गत हैं। सामवेद की सहस्र शाखाएँ कही जाती हैं जिनमें १५ गिनाई गई हैं। इसी प्रकार अथर्ववेद की भी बहुत सी शाखाओं में से पिप्पलादा-शौनकीया आदि केवल नौ गिनाई गई हैं।

११. संप्रदाय। पंथ (को०)। १२. ग्रंथ का परिच्छेद। अध्याय (को०)। १३. पक्षांतर। प्रतिपक्ष (को०)। १४. भुजा। बाहु। हस्त (को०)।

शाखा^{2}—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाखह्] अपराधी को दंड देने का काष्ठ का एक यंत्र [को०]।

शाखाकंट—संज्ञा पुं० [सं० शाखाकण्ट] थूहर। स्नुही वृक्ष।

शाखाचंक्रमण—संज्ञा पुं० [सं० शाखाचङ्क्रमण] १. एक डाल पर से दूसरी डाल पर कूद जाना। २. एक विषय अधूरा छोड़कर दूसरा विषय हाथ में लेना। एक विषय पर स्थिर न रहना। ३. कोई विषय पूरा अध्ययन न करके थोड़ा यह, थोड़ा वह पढ़ना।

शाखाचंद्र न्याय—संज्ञा पुं० [सं० शाखाचन्द्रन्याय] एक न्याय या कहावत जो ऐसी बात के संबंध में कही जाती है जो केवल देखने में जान पड़ती है, वास्तव में नहीं होती।

विशेष—चंद्रमा कभी कभी देखने में ऐसा जान पड़ता है मानों पेड़ की डाल पर है। इसी से इस कहावत या न्याय की रचना हुई है।

शाखादंड—संज्ञा पुं० [सं० शाखादण्ड] दे० 'शाखारंड'।

शाखाद—संज्ञा पुं० [सं०] पेड़ों की डाल या टहनी खानेवाले पशु। जैसे—गौ, बकरी, हाथी।

शाखानगर, शाखानगरक—संज्ञा पुं० [सं०] बड़े नगर का वसातिस्थान या मुहल्ला। उपनगर। उ०—शाखानगर शृंगाटक आक्रीडंते।—कीर्ति०, पृ० २८।

शाखापित्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक रोग जिसमें हाथ और पैर में जलन और सूजन होती है।

शाखापुर—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शाखापुरी] किसी नगर के आसपास फैली हुई बस्ती।

शाखाप्रकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] मनु के अनुसार अपने राज्य के कुछ दूर पर के आठ प्रकार के राजा जिनका विचार किसी राजा को युद्ध के समय रखना चाहिए।

शाखाबा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाखाबह्] खाड़ी [को०]।

शाखाबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शाखा के समान बाहु या भुजा। २. वह जिसकी भुजा शाखा के समान हो।

शाखाभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] वृक्ष। शाखी [को०]।

शाखामृग—संज्ञा पुं० [सं०] १. बानर। बंदर। २. गिलहरी।

शाखाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] जलबेंत।

शाखाम्ला—संज्ञा स्त्री० [सं०] इमली।

शाखायन—संज्ञा पुं० [सं०] ऋग्वेद के एक ब्राह्मण ग्रंथ का नाम। उ०—ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण के पहले पाँच भाग और कौषीतकि या शाखायन ब्राह्मण बने।—हिंदु० स०, पृ० ७६।

शाखारंड—संज्ञा पुं० [सं० शाखारण्ड] वह ब्राह्मण जो अपनी शाखा को छोड़कर दूसरा शाखा का अध्ययन करे। शाखादंड।

शाखारथ्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी गली या सड़क जो बड़ी सड़क से मिलती हो [को०]।

शाखाल—संज्ञा पुं० [सं०] जलबेंत।

शाखावात—संज्ञा [सं०] हाथ पैर में होनेवाला वातरोग।

शाखाशिफा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह डाल जो नीचे की ओर बढ़कर जड़ पकड़ ले और एक अलग पेड़ के धड़ के रूप में हो जाय। जैसे—बट की जटा या बरोह।

शाखिमूल—संज्ञा पुं० [सं०] रंधि वृक्ष।

शाखी^{1}—वि० [सं० शाखिन्] शाखाओं से युक्त। शाखावाला।

शाखी^{2}—संज्ञा पुं० १. पेड़। वृक्ष। २. वेद। ३. वेद की किसी शाखा का अनुयायी। ४. पीलू का पेड़। ५. तुर्किस्तान का निवासी।

शाखुल—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाखुल] अरहर नाम से प्रसिद्ध द्विदल अन्न [को०]।

शाखोच्चार—संज्ञा पुं० [सं०] विवाह के समय वंशावली का कथन।

शाखोट, शाखोटक—संज्ञा पुं० [सं०] सिहोर का पेड़। पीत वृक्ष।

विशेष—वैद्यक में यह कड़ुआ, गरम पित्तकारक और वातहारी माना गया है।

शाख्य—वि० [सं०] १. शाखा के समान। शाखा तुल्य। २. शाखा संबंधी [को०]।

शागर (पु)†—संज्ञा पुं० [सं० सागर] सागर। उ०—रुकुमिनिहरन सुनै जो हृदै विचारइ। आप तरै भव शागर कुल निस्तारइ।—अकबरी०, पृ० १५०।

शागिर्द—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. किसी से विद्या प्राप्त करने का संबंध रखनेवाला। विद्यार्थी। २. शिष्य। चेला।

मुहा०—शागिर्द करना = किसी को कुछ सिखाने का काम अपने ऊपर लेना । चेला बनाना ।

शागिर्दपेशा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शागिर्दपेशह्] १. मातहत । उ०—विशेषतः अंगरेजों के शागिर्दपेशे लोग ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ३८३ । २. अहलकार । कर्मचारी । ३. खिदमतगार । सेवक । ४. शागिर्द । विद्यार्थी । ५. बड़ी कोठी के पास नौकरों के लिये अलग बने हुए घर ।

शागिर्दाना—वि० [फ़ा० शागिर्दानह्] १. शिष्योचित । २. शागिर्द होने के एवज में गुरु को दिया जानेवाला (द्रव्य) ।

शागिर्दी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. शिक्षा प्राप्त करने के निमित्त किसी गुरु के अधीन रहने का भाव । शिष्यता । २. सेवा । टहल ।

शाचि[1]—संज्ञा पुं० [सं०] दलकर भूसी निकाला हुआ जौ ।

शाचि[2]—वि० १. प्रसिद्ध । विख्यात । विश्रुत । २. प्रतापी । शक्तिशाली [को०] ।

शाट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपड़े का टुकड़ा । २. वह कपड़ा जो कमर में लपेटकर पहना जा सके । धोती । परदनी । ३. एक प्रकार की कुरती । ४. ढीलाढाला पहनावा ।

शाटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वस्त्र । पट । २. दे० 'शाट' ।

शाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. साड़ी । धोती । २. कचूर ।

शाटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] साड़ी । धोती ।

शट्यायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम । २. एक प्रकार का कृत्य जिसे यज्ञकार्य में हुए दोषों की निवृत्ति के निमित्त करने का विधान है (को०) ।

शाट्यायनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम ।

शाठ्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शठता । दुष्टता । बदमाशी । २. कपट । दंभ । छल ।

शाड्वल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शाद्वल' ।

शाण[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. हथियारों को धार तेज करने का पत्थर । सान । उ०—कृश होकर भी अंग वीर के सुगठित शाण चढ़े से थे ।—साकेत, पृ० ३७२ । २. कसौटी । कषपट्टिका । ३. चार माशे की एक तोल । ४. आरा । करपत्र (को०) ।

शाण[2]—वि० [सं०] १. सन के पौधे से संबंध रखनेवाला । २. सन का बना हुआ ।

शाण[3]—संज्ञा पुं० १. सन के रेशे का बना हुआ कपड़ा । भँगरा । २. मोटा कपड़ा (को०) ।

शाणक—संज्ञा पुं० [सं०] पटसन का बना कपड़ा । भँगरा [को०] ।

शाणवास—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो सन का बना हुआ वस्त्र पहने । २. एक मुहूर्त का नाम ।

शाणाजीव—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शस्त्रों पर सान देने का काम करके जीविकार्जन करता हो । हथियार की सफाई का काम करनेवाला व्यक्ति [को०] ।

शाणाश्मा—संज्ञा पुं० [सं० शाणाश्मन्] सान चढ़ाने का पत्थर [को०] ।

शाणि—संज्ञा पुं० [सं०] पटुआ ।

शाणित—वि० [सं०] १. सान रखा हुआ । तीखा या तेज किया हुआ । २. कसौटी पर कसा हुआ ।

शाणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सन के रेशों से बुना हुआ कपड़ा । भँगरा । २. फटा हुआ वस्त्र । चीथड़ा । ३. वह छोटा कपड़ा जो यज्ञोपवीत के समय ब्रह्मचारी को पहनने के लिये दिया जाता है । ४. सान । ५. कसौटी । ६. छोटा खेमा या पर्दा । ७. चार माशे की तौल (को०) । ८. आरा (को०) । ९. हाथ या आँख आदि से संकेत करना (को०) ।

शाणीर—संज्ञा पुं० [सं०] शोण (सोन) नदी का किनारा या उसका भूभाग [को०] ।

शाणोपल—संज्ञा पुं० [सं०] १. सान चढ़ाने का प्रस्तर । २. कसौटी [को०] ।

शात[1]—वि० [सं०] १. सान रखा हुआ । तेज किया हुआ । २. दुबला पतला । क्षीण । कृश । जैसे,—शातोदरी = कृशोदरी । ३. दुर्बल । कमजोर (को०) । ४. सुंदर । मनोहर (को०) । ५. प्रसन्न । प्रफुल्ल (को०) । ६. गिरा हुआ । पतित (को०) । ७. दीप्तिशाली । चमकदार (को०) ।

शात[2]—संज्ञा पुं० १. धतूरा । २. खुशी । आनंद । प्रसन्नता (को०) ।

शातकर्णि—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक ऋषि । २. सातवाहन राजाओं का एक नाम । उ०—सातवाहनों ने अपने अभिलेखों में अपने को 'सातवाहन' अथवा 'शातकर्णि' कहा है ।—आदि०, पृ० २८६ ।

शातकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० शातकुम्भ] १. कचनार का वृक्ष । २. कनक । धतूरा । ३. कनेर का वृक्ष । ४. सोना । स्वर्ण ।

शातकौंभ[1]—संज्ञा पुं० [सं० शातकौम्भ] सोना । सुवर्ण ।

शातकौंभ[2]—सं० स्वर्णनिर्मित । सोने का बना हुआ [को०] ।

शातक्रतव[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्रधनुष । २. इंद्र । वह जिसने शतक्रतु पद प्राप्त किया हो । उ०—मधुरतर से मधुरतम होती हुई, रूप से गुण, पुष्प से मधु की तरह, साथ, शातक्रतव के पाथेय का ।—आराधना, पृ० ६१ ।

शातक्रतव[2]—वि० देवराज इंद्र का या इंद्र संबंधी । इंद्र से संबंध रखनेवाला [को०] ।

शातन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० शातनीय, शातित] १. सान पर धार तेज करना । चोखा करना । २. कटवाना । (पेड़ आदि) । ३. नष्ट करना । काट गिराना । जैसे,—पक्षशातन । ४. काटना । तराशना । छीलना । ५. क्षीण या लघु होना (को०) । ६. विच्छेद । विलगाव । झड़ना (को०) । ७. सतह बराबर करना । रंदना ।

शातपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शातपत्रकी] चंद्रिका । चाँदनी ।

शातभिष—वि० [सं०] शतभिषा नक्षत्र संबंधी या उसमें उत्पन्न [को०] ।

शातभीरु—संज्ञा पुं० [सं०] भद्रवल्ली । मदनमाली ।

शातमन्यव—वि० [सं०] शतमन्यु अर्थात् इंद्र से संबंध रखनेवाला [को०] ।

शातमान—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शातमानी] जो सौ के मूल्य से क्रीत हो। एक शत में खरीदा हुआ [को॰]।

शातला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] एक प्रकार का थूहर का वृक्ष। विशेष दे॰ 'सातला'।

शातवाहन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक राजा का नाम। विशेष दे॰ 'शालिवाहन'।

शातह्लद—वि॰ [सं॰] विद्युत् संबंधी। वैद्युतिक। विद्युत्जन्य [को॰]।

शातातप—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक स्मृतिकार ऋषि का नाम।

शातित—वि॰ [सं॰] जो नष्ट या ध्वस्त किया गया हो। जो काटकर गिराया हुआ हो [को॰]।

शातिर¹—वि॰ [अ॰] १. चालाक। चतुर। उस्ताद। काइयाँ। २. चपल। चंचल (को॰)। ३. धृष्ठ (को॰)। ४. निपुण। दक्ष।

शातिर²—संज्ञा पुं॰ १. दूत। २. शतरंज का खिलाड़ी।

शातिराना—वि॰ [फ़ा॰] धूर्ततापूर्ण। शातिरों जैसा [को॰]।

शात्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] सीढ़ी। सोपान। निःश्रेणी [को॰]।

शातोदर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शातोदरी] १. पतली कमरवाला। २. क्षीण। पतला।

शात्रव¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शत्रुत्व। शत्रुता। २. शत्रु। ३. शत्रुओं का समूह।

शात्रव²—वि॰ १. शत्रु संबंधी। २. शत्रुतापूर्ण। विरोधी [को॰]।

शात्रवीय—वि॰ [सं॰] दे॰ 'शात्रव²'।

शाद¹—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पतन। गिरना। पड़ना। २. कर्दम। कीचड़। ३. घास। दूब।

यौ॰—शादहरित = जमी हुई दूब के कारण हरा भरा भूखंड या भूमि। हरे घास से भरी हुई भूमि। हरी भरी जमीन।

शाद²—वि॰ [फ़ा॰] खुश। प्रसन्न। २. परिपूर्ण। भरा पूरा।

यौ॰—शादकाम = (१) प्रसन्न। खुश। (२) कामयाब। सफलमनोरथ। शादकामी = (१) खुशी। प्रसन्नता। (२) कामयाबी। सफलता। शादगूना = (१) गायिका। डोमनी। (२) तोशक। शादमाँ = हर्षित। शादमान, शादमानी।

शादमान—वि॰ [फ़ा॰] प्रसन्न। खुश। हर्षित। उ॰—जबाँ पर उसे याद है सब कुरान। फसाहत पर उसके हुआ शादमान।—दक्खिनी॰, पृ॰ ७८।

शादमानी—संज्ञा स्त्री॰ [फ़ा॰] प्रसन्नता। खुशी।

शादा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] ईंट।

शादाब—वि॰ [फ़ा॰] १. हरा भरा। सरसब्ज। तरोताजा। २. सींचा हुआ। सिक्त (को॰)। ३. प्रफुल्ल (को॰)।

शादाबी†—संज्ञा स्त्री॰ [फ़ा॰] १. तरोताजगी। हरियाली। २. प्रफुल्लता [को॰]।

शादियाना—संज्ञा पुं॰ [फ़ा॰ शादियानह्] १. खुशी का बाजा। आनंदमंगल सूचक वाद्य।

क्रि॰ प्र॰—बजना।—बजाना।

२. वह धन जो किसान जमींदार को ब्याह के अवसर पर देते हैं। ३. बधावा। बधाई।

क्रि॰ प्र॰—देना।

४. खुशी या शादी के मौके पर गाया जानेवाला मांगलिक गीत।

शादी—संज्ञा स्त्री॰ [फ़ा॰] १. खुशी। प्रसन्नता। हर्ष। आनंद। २. आनंदोत्सव।

यौ॰—शादीगमी।

३. विवाह। ब्याह।

शाद्वल¹—वि॰ [सं॰] १. हरित तृण या दूर्वा से युक्त। २. हरी हरी घास से ढँका हुआ। हरा भरा। ३. हरा (को॰)।

शाद्वल—संज्ञा पुं॰ १. हरी घास। दूब। २. साँड़। बैल। ३. रेगिस्तान के बीच की वह थोड़ी सी हरियाली जहाँ कुछ हलकी बस्ती भी हो। नखलिस्तान। ओसिस।

यौ॰—शाद्वलस्थली = हरीभरी भूमि। दूर्वाच्छादित भूमि।

शाद्वलाभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का हरा कीड़ा।

शाद्वलित—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दूब से भरा हुआ होना। खूब हरा भरा होना [को॰]।

शान¹—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] १. तड़क भड़क। ठाट बाट। सजावट। जैसे,—कल बड़ी शान से सवारी निकली थी।

यौ॰—शान व शौकत = दे॰ शानशौकत। उ॰—वह उनकी शान व शौकत का कायल होगा।—प्रेमघन॰, भा॰, २, पृ॰ १७६। शान शौकत।

२. गर्वीली चेष्टा। ठसक। जैसे,—यह घोड़ा बड़ी शान से चलता है। ३. भव्यता। विशालता। चमत्कार। ४. शक्ति। करामात। विभूति। ऐश्वर्य। जैसे—खुदा की शान। ५. श्रेष्ठता। बुजुर्गी। गौरव (को॰)। ६. प्रतिष्ठा। इज्जत। मानमर्यादा।

मुहा॰—शान जाना = अप्रतिष्ठा होना। मान भंग होना। शान घटना = इज्जत में कमी होना। बड़प्पन में कमी होना। शान बरसना = गौरव व्यक्त होना। शान मारी जाना = दे॰ 'शान जाना'। शान में बट्टा लगना = दे॰ 'शान घटना'। किसी की शान में = किसी बड़े के संबंध में। किसी के प्रति या किसी के विषय में। जैसे,—उनकी शान में ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

शान²—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शरण। सान। २. कसौटी। निकषोपल (को॰)।

शानच्—प्रत्य॰ [सं॰] एक कृदंत प्रत्यय जो पाणिनि व्याकरण में प्रयुक्त है।

शानदार—वि॰ [अ॰ शान + फ़ा॰ दार] १. भड़कीला। तड़क भड़कवाला। ठाट बाट का। जो बड़ी सजावट और तैयारी के साथ हो। २. भव्य। विशाल। चमत्कारपूर्ण। ३. ऐश्वर्ययुक्त। वैभव से पूर्ण। ४. गर्वीली चेष्टा से युक्त। ठसकवाला।

शानपाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. चंदन घिसने का पत्थर। २. पारियात्र पर्वत।

शानशौकत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] तड़क भड़क। ठाट बाट। तैयारी। सजावट।

शाना—संज्ञा पुं० [फ़ा० शानह्] १, कंघा । कंघी । उ०—हो परेशानी सरेमू भी न जुल्फेयार को । इसलिये मेरा दिले सद-चाक शाना हो गया ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ८५१ । २. मोढ़ा । कंधा । खवा । ३. जुलाहों का राछ । कंघी (को०) । ४. एक हाथियार (को०) ।

शानी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] इनारुन । इंद्रवारुणी ।

शानी^{2}—वि० [अ०] शत्रुता करनेवाला । बैर करनेवाला । बैरी [को०] ।

शानी†^{3}—वि० [अ० शान] शानवाला । शानदार ।

शानीला†—वि० [अ० शान] दे० 'शानो' ।

शानैश्चर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शानैश्चरी] १. शनिग्रह संबंधी । शनि का । २. शनिवार को पड़ने या होनेवाला [को०] ।

शाप—संज्ञा पुं० [सं०] १. अहित-कामना-सूचक शब्द । तुम्हारा कुछ अनिष्ट हो, इस प्रकार का वचन । कोसना । बद दुआ । जैसे,—ऋषि के शाप से वह राक्षस हो गया । २. धिक्कार । फटकारना । भर्त्सना ।

क्रि० प्र०—देना ।

३. ऐसी शपथ जिसके न पालन करने का कोई अनिष्ट परिणाम कहा जाय । बुरी कसम । ४. प्रतिषेध । प्रत्याख्यान । वर्जन (को०) । ५. कठिनाई । बाधा । उपद्रव (को०) ।

शापग्रस्त—वि० [सं०] जिसे शाप दिया गया हो । शापित ।

शापज्वर—संज्ञा प्रुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर जो माता, पिता, गुरु आदि बड़ों के शाप के कारण कहा गया है ।

शापटिक, शापठिक—संज्ञा पुं० [सं०] मयूर । मोर ।

शापनाⓅ—क्रि० स० [सं० शाप से नाम धा०] श्राप देना । शाप देना ।

शापनिवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शाप से छुटकारा या मुक्ति [को०] ।

शापप्रद—वि० [सं०] श्राप देनेवाला [को०] ।

शापमुक्त—वि० [सं०] जिसका शाप छूट गया हो । जिसके ऊपर से शाप का बुरा प्रभाव हट गया हो ।

शापमुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शाप से छुटकारा । शापनिवृत्ति [को०] ।

शापमोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शापनिवृत्ति' [को०] ।

शापयंत्रित—वि० [सं० शापयन्त्रित] शाप के कारण नियंत्रित या बँधा हुआ (को०) ।

शापांत—वि० [सं० शापान्त] शाप का अंत या परिसमाप्ति [को०] ।

शापांबु—संज्ञा पुं० [सं० शापाम्बु] वह जल जिसे हाथ में लेकर शाप दिया जाय ।

शापावसान—संज्ञा पुं० [सं०] शाप की निवृत्ति या अंत [को०] ।

शापास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह व्यक्ति जिसके पास अस्त्रों के स्थान पर शाप ही हो । २. एक मुनि का नाम । दुर्वासा

शापित—वि० [सं०] १. जिसे शाप दिया गया हो । शापग्रस्त । २. शपथयुक्त । सौगंध से बँधा हुआ । जिसने शपथ ले ली हो (को०) ।

शापोत्सर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] शाप का उच्चारण । शाप छोड़ना । शाप देना ।

शापोद्धार—संज्ञा पुं० [सं०] शाप या उसके प्रभाव से छुटकारा । शापमुक्ति ।

शाफरिक—संज्ञा पुं० [सं०] मछुआ । धीवर ।

शाफी—वि० [अ० शाफ़ी] १. रोगमुक्त करनेवाला । २. भरोसा या सांत्वना देनेवाला [को०] ।

शाफेय—संज्ञा पुं० [सं०] यजुर्वेद की एक शाखा ।

शाबर^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाबरी] १ दुष्ट । कपटी । २. असभ्य । जंगली (को०) । ३. नीच कर्माना । अधम (को०) ।

शाबर^{2}—संज्ञा पुं० १. बुराई । हानि । दुःख । २. लोध्र वृक्ष । लोध का पेड़ । ३. ताँबा । ४. अंधकार । ५. एक प्रकार का चदन । ६. अपराध । दोष । पाप (को०) । ७. दुष्टता (को०) । ८. जैमिनिमीमांसा सूत्रों के एक भाष्यकार का नाम (को०) ।

शाबर भाष्य—संज्ञा पुं० [सं०] मीमांसासूत्र पर प्रसिद्ध भाष्य या व्याख्या जिसके कर्ता शबर स्वामी थे ।

शाबरभेदाक्ष, शाबरभेदाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] ताँबा ।

शाबरिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की जोंक ।

शाबरी—संज्ञा पुं० [सं०] शबरों की भाषा । एक प्रकार की प्राकृत भाषा ।

शाबल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. कई रंगों का मेल । शबलता । कबरापन । चितकबरापन । २. एक साथ भिन्न भिन्न कई वस्तुओं का मेल ।

शाबस्त—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार राजा युवनाश्व का एक पुत्र जिसने शाबस्ती या श्रावस्ती नगरी बसाई थी ।

शाबस्ती—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रावस्ती' ।

शाबान—संज्ञा पुं० [अ०] मुसलमानों का आठवाँ महीना [को०] ।

शाबाश—अव्य० [फ़ा०] 'शादबाश' का संक्षिप्त रूप । एक प्रशंसासूचक शब्द । खुश रहो । वाह वाह । धन्य हो । क्या कहना ।

शाबाशी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] कोई कार्य करने पर प्रशंसा । वाहवाही । साधुवाद ।

क्रि० प्र०—देना ।—पाना ।—मिलना ।

शाब्द^{1}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाब्दी] १. शब्द संबंधी । शब्द का । २. शब्द विशेष पर निर्भर । ३. शब्दमय (को०) । मौखिक । वाचाकथित या उक्त (को०) । ५. मुखर । ध्वनियुक्त (को०) ।

शाब्द^{2}—संज्ञा पुं० शब्दशास्त्री । वैयाकरण ।

शाब्दबोध—संज्ञा पुं० [सं०] शब्दों के प्रयोग द्वारा अर्थ का ज्ञान । वाक्य के तात्पर्य का ज्ञान ।

शाब्द व्यंजना—संज्ञा स्त्री० [सं० शाब्दव्यञ्जना] दे० 'शाब्दी व्यंजना' ।

शाब्दिक^{1}—वि० [सं०] १. शब्द संबंधी । शब्द का । २. मौखिक । जबानी (को०) । ३. निनादी (को०) ।

शाब्दिक^{2}—संज्ञा पुं० १. शब्दशास्त्र का जाननेवाला । वैयाकरण । ३. अभिधान बनानेवाला । शब्दकोश का निर्माता ।

शाब्दी—वि० स्त्री० [सं०] १. शब्द संबंधिनी । २. केवल शब्दविशेष पर निर्भर रहनेवाली । जैसे,—शाब्दी व्यंजना ।

शाब्दी व्यंजना—संज्ञा स्त्री० [सं० शाब्दी व्यञ्जना] साहित्य में व्यंजना के दो भेदों में से एक । वह व्यंजना जो शब्दविशेष के प्रयोग पर ही निर्भर हो । अर्थात् उसका पर्यायवाची शब्द रखने पर न रह जाय । आर्थी व्यंजना का उलटा ।

शाम^1—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] सूर्य अस्त होने का समय । रात्रि और दिवस के मिलने का समय । साँझ । सायम् । संध्या ।

मुहा०—शाम फूलना = संध्या समय पश्चिम की ललाई का प्रकट होना ।

यौ०—शामगाह = संध्याकाल ।

शाम(पु)^2—वि०, संज्ञा पुं० [सं० श्याम] दे० 'श्याम' ।

यौ० —शामकरण ।

शाम^3—वि० [सं०] शम संबंधी । शम का ।

शाम^4—संज्ञा पुं० [सं० शामन्] साम गान ।

शाम^5—संज्ञा स्त्री० [देश०] लोहे, पीतल आदि धातु का बना हुआ वह छल्ला जो हाथ में ली जानेवाली लकड़ियों या छड़ियों के निचले भाग में अथवा औजारों के दस्ते में लकड़ी को घिसने या छीजने से बचाने के लिये लगाया जाता है ।

क्रि० प्र०—जड़ना ।—लगाना ।

शाम^6—संज्ञा पुं० एक प्रसिद्ध प्राचीन देश जो अरब के उत्तर में है । कहते हैं, यह देश हजरत नूह के पुत्र शाम ने बसाया था । इसकी राजधानी का नाम दमिश्क है । आजकल यह प्रदेश सीरिया कहलाता है ।

शामकरण(पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्यामकर्ण] वह घोड़ा जिसका कान श्याम रंग का हो ।

शामत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. बदकिस्मती । दुर्भाग्य । २. विपत्ति । आफत । ३. दुर्दशा । दुरवस्था ।

क्रि० प्र०—आना ।—में पड़ना या फँसना ।

मुहा०—शामत का घेरा या मारा = जिसकी दुर्दशा का समय आया हुआ हो । जिसकी दुर्दशा होने को हो । शामत की मार = अभाग्य । बदकिस्मती । कमबख्ती । शामत सवार होना या सिर पर खेलना = शामत आना । दुर्दशा का समय आना ।

शामतजदा—वि० [अ० शामत + फ़ा० ज़दह्] कमबख्त । बदनसीब । अभागा ।

शामती—वि० [अ० शामत + फ़ा० ई (प्रत्य०)] जिसकी शामत आई हो । जिसकी दुर्दशा होने को हो । शामत का मारा ।

शामन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शमन । २. शांति । ३. मारण । हत्या करना । ४. यमराज (को०) । ५. समाप्ति । अंत (को०) ।

शामनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दक्षिण दिशा जिसके अधिपति यम माने गए हैं । २. शांति । स्तब्धता । ३. अंत । समाप्ति । ४. वध । हत्या ।

शामा^{1}—संज्ञा स्त्री० [?] एक प्रकार का पौधा, जिसकी पत्तियाँ और जड़ कोढ़ रोग के लिये लाभदायक मानी जाती हैं ।

शामा^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यामा] दे० 'श्यामा' ।

शामित्र^1—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. यज्ञ में मांस पकाने के निमित्त प्रज्वलित की हुई अग्नि । २. वह स्थान जहाँ ऐसी अग्नि प्रज्वलित की जाय । ३. यज्ञ । ४. यज्ञपात्र । ५. यज्ञ के लिये पशुओं की हत्या । ६. वधस्थान । बलि करने की जगह (को०) । ७. बलि के निमित्त यूपकाष्ठ में पशुबंधन (को०) । ८. घातक प्रहार या चोट (को०) ।

शामित्र^2—वि० यज्ञबलि करनेवाले से संबद्ध (को०) ।

शामियाना—संज्ञा पुं० [फ़ा० शामियानह्] एक प्रकार का बड़ा तंबू । उ०—खाकसारी ने दिखाया बाद मुर्दन भी उरूज । आसमाँ तुरबत पे मेरे शामियाना हो गया ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ८५० ।

विशेष—इसमें प्रायः ऊपर की ओर लंबा चौड़ा कपड़ा होता है जो बाँसों पर तना रहता है । इसके नीचे चारों ओर प्रायः खुला ही रहता है । पर कभी कभी इसके चारो ओर कनात भी खड़ी की जाती है ।

क्रि प्र०—खड़ा करना ।—गाड़ना ।—लगाना ।

शामिल—वि० [फ़ा०] १. जो साथ में हो । मिला हुआ । सम्मिलित । जैसे,—(क) ये कागज मिसिल में शामिल कर दो । (ख) अब तो तुम भी उन्हीं लोगों में शामिल हो गए । २. भागीदार । साझी (को०) । ३. मददगार । सहकारी (को०) । ४. एकत्र । इकट्ठा (को०) ।

यौ०—शामिल हाल ।

शामिल हाल—वि० [अ० शामिल + हाल] जो दुःख सुख आदि सब अवस्थाओं में साथ रहे । साथी । शरीक ।

शामिलात—संज्ञा स्त्री० [अ० शामिल] १. हिस्सेदारी । साझा । शराकत । दे० 'शामिल' । २. धन संपत्ति, जायदाद आदि जो साझे की हो ।

शामिली—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्रुवा (को०) ।

शामी^{1}—संज्ञा स्त्री० [देश०] लोहे या पीतल का वह छल्ला जो लकड़ियों आदि के नीचे के भाग में अथवा औजारों के दस्ते के सिरे पर उसकी रक्षा के लिये लगाया जाता है, शाम ।

क्रि० प्र०—जड़ना । लगाना ।

शामी^{2}—वि० [अ० शाम (देश)] शाम देश का । शाम देश संबंधी । जैसे,—शामी कबाब ।

शामी कबाब—संज्ञा पुं० [हिं० शामी + कबाब] एक प्रकार का कबाब जो मांस को मसाले के साथ भूनने के उपरांत पीसकर गोलियों या टिकियों के रूप में बनाया जाता है ।

शामीन—संज्ञा पुं० [सं०] १. भस्म । २. यज्ञ करने का एक उपकरण । स्रुवा (को०) ।

शामील—संज्ञा पुं० [सं०] भस्म । खाक । राख ।

शामीली—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्रक् । माला ।

शामुल्य—संज्ञा पुं० [सं०] गले में पहनने का कोई ऊनी कपड़ा ।

शामूल—संज्ञा पुं० [सं०] ऊनी कपड़ा ।

शामेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

शाम्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शम का भाव । २. बंधुत्व । भाई चारा । ३. शांति ।

शाम्य^{2}—वि० शमसंबंधी [को०] ।

शाम्यप्रास—संज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ की बलि ।

शाय—संज्ञा पुं० [सं०] शयन करना । लेटना । सोना [को०] ।

शायक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाण । तीर । शर । २. खड्ग । तलवार ।

शायक^{2}—वि० [अ० शायक़] [बहु० शायकीन] १. शौक करने या रखनेवाला । शौक़ीन । २. ख्वाहिशमंद । इच्छुक । आकांक्षी ।

शायद—अव्य० [फ़ा०] कदाचन । कदाचित् । संभव है । स्यात् । जैसे—शायद वह आज आएगा ।

शायर—संज्ञा पुं० [अ०] [संज्ञा स्त्री० शायरा] वह जो शेर आदि बनाता हो । काव्य करनेवाला । कवि ।

शायराना—वि० [अ० शायर + फ़ा० आनह्] १. कवियों जैसा । कवियों के लहजेवाला । २. कवित्वमय । अतिरंजित ।

शायरी—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. कविता करने का कार्य या भाव । २. काव्य । कविता । ३. अतिरंजना ।

शायाँ—वि० [अ०] योग्य । तुल्य । मुनासिब [को०] ।

शाया—वि० [अ०] १. प्रकट । जाहिर । २. प्रकाशित । छपा हुआ ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

शायिक—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शायिका] वह जो शय्यारचना का जानकार हो । वह जो शय्या द्वारा अपनी जीविका का निर्वाह करता हो ।

शायिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नींद । निद्रा । २. लेटने की क्रिया । शयन [को०] ।

शायित—वि० [सं०] [स्त्री० शायिता] १. सुलाया या लेटाया हुआ । उ०—अशनिपात से शायित उन्नत शत शत वीर, क्षत विक्षत हत अचल शरीर ।—अपरा, पृ० २१ । २. गिरा हुआ । पतित । ३. सोया हुआ । लेटा हुआ । उ०—शायित जन जगे सकल । कला के खुले उत्पल ।—बेला, पृ० ७२ ।

शायिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शयन । सोना ।

शायिनी—वि० स्त्री० [सं० शायिन् = शायी का स्त्री०] शयन करनेवाली । उ०—वह नहीं, पर्यंक, पिय की अंक की जो शायिनी थी ।—मिट्टी०, पृ० १३४ ।

शायी—वि० [सं० शायिन्] [वि० स्त्री० शायिनी] शयन करनेवाला । सोनेवाला ।

शारंग—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्ग] दे० 'सारंग' ।

शारंगक—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्गक] एक प्रकार का पक्षी ।

शारंगधनुष—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्ग धनुष] शारंग नामक धनुष से सुशोभित, अर्थात् विष्णु । उ०—विष्णु के हाथ में गदा कौमदी और चक्र सुदर्शन और शारंगधनुष और शंख आदि रहता है । कबीर मं०, पृ० ४१ । २. कृष्ण ।

शारंगपाणि—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्गपाणि] १. हाथ में शारंग नामक धनुष धारण करनेवाले विष्णु । २. कृष्ण । ३. राम ।

शारंगपानी पु—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्गपाणि] दे० 'शारंगपाणि ।

शारंगभृत—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्गभृत्] १. शारंग नामक धनुष धारण करनेवाले, विष्णु । २. कृष्ण ।

शारंगवत—संज्ञा पुं० [सं० शारङ्गवत] कुरुवर्ष नामक देश ।

शारंगष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं० शारङ्गष्ठा] १. काकजंघा । २. मकोय । ३. गुंजा । चोंटली । करजनी ।

शारंगाष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं० शारङ्गाष्ठा] १. मकोय । २. कठकरंज । लताकरंज ।

शारंगी—संज्ञा स्त्री० [सं० शारङ्गी] सारंगी नामक बाजा । विशेष दे० 'सारंगी' ।

शारंगेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं० शारङ्गेष्टा] दे० 'शारंगाष्ठा' ।

शारंबर—संज्ञा पुं० [सं० शारम्बर] राजतरंगिणी के अनुसार एक प्राचीन जनपद का नाम ।

शार^{1}—वि० [सं०] १. चितकबरा । कई रंगों का । २. पीला । ३. नीले, पीले और हरे रंग का ।

शार^{2}—संज्ञा पुं० १. एक प्रकार का पासा । अक्ष । २. वायु । हवा । ३. हिंसा । ४. चितकबरा रंग (को०) । ५. हरा रंग (को०) ।

शारणिक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शरण में आए हुए की रक्षा करता हो । रक्षक ।

शारणिक^{2}—वि० शरण चाहनेवाला । रक्षा चाहनेवाला । शरणार्थी [को०] ।

शारतल्पिक—संज्ञा पुं० [सं०] बाणों की शय्या पर सोनेवाले भीष्म पितामह [को०] ।

शारद^{1}—वि० [सं०] १. शरद्काल संबंधी । शरद्काल का । २. नवीन । नया । ३. लज्जावान । शालीन । ४. वार्षिक । वर्ष से संबंध रखनेवाला (को०) । ५. अभिनव । ६. योग्य । चतुर (को०) ।

शारद^{2}—संज्ञा पुं० १. वर्ष । साल । २. मेघ । बादल । ३. सफेद । कमल । ४. मौलसिरी का वृक्ष । कास तृण । ६. हरी मूंग । ७. एक प्रकार का रोग । ८. शरत् का समय (को०) । ९. शरत् की धूप (को०) । १०. शरत्कालीन अन्न (को०) ।

यौ०—शारदचंद्र = शरद् ऋतु का निर्मल चाँद । शारदज्योत्सना = शरत्काल की शुभ्र चाँदनी । शारदनिशा = शरद् ऋतु की रात । शारदपूर्णिमा = शरत्पूर्णिमा । आश्विन महीने की पूनो । शारदमेघ = जलरहित होने से निर्मल और श्वेत बादल । शारदयामिनी । शारदरात्रि, शारदशर्वरी = शरद् ऋतु की आह्लादक रात्रि ।

शारदक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कुश [को०] ।

शारदांबा—संज्ञा स्त्री० [सं० शारदाम्बा] सरस्वती ।

शारदा--संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की वीणा। २. ब्राह्मी। ३. अनंतमूल। शारिवा। ४. सरस्वती। ५. दुर्गा। ६. प्राचीन काल की एक प्रकार की लिपि।

विशेष—कश्मीर देश की अधिष्ठात्री देवी शारदा मानी जाती हैं जिससे वह देश 'शारदादेश' या 'शारदमंडल' कहलाता है और इसी से वहाँ की लिपि को 'शारदालिपि' कहते हैं। पीछे से उसको (कश्मीर को) 'देवदेश' भी कहते थे। मूल शारदा लिपि ईस्वी सन् की दसवीं शताब्दी के आस पास कुटिल लिपि से निकली है और उसका प्रचार कश्मीर तथा पंजाब में रहा। उस में परिवर्तन होकर वर्तमान शारदा लिपि बनी जिसका प्रचार अब कश्मीर में बहुत कम रह गया है। उसका स्थान बहुधा नागरी, गुरुमुखी या टाकरी ने ले लिया है।

शारदिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरद ऋतु में होनेवाला ज्वर। २. रोग। बीमारी। ३. शरद् ऋतु में होनेवाला अथवा वार्षिक श्राद्ध। ४. शरद् ऋतु की धूप (को०)।

शारदी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलपीपल। २. छतिवन। सप्तपर्ण। ३. आश्विन मास की पूर्णिमा। कोजागर पूर्णिमा। ४. कार्तिक मास की पूर्णिमा (को०)।

शारदी^{2}—वि० शरद्काल का। शरद् काल संबंधी।

शारदी^{3}—संज्ञा पुं० [सं० शारदिन्] १. अपराजिता। कोयल। २. सफेद। कमल। ३. अन्न या फल आदि।

शारदीय—वि० [सं०] शरद्काल का। शरद् ऋतु संबंधी।

शारदीयपूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शारदीय महापूजा। शरद् ऋतु में नवरात्र की दुर्गापूजा। उ०—नहीं तो वे स्वदेशाचारानुसार प्राय: शारदीय पूजा ही में हँस लिया करते थे।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २५७।

शारदीय पूर्णिमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आश्विन पूर्णिमा। कोजागर पूर्णिमा।

शारदीय महापूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरत्काल में होनेवाली दुर्गा की पूजा। नवरात्र की दुर्गापूजा।

शारद्य^1—वि० [सं०] शरद्काल का। शरद् ऋतु संबंधी।

शारद्य^2—संज्ञा पुं० शरत् ऋतु में होनेवाला अन्न [को०]।

शारद्वत--संज्ञा पुं० [सं०] १. कृपाचार्य का एक नाम। २. गौतम [को०]।

शारद्वती--संज्ञा स्त्री० [सं०] कृपाचार्य की पत्नी। कृपी [को०]।

शारि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पासा आदि खेलने की गोट। २. शतरंज का मुहरा (को०)। ३. छोटी गोल गेंद (को०)।

शारि^{2}—संज्ञा स्त्री० १. मैना। २. कपट। छल। धोखा। ३. एक प्रकार का गीत। ४. हाथी की झूल (को०)।

शारिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मैना नाम की चिड़िया। २. शतरंज या चौपड़ खेलने की क्रिया। ३. सारंगी आदि बजाने की कमानी। ४. वीणा या सारंगी आदि बजाने की क्रिया। ५. दुर्गा देवी का एक नाम। शतरंज की गोटी (को०)। ६. कोण। मिजराब (को०)।

शारिकाकवच—संज्ञा पुं० [सं०] दुर्गा का एक कवच जो रुद्रयामल तंत्र में है।

शारित—वि० [सं०] रंगीन। चित्रविचित्र।

शारिपट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] शतरंज या चौसर आदि खेलने की बिसात।

शारिपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] गौतम बुद्ध के एक प्रधान शिष्य [को०]।

शारिफल, शारिफलक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शारिपट्ट'।

शरिवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अनंतमूल। सालसा। दुरालभा। २. जवासा। धमासा।

शारिशृंग—संज्ञा पुं० [सं० शारिशृङ्ग] जुआ खेलने का एक प्रकार का पासा या गोट।

शारी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुशा नाम की घास। २. एक प्रकार का पक्षी। ३. मूँज। काँडा।

शारी^{2}—संज्ञा पुं० १. शतरंज की गोट। २ गेंद।

शारीर^1—वि० [सं०] १. शरीर संबंधी। शरीर का। २. शरीर से उत्पन्न।

शारीर^2—संज्ञा पुं० १. शरीर को होनेवाले दु:ख जो आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक, तीन प्रकार के होते हैं। २. वृष। साँड़। ३. जीवात्मा। आत्मा (को०)। ४. मल (को०)। ५. शरीररचना (को०)। ६. एक प्रकार की ओषधि (को०)।

शारीरक^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शारीरकी] १. शरीर से उत्पन्न। २. शरीर स संबंधित (को०)। ३. मूर्तिमान्। शरीरधारी (को०)।

शारीरक^2—संज्ञा पुं० १. मूर्तिमान् जीव। २. दे० 'शारीरक भाष्य'।

शारीरक भाष्य—संज्ञा पुं० [सं०] शंकराचार्य का किया हुआ ब्रह्मसूत्र का भाष्य।

शारीरक सूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वेदव्यास का बनाया हुआ वेदांतसूत्र।

शारीरकीय—वि० [सं०] मूर्तिमान। शरीरधारी [को०]

शारीरतत्व—संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें शरीर के तत्वों और रचना आदि का विवेचन होता है।

शारीर विद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शारीर विधान'।

शारीर विधान—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह शास्त्र जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि जीव किस प्रकार उत्पन्न होते और बढ़ते हैं। २. वह शास्त्र जिसमें जीवों के शरीर के भिन्न भिन्न अंगों और उनके कार्यों का विवेचन होता है।

शारीर व्रण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग।

विशेष—यह वात, पित्त कफ और रक्त से उत्पन्न होता है। परंतु रक्त के संबंध से द्विदोषज और त्रिदोषज होने के कारण आठ प्रकार का हो जाता है—(१) वातव्रण, (२) पित्तव्रण, (३) कफव्रण, (४) रक्तव्रण, (५) वातपित्तज व्रण, (६) वातकफज व्रण, (७) कफपित्तज व्रण, और (८) संनिपातज व्रण।

शारीर शास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शारीर विधान'।

शारीरिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शारीरिकी] १. शरीर संबंधी। कालेवरिक। कायिक। दैहिक। जिस्मानी। जैसे, शारीरिक कष्ट। २. आध्यात्मिक (को०)।

शारुक—वि० [सं०] १. हत्या या नाश करनेवाला। २. कष्ट देनेवाला। दुष्ट।

शारुँ(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शारि] मैना। उ०—वो शारुँ के मूँ ते सुने यो बैन। नसीहत पर उसकी गजब में हों ऐन। —दक्खिनी०, पृ० ८४।

शार्क^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चीनी। शर्करा। २. एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शार्क^{2}—संज्ञा पुं० [अं०] एक विशालकाय मछली।

विशेष—यह शिकारी मछली है जो समुद्रों में रहती है। इसका शिकार करना बहुत खतरनाक होता है। यह समुद्री जीवों को खाती है। कभी कभी छोटी मोटी नावों को उलट देती है। इसके शरीर का तेल दवा के काम आता है।

शार्कक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दूध का फेन। दुग्धफेन। मलाई। २. चीनी का ढेला। शर्करापिंड। ३. गोश्त का टुकड़ा।

शार्कर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. दूध का फेन। २. दूध की पपड़ी या मलाई। ३. लोध्रवृक्ष। ४. कँकरीली और पथरीली जगह।

शार्कर^{2}— वि० [वि० स्त्री० शार्करी] १. कँकरीला। २. शक्कर या चीनी का बना हुआ।

शार्करक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह स्थान जो कंकरों और पत्थरों से भरा हो। कँकरीली या पथरीली जगह। २. वह स्थान जहाँ चीनी बहुत होती हो।

शार्करक^{2}—वि० कँकरीला। पथरीला।

शार्कर मद्य—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का मद्य जो चीनी और धौ से बनाया जाता था।

शार्करिक—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'शार्करक'।

शार्करी—वि० [सं० शार्करिन्] मधुमेह या पथरी रोग से ग्रस्त [को०]।

शार्करीधान—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक देश जो उत्तर दिशा में था।

शार्करीय—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'शार्करक'।

शार्गाल—वि० [सं०] शृगाल संबंधी। शृगाल का [को०]।

शार्ङ्ग^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. धनुष। कमान। २. विष्णु का धनुष। विष्णु के हाथ में रहनेवाला धनुष। ३. अदरक। आदी। ४. एक प्रकार का साम। ५. शार्ङ्गक। पक्षी। चिड़िया (को०)।

शार्ङ्ग^{2}—वि० १. शृंग संबंधी। २. शृंग का। शृंगनिर्मित। २. धनुर्धर। धनुष धारण करनेवाला (को०)।

शार्ङ्गक—संज्ञा पुं० [सं०] पक्षी। चिड़िया।

शार्ङ्गधन्वा—संज्ञा पुं० [शार्ङ्गधन्वन्] १. विष्णु। २. श्रीकृष्ण। ३. वह जो धनुष धारण करता हो। कमनैत।

शार्ङ्गधर— संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. श्रीकृष्ण। ३. कमनैत।

शार्ङ्गपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. श्रीकृष्ण ३. वह जो धनुष धारण करता हो। कमनैत।

शार्ङ्गभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शार्ङ्गपाणि'।

शार्ङ्गवैदिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का स्थावर विष जो देखने में सोंठ के समान होता है।

शार्ङ्गष्टा -संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकजंघा। २. घुँघची।

शार्ङ्गष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. महाकरंज। २. लताकरंज।

शार्ङ्गायुध—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. श्रीकृष्ण। ३. वह जो धनुष धारण करता हो। कमनैत।

शार्ङ्गिक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शार्ङ्गक'।

शार्ङ्गी—संज्ञा स्त्री० [सं० शार्ङ्गिन्] १. विष्णु। २. श्रीकृष्ण ३. धनुर्धारी। कमनैत।

शार्टकट—वि० [अं०] संक्षिप्त या छोटा रास्ता। उ०—रास्ते तो कई हो सकते हैं, और शार्टकट होते नहीं।—नदी०, पृ० ३८।

शार्दूल^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चीता। २. व्याघ्र। बाघ। ३. राक्षस। ४. शरभ नामक जंतु। ५. एक प्रकार का पक्षी। ६. यजुर्वेद की एक शाखा। ७. दोहे का एक भेद जिसमें ६ गुरु और ३६ लघु मात्राएँ होती हैं। ८. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ९. सिह।

शार्दूल^{2}—वि०। सर्वश्रेष्ठ। सर्वोत्तम।

विशेष—इस अर्थ में इसका प्रयोग केवल यौगिक शब्द बनाने में उनके अंत में होता है। जैसे,—नरशार्दूल।

शार्दूलकंद—संज्ञा पुं० [सं० शार्दूलकन्द] जंगली प्याज।

शार्दूलकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] त्रिशंकु के एक पुत्र का नाम।

शार्दूलचर्म—संज्ञा पुं० [सं० शार्दूलचर्मन्] बाघ का चमड़ा। व्याघ्रचर्म [को०]।

यौ०—शार्दूलचर्मांबर = व्याघ्रचर्म धारण करनेवाले, शिव।

शार्दूलज—संज्ञा पुं० [सं०] व्याघ्रनख नामक गंधद्रव्य।

शार्दूलललित—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वर्णवृत्त। इसका पद अठारह अक्षरों का होता है, और उनका क्रम इस प्रकार है—म+स+ज+स+त+स। इसका दूसरा नाम शार्दूललसित भी है।

शार्दूललसित—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शार्दूलललित'।

शार्दूलवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] जैनियों के अनुसार पचीस पूर्व जिनों में से एक जिन का नाम।

शार्दूलविक्रीडित—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का वर्णवृत्त। इसका चरण उन्नीस अक्षरों का होता है, और उनका क्रम इस प्रकार है—म+स+ज+स+त+त+एक गुरु। २. बाघ की क्रीड़ा (को०)।

शार्मण्य—संज्ञा पुं० [सं०] जर्मनी देश का नाम [को०]।

यौ०—शार्मण्यदेश = जर्मनी।

शार्यात—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैदिक काल के एक प्राचीन राजर्षि का नाम। २. एक प्रकार का साम।

शार्व—वि० [सं०] शर्व अर्थात् शिवसंबंधी [को०]।

शार्वदिक्—संज्ञा स्त्री० [सं० शार्वदिश्] पूर्व दिशा [को०]।

शार्वर¹—संज्ञा पुं० [सं०] बहुत अधिक अंधकार। अंधतमस।

शार्वर²—वि० १. रात का। रात्रि से संबंध रखनेवाला। रात्रिकालीन। २. घातक। हिंसक। दुर्मति [को०]।

शार्वरिक—वि० [सं०] रात्रि संबंधी। रात का।

शार्वरी¹ संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात। रात्रि। २. लोध।

शार्वरी²—संज्ञा पुं० [सं० शार्वरिन्] बृहस्पति के साठ संवत्सरों में से चौंतीसवाँ संवत्सर।

शार्वरीक—वि० [सं०] रात्रि संबंधित [को०]

शालंकटंकट—संज्ञा पुं० [सं० शालङ्कटङ्कट] सुकेशी राक्षस का एक नाम जो वामनपुराण के अनुसार विद्युत्केशी और शालंकटंकटा का पुत्र था।

शालंकायन—संज्ञा पुं० [सं० शालङ्कायन] १. विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम। २. नंदी।

यौ०—शालंकायन जीवसू = व्यास की माता। सत्यवती।

शालंकायनजा—संज्ञा स्त्री० [सं० शालङ्कायनजा] शालंकायन की पुत्री सत्यवती जो व्यास की माता थी।

शालंकायनि—संज्ञा पुं० [सं० शालङ्कायनि] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शालंकि—संज्ञा पुं० [सं० शालङ्कि] पाणिनि ऋषि का नाम।

शालंकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शालङ्की] १. गुड़िया। २. कठपुतली।

शाल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का प्रसिद्ध वृक्ष। सखुआ। साखू। सालू।

विशेष—यह हिमालय पर्वत पर सतलज से आसाम तक, मध्य भारत के पूरब प्रांत में पश्चिम बंगाल की पहाड़ियों पर और छोटा नागपुर के जंगलों में उत्पन्न होता है। इसका वृक्ष बहुत बड़ा और विशाल होता है। छोटे वृक्षों की छाल प्रायः दो इंच मोटी खुरदरी, काले रंग की और रेशेदार होती है। कच्ची लकड़ी सफेद रंग की और जल्दी बिगड़नेवाली होती है। सार भाग जब ताजा होता है तब कुछ पीलापन लिए हुए भूरे रंग का होता है परंतु सूखने पर काला हो जाता है। पत्ते चिकने, चमकीले, अंडाकार, ६ से १० इंच तक लंबे और ४ से ६ इंच तक चौड़े होते हैं। डालियों के अंत में फूलों के गुच्छे लगते हैं। पुष्पदल लंबे और हलके पीले रंग के आते हैं; और किंचित् अंडाकार तथा अनीदार होते हैं। फल गोल और आध इंच लंबा होता है। वसंत में यह फूलता है और वर्षा के प्रारंभ में इसके फल पक जाते हैं। इसकी लकड़ी मकान आदि बनाने में अधिकता से काम में आती है। इससे एक प्रकार का लाल रंग निकलता है। इसके बीजों का तेल निकालकर जलाने के काम में लाया जाता है। दुर्भिक्ष में फलों का आटा खाने के काम में आता है। यह दो प्रकार का होता है—एक बड़ा शाल और दूसरा पीतशाल या विजयसार। वैद्यक के अनुसार यह चरपरा, कड़वा, रूखा, स्निग्ध, गरम, कसैला, कांतिजनक तथा कफ, पित्त, घाव, पसीना, कृमिरोग, योनिरोग, प्रमेह, कुष्ठ, विस्फोटक आदि रोगों को दूर करनेवाला है। इसके पत्ते और गोंद प्रायः ओषधि के काम में आते हैं।

पर्या०—साल। अश्वकर्ण। शंकुवृक्ष। लतातरु। यक्षधूप। आदि।

२. एक प्रकार की मछली। ३. वृक्ष। पेड़। ४. एक नदी का नाम। ५. वृक के एक पुत्र का नाम। ६. राजा शालिवाहन का एक नाम। ७. राल। धूना। ८. घेरा। बाड़ा। बाड़ (को०)।

शाल²—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] एक प्रकार की ऊनी या रेशमी चादर जिसके किनारे पर प्रायः बेल बूटे आदि बने होते हैं। दुशाला।

यौ०—शालदुशाला। शालदोज। शालबाफ।

शाल(पु)³—संज्ञा स्त्री० [सं० शाला] घर। कक्ष। कमरा। उ०—ऊँचे मंदिर शाल रसोई। एक घरी पुनि रहन न होई।—संत रवि०, पृ० १३४।

शाल⁴—संज्ञा स्त्री० [सं० शल्य] एक प्रकार की बर्छी।

शालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पटुआ। नाड़ी शाक। २. मसखरा। दिल्लगीबाज। भाँड़। ३. एक प्रकार का राग [को०]।

शालकटंकट—संज्ञा पुं० [सं० शालकटङ्कट] महाभारत के अनुसार एक राक्षस का नाम जिसे घटोत्कच ने मार डाला था।

शालकल्याणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का साग जो चरक के अनुसार भारी, रूखा मधुर, शीतवीर्य और पुरीषभेदक होता है।

शालग्राम—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु की एक प्रकार की मूर्ति जो पत्थर की होती है और नारायणी नदी में पाई जाती है।

विशेष—यह मूर्ति प्रायः पत्थर की गोलियों या बटियों आदि के रूप में होती है और उसपर चक्र का चिह्न बना होता है जिसे लोग साधारण बोलचाल की भाषा में जनेऊ कहते हैं। जिस शिला पर यह चिह्न नहीं होता वह पूजन के लिये उपयुक्त नहीं मानी जाती। लोग अन्य देवमूर्तियों की भाँति इसकी भी पहले प्रतिष्ठा करते हैं। और तब इसका पूजन करते हैं। अनेक पुराणों में इसकी पूजा का माहात्म्य मिलता है।

२. बड़ी गंडकी या नारायणी नदी के किनारे का एक गाँव।

विशेष—इस गाँव के समीप शाल के वृक्ष बहुत अधिकता से हैं। इस गाँव के पास ही नदी में शालग्राम शिलाएँ भी पाई जाती हैं। वैष्णव लोग इस गाँव को बहुत पवित्र मानते हैं।

शालग्रामगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जहाँ शालग्राम की मूर्तियाँ मिलती हैं।

शालज—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की मछली जिसे शाल भी कहते हैं। २. सर्ज रस। शाल वृक्ष का निर्यास।

शालदोज—संज्ञा पुं० [फ़ा० शालदोज़] वह जो शाल के किनारे पर बेल बूटे आदि बनाता है।

शालना‡—क्रि० अ० [सं० शल्य, हिं० साल से नामधातु] दे० 'सालना'। उ०—शाले करेजवा में तीर जी। —मैला०, पृ० ६६।

शालनिर्यास—संज्ञा पुं० [सं०] १. राल। धूना। २. शाल या सर्ज नाम का वृक्ष।

शालपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शालपर्णी'।

शालपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुरा नामक गंधद्रव्य। २. एकांगी नामक ओषधि। विशेष दे० 'एकांगी'।

शालपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरिवन नामक वृक्ष। विशेष दे० 'सरिवन'।

शालपोत—संज्ञा पुं० [सं०] शाल का नवीन पेड़ [को०]।

शालबाफ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शालबाफ़] १. वह जो शाल या दुशाले आदि बुनता हो। शाल बुननेवाला। २. एक प्रकार का रेशमी कपड़ा जो लाल रंग का होता है।

शालबाफी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शालबाफ़ी] दुशाले बुनने का काम। शालबाफ का काम।

शालभंजिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शालभञ्जिका] १. कठपुतली। २. वेश्या। रंडी।

शालभंजी—संज्ञा स्त्री० [सं० शालभञ्जी] कठपुतली।

शालभ[1]—संज्ञा पुं० [सं०] बिना सोचे विचारे उसी प्रकार आपत्ति में कूद पड़ना, जिस प्रकार पतंग आग या दीपक पर कूद पड़ता है।

शालभ[2]—वि० पतिगों के संबंध का। पतिगों या टिड्डियों का। शलभ संबंधी।

शालमत्स्य—संज्ञा पुं० [सं०] शिलिंद नामक मछली।

शालमर्कट, शालमर्कटक—संज्ञा पुं० [सं०] अनार का वृक्ष। दाड़िम।

शालयुग्म—संज्ञा पुं० [सं०] दोनों प्रकार के शाल अर्थात् सर्ज वृक्ष और विजयसार।

शालरस—संज्ञा पुं० [सं०] राल। धूना। करायल।

शालव—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक असुर का नाम जो कालवदन और शृगालवदन भी कहलाता है।

शालवानक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णुपुराण के अनुसार एक देश का नाम। २. इस देश का निवासी।

शालवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शालिवाहन'।

शालवेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] राल। धूना।

शालशाक—संज्ञा पुं० [सं०] पटुआ। नाड़ी शाक।

शालशृंग—संज्ञा पुं० [सं० शालशृङ्ग] दीवार का ऊपरी भाग। दीवार की चोटी।

शालसार—संज्ञा पुं० [सं०] १. हींग। हिंगु। २. राल। धूना। करायल। ३. साखू नामक वृक्ष। शाल। ४. वृक्ष। द्रुम। पेड़।

शालाकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शालाङ्की] पुतली। गुड़िया।

शालांचि—संज्ञा स्त्री० [सं० शालाञ्चि] शांचि या शांची नामक साग।

शाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. घर। गृह। मकान। २. जगह। स्थान। जैसे—पाठशाला, गौशाला। ३. शाखा। डाल। ४. इंद्रवज्रा और उपेंद्रवज्रा के योग से बननेवाले सोलह प्रकार के वृत्तों में से एक वृत्त। इसका तीसरा चरण उपेंद्रवज्रा का और शेष तीनों चरण इंद्रवज्रा के होते हैं। ५. भवन का एक अंश या भाग। गृह का कोई स्थान। गृहैकदेश। कक्ष। प्रकोष्ठ (को०)। ६. वृक्ष का तना (को०)।

शालाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. झाड़ झंखाड़। २. वह अग्नि जो झाड़ झंखाड़ जलाकर उत्पन्न की जाय। ३. पाणिनि का एक नाम (को०)।

शालाकर्म—संज्ञा पुं० [सं० शालकर्मन्] १. गृहनिर्माण। मकान बनाना। २. गृहकार्य। घरेलू काम।

शालाकी—संज्ञा पुं० [सं० शालाकिन्] १. वह जो अस्त्रचिकित्सा करता हो। अस्त्रवैद्य। जर्राह। २. नापित। नाऊ। हज्जाम। ३. भालाबरदार।

शालाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. आयुर्वेद के अंतर्गत आठ प्रकार के तंत्रों में से एक तंत्र जिसमें कान, आँख, नाक, जीभ, होंठ, मुँह आदि के रोगों और उनकी चिकित्सा का विवरण है। २. वह चिकित्सक जो आँख, नाक, कान, मुँह आदि के रोगों की चिकित्सा करता हो।

यौ०—शालाक्यतंत्र = दे० 'शालाक्य'। शालाक्य शास्त्र।

शालाक्यशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शालाक्य'।

शालाघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शालाजिर—संज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी की तश्तरी या प्याला आदि।

शालातुरीय—संज्ञा पुं० [सं०] पाणिनि ऋषि का एक नाम।

शालात्व—संज्ञा पुं० [सं०] शाला का भाव या धर्म।

शालानी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरिवन। शालपर्णी। विदारी।

शालामर्कटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बड़ी मूली। २. चाणक्यमूलक।

शालामुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का चावल। २. घर का दरवाजा या सामना। घर का अगला भाग।

शालामृग—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता। श्वान। कुक्कुर २. सियार। शृगाल। गीदड़।

शालार—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथी का नाखून। २. सीढ़ी। सोपान। ३. पक्षियों के रहने का पिंजड़ा। पिंजरा। ४. दीवार में लगा हुई खूँटी।

शालालुक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गंधद्रव्य। शलालु।

शालावती—संज्ञा स्त्री० [सं०] हरिवंश के अनुसार विश्वामित्र की कन्या का नाम।

शालावत्—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शालावृक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बंदर । बानर । कपि । २. कुत्ता । कुक्कुर । ३. लोमड़ी । शृगाल । ४. बिल्ली । विडाल । ५. हरिन । मृग । ६. भेड़िया (को०) ।

शालासद्—वि० [सं०] घर पर रहनेवाला [को०] ।

शालिंच—संज्ञा पुं० [सं० शालिञ्च] एक प्रकार का साग जिसे शालंच या शांचि साग भी कहते हैं । वैद्यक के अनुसार यह चरपरा दीपन, तथा प्लीहा, बवासीर और कफ पित्त का नाश करनेवाला माना गया है ।

शालिंची—संज्ञा स्त्री० [सं० शालिञ्ची] दे० 'शालिंच' ।

शालि—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैद्यक के अनुसार पाँच प्रकार के धानों में से एक प्रकार का धान जो हेमंत ऋतु में होता है । जड़हन ।

विशेष—वैद्यक में इसके रक्तशालि, कलम, पांडुक, शकुनाहृत, सुगंधक, कर्दमक, महाशालि, दूषक, पुष्पांडक, पुंडरीक, माहिष मस्तक, दीर्घशूक, कांचनक, हायन, लोध्रपुष्पक आदि अनेक भेद कहे गए है । यद्यपि वैद्यक के अनुसार भिन्न भिन्न देशों में उत्पन्न होनेवाले के भिन्न भिन्न गुण कहे गए हैं, तथापि साधारणतः सभी शालि धान्यों के गुण इस प्रकार माने गए हैं—मधुर, कषायरस, स्निग्ध, बलकारक, स्वरप्रसादक, शुक्रवर्धक, कुछ कुछ वायु और कफवर्धक, शीतवीर्य पित्तनाशक और मूत्रवधक ।

पर्या०—मधुर । रुच्य । व्रीहिश्रेष्ठ । नृपप्रिय । धान्योत्तम । कैदार । सुकुमारक ।

२. बासमती चावल । ३. काला जीरा । ४. गन्ना । पौंढा । ५. गंधबिलाव । गंधमार्जार । ६. पक्षी (को०) । ७. एक यज्ञ का नाम ।

शालिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शाला या भवन संबंधी हो । २. वह जो शाल वृक्ष संबंधी हो । ३. तंतुवाय । जुलाहा । ४. एक प्रकार का कर या महसूल । राजस्व । ५. कारीगरों का गाँव (को०) ।

शालिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विदारी कंद । २. मैना । शारिका । ३. शालपर्णी । ४. घर । मकान । ५. आधार । स्थान (को०) ।

शालिगोप—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शालिगोपी] वह जो खेतों की, विशेषतः धान के खेतों की, रखवाली करता हो ।

शालिचूर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] चावल का आँटा [को०] ।

शालिधान—संज्ञा पुं० [सं० शालिधान्य] बासमती चावल ।

विशेष—यह धान जेठ मास मे बोया जाता है और अगहन के अंत या पूस के आरंभ मे पककर तैयार हो जाता है । इसे अगहनी या हैमंतिक शालिधान्य भी कहते हैं । इसका पौधा मिट्टी तथा देश के अनुसार दो हाथ से लेकर तीन हाथ तक ऊँचा होता है । इसके पत्ते साधारण धान के समान होते हैं पर उनकी अपेक्षा कुछ कड़े और चिकने होते हैं । यह छोटा और बड़ा दो प्रकार का होता है । भेद इतना ही है कि छोटा पहले पकता है और बड़ा कुछ देर में । यह धान बिना कुटे हुए सफेद होता है और बहुत बारीक तथा सुंदर होता है । चावलों में यह सबसे उत्तम माना जाना है ।

शालिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ग्यारह अक्षरों का एक वृत्त । इसमें क्रम से एक यगण दो तगण और अंत में दो गुरु होते हैं । २. भसींड़ । पद्मकंद । ३. मेथी । ४. गृहिणी । गृहस्वामिनी (को०) ।

शालिपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक ओषधि । दे० 'एकांगी'—३ ।

शालिपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मेदा नामक अष्टवर्गीय ओषधि । २. पिठवन । पृश्निपर्णी । ३. बनउरदी । ४. शालपर्णी । सरिवन ।

शालिपिंड—संज्ञा पुं० [सं० शालिपिण्ड] महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम ।

शालिपिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्फटिक । बिल्लौर पत्थर । २. चावल का आटा (को०) ।

शालिभवन—संज्ञा पुं० [सं०] धान से भरा हुआ क्षेत्र ।

शालिराट्—संज्ञा पुं० [सं०] हंसराज चावल ।

शालिवाह—संज्ञा पुं० [सं०] चावल ढोनेवाला बैल [को०] ।

शालिवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] शक जाति का एक प्रसिद्ध राजा ।

विशेष—इसने शाक नामक संवत् चलाया था । टाड के राजस्थान के इतिहास में लिखा है कि यह गजनी के राजा गज का पुत्र था । पिता के मारे जाने पर यह पंजाब चला आया और उसपर अपना अधिकार जमा लिया । इसने शालिवाहन पुर नामक नगर भी बसाया था । इसकी राजधानी गोदावरी के किनारे प्रतिष्ठानपुर में थी । कहीं कहीं इसका नाम सातवाहन भी मिलता है । कथा सरित्सागर में लिखा है कि इसे सात नामक गुह्यक उठाकर ले चला करता था, इसी से इसका नाम सातवाहन पड़ा ।

शालिहोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. घोड़ा । २. घोड़ों और पशुओं आदि की चिकित्सा का शास्त्र । अश्ववैद्यक । ३. पुराणानुसार एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम । ४. अश्वचिकित्सा शास्त्र का लेखक । अश्ववैद्यक का प्रणेता (को०) ।

शालिहोत्री—संज्ञा पुं० [सं० शालिहोत्रिन्] १. वह जो पशुओं और विशेषतः घोड़ा आदि की चिकित्सा करता हो । अश्ववैद्य । २. अश्व । घोड़ा (को०) ।

शाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काला जीरा । २. मेथी । ३. शालपर्णी । ४. दुरालभा ।

शाली—वि० [सं० शालिन] १. (प्रायः समास में प्रयुक्त) युक्त । सहित । २. घरलू । गृह संबंधी । ३. अच्छे आचार व्यवहारवाला । शालीन । श्लाघ्य [को०] ।

शालीक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन आचार्य का नाम ।

शालीन^{1}—वि० [सं०] १. जो धृष्ट या उद्दंड न हो । विनीत । नम्र । २. जिसे लज्जा आती हो । सलज्ज । ३. सदृश । समान । तुल्य । ४. अच्छे आचार विचारवाला । ५. शाला संबंधी ।

शाला का। ६. संपत्तिशाली। धनवान। अमीर। ७. जो व्यवहार में कुशल हो। दक्ष। चतुर।

शालीन^{1}—संज्ञा पुं० १. गृहस्थ। २. विनय। शालीनता। नम्रता। ३. वह जो अयाचितवृत्ति हो [को०]।

शालीनता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शालीन होने का भाव या धर्म। २. लज्जा। लाज। शरम। ३. नम्रता। उ०—मैं रति की प्रतिकृति लज्जा हूँ, मैं शालीनता सिखाती हूँ। मतवाली सुंदरता पग में नूपुर सी लिपट मनाती हूँ।—कामायनी, पृ० १०३। ४. अधीनता।

शालीनत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौंफ। शतपुष्पा। २. सोवा नामक साग। ३. लज्जाशीलता। विनम्रता (को०)।

शालीना संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मिश्रेया' [को०]।

शालीनीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. नम्र या शिष्ट बनाना। २. दुर्वचन। निंदा। धिक्कार [को०]।

शालीय^{1}—वि० [सं०] शाला या घर संबंधी। २. शाल वृक्ष का।

शालीय^{2}—संज्ञा पुं० एक वैदिक आचार्य का नाम।

शालु—संज्ञा पुं० [सं०] १. भसींड़। कमलकंद। २. भटेउर या चोरक नामक ओषधि। ३. कषाय द्रव्य। ४. मेढ़क। भेक। ५. एक प्रकार का फल।

शालुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. भसींड़। पद्मकंद। २. जायफल।

शालुर—संज्ञा पुं० [सं०] मंडूक। भेक। मेढक [को०]।

शालूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंडूक। मेढक। २. जायफल। जातीफल। ३. दे० 'शालुक'। ४. भसींड़। ५. एक प्रकार का रोग।

शालूकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक तीर्थ का नाम।

शालूर—संज्ञा पुं० [सं०] भेक। मेढक।

शालूरक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कीटाणु जो अंतड़ियों में पीड़ा उत्पन्न करता है।

शालेय^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौंफ। मधुरिका। २. शालि धान का खेत। ३. मूली।

शालेय—वि० १. शाल संबंधी। शाल वृक्ष का। २. शाला संबंधी (को०)।

शालेया—संज्ञा स्त्री० [सं०] मेथी। मिश्रेया।

शालोत्तरीय—संज्ञा पुं० शालोत्तर जनपद के निवासी, पाणिनि [को०]।

शाल्मल—संज्ञा पुं० [सं०] १. शाल्मली वृक्ष। सेमल का पेड़। २. मोचरस। ३. एक द्वीप का नाम। विशेष दे० शाल्मलि—३। ४. एक नरक। विशेष दे० 'शाल्मलि'—४।

शाल्मलि—संज्ञा पुं० [सं०] शाल्मली वृक्ष। सेमल का पेड़। विशेष दे० 'सेमल'। २. पुराणानुसार एक द्वीप का नाम।

विशेष—यह क्रौंच द्वीप से दूना कहा गया है। यह भी कहा गया है कि इस द्वीप में शाल्मलि या सेमल के वृक्ष बहुत अधिकता से हैं और यह चारों ओर से ऊख के रस के समुद्र से घिरा हुआ है। इसमें श्वेत, लोहित, जीमूत, हरित, वैद्युत, मानस और सुप्रभ नामक सात वर्ष हैं जिनमें कुमुद, उन्नत, बलाहक, द्रोण, कंक, महिष और ककुद सात पर्वत तथा योनी, तोया, वितृष्णा, चंद्रा, शुक्लका, विमोचनी और निवृत्ति नाम की सात नदियाँ हैं।

३. पुराणानुसार एक नरक का नाम।

विशेष—कहते हैं, इसमें जीवों को शल्मलि वृक्ष के काँटे चुभाकर कष्ट पहुँचाया जाता है।

शाल्मलिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. रोहितक वृक्ष। रोहिड़ा। २. मामूली किस्म का शाल्मली का पेड़ (को०)।

शाल्मलिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सेमल का वृक्ष। शाल्मलि।

शाल्मलिपत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] सतिवन। सप्तपर्ण वृक्ष।

शाल्मलिस्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. गरुड़ का एक नाम। २. गीध। गृद्ध। [को०]।

शाल्मली^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शाल्मलि। सेमल। २. एक नरक का नाम। उ०—तिन कहँ नर्क शाल्मली डारैं। पाश बाँधि लटकात तरारं।—कबीर सा०, पृ० ४६७। ३. पाताल की एक नदी का नाम (को०)।

शाल्मली^{2}—संज्ञा पुं० [सं० शाल्मलिन्] तार्क्ष्य। गरुड़।

शाल्मलीकंद—संज्ञा पुं० [सं० शाल्मलीकन्द] शाल्मली की जड़, जो वैद्यक के अनुसार मधुर, शीतल, रोचक, और पित्त, दाह तथा संताप नाशक मानी जाती है।

शाल्मलीफल—संज्ञा पुं० [सं०] तेजबल या तेजफल नाम का वृक्ष।

शाल्मलीफलक—संज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार सेमल के काठ की वह पट्टी जिसपर रगड़कर छुरे आदि की धार तेज की जाती है।

शाल्मलीद्वीप—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक द्वीप। विशेष दे० 'शाल्मलि'-२।

शाल्मलीवेष्ट, शाल्मलीवेष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] सेमल का गोंद। मोचरस।

शाल्मलीस्थल—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक द्वीप। विशेष दे० 'शाल्मलि',—२।

शाल्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौभ राज्य के एक राजा का नाम।

विशेष—महाभारत में लिखा है कि काशिराज की कन्याओं के हरण के समय भीष्म के साथ इनका युद्ध हुआ था जिसमें ये हार गए थे। काशिराज की कन्या अंबा इन्हीं से विवाह करना चाहती थी, इसलिये भीष्म ने अंबा को इनके पास भेज दिया पर इन्होंने अंबा को ग्रहण नहीं किया। ये शिशुपाल के बड़े मित्र थे। जब श्रीकृष्ण ने शिशुपाल को मार डाला, तब इन्होंने श्रीकृष्ण की हत्या करने के लिये द्वारका पर घेरा डाला था। उसी अवसर पर ये श्रीकृष्ण द्वारा युद्ध में मारे गए थे।

२. एक प्राचीन देश का नाम।

शाल्वकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] रामायण के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम।

शाल्वगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन पर्वत का नाम ।

शाल्वण—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह लेप जो फोड़े पकाने के लिये उसपर चढ़ाया जाता है । पुलटिस । २. भरता । चोखा ।

शाल्वसेनी—संज्ञा पुं० [सं०] १. महाभारत के अनुसार एक प्राचीन देश का नाम । २. इस देश का निवासी ।

शाल्विक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पक्षी जिसे क्षुद्रचूड़ भी कहते हैं ।

शाव¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. बच्चा, विशेषतः पशुओं आदि का बच्चा । २. मृतक । मुरदा । ३. भूरा रंग । ४. सूतक जो किसी के मर जाने पर उसके संबंधियों को लगता है । ५. मरघट । श्मशान ।

शाव²—वि० १. शवसंबंधी । शव का । २. भूरे रंग का (को०) । ३. मरा हुआ । मुरदा (को०) ।

शावर¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. बच्चा । विशेषतः पशु या पक्षी का बच्चा । २. झाऊ ।

शावक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पाप । गुनाह । २. अपराध । कसूर । ३. लोध वृक्ष । ४. शबर स्वामीकृत भाष्य । ५. एक तंत्रग्रंथ जो शिव का बनाया हुआ माना जाता है ।

शावर²—वि० शवर संबंधी । शवर का ।

शावरक—संज्ञा पुं० [सं०] पठानी लोध ।

शावर चंदन—संज्ञा पुं० [सं० शावर चन्दन] एक प्रकार का चंदन ।

शावरभेदाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] ताँबा ।

शावरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौंछ । केवाँच ।

शावरोत्सव—संज्ञा पुं० [सं०] कालिकापुराण के अनुसार शावर या म्लेच्छों का एक उत्सव जो होली के सदृश कथित है [को०] ।

शाश्वत¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाश्वती] १. जो सदा स्थायी रहे । कभी नष्ट न होनेवाला । नित्य । २. संपूर्ण । समस्त । सब (को०) ।

शाश्वत²—संज्ञा पुं० १. वेदव्यास । २. शिव । ३. स्वर्ग । ४. अंतरिक्ष । ५. सूर्य (को०) । ६. एक कोशकार का नाम (को०) । ७. नित्यता । निरंतरता (को०) ।

शाश्वतिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शाश्वतिकी] स्थायी । नित्य । शाश्वत ।

शाश्वती—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी ।

शाष्कुल—वि० [सं०] मांस या मछली खानेवाला । मांसाहारी । गोश्तखार ।

शाष्कुलिक—संज्ञा पुं० [सं०] सेंकी या पकी हुई रोटियाँ, पूड़ी, कचौड़ी आदि । शष्कुला का समूह या ढेर [को०] ।

शास—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्तुति । स्तव । २. अनुशासन ।

यौ०—शासानुशास ।

शासक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शासिका] १. वह जो शासन करता हो । २. वह जिसके हाथ में किसी नगर, प्रांत या देश आदि की राजकीय व्यवस्था हो । दंडाधिकारी । हाकिम । ३. कौटिल्य के अनुसार जहाज का कप्तान ।

शासन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. आज्ञा । आदेश । हुक्म । २. किसी को अपने अधिकार या वश में रखना । ३. लिखित प्रतिज्ञा । पट्टा । ठीका । ४. राजा की दान की हुई भूमि । मुआफी । ५. वह परवाना या परमान जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को कोई अधिकार दिया जाय । ६. शास्त्र । ७. इंद्रियनिग्रह । ८. किसी के कार्यों आदि का नियंत्रण । ९. किसी नगर, प्रांत या देश आदि की राजकीय व्यवस्था करने का काम । हुकूमत । १०. दंड । सजा । ११. शिक्षण । अध्यापन (को०) ।

यौ०—शासनकर्ता । शासनतंत्र । शासनदूषक = राजाज्ञा का उल्लंघन करनेवाला । शासनप्रणाली । शासनव्यवस्था ।

शासन²—वि० १. शिक्षा देनेवाला । शिक्षक । बोधक । २. दंड देनेवाला । मारक [को०] ।

विशेष—यौगिक शब्दों के अंत में प्रयुक्त होने से इस शब्द के उक्त अर्थ होते हैं । जैसे, पाकशासन, स्मरशासन, शिष्यशासन आदि ।

शासनकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० शासनकर्तृ] शासन । शास्ता ।

शासनतंत्र—संज्ञा पुं० [सं० शासन तन्त्र] हुकूमत का तौर तरीका । राज्यशासन की रीति या पद्धति ।

शासनदूषक—वि० [सं०] शासन को न माननेवाला । राज्यादेश को न माननेवाला [को०] ।

शासनदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों की एक देवी का नाम ।

शासनधर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शासक । २. राजदूत । एलची ।

शासनपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह ताम्रपत्र या शिला जिसपर कोई राजाज्ञा लिखी या खोदी हुई हो । २. शुक्रनीति के अनुसार राजाज्ञा का वह पत्र जिसपर राजा का हस्ताक्षर हो । फरमान ।

शासनप्रणाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] शासन की रीति या पद्धति । हुकूमत का तौर तरीका ।

शासनवाहक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो राजा की आज्ञा लोगों के पास पहुँचाता हो । २. राजदूत । एलची ।

शासनव्यवस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शासनप्रणाली' ।

शासनशिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह शिला जिसपर कोई राजाज्ञा लिखी हो ।

शासनसत्ता—संज्ञा स्त्री० [सं० शासन + सत्ता] शासन या नियमन की स्थिति या अधिकार । उ०—यहाँ उन्हीं राजनीतिक दलों के हाथ मे शासनसत्ता रहेगी जो रूस के प्रति मित्रता रखेंगे ।—आ० अ० रा०, पृ० १२५ ।

शासनहर—संज्ञा पुं० [सं०] १. राजदूत । २. वह जो राजा की आज्ञा लोगों तक पहुँचाता हो ।

शासनहारक—संज्ञा पुं० [सं० शासनहारक] दे० 'शासनहर' ।

शासनहारी—संज्ञा पुं० [सं० शासनहारिन्] राजदूत । एलची । शासनहर ।

शासनांतर्गत—वि० [सं० शासन + अन्तर्गत] १. शासन के भीतर या अधीन । २. अधीन । वशीकृत ।

शासना^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं० शासन] आज्ञा ।—उ० दास होइ पुत्र होइ शिष्य होइ कोइ भाइ, शासना न मानई तौ कोटि जन्म नर्क जाइ ।—राम चं०, पृ० ४८ ।

शासना†^{२}— क्रि० स० [सं० शासन] हुकूमत करना । शासन करना । उ०—या विधि शासन जीवन देई । हरिहर नाम न कबहूँ लेई । —कबीर सा०, पृ० २५५ ।

शासनाधीन वि० [सं०] दे० 'शासनांतर्गत' ।

शासनानिवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] राजकीय आज्ञा का उल्लंघन [को०] ।

शासनी संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो लोगों को धर्म का उपदेश करती हो ।

शासनीय—वि० [सं०] १. शासन करने के योग्य । २. सुधारने के योग्य । ३. दंड देने के योग्य । सजा देने के लायक ।

शासानुशास—संज्ञा पुं० [सं० शास + अनुशास] राजा । नरेश । शाहंशाह । उ०—जब उन्होंने एथेंस के वीरों के साथ मिलकर पर्शुपुरी के शासानुशास से युद्ध करके असाधारण शौर्य प्रकट किया था ।—वैशाली०, पृ० १२४ ।

शासित^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शासिता] १. जिसका शासन किया जाय । शासन किया हुआ । २. संयमित । निग्रहित (को०) । ३. जिसे दंड दिया जाय । दंडित ।

शासित^२—संज्ञा पुं० १. प्रजा । २. निग्रह । संयम ।

शासिता—संज्ञा पुं० [सं० शासितृ] १. शासक । शास्ता । २. दंडविधान करनेवाला । दंड देनेवाला । ३. शिक्षक । उपदेशक [को०] ।

शासी—संज्ञा पुं० [सं० शासिन्] शासन करनेवाला । शासक ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्रायः यौगिक शब्द बनाने में, उसके अंत में किया जाता है ।

शास्—संज्ञा पुं० [सं०] वक्ता । उद्घोषक । जैसे,—उक्थशस् = सूक्तों को उद्घोषित करनेवाला [को०] ।

शास्तर(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्र] दे० 'शास्त्र' । उ०—ब्रह्मा विध वेद कीन शास्तर मुन मथन काठ, कर कर अठरा पुरान गाई ज्ञान गैली ।— संत तुरसी०, पृ० १५६ ।

शास्ता—संज्ञा पुं० [सं० शास्तृ] १. शासक । २. राजा । ३. पिता । ४. उपाध्याय । गुरु । उ०—देवताओं और मनुष्यों के शास्ता हैं ।—वैशाली०, पृ० ३३ । ५. वह मनुष्य जिसे कोई काम करने का पूरा अधिकार हो । प्रधान नेता या पथप्रदर्शक । ६. वह मनुष्य जिसे शासन की अबाधित सत्ता प्राप्त हो । निरंकुश शासक । दे० 'डिक्टेटर' । ७. बुद्ध (को०) । ८. जिन (को०) । ९. बौद्धों या जैनों का पूज्य उपदेष्टा (को०) ।

शास्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शासन । २. दंड । सजा । उ०—शिक्षा समेत बहुधा बहु शस्ति देते ।—प्रिय०, पृ० १६७ । ३. आदेश । आज्ञा (को०) । ४. राजदंड । उ०—अटल शास्ति नित करने पालन ।—पल्लव, पृ० १३० । ५. शासन का चिह्न (को०) ।

शास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंदुओं के अनुसार ऋषियों और मुनियों आदि के बनाए हुए वे प्राचीन ग्रंथ जिनमें लोगों के हित के लिये अनेक प्रकार के कर्तव्य बतलाए गए हैं और अनुचित कृत्यों का निषेध किया गया है । वे धार्मिक ग्रंथ जो लोगों के हित और अनुशासन के लिये बनाए गए हैं ।

विशेष—हमारे यहाँ वे ही ग्रंथ शास्त्र माने गए हैं जो वेदमूलक हैं । इनकी संख्या १८ कही गई है और नाम इस प्रकार दिए गए हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छंद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद और अर्थशास्त्र । इन अठारहों शास्त्रों को अठारह विद्याएँ भी कहते हैं । इस प्रकार हिंदुओं की प्रायः सभी धार्मिक पुस्तकें शास्त्र की कोटि में आ जाती हैं । साधारणतः शास्त्र में बतलाए हुए काम विधेय माने जाते है, और जो बातें शास्त्रों में वर्जित हैं, वे निषिद्ध और त्याज्य समझी जाती हैं ।

२. किसी विशिष्ट विषय या पदार्थसमूह के संबंध का वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से संग्रह करके रखा गया हो । विज्ञान । जैसे,—प्राणिशास्त्र, अर्थशास्त्र, विद्युत्शास्त्र, वनस्पतिशास्त्र । ३. आज्ञा । आदेश (को०) । ४. धर्मशास्त्र की आज्ञा (को०) । ५. पुस्तक । ग्रंथ (को०) । ६. सिद्धांत (को०) । ७. ज्ञान (को०) ।

शास्त्रकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने शास्त्रों का प्रणयन या रचना की हो । शास्त्र बनानेवाला । २. ग्रंथलेखक (को०) । ३. ऋषि । मुनि (को०) ।

शास्त्रकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्र बनानेवाले, अर्थात् ऋषि, मुनि । २. आचार्य ।

शास्त्रकोविद—वि० [सं०] जो शास्त्रों में निष्णात हो [को०] ।

शास्त्रगंड—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रगण्ड] साधारण पाठक । बहुत हलका अध्ययन करनेवाला विद्यार्थी [को०] ।

शास्त्रचक्षु—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्र चक्षुष्] १. शास्त्र की आँख, अर्थात् व्याकरण । २. वह जिसे शास्त्ररूपी नेत्र प्राप्त हो । ज्ञानी । पंडित ।

शास्त्रचर्चा—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्र संबंधी विचारविमर्श, अध्ययन, मनन आदि [को०] ।

शास्त्रचारण— संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शास्त्रों का अच्छा ज्ञाता हो । शास्त्रदर्शी ।

शास्त्रज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] वह व्यक्ति जो शास्त्रों का अच्छा ज्ञाता हो । शास्त्रों का जानकार । शास्त्रवेत्ता ।

शास्त्रतत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रों में वर्णित सत्य । परम सत्य [को०] ।

शास्त्रतत्वज्ञ—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रतत्त्वज्ञ] गणक । ज्योतिषी ।

शास्त्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्र का भाव या धर्म ।

शास्त्रदर्शी—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रदर्शिन्] वह जिसे शास्त्रों का अच्छा ज्ञान हो । शास्त्रज्ञ ।

शास्त्रदृष्ट—वि० [सं०] शास्त्रों या धर्मग्रंथों में 'विहित' या उक्त । शास्त्रानुकूल [को०] ।

शास्त्रदृष्टि[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शास्त्रों का ज्ञाता हो। शास्त्रज्ञ। २. ज्योतिषी (को०)।

शास्त्रदृष्टि[२]—संज्ञा स्त्री० [सं०] शास्त्र की दृष्टि। शास्त्रीय दृष्टिकोण। शास्त्रानुसार विचारपद्धति [को०]।

शास्त्रप्रवक्ता—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रप्रवक्तृ] दे० 'शास्त्रवक्ता'।

शास्त्रप्रसंग—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रप्रसङ्ग] १ शास्त्र का विषय। २. किसी भी प्रकार का धार्मिक विवाद [को०]।

शास्त्रमति—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रवेत्ता। शास्त्रविद् [को०]।

शास्त्रमीमांसक—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्र+मीमांसक] शास्त्र की मीमांसा या व्याख्या करनेवाला व्यक्ति।—शास्त्र मीमांसक या तत्व-निरूपक को किसी सामान्य तथ्य या तत्व तक पहुँचने की जल्दी रहती है।—रस०, पृ० ४३।

शास्त्रमीमांसा—संज्ञा स्त्री० [सं० शास्त्र+मीमांसा] तत्वविचार। उ०—आधुनिक पश्चिमी शास्त्रमीमांसा को विदेशी कहकर त्यगा भी नहीं।—रस०, पृ० ५।

शास्त्रयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] शास्त्रों का उद्गम स्थान [को०]।

शास्त्रवक्ता—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रवक्तृ] वह जो लोगों को शास्त्रों का उपदेश देता हो।

शास्त्रवर्जित—वि० [सं०] शास्त्रों द्वारा निषिद्ध [को०]।

शास्त्रवाद—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय का शास्त्रीय विवेचन [को०]।

शास्त्रविद्—वि० पुं० [सं०] शास्त्रों का जाननेवाला। शास्त्रदर्शी। शास्त्रज्ञ।

शास्त्रविधान—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रीय आज्ञा। वेदाज्ञा [को०]।

शास्त्रविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शास्त्रविधान' [को०]।

शास्त्रविमुख—वि० [सं०] शास्त्रों का अध्ययन न करनेवाला [को०]।

शास्त्रविरुद्ध—वि० [सं०] शास्त्रों के कथन के प्रतिकूल। अशास्त्रीय। अवैधानिक [को०]।

शास्त्रविप्रतिषेध, शास्त्रविरोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. शास्त्रीय विषयों का परस्पर अनैक्य। विधि विधान की असगति। २. शास्त्रीय विधिके विरुद्ध आचरण [को०]।

शास्त्रविहित—वि० [सं०] जो शास्त्र द्वारा कथित, अनुमोदित हो। शास्त्रसंमत।

शास्त्रव्युत्पत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शास्त्रों का अंतरंग ज्ञान। शास्त्रों में प्रवीणता [को०]।

शास्त्रशिल्पी—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्रशिल्पिन्] १. काश्मीर देश का एक नाम। २. भूमि। जमीन।

शास्त्रसंगत, शास्त्रसंमत—वि० [सं० शास्त्रसङ्गत, शास्त्रसम्मत] शास्त्र के अनुकूल। शास्त्रसिद्ध।

शास्त्रसिद्ध—वि० [सं०] शास्त्रों के प्रमाणानुसार स्थापित [को०]।

शास्त्रस्थिति संपादन—संज्ञा पुं० [सं० शास्त्र+स्थिति+सम्पादन] शास्त्र मे निर्दिष्ट विधियो का पालन। उ०—पर रावण यदि राम के प्रति क्रोध या घृणा की व्यंजना करेगा तो रस के तीनों अवयवों के कारण 'शास्त्रस्थिति सपादन' चाहे जो हो जाय पर उस व्यंजित भाव के साथ पाठक के भाव का तादात्म्य कभी न होगा।—रस०, पृ० ६६।

शास्त्राचरण—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्र विधियों का पालन। २. शास्त्र का अध्ययन। ३. वह जो शास्त्रादेशों का पालन करता हो। ४. वेदाध्यायी वटु [को०]।

शास्त्राज्ञा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शास्त्र की आज्ञा। शास्त्र का आदेश। उ०—धर्माधर्म तथा शास्त्राज्ञा का कुछ भी विचार करते।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १८७।

शास्त्रातिक्रम—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रीय विधियों का उल्लंघन [को०]।

शास्त्रातिग—वि० [सं०] शास्त्रों को न माननेवाला [को०]।

शास्त्रानुशीलन—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रों का मनन [को०]।

शास्त्रानुष्ठान—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रीय नियमों का पालन [को०]।

शास्त्रान्वित—वि० [सं०] शास्त्रीय नियमों के अनुसार [को०]।

शास्त्राभिज्ञ—वि० [सं०] शास्त्रों में निष्णात। शास्त्रज्ञ [को०]।

शास्त्राभ्यासी—वि० [सं०] शास्त्र का अभ्यास या अध्ययन करनेवाला। उ०—भारतीय शास्त्राभ्यासी रसमीमांसा में आत्मा को भी ग्रहण करते हैं।—रस० (भू०), पृ० ३।

शास्त्रार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी शास्त्रीय विषय पर वादविवाद करना। उ०—उसने अनेक पडितों को शास्त्रार्थ में जीता है।—भारतेंदु ग्रं०, भा०, १, पृ० १०। २. शास्त्रविधियों या वचनों का अर्थ [को०]।

शास्त्रालोचन—संज्ञा पुं० [सं०] शास्त्रों के तत्व का विचार या आलोचना। शास्त्रार्थ। उ०—मध्यस्थ उभय भारती हुई, शास्त्रालोचन, शंकर से हुआ प्रखर जिसमें, हारे मंडन।—अपरा, पृ० २१३।

शास्त्रावर्तलिपि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ललितविस्तर के अनुसार प्राचीन काल का एक प्रकार की लिपि।

शास्त्रिक—वि० [सं०] शास्त्रों का ज्ञाता। शास्त्री।

शास्त्री[१]—वि० [सं० शास्त्रिन्] [वि० स्त्री० शास्त्रिणी] १. शास्त्र का जाननेवाला शास्त्रज्ञ। शास्त्रविद्।

शास्त्री[२]—संज्ञा पुं० १. वह जो शास्त्रों आदि का अच्छा ज्ञाता हो। शास्त्रज्ञ। २. वह जो धर्मशास्त्र का ज्ञाता हो। ३. एक उपाधि जो कुछ विद्यालयों आदि में, इसी नाम की परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर प्राप्त होती है। ४. वह जो धार्मिक शिक्षा देता हो (को०)।

शास्त्रीय—वि० [सं०] १. शास्त्र संबंधी। शास्त्र का। २. शास्त्रसंमत। (को०)। ३. वैज्ञानिक (को०)।

शास्त्रोक्त—वि० [सं०] जो शास्त्र में लिखे या कहे के अनुसार हो। शास्त्रों में कहा हुआ। वैधानिक।

शास्य—वि० [सं०] १. शासन करने योग्य। २. दंड देने के योग्य। दंडनीय। ३. सुधारने योग्य।

शाहंशाह—संज्ञा पुं० [फ़ा०] बादशाहों का बादशाह। बहुत बड़ा बादशाह। महाराजाधिराज।

शाहंशाही—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. शाहंशाह का कार्य या भाव। २. व्यवहार का खरापन। (बोलचाल)।

क्रि० प्र०—जताना।—दिखलाना।—बघारना।

शाह[१]—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. बहुत बड़ा राजा या महाराज। बादशाह। (अन्य अर्थ के लिये दे० 'बादशाह')। २. मुसलमान फकीरों की उपाधि।

शाह[२]—वि० बड़ा। भारी। महान्। जैसे,—शाहशहू।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग केवल यौगिक शब्द बनाने में उनके आदि में होता है।

शाहकार—संज्ञा पुं० [फ़ा०] किसी कलाकार की सर्वोत्तम कृति [को०]।

शाहखर्च—वि० [फ़ा० शाहखर्च] बादशाहों की तरह बहुत अधिक खर्च करनेवाला [को०]।

शाहगाम—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] घोड़े की एक चाल [को०]।

शाहजहाँ—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. दुनिया या विश्व का राजा। संसार का स्वामी। २. सम्राट् अकबर का पौत्र जिसने ताजमहल बनवाया था।

शाहजादा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहज़ादह्] [स्त्री० शाहजादी] बादशाह का लड़का। महाराजकुमार।

शाहजादी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शाहज़ादी] १. बादशाह की कन्या। राजकुमारी। २. कमल के फूल के अंदर का पीला जीरा।

शाहतरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहतरह्] पित्त पापड़ा।

शाहतीर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] दे० 'शहतीर' [को०]।

शाहतूत संज्ञा पुं० [फ़ा०] दे० 'शहतूत' [को०]।

शाहदरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहदरह्] १. वह आबादी जो किसी महल या किले के नीचे बसी हो। २. राजमार्ग। आम रास्ता (को०)। ३. दिल्ली के पास यमुना के उस पार बसा हुआ एक कस्बा।

शाहदाना—संज्ञा पुं० [फ़ा०] एक प्रकार का भाँग का बीज जो दवा के काम आता है [को०]।

शाहदापरस्ती—संज्ञा स्त्री० [अ० शोहदा + फ़ा० परस्ती] विषय वासना। उ०—चालीस बरस भए थे मस्ती। यो शेर को शाहदापरस्ती।—दक्खिनी०, पृ० १६२।

शाहनशीं—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. बादशाहों के बैठने का बहुमूल्य आसन। २. राजमहल के झरोखे के आगे का वह स्थान जहाँ बैठकर मुगल बादशाह प्रजा को दर्शन देते थे। ३. बैठने की ऊँची जगह [को०]।

शाहनामा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहनामह्] १. वह काव्यग्रंथ जिसमें किसी राज्य विशेष के बादशाहों का वर्णन हो। २. फिरदौसी द्वारा रचित एक काव्य ग्रंथ, जिसमें ईरान के बादशाहों का वर्णन है [को०]।

शाहबलूत—संज्ञा पुं० [फ़ा०] दे० 'बलूत'।

शाहबाज—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहबाज़] १. सफेद रंग का एक प्रकार का शिकारी पक्षी। २. शूर। योद्धा (को०)।

शाहबाला—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'शहबाला'।

शाहमियाना—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'शामियाना'। उ०—बड़ा भारी देश और शाहमियाना खड़ा है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १२०।

शाहराह—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] बड़ी सड़क। बड़ा रास्ता। राजमार्ग।

शाहरुखी—संज्ञा पुं० [फ़ा० शाहरुखी] एक सिक्का। उ०—उन्होंने लूटपाट नहीं किया और चार अरब शाहरुखी लेकर संधि कर ली।—हुमायूँ०, पृ० १६।

शाहाना[१]—वि० [फ़ा०] बादशाहों के योग्य। राजाओं का सा। राजसी।

शाहाना[२]—संज्ञा पुं० १. विवाह का जोड़ा जो दूल्हे को पहनाया जाता है। यह प्रायः लाल रंग का होता है। जामा। २. दे० 'शहाना'। (राग)।

शाहिद[१]—संज्ञा पुं० [अ०] १. वह मनुष्य जो आँखों देखी घटना का न्यायाधीश के समक्ष वर्णन करे। साक्षी। गवाह। २. नायिका। प्रेमिका (को०)।

शाहिद[२]—वि० १. सुंदर। मनोहर। खूबसूरत। २. श्रेष्ठ। उत्तम। उम्दा।

शाहीं—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. बाज पक्षी। श्येन। २. तुलादंड। तराजू की डाँड़ी [को०]।

शाही—वि० [फ़ा०] शाहों या बादशाहों का। राजसी। जैसे—शाही दरबार। शाही महल। शाही। सवारी।

शाहिन—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १ दे० 'शाहबाज'। २. वह सुई जो तराजू की डंडी के मध्य भाग में लगी होती है और जिसके बिल्कुल सीधे रहने से तौल बराबर और ठीक मानी जाती है।

शिंगरफ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शंगर्फ़] ईंगुर। हिंगुल। विशेष दे० 'ईंगुर'।

शिंगरफी—वि० [फ़ा० शिंगरफ] शिंगरफ के रंग का लाल। सुर्ख।

शिंघण—संज्ञा पुं० [सं० शिङ्घण] १. नासिकामल। रेंट। २. दाढ़ी (को०)।

शिंघाण—संज्ञा पुं० [सं० शिङ्घाण] १. लौहमल। मंडूर। २. नाक के अंदर का चेप जिससे झिल्ली तर रहती है। ३. काँच का बरतन। ४. दाढ़ी। ५. फूला हुआ अंडकोश। ६. फेन। झाग (को०)। ७. बलगम। कफ या श्लेष्मा (को०)।

सिंघाणक—संज्ञा पुं० [सं० शिङ्घाणक] [स्त्री० शिंघाणिका] १. नाक के अंदर का चेप। २. कफ। बलगम।

शिंघाणी—संज्ञा पुं० [सं० शिङ्घाणिन्] नाक।

शिंघान—संज्ञा पुं० [सं० शिङ्घाण] दे० 'शिंघाण'।

शिंघित—वि० [सं० शिङ्घित] सूँघा हुआ। आघ्रात।

शिंघिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिङ्घिनी] नाक।

शिंजंजिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिञ्जञ्जिका] करधनी।

शिंज—संज्ञा पुं० [सं० शिञ्ज] झंकार। झनझनाहट। ध्वनि (विशेषकर गहनों की)।

शिंजन—संज्ञा पुं० [सं० शिञ्जन] [वि० शिंजित] १. धातुखंड का परस्पर बजना। झंकार करना। झनकारना। किंकिनी, नूपुर आदि गहनों को पहनकर चलने फिरने या उनके हिलने आदि से होनेवाली मधुर ध्वनि। २. झंकार (को०)।

शिंजा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिञ्जा] १. करधनी, नूपुर आदि आभूषणों की झनकार। २. धातुखंड के बजने का शब्द। झनझनाहट २. धनुष की डोरी। प्रत्यंचा। ज्या।

यौ०—शिंजालता = प्रत्यंचा। ज्या।

शिंजित^{१}—वि० [सं० शिञ्जित] १. झनकार करता हुआ। झंकृत। २. बजता हुआ।

शिंजित^{२}—संज्ञा पुं० ध्वनि। झनकार। आवाज।

शिंजिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिञ्जिनी] १. धनुष की डोरी। चिल्ला। पतंचिका। २. करधनी या नूपुर के घुँघरू।

शिंजी—वि० [सं० शिञ्जिन्] १. मधुर झनकार करता हुआ। २. आभूषणों की झनकार से युक्त [को०]।

शिंडाकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिण्डाकी] एक प्रकार की काँजी।

विशेष—यह मूली के पत्तों के रस में राई और नमक डालकर अथवा सरसों के रस में चावल का चूर्ण डालकर बनाई जाती है। वैद्यक के अनुसार यह रुचिकारी, कफकारक, पित्त करनेवाली और भारी होती है।

शिंब—संज्ञा पुं० [सं० शिम्ब] १. फली। छीमी। २. चकवड़ँ। चक्रमर्द।

शिंबा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बा] १. छीमी। फली। २. सेम। ३. शिंबी धान्य।

शिंबि—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बि] दे० 'शिंबी'।

शिंबिक—संज्ञा पुं० [सं० शिम्बिक] १. मूँगफली। २. कृष्ण मुद्ग। काली मूँग (को०)।

शिंबिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बिका] १. फली। छीमी। २. सेम।

शिंबिजा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बिजा] द्विदल अन्न। दाल।

शिंबिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बिनी] १. श्यामा चिड़िया। कृष्ण चटक। २ बड़ी सेम।

शिंबिपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बिपर्णिका] बनमूँग। मुद्गपर्णी।

शिंबिपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बिपर्णी] बनमूँग।

शिंबी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिम्बी] १. छीमी। फली। बौंडी। २. सेम। ३. कौंछ। केवाँच। कपिकच्छु। बनमूँग।

शिंबीधान्य—संज्ञा पुं० [सं० शिम्बीधान्य] वह अन्न जिसके दानों में दो दल हों। द्विदल अन्न दाल। जैसे,—मूँग, मसूर, मोठ, उड़द, चना, अरहर, मटर, कुलथी, लोबिया आदि।

शिंबीफल—संज्ञा पुं० [सं० शिम्बीफल] तरवट या आहुल्य नामक क्षुप।

शिंश—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का फलदार वृक्ष।

शिंशपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शीशम का पेड़। २. अशोक वृक्ष।

शिंशुपाⓅ—संज्ञा स्त्री० [सं० शिंशपा] दे० 'शिंशपा'।

शिंशुमार—संज्ञा पुं० [सं०] सूँस नामक जलजंतु।

शि—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. सुख। सौभाग्य। ३. शांति। ४. धीरता। धैर्य।

शिकंजबी, शिकंजबीन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'सिकंजबीन'।

शिकंजा—संज्ञा पुं० [फ़ा० सिकंजबीन] १. दबाने, कसने या निचोड़ने का यंत्र। २. पेंच कसने का यंत्र या औजार जिससे जिल्दबंद किताबें दबाते और उनके पन्ने काटते हैं। ३. वह तागा जिससे जुलाहे घुमावदार बंद बनाते और पनिक बाँधते हैं। (जुलाहे)। ४. प्राचीन काल का अपराधियों को कठोर दंड देने के लिये एक यंत्र जिसमें उनकी टाँगे कस दी जाती थीं। ५. पेरने का यंत्र। कोल्हू। ६. रुई दबाने की कल। पेंच। ७. यंत्रणा (को०)। ८. पकड़। दबाव (को०)।

मुहा०—शिकंजे में खिंचवाना = घोर यंत्रणा दिलाना। साँसत कराना। शिकंजे में खींचना = बहुत कष्ट देना। घोर यंत्रणा पहुँचाना।

शिक—संज्ञा स्त्री० [अ० शिक़] १. पक्ष। ओर। तरफ। २. एक ओर का बोझ। ३. खंड। टुकड़ा विभाग। ४. क्षेत्रविभाग। तहसील। ५. पख। बाधा। अड़चन [को०]।

यौ०—शिकदार = किसी विशेष त्रविभाग का क्षेपदाधिकारी। तहसीलदार।

शिकन—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] सिकुड़ने से पड़ी हुई धारी। मुड़कर दबने से पड़ी हुई लकीर। सिलवट। वली। वलि। वल।

क्रि० प्र०—आना।—डालना।—निकालना।

शिकन^{२}—वि० तोड़नेवाला। भंजक। (समासांत में प्रयुक्त) जैसे, बुतशिकन।

शिकम—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. पेट। उदर।

मुहा०—शिकम पालना = पेट पालना।

यौ०—शिकमखारा = क्षुधार्त। भूखा। शिकमपरस्त, शिकमपरवर, शिकमबंदा = पेटार्थी। पेट पालनेवाला। पेटू। शिकमबंदगी = पेटपूजा। शिकमसेर = तृप्त। भरे पेटवाला। अघाया हुआ।

२. आमाशय। पाकस्थली। मेदा (को०)।

शिकमी—वि० [फ़ा०] १. पेट संबंधी। निज का। अपना। २. भीतरी (को०)। ३. बड़े पेटवाला (को०)। ४. दे० 'शिकमी काश्तकार (को०)।

शिकमी काश्तकार—संज्ञा पुं० [फ़ा०] वह काश्तकार जिसे जोतने के लिये खेत दूसरे काश्तकार से मिला हो।

विशेष—इसका हक खास काश्तकार के हक से बहुत कम होता है।

शिकरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शिकरह्] एक प्रकार का बाज पक्षी। उ०—कोई शिकरा बाज उड़ाता है कोई हाथ में रखे तुतली है।—नजीर (शब्द०)।

शिकरम—संज्ञा पुं० [?] एक प्रकार की घोड़ागाड़ी।

शिकवा—संज्ञा पुं० [अ०] शिकायत। उलाहना। उ०—मुझको तुमसे नहीं कुछ बाकी है करना शिकवा।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ५६०।

शिकस्त—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. हार। पराजय। मात। २. भंग। टूटना। शिकस्तगी। ३. विफलता। असिद्धि।

मुहा०—शिकस्त देना = पराजित करना। हराना। शिकस्त खाना = पराजित होना। हारना।

शिकस्तगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शिकस्तह्] टूटा हुआ। भग्न। खंडित।

शिकस्ता¹—संज्ञा स्त्री० उर्दू या फारसी की घसीट लिखावट।

यौ०—शिकस्ता नवीस = घसीट लिखनेवाला। शिकस्ता दिल = भग्न हृदय। शिकस्ता हाल = जिसकी आर्थिक दशा खराब हो। शिकस्ता हिम्मत = पस्त हिम्मत। हतोत्साह।

शिकायत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. बुराई करना। गिला। शिकवा। चुगली। २. किसी भूल, त्रुटि, दोष आदि की बात जो मन में हों। जैसे,—उनसे अब मुझे कोई शिकायत नहीं है। ३. उपालंभ। उलाहना। ४. किसी के गलत काम की उसके अधिकारी को सूचना।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

५. शारीरिक अस्वस्थता। रोग। बीमारी। जैसे,—उसे दस्त की शिकायत है।

मुहा०—शिकायत रफा करना = रोग दूर करना। मांदगी हराना।

शिकायती—वि० [अ० शिकायत] शिकायत करनेवाला। २. जिसमें शिकायत हो।

शिकार—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. जंगली पशुओं को मारने का कार्य या क्रीड़ा। आखेट। मृगया। अहेर। जैसे,—शेर का शिकार।

क्रि० प्र०—करना। होना।

२. वह जानवर जो मारा गया हो। ३. गोश्त। मांस। ४. आहार। भक्ष्य। जैसे,—बिल्ली का शिकार चूहा। ५. कोई ऐसा आदमी जिसके फँसने या वश में होने से बहुत लाभ हो। असामी। जैसे,—बहुत दिनों पर आज एक शिकार फंसा है, कुछ मिल ही जायगा।

मुहा०—शिकार आना = (१) मारने के लिये कोई जानवर मिलना। (२) किसी ऐसे आदमी का मिलना जिससे कुछ लाभ हो। शिकार करना = (१) कोई जानवर मारना। (२) किसी से कोई लाभ उठाना। (३) लूटना। शिकार खेलना = शिकार करना। किसी का शिकार होना = (१) किसी के द्वारा या कारण मारा जाना। जैसे,—न जाने कितने आदमी प्लेग के शिकार हुए। (२) वश में आना। फँसना। (३) किसी पर मोहित होना।

शिकारगढ़हा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शिकार + हिं० गड्ढा] वह बड़ा गड्ढा जो शिकारी जानवरों को फँसाने के लिये खोदते हैं।

शिकारगाह—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] शिकार खेलने का स्थान।

शिकारबंद—संज्ञा पुं० [फ़ा०] वह तस्मा जो घोड़े की दुम के पास चारजामे के पीछे शिकार लटकाने या आवश्यक सामान बाँधने के लिये लगाया जाता है।

शिकारा—संज्ञा पुं० [?] काश्मीर में सवारी के लिये उपयोग में आनेवाली एक प्रकार की नाव। उ०—मेरा शिकारा वह खड़ा है।—पिंजरे०, पृ० २१।

शिकारी¹—संज्ञा पुं० [फ़ा०] आखेट करनेवाला। शिकार करनेवाला। अहेरी।

शिकारी²—वि० १. शिकार करनेवाला। जंगली पशुओं को पकड़ने या मारनेवाला। जैसे,—शिकारी कुत्ता। २. शिकार में काम आनेवाला। जैसे,—शिकारी कोट। शिकारी खेमा।

मुहा०—शिकारी ब्याह = गंधर्व विवाह जो क्षत्रियों में अबतक कहीं कहीं होता है।

शिकोह—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. भय। त्रास। डर। २. दबदबा। रोबदाब [को०]।

शिकाल—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. वह घोड़ा जिसका अगला दाहिना और पिछला बाँया पैर सफेद हो। (यह दोष माना जाता है)। २. छल। धोखा। फरेब (को०)।

शिक्कु—वि० [सं०] निकम्मा। सुस्त। आलसी [को०]।

शिक्य—संज्ञा पुं० [सं०] मोम। मैन। मधुमक्खी के छत्ते का मोम या सीठी। मधुशेष।

शिक्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिक्या'।

शिक्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बहँगी के दोनों छोरों पर बँधा हुआ रस्सी का जाल जिसपर बोझ रखते हैं। २. छत में लटकता हुआ रस्सी का जालीदार संपुट जिसपर दूध, दही आदि का मटका रखते हैं। छींका। झोका। सिकहर। ३. तराजू की रस्सी। ४. बहँगी पर लटकाकर ले जाया जानेवाला बोझ (को०)।

शिक्यित—वि० [सं०] सिकहर पर रखा हुआ या स्थापित।

शिक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] गंधर्वों का एक नायक। रोहित।

शिक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शिक्षका, शिक्षिका] १. शिक्षा देनेवाला। सिखानेवाला। गुरु। उस्ताद। २. सीखनेवाला (को०)।

शिक्षण—संज्ञा पुं० [सं०] १. पढ़ाने का काम। तालीम। शिक्षा। २. शिक्षा प्राप्त करना सीखने का काम। सीखना (को०)।

यौ०—शिक्षणकला = शिक्षा देने, पढ़ाने की कला या हुनर।

शिक्षणीय—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शिक्षणीया] जो शिक्षा देने के योग्य हो। जिसे शिक्षा दी जा सके।

शिक्षमाण—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शिक्षमाणा] सीखने की स्थिति में रहनेवाला छात्र। उ०—वह अभी शिक्षमाणा ही थी। भिक्षुणी नहीं हुई थी।—इरा०, पृ० १७।

शिक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी विद्या को सीखने या सिखाने की क्रिया। पढ़ने पढ़ाने की क्रिया। सीख। तालीम।

क्रि० प्र०—देना ।—पाना ।—मिलना ।—लेना ।

२. गुरु के निकट विद्या का अभ्यास । विद्या का ग्रहण । ३. दक्षता । निपुणता । ४. उपदेश । मंत्र । सलाह । ५. छह् वेदांगों में से एक जिसमें वेदों के वर्ण, स्वर, मात्रा आदि का निरूपण रहता है । मंत्रों के ठीक उच्चारण का विषय ।

विशेष—यह विषय कुछ तो ब्राह्मण भाग में आया है और कुछ प्रातिशाख्य सूत्रों में । ऋग्वेद की शिक्षा का ग्रंथ शौनक का प्रतिशाख्य सूत्र है । यजुर्वेद के प्रातिशाख्य के दो ग्रंथ मिलते हैं—एक तो आत्रेय महर्षि और वररुचि संकलित त्रिभाष्यरत्न, जो तैत्तरीय शाखा का है और दूसरा कात्यायन जी का आठ अध्यायों का वाजसनेयी प्रातिशाख्य । पाणिनि आदि के व्याकरण से संबद्ध भी शिक्षा विषयक ग्रंथ हैं जिनकी संख्या पचासों से ऊपर है ।

६. शासन । दबाव । ७. किसी अनुचित कार्य का बुरा परिणाम । सबक । दंड । जैसे,—अच्छी शिक्षा मिली, अब कभी ऐसा काम न करेंगे । ८. विनय । विनम्रता । शिष्टता । सुजनता (को० । ९. विज्ञान । कला । प्रायोगिक शिक्षा । जैसे, रणशिक्षा, सैनिक शिक्षा (को०) ।

शिक्षाकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यास । उपदेशक । २. शिक्षक । शिक्षा देनेवाला । अध्यापक (को०) ।

शिक्षाक्षर—संज्ञा पुं० [सं०] शिक्षा के अनुसार उच्चरित ध्वनि (को०] ।

शिक्षाक्षेप—संज्ञा पुं० [सं०] केशव के अनुसार काव्य में एक प्रकार का अलंकार जिसमें शिक्षा द्वारा गमन स्वरूप कार्य रोका जाता है ।

शिक्षागुरु—संज्ञा पुं० [सं०] विद्या पढ़ानेवाला गुरु । ज्ञानदाता गुरु । दीक्षागुरु का विलोम ।

शिक्षाग्राहक—संज्ञा पुं० [सं०] शिक्षा प्राप्त करनेवाला व्यक्ति । पढ़नेवाला । विद्यार्थी । छात्र ।

शिक्षाचार—वि० [सं०] शिक्षा के अनुकूल आचरण करनेवाला [को०] ।

शिक्षात्मक—वि० [सं०] उपदेशात्मक । उपदेशप्रद (अं० प्रइडेक्विक) । उ०—इसे स्वीकार कर लेने पर भारतीय काव्य की प्रकृति के निरूपण के लिये आदर्शात्मक, शिक्षात्मक आदि रस और भाव के क्षेत्र के बाहर के शब्दों के व्यवहार की आवश्यकता नहीं रह जाती ।—रस०, पृ० ९२ ।

शिक्षादंड—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षादण्ड] वह दंड जो किसी चाल को छुड़ाने के लिये दिया जाय ।

शिक्षानर—संज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का एक नाम [को०] ।

शिक्षापद—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपदेश । २. बौद्धों के 'विनयपिटक' का एक प्रकरण ।

शिक्षापद्धति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिक्षा देने का ढंग । शिक्षण की प्रणाली [को०] ।

शिक्षापरिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वैदिक काल की शिक्षा संस्था या विद्यालय जो एक ऋषि या आचार्य के अधीन रहता था और उसी के नाम से प्रसिद्ध होता था । २. शिक्षा या पढ़ाई का प्रबंध करनेवाली सभा या समिति ।

शिक्षाप्रद—वि० [सं०] जिससे शिक्षा प्राप्त हो । शिक्षा या सीख देनेवाला । जैसे, शिक्षाप्रद ग्रंथ ।

शिक्षामंत्री—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षा + मन्त्रिन्] [स्त्री० शिक्षामंत्रिणी] राज्य का शिक्षा संबंधी सर्वोच्च अधिकारी (अं० एजुकेशन मिनिस्टर) ।

शिक्षारस—संज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय में शक्ति या प्रवीणता प्राप्त करने की कामना [को०] ।

शिक्षार्थी—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षार्थिन्] शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखनेवाला व्यक्ति । विद्यार्थी । तालिब इल्म ।

शिक्षालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ शिक्षा दी जाय । विद्यालय । पाठशाला ।

शिक्षावल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] तैत्तरीय उपनिषद् का पहला अध्याय ।

शिक्षावाद—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षा + वाद] उपदेशात्मकता । उपदेश वृत्ति । उ०—मंगल और अमंगल के द्वंद्व में कवि लोग अंत में मंगल शक्ति की जो सफलता दिखा दिया करते हैं उसमें सदा शिक्षावाद या अस्वाभाविकता की गंध समझकर नाक भौं सिकोड़ना ठीक नहीं ।—रस०, पृ० ६१ ।

शिक्षाविभाग—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षा + विभाग] वह सरकारी विभाग जिसके द्वारा शिक्षा का प्रबंध होता है । सरिश्ता तालीम ।

शिक्षाव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] जैन धर्म के अनुसार गार्हस्थ धर्म का एक प्रधान अंग जो चार प्रकार का होता है; (१) सामयिक, (२) देशावकाशिक, (३) पौष और (४) अतिथि संविभाग ।

शिक्षाशक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति । मेधा ।

शिक्षाशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं० शिक्षा + शास्त्र] वह शास्त्र, ग्रंथ आदि जिसमें शिक्षा की विधि, प्रणाली, अध्यापनपद्धति आदि तत्संबंधी विधानों का विवेचन मिलता है । (अं० एडुकेशन) ।

शिक्षाहीन—वि० [सं०] जिसे शिक्षा न मिली हो । अशिक्षित । बेपढ़ा । गँवार ।

शिक्षित—वि० पुं० [सं०] [वि० स्त्री० शिक्षिता] १. जिसने शिक्षा पाई हो । पढ़ा लिखा । २. विद्वान् । पंडित । ३. पालतू (को०) । ४. निपुण । कुशल (को०) । ५. विनीत । लज्जाशील (को०) । ६. प्रशिक्षित । अनुशासित (को०) । उ०—जीवन रण में सक्षम, संघर्षों से शिक्षित ।—ग्राम्या, पृ० २० ।

शिक्षिताक्षर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसने विद्या पढ़ी हो । शिक्षित । २. शिक्षा देनेवाला । शिक्षक (को०) । ३. लेखक । मुहर्रिर (को०) ।

शिक्षितायुध—वि० [सं०] जो आयुधों के प्रयोग में पटु हो । हथियार चलाने में निपुण [को०] ।

शिखंड—संज्ञा पुं० [सं० शिखण्ड] १. मोर की पूँछ । मयूरपुच्छ ।—उ०—(क) कुटिल कच भुव तिलक रेखा शीश शिखी शिखंड ।—सूर (शब्द०) । (ख) सिरनि शिखंड सुमन दल मंडल लाल सुभाय बनाए ।—तुलसी (शब्द०) । २. चोटी । शिखा । चुटिया । उ०—शोभित केश विचित्र भाँति दुति शिखि शिखंड हरनी ।—सूर (शब्द०) । ३. काकपक्ष । काकुल ।

यौ०—शिखंडखंडिका = चूड़ाकरण का उत्सव । चूड़ाकरण ।

शिखंडक—संज्ञा पुं० [सं० शिखण्डक] १. काकपक्ष । काकुल । २. मयूरपुच्छ । ३. चोटी । शिखा । चुटिया (को०) । ४. नितंब के नीचे का मांसल भाग (को०) । ५. वह जिसने शैव मतानुसार मुक्ति की एक विशेष अवस्था प्राप्त कर ली हो (को०) ।

शिखंडिक—संज्ञा पुं० [सं० शिखण्डिक] १. कुक्कुट । मुर्गा । २. एक प्रकार का मानिक (रत्न) ।

शिखंडिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखण्डिका] शिखा । चोटी । दे० 'शिखंड' ।

शिखंडिनी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखण्डिनी] १. मोरनी । मयूरी । २. जूही । यूथिका । ३. गुंजा । करजनी । चोटली । ४. मुर्गी । ५. द्रुपदराज की एक कन्या जो पीछे पुरुष के रूप में होकर कुरुक्षेत्र के युद्ध में लड़ी थी ।

विशेष—कहते हैं, पूर्व जन्म में यह काशिराज की बड़ी कन्या अंबा थी जिसे भीष्म हर लाए थे । भीष्म से बदला लेने के लिये यह पुरुष रूप में हो गई और महाभारत के युद्ध में लड़ी थी । विशेष दे० 'शिखंडी' ।

६. कश्यप की पुत्री दो अप्सराएँ जो ऋग्वेद के मंत्र की द्रष्टा मानी जाती हैं ।

शिखंडिनी^{2}—वि० स्त्री० शिखंड से युक्त । शिखंडवाली ।

शिखंडी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शिखण्डिन्] १. पीली जूही । स्वर्णयूथिका । २. गुंजा । चिरमिटी । घुंघची । ३. मोर । मयूर पक्षी । ४. मुर्गा । ५. मोर की पूँछ । ६. बाण । ७. विष्णु । ८. कृष्ण । ९. शिव । १०. शिखा । बालों की चोटी । उ०—शिखंडी शीश मुख मुरली बजावत बन्यो तिलक उर चंदन ।—सूर (शब्द०) । ११. द्रुपद का एक पुत्र ।

विशेष—यह पहले कन्या के रूप में उत्पन्न हुआ था, पर इसे पुत्र के रूप में प्रसिद्ध किया गया और शिक्षादीक्षा भी पुत्र के समान दी गई । कालांतर में हिरण्य वर्मा की कन्या से इसका विवाह भी हुआ । यह जानकर कि मेरी कन्या का विवाह एक स्त्री से हुआ है और द्रुपद ने मुझे धोखा दिया है, हिरण्य वर्मा ने द्रुपद पर आक्रमण करने की तैयारी की । इस बीच शिखंडी ने बन में घोर तप किया और एक यक्ष को प्रसन्न कर अपना स्त्रीत्व उसे दे देने के पीछे पुरुष के रूप में हो गया । इसी को आगे करके महाभारत के युद्ध में अर्जुन ने युद्ध के दसवें दिन पितामह भीष्म का बध किया था । भीष्म की प्रतिज्ञा थी कि हम किसी स्त्री पर बाण न चलावेंगे । अश्वत्थामा के हाथ इसका बध हुआ था । विशेष दे० 'शिखंडिनी' ।

१२. राम के दल का एक बंदर । उ०—धुंधमाल गिरि पुनि गए मिले शिखंडी नाम ।—विश्राम (शब्द०) । १३. बृहस्पति । देवगुरु ।—अनेक (शब्द०) ।

शिखंडी—वि० शिखंडयुक्त । शिखावाला [को०] ।

शिख(पु)^1—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखा] दे० 'शिखा' । उ०—फूली फिरत रोहिणी मैया नख शिख कर सिंगार ।—सूर (शब्द०) ।

शिख^2—वि० [सं०] जिसे शिखा हो । शिखावाला । (समासांत में प्रयुक्त) जैसे, विशिख, पंचशिख ।

शिखक—संज्ञा पुं० [सं०] लेखक । मुहर्रिर ।

शिखर—संज्ञा पुं० [सं०] १. सबसे ऊपर का भाग । सिरा । चोटी । २. पहाड़ की चोटी । पर्वतशृंग । ३. अग्रभाग । ४. मंदिर या मकान के ऊपर का निकला हुआ नुकीला सिरा । कंगूरा । कलश । ५. मंडप । गुंबद । ६. जैनियों का एक तीर्थ । ७ एक अस्त्र का नाम । ८. एक रत्न जो अनार के दाने के समान सफेद और लाल होता है । उ०—श्रीफल सकुचि रहे दुरि कानन शिखर हियो विहगान ।—सूर (शब्द०) । ९. कुंद की कली । १०. लौंग । ११. काँख । बगल । १२. पुलक । रोमांच । १३. उँगलियों की एक मुद्रा जो तांत्रिक पूजन में बनाई जाती है । १४. तलवार की नोक (को०) । १५. सूखा तिनका (को०) ।

शिखरणी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखरिणी] दे० 'शिखरिणी' ।

शिखरदशना—वि० स्त्री० [सं०] जिसके दाँत कुंद की कली के समान हों ।

शिखरन—संज्ञा पुं० [सं० शिखरिणी] दही और चीनी का बनाया हुआ एक प्रकार का मीठा पेय पदार्थ या शरबत जिसमें केसर, कपूर तथा मेवे आदि डाले जाते हैं । श्रीखंड ।

शिखरवासिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिखर पर बसनेवाली, दुर्गा ।

शिखरा—संज्ञा स्त्री० [ ] १. मूर्वा । मरोड़फली । मुर्रा । २. एक गदा जो विश्वामित्र ने रामचंद्र को दी थी ।

शिखराद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम ।

शिखरिचरण—संज्ञा पुं० [सं०] चिचड़े की जड़ । अपामार्ग का मूल ।

शिखरिणी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रसाल । २. नारीरत्न । स्त्रियों में श्रेष्ठ । ३. रोमावली । ४. मल्लिका । बेला । मोतिया । ५. नेवारी का पौधा । ६. किशमिश । लघु द्राक्षा । ७. मूर्वा । मरोड़फली । मुरहरी । ८. दही और चीनी का रस या शर्बत । ९. सत्रह अक्षरों की एक वर्णवृत्ति जिसमें क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, लघु और गुरु होते हैं तथा छठे और ग्यारहवें वर्ण पर यति होती है । जैसे,—शिला पै गरु तैं कुपित ललना तोहि लिख कै ।

शिखरिणी^{2}—वि० स्त्री० १ शिखर या चूड़ावाली । २. नोकदार । अनीदार [को०] ।

शिखरी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शिखरिन्] १. पर्वत । पहाड़ । २. पहाड़ी दुर्ग । ३. वृक्ष । पेड़ । ४. अपामार्ग । चिचड़ा । ५. वंदाक । बाँदा । ६. कुंदरु नामक गंधद्रव्य । ७. लोबान । ८. काकड़ासिंगी । ९. ज्वार । मक्का । १०. एक प्रकार का मृग ।

शिखरी^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखर] चोटी । चूड़ा । उ०—जिस दिन शैल शिखरियाँ उनको रजत मुकुट पहनाने आएँ ।—हिम कि०, पृ० २ ।

शिखरी(पु)^3—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखरा] एक गदा जो विश्वामित्र ने रामचंद्र को दी थी । शिखरा । उ०—शिखरी कौमोदकी गदा युग दीपति भरी सदाई ।—रघुराज (शब्द०) ।

शिखरी^{४}—वि० [सं०] १. शिखरवाला। शिखरयुक्त। २. नोकदार। नुकीला (को०)।

शिखलोहित—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुकुरमुत्ता।

शिखांडक—संज्ञा पुं० [सं० शिखाण्डक] काकपक्ष।

शिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुंडन के समय सिर के बीचोबीच छोड़ा हुआ बालों का गुच्छा जो फिर कटाया नहीं जाता और हिंदुओं का एक चिह्न है। चोटी। चुटैया।

यौ० —शिखा सूत्र = चोटी और जनेऊ जो द्विजों के चिह्न हैं और जिनका त्याग केवल संन्यासियों के लिये विधेय है।

२. मोर, मुर्गा आदि पक्षियों के सिर पर उठी हुई चोटी या पंखों का गुच्छा। चोटी। कलगी। ३. आग की लपट। ज्वाला। ४. दीपक की लौ। टेम। उ०—(क) केशौदास तामें दुरी दीप को शिखा सो दौरि दुगवति नीलवास दुति अंग अंग की।—केशव (शब्द०)। (ख) दीप शिखा सम जुवति जन मन जनि होसि पतंग।—तुलसी (शब्द०)। ५. प्रकाश की किरण। ६. नुकीला छोर या सिरा। नोक। ७. ऊपर को उठा हुआ भाग। चोटी। शिखर। ८. पैर के पंजे का सिरा। ९. स्तन का अग्रभाग। चूचक। १०. पेड़ की जड़। ११. शाखा। डाली। १२. अधिपति नायक। १३. श्रेष्ठ पुरुष। १४. कलियारी विष। लांगली। १५. मूर्वा। मरोड़फली। १६. जटामासी। बालछड़। १७. बच। १८. शिफा। १९. तुलसी। २०. कामज्वर। २१. एक वर्णवृत्त जिसके विषम पादों में २८ लघु मात्राएं और अंत में एक गुरु होता है और सम पादों मे ३० लघु मात्रएँ और अंत में एक गुरु होता है।

शिखाकंद—संज्ञा पुं० [सं० शिखाकन्द] शलजम। शलगम।

शिखातरु—संज्ञा पुं० [सं०] दीपवृक्ष। दीवट। दीयट।

शिखाधर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मयूर। मोर। २. मंजुघोष नाम के एक पूर्व जिन (को०)।

शिखाधर^{२}—वि० १. शिखाधारी। २. नोकदार। नुकीला [को०]।

शिखाधार—संज्ञा पुं० [सं०] मयूर। मोर। २. वह जिसे शिखा हो। चूड़ा या चोटीवाला।

शिखापाश—संज्ञा पुं० [सं०] चोटी। चुंदी।

शिखापित्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें हाथ पैर की उंगलियों में सूजन और जलन होती है।

शिखाबंधन—संज्ञा पुं० [सं० शिखाबन्धन] सिर के बालों को मिलाकर बाँधने की क्रिया। चोटी बाँधना।

शिखाभरण—संज्ञा पुं० [सं०] सिर का आभूषण। मुकुट।

शिखामणि^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह रत्न जो सिर पर पहना जाय। २. श्रेष्ठ व्यक्ति।

शिखामणि^{२}—वि० सर्वश्रेष्ठ। प्रधान। शिरोमणि। जैसे,—चौरजार शिखामणि। = श्रीकृष्ण।

शिखामूल—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह कंद जिसके ऊपर पत्तियों का गुच्छा हो। २. गाजर। गृंजन (को०)। ३. शिखाकंद। शलगम। शलजम (को०)।

शिखालु—संज्ञा पुं० [सं०] मयूरशिखा। मोर के सिर पर की कलँगी [को०]।

शिखावती—संज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्वा। मरोड़फली।

शिखावर—संज्ञा पुं० [सं०] कटहल का वृक्ष। पनस।

शिखावर्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ। (महाभारत)।

शिखावल^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोर। मयूर। २. कटहल।

शिखावल^{२}—वि० १. नुकीला। नोकवाला। २. चोटीवाला [को०]।

शिखावला—संज्ञा स्त्री० [सं०] मयूरशिखा नामक वृक्ष [को०]।

शिखावली—संज्ञा स्त्री० [सं०] मोरनी। मयूरी [को०]।

शिखावान्^{१}—वि० [सं० शिखावत्] [वि० स्त्री० शिखावती] १. शिखावाला। २. लपटवाला। ज्वालायुक्त (को०)। ३. नुकीला। नोकदार (को०)।

शिखावान्^{२}—संज्ञा पुं० १ अग्नि। २. चित्रक वृक्ष। चीता। ३. केतु ग्रह। पुच्छल तारा। ४. मोर। मयूर। ५. दीपक (को०)।

शिखावृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] दीवट। दीयट।

शिखावृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह ब्याज जो प्रति दिन बढ़ता जाय। सूद-दर-सूद। २. पराशर स्मृति के अनुसार वह ब्याज जो रोजाने के हिसाब से नित्य वसूल किया जाता है। रोजही।

शिखासूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] चोटी और जनेऊ जो द्विजों का चिह्न है।

शिखि—संज्ञा पुं० [सं०] १. मोर। मयूर। उ०—चीर फारि करिहौं भगौहौं शिखनि शिखि लवलेस।—सूर (शब्द०)। २. तामस मन्वंतर के इंद्र का नाम। ३. कामदेव। ४. अग्नि। ५. तीन की संख्या।

शिखिकंठ^{१}—वि० [सं० शिखिकण्ठ] मोर के कंठ के समान। मोर के कंठ सा।

शिखिकंठ^{२}—संज्ञा पुं० तूतिया। नीला थोथा।

शिखिकण—संज्ञा पुं० [सं०] चिनगारी। स्फुलिंग [को०]।

शिखिकुंद—संज्ञा पुं० [सं० शिखिकुन्द] कुंदरु। बिरोजा।

शिखिग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] १. नीला थोथा। २. एक प्रकार का नीला पत्थर। कांत पाषाण।

शिखिध्वज—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूआँ। २. कार्तिकेय। ३. वह जिस पर अग्नि या मोर का चिह्न बना हो। ४. एक प्राचीन तीर्थ का नाम। ५. मयूरध्वज नामक राजा। उ०—नृपति शिखिध्वज षोड़शों जीतिगो संसार।—केशव (शब्द०)।

शिखिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मयूरी। २. मुर्गी। ३. मुर्गकेश। जटाधारी का पौधा।

शिखिपिच्छ, शिखिपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] मयूरपंख। मोरपंख। मोर की पूँछ [को०]।

शिखिप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बेर।

शिखिभू—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय का एक नाम। स्कंद [को०]।

शिखिमंडल—संज्ञा पुं० [सं० शिखिमण्डल] वरुण वृक्ष। तपिया।

शिखिमोदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा । अजवायन ।

शिखिमृत्यु—संज्ञा पुं० [सं०] मदन । कामदेव [को०] ।

शिखियूप—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकारी नाम का मृग ।

शिखिवर्द्धक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गोल कद्दू । गोल घीया । २. कूष्मांड । कोहँड़ा (को०) ।

शिखिवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय ।

शिखीव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] गरुड़पुराण में वर्णित एक प्रकार का व्रत [को०] ।

शिखिशिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आग की लपट । लौ । २. मोर की कलँगी [को०] ।

शिखिश्रृंग—संज्ञा पुं० [सं०शिखिश्रृङ्ग] चित्रमृग । चित्तीवाला हिरन ।

शिखिशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] मयूरशिखा । मोर की कलँगी ।

शिखिहिंटी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखिहिण्टी] सहदेई । महाबला ।

शिखींद्र—संज्ञा पुं० [सं० शिखीन्द्र] १. तेंदू का पेड़ । तिंदूक । २. आबनूस का पेड़ ।

शिखी^{1}—वि० [सं० शिखिन्] [वि० स्त्री० शिखिनी] १. शिखावाला । चोटीवाला । २. नुकीला । नोकदार (को०) । ३. ज्ञान की चोटी पर पहुंचनेवाला (को०) । ४. अभिमानी । घमंडी (को०) ।

शिखी^{2}—संज्ञा पुं० १. मोर । मयूर । उ०—कुटिल कच तिलक रेखा सीस शिखी शिखंड ।—सूर (शब्द०) । २. मुर्गा । ३. एक प्रकार का सारस । ४. बैल । साँड़ । ५. घोड़ा । ६. चित्रक । चीते का पेड़ । ७. अग्नि । उ०—आखंडल और दंडधर, शिखी वरुण दिगपाल ।— गुमान (शब्द०) । ८. तीन की संख्या (अग्नि तीन प्रकार की होने के कारण) । ९. दीपक । १०. पित्त । ११. पुच्छल तारा । केतु । १२. मेथी । १३. पर्वत । १४. वृक्ष । १५. ब्राह्मण । १६. सतावर । १७. बाण । १८. जटाधारी साधु या भिक्षु । १९. एक नाग का नाम । २०. इंद्र । २१. बगला । बक । २२. अपामार्ग । ओंगा । चिचड़ा । २३. एक प्रकार का विष । २४. अजमोदा (को०) ।

शिखीश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय [को०]

यौ०—शिखीश्वर मास = कार्तिक मास ।

शिगाफ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शिगाफ़] १. चीरा । नश्तर । २. दरार । दर्ज । ३. कलम के बीच का चिराव । ४. छेद । सूराख ।

मुहा०—शिगाफ देना या लगाना = (१) कलम को चीरना । (२) चीरा लगाना । नश्तर लगाना ।

शिगाल—संज्ञा पुं० [फ़ा० । तुल० सं० श्रृगाल] जंबुक । श्रृगाल [को०] ।

शिगिफ्त – संज्ञा पुं० [फ़ा० शिगिफ़्त] अचंभा । आश्चर्य । हैरत ।

शिगुफ्त, शिगुफ्तगी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शिगुफ़्त, शिगुफ़्तगी] विकास । खिलना । २. प्रसन्नता । आह्लाद [को०] ।

शिगुफ्ता—वि० [फ़ा० शिगुफ़्तह्] १. मुकुलित । विकसित । खिला हुआ । २. प्रसन्न । आह्लादित [को०] ।

शिगूड़ी—संज्ञा स्त्री० [देश०] एक जंगली क्षुप या पौधा जो दवा के काम में आता है ।

विशेष—यह वनस्पति चरपरी, गरम तथा वात और पृष्ठशूल का नाश करनेवाली तथा दूसरी ओषधियों के योग से रसायन और शरीर को दृढ़ करनेवाली कही गई है ।

शिगूफा— संज्ञा पुं० [फ़ा० शिगूफ़ह्] १. बिना खिला हुआ फूल । कली । २. फूल । पुष्प । ३. किसी अनोखी बात का होना । अचंभे की बात । चुटकुला ।

मुहा०—शिगूफा खिलना = कोई ऐसी बात या झगड़ा खड़ा होना जिससे मनोरंजन हो । शिगूफा खिलाना = बात खड़ी करना । तमाशे के लिये कोई मामला पैदा कर देना । शिगूफा छोड़ना = (१) कोई नई या अनोखी बात कहना । (२) तमाशा देखने के लिये कोई मामला खड़ा कर देना । शिगूफा फूलना = (१) अनोखी बात निकलना । (२) मामला खड़ा होना ।

शिग्रु—संज्ञा पुं० [सं०] १. सहिजन का वृक्ष । शोभांजन । २. शाक । साग ।

यौ०—शिग्रुबीज = शिग्रुज ।

शिग्रुक —संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिग्रु' । सहिजन ।

विशेष—मनु ने वानप्रस्थ आश्रमी लोगों के लिये इसके भक्षण का निषेध किया है । मेधातिथि और कुल्लूक ने इसे वाह्लिक देशोद्भव कहा है ।

शिग्रुज—संज्ञा पुं० [सं०] सहिजन का बीज ।

शिच् - संज्ञा स्त्री० [सं०] [कर्त्ता का० शिक्] १. जुए की रस्सी । २. बहँगी का छींका या जाल जिसपर बोझ रखा जाता है ।

शिचि— वि० [सं०] काला या सफेद [को०] ।

शित^1—वि० [सं०] १ कृश । दुर्बल । २. कमजोर । निर्बल (को०) । नुकीला । पतला । ४. चोखा । धारदार ।

यौ०—शितधार = तीक्ष्ण धारवाला । शितशूक = (१) यव । जौ । (२) गेहूँ । गोधूम ।

शित^2—संज्ञा पुं० विश्वामित्र के गोत्र के एक ऋषि का नाम ।

शित(पु)^3—वि० [सं० श्वेत या सित] दे० 'सित' ।

शितद्रु —संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शतद्रु । सतलज नदी । २. क्षीर मोरट । मोरट ।

शितनिर्गुंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० शितनिर्गुण्डी] शेफालिका ।

शितपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] मोथा ।

शितवर, शितवार—संज्ञा पुं० [सं०] शिरियारी नामक साग ।

शिताशाक—संज्ञा पुं० [सं०] शालिच शाक । शांति शाक ।

शिताग्र—संज्ञा पुं० [सं०] कंटक । काँटा [को०] ।

शिताद्रिकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णुक्रांता लता । अपराजिता । कोयल ।

शिताफल—संज्ञा पुं० [सं०] शरीफा । सीताफल ।

शिताब[1]—वि० [फ़ा०] १. जल्द । शीघ्र । उ०—दिए धीरक उसे इप वजा बेहिसाब । उड्या वाँते दरहाल तोता शिताब ।—दक्खिनी०, पृ० ६१ । २ तेज । फुर्तीला । तीव्र (को०) ।

शिताब[2]—संज्ञा स्त्री० शीघ्रता । जल्दी [को०] ।

शिताबी —संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. शीघ्रता । जल्दी । २. तेजी । हड़बड़ी ।

शितावर—संज्ञा पुं० [सं० शतावर] १. बकुची । सोमराजी । २. शिरियारी । सतावर ।

शितावरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शतावरी] दे० 'शतावर' ।

शिति[1] वि० [सं०] १. सफेद । शुक्ल । श्वेत । २. काला । कृष्ण । ३. नील । नीला । ४. कर्बुर । चितकबरा (को०) ।

यौ०—शितिकंठ । शितिकुंभ ।

शिति[2]—संज्ञा पुं० भोजपत्र । भूर्ज तरु ।

शितिकंठ—संज्ञा पुं० [सं० शितिकण्ठ] १. दात्यूह पक्षी । मुर्गाबी । जलकाक । २. पपीहा । चातक । ३. मोर । मयूर । ४. नाग देवता । ५. शिव । महादेव ।

शितिकुंभ—संज्ञा पुं० [सं० शितिकुम्भ] कनेर का पेड़ । करवीर वृक्ष ।

शितिकेश —संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद के एक अनुचर का नाम ।

शितिचंदन —संज्ञा पुं० [सं० शितिचन्दन] कस्तूरी ।

शितिचार — संज्ञा पुं० [सं०] शिरियारी नामक साग ।

शितिच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] हंस ।

शितिपक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] हंस ।

शितिपृष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] एक नाग जो एक यज्ञ में मैत्रावरुण बना था ।

शितिमांस—संज्ञा पुं० [सं०] मज्जा । मेद । चर्बी [को०] ।

शितिमूलक—संज्ञा पुं० [सं०] खस । उशीर ।

शितिरत्न —संज्ञा पुं० [सं०] नील मणि । नीलम ।

शितिवासा —संज्ञा पुं० [सं० शितिवासस्] बलदेव । बलराम [को०] ।

शितिसार, शितिसारक —संज्ञा पुं० [सं०] तिंदुक वृक्ष । तेंदू ।

शितीक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक देवता उशना के एक पुत्र का नाम ।

शित्पुट—संज्ञा पुं० [सं०] १. बिलनी की जाति का एक जानवर । २. एक प्रकार का काला भौंरा ।

शिथिल[1]—वि० [सं०] १. जो कसा या जकड़ा न हो । जो खूब बँधा न हो । ढीला । २. सुस्त । मंद । धीमा । ३. जिसमें और शक्ति न रह गई हो । थका हुआ । हारा हुआ । श्रांत । उ० —देह शिथिल भई उड्यो न जाई ।—सूर (शब्द०) । ४ जो कार्य में पूर्ण तत्पर न हो । जो पूरा मुस्तैद न हो । आलस्ययुक्त । जैसे,—कार्य में शिथिल पड़ना । ५. जो अपनी बात पर खूब जमा न हो । अदृढ़ । ६. जिसका पालन कड़ाई के साथ न हो । जिसकी पूरी पाबंदी न हो । जैसे,—नियम शिथिल होना । ७. जो साफ सुनाई न दे । अस्पष्ट (शब्द) । ८. जो पूरे दबाव में न रखा गया हो । छोड़ा हुआ । ९. निष्क्रिय । निरर्थक (को०) । १०. असावधान (को०) । ११. डाल से गिरा या टूटा हुआ (को०) । १२. दुर्बल । कमजोर (को०) ।

क्रि० प्र० —करना ।—पड़ना ।—होना ।

शिथिल[2] —संज्ञा पुं० १. ढीलापन । शिथिलता । सुस्ती । २. बंधन जो कसा न हो । ३. छोड़ना । डालना । ४. त्याग देना । त्यजन [को०] ।

शिथिलता - संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कसे या जकड़े न रहने का भाव । ढीलापन । ढिलाई । २. थकावट । थकान । श्रांति । ३. मुस्तैदी का न होना । अतत्परता । आलस्य । ४. नियम पालन की कड़ाई का न होना । ५. शक्ति की कमी । सामर्थ्य की त्रुटि । ६. वाक्यों में शब्दों का परस्पर गठा हुआ अर्थसंबंध न होना । ७. तर्क में किसी अवयव का अभाव ।

शिथिलाई⑤†—संज्ञा स्त्री० [सं० शिथिल+हिं० आई (प्रत्य०)] दे० 'शिथिलता' ।

शिथिलाना⑤—क्रि० अ० [सं० शिथिलायते ? या सं० शिथिल+हिं० आना (प्रत्य०)] १. शिथिल होना । ढीला पड़ना । २. थकना । श्रांत होना । उ०—करत सिंगार परस्पर दोऊ अति आलस शिथिलाने ।—सूर (शब्द०) ।

शिथिलित —वि० [सं०] १. जो शिथिल हो गया हो । ढीला पड़ा हुआ । २. विश्रांत । थका हुआ । उ०—मृग डाल दिया, फिर धनु को भी, मनु बैठ गए शिथिलित शरीर । बिखरे थे सब उपकरण वहीं आयुध, प्रत्यंचा, शृंग, तीर ।—कामायनी, पृ० १४१ । ३. घुला हुआ । प्रविलीन (को०) ।

शिथिलीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० शिथिलीकृत] शिथिल करना । ढीला करना ।

शिथिलीकृत—संज्ञा पुं० [सं०] जो शिथिल किया गया हो ।

शिथिलीभूत —वि० [सं०] जो शिथिल हो गया हो । शिथिलित पड़ा हुआ । श्लथ ।

शिद्दत —संज्ञा स्त्री० [अ०] १. तेजी । जोर । उग्रता । प्रचंडता । २. अधिकता । ज्यादती । जैसे,—शिद्दत की गरमी या बुखार । ३. कठिनाई (को०) । ४ कष्ट । तकलीफ (को०) ।

शिना —संज्ञा पुं० [सं०] भुइँ आँवला ।

शिनाख्त —संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शिनाख्त] १. यह निश्चय कि अमुक वस्तु या व्यक्ति यही है । पहचान । जैसे,—तुम अपने माल की शिनाख्त कर लो । २. स्वरूप या गुण का बोध । असल नकल, अच्छा बुरा, जान लेने की बुद्धि । परख । तमीज । जैसे,—तुम्हें आदमी की शिनाख्त नहीं है ।

शिनि —संज्ञा पुं० [सं०] १. गर्ग ऋषि के पुत्र का नाम । २. क्षत्रियों का एक भेद । ३ एक यादव वीर का नाम ।

विशेष—इन्होंने वसुदेव के लिये देवकी का बलपूर्वक हरण किया था । इस कारण इनका सोमदत्त के साथ भयंकर युद्ध हुआ था । इनके पुत्र का नाम सत्यक और पौत्र का सात्यकि था जो पांडवों की ओर से महाभारत में लड़ा था ।

शिनिबाहु—संज्ञा पुं० [सं०] वायुपुराण में वर्णित एक नदी का नाम।

शिनिवास—संज्ञा पुं० [सं०] एक पहाड़ का नाम [को०]।

शिनूसा—संज्ञा पुं० [फ़ा०] छिक्का। छींक [को०]।

शिपविष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिपिविष्ट' [को०]।

शिपि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. रश्मि। किरण। २. जल (को०)।

शिपि^{2}—संज्ञा स्त्री० चमड़ा। खाल।

शिपिविष्ट^1—वि० [सं०] १. किरणों से व्याप्त। किरणाच्छादित। २. गंजे सिरवाला। ३. कुष्ट रोगवाला [को०]।

शिपिविष्ट^2—संज्ञा पुं० १. कुष्टी। कोढ़ी। २. खल्वाट व्यक्ति। वह जिसकी खोपड़ी गंजी हो (को०)। ३. शिव (को०)। ४. विष्णु (को०)। ५. वह व्यक्ति जिसके शिश्नाग्र पर चमड़ा न हो (को०)।

शिपुरगड्डी—संज्ञा स्त्री० [त०] एक प्रकार का पौधा जिसकी डाल के रेशे बुरुश बनाने के काम में आते हैं।

शिप्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. लोहे या तांबे का टोप। शिरस्त्राण। उ०—झिलम टोप (शिप्र) यह लोहे या तांबे का बनता था।—हिंदु० स०, पृ० ८५। २. हिमालय पर्वत का एक सरोवर (को०)। ३. कपोल। गाल (को०)। ४. चिबुक। ठुड्ढी (को०)। ५. नाक। नासिका (को०)।

शिप्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मध्यप्रदेश की एक नदी का नाम जिसके किनारे उज्जैन (प्राचीन नाम उज्जयिनी) स्थित है। यह हिमालय के 'शिप्र' सरोवर से निकली है। उ०—आर्य, आपकी वीरता की लेखमाला शिप्रा और सिंधु की लोल लहरियों से लिखी जाती है।—स्कंद०, पृ० ३। २. टोप। शिरस्त्राण (को०)।

शिप्रावात—संज्ञा पुं० [सं०] शिप्रा से आनेवाला पवन। उ०—वह शिप्रावात, प्रिया से प्रिय ज्यों चाटुकार।—अपरा, पृ० २१०।

शिप्री—संज्ञा पुं० [सं० शिप्रिन्] शिरस्त्राणधारी योद्धा। उ०—शिरस्त्राण पहने हुए योद्धा शिप्री कहलाता था।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ८५।

शिफ—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिफा' [को०]।

शिफर(प)‡—संज्ञा पुं० [फ़ा० सिपर] ढाल। उ०—सतएँ शिफर सुसरस बनाई। बान वृष्टि तिन सबै बचाई।—हनुमन्नाटक (शब्द०)।

शिफा^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक वृक्ष की रेशेदार जड़ जिससे प्राचीन काल में कोड़े बनते थे। २. कोड़े की फटकार। चाबुक की मार। ३. माता। ४. हरिद्रा। हलदी। ५. कमल की जड़। पद्मकंद। भसींड़। ६. लता। ७. नदी। ८. एक प्राचीन नदी का नाम। ९. मांसिका। जटामासी। १०. शिखा। चोटी। ११. जड़। मूल (को०)। १२. दे० 'शतपुष्पा' (को०)। १३. कोड़ा। बेत।

यौ०—शिफादंड = कोड़े मारने का दंड।

शिफा^{2}—संज्ञा स्त्री० [अ०] आरोग्य। तंदुरुस्ती। दे० 'शफा'। उ०—उस मसीहा को दिखा दो तो कुछ आजार नहीं, अभी हो जाय शिफा।—श्यामा०, पृ० १०१।

यौ०—शिफाखाना = अस्पताल। दवाखाना।

शिफाकंद—संज्ञा पुं० [सं० शिफाकन्द] कमल की जड़। भसींड़।

शिफाक—संज्ञा पुं० [सं०] पद्ममूल। भसींड़।

शिफाधर—संज्ञा पुं० [सं०] डाल। शाखा।

शिफारुह—संज्ञा पुं० [सं०] बरगद का पेड़।

शिबि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिवि' [को०]।

शिबिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शिविका'।

शिबिर—संज्ञा पुं० [सं०] 'शिविर' [को०]।

शिमाल—संज्ञा स्त्री० [अ०] [वि० शिमाली] उत्तर दिशा।

शिमृडी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चंगोनी या चिंगोनी नाम का पौधा।

शिया—संज्ञा पुं० [अ० शीया] १. मददगार। सहायक। २. अनुयायी। ३. मुसलमानों के दो प्रधान और परस्पर विरोधी संप्रदायों में से एक। हजरत अली को पैगंबर का ठीक उत्तराधिकारी माननेवाला संप्रदाय।

विशेष—उमर, अबूबक्र आदि जो चार खलीफा मुहम्मद साहब के पीछे हुए हैं उन्हें इस संप्रदाय के लोग अनधिकारी मानते हैं तथा पैगंबर के बाद अली और उनके बेटों हसन और हुसेन को ही आदर का स्थान देते हैं। मुहर्रम के महीने में ये अब तक हसन और हुसेन के वीरगति को प्राप्त होने के दिनों में शोक मनाते हैं।

शिरः—संज्ञा पुं० [सं० शिरस्] शिरस् शब्द का समासगत रूप। शिरस् शब्द के कर्ताकारक का एकवचन।

शिरःकपाली—संज्ञा पुं० [सं०] कापालिक संन्यासी।

शिरःकृंतन—संज्ञा पुं० [सं० शिरःकृन्तन] शिर काटना। शिरच्छेद।

शिरःखंड—संज्ञा पुं० [सं० शिरःखण्ड] माथे की हड्डी। कपालास्थि।

शिरःपीड़ा संज्ञा स्त्री० [सं०] सिर का दर्द। माथे की पीड़ा।

विशेष—आयुर्वेद में ११ प्रकार के और यूनानी में १९ प्रकार के शिरोरोग कहे गए हैं। परंतु कोई कोई २१ प्रकार के सिरदर्द बताते हैं। आयुर्वेद के अनुसार वातज, पित्तज, कफज, संनिपातज, रक्तज, क्षयज, कृमिज, सूर्यावर्त, अनंतवात, अर्द्धावभेदक और शंखक ये ११ प्रकार के शिरोरोग होते हैं।

शिरःफल—संज्ञा पुं० [सं०] नारिकेल वृक्ष। नारियल।

शिरःशूल—संज्ञा पुं० [सं०] सिर की पीड़ा।

शिरःस्थ—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिरस्थ'।

शिर—संज्ञा पुं० [सं० शिर, शिरस्] १. सिर। कपाल। मुंड। खोपड़ा। २. मस्तक। माथा। ३. किसी वस्तु का सबसे ऊँचा भाग या सिरा। चोटी। ४. शिखर। ५. सेना का अग्र भाग। ६. पद्य के चरण का आरंभ। टोंका। ७. मुखिया। प्रधान।

अगुआ । ८. पिप्पली मूल । पिपरा मूल । ९. शय्या । १०. विस्तार । विस्तार । ११. अजगर ।

शिरकत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. किसी वस्तु के अधिकार में भाग । संमिलित अधिकार । साझा । हिस्सा । २. किसी कार्य में योग । किसी काम या व्यवसाय में शामिल होना । जैसे,—उनकी शिरकत से यह काम होगा ।

यौ०—शिरकतनामा = दे० 'शिराकतनामा' ।

शिरकती—वि० [अ० शिरकत] शिरकत करनेवाला ।

शिरखिस्त—संज्ञा पुं० [फ़ा० शीरखिश्त] एक वृक्ष का गोंद जो औषध के काम में आता है और जिसे साधारणतः लोग ज्वार से बनी चीनी मानते हैं ।

शिरगोला—संज्ञा पुं० [देश०] दुग्धपाषाण नामक वृक्ष ।

शिरज—संज्ञा पुं० [सं०] केश । बाल । शिरसिज ।

शिरत्रान(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिरस्त्राण] खोद । दे० 'शिरस्त्राण' । उ०—टूटत धुजा पताक छत्र रथ चाप चक्र शिरत्रान ।—सूर (शब्द०) ।

शिरनी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शीरीनी] मिठाई । उ०—इतनी सुनी हर्ष धर्मदासा । शिरनी पान लाइ धरे पासा ।—कबीर सा०, पृ० ८२ ।

शिरनेत—संज्ञा पुं० [देश०] १. गढ़वाल या श्रीनगर के आस पास का प्रदेश । उ०—सुनि सिधाय शिरनेतन देशू । तहँ विवाह किय ब्रह्मनरेशू ।—कबीर (शब्द०) । २. क्षत्रियों की एक शाखा ।

शिरपेंच—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'सिरपेंच' ।

शिरफूल—संज्ञा पुं० [हिं० शिर+फूल] सिर में पहनने का स्त्रियों का आभूषण । सीसफूल । उ०—माँग फूल शिरफूल सब बेणी फूल बनाव ।—केशव (शब्द०) ।

शिरमौर—संज्ञा पुं० [सं० शिरम् + सं० मुकुट, प्रा० मउड़] १ शिरोभूषण । मुकुट । २ श्रेष्ठ व्यक्ति । मुख्य व्यक्ति । प्रधान । उ०—हम खेलब तव साथ, होइ नीच सब भाँति जो । कह्यौ बचन कुरुनाथ, शकुनी तो शिरमौर मम ।—सबल (शब्द०) । २. अधिपति । नायक ।

शिरश्चंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शिरश्चन्द्र] महादेव, शिव ।

शिरश्छेद, शिरश्छेदन—संज्ञा पुं० [सं०] सिर काटना । शिरःकृंतन [को०] ।

शिरसिज—संज्ञा पुं० [सं०] केश । बाल ।

यौ०—शिरसिज पाश = केशबंध ।

शिरसिरुह—संज्ञा पुं० [सं०] केश । बाल ।

शिरस्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिरस्त्राण । २. पगड़ी । शिरोवेष्टन [को०] ।

शिरस्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] नरयान । पालकी । शिविका [को०] ।

शिरस्तापी—संज्ञा पुं० [सं० शिरस्तापिन्] हाथी । हस्ती [को०] ।

शिरस्त्र, शिरस्त्राण—संज्ञा पुं० [सं०] १. युद्ध आदि के समय सिर के बचाव के लिये पहनी जानेवाली लोहे की टोपी । कूड़ । खोद । उ०—उसके पटदांव (पीछे की ओर) एक लंबी पुरुष मूर्ति है जो उरस्त्राण, कंचुक और शिरस्त्राण पहने हुए है ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २९० । २. पगड़ी । मुरेठा । शिरोवेष्टन (को०) ।

शिरस्थ¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. मुखिया । अग्रणी । नायक । २. वह जो वाद या अभियोग लगावे । वादी । अभियोक्ता [को०] ।

शिरस्थ²—वि० उपस्थित । आसन्न । उपनत [को०] ।

शिरस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] मुख्य स्थान । प्रधान कक्ष [को०] ।

शिरस्य¹—वि० [सं०] शिर संबंधी । शिर का । शिर पर स्थित ।

शिरस्य²—संज्ञा पुं० साफ एवं स्वच्छ बाल [को०] ।

शिरहन(पु)†—संज्ञा पुं० [हिं० शिर+आधान] १. उसीसा । तकिया । २. सिरहाना । मुड़वारी । उ०—(क) शिरहन और चरण को सोवन लगी अवधि नहिं जानी ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) ताके हृदय गर्व नहिं थोरा । बैठेउ जाइ शिरहने ओरा ।—सबल (शब्द०)

शिरा¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. रक्त की छोटी नाड़ी । खून की छोटी नली । विशेष दे० 'नाड़ी' । २. पानी का सोता या धारा । ३. जाल के समान गुछी हुई रेखाएँ । ४. पानी खींचने का डोल । ५. पृथ्वी के भीतर भीतर बहनेवाला पानी का सोता ।

विशेष—आठो दिशाओं के स्वामियों के नाम से आठ शिराएँ प्रसिद्ध हैं जैसे,—आग्नेयी, ऐंद्री, याम्या, आदि । बीच में सबसे बड़ी शिरा या महाशिरा है । इनके अतिरिक्त और भी बहुत सी शिराएँ हैं ।

शिरा²—संज्ञा पुं० [देश०] भूरे रंग का एक प्रकार का पक्षी ।

विशेष—इस पक्षी का सिर किरमिजी रंग का तथा पूँछ सफेद होती है । इसकी लंबाई १२ अंगुल के लगभग होती है । यह कुमाऊँ, काशमीर और अफगानिस्तान में होता है तथा भटकटैया के बीज खाता है ।

शिराकत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. साझा । हिस्सेदारी । २. कार्य में योग ।

शिराकतनामा—संज्ञा पुं० [अ० शिराकत + फ़ा० नामह्] वह कागज जिसपर साझे की शर्त लिखी हो ।

शिराकती—वि० [अ० शिराकत] १. साझेदार । हिस्सेदार । २. सहायक । सहयोगी ।

शिराग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वातरोग जिसमें वायु रुधिर के साथ मिलकर गले की नसों को काला कर देती है ।

शिराज—संज्ञा स्त्री० [देश०] हिंदुओं की एक जाति जो चमड़े का काम बहुत अच्छा करती है ।

शिराजाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. छोटी रक्तनाड़ियों का समूह । २. आँख का एक रोग जिसमें लाल डोरे मोटे और कड़े पड़ जाते हैं ।

शिरापत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. पीपल का पेड़ । २. एक प्रकार का खजूर । हिंताल । ३. कैथ का पेड़ । कपित्थ ।

शिरापिड़िका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिरापिडिका] आँख का एक रोग जिसमें पुतली के पास एक फुंसी निकल आती है । २. प्रमेह-पिड़िका । शिराविका पिड़िका ।

शिराप्रहर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नेत्ररोग ।

शिराफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. नारियल । २. अंजीर ।

शिरामूल—संज्ञा पुं० [सं०] नाभि ।

शिरामोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] रक्तस्राव । रक्त का निकलना [को०] ।

शिरायु—संज्ञा पुं० [सं०] रीछ । भालू ।

शिराल^1 वि० [सं०] १. शिरायुक्त । जिसमें शिराएँ हों । २. शिरासंबंधी [को०] ।

शिराल^2—संज्ञा पुं० कर्मरंग । कमरख [को०] ।

शिरालक^1—वि० [सं०] बहुत नसों या नाड़ियोंवाला ।

शिरालक^2—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पौधा जिसे हाड़ा भाँग कहते हैं । अस्थिभंग वृक्ष ।

शिरालक^3—संज्ञा पुं० [?] एक प्राचीन जाति का नाम ।

शिराला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का पौधा । २. कमरख ।

शिराविकापिड़िका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिराविका पिडिका] वह घातक फुंसी जो बहुमूत्र के रोगियों को निकलती है । प्रमेह पीड़िका ।

शिरावृत्त—संज्ञा पुं० [सं०] सीसा नामक धातु ।

शिराहर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. नसों का झनझनाना । २. आँख का एक रोग जिसमें आँख ताँबे के समान लाल हो जाती है और दिखाई नहीं पड़ता ।

शिरि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. खड्ग । तलवार । २. शर । ३. वध करनेवाला व्यक्ति । घातक (को०) । ४. शलभ । पतिंगा । ५. टिड्डी ।

शिरि^{2}—वि० उग्र । क्रूर । रौद्र [को०] ।

शिरियारी—संज्ञा स्त्री० [देश०] एक जंगली बूटी या शाक जो औषध के काम में आता है । सुसना । सुनिषण्णक ।

विशेष—यह जंगली शाक हर जगह होता है । इसमें चँगेरी के समान एक साथ चार चार पत्ते होते हैं जो एक अंगुल चौड़े और नोकदार होते हैं । पत्तों के बीच में कली लगती है । फलों में दो चिपटे बीज होते हैं जो कुछ रोएँदार होते हैं । ये बीज सूजाक में दिए जाते हैं । शिरियारी पंजाब और सिंध में अधिक होती है । वैद्यक में यह कसैली, रूखी, शीतल, हलकी, स्वादिष्ट, शुक्रजनक, रुचिकारी, मेधाजनक और त्रिदोषनाशक कही गई है । इसका साग भी लोग खाते हैं ।

शिरीष—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरस का पेड़ । २. शिरीष का पुष्प (को०) ।

शिरीषक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरिस का पेड़ । २. एक नाग का नाम ।

शिरीषपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद कटभी का पौधा ।

शिरीषी—संज्ञा पुं० [सं० शिरीषिन्] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम ।

शिरुआरी—संज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'शिरियारी' ।

शिरोगद—संज्ञा पुं० [सं०] शिर का रोग [को०] ।

शिरोगुहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर के तीन घटों या कोठों में से एक जिसमें मस्तिष्क और सुषुम्ना नाड़ी का सिरा रहता है । सिर के भीतर का भाग ।

शिरोगृह—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रशाला । अट्टालिका । कोठा ।

शिरोगेह—संज्ञा पुं० [सं०] अट्टालिका । कोठा ।

शिरोग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] सिर का एक वातरोग । समलबाई ।

शिरोज—संज्ञा पुं० [सं०] बाल । केश ।

शिरोदाम—संज्ञा पुं० [सं० शिरोदामन्] पगड़ी । साफा ।

शिरोधरा—संज्ञा स्त्री [सं०] ग्रीवा । गरदन ।

शिरोधाम—संज्ञा पुं० [सं०] चारपाई का सिरहाना ।

शिरोधार्य—वि० [सं०] १. सिर पर धरने योग्य । आदरपूर्वक मानने योग्य । सादर अंगीकार करने योग्य ।

मुहा०—शिरोधार्य करना = (१) सिर पर धारण करना सिर माथे चढ़ाना । (२) आदरपूर्वक स्वीकार करना । आदर के साथ मानना, जैसे—आज्ञा शिरोधार्य करना ।

शिरोधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ग्रीवा । गरदन ।

शिरोधिजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिरा । नस । नाड़ी ।

शिरोध्र—संज्ञा पुं० [सं०] गरदन [को०] ।

शिरोनाप—संज्ञा पुं० [सं० शिरस् + हिं० नाप] सिर का परिमाण । सिर का नाप । उ०—और भी कई भेद हैं जिनका नरदेहशास्त्र में विस्तार से अध्ययन होता है । एक प्रमुख भेद का नाम है शिरोनाप; यदि किसी के के सिर की लंबाई 'क' और चौड़ाई 'ख' है तो उसका शिरोनाप क/ख × १०० हुआ । आर्यों०, पृ० ७ ।

शिरोपाव—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'सिरोपाव' । उ०—अच्छे खिलअत और शिरोपाव देने की कृपा की । —हुमायूँ, पृ० १८३ ।

शिरोभूषण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिर पर पहनने का गहना । जैसे,—सीस फूल । २. मुकुट । ३. शिरोमणि । श्रेष्ठ व्यक्ति ।

शिरोभूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिर का अलंकरण, शीशफूल, कलँगी आदि । उ०—कुछ उदाहरणों में शिरोभूषा पर कमलपुष्प भी जड़े हैं ।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० ४५० ।

शिरोभ्यंग—संज्ञा पुं० [सं० शिरोभ्यंङ्ग] सिर में तेल लगाने की क्रिया ।

शिरोमणि^{1}—संज्ञा पुं०, स्त्री० [सं०] सिर पर का रत्न । चूड़ामणि । २. श्रेष्ठ व्यक्ति । सबसे उत्तम मनुष्य । सिरताज । मुखिया । प्रधान । ३. माला में सुमेरु ।

शिरोमणि^{2}—वि० सर्वप्रधान । सर्वश्रेष्ठ [को०] ।

शिरोमर्मा—संज्ञा पुं० [सं० शिरोमर्मन्] जंगली सूअर । शूकर ।

शिरोमाली—संज्ञा पुं० [सं० शिरोमालिन्] मुंड की माला धारण करनेवाले, शिव । महादेव ।

शिरोमौलि—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिर का रत्न । २. श्रेष्ठ व्यक्ति ।

शिरोरक्षी—संज्ञा पुं० [सं० शिरोरक्षिन्] सदा राजा के साथ रहनेवाला रक्षक । बाडीगार्ड ।

शिरोरत्न—संज्ञा पुं० [सं०] शिरोमणि ।

शिरोरुजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सप्तपर्ण वृक्ष । सातवन । २. मस्तक की पीड़ा (को०) ।

शिरोरुह—संज्ञा पुं० [सं०] सिर के ऊपर के बाल । केश ।

शिरोरेखा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] नागरी अक्षरों पर लगाई जानेवाली शीर्ष रेखा। उ॰—शिरोरेखा ने नागरी की वैज्ञानिकता और कलापूर्णता दोनों को बढ़ाया है।—भाषा शि॰, पृ॰ ५८।

शिरोवर्ती—वि॰ [सं॰ शिरोवर्तिन्] अग्रवर्ती। मुखिया। प्रधान। नायक। शीर्षस्थ [को॰]।

शिरोवल्ली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] मोर या मुरगे की चोटी। कलँगी।

शिरोवस्ति संज्ञा पुं॰ [सं॰] वातज सिर के दर्द का एक उपचार।

विशेष—उर्द के सने हुए आटे से सिर पर आठ या सोलह अंगुल की वाढ़ बाँधकर बीच में गरम तेल भर दे और चार घड़ी रखकर निकाल डाले। इससे वातज शिरोरोग, कर्णरोग, ग्रीवा रोग, और दाढ़ के रोग ४, ५ दिन के सेवन से अच्छे हो जाते हैं।

शिरोवृत्त—संज्ञा पुं॰ [सं॰] गोल मिर्च। काली मिर्च।

शिरोवृत्ताफल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] लाल ओंगा। रक्त अपामार्ग। लाल चिचड़ा।

शिरोवेष्ट—संज्ञा पुं॰ [सं॰] उष्णीष। पगड़ी। साफा।

शिरोवेष्टन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पगड़ी [को॰]।

शिरोर्हत्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सिर की पीड़ा। सिर का दर्द।

शिरोहर्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का नेत्ररोग जो शिरोत्पात की चिकित्सा न करने से हो जाता है।

शिरोहारी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शिरोहारिन्] १. सिरों की माला पहननेवाले, शिव। महादेव।

शिरोऽर्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सिर का दर्द। सिर की पीड़ा [को॰]।

शिरोऽस्थि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] खोपड़ी की हड्डा। करोटि [को॰]।

शिर्क—संज्ञा पुं॰ [अ॰] अनेकेश्वरवादी होना। ईश्वर में द्वैत भाव रखना [को॰]।

शिर्कत—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰] दे॰ 'शिरकत', 'शिराकत' [को॰]।

यौ॰—शिर्कतनामा।

शिलंडी—संज्ञा स्त्री॰ [देश॰] एक प्रकार की घास। बीड़।

विशेष—यह सिंध, बलोचिस्तान, दक्षिण, मलाबार और लंका आदि के रेतीले स्थानों में बहुतायत से पाई जाती है। भारत से बाहर यह अरब और उत्तरी तथा मध्य अमरीका में भी होती है। यह घास जिस स्थान पर होती है उस स्थान पर जमीन में चावल की तरह के एक प्रकार के दाने भी होते हैं। गरीब लोग इन दानों को उबालकर अथवा इनका आटा बनाकर खाते हैं।

शिलंधिर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शिलन्धिर] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शिलंब—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शिलम्ब] १. जुलाहा। तंतुवाय। २. बुद्धिमान्। समझदार। ३. तपस्वी। साधु। संत (को॰)।

शिल^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. खेत कट जाने और कृषक द्वारा उसे छोड़ देने के बाद भूमि में पड़ा हुआ एक एक दाना बीनना। दे॰ 'उंछ'। २. पारियात्र के एक पुत्र का नाम।

शिल^2—संज्ञा स्त्री॰ १. दे॰ 'शिला'। २. दे॰ 'सिल'।

शिलक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम।

शिलगर्भज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पाषाणभेद। पखानभेद।

शिलज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शैलज। भूरि छरीला।

शिलरति—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वह जो उंछ वृत्ति के द्वारा जीविका निर्वाह करता हो। उंछशील।

शिलवट—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰] दे॰ 'सिलवट'।

शिलवाहा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शिलावहा] एक प्राचीन नदी का नाम। दे॰ 'शिलावहा'।

शिलांजनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शिलाञ्जनी] कालांजनी वृक्ष। काली कपास।

शिलांत—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शिलान्त] अश्मंतक वृक्ष।

शिला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. पाषाण। पत्थर। २. पत्थर का बड़ा चौड़ा टुकड़ा। चट्टान। सिल। ३. मनःशिला। मैनसिल। ४. कपूर। ५. शिलाजीत। ६. गेरू। ७. नील का पौधा। ८. हरीतकी। हर्रे। ९. गोरोचन। १०. दूब। ११. पत्थर की कंकड़ी अथवा बटिया। १२. भूमि में पड़ा हुआ एक एक दाना बीनने का काम। उंछवृत्ति। उ॰—बीन्यो शिला क्षुधावश छीना।—रघुराज (शब्द॰)। १३. दे॰ 'शिरा'। १४. चक्की के नीचे का पाट (को॰)। १४. चौखट के नीचे की लकड़ी (को॰)। १६ स्तंभ का ऊपरी सिरा (को॰)।

शिलाकर्णी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शल्लकी वृक्ष। सलई।

शिलाकुट्टक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पत्थर तोड़ने की छेनी।

शिलाकुसुम—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शिलाजीत।

शिलाक्षर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] प्रस्तरखंड पर अक्षर उत्कीर्ण करना। शिलालेखन। शिलालेख। २. लीथोग्राफी (अँग॰)। पत्थर की छपाई [को॰]।

शिलाक्षार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चूना।

शिलागृह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] गह्वर। गुहा। कंदरा [को॰]।

शिलाघन—वि॰ [सं॰] शिला की तरह कठोर।

शिलाचक्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शालग्राम की मूर्ति। २. प्रस्तर पर उत्कीर्ण कोई चक्र।

शिलाचय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पर्वत। पहाड़।

शिलाज^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. छरीला। पत्थर का फूल। २. लोहा। ३. शिलाजीत। ४. पेट्रोल (को॰)। ५. कोई भी शिलाभूत पदार्थ (को॰)।

शिलाज^2—वि॰ खनिज [को॰]।

शिलाजतु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शिलाजीत। २. गैरिक धातु। गेरू (को॰)।

शिलाजा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सफेद रंग का पत्थर। संगमरमर।

शिलाजित्—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'शिलाजीत'।

शिलाजीत—संज्ञा पुं॰, स्त्री॰ [सं॰ शिलाजतु] काले रंग की एक प्रसिद्ध ओषधि जिसे कुछ लोग मोमियाई भी कहते हैं।

विशेष—सुश्रुत के अनुसार यह ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की किरणों से तपी हुई शिलाओं का रस है। 'निघंटु' के अनुसार यह दो प्रकार का होता है—एक पर्वतों से निकलता है और दूसरा खारी जमीन में मिट्टी और पानी के योग से बनता है। 'रसरत्नाकर' इसकी उत्पत्ति सोने, चाँदी, लोहे और ताँबे से मानता है। परंतु यह प्रायः पहाड़ों पर या लोहे की खानवाले गड्ढे में ही मिलता है। शास्त्रों के अनुसार यह छह प्रकार का होता है। 'रसरत्न' के अनुसार यह दो प्रकार का होता है। एक वह जिसमें से गोमूत्र के समान गंध आती है। यह साधारणतः बहुत मिलता है। और दूसरा कपूर के समान सफेद होता है। इसमें से किसी प्रकार की गंध नहीं आती। इसका रंग कई प्रकार का होता है। विंध्याचल का शिलाजीत सबसे उत्तम कहा जाता है। इसको रासायनिक रीति से शुद्ध करके ओषधि के काम में लाते हैं। यह बड़ा ही गुणकारी और शक्तिवर्धक होता है। अनुपानभेद के अनुसार नाना प्रकार के रोगों के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। वैद्यक के अनुसार यह कड़वा, चरपरा, गरम, रसायन, छेदन, योगवाही, कफ, मेद, पथरी, शर्करा, सूजाक, क्षय, श्वास, वातरक्त, बवासार, पांडुरोग, मृगी, उन्माद, खाँसी, इत्यादि रोगों का नाश करनेवाला माना गया है।

पुराणों के अनुसार देवासुर संग्राम के समय जब अमृत निकालने के लिये देवताओं और राक्षसों ने समुद्र को मंदराचल पर्वत को मथानी बनाकर मथा, तब शेषनाग के झाग और मथने की गरमी से पर्वत के भीतर की धातुएं पिघल गई और पसीने के रूप में बहने लगीं। उसी स्राव का नाम शिलाजीत, गिरिस्वेद या शिलामल हुआ। पीछे से देवताओं ने ब्रह्मा और इंद्र का पूजनकर मनुष्यों के कल्याणार्थ मंदराचल का वही पसीना अन्य पर्वतों को दे दिया।

पर्या०—अगज। अद्रिज। शिलाज। शीतपुष्पक। शैल। शैलेय। अश्मलाक्षा। जत्वश्मक। गैरेय। अर्थ्य। गिरिज। अश्मज। अश्मोत्थ। शिलाव्याधि। अश्मजतुक।

शिलाटक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुत बड़ा मकान। अट्टालिका। २. मकान के सबसे ऊपरी भाग में बना हुआ छोटा कमरा। चौबारा। ३. किसी इमारत के चारों ओर बना हुआ बड़ा घेरा। चहारदीवारी। परकोटा। ४. गड्ढा। गर्त। बिल। सूराख।

शिलाठिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] रक्त पुनर्नवा। लाल गदहपूरना।

शिलातल—संज्ञा पुं० [सं०] शिला। पाषाणपृष्ठ।

शिलात्मज—संज्ञा पुं० [सं०] लोहा।

शिलात्मिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोना या चाँदी गलाने की घरिया।

शिलात्व—संज्ञा पुं० [सं०] शिला का भाव या धर्म।

शिलात्वच्—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिला या वल्का नाम की ओषधि।

शिलाद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शिलादद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] १. शैलेय नामक गंधद्रव्य। छरीला। २. शिलाजीत।

शिलादान—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणों के अनुसार वह दान जिसमें किसी ब्राह्मण को शालग्राम की मूर्ति दी जाती है। २. शिल का ग्रहण करना। खेत में से दाने चुनना।

शिलादित्य—संज्ञा पुं० [सं० शीलादित्य] कान्यकुब्ज का एक नरेश। विशेष दे० 'हर्षवर्धन'।

शिलाद्वंद्व—संज्ञा पुं० [सं० शिलाद्वन्द्व] शैलेय नामक गंधद्रव्य। छरीला।

शिलाधातु—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोनागेरू। २. खरिया। मिट्टी। ३. चीनी। शक्कर।

शिलानिर्यास—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिलाजीत'।

शिलानीड़—संज्ञा पुं० [सं० शिलानीड] गरुड़।

शिलान्यास—संज्ञा पुं० [सं०] नींव की शिला रखना। नवीन भवन-निर्माण के समय नींव में पूजनादि करके शिला का स्थापन करना।

शिलापट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. पत्थर की चट्टान। उ०—धरी तेरे ही काज यह शिलापट्ट विधि लाय।—सीताराम (शब्द०)। २. मसाला आदि पीसने की सिल।

शिलापट्टक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिलापट्ट [को०]।

शिलापुत्र, शिलापुत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] बट्टा जिससे सिल पर कोई चीज पीसी जाती है।

शिलापुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. छरीला। शैलेय। पत्थर का फूल। पथरफूल। २. दे० 'शिलाजीत'।

शिलापेष—संज्ञा पुं० [सं०] प्रस्तर की चक्की या सिल आदि [को०]।

शिलाप्रतिकृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिला पर उकेरी मूर्ति या शिलात्मक प्रतीक [को०]।

शिलाप्रमोक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार लड़ाई मे पत्थर फेंकना या लुढ़काना।

शिलाप्रवालक—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्रानुसार एक प्रकार का साधारण रत्न [को०]।

शिलाप्रसून—संज्ञा पुं० [सं०] शैलज या छरीला नामक गंधद्रव्य। शिलाकुसुम।

शिलाफलक—संज्ञा पुं० [सं०] पत्थर की पटिया। पत्थर का पाटा।

शिलाबंध—संज्ञा पुं० [सं० शिलाबन्ध] वह प्राचीर या परकोटा जो पत्थरों के टुकड़ों से बना हो।

शिलाभव—संज्ञा पुं० [सं०] छरीला। शैलज।

शिलाभिष्यंद—संज्ञा पुं० [सं० शिलाभिष्यन्द] शिलाजीत।

शिलाभेद—संज्ञा पुं० [सं०] १. पाषाणभेदा वृक्ष। पखानभेद। २. पत्थर तोड़ने की छेनी।

शिलामल—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत।

शिलायु—संज्ञा पुं० [सं०] गले में होनेवाला एक प्रकार रोग।

विशेष—इसमें कफ और रक्त के कुपित होने से गले में आँवले की गुठली के समान गाँठ उत्पन्न होती है जिसमें बहुत पीड़ा होती

है। इसके कारण खाया हुआ अन्न गले में अटकता है। इसको गिलायु भी कहते हैं।

शिलायूप—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम।

शिलारंभा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिलारम्भा] कठकेला। काष्ठ कदली।

शिलारस—संज्ञा पुं० [सं०] लोहबान की तरह का एक प्रकार का सुगंधित गोंद।

विशेष—कुछ लोग इसे खनिज भी मानते हैं, पर वास्तव में यह एक वृक्ष का गोंद अथवा जमा हुआ दूध है। इसका वृक्ष पूरबी बंगाल, आसाम, भूटान, पेगू, चीन, मलाया, मेरगुई, जावा और यूनान में पाया जाता है। इसका वृक्ष ६० से १०० फुट तक ऊंचा होता है। इसके पत्ते ४½ इंच तक लंबे, जड़ की ओर गोलाकार, अनीदार और किंचित् बारीक कँगूरेदार होते हैं। शाखाओं के अंत में घुंडीदार फूल होते हैं। फल गोलाकार होते हैं जिनमें बीजों की अधिकता होती है। वैद्यक के अनुसार यह कड़वा, चरपरा, स्वदिष्ट, स्निग्ध, गरम, सुगंधित, वर्ण को सुंदर करनेवाला और त्रिदोष आदि को शांत करनेवाला होता है।

शिलारोपण—संज्ञा पुं० [सं०] शिलान्यास।

शिलारोहण—संज्ञा पुं० [सं०] विवाह की एक विधि। अश्मारोहण। उ०—अब तक विवाह की तीन विधियाँ थीं। एक अग्निप्रदक्षिणा, दूसरी, सप्तपदी लाजाहोम, तीसरी शिलारोहण।—वैशाली, पृ० ३४५।

शिलालिपि—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिलालेख

शिलाली—संज्ञा पुं० [सं० शिलालिन्] एक अति प्राचीन नाट्यशास्त्र के आचार्य।

शिलालेख—संज्ञा पुं० [सं०] पत्थर पर लिखा या खोदा हुआ कोई प्राचीन लेख। पुराने लेख जो पत्थरों पर लिखे हुए पाए जाते हैं और जिनमें किसी प्रकार का अनुशासन या दान आदि उल्लिखित होता है।

शिलावर्षी१—संज्ञा पुं० [सं० शिलावर्षिन्] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

शिलावर्षी२—वि० पत्थर बरसानेवाला।

शिलावल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शिलावल्कला] एक प्रकार की ओषधि। शिलावल्का।

शिलावल्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की विधि जिसे शिलजा और श्वेता भी कहते हैं। राजनिघंटु के अनुसार यह ठंढी, स्वादु, कृच्छ्रमेह, मूत्रावरोध, अश्मरी, शूलज्वर और पित्त का नाश करनेवाली है।

शिलावह—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन जनपद का नाम। २. इस जनपद का निवासी।

शिलावहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम।

शिलावृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आकाश से ओले या पत्थर गिरना। २. उपलवृष्टि। पथराव।

शिलावेश्म—संज्ञा पुं० [सं० शिलावेश्मन्] १. कंदरा। गुफा। २. पत्थर का बना हुआ मकान।

शिलाव्याधि—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिलाजीत'।

शिलासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शैलेय नामक गंधद्रव्य। २. पत्थर का बना हुआ आसन। ३. शिलाजीत।

शिलासार—संज्ञा पुं० [सं०] लोहा।

शिलास्वेद—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत।

शिलाहरि—संज्ञा पुं० [सं०] शालिग्राम की मूर्ति। उ०—भृगु मुनि कहा शिलाहरि धोई। करहु पान कछु दोष न होई।—विश्राम (शब्द०)।

शिलाहारी—संज्ञा पुं० [सं० शिलाहारिन्] वह जो शिला या उंछ वृत्ति से अपना निर्वाह करता हो। उंछशील।

शिलाह्व, शिलाह्वय—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत।

शिलिंग—संज्ञा पुं० [अं०] इंगलैंड में चलनेवाला चाँदी का एक सिक्का जो प्रायः पुराने बारह आने मूल्य का होता है।

शिलिंद—संज्ञा पुं० [सं० शिलिन्द] एक प्रकार की मछली।

विशेष—वैद्यक के अनुसार इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है और श्लेष्मावर्धक, हृद्य और वात-पित्त-नाशक माना जाता है।

शिलि१—संज्ञा पुं० [सं०] भोजपत्र। भूर्जवृक्ष।

शिलि२—संज्ञा स्त्री० चौखट के नीचे की लकड़ी। डेहरी। देहली।

शिलिन—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम।

शिलींध्र—संज्ञा पुं० [सं० शिलीन्ध्र] १. केले का फूल। २. ओला। बनौरी। ३. शिलिंद नामक मछली। ४. भुइँछत्ता। कुकुरमुत्ता। ५. कठकेला।

शिलींध्रक—संज्ञा पुं० [सं० शिलीन्ध्रक] कुकुरमुत्ता। खुमी।

शिलींध्री—संज्ञा स्त्री० [सं० शिलीन्ध्री] १. केचुआ। गंडूपदी। २. मिट्टी। ३. एक प्रकार की चिड़िया।

शिली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. देहलीज। २. केचुआ। गंडूपदी। ३. भोजपत्र। ४. बाण। ५. भाला। ६. खंभे का ऊपरी भाग। स्तंभशीर्ष (को०)। ७. मडूक। मेढक।

शिलीपद—संज्ञा पुं० [सं०] फीलपाँव नामक रोग। श्लीपद।

शिलीभूत—वि० [सं०] शिला बना हुआ। उ०—शिलीभूत सौंदर्य, ज्ञान, आनद अनश्वर। शब्द शब्द में तेरे उज्ज्वल जड़ित हिम शिखर।—युग०, पृ० ६२।

शिलीमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. भ्रमर। भौंरा। उ०—(क) कुँवरि ग्रसित श्रीखंड अहि भ्रम चरण शिलीमुख लाम।—सूर (शब्द०)। २. बाण। तीर। उ०—न डगैं न भगैं जिय जानि शिलीमुख पंच धरे रतिनायक है।—तुलसी (शब्द०)। ३. युद्ध। समर। लड़ाई। ४. मूर्ख। बेवकूफ।

शिलु—संज्ञा पुं० [सं०] लिसाड़ा। बहुवार वृक्ष।

शिलूष—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि जो नाट्यशास्त्र के आचार्य माने जाते हैं। २. बेल का वृक्ष।

शिलेय१—वि० [सं०] शिला संबंधी। शिला का।

शिलेय²—संज्ञा पुं० शिलाजीत ।

शिलोंछ—संज्ञा पुं० [सं० शिलोञ्छ] फसल कट जाने पर खेत में गिरे पड़े दाने चुनकर जीवन निर्वाह करने की वृत्ति । शिल और उंछवृत्ति ।

यौ०—शिलोंछवृत्ति = दे० 'शिलोंछ' । शिलोंछ वृत्ती(पु) = दे० 'शिलोंछ' । उ०—करि शिलोंछ वृत्ती मन लावै । स्वामी को परसाद करावै ।—राम० धर्म०, पृ० ३४४ ।

शिलोंछन—संज्ञा पुं० [सं० शिलोञ्छन] शिल और उंछवृत्ति ।

शिलोंछी—वि० [सं० शिलोञ्छिन्] शिलोंछ वृत्तिवाला । अल्पसंग्रही ।

शिलोच्चय—संज्ञा पुं० [सं०] पर्वत । पहाड़ ।

शिलोत्थ—संज्ञा पुं० [सं०] १. छरीला या शैलेय नामक गंधद्रव्य । २. शिलाजीत ।

शिलोद्भव—संज्ञा पुं० [सं०] १. शैलेय । छरीला । २. पीला चंदन । ३. सोना । स्वर्ण (को०) ।

शिलोद्भिदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाषाणभेद । पत्थरफोड़ ।

शिलौका—संज्ञा पुं० [सं० शिलौकस्] १. वह जो पर्वत पर होता हो । २. गरुड़ ।

शिल्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथ से कोई चीज बनाकर तैयार करने का काम । दस्तकारी । कारीगरी । हुनर । जैसे, बरतन बनाना । कपड़े सीना । गहने गढ़ना आदि । २. कला संबंधी व्यवसाय, जैसे—अब इस नगर में के कई शिल्प नष्ट हो गए हैं । ३. दक्षता । पाटव । कौशल । चातुर्य (को०) । ४. निर्माण । सर्जन । सृष्टि । रचना (को०) । ५. आकार । आवृत्ति । रूप (को०) । ६. अनुष्ठान । क्रिया । धार्मिक कृत्य (को०) । ७. यज्ञादि में प्रयुक्त स्रुवा (को०) ।

शिल्पक—संज्ञा पुं० [सं०] अष्टादश उपरूपकों में एक उपरूपक जिसमें चारों वृत्तियाँ, चार अंक, शांत और हास्य के अलावा कोई भी रस, ब्राह्मण नायक, उपनायक हीन पुरुष और इंद्रजाल, श्मसानादि का वर्णन होता है । इसके २७ अंग कहे गए हैं ।

शिल्पकर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिल्पकार' ।

शिल्पकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] दस्तकारी । शिल्पकला । हस्तकला (को०) ।

शिल्पकला—संज्ञा स्त्री० [सं०] हाथ से चीज बनाने की कला । कारीगरी । दस्तकारी । उ०—तो सों लहि आदर्श बढ़त कर शिल्पकला सब ।—श्रीधर (शब्द०) ।

शिल्पकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो हाथ से अच्छी अच्छी चीजें बनाकर तैयार करता हो । शिल्पी । कारीगर । दस्तकार । उ०—नए नए साजों बाजों की शिल्पकार करते हैं सृष्टि ।—साकेत, पृ० ३७४ । २. राज । मेमार ।

शिल्पकारक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शिल्पकारिका] हाथ से अच्छी अच्छी चीजें बनानेवाला कारीगर । शिल्पकार ।

शिल्पकारी—संज्ञा पुं० [सं० शिल्पकारिन्] वह जो शिल्प का कार्य करता हो । कारीगर ।

शिल्पकौशल—संज्ञा पुं० [सं०] शिल्पकार्य में पटुता या दक्षता ।

शिल्पगृह—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ बहुत से शिल्पी मिलकर चीजें बनाते हों । कारखाना ।

शिल्पगेह संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिल्पगृह' ।

शिल्पजीवी—संज्ञा पुं० [सं० शिल्पजीविन्] वह जो शिल्प के द्वारा जीविका निर्वाह करता हो । कारीगर । दस्तकार ।

शिल्पज्ञ—वि० पुं० [सं०] शिल्प जाननेवाला । कारीगरी को जाननेवाला ।

शिल्पता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिल्प का भाव या धर्म । शिल्पत्व ।

शिल्पत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शिल्प का भाव या धर्म । शिल्पता ।

शिल्पप्रजापति—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वकर्मा का एक नाम ।

विशेष—विश्वकर्मा ही समस्त शिल्पों के आविष्कर्ता और शिल्पियों के मूलपुरुष माने जाते हैं ।

शिल्पलिपी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पत्थर या ताँबे आदि पर अक्षर खोदने की विद्या ।

शिल्पविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हाथ से अच्छी अच्छी चीजें बनाने की विद्या । २. गृहनिर्माण कला । मकान आदि बनाने की विद्या । ३. यांत्रिक विज्ञान (को०) ।

शिल्पविधान—संज्ञा पुं० [सं० शिल्प + विधान] साहित्य में रचना या निर्माण का ढंग । रीति या पद्धति । उ०—अतएव कामायनी अपना स्वतंत्र आदर्श और स्वतंत्र शिल्पविधान रखती है । —बी० श० महा०,—पृ० ३४८ ।

शिल्पशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ बहुत से शिल्पी मिलकर तरह तरह की चीजें बनाते हों । कारखाना । शिल्पगृह ।

शिल्पशास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह शास्त्र जिसमें हाथ से चीजें बनाने का निरूपण हो । शिल्पविद्या । २. गृहनिर्माण का शास्त्र । वास्तु शास्त्र ।

शिल्पसमाह्वय—संज्ञा पुं० [सं०] कारीगरी का मुकाबला ।

शिल्पस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शिल्पकला में निष्णात हो । शिल्पज्ञ व्यक्ति (को०) ।

शिल्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] नाई की दुकान (को०) ।

शिल्पाजीवी—संज्ञा पुं० [सं० शिल्पाजीविन्] दे० 'शिल्पजीवी' (को०) ।

शिल्पालय—संज्ञा पुं० [सं०] शिल्पगृह । कारखाना (को०) ।

शिल्पिक¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शिल्प द्वारा निर्वाह करता हो । कारीगर । दस्तकार । २. शिव का एक नाम । ३. नाटक का एक भेद । दे० 'शिल्पक' । ४. कारीगरी । दस्तकारी (को०) ।

शिल्पिक²—वि० हाथ संबंधी अथवा यांत्रिक (को०) ।

शिल्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का तृण जो औषध रूप में काम आता है ।

विशेष—यह दक्षिण में अधिकता से होता है और औषधि रूप में काम आता है । वैद्यक में यह मधुर तथा शीतल कहा गया है और इसके बीज बल तथा वीर्य बढ़ानेवाले माने गए हैं ।

शिल्पिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिल्पी होने का भाव। उ०—स्वल्प, अकृत्रिम कला शिल्पिता के ध्वनिगूढ़ निदर्शन, रंगों की रुचि के स्वर करते दृष्टि सरणि को विस्मित।—अतिमा, पृ० १०३।

शिल्पिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिल्पी का स्त्रीलिंग रूप। २ एक प्रकार की घास।

शिल्पिशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिल्पगृह। कारखाना।

शिल्पी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शिल्पिन्] १. शिल्पकार। कारीगर। २. राज। थवई। ३. चितेरा। चित्रकार। ४. नखी नामक गंधद्रव्य। ५. वह जो किसी भी कला में प्रवीण हो (को०)।

शिल्पी^{२}—वि० १. ललितकला या यांत्रिक कला संबंधी [को०]।

शिल्ह—संज्ञा पुं० [सं० शिह्ल] दे० 'शिलारस'।

शिल्हक—संज्ञा पुं० [सं० शिह्लक] दे० 'शिलारस'।

शिवंकर—संज्ञा पुं० [सं० शिवङ्कर] १. मंगल करनेवाले, शिव। २. तलवार। ३. शिव का एक गण। ४. रोग फैलानेवाले एक असुर का नाम। ५. एक प्रकार का बालग्रह।

शिवंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवन्तिका] गुलदाउदी।

शिवंसा†—संज्ञा पुं० [सं० शिव + अंश] शस्य का वह अंश जो शैव साधुओं के लिये अनाज काटने के समय पृथक् कर दिया जाता है।

शिव^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मंगल। कल्याण। क्षेम। २. जल। पानी। ३. सेंधा नमक। ४. शृगाल। सियार। गीदड़। ५. खूँटा। ६. पारा। ७. गुग्गुल। ८. पुंडीरक वृक्ष। ९. मोक्ष। १०. काला धतूरा। ११. वेद। १२. देव। १३. कीलक ग्रह। शुभग्रह। १४. रुद्र। काल। १५. वसु। १६. एक प्रकार का मृग। १७. एक प्रकार की गुड़ की शराब। १८. प्लक्ष द्वीप तथा जंबू द्वीप के एक वर्ष का नाम। १९. लिंग। २०. एक प्रकार का नृत्य। २१. एक छंद का नाम। इसके प्रत्येक चरण में ५,६ के विश्राम से ११ मात्राएँ और अंत में सगण, रगण, नगण, में से कोई एक होता है। इसकी तीसरी, छठी और नवीं मात्राएँ लघु रहती हैं। २२. परमेश्वर। भगवान्। २३. विष्कंभ आदि सत्ताइस योगों के अंतर्गत एक योग। २४. समुद्री लवण। २५. सुहागा। २६. आँवला। २७. कदंब। कदम। २८. फिटकरी। २९. सिंदूर। ३०. मिर्च। ३१. तिल का फूल। ३२. चंदन। ३३. लोहा। ३४. बालू। ३५. नीलकंठ पक्षी। ३६. कौवा। ३७. मौलसरी का पेड़। ३८. हिंदुओं के प्रसिद्ध देवता जो सृष्टि का संहार करनेवाले और पौराणिक त्रिमूर्ति के अंतिम देवता कहे गए हैं।

विशेष—वैदिक काल में यही रुद्र के रूप में पूजे जाते थे। पर पौराणिक काल में ये शंकर, महादेव और शिव आदि नामों से प्रसिद्ध हुए। पुराणानुसार इनका रूप इस प्रकार है,—इनके सिर पर गंगा, माथे पर चंद्रमा तथा एक और तीसरा नेत्र, गले मे साँप तथा नरमुंड की माला, सारे शरीर में भस्म, व्याघ्रचर्म ओढ़े हुए और बाएँ अंग में अपनी स्त्री पार्वती को लिए हुए। इनके पुत्र गणेश तथा कार्तिकेय, गण भूत और प्रेत, प्रधान अस्त्र त्रिशूल और वाहन बैल है जो नंदी कहलाता है। इनके धनुष का नाम पिनाक है जिसे धारण करने के कारण ये पिनाकी कहे जाते हैं। इनके पास पाशुपत नामक एक प्रसिद्ध अस्त्र था जो उन्होने अर्जुन को उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर दे दिया था। पुराणों में इनके संबंध में बहुत सी कथाएँ हैं। ये कामदेव का दहन करनेवाले और दक्ष का यज्ञ नष्ट करनेवाले माने जाते हैं। कहते हैं, समुद्रमंथन के समय जो विष निकला था, वह इन्होंने पान किया था। वह विष इन्होंने अपने गले में ही रखा और नीचे पेट में नहीं उतारा, इसलिये इनका गला नीला हो गया और ये नीलकंठ कहलाने लगे। परशुराम ने अस्त्रविद्या की शिक्षा इन्हीं से पाई थी। संगीत और नृत्य के भी ये प्रधान आचार्य और परम तपस्वी तथा योगी माने जाते हैं। इनके नाम से एक पुराण भी है जो शिवपुराण कहलाता है। इनके उपासक 'शैव' कहलाते हैं। इनका निवासस्थान कैलास माना जाता है और लोक में इनके लिंग का पूजन होता है।

पर्या०—शंभु। महादेव। ईश्वर। ईश। खंडपरशु। ऊर्ध्वरेता। ईशान। पंचानन। शिपिविष्ट। अर्धनारीश। भर्ग। विश्वनाथ। गिरीश। मृत्युंजय। त्रिलोचन। हर। भैरव। उमापति। भूतनाथ। काशीनाथ। नंदीश्वर। रुद्र। महाकाल। वासुदेव। जटाधर। पशुपति। पुरुष। कृत्तिवासा। पिनाकी। धूर्जटि। नीललोहित। उग्र। कपर्दी। श्रीकंठ। शितिकंठ। शूली।

शिव^{२}—वि० १. कल्याण करनेवाला। मंगल करनेवाला। २. सुखी। प्रसन्न (को०)।

शिवक—संज्ञा पुं० [सं०] १. काँटा। कील। २. खूँटा। बड़ी मेख। ३. वह खंभा जिससे पशु अपना शरीर रगड़ता है। ४. शिवमूर्ति (को०)।

शिवकर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] जैनों के चौबीस जिनों में से एक जिन का नाम।

शिवकर^{२}—वि० मंगलकारी। कल्याणकारी [को०]।

शिवकर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कर्तिकेय की एक मातृका का नाम।

शिवकांची—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवकाञ्ची] दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध नगर।

विशेष—कृष्णा और पोलर नदी के बीच में स्थित कारोमंडल के एक भाग की राजधानी कांची थी। इसके दो हिस्से हैं। एक विष्णुकांची और दूसरा शिवकांची। शिवकांची उत्तर की ओर है। दक्षिण भारत के शैवों का यह एक प्रधान तीर्थ और सप्तपुरियों में से एक है।

शिवकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवकान्ता] शिव की पत्नी, दुर्गा।

शिवकारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा का एक नाम।

शिवकारी—वि० [सं० शिवकारिन्] मंगल करनेवाला। कल्याण करनेवाला।

शिवकिंकर—संज्ञा पुं० [सं० शिवकिङ्कर] शिव का गण या दूत।

शिवकीर्त्तन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शिव का कीर्तन करता हो।

शैव । २. विष्णु । ३. शिव के द्वारपाल । भृंगरीट । भृंगी । ४. शिव की स्तुति (को०) ।

शिवकेसर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गुल्म । बकुल ।

शिवक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] कैलास ।

शिवगंग—संज्ञा पुं० [सं० शिव + गङ्गा] मैसूर राज्य के एक पर्वत का नाम ।

शिवगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवगङ्गा] वह नदी या जलाशय जो शिव जी के मंदिर के समीप हो ।

शिवगति^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार एक अर्हत् का नाम ।

शिवगति^{2}—वि० सुखी । प्रसन्न । समृद्ध (को०) ।

शिवगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] कैलास पर्वत ।

शिवगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] शंकराचार्य के पिता का नाम जो विद्याधिराज के पुत्र थे ।

शिवघर्मज—संज्ञा पुं० [सं०] मंगल ग्रह ।

विशेष—मत्स्यपुराण के अनुसार दक्ष के यज्ञ को विध्वंस करने के लिये क्रुद्ध शिव के ललाट से गिरे हुए पसीने की बूँद से मंगल ग्रह की उत्पत्ति हुई है ।

शिवचतुर्दशी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शिवरात्रि' ।

शिवजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिवलिंगी लता । पचगुरिया ।

शिवज्ञ—वि० [सं०] १. जो शिव का भक्त हो । शैव । २. शुभ को जाननेवाला (को०) ।

शिवज्ञा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिवभक्त महिला ।

शिवज्ञान—संज्ञा पुं० [सं०] शुभाशुभ-काल-बोधक शास्त्र (को०) ।

शिवता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शिव का भाव या धर्म । उ०—शिव शिवता इनहीं सों लहीं ।—सूर (शब्द०) । २. मनुष्य के शिव में लीन होने की अवस्था । मोक्ष ।

शिवताति^{1}—संज्ञा स्त्री० शुभता । शुभत्व (को०) ।

शिवताति^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में एक ताल का नाम जिसे रुद्रताल भी कहते हैं (को०) ।

शिवतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] काशी नामक स्थान जो शिव का प्रधान तीर्थ माना जाता है ।

शिवतेज—संज्ञा पुं० [सं० शिवतेजस्] पारा । पारद ।

शिवदत्त—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का चक्र । सुदर्शन चक्र ।

शिवदारु—संज्ञा पुं० [सं०] देवदार वृक्ष ।

शिवदिक्, शिवदिशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ईशान कोण जिसके स्वामी शिव माने गए हैं ।

शिवदूतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम ।

शिवदूती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा । २. आठ योगिनियों में से अंतिम योगिनी का नाम ।

शिवदैव—संज्ञा पुं० [सं०] आर्द्रा नक्षत्र जिसके अधिष्ठाता देवता शिव माने जाते हैं ।

शिवद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्व वृक्ष । बेल का पेड़ ।

शिवद्विष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] केतकी । केवड़ा ।

विशेष—केतकी का फूल शिवजी पर चढ़ाने का निषेध है, इसी से इसका यह नाम पड़ा है ।

शिवधातु—संज्ञा पुं० [सं०] १. पारद । पारा । २. गोदंती नामक मणि ।

शिवनंदन—संज्ञा पुं० [सं० शिवनन्दन] शिव जी के पुत्र गणेश जी । उ०—विघ्नहरण गणनाथ शिवनंदन कंदन कुमति । तुव पद नाऊँ माथ, करहु पूर संतन सुपश ।—रघुराज (शब्द०) ।

शिवनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] शिव । महादेव ।

शिवनाभि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का शिवलिंग जो और सब शिवलिंगों में श्रेष्ठ माना जाता है ।

शिवनारायणी—संज्ञा पुं० [सं०] हिंदुओं का एक संप्रदाय ।

शिवनिर्माल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह पदार्थ जो शिव जी को अर्पित किया गया हो । शिव पर चढ़ा हुआ नैवेद्य आदि ।

विशेष—पुराणों में ऐसी चीजों के ग्रहण करने का निषेध है ।

२. वह चीज जो किसी प्रकार ग्रहण न की जा सकती हो । परम त्याज्य वस्तु । जैसे,—हमारे लिये तुम्हारी यह संपत्ति शिवनिर्माल्य है ।

शिवनृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] गतिभेद के अनुसार एक प्रकार का नृत्य ।

शिवपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल ।

शिवपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. पारा । पारद । २. शिव के पुत्र, कार्तिकेय और गणेश ।

शिवपुर—संज्ञा पुं० [सं०] १. जैनियों का स्वर्ग जहाँ वे जैनसिद्धांतानुसार मुक्ति का सुख भोगते हैं । मोक्षशिला । २. शिवपुरी । काशी (को०) ।

शिवपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] अठारह पुराणों में से एक पुराण जो शैवपुराण भी कहा जाता है ।

विशेष—यह पुराण शिवप्रोक्त माना जाता है और इसमें शिव का माहात्म्य वर्णित है । अन्य पुराणों के अनुसार इसमें बारह संहिताएँ और २४,००० श्लोक हैं । पर आजकल जो शिवपुराण मिलता है उसमें केवल चार संहिताएँ और ७,००० श्लोक पाए जाते हैं । इसीलिये कुछ लोगों का मत है कि शिवपुराण और वायुपुराण दोनों एक ही हैं । विष्णु, पद्म, मार्कंडेय, कूर्म, वराह, लिंग, ब्रह्मवैवर्त, भागवत और स्कंदपुराण में तो शिवपुराण का नाम है पर मत्स्य, नारद और देवीभागवत में शिवपुराण के स्थान पर वायुपुराण का नाम मिलता है । कहते हैं, शैवधर्म का प्रकाश करने के लिये शिव जी ने यह पुराण रचा था । इसमें निम्नलिखित बारह संहिताएँ हैं—विद्येश्वर, रौद्र,

विनायक, भौम, मातृका, रुद्रैकादश, कैलास, शतरुद्र, कोटिरुद्र, सहस्रकोटिरुद्र, वायवीय और धर्मसंहिता। इसके रचयिता भगवान् वेदव्यास जी कहे जाते हैं। पर आजकल जो शिवपुराण मिलता है उसमें केवल ज्ञान, विद्येश्वर, कैलास, वायवीय, और धर्म आदि संहिता ही पाई जाती हैं। किसी किसी शिवपुराण में सनत्कुमारसंहिता और गया माहात्म्य भी मिलता है।

शिवपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिव जी की पुरी, वाराणसी। काशी।

शिवपुष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] आक का वृक्ष। मदार।

शिवप्रिय[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. रुद्राक्ष। २. अगस्त। वकवृक्ष। ३. धतूरा। ४. भाँग। ५. स्फटिक। बिल्लौर।

शिवप्रिय[२]—वि० जो शिव को प्रिय हो।

शिवप्रिया संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

शिवप्रीति—संज्ञा स्त्री० [सं०] बेल का वृक्ष। बिल्व।

शिवबीज—संज्ञा पुं० [सं०] पारा जो शिव जी का वीर्य माना जाता है।

शिवब्राह्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] संखाहुली। शंखपुष्पी।

शिवभक्त—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शिव का उपासक हो। शैव।

शिवभक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिवोपासना। शिवार्चन या पूजन आदि के प्रति भक्तिभावना।

शिवभारत—संज्ञा पुं० [सं०] शिवा जी छत्रपति (१६३०–१६८०) पर कवि परमानंद लिखित एक ऐतिहासिक काव्य।

शिवमल्लक—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन वृक्ष।

शिवमल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] वसु या वसुक नामक पुष्पवृक्ष। २. मदार। आक। ३. अगस्त वृक्ष। ४. शिवलिंगी। ५. श्रीवल्ली नामक कँटीला पेड़।

शिवमल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पाशुपति। मौलसिरी। २. मदार। आक। ३. वक नामक वृक्ष। ४. लिंगिनी नाम की लता।

शिवमात्र—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बहुत बड़ी संख्या का नाम।

शिवमार्ग—संज्ञा पुं० [सं०] कल्याण मार्ग। मोक्ष। मुक्ति [को०]।

शिवमौलिस्रुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] गंगा का एक नाम। उ०—वह विष्णुपदी शिवमौलिस्रुता वह भीष्मप्रसू और जह्नुसुता। —ग्राम्या, पृ० ४२।

शिवरस—संज्ञा पुं० [सं०] उबले हुए चावल का पानी जो तीन दिन का हो [को०]

शिवराई(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिव + हिं० राई] महादेव। शिव। उ०—राजयोग कीना शिवराई। गौरा संग अनंग न जाई। सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० १०३।

शिवराजी—संज्ञा पुं० [हिं० शिव + राज] एक प्रकार का बहुत बड़ा कबूतर।

शिवरात्र—संज्ञा स्त्री० [सं० शिव + रात्रि] दे० 'शिवरात्रि'।

शिवरात्रि—संज्ञा स्त्री० [सं०] फाल्गुन बदी चर्तुदशो। शिवचतुर्दशी।

विशेष—इस दिन लोग शिव जी का पूजन करते और उनके उद्देश्य से व्रत रखते हैं।

शिवरानी(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शिव + हिं० रानी] शिव जी की पत्नी, पार्वती। उ०—शिवरानी यों रति समुझाई। तब तनु धरि शंबर घर आई।—लल्लू (शब्द०)।

शिवलिंग—संज्ञा पुं० [सं० शिवलिङ्ग] महादेव का लिंग या पिंडी जिसका पूजन होता है।

शिवलिंगी[१]—संज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गिनी] एक प्रकार की प्रसिद्ध लता जो चौमासे में जंगलों और झाड़ियों में बहुत अधिकता से मिलती है। पचगुरिया। बिजगुरिया।

विशेष—इसकी डंडियाँ बहुत पतली और पत्ते करेले के पत्तों के समान ३ से ५ इंच के घेरे में गोलाकार, गहरे, कटे किनारेवाले और ५-७ भागों में विभक्त रहते हैं। पत्रदंड की जड़ में ५-६ फूलों के छोटे छोटे गुच्छे लगते हैं। ये फूल पीले होते हैं। इसका व्यवहार ओषधि के रूप में होता है। वैद्यक के अनुसार यह चरपरी, गरम, दुर्गंधयुक्त, पौष्टिक, शोधक, गर्भधारण करनेवाली और कुष्ट आदि का नाश करनेवालो होती है। इसके फलने पर इसका सर्वांग ओषधि के निमित्त सग्रह किया जाता है।

पर्या०—लिंगिनी। ईश्वरलिंगी। चित्रफला। बहुपत्रा। शिव वल्लिका।

शिवलिंगी—वि० [सं०] शैव। शिवलिंग की पूजार्चा करनेवाला।

शिवलोक—संज्ञा पुं० [सं०] शिव जी का लोक, कैलास। उ०—सोने मंदिर सँवराई और चंदन सब लीप। दिया जो मन शिवलोक महँ उपना सिंहलद्वीप।—जायसी (शब्द०)।

शिववल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] आम्र वृक्ष [को०]।

शिववल्लभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. सेवती। शतपत्री। ३. श्वेत गुलाब (को०)।

शिववल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शिवलिंगो'।

शिववल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शिवलिंगी'।

शिववाहन—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का वाहन, बैल। नंदी।

शिववीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] पारा जो शिव जी का वीर्य माना जाता है।

शिववृषभ—संज्ञा पुं० [सं०] शिव जी की सवारी का बैल। उ०—बिराजेगो जो तू श्रमहरन ताकी शिखर पै। दिपेगो ज्यों गोरे शिववृषभ खोदी कलिल है।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०)।

शिवशंकरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवशङ्करा] देवी की एक मूर्ति का नाम।

शिवशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] १. वक वृक्ष। अगस्त वृक्ष। २. चंद्रमा (को०)। ३. धतूरा। ४. शिव का मस्तक। ५. सफेद मदार।

शिवशैल—संज्ञा पुं० [सं०] कैलास पर्वत।

शिवसंप्रदाय—संज्ञा पुं० [सं० शिव + सम्प्रदाय] दे० 'शैव'। उ०—केवल दो सप्रदाय इस संसार में हैं। एक विष्णुसंप्रदाय तथा दूसरा शिवसंप्रदाय।—कबीर मं०, पृ० ५९।

शिवसायुज्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शैवों के अनुसार वह मोक्ष जिसमें मनुष्य शिव में लीन हो जाता है। २. मृत्यु। मौत।

शिवसुंदरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिवसुन्दरी] दुर्गा।

शिवांक—संज्ञा पुं० [सं० शिवाङ्क] अगस्त का वृक्ष। वकवृक्ष।

शिवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. पार्वती। गिरिजा। उ०—जेहि रस शिव सनकादि मगन भए शंभु रहत दिन साधा। सो रस दिए सूर प्रभु तोको शिवा न लहति अराधा।—सूर (शब्द०)। ३. मुक्ति। मोक्ष। ४. शृगाली। सियारिन। उ०—शिवा यज्ञशाला में बोली। ढहे भवन धरणी जब डोली।—सबल (शब्द०)। ५. हड़। हर्रे। हरीतकी। ६. सोआ नामक साग। ७. शमी। सफेद कीकर। ८. आँवला। ९. हलदी। १०. दूब। ११. गोरोचन। १२. श्यामा नाम की लता। १३. एक बुद्धशक्ति का नाम। १४. धौ। धव। १५. अनंतमूल। १६. सौभाग्यवती स्त्री। भाग्यशालिनी स्त्री (को०)। १६. पीत वर्ण का एक भेद। एक प्रकार का पीला रंग (को०)।

शिवाकु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शिवाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] रुद्राक्ष।

शिवाख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] बल्ली दूब।

शिवाघृत—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तैयार किया हुआ घृत।

विशेष—इसको प्रस्तुत करने के लिये गीदड़ का मांस, बकरी का दूध, मुलेठी, मजीठ, कुड़ा, लाल चंदन, पदम काठ, हर्रे, बहेड़ा, आँवला, विडंग, देवदार, दंतीमूल, श्यामा लता, काकोली, हलदी, दारु हलदी, अनंतमूल, इलायची, आदि पदार्थों को घी में डालकर घृतपाक विधि से पकाते हैं। यह घृत पागलपन के लिये बहुत उपकारी माना जाता है। इसके अतरिक्त वात, अपस्मार, मेह आदि में भी इसका व्यवहार होता है।

शिवाची—संज्ञा स्त्री० [स०] वंशपत्री।

शिवाजी—संज्ञा पुं० [हिं०] महाराष्ट्र राज्य के संस्थापक तथा भारत को विदेशी दासता से मुक्त करने के लिये आजीवन मुगल साम्राज्य से लड़नेवाले एक महान् योद्धा। 'छत्रपति' इनकी उपाधि थी। इनके पिता का नाम शाहजी भोसला और माता का नाम जीजा बाई था। इनका जन्म सन् १६२७ में और मृत्यु सन् १६८० ई० में हुई थी।

शिवाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वंशपत्री नामक तृण। २. सफेद पुनर्नवा। ३. लालपुनर्नवा। गदहपूरना। ४. हिंगुपत्री। ५. कठूमर।

शिवात्मक—संज्ञा पुं० [सं०] सेंधा नमक।

शिवादेशक—देश० पुं० [सं०] १. वह जो शुभ समाचार लाए। २. भविष्यवक्ता [को०]।

शिवाधूत—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शतद्रु'।

शिवानी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा। २. जयंती वृक्ष।

शिवापर—वि० [सं०] निर्दय। निष्ठुर [को०]।

शिवापीड़—संज्ञा पुं० [सं० शिवापीड] अगस्त या वक नामक वृक्ष।

शिवाप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिवा के पति, शिव। २. बकरा जिसके बलिदान से दुर्गा का प्रसन्न होना माना जाता है।

शिवाफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] शमी वृक्ष। सफेद कीकर।

शिवाबलि—संज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार वह नैवेद्य जो रात के समय देवी के सामने रखा जाता है और जिसमें मांस की प्रधानता होती है।

शिवायतन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिवालय'।

शिवाराति—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता जो गीदड़ (शिव) का शत्रु होता है। २. शिव का विरोधी या शत्रु, कामदेव (को०)। ३. शिवद्रोही।

शिवारुत—संज्ञा पुं० [सं०] गीदड़ के बोलने का शब्द, जिसे यात्रा आदि के समय शुभाशुभ शकुन का विचार किया जाता है।

शिवालय—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह मंदिर जिसमें शिव जी की मूर्ति या लिंग स्थापित हो। शिव जी का मंदिर। २. कोई देवमंदिर। (क्व०)। ३. लाल तुलसी। ४. श्मशान। मसान। मरघट।

शिवाला—संज्ञा पुं० [सं० शिवालय] १. शिव जी का मंदिर। शिवालय। २. देवमंदिर (क्व०)। ३. कोयला जलाने की भट्ठी। (बाजारू)।

शिवालु—संज्ञा पुं० [सं०] शृगाल। सियार। गीदड़।

शिवा विद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] शृगाल की बोली से शकुन विचारने की विद्या [को०]।

शिवास्मृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] जयंती वृक्ष।

शिवाह्लाद—पुं० [सं०] अगस्त या वक नामक वृक्ष।

शिवाह्वय—संज्ञा पुं० [सं०] १. पारद। पारा। २. बरगद। बट वृक्ष। ३. मदार। आक।

शिवाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्रजटा। शंकरजटा।

शिवि—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंसक पशु। शिकारी जानवर। २. भोजपत्र। ३, राजा उशीनर के पुत्र तथा ययाति के दौहित्र एक राजा का नाम जो अपनी दयालुता और दानशीलता के लिये प्रसिद्ध हैं। उ०—अब बरनौ शिवि भूप की कथा परम रमणीय। शरणागत पालन कियो दै निज तनु कमनीय।—रघुराज (शब्द०)।

विशेष—कहते हैं, एक बार देवताओं ने इनकी परीक्षा लेने का विचार किया। अग्नि ने कबूतर का रूप धारण किया और इंद्र ने बाज पक्षी का। कबूतर उड़ता उड़ता राजा शिवि की गोद में जा छिपा और कहने लगा कि यह बाज मेरे प्राण लेना चाहता है। आप इससे मेरी रक्षा करें। इतने में बाज भी वहाँ आ पहुँचा और कहने लगा कि यह कबूतर मेरा भक्ष्य है। आप यह मुझे दे दीजिए। शिवि ने और कुछ भोजन देकर

बाज को संतुष्ट करना चाहा, पर बाज किसी प्रकार नहीं मानता था। अंत में राजा ने अपनी जाँघ से मांस काटकर और कबूतर के बराबर तौलकर बाज को देना चाहा। पर ज्यों ज्यों राजा अपने शरीर से माँस काटकर तराजू पर रखते जाते थे, त्यों त्यों, कबूतर भारी होता जाता था। अंत में राजा विवश होकर स्वयं तराजू के पलड़े पर बैठ गए। इसपर बाज ने संतुष्ट होकर कबूतर को भी छोड़ दिया और राजा का मांस भी नहीं लिया। तब से ये बहुत दानी और धर्मात्मा प्रसिद्ध हैं।

४. पुराकाल में आर्यों का एक प्रधान वर्ग या समूह। उ०—प्रधान आर्य समूहों में थे—शिवि, मत्स्य, वैतहव्य और विदर्भ आदि।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७७।

शिविका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पालकी या डोली नाम की सवारी। उ०—देखि पुष्ट पकर्यो तिनकाहीं। ल्याय लगायो शिविका माहीं।—रघुराज (शब्द०)। २. शव को श्मसान ले जाने की अरथी (को०)। ३. कुबेर का अस्त्र (को०)। ४. चबूतरा (को०)।

शिविकागर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] गृह का वह भाग जहां पालकियाँ आदि वाहन ठहरें। ड्योढ़ी का छायादार बरामदा।—हिंदु०, सभ्यता, पृ० २८८।

शिविपिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] महादेव।

शिविर—संज्ञा पुं० [सं०] १. डेरा। खेमा। निवेश। २. फौज के ठहरने की जगह। पड़ाव। छावनी। ३. किला। कोट। उ०—राम शिविर अँगरेज नृप तहँ आए जिहिं वार। तब हौंहू हाजिर रख्यो आदर सहित उदार।—मतिराम (शब्द०)। ४. चरक के अनुसार एक प्रकार का तृण धान्य।

शिविरगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

शिवीरथ—संज्ञा पुं० [सं०] पालकी। शिविका।

शिवेतर—वि० [सं०] अमंगल। अशुभ। दुर्भाग्य (को०)।

शिवेश—संज्ञा पुं० [सं०] शृगाल। गीदड़। सियार।

शिवेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त का वृक्ष। बक वृक्ष। २. बेल। श्रीफल।

शिवेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दूब। दूर्वा।

शिवोद्भव—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

शिवोपनिषद्—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

शिशन¹—संज्ञा पुं० [अं० सेशन] दे० 'सेशन'।

शिशन²—संज्ञा पुं० [सं० शिश्न] दे० 'शिश्न'।

शिशिर¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक ऋतु जो माघ और फाल्गुन मास में होती है। उ०—गोपी गाइ ग्वाल गोसुत वै मलिन वदन कृस गात। परम दीन जनु शिशिर हिमी हत अंबुज गत बिन पात।—सूर (शब्द०)। २. जाड़ा। शीतकाल। ३. हिम। ४. विष्णु। ५. एक प्रकार का अस्त्र। ६. सूर्य का एक नाम। ७. लाल चंदन। ८. प्लक्ष द्वीप का एक वर्ष (को०)।

शिशिर²—वि० शीतल। ठंडा।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग यौगिक शब्दों के बनाने में उनके आरंभ में होता है। जैसे—शिशिरकर।

२. शिशिर संबंधी। शिशिर का (को०)। ३. जो ठंढक पहुँचावे। गर्मी हटाने या दूर करनेवाला (को०)।

शिशिरकर—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा, जिसकी किरणें शीतल होती हैं।

शिशिरकिरण—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा (को०)।

शिशिरकाल—संज्ञा पुं० [सं०] जाड़ा या शिशिर ऋतु (को०)।

शिशिरगु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शिशिरघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] अग्नि। आग (को०)।

शिशिरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिशिर का भाव या धर्म।

शिशिरदीधिति—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा (को०)।

शिशिरधौत—वि० [सं० शिशिर + धौत] शिशिर से धुला हुआ। ओस से आर्द्र। उ०—सजल शिशिरधौत पुष्प ज्यों प्रात में देखता है एकटक किरण कुमारी को।—अपरा०, पृ० १४४।

शिशिरपीड़ित—वि० [सं० शिशिर + पीडित] ठंढ से त्रस्त। जाड़े से आक्रांत। उ०—चिर शून्य शिशिर पीड़ित जग में निज अमर स्वरों से भरो प्राण।—युगांत, पृ० १०।

शिशिरमथित—वि० [सं०] दे० 'शिशिरपीड़ित'।

शिशिरमयूख—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शिशिरयामिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शिशिर + यामिनी] जाड़े की रात। उ०—विरह परी सी खड़ी कामिनी, व्यर्थ बह गई शिशिरयामिनी।—गीतिका, पृ० १०।

शिशिरर्तु, शिशिरसमय—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिशिरकाल'।

शिशिरसमीर—संज्ञा पुं० [सं० शशिर + समीर] शिशिर या जाड़े की हवा। उ०—वह चली अब अलि शिशिरसमीर।—गीतिका, पृ० १०।

शिशिरांत—संज्ञा पुं० [सं० शिशिरान्त] शिशिर ऋतु के अंत में होनेवाली ऋतु, वसंत। उ०—शिशिरांत की लक्ष्मी का दिया हुआ कलियों का गुच्छा पलास में शोभायमान हुआ।—लक्ष्मण सिंह (शब्द०)।

शिशिरांशु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शिशिराक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जो सुमेरु के पश्चिम ओर बतलाया गया है।

शिशिरात्यय—संज्ञा पुं० [सं०] शिशिरांत। वसंत (को०)।

शिशिरित—वि० [सं०] शीतल किया हुआ।

शिशु—संज्ञा पुं० [सं०] १. छोटा बच्चा, विशेषतः आठ वर्ष तक की अवस्था का बच्चा। छोटा लड़का। उ०—माथे मुकुट सुभग पीतांबर उर सोभित भृगु रेखा हो। शंख चक्र भुज चारि विराजत अति प्रताप शिशु भेषा हो।—सूर (शब्द०)। २. पशुओं

आदि का बच्चा। जैसे, हरिणशिशु। ३. कार्तिकेय का एक नाम। ४. बालक जो ८ से १६ वर्ष तक का हो (को०)। ५. शिष्य। छात्र (को०)। ६. करभ जो ६ साल का हो (को०)।

शिशुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिशुमार या सूँस नामक जलजंतु। २. शिशु। बच्चा। बालक। ३. एक प्रकार का वृक्ष। ४. सूँस के आकार का एक मत्स्य (को०)। ५. पशुशावक (को०)। ६. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप।

शिशुकृच्छ्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चांद्रायण व्रत जिसे 'शिशु चांद्रायण' या 'स्वल्प चांद्रायण' भी कहते हैं।

शिशुक्रंद, शिशुक्रंदन—संज्ञा पुं० [सं० शिशुक्रन्द, शिशुक्रन्दन] बच्चे का रोना। शिशु का रुदन।

शिशुक्रंदीय—संज्ञा पुं० [सं०] बालकों के रोग और उनकी चिकित्सा संबंधी एक प्रसिद्ध आयुर्वेदीय ग्रंथ।

शिशुगंधा—संज्ञा स्त्री० [सं० शिशुगन्धा] मल्लिका। मोतिया।

शिशुचांद्रायण—संज्ञा पुं० [सं० शिशुचान्द्रायण] एक प्रकार का चांद्रायण व्रत जिसे स्वल्प चांद्रायण या कृच्छ्र चांद्रायण भी कहते हैं। इस व्रत में प्रातःकाल चार ग्रास और सायंकाल चार ग्रास भोजन करके निर्वाह किया जाता है।

शिशुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिशु का भाव या धर्म। बचपन। शिशुत्व।

शिशुताईⓅ—संज्ञा पुं० [सं० शिशुता+हिं० ई (प्रत्य०)] दे० 'शिशुता'। उ०—यशुपति भाग सुहागिनी हरि को सुत जानैं। मुख मुख जोरि बतावई शिशुताई ठानैं।—सूर (शब्द०)।

शिशुत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शिशु का भाव या धर्म। शिशुता। शैशव।

शिशुनाग—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक राक्षस का नाम। २. भागवत के अनुसार एक राजा का नाम। ३. दे० 'शैशुनाग'। ४. करभ। हाथी का बच्चा (को०)। ५. सँपोला। साँप का बच्चा (को०)।

शिशुनामा—संज्ञा पुं० [सं० शिशुनामन्] ऊँट।

शिशुपन—संज्ञा पुं० [सं० शिशु+हिं० पन] दे० 'शिशुता'।

शिशुपाल—संज्ञा पुं० [सं०] चेदि देश का एक प्रसिद्ध राजा जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ०—देश देश के नृपति जुरे सब भीष्म नृपति के धाम। रुक्म कह्यो शिशुपालहिं दैहौं नहीं कृष्ण सों काम।—सूर (शब्द०)

विशेष—महाभारत में लिखा है कि दमघोष के घर एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसके तीन आँखें और चार हाथ थे और जो जनमते ही गधे की तरह रेंकने लगा था। इससे डरकर माता-पिता ने इसका त्याग करना चाहा था; पर इतने में आकाशवाणी हुई कि यह शिशु बहुत ही बलवान् और वीर होगा, तुम लोग इस शिशु का पालन करो। (इसीलिये इसका नाम शिशुपाल रखा गया था)। इसका नाश करनेवाला भी पृथ्वी पर उत्पन्न हो चुका है। आकाशवाणी सुनकर शिशुपाल की माता ने आकाश की ओर देखकर पूछा कि इसका नाश कौन करेगा? फिर आकाशवाणी हुई कि जिस आदमी की गोद में जाते ही इसकी तीसरी आँख और अतिरिक्त दोनों बाँहें जाती रहेंगी, वही इसका प्राण लेगा। दमघोष ने बहुत से राजाओं आदि को बुलाकर उनकी गोद में अपना पुत्र दिया, पर उसकी तीसरी आँख और दोनों अतिरिक्त भुजाएँ ज्यों को त्यों बनी रहीं। अंत में जब श्रीकृष्ण ने उसे गोद में लिया, तब उसके दो हाथ भी गिर गए और तीसरा नेत्र भी अदृश्य हो गया। इसपर शिशुपाल की माता ने श्रीकृष्ण से कहा कि तुम इसके सब अपराध क्षमा करना। श्रीकृष्ण ने प्रतिज्ञा की कि मैं इसके सौ अपराध तक क्षमा करूँगा।

बड़ा होने पर शिशुपाल बहुत पराक्रमी हुआ और अकारण ही श्रीकृष्ण से बहुत अधिक द्वेष रखने लगा। जब युधिष्ठिर ने अपने राजसूय यज्ञ के समय लोगों से पूछा कि यज्ञ का अर्घ्य किसे दिया जाय, और भीष्म ने उत्तर दिया—'श्रीकृष्ण को', तब शिशुपाल बहुत बिगड़ा और सब राजाओं को संबोधन करके श्रीकृष्ण की निंदा करने और उन्हें कुवाच्य कहने लगा। श्रीकृष्ण उसके कुवाच्य गिनते जाते थे। जबतक उसने सौ गालियाँ दीं, तबतक तो श्रीकृष्ण बिलकुल चुप थे, क्योंकि वे उसकी माता के सामने उसके सौ अपराध क्षमा करने की प्रतिज्ञा कर चुके थे। पर जब वह इतने पर भी शांत न हुआ और उसने एक और कुवाच्य कहा, तब श्रीकृष्ण ने तुरंत उसका सिर काट डाला। विष्णुपुराण के अनुसार यह पूर्व जन्म में हिरण्यकशिपु था, दूसरे जन्म में यह रावण हुआ और तीसरे जन्म में यह शिशुपाल था। संस्कृत के प्रसिद्ध महाकाव्य माघ कवि कृत शिशुपालवध में भी उसके तीन जन्म की घटना संक्षेप में उल्लिखित है।

शिशुपालक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दमघोष का पुत्र शिशुपाल। २. केलि कदंब। नीम।

शिशुपालनिषूदन—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

शिशुपालवध—संज्ञा पुं० [सं०] महाकवि माघ कृत एक प्राचीन संस्कृत महाकाव्य जिसमें श्रीकृष्ण द्वारा शिशुपाल के मारे जाने की कथा वर्णित है। उ०—आनंद की साधनावस्था या प्रयत्नपक्ष को लेकर चलनेवाले काव्यों के उदाहरण हैं—रामायण, महाभारत, रघुवंश और शिशुपालवध (महाकाव्य)।—रस०, पृ० ५८।

शिशुपालहा—संज्ञा पुं० [सं० शिशुपालहन्] शिशुपाल को मारनेवाले, श्रीकृष्ण।

शिशुप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. राब। शीरा। २. कुमुदिनी। कोईं (को०)।

शिशुमार—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूँस नामक जलजंतु। २. मगर की आकृतिवाला, नक्षत्रमंडल। ३. दे० 'शिशुमार चक्र'। उ०—(क) मेरो रूप चक्र शिशुमारा। जामें सकल बँध्यो संसारा।—रघुराज (शब्द०)। (ख) बहुत काल में सुरति करि, जब डोल्यो शिशुमार। तब संध्या भै भानु क्रिय, अस्ताचल संचार। रघुराज (शब्द०)। ४. कृष्ण। ५. विष्णु।

शिशुमार चक्र—संज्ञा पुं० [सं०] सब ग्रहों सहित सूर्य। सौर जगत्। उ०—अवध अनंद निहारि मगन रुके भानु गति भूली। रुक्यो

चक्र शिशुमार वार तेहि राम जन्म सुख फूली '—रघुराज (शब्द०)।

शिशुमारमुखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

शिशुमारशिर—संज्ञा पुं० [सं० शिशुमारशिरस्] ईशान कोण। पूर्वोत्तर दिक् [को०]।

शिशुल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिशूल' [को०]।

शिशुवाहक—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बकरा।

शिशुवाह्यक—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुवाहक। जंगली बकरा।

शिशुशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह गृह जहाँ धाई बच्चे की देखरेख करती हो।

शिशुहत्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिशु की हत्या या वध।

शिशूल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिशु'।

शिश्नंभर—वि० [सं० शिश्नम्भर] कामी। लंपट। छिनरा [को०]।

शिश्न—संज्ञा पुं० [सं०] पुरुष की उपस्थेंद्रिय। लिंग।

शिश्नदेव—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शिश्न को ही देवता माने। लंपट वा कामी व्यक्ति [को०]।

शिश्नोदरपरायण—वि० [सं०] जो पेट और शिश्न की बुभुक्षा-शांति को ही सब कुछ मानता हो। कामी और पेटू [को०]।

शिश्नोदरवाद संज्ञा पुं० [सं० शिश्नोदर+वाद] पेट की भूख और कामोत्तेजनापरक विचारधारा। फ्रायड और मार्क्स की विचारधारा।

शिष(पु)१—संज्ञा पुं० [सं० शिष्य] दे० 'शिष्य'। उ०—(क) रामानुज के शिष हरि भयऊ। यह यश त्रिभुवन महँ भरि गयऊ। —रघुराज (शब्द०)। (ख) तुम गुरु सतगुरु ब्रह्म समाना। मैं शिप आँहु महा अज्ञाना।—कबीर सा०, पृ० १०१४।

शिष(पु)२—संज्ञा स्त्री० [सं० शिक्षा] सीख। शिक्षा। सिखावन। उ०—कहेउ सुभग शिष धर्म कुमारा। कीन्ह सबन मिलि अंगीकारा।—सबलसिंह (शब्द०)।

शिष३—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखण्ड या शिखा] वाल जो मुंडन के समय सिर पर छोड़े जाते हैं। उ०—कटि पट पीत पिछौरी बाँधे कागपच्छ शिष शीश। शर क्रीड़ा दिन देखत आवत नारद सुर तैंतीस।—सूर (शब्द०)।

शिषर‡—संज्ञा पुं० [सं० शिखर] दे० 'शिखर'। उ०—काल गिरिक शिपर अइसन, द्रोणपर्व्व उक्त घटोत्कच अइसन।—वर्ण०, पृ० १८।

शिषरी(पु)१—संज्ञा पुं० [सं०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

शिषरी(पु)२—वि० [सं० शिखर+ई (प्रत्य०)] शिखर से युक्त। शिखरवाला। उ०—कोपि शिपरी गदा तब लव हन्यो ताके गात मैं। मोहि कपिपति गिरयो श्रीहत यथा कुमुदिन प्रात मै।—श्यामविहारी (शब्द०)।

शिषा(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शिखा] दे० 'शिखा'। उ०—स्तुति वेद शिषा प्रभु केरी। एकादश मन लेहु निबेरी।—रघुराज (शब्द०)।

शिषि(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिष्य] दे० 'शिष्य'। उ०—(क) जहँ शिषि तहँ ते गुरु पर्यंता। प्रगटे पद्मिनि पत्र अनंता। —रघुराज (शब्द०)। (ख) अरु बिचारि शिषि करौं न तोही। बाट न रोकु जान दे मोही।—विश्राम (शब्द०)।

शिषी(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिखिन्] दे० 'शिखी'। उ०—यह कौन आवत है सखो मलपंक अंकित अंग। शिर केश लुंचित नग्न हाथ शिषी शिखंड सुरंग'—केशव (शब्द०)।

शिष्ट१—वि० पुं० [सं०] १. जो अच्छी तरह धर्म का आचरण करता हो। धर्मशील। २. शांत। धीर। ३. अच्छे स्वभाव और आचरणवाला। सुशील। ४. बुद्धिमान्। शिक्षित। ५. सभ्य। सज्जन। भला आदमी। ६. भला। उत्तम। श्रेष्ठ। ७. आचार व्यवहार में निपुण। शालीन। ८. आज्ञाकारी। विनीत। विनम्र। ९. प्रसिद्ध। मशहूर। १०. छोड़ा हुआ। बचा हुआ। बाकी (को०)। ११. आदिष्ट। आज्ञप्त। समादिष्ट (को०)। १२. सधाया हुआ। पालतू। वश्य (को०)।

शिष्ट२—संज्ञा पुं० १. मंत्री। वजीर। २. सभ्य। सभासद। ३. श्रेष्ठ व्यक्ति। चतुर मनुष्य (को०)।

शिष्टता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शिष्ट होने का भाव या धर्म। २. सभ्यता। सज्जनता। भद्रता। ३. उत्तमता। श्रेष्ठता। ४. अधीनता।

शिष्टत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिष्टता'।

शिष्टप्रयुक्त वि० [सं०] सभ्य एवं शिष्ट जनों द्वारा व्यवहृत।

शिष्टयोग—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शिष्टजनों द्वारा व्यहार में लाया गया हो [को०]।

शिष्टमंडल—संज्ञा पुं० [सं० शिष्ट+मण्डल] राज्य या किसी संघटन द्वारा चुना हुआ अधिकारयुक्त प्रतिनिधिवर्ग जो किसी कार्य से कहीं भेजा जाय।

शिष्टविगर्हण—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शिष्ट जनों द्वारा निंदित हो [को०]।

शिष्टविगर्हणा—संज्ञा स्त्री० [स०] दे० शिष्टविगर्हण [को०]।

शिष्टसभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजसभा। राज्यपरिषद्। २. शिष्ट एवं सभ्य जनों की गोष्ठी।

शिष्टसंमत—वि० [सं० शिष्टसम्मत] शिष्ट जनों द्वारा अनुमोदित या स्वीकृत [को०]।

शिष्टसमाज—संज्ञा पुं० [सं०] वह समाज जिसमें पढ़े लिखे तथा सदाचारी व्यक्ति हों। भले आदमियों का समाज। सभ्य समाज।

शिष्टाचार—संज्ञा पुं० [सं०] १. सभ्य पुरुषों के योग्य आचरण। भले आदमियों का सा बरताव। साधु व्यवहार। २. आदर। संमान। खातिरदारी। ३. विनय। नम्रता। ४. वह अच्छा बरताव जो केवल दिखलाने के लिये किया जाय। दिखावटी सभ्य व्यवहार। जैसे—शिष्टाचार की बात छोड़कर अपने आने का अभिप्राय कहा। ५. आवभगत। जैसे—शिष्टाचार के अनंतर उन्होंने वार्तालाप प्रारंभ किया।

शिष्टाचारी—वि० [सं० शिष्टाचारिन्] शिष्टाचारयुक्त। सदाचारयुक्त। विनम्र। शालीन।

शिष्टादिष्ट—वि० [सं०] शिष्ट जनों द्वारा कथित, समर्थित या मान्य।

शिष्टानुमोदित- वि० [सं०] सभ्य एवं शिष्ट जनों द्वारा समर्थित। शिष्टसंमत।

शिष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आज्ञा। अनुशासन। हुकूमत। ३. दंड। सजा। ४. सुधार। ५. सहायता। मदद।

शिष्ट्यर्थ—क्रि० वि० [सं०] अनुशासन या सुधार के लिये [को०]।

शिष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शिश्न'।

शिष्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. समय। काल। २. दे० 'शिल्प' [को०]।

शिष्य^{१}--संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शिष्या] १. वह जो शिक्षा या उपदेश देने के योग्य हो। २. वह जो विद्या पढ़ने के उद्देश्य से किसी गुरु या आचार्य आदि के पास रहता हो। विद्यार्थी। अंतेवासी। चेला। उ०—तीर चलावत शिष्य सिखावत धर निशान देखरावत। कबहुंक सधे अश्व चढ़ि आपुन नाना भाँति नचावत।—सूर (शब्द०)। ३. (शिक्षक या गुरु के संबंध से) वह जिसने किसी से शिक्षा प्राप्त की हो। शागिर्द। ४. (गुरु के संबंध से) वह जिसने किसी धार्मिक आचार्य से दीक्षा या मंत्र आदि ग्रहण किया हो। मुरीद। चेला। ५. वह जो हाल में श्रावक बना हो (जैन)। ६. क्रोध। दोष। आवेश (को०)। ७. हिंसा। बलात्कार (को०)।

शिष्य^{२}—वि० शासनीय। शिक्षणीय।

शिष्यक—संज्ञा पुं० [सं०] छात्र। विद्यार्थी [को०]।

शिष्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिष्य होने का भाव या धर्म। शिष्यत्व।

शिष्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शिष्य होने का भाव या धर्म। शिष्यता।

शिष्यपरंपरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिष्यों की क्रमागत परंपरा या सरणि।

शिष्यशिष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिष्य का शासन करना। शिष्य या छात्र का सुधार [को०]।

शिष्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सात गुरु अक्षर होते हैं। इसका दूसरा नाम 'शीर्षरूपक' भी है। २. छात्रा। विद्यार्थिनी।

शिस्त—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. मछली पकड़ने का काँटा। २. निशाना। लक्ष्य।

मुहा०--शिस्त बाँधना = ताक लगाना। निशाना बाँधना।

३. दूरबीन की तरह का एक प्रकार का यंत्र जिससे जमीन नापने के समय सीध आदि देखी जाती है। ४. अँगूठा। ५. दे० 'अंगुलित्राण' (को०)। दे० 'अंगुश्ताना' (को०)।

शिस्तबाज—संज्ञा पुं० [फ़ा० शिस्तबाज़] १. निशाना लगानेवाला। निशानेबाज। २. शिस्त लगाकर मछली पकड़नेवाला।

शिह्ल, शिह्लक -संज्ञा पुं० [सं०] शिलारस नाम का गंधद्रव्य।

शी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शांति। २. शयन। सोना। नींद। ३. भक्ति।

शीआ--संज्ञा पुं० [अ० शीअ़ह्] दे० 'शिया' [को०]।

शीकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधा बिरोजा। २. तुषार। ओस। शबनम। ३. हवा। वायु। ४. जलकण। पानी की बूँद। ५. शीत। जाड़ा। ६. वर्षा की छोटी छोटी बूँदें। फुहार। ७. सरल नाम का वृक्ष (को०)। ८. धूप। (जलाने का)।

यौ०--शीकरकण = वर्षा या जल की फुहार। शीकरवर्षी = फुहारें बरसानेवाला।

शीकरी--वि० [सं० शीकरिन्] बूँदें या फुहार बरसानेवाला [को०]।

शीघ्र^{१}—क्रि० वि० [सं०] बिना विलंब। बिना देर के। चटपट। तुरंत। जल्द।

शीघ्र^{२}— संज्ञा पुं० १. लामज्जक या लामज नामक तृण। २. भागवत के अनुसार कुरुवंशीय अग्निवर्ण के पुत्र का नाम। ३. वायु। हवा। ४. वह अंतर जो पृथ्वी के दो भिन्न भिन्न स्थानों से ग्रहों के देखने में होता है। ५. चक्रांग।

शीघ्र कर्म—संज्ञा पुं० [सं०] ग्रह सयोग की गणना [को०]।

शीघ्रकारी^{१}—वि० [सं० शीघ्रकारिन्] १. जल्दी से काम करनेवाला। शीघ्र कार्य करनेवाला। ३. तीव्र। कड़ा। (पीड़ा आदि के लिये)।

शीघ्रकारी^{२}—संज्ञा पुं० एक प्रकार का संनिपात ज्वर जिसमें मूर्छा, तंद्रा, प्यास, श्वास और पार्श्व में पीड़ा होती है। यह असाध्य और मृत्यु का पूर्वरूप माना जाता है।

शीघ्रकृत्—वि० [सं०] शीघ्र काम करनेवाला [को०]।

शीघ्रकेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शीघ्रकेन्द्र] ग्रहसंयोग से दूरी [को०]।

शीघ्रकोपी—वि० [सं० शीघ्रकोपिन्] १. जल्दी गुस्सा होनेवाला व्यक्ति। २. चिड़चिड़ा।

शीघ्रग^{१}—वि० [सं०] शीघ्र चलनेवाला। द्रुतगामी।

शीघ्रग^{२}—संज्ञा पुं० १. सूर्य। २. वायु। ३. खरगोश। ४. अग्निवर्ण के पुत्र का नाम।

शीघ्रगामी—वि० [सं० शीघ्रगामिन्] शीघ्र चलनेवाला। जल्दी या तेज चलनेवाला।

शीघ्रचेतन—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो किसी बात को बहुत शीघ्र समझे। जल्दी बात समझनेवाला। चतुर। २. कुत्ता। कुक्कुर।

शीघ्रचेतना--संज्ञा स्त्री० [सं०] अतिबला नाम की ओषधि [को०]।

शीघ्रजन्मा—संज्ञा पुं० [सं० शीघ्रजन्मन्] कंट करंज।

शीघ्रजीर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] चौलाई का साग।

शीघ्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शीघ्र का भाव या धर्म। जल्दी। तेजी फुरती।

शीघ्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शीघ्र का भाव या धर्म। जल्दी। तेजी। फुरती।

शीघ्रपतन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] स्त्रीसहवास के समय वीर्य का शीघ्र स्खलित हो जाना। स्तंभनशक्ति का अभाव।

विशेष—वैद्यक में इसकी गणना एक प्रकार के नपुंसकत्व में की जाती है।

शीघ्रपरिधि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] ग्रह संयोग का अधिचक्र [को॰]।

शीघ्रपाणि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वायु।

शीघ्रपुष्प—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अगस्त्य वृक्ष।

शीघ्रफल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ग्रहसंयोग का समीकरण [को॰]।

शीघ्रबुद्धि—वि॰ [सं॰] कुशाग्रबुद्धि। तीक्ष्ण बुद्धिवाला [को॰]।

शीघ्रबोध—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह जो जल्दी समझ में आ जाय। २. ज्यौतिष विषयक संस्कृत का एक ग्रंथ।

शीघ्रवेधी—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शीघ्रता से बाण चलानेवाला। लघुहस्त।

शीघ्रा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. एक नदी का नाम। २. दंती वृक्ष। उदुंबरपर्णी।

शीघ्रिय^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शिव। २. विष्णु। ३. बिल्लियों का लड़ना।

शीघ्रिय^2—वि॰ शीघ्र। तेज। क्षिप्र [को॰]।

शीघ्री—वि॰ [सं॰ शीघ्रिन्] १. गतिशील। शीघ्रगामी। २. कोई काम शीघ्र या तुरत करनेवाला। ३. उच्चारण में जल्दी करनेवाला [को॰]।

शीघ्रीय—वि॰ [सं॰] जल्दी। तीव्र। तेज [को॰]।

शीघ्र्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शीघ्रता [को॰]।

शीत^1—वि॰ [सं॰] १. ठंढा। सर्द। शीतल। २. शिथिल। सुस्त। निद्रालु। झपकी लेता हुआ। ३. क्वथित (को॰)।

शीत^2—संज्ञा पुं॰ १. जाड़ा। सर्दी। ठंढ। २. दालचीनी। ३. बेंत। ४. लिसोड़ा। ५. नीम। ३. कपूर। ७. एक प्रकार का चदन। ८. ओस। तुषार। ९. पित्तपापड़ा। १०. शीतकाल। जाड़े का मौसिम। अगहन, पूस और माघ के महीने। ११. जुकाम। सरदी। प्रतिश्याय। १२. पटसन। अशनपर्णी (को॰)। १३. जल। पानी।

शीतक^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. शीत काल। जाड़े का मौसिम। २. बिच्छू। ३. बनसनई। ४. वह जो हर काम में बहुत देर लगाता हो। दीर्घसूत्री। ५. बृहत्संहिता के अनुसार एक देश का नाम। ६. एक प्रकार का चंदन। ७. आलसी। सुस्त। काहिल। ८. कोई शीतल वस्तु। ठंढी चीज (को॰)। ९. संतोषी पुरुष।

शीतक^2—वि॰ ठंढा। शीतल। सर्द [को॰]।

शीत कटिबंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शीतकटिबन्ध] पृथ्वी के उत्तर और दक्षिण के भूमिखंड के वे कल्पित विभाग जो भूमध्य रेखा से २३$\frac{1}{2}$ अंश उत्तर के बाद और २३$\frac{1}{2}$ अंश दक्षिण के बाद माने गए हैं। इन विभागों में जाड़ा बहुत अधिक पड़ता है। ये दोनों विभाग उष्ण कटिबंध के उत्तर और दक्षिण में कर्क और मकर रेखा के बाद पड़ते हैं।

शीतकण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जीरा।

शीतकर^1—संज्ञा पुं॰ [सं॰] २. ठंढी किरणोंवाला, चंद्रमा। २. कपूर।

शीतकर^2—वि॰ शीतल करनेवाला। ठंढा करनेवाला।

शीतकषाय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वैद्यक में किसी काष्ठौषध आदि का वह कषाय या रस जो उसे छहगुने ठंडे पानी में रात भर भिगो रखने से तैयार होता है।

शीतकाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. हेमंत ऋतु। अगहन और पूस के महीने। २. जाड़े का मौसिम। हेमंत और शिशिर।

शीतकालीन—वि॰ [सं॰] शीत ऋतु में होनेवाला। शीतकाल का [को॰]।

शीतकिरण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शीत किरणोंवाला, चंद्रमा।

शीतकुंभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शीतकुम्भ] कनेर। कनैल।

शीतकुंभिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शीतकुम्भिका] कुंभीरिका नाम की लता। जलकुंभी। कुंभी।

शीतकुंभी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शीतकुम्भी] जल में उत्पन्न होनेवाली एक प्रकार की लता जिसे शीतली जटा भी कहते हैं।

शीतकूर्चिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] बरियारा। बला। खिरेंटी।

शीतकृच्छ्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मिताक्षरा के अनुसार एक प्रकार का व्रत जिसमें तीन दिन तक ठंढा जल, तीन दिन तक ठंढा दूध और तीन दिन तक ठंढा घी पीकर और तीन दिन तक बिना कुछ खाए पीए रहना पड़ता है।

शीतक्षार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शुद्ध सोहागा।

शीतगंध—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शीतगन्ध] चंदन। संदल।

शीतगात्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर।

विशेष—इस ज्वर में रोगी का शरीर बहुत ठंढा रहता है, इसे श्वास, खाँसी, हिचकी, मोह, कंप, अंतर्दाह और कै होती है; उसके शरीर में बहुत पीड़ा रहती है; उसका स्वर बिलकुल बदल जाता है और वह बकता झकता है।

शीतगु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. चंद्रमा। २. कपूर।

शीतचंपक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शीतचम्पक] १. दर्पण। शीशा। आइना। २. प्रदीप। दीआ।

शीतच्छाय, शीतच्छाया^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वट वृक्ष या बरगद, जिसकी छाया बहुत शीतल होती है।

शीतच्छाय, शीतच्छाया^{2}—वि॰ शीतल छायावाला।

शीतज्वर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] जाड़ा देकर आनेवाला बुखार। जूड़ी। जड़ैया।

शीतता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शीत का भाव या धर्म। शीतत्व। ठंढक।

शीतत्व—संज्ञा पुं॰ [सं॰] शीत का भाव या धर्म। शीतता। ठंढापन।

शीतदंत—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शीतदन्त] ठंढी वायु या ठंढे जल का दाँतों से लगना या एक प्रकार की वेदना उत्पन्न करना जो वैद्यक के अनुसार दाँतों का एक रोग माना गया है।

शीतदंतिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शीतदन्तिका] नागदंती। हाथीशुंडी।

शीतदोधिति—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा जिसकी किरणें शीतल होती हैं।

शीतदीप्य—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद जीरा।

शीतदूर्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद दूब।

शीतद्युति—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शीतद्रु—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मोरट'।

शीतपंक—संज्ञा पुं० [सं० शीतपङ्क] आसव। मैरेय [को०]।

शीतपत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद लजालू। सफेद लाजवंती।

शीतपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अर्कपुष्पी। अंधाहुली।

शीतपल्लवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा जामुन। भूमि जंबु।

शीतपाकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली नामक अष्टवर्गीय ओषधि। २. गुंजा। चोंटली। घुँघची। ३. ककही। अतिबला।

शीतपाकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली। २. गुंजा। ३. वाट्यालक। अतिबला [को०]।

शीतपित्त—संज्ञा पुं० [सं०] जुड़पित्ती नामक रोग।

विशेष—इसमें वात की अधिकता से सारे शरीर की त्वचा में चकत्ते पड़ जाते हैं और उनमें सूई चुभने की सी पीड़ा होती है। इसमें वमन, ज्वर और दाह भी होता है।

शीतपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसके पाणि या कर शीतल हों।

शीतपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. छरीला। शैलेय। २. केवटी मोथा। ३. सिरिस। शिरीष वृक्ष।

शीतपुष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] १. आक। अर्क। मदार। २. केवटी मोथा। ३. छरीला। शैलेय।

शीतपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अतिबला। ककही। महासमंगा।

शीतपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अतिबला। ककही। कंघी।

शीतपूतना—संज्ञा स्त्री० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का बालग्रह या बालरोग।

विशेष—इस रोग में बालक काँपता और खाँसता है, उसकी आँखें दुखती हैं और शरीर दुबला पड़ जाता है, शरीर से दुर्गंध आती है और उसे वमन तथा अतिसार होता है।

शीतप्रधान—वि० [सं०] १. जहाँ शीत अधिक हो। जैसे,—शीतप्रधान क्षेत्र। २. जिसमें शीतत्व की प्रधानता हो। जैसे, शीतप्रधान वस्तु।

शीतप्रभ—संज्ञा पुं० [सं०] कपूर।

शीतप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] पित्तपापड़ा। पर्पटक।

शीतफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. गूलर। २. पीलू। ३. अखरोट। ४. आँवला। ५. लिसोड़ा।

शीतबला—संज्ञा स्त्री० [सं०] ककही। महासमंगा।

शीतभानु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शीतभीरु—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मल्लिका। मोतिया। २. दे० 'निर्गुंडी'। ३. वह जो शीत से डरे।

शीतभीरुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मल्लिका। २. एक प्रकार का शालिधान्य। ३. काली निर्गुंडी।

शीतमंजरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शीतमञ्जरी] शेफालिका। निर्गुंडी।

शीतमयूख—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

शीतमरीचि—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

शीतमूलक—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

शीतमेह—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रमेह रोग।

शीतमेही—संज्ञा पुं० [सं० शीतमेहिन्] वह जिसे शीतप्रमेह रोग हो।

शीतयुद्ध—संज्ञा पुं० [सं० शीत+युद्ध] संदेह और तनातनी की वह स्थिति जिसमें शस्त्रीकरण और अपने पोषक राष्ट्रों से परस्पर सहायता की संधियाँ हों। (अं० 'कोल्ड वार')।

शीतरम्य—संज्ञा पुं० [सं०] प्रदीप। दीपक।

शीतरश्मि—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

शीतरस—संज्ञा पुं० [सं०] ईख के कच्चे रस की बनी हुई एक प्रकार की मदिरा।

शीतरुच्—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शीतरुचि—संज्ञा पुं० [सं०] चाँद। चंद्रमा [को०]।

शीतरुह—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद कमल।

शीतल¹—वि० [सं०] १. ठंढा। सर्द। गरम का उल्टा। २. क्षोभ या उद्वेगरहित। जिसमें आवेश का अभाव हो। शांत। ३. प्रसन्न। संतुष्ट। तृप्त।

शीतल²—संज्ञा पुं० १. कसीस। २. छरीला। शैलेय। पत्थरफूल। ३. चंदन। ४. मोती। मुक्ता। ५. उशीर। खस। ६. बनसनई। ७. लिसोड़ा। ८. चंपा। ५. राल। १०. पद्मकाठ। ११. पीतचंदन। १२. भीमसेनी कपूर। १३. शाल वृक्ष। १४. बर्फ। हिम। १५. केराव। मटर। १६. चंद्रमा। १७. जैनों का एक प्रकार का व्रत।

शीतलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. मरुआ। मरुवक। २. कुमुद।

शीतलचीनी—संज्ञा स्त्री० [हिं० शीतल+चीन (देश)] कबाब चीनी।

शीतलच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] चंपा। चंपक।

शीतल जल—संज्ञा पुं० [सं०] पद्म। कमल [को०]।

शीतलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. ठंढापन। सर्दी। २. अमृतवल्ली। ३. जड़ता।

शीतलताईⓅ—संज्ञा स्त्री० [सं० शीतलता+हिं० ई] दे० 'शीतलता'।

शीतलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शीतलता'।

शीतलपाटी—संज्ञा स्त्री० [सं० शीतल+हिं० पाटी] दे० 'सीतलपाटी'।

शीतलप्रद—संज्ञा पुं० [सं०] शीतलता प्रदान करनेवाला, चंदन।

शीतलवात—संज्ञा पुं० [सं०] ठंढी हवा। शीतलता भरी वायु।

शीतलवातक—संज्ञा पुं० [सं०] अपराजिता। कोयल लता। विष्णुक्रांता।

शीतला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विस्फोटक रोग। चेचक। २. एक देवी

जो विस्फोटक की अधिष्ठात्री मानी जाती हैं। ३. आराम शीतला। ४. नीली दूब। ५. अर्कपुष्पी। ६. बालू। रेत (को०)। ७ कुदुंबिनी वृक्ष (को०)। ८. दे० 'शीतली' (को०)।

शीतलापूजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शीतला देवी की पूजा जो फाल्गुन शुक्ल अष्टमी को होती है [को०]।

शीतलावाहन—संज्ञा पुं० [सं०] गधा [को०]।

शीतलाषष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ शुक्ल पक्ष की छठी तिथि।

शीतलाष्टमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चैत्र कृष्ण पक्ष की अष्टमी। इसी दिन शीतला देवी की पूजा होती है।

शीतलासप्तमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ शुक्ल सप्तमी को होनेवाला देवोत्सव [को०]।

शीतली—संज्ञा स्त्री० [सं०] जल में होनेवाला एक पौधा। शीतली जटा। पातड़ी। २. श्रीवल्ली। ३. चेचक। विस्फोटक।

शीतवर—संज्ञा पुं० [सं०] शिरियारी। गुठवा।

शीतवरा, शीतवला संज्ञा स्त्री० [सं०] ककही। कंघी नाम का पौधा।

शीतवल्क—संज्ञा पुं० [सं०] गूलर। उदुंबर।

शीतवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] पित्तपापड़ा। शाहतरा।

शीतवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] नीली दूब।

शीतवासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जूही। यूथिका।

शीतवीर्य¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. पदुम काठ। २. पाषाणभेद। पखानभेद। ३. पित्तपापड़ा। ४. पाकड़। पकड़ी। ५. नीली दूब। ६. बच। वचा।

शीतवीर्य²—वि० खाने में जिसका प्रभाव ठंढा हो। जिसकी तासीर सर्द हो।

शीतवीर्यक—संज्ञा पुं० [सं०] पाकर। प्लक्ष वृक्ष।

शीतवृक्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] हुरहुर का पेड़।

शीतवृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौटिल्य के अनुसार एक प्रकार का रत्न [को०]।

शीतशिव—संज्ञा पुं० [सं०] १. सेंधा नमक। २. छरीला। पथरफूल। ३. सोआ। ४. शक्तुफला वृक्ष। सौंफ। मधुरिका (को०)। ५. शमी का पेड़। सफेद कीकर। ६. कपूर।

शीतशिवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सफेद कीकर, शमी। २. सौंफ।

शीतशूक—संज्ञा पुं० [सं०] जौ। यव।

शीतसंवासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जूही। शीतवासा।

शीत सन्निपात—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सन्निपात जिसमें शरीर सुन्न और ठंढा हो जाता हैं। पक्षाघात। अर्द्धांग।

शीतसह—संज्ञा पुं० [सं०] पीलू। झल्ल वृक्ष।

शीतसहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. निर्गुंडी। शेफालिका। २. नेवारी। वासंती का पौधा। ३. झीतिया बेला। मल्लिका का एक भेद। ४. चमेली। ५. झल्ल वृक्ष। पीलू

शीतस्पर्श—वि० [सं०] जो स्पर्श करने में ठंढा हो। शीतल [को०]।

शीतांग—संज्ञा पुं० [सं० शीताङ्ग] शीत सन्निपात।

शीतांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० शीताङ्गी] हंसपदी लता।

शीतांबु—संज्ञा स्त्री० [सं० शीताम्बु] दुद्धी नाम की घास।

शीतांशु—संज्ञा पुं० [सं०] १. कर्पूर। कपूर। २. चंद्रमा।

यौ०—शीतांशु तैल = कर्पूर का तैल।

शीता—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरदी। ठंढ। २. एक प्रकार की दूब। ३. शिल्पिका घास। ४. तखर की छाल। ५. अमलतास। ६. दे० 'सीता' (को०)।

शीताकुल—वि० [सं०] शीत से व्याकुल। जाड़े से ठिठुरा हुआ।

शीतातपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] छाता। छत्र। छतरी।

शीताद—संज्ञा पुं० [सं०] दाँत के मसूड़ों का एक रोग जिसमें मसूड़े जगह जगह पक जाते हैं और उनमें से दुर्गंध निकलने लगती है।

शीताद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय पर्वत।

शीताद्य—संज्ञा पुं० [सं०] शीतज्वर। जूड़ी।

शीतावला—संज्ञा स्त्री० [सं०] ककही। महासमंगा।

शीतारु—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपूर। २. चंद्रमा।

शीतास—वि० [सं०] जो जाड़े के कारण ठिठुरा हुआ हो [को०]।

शीतार्त्त—वि० [सं०] शीत से पीड़ित। शीतालु।

शीताल—संज्ञा पुं० [सं०] हिताल वृक्ष।

शीतालु—वि० [सं०] दे० 'शीतार्त' [को०]

शीताश्म—संज्ञा पुं० [सं० शीताश्मन्] चंद्रकांत मणि।

शीतिका, शीतिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० शीतिमन्] ठंढक। शैत्य।

शीतीभाव—संज्ञा पुं० [सं०] १. शीतलता। २. मनोविकारों के वेग का न रह जाना। शांति। शम। ३. मोक्ष। मुक्ति।

शीतेतर—वि० [सं०] शीत से भिन्न। गरम। उष्ण [को०]

शीतोत्ताम—संज्ञा पुं० [सं०] जल। पानी [को०]।

शीतोदक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक नरक का नाम। २. ठंढा जल।

शीतोष्ण—वि० [सं०] ठंढा और गरम। मातदिल [को०]।

शीत्कार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'सीत्कार'।

शीत्य—वि० [सं०] १. शीतल करने योग्य। २. धान्य। ३. जोता हुआ या जोतने योग्य।

शीधु—संज्ञा पुं० [सं०] १. पकी हुई ईख के रस से बनी हुई मदिरा। सीधु। २. मद्य। शराब (को०)।

शीधुगंध संज्ञा पुं० [सं०] १. मद्य गंध। २. वकुल वृक्ष। मौलसिरी।

शीधुप—संज्ञा पुं० [सं०] मद्यप। शराबी [को०]।

शीन¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. मूर्ख। २. हिम। बर्फ। ३. अजगर।

शीन²—वि० जमा हुआ।

शीन³—संज्ञा पुं० [अ०] अरबी का १२वाँ, फारसी का १५वाँ, उर्दू का अठारहवाँ और देवनागरी का तीसवाँ वर्ण। तालव्य श।

मुहा०—शीन काफ दुरुस्त होना = (१) उच्चारण ठीक होना। (२) सजकर तैयार होना (व्यंग्य)।

शीफ़र—वि° [सं°] आनंददायक । सुंदर । मनोहर [को°] ।

शीफालिका—संज्ञा स्त्री° [सं°] निर्गुंडी । शेफालिका ।

शीभर^{१}—संज्ञा पुं° [सं°] मेह की झड़ी ।

शीभर^{२}—वि° आनंदप्रद । मनोहर [को°] ।

शीभव—संज्ञा पुं° [सं°] सीकर । फुहारा [को°] ।

शीभ्य—संज्ञा पुं° [सं°] १. शिव । २. वृष । बैल ।

शीर^{१}—वि° [सं°] नुकीला । तेज ।

शीर^{२}—संज्ञा पुं° १. अजगर । २. दे° 'सीर' ।

शीर^{३}—संज्ञा पुं° [फ़ा°; मि° सं° क्षीर] क्षीर । दूध ।

मुहा° —शीर शकर या शीरोशकर हो जाना = (१) घुलमिल जाना । (२) गाढ़ स्नेह या प्रेम होना ।

शीरख़ाना—संज्ञा पुं° [फ़ा° शीरख़ानह्] १. दुग्धकेंद्र । दुग्धालय । २. मदिरालय (को°) ।

शीरखार—वि° [फ़ा° शीरख़्वार] शीरखोरा । दूध पीता (बच्चा) । उ°—उनों की अक्ल होर लायक के माफिक फरमाते हैं क्या वास्ते तिफ्ले शीरखार··· ।—दक्खिनी°, पृ° ४२५ ।

शीरखिश्त—संज्ञा पुं° [फ़ा° शीरख़िश्त] हकीमी में एक रेचक ओषधि ।

विशेष—कहते हैं, यह ओषधि खुरासान में पेड़ों और पत्थरों पर ओस की बूँदों की तरह जमी हुई मिलती है ।

शीरखोरा—संज्ञा पुं° [फ़ा° शीरख़्वार] १. दूध पीता बच्चा । २. अनजान बालक ।

शीरबा, शीरबिरंज—संज्ञा स्त्री° [फ़ा°] पायस । खीर [को°]

शीरमाल—संज्ञा स्त्री° [फ़ा°] १. चीनी मिला हुआ पानी । शर्बत । २. चीनी या गुड़ को पकाकर शहद के समान गाढ़ा किया हुआ रस । चाशनी । ३. आँटे को दूध में गूँधकर बनाई जानेवाली रोटी (को°) ।

शीरा—संज्ञा पुं° [फ़ा° शीरह्] १. शकर की चाशनी । २. फलों का निचोड़ा हुआ रस । ३. पीसी हुई ओषधियों का रस । दे° 'सीरा' ।

शीराज—संज्ञा पुं° [फ़ा°] ईरान का एक प्राचीन एवं प्रसिद्ध नगर ।

शीराजा—संज्ञा पुं° [फ़ा° शीराज़ह्] १. वह बुना हुआ रंगीन या सफेद फीता जो किताबों की सिलाई की छोर पर शोभा और मजबूती के लिये लगाया जाता है । २. पुस्तक और पुट्ठों पर की गई सिलाई । ३. प्रबंध । इंतजाम । ४. क्रम । सिलसिला । ५. टुकड़ा । जर्रा । कण । उ°—उन्नीसवीं सदी में बिखरे शीराजे के एकत्रित करने का जो प्रयत्न हुआ था, वह नगण्य सा था ।—भा° ई° रू°, पृ° ३३६ ।

यौ°—शीराजाबंद = (किताब) जिसकी सिलाई हो चुकी हो या जिल्द बँध गई हो ।

मुहा°—शीराजा खुलना या टूटना = (१) टाँका टूटना । सिलाई खुल जाना । (२) प्रबंध का बिगड़ जाना । इंतजाम खराब होना । शीराजा बँधना = (१) किताब के जुजों की सिलाई होना । (२) बिखरी चीजों का क्रम लगाना या सिलसिला बैठाना । शीराजा बिखरना = बेतरतीब होना । क्रमहीन होना ।

शीराजी—संज्ञा पुं° [अ°] १. एक प्रकार का कबूतर । २. घोड़े का एक भेद । शीराज का घोड़ा । दे° 'सिराजी' ।

शीरि—संज्ञा स्त्री° [सं°] रक्तनाड़ी । शिरा ।

शीरिका—संज्ञा स्त्री° [सं°] वंशपत्री नामक तृण ।

शीरीं^{१}—वि° [फ़ा°] १. मीठा । मधुर । २. प्रिय । प्यारा ।

शीरीं—संज्ञा स्त्री° फरहाद की प्रेयसी एक रमणी । (शीरीं फरहाद की प्रेमकथा बहुत ही प्रसिद्ध है ।)

शीरीं जबाँ—वि° [फ़ा° शीरींज़बाँ] मधुरभाषी । उ°—हलू लाजती आई मैन किवन । कहा यूँ जा ऐ तू है शीरीं जबाँ ।—दक्खिनी°, पृ° ८४ ।

शीरी—संज्ञा पुं° [सं°] १. कुश । कुशा । हरिदर्भ । २. मूँज । ३. कलिहारी । लांगली ।

शीरीनी—संज्ञा स्त्री° [फ़ा°] १. मिठास । मीठापन । २. खाने की वस्तु जिसमें खूब चीनी या मीठा पड़ा हो । मिठाई । मिष्ठान्न । ३. बताशा । सिरनी ।

क्रि° प्र°—चढ़ाना ।—बाँटना ।—मानना ।

शीर्ण^{१}—वि° [सं°] १. छितराया हुआ । टूटा फूटा हुआ । खंड खंड । २. गिरा हुआ । च्युत । ३. जीर्ण । फटा पुराना । ४. मुरझाया हुआ । सूखकर सिकुड़ा हुआ । ५. चुचका हुआ । ६. कृश । दुबला पतला ।

शीर्ण^{२}—संज्ञा पुं° एक गंधद्रव्य । स्थौणेयक । थुनेर ।

शीर्णक—वि° [सं°] शीर्ण वा च्युत पत्तों को खानेवाला [को°] ।

शीर्णकाय—वि° [सं°] दुर्बल शरीरवाला । कृशकाय [को°] ।

शीर्णता—संज्ञा स्त्री° [सं°] शीर्ण होने का भाव । शीर्णत्व ।

शीर्णत्व—संज्ञा पुं° [सं°] दे° 'शीर्णता' [को°] ।

शीर्णदंत—वि° [सं° शीर्णदन्त] जिसके दाँत गिर गए हों [को°] ।

शीर्णदल—संज्ञा पुं° [सं°] नीम ।

शीर्णनाला—संज्ञा स्त्री° [सं°] पृश्निपर्णी । पिठवन [को°] ।

शीर्णपत्र—संज्ञा पुं° [सं°] १. कर्णिकार । कनियारी । २. पठानी लोध । ३. नीम । ४. वृक्ष से गिरा हुआ पत्ता (को°) ।

शीर्णपर्ण—संज्ञा पुं° [सं°] १. निंब । नीम । २. वृक्ष से गिरा हुआ या कुम्हलाया हुआ पत्ता (को°) ।

यौ°—शीर्णपर्ण फल = जिसके पत्ते और फल मुरझाए, सुखे या झर गए हों ।

शीर्णपर्णी—संज्ञा स्त्री° [सं°] एक वृक्ष का नाम [को°] ।

शीर्णपाद—संज्ञा पुं° [सं°] १. यमराज ।

विशेष—पुराणों में कथा है कि माता के शाप से यमराज के पैर शीर्ण हो गए थे ।

२. शनिग्रह । ३. अत्यंत कृश पैर (को°) ।

शीर्णपुष्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सौंफ। मधुरिका। २. सोम्रा।

शीर्णपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सौंफ।

शीर्णमाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिठवन। पृश्निपर्णी।

शीर्णरोमक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गठिवन।

शीर्णवृंत—संज्ञा पुं० [सं० शीर्णवृन्त] तरबूज।

शीर्णांघ्रि—संज्ञा पुं० [सं० शीर्णाङ्घ्रि] यम। विशेष दे० 'शीर्णपाद'।

शीर्णि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शीर्ति' [को०]।

शीर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] तोड़ने फोड़ने की क्रिया। खंडन।

शीर्य^{१}—वि० [सं०] १. टूटने फूटने योग्य। भंगुर। २. नाशवान्।

शीर्य^{२}—संज्ञा पुं० एक प्रकार की दूब या घास जिसका प्रयोजन यज्ञों में पड़ता था।

शीर्वि—वि० [सं०] १. अपकारक। २. हिंसक। ३. बर्बर। जंगली।

शीर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिर। मुंड। कपाल। २. माथा। ३. सबसे ऊपर का भाग। सिरा। चोटी। ४. सामना। अग्र भाग। ५. कालागुरु। काला अगर। ६. एक पर्वत का नाम। ७. एक प्रकार की घास।

शीर्षक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिर। मुंड। २. माथा। ३. चोटी। सिरा। ४. राहु ग्रह। ५. सिर में लपेटने की माला। ६. अगर। ७. नारिकेल वृक्ष। ८. टोप। शिरस्त्राण। कूँड। ९. व्यवहार या अभियोग का निर्णय। फैसला। १०. वह शब्द या वाक्य जो विषय के परिचय के लिये किसी लेख या प्रबंध के ऊपर लिखा जाय। ११. सिर की हड्डी। शिरोस्थि (को०)। १२. पगड़ी। शिरोवेष्टन। मुरेठा (को०)।

शीर्षघाती—वि०, संज्ञा पुं० [सं० शीर्षघातिन्] सिर काटनेवाला। जल्लाद [को०]।

शीर्षच्छेद, शीर्षच्छेदन—संज्ञा पुं० [सं०] सिर काटना [को०]।

शीर्षच्छेदिक, शीर्षच्छेद्य—वि० [सं०] शिरच्छेद करने योग्य। वध करने योग्य। वध्य [को०]।

शीर्षणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शय्या का सिरहाना [को०]।

शीर्षण्य^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. टोप। कूँड़। २. सुलझे हुए साफ बाल। ३. सिर पर बाँधी जानेवाली कोई वस्तु (को०)। ४. सिर पर लपेटने की रज्जु (को०)। ५. चारपाई का सिरहाना।

शीर्षण्य^{२}—वि० शीर्षांकित। श्रेष्ठ [को०]।

शीर्षत्राण—संज्ञा पुं० [सं०] शिरस्त्राण। टोप। कूँड़ [को०]।

शीर्षपट्ट, शीर्षपट्टक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिर में लपेटने का कपड़ा। २. पगड़ी। मुरेठा। साफा।

शीर्षबिंदु—संज्ञा पुं० [सं० शीर्षबिन्दु] १. सिर के ऊपर और ऊँचाई में सब से ऊपर का स्थान। २. मोतियाबिंद।

शीर्षरक्ष, शीर्षरक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शीर्षत्राण' [को०]।

शीर्षवर्तन—संज्ञा पुं० [सं०] अभियोग चलानेवाले का उस दशा में दंड सहने के लिये तैयार होना जब कि अभियुक्त ने दिव्य परीक्षा देकर अपने को निर्दोष प्रमाणित कर दिया हो। शिरोपस्थायी।

शीर्षवेदना, शीर्षव्यथा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिरोवेदना। सिर का दर्द। शीर्ष शोक [को०]।

शीर्षशोक—संज्ञा पुं० [सं०] शिरोवेदना। सिरदर्द [को०]।

शीर्षस्थ—वि० [सं०] दे० 'शीर्षांकित' [को०]।

शीर्षस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. उत्तमांग। सिर। शीर्ष। २. ललाट। मस्तक। ३. सर्वोच्च स्थान वा पद [को०]।

शीर्षस्थानीय—वि० [सं०] दे० 'शीर्षांकित' [को०]।

शीर्षांकित—वि० [सं० शीर्षाङ्कित] शीर्षस्थानीय। श्रेष्ठ। सर्वोच्च।

शीर्षोदय—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष में मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ और मीन राशि [को०]।

शील^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चाल व्यवहार। आचरण। वृत्ति। चरित्र। २. स्वभाव। प्रवृत्ति। आदत। मिजाज। ३. अच्छा चालचलन। उत्तम आचरण। सद्वृत्ति। उ०—'भाव' ही कर्म के मूल प्रवर्तक और शील के संस्थापक हैं।—रस०, पृ० १६१।

विशेष—बौद्ध शास्त्रों में दस शील कहे गए हैं—हिंसा, स्तेय, व्यभिचार, मिथ्याभाषण, प्रमाद, अपराह्न भोजन, नृत्य गीतादि, मालागंधादि, उच्चासन शय्या और द्रव्यसंग्रह इन सब का त्याग। कहीं कहीं पंचशील ही कहे गए हैं। यह शील छह या दस पारमिताओं में से एक है और तीन प्रकार का कहा गया है—संभार, कुशलसंग्राह और सत्त्वार्थ क्रिया। ४. उत्तम स्वभाव। अच्छी प्रकृति। अच्छा मिजाज। ५. दूसरे का जी न दुखे, यह भाव। कोमल हृदय। ६ सौंदर्य। सुंदरता। सौम्यता (को०)। ७. संकोच का स्वभाव। मुरौवत।

मुहा०—शील तोड़ना = दूसरे के जी दुखने न दुखने का ध्यान न रखना। मुरौवत न रखना। आँखों में शील न होना = दे० 'आँख' के मुहा०।

८. अजगर।

शील^{२}—वि० प्रवृत्त। तत्पर। प्रवृत्तिवाला। स्वभावयुक्त। जैसे—दानशील, पुण्यशील।

शीलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक कवि का नाम। २. कान की जड़। कर्णमूल [को०]।

शीलकीर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुणों की ख्याति, शुचिता और सदाचार की प्रशस्ति [को०]।

शीलखंडन—संज्ञा पुं० [सं०] शुचिता, सदाचार या नैतिकता का उल्लंघन [को०]।

शीलगुप्त—वि० [सं०] चतुर। मक्कार। प्रवंचक [को०]।

शीलज्ञ—वि० [सं०] सदाचार एवं नैतिकता का ज्ञाता।

शीलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शीलत्व'।

शीलत्याग—संज्ञा पुं० [सं०] सदाचार का त्याग [को०]।

शीलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शीलयुक्त होने का भाव या क्रिया। शीलता। शालीनता [को०]।

शीलदशा—संज्ञा स्त्री० [सं० शील + दशा] किसी विशेष भाव का किसी की प्रकृति या स्वभाव का लक्षण बनने की अवस्था। जैसे,

तुनकमिजाजी, हँसोड़पन, भीरुता आदि। उ०—भाव के इस प्रकार प्रकृतिस्थ हो जाने की अवस्था को हम शील दशा कहेंगे। —रस०, पृ० १८२।

शीलधारी^{1}—वि० [सं० शीलधारिन्] सद्‌वृत्तिवाला। शीलवान् [को०]।

शीलधारी^{2}—संज्ञा पुं० शिव [को०]।

शीलन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बारंबार अभ्यास करना। जैसे, शास्त्र आदि का। २. निरंतर प्रयोग में लाना। आधिक्य। ३. संमान या सेवा करना। ४. वस्त्र पहिनना [को०]।

शीलभंग—संज्ञा पुं० [सं० शीलभङ्ग] १. दे० 'शीलखंडन'। २. (आधुनिक प्रयोग) किसी भी स्त्री के साथ उसकी इच्छा के विरुद्ध प्रसंग करना। बलात्कार।

शीलभ्रंश—संज्ञा पुं० [सं०] सदाचार का विनाश [को०]।

शीलवंचना—संज्ञा स्त्री० [सं० शीलवञ्चना] १. सतीत्व या इंद्रियनिग्रह का अतिक्रमण। २. शुचिता या शील का उल्लंघन [को०]।

शीलवर्जित—वि० [सं०] दुराचारी। शील से रहित [को०]।

शीलवान्—वि० [सं० शीलवत्] [वि० स्त्री० शीलवती] १. अच्छे आचरण का। सात्विक वृत्ति का। २. अच्छे या कोमल स्वभाव का। मुरौवतवाला। सुशील।

शीलवृत्त^{1}—वि० [सं०] अच्छे आचरणवाला। सदाचारी [को०]।

शीलवृत्त^{2}—संज्ञा पुं० अच्छा आचरण। सदाचार [को०]।

शीलवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुशीलता। सदाचार। भलमनसी [को०]।

शीलवृद्ध—वि० [सं०] संमान्य। सदाचारी [को०]।

शीलसौंदर्य—संज्ञा पुं० [सं० शीलसौन्दर्य] उत्कृष्ट एवं सत् आचरण की सुंदरता। शील की सुंदरता। उ०—किसी को रूपसौंदर्य और शीलसौंदर्य का पहले पहल साक्षात्कार या परिचय होते ही सबसे पहली अनुभूति आनंद की होती है। सबसे पहले हृदय विकसित और लुब्ध होता है।—रस०, पृ० ७५।

शीला—संज्ञा स्त्री० [सं०] कौंडिन्य मुनि की पत्नी का नाम।

शीलित^{1}—वि० [सं०] १. बारंबार किया हुआ। अभ्यस्त। प्रयुक्त। २. धारण किया हुआ। पहना हुआ। ३. कृत। संपादित। ४. कुशल। निपुण। ५. युक्त। सहित। संपन्न।

शीलित^{2}—संज्ञा पुं० अनवरत क्रिया। अभ्यास [को०]।

शीली—वि० [सं० शीलिन्] १. सदाचारी। सुशील। २. बार-बार किया हुआ। अभ्यस्त। प्रयुक्त [को०]।

शीव(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिव] दे० 'शिव'। उ०—ब्रह्मा विष्णु शीव अधिकारी। तीन की आशा जगत महँ भारी।—कबीर सा०, पृ० ४६८।

शीवल—संज्ञा पुं० [सं०] १. छरीला। शैलेय। पथरफूल। २. सेवार।

शीवा^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शीवन्] अजगर।

शीवा^{2}(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शिव] शिव। ब्रह्म। उ०—सब को प्रेरक कहिए जीवा। सो क्षेत्रज्ञ निरंतर शीवा।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० ११०।

शीश(पु)†^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शीर्ष] दे० 'शीर्ष'।

यौ०—शीशफूल।

शीश^{2}—संज्ञा पुं० [फ़ा० शीशह्] शीशा। काँच। (प्राय: समास में प्रयुक्त)। जैसे,—शीश-ए-दिल, शीश महल [को०]।

यौ०—शीश-ए-दिल = कोमल हृदय। नाजुक दिल। शीशगर = काँच के सामान बनानेवाला। शीशवाज = धूर्त। मक्कार। शीशमहल। शीश-ए साअत, शीश-ए-साआ = बालू को घड़ी।

शीशफूल—संज्ञा पुं० [सं० शीर्ष + फुल्ल] सिर पर पहना जानेवाला स्त्रियों का गहना विशेष। उ०—सिर पर हैं चँदवा शीशफूल, कानों में झुमके रहे झूल।—ग्राम्या, पृ० ४०।

शीशम—संज्ञा पुं० [फ़ा०] एक प्रकार का पेड़ जिसका तना भारी, सुंदर और मजबूत होता है।

विशेष—यह पेड़ बहुत ऊँचा और सीधा होता है। इसकी पत्तियाँ छोटी और गोल होती हैं। लकड़ी लाल रंग की होती है और मजबूती तथा सुंदरता के लिये प्रसिद्ध है। इससे पलंग, कुरसी, मेज आदि सजावट के सामान बढ़िया बनते हैं।

शीशमहल—संज्ञा पुं० [फ़ा० शीश + अ० महल] १. वह कमरा या कोठरी जिसकी दीवारों में सर्वत्र शीशे जड़े हों। काँच का मकान।

मुहा०—शीश महल का कुत्ता = पागल कुत्तों की तरह बकने या उछलने कूदनेवाला। (शीशे में अपना ही प्रतिबिंब देखकर कुत्ता घबराता और भूँकता है।)

शीशा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शीशह्] १. एक मिश्र धातु, जो बालू या रेह या खारी मिट्टी को आग में गलाने से बनती है।

विशेष—यह पारदर्शक होती है और खरी होने के कारण थोड़े आघात से टूट जाती है। काँच।

२. काँच का वह खंड जिसमें सामने की वस्तुओं का ठीक प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है और जिसका व्यवहार चेहरा देखने के लिये किया जाता है। दर्पण। आइना। ३. झाड़ फानूस आदि काँच के बने सजावट के सामान।

मुहा०—शीशे को पत्थर के हवाले करना = जान बूझकर किसी को संकट में डालना। उ०—वे सुबहा खता की जो दिल उस बुत से लगाया। खुद हमने किया शीशे को पत्थर के हवाले।—फिसाना०, भा० ३, पृ० २६। शीशा बाशा = बहुत नाजुक चीज। शीशे में उतारना = (१) भूत छुड़ाना। प्रेतबाधा शांत करना। वश में करना। मोहित करना। उ०—इसकी भड़क कोई नहीं मिटा सकता मगर हमने इसे शीशे में उतारा है।—फिसाना०, भा० ३, पृ० ४।

शीशी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शीशह्, शीशा] शीशे का छोटा पात्र जो तेल, इत्र, दवा आदि रखने के काम में आता है। काँच की लंबी कुप्पी।

मुहा०—शीशी सुँघाना = क्लोरोफार्म सुँघाना। दवा सुँघाकर बेहोश करना।

विशेष—अस्त्रचिकित्सा आदि के समय रोगी इस प्रकार क्लोरोफार्म सुंघाकर बेहोश किए जाते हैं।

शीस^{२}—संज्ञा पुं० [सं० शीर्ष] दे० 'शीर्ष'। उ०—शीस झुकाकर चली गई वह मंदिर में निज हृदय हिलोर।—साकेत, पृ० ३६८।

शीस^{३}—संज्ञा पुं० [अ०] एक पैगंबर। आदम का तीसरा पुत्र [को०]।

शुंग—संज्ञा पुं० [सं० शुङ्ग] १. वट वृक्ष। २. आँवला। ३. पाकड़। पकड़ी। ४. नव पल्लव। ५. फूल के नीचे का आधार या कटोरी। ६. एक राजवंश जो मौर्यों के पीछे मगध के सिंहासन पर बैठा था।

विशेष—इस वंश का स्थापक मौर्यों का सेनापति पुष्यमित्र था जिसने मौर्यवंश के अंतिम राजा बृहद्रथ को मारकर ईसा से १८५ वर्ष पूर्व उसके साम्राज्य पर अपना अधिकार जमा लिया था। विशेष दे० 'पुष्यमित्र' शब्द।

७. जौ या अन्न का टूँड़। किशारु। शूक (को०)।

शुंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० शुङ्गा] १. पर्कटी का पेड़। २. कली का रक्षक आवरण। ३. गेहूँ जौ आदि का टूँड़। शूल [को०]।

यौ०—शुंगाकर्म=पुंसवन नाम का एक संस्कार विशेष।

शुंगी—संज्ञा पुं० [सं० शुङ्गिन्] १. पक्कड़ का पेड़। पाकर। २. वट वृक्ष।

शुंठि, शुंठी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुण्ठि, शुण्ठी] सोंठ।

शुंठ्य—संज्ञा पुं० [सं० शुण्ठ्य] सूखी आदी। सोंठ [को०]।

शुंड—संज्ञा पुं० [सं० शुण्ड] १. हाथी की सूँड़। २. हाथी का मद जो उसकी कनपटी से बहता है।

शुंडक—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डक] १. एक प्रकार का रणवाद्य। भेरी। २. युद्धगान। युद्धगीत (को०)। ३. मद्य उतारने या बेचनेवाला।

शुंडमूषिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शुण्डमूषिका] छछुंदर [को०]।

शुंडरोह—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डरोह] अगिया घास। भूतृण।

शुंडा—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डा] १. सूँड़। २. मद्यपान करने का स्थान। हौली। ३. शराब। ४. वेश्या। ५. कुटनी। ६. कमलनाल। नलिनी। कमल की डंडी (को०)। ७. चिबुक। हनु (को०)।

यौ०—शुंडादंड। शुंडापान।

शुंडादंड—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डादण्ड] हाथी की सूँड़।

शुंडापान—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डापान] मधुशाला। मद्यपानगृह [को०]।

शुंडार—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डार] १. हाथी की सूँड़। २. साठ वर्ष का हाथी। ३. मद्य उतारने या बेचनेवाला।

शुंडाल—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डाल] हाथी।

शुंडिक—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डिक] १. मद्य बिकने का स्थान। कलवरिया। २. एक प्राचीन जाति का नाम जिसका व्यवसाय मद्य उतारना और बेचना था।

शुंडिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शुण्डिका] १. अलिजिह्वा। गले का कौवा। घाँटी। २. ग्रंथि में आनेवाली सूजन। ३. दे० 'शुंडा' [को०]।

शुंडिमूषिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शुण्डिमूषिका] छछूँदर।

शुंडी^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शुण्डिन्] १. (सूँड़वाला) हाथी। २. मद्य बनानेवाला। कलवार।

यौ०—शुंडिमूषिका।

शुंडी^{२}—संज्ञा स्त्री० १. हाथीसूँड़ी का पौधा। २. गले का कौवा। घाँटी।

शुंध्यु^{१}—संज्ञा पुं० [सं० शुन्ध्यु] १. वायु। २. अग्नि। ३. एक पक्षी। ४. आदित्य [को०]।

शुंध्यु^{२}—संज्ञा स्त्री० वडवा। घोड़ी [को०]।

शुंध्यु^{३}—वि० पवित्र। विमल। शुचि [को०]।

शुंभ—संज्ञा पुं० [सं० शुम्भ] एक असुर जिसे दुर्गा ने मारा था।

विशेष—अग्निपुराण के अनुसार यह प्रह्लाद का पौत्र और गवेष्ठी का पुत्र था। इसके भाई का नाम निशुंभ था। वामनपुराण में इसे कश्यप की दनु नामक भार्या से उत्पन्न कहा गया है।

यौ०—शुंभघातिनी। शुंभपुर। शुंभपुरी। शुंभमथनी। शुंभमर्दिनी। शुंभहननी=दुर्गा।

शुंभघातिनी, शुंभमर्दिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुम्भघातिनी, शुम्भमर्दिनी] दुर्गा।

शुंभपुर—संज्ञा पुं० [सं० शुम्भपुर] दे० 'शुंभपुरी'।

शुंभपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुम्भपुरी] शुंभ राक्षस की पुरी। एकचक्रा पुरी। हरिगृह।

विशेष—विद्वानों का अनुमान है कि मध्य प्रदेश में गोंड़वाना के अंतर्गत सभलपुर ही प्राचीन शुंभपुरी है।

शुंशुमार—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुमार का असाधु रूप। सूँस [को०]।

शु—क्रि० वि० [सं०] शीघ्रतापूर्वक। त्वरित। जल्दी [को०]।

शुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. तोता। सुग्गा। २. एक प्रकार की गठिवन। ३. सिरिस का पेड़। ४. सोना पाठा। ५. लोध का वृक्ष। ६. तालीशपत्र। ७. भरभंडा। भरभाँड़। ८. रावण के एक दूत का नाम। ९. व्यासदेव के पुत्र। विशेष दे० 'शुकदेव'। १०. वस्त्र। कपड़ा। ११. कपड़े का आँचल। १२. शिरस्त्राण। खोद (को०)। १३. पगड़ी। साफा। १४. महाभारत के अनुसार एक पौराणिक अस्त्र (को०)। १५. एक वीर योद्धा (को०)। १६. गंधर्वों का एक राजा

शुककर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पौधा।

शुककीट—संज्ञा पुं० [सं०] हरे रंग का एक फतिंगा जो खेतों में दिखाई पड़ता है।

शुककूट—संज्ञा पुं० [सं०] दो खंभों के बीच में शोभा के लिये लटकाई हुई माला।

शुकच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] १. तोते का पर। २. ग्रंथिपर्ण। गठिवन। ३. तेजपत्ता।

शुकजिह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुकतुंडी। सुआठोंठी नामक पौधा।

शुकतरु—संज्ञा पुं० [सं०] शिरीष वृक्ष।

शुकता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शुकत्व' [को०]।

शुकतुंड—संज्ञा पुं० [सं० शुकतुराड] १. तोते की चोंच। २. हाथ की एक मुद्रा जो तांत्रिक पूजन में बनाई जाती है।

शुकतुंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुकतुराडी] शुकजिह्वा या सूआठोंठी नामक पौधा।

शुकत्व—संज्ञा पुं० [मं०] शुक होने का भाव । सुग्गापन । शुकता [को०]।

शुकदेव—संज्ञा पुं० [सं०] कृष्णद्वैपायन व्यास के पुत्र जो पुराणों के भारी वक्ता और ज्ञानी थे।

विशेष—इन्होंने राजा परीक्षित को उनके मरने के पहले मोक्ष धर्म का उपदेश दिया था। कहा जाता है, वही उपदेश भागवत पुराण है।

शुकद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] शिरीष वृक्ष।

शुकनलिका न्याय—संज्ञा पुं० [सं०] तोता जिस प्रकार फँसाने की नली (नलनी) में लोभ के कारण फँस जाता है, वैसे ही फँसने की रीति।

विशेष—सूर, तुलसी आदि हिंदी के कवियों ने भी 'नलनी के सुअटा' पद का व्यवहार किया है।

शुकनामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुकजिह्वा या सूआठोंठी नामक पौधा।

शुकनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] चकवँड़। चक्रमर्द।

शुकनास¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. कपिकच्छु। केवांच। कौंछ। २. शुकजिह्वा। सुआठोंठी। ३. गंभारी। ४. नलिका। ५. श्योनाक वृक्ष। छोंकर। ६. सोनापाठा। ७. अगस्त का पेड़। ८. वास्तुशास्त्र के अनुसार गृह की सजावट (को०)। ९. कादंबरी में वर्णित तारापीड का एक अमात्य (को०)।

शुकनास²— वि० जिसकी नाक सुग्गे के समान झुकी हुई हो [को०]।

शुकनासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शुकनास'।

शुकनासिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुक की तरह झुकी हुई नासिका [को०]।

शुकपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] गंधक।

शुकपुच्छक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की गठिवन। थुनेर।

शुकपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. थुनेर। २. सिरिस का पेड़। ३. गंधक। ४. अगस्त का पेड़।

शुकपोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का विषरहित वा अहानिकर सर्प [को०]।

शुकप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. सिरिस का पेड़। २. कमरख।

शुकप्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नीम। २. जामुन।

शुकफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. आक। मदार। २. सेमर।

शुकबर्ह—संज्ञा पुं० [सं०] गठिवन।

शुकरान—संज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसके फल कडुए होते हैं।

शुकराना—संज्ञा पुं० [अ० शुक्र] १. शुक्रिया। कृतज्ञता। २. वह धन जो कार्य हो जाने के पश्चात् धन्यवाद के रूप में किसी को दिया जाय। जैसे,—वकीलों का शुकराना, जमीदारों का शुकराना इत्यादि।

शुकलोचन—वि० [सं० शुक (= तोता) + लोचन (= चश्म)] तोताचश्म। तोते के समान आँख फेर लेनेवाला। बेमुरौवत। (व्यंग्य में)। उ०—ए निर्दयी क्या तुझे दया का नाम भी भूल गया जो ऐसे शुकलोचन से पाला डाला।- प्रेमघन०, भा० २, पृ० १५।

शुकवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] अनार। दाड़िम।

शुकवाक्—वि० [सं० शुकवाच्] जिसकी बोली सुग्गे की तरह मीठी हो [को०]।

शुकवाह, शुकवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव, जिसका वाहन शुक या तोता माना गया है।

शुकशालक—संज्ञा पुं० [सं०] बकायन।

शुकशिंबा, शुकशिंबी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुकशिम्बा, शुकशिम्बि] कपिकच्छु। किवाँच।

शुकशीर्षा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. थुनेर। स्थौणेयक। २. तालीस। तेजपत्ता।

शुकसप्तति—संज्ञा स्त्री० [सं०] इस नाम की एक पुस्तिका जिसमें शुक ने ७० कहानियाँ कही हैं।

शुकाख्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुकजिह्वा नामक पौधा।

शुकादान—संज्ञा पुं० [सं०] अनार।

शुकानना—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुकाख्या नामक पौधा।

शुकायन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बुद्ध। २. अर्हंत।

शुकाह्व, शुकाह्वय—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का मोथा।

शुकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मादा तोता। सुग्गी। २. कश्यप की पत्नी का नाम।

शुकेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] शिरीष वृक्ष। सिरिस।

शुकोदर—संज्ञा पुं० [सं०] तालीश वृक्ष।

शुकोह—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] रोबदाब। शान शौकत।

यौ०—शुकोहे अलफाज = शब्दाडंबर। उत्कलिका।

शुक्त¹—वि० [सं०] १. सड़ाकर खट्टा किया हुआ। खमीर उठाया हुआ। २. खट्टा। अम्ल। ३. कड़ा। कठोर। ४. अप्रिय। नापसंद। ५. निर्जन। सुनसान। उजाड़। ६. श्लिष्ट। मिला हुआ। ७. पूत। शुद्ध। स्वच्छ। साफ (को०)।

शुक्त²—संज्ञा पुं० १. अम्लता। खटाई। २. वसिष्ठ के एक पुत्र का नाम। ३. सड़ाकर खट्टी की हुई कोई वस्तु। ४. काँजी। ५. सिरका। ६. चुक। ७. मांस। ८. कठोर वचन।

शुक्तक—संज्ञा पुं० [सं०] खट्टी डकार [को०]।

शुक्तपाक—संज्ञा पुं० [सं०] आमाशय या पक्वाशय का खट्टापन [को०]।

शुक्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चुक्रिका का पौधा। चुका। २. काँजी।

शुक्ताम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] चुक्रिका शाक। चुक का साग।

शुक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सीप। सीपी। २. ताल की सीपी। सुतुही। ३. शंख। ४. दो कर्ष या चार तोले की एक तौल। ५. बेर। ६. नखी नामक गंधद्रव्य। ७. अर्श। बवासीर। ८. आँख का एक रोग जिसमें सफेद डेले के ऊपर मांस की एक बिंदी सी

निकल आती है। ९. कपाल जो काली या कापालिकों के हाथ में रहता है। १०. हड्डी। ११. घोड़े की गरदन अथवा छाती की एक भौंरी। १२. छोटा शंख। शंखनख (को०)।

यौ०—शुक्तिकर्ण=जिसके कान सीपी के समान हों। शुक्तिखलति=पूर्णतः खल्वाट। पूरी तरह गंजा। शुक्तिचूर्णक। शुक्तिपेशी=दे० 'शुक्तिपुट'। शुक्तिबीज। शुक्तिवधू।

शुक्तिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का नेत्ररोग। २. गंधक।

शुक्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सीप। सीपी। २. चुक्रिका शाक। चुक नाम का साग। ३. आँख का शुक्ति नामक रोग।

शुक्तिचूर्णक—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार एक प्रकार का घटिया क़िस्म का रत्न जो देखने में सीपी की खोल जैसा होता है।

शुक्तिज—संज्ञा पुं० [सं०] मुक्ता। मोती।

शुक्तिपत्र, शुक्तिपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] छतिवन। सप्तपर्णी वृक्ष।

शुक्तिपुट—संज्ञा पुं० [सं०] सीपी का खोल [को०]।

शुक्तिबीज, शुक्तिमणि—संज्ञा पुं० [सं०] मोती।

शुक्तिमती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक नदी का नाम। २. चेदि की राजधानी।

शुक्तिमान्—संज्ञा पुं० [सं० शुक्तिमत्] एक पर्वत जो आठ कुलपर्वतों में से है।

शुक्तिवधू—संज्ञा स्त्री० [सं०] सीप। सीपी।

शुक्तिस्पर्श—संज्ञा पुं० [सं०] मोती पर पड़ा हुआ मटमैला धब्बा [को०]।

शुक्त्यंगी—संज्ञा पुं० [सं० शुक्त्यङ्गिन्] संभालू। सिंदुवार। मेउड़ी।

शुक्त्युद्भव—संज्ञा पुं० [सं०] मोती [को०]।

शुक्र^1—वि० [सं०] १. देदीप्यमान। चमकीला। २. स्वच्छ। उज्वल।

शुक्र^2—संज्ञा पुं० १. अग्नि। २. एक बहुत चमकीला ग्रह या तारा जो पुराणानुसार दैत्यों का गुरु कहा गया है।

विशेष—आधुनिक ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार इसका व्यास ७०० मील है। यह पृथ्वी से सबसे अधिक निकट है; एक करोड़ कोस से कुछ ही अधिक दूर है। सूर्य से इसकी दूरी तीन करोड़ पैंतीस लाख कोस है। इसका अक्ष-भ्रमण-काल २२५ दिनों का है अर्थात् इसका एक दिन रात हमारे २२५ दिनों के बराबर होता है। बुध के समान यह ग्रह भी प्रधान युति के पीछे पश्चिम में निकलता है और पूर्व की ओर बढ़ता हुआ लघु युति के समय लुप्त हो जाता है। इसमें वायु और जल दोनों का होना अनुमान किया गया है। इसका पृष्ठ बादलों से ढका रहता है। फलित ज्योतिष में इसका वर्ण जल के समान श्यामल कहा गया है और यह वाल्य का स्वामी, जलभूमिचारी और स्निग्ध रुचिवाला माना गया है।

पुराणों में शुक्र दैत्यों के गुरु और भृगु के पुत्र कहे गए हैं। ऐसी कथा है कि दैत्यराज बलि जब वामन को पृथ्वी दान करने लगे, तब वे उन्हें रोकने के विचार से उस जलपात्र की टोंटी में जा बैठे जिसमें संकल्प करने का जल था। उस समय सींक से गोदने पर इनकी एक आँख फूट गई। इसी कारण काने आदमी को लोग हँसी में शुक्राचार्य कह दिया करते हैं। विशेष दे० 'शुक्राचार्य'।

पर्या०—दैत्यगुरु। काव्य। उशना। भार्गव। कवि। सित। भृगु। षोड़शार्चि। श्वेतरथ।

३. ज्येष्ठ मास। जेठ (यह कुबेर का भंडारी कहा गया है)। ४. स्वच्छ और शुद्ध सोम। ५. चित्रक वृक्ष। चीता। ६. सार। रस। सत। ७. नर जीवों के शरीर की वह धातु जिसमें माता के अंड को गर्भित करनेवाले घटक या अणु रहते हैं। वीर्य। मनी। ८. बल। सामर्थ्य। पौरुष। शक्ति। ९. सप्ताह का छठा दिन जो बृहस्पतिवार के बाद और शनिवार से पहले पड़ता है। १० आँख की पुतली का एक रोग। फूला। फूली। ११. एरंड वृक्ष। अंडी का पेड़। रेंड़। १२. स्वर्ण। सोना। १३. धन। दौलत। संपत्ति। १४. जल (को०)। १५. चमकीलापन (को०)। १६. गायत्री मंत्र में आनेवाली प्रथम तीन (भूः भुवः स्वः) व्याहृतियाँ (को०)। १७. वशिष्ठ के एक पुत्र का नाम (को०)। १८. तीसरे मनु के एक पुत्र का नाम (को०)। १९. सत्कार्य। सत्कर्म (को०)।

शुक्र^3—संज्ञा पुं० [अ०] धन्यवाद। कृतज्ञता प्रकाश। जैसे,—खुदा का शुक्र है।

शुक्रकर^1—संज्ञा पुं० [सं०] मज्जा, जिससे शुक्र या वीर्य का बनना कहा गया है।

शुक्रकर^2—वि० वीर्य को बढ़ानेवाला [को०]।

शुक्रकृच्छ्र संज्ञा पुं० [सं०] मूत्रकृच्छ्र रोग। सूजाक।

शुक्रगुजार—वि० [अ० शुक्र+फ़ा० गुजार] एहसान माननेवाला। धन्यवाद देनेवाला। आभारी। कृतज्ञ।

शुक्रगुजारी—संज्ञा स्त्री० [अ०] एहसानमंदी। किए हुए उपकार को मानना। कृतज्ञता।

शुक्रज—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुत्र। बेटा। २. देवताओं का एक भेद (जैन)।

शुक्रद—संज्ञा पुं० [सं०] गेहूँ। गोधूम।

शुक्रदोष—संज्ञा पुं० [सं०] क्लीवत्व। नपुंसकता।

शुक्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. कटसरैया। २. सफेद अपराजिता।

शुक्रप्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] धातुक्षीणता। धातु का गिरना जो एक रोग है।

शुक्रभुज्—संज्ञा पुं० [सं०] मयूर। मोर।

शुक्रभू—संज्ञा पुं० [सं०] मज्जा।

शुक्रमाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बभनेटी। भारंगी।

शुक्रमेह—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शुक्रप्रमेह'।

शुक्रल वि० [सं०] २. जिसमें शुक्र या वीर्य हो। २. वीर्य उत्पन्न करनेवाला।

शुक्रला—संज्ञा स्त्री० [सं०] उटंगन के बीज। उचटा। ओकड़ा।

शुक्रवर्ण—वि० [सं०] उज्वल। चमकीला। दीप्तियुक्त (को०)।

शुक्रवार, शुक्रवासर—संज्ञा पुं० [सं०] सप्ताह का छठा दिन जो जो बृहस्पतिवार के बाद और शनिवार के पहले पड़ता है।

शुक्रशिष्य—संज्ञा पुं० [सं०] दैत्य। असुर।

शुक्रस्तंभ—संज्ञा पुं० [सं० शुक्रस्तम्भ] ध्वजभंग या नपुंसकता का एक भेद जो बहुत दिनों तक ब्रह्मचर्य पालन करने से होता है।

शुक्रांग—संज्ञा पुं० [सं० शुक्राङ्ग] मयूर। मोर।

शुक्रा—संज्ञा स्त्री० [सं० बंसलोचन।

शुक्राचार्य—संज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि जो दैत्यों के गुरु और महर्षि भृगु के पुत्र थे।

विशेष—इनकी कन्या का नाम देवयानी था और पुत्रों का नाम षंड तथा अमर्क था। देवगुरु बृहस्पति के पुत्र कच ने इनसे संजीवनी विद्या सीखी थी। दे० 'शुक्र^{3}'।

शुक्राना—संज्ञा पुं० [फ़ा० शुक्रानह्] दे० 'शुकराना'।

शुक्राश्मरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] अश्मरी रोग का एक भेद। वह पथरी जो वीर्य को स्खलित होते समय रोकने से उत्पन्न होती है।

शुक्रिय—वि० [सं०] १. शुक्र संबंधी। शुक्र का। २. शुक्र को बढ़ानेवाला। शुक्रल। ३. जिसमें शुद्ध रस हो।

शुक्रिया—संज्ञा पुं० [फ़ा० शुक्रियह्] धन्यवाद। कृतज्ञता प्रकाश।

क्रि० प्र०—अदा करना।

शुक्ल^{1}—वि० [सं०] १. सफेद। उजला। धवल। श्वेत। स्वच्छ। २. निष्कलंक। बेदाग (को०)। ३. सात्विक (को०)। ४. यशस्कर (को०)। ५. तेजोमय। प्रकाशदीप्त (को०)।

शुक्ल^{2}—संज्ञा पुं० १. ब्राह्मणों की एक पदवी। २. शुक्ल पक्ष। ३. सफेद रेंड़ का वृक्ष। ४. आँखों का एक प्रकार का रोग जो उसके सफेद तल या डेले पर होता है। ५. कुंद नामक पुष्पवृक्ष। ६. सफेद लोध। ७. नवनीत। मक्खन। ८. चाँदी। रजत। ९. धव वृक्ष। घी। १०. एक योग। ११. विष्णु का एक नाम। १२. श्वेत रंग (को०)। १३. शिव (को०)। १४. कपिल मुनि का नाम (को०)। १५. खट्टी कांजी। १६. उज्वलता (को०)। १७. सफेद धतूरा (को०)। १८. वैशाख मास (को०)। १९. एक संवत्सर (को०)। २०. बलभद्र। बलराम (को०)।

शुक्लकंठ, शुक्लकंठक—संज्ञा पुं० [सं० शुक्लकण्ठ, शुक्लकण्ठक] मुर्गा। जलकाक।

शुक्लकंद—संज्ञा पुं० [सं० शुक्लकन्द] १. भैंसाकंद। २. शंखालू। ३. अतीस।

शुक्लकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० शुक्लकन्दा] १. सफेद अतीस। २. बिदारी कंद।

शुक्लक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुक्ल पक्ष। २. श्वेत वर्ण (को०)। ३. खिरनी का वृक्ष।

शुक्लकर्कट—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद रंग का केकड़ा।

शुक्लकर्मा—वि० [सं० शुक्लकर्मन्] सात्विक कर्मोंवाला। सुकर्मा (को०)।

शुक्लकुष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] वह कोढ़ जिसमें शरीर पर सफेद चकत्ते पड़ जाते हैं।

शुक्लक्षीरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] काकोली।

शुक्लक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] पवित्र स्थान। तीर्थस्थान।

शुक्लचीरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काकोली। २. वह जो श्वेत दुग्धयुक्त हो (को०)।

शुक्लजीव—संज्ञा पुं० [सं०] वज्री नामक पौधा (को०)।

शुक्लता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शुक्ल का भाव या धर्म। २. सफेदी। श्वेतता।

शुक्लतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम जिसे विष्णुतीर्थ भी कहते हैं।

शुक्लत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुल्क का भाव या धर्म। शुक्लता। २. सफेदी। श्वेतता।

शुक्लदुग्ध—संज्ञा पुं० [सं०] सिंघाड़ा।

शुक्लदेह—वि० [सं०] १. शुद्ध शरीरवाला। २. शरीर की तरह जिसका मन भी शुद्ध हो (को०)।

शुक्लधातु—संज्ञा पुं० [सं०] खरिया नाम की मिट्टी।

शुक्लध्यान—संज्ञा पुं० [सं०] योग। उ०—जैन शास्त्रों में शुक्ल ध्यान या योग के भी चार भेद हैं।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २३४।

शुक्ल पक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] अमावस्या के उपरांत प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक का पक्ष, जिसमें चंद्रमा की कला प्रतिदिन बढ़ती जाती है जिससे रात उजेली होती है। चांद्रमास में कृष्ण पक्ष से भिन्न दूसरा पक्ष।

शुक्लपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्षत्रक वृक्ष। २. कुंद नामक फुल का पौधा। ३. मरुआ। सफेद तालमखाना। ५. पिंडार। ६. मैनफल।

शुक्लपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हाथीशुंडी नामक क्षुप। २. शीतकुंभी। शीतली लता। ३. कुंद।

शुक्लपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नागदंती। २. कुंद नामक फूल का पौधा।

शुक्लपृष्ठक—संज्ञा पुं० [सं०] मेंउड़ी। संभालू। सिंधुआर।

शुक्लफल—संज्ञा पुं० [सं०] मदार। आक।

शुक्लफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शमी। छीकुर। २. अर्क। मदार।

शुक्लफेन—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रफेन।

शुक्लबल—संज्ञा पुं० [सं०] जैनियों के अनुसार एक जिन देव का नाम।

शुक्लमंजरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुक्लमञ्जरी] सफेद निर्गुंडी।

शुक्लमंडल—संज्ञा पुं० [सं० शुक्लमण्डल] आँखों का सफेद भाग जो पुतली से भिन्न होता है।

शुक्लमेह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चरक के अनुसार एक प्रकार का प्रमेह रोग।

शुक्ल रोहित—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. श्वेत रोहितक का वृक्ष। २. श्वेत रोहित या रोहू नाम की मछली [को॰]।

शुक्लल—वि॰ [सं॰] श्वेत। शुभ्र [को॰]।

शुक्लला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] उच्चटा। शुक्ला [को॰]।

शुक्लवर्ग संज्ञा पुं॰ [सं॰] उच्चटा वस्तुओं का समूह। वैद्यक में श्वेत वस्तुओं का वर्ग। जैसे, शंख, शुक्ति, कौड़ी आदि [को॰]।

शुक्लवस्त्र—वि॰ [सं॰] स्वच्छ वस्त्रधारी। श्वेत वस्त्रवाला [को॰]।

शुक्लवायस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वक। बगुला।

शुक्लवृक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] धौ या धव का वृक्ष।

शुक्लवृत्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. जीवनयापन की शुद्ध पद्धति या विधा। २ वह वृत्ति या आजीविका जो ब्राह्मण को ब्राह्मण द्वारा प्राप्त हो [को॰]।

शुक्लशाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. गिरिनिंब। २. सफेद शाल का वृक्ष।

शुक्लांग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शुक्लाङ्ग] चोबचीनी।

शुक्लांगा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शुक्लाङ्गा] निर्गुंडी। शेफालिका।

शुक्लांगी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ शुक्लाङ्गी] निर्गुंडी। शेफालिका।

शुक्ला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. सरस्वती। २. शर्करा। शक्कर। चीनी। ३. काकोली। ४. विदारी। ५. शूकरकंद। ६. श्वेत वर्ण की या श्वेत मुखरागवाली स्त्री (को॰)। ७. निर्गुंडी। शेफालिका।

शुक्लाक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार का पक्षी।

शुक्लाचार—वि॰ [सं॰] जिसका आचार व्यवहार शुद्ध हो [को॰]।

शुक्लापांग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शुक्लापाङ्ग] मयूर पक्षी। मोर।

शुक्लाम्ल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] चूका या चुक्रिका नामक साग।

शुक्लायन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शुक्लार्क—संज्ञा पुं॰ [सं॰] सफेद मदार।

शुक्लार्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शुक्लार्मन्] आँखों का एक प्रकार का रोग।

विशेष—इसमें आँखों के सफेद भाग में एक प्रकार का सफेद मस्सा हो जाता है जो धीरे धीरे बढ़ता रहता है।

शुक्लाहिफेन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पोस्ते का पेड़।

शुक्लोदन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ललितविस्तर के अनुसार महाराज शुद्धोदन के भाई का नाम।

शुक्लोपला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] चीनी। शर्करा।

शुक्लौदन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] अरवा चावल। भुजिया का उलटा।

शुक्षि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वायु। हवा। २. तेज। ३. अग्नि (को॰)। ४. चित्र। तसवीर।

शुगुन—संज्ञा पुं॰ [फ़ा॰] शकुन। सगुन [को॰]।

शुचा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. शोक। दुःख। रंज। २. दे॰ 'शुचि'।

शुचि^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. अग्नि। आग। २. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ३. ग्रीष्म ऋतु। गरमी। ४. ज्येष्ठ मास। ५. आषाढ़ मास। ६. चंद्रमा। ७. शुक्र। ८. ब्राह्मण। ९. श्वेत वर्ण। सुफेद रंग (को॰)। १०. शुद्ध बुद्धिवाला मंत्री या सलाहकार (को॰)। ११. सूर्य की ऊष्मा। सौराग्नि (को॰)। १२. भागवत के अनुसार अंधक के एक पुत्र का नाम। १३. कार्तिकेय। १४. शृंगार रस जिसका वर्ण श्वेत कहा गया है (को॰)। १५. अर्क का वृक्ष। मदार (को॰)। १६. निष्कपट मित्र या सखा (को॰)। १७. अन्नप्राशन के समय होनेवाला हवन (को॰)। १८. वह जो सद्वृत्तिवाला हो। सदाचारी व्यक्ति (को॰)। १९. आकाश। व्योम। नभ (को॰)।

शुचि^{2}—संज्ञा स्त्री॰ १. पवित्रता। सफाई। स्वच्छता। शुद्धता। २. पुराणानुसार कश्यप की पत्नी ताम्रा के गर्भ से उत्पन्न एक कन्या का नाम।

शुचि^{3}—वि॰ १. शुद्ध। पवित्र। २. स्वच्छ। साफ। ३. निरपराध। निर्दोष। ४. दीप्तिमान्। चमकीला (को॰)। ५. उज्वल। धवल (को॰)। ६. जिसका अंतःकरण शुद्ध हो। स्वच्छ हृदयवाला।

शुचिकर्मा—वि॰ [सं॰ शुचिकर्मन्] पवित्र कार्य करनेवाला। सदाचारी। कर्मनिष्ठ।

शुचिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] महाभारत के अनुसार एक अप्सरा का नाम।

शुचिकापुष्प—संज्ञा पुं॰ [सं॰] केवड़ा। केतकी।

शुचित—वि॰ [सं॰] विषण्ण। संतप्त। दुःखित। अवसन्न [को॰]।

शुचितम—वि॰ [सं॰] अतिशय पवित्र। उ॰—बिखर चुकी थी अंबर तल में, सौरभ की शुचितम सुख धूल।—झरना, पृ॰ १४।

शुचिता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] शुचि का भाव या धर्म। उ॰—मैं शुचिता सरल समृद्धि।—अपरा, पृ॰ ७०।

शुचिद्रुम—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।

शुचिप्रणी—संज्ञा पुं॰ [सं॰] आचमन।

शुचिमणि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. स्फटिक मणि। २. शिरोमणि। वह मणि जो सिर पर धारण की जाय [को॰]।

शुचिमल्लिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] नेवारी। नवमल्लिका।

शुचिरोचि—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शुचिरोचिस्] चंद्रमा।

शुचिवाच्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

शुचिवृक्ष—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्राचीन प्रवरकार ऋषि का नाम।

शुचिव्रत—वि॰ [सं॰] जिसका सकल्प या कार्य शुद्ध हो। पुण्यात्मा [को॰]।

शुचिश्रवा—संज्ञा पुं॰ [सं॰ शुचिश्रवस्] विष्णु का एक नाम।

शुचिष्मान्^{1}—वि॰ [सं॰ शुचिष्मत्] चमकीला। द्युतिमान्।

शुचिष्मान्^{2}—संज्ञा पुं॰ अग्नि [को॰]।

शुचिस्—संज्ञा पुं॰ [सं॰] प्रकाश। ज्योति। दीप्ति [को॰]।

शुचिस्मित—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शुचिस्मिता] जिसकी हंसी प्रसन्न और निश्छल हो [को॰]।

शुची—वि० [सं० शुचिन्] १. शुद्ध । पवित्र । २. स्वच्छ । साफ।

शुचीरता—संज्ञा स्त्री०, पुं० [सं०] वीर्य ।

शुचीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] वीर्य । शुक्र ।

शुजा—वि० [अ० शुजाअ] बहादुर । शूरवीर । दिलेर ।

शुजाअत—संज्ञा स्त्री० [अ०] वीरता । बहादुरी । शूरता । दिलेरी ।

शुजात(पु)—संज्ञा स्त्री० [अ० शुजाअत] दे० 'शुजाअत' । उ०—देखे माँ जिनों की हैं मरियम शुजात । ओ बीबियाँ में बीबी अहे पाकजात ।—दक्खिनी०, पृ० ३५० ।

शुटीर—संज्ञा पुं० [सं०] वीर व्यक्ति । योद्धा [को०] ।

शुटीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] शुक्र । वीर्य ।

शुठि(पु)—अव्य० [हिं०] दे० 'सुठि' । उ०—पहुप वाटिका प्रेम सोहावन । वह्न शोभा सुंदर शुठि पावन ।—कबीर सा०, पृ० ३९८ ।

शुतर—संज्ञा पुं० [फ़ा० शुतुर] दे० 'शुतुर' । उ०—था उसके ऊपर लिबास मोटा, बालों से शुतर के ऐ ।—दक्खिनी, पृ० २२८ ।

शुतरी—वि० [फ़ा०] ऊँट का सा या भूरा । उ०—आज शाल के बदले वह शुतरी रंग का ओवरकोट पहने थीं ।—पिंजरे०, पृ० १४ ।

शुतुद्रि, शुतुद्रु—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतद्रु नदी । सतलज ।

शुतुर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] ऊँट [को०] ।

यौ०—शुतुरगाव । शुतुरदिल = डरपोक । बुजदिल । शुतुरनाल = एक प्रकार की तोप जो ऊँट पर लादी जाती थी । शुतुरमुर्ग । शुतुर सवार = साँड़नी सवार । ऊँटनी का सवार ।

शुतुरगाव—संज्ञा पुं० [फ़ा] जिराफा नामक जंतु । विशेष दे० 'जिराफा' ।

शुतुरमुर्ग—संज्ञा पुं० [फ़ा०] अमेरिका, अफ्रिका और अरब के रेगिस्तान में होनेवाला एक प्रकार का बहुत बड़ा पक्षी ।

विशेष—यह प्रायः तीन गज तक ऊँचा होता है । इसकी गरदन ऊँट की तरह बहुत लंबी होती है । यह उड़ तो नहीं सकता, पर रेगिस्तान में घोड़े से भी अधिक तेज दौड़ सकता है । यह घास और अनाज खाता है । कभी कभी कंकड़ पत्थर भी खा जाता है । इसके पर बहुत दाम पर बिकते हैं । यह एक बार में तीस से कम अंडे नहीं देता ।

शुतुर्मुर्ग—संज्ञा पुं० [फ़ा शुतुरमुर्ग] दे० 'शुतुरमुर्ग' ।

शुद^{1}—संज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'सुदी' ।

शुद^{2}(पु)—संज्ञा स्त्री० [हिं० सुध या सुधि] दे० 'सुध' । उ०—अबस जग के धंधे में तू शुद गँवाया । नहीं काम आएगा अपना पराया ।—दक्खिनी०, पृ० २५४ ।

शुदनी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] वह बात जिसका होना पहले से ही किसी दैवी शक्ति से निश्चित हो । भावी । होनहार । नियति ।

शुदा—वि० [फ़ा०] जो हो चुका हो । जैसे, शादीशुदा । (शब्दांत में प्रयुक्त) ।

शुद्ध^{1}—वि० [सं०] १. जिसमें किसी प्रकार की मैल या खोट आदि न हो । पवित्र । साफ । स्वच्छ ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग प्रायः यौगिक बनाने शब्दों के आरंभ में होता है । जैसे,—शुद्धबुद्धि, शुद्धमति ।

२. सफेद । उज्वल । ३. जिसमें किसी प्रकार की अशुद्धि न हो । जो गलत न हो । ठीक । सही । ४. दोषरहित । निर्दोष । बेऐब । ५. जिसमें किसी तरह की मिलावट न हो । खालिस । ६. निष्कलंक । बेदाग (को०) । ७. ईमानदार (को०) । ८. चुकाया हुआ ऋण (को०) । ९. केवल । मात्र । १०. अद्वितीय (को०) । ११. अधिकृत (को०) । १२. अननुनासिक (को०) । १३. संपूर्ण । निरा । पूरा (को०) । १४. भोलाभाला । सीधा सादा (को०) । १५. जाँचा हुआ । परीक्षित (को०) । तीक्ष्ण । तेज किया हुआ (को०) ।

शुद्ध^{2}—संज्ञा पुं० १. सेंधा नमक । काली मिर्च । ३. चाँदी । रूपा । ४. गुंडा नाम की घास । ५. संगीत में राग के तीन भेदों में से एक भेद । वह राग जिसमें और किसी राग का मेल न हो । जैसे,—भैरव, मेघ । ६. शिव का एक नाम । ७. चौदहवें मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक । ८. शुद्ध वस्तु (को०) । ९. शुक्ल पक्ष । सुदी (को०) । १०. वह मकान जो किसी एक ही वस्तु से निर्मित हो और जिसमें नाममात्र के लिये लकड़ी, ईंट, प्रस्तर का उपयोग किया हो (को०) ।

शुद्धकर्मा—वि० [सं० शुद्धकर्मन्] जिसके कर्म शुद्ध हों । पवित्र आचार, विचार, व्यवहारवाला [को०] ।

शुद्धकोटि—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह त्रिभुज जिसके कोण सम हों । समकोण त्रिभुज [को०] ।

शुद्धचैतन्य—संज्ञा पुं० [सं०] शुद्ध आत्मा या चेतना [को०] ।

शुद्धजंघ—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धजङ्घ] गर्दभ । गदहा ।

शुद्धजड़—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धजड] चौपाया । चतुष्पद [को०] ।

शुद्धता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शुद्ध होने का भाव या धर्म । पवित्रता । २. निर्दोषिता ।

शुद्धत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शुद्ध होने का भाव या धर्म । शुद्धता । पवित्रता ।

शुद्धदंत^{1}—वि० [सं० शुद्धदन्त] श्वेत हाथीदाँत का बना हुआ । शुद्ध हाथीदाँत का । २. दे० 'शुद्धदत्' [को०] ।

शुद्धदंत^{2}—वि० [सं०] जिसके दाँत श्वेत हों [को०] ।

शुद्धधी—वि० [सं०] पवित्र विचारोंवाला । सच्चा । ईमानदार [को०] ।

शुद्ध निसाणी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुद्ध + हिं० निसाणी] एक प्रकार का डिंगल छंद जिसमें पहले तेरह मात्राएँ और फिर दस मात्राएँ इस प्रकार २३ मात्राएँ प्रत्येक पद में होती हैं और तुकांत में दो गुरु होते हैं । उ०—कल तेरह फिर दशकला, दे नाहरे गुरु दोय । कली एक ते बीस कल, शुद्ध निसाणी सोय ।—रघु० रू०, पृ० २६९ ।

शुद्धनेरि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का नृत्य [को०] ।

शुद्धपक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] अमावस्या के उपरांत की प्रतिपदा से पूर्णिमा तक का पक्ष । शुक्ल पक्ष ।

शुद्धपुरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दक्षिण भारत के एक पवित्र तीर्थ का नाम।

शुद्धप्रतिभास—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक प्रकार की समाधि [को०]।

शुद्धबटुक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का दुंदुभीवादक [को०]।

शुद्धबुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शुद्धधी'।

शुद्धबोध—वि० [सं०] (वेदांत) विशुद्ध ज्ञान से युक्त [को०]।

शुद्धभाव—वि० [सं०] पवित्र विचारोंवाला [को०]।

शुद्धमति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० शुद्धधी [को०]।

शुद्धमांस—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार वह पकाया हुआ मांस जिसके साथ में हड्डी आदि न लगी हो।

शुद्धमुख—संज्ञा पुं० [सं०] भली भाँति सिखाया हुआ घोड़ा [को०]।

शुद्धवंश्य—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शुद्धवंश्या] शुद्धवंश में उत्पन्न होनेवाला। पवित्र कुल का [को०]।

शुद्धवल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] गिलोय। गुड़ुच।

शुद्धवासा—वि० [सं० शुद्धवासस] स्वच्छ वस्त्राभूषणादि धारण करनेवाला [को०]।

शुद्धविष्कंभक—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धविष्कम्भक] विष्कंभक का एक भेद जिसमें केवल संस्कृत बोलनेवाले पात्र ही हों [को०]।

शुद्धव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार सेना का वह व्यूह जिसमें उरस्य में हाथी, मध्य में तेज घोड़ और पक्ष में व्याल (मतवाले हाथी) हों।

शुद्धशुक्र—संज्ञा पुं० [सं०] आँख की पुतली में होनेवाला एक दोष [को०]।

शुद्धहार—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार वह हार जिसमें एक शीर्षक मोती का हो।

शुद्धांत—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धान्त] १. अंतःपुर। रनिवास। जनानखाना। २. राजमहिषी। रानी (को०)।

यौ०—शुद्धांतचर, शुद्धांतचारी, शुद्धांतरक्षक = दे० 'शुद्धांतपालक'।

शुद्धांतपालक—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धान्तपालक] वह जो अंतःपुर के द्वार पर पहरा देता हो। गृहदौवारिक।

शुद्धांता—संज्ञा स्त्री० [सं० शुद्धान्ता] रानी। राज्ञी।

शुद्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्रजव। कुटज बीज।

शुद्धाचार—संज्ञा पुं० [सं०] उत्तम व्यवहार। उ०—रखती थी प्रेमार्द्र सभी को वह अपने व्यवहारों से। पशु पक्षी भी सुख पाते थे उसके शुद्धाचारों से।—शकुं० (आमुख)।

शुद्धात्मा—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धात्मन्] १. शिव का एक नाम। २. वह जिसका हृदय पवित्र हो (को०)। ३. निखालिस या बिना मिली हुई शराब (को०)।

शुद्धानुमान—संज्ञा पुं० [सं०] अनुमान का एक भेद। केवलान्वयी'। विशेष दे० 'अनुमान'।

शुद्धापह्नुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का अलंकार जिसमें प्रकृत अर्थात् उपमेय को झूठ ठहराकर या उसका निषेध करके उपमान की सत्यता स्थापित की जाती है। अपह्नुति। उ०—शुद्धापह्नुति झूँठ लहि, साँची बात दुराहि। नैन नहीं ये मीन युग, छबि सागर के आहि।—भानु (शब्द०)।

शुद्धाभ—वि० [सं०] पवित्र आभा से युक्त [को०]।

शुद्धाशय—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शुद्धाशया] जिसके विचार शुद्ध हों। जिसका हृदय पवित्र है [को०]।

शुद्धाशुद्धीय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

शुद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शुद्ध होने का कार्य। २. सफाई। स्वच्छता। ३. वैदिक धर्म के अनुसार वह कृत्य या संस्कार जो किसी अशुद्ध या अशुच व्यक्ति के शुद्ध होने के समय होता है। जैसे—अशौच की समाप्ति पर शुद्ध होने के समय का कृत्य या किसी धर्मभ्रष्ट व्यक्ति के शुद्ध होकर पुनः अपने धर्म में आने के समय होनेवाला कृत्य या संस्कार। ४. दुर्गा का एक नाम। ५. दीप्ति। चमक। कांति (को०)। ६. पवित्रता। पुण्यशीलता (को०)। ७. ऋण आदि का परिशोधन (को०)। ८. प्रतिहिंसा। प्रतिशोध (को०)। ९. छुटकारा (को०)। १०. सचाई। यथार्थता (को०)। ११. समाधान। संशोधन (को०)। १२. व्यवकलन (को०)।

शुद्धिकंद—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धिकन्द] लहसुन।

शुद्धिकर—वि० [सं०] शुद्ध करनेवाला। पवित्र करनेवाला [को०]।

शुद्धिकरण—वि० [सं० शुद्धि + करण] शुद्ध या पवित्र करनेवाला। उ०—पापों के शुद्धिकरण चारु, चरण धोए।—बेला, पृ० ४५।

शुद्धिकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] रजक। धोबी [को०]।

शुद्धिपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह व्यवस्थापत्र जो प्रायश्चित्त के पीछे शुद्धि के प्रमाण में पंडितों की ओर से दिया जाता था। (शुक्रनीति) २. वह पत्र जिसमें छपने के समय पुस्तक में रही हुई अशुद्धियाँ बतलाई गई हों। वह पत्र जिससे सूचित हो कि कहाँ क्या अशुद्धि है।

शुद्धिबोध—संज्ञा पुं० [सं० शुद्धि (= शुद्ध) + बोध] शुद्धि या पवित्रता का ज्ञान। उ०—शतशुद्धिबोध सूक्ष्मातिसूक्ष्म मन का विवेक।—अपरा, पृ० ४७।

शुद्धोद—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र। सागर।

शुद्धोदन—संज्ञा पुं० [सं०] एक सुप्रसिद्ध शाक्य राजा जो भगवान् बुद्धदेव के पिता थे और जिनकी राजधानी कपिलवस्तु में थी।

विशेष—इस शब्द के साथ पुत्र या उसका वाचक कोई शब्द लगने से 'बुद्धदेव' अर्थ होता है।

शुद्धोदनि—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

शुनः—संज्ञा पुं० [सं०] शुनस् (= श्वान) शब्द का समासप्रयुक्त रूप।

शुनःपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] १. अजीगर्त का एक पुत्र जो शुनःशेप का भाई था। २. कुत्ते की पूँछ [को०]।

शुनःशेप, शुनःशेफ—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्रसिद्ध ऋषि जो महर्षि ऋचीक के पुत्र थे।

विशेष—रामायण के अनुसार ये महाराज अंबरीष के यज्ञ में बलि के लिये लाए गए थे। विश्वामित्र ने दयावश इनको अग्नि की स्तुति बतला दी थी। अग्निदेव इनकी स्तुति से इतने प्रसन्न हुए थे कि जब ये यज्ञकुंड में डाले गए, तब उसमें से अक्षत शरीर बाहर निकल आए। इसके उपरांत ये महर्षि विश्वामित्र के यहाँ उनके पुत्रतुल्य होकर रहने लगे। देवीभागवत आदि कुछ पुराणों में इनके संबंध में कई कथाएँ आई हैं। ऐतरेय ब्राह्मण (हरिश्चंद्रोपाख्यान) के अनुसार ये अजीगर्त के पुत्र थे और हरिश्चंद्र के यज्ञ में वरुणदेव की बलि के लिये लाए गए थे। २. कुत्ते का लिंग [को०]।

शुन:सख—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम जिनका उल्लेख महाभारत में है।

शुन:स्कर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शुन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता। २. वायु। ३. सुख। आराम।

शुन(पु)^{२}—संज्ञा पुं० [सं० शून्य] दे० 'शून्य'। उ०—रामा हरिजन अगम गति रामनाम सब टेक। एकै माँहि अनेक है एक बिना शुन देक।—राम० धर्म०, पृ० २४१।

शुनक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता। कुक्कुर। श्वान। २. छोटा श्वान। कुत्ते का बच्चा। पिल्ला (को०)। ३. महाभारत के अनुसार एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शुनकचंचुका—संज्ञा स्त्री० [सं० शुनकचञ्चुका] चेंच नाम का साग।

शुनकचिल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] बथुआ।

शुनकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुत्ते की मादा। कुतिया [को०]।

शुनहोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. भरद्वाज ऋषि के पुत्र का नाम जो ऋग्वेद के कई मंत्रों के द्रष्टा हैं।

शुनामुख—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय के उत्तर ओर के एक प्रदेश का प्राचीन नाम। अनुमान है कि यह नेपाल के उत्तर का प्रदेश है।

शुनाशीर, शुनासीर—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र। २. वायु और सूर्य। ३. इंद्र और वायु। ४. उल्लू। कौशिक [को०]।

शुनासीरी—संज्ञा पुं० [सं० शुनासीरिन्] इंद्र।

शुनासीरीय—वि० [सं०] १. इंद्र संबंधी। इंद्र का। २. वायु देवता के संबंध का। ३. सूर्य देवता के संबंध का।

शुनि—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शुनी] कुत्ता।

शुनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुष्मांडी। २. कुतिया [को०]।

शुनीर—संज्ञा पुं० [सं०] कुतियों का समूह [को०]।

शुनीलांगूल—संज्ञा पुं० [सं० शुनीलांगूल] देवीभागवत के अनुसार शुन:शेफ के छोटे भाई का नाम।

शुन्य^{१}—वि० [सं०] खाली। शून्य। रिक्त [को०]।

शुन्य^{२}—संज्ञा पुं० १. कुतियों का दल या समूह। २. दे० 'शून्य^{१}' [को०]।

शुबहा—संज्ञा पुं० [अं० शुब्हह्] १. संदेह। शक। २. धोखा। वहम। भ्रम।

क्रि० प्र०—करना। —निकालना। —मिटना। —मिटाना। —होना।

शुभंकर—वि० [सं० शुभङ्कर] १. शुभ या मंगल करनेवाला। मंगलकारक। शुभकारी। २. प्रसन्न करनेवाला [को०]।

शुभंकरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभङ्करी] १. कल्याण करनेवाली, पार्वती। २. शमी वृक्ष।

शुभंयु—वि० [सं०] १. मंगलान्वित। मंगलमय। २. शुभ।

शुभंभावुक—वि० [सं० शुभंम्भावुक] सज्जित। भूषित। द्योतित। अलंकृत [को०]।

शुभ^{१}—वि० [सं०] १. अच्छा। भला। उत्तम। सुखप्रद। जैसे—शुभ शकुन, शुभ समाचार, शुभ कार्य। २. कल्याणकारी। मंगलप्रद। ३. सुंदर। लावण्ययुक्त। लोना (को०)। ४. दीप्तियुक्त चमकीला (को०)। ५. भाग्यवान्। भाग्यशाली। ६. वेदप्रवण। वेदविद् (को०)। ७. जो प्रतिकूल न हो। अनुकूल (को०)।

शुभ^{२}—संज्ञा पुं० १. मंगल। कल्याण। भलाई। २. विष्कंभादि सत्ताईस योगों के अंतर्गत एक योग।

विशेष—फलित ज्योतिष के अनुसार जो बालक इस योग में जन्म लेता है, वह सब लोगों का कल्याण करनेवाला, पंडितों का सत्संग करनेवाला और बुद्धिमान् होता है।

३. पदुमाख। एक सुगंधित लकड़ी। पदमकाठ। ४. चाँदी। ५. बकरा। ६. वह जो अजन्मा हो। सर्वशक्तिमान् (को०)। ७. जल (को०)। ८. एक प्रकार का आभूषण (को०)।

शुंभक—संज्ञा पुं० [सं०] सरसों का बीज। सर्षप [को०]।

शुंभकथ—वि० [सं०] कल्याणप्रद बातें कहनेवाला। अच्छी बात कहनेवाला।

शुभकर—वि० [सं०] शुभ या मंगल करनेवाला।

शुभकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती।

शुभकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुभ काम। सत्कर्म। २. वह वृत्ति या आचार जो आदरणीय हो। [को०]।

शुभकर्मा—संज्ञा पुं० [सं० शुभकर्मन्] १. वह जो शुभ कर्म करता हो। २. स्कंद का एक अनुचर [को०]।

शुभकाम—वि० [सं०] शुभ या कल्याण की कामना करनेवाला [को०]।

शुभकूट—संज्ञा पुं० [सं०] सिंहल द्वीप या लंका का एक प्रसिद्ध पर्वत जिसपर चरणचिह्न बने हुए हैं। ईसाई इन्हें हजरत आदम के चरण चिह्न और बौद्ध महात्मा बुद्ध के चरणचिह्न मानते हैं।

शुभकृत्—वि० [सं०] शुभकर। मंगल करनेवाला।

शुभकृत्स्न—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध देवताओं का एक वर्ग।

शुभगंधक—संज्ञा पुं० [सं० शुभगन्धक] बोल नामक गंधद्रव्य। गंधबाला।

शुभंग—वि० [सं०] १. भाग्यवान्। खुशकिस्मत्। २. सुंदर। सौंदर्ययुक्त [को०]।

शुभग—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक शक्ति का नाम [को०]।

शुभग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार बृहस्पति और शुक्र।

विशेष—ये दोनों ग्रह सौम्य और शुभ माने जाते हैं। इनके अतिरिक्त बुध ग्रह भी, यदि पापयुक्त न हो तो, शुभ माना जाता है। आधे से अधिक चंद्र भी शुभ कहा गया है।

शुभचिंतक—वि० [सं० शुभचिन्तक] शुभ या भला चाहनेवाला। भलाई की इच्छा रखनेवाला। हितैषी। खैरख्वाह।

शुभजानि—वि० [सं०] जिसकी स्त्री सुंदर हो [को०]।

शुभताति—संज्ञा स्त्री० [सं०] कल्याण। मंगल। शुभ [को०]।

शुभदंता—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभदन्ता] पुराणानुसार पुष्पदंत नामक हाथी की हथिनी का नाम।

शुभदंती—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसके दाँत सुंदर हों [को०]।

शुभद^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] अश्वत्थ वृक्ष। पीपल का पेड़।

शुभद^{२}—वि० शुभप्रद। शुभदायक।

शुभदर्श, शुभदर्शन—वि० [सं०] १. जिसका मुँह देखने से कोई शुभ या मंगल बात हो। २. सुंदर। खूबसूरत।

शुभदायी—वि० [सं० शुभदायिन् शुभ या मंगल करनेवाला। शुभप्रद। शुभद।

शुभदृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभ+दृष्टि] १. शुभदर्शन। २. मुँह देखना। मुँह दिखाई। उ०—विवाह के बाद जब दूल्हा वधू के मुख से शुभदृष्टि के अवसर पर पहली बार घूँघट हटाता है।—जनानी०, पृ० ४३०।

शुभनामा—संज्ञा स्त्री० [सं०] किसी मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी, दशमी या पूर्णिमा तिथि।

शुभपत्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरिवन। शालपर्णी।

शुभप्रद—वि० [सं०] शुभ या मंगल करनेवाला। शुभद। मंगलकारी।

शुभफलप्रद—वि० [सं०] सुफल देनेवाला। उ०—सकल शुभफलप्रद एक विधान, बाँध माँ, तंत्री के से गान।—गीतिका, पृ० ३५।

शुभमंगल—संज्ञा पुं० [सं० शुभमङ्गल] सौभाग्य। कल्याण [को०]।

शुभर(पु)—संज्ञा पुं० [?] गड्ढा। उ०—नउसर शुभर दशवैं चढ़िआ।—प्राण०, पृ० ८०।

शुभलक्षण—वि० [सं०] जिसके लक्षण शुभ हों। अच्छे लक्षणों से युक्त [को०]।

शुभलग्न—संज्ञा पुं० [सं०] शुभ समय। शुभ मुहूर्त [को०]।

शुभवक्मा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

शुभवार्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुभ समाचार [को०]।

शुभवासन—संज्ञा पुं० [सं०] मुख को सुवासित करनेवाली वस्तु [को०]।

शुभविमलगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] बोधिसत्व का नाम।

शुभव्रत—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का व्रत जो कार्तिक शुक्ला पंचमी का किया जाता है।

शुभशंसी—वि० [सं० शुभशंसिन्] शुभ करनेवाला। मंगल को सूचित करनेवाला [को०]।

शुभशैल—संज्ञा पुं० [सं०] तंत्र के अनुसार एक कल्पित पर्वत का नाम।

शुभसूचक—वि० [सं०] दे० 'शुभशंसी' [को०]।

शुभसूचना—संज्ञा स्त्री० [सं०] कल्याण की सूचना [को०]।

शुभसूचनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम जिनकी पूजा का संकल्प किसी शुभ काम के होने की आशा से किया जाता है, और वह शुभ काम हो जाने पर जिनकी पूजा की जाती है। इनकी पूजा प्रायः स्त्रियाँ ही करती हैं।

शुभसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मंगलसूत्र' [को०]।

शुभस्थली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मंगल भूमि। पवित्र स्थान। २. यज्ञभूमि।

शुभस्रवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

शुभांग—वि० [सं० शुभाङ्ग] सुंदर। सलोना। लावण्ययुक्त [को०]।

शुभांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभाङ्गी] १. कुबेर की पत्नी का नाम। २. कामदेव की पत्नी, रति। ३. महाभारत के अनुसार राजा कुरु की पत्नी का नाम। ४. सुंदरी स्त्री (को०)।

शुभांजन—संज्ञा पुं० [सं० शुभाञ्जन] दे० 'शोभांजन'।

शुभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शोभा। कांति। छवि। २. इच्छा। ३. वंशलोचन। ४. गोरोचन। ५. शमी। सफेद कीकर। ६. प्रियंगु। वनिता। ७. सफेद दूब। ८. बकरी। ९. अरारोट। १०. पुरइन की पत्ती। ११. सोआ। १२. सफेद बच। १३. असबरग। १४. पार्वती की एक सखी का नाम। १५. देवताओं की सभा। १६. प्रकाश। दीप्ति (को०)। १७. पुराणानुसार एक नदी का नाम।

शुभाकांक्षी—वि० [सं० शुभाकांक्षिन्] शुभ की कामना करनेवाला। हित चाहनेवाला। हितैषी।

शुभाकिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भुइँआँवला।

शुभाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

शुभागमन—संज्ञा पुं० [सं०] सुख या मंगलसूचक आगमन या अवाई।

शुभाचल—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक कल्पित पर्वत का नाम।

शुभाचार—वि० [सं०] पवित्र आचरणवाला। सदाचारी [को०]।

शुभाचारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार पार्वती की एक सखी का नाम।

शुभानना—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदर स्त्री [को०]।

शुभानुष्ठान—संज्ञा पुं० [सं०] मंगल संबंधी कार्य।

शुभान्वित—वि० [सं०] कल्याणयुक्त। मंगलयुक्त [को०]।

शुभापांगा—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभापाङ्गा] वह स्त्री जिसके नेत्रकोण शुभद हों। सुंदर स्त्री [को०]।

शुभावह—वि० [सं०] मंगलमय। मंगलजनक [को०]।

शुभाशंसा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शुभ या भला कहना। २. सद्विचार। सुविचार। उ०—आपकी शुभाशंसा से ही मैंने वह सब लिखा था।—नदी०, पृ० १००।

शुभाशीर्वाद—संज्ञा पुं० [सं०[मंगलकारक आशीर्वचन [को०]।

शुभाशीष—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शुभाशीर्वाद'।

शुभाशुभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. भला और बुरा। २. पवित्र और अपवित्र [को०]।

शुभिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] पुष्पमाला। पुष्पहार। फूलों का हार [को०]।

शुभेक्षण—वि० [सं०] शुभ दृष्टि या नेत्रोंवाला [को०]।

शुभेक्षणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सुंदर नेत्रोंवाली स्त्री।

शुभेतर—वि० [सं०] १. बुरा। खराब। २. अशुभ। अमांगलिक [को०]।

यौ०—शुभेतरद्युति = अशुभ का दूरीकरण या मांगलिकता।

शुभैषिणी—वि० [सं०] शुभ चाहनेवाली। उ०—वह रचनात्मक साहित्य को प्रिय सखो, शुभैषिणी सेविका और हृदय स्वामिनी कही जा सकती है।—नया०, पृ० २७।

शुभोदय—वि० [सं०] भाग्यवाला। सौभाग्यपूर्ण [को०]।

शुभोदर्क—वि० [सं०] जिसका अंत आनंददायक हो।

शुभ्र^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. अबरक। २. साँभर नमक। ३. चाँदी। रूपा। ४. कसीस। ५. पद्माख। पदुमकाठ। ६. खस। उशीर। ७. चरबी। ८. रूपामक्खी। ९. सेंधा नमक। १०. बंसलोचन। ११. फिटकिरी। १२. चीनी। १३. सफेद विधारा। १४. श्वेत वर्ण। श्वेत रंग (को०)। १५. चंदन (को०)। १६. स्वर्ग (को०)।

शुभ्र^2—वि० १. श्वेत। सफेद। उ०—शोभजति दंतरुचि शुभ्र उर मानिए।—केशव (शब्द०)। २. चमकता हुआ। चमकीला। देदीप्यमान (को०)।

शुभ्रकर—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर [को०]।

शुभ्रतरु—संज्ञा पुं० [सं०] सिरिस का वृक्ष।

शुभ्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुभ्र का भाव या धर्म। सफेदी। श्वेतता।

शुभ्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शुभ्रता' [को०]।

शुभ्रदंत—वि० [सं० शुभ्रदन्त] [वि० स्त्री० शुभ्रदन्ती] दे० 'शुभ्रदत्' [को०]।

शुभ्रदंती—संज्ञा स्त्री० [सं० शुभ्रदन्ती] पुराणानुसार पुष्पदंत नामक दिग्गज की हथनी का नाम। दे० 'शुभ्रदंती'। २. सार्वभौम दिग्गज की हस्तिनी (को०)।

शुभ्रदत्—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शुभ्रदती] चमकीले दाँतवाला [को०]।

शुभ्रपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद पान।

शुभ्रपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] खस। उशीर।

शुभ्रभानु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शुभ्ररश्मि—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

शुभ्रवेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] शाल्मली। सेमल।

शुभ्रांशु—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. कपूर।

शुभ्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बंसलोचन। २. फिटकरी। ३. गंगा (को०)। ४. स्फटिक (को०)। ५. शर्करा। शिता। चीनी (को०)।

शुभ्रालु—संज्ञा पुं० [सं०] १. भैंसा कंद। महिष कंद। २. शंखालु।

शुभ्रि—संज्ञा पुं० [सं०] १. ब्रह्मा। २. सूर्य [को०]।

शुभ्रिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शहद से तैयार की हुई चीनी। मधुशर्करा।

शुमार—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. गिनती। गणना। २. तखमीना। अंदाज। ३. जोड़। मीजान। ४. आतंक या भय [को०]।

यौ०—शुमारकुनिंदा = दे० 'शुमारिंदा'। शुमारनवीस = हिसाब किताब करनेवाला।

शुमारिंदा—वि० [फ़ा० शुमारिंदह्] शुमार करनेवाला। गणना करनेवाला। गणक [को०]।

शुमारी—प्रत्य० [फ़ा०] गणना का काम। गिनने की स्थिति या क्रिया। जैसे, मर्दुमशुमारी।

शुमाल—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. एक जाति। दे० 'सुमाली'। २. उत्तर दिशा। २. बायाँ हाथ [को०]।

शुमाली—वि० [फ़ा०] उत्तरी। उत्तर का [को०]।

शुरफा—संज्ञा पुं० [अ० शरीफ का बहु व०] शरीफ लोग। उ०—शुरफा व रूजला एक है दरबार में मेरे। कुछ खास नहीं फैज तो इक आम है मेरा।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ७६१।

शुरवा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शोरबा] दे० 'शोरबा'।

शुरू—संज्ञा पुं० [अ० शुरुअ़] १. किसी कार्य की प्रथमावस्था का संपादन। आरंभ। प्रारंभ। जैसे,—अब तुम यह काम जल्दी शुरू कर डालो। २. वह स्थान जहाँ से किसी वस्तु का आरंभ हो। जैसे,—शुरू से आखीर तक।

शुरूआत—संज्ञा स्त्री० [अ०] आरंभ। प्रारंभ [को०]।

शुल्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह महसूल जो घाटों और रास्तों आदि पर राज्य की ओर से वसूल किया जाता है। २. वह धन जो कन्या का विवाह करने के बदले में उसका पिता वर के पिता से लेता है।

विशेष—शास्त्र में इस प्रकार का धन या शुल्क लेने का बहुत अधिक निषेध किया गया है।

३. विवाह के समय दिया जानेवाला दहेज। दायजा। वैवाहिक उपहार। ४. बाजी। शर्त। ५. किराया। भाड़ा। ६. मूल्य। दाम। ७. वह धन जो किसी कार्य के बदले में लिया या दिया जाय। फीस। जैसे,— प्रवेश शुल्क। ८. फायदा। लाभ (को०)। ९. किसी सौदे को पक्का करने के लिये दिया गया अग्रिम धन (को०)। १०. दूल्हे द्वारा दुलहिन को दी हुई भेंट (को०)। ११. श्वान (को०)। १२. कर। टैक्स। महसूल (को०)।

यौ०—शुल्कग्राहक, शुल्कग्राही = कर या शुल्क एकत्र करनेवाला। शुल्कखंडन = शुल्क मोषण। शुल्कद = (१) वैवाहिक उपहार देनेवाला। (२) विवाहार्थी। शुल्कमोषण = वह जो करग्राहक को कर देने मे धोखा दे टैक्सचोर। कर चोर. शुल्कशाला। शुल्कस्थान।

शुल्कता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुल्क का भाव या धर्म।

शुल्कशाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्थान जहाँ पर घाट या मार्ग आदि का महसुल चुकाया जाता है। महसूल अदा करने की जगह।

शुल्कस्थान –संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ आने जानेवालों को शुल्क देना पड़ता हो।

शुल्काध्यक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिलीय अर्थशास्त्रानुसार चुंगी का अध्यक्ष।

शुल्ब—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शुल्व'।

शुल्ल—संज्ञा पुं० |सं०] १. रस्सी। २. ताँबा।

शुल्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. ताँबा। २. रज्जु। रस्सी। ३. यज्ञकर्म। ४. आचार। ५. नियम। विधि (को०)। ६. जल का सामीप्य। जल की निकटता (को०)।

शुल्वज—संज्ञा पुं० [सं०] पीतल [को०]।

शुल्वल—संज्ञा पुं० [सं०] संत। ऋषि [को०]।

शुल्वसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक सूत्रग्रंथ जिसमें श्रौत कर्मकांडों से संबंधित गणितीय आकलन दिए गए हैं।

शुल्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शुल्व'।

शुल्वारि—संज्ञा पुं० [सं०] गंधक।

शुल्वी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शुल्व' [को०]।

शुश्रू—संज्ञा स्त्री० [सं०] बालक की सेवा शुश्रूषा करनेवाली, माता। माँ। जननी।

शुश्रूषक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शुश्रूषा करता हो। सेवा करनेवाला। खिदमत करनेवाला। जैसे,—शिष्य, दास, अधीनस्थ कर्मचारी आदि।

शुश्रूषण—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० शुश्रूषणा] १. शुश्रूषा। शुश्रूषा करने का कार्य। सेवा करना। खिदमतगुजारी। २. सुनने की इच्छा (को०)। ३. कर्तव्यनिष्ठता। आज्ञाकारिता (को०)।

शुश्रूषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] [वि० शुश्रूष्य] १. सेवा। टहल। परिचर्या। २. खुशामद। ३. कथन। ४. किसी से कुछ सुनने की इच्छा। ५. समान (को०)। ६. कर्तव्यनिष्ठता (को०)।

यौ०—शुश्रूषा पद्धति। शुश्रूषा प्रणाली = सेवा की रीति या ढंग।

शुश्रूषिता—वि० [सं० शुश्रूषितृ] सेवक। आज्ञापालक [को०]।

शुश्रूषी—वि० [सं०] दे० शुश्रूषक।

शुश्रूषु—वि० [सं०] १. सुनने को उत्सुक। श्रवणेच्छु। २. सेवा करने के लिये इच्छुक। नौकरी चाकरी चाहनेवाला। ३. आज्ञा पालन करनेवाला। हुक्म माननेवाला [को०]।

शुष—संज्ञा पुं० [सं०] १. छिद्र। विवर। गर्त। २. शुष्क होना। शोष। सूखना [को०]।

शुषि –संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सूखना। २. गर्त। बिल। ३. ऐंठन। बल। मरोड़। शिकन। ४. सर्प के विष के दाँत का सूराख [को०]।

शुषिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुष्कता। खुश्की। प्यास [को०]।

शुषिर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. लौंग। २. अग्नि। ३. मूसा। चूहा। ४. बिल। गड्ढा। विवर। ५. आकाश। ६. वह बाजा जो मुँह से फूंककर बजाया जाता हो। जैसे, वंशी, अलगोजा, शहनाई आदि।

शुषिर^2—वि० छिद्रयुक्त। छेदवाला। सूराखदार [को०]।

शुषिरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नदी। दरिया। २. धरणी। ३. नलिका या नली नाम का गंधद्रव्य।

शुषिल—संज्ञा पुं० [सं०] वायु। हवा [को०]।

शुषेण – संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'सुषेण'।

शुष्क^1—वि० [सं०] १. जिसमें किसी प्रकार की नमी या गीलापन न रह गया हो। जो किसी प्रकार सुखा लिया गया हो। आर्द्रतारहित। सूखा। खुश्क। जैसे,—शुष्क काष्ठ। २. जिसमें जल या और किसी तरल पदार्थ का व्यवहार न किया गया हो। ३. जिसमें रस का अभाव हो। नीरस। रसहीन। ४. जिससे मनोरंजन न होता हो। जिसमें मन न लगता हो। जैसे,—शुष्क विषय। ५. जिसका कुछ परिणाम न निकलता हो। निरर्थक। व्यर्थ। जैसे,—शुष्क वादविवाद। ६. जिसमें सौहार्द्र आदि कोमल मनोवृत्तियाँ न हों। स्नेह आदि से रहित। निर्मोही। ७. जो बिलकुल पुराना और बेकाम हो गया हो। जीर्ण शीर्ण। ८. निराधार। निष्कारण (को०)। ९. झुर्रीदार। सिकुड़नवाला। कृश (को०)।

शुष्क^2—संज्ञा पुं० १. काला अगर। कालागुरु। २. कोई भी सूखी हुई वस्तु या पदार्थ (को०)।

शुष्कक—वि० [सं०] शुष्क। सूखा हुआ। क्षीण [को०]।

शुष्ककलह—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यर्थ या निराधार झगड़ा। अकारण संघर्ष। २. छद्म संघर्ष [को०]।

शुष्ककास—संज्ञा पुं० [सं०] सूखी खाँसी [को०]।

शुष्कक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वितस्ता नदी के किनारे के एक पर्वत का नाम।

शुष्कगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार स्त्रियों का एक रोग जिसमें वायु के प्रकोप से स्त्रियों का गर्भ सूख जाता है।

शुष्कगान—संज्ञा पुं० [सं०] किसी भी प्रकार के उपवाद्य या सह ध्वनि के साथ गाना [को०]।

शुष्कगोमय—संज्ञा पुं० [सं०] कंडा। उपला [को०]।

शुष्कचर्चण—संज्ञा पुं० [सं०] निरर्थक बातचीत [को०]।

शुष्कता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शुष्क होने का भाव या धर्म। सूखापन।

शुष्कतर्क—संज्ञा पुं० [सं०] मात्र बहस। बेकार बहस।

शुष्कतोय—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शुष्कतोया] जिसका जल सूख गया हो।

शुष्कपाक— संज्ञा पुं० [सं०] दे० शुष्काक्षिपाक [को०]।

शुष्कमत्स्य—संज्ञा पुं० [सं०] सूखी या सुखाई हुई मछली [को०]।

शुष्कमांस—संज्ञा पुं० [सं०] सुखाया हुआ मांस।

शुष्करुदित—संज्ञा पुं० [सं०] इस प्रकार रोना जिसमें आँख से आँसू न गिरे [को०] ।

शुष्करेवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुराणानुसार एक मातृका का नाम । २. एक प्रकार का बालग्रह जिसके प्रकोप से बालकों के अंग सूखने या क्षीण होने लगते हैं ।

शुष्कल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मांस । गोश्त । २. वह जो मांस खाता हो । मांसभक्षी । ३, सूखा मांस (को०) ।

शुष्कली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मांम । गोश्त । २. सूखा मांस (को०) ।

शुष्कवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] धव का वृक्ष । धौ ।

शुष्कवैर—संज्ञा पुं० [सं०] अकारण वैर । निराधार शत्रुता [को०] ।

शुष्कव्रण—संज्ञा पुं० [सं०] १. स्त्रियों का योनिकंद नामक रोग । विशेष दे० 'योनिकंद' । २. सूखा हुआ घाव (को०) ।

शुष्कांग[१]—संज्ञा पुं० [सं० शुष्काङ्ग] धव का वृक्ष । धौ ।

शुष्कांग[२]—वि० कृश शरीरवाला । दुबला पतला [को०] ।

शुष्कांगी—संज्ञा स्त्री० [सं० शुष्काङ्गी] १. प्लव जाति का एक प्रकार का पक्षी । २. गोह । गोधिका ।

शुष्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्रियों का योनिकंद नामक रोग ।

शुष्काक्षिपाक—संज्ञा पुं० [सं०] आँखों का एक प्रकार का रोग ।

विशेष—इसमें आँखों की पलकें कठोर और रूखी हो जाती हैं और उनके खोलने बंद करने में पीड़ा होती है, आँखों में जलन होती है और साफ नहीं देख पड़ता ।

शुष्कार्द्र—संज्ञा पुं० [सं०] सूखा अदरक । सोंठ ।

शुष्कार्द्रक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शुष्कार्द्र' [को०] ।

शुष्कान्न—संज्ञा पुं० [सं०] भूसा मिला हुआ अन्न [को०] ।

शुष्कार्श—संज्ञा पुं० [सं० शुष्कार्शस्] आँखों का एक प्रकार का रोग जिसमें आँख की पलकों के भीतर खरखरी और कठिन फुंसियाँ उत्पन्न हो जाती हैं ।

शुष्काशुष्क—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्रफेन ।

शुष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य । २. अग्नि । ३. बल । शक्ति । ताकत । ४. एक राक्षस (को०) ।

शुष्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. तेज । पराक्रम । २. अग्नि । ३. सूर्य । ४. वायु । ५. पक्षी । चिड़िया । ६. प्रकाश । कांति (को०) । ७. लौ । लपट (को०) ।

शुष्मा—संज्ञा पुं० [सं० शुष्मन्] १. अग्नि । २. चीता । चित्रक । ३. तेज । पराक्रम । ४. प्रकाश । कांति (को०) ।

शुष्मी—वि० [सं० शुष्मिन्] १. शक्तिशाली । बलवान् । २. बहुत जल्दी भड़क जानेवाला । जैसे, घोड़ा, साँड़, हाथी । ३. प्रतिभाशाली । मेधावी [को०] ।

शुहदा—वि० [अ० शहीद का बहुव०] गुंडा । बदमाश । चरित्रहीन । ऐश अय्याशी में रुपया उड़ानेवाला । दे० 'शोहदा' । उ०—महाआलसी झूठे शुहदे बेफिक्रे बदमासी ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ३३३ ।

यौ०—शुहदापन, शुहदापना = शोहदापन ।

शुहरत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. शोहरत । प्रसिद्धि । ख्याति । २. दे० 'शोहरत' ।

यौ०—शुहरतपसंद, शुहरतपरस्त = प्रसिद्धि का भूखा । नामवरी का इच्छुक । यशलोलुप ।

शूंडल—संज्ञा पुं० [देश०] मझोले आकार का एक प्रकार का वृक्ष ।

विशेष—इसके हीर की लकड़ी मजबूत, कड़ी और लाली लिए होती है और अच्छे दामों पर बिकती है । यह इमारतों और पुलों के बनाने के काम में आती है । इसकी छाल बहुत पतली होती है और उतारने से बारीक कागज के वरकों की तरह उतरती है । बंगाल के सुंदरवन में यह पेड़ बहुत होता है ।

शूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अन्न की बाल या सींका जिसमें दाने लगते हैं । २. यव । जौ । ३. एक प्रकार का कीड़ा । ४. एक प्रकार का तृण जिसे शूकड़ी कहते हैं और जो दुर्बल पशुओं के लिये बहुत बलकारक माना जाता है । ५. एक प्रकार का रोग जो लिंगवर्धक औषधों के लेप के कारण होता है ।

विशेष—इसमें लिंग पर कई प्रकार की फुंसियाँ और घाव आदि हो जाते हैं । यह रोग १८ प्रकार का माना गया है । यथा—सर्षपिका, अष्ठीलिका, ग्रथित, कुंभिका, अलजी, मृदित, संमूढपीड़का, अविमंथ, पुष्करिका, स्पर्शहानि, उत्तमा, शतपोनका, त्वक्पाक, शोणितार्बुद, मांसार्बुद, मांसपाक, विद्रधि और तिलकालक ।

५. यवादि की बाल का अगला, नुकीला भाग, टूंड़ । ६. रेशा या रोआँ जो नुकीला हो (को०) । ७. नोक । नुकीला अग्रभाग (को०) । ८. मृदुता । करुणा । कोमलता (को०) । ९. श्मश्रु । दाढ़ी (को०) । १०. शोक । दुःख (को०) ।

शूकक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शरीर का रस नामक धातु । २. टूंड़ (को०) । ३. दया । दयालुना (को०) । ४. एक प्रकार का अन्न (का०) । ५. पावस । प्रावृट् । वर्षा (को०) ।

शूककीट, शूककीटक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोएँदार कीड़ा ।

शूकज—संज्ञा पुं० [सं०] जवाखार । यवक्षार ।

शूकतृण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की घास जो दुर्बल पशुओं के लिये बहुत बलकारक मानी जाती है । इसे शूकड़ी या चोरहुली भी कहते हैं ।

शूकदोष—संज्ञा पुं० [सं०] शूक नामक रोग । विशेष दे० 'शूक'-५ ।

शूकधान्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह अन्न जिसके दाने बालों या सीकों में लगते हैं । जैसे, गेहूँ, जौ आदि ।

शूकपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह साँप जिसमें विष न होता हो । जैसे,—पानी का साँप या डेड़हा ।

शूकपाक्य—संज्ञा पुं० [सं०] जवाखार । शूकज ।

शूकपिंडि, शूकपिंडी—संज्ञा स्त्री० [सं० शूकपिण्डि, शूकपिण्डी] कपिकच्छु । किवांछ । कौंछ ?

शूकर—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शूकरी] १. सूअर। वाराह। उ०—भजन बिनु कूकर शूकर जैसो।—सूर (शब्द०)। २. विष्णु का तीसरा अवतार। वाराह अवतार। विशेष दे० 'वाराह'।

शूकरकंद—संज्ञा पुं० [सं० शूकरकन्द] वाराही कंद।

शूकरक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक तीर्थ जो नैमिषारण्य के पास है। उ०—मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा जो शूकरखेत। समुझी नहिं तस बालपन तब अति रहेउँ अचेत।—तुलसी (शब्द०)।

विशेष—कहते हैं, भगवान् विष्णु ने वाराह अवतार धारण करने पर हिरण्यकेशी (हिरण्याक्ष) को यहीं मारा था। आजकल यह स्थान सोरों नाम से प्रसिद्ध है।

शूकरदंष्ट्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का क्षुद्र रोग जिसे सूअरडाढ़ कहते हैं।

विशेष—यह रोग प्रायः बालकों को होता है। इसमें दाह सहित सूजन हो जाती है, जो पकती, पीड़ा करती और खुजलाती है; और इसके विकार से ज्वर उत्पन्न होता है।

शूकरपादिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कोलशिंबी। सेम की फली।

शूकरशिंबी—संज्ञा स्त्री० [सं० शूकरशिम्बी] सेम की फली।

शूकराक्रांता—संज्ञा स्त्री० [सं० शूकराक्रान्ता] वराहक्रांता। खैरी साग।

शूकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सूअर की मादा। सुअरी। वाराही। २. खैरी साग। वाराहक्रांता। वाराहीकंद। गैंठी। ४. सुइँस या सूँस नामक जलजंतु। ५. विधारा।

शूकरेष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] १. कसेरू। २. मोथा। मुस्तक।

शूकरोग—संज्ञा पुं० [सं०] शूक नामक रोग। विशेष दे० 'शूक'–५।

शूकल—संज्ञा पुं० [सं०] वह घोड़ा जो जल्दी चौंक या भड़क जाता हो।

शूकवती—संज्ञा स्त्री० [सं०] कपिकच्छु। किवाँच। कौंछ।

शूकवान् वि० [सं० शूकवत्] १. नुकीला। टूँड़वाला। २. दाढ़ीवाला [को०]।

शूकशिंबा—संज्ञा स्त्री० [सं० शूकशिम्बा] कपिकच्छु। किवाँच। कौंछ।

शूकशिंबिका, शूकशिंबी—संज्ञा स्त्री० [सं० शूकशिम्बिका, शूकशिम्बी] कौंछ। केवाँच।

शूकशिखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूकशिंबा। केवाँच [को०]।

शूका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कपिकच्छु। केवाँच। कौंछ।

शूकाक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] सिरिस। शिरीष।

शूकाढ्य—संज्ञा पुं० [सं०] शूक या शूकरी नामक तृण।

शूकापट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] कहरुवा नामक गोंद जो बरमा की खानों से निकलता और औषध के काम आता है। तृणमणि। विशेष दे० 'कहरुआ—१'।

शूकामय—संज्ञा पुं० [सं०] शूक नामक रोग। विशेष दे० 'शूक–५'।

शूकी—वि० [सं० शूकिन्] श्मश्रुल। शूकवाला। टूँड़दार [को०]।

शूकुल—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की मछली। २. एक प्रकार की सुगंधित घास।

शूक्त—संज्ञा पुं० [सं० शुक्त] सिरका।

शूक्ष्म(पु)—वि० [सं० सूक्ष्म] दे० 'सूक्ष्म'।

शूची—संज्ञा स्त्री० [सं० सूची] सूई। उ०—भक्ति सार तब करत भे, शंकर सों परिहास। शूची छिद्र समानवर, देहु नाथ कैलास।—रघुराज (शब्द०)।

शूट—

शूटिंग—१. फिल्म की शूटिंग। २. गोलियाँ आदि चलना। शूट करना। लक्ष्य बनाना।

शूटिंग स्टिक—संज्ञा स्त्री० [अं०] छापेखाने में काम आनेवाली एक लकड़ी जो प्रायः एक बालिश्त लंबी होती है।

विशेष—इसके मुँह पर एक गड्ढदार पीतल की सामी होती है। इसी में गुल्ली अड़ाकर ठोंकते हैं जिससे यह सूजे पर चढ़कर टाइप को कस देती है। किसी किसी में स्टिक सामी नहीं भी होती।

शूति—संज्ञा स्त्री० [सं०] अभिवृद्धि। बढ़ती [को०]।

शूतिपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] अमलतास। आरग्वध वृक्ष। घनबहेड़ा।

शूद्र—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शूद्रा, शूद्री] १. प्राचीन आर्यों के लोकविधान के अनुसार चार वर्णों में से चौथा और अंतिम वर्ण।

विशेष—इनका कार्य अन्य तीन वर्णों की सेवा करना और शिल्पकला के काम करना माना गया है। यजुर्वेद में शूद्रों की उपमा समाजरूपी शरीर के पैरों से दी गई है; इसीलिये कुछ लोग इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के पैरों से मानते हैं। इनके लिये गृहस्थाश्रम के अतिरिक्त और किसी आश्रम में जाने का निषेध है। आजकल इनमें से कुछ लोग अछूत और अंत्यज समझे जाते हैं। साधारणतः कोई इस वर्ण के लोगों का अन्न ग्रहण नहीं करता।

पर्या०—अवर वर्ण। वृषल। दास। पादज। अंत्यजन्मा। जघन्य। द्विजसेवक। अंत्यवर्ण। द्विजदास। उपासक। जघन्यज।

२. शूद्र जाति का पुरुष। ३. नैऋत्य कोण में स्थित एक देश का नाम। ४. बहुत ही खराब। निकृष्ट। ५. सेवक। दास।

शूद्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. विदिशा नगरी का एक राजा और 'मृच्छकटिक' का रचयिता महाकवि। २. शूद्र। (डिं०)। ३. शूद्र जाति का एक व्यक्ति जिसका नाम शंबूक था।

विशेष—कहते हैं, यह रामचंद्र के राजत्व काल में था। एक बार एक ब्राह्मण का पुत्र इसकी तपस्या के कारण मर गया। उसने जाकर रामचंद्र जी के यहाँ प्रार्थना की। नारद आदि ऋषियों ने कहा कि इस राज्य में कोई शूद्र तपस्या कर रहा है; उसी के फलस्वरूप इस ब्राह्मण का पुत्र इसके सामने मरा है। इसपर रामचंद्र जी ने इसका पता लगवाया और तब इसका सिर कटवा डाला।

शूद्रकल्प—वि० [सं०] शूद्र के समान। शूद्र तुल्य [को०]।

शूद्रकृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्र का कार्य। शूद्रों के लिये विहित कर्तव्य [को०]।

शूद्रकेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] एक शिवलिंग का नाम।

शूद्रक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] वह भूमि जिसका रंग काला हो और जिसमें अनेक प्रकार की घास, तृण, बबूर के वृक्ष तथा नाना प्रकार के धान उत्पन्न हों।

शूद्रघ्न—वि० [सं०] शूद्र की हत्या करनेवाला [को०]।

शूद्रजन्मा—वि० [सं० शूद्रजन्मन्] शूद्र से उत्पन्न होनेवाला [को०]।

शूद्रता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूद्र का भाव या धर्म। शूद्रत्व। शूद्रपन।

शूद्रत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्र होने का भाव या धर्म। शूद्रता। शूद्रपन।

शूद्रद्युति—संज्ञा पुं० [सं०] नीला रंग जो रंगों में शूद्र वर्ण का माना जाता है। उ०—वैश्य श्वेत मिलि पीत होत घृत बरुण रुचिर अति। हरित श्याम मिलि होइ शूद्रद्युति तरु तमाल प्रति।—गुरुदास (शब्द०)।

शूद्रपति—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रों का सरदार। उ०—आयसु दीन्हेउ कुरुपति जोई। लागेउ करन शूद्रपति सोई।—सबलसिंह (शब्द०)।

शूद्रप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] पलांडु। प्याज।

शूद्रप्रेष्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य जो किसी शूद्र की नौकरी या सेवा करता हो।

शूद्रभूयिष्ठ—वि० [सं०] जहाँ शूद्रों की संख्या अधिक हो। (राष्ट्र) जो अत्यधिक शूद्रों से युक्त हो [को०]।

शूद्रभोजी—वि० [सं० शूद्रभोजिन्] शूद्र के यहाँ भोजन करनेवाला [को०]।

शूद्रवर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रश्रेणी या सेवक वर्ग [को०]।

शूद्रवृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूद्र का आचरण या पेशा (को०]।

शूद्रशासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूद्र राज्य। २. शूद्रों के लिये निर्धारित आचार व्यवहार। ३. शूद्र द्वारा लिखा गया प्रतिज्ञापत्र [को०]।

शूद्रसेवन—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्र की सेवा।

शूद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूद्र जाति की स्त्री। शूद्राणी।

यौ०—शूद्रापरिणयन = दे० 'शूद्रावेदन'। शूद्राभार्य = जिसकी भार्या शूद्र जाति की हो। शूद्रावेदन। शूद्रावेदी। शूद्रासुत।

शूद्राणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूद्र की स्त्री।

शूद्रान्न—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूद्र से प्राप्त होनेवाली जीविका। २, शूद्र वर्ण के व्यक्ति द्वारा दिया हुआ अन्न आदि [को०]।

शूद्रार्त्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] प्रियंगु वृक्ष। बनिता।

शूद्रावेदन—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्रा स्त्री के साथ विवाह करना [को०]।

शूद्रावेदी—संज्ञा स्त्री० [सं० शूद्रावेदिन्] उच्च वर्ण का वह व्यक्ति जिसने शूद्र जाति की किसी स्त्री के साथ विवाह कर लिया हो। मनु के अनुसार ऐसा व्यक्ति पतित माना जाता है।

शूद्रासुत—संज्ञा पुं० [सं०] वह व्यक्ति जो किसी उच्च वर्ण के व्यक्ति के वीर्य से शूद्रा माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ हो।

शूद्राह्निक—संज्ञा पुं० [सं०] शूद्र का दैनिक कृत्य [को०]।

शूद्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूद्र की स्त्री। शूद्रा। उ०—सो शूद्री पुनि जन्यो कुमारा। नाम तासु कनि कृष्ण उचारा।—रघुराज (शब्द०)।

शून—वि० [सं०] १. शून्य। २. सूजा हुआ। शोथयुक्त। फूला हुआ (को०)। ३. वर्धित। बढ़ा हुआ (को०)।

शूनकचंचु—संज्ञा पुं० [सं० शूनकचञ्चु] क्षुद्रचंचु या छोटा चेंच नाम का साग।

शूना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गृहस्थ के घर के वे स्थान जहाँ नित्य अनजान में अनेक जीवों की हत्या हुआ करती है। जैसे,—चूल्हा, चक्की, पानी का बरतन आदि।

विशेष—इन स्थानों में जीवों की जो हत्या होती है, उसी के दोष के परिहार के लिये ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ और पितृयज्ञ करने की आवश्यकता होती है। विशेष दे० 'पंचसूना' और 'पंच महायज्ञ'।

२. तालू के ऊपर की छोटी जीभ। छोटी जीभ। गलशुंडी। ३. थूहर। स्नुही। ४. वधस्थान। बूचड़खाना (को०)।

शून्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह स्थान जिसमें कुछ भी न हो। खाली स्थान। २. आकाश। ३. एकांत स्थान। निर्जन स्थान। ४. बिंदु। बिंदी। सिफर। ५. अभाव। राहित्य। कुछ न होना। जैसे,—तुम्हारे हिस्से में शून्य है। ६. स्वर्ग। ७. विष्णु। ८. ईश्वर। उ०—कहैं एक तासों शिवे शून्य एकै। कहैं काल एकै महा विष्णु एकै। कहैं अर्थ एकै परब्रह्म जानो। प्रभा पूर्ण एकै सदा शून्य मानो।—केशव (शब्द०)। ९. कान का एक आभूषण (को०)।

शून्य^{2}—वि० १. जिसके अंदर कुछ न हो। खाली। २. निराकार। उ०—रूप रेख कछु जाके नाहीं। तौ का करब शून्य के माही।—विश्राम (शब्द०)। ३. जो कुछ न हो। असत्। ४. विहीन। रहित। जैसे,—संज्ञाशून्य।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग यौगिक शब्द बनाने में अंत में होता है। जैसे, विवेकशून्य।

५. एकांत। निर्जन (को०)। ६. खिन्न। उदास। उत्साहहीन (को०)। ७. तटस्थ। निरपेक्ष (को०)। ८. निर्दोष (को०)। ९. अर्थहीन। निरर्थक (को०)।

शून्यगर्भ^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] पपीता नामक फल।

शून्यगर्भ^{2}—वि० १. जिसके अंदर कुछ न हो। २. जिसमें कुछ भी सार या तत्व न हो। ३. बेवकूफ। मूर्ख।

शून्यता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शून्य का भाव या धर्म। शून्यत्व।

शून्यत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शून्य का भाव या धर्म। शून्यता।

शून्यदृष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] सूनी निगाह। उदास दृष्टि [को०]।

शून्यपथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंतरिक्ष। आकाश। व्योम। २. सूना रास्ता। निर्जन मार्ग (को०)।

शून्यपदवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] ब्रह्मरंध्र।

शून्यपाल—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी के रिक्त स्थान पर अस्थायी रूप से काम करता हो। एवजी।

शून्यबहरी—संज्ञा स्त्री० [सं० शून्य+बहरी?] पाँव का सुन्न हो जाना या उसमें झुनझुनी चढ़ना।

शून्यमध्य—संज्ञा पुं० [सं०] वह पदार्थ जिसके बीच का भाग खाली हो। जैसे,—नल, नरसल, नरकट।

शून्यमनस्क—वि० [सं०] अन्यमनस्क। अनमना [को०]।

शून्यमना—वि० [सं० शून्यमनस्] दे० 'शून्यमनस्क' [को०]।

शून्यमय—वि० [सं०] निष्फल। व्यर्थ [को०]।

शून्यमूल[१]—संज्ञा पुं० [सं०] सेना की एक प्रकार की सजावट।

शून्यमूल[२]—वि० कौटिल्य के अनुसार (सेना) जिसका वह केंद्र नष्ट हो गया हो जहाँ से सिपाही आते रहे हों।

शून्यवाद—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों का एक सिद्धांत जिसमें ईश्वर या जीव किसी को कुछ भी नहीं माना जाता।

शून्यवादी—संज्ञा पुं० [सं० शून्यवादिन्] १. शून्यवाद का माननेवाला, अर्थात् वह व्यक्ति जो ईश्वर और जीव के अस्तित्व में विश्वास न करता हो।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २२७। २. बौद्ध। ३. नास्तिक।

शून्यहर—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रकाश। उजाला। २. सोना। स्वर्ग।

शून्यहस्त—वि० [सं०] जिसका हाथ खाली हो। रिक्तपाणि [को०]।

शून्यहृदय—वि० [सं०] १. अनमना। शून्यमना। २. खुले हृदयवाला। विशाल हृदय का। संदेहरहित [को०]।

शून्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नलिका या नली नाम का गंधद्रव्य। २. वंध्या स्त्री। बाँझ औरत, जिसे कोई संतान न होती हो। ३. नरकट। नरसल (को०)। ४. थूहर या स्नुही का वृक्ष।

शून्यालय—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ कोई न हो। एकांत स्थान।

शून्याशून्य—संज्ञा पुं० [सं०] जीवन्मुक्ति।

शूप—संज्ञा पुं० [सं० शूर्प] बेंत, सींक या बाँस आदि का बना हुआ एक प्रकार का लंबा चौड़ा पात्र जिसमें रखकर अन्न आदि पछोड़ा जाता है। सूप। फटकनी। उ०—तेहि बन शूप बनावनहारे। वेत लेन इक समय सिधारे।—रघुराज (शब्द०)।

विशेष—इसकी लंबाई के बल में एक सिरे पर कुछ ऊँची लंबी बाढ़ होती है; और दूसरा सिरा बिलकुल खाली रहता है। चौड़ाई के बल में दोनों ओर कुछ ऊँची ढालुआँ बाढ़ होती है जो बिलकुल आगे के सिरे पर पहुँचकर खतम हो जाती है।

शूपकार—संज्ञा पुं० [सं० शूर्पकार] दे० 'सूपकार'।

शूम—संज्ञा पुं० [अ०] 'सूम'।

शूरंगम—संज्ञा पुं० [सं० शूरङ्गम] १. एक प्रकार की समाधि। २. एक बोधिसत्व [को०]।

शूरंमन्य—वि० [सं० शूरम्मन्य] अपने आपको वीर समझनेवाला [को०]।

शूर[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीर। बहादुर। सूरमा। २. योद्धा। भट। सिपाही। ३. सूर्य। ४. सिंह। ५. सूअर। शूकर। ६. चीता। ७. शाल। साखू। ८. बड़हर। लकुच। ९. मसुर। मांगल्य। १०. चित्रक या चीता नामक वृक्ष। ११. आक। मदार। १२. कृष्ण के पितामह का नाम। १३. विष्णु का एक नाम। १४. जैन हरिवंश के अनुसार उत्तर दिशा के एक देश का नाम। १५. श्वान। कुत्ता (को०)। १६. कुक्कुट। मुर्गा (को०)।

शूर[२]—वि० [सं०] योद्धा। बहादुर। शौर्यशक्तियुक्त। [को०]।

शूरकीट—संज्ञा पुं० [सं०] कमजोर या साधारण कोटि का वीर।

शूरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूरन। ओल। जमींकंद। विशेष दे० 'सूरन'। २. श्योनाक वृक्ष।

शूरणोद्भुज—संज्ञा पुं० [सं०] हरियल या हारिल नाम का पक्षी।

शूरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूर होने का भाव या धर्म। शौर्य। बहादुरी। वीरता।

शूरताई (पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० शूरता+हिं० ई (प्रत्य०)] दे० 'शूरता'।

शूरत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शूर होने का भाव या धर्म। शूरता। वीरता। बहादुरी।

शूरदेव—संज्ञा पुं० [सं०] जैनियों के अनुसार भविष्य में होनेवाले चौबीस अर्हतों में से एक अर्हत का नाम।

शूरन—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'सूरन'।

शूरपुत्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] अदिति का एक नाम।

शूरबल—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक देवपुत्र का नाम।

शूरभू—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शूरभूमि'।

शूरभूमि—संज्ञा स्त्री० [सं०] उग्रसेन की एक कन्या का नाम।

विशेष—भागवत में लिखा है कि वसुदेव के छोटे भाई श्यामक ने इसके साथ विवाह किया था, और उनके वीर्य से इसके गर्भ से हरिकेश और हिरण्याक्ष नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

शूरमान—संज्ञा पुं० [सं०] अभिमान। अहंकार [को०]।

शूरमानी—संज्ञा पुं० [सं० शूरमानिन्] वह जिसे अपनी शूरता का बहुत अभिमान हो। अपनी बहादुरी पर बहुत भरोसा रखनेवाला।

शूरवाणेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

शूरवाद—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों का शून्यवाद का सिद्धांत [को०]।

शूरवादी—वि० [सं०] शूरवादिन्] १. बौद्ध। २. नास्तिक [को०]।

शूरविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] युद्ध आदि करने की विद्या।

शूरवीर—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो अच्छा वीर और योद्धा हो। सूरमा।

शूरवीरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शौर्य। बहादुरी।

शूरश्लोक—संज्ञा पुं० [सं०] वीरों के वीरतापूर्ण कृत्यों की कहानी। वीरगाथा।

शूरसेन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मथुरा के एक प्रसिद्ध राजा जो कृष्ण के पितामह और वसुदेव के पिता थे। २. मथुरा और उसके आस पास के प्रदेश का प्राचीन नाम जहाँ राजा शूरसेन का राज्य था।

शूरसेनप—संज्ञा पुं० [सं०] शूरवीरों की सेना का पालन करनेवाले, कार्तिकेय।

शूरसेना—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूरसेन राजा की पुरी। मथुरा नगरी एक का नाम [को०]।

शूरा¹—संज्ञा स्त्री० [सं०] क्षीरकाकोली नामक अष्टवर्गीय औषधि।

शूरा(पु)²—संज्ञा पुं० [सं० शूर] सामंत। वीर। उ०—पैठि गुफा में सब जग देखै, बाहर कछू न सूझै। उलटा बान पारथिव लागे, शूरा होय सो बूझै।—कबीर (शब्द०)।

शूरा³—संज्ञा पुं० [सं० शूर (=सूर्य) अथवा सूर्य] सूर्य। उ०—जहाँ चंद न शूरा, तारा नहि जहां मोरनिया।—कबीर (शब्द०)।

शूरिमृग—संज्ञा पुं० [सं०] वाराह आदि जंगली पशु।

शूर्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. गेहूँ, चावल आदि अन्न पछोड़ने के लिये बना हुआ बाँस या सींक का पात्र। सूप। २. एक प्राचीन तौल जो २०४८ तोले या ३२ सेर की होती थी।

शूर्पक—संज्ञा पुं० [सं०] एक असुर जो किसी किसी के मत से कामदेव का शत्रु और किसी किसी के मत से उसका पुत्र था।

शूर्पकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. हाथी, जिसके कान सूप के समान होते हैं। २. गणेश। ३. एक प्राचीन देश का नाम। ४. इस देश का निवासी। ५. पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

शूर्पकाराति—संज्ञा पुं० [सं०] शूर्पक राक्षस का शत्रु, कामदेव।

शूर्पकारि—संज्ञा पुं० [सं०] शूर्पक नामक राक्षस का शत्रु, कामदेव।

शूर्पखारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की तौल जो १६ द्रोण की होती थी [को०]।

शूर्पणखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रसिद्ध राक्षसी जो रावण की बहिन थी।

विशेष—कहते हैं, इसके नख सूप के समान थे। राम के वनवास के समय काम से पीड़ित होकर यह राम के पास उनके साथ विवाह करने की इच्छा से गई थी। वहाँ राम के इशारे से लक्ष्मण ने इसकी नाक और कान काट लिए थे। इसी का बदला लेने के लिये रावण सीता को हर ले गया था।

शूर्पणखी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'सूर्पणखा'।

शूर्पणाय—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम।

शूर्पनखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शूर्पणखा'।

शूर्पपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बन मूंग। बन उर्द।

शूर्पवात—संज्ञा पुं० [सं०] सूप की हवा। अनाज फटकने के समय शूर्प से उत्पन्न हवा [को०]।

विशेष—बच्चों को सूप की हवा लगना अशुभ माना जाता है।

शूर्पश्रुति—संज्ञा पुं० [सं०] हस्ती। हाथी।

शूर्पा—संज्ञा स्त्री० [सं० शूर्प या शूर्पी] बच्चों के खेलने का एक प्रकार का खिलौना।

शूर्पाद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] दक्षिणी भारत के एक पर्वत का नाम। इसे कुछ लोग सूर्याद्रि भी कहते हैं।

शूर्पारक—संज्ञा पुं० [सं०] बंबई प्रांत के थाना जिले के सोपारा नामक स्थान का प्राचीन नाम।

शूर्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. छोटा सूप। सुपेली। २. शूर्पणखा का एक नाम। ३. बच्चों के खेलने का एक खिलौना [को०]।

शूर्म—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शूर्मि] १. लोहे की बनी हुई मूर्ति। २. निहाई।

शूर्मि, शूर्मिका, शूर्मी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शूर्म' [को०]।

शूल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जो प्रायः बरछे के आकार का होता था। २. सूली जिससे प्राचीन काल के लोगों को प्राणदंड दिया जाता था। ३. दे० 'त्रिशूल'। ४. कोई बड़ा, लंबा और नुकीला काँटा। ५. वायु के प्रकोप से होनेवाला एक प्रकार का बहुत तेज दर्द।

विशेष—यह दर्द प्रायः पेट, पसली, कलेजे या पेड़ू आदि में होता है। वैद्यक के अनुसार बहुत अधिक व्यायाम या मैथुन करने, घोड़े पर चढ़ने, रात के समय जागने, बहुत अधिक ठंढा जल पीने, रूखे द्रव्यों का सेवन करने, सूखा मांस खाने, विरुद्ध भोजन करने, शारीरिक वेगों को रोकने, बहुत अधिक शोक या उपवास करने अथवा बहुत अधिक हँसने के कारण वायु का प्रकोप होता है जिससे पेट में या उसके आस पास बहुत तीव्र पीड़ा होती है। इस पीड़ा में ऐसा अनुभव होता है कि कोई अंदर से बहुत नुकीला काँटा या शूल गड़ा रहा है; इसी से इसे शूल कहते हैं। यह रोग आठ प्रकार का—वातज, पित्तज, कफज, संनिपातज, आमज, वातश्लैष्मिक, पित्तश्लैष्मिक और वातपैत्तिक—कहा गया है; और इसे शांत करने के लिये स्वेद, अभ्यंग, मर्दन और स्निग्ध तथा उष्ण द्रव्यों के सेवन का विधान है।

६. किसी नुकीली वस्तु के चुभने के समान होनेवाली पीड़ा। कोंच। टीस। ७. पीड़ा। क्लेश। दुःख। दर्द। उ०—(क) तुम लछिमन निज पुरहि सिधारो बिछुरन मेट देहु लघु बधु जियत न जैहै शूल तुम्हारो।—सूर (शब्द०)। (ख) मन तोसों कोटिक बार कही। समुझ न चरण गहत गोविंद के उर अघ शूल सही।—सूर (शब्द०)। ८. ज्योतिष में विष्कंभ आदि सत्ताइस योगों के अंतर्गत नवाँ योग।

विशेष—कहते हैं, जो बालक इस योग में जन्म लेता है, वह डरपोक, दरिद्र, मूर्ख, विद्याहीन, शूलरोगी, दूसरों का अनिष्ट करनेवाला और अपने बंधु बांधव को शूल के समान खटकनेवाला होता है। इस योग में किसी प्रकार का शुभ काम करने का निषेध है।

९. छड़। सलाख। सींख। उ०—खाने को बहुधा शूल पर भुना हुआ मांस मिलता है, सो भी कुसमय।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०)। १०. मृत्यु। ११. झंडा। पताका। १२. पोस्ते की पत्तियों की वह तह जो अफीम की चक्की जमाने के समय उसके चारों

ओर और ऊपर नीचे लगाई जाती है। (बंगाल)। १३. ग्रंथिवात। गठिया (को०)।

शूल^2—वि० काँटे की तरह नोकवाला। नुकीला।

शूलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार एक ऋषि का नाम। २. दुष्ट या पाजी घोड़ा। शकल।

शूलकार—संज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक नीच जाति का नाम।

शूलगजकेसरी रस—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैद्यक में एक प्रकार का रस।

विशेष—यह रस शुद्ध गंधक, पारे, कंटकवेधी, ताँबे के पत्र आदि के योग से तैयार किया जाता है और शूल रोग के लिये गुणकारी माना जता है।

२. वैद्यक में एक प्रकार की बटी या गोली।

विशेष—इसके लिये कौड़ियों की राख, शुद्ध सिंगी मुहरा, सेंधा नमक, काली मिर्च, पिप्पली इन सब का चूर्ण कर पान के रस में एक रत्ती के बराबर गोलियाँ बनाई जाती हैं। ये गोलियाँ शूल का नाश करती हैं।

शूलगव—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम।

शूलगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] मदरास प्रांत के एक पर्वत का नाम।

शूलग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० शूलग्रन्थि] माला दूब।

शूलग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] हाथ में त्रिशूल धारण करनेवाले, शिव।

शूलग्राही—संज्ञा पुं० [सं० शूलग्राहिन्] शिव। महादेव।

शूलघातन—संज्ञा पुं० [सं०] मंडूर। लौहकिट्ट।

शूलघ्न^1—संज्ञा पुं० [सं०] तुंबुरु वृक्ष।

शूलघ्न^2—वि० शूल को शमन करनेवाला [को०]।

शूलघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सज्जी मिट्टी। सर्जिखार। २. नरसल जैसा एक पौधा (को०)।

शूलदावानल रस—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस।

विशेष—यह दो तरह से बनता है—(१) शुद्ध पारा, शुद्ध सींगी मुहरा, काली मिर्च, पिप्पली, सोंठ, भुनी हींग, पाँचो नमक, इमली का खार, जंभीरी का खार, शंखभस्म और नीबू के रस के योग से बनता है और शूल रोग का तत्काल दूर करता है। (२) शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सिंगी मुहरा, पिप्पली, भूनी हींग, पाँचो नमक, इमली के खार और नीबू के रस में भुने हुए शंख की राख तथा नीबू के रस से बनता है और शूल, अजीर्ण, उदररोग और मंदाग्नि को दूर करता है।

शूलद्विट्—संज्ञा पुं० [सं० शूलद्विष्] हींग। हिंगु।

शूलधन्वा—संज्ञा पुं० [सं० शूलधन्वन्] शिव। महादेव।

शूलधर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव। शंकर। उ०—गंगाधर हर शूलधर, ससिधर शंकर बाम। सर्वेस्वर भव शंभु शिव, रुद्र कामरिपु नाम।—नंद (शब्द०)।

शूलधरा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

शूलधारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा। शूलधरा।

शूलधारी—संज्ञा पुं० [सं० शूलधारिन्] त्रिशूल धारण करनेवाले शिव। महादेव। उ०—संध्यावलि पुजन जब होइ शूलधारी कौ, दुंदुभि की ठौर दीजो गरज सुनाइ कै।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०)।

शूलधृक्^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] शिव।

शूलधृक्^{2}—संज्ञा स्त्री० दुर्गा [को०]।

शूलना(पु)—क्रि० अ० [हिं० शूल+ना (प्रत्य०)] १. शूल के समान गड़ना। २. दुःख देना। पीड़ा देना। कष्ट देना। उ०—(क) सो युधि यदुनंदन नहिं भूलत। सुमिरि सुमिरि अजहूँ, उर शूलत।—सबल (शब्द०)। (ख) लै लै पिय को नाम ठाँव हमरो नहिं छोड़ै। कठिन तुम्हारो बोल जाइ हिरदै में शूलै।—गिरधर (शब्द०)।

शूलनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौवर्चल लवण। २. हींग। ३. पुष्करमूल। ४. वैद्यक में एक प्रकार का चूर्ण।

विशेष—यह चूर्ण शंखभस्म, करंजमूल, भूनी हींग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और सेंधा नमक के योग से बनाया जाता है और इसका व्यवहार प्रायः शूलरोग में किया जाता है।

शूलनाशिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शूलरोग का नाश करनेवाली, हींग।

शूलनाशिनी वटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की बटी या गोली।

विशेष—इसके लिये हड़ का छिलका, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, शुद्ध कुचला, शुद्ध गंधक, भूनी गंधक, भूनी हींग, सेंधा नमक जल से खरल करके चने के बराबर गोलियाँ बनाई जाती हैं। कहते हैं कि प्रातःकाल इसे गरम जल के साथ सेवन करने से संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मंदाग्नि आदि दूर होती है।

शूलनाशी—संज्ञा पुं० [सं० शूलनाशिन्] हींग।

शूलनिर्मूलन—संज्ञा पुं० [सं०] दुःख का नाश करनेवाले, शिव। महादेव।

शूलपत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की घास जिसे शूली भी कहते हैं।

शूलपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार को घास जिसे शूली भी कहते हैं।

शूलपाणि—संज्ञा पुं० [सं०] हाथ में शूल धारण करनेवाले, शिव। महादेव।

शूलपानि(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शूलपाणि] शिव। महादेव। उ०—दारिद्रदमन, दुखदोष दाह—दावानल, दुनि न दयालु दूजो दानि शूलपानि सों।—तुलसी (शब्द०)।

शूलपाल—संज्ञा पुं० [सं०] वेश्यालय का रक्षक [को०]।

शूलप्रोत—संज्ञा पुं० [सं०] नरक के एक भाग का नाम।

शूलभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] शूलधारी शिव [को०]।

शूलमर्द्दन—संज्ञा पुं० [सं०] तालमखाना। कोकिलाक्ष।

शूलयोग—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के २७ योगों में से एक योग। विशेष दे० 'शूल'—८।

शूलशत्रु—संज्ञा पुं० पुं० [सं०] रेंड़ का पेड़ ।

शूलशब्द—संज्ञा पुं० [सं०] पेट की गड़गड़ाहट के कारण होनेवाला शब्द ।

शूलस्थ—वि० [सं०] शूली पर चढ़ा हुआ [को०] ।

शूलहंत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० शूलहन्त्री] शूल का नाश करनेवाली, अजवाइन । यवानी ।

शूलहर—संज्ञा पुं० [सं०] पुष्करमूल ।

शूलहस्त—संज्ञा पुं० [सं०] हाथ में शूल धारण करनेवाले, शिव । महादेव ।

शूलहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] हिंगु । हींग ।

शूलांक—संज्ञा पुं० [सं० शूलाङ्क] शिव । महादेव ।

शूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वेश्या । रंडी । २. सूली जिसके द्वारा प्राचीन काल में लोगों को प्राणदंड दिया जाता था । ३. छड़ । सीख । सलाख ।

शूलाकृत—संज्ञा पुं० [सं०] लोहे की सीख में खोंसकर भूना हुआ मांस । सीख पर भूना हुआ मांस । कबाब आदि ।

शूलारि—संज्ञा पुं० [सं०] हिंगोट । इंगुदी वृक्ष ।

शूलि^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम । महादेव ।

शूलि^{2}—वि० शूल या कुंत धारण करनेवाला [को०] ।

शूलि^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'सूली' ।

शूलिक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. खरगोश । खरहा । २. सीख में गोदकर पकाया हुआ मांस । कबाब । ३. फाँसी देनेवाला । सूली देनेवाला । उ०—इन मघादि तीसरे मंडल के दैत्यगुरु यदि और किसी ग्रह से रुक जाँय तो पेड़ों के समूह, शबर, शूद्र, पुंड्र, पश्चिम की सीमा का अन्न, शूलिक, बनवासी, द्रविड़, समुद्र के पुरुषों का नाश हो जाता है ।—बृहत्संहिता (शब्द०) । ४. कुक्कुट । मुर्गा (को०) । ५ ब्राह्मण या क्षत्रिय की वह जारज संतति जो शूद्रा से उत्पन्न हो (को०) ।

शूलिक^{2}—वि० १. प्रासधारी । शूल धारण करनेवाला । २. सलाख पर भुना हुआ [को०] ।

शूलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सीख में गोदकर भूना हुआ मांस । कबाब । २. वह सीख जिसमें गोदकर मांस भूना जाता है (को०) ।

शूलिकाप्रोत—संज्ञा पुं० [सं०] १. भांडीर वृक्ष । बट का वृक्ष । २. गूलर का पेड़ । उदुंबर ।

शूलिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा का एक नाम जो त्रिशूल धारण करनेवाली मानी जाती हैं । २. पान । नागवल्ली । ३. पुत्रदात्री नाम की लता ।

शूली^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शूलिन्] १. त्रिशूल धारण करनेवाले, शिव । महादेव । उ०—शृंगी शूली धूरजटी, कुंडलीश त्रिपुरारि । वृषा कपर्दी मानहर, मृत्युंजय कामारि ।—सबल (शब्द०) । २. खरगोश । शशक । खरहा । ३. शूलरोग से पीड़ित व्यक्ति । वह जिसे शूलरोग हुआ हो । ४. एक नरक का नाम । उ०—(क) तेरहों शूली नरक कहावै । शूली सम दुख तामे पावै । जो नर पाप करै अधिकाई । करि शिकार मृग मारै जाई ।—विश्राम (शब्द०) । (ख)—काहू को शस्त्रन ते मारै । तेहि यम शूली नरक में डारै ।—विश्राम (शब्द०) । ५. कुंतधारी व्यक्ति । वह जो शूल धारण किए हो (को०) ।

शूली^{2}—संज्ञा स्त्री० दे० 'सूली' । उ०—नाहक नर शूली धरि दीन्हों । जिन वन माहिं ठगाही कीन्हों ।—विश्राम (शब्द०) । (ख) कौन पाप मैं ऐसो कियो । जाते मोकूँ शूली दियो ।—सूर (शब्द०) ।

शूली^{3}—संज्ञा स्त्री० [सं० शूल] पीड़ा । शूल । उ०—सो सुधि भूप हिये महँ भूली । अजहूँ उठत जासु ते शूली ।—सबल (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—उठना ।

शूली^{4}—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की घास । शूलीपत्री ।

विशेष—इस घास को पशु बड़े चाव से खाते हैं और इसका व्यवहार औषध रूप में भी होता है । वैद्यक के अनुसार यह किंचित उष्ण गुरु, बलकारक, पित्त तथा दाहनाशक और गौओं तथा भैंसों का दूध बढ़ानेवाली मानी जाती ।

शूलोत्खा, शूलोत्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] सोमराजी लता । बकुची ।

शूल्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] सीख में बेधकर पकाया हुआ मांस । कबाब ।

शूल्य^{2}—वि० १. सीख पर भूना हुआ । २. शूली पर चढ़ाए जाने या शूली पाने योग्य [को०] ।

शूल्यपाक—संज्ञा पुं० [सं०] कबाब ।

शूल्यमांस—संज्ञा पुं० [सं०] कबाब ।

शूल्यवाण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की भूतयोनि जिसका मान वैदिक काल में होता था ।

शूष^{1}—वि० [सं०] १. गुंजायमान । २. साहसी [को०] ।

शूष^{2}—संज्ञा पुं० १. गुंजित होता हुआ स्वर । २. साहस । शक्ति । वेग [को०] ।

शृंखल—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्खल] १ एक प्रकार का आभरण जो प्राचीन काल में पुरुष लोग कमर में पहनते थे । मेखला । २. हाथी आदि के बाँधने की लोहे की जंजीर । साँकल । सिकड़ । उ०—अंकुस घंट सुशृंखल जेऊ । चौदह सहस महा गज लेऊ ।—पद्माकर (शब्द०) । ३. हथकड़ी बेड़ी । ४. नियम । ५. मापने की जंजीर (को०) । ६. परंपरा । सिलसिला (को०) । ७. बंधन (को०) ।

शृंखलक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्खलक] १. ऊँट । २. दे० 'शृंखल' । ३. वह जानवर जिसके पैर बँधे हों (को०) ।

शृंखलता—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्खलता] सिलसिलेवार या क्रमबद्ध होने का भाव ।

शृंखलबद्ध—वि० [सं० शृङ्खलबद्ध] १. नियमबद्ध । २. बंधन या जंजीर से बँधा हुआ [को०] ।

शृंखला—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्खला] १. क्रम। सिलसिला। २. जंजीर। साँकल। ३. पुरुष का कटिबंधन वस्त्र। मेखला। ४. चाँदी का एक आभूषण जिसे स्त्रियाँ कमर में पहनती हैं। करधनी। तागड़ी। श्रेणी। कतार। ६. एक प्रकार का अलंकार जिसमें कथित पदार्थों का वर्णन शृंखला के रूप में सिलसिलेवार किया जाता है।

शृंखलाबद्ध—वि० [सं० शृङ्खलाबद्ध] १. जो क्रम से हो। सिलसिलेवार। २. जो शृंखला से बाँधा हुआ हो।

शृंखलि—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्खलि] कोकिलाक्ष। तालमखाना।

शृंखलित- वि० [सं० शृङ्खलित] १. क्रमबद्ध। श्रेणीबद्ध। सिलसिलेवार। २. पिरोया हुआ। ३. निगडित। शृंखलाबद्ध (को०)।

शृंखली—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्खली] कोकिलाक्ष।

शृंग^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. पर्वत का ऊपरी भाग। शिखर। चोटी। २. गो, भैंस, बकरी आदि के सिर के सींग। उ०—भक्ति बिन बैल बिराने ह्वैहो। पाउ चारि सिर शृंग गुंग मुख तब कैसे गुण गैहो।— सूर (शब्द०)। ३. कँगूरा। उ०—जो कांचनीय रथ शृंग मयूर माली। जाके उदार उर षरामुख शक्तिशाली।—केशव (शब्द०)। ४. प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जो मुँह से फूँककर बजाया जाता है। सिंगी बाजा। उ०—कंस ताल करताल बजावत शृंग मधुर मुहचंग। मधुर खंजरी पटह प्रणव मिल सुख पावत रतभंग।—सूर (शब्द०)। ५. कमल। पद्म। ६. जीवक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ७. सोंठ। ८. अदरक। आदी। ९. अगर। १०. प्रभुत्व। प्रधानता। ११. काम की उत्तेजना। १२. चिह्न। निशान। १३. स्तन। छाती। १४. एक प्राचीन ऋषि का नाम। वि० दे० 'ऋष्यशृंग'। १५. पानी का फौवारा या पिचकारी। १६. कूर्चशीर्षक वृक्ष (को०)। १७. उत्तुंगता। ऊँचाई (को०)। १८. चंद्रचूडा। चाँद की नोक (को०)। १९. किसी वस्तु का अग्रभाग। नोक (को०)। २०. कोटि। चाप के सिरे का नुकीला अंश (को०)। २१. अभिमान। आत्मश्लाघा (को०)। २२. बाण का नुकीला दंड। बाणकांड (को०)। २३. एक प्रकार का सेना का व्यूह (को०)। २४. हाथी का दाँत (को०)। २५. उत्कर्ष। अभ्युदय (को०)।

शृंग^{2}—वि० नुकीला। तीक्ष्ण। तेज।

शृंगकंद—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गकन्द] सिंघाड़ा।

शृंगक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गक] १. जीवक वृक्ष। २. सिंगिया नामक विष। ३. सींग (को०)। ४. चंद्रमा की नोक। चंद्रचूड़ा (को०)। ५. कोई भी नुकीला पदार्थ (को०)। ६. पिचकारी (को०)।

शृंगकूट—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गकूट] एक पर्वत का नाम।

शृंगगिरि—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गगिरि] दे० 'शृंगकूट'।

शृंगग्राहिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उचित मार्ग। सीधा मार्ग। सरल विधि। २. एक न्याय। दे० 'शृंगग्राहिता न्याय'।

शृंगग्राहिता न्याय—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गग्राहिता न्याय] एक न्याय जिसका उपयोग उस समय होता है, जब किसी कठिन काम का एक अंश हो जाने पर शेष अंश का संपादन उसी प्रकार सहज हो जाता है, जिस प्रकार सींग मारनेवाले बैल का एक सींग पकड़ लेने पर दूसरा सींग भी पकड़ लेना सहज हो जाता है।

शृंगज^{1}—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गज] १. अगर। अगरु। २. शर। तीर।

शृंगज^{2}—वि० १. शृंगनिर्मित। २. शृंग से उत्पन्न [को०]।

शृंगधर—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्धर] पर्वत। पहाड़ [को०]।

शृंगनाभ—संज्ञा पुं० [सं० ऋङ्गनाभ] एक प्रकार का विष।

शृंगनाम्नी—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गनाम्नी] काकड़ासिंगी। कर्कटशृंगी।

शृंगपुर—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गपुर] दे० 'शृंगवेरपुर'।

शृंगप्रहारी—वि० [सं० शृङ्गप्रहारिन्] सींग से प्रहार करनेवाला [को०]।

शृंगप्रिय—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गप्रिय] शिव [को०]।

शृंगभेदी—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गभेदिन्] गुंदा नामक तृण।

शृंगमूल—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गमूल] सिंघाड़ा।

शृंगमोही—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गमोहिन्] चंपक वृक्ष। चंपा।

शृंगरुह—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गरुह] सिंघाड़ा।

शृंगला—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गला] मेढ़ासिंगी।

शृंगवत्—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवत्] पुराणानुसार कुरुवर्ष की सीमा पर के एक पर्वत का नाम।

शृंगवाद्य—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवाद्य] सिंघा। सींग का बना बाजा। सिंगी।

शृंगवान्^{1}—वि० [सं० शृङ्गवत्] शिखरयुक्त। शृंगयुक्त। चोटीवाला [को०]।

शृंगवान्^{2}—संज्ञा पुं० १. पर्वत। २. शृंगवत् नामक गिरि [को०]।

शृंगवृष—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवृष] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शृंगवेर—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवेर] १. आदी। अदरक। २. सोंठ। ३. महाभारत के अनुसार एक नाग का नाम। ४. दे० 'शृंगवेरपुर'।

शृंगवेरक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवेरक] १. अदरक। आदी। २. सोंठ।

शृंगवेरपुर—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवेरपुर] रामायण के अनुसार एक प्राचीन नगर का नाम। उ०—(क) ता दिन शृगवेरपुर आए। राम सखा ते समाचार सुनि बारि बिलोचन छाए।—तुलसी (शब्द०)। (ख) छलि पुरबासिन को आए शृंगवेरपुर खबरि निषाद राजै कोऊ कही जाइकै।—रघुराज (शब्द०)।

विशेष—रामचंद्र के समय में यह निषाद राजा गुह की राजधानी थी। संभवतः प्रतापगढ़ जिले का सिंगरौरा (आधुनिक इलाहाबाद जिले का गंगातट पर बसा हुआ सिंगरौर) नामक गाँव ही प्राचीन शृंगवेरपुर है। गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस में इसका एक नाम सिंगरौर भी आया है।

शृंगवेराभमूल—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गवेराभमूल] गुंदा नामक तृण।

शृंगवेरिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गवेरिका] गोभी।

शृंगसुख—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गसुख] सिंगी या सिंघा नामक बाजा।

शृंगाट—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गाट] १. सिंघाड़ा। २. गोखरू। ३. कँटाई। विकंकत। ४. कामरूप देश के एक पर्वत का नाम। ५. चौराहा। चौमुहानी।

शृंगाटक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गाटक] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का खाद्य पदार्थ जो मांस से बनाया जाता था। २. एक मर्मस्थान जो मस्तक में उस स्थान पर माना जाता है, जहाँ नाक, कान, आँख और जीभ से संबंध रखनेवाली चारों शिराएँ मिलती हैं।

विशेष—कहते हैं, यह मर्मस्थान चार अंगुल का होता है और इसके चारों ओर से चारों शिराएँ निकलती हैं; इसी से इसे शृंगाटक कहते हैं। यह भी माना जाता है कि इस स्थान पर चोट लगने से तुरंत मृत्यु हो जाती है।

३. सिंघाड़ा। दे० 'शृंगाट'। ४. तीन चोटियोंवाला पहाड़ (को०)। ५. द्वार। दरवाजा (को०)। ६. एक प्रकार का सिंघाड़े के आकार का पकवान। समोसा (को०)। ७. चौराहा (को०)। ८. काँटा। कंटक (को०)।

शृंगाटिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गाटिका] चौमुहानी। चौराहा।

शृंगाटी—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गाटी] जीवंती।

शृंगार—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गार] १. साहित्य के अनुसार नौ रसों में से एक रस जो सबसे अधिक प्रसिद्ध है और प्रधान माना जाता है। उ०—जाको थायी भाव रस, सो शृंगार सुहोत। मिलि विभाव अनुभाव पुनि संचारिन के गोत।—पद्माकर (शब्द०)।

विशेष—इसमें नायक नायिका के परस्पर मिलन के कारण होनेवाले सुख की परिपुष्टता दिखलाई जाती है। इसका स्थायी भाव रति है। आलंबन विभाव नायक और नायिका हैं। उद्दीपन विभाव सखा, सखी, वन, बाग आदि, विहार, चंद्र-चंदन, भ्रमर, झंकार, हाव भाव, मुसक्यान तथा विनोद आदि हैं। यही एक रस है जिसमें संचारी विभाव, अनुभाव सब भेदों सहित होता है; और इसी कारण इसे रसराज कहते हैं। इसके देवता विष्णु अथवा कृष्ण माने गए हैं और इसका वर्ण श्याम कहा गया है। यह दो प्रकार का होता है—एक संयोग और दूसरा वियोग या विप्रलंभ। नायक नायिका के मिलने को संयोग और उनके विछोह को वियोग कहते हैं।

२. स्त्रियों का वस्त्राभूषण आदि से शरीर को सुशोभित और चित्ताकर्षक बनाना। सजावट। संग सखी सोहैं बिधि बारा। कीन्हें तन षोड़श शृंगारा।—रघुनाथ (शब्द०)।

विशेष—शृंगार १६ कहे गए हैं—अंग में उबटन लगाना, नहाना, स्वच्छ वस्त्र धारण करना, बाल सँवारना, काजल लगाना, सेंदुर से माँग भरना, महावर देना, भाल पर तिलक लगाना, चिबुक पर तिल बनाना, मेंहदी लगाना, अर्गजा आदि सुगंधित वस्तुओं का प्रयोग करना, आभूषण पहनना, फूलों की माला धारण करना, पान खाना, मिस्सी लगाना। जैसे—अंग शुची मंजन बसन, माँग महावर केश। तिलक भाल तिल चिबुक में भूषण मेंहदी वेश। मिस्सी काजल अर्गजा, बीरी और सुगंध। पुष्प कली युत होय कर, तब नव सप्त निबंध।

३. किसी चीज को दूसरे सुंदर उपकरणों से सुसज्जित करना। सजावट। बनाव चुनाव। ४. भक्ति का एक भाव या प्रकार जिसमें भक्त अपने आप को पत्नी के रूप में और अपने इष्टदेव को पति के रूप में मानते हैं। उ०—शांत दास्य सख्य वात्सल्य और शृंगारु चारु पाँचौ रस सार विस्तार नीके गाए हैं।—नाभादास (शब्द०)। ५. वह जिससे किसी चीज की शोभा बढ़ती हो। उ०—यशुमति कोखि सराहि बलैया लेन लगीं ब्रजनार। ऐसो सुत तेरे गृह प्रकट्यो या ब्रज को शृंगार।—सूर (शब्द०)। ६. लौंग। ७. सेंदुर। ८. अदरक। ९. चूर्ण। चूरन। १०. काला अगर। ११. सोना। १२. रति। मैथुन। १३. हाथी की सूँड़ पर चित्रित सिंदूर की रेखाएँ (को०)।

शृंगारक^1—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारक] १. सेंदुर। २. लौंग। ३. अदरक। आदी। ४. काला अगर।

शृंगारक^2—वि० सींग का बना हुआ। शृंग से निर्मित। सींग संबंधी [को०]।

शृंगारगर्व—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारगर्व] १. प्रेम का गर्व। २. सजाव-बनाव का अभिमान।

शृंगारचेष्टा—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गारचेष्टा] शृंगारजन्य क्रिया। कामचेष्टा। अनुराग, रति, संभोग आदि को व्यक्त करना [को०]।

शृंगारचेष्टित—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारचेष्टित] दे० 'शृंगारचेष्टा'।

शृंगारजन्मा—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारजन्मन्] कामदेव या मदन का एक नाम।

शृंगारण—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारण] १. किसी रूपवती स्त्री को देखकर उसपर अपनी कामवासना प्रकट करने की क्रिया। प्रेम प्रदर्शन। मुहब्बत जतलाना। २. शृंगार करना। सजाना। सिंगारना।

शृंगारधारी—वि० [सं० शृङ्गारधारिन्] जिसका शृंगार हुआ हो। जो सजाया गया हो। रंगबिरंगी रेखाओं और भूषणों से शोभित।

शृंगारना—वि० सं० [सं० शृङ्गार से नाम०] आभूषण आदि से या और किसी प्रकार सँवारना। शृंगार करना। सजाना।

शृंगारभाषित—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारभाषित] प्रेमालाप। प्रणयवार्ता। केलिसंलाप [को०]।

शृंगारभूषण—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारभूषण] १. सेंदुर। सिंदुर। २. हड़ताल।

शृंगारमंडल—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारमण्डल] १. ब्रज का एक स्थान जहाँ पर श्रीकृष्ण ने राधिका का शृंगार किया था।

२. वह स्थान जहाँ प्रेमी और प्रेमिका मिलकर कामक्रीड़ा करते हों। क्रीड़ास्थल।

शृंगारयोनि—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारयोनि] मदन या कामदेव का एक नाम।

शृंगार रस—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गार रस] साहित्य शास्त्र के ९ रसों में पहला रस। विशेष दे० 'शृंगार'—१।

शृंगारलज्जा—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गारलज्जा] प्रेम वा कामजन्य अनुरक्ति के कारण उत्पन्न लज्जा [को०]।

शृंगारविधि—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गार विधि] दे० 'शृंगारवेश'।

शृंगारवेश—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारवेश] वह सुंदर वेश जिसे धारण करके प्रेमी अपनी प्रेमिका के पास जाता है।

शृंगारसहाय—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गार सहाय] नायक नायिका के प्रेम व्यापार में सहायता देनेवाला व्यक्ति। प्रेम व्यापार में मध्यस्थ रहनेवाला व्यक्ति। नर्मसचिव [को०]।

शृंगारहाट—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गार + हिं० हाट] १. वह बाजार जहाँ वेश्याएं रहती हों। चकला। उ०— पुनि शृंगारहाट भल देसा। किए सिंगार बैठि तहँ बेसा।—जायसी (शब्द०)। २. वह बाजार जहाँ शृंगार की वस्तुएँ बिकती हों।

शृंगारिक—वि० [सं० शृङ्गारिक] शृंगार संबंधी। न०—ललित लताओं को पहले के अपने सब शृंगारिक भाव। हरिण, नारियों को नयनों की चंचलता का सहज स्वभाव।—महावीरप्रसाद (शब्द०)।

शृंगारिणी—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गारिणी] १. शृंगार करनेवाली स्त्री। शृंगारप्रिय। २. एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक पाद में चार रगण (ऽऽ) होते हैं। इसको 'स्रग्विणी', 'कामिनी', 'मोहन', 'लक्ष्मीधारा' और 'लक्ष्मीधर' भी कहते हैं।

शृंगारित—वि० [सं० शृङ्गारित] १. जिसका शृंगार किया गया हो। सजाया हुआ। सँवारा हुआ। २. भूषित। सज्जित। सजा हुआ (को०)। ३. प्रेमाभिभूत। कामाभिभूत (को०। ४. चित्रित। रँगा हुआ (को०)।

शृंगारिया—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गार + हिं० इया (प्रत्य०)] १. वह जो देवताओं आदि का शृंगार करता हो। २. नाटक, लीला आदि में मेक अप करनेवाला। वह जो लीला की मूर्तियों का शृंगार करता हो। ३. वह जो तरह तरह के भेस बनाता हो। बहुरूपिया।

शृंगारी¹—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गारिन्] १. सुपारी। २. मानिक। चुन्नी। ३. हाथी। ४. शृंगारयुक्त वा कामोत्तेजनायुक्त व्यक्ति (को०)। ५. वेशभूषा। सजावट (को०)। ६. पान का बीड़ा बनाना (को०)। ७. सुंदर वेशभूषा वाला या सजा हुआ व्यक्ति (को०)।

शृंगारी²—वि० १. प्रेमासक्त। २. शृंगार या प्रेम संबंधी। ३. सिंदूर या गेरू से चित्रित [को०]।

शृंगारुहा—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गारुहा] सिंघाड़ा। शृंगाटक।

शृंगालिका, शृंगाली—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गालिका, शृङ्गाली] विदारीकंद।

शृंगाह्व—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गाह्व] १. जीवक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। २. सिंघाड़ा।

शृंगाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गाह्वा] १. जीवक। शृंगाह्व। २. सिंघाड़ा।

शृंगि¹—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गि] सिंगी मछली।

शृंगि²—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गि] आभूषण में प्रयुक्त वा आभूषण तैयार करने का सोना [को०]।

शृंगि³—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गिन्] वह पशु जिसके सिर पर सींग हो। सींगवाला जानवर। उ०—नखी, नदी और शृंगि जो धरत शस्त्र निज पास। राजवंस औ नारि में करु न कबहुँ विश्वास।—सीताराम (शब्द०)।

शृंगिक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गिक] १. सिंगिया विष। २. एक प्रकार का वाद्य। सिंगी (को०)।

शृंगिका—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गिका] १. बहुत प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जो मुँह से फूँककर बजाया जाता था। सिंगी। २. अतीस। अतिविषा। ३. काकड़ासिंगी। ४. मेढ़ासिंगी। ५. पिप्पली। पीपल।

शृंगिण—संज्ञा पुं० [सं० शृंङ्गिण] १. जंगली मेढ़ा। मेष। २. वह जो सींगवाला हो [को०]।

शृंगिणी—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गिणी] १. गाय। गौ। २. मल्लिका। मोतिया। ३. मालकंगनी। ज्योतिष्मती लता। ४. अतीस। अतिविषा।

शृंगी¹—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गिन्] १. हाथी। हस्ती। २. वृक्ष। पेड़। ३. पर्वत। पहाड़। ४. एक ऋषि जो शमीक के पुत्र थे। इन्हीं के शाप से अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को तक्षक ने डसा था। उ०—(क) शृंगी ऋषि तब कियो विचार! प्रजा दुःख कर नृपत गुहार।—सूर (शब्द०)। (ख) जहँ शृंगी ऋषिवर तप करहीं। चर्म नयन सो देखि न परहीं।—राधाकृष्ण (शब्द०)। ५. बरगद। ६. पाकड़। ७. अमड़ा। ८. ऋषभक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ९. सींगवाला पशु। जैसे,—गौ, बैल, बकरी आदि। १०. जीवक नामक ओषधि। ११. सिंगिया नामक विष। १२. सींग का बना हुआ एक प्रकार का बाजा, जिसे कनफटे बजाते हैं। उ०—शृंगी शब्द धंधरी करा। जरै सो ठाठ जहाँ पग धरा।—जायसी (शब्द०)। १३. महादेव। शिव। उ०—शृंगी शूली धूरजटि, कुंडलीश त्रिपुरारि। वृषा कपर्दी मानहर, मृत्युंजय कामारि।—सबल (शब्द०)। १४. एक प्राचीन देश का नाम। उ०—शृंगी सिंधु कच्छ के राई। आए सकल समेत सहाई।—सबल (शब्द०)। १५. मेष। भेड़ा (को०)। १६. वृष। बैल (को०)। १७. शिव का एक गण (को०)।

शृंगी²—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गी] १. अतीस। २. काकड़ासिंगी। ३. सिंगी मछली। ४. मजीठ। मंजिष्ठा। ५. आँवला। ६. पोई का साग। ७. ऋषभक नामक ओषधि। ८. पाकर। ९. वट। बड़। १०. विष। जहर। ११. वह सोना जिससे गहने बनाए जाते हैं।

शृंगीक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गीक] काकड़ासिंगी।

शृंगीकनक—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गीकनक] वह सोना जिससे गहने बनाए जाते हैं।

शृंगीगिरि—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गीगिरि] एक प्राचीन पर्वत का नाम जिसपर शृंगी ऋषि तप किया करते थे। उ०—पूरण काम ज्ञान गन राजा। शृंगी गिरि गवने यति राजा। जहँ शृंगी ऋषि वर तप करहीं। चर्म नयन सो देखि न परहीं।—राधाकृष्ण (शब्द०)।

शृंगेरी—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गेरी] १. मैसूर (दक्षिण भारत) का एक पर्वत। २. शंकराचार्य के मतानुयायी संन्यासियों का एक प्रसिद्ध मठ।

विशेष—यह स्थान मैसूर (दक्षिण भारत) में है। इसके प्रधान अधीश्वर शंकराचार्य कहलाते हैं। आद्य शंकराचार्य द्वारा भारत में स्थापित चार पीठों में यह एक है। शृंगगिरि पर स्थित होने से इसे शृंगेरी कहते हैं।

शृंगोन्नति—संज्ञा स्त्री० [सं० शृङ्गोन्नति] ग्रहों और नक्षत्रों आदि की एक प्रकार की गति।

शृंगोष्णीश—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्गोष्णीश] सिंह। मृगेंद्र। पंचास्य [को०]।

शृकाल—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शृगाल'।

शृग (पु)—संज्ञा पुं० [सं० शृगाल] दे० 'शृगाल'। उ०—बहुतन कंक काक शृग श्वाना। भक्षत करत कटकटी नाना।—विश्राम (शब्द०)।

शृगाल^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. गीदड़ नामक जंगली जंतु। सियार। जंबुक। विशेष दे० 'गीदड़'। उ०—व्याघ्र कुरंग शृगाल शशादी। कानन नर बानर चित्तादी।—सबल (शब्द०)। २. एक दैत्य का नाम। ३. वासुदेव। कृष्ण।

शृगाल^2—वि० १. कायर। भीरु। डरपोक। २. क्रूर। निष्ठुर। निर्दय। ३. खल। दुष्ट।

शृगालकंटक—संज्ञा पुं० [सं० शृगालकण्टक] भरभाँड़ या सत्यानासी नाम का कँटीला क्षुप।

शृगालकोलि—संज्ञा पुं० [सं०] उन्नाव। कर्कंधु

शृगालघंटी—संज्ञा स्त्री० [सं० शृगालघण्टी] तालमखाना। कोकिलाक्ष।

शृगालजंबु—संज्ञा पुं० [सं० शृगालजम्बु] १. गोडुंबा। गोमा ककड़ी। २. कर्कंधु। उन्नाब। ३. तरबूज।

शृगालजंबू—संज्ञा पुं० [सं० शृगालजम्बू] दे० 'शृगालजंबु' [को०]।

शृगालयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं०] दूसरे जन्म में शृगाल रूप में जन्म लेना [को०]।

शृगालरूप—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०]।

शृगालविन्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिठवन। पृश्निपर्णी।

शृगालवृंता—संज्ञा स्त्री० [सं० शृगालवृन्ता] पृश्निपर्णी [को०]।

शृगालिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विदारी कंद। २. पृश्निपर्णी। पिठवन। ३. सियारिन। गीदड़ी। ४. लोमड़ी। ५. भय से पलायन की क्रिया।

शृगाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. तालमखाना। २. विदारी कंद। ३. गीदड़ की मादा। गीदड़ी। ४. भयजन्य पलायन (को०)।

शृणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गजबाग। अंकुश। आँकुस। २. पैना।

शृत^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. क्वाथ। काढ़ा। २. औटा हुआ दूध।

शृत^2—वि० १. उद्वेलित। खौलाया हुआ। २. पकाया हुआ [को०]।

शृतपाक—वि० [सं०] पूर्णतः पक्व। पूरी तौर से पकाया हुआ [को०]।

शृतशीत—संज्ञा पुं० [सं०] औटाया हुआ पानी जो प्रायः ज्वर के रोगियों को दिया जाता है और वैद्यक के अनुसार रक्तविकार, वमन, ज्वर और संनिपात आदि रोगों का नाशक माना जाता है।

शृदर—संज्ञा पुं० [सं०] सर्प। साँप [को०]।

शृद्ध—वि० [सं०] १. आर्द्र। गीला। २. शरीर के भीतर से नीचे की ओर निकाला हुआ (वायु)। जैसे, अपान [को०]।

शृधु—संज्ञा पुं० [सं०] १. मलद्वार। गुदा। २. बुद्धि।

शृधू^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] गुदा। मलद्वार।

शृधू^{2}—वि० कुत्सित। बुरा। खराब।

शृष्टि—संज्ञा पुं० [सं०] कंस के आठ भाइयों में से एक। उ०—शृष्टि सुनामा कंक सुहु राष्ट्रपाल न्यग्रोध। शंकु तुष्टि ए शस्त्रधर योधा पूरित क्रोध।—गोपाल (शब्द०)।

शेख^1—संज्ञा पुं० [अ० शेख] [स्त्री० शेखानी] १. पैगंबर मुहम्मद के वंशजों की उपाधि। २. मुसलमानों के चार वर्गों में सबसे पहला वर्ग। ३. मुसलमान उपदेशक। इसलाम धर्म का आचार्य। ४. पीर। बड़ा बूढ़ा।

शेख (पु)^2—संज्ञा पुं०, वि० [सं० शेष] वि० 'शेष'।

शेख^3—संज्ञा पुं० [सं० शैख] पतित ब्राह्मण की संतति। शैख।

शेखचिल्ली^{1}—संज्ञा पुं० [अ० शेख + हिं० चिल्ली] १. एक कल्पित मूर्ख व्यक्ति जिसके संबंध में बहुत सी विलक्षण और हँसानेवाली कहानियाँ कही जाती हैं। २. बैठे बैठे बड़े बड़े मंसूबे बाँधनेवाला। झूठमूठ बड़ी बड़ी बातें हाँकनेवाला। ३. मूर्ख मसखरा।

शेखचिल्ली^{2}—वि० चंचल। शरारती। नटखट।

शेखड़ा—संज्ञा पुं० [सं० शैख + हिं० ड़ा (प्रत्य०)] शेख का छोकड़ा। पतित ब्राह्मण का पुत्र।

शेखर—संज्ञा पुं० [सं०] १. शीर्ष। सिर। माथा। २. सिर का आभूषण। मुकुट। किरीट। ३. सिर पर धारण की जानेवाली माला। ४. सिरा। चोटी। शिखर (पर्वत आदि का)। ५. श्रेष्ठतावाचक शब्द। सबसे श्रेष्ठ या उत्तम व्यक्ति या वस्तु। ६. टगण के पाँचवें भेद की संज्ञा (।।ऽ।)। यथा, व्रजनाथ। ७. लवग। लौंग (को०)। ८. शिग्रु मूल। सहिजन की जड़ (को०)। ९. संगीत में ध्रुव या स्थायी पद का एक भेद।

शेखरापीड़ योजन—संज्ञा पुं० [सं० शेखरापीडयोजन] चौंसठ कलाओं में से एक कला का नाम। सिर पर या केशों में फूलों अनेक प्रकार की रचना करना।

शेखरित—वि० [सं०] १. शेखरयुक्त। चूड़ायुक्त। २. जिससे शेखर या चूड़ा निर्मित हो। शेखर या चूड़ा के लिये उपयुक्त [को०]।

शेखरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बंदा। बंदाक। २. लौंग। देवी पुष्प ३. सहिजन की जड़।

शेखसद्दो—संज्ञा पुं० [अ० शेख+देश० सद्दो] मुसलमान स्त्रियों के उपास्य एक पीर जो कभी कभी भूत की तरह उनके सिर पर आते हैं।

शेखावत—संज्ञा स्त्री० [अ० शेख ?] क्षत्रियों की एक जाति। कछवाहे राजपूतों की एक शाखा। उ०—शेखावत राजा रह्यो, रह्यो पुरोहित तास। करमैती दुहिता रही, ताही की छबिरास।—रघुराज (शब्द०)।

विशेष—कहते हैं, किसी मुसलमान शेख या फकीर की दुआ से इस वंश के प्रवर्तक उत्पन्न हुए थे जिनका नाम इसी कारण शेखाजी पड़ा। जयपुर राज्य के अंतर्गत शेखावाटी नामक स्थान में इस शाखा के राजपूत बसते हैं।

शेखी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शेखी] १. गर्व। अहंकार। घमंड। २. शान। ऐंठ। अकड़। ३. अभिमान भरी बात। डींग।

मुहा०—शेखी बघारना, हाँकना या मारना=बढ़ बढ़कर बातें करना। अभिमान से भरी बातें बोलना। डींग मारना। शेखी झड़ना या निकलना=गर्व चूर्ण होना। मान ध्वस्त होना। ऐसा दंड पाना या हानि सहना कि अभिमान दूर हो जाय। शेखी की बोलना=दे० 'शेखी बघारना'। उ०—अच्छा अच्छा, बस बहुत शेखी को न बोलो।—फिसाना०, भा० २, पृ० ३४।

शेखीबाज—वि० [फ़ा० शेखी+बाज़] १. अभिमानी। घमंडी। २. डींग मारनेवाला (व्यक्ति)।

शेज†—संज्ञा पुं० [देश०] अबीरी नामक वृक्ष। (बुंदेल०)।

शेठ†—संज्ञा पुं० [हिं० सेठ] दे० 'सेठ'। उ०—तब ही शेठ शाम जी आए। प्रेमभाव से शीश नवाए।—कबीर सा०, पृ० ४७४।

शेड—संज्ञा पुं० [अं०] १. छाया। छाजन। जैसे, टिन का शेड। २. लैंप का ढक्कन। उ०—पास ही टेबिल पर रखे हुए लैंप का नीलवर्ण 'शेड' उतारकर, चिमनी निकालकर, जयंती एक झाड़न से उसे साफ करने लगी।—संन्यासी, पृ० २७।

शेणघंटा—संज्ञा स्त्री० [सं० शेणघण्टा] दंती। उदुंबरपर्णी।

शेप—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुरुष की इंद्रिय। लिंग। शिश्न। २. अंडकोश। फोता (को०)। ३. दुम। पूँछ। लांगूल (को०)।

शेपाल—संज्ञा पुं० [सं०] सेवार। शैवाल।

शेफ—संज्ञा पुं० [सं०] १. लिंग। शिश्न। २. मुष्क। अंडकोश (को०)। ३. पुच्छ। दुम (को०)।

शेफालि, शेफालिका, शेफाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] निर्गुंडी। नील निघुवार का पौधा।

शेयर—संज्ञा पुं० [अं०] १. हिस्सा। भाग। साझा। बाँट। २. किसी कारबार में लगी हुई पूँजी का हिस्सा जो उसमें शामिल होनेवाला हर एक आदमी लगावे।

शेयर होल्डर—संज्ञा पुं० [अं०] वह जिसके पास संमिलित मूलधन या पूँजी से चलनेवाले किसी कारबार या कंपनी के 'शेयर' या 'हिस्से' हों। हिस्सेदार। अंशी। जैसे,—बैंक के 'शेयर होल्डर', कंपनी के 'शेयर होल्डर'।

शेर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] [स्त्री० शेरनी] १. बिल्ली की जाति का सबसे भयंकर प्रसिद्ध हिंसक पशु। बाघ। व्याघ्र। नाहर।

यौ०—शेरबबर, शेरबच्चा, शेरमद।

मुहा०—शेर का कान=भाँग छानने का कपड़ा। (भंगड़)। (चिराग) शेर करना=बत्ती बढ़ाकर रोशनी तेज करना। शेर का बाल=सिंह की मूँछ के बाल। शेर की खाला या मौसी=बिल्ली। मार्जार। शेर के मुँह में जाना=प्राणसंकट की जगह जाना। शेर के मुंह से शिकार छीनना=अत्यंत बहादुरी करके अपने से प्रबल से कोई वस्तु जबरन् ले लेना। शेर बकरी का एक घाट पर या एक साथ पानी पीना=गरीब अमीर सबके साथ समान न्याय करना। ठीक ठीक इंसाफ करना। शेर होना=निर्भय और धृष्ट होना। डर या दाब में न रहना। स्वेच्छाचारी और उद्दंड होना।

२. अत्यंत वीर और साहसी पुरुष। बड़ा बहादुर आदमी। (लाक्षणिक)।

शेर^{२}—संज्ञा पुं० [अ०] फारसी, उर्दू आदि की कविता के दो चरण।

शेर गुलाबी—संज्ञा पुं० [फ़ा०] गहरा गुलाबी रंग।

शेरदरवाजा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेरदरवाज़ा] सिंहद्वार।

शेरदहाँ^{१}—वि० [फ़ा०] १. जिसका मुंह शेर का सा हो। २. जिसके छोरों पर शेर का मुंह बना हो।

शेरदहाँ^{२}—संज्ञा पुं० १. वह जिसकी घुंडी शेर के मुँह के आकार की बनी हो। २. वह मकान जो आगे की ओर चौड़ा और पीछे की ओर पतला और संकरा हो। ३. पुराने ढंग की एक प्रकार की बंदूक।

शेरदिल—वि० [फ़ा०] बहादुर। साहसी। निर्भय [को०]।

शेरनर—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेर+सं० नर] वीर पुरुष। उ०—नेकबख्त दिलपाक सखी जवाँमर्द शेरनर।—अकबरी०, पृ० २५।

शेरपंजा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेर+हिं० पंजा] शेर के पंजे के आकार का एक अस्त्र। बघनहा।

शेरबकरी—संज्ञा स्त्री० [हिं०] बच्चों का एक खेल।

शेरबचा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेरबचह्] दे० 'शेरबच्चा'।

शेरबच्चा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेर+हिं० बच्चा] १. शेर का बच्चा। २. वीरपुत्र। पराक्रमी पुरुष। बहादुर आदमी। ३. एक प्रकार की छोटी बंदूक।

शेरबबर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] सिंह। केसरी। उ०—चूहा शेरबबर से विरुद्धता कर सके ऐसे ही ये मूर्ख मनुष्यों के ध्यान हैं।—कबीर मं०, पृ० २०६।

शेरमर्द—वि० [फ़ा०] बहादुर। वीर।

शेरमर्दी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] बहादुरी। वीरता।

शेरवानी—संज्ञा स्त्री० [देश०] अंग्रेजी ढंग की काट का एक प्रकार का अंगा ।

विशेष—यह घुटनों तक लंबा होता है। इसमें बालाबर, कली और चौबगले काट काटकर नहीं लगाए जाते। आगे जिस ओर बटन लगाया जाता है, उसके नीचे का आधा भाग अधिक चौड़ा होता है जिसमें बंद या हुक लगाकर दूसरे भाग के नीचे करके बाँधते या बंद करते हैं। मुसलमानों में इसका रवाज अधिक है।

शेल(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शल्य] दे० 'सेल'।

शेलक—संज्ञा पुं० [सं०] लिसोड़ा। लिभेरा। बहुवार वृक्ष।

शेलमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीफल। बिल्व वृक्ष। २. एक प्रकार का फल।

शेलु—संज्ञा पुं० [सं०] १. लिसोड़ा। लभेरा। २. बनमेथी नामक शाक।

शेलुक—संज्ञा पुं० [सं०] १. लिसोड़ा। २. मेथी। ३. लोध्र वृक्ष।

शेलुका—संज्ञा पुं० [सं०] बनमेथी।

शेलुष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लिसोड़ा।

शेवंतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] गुलदाउदी।

शेव[१]—संज्ञा पुं० [सं०] अभ्युदय। उन्नति। वृद्धि। २. ऊँचाई। ३. धन संपत्ति। ४. शिश्न। लिंग। ५. मछली। ६. सर्प। ७. अग्नि का एक नाम। ८. सोम का एक नाम (को०)।

शेव[२]—संज्ञा पुं० [अं०] हजामत बनाने का काम। क्षौर कर्म।

क्रि० प्र०—करना।—कराना।—होना।

शेवधि—संज्ञा पुं० [सं०] १. निधि। खजाना। २. कुबेर की नौ निधियों में एक का नाम (को०)।

शेवल—संज्ञा पुं० [सं०] सेवार। शैवाल।

शेवलिनि, शेवलिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] (जिसमें सेवार हो) नदी। शैवलिनी।

शेवा[१]—संज्ञा स्त्री० [सं०] लिंग का आकार। लिंग [को०]।

शेवा[२]—संज्ञा पुं० [फ़ा० शेवह] ढंग। तरीका। उ०—ये मातम की खिजाँ का देख शेवा। उरूसे बाग हो गई आज बेवा।—दक्खिनी०, पृ० १९१।

शेवाल—संज्ञा पुं० [सं०] सेवार। शैवाल।

शेवाली—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाशमांसी। जटामासी का एक भेद।

शेष[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो कुछ भाग निकल जाने पर रह गया हो। बची हुई वस्तु। बाकी। २. वह शब्द जो किसी वाक्य का अर्थ करने के लिये ऊपर से लगाया जाय। अध्याहार। ३. बड़ी संख्या में से छोटी संख्या घटाने से बची हुई संख्या। बाकी। ४. समाप्ति। अंत। खातमा। ५. परिणाम। फल। ६. स्मारक वस्तु। यादगार की चीज। ७. मरण। नाश। ८. पुराणानुसार सहस्र फनों के सर्पराज जो पाताल में हैं और जिनके फनों पर पृथ्वी ठहरी है।

विशेष—ये 'अनंत' कहे गए हैं और विष्णु भगवान् क्षीर सागर में इन्हीं के ऊपर शयन करते हैं। विष्णुपुराण में शेष, वासुकि और तक्षक तीनों कद्रु के पुत्र माने गए हैं। पाताल के राजा कहीं वासुकी कहे गए हैं और कहीं शेष। कुछ पुराणों के अनुसार गर्ग ऋषि ने ज्योतिष विद्या इन्हीं से पाई थी। लक्ष्मण और बलराम शेष के अवतार कहे गए हैं।

९. लक्ष्मण। उ०—सोहत शेष सहित रामचंद्र कुश लव जीति कै समर सिंधु साँचेहु सुधारचो है।—केशव (शब्द०)। १०. बलराम। ११. एक प्रजापति का नाम। १२. दिग्गजों में से एक। १३. अनंत। परमेश्वर। १४. पिंगल में टगण के पाँचवें भेद का नाम। १५. छप्पय छंद के पचीसवें भेद का नाम जिसमें ४६ गुरु, ६० लघु, कुल १०६ वर्ण या १५२ मात्राएँ होती हैं। १६. हनन। घातन। वध (को०)। १७. प्रसाद (को०)। १८. हाथी। १९. जमालगोटा।

शेष[२]—वि० १. जो कुछ भाग निकल जाने पर रह गया हो। बचा हुआ। बाकी। उ०—यह जीवन का निमेष था, पर आगे यह काल शेष था।—साकेत, पृ० ३४९। २. अंत को पहुँचा हुआ। समाप्त। खतम। जैसे,—कार्य शेष होना। उ०—(क) बातैं करत शेष निशि आई ऊधो गए अस्नान।—सूर (शब्द०)। (ख) कर स्नान-शेष, उन्मुक्त केश, सासु जो रहस्य स्मित सुवेश, आईं करने को बातचीत।—अनामिका, पृ० १२५। ३. अतिरिक्त। और दूसरे।

शेषक—संज्ञा पुं० [सं०] शेषनाग [को०]।

शेषकाल—संज्ञा पुं० [सं०] अंतिम समय। मृत्युकाल [को०]।

शेषजाति—संज्ञा स्त्री० [सं०] गणित में बचे हुए अंक को लेने की क्रिया।

शेषता—संज्ञा स्त्री० [सं०] शेष का भाव या क्रिया। शेषत्व [को०]।

शेषत्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपकारिता। २. दे० 'शेषता' [को०]।

शेषधर—संज्ञा पुं० [सं०] (शेष अर्थात् सर्प को धारण करनेवाले) शिव जी। उ०—शेषधरु नाग मुख ब्रह्म विष्णु इनको कलेवर तो काल को कवरु है।—केशव (शब्द०)।

शेषनाग—संज्ञा पुं० [सं०] सर्पराज। शेष। विशेष दे० 'शेष'—८।

शेषपति—संज्ञा पुं० [सं०] व्यवस्थापक। मैनेजर [को०]।

शेषभुक्—वि० [सं०] उच्छिष्टभोजी। भोजन से बचे अंश को खानेवाला।

शेषभूषण—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम [को०]।

शेषभोजन—संज्ञा पुं० [सं०] उच्छिष्ट वस्तु का भक्षण [को०]।

शेषर(पु)†—संज्ञा पुं० [सं० शेखर] दे० 'शेखर'।

शेषराज—संज्ञा पुं० [सं०] एक वर्णवृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में दो मगण होते हैं। विद्युल्लेखा।

शेषरात्रि—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात का पिछला पहर। रात्रि का अंतिम याम।

शेषव—संज्ञा पुं० [सं०] कार्य द्वारा कारण का निश्चय। एक अनुमान [को०]।

शेषवत्—संज्ञा पुं० [सं०] न्याय में अनुमान का एक भेद। कार्य को देखकर कारण का निश्चय। जैसे—नदी की बाढ़ देखकर ऊपर हुई वर्षा का अनुमान।

शेषशयन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शेषशायी'। उ०—लख शंकाकुल हो गए अतुल बल शेषशयन।—अपरा०, पृ० ४१।

शेषशायी—संज्ञा पुं० [सं० शेषशायिन्] शेष नाग पर शयन करनेवाले विष्णु।

विशेष—पुराणों के अनुसार प्रलय काल में विष्णु भगवान् तीनों लोकों को अपने पेट में धारण कर क्षीर सागर में शेषनाग की शैया बनाकर उसपर शयन करते हैं। कुछ काल के उपरांत उनकी नाभि से एक कमल निकलता है जिसपर ब्रह्मा की उत्पति होती है और सृष्टि का क्रम फिर से चलता है।

शेषांश—संज्ञा पुं० [सं०] १. बचा हुआ अंश। अवशिष्ट भाग। २. अंतिम अंश। आखिरी भाग।

शेषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] देवता को चढ़ी हुई वस्तु जो दर्शकों या उपासकों को बाँटी जाय। प्रसाद।

शेषाचल—संज्ञा पुं० [सं०] दक्षिण का पर्वत। उ०—मुरि मुनीश शेषाचल माहो। बैठे आगे धरि पटकाहीं।—रघुराज (शब्द०)।

शेषावस्था—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृद्धावस्था [को०]।

शेषाहि—संज्ञा पुं० [सं०] शेषनाग [को०]।

शेषोक्त—वि० [सं०] अंत में कहा या लिखा हुआ।

शेष्य—वि० [सं०] उपेक्षणीय। त्याज्य [को०]।

शै—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. चीज। वस्तु। पदार्थ द्रव्य। उ०—(क) सब करामत उस कँकर ते है मुझे। जे मँगूँ सो होवे हाजिर शै मुझे।—दक्खिनी०, पृ० १८४। (ख) लगा के बर्फ में साकी सुराहिए मै ला। जिगर की आग बुझे जल्द जिससे वह शै ला।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २६६। २. बात (को०)। ३. अभिवृद्धि। बढ़ती (को०)।

शैक्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिक्य। २. झोका। सिकहर। छीका। २. वर्तन जो छीके पर लटकाया हुआ हो (को०)।

शैक्य^{2}—वि० १. जो सिकहर पर लटकाया हो। २. धारदार। चोखा। नोकदार। नुकीला [को०]।

शैक्यायस—संज्ञा पुं० [सं०] इस्पात लोहा।

शैक्ष^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. आचार्य के निकट रहकर शिक्षा प्राप्त करनेवाला मनुष्य। २. शिक्षा देने योग्य। वह शिष्य जो प्रारंभिक शिक्षाप्राप्त कर रहा हो।

शैक्ष^{2}—वि० शस्त्रशास्त्रादि शिक्षा संपन्न। शिक्षा के अनुकूल व्यवहारयुक्त [को०]।

शैक्षिक—संज्ञा पुं० [सं०] शिक्षा विषय को जाननेवाला। 'शिक्षा' का ज्ञाता।

शैक्ष्य—संज्ञा पुं० [सं०] पांडित्य। पाटव। नैपुण्य [को०]।

शैख^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] पतित ब्राह्मण की संतान। व्रात्य (स्मृति)।

शैख^{2}—संज्ञा पुं० [अ० शेख] दे० 'शेख^{1}' [को०]।

शैखरिक, शैखरेय—संज्ञा पुं० [सं०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा। लटजीरा।

शैखिन—वि० [सं०] शिखी संबधी। मयूरसंबंधी। मयूर का [को०]।

शैख्य—वि० [सं०] जिसमें शिखा अर्थात् नोक हो। नोकदार। नुकीला [को०]।

शैग्रव—संज्ञा पुं० [सं०] सहिंजन के बीज। शिग्रुबीज।

शैघ्र, शैघ्र्य^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] शीघ्रता। जल्दी।

शैघ्र, शैघ्र्य^{2}—वि० ज्योतिष के योग से संबंध रखनेवाला।

शैतान—संज्ञा पुं० [अ०] १. ईश्वर के समान सन्मार्ग का विरोध करनेवाली शक्ति या देवता। तमोगुणमय देवता जो मनुष्यों को बहकाकर धर्ममार्ग से भ्रष्ट करने के प्रयत्न में रहा करता है।

विशेष—यहूदी, ईसाई और इसलाम तीनों पैगंबरी मतों में दो परस्पर विरुद्ध शक्तियाँ मानी गई हैं—एक सत् दूसरी असत्। सत्स्वरूप ईश्वर के मंगलविधान में, असत् शक्ति सदा विघ्न डालने में तत्पर रहती है। आदि पैगंबर मूसा ने 'तौरेत' में लिखा है कि पहले आदम और हौवा ईश्वर की आज्ञा में रहकर बड़े आनंद से स्वर्ग के उद्यान में रहा करते थे। शैतान ने हौवा को बहकाकर ज्ञान का वह फल खाने के लिये कहा जिसका ईश्वर ने निषेध किया था। इस अपराध पर आदम और हौवा स्वर्ग से निकाल दिए गए और इस पृथ्वी पर आए। इन्हीं से यह मनुष्यसृष्टि चली। ऐसा लिखा है कि शैतान भी पहले ईश्वर या खुदा का एक फरिश्ता (पारिषद) था। जब ईश्वर ने आदम या मनुष्य उत्पन्न किया, तब वह ईर्ष्यावश ईश्वर से विद्रोही हो गया और उसकी सृष्टि में उत्पात करने लगा। ईश्वर ने उसे स्वर्ग से निकालकर नरक में भेज दिया जहाँ का वह राजा हुआ। सत् और असत् इन दो नित्य शक्तियों की भावना यहूदियों के पैगंबर मूसा को खाल्दियों (बाबुलवालों) और पारसीकों आदि प्राचीन सभ्य जातियों से मिली थी। जरतुश्त ने भी अवस्ता में अहुरमज्द (सत् शक्ति) और अह्रमान (असत् शक्ति) दो शक्तियाँ कही हैं।

मुहा०—शैतान का कान में फूँकना = शैतान का बहकाना। शैतान का धक्का = दुर्वृत्ति। बुरी प्रेरणा। शैतान का बच्चा = बहुत दुष्ट आदमी। शैतान की आंत = बहुत लंबी वस्तु। शैतान की खाला = बहुत दुष्ट या पाजी औरत। (गाली)। शैतान की सूरत = अघ रूप। राक्षस की आकृति का।

२. दुष्ट देवयोनि। भूत। प्रेत।

मुहा०—शैतान उतरना = (१) भूतप्रेतादि का आवेश शांत होना। (२) क्रोधावेश दूर होना। (३) शरारतीपन न रहना। शैतान चढ़ना या लगना = (१) भूत प्रेत का आवेश होना। प्रेत का भाव पड़ना। (२) क्रोधावेश से आगबबूला हो जाना। शैतान का कान काटना = शैतान से भी बढ़ जाना। (सिर पर) शैतान

सवार होना। (१) किसी का अत्यंत क्रुद्ध होना। (२) किसी बात की हठ पकड़ना। जिद चढ़ना। (३) शैतानी करना।

यौ०—शैतानसीरत = शैतान की प्रकृतिवाला। महादुष्ट। शैतान सूरत = शैतान की आकृति का। डरावना।

३. बहुत ही दुष्ट या क्रूर मनुष्य। घोर अत्याचारी। (लाक्षणिक)। ४. बहुत ही नटखट मनुष्य। बहुत शरारती आदमी। (लाक्षणिक)। ५. क्रोध। तामस। गुस्सा। ६. झगड़ा। टंटा। फसाद। उपद्रव।

मुहा०—शैतान उठाना = झगड़ा खड़ा करना। उपद्रव मचाना।

शैतानी¹—संज्ञा स्त्री० [अ० शैतान] दुष्टता। शरारत। पाजीपन।

शैतानी²—वि० १. शैतान संबंधी। शैतान का। जैसे,—शैतानी गोल। २. नटखटी से भरा। दुष्टतापूर्ण। जैसे,—शैतानी हरकत। ३. निकृष्ट। बुरा। पापमय (को०)।

शैत्य—संज्ञा पुं० [सं०] शीत। ठंढक।

शैथिलक—वि० [सं०] आलसी। मंद। ढीलाढाला [को०]।

शैथिल्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिथिल होने का भाव। शिथिलता। ढिलाई। २. तत्परता का अभाव। फुरती का न होना। सुस्ती। ३. दीर्घसूत्रता (को०)। ४. दुर्बलता। भीरुता (को०)। ५. अस्थिरता। चंचलता (को०)। ६. दृष्टि की शून्यता या रिक्तता (को०)। ७. अवहेला। अवज्ञा। उपेक्षा (को०)।

शैदा—वि० [फ़ा०] आशिक। आसक्त। मुग्ध। उ०—तुझ हुस्न आलमताब का जो आशिको शैदा हुआ। हर खूबरू के हुस्न के जलवा सूं बेपरदा हुआ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ८। २. बहुत अधिक इच्छुक या आतुर (को०)। ३. उन्मत्त। पागल (को०)।

यौ०—शैदाए इल्म = ज्ञान प्राप्त करने का अभिलाषी। शैदाए वतन = देशभक्त। शैदाए हुस्न = सौंदर्य प्रेमी।

शैनेय—संज्ञा पुं० [सं०] शिनि का पुत्र सात्यकि नामक वीर यादव, जो कृष्ण का सारथी था।

विशेष—यह अर्जुन का शिष्य था और महाभारत की लड़ाई में भूरिश्रवा को इसी ने मारा था। यादवों के पारस्परिक मुसलयुद्ध में यह मारा गया था।

शैन्य—संज्ञा पुं० [सं०] शिनि के वंशज जो क्षत्रिय से ब्राह्मण हो गए थे।

शैब्य—वि० संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शैब्य' [को०]।

शैरस—संज्ञा पुं० [सं०] पलंग या चारपाई का सिरहाना [को०]।

शैरिक—संज्ञा पुं० [सं०] नीले फूल की कटसरैया।

शैरीयक, शैरेयक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शैरिक' [को०]।

शैल¹—वि० [सं०] १. शिला संबंधी। पत्थर का। २. पथरीला। चट्टानी। ३. कड़ा। कठोर।

शैल²—संज्ञा पुं० १. पर्वत। पहाड़। उ०—दीन्हों डारि शैल ते भू पर पुनि जब भीतर डारचो।—सूर (शब्द०)। २. चट्टान। शिला। ३. छरीला। शैलेय। ४. रसौत। रसवत। ५. शिलाजीत। ६. लिसोड़ा। बहुवार। ७. बाँध। बंधा (को०)। ८. एक प्रकार का अंजन। सुरमा (को०)। ९. पत्थरों का ढेर। प्रस्तरनिचय। प्रस्तरसमूह (को०)। १०. सात की संख्या का बोधक शब्द (को०)।

शैलकंपी—संज्ञा पुं० [सं० शैलकम्पिन्] १. स्कंद का एक अनुचर।

शैलक—संज्ञा पुं० [सं०] १. छरीला। शैलेय। २. गूगुल (को०)।

शैलकटक—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ की ढाल।

शैलकन्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती।

शैलकुमारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती। उ०—पुनि चढ़ि नंदी चले पुरारी। पाणि जोरि तब शैलकुमारी।—रघुराज (शब्द०)।

शैलकूट—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ की चोटी [को०]।

शैलगंग, (पु) शैलगंगा—संज्ञा स्त्री० [सं० शैलगङ्गा] गोवर्धनपर्वत की एक नदी जिसमें श्रीकृष्ण ने सब तीर्थों का आवाहन किया था। उ०—इन्हहिं आदि तीरथ सकल शैलगंग प्रति आंहि। जेहि दरसे परसे परम गति कहँ मानव जाहिं।—गोपाल (शब्द०)।

शैलगंध—संज्ञा पुं० [सं० शैलगन्ध] शबर चंदन। बर्बर चंदन।

शैलगर्भाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सिंहली पीपल। २. पखानभेद। पत्थरचूर।

शैलगुरु¹—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय [को०]।

शैलगुरु²—वि० पहाड़ जैसा भारी [को०]।

शैलज—संज्ञा पुं० [सं०] १. पथरफूल। छरीला। २. शिलाजतु। शैलाज।

शैलजन—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ी मनुष्य [को०]।

शैलजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पर्वत से उत्पन्न। पार्वती। दुर्गा। २. सिंहपिप्पली। ३. गजपिप्पली। ४. पाषाणभेद।

शैलजात—संज्ञा पुं० [सं०] छरीला। पथरफूल।

शैलजाता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गोल मिर्च। काली मिर्च। २. गजपिप्पली।

शैलतटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पहाड़ की तराई। उ०—जब वह मेरे साथ टहलने शैलतटी में जाता था। अपनी अमृतमय वाणी से प्रेमसुधा बरसाता था।—श्रीधर (शब्द०)।

शैलतनया—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती [को०]।

शैलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शैलत्व'।

शैलत्व—संज्ञा पुं० [सं०] शैल होने का भाव [को०]।

शैलदुहिता—संज्ञा स्त्री० [सं० शैलदुहितृ] पार्वती।

शैलधन्वा—संज्ञा पुं० [सं० शैलधन्वन्] महादेव। शिव।

शैलधर—संज्ञा पुं० [सं०] गिरिधर। श्रीकृष्ण।

शैलधातु—संज्ञा पुं० [सं०] खनिज द्रव्य। धातु [को०]।

यौ०—शैलधातुज = शिलाजतु।

शैलधातुक, शैलधातुज—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजतु। शिलाजीत।

शैलनंदिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शैलनन्दिनि] पार्वती।

शैलनिर्यास—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजतु। शिलाजीत।

शैलपति—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय पहाड़।

शैलपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बेल। बिल्व वृक्ष।

शैलप्रतिमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शिला पर चित्रित, अंकित वा टंकित आकृति [को०]।

शैलपुत्री—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पार्वती। २. नौ दुर्गाओं में से एक दुर्गा का नाम। ३. गंगा नदी।

शैलपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजतु। शिलाजीत।

शैलबाला—संज्ञा स्त्री० [सं०] छोटा झरना। निर्झरिणी। निर्झरी।

शैलबीज—संज्ञा पुं० [सं०] भिलावाँ। भेला।

शैलभित्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] पत्थर को तोड़ने या काटने का औजार। टाँकी। छेनी [को०]।

शैलभेद—संज्ञा पुं० [सं०] पखानभेद।

शैलमल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुटज। कोरैया।

शैलमृग—संज्ञा पुं० [सं०] जंगली बकरा [को०]।

शैलरंध्र—संज्ञा पुं० [सं० शैलरन्ध्र] गुफा।

शैलराज—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय पर्वत।

यौ०—शैलराजतनया, शैलराजपुत्री, शैलराजसुता = पार्वती।

शैलरोही—संज्ञा पुं० [सं०] मोगरा चावल।

शैलवल्कला—संज्ञा पुं० [सं०] पाषाणभेद। श्वेत पाषाण।

शैलशिखर—संज्ञा पुं० [सं०] पर्वत की चोटी [को०]।

शैलशिविर—संज्ञा पुं० [सं०] समुद्र। सागर।

विशेष—कहते हैं, जब इंद्र ने पर्वतों पर चढ़ाई की थी, तब कुछ पर्वत समुद्र में जा छिपे थे। इसी से समुद्र का यह नाम पड़ा है।

शैलशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ की चोटी।

शैलशृंग—संज्ञा पुं० [सं० शैलशृङ्ग] दे० 'शैलकूट' [को०]।

शैलसंधि—संज्ञा स्त्री० [सं० शैलसन्धि] पर्वत के बीच की संधि। दर्रा। घाटी [को०]।

शैलसंभव—संज्ञा पुं० [सं० शैलसम्भव] शिलाजीत।

शैलसंभूत—संज्ञा पुं० [सं० शैलसम्भूत] गेरू।

शैलसार—वि० [सं०] पर्वत के समान अचल वा स्थिर। दृढ़ [को०]।

शैलसुता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पार्वती। २. ज्योतिष्मती (को०)।

शैलसेतु—संज्ञा पुं० [सं०] प्रस्तर निर्मित पुल या बाँध [को०]।

शैलांश—संज्ञा पुं० [सं०] एक देश का नाम [को०]।

शैलाख्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. पथरफूल। छरीला। २. शिलाजीत।

शैलाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ की चोटी [को०]।

शैलाज—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शैलज'।

शैलाट—संज्ञा पुं० [सं०] १. पहाड़ी आदमी। परवतिया। २. किरात। ३. सिंह। ४. देवलक। देवल का पुजारी (को०)। ५. स्फटिक। बिल्लौर।

शैलादि—संज्ञा पुं० [सं०] शिव के गण, नंदी।

शैलाधारा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पर्वतों का आधार, पृथिवी [को०]।

शैलाधिप, शैलाधिराज—संज्ञा पुं० [सं०] हिमालय पर्वत।

यौ०—शैलाधिपतनया, शैलाधिराजतनया = पार्वती।

शैलाभ—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वेदेव में से एक।

शैलाली—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाली। नट।

शैलासन—संज्ञा पुं० [सं०] १. बैठने का एक ढंग। २. लकड़ी या पत्थर का बना हुआ एक प्रकार का आसन [को०]।

शैलासा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शैलपुत्री। पार्वती [को०]।

शैलाह्व—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत।

शैलिक—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत।

शैलिक्य—संज्ञा पुं० [सं०] सर्वलिंगी। वह व्यक्ति जिसके मन, वचन, कर्म में ऐक्य न हो। पाखंडी व्यक्ति।

शैली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चाल। ढब। ढंग। २. परिपाटी। प्रणाली। तर्ज। तरीका। ३. रीति। प्रथा। रस्म रिवाज। ४. लिखने का ढंग। वाक्यरचना का प्रकार। विचारों या भावों को अभिव्यक्त करने की रीति या कौशल। उ०—शैली श्रेष्ठ कवीन की, गुरु को गुरु है जौन। ताको चरित बखानि कै, वहै होय मति तौन।—रघुराज (शब्द०)। ५. कठोरता। कड़ाई। सख्ती। ६. व्याकरण संबंधी या व्याकरण के सूत्र वा वचनों की संक्षिप्त विवृति (को०)। ७. प्रस्तरमूर्ति। शिलाप्रतिमा (को०)।

शैलीकार—संज्ञा पुं० [सं० शैली + कार] कला, साहित्य में विशिष्ट शैली का निर्माण या उनकी विशेष ढंग से अभिव्यक्ति करनेवाला व्यक्ति।

शैलू[1]—संज्ञा पुं० [देश०] लिसोड़ा। लभेरा।

शैलू[2]—संज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की चटाई जिसका व्यवहार दक्षिण और गुजरात में होता है।

शैलूक—संज्ञा पुं० [सं०] १. बहुवार वृक्ष। लिसोड़ा। लभेरा। २. कमलकंद। भसींड़।

शैलूकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कमलकंद। भसींड़।

शैलूष—संज्ञा पुं० [सं०] १. अभिनय करनेवाला। नाटक खेलनेवाला। सूत्रधार। नट। २. गंधर्वों का स्वामी, रोहितण। (रामायण)। ३. धूर्त। ४. बिल्व वृक्ष। बेल। ५. वह जो संगीत में ताल देता हो (को०)। ६. तालधारक (को०)।

शैलूषभूषण—संज्ञा पुं० [सं०] हरताल।

शैलूषिक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शैलूषिकी] नट वृत्ति से जीवन निर्वाह करनेवाली एक जाति। शिलाली। नट।

शैलूषिकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नटी। शैलूष जाति की स्त्री [को०]।

शैलेंद्र—संज्ञा पुं० [सं० शैलेन्द्र] हिमालय।

यौ०—शैलेंद्रजा, शैलेंद्रदुहिता, शैलेंद्रसुता—(१) हिमालय की पुत्री। पार्वती। (२) गंगा।

शैलेंद्रस्थ—संज्ञा पुं० [सं० शैलेन्द्रस्थ] भोजपत्र। भूर्जपत्र का वृक्ष।

शैलेय^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शैलेयी] १. पत्थर का । पथरीला । २. पहाड़ी । ३. पत्थर से उत्पन्न । ४. शिलातुल्य । पत्थर की तरह कठोर (को०) । ५. जो डिगाया न जा सके । अचल ।

शैलेय^2—संज्ञा पुं० १. दे० 'छरीला' । २. शिलाजीत । ३. मूसली । तालपर्णी । ४. सेंधा नमक । ५ सिंह । ६. भ्रमर ।

शैलेयक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शैलेय' ।

शैलेयी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती । शैलपुत्री ।

शैलेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] शिव । महादेव ।

शैलोदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाल्मीकि रामायण और महाभारत में वर्णित उत्तर दिशा की एक नदी ।

शैलोद्भवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाषाणभेद । क्षुद्र पाषाण ।

शैल्य^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शैल्या] १. पत्थर का । २. पथरीला । ३. कड़ा । कठोर ।

शैल्य^2—संज्ञा पुं० शिलापन । कड़ापन । कठोरता [को०] ।

शैव^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शैवी] शिव संबंधी । शिव का । जैसे,—शैव दर्शन ।

शैव^2—संज्ञा पुं० १. शिव का अनन्य उपासक । महादेव का भक्त ।

विशेष—उपासनाभेद से आधुनिक हिंदू धर्म में तीन मुख्य संप्रदाय प्रचलित हैं—शैव, शाक्त और वैष्णव । शैव लोग परमेश्वर को शिवरूप ही मानते हैं । उनके अनुसार शिव ही सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार तीनों करते हैं । पूजा के लिये शिव की प्रतिमा नहीं बनाई जाती, लिंग ही उनका प्रतीक माना जाता है । (विशेष दे० 'लिंग') । शैव लोग शरीर में भस्म लगाते, गले में रुद्राक्ष की माला पहनते और माथे पर त्रिपुंड (तीन आड़ी रेखाएँ) लगाते हैं । शैवों के अनेक भेद हैं जो अधिकतर दक्षिण में पाए जाते हैं । काश्मीर में भी शैव मत का विशेष रूप से प्रचार था । शंकराचार्य के अनुयायी अद्वैतवादी भी उपासनाक्षेत्र में शैव ही होते हैं । शिव की उपासना भारत तथा उसके निकटवर्ती देशों में बहुत प्राचीन काल में भी प्रचलित थी । नैपाल, तिब्बत आदि में बौद्ध धर्म के साथ उसमें मिली हुई शिव की उपासना बहुत दिनों से प्रचलित चली आती है । ईसा के पूर्व के सिक्कों में भी त्रिशूल, नंदी आदि पाए जाते हैं । ऐसे सिक्के खुरासान तक में पाए गए हैं । शकों और हूणों में भी शैव धर्म प्रचलित था ।

२. पाशुपत अस्त्र । ३. धतूरा । ४. वासक । अडूसा । ५. शुभ । कल्याण । शुभता (को०) । ६. आचारभेद तंत्र के अनुसार देवी की उपासना का एक विशेष आचार (को०) । ७. शिवपुराण (को०) । ८. तंत्र का एक ग्रंथ (को०) । ९. शैवाल । १०. पाँचवें कृष्ण । वासुदेव । (जैन) ।

शैवपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] बिल्व वृक्ष, जिसकी पत्तियाँ शिव पर चढ़ती हैं । बेल ।

शैवपुराण—संज्ञा पुं० [सं०] शिवपुराण ।

शैवमल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] लिंगिनी नाम की लता । पँचगुरिया ।

शैवल—संज्ञा पुं० [सं०] १. पद्माख । पद्मकाष्ठ । पदुमाख । २. सेवार । ३. एक पर्वत । ४. एक नाग का नाम । (बौद्ध) ।

शैवलिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] नदी ।

शैवाल—संज्ञा पुं० [सं०] सिवार । सेवार ।

शैवी^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पार्वती । २. मनसा नाम की देवी । ३. कल्याण । मंगल ।

शैवी^{2}—वि० स्त्री० शिव संबंधिनी । शिव की । जैसे,—शैवी उपासना, शैवी शक्ति ।

शैव्य^1—वि० [सं०] १. शिव संबंधी । २. शिवी नरेश या जनपद संबंधी ।

शैव्य^2—संज्ञा पुं० १. पांडवों का एक सेनापति । २. श्रीकृष्ण का एक घोड़ा । ३. अश्व । घोड़ा (को०) ।

शैव्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. चंडकौशिक के अनुसार अयोध्या के सत्यव्रती राजा हरिश्चंद्र की रानी का नाम । २. महाभारत के अनुसार प्रतीप नरेश की पत्नी का नाम (को०) । ३. सूर्यवंशी राजा सगर की पत्नी जिसका पुत्र असमंज था (को०) ।

शैशव^1—वि० [सं०] शिशु संबंधी । बच्चों का । २. बाल्यावस्था संबंधी ।

शैशव^2—संज्ञा पुं० १. अनजान बालक की अवस्था । बचपन । २. बच्चों का सा व्यवहार । लड़कपन ।

शैशिर^1—वि० [सं०] १. शिशिर संबंधी । २. शिशिर में उत्पन्न । ३. बर्फ से युक्त । हिमण्य । बर्फीला (को०) ।

शैशिर^2—संज्ञा पुं० १. ऋग्वेद की एक शाखा के प्रवर्तक एक ऋषि का नाम । २. कृष्ण चातक पक्षी । काले रंग का पपीहा ।

शैशिरीय—वि० [सं०] दे० 'शैशिर^2' ।

शैशिरीय (शाखा)—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऋग्वेद की साकल शाखाओं में से एक ।

शैशुनाग—संज्ञा पुं० [सं०] मगध के प्राचीन राजा शिशुनाग का वंशज ।

शैशुमार—संज्ञा पुं० [सं०] शिशुमार संबंधी ।

शैश्न्य—संज्ञा पुं० [सं०] संभोग । मैथुन । रति [को०] ।

शैष—संज्ञा पुं० [सं०] शिशिर ऋतु । ठंढ का मौसिम [को०] ।

शैषिक—वि० [सं०] शेष या शेषांश संबंधी [को०] ।

शैसीक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम ।

शोक—संज्ञा पुं० [सं०] इष्ट के नाश और अनिष्ट की प्राप्ति से उत्पन्न मनोविकार । किसी प्रिय व्यक्ति के अभाव या पीड़ा आदि से अथवा दुःखदायी घटना से उत्पन्न क्षोभ । रंज । गम ।

विशेष—साहित्य में 'शोक' नौ स्थायी भावों में से एक है और करुण रस का मूल है । पुराणों में 'शोक' मृत्यु का पुत्र कहा गया है ।

यौ०—शोककर्षित। शोकचर्या। शोकनाश। शोकनिहित, शोकपरायण, शोकपरिप्लुत, शोकपीड़ित, शोकविकल, शोकविह्वल, शोकरुग्ण, शोक संतप्त = शोक से ग्रस्त। शोक से व्याकुल।

शोककर्षित—वि० [सं०] शोक से पीड़ित। शोक से दुखी [को०]।

शोककारक—वि० [सं०] शोक उत्पन्न करनेवाला।

शोकघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] अशोक वृक्ष।

शोकचर्चा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शब्द की चरचा करना। शोक व्यक्त करना [को०]।

शोकनाश, शोकनाशक, शोकनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. अशोक वृक्ष। २. वह जिससे शोक का नाश हो।

शोकसारण—वि० [सं० शोक + सारण] शोक या दुःख को दूर करनेवाला। उ०—शोकसारण करण कारण, तरण तारण विष्णु शंकर।—अर्चना, पृ० ८८।

शोकसूचक—वि० [सं०] शोक या दुःख को बतानेवाला। शोक को व्यक्त करनेवाला।

शोकस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] शोक का कारण [को०]।

शोकहर—संज्ञा पुं० [सं०] एक छंद का नाम जिसके प्रत्येक पद में ८, ८, ८, ६ के विश्राम से (अंत गुरु सहित) तीस मात्राएँ होती हैं। प्रत्येक पद से दूसरे, चौथे और छठे चौकल में जगण न पड़े। इसको शुभांगी भी कहते हैं।

शोकहारी—संज्ञा स्त्री० [सं०] बन बर्बरी। अजगंधा।

शोकाकुल—वि० [सं०] शोक से व्याकुल।

शोकातुर—वि० [सं०] शोक से विह्वल वा व्याकुल।

शोकापनोद, शोकापनोदन—संज्ञा पुं० [सं०] शोक को दूर करना। शोक का निवारण करना [को०]।

शोकाभिभूत—वि० [सं०] शोकार्त। शोकातुर।

शोकारि—संज्ञा पुं० [सं०] कदम। कदंब वृक्ष।

शोकार्त—वि० [सं०] शोक से आर्त। शोक से विकल।

शोकाविष्ट—वि० [सं०] जो शोक में अत्यंत संतप्त और व्याकुल हो।

शोकावेग—संज्ञा पुं० [सं०] बार बार या रह रहकर शोक का अनुभव होना [को०]।

शोकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात्रि। रात।

शोकोपहत—वि० [सं०] शोक से विकल।

शोख—वि० [फ़ा० शोख़] १. ढीठ। धृष्ट। प्रगल्भ। २. शरीर। नटखट। ३. चंचल। चपल। ४. जो मंद या धूमिल न हो। गहरा और चमकदार। चटकीला। जैसे,—शोख रंग।

यौ०—शोखबयानी = चटपटा या धृष्टतापूर्ण बयान। उ०—चरब जुबानी हाय हाय। शोखबयानी हाय हाय।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ६७८।

शोखी—संज्ञा स्त्री० [फ़ा० शोख़ी] १. धृष्टता। ढिठाई। १. नटखटपना। ३. चंचलता। चपलता। ४. तेजी। चटकीलापन। जैसे,—रंग की शोखी।

शोगपु—संज्ञा पुं० [सं० शोक] दे० 'सोग'। उ०—आज्ञा भई फिरचो सब लोगा। सब कहँ भयो राम कर शोगा।—कबीर सा०, पृ० ३९।

शोच—संज्ञा पुं० [सं० शोचन] १. दुःख। रंज। शोक। अफसोस। २. पीड़ा। वेदना (को०)। ३. चिंता। फिक्र। खटका।

शोचन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० शोचनीय, शोचितव्य, शोच्य] १. शोक करना। रंज करना। २. चिंता करना। ३. शोक। रंज।

शोचनीय—वि० [सं०] १. शोक करने योग्य। जिसकी दशा देखकर दुःख हो। २. जिससे दुःख उत्पन्न हो। दुःखोत्पादक। ३. जो बहुत हीन या बुरा हो।

शोचि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. लौ। लपट। २. दीप्ति। चमक। ३. वर्ण। रंग।

शोचितव्य—वि० [सं०] दे० 'शोचनीय' [को०]।

शोचिष्केश—संज्ञा पुं० [सं०] १. अग्नि। २. सूर्य। ३. चित्रक वृक्ष। चीता।

शोच्य—वि० [सं०] दे० 'शोचनीय' [को०]।

शोटीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] बल वीर्य। पराक्रम।

शोठ—वि० [सं०] १. मूर्ख। बेवकूफ। २. नीच। खोटा। ३. आलसी। निकम्मा। ४. धूर्त। ठग।

शोण[१]—संज्ञा पुं० [सं०] १. लाल रंग। २. लाली। अरुणता। ३. अग्नि। आग। ४. सिंदूर। सेंदुर। ५. रक्त। रुधिर। खून। ६. पद्मराग मणि। मानिक। ७. रक्त पुनर्नवा। लाल गदहपूरना। ८. सोना पाठा। ९. लाल गन्ना। १०. एक नद का नाम। विशेष दे० 'सोन'। ११. ललाई लिए भूरे रंग का, पिंग वर्ण का घोड़ा (को०)। १२. मंगल ग्रह (को०)।

शोण[२]—वि० १. लाल। गहरा लाल। २. लाख के रंग का। लालिमा युक्त भूरा। ३. पीत। पीला [को०]।

शोणक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोनापाठा। २. लाल गदहपूरना। ३. लाल गन्ना।

शोणगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] एक पहाड़ी का नाम जिसपर मगध देश की पुरानी राजधानी 'राजगृह' थी।

शोणझिंटिका, शोणझिंटी—संज्ञा स्त्री० [सं० शोणझिण्टिका, शोणझिंटी] पीली कटसरैया।

शोणपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] रक्त पुनर्नवा। लाल गदहपूरना।

शोणसद्म—संज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल।

शोणपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] कचनार। कोविदार वृक्ष।

शोणपुष्पक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'शोणपुष्प'। २. वह जिसके फूल शोण वर्ण के हों [को०]।

शोणपुष्पी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सिंदूरपुष्पी। सेंदुरिया।

शोणभद्र—संज्ञा पुं० [सं०] सोन नदी।

शोणमणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] पद्मराग मणि। मानिक [को०]।

शोणरत्न—संज्ञा पुं० [सं०] मानिक। लाल।

शोणसंभव—संज्ञा पुं० [सं० शोणसम्भव] पिपलामूल। पिप्पलोमूल।

शोणहय—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार द्रोणाचार्य का एक नाम। [को०]।

शोणांबु—संज्ञा पुं० [सं० शोणाम्बु] प्रलय काल के मेघों में से एक मेघ का नाम।

शोणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्त्री जिसका वर्ण शोण हो (को०)। २. सोन नदी। ३. लाल कटसरैया। ४. श्योनाक। सोनापाठा (को०)।

शोणाक—संज्ञा पुं० [सं०] श्योनाक वृक्ष [को०]।

शोणाश्म—संज्ञा पुं० [सं० शोणाश्म] १. लाल पत्थर। २. पद्मराग। मानिक [को०]।

शोणित¹—वि० [सं०] लाल। रक्त वर्ण का।

शोणित²—संज्ञा पुं० १. रक्त। रुधिर। खून। उ०—आहत जन के शोणित पर ही गिरी भरत रोदन धारा।—साकेत, पृ० ३८१। २. पौधों का रस। ३. केसर। जाफरान। ४. ईंगुर। शिंगरफ। ५. ताम्र धातु। तांबा। ६. तृणकेशर।

शोणितचंदन—संज्ञा पुं० [सं० शोणितचन्दन] लाल चंदन।

शोणितप—वि० [सं०] रक्त पीनेवाला [को०]।

शोणितपारणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] उपवास आदि के बाद खून या मांस का भोजन [को०]।

शोणितपित्त—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें रक्तवाहिनी शिराएँ फट जाती हैं और रक्तस्राव होने लगता है [को०]।

शोणितपुर—संज्ञा पुं० [सं०] वाणासुर की राजधानी।

शोणितभृत्—संज्ञा पुं० [सं०] शरीरधारी। शरीरवाला। शरीरी [को०]।

शोणितमेह—संज्ञा पुं० [सं०] लाल प्रमेह।

शोणितमेही—संज्ञा पुं० [सं० शोणितमेहिन्] शोणित मेह का रोगी। प्रमेह का रक्त रोगी [को०]।

शोणितशर्करा—संज्ञा स्त्री० [सं०] शहद की चीनी।

शोणितशोण—वि० [सं०] खून से लाल।

यौ०—शोणितशोणपाणि = खून से लाल लाल हाथोंवाला।

शोणितार्बुद—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का शूक रोग जिसमें लिंग पर फुंसियाँ निकलती हैं।

शोणितार्श—संज्ञा पुं० [सं०] आँख की पलक का एक रोग जिसमें पलकों की कोर पर कोमल और लाल रंग का मांस का अंकुर उत्पन्न होता है।

शोणिताह्वय—संज्ञा पुं० [सं०] केसर। कुंकुम।

शोणितोत्पल—संज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल। कोकनद [को०]।

शोणितोपल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मानिक। लाल। शोणाश्म। २. लाल वर्ण का पत्थर (को०)।

शोणिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० शोणिमन्] अरुणिमा। लालिमा [को०]।

शोणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह स्त्री जिसके शरीर का रंग लाल कमल के समान हो। रक्तोत्पल वर्ण की स्त्री। २. शोण वर्ण की वडवा [को०]।

शोणोपल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मानिक। लाल। २. लाल वर्ण का पत्थर [को०]।

शोथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी अंग का फूलना। सूजन। वरम। २. अंग में सूजन होने का रोग। वरम।

विशेष—जब दूषित रक्त, पित्त या कफ कुपित वायु से नसों में रुद्ध हो जाता है, तब सूजन होती है। शोथ तीन प्रकार का कहा गया है—वातज, पित्तज और कफज। आमाशय में दोष होने से छाती के ऊपर, पक्वाशय में होने से छाती के नीचे और मलाशय में होने से कमर से पैर तक सारे शरीर में शोथ होता है। शरीर के मध्य भाग या सर्वांग का शोथ कष्टसाध्य कहा गया है। जो शोथ केवल अर्धांग में उत्पन्न होकर ऊपर की ओर बढ़ता हो, वह प्रायः घातक होता है। पर पांडु आदि रोगों में पैर से ऊपर की ओर बढ़नेवाला शोथ घातक नहीं होता। स्त्रियों को कुक्षि, उदर, गर्भस्थान या गले का शोथ असाध्य होता है। जो शोथ बहुत भारी और कड़ा हो और जिसमें श्वास, प्यास, दुर्बलता, अरुचि आदि उपद्रव भी उत्पन्न हो, वह भी असाध्य कहा गया है।

शोथक—संज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'शोथ'। २. मुरदासंग।

शोथघ्न—संज्ञा पुं०, वि० [सं०] दे० 'शोथजित्' [को०]।

शोथघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. गदहपूरना। पुनर्नवा। २. शालपर्णी। सरिवन।

शोथजित्¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. भिलावाँ। भल्लातक। २. पुनर्नवा।

शोथजित्²—वि० शोथ दूर करनेवाला। जिससे शोथ रोग दूर हो।

शोथजिह्व—संज्ञा पुं० [सं०] पुनर्नवा। गदहपूर्णा।

शोथरोग—संज्ञा पुं० [सं०] शोथ या सूजन का रोग।

शोथहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] भिलावाँ। भल्लातक।

शोथारि—संज्ञा पुं० [सं०] पुनर्नवा। गदहपूरना।

शोद्धव्य—वि० [सं०] जिसे शुद्ध करना हो। शोधने योग्य।

शोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुद्धि संस्कार। सफाई। २. ठीक किया जाना। दुरुस्ती। ३. चुकता होना। अदा होना। बेबाक होना। जैसे,—ऋण का शोध होना। ४. जाँच। परीक्षा। ५. प्रतिकार। प्रतिशोध। बदला (को०)। ६. खोज। ढूँढ़। तलाश। अनुसंधान। अन्वेषण। उ०—करते हैं ज्ञानी विज्ञानी नित्य नए सत्यों का शोध।—साकेत, पृ० ३७३।

शोधक¹—वि० [वि० स्त्री० शोधका, शोधिका] शोध करनेवाला। शुद्ध करनेवाला।

शोधक²—संज्ञा पुं० [सं०] १. शोधनेवाला। शुद्ध या साफ करनेवाला। उ०—संसार को बहुधा विरोध कुचित्त शोधक जानि। ठाढ़ी भई वह शांति सो करुणा सखी सुख मानि।—केशव (शब्द०)। २. सुधार करनेवाला। सुधारक। संशोधक। ३. ढूँढनेवाला। खोजनेवाला। अनुसंधान करनेवाला। ४. गणित में वह संख्या जिसे घटाने से ठीक वर्गमूल निकल। ४. रेचक। रेचन करनेवाला। जैसे, मलशोधक (को०)।

शोधन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० शोधित, शोधनीय, शोध्य, शोद्धव्य] १. शुद्ध करना । साफ करना । २. दुरुस्त करना । ठीक करना । सुधारना । जैसे,—लेखशोधन । ३. धातुओं का औषध रूप में व्यवहार करने के लिये संस्कार । जैसे,—पारद का शोधन । ४. छानबीन । जाँच । ५. खोजना । ढूँढ़ना । तलाश करना । अनुसंधान करना । ६. ऋण चुकाना । अदा करना । बेबाक करना । ७. किसी पाप से शुद्ध होने का संस्कार । प्रायश्चित्त । ८. चाल सुधारने के लिये दंड । सजा । ९. हटाकर साफ करना । सफाई के लिये दूर करना । साफ करना । १०. दस्त लाकर कोठा साफ करना । विरेचन । ११. मुरदासंग । कंकुष्ठ । १२. मल । विष्ठा । १३. घटाना । निकालना । (गणित) । १४. नीबू । १५. हीरा कसीस । १६. उन्मूलन । उत्पाटन । हटाना । दूर करना । जैसे,—कंटकशोधन । १७. ज्योतिष के अनुसार किसी शुभ कार्य के लिये शुभाशुभ दिन, मास योगादि का विचार । जैसे,—लग्नशोधन (को०) । १८. बदला । प्रतिशोध । जैसे,—वैरशोधन (को०) ।

शोधन²—वि० शुद्धि करनेवाला । साफ करनेवाला [को०] ।

शोधनक—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल के न्यायालय या धर्मसभा का स्थान साफ और ठीक करनेवाला अधिकारी, कर्मचारी ।

शोधना—क्रि० स० [सं० शोधन] १. शुद्ध करना । साफ करना । मैला आदि निकालकर स्वच्छ करना । २. दुरुस्त करना । ठीक करना । त्रुटि या दोष दूर करना । सुधारना । जैसे,—लेख शोधना । ३. औषध के लिये धातु का संस्कार करना । जैसे,—पारा शोधना । ४. ढूँढ़ना । खोजना । अन्वेषण करना । तलाश करना । उ०—ग्रहबल, लग्न, नक्षत्र शोधि कीनी वेदध्वनि ।—सूर (शब्द०) ।

शोधनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मार्जनी । झाड़ू । बुहारी । २. ताम्रवल्ली । ३. नील । ४. ऋद्धि नामक अष्टवर्गीय ओषधि ।

शोधनीबीज—संज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटे का बीज ।

शोधनीय—वि० [सं०] १. शुद्ध करने योग्य । २. चुकाने योग्य । ३. ढूँढ़ने योग्य ।

शोधवाना—क्रि० स० [सं० शोधना का प्रे० रूप] १. शोधने का काम कराना । शुद्ध कराना । दुरुस्त कराना । २. ढुँढ़वाना । तलाश कराना ।

शोधवैया—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'शोधैया' ।

शोधा—वि० [सं० शोधक] धातु शोधन करनेवाला । शुद्ध करनेवाला ।

शोधित—वि० [सं०] १. शुद्ध किया हुआ । स्वच्छ । संस्कृत । ३. छाना हुआ । ४. संशोधित । जिसका सुधार किया गया हो । ५. जो चुकता कर दिया गया हो । जैसे, कर्ज । ६. जिसका अन्वेषण किया गया हो । अन्वेषित । ७. हटाया हुआ । दूर किया हुआ [को०] ।

शोधैया—संज्ञा पुं० [हिं० शोध + ऐया (प्रत्य०)] शोधनेवाला । सुधारक । उ०—मंगल सदा ही करैं राम युगलेश करैं राम रसिकावली शोधैया औ बोधैया को ।—रघुराज (शब्द०) ।

शोध्य¹—वि० [सं०] शोधन करने योग्य [को०] ।

शोध्य²—संज्ञा पुं० १. वह व्यक्ति जो अपने ऊपर लगाए गए अभियोग के संबंध में सफाई दे । वह जिसपर अभियोग लगाया गया हो । अभियुक्त [को०] ।

शोफ—संज्ञा पुं० [सं०] शोथ । सूजन । अर्बुद ।

शोफघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शोथघ्नी । रक्त पुनर्नवा । लाल गदहपूरना । २. शालपर्णी । सरिवन (को०) ।

शोफजित्—संज्ञा पुं० [सं०] भल्लातक । भिलावाँ [को०] ।

शोफनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शोथनाशन । नील का वृक्ष । २. लाल गदहपूरना । रक्त पुनर्नवा (को०) ।

शोफर—संज्ञा पुं० [फा़र > अं० शोफ़र] मोटर चलानेवाला । मोटर का ड्राइवर । उ०—यह कहकर राजा साहब मोटर पर जा बैठे और शोफर से मिस्टर जिम के बँगले पर चलने को कहा । —काया०, पृ० २५८ ।

शोफहारी—संज्ञा पुं० [सं० शोफहारिन्] जंगली बर्बरी का पौधा ।

शोफहृत्—संज्ञा पुं० [सं०] भिलावाँ । भल्लातक वृक्ष ।

शोफारि—संज्ञा पुं० [सं०] हाथीकंद । हस्तिकंद ।

शोफित—वि० [सं०] जिसे सूजन हो ।

शोब—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. उष्णीश । २. धोना [को०] ।

शोबदा—संज्ञा पुं० [अ०] १. जादू । इंद्रजाल । माया । नजरबंदी । बाजीगरी । २. छल । धोखा । फरेब । (को०) ।

यौ०—शोबदाबाज = (१) बाजीगर । (२) धूर्त [को०] ।

शोबा—संज्ञा पुं० [अ० शो'बह्] १. टुकड़ा । खंड । हिस्सा । २. डाली । शाख । शाखा । ३. महकमा । विभाग [को०] ।

शोभ¹—वि० [सं०] शोभायुक्त । सुंदर । सजीला ।

शोभ²—संज्ञा पुं० १. एक प्रकार के देवता । २. एक प्रकार के नास्तिक । ३. (यौगिक शब्दों में प्रयुक्त) शोभा । कांति ।—जैसे—शोभाकृत् ।

शोभ(पु)³—संज्ञा स्त्री० [सं० शोभा] दे० 'शोभा' ।

शोभक—वि० [सं०] सुंदर । कांतियुक्त । सजीला ।

शोभकृत्—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शोभाकारक हो । २. बृहस्पति के ६० वर्षों के चक्र में ३७ वाँ अथवा ३६ वाँ संवत् । एक संवत्सर का नाम [को०] ।

शोभन¹—वि० [सं०] १. शोभायुक्त । दीप्त । सुंदर । सजीला । २. सुहावना । रमणीय । ३. उत्तम । अच्छा । भला । श्रेष्ठ । ४. सदाचारी । पुण्यात्मा । ५. उचित । उपयुक्त । सुहाता हुआ । ६. शुभ । मंगलदायक ।

शोभन²—संज्ञा पुं० १. अग्नि का नाम । २. शिव का नाम । ३. इष्टि योग । ४. ज्योतिष में विष्कंभक आदि सत्ताइस योगों में से पाँचवाँ योग । ५. ग्रह । ६. बृहस्पति का ग्यारहवाँ संवत्सर । ७. २४ मात्राओं का एक छंद जिनमें १४ और १० मात्रा पर यति होती है और अंत में जगण होता है । इसका दूसरा नाम 'सिंहिका' है । ८. मालकोश राग का पुत्र । एक राग । ९.

कमल । १० गँगा । ११. आभूषण । गहना । १२. मंगल । कल्याण । शुभ । १३. धर्म । पुण्य । १४. दीप्ति । सौंदर्य । १५. सिंदूर । सँदुर । १६. कंकुष्ट । १७. अच्छे फल की प्राप्ति के लिये अग्नि में दी हुई आहुति (को०) ।

शोभनक—संज्ञा पुं० [सं०] सहिजन या शोभांजन का वृक्ष ।

शोभनतम—वि० [सं० शोभन + तम (प्रत्य०)] अत्यंत सुंदर । उ०—अचल हिमालय का शोभनतम, लता कलित शुचि सानु शरीर ।—कामायनी, पृ० २९ ।

शोभना^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदरी स्त्री । २. हलदी । हरिद्रा । ३. गोरोचन । ४. स्कंद की अनुचरी एक मातृका ।

शोभना पु^{2}—क्रि० स० [सं० शोभन] शोभित होना । सोहना । उ०—फूल की झालर बनी हैं शोभती, गंध सौरभ वायु मंडल की तहें ।—झरना, पृ० ३५ ।

शोभनिक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नट या अभिनयकर्ता ।

शोभनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक रागिनी जो मालकोश राग की स्त्री कही जाती है ।

शोभनीय—वि० [सं०] सुंदर । मनोहर [को०] ।

शोभनीया—संज्ञा स्त्री० [सं०] गोरखमुंडी ।

शोभांजन—संज्ञा पुं० [सं० शोभाञ्जन] सहिजन का पेड़ ।

शोभा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दीप्ति । कांति । चमक । २. छवि । सुंदरता । छटा । सजीलापन । रुचिरता ।

मुहा०—शोभा देना = अच्छा लगना । सुंदर लगना । शोभा बरसना = शोभा या सौंदर्य की अधिकता होना ।

३. सजावट । ४. उत्तम गुण । ५. वर्ण । रंग । ६. बीस अक्षरों का एक वर्णवृत्त जिसमें क्रम से यगण, मगण, दो नगण, दो तगण और दो गुरु होते हैं तथा ६, ७ और ९ पर यति होती है । ७. हलदी । हरिद्रा । ८. गोरोचन । ९. फारसी संगीत में मुकाम की स्त्रियाँ जो चौबीस होती हैं । १०. काव्य के दस गुणों में से एक (को०) । ११. एक काव्यालंकार (को०) ।

शोभाकर^1—वि० [सं०] सौंदर्यकारक । शोभित करनेवाला ।

शोभाकर^2—संज्ञा पुं० १. शोभा की खान । २. अत्यंत सुंदर व्यक्ति । सौंदर्य का आकर ।

शोभातिशायी—वि० [सं० शोभा + अतिशायिन्] शोभावर्धक । सौंदर्य बढ़ानेवाला । उ०—आचार्यों ने भी अलंकारों को काव्यशोभाकर, शोभातिशायी आदि ही कहा है ।—रस०, पृ० ५२ ।

शोभाधर—वि० [सं०] मनोहर [को०] ।

शोभाधायक—वि० [सं०] उपकारक । जिससे सौंदर्य में वृद्धि हो । शोभाकर । उ०—किंतु वामन ने उस व्यंगार्थ को भी वाच्यार्थ का उपकारक (शोभाधायक) बनाकर अलंकारों की कुक्षि (कोख) में ही रख दिया था ।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ४४२ ।

शोभाधारक—वि० [सं०] दे० 'शोभाधर' [को०] ।

शोभानक—संज्ञा पुं० [सं०] शोभांजन वृक्ष । सहिजन ।

शोभान्वित—वि० [सं०] शोभा से युक्त । सुंदर । सजीला ।

शोभामय—वि० [सं०] सुंदरता से पूर्ण [को०] ।

शोभायमान—वि० [सं०] सोहता हुआ । सुंदर ।

शोभित—वि० [सं०] १. शोभा से युक्त । सुंदर । सजीला । २. अच्छा लगता हुआ । सजा हुआ । ३. विद्यमान । उपस्थित । विराजता हुआ । जैसे,—सिंहासन पर शोभित होना ।

शोभिनी—वि० [सं०] शोभा देनेवाली । सुंदरी [को०] ।

शोभी—वि० [सं० शोभिन्] १. दीप्तिमान् । कांतिमान् । २. शोभायुक्त । सुंदर । मनोहर [को०] ।

शोर—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. जोर की आवाज । हल्ला । गुल गपाड़ा । कोलाहल । उ०—(क) जहाँ तहाँ शोर भारी भीर नर नारिन की सबही की छूटि गई लाज यहि भाइ कै ।—केशव (शब्द०) । (ख) घननि की घोर सुनि मोरनि के शोर सुनि सुनि केशव अलाप आली जन को ।—केशव (शब्द०) । २. धूम । प्रसिद्धि । जैसे,—उसके बड़प्पन का शोर हो गया है । उ०—आप द्वारका शोर कियो उन हरि हस्तिनापुर जाने । प्रद्युम्न लरे सप्त दश दो दिन रंच हार नहिं माने ।—सूर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—मचना ।—मचाना ।

यौ०—शोरगुल = हल्ला । कोलाहल । धमाचौकड़ी ।

३. खारी नमक (को०) । ४. ऊसर भूमि (को०) । ५. उन्माद । पागलपन (को०) ।

शोरबा—संज्ञा पुं० [फ़ा०] १. किसी उबाली हुई वस्तु का पानी । झोल । जूस । रसा । २. पके हुए मांस का पानी ।

शोरा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शोरह्] एक प्रकार का क्षार जो मिट्टी से निकलता है ।

विशेष—यह बहुत ठंढा होता है और इसीलिये पानी ठंढा करने के काम में आता है । बारूद में भी इसका योग रहता है और सुनार इससे गहने भी साफ करते हैं । खारी मिट्टी में क्यारियाँ बनाकर इसे जमाते है । साफ किए हुए बढ़िया शोरे को कलमी शोरा कहते हैं ।

मुहा०—शोरे की पुतली = बहुत गोरी स्त्री ।

शोरा आलू—संज्ञा पुं० [हिं० शोरा + आलू] बन आलू ।

शोरापुश्त—वि० [फ़ा०] लड़ाका । झगड़ालू । फसादी ।

शोरिश—संज्ञा स्त्री० [फ़ा०] १. खलबली । हलचल । २. बलवा । बगावत । उपद्रव । दंगा ।

शोरी—संज्ञा पुं० [फ़ा० शोर] १. फारसी संगीत में एक मुकाम का पुत्र । २. एक पंजाबी प्रसिद्ध गवैया जिसने टप्पा नाम का गीत निकाला था ।

शोला^{1}—संज्ञा पुं० [देश०] एक छोटा पेड़ जिसकी लकड़ी बहुत हल्की होती है ।

विशेष—पानी पर तैरनेवाले जाल में इसकी लकड़ी लगाई जाती है । लकड़ी का सफेद हीर फूल, खिलौने तथा विवाह के मुकुट बनाने के काम में आता है।

शोला^{२}—संज्ञा पुं० [अ०] आग की लपट। ज्वाला।

यौ०—शोलाबारी = अग्निवर्षा। आग बरसना। शोलामिजाज = अत्यधिक क्रोधी स्वभाव का। गुस्सैल। शोलारुख, शोलारू = लाल लाल गालोंवाला। रक्ताभ कपोलवाला।

शोली—संज्ञा स्त्री० [सं०] बनहलदी। वनहरिद्रा।

शोलेष संज्ञा पुं० [सं०] वाल्मीकि रामायण में वर्णित एक प्रकार का अस्त्र।

शोशा—संज्ञा पुं० [फ़ा० शोशह्] १. निकली हुई नोक। २. अरबी फारसी के सीन या शीन अक्षर का दंदाना या नोक (को०)। ३. अद्भुत या अनोखी बात। चुटकुला। ४. झगड़ा खड़ा करनेवाली बात। ५. लगती बात। व्यंग्य।

क्रि० ०—छोड़ना।

६. खंड। टुकड़ा (को०)। ७. सोने या चाँदी का डला (को०)।

शोष—संज्ञा पुं० [सं०] १. सूखने का भाव। खुश्क होना। रस या गीलापन दूर होने का भाव। २. छीजने का भाव। क्षय। ३. शरीर का घुलना या क्षीण होना। ४. एक रोग जिसमें शरीर सूखता या क्षीण होता जाता है। राजयक्ष्मा का भेद। क्षयी।

विशेष—वैद्यक में शोष रोग के छह् कारण बताए गए हैं—अधिक शोक, जरावस्था, अधिक मार्ग चलना, अधिक व्यायाम, अधिक स्त्रीप्रसंग और हृदय में चोट लगना। इस रोग में शरीर क्षीण होता जाता है, मंद ज्वर और खाँसी रहती है, पसली, छाती और कमर में पीड़ा रहती है तथा अतिसार भी हो जाता है।

५. बच्चों का सुखंडी रोग। ६. खुश्की। सूखापन।

शोषक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शोषिका] १. जल, रस या तरी खींचनेवाला। सोखनेवाला। २. सुखानेवाला। खुश्क करनेवाला। ३. घुलानेवाला। क्षीण करनेवाला। ४. नाश करनेवाला। ५. दूर करनेवाला। ६. समाज का वह व्यक्ति या वर्ग जो स्वल्पतम मूल्य देकर परिश्रम करनेवालों के परिश्रम का फल भोगता हो।

विशेष—मार्क्सवाद के अनुसार समाज दो वर्गों में विभक्त है। शोषक और शोषित। शोषक वह वर्ग है जो पैसा लगाकर दूसरों से काम कराकर मुनाफा कमाता है और सभी सुविधाओं का उपभोग करता है। जो वर्ग मजदूर है, मेहनत करता है और सुविधा से वंचित रहता है वह शोषित वर्ग है।

शोषकवर्ग—संज्ञा पुं० [सं० शोषक + वर्ग] शोषकों का समूह। दे० 'शोषक'—५।

शोषघ्न—संज्ञा पुं० [सं०] वनप्याजी।

शोषण^१—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० शोषी, शोषित, शोषणीय] १. जल या रस खींचना। सोखना। २. सुखाना। खुश्क करना। तरी या गीलापन दूर करना। ३. हरापन या ताजापन दूर करना। ४. घुलाना। क्षीण करना। क्षय करना। ५. नाश करना। दूर करना। न रहने देना। ६. कामदेव के एक बाण का नाम। ७. सोंठ। शुंठि। ८. श्योनाक वृक्ष। सोनापाठा। ९. पिप्पली। पीपल। १०. एक प्रकार की अग्नि (को०)। ११. किसी के श्रम का अनुचित लाभ उठाना (को०)।

शोषण^२—वि० शोष करनेवाला। शोषण करनेवाला।

शोषणीय—वि० [सं०] सोखने योग्य।

शोषयितव्य—वि० [सं०] १. जो सोखा जानेवाला हो। २. जिसे सुखाना हो।

शोषयिता—वि० [सं० शोषयितृ] सुखानेवाला [को०]।

शोषयित्नु—संज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०]।

शोषसंभव—संज्ञा पुं० [सं० शोषसम्भव] पिपलामूल।

शोषहा—संज्ञा पुं० [सं० शोषहन्] (शोष रोग का नाश करनेवाला)] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

शोषापहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] मुलेठी।

शोषिणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] आकाश। तेज वहन करनेवाला [को०]।

शोषित—वि० [सं०] १. सोखा हुआ। सुखाया हुआ। ३. क्षीण किया हुआ (को०)। ४. नष्ट किया हुआ (को०)। ५. थका हुआ। हारा हुआ (को०)।

शोषितवर्ग—संज्ञा पुं० [सं० शोषित + वर्ग] समाज का वह वर्ग जिसका शोषण किया गया हो। विशेष दे० 'शोषक'—५।

शोषी—वि० संज्ञा पुं० [सं० शोषिन्] [स्त्री० शोषिणी] १. सोखनेवाला। २. सुखानेवाला।

शोषु—संज्ञा पुं० [सं०] जलादि की पिपासा। पियास। प्यास [को०]।

शोष्य—वि० [सं०] जिसे सोखा या सुखाया जाय। सुखाने या शोषित करने के योग्य।

शोहदा—संज्ञा पुं० [अ०। मि० सं० + सुभद्र ?] १. व्यभिचारी। लंपट। २. गुंडा। बदमाश। लुच्चा। ३. छैल चिकनिया। बहुत बनाव सिंगार करनेवाला।

शोहदापन—संज्ञा पुं० [हिं० शोहदा + पन (प्रत्य०)] १. गुंडापन। २. छैलापन।

शोहरत—संज्ञा स्त्री० [अ०] १. नामवरी। ख्याति। प्रसिद्धि। २. खूब फैली हुई खबर। धूम। जनरव। जैसे,—शहर में शोहरत तो ऐसी ही है।

शोहरा—संज्ञा पुं० [अ० शोहरत] १. ख्याति। प्रसिद्धि। २. धूम से फैली हुई खबर। जनरव। उ०—भनै रघुराज दूत लागत अचर्ज माहि, तोरिबो पिनाकी को पिनाक सुने शोहरा।—रघुराज (शब्द०)।

शौंग—संज्ञा पुं० [सं० शौङ्ग] भरद्वाज ऋषि का एक नाम जो शुंग के अपत्य थे।

शौंगिपुत्र—संज्ञा पुं० [सं० शौङ्गिपुत्र] एक वैदिक आचार्य का नाम।

शौंगेय—संज्ञा पुं० [सं० शौङ्गेय] १. गरुड़। २. श्येन पक्षी। बाज।

शौंड¹—संज्ञा पुं० [सं० शौण्ड] १. मुर्गा। कुक्कुट पक्षी। २. पुनेरा। देवधान्य। ३. वह जो मद्य पीकर मतवाला हुआ हो। मस्त। मत्त।

शौंड²—वि० १. मद्यप। शराबी। २.उत्तेजित। नशे में चूर। ३. (समास में) कुशल। दक्ष [को०]।

शौडता—संज्ञा स्त्री० [सं० शौण्डता] मत्तता। बदमस्ती।

शौंडा- संज्ञा स्त्री० [सं० शौण्डा] मद्य। शराब [को०]।

शौंडायन—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डायन] प्राचीन काल की एक योद्धा जाति का नाम।

शौंडि—वि० [सं० शौण्डि] १. चतुर। दक्ष। कुशल। २. आसक्त। अनुरक्त [को०]।

शौंडिक—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डिक] [स्त्री० शौण्डिकी] १. प्राचीन काल की एक प्रसिद्ध जाति जिसका व्यवसाय मद्य बनाना और बेचना था।

विशेष—पराशरपद्धति में इस जाति की उत्पत्ति कैवर्त पिता और गांधिक माता से लिखी है; और मनु ने कहा है कि इस जाति के आदमी के घर भोजन नहीं करना चाहिए।

२. पिप्पलीमूल।

शौंडिकप्रिय—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डिकप्रिय] आम।

शौंडिकागार—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डिकागार] शराब की दूकान। शराबखाना। हौली। कलवरिया।

शौंडिकी—संज्ञा स्त्री० [सं० शौण्डिकी] शौंडिक जाति की स्त्री [को०]।

शौंडिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० शौण्डिनी] दे० 'शौंडिकी'।

शौंडी¹—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डिन्] प्राचीन काल की शौंडिक नामक जाति।

शौंडी²—संज्ञा स्त्री० [सं० शौण्डी] १. पीपल। पिप्पली। २. चव्य। चविका। कटभी वृक्ष। ३. मिर्च।

शौंडिर— वि०, संज्ञा पुं० [सं० शौण्डिर] दे० 'शौंडीर'।

शौंडीर¹— वि० [सं० शौण्डीर] १. बहुत घमंड करनेवाला। अहंकारी। अभिमानी। २. उत्तुंग। उन्नत (को०)। ३. समर्थ (को०)।

शौडीर²—संज्ञा पुं० अभिमान। गर्व। घमंड [को०]।

शौंडीर्य—संज्ञा पुं० [सं० शौण्डीर्य] १. शूरत्व। नायकत्व। २. अभिमान। घमंड। गर्व। शान [को०]।

शौक—संज्ञा पुं० [अ० शौक़] १. किसी वस्तु की प्राप्ति या निरंतर भोग के लिये अथवा कोई कार्य करते रहने के लिये होनेवाली तीव्र अभिलाषा या कामना। प्रबल लालसा। जैसे,—मोटर का शौक, सफर का शौक, खाने पीने का शौक, जूए का शौक, किताबों का शौक।

क्रि० प्र०—करना।—रखना।—होना।

मुहा०—शौक करना = किसी वस्तु या पदार्थ का भोग करना। जैसे,—तंबाकू आ गया, शौक कीजिए। शौक चर्राना या पैदा होना = मन में प्रबल कामना होना। तीव्र लालसा होना (व्यंग्य)। जैसे—अब आप को भी घोड़े पर चढ़ने का शौक चर्राया है। शौक पूरा करना या मिटाना = किसी बात की प्रबल इच्छा की पूर्ति करना। जैसे,—जाइए, आप भी शतरंज का शौक पूरा कर (मिटा) लीजिए। शौक फरमाना = दे० 'शौक करना'। शौक से = प्रसन्नतापूर्वक। आनंद से। जैसे—हाँ हाँ, आप भी शौक से चलिए।

२. आकांक्षा। लालसा। हौसिला। जैसे,—मुझे आज तक इस बात का शौक ही रहा कि लोग तुम्हारी तारीफ करते। ३. व्यसन। चसका। चाट। जैसे—(क) आजकल उसे शराब का शौक हो गया है। (ख) आपको गंगास्नान का शौक कब से हुआ ?

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना। होना।

४. प्रवृत्ति। झुकाव। जैसे,—जरा आपका शौक तो देखिए, पेड़ पर चढ़ने चले हैं।

शौक²--संज्ञा पुं० [सं०] १. शुकसमूह। तोतों का झुंड। २. रतिबंध का एक प्रकार (को०)। ३. शोक की अवस्था। शोकदशा। शोकपूर्णता (को०)।

शौकत--संज्ञा स्त्री० [अ० शौक़त] ठाठ बाट। शान। उ०—हशमत व शौकत थिर नहीं मत देख हो मगरूर।—चरण० बानी, पृ० ११४।

यौ०--शान शौकत।

२. आतंक। दबदबा। वि० दे० 'शान'।

शौकर--संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शूकरक्षेत्र'।

शौकरव—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शूकरक्षेत्र'।

शौकरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वाराहीकंद। गेंठी।

शौकि—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम।

शौकिया¹—क्रि० वि० [अ० शौक़ियह] शौक के कारण। शौक पूरा करने के लिये। प्रवृत्ति के वश होकर। जैसे,—(क) मुझे तंबाकू पीने की आदत तो नहीं है; पर हाँ कभी कभी शौकिया पी लिया करता हूँ। (ख) उन्हें कोई जरूरत तो न थी; सिर्फ शौकिया फारसी सीख ली थी।

शौकिया²—वि० शौक से भरा हुआ। जैसे,—शौकिया सलाम।

शौकीन—संज्ञा पुं० [अ० शौक़ + हिं० ईन (प्रत्य०)] १. वह जिसे किसी बात का बहुत शौक हो। शौक करनेवाला। चाव रखनेवाला। जैसे,—आप गाने बजाने के बड़े शौकीन हैं। २. वह जो सदा छैला बना रहता हो। सदा बना ठना रहनेवाला। ३. रंडीबाज। ऐयाश। तमाशबीन।

शौकीनी—संज्ञा स्त्री० [हिं० शौकीन + ई (प्रत्य०)] १. शौकीन होने का भाव या काम।

क्रि० प्र०—करना।—छाँटना।—दिखाना।—बघारना।

२. तमाशबीनी। रंडीबाजी। ऐयाशी।

शौकेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शौक्त^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] एक साम का नाम।

शौक्त^{२}—वि० १. अम्लयुक्त। क्षारयुक्त। तेजाबी। २. शुक्ति का बना हुआ [को०]।

शौक्तिक^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] शुक्तिका या सीपी से उत्पन्न, मोती। मुक्ता।

शौक्तिक^{२}—वि० १. सीपी से या मोती से संबंधित। २. क्षार या अम्ल युक्त। तेजाबी [को०]।

शौक्तिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सीप।

शौक्तिकेय, शौक्तेय—संज्ञा पुं० [सं०] मोती, जो शुक्ति या सीपी से उत्पन्न होता है।

शौक्र—वि० [सं०] १. शुक्र ग्रह संबंधी। शुक्र का। २. वीर्य संबंधी (को०)।

शौक्ल^{१}—वि० [सं०] शुक्ल संबंधी। शुक्ल का।

शौक्ल^{२}—संज्ञा पुं० दे० 'शौक्त^{१}'।

शौक्लिकेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का हलका विष [को०]।

शौक्ल्य—संज्ञा पुं० [सं०] सफेदी। उज्वलता [को०]।

शौग्र—संज्ञा पुं० [सं०] सिग्रु, सहिजन का बीज।

शौच—संज्ञा पुं० [सं०] १. शुचि होने का भाव। शुद्धता। पवित्रता। पाकीजगी। २. शास्त्रीय परिभाषा में पवित्रतापूर्वक धर्माचरण करना, शरीर और मन शुद्ध रखना, सत्य बोलना और निषिद्ध पदार्थों तथा कार्यों आदि का त्याग करना। सब प्रकार से शुद्धतापूर्वक जीवन व्यतीत करना।

विशेष—मनु के अनुसार यह धर्म के दस लक्षणों में से पाँचवाँ लक्षण है; और योगशास्त्र के पाँच नियमों में से पहला नियम है। कुछ लोगों ने इसके बाह्य और आभ्यंतर ये दो भेद माने हैं। शरीर का बाह्य शौच मिट्टी और जल आदि से होता है; और अपने चित्त का भाव सब प्रकार से शुद्ध रखने से आभ्यंतर शौच होता है। जैनों के अनुसार संयमवृत्ति को निष्कलंक रखना शौच कहलाता है।

३. वे कृत्य जो प्रातःकाल उठकर सबसे पहले किए जाते हैं। जैसे,—पाखाने जाना, मुँह हाथ धोना, नहाना, संध्या वंदन करना आदि। ४. पाखाने जाना। जंगल जाना। टट्टी जाना। ५. दे० 'अशौच'। ६. खरापन। ईमानदारी (को०)। ७. तर्पण का जल (को०)।

शौचकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] लोकव्यवहार या शास्त्रानुसार शुद्ध होने की क्रिया [को०]।

शौचकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शौचकर्म' [को०]।

शौचकूप—संज्ञा पुं० [सं०] शौचगृह। संडास [को०]।

शौचगृह—संज्ञा पुं० [सं०] पाखाना [को०]।

शौचविधि—संज्ञा स्त्री० [सं०] मल मूत्र आदि का त्याग करना। शौच आदि से निवृत्त होना। निपटना।

शौचागार—संज्ञा पुं० [सं०] शौचगृह। पाखाना।

शौचाचार—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'शौचकार्य' [को०]।

शौचादिरेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

शौचालय—संज्ञा पुं० [सं० शौच + आलय] शौचगृह। शौचागार।

शौचिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति जिसकी उत्पत्ति शौंडिक पिता और कैवर्त माता से कही गई है। २. शुद्ध, पवित्र या साफ करनेवाला (को०)।

शौची—वि० [सं० शौचिन्] विशुद्ध। पवित्र।

शौचेय—संज्ञा पुं० [सं०] रजक। धोबी।

शौटीर^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीर। बहादुर। २. शौर्य। पराक्रम। साहस (को०)। ३. संन्यासी वा त्यागी व्यक्ति। ४. अभिमानी। मनुष्य।

शौटीर^{२}—वि० १. गर्वयुक्त। गर्वीला। प्रगल्भ। २. उदार [को०]।

शौटीरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. शौटीर का भाव या धर्म। २. वीरता। बहादुरी। ३. त्याग। ४. अभिमान। अहंकार। गर्व।

शौटीर्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वीर्य। शुक्र। २. गर्व। अभिमान। ३. वीरता। बहादुरी।

शौत पु—संज्ञा स्त्री० [हिं० सौत] दे० 'सौत'। उ०—मेरे आगे की यह गढ़ी। अब भइ शौत बदन पर चढ़ी।—लल्लूलाल (शब्द०)।

शौद्धोदनि—संज्ञा पुं० [सं०] बुद्धदेव, जो शुद्धोदन के पुत्र थे।

शौद्र^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य के वीर्य से शूद्रा से उत्पन्न पुत्र।

विशेष—यह बारह प्रकार के पुत्रों में से एक प्रकार का पुत्र माना जाता है। ऐसा पुत्र अपने पिता के गोत्र का नहीं होता और न उसकी संपत्ति का अधिकारी ही हो सकता है।

शौद्र^{२}—वि० शूद्र या शूद्र जाति से संबंधित [को०]।

शौध पु^{१}—वि० [सं० शुद्ध] निर्मल। पवित्र (क०)। उ०—कटि कांती पगवंतिका नाभि द्वारिका शौध। हृदमाया कंठ मधुपुरी काशि घ्राण शिर औध।—विश्राम (शब्द०)।

शौध पु^{२}—संज्ञा स्त्री० दे० 'सुध'।

शौधिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] रक्तकंगु। लाल कँगनी।

शौन^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] वधालय में रखा हुआ मांस। वह मांस जो बिक्री के लिये रखा हो।

शौन^{२}—वि० श्वान संबंधी। कुत्ते का।

शौनक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन वैदिक आचार्य और ऋषि जो शुनक ऋषि के पुत्र थे।

विशेष—ये नैमिषारण्य में तपस्या करते थे और इन्होंने एक बार एक बहुत बड़ा यज्ञ किया था जो बारह वर्षों तक होता रहा। ये बड़े तपस्वी थे। इनके नाम से ऋग्वेद प्रातिशाख्य तथा अन्य कई ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

शौनकायन—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो शुनक ऋषि के गोत्र में उत्पन्न हुआ हो।

शौनकीपत्र--संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्राचीन आचार्य का नाम ।

शौनायण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

शौनिक--संज्ञा पुं० [सं०] १. मांस बेचनेवाला । कसाई । २. शिकार। आखेट । मृगया । ३. शिकारी । व्याध । बहेलिया (को०) ।

शौनिकशास्त्र--संज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें शिकार खेलने, घोड़ों आदि पर चढ़ने और पशुओं आदि को लड़ाने की विद्या का वर्णन हो ।

शौभ--संज्ञा पुं० [सं०] १. चिकनी सुपारी । २. देवता । ३. राजा हरिश्चंद्र की वह कल्पित नगरी जो आकाश में मानी जाती है ।

शौभनेय--संज्ञा पुं० [सं०] १. शोभना अर्थात् सुंदरी स्त्री का पुत्र । २. वह जो शोभन संबंधी हो (को०) ।

शौभांजन[१]--संज्ञा पुं० [सं० शौभाञ्जन] सहिजन नामक वृक्ष । शोभांजन । विशेष दे० 'सहिजन' ।

शौभायन—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल की एक योद्धा जाति का नाम ।

शौभिक--संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्रजाल का तमाशा करनेवाला । इंद्रजालिक । जादूगर । २. शिकारी । व्याध (को०) । ३. यज्ञ का यूप या स्तंभ (को०) ।

शौभ्रायण--संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल के एक देश का नाम । २. इस देश के निवासी ।

शौभ्रेय--संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो शुभ्र वस्तु वा व्यक्ति से संबद्ध हो । २. एक युद्धक जाति ।

शौरⓟ—संज्ञा पुं० [फ़ा० शोर] शोर । चखचख । उ०--ऋषि शोर सुनो जब काना । मन में उपज्यो तब ज्ञाना ।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० १३६ ।

शौरसेन[१]—संज्ञा पुं० [सं०] आधुनिक ब्रजमंडल का प्राचीन नाम जहाँ पहले राजा शूरसेन का राज्य था ।

शौरसेन[२]—वि० शूरसेन संबंधी । शूरसेन का ।

शौरसेनिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'शौरसेनी' ।

शौरसेनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्राचीन काल की एक प्रसिद्ध प्राकृत भाषा जो शूरसेन (वर्तमान ब्रजमंडल) प्रदेश में बोली जाती थी ।

विशेष—यह मध्य देश की प्राकृत थी और शूरसेन देश में इसका प्रचार होने के कारण यह शौरसेनी कहलाई । मध्यदेश में ही साहित्यिक संस्कृत का अभ्युदय हुआ था और यहीं की बोलचाल की भाषा से साहित्य की शौरसेनी प्राकृत का जन्म हुआ। इसपर संस्कृत का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा था और इसी लिये इसमें तथा संस्कृत में बहुत समानता है । यह अपेक्षाकृत अधिक पुरानी, विकसित और शिष्ट समाज की भाषा थी । वर्तमान हिंदी का जन्म शौरसेनी और अर्धमागधी प्राकृतों तथा शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से हुआ है ।

२. प्राचीन काल की एक प्रसिद्ध अपभ्रंश भाषा जिसका प्रचार मध्यदेश के लोगों और साहित्य में था । यह नागर भी कहलाती थी ।

शौरि—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु । २. कृष्ण । ३. बलदेव । ४. शनैश्चर ग्रह ।

शौरिप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] हीरा ।

शौरिरत्न—संज्ञा पुं० [सं०] नीलम ।

शौर्प—वि० [सं०] [वि० स्त्री० शौर्पी] १. सूप संबंधी । सूप से नापा हुआ । सूप के बराबर (को०) ।

शौर्पारक—संज्ञा पुं० [सं०] काले रंग का एक प्रकार का हीरा जो प्राचीन काल में शूर्पारक प्रदेश में पाया जाया था ।

शौर्पिक—वि० [सं०] दे० 'शौर्प' (को०) ।

शौर्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. शूर का भाव । शूरता । पराक्रम । वीरता । बहादुरी । शूर का धर्म । ३. नाटक में आरभटी नाम की वृत्ति । विशेष दे० 'आरभटी'–२ ।

शौल—संज्ञा पुं० [सं०] हल के एक भाग का नाम (को०) ।

शौलायन—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम जो कौलायन भी कहलाते थे ।

शौलिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल के एक देश का नाम जो शूलिक भी कहलाता था । २. इस देश का निवासी ।

शौलिकि—संज्ञा पुं० [सं०] योगशास्त्र के अनुसार धौति, नेति आदि छह प्रकार के कर्मों में से एक कर्म । इसमें दाहिने नथने से धीरे धीरे साँस खींचते हुए बाएँ नथने से छोड़ते हैं; और फिर बाएँ नथने से खींचते हुए दाहिने नथने से छोड़ते हैं । कहते हैं, इस क्रिया द्वारा कफ के दोष का शमन होता है ।

शौल्क[१]—वि० [सं०] शुल्क संबंधी । शुल्क का ।

शौल्क[२]--संज्ञा पुं० एक साम का नाम ।

शौल्कशालिक—संज्ञा पुं० [सं०] वे अधिकारी जो प्रत्येक माल की संख्या, परिमाण, गुण आदि की जाँच पड़ताल करते थे । उ०—रात्रि के समय भी शौल्कशालिक अधिकारी नियुक्त रहते थे ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० १६९ ।

शौल्कायनि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम जो वेददर्श के शिष्य थे और जिनका उल्लेख भागवत में आया है ।

शौल्किक—संज्ञा पुं० [सं०] वह अधिकारी जो लोगों से शुल्क लेता हो । कर या महसूल आदि वसूल करनेवाला अफसर । शुल्काध्यक्ष ।

शौल्किकेय—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का विष ।

शौल्फ—संज्ञा पुं० [सं०] १. सौंफ । शतपुष्पा । २. सुलफा नाम का साग ।

शौल्विक—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति का नाम । २. ठठेरा । कसेरा ।

शौव^{१}—वि॰ [सं॰] [स्त्री॰ शौवी] १. कुक्कुर संबंधी २. पर या उत्तर दिवस संबंधी। आगामी कल का। आनेवाले कल से संबंध रखनेवाला [को॰]।

शौव^{२} संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कुत्तों का समूह। २. कुत्तो की प्रकृति, स्वभाव या स्थिति [को॰]।

शौवन^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. कुत्ते का मांस। २. कुत्तों का झुंड। ३. कुत्ते का पिल्ला (को॰ । ४. कुत्ते की प्रकृति या स्वभाव (को॰)।

शौवन^{२}—वि॰ [वि॰ स्त्री॰ शौवनी] १. श्वान संबंधी। कुत्तो का। २. जिसकी प्रकृति या स्वभाव कुत्तो की तरह हो (को॰)।

शौवस्तिक^{१}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] [स्त्री॰ शौवस्तिकी] वह पदार्थ जो भविष्य में व्यवहार करने के विचार से संग्रह करके रखा गया हो।

शौवस्तिक^{२}— वि॰ १. जो दूसरे दिन तक टिक सके या खराब न हो। २. परेद्यु संबंधी [को॰]।

शौवापद—वि॰ [सं॰] [वि॰ स्त्री॰ शौवापदी] १. श्वापद या वन्य पशु से संबंध रखनेवाला। २. जंगली।

शौष्कल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. मांस का विक्रेता। मांस बेचनेवाला। २. जिसका स्वभाव मांस खाने का हो। मांसभक्षी। मत्स्य-मांस-भक्षी। ३. सूखे मांस का मूल्य [को॰]।

शौहर^{१}—संज्ञा पुं॰ [फ़ा॰] स्त्री का पति। स्वामी। खाविंद। मालिक। विशेष दे॰ 'पति—२'।

श्चोत, श्चोतन, श्च्योत, श्च्योतन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] निकलना। बहना। रिसना [को॰]।

श्नाभ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक साम का नाम।

श्नुष्टि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. वैदिक काल का 'समय' का एक परिमाण। २. छोटी ढेरी या अन्न नापने का छोटा नाप (को॰)।

श्नौष्ट—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक साम का नाम।

श्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मन्] १. मुख। आनन। २. देह। शरीर। ३. मृत शरीर। शव। मुर्दा [को॰]।

श्मशान संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्म (=शव)+शान (=शयन)] १. वह स्थान जहाँ मुरदे जलाए जाते हों। शवदाह करने का स्थान। मसान। मरघट।

पर्या॰—पितृवन। शतानक। रुद्राक्रीड़। दाहसर। अंतशय्या। पितृकानन।

२. पितरों के लिये दी जानेवाली बलि या पिंड (को॰)।

श्मशान कालिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार की काली जिनका पूजन मांस, मछली खाकर, मद्य पीकर और नंगे होकर श्मशान में किया जाता है।

श्मशान काली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'श्मशान कालिका' [को॰]।

श्मशानगोचर—वि॰ [सं॰] मसान में घूमनेवाला [को॰]।

श्मशाननिलय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्मशान में रहनेवाले, महादेव। शिव।

श्मशाननिवासी^{१}—वि॰ [सं॰ श्मशाननिवासिन्] श्मशान में रहनेवाला (चांडाल)।

श्मशाननिवासी^{२}—संज्ञा पुं॰ १. शिव। २. भूत प्रेत [को॰]।

श्मशानपति—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. श्मशान के स्वामी, शिव। २. एक प्रकार के ऐंद्रजालिक।

श्मशानपाल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्मशान का रक्षक, चांडाल।

श्मशानभाक्—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मशानभाज्] शिव [को॰]।

श्मशान भैरवी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. तांत्रिकों के अनुसार वे देवियाँ जो श्मशान में रहती हैं। २. दुर्गा का एक नाम।

श्मशानवर्ती—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मशानवर्तिन्] दे॰ 'श्मशानवासी'[को॰]।

श्मशानवाट—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मसान का घेरा [को॰]।

श्मशानवासिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] काली।

श्मशानवासी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मशानवासिन्] १. महादेव। शिव। २. चांडाल। ३. भूत प्रेत आदि (को॰)।

श्मशानवेताल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार की भूतयोनि।

श्मशानवेश्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मशानवेश्मन्] महादेव। शिव। २. भूनप्रेत (को॰)।

श्मसानवैराग्य—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्मशान में शरीर की नश्वरता को देखकर होनेवाला क्षणिक वैराग्य [को॰]।

श्मशानशूल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्मशान भूमि में स्थित सूली जिससे प्राचीन काल में प्राणदंड दिया जाता था।

श्मशानसाधन—संज्ञा पुं॰ [सं॰] भूत प्रेतों को वश में करने के लिये श्मशान भूमि में शव पर बैठकर की जानेवाली तांत्रिक क्रिया [को॰]।

श्मशानाग्नि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मरघट की आग [को॰]।

श्मशानालय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मरघट। मसान।

यौ॰—श्मशानालयवासिनी=काली।

श्मशानक—वि॰ [सं॰] श्मशान में रहनेवाला [को॰]।

श्मशानी—वि॰ [सं॰ श्मशानिक्] मरघट पर रहनेवाला। श्मशान का। श्मशान संबंधी। उ॰—यह जिसके मन में प्रवेशित होता है वह जीवित श्मशानी भूत है। —कबीर ग्रं॰, पृ॰ १८७।

श्मश्रु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] होठों, गालों और ठोढ़ी आदि पर होनेवाले बाल। मुँह पर के बाल। दाढ़ी मूँछ।

श्मश्रुकर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दाढ़ी की सफाई करनेवाला, हज्जाम। नापित।

श्मश्रुकर्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्मश्रुकर्मन्] दाढ़ी बनवाना। हजामत बनवाना। क्षौर कर्म।

श्मश्रुधर—वि॰ [सं॰] दाढ़ीवाला [को॰]।

श्मश्रुधारी—वि॰ [सं॰ श्मश्रुधारिन्] श्मश्रुयुक्त। मूँछ दाढ़ीवाला।

श्मश्रुप्रवृद्धि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दाढ़ी का बढ़ना [को॰]।

श्मश्रुमुखी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वह स्त्री जिसके गालों और ऊपरी होंठ पर दाढ़ी और मोछ के बाल हों।

विशेष – ऐसी स्त्री क्रूर, कुलक्षणी और पुंश्चली समझी जाती है।

श्मश्रुल—वि० [सं०] दाढ़ी मूँछ से युक्त [को०]।

श्मश्रुवर्द्धक—संज्ञा पुं० [सं०] हज्जाम।

श्मश्रुशेखर—संज्ञा पुं० [सं०] नारियल का वृक्ष।

श्मीलन—संज्ञा पुं० [सं०] आँख झपकाना या मुलकाना [को०]।

श्मीलित¹—वि० [सं०] निमीलित। आँख झपकाया हुआ। मुलकाया हुआ [को०]।

श्मीलित²—संज्ञा पुं० पलक झपकाना, गिराना या मारना [को०]।

श्यश्मनाक्षी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम। उ०—विनायक, फलगुचंडी, श्यश्मनाक्षी और मंगला की गया क्षेत्र में उपासना होती थी।—प्रा० भा० प०, पृ० ४२०।

श्यान¹—वि० [सं०] १. गया हुआ। गत। २. जमा हुआ। गाढ़ा। ३. क्षीण। क्षाम। सिकुड़ा हुआ। ४. घनीभूत। सांद्र। चिक्कण (को०)।

श्यान²—संज्ञा पुं० धुआँ [को०]।

श्याना(पु)—वि० [हिं० सयाना] वयस्क। दे० 'सयाना'। उ०—कितक दिन कूँ ओ ज्यों के श्याना हुआ। ओ हर एक हुनर-मन में दाना हुआ।—दक्खिनी०, पृ० ३६०।

श्यापीय—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक शाखा का नाम।

श्याम¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रीकृष्ण का एक नाम, जो उनके शरीर के श्याम वर्ण होने के कारण पड़ा था। उ०—एक बार हरि निज पुर छए। हलधर जी वृंदाबन गए। यह देखत लोगन सुख पाए। जान्यो राम श्याम दोउ आए।—सूर (शब्द०)। २. प्रयाग के अक्षयवट का नाम। ३. साँवाँ नामक धान्य (डिं०)। ४. एक राग जो श्रीराग का पुत्र माना जाता है। यह राग उत्सवों आदि के समय गाया जाता है, और हास्य रस के लिये भी उपयुक्त होता है। इसके गान का समय संध्या के समय १ दंड से ५ दंड तक है। इसे श्यामकल्याण भी कहते हैं। उ०—नित मलार जु मलार सुनाई। श्याम गूजरी पुनि भल गाई।—जायसी (शब्द०)। ५. सेंधा या समुद्री नमक। ६. धतूरा। ७. विधारा। ८. मेघ। बादल। ९. दौना का क्षुप। दमनक। १०. एक प्रकार का तृण। गंधतृण। ११. गोल मिर्च। छोटी या काली मिर्च। १२. पीलू वृक्ष। १३. कायब। कोकिल। १४. प्राचीन काल का एक देश जो कन्नौज के पश्चिम ओर था। १५. स्याम नामक देश। वि० दे० 'स्याम'। १६. काला रंग (को०)। १७. गहरा हरा रंग (को०)।

श्याम²—वि० १. काला और नीला मिला हुआ (रंग)। गहरा हरा। २. काला। साँवला। उ०—अमी हलाहल मद भरे, श्वेत श्याम रतनार। जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत एक बार। (शब्द०)। ३. धूसर। भूरा (को०)। ४. विवर्ण। उदास। जैसे, श्याम मुख।

श्यामकंठ—संज्ञा पुं० [सं० श्यामकण्ठ] १. मोर। मयूर। २. नीलकंठ नामक पक्षी। ३. शिव का एक नाम।

श्यामकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यामकन्दा] अतीस। अतिविषा।

श्यामक—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँवाँ का चावल। २. गंधतृण नामक तृण। रामकपूर। ३. स्याम नामक देश। ४. भागवत के अनुसार शूर के एक पुत्र और वसुदेव के भाई का नाम।

श्यामकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] वह घोड़ा जिसका सारा शरीर सफेद और एक कान काला होता है। उ०—श्यामकर्ण हय चान्त आवै।—चमर छत्र तापर छबि छावै।—सबलसिंह (शब्द०)।

विशेष—अश्वमेध यज्ञ में यही श्यामकर्ण अश्व रखा जाता था।

श्यामकांडा, श्यामकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यामकाण्डा, श्यामकान्ता] गाँडर दूब।

श्यामग्रंथि—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यामग्रन्थि] गाँडर दूब।

श्यामचटक—संज्ञा पुं० [सं०] श्यामा नामक पक्षी।

श्याम चिरैया—संज्ञा स्त्री० [सं० श्याम+हिं० चिरैया] एक विशेष पक्षी। श्यामा पक्षी। उ०—एक सूखे पेड़ की टहनी पर श्यामचिरैया का जोड़ा प्रणयाकुल हो रहा था।—भस्मावृत०, पृ० ११।

श्यामचूड़ा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यामचूडा] कृष्ण चटक या श्यामा नामक पक्षी।

श्यामजीरा—संज्ञा पुं० [सं० श्याम+जीरक] १. एक प्रकार का धान जो अगहन में तैयार होता है और जिसका चावल बहुत दिनों तक रखा जा सकता है। २. काला जीरा। कृष्ण जीरक।

श्याम टीका—संज्ञा पुं० [सं० श्याम+हिं० टीका] वह काला टीका जो बच्चों को नजर से बचाने के लिये लगाया जाता है। दिठौना। उ०—पठवहि मातु भूप दरबारै टीको श्याम लगाई।—रघुराज (शब्द०)।

श्यामता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. श्याम का भाव या धर्म। २. कालापन। साँवलापन। कृष्णता। ३. मलिनता। उदासी। जैसे,—यह बात सुनते ही उसके मुँह पर श्यामता छा गई। ४. एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर का रंग काला होने लगता है।

श्याम तीतर—संज्ञा पुं० [सं० श्याम+हिं० तीतर] प्रायः डेढ़ बालिश्त लंबा एक प्रकार का पक्षी जो अकेला रहता है और पाला भी जा सकता है।

विशेष—यह काश्मीर, भूटान और दक्षिण हिमालय में पाया जाता है। ऋतुभेदानुसार यह स्थानपरिवर्तन करता रहता है। इसकी चोंच लंबी होती है और यह बहुत तेज उड़ता है। इसका शब्द धीमा पर विचित्र होता है। इसका मांस स्वादिष्ट होता है; इसलिये इसका शिकार भी किया जाता है।

श्यामत्व—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्यामता'।

श्यामपट्ट—संज्ञा पुं० [सं० श्याम+पट्ट] कक्षाओं में लगा हुआ वह काला तख्ता जिसपर खड़िया से लिखकर अध्यापक छात्रों को समझाता है (अं० ब्लैक बोर्ड)।

श्यामपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] तमाल वृक्ष।

श्यामपत्रा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] जामुन का वृक्ष।

श्यामपर्ण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] सिरिस का पेड़। शिरीष का वृक्ष।

श्यामपर्णी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'चाय'।

श्यामपूरबी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्याम + हिं॰ पूरबी] एक प्रकार का संकर राग। इसमें और सब तो शुद्ध स्वर लगते हैं, केवल मध्यम तीव्र लगता है।

श्यामभूषण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मिर्च।

श्याम मंजरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ श्याम + मञ्जरी] काले रंग की एक प्रकार की मिट्टी जिससे वैष्णव लोग माथे पर तिलक लगाते हैं यह मिट्टी प्रायः जगन्नाथ जी के आसपास की भूमि में पाई जाती है।

श्यामल^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. पीपल। अश्वत्थ वृक्ष। २. सिरिस का पेड। शिरीष। ३. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बहुत जहरीला बिच्छू। ४. भौंरा। भ्रमर (को॰)। ५. काली मिर्च (को॰)। ६. काला रंग। श्याम वर्ण (को॰)। ७. दे॰ 'पूतिका' (को॰)।

श्यामल^{2}—वि॰ जिसका वर्ण कृष्ण हो। काला। साँवला।

श्यामलचूड़ा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] गुंजा। घुँघची।

श्यामलता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] श्यामल या काले रंग के होने का भाव। साँवलापन। कालापन।

श्यामला—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. अश्वगंध। असगंध। २. कटभी। ३. जामुन। ४. कस्तूरी। मृगमद। ५. पार्वती का एक नाम।

श्यामलिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] नीली।

श्यामलित—वि॰ [सं॰] श्याम या काला किया हुआ [को॰]।

श्यामलिया—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ श्यामलियन्] श्यामता। कालापन। श्यामलता [को॰]।

श्यामली^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] दे॰ 'श्यामला'।

श्यामली^{2}—वि॰ स्त्री॰ [सं॰ श्यामल] श्याम वर्ण की। साँवली। उ॰—काढ़ूँ कैसे हृदय तल से श्यामली मूर्ति न्यारी।—प्रिय॰, पृ॰ २४९।

श्यामलेक्षु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] काले रंग की ईख।

श्यामवर्त्म—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्यामवर्त्मन्] एक प्रकार का नेत्ररोग।

विशेष—इसमें आंख की पलकें बाहर तथा भीतर से काली होकर फूल जाती हैं और उनमें पीड़ा होती है।

श्यामवल्ली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] काली मिर्च [को॰]।

श्यामशबल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] पुराणानुसार यम के अनुचर दो कुत्ते जो उनके द्वार पर पहरा देने का काम करते हैं।

विशेष—ये चार आंखोंवाले कहे गए हैं। इन्हें संतुष्ट करने के लिये एक प्रकार का व्रत करने का भी विधान है।

श्यामशर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] एक प्रकार की ईख जो बहुत अच्छी और गुणवाली मानी जाती है।

श्यामशालि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] काला शालिधान्य।

श्यामसार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कृष्ण खदिर का वृक्ष।

श्यामसुंदर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्यामसुन्दर] १. श्रीकृष्ण का एक नाम। उ॰—लिये उठाय श्यामसुंदर को थन गहि कै मुख लीन्हों।—सूर (शब्द॰)। २. एक प्रकार का वृक्ष।

विशेष—यह वृक्ष कद में बहुत ऊँचा होता है। इसकी छाल प्रारंभ में उज्वल होती है; परंतु ज्यों ज्यों यह पुराना होता जाता है, त्यों त्यों छाल काली होती जाती है। इसके हीर की लकड़ी चमकदार होती है। पहाड़ों पर यह चार हजार फुट की ऊँचाई तक पाया जाता है। इसकी लकड़ी प्रायः बढ़िया चीजों के बनाने में काम आती है। इससे खेती के औजार भी बनाए जाते हैं।

श्यामांग^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्यामाङ्ग] बुध ग्रह, जिसका वर्ण दूर्वा की तरह या प्रियंगुकलिका की तरह श्याम माना गया है।

श्यामांग^{2}—वि॰ जिसका शरीर कृष्ण वर्ण का हो। काले या साँवले रंगवाला।

श्यामांगी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ श्यामाङ्गी] नीली दूब।

श्यामा^{1}—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. राधा या राधिका का एक नाम, जो श्याम या श्रीकृष्ण के साथ उनका प्रेम होने के कारण पड़ा था। उ॰—मदनमोहन भाव जान्यो गगन मेघ छिपाइ। श्याम श्यामा गुप्त लीला……।—सूर (शब्द॰)। २. एक गोपी का नाम। उ॰—श्यामा कामा चतुरा नवला प्रमुदा सुमदा नारि।—सूर (शब्द॰)। ३. प्रायः सवा या डेढ़ बालिश्त लंबा एक प्रकार का पक्षी।

विशेष—इसका रंग काला और पैर पीले होते हैं। यह पंजाब के अतिरिक्त सारे भारत में मिलता है। यह एक ही स्थान पर स्थिर रूप से रहता है और पहाड़ पर नहीं जाता। यह प्रायः घने जंगलों में रहता है। इसका स्वर बहुत ही मधुर और कोमल होता है। यह पत्ती और घास से घोंसला बनाता है और एक बार में चार अंडे देता है।

४. सोलह वर्ष की तरुणी। षोडशी। ५. काले रंग की गाय। ६. कबूतरी। मादा कबूतर।—बृहत्॰, पृ॰ ४१०। ७. काला अनंतमूल। श्यामा लता। ८. काली निसोथ। ९. प्रियंगु। वनिता। १०. बकुची। सोमराजी। ११. नील। १२. गूगुल। १३. सोम लता। सोमवल्ली। १४. भद्रमोथा। १५. गुडुच। गिलोय। १६. बंदा। बंदाक। बंझा। १७. कस्तूरी। मुश्क। १८. वटपत्री। पाषाणभेदी। १९. पीपल। पिप्पली। २०. हल्दी। हरिद्रा। २१. हरी दूब। २२. तुलसी। सुरसा क्षुप। २३. कमलगट्टा। २४. विधारा। २५. शिशपा वृक्ष। शीशम। २६. सावाँ नामक अन्न। २७. काली गदहपूरना। २८. गोलोचन। गोरोचन। २९. एरका या गुंदा नामक घास। ३०. लता कस्तूरी। मुश्क दाना। ३१. मेढ़ासिंगी। ३२. हरीतकी। हर्रे। ३३. कोयल नामक पक्षी। ३४. यमुना। ३५. रात। रात्रि। ३६. स्त्री। औरत। ३७. श्याम वर्ण की स्त्री। साँवली औरत (को॰)।

३८. वह स्त्री जिसको संतान न हुई हो। असूता स्त्री (को०)। ३९. तपे हुए सोने के वर्ण की एक विशिष्ट प्रकार की स्त्री। वह स्त्री जो शीतऋतु से सुखद ऊष्मायुक्त और ग्रीष्म में सुखद शीतल हो (को०)। ४०. छाया। ४१. कालिका देवी का एक नाम।

श्यामा²—वि० १. तपाए हुए सोने के समान वर्णवाली। २. श्याम रंगवाली। काली।

श्यामाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँवाँ नामक अन्न। २. एक देश। —बृहत्०, पृ० ८६।

श्यामाढकी—संज्ञा स्त्री० [सं०] काले फूल की अरहर।

विशेष—यह वैद्यक के अनुसार दीपन और पित्त तथा दाह की नाशक मानी जाती है।

श्यामायन—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम जो गोत्रप्रवर्तक ऋषि थे।

श्यामायनि—संज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक आचार्य का नाम।

श्यामायनी—संज्ञा पुं० [सं०] १. वैशंपायन के शिष्यों का संप्रदाय। वह जो इस संप्रदाय में हो।

श्यामायमाना—वि० स्त्री० [सं०] १. श्यामतायुक्त। हरीभरी। हरीतिमायुक्त। २. श्याम अर्थात् कृष्ण के न रहने पर भी जो श्यामयुक्त सी प्रतीत होती हो (लाक्ष०)। उ०—वे आए जिस काल कांत व्रज में देखा महा मुग्ध हो, श्रीवृंदावन की मनोज्ञ मधुरा श्यामायमाना मही।—प्रिय०, पृ० ९८।

श्यामालता—संज्ञा स्त्री० [सं०] काला अनंतमूल। कृष्ण शारिवा।

श्यामाह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिप्पली। पीपल।

श्यामिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काला रंग। कृष्ण वर्ण। २. कालापन। श्यामता ३. मलिनता। उदासी। ४. अपवित्रता (को०)। ५. खोटाई। खोटापन। ६. मैल या किट्ट जो किसी धातु पर हो (को०)।

श्यामित—वि० [सं०] काला बनाया या किया हुआ [को०]।

श्यामेक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] काला ईख। कजली ईख।

श्यार(पु)†—संज्ञा पुं० [फ़ा० शहर] दे० 'शहर'। उ०—श्यार के वो पापी पावाँ मुज पो आ सकते नँई। मैं तो मैं मेरी गरद को बी वो पा सकते नँई।—दक्खिनी०, पृ० २९६।

श्याल¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. पत्नी का भाई। साला। उ०—बार बार सत्कार करि, कीन्हो श्याल निहाल।—रघुराज (शब्द०)। बहन का पति। बहनोई। भगिनीपति। (ब्रह्मवैवर्त)।

श्याल²—संज्ञा पुं० [सं० श्रृगाल] गीदड़। सियार। उ०—रोव वृषभ तुरंग अरु नाग, श्याल दिवस निशि बोले काग।—सूर (शब्द०)।

श्यालक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्यालिका] पत्नी का भाई। साला।

श्याल काँटा—संज्ञा पुं० [श्याल ? + हिं० काँटा] स्वर्णक्षीरी। सत्यानाशी। भरभाँड़।

श्यालकी, श्यालिका, श्याली संज्ञा स्त्री० [सं०] पत्नी की बहन। साली।

श्याव¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्यावा, श्यावी] कृष्ण और पीत मिश्रित (वर्ण)। काला और पीला मिला हुआ (रंग)। कपिश।

श्याव²—संज्ञा पुं० १. काला पीला मिला हुआ रंग। कपिश वर्ण। २. सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बिच्छू जिसका विष बहुत तेज नहीं होता।

श्यावक—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक प्राचीन राजर्षि का नाम।

श्यावता—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्याव (वर्ण) का भाव या धर्म। कपिशता।

श्यावतैल—संज्ञा पुं० [सं०] आम का पेड़।

श्यावदंत—संज्ञा पुं० [सं० श्यावदन्त] १. दाँतों का एक प्रकार का रोग।

विशेष—इसमें रक्त मिश्रित पित्त से दाँत जलकर काले, पीले या नीले हो जाते हैं।

२. वह जिसके दाँत स्वभावतः काले रंग के हों। ३. वह व्यक्ति जिसके आगे के दो दाँतों के बीच छोटा सा दाँत हो या उनके ऊपर दाँत हो (को०)।

श्यावदंतक—संज्ञा पुं० [सं० श्यावदन्तक] दे० 'श्यावदंत'।

श्यावनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

श्यावरथ—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

श्याववर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० श्याववर्त्मन्] आँखों का श्यामवर्त्मन् नामक रोग। वि० दे० 'श्यामवर्त्म'।

श्यावाश्व—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

श्यावास्य—वि० [सं०] जिसका मुख श्याम रंग का हो [को०]।

श्येत¹—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्येता, श्येती] श्वेत। सफेद। शुक्ल। (वर्ण)।

श्येत²—संज्ञा पुं० सफेद रंग। श्वेतवर्ण।

श्येतकोलक—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली।

श्येन—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिकरा या बाज नामक प्रसिद्ध पक्षी जो प्रायः छोटे छोटे पक्षियों का शिकार किया करता है। उ०—शून्याश्रम से इधर दशानन, मानों श्येन कपोती को। हर ले चला विदेहसुता को, भय से अबला रोती को।—साकेत, पृ० ३८४।

पर्या०—शशघातन। शशाद। शशादन। कपोतारि। क्रूर। वेगी। खगांतक। करग। ग्राहक। लंबकर्ण। नीलपिच्छ। रणप्रिय। रणपक्षी। भयंकर। स्थूलनील। पिच्छबाण। मारक। घातिपक्षी।

२. दोहे के चौथे भेद का नाम। इसमें १९ गुरु और १० लघु मात्राएँ होती हैं। ३. पीला रंग। पांडुर वर्ण। ४. श्वेत वर्ण। सफेद रंग (को०)। ५. धवलिमा। श्वेतता (को०)। ६. हिंसा।

हिम्सन (को०)। ७. अश्व। घोड़ा (को०)। ८. एक प्रकार का सैनिक व्यूह। श्येन व्यूह (को०)।

श्येनकरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी काम को उतनी ही तेजी और दृढ़ता से करना जितनी तेजी और दृढ़ता से बाज झपटकर अपने शिकार को पकड़ता है। २. जल्दबाजी। शीघ्रता। उतावलापन। हड़बड़ी (को०)।

श्येनकरणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्येनकरण' [को०]।

श्येनगामी—संज्ञा पुं० [सं० श्येनगामिन्] रामायण के अनुसार एक राक्षस का नाम।

श्येनघंटा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्येनघण्टा] दंती वृक्ष। उदुंबरपर्णी। विशेष दे० 'दंती'।

श्येनचित्—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ आदि में अग्नि स्थापित करने की वह वेदी जिसका आकार श्येन या बाज पक्षी के समान होता है। २. श्येनजीवी (को०)।

श्येनचित—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार की अग्नि। २. 'श्येनचित्'-१ [को०]।

श्येनजीवी—संज्ञा पुं० [सं० श्येनजीविन्] वह जो श्येन या बाज पकड़ और बेचकर जीविका निर्वाह करता हो।

विशेष—मनु ने ऐसे आदमी के साथ एक पंक्ति में बैठकर खाने पीने का निषेध किया है।

श्येनपात्—संज्ञा पुं० [सं०] १. बाज की तरह झपटना या झपट्टा मारना। २. ऐंद्रजालिकों का अनुकूल अद्भुत कार्य [को०]।

श्येनभृत—संज्ञा पुं० [सं०] श्येन द्वारा लाया हुआ, सोम [को०]।

श्येनव्यूह—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार वह दंडव्यूह जिसमें पक्ष और कक्ष को स्थिर रखकर उरस्य को आगे बढ़ाया जाय।

श्येनहृत्, श्येनाहृत—संज्ञा पुं० [सं०] सोम लता।

श्येनिका[१]—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में ११ अक्षर होते हैं; और मात्रा के अनुसार उनका क्रम इस प्रकार होता है—र, ज, र, ल, ग (SIS, ISI. S,S, S)। इसका दूसरा नाम 'श्येनी' भी है।

श्येनिका[२]—संज्ञा स्त्री० बाज पक्षी की मादा।

श्येनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. दे० 'श्येनिका'। २. मार्कंडेयपुराण के अनुसार कश्यप की एक कन्या का नाम।

विशेष—यह दक्ष की पुत्री ताम्रा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी। कहते हैं, बाज, तोते, कबूतर आदि पक्षी इसी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे।

श्यैनंपात—संज्ञा पुं० [सं० श्यैनम्पात] १. श्येन छोड़ने का उपयुक्त स्थान। २. दे० 'श्यैनंपाता' [को०]।

श्यैनंपाता—संज्ञा स्त्री० [सं० श्यैनम्पाता] १. मृगया। शिकार। श्येन पक्षी द्वारा शिकार करना [को०]। २. श्येन छोड़ने की उपयुक्त भूमि [को०]।

श्यैन—वि० [सं०] श्येन वा बाज संबंधी [को०]।

श्यैनिक—संज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का याग, जो एक दिन में होता था।

श्यैनिक शास्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] मृगया करने का ढंग बतानेवाला ग्रंथ [को०]।

श्यैनेय—संज्ञा पुं० [सं०] जटायु का एक नाम।

श्योणाक, श्योनाक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सोनापाढ़ा वृक्ष।—बृहत्संहिता, पृ० ३५६। २. लोध्र। लोध।

श्योरा—संज्ञा पुं० [लश०] बड़ी मेख।

क्रि० प्र०—ठोंकना।—मारना।

श्रंग[१]—संज्ञा पुं० [सं० श्रङ्ग] गमन। जाना।

श्रंग[२]—संज्ञा पुं० [सं० शृङ्ग] शृंग। (डिं०)।

श्रंथ—संज्ञा पुं० [सं० श्रन्थ] १. संसार के बंधन से छुड़ानेवाले, विष्णु। २. बंधन। ३. मोक्ष। ४. ढीला वा शिथिल करना (को०)। ५. शिथिलता। ढीलापन (को०)। ६. छोड़ना वा मुक्त करना (को०)।

श्रंथन—संज्ञा पुं० [सं० श्रन्थन] १. खोलना। छोड़ना। ढीला करना। २. हिंसन। घातन। ३. नष्ट या विध्वस्त करना। ४. बाँधना। अच्छी तरह संबद्ध करना। ५. ग्रंथन करना। रचना। जैसे, गद्य या पद्यात्मक कृति [को०]।

श्रथित—वि० [सं० श्रन्थित] १. बँधा हुआ। एक साथ बाँधा हुआ। २. शिथिलित। ढीला किया हुआ। ३. मुक्त। ४. एक दूसरे से संबद्ध। परस्पर संबद्ध। ५. क्षतिग्रस्त। चोट खाया हुआ। घायल (को०)। ६. विनष्ट। ध्वस्त (को०)। ७. अभिभूत। पराभूत (को०)। ८. प्रसन्न। हर्षित। खुश।

श्रसन—संज्ञा पुं० [सं०] वह ओषधि जो पेट में जमे हुए मल या गोटे को बाहर निकालती हो। जैसे, अमलतास का गूदा।

श्रक(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० स्रक्] माला। उ०—माला श्रक श्रज गुनवती यह जु नाम की दाम।—अनेकार्थ०, पृ० ७८।

श्रग(पु)—संज्ञा पुं० [सं० स्वर्ग>सर्ग>श्रग] दे० 'स्वर्ग'। उ०—दादू श्रग पयाल मैं, साचा लेवै गाँव। सकल लोक सिरि देखिए, परगट सबही ठाँव।—दादू० बानी, पृ० ५२।

श्रग(पु)—संज्ञा पुं० [सं० स्रक्] माला।

श्रज(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० स्रज्, स्रक्] माला।—अनेकार्थ०, पृ० ७८।

श्रथन—संज्ञा पुं० [सं०] १. मार डालना। वध। हत्या। २. अलग करना। बंधन से मुक्त करना। खोलना। ३. शिथिल या ढीला करना (को०)। ४. यत्न। कोशिश। ५. बाँधना। बंधन में डालना (को०)। ५. बारबार प्रसन्न करना (को०)।

श्रद्दधान—वि० [सं०] विश्वास रखनेवाला। आस्थावान्। श्रद्धापूर्ण [को०]।

श्रद्दान—संज्ञा पुं० [सं०] आस्था। विश्वास [को०]।

श्रद्ध—वि० श्रद्धा या विश्वास करनेवाला। श्रद्धालु। आस्थावान् [को०]।

श्रद्धांजलि—संज्ञा पुं० [सं० श्रद्धाञ्जलि] श्रद्धायुक्त प्रणाम। श्रद्धा सहित किसी के संमान में विनयपूर्वक कुछ कथन या निवेदन। उ०—श्रद्धांजलि स्वीकार करें गुरुदेव शिष्य की, आज श्राद्ध बासर के वाष्प नयन अवसर पर।—युगपथ, पृ० १०६।

श्रद्धा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार की मनोवृत्ति, जिसमें किसी बड़े या पूज्य व्यक्ति के प्रति भक्तिपूर्वक विश्वास के साथ उच्च और पूज्य भाव उत्पन्न होता है। बड़े के प्रति मन में होनेवाला आदर और पूज्य भाव। उ०—(क) महिमा वेद पुराण सबै वहु भाँति बखानत। यथा सहित सब करत सहित श्रद्धा गुण गानत।—केशव (शब्द०)। (ख) पूजत श्रद्धा भक्ति जु कोई। ताके वश्य जगत हम दोई।—सबलसिंह (शब्द०)। २. बौद्ध धर्म के अनुसार बुद्ध, धर्म और संघ में विश्वास। ३. वेदादि-शास्त्रों और आप्त पुरुषों के वचनों पर विश्वास। भक्ति। आस्था। ४. शुद्धि। ५. चित्त की प्रसन्नता। ६. कर्दम मुनि की कन्या का नाम।

विशेष—भागवत के अनुसार श्रद्धा कर्दम की पत्नी देवहूति के गर्भ से उत्पन्न हुई थी और अत्रि ऋषि की पत्नी थी। इन्हें मनु की पत्नी भी कहा गया है। आस्था, विश्वास, दृढ़ता, सत्यता की देवी के रूप में इसका प्राचीन ग्रंथों में अनेक जगह अनेक रूपों में उल्लेख आया है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्रजापति की कन्या, शतपथ में सूर्य की पुत्री, महाभारत में दक्ष की कन्या और धर्म की पत्नी के रूप में इनका उल्लेख आया है और मार्कंडेय-पुराण में श्रद्धा काम की माता कही गई है। ७. घनिष्ठता। परिचय (को०)। ८. गर्भिणी महिला का दोहद (को०)। ९. प्रबल या उत्कट इच्छा (को०)।

श्रद्धाकृत—वि० [सं०] श्रद्धावान् होकर किया हुआ। जो श्रद्धायुक्त होकर किया गया हो [को०]।

श्रद्धाजाड्य—संज्ञा पुं० [सं०] श्रद्धा के कारण उत्पन्न जड़ता। अंधविश्वास [को०]।

श्रद्धातव्य—वि० स्त्री० [सं०] जिसपर श्रद्धा की जा सके। श्रद्धा करने के योग्य।

श्रद्धादेय—संज्ञा पुं० [सं०] विश्वास। विश्रंभ। प्रत्यय [को०]।

श्रद्धादेव—वि० [सं०] जो श्रद्धा पर पूर्ण विश्वास करता हो। श्रद्धालु [को०]।

श्रद्धादेही—वि० स्त्री० [सं० श्रद्धा + देही] श्रद्धास्वरूपिणी। श्रद्धारूपी देहवाली। उ०—श्रद्धादेही आशागेही, स्नेही रूपलता। श्री लाईं तुम, शोभा लाईं, लाईं मधुमयता।—अग्नि०, पृ० २३।

श्रद्धान—संज्ञा पुं० [सं०] श्रद्धा।

श्रद्धान्वित—वि० [सं०] श्रद्धावान्। श्रद्धायुक्त।

श्रद्धामय, श्रद्धायुक्त—वि० [सं०] श्रद्धा से पूर्ण। श्रद्धावान्। श्रद्धालु [को०]।

श्रद्धारहित—वि० [सं०] जो श्रद्धायुक्त न हो। श्रद्धाविरहित [को०]।

श्रद्धालु—वि० [सं०] १. जिसके मन में श्रद्धा हो। श्रद्धा रखनेवाला। श्रद्धायुक्त। श्रद्धावान्। २. (स्त्री) जिसके मन में, गर्भावस्था को अनेक प्रकार की अभिलाषाएँ हों। दोहदवती।

श्रद्धावान्—संज्ञा पुं० [सं० श्रद्धावत्] १. वह जिसके मन में श्रद्धा हो। श्रद्धायुक्त। श्रद्धालु पुरुष। २. जिसके मन में धर्म के प्रति निष्ठा हो। धर्मनिष्ठ।

श्रद्धाविरहित—वि० [सं०] दे० 'श्रद्धारहित' [को०]।

श्रद्धासमन्वित—वि० [सं०] श्रद्धान्वित। श्रद्धायुक्त [को०]।

श्रद्धास्पद—वि० [सं०] जिसके प्रति श्रद्धा की जा सके। श्रद्धापात्र। श्रद्धेय। पूजनीय।

श्रद्धी—संज्ञा पुं० [सं० श्रद्धिन्] जिसके मन में श्रद्धा हो। श्रद्धावान्।

श्रद्धेय—वि० [सं०] [संज्ञा श्रद्धेयत्व] जिसपर श्रद्धा की जाय। श्रद्धा करने के योग्य। श्रद्धा का पात्र। श्रद्धास्पद।

श्रद्धेयता—संज्ञा पुं० [सं०] श्रद्धेय होने का भाव वा कर्म।

श्रद्धेयत्व—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रद्धेयत्व'। श्रद्धेय होने की पात्रता या भाव।

श्रपण¹—संज्ञा पुं० [सं०] गार्हपत्य या आहवनीय अग्नि जिसके द्वारा चरु पकाया जाय। उबालना। चरु आदि पकाने की क्रिया।

श्रपणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रपण'।

श्रपित¹—वि० [सं०] पका हुआ। पक्व। सिझाया वा उबाला हुआ।

श्रपित²—संज्ञा पुं० [सं०] पकाया या उबाला हुआ मांस आदि [को०]।

श्रपिता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काँजी। कांजिक। २. चावल की माँड़।

श्रप्प—संज्ञा पुं० [सं० सर्प] दे० 'सर्प'। उ०—अगनि होत्र बरमेद, मध्य जग मेघ श्रप्प बर।—पृ० रा०, ५५।४०।

श्रबⓅ—वि० [सं० सर्व] दे० 'सब'। उ०—षबरि श्रब धूमानं दिन्नं नृप आदि सूर सामंत। अनंगपाल तप सरनं दिल्लीय दीन राज प्रथिराजं।—पृ० रा०, १९।९५।

श्रब्बदा—अव्य० [सं० सर्वदा] दे० 'सर्वदा'। उ०—वही तत्त त्रैलोक संसार सारं। वही तारनं सत्त भौसिंध पारं। जगत्तं अधारं निराधार वोही। वही श्रब्बदा संपदा नित्य सोही।—पृ० रा०, १।७७२।

श्रब्बरⓅ—सर्व० [सं० सर्व] दे० 'सब'। उ०—वंटि दियौ प्रथिराज भाग किन्ने सह श्रब्बर।—पृ० रा०, २४।४८४।

श्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी कार्य के संपादन में होनेवाला शारीरिक अभ्यास। शरीर के द्वारा होनेवाला उद्यम। परिश्रम। मेहनत। मशक्कत। उ०—दूरि तीर्थन श्रम करि जाहिं। जहाँ रहैं तहँ लख्यों न ताहिं।—सूर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—उठाना।—करना।—पड़ना।—होना।

२. थकावट। क्लांति।

मुहा०—श्रम पाना = परिश्रम करना। मेहनत करके थकना। उ०—आजु कहा उद्यम करि आए। कहै वृथा भ्रमि भ्रमि श्रम पाए।—सूर (शब्द०)।

३. साहित्य में संचारी भावों के अंतर्गत एक भाव। कोई कार्य करते करते संतुष्ट और शिथिल हो जाना। ४. क्लेश। दुःख। तकलीफ। ५. दौड़ धूप। परेशानी। ६. पसीना। स्वेद। ७. व्यायाम। कसरत। ८. शस्त्रों का अभ्यास। सैनिक कवायद। ९. चिकित्सा। इलाज। १०. खेद। ११. तप। १२. प्रयास। १३. (शास्त्रादि का) अभ्यास।

श्रमकण—संज्ञा पुं० [सं०] पसीने की बूँदें, जो परिश्रम करने पर शरीर से निकलती हैं। स्वेदबिंदु।

श्रमकनⓅ—संज्ञा पुं० [सं० श्रमकण] स्वेदबिंदु। श्रमकण। उ०—(क) श्यामल तन श्रमकन राजत ज्यों नवघन सुधा सरोवर खारे।—तुलसी (शब्द०)। (ख) मुझे व्यजन सा हिलकर अविरल शीतलता सरसाने दो। अपने मुख से जगचिंता के श्रमकन सदय! सुखाने को।—वीणा, पृ० २०।

श्रमकर—वि० [सं०] खेदकारक। थकानेवाला [को०]।

श्रमकर्षित—वि० [सं०] मेहनत से थका हुआ [को०]।

श्रमक्लांत—वि० [सं० श्रमक्लांत] मेहनत से थका हुआ। श्रम से शिथिल [को०]।

श्रमघ्न—वि० [सं०] जिससे श्रम दूर हो। थकावट दूर करनेवाला।

श्रमघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] मीठा कद्दू या कुम्हड़ा। मीठी लौकी [को०]।

श्रमजर्जर—वि० [सं० श्रम+जर्जर] परिश्रम से थका हुआ या चूर। उ०—वे ढाल ढाल कर उर अपने, है बरसा रहीं मधुर सपने। श्रमजर्जर विधुर चराचर पर, गा गीत स्नेह-वेदना-सने।—युगांत, पृ० १९।

श्रमजल—संज्ञा पुं० [सं०] पसीना। स्वेद। प्रस्वेद। उ०—(क) श्रमजल बिंदु इंदु आनन पर राजत अति सुकुमार। मानो विविध भाव मिल विलसत मगन सिंधु रस सार।—सूर (शब्द०)। (ख) कुमकुम आड़ अवत श्रमजल मिलि मधु पीवत छबि छीट चली री।—सूर (शब्द०)।

श्रमजित—वि० [सं० श्रम+सं० जित् या हिं० जीतना] जो मनमाना परिश्रम करने पर भी न थके। श्रम को जीत लेनेवाला। उ०—स्वामि भक्त श्रमजित सुधी, सेनापति सु अभीत। अनालसी जन प्रिय जसी, सुख संग्राम अजीत।—केशव (शब्द०)।

श्रमजीवी[1]—वि० [सं० श्रमजीविन्] १ शारीरिक परिश्रम करनेवाला। मेहनत करके पेट पालनेवाला। उ०—चींटी है प्राणी सामाजिक वह श्रमजीवी, वह सुनागरिक।—युगवाणी, पृ० २२। २. बौद्धिक परिश्रम करके जीविका चलानेवाला। जैसे, श्रमजीवी पत्रकार, श्रमजीवी लेखक।

श्रमजीवी[2]—संज्ञा पुं० मजदूर। कुली। उ०—ये नाप रहे निज घर का मग, कुछ श्रमजीवी धर डगमग पग, भारी है जीवन भारी पग।—युगांत, पृ० २०।

श्रमण[1]—संज्ञा पुं० [सं०] १. बौद्ध या जैन मतावलंबी संन्यासी। २. यति। मुनि। ३. वह जो नीच कर्म करके जीविका निर्वाह करता हो। नीच। घृणित। ४. श्रमजीवी। मजदूर। ५. भिक्षुक (को०)।

श्रमण[2]—वि० १. श्रम करनेवाला। २. नीच। निम्न कोटि का। ३. नंगा [को०]।

श्रमणक—संज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध या जैन भिक्षु [को०]।

श्रमणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुदर्शना नामक ओषधि। २. जटा। मांसी। बालछड़। ३. मुंडी। घुंडी। श्रावणिका। ४. शबर जाति की एक स्त्री का नाम। ५. संन्यासिनी। ६. लावण्यमयी स्त्री (को०)। ७. कठिन परिश्रम करनेवाली स्त्री (को०)।

श्रमणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] भिक्खुनी। बौद्ध संन्यासिनी। दे० 'श्रमणा' [को०]।

श्रमदान—संज्ञा पुं० [सं०] सार्वजनिक कार्य में स्वेच्छया बिना मजदूरी लिए शारीरिक मेहनत करना [को०]।

श्रमबिंदु—संज्ञा पुं० [सं० श्रमबिन्दु] पसीने की बूँदें जो परिश्रम करने पर शरीर से निकलती हैं। श्रमकण। स्वेद।

श्रमभंजिनी—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रमभञ्जिनी] नागवल्ली लता, जो थकावट दूर करनेवाली मानी जाती है। पान। नागवल्ली।

श्रममोहित—वि० [सं०] अति श्रम के कारण जिसकी बुद्धि व्यवस्थित न हो [को०]।

श्रमवारि—संज्ञा पुं० [सं०] परिश्रम के कारण शरीर से निकलनेवाला पसीना। श्रमकण।

श्रमविंदु—संज्ञा पुं० [सं० श्रमविन्दु] स्वेद। श्रमबिंदु।

श्रमविनयन—वि० [सं०] थकान को दूर करनेवाला। [को०]

श्रमविनोद—संज्ञा पुं० [सं०] वह कार्य जिससे थकान दूर हो सके [को०]।

श्रमविभाग—संज्ञा पुं० [सं०] १. किसी कार्य के भिन्न भिन्न अंगों के संपादन के लिये, अलग अलग व्यक्तियों की नियुक्ति। परिश्रम या काम का विभाग। जैसे,—किसी का रूई ओटना, किसी का सूत कातना, किसी का कपड़ा बुनना, किसी का अनाज पीसना, किसी का रोटी पकाना। २. श्रमिकों के हित आदि से संबंधित मामलों की देखभाल करनेवाला सरकारी महकमा।

श्रमशीकर—संज्ञा पुं० [सं०] श्रम से होनेवाला पसीना। श्रमकण।

श्रमशील—वि० [सं०] मेहनती। परिश्रम करनेवाला [को०]।

श्रमसहिष्णु—वि० [सं०] जो यथेष्ट श्रम कर सकता हो। मेहनती। परिश्रमी।

श्रमसाध्य—वि० [सं०] जिसके संपादन में श्रम करना पड़े। जो सहज में या बिना परिश्रम न सध सके।

श्रमसीकर—संज्ञा पुं० [सं०] पसीना। श्रमबिंदु। उ०—(क) कुंडल मकर कपोलनि झलकत श्रमसीकर के दाग।—सूर० (शब्द०)। (ख) सूखे श्रमसीकर वे, छबि के निर्झर झरे नयनों से, शक्त शिखायें हुईं रक्तवाह ले।—अनामिका, पृ० १४७।

श्रमस्थान—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रम करने का स्थान। व्यायामभूमि। कारखाना [को०]।

श्रमांबु—संज्ञा पुं० [सं० श्रमाम्बु] पसीना। स्वेद [को०]।

श्रमार्त—वि० [सं०] श्रम से थका हुआ या चूर। उ०—हमारे देश में भी नाट्याचार्य ने नाटक की विशेषता बताते हुए लिखा कि यह दुःखी, श्रमार्त्त, शोकार्त को विश्रांतिदायक होता है।—स० शास्त्र, पृ० १६।

श्रमित—वि० [सं० श्रम] जो श्रम से शिथिल हो गया हो। श्रांत। थका हुआ। उ०—चारों भ्रातन श्रमित जानि कै जननी तब पौढ़ाए। चापत चरण जननि श्रम अपनो कछुक मधुर स्वर गाए।—सूर (शब्द०)।

श्रमितचरण—वि॰ [सं॰ श्रमित + चरण] जिसके पाँव थक गए हों। उ०—श्रमित चरण लौटे गृहिजन निज निज द्वार ।—अपरा, पृ० ३५ ।

श्रमी—वि॰, संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्रमिन्] १. मेहनती । परिश्रमी । उ०—थके श्रमी जीवों के पसीने भरे सीने लग, जीने को सफल करने के लिये सोते चलो ।—झरना, पृ० ४१ २. दे॰ । 'श्रमजीवी' ।

श्रय—संज्ञा पुं॰ [स॰] आश्रय । श्रयण [को॰] ।

श्रयण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] आश्रय ।

श्रयना (पु)—वि॰ सं॰ [सं॰ स्रवण] श्रयण करना । आश्रय करना या लेना । उ०—इकै श्रइ कीरति अमृत एक । कछूक कवित्त सुधारैं विसेक ।—पृ० रा०, १२ ३३४ । २. गिराना । बहाना । दे॰ 'श्रवना' ।

श्रवंतिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ श्रवन्तिनी] नदी ।

श्रव^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. जिससे सुना जाय, कान (डिं०) ।

यौ०—श्रवपत्र = एक आभूषण । कर्ण फूल ।

२. जो सुना जाय, शब्द । ३. श्रवण करना । सुनना जैसे, सुखश्रव (को॰) । ४. त्रिभुज का कर्ण (को॰) । ५. स्रवित होना । क्षरण (को॰) । ६. कीर्ति । यश (को॰) । ७. अन्न । धान्य (को॰) । ८. धन । संपत्ति (को॰) ।

श्रव (पु)^{2}—सर्व॰ [सं॰ सर्व] सब । उ०—राजकुंवर श्रव वर्णाव्या, सयल सभा साभलो हो संजोग ।—बी० रासो, पृ० १०० ।

श्रवण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. वह इंद्रिय जिससे शब्द का ज्ञान होता है । कान । कर्ण । श्रुति । २. वह ज्ञान जो श्रवणेंद्रिय द्वारा होता है । ३. सुनना । श्रवण करने की क्रिया । शास्त्रीय परिभाषा में शास्त्रों में लिखी हुई बातें सुनना और उनके अनुसार कार्य करना अथवा देवताओं आदि के चरित्र सुनना । उ०—श्रवण कीर्त्तन सुमिरन करै । पद सेवन अर्चन उर धरै ।—सूर (शब्द०) । ४. नौ प्रकार की भक्तियों में से एक प्रकार की भक्ति । उ०—श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, पद रत, अरचन, वंदन दास । सख्य और आत्मा निवेदन प्रेम लक्षण जास ।—सूर (शब्द०) । ५. वैश्य तपस्वी अंधक मुनि के पुत्र का नाम । ६. राजा मेघध्वज के पुत्र का नाम । उ०—ता संगति नव सुत नित जाए । श्रवणादिक मिलि हरि गुण गाए ।—सूर (शब्द०) । ७. अश्विनी आदि सत्ताइस नक्षत्रों में से बाइसवाँ नक्षत्र, जिसका आकार शर या तीर का सा माना गया है ।

विशेष—इसमें तीन तारे हैं, और इसके अधिपति देवता हरि कहे गए हैं । फलित ज्योतिष के अनुसार जो बालक इस नक्षत्र में जन्म लेता है, वह शास्त्रों से प्रेम रखनेवाला, बहुत से लोगों से मित्रता रखनेवाला, शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाला और अच्छी संतानवाला होता है ।

८. किसी त्रिभुज का कर्ण (को॰) । ९. अध्ययन (को॰) । १०. यश । कीर्ति (को॰) । ११. धन । संपत्ति (को॰) । १२. बहना । क्षरण । स्रवित होना (को॰) ।

श्रवणकातरता—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] सुनने की लालसा [को॰] ।

श्रवणगोचर—वि॰ [सं॰] १. जो सुना जा सके । २. जहाँ से सुनाई पड़े [को॰] ।

श्रवण द्वादशी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] भादों मास के शुक्ल पक्ष की वह द्वादशी जो श्रवण नक्षत्र से युक्त हो । उ०—अस कहि शुभ दिन शोधि ब्रह्म ऋषि तुरत सुमंत बोलायो । भादौं मास श्रवण द्वादशि को सुदिवस सुखद सुनायो ।—रघुराज (शब्द०) ।

विशेष—यह बहुत पुण्य तिथि मानी जाती है । इसे वामन द्वादशी भी कहते हैं । कहते हैं, वामनावतार इसी दिन हुआ था ।

श्रवणपथ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्रवणेंद्रिय । कान ।

श्रवण परुष—वि॰ [सं॰] जो सुनने में कठोर हो । श्रवणकटु ।

श्रवणपालि, श्रवणपाली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] कान की ललरी [को॰] ।

श्रवणपुट, श्रवणपुटक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कर्णरंध्र [को॰] ।

श्रवण पूरक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कान का आभूषण ।

श्रवण फूल—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्रवण + हिं॰ फूल] करनफूल ।—पोद्दार अभि॰ ग्रं॰, पृ० १९३ ।

श्रवणभूषण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कान का आभूषण ।

श्रवणविद्या—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वह विद्या जो श्रवण इंद्रिय के संपर्क से मानसिक तृप्ति प्रदान करती है । जैसे, संगीतशास्त्र ।

श्रवणविवर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कान का छेद [को॰] ।

श्रवणविषय—[सं॰] १. दे॰ 'श्रवणपथ' । २. श्रवण की सीमा में आनेवाला विषय, वस्तु आदि ।

श्रवणवृत्ति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ श्रवण + वृत्ति] सुनने की वृत्ति । श्रवण । सुनने की ललक । उ०—जिस प्रकार दर्शन वृत्ति की बोध दशा और रागात्मिका दशा ये दो दशाएँ होती हैं, उसी प्रकार श्रवण वृत्ति की भी ।—रस०, पृ० ७२ ।

श्रवणशीर्षिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] श्रावणी वृक्ष । गोरखमुंडी । बड़ी मुंडी ।

श्रवणसुभग—वि॰ [सं॰] कर्णेंद्रिय को सुख देनेवाला । जो सुनने में अच्छा लगे [को॰] ।

श्रवणहारी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्रवणहारिन्] वह जो कानों को भला लगे । सुनने में अच्छा जान पड़नेवाला । कर्णमधुर ।

श्रवणा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. बड़ी मुंडी । २. पुं (मुं॰) डेरी । ३. अश्विनी आदि सत्ताइस नक्षत्रों के अंतर्गत बाईसवाँ नक्षत्र । विशेष दे॰ 'श्रवण'—७ ।

श्रवणाधिकारी—संज्ञा पुं॰ [सं॰ श्रवणाधिकारिन्] वह जो बोल रहा हो । वक्ता [को॰] ।

श्रवणावभास—संज्ञा पुं॰ [सं॰] श्रुतिपथ । कर्ण-श्रवण-पथ [को॰] ।

श्रवणाह्वया—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. निर्विषी नामक तृण । २. जल चौलाई ।

श्रवणी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. पुं (मुं॰) डेरी । २. गोरखमुंडी । महामुंडी ।

श्रवणीय—वि० [सं०] सुवने लायक । श्रवण करने योग्य ।

श्रवणेंद्रिय—संज्ञा पुं० [सं० श्रवणेन्द्रिय] कान । कर्ण ।

श्रवणोत्पल—संज्ञा पुं० [सं०] आभूषण की दृष्टि से कान में लगाया हुआ कमल [को०] ।

श्रवणोदर—संज्ञा पुं० [सं०] कर्णरंध्र । कर्णविवर । कान [को०] ।

श्रवती(पु)—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रवन्तिनी या हिं०] नदी ।—नंद० ग्रं० पृ०, ६८ ।

श्रवन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्रवण] १. श्रवण । कान । उ०—(क) नयन बैन औ श्रवन ये सबही तोर प्रसाद । सेवा मोर यही नित बोलौं आसिरबाद ।—जायसी (शब्द०) । (ख) नैन राच्यो रूप सो श्रवनूँ राच्यो नांद ।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० १८० । २. दे० 'श्रावण' । उ०—श्रवन मास नौमी तिथि लग्गिय ।—प० रासो, पृ० १५६ । ३. आकर्णन । अकनना । श्रवण करना । सुनना ।

श्रवना(पु)^1—क्रि० अ० [सं० स्राव] बहना । चूना । रसना । उ०—राति दिवस रस श्रवत सुधा में कामधेनु दरसाई । लूट लूट दधि खात सखन सँग तैसो स्वाद न पाई ।—सूर (शब्द०) ।

श्रवना^{2}—क्रि० स० गिराना । बहाना । उ०—खर भर लंक. सशंक, दशानन गर्भ श्रवहिं अरि नारि ।—तुलसी (शब्द०) ।

श्रवनी(पु)—संज्ञा स्त्री० [हिं० सुमरनी] दे० 'सुमिरनी' । उ०—हंस दशा धरि पंथ चलावे । श्रवनी कंठी तिलक लगावे ।—कबीर सा०, पृ० २२१ ।

श्रवस्यु—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्रसिद्धि । यश । ख्याति । २. ख्यातिदायक कार्य [को०] ।

श्रवाप्य, श्रवाय्य^1—संज्ञा पुं० [सं०] बलिपशु [को०] ।

श्रवाप्य, श्रवाय्य^2—वि० प्रशंसनीय [को०] ।

श्रवित(पु)—वि० [सं० स्राव] बहा हुआ । रसा या चुआ हुआ । उ०—काचे घट में जल जथा श्रवित होत अति जाय ।—दीन ग्रं०, पृ० ७६ ।

श्रविष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] वैदिक काल के एक ऋषि का नाम ।

श्रविष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] धनिष्ठा नक्षत्र ।

श्रविष्ठाज—संज्ञा पुं० [सं०] बुधग्रह ।

श्रविष्ठामण—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

श्रविष्ठाभू -संज्ञा पुं० [सं०] बुधग्रह ।

श्रव्य—वि० [सं०] जो सुना जा सके । सुनने योग्य । जैसे,—संगीत ।

यौ०—श्रव्य काव्य = वह काव्य जो केवल सुना जा सके । वह काव्य जो अभिनय आदि के रूप में देखा जा न सके । इसके तीन भेद हैं—(१) गद्य, (२) पद्य और (३) गद्य-पद्य-मय । विशेष दे० 'काव्य' ।

श्रांत—वि० [सं० श्रान्त] १. जितेंद्रिय । शांत । ३. जो अधिक श्रम करने के कारण थक गया हो । परिश्रम से थका हुआ । ४. दुःखी । खिन्न । रंजीदा । ५. निवृत्त । ६. जो सुख भोगकर तृप्त हो चुका हो ।

यौ०—श्रांतचित्त, श्रांतमना श्रांतहृदय = दुखी । उदास । श्रांतसंवाह, श्रांतसंवाहना = थके व्यक्ति को आराम देना ।

श्रांति—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रान्ति] १, श्रम । परिश्रम । मेहनत । २. थकावट । उ०—संध्या पर्यंत मार्ग में चलती रही; इससे अत्यंत श्रांति मालूम हुई ।—प्रतापनारायण (शब्द०) । ३. खेद । दुःख । ४. विश्राम । आराम ।

श्राण^1—वि० [सं०] १. घी, दूध या जल में पका हुआ । सिद्ध । पक्व । भूना हुआ (को०) । ३. उबाला या पकाया हुआ । ४. आर्द्र । तर (को०) ।

श्राण^2—संज्ञा पुं० [सं०] उबाला हुआ मांस [को०] ।

श्राणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] माँड़ की काँजी जिसका व्यवहार पथ्य रूप में होता है । यवागू । विशेष दे० 'यवागू' ।

श्राणिक—संज्ञा पुं० [सं०] वे भृत्य जिनको केवल—भाजी (या यवागू) दी जाती थी ।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २४६ ।

श्राद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह कार्य जो श्रद्धापूर्वक किया जाय । श्रद्धा से किया जानेवाला काम । २. वह कृत्य जो शास्त्र के विधान के अनुसार पितरों के उद्देश्य से किया जाता है । जैसे पितरों के उद्देश्य से तर्पण और पिंडदान करना तथा ब्राह्मणों को भोजत कराना । उ०—श्राद्ध करत पितरन को तर्पण करि बहु भाँति । कहुँ विप्रन को देत दच्छिणा कहुँ भोजन की पाँति । —सूर (शब्द०) ।

विशेष—कुछ लोगों के मत से श्राद्ध पांच प्रकार का है—नित्य, नैमित्तिक, काम्य, वृद्धि और पार्वण और कुछ लोग इन पाँच प्रकार के श्राद्धों के अतिरिक्त नीचे लिखे सात प्रकार के और भी (कुल बारह प्रकार के) श्राद्ध मानते हैं—सपिंडन, गोष्ठी, शुद्धचर्थ, कर्मांग, दैविक, यात्रार्थ और पुष्टचर्थ ।

३. आश्विन कृष्ण पक्ष जिसमें पितरों के उद्देश्य से विशेष रूप से पिंडदान किया और ब्राह्मणभोजन कराया जाता है । पितृपक्ष । ४. विश्वास । ५. प्रीति ।

श्राद्धकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. अंत्येष्टि क्रिया । २. मृत की वार्षिक तिथि पर पिंडदान आदि करना [को०] ।

श्राद्धकर्ता—संज्ञा पुं० [सं० श्राद्धकर्तृ] श्राद्ध करनेवाला व्यक्ति । श्राद्धकारक ।

श्राद्धकृत्य—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्राद्धकर्म' ।

श्राद्धक्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्राद्धकर्म' ।

श्राद्धत्व—संज्ञा पुं० [सं०] श्राद्ध का भाव या धर्म ।

श्राद्धद—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्राद्धकर्ता' ।

श्राद्धदिन—संज्ञा पुं० [सं०] श्राद्धकृत्य करने का दिन । मृत व्यक्ति की वह वार्षिक तिथि जिस दिन मृत का श्राद्धकर्म किया जाय ।

श्राद्धदेव—संज्ञा पुं० [सं०] १. धर्मराज । २. यमराज । ३. श्राद्ध में निमंत्रित ब्राह्मण । ४. मार्कंडेय पुराण के अनुसार वैवस्वत मनु का एक नाम । ५. एक वैश्वदेव (को०) । ६. वह लोक जहाँ मरने पर पितर लोग जाते हैं । पितृलोक । ७. प्रजापति । पितर (को०) ।

श्राद्ध पक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] तर्पण, पिंडदान आदि के लिये निश्चित आश्विन मास का कृष्ण पक्ष। पितृपक्ष।

श्राद्धभुक्^{1}—संज्ञा पुं० [सं० श्राद्धभुज्] पितर [को०]।

श्राद्धभुक्^{2}—वि० श्राद्धान्न भोजन करनेवाला [को०]।

श्राद्धभोक्ता—संज्ञा पुं० [सं० श्राद्धभोक्तृ] पितर [को०]।

श्राद्धमित्र—संज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार वह व्यक्ति जो श्राद्धकर्म के अवसर पर मित्र बनावे या मित्रता करे [को०]।

श्राद्धशाक—संज्ञा पुं० [सं०] नाड़ी शाक। कालशाक।

श्राद्धसूतक—संज्ञा पुं० [सं०] श्राद्ध के उद्देश्य से बनाया हुआ भोजन। पितरों के उद्देश्य से ब्राह्मणों को खिलाने के लिये बनाया हुआ भोजन।

श्राद्धिक^{1}—वि० [सं०] श्राद्ध संबंधी। श्राद्ध का।

श्राद्धिक^{2}—संज्ञा पुं० १. वह जो श्राद्ध के अवसर पर पितरों के उद्देश्य से भोजन करता हो। श्राद्ध में दी हुई वस्तु को स्वीकार करनेवाला। २. श्राद्ध में दी हुई वस्तु [को०]।

श्राद्धी—संज्ञा पुं० [सं० श्राद्धिन्] श्राद्ध में भोजन करनेवाला। श्राद्धिक।

श्राद्धीय—वि० [सं०] श्राद्ध संबंधी। श्राद्ध का।

श्राद्धेय—वि० [सं०] श्राद्ध के योग्य। श्राद्ध में प्रयुक्त होने योग्य। जैसे, श्राद्धेय अन्न [को०]।

श्राप (पु)—संज्ञा पुं० [सं० शाप] दे० 'शाप'। उ०—राछसन मारि विश्वामित्र सा करायो यज्ञ तारी रिषि नारी सिला श्राप सो भई रहा।—रघुनाथ बंदीजन (शब्द०)।

श्रापी—संज्ञा पुं० [सं० श्रापिन्] वह जो भोजन बनाता हो। रसोइया।

श्राम—संज्ञा पुं० [सं०] १. मास। महीना। २. मंडप। छाजन। घर। ३. काल। समय।

श्रामणेर. श्रामणेक—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो नया बौद्धभिक्षु हुआ हो [को०]।

श्राय—संज्ञा पुं० [सं०] आश्रय।

श्रावंती—संज्ञा स्त्री० [सं०] धर्मपत्तन। धर्मपुरी। दे० 'श्रावस्ती' [को०]।

श्राव—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रवण। कान। २. गंधाबिरोजा। ३. दे० 'स्रवण'।

श्रावक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्राविका] १. बौद्ध धर्म को माननेवाला संन्यासी। २. जैन धर्म को माननेवाला संन्यासी। ३. वह जो जैन धर्म का अनुयायी हो। ४. नास्तिक। पाखंडी। उ०—यह नरक को काउ जीव है जिनि याहि देखि डेराहि। निज जानियै यह श्रावका अति दूर ते तजि ताहि।—केशव (शब्द०)। ५. दूर की आवाज। दूर का शब्द। ६. कौआ। काक। ७. छात्र। शिष्य।

श्रावक^{2}—वि० श्रवण करनेवाला। सुननेवाला।

श्रावग (पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्रावक] दे० 'श्रावक'। उ०—अजहूँ, श्रावग ऐसो करै। ताही को मारग अनुसरै।—सूर (शब्द०)।

श्रावगी—संज्ञा पुं० [सं० श्रावक] जैन धर्म को माननेवाला। जैनी।

श्रावण^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. चैत आदि महीनों में से एक महीने का नाम। असाढ़ के बाद और भादों के पहले का महीना।

विशेष—गणना में यह पाँचवाँ महीना होता है और वर्षा ऋतु में पड़ता है। इस मास की पूर्णमासी श्रवण नक्षत्र से युक्त होती है. इसी लिये इसे श्रावण कहते हैं। सावन।

२. एक प्रकार का वर्ष।

विशेष—यदि श्रवण अथवा धनिष्ठा नक्षत्र में बृहस्पति उदय हो. तो उस दिन से एक वर्ष तक का समय श्रावण कहलाता है। कहते हैं, इस वर्ष में धान्य खूब पकते हैं, सब लोग बहुत सुखी होते हैं, पर पाखंडी मनुष्य तथा उनके अनुयायी पीड़ित होते हैं।

३. श्रावण मास की पूर्णिमा। ४. शब्द, जिसका ग्रहण श्रवणेंद्रिय द्वारा होता है। आवाज। ५. श्रवण करने से प्राप्त ज्ञान। श्रवणजन्य ज्ञान (को०)। ६. श्रवण नामक तपस्वी (को०)। ७. नास्तिकता। पाखंड। ८. वंचक। पाखंडी (को०)। ९. मार्कंडेय पुराण के अनुसार, योगियों के योग में होनेवाले पांच प्रकार के विघ्न या उपसर्ग जिसमें योगी हजार योजन तक के शब्द ग्रहण करके उनके अर्थ हृदयंगम करता है।

श्रावण^{2}—वि० १. श्रवण नक्षत्र संबंधी। श्रवण नक्षत्र का। २.श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न (को०)। ३. श्रवणेंद्रिय या कान से संबंधित (को०)। ३. वेदविहित वेदोक्त। वैदिक (को०)।

यौ०—श्रावण ज्ञान, श्रावण प्रत्यक्ष = श्रवणेंद्रिय द्वारा प्राप्त ज्ञान वा अनुभूति।

श्रावणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. भुँइ कदंब। २. सुदर्शना नामक वृक्ष।

श्रावणिक^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रावण मास। सावन। २. एक प्रकार की अग्नि।

श्रावणिक^{2}—वि० श्रावण संबंधी। श्रावण का।

श्रावणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] मुंडी।

श्रावणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्रवण नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा। सावन मास की पूर्णमासी।

विशेष—इस दिन ब्राह्मणों का प्रसिद्ध त्योहार 'रक्षाबंधन' या 'सलोनो' तथा कुछ और कृत्य या पूजन आदि होते हैं। इस दिन लोग यज्ञोपवीत का पूजन करते और नवीन यज्ञोपवीत भी धारण करते हैं।

२. मुंडी। घुंडा। ३. भुइँ कदंब। ४. वृद्धि नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ५. ऋद्धि नामक अष्टवर्गीय ओषधी।

श्रावना^{1} (पु)—क्रि० स० [सं० स्राव (=बहाना), हिं० स्रवना] गिराना। बहाना। उ०—रुचि द्रुम प्रीति रीति नैनन जल सींचि ब्यान झर लागी। ताके प्रेम सुफल मुनिश्रावन श्याम सुरँग अनुरागी।—सूर (शब्द०)।

श्रावन^{2} (पु)—संज्ञा पुं० ढरकाने या बहाने या द्रवित करने की क्रिया या भाव।

श्रावस्त—संज्ञा पुं० [सं०] हरिवंश के अनुसार राजा श्राव के पुत्र का नाम, जिन्होंने श्रावस्तकी नगरी बसाई थी।

श्रावस्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रावस्ती'।

श्रावस्ती—संज्ञा स्त्री० [सं०] उत्तर कोशल में गंगा के तट पर बसी हुई एक बहुत प्राचीन नगरी।

विशेष—यह अब एक छोटे से गाँव के रूप में रह गई है और सहेत महेत कहलाती है। आजकल यह स्थान बलरामपुर राज्य के अंतर्गत है। यहाँ श्रीरामचंद्र के पुत्र लव की राजधानी थी। जैनी इसे 'सावत्थी' कहते हैं और अपने नवें तीर्थंकर सुदृद्धनाथ का कल्याणक बतलाते हैं। यह राजा प्रसेनजित् की राजधानी भी कही जाती है। यहाँ एक बार कुछ दिनों तक भगवान् बुद्ध ने भी निवास किया था, इसलिये बौद्धों की दृष्टि में यह एक बहुत पुण्यस्थल है। बुद्ध के समय में और उनसे पहले भी यह नगरी बहुत श्रीसंपन्न थी।

श्रावा—संज्ञा स्त्री० [सं०] माँड। पसावन। पीच।

श्रावित^{1}—वि० [सं०] कहा हुआ। बताया हुआ। सुनाया हुआ [को०]।

श्रावित^{2}—संज्ञा पुं० १. पुकार। गुहार। २. निवेदन [को०]।

श्राविता—वि० [सं० श्रावितृ] श्रवण करने या सुननेवाला। श्रोता [को०]।

श्राविष्ठ, श्राविष्ठीय—वि० [सं०] १. श्रविष्ठ या श्रवण नक्षत्र संबंधी। २. श्रविष्ठा में उत्पन्न या जात [को०]।

श्रावी^{1}—संज्ञा पुं० [सं० श्राविन्] सज्जी। स्वर्जिका क्षार।

श्रावी^{2}—वि० श्रवण करनेवाला।

श्राव्य—वि० [सं०] १. सुनने के योग्य। सुनने लायक। श्रोतव्य। २. स्फुट। व्यक्त। श्रोत्रेंद्रिय द्वारा ग्राह्य (को०)।

श्रित—वि० [सं०] १. आश्रय में पहुँचा हुआ। २. चिपका, लगा हुआ। सहारा लिया हुआ। अधिष्ठित। ३. मीलित। संबद्ध। ४. रक्षित। बचाया हुआ। ५. संमानित। सेवित ६. अनुजीवी। सहकारी। ७. आच्छादित। ८. पूरित। ९. एकत्रित। समवेत। १०. संपन्न। ११. पकाया हुआ [को०]।

यौ०—श्रितक्षम = अक्षुब्ध। शांतमना। स्वस्थ। श्रितसत्व = धैर्ययुक्त। साहस युक्त।

श्रीतवान—वि० [सं० श्रुतवत्] १. आश्रय लेनेवाला। सेवक।

श्रिति—संज्ञा स्त्री० [सं०] अवलब। सहारा [को०]।

श्रियंमन्य—वि० [सं० श्रियम्मन्य] [वि० स्त्री० श्रियंमन्या] अपने को श्रीयुक्त माननेवाला। अभिमानी। घमंडी [को०]।

श्रिय^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रिया] मंगल। कल्याण। उ०—लखी जोति जो बाम्हन लोगा। तिनके बचन न संसय जोगा। इनकी बानि संग श्रिय रहहीं। ये नहिं कबहुँ मृषा कछु कहहीं।—सीताराम (शब्द०)।

श्रिय(पु)^{2}—संज्ञा स्त्री० [सं० श्री] शोभा। प्रभा। उ०—दुहुन बीच संकेत राधिका नंदकुँवर को। सो श्रिय को कहि सकै भेदु प्रिय प्यारी घर को।—सूदन (शब्द०)।

श्रिया—संज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णु की पत्नी, लक्ष्मी।

श्रियावास—संज्ञा पुं० [सं०] वह जिसके पास यथेष्ट लक्ष्मी हो। धनवान्। अमीर।

श्रियावासी—संज्ञा पुं० [सं० श्रियावासिन्] महादेव। शिव।

श्री^{1}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विष्णु की पत्नी, लक्ष्मी। कमला। उ०—तजि वैकुंठ गरुड़ तजि श्री तजि निकट दास के आयो।—सूर (शब्द०)। २. सरस्वती। ३. धूप। सरल वृक्ष। ४. लवंग। लौंग। ५. कमल। पद्म। ६. बेल। बिल्व वृक्ष। ७. ऋद्धि नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ८. सफेद चंदन। संदल। ९. धर्म, अर्थ और काम। त्रिवर्ग। १०. संपत्ति। धन। दौलत। ११. विभूति। ऐश्वर्य। १२. उपकरण। १३. अधिकार। १४. कीर्ति। यश। १५. प्रभा। शोभा। १६. कांति। चमक। १७. वृद्धि। १८. सिद्धि। १९. एक प्रकार का पदचिह्न। उ०—स्वस्तिक अष्टकोण श्री केरा। हल मूसल पन्नग शर हेरा।—विश्राम (शब्द०)। २०. स्त्रियों का बेंदी नामक आभूषण। उ०—श्री जो रतन माँग बैठारा। जानहु गगन टूट निस तारा।—जायसी (शब्द०)। २१. ऊर्ध्व पुंड्र के बीच की लंबी नोकदार लाल रंग की रेखा। २२. चंद्रमा की बारहवीं कला (को०)। २३. सजावट। रचना (को०)। २४. उक्ति। वाणी (को०)। २५. ऋक्, साम और यजुर्वेद। वेदत्रयी (को०)। २५. पक्व करना। एकदिल करना। पकान। (को०)। २६. समझ। ज्ञान। बुद्धि (को०)। २७. आदरसूचक शब्द जो नाम के आदि में लिखा जाता है।

विशेष—संन्यासी, महात्माओं के नाम के आगे श्री १०८ लिखा जाता है। माता, पिता और गुरु के लिये श्री के साथ ६, स्वामी के लिये ५, शत्रु के लिये ४, मित्र के लिये ३, नौकर के लिये २ और शिष्य, सुत और स्त्री के लिये श्री के साथ १ लिखने की प्राचीन प्रणाली है।

श्री^{2}—संज्ञा पुं० १. कुबेर। (डिं०)। २. ब्रह्मा। ३. विष्णु। ४. वैष्णवों का एक संप्रदाय। ५. एक वृत्त का नाम। यह एकाक्षरा वृत्ति है। इसके प्रत्येक पद में एक गुरु होता है। यथा—गो। श्री। धी। ही। ६. संपूर्ण जाति का एक राग, जो हनुमत् के मत से छह रागों के अंतर्गत पाँचवाँ राग है।

विशेष—यह धैवत स्वर की संतान और पृथ्वी की नाभि से उत्पन्न माना गया है। इसकी ऋतु शरद् और वार शुक्र है। कहते हैं, इस राग को शुद्धतापूर्वक गाने से सूखा वृक्ष भी हरा हो जाता है। शास्त्र के अनुसार इस राग की रागिनियाँ ये हैं—गौरी, पूरबी, मालवी, मुलतानी, और जयती। इसका सहचर मंगलराग और सहचरी चंद्रावती रागिनी है। श्यामकल्याण, मारू, एमन, मौन ध्यान और गौड़ इसके पुत्र हैं। भीमपलाश्री, धनाश्री, मालश्री, वारवा, चित्राचकोरी इसकी पुत्रवधुएँ हैं। हनुमत् के अनुसार मारवा, पूरवा, श्याम, हेम, चैत्र, हंबिरिक, भूपाल, जेतरा, कल्याण, ध्यानकल्याण इसके पुत्र हैं। इसकी स्त्रियाँ मालवी, त्रिवेणी, गौरी, गौरा

श्रौर पूरबी है, तथा इसकी प्रियाएँ एमनि, टंकी, माली, गौरा, नागध्वनि श्रौर चेतकी हैं।

श्री^{3}—वि० १. योग्य। २. सुंदर। श्रेष्ठ। ४. मिश्र। मिश्रित। ५. शुभ।

श्रीकंठ—संज्ञा पुं० [सं० श्रीकण्ठ] १. महादेव। उ०—श्रीकंठ उर वासुकि लसत सर्वमंगला गार।—केशव (शब्द०)। २. हस्तिनापुर के उत्तर पश्चिम का कुरु जांगल देश। ३. संस्कृत के नाटककार भवभूति का एक नाम।

यौ०—श्रीकंठपदलांछन = श्रीकंठ नामवाला, भवभूति का एक नाम।

४. एक राग का नाम (को०)। ५. सुंदर कंठवाला एक पक्षी (को०)।

श्रीकंठसखा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीकण्ठसखा] कुबेर का एक नाम।

श्रीकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीकन्दा] बंध्या कर्कोटकी. खेखसा। बनपरवल।

श्रीकर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. लाल कमल। ३. नौ उपनंदों में से एक।

श्रीकर^{2}—वि० १. शोभा बढ़ानेवाला। सौंदर्य बढ़ानेवाला। २. कल्याण करनेवाला।

श्रीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कलम। लेखनी। २. कायस्थों की शाखा या उपजाति का नाम। १. उत्तर कोशल की राजधानी का नाम (को०)।

श्रीकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पक्षी। (बृहत्संहिता)।

श्रीकांत—संज्ञा पुं० [सं० श्रीकान्त] लक्ष्मी के पति, विष्णु।

श्रीकाम—वि० [सं०] कीर्ति या यश चाहनेवाला। अभ्युदय की आकांक्षा करनेवाला।

श्रीकाम—संज्ञा स्त्री० [सं०] राधिका का एक नाम [को०]।

श्रीकारी—संज्ञा पुं० [सं० श्रीकारिन्] एक प्रकार का मृग। कुरंग।

पर्या०—महायव। शिखिपूप। यवन। जंघाल।

श्रीकीर्ति—संज्ञा पुं० [सं०] संगीतदामोदर के अनुसार ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक भेद। इसमें दो गुरु श्रौर दो लघु मात्राएँ होती हैं (संगीतदामोदर)।

श्रीकुंज—संज्ञा पुं० [सं० स्रीकुञ्ज] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम, जो सरस्वती नदी के तट पर था।

श्रीकुंड—संज्ञा पुं० [सं० श्रीकुण्ड] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

श्रीकृच्छ्र—संज्ञा पुं० [सं०] एक व्रत जिसमें केवल श्रीफल (बेल) खाकर रहते हैं।

श्रीकृष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'कृष्ण'–१।

यौ०—श्रीकृष्णस्मरण = पुष्टिमार्गीय जनों का नमस्कार। उ०—तब उन वैष्णन कों श्रीकृष्णस्मरण करि बोहोत श्रादर करि बैठारे।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० ७७।

श्रीक्षेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] जगन्नाथ पुरी तथा उसके आसपास के प्रदेश का नाम, जो पुण्य क्षेत्र माना जाता है।

श्रीखंड—संज्ञा पुं० [सं० श्रीखण्ड] १. वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का चंदन जो हरिचंदन भी कहलाता है। मलयागिरि चंदन। उ०—मुकता माल नंद नंदन उर अर्ध सुधा घट कांति। तनु श्रीखंड मेघ उज्जवल अति देखि महाबल भाँति।—सूर (शब्द०)। २. एक पेय पदार्थ। दे० 'शिखरण'। उ०—कलिया अरु कबाब बर स्वादू। तिमि श्रीखंड करन अहलादू।—रघुराज (शब्द०)। ३. वैश्यों की एक जाति।

श्रीखंड शैल—संज्ञा पुं० [सं० श्रीखण्ड शैल] मलय पर्वत, जहाँ श्रीखंड (चंदन) होता है।

श्रीखंडा—संज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'श्रीखंड'।

श्रीगंध—संज्ञा पुं० [सं० श्रीगन्ध] सफेद चंदन। संदल।

श्रीगणेश—संज्ञा पुं० [सं०] आरंभ। प्रारंभ। शुरुआत।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

श्रीगदित—संज्ञा पुं० [सं०] उपरूपक के अठारह भेदों में से एक भेद।

विशेष—इसकी रचना प्रायः किसी पौराणिक घटना के आधार पर होती है। इसका दूसरा नाम श्रीरासिका भी है।

श्रीगर्भ—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. खड्ग। तलवार। ३. राजा का शयनकक्ष (को०)।

श्रीगुरु—संज्ञा पुं० [सं०] वैश्यों की एक जातिविशेष।

श्रीगेह—संज्ञा पुं० [सं०] कमल। पद्म।

श्रीगोंड—संज्ञा पुं० [सं० श्री + हिं० गोंड] वैश्यों की एक जाति विशेष।

श्रीग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ चिड़ियों के पानी पीने का प्रबंध हो।

श्रीग्रामर—संज्ञा पुं० [सं०] नारायण। विष्णु [को०]।

श्रीघन—संज्ञा पुं० [सं०] १. दही। दधि। २. बुद्धदेव का एक नाम। ३. बौद्ध यति या संन्यासी।

श्रीचंदन—संज्ञा पुं० [सं० श्रीचन्दन] सफेद चंदन। संदल।

श्रीचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार का चक्र या यंत्र।

विशेष—इसका व्यवहार देवी के पूजन में, विशेषतः त्रिपुरासुंदरी देवी के पूजन में होता है।

२. भूमंडल। ३. इंद्र के रथ का एक चक्र (को०)।

श्रीचमरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का हिरन।

श्रीज—संज्ञा पुं० [सं०] १. कामदेव। मदन। २. शांब का एक नाम।

श्रीटंक—संज्ञा पुं० [सं० श्रीटङ्क] संगीत में एक प्रकार का राग, जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

श्रीणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रात। रात्रि।

श्रीतरु—संज्ञा पुं० [सं०] सर्ज वृक्ष। साल का पेड़। शाल।

श्रीतल—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णुपुराण के अनुसार एक नरक का नाम।

श्रीताल—संज्ञा पुं० [सं०] ताड़ या ताल के वृक्ष से मिलता जुलता एक प्रकार का वृक्ष जिसे हिंताल भी कहते हैं।

विशेष—यह मलाया देश में उत्पन्न होता है। वैद्यक के अनुसार यह मधुर, कुछ कुछ खट्टा, कफकारक, किंचित् वायु को कुपित करनेवाला तथा पित्त का नाश करनेवाला माना गया है।

पर्या०—मृदुताल। लक्ष्मीताल। मृदुच्छद। विशालपत्र। मसोलेखदल। शिरालपत्रक।

श्रीतीर्थ—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

श्रीतेज, श्रीतेजा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीतेजस्] ललितविस्तर के अनुसार एक बुद्ध का नाम।

श्रीद^1—संज्ञा पुं० [सं०] धन देनेवाले, कुबेर।

श्रीद^2—वि० १. श्री बढ़ानेवाला। २. शोभा बढ़ानेवाला।

श्रीदयित—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

श्रीदामा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीदामन्] श्रीकृष्ण के एक ग्वाल सखा का नाम, जिन्हें सुदामा भी कहते हैं। उ०—हँसि हँसि तारी देत सखा सब भए श्रीदामा चोर। सूरदास हँसि कहति यशोदा जीत्यो है सुत मोर।—सूर (शब्द०)।

श्रीदेवा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वसुदेव की पत्नी सुदेवा का एक नाम।

श्रीद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्रीवृक्ष' (को०)।

श्रीधन्वी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

श्रीधर^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। उ०—धनि धनि नंद धन्य निशिवासर धनि यशुमति जिन श्रीधर जाए।—सूर (शब्द०)। २. शालग्राम शिलाचक्र (को०)। ३. जैनियों के चौबीस तीर्थंकरों में से सातवें तीर्थंकर का नाम। ४. श्रीधर स्वामी। श्रीमद्भागवत के एक ख्यातनामा टीकाकार।

श्रीधर^2—वि० तेजस्वी। तेजवान्।

श्रीधाम—संज्ञा पुं० [सं०] १. लक्ष्मी का निवासस्थान। २. पद्म।

श्रीनंदन—संज्ञा पुं० [सं० श्रीनन्दन] २. कामदेव। २. एक ताल का नाम (को०)।

श्रीनगर—संज्ञा पुं० [सं०] काश्मीर राज्य की आधुनिक राजधानी। २. राजतरंगिणी में उल्लिखित दो नगर जिनमें एक कानपुर और दूसरा बुंदेलखंड में था (को०)।

श्रीनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

श्रीनाथजी द्वार—संज्ञा पुं० [सं० श्रीनाथ + हिं० जी + सं० द्वार] वल्लभ मतानुयायियों का एक पवित्र तीर्थ जो उदयपुर में है। उ०—ऐसे करत कछुक दिन में श्री गुसाईंजी द्वारिकाजी तें श्रीनाथजी द्वार पधारे।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० १०।

श्रीनिकेत—संज्ञा पुं० [सं०] १. लक्ष्मी का निवासस्थान, वैकुंठ। उ०—श्रीनिकेत समेत सब सुख रूप प्रगट निधान। अवर सुधा पिआइ बिछुरे पठै दीनो ज्ञान।—सूर (शब्द०)। २. गंधाबिरोजा। सरल निर्यास। ३. लाल कमल। ४. स्वर्ण। सोना।

श्रीनिकेतन—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. लक्ष्मी का निवासस्थान, वैकुंठ। ३. गंधाबिरोजा। सरल निर्यास।

श्रीनितंबा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीनितम्बा] राधा का एक नाम।

श्रीनिधि—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम।

श्रीनिवास—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २. श्री या लक्ष्मी का निवासस्थान, वैकुंठ। उ०—श्रीनिवास पुर ते अधिक रचना विविध प्रकार।—मानस, १।१२९।

श्रीनिवासक—संज्ञा पुं० [सं०] कटसरैया।

श्रीपंचमी—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीपञ्चमी] माघ शुक्ल पंचमी। बसंत पंचमी।

श्रीपत (पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्रीपति] विष्णु। (डिं०)।

श्रीपति—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। नारायण। हरि। उ०—(क) श्रीपति निज माया तब प्रेरी।—मानस, १।१२९। (ख) जाके सखा श्यामसुंदर से श्रीपति सकल सुखन के दाता।—सूर (शब्द०)। २. रामचंद्र। उ०—बार बार श्रीपति कहै केवट नहिं मानै।—सूर (शब्द०)। ३. कृष्ण। उ०—जो हम कछु न बसाइ पार्थ जो श्रीपति ताहि जितावै।—सूर०, १।२७५। ४. कुबेर। ५. पृथ्वीपति। नृप। राजा।

श्रीपथ—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ी और चौड़ी सड़क। राजमार्ग। राजपथ।

श्रीपदी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वार्षिकी पुष्पवृक्ष। मल्लिका। बेला।

श्रीपद्म—संज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम।

श्रीपर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल। पद्म। २. अग्निमंथ वृक्ष। अरनी। गनियारी।

श्रीपर्णिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कटफल। कायफल। २. गंभारी। ३. गनियारी। अरनी। ४. पृश्निपर्णी। पिठवन। ५. सेमल का पेड़। शाल्मलि।

श्रीपर्णी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कायफर। कायफल। २. गंभारी। ३. गनियारी। अरनी। ४. पिठवन। ५. सेमल का पेड़।

श्रीपर्वत—संज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

श्रीपा—वि० [सं०] श्री की रक्षा करनेवाला। समृद्धि का रक्षण करनेवाला।

श्रीपाद—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो चरण पूजने योग्य हो। पूज्य। श्रेष्ठ। २. धनवान्। संपन्न।

श्रीपिष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] सरल वृक्ष का रस। गंधाबिरोजा।

श्रीपुत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. अश्व। घोड़ा। २. कामदेव। ३. चंद्रमा (को०)। ४. इंद्र का अश्व (को०)।

श्रीपुर—संज्ञा पुं० [सं०] दक्षिण का मणिद्वीप नामक स्थान।

विशेष—यह वाममार्गी शाक्तों का प्रधान स्थान है। यहीं ये लोग मुक्ति का सुख अनुभव करते हैं।

श्रीपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. लौंग। लवंग। २. पद्मकाष्ठ। पदुमाख। ३. पुंडेरी। ४. सफेद कमल।

श्रीप्रद—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो श्री या सौभाग्य प्रदान करता हो।

श्रीप्रदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] राधा का एक नाम।

श्रीप्रसून—संज्ञा स्त्री० [सं०] लौंग। लवंग।

श्रीप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] हरताल।

श्रीफल—संज्ञा पुं० [सं०] १. बेल। २. नारियल। उ०—(क) श्रीफल मधुर चिरौंजी आनी। सफरी चिरुआ अरु नय वाणी।

—सूर (शब्द०)। (ख) हिया थार कुच कनक कचूरा। जानहुँ दोऊ श्रीफल जूरा।—जायसी (शब्द०)। ३. खिरनी। राजादनी वृक्ष। ४. आँवला। ५. कच्ची चिकनी सुपारी। ६. द्रव्य। धन। उ०—श्रीफल को अभिलाष प्रगट कवि कुल के जी में।—केशव (शब्द०)।

श्रीफला—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नीली। नील का पौधा। २. करेली। क्षुद्र कारवेली। ३. आँवला।

श्रीफलिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. क्षुद्र कारवेली। करेली। २. महानीली का पौधा।

श्रीफली—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. आँवला। २. नील। ३. बड़ी मालकँगनी। महाज्योतिष्मती लता।

श्रीबंधु—संज्ञा पुं० [सं० श्रीबन्धु] १. अमृत। २. चंद्रमा।—अनेकार्थ०, पृ० ३०।

श्रीबन—संज्ञा पुं० [सं० श्री+बन] वृंदावन। उ०—प्रीतम के शृंगार के अर्थ श्रीबन (निधि बन) की लताओं में गुंजा एकत्रित कर उसकी माला पिरोवैं।—पोद्दार अभि० ग्रं०. पृ० १९६।

श्रीबीज—संज्ञा पुं० [सं०] ताड़। ताल वृक्ष।

श्रीभक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] मधुपर्क जो देवताओं के सामने रखा जाता या दान किया जाता है। विशेष दे० 'मधुपर्क'-१।

श्रीभद्र—संज्ञा पुं० [सं०] मुस्तक। मोथा।

श्रीभद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भद्रमोथा। भद्रमुस्तक।

श्रीभाव—संज्ञा पुं० [सं०] भागवत के अनुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम, जिनका जन्म सत्यभामा के गर्भ से हुआ था।

श्रीभ्राता—संज्ञा पुं० [सं० श्रीभ्रातृ] अश्व, चंद्र, अमृत आदि चौदह रत्न जो समुद्र से उत्पन्न होने के कारण लक्ष्मी या श्री के भाई कहे जाते हैं।

श्रीमंगल—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमङ्गल] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

श्रीमंजरी—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीमञ्जरी] तुलसी। सुरसा।

श्रीमंजु—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमञ्जु] एक पर्वत का नाम।

श्रीमंडप—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमण्डप] एक पर्वत का नाम।

श्रीमंत¹—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमन्त] १. एक प्रकार का शिरोभूषण। उ०—शीश सचिक्कन केश हो बिच श्रीमंत सँवारि।—सूर (शब्द०)। २. स्त्रियों के सिर के बीच की माँग।

श्रीमंत²—वि० १. श्रीमान्। धनवान्। धनाढ्य। धनी। २. सुंदर। सौंदर्यशाली।

श्रीमकुट—संज्ञा पुं० [सं०] सोना। स्वर्ण (को०)।

श्रीमत्¹—संज्ञा पुं० [सं०] १. तिल पुष्प। २. पीपल। अश्वत्थ वृक्ष। ३. विष्णु का एक नाम। ४. शिव का एक नाम। ५. कुबेर। ६. ऋषभक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ७. हल्दी का पौधा। ८. शुक। सुग्गा (को०)। ९. प्रजनन कराने के लिये रखा हुआ वृष (को०)। १०. पुरुष एवं ग्रंथादि के नाम के आदि में प्रयुक्त शब्द।

श्रीमत्²—वि० १. जिसके पास बहुत अधिक धन हो। धनवान्। अमीर। २. जिसमें श्री या शोभा हो। ३. सुंदर। खूबसूरत। ४. प्रसिद्ध। ख्यात। आदरणीय (को०)।

श्रीमती—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. 'श्रीमान्' का स्त्रीलिंग वाचक शब्द। स्त्रियों के लिये आदरसूचक शब्द। जैसे,—श्रीमती सुभद्रा देवी। २. लक्ष्मी। ३. राधा का एक नाम। ४. मुंडिका। मुंडी। ५. पत्नी (को०)।

श्रीमत्कुंभ—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमत्मकुम्भ] सोना।

श्रीमत्ता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. 'श्रीमत्' या 'श्रीमान्' होने का भाव या धर्म। २. संपन्नता। अमीरी।

श्रीमद—संज्ञा पुं० [सं०] धनमद। संपत्ति का गर्व। उ०—(क) श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि। मृगलोचनि के नैनसर को अस लाग न जाहि।—मानस, ७।७०। (ख) ऐ परि यह श्रीमद है जैसो। बड़ अनर्थकर अवर न ऐसो।—नंद० ग्रं०, पृ० २५२।

श्रीमय—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

श्रीमलापहा—संज्ञा स्त्री० [सं०] तमाखू। तमाकू।

श्रीमस्तक—संज्ञा पुं० [सं०] १. लहसुन। २. लाल आलू।

श्रीमहिमा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमहिमन्] शिव। महादेव।

श्रीमान्¹—वि० [सं० श्रीमत्] १. लक्ष्मीवान्। धनवान्। अमीर। २. शोभायुक्त। शोभावान्। ३. सुंदर। ४. यशस्वी। प्रसिद्ध (को०)। ५. प्रसन्न। भाग्यशाली (को०)।

श्रीमान्²—संज्ञा पुं० १. तिल पुष्पी। २. पीपल। अश्वत्थ वृक्ष। ३. हल्दी। हरिद्रा। ४. ऋषभक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ५. विष्णु। ६. शिव। ७. कुबेर। ८. सुग्गा। शुक (को०)। ९. साँड़ (को०)।

श्रीमान—संज्ञा पुं० [सं० श्रीमत्] आदरसूचक शब्द जो नाम के आदि में रखा जाता है। उ०—जय जय जय श्रीमान महावपु जय जय जगत अधार।—सूर (शब्द०)।

श्रीमाल¹—संज्ञा पुं० [देश०] वैश्यों की एक जाति।

श्रीमाल²—संज्ञा स्त्री० [सं० श्री+माला] गले में पहनने का एक आभूषण। कंठश्री। उ०—चिबुक तर कंठ श्रीमाल मोतीन छबि कुच उचनि हेम गिरि अतिहि लाजै।—सूर (शब्द०)।

श्रीमुख—संज्ञा पुं० [सं०] १. शोभित या सुंदर मुख। उ०—आगम कल्प रमण तुव ह्वै है श्रीमुख कही बखान।—सूर (शब्द०)। २. बृहस्पति के साठ संवत्सरों में से सातवाँ संवत्सर। ३. विष्णु का मुख, वेद। ४. सूर्य। उ०—व्योम में मुनि देखिए अति लाल श्रीमुख साजहीं।—केशव (शब्द०)। ५. वह पत्र लेख आदि जिसके प्रारंभ में स्वतिवाचक शब्द श्री लिखा हुआ हो।

श्रीमुद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] वैष्णवों का तिलक जो मस्तक पर लगाया जाता है।

श्रीमूर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. विष्णु की मूर्ति। २. लक्ष्मी की प्रतिमा। प्रतिमा। मूर्ति (को०)।

श्रीयुक्त—वि० [सं०] १. जिसमें श्री या शोभा हो। २. एक आदर-सूचक विशेषण, जो बड़े आदमियों के नाम के साथ लगाया जाता है। जैसे,—श्रीयुक्त केशवचंद्र सेन। ३. लक्ष्मीवान्। धनाढ्य (को०)। ४. प्रसिद्ध [को०]।

श्रीयुत—वि० [सं०] दे० 'श्रीयुक्त'।

श्रीरंग—संज्ञा पुं० [सं० श्रीरङ्ग] १. विष्णु। लक्ष्मीपति। उ०—काके होहिं जो नहिं गोकुल के सूरज प्रभु श्रीरंग।—सूर (शब्द०)। २. संगीतदामोदर के अनुसार ताल के साठ मुख्य भेदों मे से एक भेद।

श्रीरंगपट्टन—संज्ञा पुं० [सं० श्रीरङ्गपट्टन] दक्षिण में मैसूर राज्य के अंतर्गत एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम।

विशेष—पहले मैसूर राज्य की यही राजधानी थी। यहाँ 'श्रीरंगस्वामी' नाम की एक प्रसिद्ध विष्णुमूर्ति है, जिसके कारण इसका यह नाम पड़ा है।

श्रीर(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शरीर] दे० 'शरीर'। उ०—कितनेक दिवस तिन तज्यो श्रीर। भंडार पाहि नह सुनो बीर।—पृ० रा०, २४।२१।

श्रीरमण—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक संकर राग जो शंकराभरण और मालश्री को मिलाकर बनाया गया है। (संगीत)। २. विष्णु।

श्रीरवन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्रीरमण] लक्ष्मी में रमण करनेवाले, विष्णु।

श्रीरस—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधाबिरोजा। श्रीवेष्ट। २. तारपीन का तेल।

श्रीराग—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में छह रागों में से तीसरा राग, जो संपूर्ण जाति का है और पृथ्वी की नाभि से उत्पन्न माना गया है।

विशेष—हनुमत के मत से यह पाँचवाँ राग हैं और इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—सा रे ग म प ध नि सा अथवा नि ग म प ध नि सा रे। यह हेमंत ऋतु में तीसरे पहर या संध्या समय गाया जाता है। सोमेश्वर के मत से मालवी, त्रिवेणी, गौरी, केदारा, मधुमाधवी और पहाड़ी ये छह इसकी भार्याएँ या रागिनियाँ हैं; और संगीतदामोदर में गांधारी, देवगांधारी, मालवश्री, साखो और रामकीरी ये पाँच रागिनियाँ कही गई हैं। सिंधु, मालव, गौड़, गुणसार, कुंभ, गंभीर, विहाग और कल्याण ये आठ इसके पुत्र कहे गए हैं।

श्रीराम—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'राम'। विशेष दे० 'रामचंद्र'।

श्रीरामनवमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रामनवमी'।

श्रीरूपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] राधा।

श्रील—वि० [सं०] १. धनाढ्य। धनी। २. सौंदर्यशाली। ३. सौभाग्यशाली। ४. ४. प्रसिद्ध (को०)।

श्रीलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी मालकँगनी। ज्योतिष्मती लता।

श्रीवंत—वि० [सं० श्रीमत्, श्रीमन्त्] ऐश्वर्यवान्। संपत्तिशाली।

श्रीवत्स—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. विष्णु के वक्षस्थल पर अंगुष्ठ प्रमाण श्वेत बालों का दक्षिणावर्त भौंरी का सा चिह्न, जो भृगु के चरण प्रहार का चिह्न माना जाता है। उ०—वन के धातु चित्र तनु किए। श्रीवत्स चिह्न राजत असि हिए।—सूर (शब्द०)।

यौ०—श्रीवत्सधारी, श्रीवत्सभृत्, श्रीवत्सलक्ष्मा, श्रीवत्सलांछन, श्रीवत्सांक = विष्णु।

३. जैनों के अनुसार अर्हतों का एक चिह्न। ४. सेंध (को०)।

श्रीवत्सक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्रीवत्सकी'।

श्रीवत्सकी—संज्ञा पुं० [सं० श्रीवत्सकिन्] वह घोड़ा जिसके वक्षपर दक्षिणावर्त भौंरी हो [को०]।

श्रीवर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु। श्रीवल्लभ।

श्रीवराह—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का वराह अवतार।

श्रीवर्द्धन—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक राग का नाम। २. शिव का एक नाम।

श्रीवल्लभ—संज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. लक्ष्मी का प्रिय। धनी व्यक्ति [को०]।

श्रीवल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की कँटीली लता या चढ़नेवाली झाड़ी, जिसका व्यवहार औषध में होता है।

विशेष—यह लता कुछ दिनों तक यों हीं खड़ी रहती है, पीछे बढ़ने पर किसी वृक्ष आदि का आश्रय लेती है। इसके डंठल और टहनियाँ भूरे रंग की होती हैं तथा उनपर टेढ़े काँटे होते हैं। यह फागुन से फूलने लगती है और आषाढ़ तक फलती है। इसमें छोटी छोटी फलियाँ लगती हैं। वैद्यक में ये फलियाँ हलकी, रेचक और वमनकारक कही गई हैं। इस पौधे की फली, पत्ती और छाल तीनों औषधोपयोगी हैं।

पर्या०—शितवल्ली। कंटवल्ली। अम्ला। कटुफला। दुरारोहा।

श्रीवह—संज्ञा पुं० [सं०] एक नाग का नाम।

श्रीवाटी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पान। नागवल्ली भेद।

श्रीवारक—संज्ञा पुं० [सं०] सितावर शाक। शिरियारी।

श्रीवास, श्रीवासक—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधाबिरोजा। सरल निर्यास। २. तारपीन का तेल। ३. गूगल। ४. देवदारु। ५. राल। धूप। करायल। ६. चंदन। संदल। ७. कमल। ८. विष्णु। ९. शिव।

श्रीवासच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] १. धूप का पेड़। सरल वृक्ष। २. चंदन। ३. पदुमाख। पद्मकाष्ठ।

श्रीवाससार—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधाबिरोजा। २. तारपीन का तेल।

श्रीवासा—संज्ञा पुं० [सं० श्रीवासस्] गंधाबिरोजा। सरल द्रव।

श्रीविद्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक महाविद्या। त्रिपुरसुंदरी [को०]।

श्रीवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. अश्वत्थ वृक्ष। पीपल। २. बिल्व वृक्ष। ३. घोड़े के मस्तक और छाती पर बालों की भौंरी। श्रीवत्सक (को०)।

श्रीवृक्षक—संज्ञा पुं० [सं०] १. घोड़े की छाती पर की एक भँवरी जो शुभ मानी जाती है। २. एक व्रत का नाम।

श्रीवृद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बोधिद्रुम पर की एक देवी। (ललितविस्तर)। २. समृद्धि। वृद्धि। संपन्नता। उ०—अत्यंत प्रसन्नता का अवसर है कि इधर हमारी भाषा और हमारे साहित्य की उत्तरोत्तर श्रीवृद्धि होती जा रही है'—रस क० (प्रा०), पृ० १।

श्रीवेष्ट, श्रीवेष्टक—संज्ञा पुं० [सं०] १. सरल द्रव। गंधाबिरोजा। २. तारपीन का तेल। सरल वृक्ष।

श्रीवैष्णव—संज्ञा पुं० [सं०] रामानुज के अनुयायी वैष्णव। वैष्णवों का एक संप्रदाय।

श्रीश—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

श्रीसंज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] लौंग। लवंग।

श्रीसंपदा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीसम्पदा] ऋद्धि नामक अष्टवर्गीय ओषधि।

श्रीसंभूता—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रीसम्भूता] ज्योतिष में कर्म मास की छठी रात्रि।

श्रीसदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] रजनी। निशि। रात्रि। उ०—निसि श्रीसदा विभावरी, रात्रि त्रिजामा सोय।—अनेकार्थ (शब्द०)।

विशेष—इस अर्थ में यह शब्द संस्कृत कोशों में नहीं मिलता।

श्रीसमाध—संज्ञा पुं० [सं०] एक राग जो श्री, शुद्ध, मालश्री, भीम पलाश्री और टंक को मिलाकर बनाया जाता है।

श्रीसहोदर—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा। (चंद्रमा और लक्ष्मी दोनों समुद्र से उत्पन्न हैं)।

श्रीसिद्धि—संज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिष के अनुसार सोलहवाँ योग [को०]।

श्रीसूक्त—संज्ञा पुं० [सं०] ऋग्वेदोक्त एक सूक्त का नाम [को०]।

श्रीहट्ट—संज्ञा पुं० [सं०] एक नगर का नाम। सिलहट।

श्रीहत—वि० [सं०] १ शोभारहित। २. निस्तेज। निष्प्रभ। प्रभाहीन। उ०—(क) नमित सीस सोचहिं सलज्ज सब श्रीहत सरीर।—तुलसी (शब्द०)। (ख) वे शेर हो गए आज रण भए में श्रीहत खंडित।—अपरा, पृ० ४७।

श्रीहरि—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०]।

श्रीहर्ष—संज्ञा पुं० [सं०] १. नैषध काव्य के रचयिता संस्कृत के प्रसिद्ध पंडित और कवि जो कान्यकुब्ज के गहरवार राजा के आश्रित थे। २. रत्नावली, नागानंद और प्रियदर्शिका नाटकों के रचयिता जो संभवतः कान्यकुब्ज के प्रसिद्ध सम्राट् हर्षवर्द्धन थे।

श्रीहस्तिनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हस्तिशुंडी। नागदंती। २. सूर्यमुखी का पौधा।

श्रुगⓅ—संज्ञा पुं० [सं० स्वर्ग] दे० 'स्वर्ग'। उ०—सुबर सूर सामंत गुन, श्रुग्ग मत्त मति भोग।—पृ० रा०, २५।६६२।

श्रुग्वारु—संज्ञा पुं० [सं०] विकंकत। कंटाई। कंज वृक्ष।

श्रुघ्निका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सज्जीखार।

श्रुतधर—संज्ञा पुं० [सं० श्रुतन्वर] वास्तुविद्या में एक प्रकार का मंडप।

श्रुत—वि० [सं०] १. सुना हुआ। जो श्रवणगोचर हुआ हो। २. जिसे परंपरा से सुनते आते हों। ३. ज्ञात। प्रसिद्ध। ख्यात। ४ सीखा हुआ। समझा हुआ (को०)। ५. प्रतिज्ञात।

श्रुत^{2}—संज्ञा पुं० [सं०] १. सुनने का विषय। श्रुतिविषय शब्दादि। २. वेद। ३. विद्या। ४. सुनने की क्रिया [को०]।

श्रुतकाम—वि० [सं०] वेदादि पवित्र ज्ञान का इच्छुक।

श्रुतकीर्ति^{1}—वि० [सं०] जिसकी कीर्त्ति प्रसिद्ध हो। कीर्तियुक्त।

श्रुतकीर्ति^{2}—संज्ञा पुं० १. अर्जुन के एक पुत्र का नाम। २. उदार चरित व्यक्ति (को०)। ३. संत। ऋषि (को०)।

श्रुतकीर्ति^{3}—संज्ञा स्त्री० राजा जनक के भाई कुशध्वज की कन्या, जो शत्रुघ्न को व्याही थी।

श्रुतकेवली—संज्ञा पुं० [सं० श्रुतकेवलिन्] एक प्रकार के अर्हत् जो छह् कहे गए हैं। (जैन)।

श्रुतदेवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती।

श्रुतधर^{1}—संज्ञा पुं० [सं०] १. कान। २. पुराणानुसार शाल्मलि द्वीप के ब्राह्मणों की संज्ञा।

श्रुतधर^{2}—वि० सुनी हुई बात का स्मरण रखनेवाला [को०]।

श्रुतनिगदी—वि० [सं० श्रुतनिगदिन्] जो एक बार सुने हुए पद्य आदि को ज्यों का त्यों कह सके।

श्रुतनिष्क्रय—संज्ञा पुं० [सं०] शिक्षा प्राप्त करने के बदले दिया जानेवाला धन। शिक्षा शुल्क। (अं० ट्यूशन फीस)।

श्रुतपूर्व—वि० [सं०] जो पहले सुना गया हो। जानाबूझा।

श्रुतर्षि—संज्ञा पुं० [सं०] ऋषि विशेष [को०]।

श्रुतवास—वि० [सं० श्रुत + वास] वेदज्ञ। विद्वान्। उ०—सिद्धि श्री श्रीनिवास, पास, श्रुतवास सहायक।—नंद० ग्रं०, पृ० २०५।

श्रुतविज्ञ—वि० [सं०] वेदज्ञ। वेद शास्त्र का पंडित [को०]।

श्रुतवित्त—वि० [सं०] वैदिक। वेदज्ञ। श्रुताढ्य [को०]।

श्रुतवृद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] विद्वान्।

श्रुतशील^{1}—वि० [सं०] विद्वान् और सदाचारी।

श्रुतशील^{2}—संज्ञा पुं० विद्या और सदाचार (मनु०)।

श्रुतश्रुवा—संज्ञा पुं० [सं० श्रुत श्रवस्] शिशुपाल के पिता का नाम [को०]।

श्रुतश्रुवानुज—संज्ञा पुं० [सं०] शनिग्रह [को०]।

श्रुतश्रेणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १, मूषाकानी। २. नदी [को०]।

श्रुता—वि० स्त्री० [सं० श्रुत] ख्यात। प्रसिद्ध। श्रुत। उ०—वह देव निम्नगा, स्वर्गंगा, वह सगर पुत्र तारिणी, श्रुता।—ग्राम्या, पृ० ४२।

श्रुतादान—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मनाद [को०]।

श्रुताध्ययन—संज्ञा पुं० [सं०] वेद का अध्ययन [को०]।

श्रुतान्वित—वि० [वि०] शास्त्रज्ञ। शास्त्रवेत्ता।

श्रुतायु—संज्ञा पुं० [सं०] राम के पुत्र कुश के वंशज एक सूर्यवंशी राजा।

श्रुतायुध—संज्ञा पुं० [सं०] एक राजा, जिसके पिता वरुण ने उसे एक ऐसी गदा प्रदान की थी कि जो युद्धकर्ता पर फेंकने से उसका अवश्य नाश कर देती थी, पर युद्ध न करनेवाले के ऊपर चलाने से वह लौटकर चलानेवाले ही के प्राण ले लेती थी।

श्रुतार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] कहा हुआ अथवा सुना हुआ तथ्य [को०]।

श्रुतार्थापत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'अर्थापत्ति' [को०]।

श्रुति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. श्रवण करने की क्रिया या भाव। सुनना। २. सुनने की इंद्रिय। श्रवण। कान। ३. वह जो सुना जाय। सुनी हुई बात। ४. शब्द। ध्वनि। आवाज। ५. खबर। शुहरत। किंवदंती। ६. कथन। बात। ७. वह पवित्र ज्ञान जो सृष्टि के आदि में ब्रह्मा या कुछ महर्षियों द्वारा सुना गया और जिसे परंपरा से ऋषि सुनते आए। वेद। निगम।

विशेष—'श्रुति' के अंतर्गत पहले मंत्र और ब्राह्मण भाग ही लिए जाते थे, पर पीछे उपनिषदें भी मानी गई।

८. चार की संख्या (वेद चार होने से)। ९. संगीत में किसी सप्तक के बाईस भागों में से एक भाग अथवा किसी स्वर का एक अंश।

विशेष—स्वर का आरंभ और अंत इसी से होता है। षड्ज में चार, ऋषभ में तीन, गांधार में दो, मध्यम में चार, पंचम में चार, धैवत में तीन और निषाद में दो श्रुतियाँ होती हैं।

१०. अनुप्रास का एक भेद। ११. त्रिभुज के समकोण के सामने की भुजा। १२. नाम। अभिधान। १३. विद्या। १४. विद्वत्ता। १५. अत्रि ऋषि की कन्या, जो कर्दम की पत्नी थीं। १६. श्रवण नाम का नक्षत्र (को०)। १७. वाक्। वाणी (को०)। १८. ख्याति। कीर्ति (को०)।

श्रुतिकट—संज्ञा पुं० [सं०] १. सर्प। साँप। २. तप।

श्रुतिकटु—संज्ञा पुं० [सं०] काव्यरचना में एक दोष। कठोर और कर्कश वर्णों का व्यवहार। दुश्रवत्व।

विशेष—द्वित्व वर्ण, टवर्ग और मूर्धन्य वर्ण कठोर माने गए हैं। श्रुतिकटु नित्य दोष नहीं हैं, अनित्य दोष है क्योंकि यह सर्वत्र दोष नहीं होता, केवल शृंगार, करुण आदि कोमल रसों में कठोर वर्ण दोषाध्यायक होते हैं, वीर, रौद्र आदि में नहीं।

श्रुतिकीर्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रुतकीर्ति'।

श्रुतिगोचर—वि० [सं०] जो सुना जाय। श्रव्य। श्रोतव्य। उ०—अशोक अपनी जिन बातों को चिरकाल के लिये श्रुतिगोचर कराना चाहते थे उन्हें उन्होंने पहाड़ के गात्रपर खोद दिया था।—सा० द०, पृ० ५८।

श्रुतिचोदन—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्रुतिचोदना] वेदविधि। शास्त्रीय आज्ञा [को०]।

श्रुतिजीविका—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्मृति। धर्मशास्त्र।

श्रुतिजाति—संज्ञा स्त्री० [सं०] अनेक प्रकार की श्रुतियों का समूह। दे० 'श्रुति'—२।

श्रुतिजातिविशारद—वि० [सं०] जो नाना प्रकार की श्रुतियों का ज्ञाता हो [को०]।

श्रुतिजीविका—संज्ञा स्त्री० [सं०] स्मृति। धर्मशास्त्र।

श्रुतिदुष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] श्रुतिकटु दोष। दुःश्रवत्व।

श्रुतिदूषक—वि० [सं०] १. वेदवचनों में दोष बतानेवाला। २. कानों को कष्ट पहुँचानेवाला [को०]।

श्रुतिद्वैध—संज्ञा पुं० [सं०] वेदविधियों का परस्पर विरोध [को०]।

श्रुतिधर—वि० [सं०] १. वेदज्ञ। २. सुननेवाला। श्रवणेंद्रिय संपन्न। उ०—वचन रहित वचन चयनों में चकित सकल श्रुतिधर।—गीतिका, पृ० २१०। ३. सुनी हुई बात को स्मरण रखनेवाला [को०]।

श्रुतिधरता—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेदज्ञता। पांडित्य। उ०—ख्यात वह श्रुतिधरता, सान की शिखा वह अनिर्वात।—अपरा, पृ० २१४।

श्रुतिनिगदी—वि० [सं० श्रुतिनिगदिन्] दे० 'श्रुतनिगदी' [को०]।

श्रुतिनिदर्शन—संज्ञा पुं० [सं०] श्रुति का प्रमाण। वेद का प्रमाण। वेद का दृष्टांत [को०]।

श्रुतिपथ—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रवण मार्ग। श्रवणेंद्रिय। कर्णपथ। कान। श्रवण। उ०—बजती है श्रुतिपथ में वीणा, तारों की कोमल झंकार।—अपरा, पृ० १५५।

मुहा०—श्रुतिपथ में आना=सुनाई पड़ना।

२. वेदविहित मार्ग। सन्मार्ग।

श्रुतिपुट—संज्ञा पुं० [सं०] श्रवण। कर्णपुट [को०]।

श्रुतिप्रमाण—संज्ञा पुं० [सं०] वेद का प्रमाण [को०]।

श्रुतिप्रसादन—वि० [सं०] श्रवणमधुर। श्रुतिमधुर [को०]।

श्रुतिप्रामाण्य—संज्ञा पुं० [सं०] वेद की प्रामाणिकता [को०]।

श्रुतिभाल—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा [को०]।

श्रुतिमंडल—संज्ञा पुं० [सं०] कान का बाहरी घेरा। २. संगीत में श्रुतियों का समूह [को०]।

श्रुतिमति—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रुति+मति] वेद बुद्धि। उ०—भई सब श्रुतिमति बौर और खेल कैसे कहूँ।—नंद० ग्रं०, पृ० ३६५।

श्रुतिमधुर—वि० [सं०] कर्णप्रिय। कान को मधुर लगनेवाला [को०]।

श्रुतिमांथाⓅ—वि० [सं० श्रुति+हिं० माथा] श्रुतिमस्तक। वेदशिरोमणि। उ०—छीरसिंधु गवने मुनिनाथा। जहँ बस श्रीनिवास श्रुतिमाथा।—मानस, १।१२८।

श्रुतिमाल—संज्ञा पुं० [सं०] (चार सिर वाले) ब्रह्मा।

श्रुतिमुख[1]—संज्ञा पुं० [सं०] (चार मुख वाले) ब्रह्मा।

श्रुतिमुख[2]—वि० वेद ही जिसका मुख है।

श्रुतिमूल—संज्ञा पुं० [सं०] १. कान का मूल भाग। कान की जड़। २. वेद [को०]।

श्रुतिमूलक—वि० [सं०] जो वेद पर आधारित हो [को०]।

श्रुतिरंजक—वि० [सं० श्रुतिरञ्जक] जो कानों को सुखद हो [को०] ।

श्रुतिवर्जित—वि० [सं०] १. बधिर । बहिरा । २. वेद के अभ्यास से रहित । ३. जो वेदविहित न हो (को०) ।

श्रुतिविद—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रुतिविन्द] कुश द्वीप की एक नदी ।

श्रुतिविप्रतिपन्न—वि० [सं०] १. धर्म ग्रंथों को प्रमाण न माननेवाला । वेद विरोधी । २. जो वेद द्वारा ग्राह्य न हो । वेद के प्रतिकूल [को०] ।

श्रुतिविवर—संज्ञा पुं० [सं०] कान का छेद । कर्ण कुहर [को०] ।

श्रुतिविषय—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रवणेंद्रिय का विषय । शब्द । ध्वनि । २. कर्ण गोचरता या कान की पहुँच या सीमा । ३. वेद का विषय । ४. धर्मानुमोदित विधि । विहित विधि [को०] ।

श्रुतिवेध—संज्ञा पुं० [सं०] कनछेदन । कर्णवेध संस्कार ।

श्रुतिशिखर—संज्ञा पुं० [सं०] १. उपनिषद् या वेदांत । २. वेद का प्रमुख पाठ [को०] ।

श्रुतिशिर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्रुतिशिखर' [को०] ।

श्रुतिसागर—संज्ञा पुं० [सं०] विष्णु [को०] ।

श्रुतिसार—संज्ञा पुं० [सं० श्रुति + सार] वेद का सार । उ०—भो प्रभु यह तुम्हरी अवतार । सुलभहि प्रकट सकल श्रुतिसार ।—नंद० ग्रं०, पृ० २६८ ।

श्रुतिसुख^1—वि० [सं०] श्रवणसुखद । कानों को आनंद देनेवाला [को०] ।

श्रुतिसुख^2—संज्ञा पुं० श्रवणसुख । कानों द्वारा प्राप्त आनंद [को०] ।

श्रुतिसेतुⓅ—संज्ञा पुं० [सं० श्रुति (= वेद) + सेतु = पुल)] श्रुतिमर्यादा । श्रुतिनियम । उ०—श्रुतिसेतु पालक राम तुम्ह जगदीश माया जानकी ।—मानस, २ । १२६ । (ख) कोपेउ जबहि बारिचरकेतू । छन महुँ मिटे सकल श्रुतिसेतू ।—मानस, १।८४ ।

श्रुतिस्फोटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कनफोड़ा । २. कर्णस्फोटा लता ।

श्रुतिस्मृति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वेद और धर्मशास्त्र [को०] ।

श्रुतिहारी—वि० [सं० श्रुतिहारिन्] कानों को अच्छा लगनेवाला । सुनने में मधुर ।

श्रुती—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रुति' [को०] ।

श्रुत्य^1—वि० [सं०] १. सुना जाने योग्य । २. प्रसिद्ध । ३. प्रशस्त ।

श्रुत्य^2—संज्ञा पुं० ख्याति दिलाने वाला कार्य [को०] ।

श्रुत्यनुप्रास—संज्ञा पुं० [सं०] अनुप्रास के पाँच भेदों में से एक । वह अनुप्रास जिसमें एक ही स्थान से उच्चरित होनेवाले व्यंजन दो या अधिक बार आवें ।

विशेष—कंठ, तालु, मूर्द्धा, दंत आदि उच्चारण के स्थान हैं । अतः भिन्न वर्ण होने पर भी यदि कई वर्ण एक ही उच्चारणस्थान के हैं तो यह अनुप्रास होगा ।

श्रुव—संज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ । २. दे० 'स्रुव' ।

श्रुवा—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'स्रुवा' । उ०—कुश मुद्रिका समिधैं श्रुवा कुश औ कमंडल को लिए ।—केशव (शब्द०) ।

श्रुवावृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] विकंकत का पेड़ [को०] ।

श्रुषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] कासमर्द । कसौंदा ।

श्रुष्टि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुनने की क्रिया २. सहारा । सहायता । ३. वर । प्रसाद । अनुग्रह । ४. उन्नति । उत्फुल्लता । आनंद [को०] ।

श्रुठीⓅ—संज्ञा स्त्री० [सं० शुण्डी] पीपर । उ०—कोला, कृष्णा, मागधी, तिग्म तुंडला होइ, बैदेही स्यामा, कणा, श्रूठी कहियै सोइ ।—नंद० ग्रं०, पृ० १०४ ।

श्रेटी, श्रेढी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का पहाड़ा । सेंढ़ी । २. श्रेढी व्यवहार । श्रेढ़ीगणना का एक ढंग ।

यौ०—श्रेढीफल = पहाड़े का जोड़ । श्रेणीव्यवहार = श्रेढी गणना की एक विधि ।

श्रेणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बहुत सी वस्तुओं का ऐसा समूह जो उत्तरोत्तर रेखा के रूप में कुछ दूर तक चला गया हो । पंक्ति । पाँती । कतार । २. एक के उपरांत दूसरा ऐसा लगातार क्रम । शृंखला । परंपरा । सिलसिला ।

यौ०—श्रेणिबद्ध = श्रेणीबद्ध ।

३. दल । समूह । ४. सेना । फौज । ५. समान व्यवसायियों का दल । एक ही कारबार करनेवालों की मंडली । कंपनी । ६. पानी भरने का डोल । ७. सिकड़ी । जंजीर । ८. सीढ़ी । जीना । ९. किसी वस्तु का अगला या ऊपरी भाग ।

श्रेणिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. अगला दाँत । राजदंत । २. मगध देश के राजा बिंबसार का एक नाम ।

श्रेणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. डेरा । खेमा । तंबू । २. एक छंद का नाम । ३. एक तृण ।

श्रेणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रेणि' । २. समान व्यवसायियों का दल । उ०—यहाँ भी व्यवसायियों की श्रेणियाँ थीं, जैसे कि गोवर्धन में २,००० जुलाहों की एक श्रेणी थी ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ३१८ ।

श्रेणीकरण—संज्ञा पुं० [सं०] पूर्वापर क्रम से रखने का कार्य श्रेणीबद्ध करना । वर्गीकरण [को०] ।

श्रेणीकृत—वि० क्रम से लगाया या सजाया हुआ [को०] ।

श्रेणीधर्म—संज्ञा पुं० [सं०] १. व्यवसायियों की मंडली के नियम । व्यापारियों की नीति रीति । २. पंचायत की रीति या नियम ।

श्रेणीपाद—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्रानुसार वह राष्ट्र या जनपद जिसमें श्रेणियों या पंचायतों की प्रधानता हो ।

श्रेणीप्रमाण—संज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार वह शिल्पी या व्यापारी जो किसी श्रेणी के अंतर्गत हो और उसके मंतव्यों के अनुसार काम करता हो ।

श्रेणीबंध—वि० [सं० श्रेणीबन्ध] दे० 'श्रेणीबद्ध' [को०] ।

श्रेणीबद्ध—वि० [सं०] १. पंक्ति के रूप में स्थित । कतार बाँधे हुए । २. समूह बद्ध । वर्ग या दलबद्ध । ३. एक शृंखला में बँधा हुआ (को०) ।

श्रेणीभुक्त—वि० [सं०] जो श्रेणी या पंक्ति में कर लिया गया हो। श्रेणी में आया या मिला हुआ (को०)।

श्रेणीसंघर्ष—संज्ञा पुं० [सं० श्रेणी+सङ्घर्ष] समानधर्मियों के एक वर्ग या श्रेणी का दूसरे से संघर्ष वर्गसंघर्ष। (अं० क्लास वार)। उ०—वे लोग सुधारवादी ढंग के विरोधी थे और श्रेणीसंघर्ष के द्वारा श्रमजीवियों की अवस्था को सुधारना चाहते थे।—भा० वि०; पृ० ७२।

श्रेणीहित—संज्ञा पुं० [सं०] वर्ग का हित। वर्गीय स्वार्थ। (अं० क्लास इंटेरेस्ट)। उ०—मजदूरों के दृष्टिकोण को—उनके श्रेणीहित के साधनों का—न अपना सके।—'आज', पृ० ३, (३।१०।५१)।

श्रेय^{१}—वि० [सं० श्रेयस्] [वि० स्त्री० श्रेयसी] १. अधिक अच्छा। बेहतर। २. श्रेष्ठ। उत्तम। बहुत अच्छा। प्रशस्त। ३. मंगल-दायक। शुभ। कल्याणकारी। ४. यश देनेवाला। कीर्तिकर। ५. अधिक सौभाग्यशाली (को०)। ६. अत्यंत प्रिय। प्रियतर (को०)। ७. उपयुक्त (को०)।

श्रेय^{२}—संज्ञा पुं० १. अच्छापन। २. भलाई। बेहतरी। कल्याण। मंगल। ३. धर्म। पुण्य। सदाचार। ४. एक साम का नाम। ५. ज्योतिष में दूसरा मुहूर्त्त। ६. वर्त्तमान अवसर्पिणी के ग्यारहवें अर्हत्। (जैन)। ७. मुक्ति। मोक्ष (को०)। ८. शुभ अवसर (को०)। ९. सुख (को०)।

श्रेयसी^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. हरीतकी। हर्रे। २. पाठा। पाठी। ३. गज पीपल। ४. रास्ना। ५. प्रियंगु।

श्रेयसी^{२}—वि० स्त्री० कल्याणमयी। श्रेययुक्ता (को०)।

श्रेयस्कर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्रेयस्करी] कल्याण करनेवाला। शुभदायक।

श्रेयस्त्व—संज्ञा पुं० [सं०] उत्तमता। श्रेष्ठता (को०)।

श्रेयांसनाथ—संज्ञा पुं० [सं०] वर्त्तमान अवसर्पिणी के ग्यारहवें अर्हत् या तीर्थंकर (जैन)।

श्रेष्ठ^{१}—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्रेष्ठा] १. सर्वोत्तम। उत्कृष्ट। बहुत अच्छा। २. मुख्य। प्रधान। प्रथम। ३. पूज्य। बड़ा। ४. वृद्ध। ज्येष्ठ। ५. कल्याण भाजन। ६. प्रियतम। अत्यंत प्रिय (को०)।

श्रेष्ठ^{२}—संज्ञा पुं० १. कुबेर। २. विष्णु। ३. द्विज। ब्राह्मण। ४. राजा। नृप (को०)। ५. गोदुग्ध। गाय का दूध (को०)। ६. ताँबा (को०)। ७. शिव। महादेव (को०)।

श्रेष्ठकाष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] १. सागौन। सागवान का पेड़। २. घर में लगा प्रधान स्तंभ।

श्रेष्ठतम—वि० [सं०] सबसे श्रेष्ठ। सबसे बड़ा या ज्येष्ठ। सर्वोत्तम।

श्रेष्ठता—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. उत्तमता। २. प्रधानता। गुरुता। बड़ाई। बड़प्पन।

श्रेष्ठवाक्—वि० [सं० श्रेष्ठवाच्] वावदूक। मुखर। श्रेष्ठ वक्ता (को०)।

श्रेष्ठवेधिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कस्तूरी। मृगमद (को०)।

श्रेष्ठा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. बहुत उत्तम स्त्री। २. स्थल कमल। ३. मेदा नामक अष्टवर्गीय ओषधि। ४. त्रिफला।

श्रेष्ठाम्ल—संज्ञा पुं० [सं०] इमली (को०)।

श्रेष्ठाश्रम—संज्ञा पुं० [सं०] १. गृहस्थाश्रम। २. गृहस्थ (को०)।

श्रेष्ठिकन्या—संज्ञा स्त्री० [सं०] व्यवसायी की पुत्री। सेठ महाजन की कन्या। उ०—घबराओ मत श्रेष्ठिकन्ये।—स्कंद०, पृ० ४४।

श्रेष्ठिचत्वर—संज्ञा पुं० [सं०] नगर का वह भाग जहाँ बड़े बड़े व्यापारी रहते हैं (को०)।

श्रेष्ठी—संज्ञा पुं० [सं० श्रेष्ठिन्] १. व्यापारियों या वणिकों का मुखिया। प्रतिष्ठित व्यवसायी। महाजन। सेठ। २. बड़ा व्यापारी। श्रेष्ठ व्यापारी।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७८।

श्रेष्ठय—संज्ञा पुं० [सं०] सर्वोत्कृष्टता। सबसे श्रेष्ठ होने का भाव (को०)।

श्रोण^{१}—वि० [सं०] पंगु। खंज।

श्रोण^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग (को०)।

श्रोण(पु)^{३}—संज्ञा पुं० [सं० शोण] दे० 'शोण'। उ०—श्रोण की सरिता दुरंत अनंत रूप सुनत।—केशव (शब्द०)।

श्रोणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. काँजी। भात का माँड़। २. श्रवण नक्षत्र।

श्रोणि—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कटि। कमर। २. नितंब। चूतड़। ३. यज्ञ की वेदी का किनारा। ४. पथ। मार्ग।

यौ०—श्रोणितट = नितंब की उतार या ढाल। श्रोणिफल, श्रोणिफलक = बड़ा नितंब। कटिप्रदेश। श्रोणिबिंब = (१) कटिसूत्र। (२) गोलाकार नितंब। श्रोणिसूत्र।

श्रोणिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्रोणि'।

श्रोणित(पु)‡—संज्ञा पुं० [सं० शोणित] दे० 'शोणित'।

श्रोणिसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. करधनी। मेखला। खड्गबंधन का सूत्र परतला। तलवार का पट्टा (को०)।

श्रोणी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कटि। कमर। २. चूतड़। नितंब। ३. मध्य भाग। कटि प्रदेश। ४. पंथ। मार्ग (को०)।

श्रोतःआपत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्ध शास्त्र के अनुसार मुक्ति या निर्वाणसाधना की प्रथम अवस्था जिसमें बंधन ढीले होने लगते हैं।

विशेष—बौद्ध शास्त्र में पाँच प्रतिबंध माने गए हैं—आलस्य, हिंसा, काम, विचिकित्सा और मोह। श्रोतःआपन्न को ये पाँचों बंधन छोड़ते तो नहीं पर क्रमशः ढीले होते जाते हैं। इस अवस्था को प्राप्त साधक को केवल सात बार और जन्म लेना पड़ता है। इस अवस्था के उपरांत 'सकृदागामी' की अवस्था है जिसमें प्रथम तीन बंधन सर्वथा छूट जाते हैं और एक ही जन्म और लेना रह जाता है।

श्रोतःआपन्न—वि० [सं० स्रोतस्+आपन्न] बौद्ध शास्त्र के अनुसार मुक्ति या निर्वाण की साधना में प्रथम अवस्था को प्राप्त जिसमें क्रमशः बंधन ढीले होने लगते हैं।

श्रोत—संज्ञा पुं० [सं० श्रोतस्] १. श्रवणेंद्रिय । कान । २. हाथी की सूँड़ (को०) । ३. इंद्रिय । ज्ञानेंद्रिय (को०) । ४. धारा । प्रवाह (को०) ।

श्रोतक—वि० [सं०] १. सुनने योग्य । श्रवणीय । २. जिससे सुनना हो ।

श्रोतव्य—वि० [सं०] १. सुनने के योग्य । उ०—श्रोत्र सु अध्यातम प्रगट श्रोतव्यं अधिभूत । दिशा तत्र है देवता यह त्रिपुटी इहि सून —सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० ६४ ।

श्रोता—संज्ञा पुं० [सं० श्रोतृ] १. सुननेवाला । श्रवणकर्ता । २. कथा या उपदेश सुननेवाला । शिक्षार्थी ।

श्रोत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्रवणेंद्रिय । कान । २. वेदज्ञान । वेद में निपुणता । वेद संबंधी प्रवीणता । ३. वेद । श्रुति (को०) ।

यौ०—श्रोत्रपदवी = श्रवणगोचरता । श्रवण की सीमा । श्रोत्रपदानुग = श्रुतिप्रिय । श्रोत्रपालि = कान की लोर या ललरी । श्रोत्रपुट = (१) कर्णपुट । (२) कान की ललरी । श्रोत्रपेय = कानों द्वारा पान करने योग्य । सुननेयोग्य । श्रवणीय । श्रोत्रमार्ग = कर्ण । कान श्रोत्रमूल = कान की जड़ । कर्णमूल । श्रोत्रवर्त्म = कर्ण । कान । श्रोत्रवादी = आज्ञापालक । आज्ञाकारी । सुनने के साथ ही आज्ञापालन करनेवाला । श्रोत्रमुख = कानों को सुखद । श्रवणमधुर । श्रतिमधुर । श्रोत्रहीन = कर्णरहित । श्रवणशक्ति विहीन । बधिर । बहरा ।

श्रोत्रकांता—संज्ञा स्त्री० [सं० श्रोत्रकान्ता] एक पौधा जो औषध के काम में आता है ।

श्रोत्रिय^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो वेद वेदांग में पारंगत हो । वेदज्ञ । २. ब्राह्मणों का एक वर्तमान भेद । [को०] ।

श्रोत्रिय^2—वि० १. वेदज्ञ । वेद में पारंगत । २. विधेय । अनुशासनीय । वश्य । ३. सभ्य । शिष्ट । सुसंस्कृत [को०] ।

श्रोत्रियता—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्रोत्रिय होने का भाव या धर्म ।

श्रोत्रियत्व—संज्ञा पुं० [सं०] श्रोत्रियता [को०] ।

श्रोत्री -संज्ञा पुं० [सं० श्रोत्रिय] दे० 'श्रोत्रिय'।

श्रोन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शोण, हिं० श्रोण] दे० 'शोण'। उ०—लिए नृकपाल नृदेह कराल । करे नर मुंडनि की उर माल । पिए नर श्रोन मिल्यो मदिरा सों । कपालि कु देखिए भीम प्रभा सों ।—केशव (शब्द०) ।

श्रोनित(पु)—संज्ञा पुं० [सं० शोणित] दे० 'शोणित' । उ०—श्रोनित श्रवत लसै तनु कैसे । परम प्रफुल्लित किंसुक जैसे ।—मधुसूदन (शब्द०) ।

श्रौत^1—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्रौती] १. श्रवण संबंधी । कर्ण संबंधी । २. श्रुति या वेद संबंधी । ३. श्रुतिविहित । वेद प्रतिपादित । जो वेद के अनुसार हो । ४. यज्ञ संबंधी । जैसे,—श्रौतकर्म, श्रौत सूत्र । ५. श्रोत्र ग्राह्य । जो अस्फुट न हो (को०) ।

श्रौत—संज्ञा पुं० १. तीनों प्रकार की अग्नि । गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिण नाम की अग्नि । २. वेद प्रतिपादित धर्म । ३. यज्ञाग्नि का रक्षण वा भरण [को०] ।

यौ०—श्रौतकर्म = दे० 'श्रौत्रकर्म' । श्रौतजन्म = यज्ञोपवीत संस्कार । श्रौतजन्म । श्रौतमार्ग = (१) श्रुतिविहित मार्ग । (२) श्रवण । कर्णपथ । श्रौतसूत्र ।

श्रौतश्रव -संज्ञा पुं० [सं०] शिशुपाल का एक नाम ।

श्रौतसूत्र—संज्ञा पुं० [सं०] यज्ञादि के विधानवाले सूत्र । कल्प ग्रंथ का वह अंश जिसमें पौर्णमास्येष्टि से लेकर अश्वमेध पर्यंत यज्ञों का विधान है ।

विशेष—दो प्रकार के वैदिक सूत्रग्रंथ मिलते हैं—श्रौतसूत्र और गृह्यसूत्र । श्रौत सूत्रों में यज्ञों का विधान है । सूत्रकार कई हैं । जैसे,—आश्वलायन, आपस्तंब, कात्यायन, द्राह्यायण ।

श्रौतहोम—संज्ञा पुं० [सं०] सामवेद का एक परिशिष्ट ।

श्रौत्र^1—वि० [सं०] श्रवणेंद्रिय संबंधी । श्रवण संबंधी ।

श्रौत्र^2—संज्ञा पुं० १. वेद में दक्षता । वेदज्ञाता । वैदिक वाङ्मय या कार्यों मे पारंगत होना । २. श्रवण । कर्ण [को०] ।

श्रौत्रकर्म—संज्ञा पुं० [सं०] वेदविहित यागादि कर्म । यज्ञ ।

श्रौत्रजन्म—संज्ञा पुं० [सं० श्रौत्रजन्मन्] द्विजों का उपनयन संस्कार जिसमें वे वेद के अधिकारी होकर द्वितीय जन्म प्राप्त करते हैं ।

श्रौन(पु)—संज्ञा पुं० [सं० श्रवण] दे० 'श्रवण'। उ०—पीतम श्रौन समीप सदा बजौ यों कहिकै पहिले पहिरायो ।—मतिराम (शब्द०) ।

श्याह्व—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल । पद्म । २. गंधाबिरोजा । सरल द्रव्य ।

श्लक्ष्ण^1—वि० [सं०] १. कोमल । मृदु । सौम्य । जैसे, शब्द । २. चिकना, चमकदार । ३. स्वल्प । पतला । सूक्ष्म । ४. सुंदर । लावण्यमय । ५. सच्चा । ईमानदार । निश्छल । खरा [को०] ।

यौ०—श्लक्ष्णत्वक् = (१) वृक्ष की चिकनी छाल या वल्कल । (२) अश्मंतक नामक वृक्ष । कचनार । श्लक्ष्णपत्रक = आबनूस या कोविदार । श्लक्ष्णपिष्ट = खूब महीन या चिकना पीसा हुआ । श्लक्ष्णवाक् = मधुर वचन । श्लक्ष्णवादी = मृदु या मधुर बोलनेवाला ।

श्लक्ष्णक^1—वि० [सं०] १. कोमल । चिक्कण । २. सुंदर [को०] ।

श्लक्ष्णक^2—संज्ञा पुं० सुपारी । पूगफल [को०] ।

श्लथ—वि० [सं०] १. शिथिल । ढीला । उ०—बीता उत्सव ज्यों चिह्न म्लान; छाया श्लथ ।—तुलसी ग्रं०, पृ० ५ । २. मंद । धीमा । ३. दुर्बल । अशक्त । ४. गिरा हुआ । च्युत (को०) । ५. न बंधा हुआ । बिखरा हुआ । छूटा हुआ । जैसे, केश ।

श्लथगात—वि० [सं०] शिथिल शरीरवाला । उ०—श्लथगात, तुम में ज्यों रही मैं बद्ध हो ।—अपरा, पृ० १४५ ।

श्लथबंधन—वि० [सं० श्लथबन्धन] जिसके बंधन ढीले हो गए हों ।

श्लथांग—वि० [सं० श्लथाङ्ग] जिसके अंग शिथिल हों । श्लथगात ।

श्लथोद्यम—वि० [सं०] चेष्टा या उद्यम को विश्राम देने या शिथिल करनेवाला [को०] ।

श्लाघन^{२}—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० श्लाघित, श्लाघी, श्लाघनीय, श्लाघ्य] १. प्रशंसा करना। प्रशस्ति गान। २. खुशामद या चाटुकारिता। चापलूसी। ३. अपनी प्रशंसा करना। डींग हाँकना।

श्लाघन^{२}—वि० अपनी प्रशंसा करनेवाला।

श्लाघनीय—वि० [सं०] १. प्रशंसा के योग्य। प्रशंसनीय। तारीफ के लायक। २. उत्तम। श्रेष्ठ।

श्लाघा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. प्रशंसा। तारीफ। २. स्तुति। बड़ाई। ३. खुशामद। चापलूसी। ४. इच्छा। चाह। उ०—अच्छा तो ज्ञात हुआ कि कदाचित् तुम्हारी श्लाघा है कि मैं तुमको इनसे भी नीचतर समझूँ।—अयोध्यासिंह (शब्द०)। ५. आज्ञापालन। सेवा। ६. आत्मप्रशंसा (को०)।

यौ०—श्लाघाविपर्यय = आत्म प्रशंसा या चापलूसी का अभाव।

श्लाघित—वि० [सं०] १. जिसकी तारीफ हुई हो। प्रशंसित। २. अच्छा। उत्तम। श्रेष्ठ।

श्लाघी—वि० [सं० श्लाघिन्] १. सदर्प। साहंकार। मदोद्धत। २. अभिमानी। प्रगल्भ। धृष्ट। डींग हाँकनेवाला। ३. प्रख्यात। प्रसिद्ध [को०]।

श्लाघ्य—वि० [सं०] १. सराहने योग्य। प्रशंसनीय। तारीफ के लायक। २. श्रेष्ठ। अच्छा। ३. आदरणीय। श्रद्धेय (को०)।

श्लिकु—संज्ञा पुं० [सं०] १. लंपट। कामुक। २. सेवक। दास। ३. आश्रित। ४. नक्षत्र विद्या। फलित ज्योतिष [को०]।

श्लिक्यु—संज्ञा पुं० [सं०] १. कामुक। लंपट। २. आश्रित। दास। सेवक।

श्लिषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. मिलना। जुड़ना। संयुक्त होना। २. परिरंभण। आलिंगन।

श्लिष्ट—वि० [सं०] १. मिला हुआ। एक में जुड़ा हुआ। सटा हुआ। लगा हुआ। २. अच्छी तरह जमा हुआ। चिपका हुआ। खूब बैठा हुआ (वस्त्र आदि)। ३. आलिंगित। भेंटा हुआ। ४. (साहित्य में) श्लेषयुक्त। जिसके दोहरे अर्थ हों। ५. टिका हुआ। झुका हुआ (को०)।

श्लिष्ट रूपक—संज्ञा पुं० [सं०] रूपक अलंकार का एक भेद। जहाँ शब्दों द्वारा रूपक का विधान किया जाय। जैसे,—देखत ही सुबरन हीरा हरिबे कौं पश्यतोहर मनोहर ये लोचन तिहारे हैं।—भिखारी ग्रं०, भाग २, पृ० १००।

श्लिष्टवर्त्म—संज्ञा पुं० [सं० श्लिष्टवर्त्मन्] एक नेत्र रोग, पलकों की बरौनियों का आपस में चिपक जाना [को०]।

श्लिष्टि^{१}—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. जोड़। मिलान। लगाव। २. आलिंगन। परिरंभण।

श्लिष्टि^{२}—संज्ञा पुं० ध्रुव के एक पुत्र का नाम।

श्लिष्टोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] वह उक्ति कथन जो श्लेषयुक्त हो। द्व्यर्थक उक्ति।

श्लीपद—संज्ञा पुं० [सं०] टाँग फूलने का रोग। फीलपाव।

विशेष—इस रोग में प्रथम पेड़ू, अंडकोष और जंघा की संधियों में पीड़ासहित और ज्वरयुक्त सूजन होकर पाँव में उतर आती है और पैर हाथी के पैर के समान मोटा हो जाता है। वैद्यक के अनुसार यह रोग हाथ, नाक, कान, आँख, लिंग और होंठ में भी होता है। यह चार प्रकार का होता है; अर्थात् वातज, पित्तज, श्लेष्मज और सन्निपातज। एक वर्ष बाद यह रोग असाध्य हो जाता है।

यह रोग तालाब आदि का पुराना जल पीने, शीत देश में अधिक निवास करने तथा जिन स्थानों में सदा पुराना पानी बना रहता है; वहाँ रहने से उत्पन्न होता है।

श्लीपदप्रभव—संज्ञा पुं० [सं०] आम का पेड़ [को०]।

श्लीपदापह—संज्ञा पुं० [सं०] पुत्रजीव वृक्ष।

श्लीपदी—वि० [सं० श्लीपदिन्] जिसे श्लीपद रोग हो गया हो।

श्लील—वि० [सं०] १. उत्तम। नफीस। श्रेष्ठ। २. जो अश्लील न हो। जो भद्दा न हो। भद्र या सभ्य समाज में स्त्री, पुरुष, बच्चे आदि सभी के बोलने, पढ़ने या दिखाए जाने योग्य। ३. भाग्यशाली। मंगलदायक। शुभ। दे० 'श्रील' (को०)।

श्लेष—संज्ञा पुं० [सं०] १. मिलना। जुड़ना। एक में सटने या लगने का भाव। २. संयोग। जोड़। मिलान। ३. आलिंगन। परिरंभण। भेंटना। ४. साहित्य में एक अलंकार जिसमें एक शब्द के दो या अधिक अर्थ लिए जाते हैं। दो अर्थवाले शब्दों का प्रयोग। ५. मैथुन। संभोग (को०)। ६. दाह। जलन (को०)। ७. व्याकरण में वृद्धि या आगम (को०)।

श्लेषक^{१}—वि० [सं०] मिलानेवाला। जोड़नेवाला।

श्लेषक^{२}—संज्ञा पुं० १. दे० 'श्लेष'। उ०—केशव दशम प्रभाव में, श्लेषक कवित विलास। वर्णन के मिसु प्रगटहीं, वरषा शरद प्रकाश।—केशव (शब्द०)। २. कफ का एक भेद।

विशेष—कफ के अवलंबक, क्लेदक, बोधक, तर्पक और श्लेषक पाँच भेद हैं।

श्लेषण—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० श्लेषणीय, श्लेषित, श्लेषी, श्लिष्ट] १. मिलाना। जोड़ना। एक में सटाना। संयुक्त करना। २. परिरंभण। आलिंगन।

श्लेषभित्तिक—वि० [सं०] जो श्लेष पर आधारित हो [को०]।

श्लेषा—संज्ञा स्त्री० [सं०] आलिंगन। भेंटना।

श्लेषार्थ—संज्ञा पुं० [सं०] अनेकार्थक शब्दों का प्रयोग [को०]।

श्लेषी—वि० [सं० श्लेषिन्] श्लेषण करनेवाला। आलिंगन करनेवाला [को०]।

श्लेषोक्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्लेषयुक्त कथन। द्व्यर्थक वचन। श्लिष्टोक्ति [को०]।

श्लेषोपमा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक अलंकार जिसमें ऐसे श्लिष्ट शब्दों का प्रयोग होता है जिनके अर्थ उपमेय और उपमान दोनों में लग जाते हैं। उ०—सगुन, सरस, सब अंग रागरंजित हैं

सुनहु सुभाग ! बड़े भाग बाग पाइए। चातुरी की शाला मानि आतुर ह्वै, नंदलाल ! चंपे की माला बाला उर उरझाइए। —केशव (शब्द०)। यहाँ सगुन (गुणयुक्त, सूत्रयुक्त), सरस आदि शब्द बाला और चंपकमाला दोनों में लग जाते हैं।

श्लेष्म, श्लेष्मक—संज्ञा पुं० [सं०] श्लेष्मा।

श्लेष्म कटाहक—संज्ञा पुं० [सं०] निष्ठीवन का पात्र। पीकदान [को०]।

श्लेष्मघन—संज्ञा पुं० [सं०] १. केतकी। २. चमेली या जूही।

श्लेष्मघ्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] १ त्रिपुर मल्लिका। २. मल्लिका। मोतिया का एक भेद। ३. केतकी। केवड़ा। ४. महाज्योतिष्मती लता। ५. तीन कड़वे मसाले। त्रिकटु।

श्लेष्मघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्लेष्मघ्ना'।

श्लेष्मज अर्श—संज्ञा पुं० [सं०] श्लेष्मा (कफ) से उत्पन्न बवासीर रोग।—माधव०, पृ० ५४।

श्लेष्मण—वि० [सं०] १. कफवाला। कफ प्रकृतिवाला। २. कफ संबंधी। श्लेष्मल।

श्लेष्मणा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक पौधा।

श्लेष्मधातु—संज्ञा पुं० [सं०] कफ प्रकृति। कफ स्वभाव [को०]।

श्लेष्मभू—संज्ञा पुं० [सं०] फुफ्फुस [को०]।

श्लेष्मल^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] लिसोड़ा। बहुवार वृक्ष।

श्लेष्मल^{२}—वि० कफयुक्त। श्लेष्मयुक्त। श्लेष्मण। कफ संबंधी।

श्लेष्मह—संज्ञा पुं० [सं०] श्लेष्मा को हरनेवाला। कायफल। कटफल।

श्लेष्महर—वि० [सं०] श्लेष्मा का हरण करनेवाला। बलगम दूर करनेवाला [को०]।

श्लेष्मांतक—संज्ञा पुं० [सं० श्लेष्मान्तक] लिसोड़ा। लभेरा। बहुवार वृक्ष।

श्लेष्मा—संज्ञा पुं० [सं० श्लेष्मन्] १. वैद्यक के अनुसार शरीर की तीन धातुओं या विकारों में से एक। कफ। बलगम। २. रस्सी। बंधन। बाँधने की रस्सी। ३. लिसोड़े का फल। लभेरा।

श्लेष्मात, श्लेष्मातक—संज्ञा पुं० [सं०] लिसोड़ा। लभेरा।

श्लेष्मातक वन—संज्ञा पुं० [सं०] गोकर्णतीर्थ के पास का जंगल जिसमें शिव एक बारहसिंघे के रूप में छिपे थे। (पुराण)।

श्लेष्मातिसार—संज्ञा पुं० [सं०] कफ के विकार से होनेवाला संग्रहणी या पेचिश का रोग [को०]।

श्लेष्मिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० श्लेष्मिकी] १. कफ संबंधी। श्लेष्मल। २. कफ बढ़ानेवाला। बलगम पैदा करनेवाला। कफकारक [को०]।

श्लेष्मी—संज्ञा पुं० [सं० श्लेष्मिन्] १. गंधा बिरोजा। २. लोबान।

श्लेष्मोज—संज्ञा पुं० [सं०] कफप्रकृति। दे० 'श्लेष्मधातु' [को०]।

श्लेष्मोदर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का उदर रोग। उ०—श्लेष्मोदर रोग में हाथ पैर आदि अंगों में शून्यता होय और जकड़ जाँय।—माधव०, पृ० १६४।

विशेष—इसमें कफ के विकार के कारण हाथ, पैर आदि में शून्यता आ जाती है। पेट चिकना, सफेद, कड़ा तथा ठंढा मालूम पड़ने लगता है।

श्लैष्मिक—वि० [सं०] श्लेष्म संबंधी। कफवाला।

श्लोक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शब्द। ध्वनि। आवाज। २. पुकार। आह्वान। ३. स्तोत्र। स्तुति। ४. पद्यबद्ध कीर्तिगान या प्रशंसा। ५ स्तवन या प्रशसा का विषय या आस्पद (को०)। ६. नाम। कीर्ति। यश। जैसे,—पुण्यश्लोक। ७. संस्कृत का सबसे अधिक व्यवहृत छंद। अनुष्टुभ छंद। ८. संस्कृत का कोई पद्य। ९. किंवदंती। कहावत (को०)। १०. इष्टमित्र (को०)।

यौ०—श्लोककार = कवि। छंदबद्ध कविता करनेवाला। श्लोकनिबद्ध, श्लोकबद्ध = छंदबद्ध। पद्यबद्ध। श्लोकभू = ध्वनि या शब्द से उत्पन्न होनेवाला।

श्लोकत्व—संज्ञा पुं० [सं०] श्लोक होने का भाव या धर्म।

श्लोक्य—वि० [सं०] स्तुत्य। प्रशंस्य [को०]।

श्लोण—संज्ञा पुं० [सं०] लँगड़ा मनुष्य [को०]।

श्वः—अव्य० [सं० श्वस्] आनेवाले दूसरे दिन। कल। २. (समास में) भविष्यत् काल में (को०)।

यौ०—श्वःश्रेयस = (१) प्रसन्न। समृद्ध। (२) प्रसन्नता। समृद्धि। (३) ब्रह्म या परमात्मा।

श्वकंटक—संज्ञा पुं० [सं० श्वकण्टक] व्रात्य और शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न पुरुष (स्मृति)।

श्वक—संज्ञा पुं० [सं०] भेड़िया। वृक।

श्वक्रीडी—संज्ञा पुं० [सं० श्वक्रीडिन्] करतबी या खिलाड़ी कुत्ता पालनेवाला व्यक्ति [को०]।

श्वगण—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ते का झुंड [को०]।

श्वगणिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिकारी। २. कुत्ता पालनेवाला व्यक्ति [को०]।

श्वग्रह—संज्ञा पुं० [सं०] १. बालग्रह या रोग। २. बच्चों को कष्ट देनेवाला एक प्रेत। वह जो कुत्तों को पकड़ता है (को०)।

श्वचिल्ली—संज्ञा पुं० [सं०] कुकुरबंदा।

श्वज(पु)—अव्य० [सं० स्वयम्] स्वयम्। खुद। उ०—बिन पत्त मत्त जनु डंड डक, रंभ थंभ कर कटिय श्वज।—पृ० रा०, ५।५१।

श्वजीविका—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुत्तों की जीविका। दासता। गुलामी [को०]।

श्वदंष्ट्रक—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ते का दाँत। २ गोखरू।

श्वदंष्ट्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुत्ते की दाढ़। २. गोखरू।

श्वदयित—संज्ञा पुं० [सं०] हड्डी जो कुत्तों को प्रिय है [को०]।

श्वधूर्त—संज्ञा पुं० [सं०] शृगाल। गीदड़।

श्वन्—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० शुनी] कुत्ता। कुक्कुर।

विशेष—समास में इस शब्द का पूर्वपद केवल 'श्व' रह जाता है। जैसे,—श्वकर्ण, श्वपच।

श्वनर—संज्ञा पुं० [सं०] नीच व्यक्ति। कमीना आदमी [को०]।

श्वनिश—संज्ञा पुं० [सं०] वह रात्रि जिस दिन कुत्ते भौंकते हैं अथवा नहीं खाते। कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि। उ०—वर्तमान काल में भी यत्र तत्र इस प्रकार के कुत्ते सुने गए हैं जो उक्त तिथि को नहीं खाते। इस तिथि के लिये श्वनिश तथा श्वनिशा (२।४।५) शब्द प्रचलित थे।—संपूर्णा० अभि० ग्रं०, पृ० २४८।

श्वनिशा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'श्वनिश'।

श्वपच्, श्वपच—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्वपचा, श्वपची] १. कुत्ते का मांस पकाकर खानेवाला। २. एक प्रकार का चांडाल। डोम।

विशेष—भिन्न भिन्न स्मृतियों में इसकी उत्पत्ति भिन्न भिन्न कही गई है। जैसे,—कहीं चांडाल और ब्राह्मणी से, कहीं निष्ट्य और किराती से, कहीं क्षत्रिय और उग्र जाति की स्त्री से, कहीं अंबष्ठ और ब्राह्मणी से इत्यादि।

३. कुत्ते को खिलानेवाला (को०)। ४. बधिक। जल्लाद (को०)।

श्वपति—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ते का मालिक [को०]।

श्वपद—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ते का पैर। २. कुत्ते के पदचिह्न का निशान [को०]।

विशेष—मनु ने इसे चोरों के सिर पर लगाने के लिये कहा है।

श्वपाक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्वपाकी] दे० 'श्वपच'। चांडाल।

श्वपामन—संज्ञा पुं० [सं०] पपरी नाम का पौधा जिसकी कड़वी जड़ रेचक होती है और औषध के काम में आती है। काकच्छर्दि।

श्वपुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] १. वृश्चिक। बिच्छू। २. कुत्ते की पूँछ (को०)।

श्वपुच्छा—संज्ञा स्त्री० [सं०] पृष्णिपर्णी। पिठवन।

श्वफल—संज्ञा पुं० [सं०] बिजौरा नीबू। बीजपूर वृक्ष।

श्वफल्क—संज्ञा पुं० [सं०] यादव वृष्णि के पुत्र और अक्रूर के पिता।

श्वभीरु—संज्ञा पुं० [सं०] वह जो कुत्ते से डरता हो, शृगाल। गीदड़।

श्वभ्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. दरार। छेद। गड्ढा। २. एक नरक। ३. वसुदेव के एक पुत्र का नाम। ३. गुफा। कंदरा (को०)।

श्वभ्रित—वि० [सं०] छिद्रों से भरा हुआ [को०]।

श्वमुख—संज्ञा पुं० [सं०] एक जंगली जाति।

श्वथ—संज्ञा पुं० [सं०] शोथ। सूजन।

श्वयथु—संज्ञा पुं० [सं०] शोथ। सूजन।

श्वयीचि—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०]।

श्वयीची—संज्ञा स्त्री० [सं०] बीमारी। रोग [को०]।

श्वयूथ्य—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्तों का झुंड [को०]।

श्ववृत्ति—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नीच सेवा की वृत्ति। निकृष्ट नौकरी द्वारा निर्वाह। २. कुत्ते की सी जीवन वृत्ति (को०)।

श्वव्याघ्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हिंस्र पशु। २. व्याघ्र। ३. चीता।

श्वहन्—संज्ञा पुं० [सं०] शिकारी [को०]।

श्वशुर—संज्ञा पुं० [सं०] १. पति या पत्नी का पिता। ससुर। २. आदरणीय व्यक्ति (को०)।

श्वसुरक—संज्ञा पुं० [सं०] ससुर [को०]।

श्वशुर्य—संज्ञा पुं० [सं०] पति या पत्नी का भाई। देवर या साला।

श्वश्रू—संज्ञा स्त्री० [सं०] पति या पत्नी की माता। सास।

श्वसन—संज्ञा पुं० [सं०] [वि० श्वसनीय, श्वसित] १. साँस लेना। दम लेना। २. हाँफना। ३. फूँकना। मुँह से हवा छोड़ना। ४. फूत्कार करना। फुफकारना। ५. लंबी साँस खींचना। आह भरना। ६. वायु देवता। पवन। ७. एक वसु का नाम। ८. मैनफल। मदनफल। ९. एक राक्षस का नाम जिसे इंद्र ने मारा था (को०)।

श्वसनरंध्र—संज्ञा पुं० [सं० श्वसनरन्ध्र] नाक। नासिका [को०]।

श्वसनव्यापार—संज्ञा पुं० [सं० श्वसन+व्यापार] श्वास लेने और छोड़ने की क्रिया। उ०—श्वसन व्यापार, जीभ की क्रियाएँ, शुद्ध उच्चारण सुनने का अभ्यास आदि की सहायता भी लेनी चाहिए।—भा० शिक्षा, पृ० ४७।

श्वसनसमीरण—संज्ञा पुं० [सं०] साँस [को०]।

श्वसनाशन—संज्ञा पुं० [सं०] वायु भक्षण करनेवाला, सर्प। साँप।

श्वसनेश्वर—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन वृक्ष।

श्वसनोत्सुक—संज्ञा पुं० [सं०] साँप। सर्प।

श्वसनोर्मि—संज्ञा स्त्री० [सं०] हवा का झोंका [को०]।

श्वसान—वि० [सं०] साँस लेता हुआ। जीवित [को०]।

श्वसित^1—वि० [सं०] १. श्वासमय। श्वासयुक्त। उ०—चित्रित से उपवन में शत रंगों में आतप छाया, सुरभि श्वसित मारुत, पुलकित कुसुमों की कंपित काया।—ग्राम्या, पृ० ७६। २. साँस लेनेवाला। जीवित (को०)। ३. आह भरनेवाला (को०)।

श्वसित^2—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँस। २. ऊँची साँस लेना। आह भरना [को०]।

श्वसुत, श्वसुन—संज्ञा पुं० [सं०] कुकुंदर। कुकरौंधा नामक पौधा।

श्वस्तन^1—वि० [सं०] आनेवाले दिन का। कल का।

श्वस्तन^2—संज्ञा पुं० कल का दिन। आनेवाला दूसरा दिन।

श्वस्तनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कल का दिन। आनेवाला दूसरा दिन।

श्वस्त्य—वि०, संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्वस्तन' [को०]।

श्वहा—संज्ञा पुं० [सं० श्वहन्] आखेटक। शिकारी [को०]।

श्वास्थि—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का रत्न या बहुमूल्य पत्थर जो काँसे, रूपे, शंख, कुमुद आदि के रंग का कहा गया है। (रत्नपरीक्षा)।

श्वा—संज्ञा पुं० [सं० श्वन्] कुक्कुर। कुत्ता [को०]।

श्वाकर्ण—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ते का कान [को०]।

श्वागणिक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्वगणिक' [को०]।

श्वाग्र—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ते की पूँछ [को०]।

श्वाघ्निक—संज्ञा पुं० [सं०] १. शिकारी। २. कुत्ता पालनेवाला [को०]।

श्वाद—संज्ञा पुं० [सं०] श्वानभक्षक। श्वपाक।

श्वान—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० श्वानी] १. कुत्ता। कुक्कुर। उ०—गोकुल चले प्रेम आतुर ह्वै खुलि गए कपट कपाट। सोए श्वान, पहरुआ सोए, सबै मुक्त भई बाट।—सूर (शब्द०)। २. दोहे का इक्कीसवाँ भेद। इसमें दो गुरु और ४४ लघु होते हैं। ३. छप्पय का पंद्रहवाँ भेद। इसमें ५६ गुरु, ४० लघु कुल ९६ वर्ण, १५२ मात्राएँ होती हैं।

श्वानचिल्लिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] बथुआ नमक शाक।

श्वाननिद्रा—संज्ञा स्त्री० [सं०] ऐसी नींद जो थोड़े खटके से भी चट खुल जाय। हलकी नींद। झपकी।

श्वानवैखरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] कुत्ते की गुर्राहट [को०]।

श्वानी—संज्ञा स्त्री० [सं०] शुनी। कुतिया।

श्वान्नति—संज्ञा स्त्री० [सं०] भारंगी। बभनेटी। ब्राह्मणयष्टिका।

श्वापद^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] हिंसक पशु। व्याघ्र आदि।

श्वापद्^{२}—वि० खौफनाक। जंगली। बर्बर [को०]।

श्वापुच्छ—संज्ञा पुं० [सं०] कुत्ते की पूँछ।

श्वाचित्, श्वाविद्, श्वाविध्—संज्ञा पुं० [सं०] साही नामक जंतु। शल्य।

श्वास—संज्ञा पुं० [सं०] १. नासिका के मार्ग से प्राणवायु के भीतर जाने और बाहर निकलने की क्रिया। प्राणियों का नाक से हवा खींचने और बाहर निकालने का व्यापार। साँस। दम। उ०—ताती ताती श्वासन बिनास्यो रूप होठन।—शकुंतला, पृ० १०९।

क्रि० प्र०—लेना।—छोड़ना।—निकलना।—खींचना।—रोकना।

मुहा०—श्वास रहते = प्राण रहते। जीते जी। श्वास खींचना या चढ़ाना = साँस रोके रहना। श्वास छूटना = मृत्यु होना।

२. व्यंजनों के उच्चारण के प्रयत्न में मुँह से हवा छूटना। ३. जल्दी जल्दी साँस लेना। हाँफना। ४. वायु। हवा (को०)। ५. निश्वास लेना। आह भरना (को०)। ६. एक रोग जिसमें साँस अधिक वेग से और जल्दी जल्दी चलती है। दम फूलने का रोग। दमा।

यौ०—श्वासकास।

विशेष—आयुर्वेद में श्वास रोग पाँच प्रकार का कहा गया है—महाश्वास, ऊर्द्ध्व श्वास, छिन्न श्वास, तमक श्वास और क्षुद्र श्वास। इनमें से प्रथम तीन असाध्य, चौथा कष्टसाध्य और पाँचवाँ साध्य कहा गया है।

श्वासकष्ट—संज्ञा पुं० [सं०] साँस लेने में होनेवाला कष्ट। श्वासकास।

श्वासकास—संज्ञा पुं० [सं०] १. दमा और खाँसी। २. दमे की खाँसी। दमा।

श्वासकुठार—संज्ञा पुं० [सं०] श्वास रोग में उपकारी एक रसौषध।

विशेष—इसे बनाने के लिये शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक की कजली, सिंगी मुहरा, चूना, सोहागा, मैनसिल, काली मिर्च, सोंठ और पिप्पली के चूर्ण को अदरक के रस की एक पुट देकर सिद्ध करते हैं।

श्वासधारण—संज्ञा पुं० [सं०] कात्यायन श्रौतसूत्र के अनुसार श्वास को रोक रखना। साँस रोकने की क्रिया।

श्वासप्रश्वास—संज्ञा पुं० [सं०] साँस लेने की क्रिया। श्वाँस की रेचक और पूरक क्रिया। साँस लेना और निकालना।

श्वासरोग—संज्ञा पुं० [सं० श्वास + रोग] दे० 'श्वास-४'।—माधव०, पृ० ६४।

श्वासरोध—संज्ञा पुं० [सं०] १. साँस रोकना। साँस को बाहर निकलने से रोके रहना। २. दम घुटना। साँस भीतर न समाना।

श्वासहिक्का—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की हिचकी [को०]।

श्वासहीन—वि० [सं०] जो श्वासग्रहण की क्रिया से रहित हो। मृत। मुर्दा।

श्वासहेति—संज्ञा स्त्री० [सं०] (दमा को हटानेवाली) निद्रा। नींद।

श्वासा ⓟ—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वास] १. साँस। दम। जैसे,—जब तक श्वासा तब तक आशा। उ०—श्वासा तासु भए श्रुति चार। करि सो स्तुति या परकार।—सूर (शब्द०)। २. प्राण। प्राणवायु।

श्वासारि—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुष्कर मूल। २. कुष्ठ नामक पौधा। कूट।

श्वासी—संज्ञा पुं० [सं० श्वासिन्] १. श्वास लेनेवाला जीव। जीवित प्राणी। २. वायु। हवा।

श्वासोच्छ्वास—संज्ञा पुं० [सं०] वेग से साँस खींचना और निकालना।

क्रि० प्र०—लेना।

श्वित^{१}—वि० [सं०] श्वेत। श्वेत। धवल।

श्वित^{२}—संज्ञा पुं० श्वैत्य। धवलिमा। सुफेदी [को०]।

श्वितान—वि० [सं०] धवल। श्वेत [को०]।

श्विति—संज्ञा स्त्री० [सं०] धवलिमा। उज्वलता [को०]।

श्वित्न, श्वित्न्य, श्वित्य—वि० [सं०] श्वेत। सफेद। धवल [को०]।

श्वित्र^{१}—वि० [सं०] १. सफेद। श्वेत। २. सफेद कोढ़वाला।

श्वित्र^{२}—संज्ञा पुं० १. श्वेत कुष्ट। सफेद कोढ़। सफेद दागवाला कोढ़।

विशेष—इस रोग में शरीर के चमड़े के ऊपर सफेद दाग पड़ जाते हैं। यह रुधिर, मांस और मेद में रहता है। अन्य प्रकार के कुष्ठों की तरह यह पकता, बहता और पीड़ा नहीं करता। जिसमें केश सफेद न हुए हों तथा जिसमें दाग परस्पर मिलकर एक न हो गए हों, वह साध्य है।

२. शरीर के चर्म पर पड़ा हुआ श्वेत कुष्ट का दाग। सुफेद कोढ़ का धब्बा (को०)।

शिवत्रघ्नी—संज्ञा स्त्री० [सं०] वृश्चिकाली। पीतपर्णी। बिछाली का पौधा।

शिवत्रनाशन, शिवत्रहर—वि० [सं०] कुष्ट रोग दूर करनेवाला।

शिवात्ररि—संज्ञा स्त्री० [सं०] बकुची। सोमराजी।

शिवत्री—वि० [सं० शिवत्रिन्] [वि० स्त्री० शिवत्रिणी] १. शिवत्र रोगी। सफेद कोढ़वाला। २. शिवत्र रोग संबंधी।

श्वेत[१]—वि० [सं०] १. जिसमें कोई रंग न मालूम हो। बिना रंग का। सफेद। धौला। चिट्टा।

विशेष– विज्ञान से सिद्ध है कि श्वेत रंग में सातों रंगों का अभाव नहीं है बल्कि उनका गूढ़ मेल है। सूर्य की किरनें देखने में सफेद जान पड़ती हैं, पर रश्मि विश्लेषण क्रिया से सातों रंगों की किरणें अलग अलग हो जाती हैं।

२. शुभ्र। उज्वल। साफ। निर्मल। ३. निर्दोष। निष्कलंक। ४. जो साँवला न हो। गारा।

श्वेत[२]—संज्ञा पुं० १. सफेद रंग। श्वेत वर्ण। २. चाँदी। रजत। ३. कौड़ी। कपर्दक। ४. पुराणानुसार एक द्वीप। ५. आयुर्वेद में तीसरी त्वचा की संज्ञा। शरीर के चमड़े की तीसरी तह। ६. एक पर्वत। ७. स्कंद के एक अनुचर का नाम। ८. शोभांजन वृक्ष। सहिजन। ९. जीवक नामक अष्टवर्गीय ओषधि। १०. शंख। ११. शुक्र ग्रह। १२. सफेद घोड़ा। १३. सफेद बादल। १४. एक केतु या पुच्छल तारा। १५. सफेद जीरा। श्वेत जीरक। १६. शिव का एक अवतार। १७. वराह-मूर्ति-भेद। श्वेत वराह। १८. पुराण के अनुसार हिरण्मय वर्ष और रम्यक वर्ष के बीच का एक पर्वत। १९. सफेद बकरा (को०)। २०. आँखों की सफेदी। नेत्र का श्वेत रंग (को०)। २१. अग्निपुराण में वर्णित एक राजा का नाम (को०)। २२. भागवत के अनुसार एक नाग (को०)। २३. तक्र या मट्ठा जिसमें समानुपात में जल मिलाया हो (को०)।

श्वेतकंटकारी—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतकण्टकारी] सफेद कंटकारी। श्वेत पुष्पवाली कंटकारी [को०]।

श्वेतकंद—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतकन्द] प्याज।

श्वेतकंदा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतकन्दा] अतिविषा। अतीस नामक ओषधि।

श्वेतक—संज्ञा पुं० [सं०] १. चाँदी। रजत। रौप्य। २. कौड़ी। कपर्दक। ३. काँसा। ४. एक नाग का नाम।

श्वेतकपोत—संज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का चूहा। २. एक प्रकार का साँप।

श्वेतकमल—संज्ञा पुं० [सं०] उज्वल कमल। पुंडरीक [को०]।

श्वेतकल्प—संज्ञा पुं० [सं०] एक कल्प का नाम [को०]।

श्वेतकांडा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतकाण्डा] सफेद दूब। श्वेत दूर्वा।

श्वेतकाक—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद कौआ अर्थात् असंभव बात।

श्वेतकाकीय—वि० [सं०] असंभव। व्यर्थ। बेकार [को०]।

श्वेतकापोती—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पौधा [को०]।

श्वेतकि—संज्ञा पुं० [सं०] महाभारत में वर्णित एक धर्मपरायण राजा।

श्वेतकिण्ही—संज्ञा स्त्री० [सं०] शतपत्रा। विषघ्निका नामक वृक्ष [को०]।

श्वेतकुंजर—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतकुञ्जर] १. श्वेत वर्ण का हाथी। २. इंद्र का ऐरावत हाथी [को०]।

श्वेतकुक्षि—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली।

श्वेतकुश—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का तृण। सित दर्भ [को०]।

श्वेतकुष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद दागवाला कोढ़। शिवत्र।

श्वेतकृष्ण—संज्ञा पुं० [सं०] १. सफेद और काला। २. यह पक्ष और वह पक्ष। एक बात और दूसरी बात। जैसे,—हम श्वेत कृष्ण कुछ न कहेंगे। ३. एक प्रकार का विषैला कीड़ा। (सुश्रुत)।

श्वेतकृष्णा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक विषैला कृमि [को०]।

श्वेतकेतु—संज्ञा पुं० [सं०] १. महर्षि उद्दालक के पुत्र का नाम। २. बोधिसत्व की अवस्था में गौतम बुद्ध का नाम। ३. केतु ग्रह-विशेष।

श्वेतकेश—संज्ञा पुं० [सं०] १. लाल फूल का सहिजन का पेड़। २. सफेद बाल।

श्वेतकोल—संज्ञा पुं० [सं०] पोठी या पोठिया नाम की मछली। शफर [को०]।

श्वेतक्षार—संज्ञा पुं० [सं०] शोरा [को०]।

श्वेतगज—संज्ञा पुं० [सं०] ऐरावत हाथी। उ०—अप्सरा पारिजातक धनुष अश्व गज श्वेत ए पाँच नरपतिहि दीने।—सूर (शब्द०)।

श्वेतगरुत्, श्वेतगरुत—संज्ञा पुं० [सं०] हंस [को०]।

श्वेतगुंजा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतगुञ्जा] सफेद घुँघची [को०]।

श्वेतघंटा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतघण्टा] नागदंती।

श्वेतचंदन—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतचन्दन] श्वेत मलयागिरि चंदन। दे० 'चंदन'।

श्वेतचरण—संज्ञा पुं० [सं०] एक पक्षी।

श्वेतचिलिका, श्वेतचिल्ली—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का शाक। बथुआ [को०]।

श्वेतच्छद—संज्ञा पुं० [सं०] १. गंधपत्र। बनतुलसी। २. हंस।

श्वेतजीरक—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद जीरा।

श्वेतटंकक—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतटङ्कक] सोहागा। श्वेत टंकण [को०]।

श्वेतटंकण—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतटङ्कण] सोहागा।

श्वेतता—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेदी। उज्वलता। शुक्लता। उ०—उसने देखा मक्रील की फेनिल श्वेतता युवती की सुघड़ता पर विराज रही है।—पिंजरे०, पृ० १३।

श्वेतद्युति—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

श्वेतद्रुम—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वरुण वृक्ष।

श्वेतद्विप—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऐरावत हाथी। २. सफेद रंग का हाथी (को०)।

श्वेतद्वीप—संज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणानुसार क्षीरसागर के पास एक अत्यंत उज्वल द्वीप जहाँ विष्णु भगवान् निवास करते हैं। २. वह स्थान या देश जहाँ श्वेत रंग के व्यक्ति या गोरे रहते हैं। योरप। उ०—यूरप या श्वेतद्वीप मानों पश्चिमीय सभ्यता का मायका।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २५६।

श्वेतधातु—संज्ञा पुं० [सं०] १ श्वेत रंग के खनिज पदार्थ। २. खड़िया मिट्टी। ३. दूधिया पत्थर (को०)।

श्वेतधामा—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतधामन्] १. चंद्रमा। २. कपूर। ३. समुद्र फेन। ४. अपामार्ग। चिचड़ा। ५. अपराजिता।

श्वेतनील—संज्ञा पुं० [सं०] मेघ। बादल।

श्वेतपटल—संज्ञा पुं० [सं०] जस्ता नामक धातु।

श्वेतपत्र—संज्ञा पुं० [सं०] १. हँस। २. किसी प्रकार की राजनीतिक वार्ता या संधिचर्चा के अंत में उसमें तै की हुई शर्तों आदि की लिखित घोषणा (अं० ह्वाइट पेपर)।

श्वेतपत्ररथ—संज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा (को०)।

श्वेतपर्णा—संज्ञा स्त्री० [सं०] जलकुंभी। वारिपर्णी।

श्वेतपर्णास—संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत तुलसी (को०)।

श्वेतपाटला—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्वेत वर्ण के फूलवाला पाटल या पाडर वृक्ष (को०)।

श्वेतपाद—संज्ञा पुं० [सं०] शिव के एक गण का नाम।

श्वेतपिंग—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतपिङ्ग] सिंह (को०)।

श्वेतपिंगल—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतपिङ्गल] १. सिंह। २. महादेव। शिव। ३. वह जिसका वर्ण श्वेत और कपिल रंग का हो (को०)।

श्वेतपिंगलक—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतपिङ्गलक] सिंह।

श्वेतपुष्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. निर्गुंडी। सफेद फूल।

श्वेतपुष्पा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. नागपुष्पी। २. तारई। ३. सन। ४. सेंधुआर। संभालु। ५. नागदंती। ६. सफेद अपराजिता।

श्वेतपुष्पिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. पुत्रदात्री लता। २. बड़ी सनपुष्पी।

श्वेतप्रदर—संज्ञा पुं० [सं०] वह प्रदर रोग जिसमें स्त्रियों को सफेद रंग की धातु गिरती है।

श्वेतप्रस्तर—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'श्वेतधातु' (को०)।

श्वेतबर्बर—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का चंदन।

श्वेतबिंदुका—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतबिन्दुका] १. वह कन्या जिसके शरीर पर सफेद धब्बे या दाग हों। (यह विवाह के अयोग्य मानी जाती है)। २. कोई भी श्वेत बूँदोंवाली वस्तु।

श्वेतबुह्ना—संज्ञा स्त्री० [सं०] बनतिक्ता।

श्वेतभंडा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतभण्डा] सफेद फूलोंवाली अपराजिता (को०)।

श्वेतभानु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

श्वेतभिक्षु—संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत वस्त्रधारी साधु। धूर्त (को०)।

श्वेतभुजंग—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतभुजङ्ग] ब्रह्मा का एक अवतार।

श्वेतमंडल—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतमण्डल] एक प्रकार का साँप। (सुश्रुत)।

श्वेतमंदारक—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतमंदारक] सफेद फूलोंवाला अर्क वृक्ष। सुफेद मदार (को०)।

श्वेतमध्य—संज्ञा पुं० [सं०] मुस्तक। मोथा।

श्वेतमयूख—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

श्वेतमरिच—संज्ञा पुं० [सं०] १. शोभांजन बीज। सहिजन के बीज। २. सफेद मिर्च।

श्वेतमाल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मेघ। बादल। २. धूम्र। धुआँ।

श्वेतमूला—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की गदहपूरना। पुनर्नवा का एक भेद।

श्वेतयावरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] (श्वेत बहनेवाली) एक नदी जिसका नाम ऋग्वेद में आया है।

श्वेतरंजन—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतरञ्जन] सीसा धातु।

श्वेतरक्त^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] गुलाबी रंग।

श्वेतरक्त^{२}—वि० गुलाबी रंगवाला (को०)।

श्वेतरथ—संज्ञा पुं० [सं०] शुक्र ग्रह।

श्वेतरस—संज्ञा पुं० [सं०] तक्र या मट्ठा जिसमें जल का अनुपात समान हो (को०)।

श्वेतराजी—संज्ञा स्त्री० [सं०] चिचिंडा (जिसकी तरकारी होती है)।

श्वेतरावक—संज्ञा पुं० [सं०] निर्गुंडी।

श्वेतरोचिस्—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

श्वेतरोहित—संज्ञा पुं० [सं०] १. गरुड़ का एक नाम। २. एक प्रकार का पौधा जिसका फूल सफेद और फल लाल होता है।

श्वेतलोध्र—संज्ञा पुं० [सं०] पठानी लोध। पट्टिका लोध।

श्वेतवक्त्र, श्वेतवक्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद के एक अनुचर का नाम।

श्वेतवचा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. सफेद वच। २. अतिविषा। अतीस।

श्वेतवल्कल—संज्ञा पुं० [सं०] १. गूलर। उदुंबर वृक्ष। २. सफेद रंग की छाल।

श्वेतवह—संज्ञा पुं० [सं०] [संज्ञा स्त्री० श्वेतोही] इंद्र।

श्वेतवाजी—संज्ञा पुं० [श्वेतवाजिन्] १. सफेद घोड़ा। २. चंद्रमा। ३. अर्जुन। ४. कपूर (को०)।

श्वेतवाराह—संज्ञा पुं० [सं०] १. वाराह भगवान् की एक मूर्ति। २. एक कल्प का नाम जो ब्रह्मा के मास का प्रथम दिन माना गया है। ३. एक तीर्थ।

श्वेतवासा—संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत वस्त्रधारी सन्यासी। २. वह जिसने श्वेत परिधान धारण किया हो (को०)।

श्वेतवाहु—संज्ञा पुं० [सं०] १. (सफेद घोड़ेवाले) इंद्र। २. अर्जुन।

श्वेतवाहन—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा । २. अर्जुन का एक नाम । ३. समुद्र का मकर । ४. शिव का एक रूप या मूर्ति । ५. कपूर (को०) । ६. हरिवंश के अनुसार एक राजा जो विदूरथ का पौत्र था (को०) ।

श्वेतवाही—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतवाहिन्] अर्जुन [को०] ।

श्वेतवृक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] वरुण नाम का वृक्ष [को०] ।

श्वेतशिशपा—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्वेत वर्ण का शिशपा वृक्ष [को०] ।

श्वेत शिग्रु—संज्ञा पुं० [सं०] श्वेत पुष्पवाला सहिजन वृक्ष [को०] ।

श्वेतशुग, श्वेतशृग—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतशुङ्ग, श्वेतशृङ्ग] जौ । यव ।

श्वेतसर्प—संज्ञा पुं० [सं०] १. वरुण वृक्ष । २. सफेद साँप ।

श्वेतसर्षप—संज्ञा स्त्री० [सं०] पाली सरसों ।

श्वेतसार—संज्ञा पुं० [सं०] खैर । कत्था । खदिर ।

श्वेतसिंही—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का शाक ।

श्वेतसिद्ध—संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद के एक अनुचर का नाम ।

श्वेतसुरसा—संज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद फूल की निर्गुंडी ।

श्वेतस्पदा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतस्पन्दा] अपराजिता [को०] ।

श्वेतहनु—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप । (सुश्रुत) ।

श्वेतहय—संज्ञा पुं० [सं०] १. इंद्र का घोड़ा । उच्चैःश्रवा । २. अर्जुन । ३. इंद्र (को०) । ४. श्वेत वर्ण का अश्व ।

श्वेतहस्ती—संज्ञा पुं० [सं०] १. ऐरावत । २. श्वेत वर्ण का हाथी ।

श्वेतांग[1]—वि० [सं० श्वेताङ्ग] १. श्वेत अंगवाला । गोरा । गौरांग । २. श्वेत वर्णवाला ।

श्वेतांग[2]—संज्ञा पुं० यूरोप का निवासी । यूरोपियन । अंग्रेज । उ०—(क) भारत भर आज श्वेतांग होने की अभिलाषा से ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २५६ । (ख) जो आज श्वेतांग लोग करते हैं ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २५८ ।

श्वेतांबर—संज्ञा पुं० [सं० श्वेताम्बर] १. सफेद वस्त्र धारण करनेवाला । २. जैनों के दो प्रधान संप्रदायों में से एक ।

विशेष—ये लोग चंवरी रखते, बाल उखड़वाते, श्वेत वस्त्र पहनते, क्षमायुक्त रहते और भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह करते हैं । ये स्त्रियों को भी अपवर्ग मानते हैं ।

३. शिव का एक रूप ।

श्वेतांशु—संज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

श्वेता[1]—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. अग्नि की सात जिह्वाओं में से एक । २. कौड़ी । ३. भोजपत्र का पेड़ । ४. श्वेत पाटला । काष्ठ पाटला । ५. श्वेत या शंख नामक हस्ती की माता । शंखिनी । ६. अतीस । अतिविषा । ७. अपराजिता लता । ८. सफेद बन भंटा । ९. श्वेत कंटकारी । भटकटैया । १०. पाषाणभेद । पखानभेद । ११. वंशलोचन । १२. श्वेत पुनर्नवा । सफेद गदहपूरना । १३. शिलावाक । १४. फिटकरी । १५. चीनी । शक्कर । १६. मिस्री । १७. सफेद बच । १८. क्षुरपत्री । पर्वमूला ।

विशेष—यह तृण बरसात में उगता है और जाड़े में नष्ट हो जाता है । यह एक या डेढ़ बालिश्त ऊँचा और छतनारा होता है । पत्तियाँ छोटी, फूल नीले या बैंगनी रंग के और बीज छोटे छोटे दानों की तरह के होते हैं । क्षुरपत्री मधुर, शीतल और स्त्री का दूध बढ़ानेवाली कही गई है ।

१९. स्कंद की अनुचरी एक मातृका । २०. कश्यप की क्रोधवशा नाम्नी पत्नी से उत्पन्न एक कन्या जो दिग्गजों की माता है ।

श्वेता[2]—वि० श्वेत वर्ण की । गोरी । गौरवर्णा ।

श्वेताक्ष—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की सोमलता ।

श्वेताद्रि—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्वेत नाम का पर्वत । २. कैलाश पर्वत [को०] ।

श्वेताभ—वि० [सं०] आभायुक्त । श्वेतकांतिवाला ।

श्वेताम्लि—संज्ञा स्त्री० [सं०] इमली ।

श्वेतारण्य—संज्ञा पुं० [सं०] कावेरी नदी के किनारे का एक वन जो तीर्थ माना गया है ।

श्वेतार्क—संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा । २. श्वेत मंदार का वृक्ष ।

श्वेतार्चि—संज्ञा पुं० [सं० श्वेतार्चिस्] चंद्रमा ।

श्वेतालु—संज्ञा पुं० [सं०] महिष कंद । भैंसाकंद ।

श्वेतावार—संज्ञा पुं० [सं०] सितावर शाक ।

श्वेताश्व—संज्ञा पुं० [सं०] अर्जुन का एक नाम ।

श्वेताश्वतर—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. कृष्ण यजुर्वेद की एक शाखा । २. उपनिषद् विशेष ।

विशेष—कृष्ण यजुर्वेद की यह उपनिषद् छह अध्यायों की है । इसमें वेदांत के प्रायः सब सिद्धांतों के मूल पाए जाते है । भगवद्गीता के बहुत से प्रसंग इससे लिए हुए जान पड़ते हैं । इसकी संस्कृत बड़ी ही सरल और स्पष्ट है । वेदांत के प्रसंगों के अतिरिक्त इसमें योग और सांख्य के सिद्धांतों के मूल भी मिलते है । वेदांत, सांख्य और योग तीनों शास्त्रों के कर्ताओं ने मानो इसी के मूल वाक्यों को लेकर ब्रह्म के स्वरूप तथा पुरुष-प्रकृति भेद आदि का विस्तार किया है ।

श्वेताह्वा—संज्ञा स्त्री० [सं०] श्वेत पाटला ।

श्वेतिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] सौंफ ।

श्वेतित—वि० [सं०] श्वेत या सफेद बनाया हुआ या किया हुआ [को०] ।

श्वेतिमा—संज्ञा स्त्री० [सं० श्वेतिमन्] शुक्लत्व । शुभ्रता । धवलिमा । सफेदी [को०] ।

श्वेतेक्षु—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की ईख । सफेद ईख [को०] ।

श्वेतौदर—संज्ञा पुं० [सं०] १. कुबेर । २. एक प्रकार का साँप । (सुश्रुत) । ३. मार्कंडेय पुराण के अनुसार एक पर्वत ।

श्वेतौही—संज्ञा स्त्री० [सं०] इंद्राणी । शची ।

श्वेत्र—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद कोढ़ ।

श्वैत्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. श्वेतता । शुभ्रता । २. सफेद कुष्ठ [को०] ।

श्वैत्र, श्वैत्र्य—संज्ञा पुं० [सं०] सफेद कोढ़ [को०] ।

ष—संस्कृत या हिंदी वर्णमाला के व्यंजन वर्णों में ३१ वाँ वर्ण या अक्षर। इसका उच्चारणस्थान मूर्धा है। इससे यह मूर्धन्य वर्णों में कहा गया है। इसका प्रयोग केवल संस्कृत के शब्दों में होता है और उच्चारण दो प्रकार से होता है। कुछ लोग 'श' के समान इसका उच्चारण करते हैं और कुछ लोग 'ख' के समान। इसी से हिंदी की पुरानी लिखावट में इस अक्षर का व्यवहार कवर्गीय 'ख' के स्थान पर होता था। जैसे,—देषि (देखि), लषन (लखन) इत्यादि।

अनेक धातुएँ जो दंत्य 'स' से आरंभ हैं वे संस्कृत धातुपाठ में मूर्धन्य 'ष' से लिखी गई हैं इस अक्षर का परिवर्तन अधिकतर 'श', 'स' और 'ख' के रूप में होता है। एक तरह से इसका शुद्ध उच्चारण, 'ऋ' की तरह, लुप्तप्राय है। व्रज और अवधी में यह 'स' लिखा जाता है।

षंजन—संज्ञा पुं० [सं० षञ्जन] १. आलिंगन। २. मिलना। समागम।

षंड—संज्ञा पुं० [सं० षण्ड] १. राशि। समूह। २. झाड़ी। ३. प्रजनन के लिये पालित वृष। छुट्टा साँड़। ४. भेड़ बकरों का झुंड (को०)। ५. हीजड़ा। नपुंसक। नामर्द।

विशेष—कुछ विद्वान् इनके १४ तथा कुछ २० प्रकार मानते हैं।

६. कमलों का समूह। ७. शिव का एक नाम। ८. लिंग। चिह्न। लक्षण (को०)। ९. धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

षंडक—संज्ञा पुं० [सं० षण्डक] हीजड़ा। नपुंसक [को०]।

षंडत्व—संज्ञा पुं० [सं० षण्डत्व] नामर्दी। हीजड़ापन। पुंस्त्व का अभाव।

षंडयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं० षण्डयोनि] वह स्त्री जिसे मासिक धर्म न हो और जिसके स्तन न हो, अर्थात् जो पुरुषसमागम के अयोग्य हो।

षंडव⑤—संज्ञा पुं० [सं० खाण्डव] दे० 'खांडव'। उ०—रषि षंडव पंडव लष्षि ग्रहं।—पृ० रा०, १२। ४७।

षंडवेश—संज्ञा पुं० [सं० षण्डवेस] दे० 'षंडवेश'।

षंडामर्क—संज्ञा पुं० [सं० षण्डामर्क] शुक्राचार्य के पुत्र का नाम। उ०—कविसुत असुर वंश गुरु आमा। षंडामर्क रह्यो अस नामा।—रघुराज (शब्द०)।

षंडाली—संज्ञा स्त्री० [सं० षण्डाली] १. तेल नापने की एक छोटी घरिया जिसमें एक छटाँक वस्तु आ सकती हो। २. दुश्चरित्रा स्त्री। व्यभिचारिणी। ३. ताल। तलैया।

षडी—संज्ञा स्त्री० [सं० षण्ड] वह स्त्री जिसे मासिक धर्म न होता हो, स्तन छोटे हों, और जो पुरुषसमागम के अयोग्य हो।

षंढ—संज्ञा पुं० [सं० षण्ढक] दे० 'षंड'।

षंढक—संज्ञा पुं० [सं० षण्ढक] दे० 'षंडक' [को०]।

यौ०—षंढकतिल = दे० 'षंढतिल'।

षंढतिल—संज्ञा पुं० [सं० षण्ढतिल] १. बाँझपन का तिल। २. (लाक्ष०) निकम्मा आदमी [को०]।

षंढवेश—संज्ञा पुं० [सं० षण्ढवेश] १. वह जो हिजड़े का वेश धारण करे। २. जनखा। हींजड़े के वेश में रहनेवाला।

षंढा—संज्ञा स्त्री० [सं० षण्ढा] वह स्त्री जिसकी चेष्टा पुरुषों की सी हो।

षांढता—संज्ञा स्त्री० [सं० षाण्ढता] दे० 'षंडा' [को०]।

षंढीयोनि—संज्ञा स्त्री० [सं० षण्ढीयोनि] दे० 'षंडयोनि' [को०]।

ष^1—संज्ञा पुं० १. विद्वान् पुरुष। आचार्य। २. कुच। चूचुक। ३. नाश। ४. शेष। बाकी। ५. प्राप्त ज्ञान का क्षय। ६. मुक्ति। मोक्ष। ७. स्वर्ग। ८. अंत। समाप्ति। अवधि। ९. गर्भ। १०. धैर्य। सहिष्णुता। ११. निद्रा। नींद (को०)। १२. कच। केश। बाल (को०)। १३. गर्भविमोचन (को०)।

ष^2—वि० १. बहुत अच्छा। उत्तम। श्रेष्ठ। २. विद्वान् (को०)।

षट^1—वि० [सं०] गिनती में ६। छह्।

षट्^{2}—संज्ञा पुं० १. छह् की संख्या। २. षाड़व जाति का एक राग।

विशेष—यह राग दीपक राग का पुत्र माना गया है। इसके गाने का समय प्रातः १ दंड से ५ दंड तक है। इसमें सब कोमल स्वर लगते हैं। कोई कोई इसे आसावरी, ललित, टोड़ी और भैरवी आदि रागिनियों से उत्पन्न संकर राग मानते हैं।

षटक⑤—संज्ञा पुं० [सं० षट्क] दे० 'षट्कर्म'। उ०—तौ पंडित आये बेद भुलाए षटक रमाए अपनाए।—सुंदर० ग्रं०, भा० १, पृ० २३७।

षटतुकी⑤—संज्ञा स्त्री० [सं० षट्+हिं० तुक+ई (प्रत्य०)] छप्पय छंद। उ०—किए कवित षटतुकी बहुरि मनहर अरु इंदव। कुंडलिया पुनि साषि भक्ति विमुखनि को निंदव।—सुंदर० ग्रं० (जी०), भा० १, पृ० १४४।

षटबदन⑤—संज्ञा पुं० [सं० षट्+वदन] (छह् मुँहवाले) कार्तिकेय। उ०—तब जनमेउ षटबदन कुमारा। तारकु असुर समर जेहिं मारा।—मानस, १। १०३।

षट्क^1—संज्ञा पुं० [सं०] १. छह। ६ की संख्या। २. छह वस्तुओं का समूह।

विशेष—इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान के समूह को प्रायः षट्क कहते हैं।

३. दे० 'षड्विकार'।

षट्क^2—वि० छह् संबंधी। छह का। छहवाला।

षट्कर्ण^2—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की वीणा या सितार जिसमें छह कान होते हैं।

षट्कर्ण^1—वि० १. छह कानों से सुना गया। वक्ता या श्रोता के अतिरिक्त किसी तीसरे आदमी से भी सुना गया। २. जिसे छह् कान हों [को०]।

षट्कर्म—संज्ञा पुं० [सं० षट्कर्मन्] १. ब्राह्मणों के छह् कर्म—(१) यजन, (२) याजन, (३) अध्ययन, (४) अध्यापन,

(५) दान देना और (६) दान लेना। २. स्मृतियों के अनुसार छह् काम जिनके द्वारा आपत्काल में ब्राह्मण अपनी जीविका कर सकता है (१) उंछ वृत्ति (कटे हुए खेतों में दाने बिनना), (२) दान लेना, (३) याचना करना, (४) कृषि, (५) वाणिज्य और (६) गोरक्षा (अथवा किसी किसी के मत से सूद पर रुपया देना)। ३. तांत्रिकों के बध आदि छह कर्म—(१) शांति, (२) वशीकरण, (३) स्तंभन, (४) विद्वेष, (५) उच्चाटन तथा (६) मारण। ७. योगाभ्यास संबंधी छह् क्रियाएँ (१) धौती, (२) वस्ती, (३) नेती, (४) नौलिकी या नौलिक, (५) त्राटक तथा (६) कपालभाती (को०)।

षट्कर्मा—संज्ञा पुं० [सं०] १. यजन याजन आदि नियत कर्मों को करनेवाला ब्राह्मण। कर्मनिष्ठ ब्राह्मण। २. तांत्रिक।

षट्कल—वि० [सं०] (मुहूर्त आदि) जो छह् कलाओं तक रहे [को०]।

षट्कला—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में ब्रह्मताल के चार भेदों में से एक भेद।

षट्कसंपत्ति—संज्ञा पुं० [सं० षट्कसम्पत्ति] छह् प्रकार के कर्म—(१) शम, (२) दम (३) उपरति, (४) तितिक्षा, (५) श्रद्धा और (६) समाधान।

षट्कुलीय—वि० [सं०] छह् कुलोंवाला [को०]।

षट्कूटा—संज्ञा स्त्री० [सं०] भैरवी का एक रूप [को०]।

षट्कोण[१]—वि० [सं०] छह् कोनोंवाला। छह्कोना। छह्पहला।

षट्कोण—संज्ञा पुं० ज्योतिष में लग्न से छठा घर जो रिपुक स्थान कहा जाता है। २. एक प्रकार का यंत्र जिसमें छह् कोण की आकृति रहती है। ३. इंद्र का वज्र। ४. हीरा [को०]।

षट्कोप—संज्ञा पुं० [सं०] एक पुराने आचार्य का नाम।

षट्खंड—वि० [सं० षट्खण्ड] जिसमें ६ खंड हों। छह् खंडों या विभागोंवाला [को०]।

षट्चक्र[१]—संज्ञा पुं० [सं०] हठयोग में माने हुए कुंडलिनी के ऊपर पड़नेवाले छह् चक्र जो मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनहत, विशुद्ध और आज्ञाचक्र कहे गए हैं।

षट्चक्र[२]—संज्ञा पुं० [सं० षट् + चक्र (= चक्कर या घेरा)] किसी के विरुद्ध आयोजन। भीतरी चाल। षड्यंत्र।

क्रि० प्र०—चलाना।—खड़ा करना।—रचना।

षट्चरण—संज्ञा पुं० [सं०] १. भ्रमर। भौंरा। २. जूँ। यूका (को०)। ३. टिड्डा (को०)।

षट्चिति, षट्चितिक—वि० [सं०] छह् स्तरों या तहोंवाला [को०]।

षट्तंत्री—संज्ञा स्त्री० [सं० षट्तन्त्री] छह् दर्शनों का एक नाम षड्दर्शन [को०]।

षट्तक्रतैल—संज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक का एक तेल जिसमें तेल से छह् गुना अधिक तक्र (मट्ठा) मिलाया जाता है।

षट्ताल—संज्ञा पुं० [सं०] १. मृदंग का एक ताल जो आठ मात्राओं का होता है।

विशेष—इसमें पहले २ आघात, १ खाली, फिर ४ आघात और अंत में एक खाली होता है।

२. एक प्रकार का ख्याल जो एकताला ताल पर बजाया जाता है।

षट्तिला—संज्ञा स्त्री० [सं०] माघ महीने के कृष्ण पक्ष की एकादशी का नाम। इसमें तिल के व्यवहार और दान का बहुत फल कहा गया है। उ०—यहिकर नाम षट्तिला अहई। करि व्रत नेम निकर अघ दहई।—विश्रामसागर (शब्द०)।

षट्तिली—संज्ञा पुं० [सं० षट्तिलिन्] तिल को ६ प्रकार से व्यवहार करनेवाला व्यक्ति।

विशेष—इसके व्यवहार के ढंग ये है—(१) तिलोद्वर्तन, (२) तिलस्नान, (३) तिलहोम, (४) तिल का दान, (५) तिलभक्षण और (६) तिलवपन।

षट्त्रिंश—वि० [सं०] छत्तीसवाँ [को०]।

षट्त्रिंशत्—संज्ञा पुं० [सं०] छत्तीस की संख्या [को०]।

षट्पंचाशत्—संज्ञा पुं० [सं० षट्पञ्चाशत्] छप्पन की संख्या [को०]।

षट्पत्र—वि० [सं०] छह् पत्तों या दलों से युक्त। जिसमें छह् पत्ते हों [को०]।

षट्पद[१]—वि० [सं०] [वि० स्त्री० षट्पदी] छह् पैरवाला।

षट्पद[२]—संज्ञा पुं० १. भ्रमर। भौंरा। २. किलनी। ३. छह् पदोंवाला छंद। गीति छंद (को०)।

षट्पदज्य—संज्ञा पुं० [सं०] कामदेव का धनुष जो भ्रमरश्रेणी का बना माना जाता है [को०]।

षट्पदप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] १. कमल। २. नागकेशर का वृक्ष।

षट्पदा—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राकृत छंद [को०]।

षट्पदातिथि—संज्ञा पुं० [सं०] १. (जहाँ भ्रमर अतिथि रूप में हो अर्थात्) आम का वृक्ष। २. चंपक। चंपा।

षट्पदानंदवर्धन—संज्ञा पुं० [सं० षट्पदानन्दवर्धन] (भ्रमर के आनंद का बढ़ानेवाला) किंकिरात का वृक्ष।

षट्पदिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'षट्पदा' [को०]।

षट्पदी[१]—वि० स्त्री० [सं०] छह् पैरवाली।

षट्पदी[२]—संज्ञा स्त्री० १. भ्रमरी। भौंरी। २. एक छंद जिसमें छह् पद या चरण होते हैं। छप्पय। ३. किलनी या जूँ (को०)। ४. भूख प्यास, शोक अव्यवस्थित चेतना, वार्धक्य तथा मृत्यु नाम की छह् स्थितियाँ। ५. काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मान नाम की छह् भावनाएँ (को०)।

षट्पाद—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'षट्पद' [को०]।

षट्पितापुत्रक—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में ताल का एक भेद जिसमें १२ मात्राएँ होती हैं। एक प्लुत, एक लघु, दो गुरु, एक लघु, एक प्लुत, यह इसका प्रमाण है।

षट्प्रज्ञ—संज्ञा पुं० [सं०] १. धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, लोकार्थ और तत्वार्थ का ज्ञाता। २. उच्छृंखल। ३. कामुक। ४. अच्छे स्वभाववाला पड़ोसी (को०)।

षट्मुख—संज्ञा पुं॰ [सं॰] कार्त्तिकेय। उ॰—गिरिवेध षट्मुख जीति तारकनंद को जब ज्यों हस्यो।—केशव (शब्द॰)।

षट्रस—संज्ञा पुं॰ [सं॰] छह प्रकार के रस या स्वाद। विशेष दे॰ 'षड्रस।

यौ॰—षट्रस भोजन।

षट्राग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षट्+राग] १. संगीत के ६ राग—भैरव, मलार, श्रीराग, हिंडोल मालकोस और दीपक। २. बखेड़ा। जंजाल। आडंबर। जैसे—इसमें बड़ा षट्राग है, हमसे न होगा। ३. झंझट।

षट्रिपु—संज्ञा पुं॰ [सं॰] दे॰ 'षड्रिपु'।

षट्शास्त्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] हिंदुओं के ६ दर्शन।

षट्शास्त्री—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षटशास्त्रिन्] छह दर्शनों का जाननेवाला।

षट्वांग—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षट्वाङ्ग] खट्वांग नामक राजर्षि जिन्हें केवल दो घड़ी की साधना से मुक्ति प्राप्त हुई थी। उ॰—एक षट्वांग राजऋषि भयऊ। असुर विजय हित सो दिवि गयऊ।—रघुराज (शब्द॰)। २. शिव का एक शस्त्र। दे॰ 'खट्वांग।'

षडंग^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षडङ्ग] १. वेद के छह अंग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष। २. शरीर के छह अवयव—दो पैर, दो हाथ, सिर और धड़। तथा कुछ लोगों के मत से हृदय, शिर, शिखा, नेत्र, कवच तथा अस्त्र।

३. गाय से प्राप्त होनेवाली पवित्र छह वस्तुएँ—गोमूत्र, गोबर, गोदुग्ध, गोघृत, गोदधि, गोरोचन (को॰)। ४. छह वस्तुओं का समाहार (को॰)। ५. छठा भाग। पष्ठांश (को॰)। ६. छोटा गोखरू (को॰)।

षडंग—वि॰ जिसके छह अंग या अवयव हों।

षडंगजित्—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षडङ्गजित्] सब अंगों को वश में करनेवाले विष्णु।

षडंगधूप—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षडङ्गधूप] एक प्रकार का धूप जिसमें ६ वस्तुएँ मिली रहती हैं।

षडंगिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ षडङ्गिनी] अपने सभी अंगों से पूर्ण सेना [को॰]।

षडंघ्रि—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षडङ्घ्रि] भ्रमर। भौंरा।

षडक्षरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] वैष्णवों के रामानुज संप्रदायवालों का मुख्य मंत्र।

षडक्षीण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मछली जिसे छह आँखें कही जाती हैं।

षडग्नि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. कर्मकांड के अनुसार छह प्रकार की अग्नि।

विशेष—इनके नाम इस प्रकार कहे गए हैं—गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि, सभ्याग्नि, आवसथ्य और औपासनाग्नि। इनमें से प्रथम तीन प्रधान हैं। कुछ लोगों ने अग्नि के ये ६ भेद किए हैं—धूमाग्नि, मंदाग्नि, दीपाग्नि, मध्यमाग्नि, खराग्नि और भयाग्नि।

षडधिक—वि॰ [सं॰] छह से अधिक जैसे, षडधिक दश = सोलह [को॰]।

षडभिज्ञ—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बुद्ध या बोधिसत्व।

षडष्टक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] ज्योतिष के अनुसार एक प्रकार का योग [को॰]।

षडशीत—वि॰ [सं॰] छियासीवाँ [को॰]।

षडशीति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] १. छियासी की संख्या। २. सूर्य का एक राशि से दूसरे राशि पर जाने का चार मार्ग [को॰]।

षडह—संज्ञा पुं॰ [सं॰] छह दिनों का समय [को॰]।

षडात्मा—वि॰ [सं॰ षडात्मन्] अग्नि जो छह स्वरूपोंवाला है [को॰]।

षडानन^{1}—वि॰ [सं॰] जिसे छह मुँह हों।

षडानन^{2}—संज्ञा पुं॰ १. कार्तिकेय। २. संगीत में स्वरसाधन की एक प्रणाली जो इस प्रकार होती है—आरोही सा रे ग म प ध रे ग म प ध नि, ग म प ध नि सा। अवरोही—सा नि ध प म ग नि ध प म ग रे, ध म प ग रे सा।

षडाम्नाय—संज्ञा पुं॰ [सं॰] छह तंत्र [को॰]।

षडायतन^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] छह इंद्रियों के छह स्थान [को॰]।

षडायतन^{2}—वि॰ १. जो षट् आयतन से युक्त हो। २. विज्ञान, भूमि, जल, आकाश, अग्नि और वायु के आयतनवाला [को॰]।

षडायतन भेदक—संज्ञा पुं॰ [सं॰] बुद्ध [को॰]।

षडार—वि॰ [सं॰] जिसमें छह किनारे या कोण हों [को॰]।

षडूषण—संज्ञा पुं॰ [सं॰] वैद्यक में ये छह गरम मसाले—पीपल, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ और काली मिर्च।

षड्गया—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] गयादित्य, गयागज, गायत्री, गदाधर, गयासुर तथा गया क्षेत्र—जो मोक्षदायक हैं [को॰]।

षड्गव—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. छह बैलों की जोड़ी। २. वह जुआ जिसमें छह बैल जोते जायँ [को॰]।

षड्गवीय—वि॰ [सं॰] छह बैलों से खींचा जानेवाला [को॰]।

षड्गुण^{1}—संज्ञा पुं॰ [सं॰] १. छह गुणों का समूह। २. राजनीति की छह बातें—संधि, विग्रह, यान (चढ़ाई), आसन (विराम), द्वैधीभाव और संश्रय।

षड्गुण^{2}—वि॰ १. छगुना। २. जो छह गुणों से युक्त हो [को॰]।

षड्ग्रंथ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ षड्ग्रन्थ] १. मीठी बच। विशेष दे॰ 'बच'। २. करंज का एक भेद [को॰]।

षड्ग्रंथा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ षड्ग्रन्था] १. इरसा की जड़ जो काश्मीर और काबुल से आती है। २. बच। ३. श्वेत बच (को॰)। ४. शटी (को॰)। ५ महाकरंज (को॰)।

षड्ग्रंथि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ षड्ग्रन्थि] दे॰ 'षड्ग्रंथिका'।

षड्ग्रंथिका—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ षड्ग्रन्थिका] १. पीपलामूल। पिपरामूल। २. शटी। शठी।

षड्ज—संज्ञा पुं॰ [सं॰] संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर।

विशेष—यह गदहे के स्वर से मिलता जुलता माना गया है। इसके उच्चारणस्थान छह कहे गए हैं—नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत; इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा। मूल

स्थान दंत और अंत स्थान कंठ है। देवता इसके अग्नि हैं। वर्ण रक्त, आकृति ब्रह्मा की, ऋतु हिम, वार रविवार, छंद अनुष्टुप् और संतति इसकी भैरव राग है। कुछ के मतानुसार यह प्रथम स्वर है और मोर के स्वर से मिलता जुलता है।

षड्दरशनी (पु)—संज्ञा पुं० [सं० षड्दर्शन + हिं० ई (प्रत्य०)] दर्शनों का जाननेवाला। ज्ञानी। उ०—षड्दरशनी अभाव सर्वथा घट करि मानै।—(शब्द०)।

षड्दर्शन—संज्ञा पुं० [सं०] न्याय, मीमांसा आदि हिंदुओं के छह् दर्शन।

षड्धा—अव्य० [सं०] छह् प्रकार का। छह् प्रकार से [को०]।

षड्दुर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] छह् प्रकार के दुर्ग जिनके नाम धन्व दुर्ग, मही दुर्ग, गिरि दुर्ग, मनुष्य दुर्ग, मृद् दुर्ग और बन दुर्ग हैं [को०]।

षड्बिंदु—संज्ञा पुं० [सं० षड्बिन्दु] विष्णु। दे० 'षड्विंदु'।

षड्भाग—संज्ञा पुं० [सं०] छठा हिस्सा। छठा भाग या अंश [को०]।

षड्भुज[1]—वि० [सं०] १. छह् भुजाओंवाला। २. छह् पहल का।

षड्भुज[2]—संज्ञा पुं० १. चैतन्यदेव का एक नाम। षड्भुज क्षेत्र [को०]।

षड्भुजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. खरबूजा। २. दुर्गा का एक नाम (को०)।

षड्यंत्र—संज्ञा पुं० [सं० षड् (= छह्) + यन्त्र (कौशल)] १. किसी मनुष्य के विरुद्ध गुप्त रीति से की गई काररवाई। भीतरी चाल। २. जाल। कपटपूर्ण आयोजन।

क्रि० प्र०—करना।—चलाना।—रचना।

षड्योग—संज्ञा पुं० [सं०] योगाभ्यास में प्रयुक्त छह् प्रकार के तरीके [को०]।

षड्योनि—संज्ञा पुं० [सं०] शिलाजीत। शिलाजतु।

विशेष—राँगा, सीसा, ताँबा, रूपा, सुवर्ण और लोहा इन छह धातुओं में से किसी एक की सुगंध शिलाजीत में अवश्य आती है, इसी से इसे षड्योनि कहते हैं। कारण यह है कि ऊपर कही हुई धातुओं में से जिस किसी एक धातु का अंश जिसमें होगा उसी पर्वत से शिलाजीत की उत्पत्ति होगी।

षड्रस—संज्ञा पुं० [सं०] छह् प्रकार के रस या स्वाद—मधुर. लवण, तिक्त, कटु, कषाय और अम्ल अर्थात् मीठा, नमकीन, तीता, कड़ुआ, कसैला और खट्टा।

यौ०—षड्रस भोजन = अनेक प्रकार के व्यंजन या खाद्य पदार्थ।

षड्रसायन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लसीका'।

षड्राग—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'पट्राग'।

षड्रात्र—संज्ञा पुं० [सं०] छह् रात का समय [को०]।

षड्रिपु—संज्ञा पुं० [सं०] काम, क्रोध आदि मनुष्य के छह् विकार।

षड्रेखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] खरबूजा।

षड्वक्त्र—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय। षडानन।

षड्वदन—संज्ञा पुं० [सं०] षडानन। कार्तिकेय।

षड्वर्ग—संज्ञा पुं० [सं०] छह वस्तुओं का समूह या वर्ग। १. ज्योतिष में क्षेत्र, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिशांश जो षड्वर्ग कहलाते हैं। २. काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर का समूह।

षड्विंदु—संज्ञा पुं० [सं० षड्विन्दु] १. विष्णु। २. गुबरीले की जाति का एक कीड़ा जिसकी पीठ पर छह् गोल बिंदियाँ होती हैं। इसे पूरब में 'छबुँदवा' कहते हैं।

षड्विंदुतैल—संज्ञा पुं० [सं० षड्विन्दुतैल] वैद्यक का एक तैल जिसकी छह् बूँद नास लेने से सिर का दर्द दूर होता है और आँख तथा दाँत को लाभ पहुँचता है।

विशेष—रेंड की जड़, तगर, सौंफ, सेंधा नमक, पुत्रजीवा, रास्ना, जलभँगरा, बायविडंग, मुलेठी, सोंठ, इन सबका चौगुना जल, भँगरे का रस और आठ गुना तेल इन सबको कड़ाही में मंद-मंद पकावे। जब रसादिक जलकर तेल मात्र रह जाय, तो छान ले।

षड्विंश—संज्ञा पुं० [सं०] १. सामवेद का एक ब्राह्मण।

षड्विंशति—संज्ञा स्त्री० [सं०] छब्बीस की संख्या [को०]।

षड्विकार—संज्ञा पुं० [सं०] १. प्राणी के छह विकार या परिणाम, अर्थात् (१) उत्पत्ति, (२) शरीरवृद्धि, (३), बालपन (४) प्रौढ़ता, (५) वृद्धता और (६) मृत्यु। २. काम, क्रोध आदि छह् विकार।

षड्विध—संज्ञा पुं० [सं०] छह् प्रकार का। छह्गुना [को०]।

षण्णवति—संज्ञा स्त्री० [सं०] छानबे की संख्या।

षण्णाडीचक्र—संज्ञा पुं० [सं०] ज्योतिष के अनुसार एक प्रकार का चक्र।

षण्णाभि, षण्णाभिक—वि० [सं०] चक्र या पहिया जिसमें छह् नाभि हों।

षण्मतस्थापक—संज्ञा पुं० [सं०] शंकराचार्य [को०]।

षण्मास—संज्ञा पुं० [सं०] छह् महीने की अवधि [को०]।

षण्मासनिचय—वि० [सं०] छह् मास की भोजनसामग्री इकट्ठा करनेवाला [को०]।

षण्मासिक—वि० [सं०] अर्धवार्षिक [को०]।

षण्मुख[1]—वि० [सं०] छह् मुँहवाला।

षण्मुख[2]—संज्ञा पुं० षडानन। कार्तिकेय।

षण्मुखा—संज्ञा स्त्री० [सं०] खरबूजा [को०]।

षन्मुख (पु)—संज्ञा पुं० [सं० षण्मुख] दे० 'षण्मुख'। उ०—जग जान षन्मुख जन्मु कर्मु प्रतापु पुरुसारथु महा।—मानस, १।१०३।

षप्र (पु)—संज्ञा पुं० [हिं० खप्पर] दे० 'खप्पर'। उ०—भरि रुद्धि षप्र जुगनीय ईस मुंडन भर वथ्थिय। पलचर रुधिचर पूरि सक्क करि कारज सथ्थिय।—पृ० रा०, २।२६३।

षर्षपी—संज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की छोटी चिड़िया।

षष्ट—वि० [सं०] साठवाँ।

षष्टि^{१}—वि० [सं०] जो गिनती में पचास से दस अधिक हो। साठ।

षष्टि^{२}—संज्ञा स्त्री० साठ की संख्या।

षष्टिक^{१}—वि० [सं०] १. साठवाला। २. जो साठ पर खरीदा जाय।

षष्टिक^{२}—संज्ञा पुं० एक प्रकार का धान जो बहुत जल्दी तैयार होता हैं। साठी धान।

षष्टिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] साठी धान [को०]।

षष्टिक्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह खेत जिसमें साठी धान बोया गया हो। २. वह खेत जो साठी धान बोने लायक हो। ३. साठी धान से परिपूर्ण खेत [को०]।

षष्टितम—वि० [सं०] साठवाँ। उनसठ के बाद का [को०]।

षष्टिभाग—संज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०]।

षष्टिमत—स्त्री० पुं० [सं०] दे० 'षष्ठिमत्त'।

षष्टियोजनी—संज्ञा स्त्री० [सं०] साठ योजन की यात्रा या दूरी [को०]।

षष्टिलता—संज्ञा स्त्री० [सं०] भ्रमरमारी नाम का पौधा। विशेष दे० 'भ्रमरमारी' [को०]।

षष्टिवर्षी—वि० [सं० षष्टिवर्षिन्] जो साठ वर्ष का हो।

षष्टिवासरज—संज्ञा पुं० [सं०] साठी धान। षष्टिक [को०]।

षष्टिशालि—संज्ञा पुं० [सं०] साठी धान।

षष्टिसंवत्सर—संज्ञा पुं० [सं०] साठ वर्ष की अवधि। साठ वर्ष का समय। प्रभव आदि साठ संवत्सर या वर्ष [को०]।

षष्टिहायन—संज्ञा पुं० [सं०] दे० षष्ठिहायन' [को०]।

षष्टिह्लद—संज्ञा पुं० [सं०] एक तीर्थ का नाम [को०]।

षष्ट्यंशक—संज्ञा पुं० [सं०] एक यंत्र जिससे जहाज पर नक्षत्रों की स्थिति देखकर यह स्थिर करते हैं कि जहाज पृथ्वी के किस भाग में है।

षष्ठ—वि० [सं०] [वि० स्त्री० षष्ठी] जिसका स्थान पाँचवें के उपरांत हो। छठा।

षष्ठक—वि० [सं०] छठा [को०]।

षष्ठकाल—संज्ञा पुं० [सं०] भोजन का छठा समय जो तीसरे दिन का सायंकाल है [को०]।

षष्ठकालोपवास—संज्ञा पुं० [सं०] एक व्रत। दे० 'षष्ठान्नकाल'।

षष्ठभक्त^{१}—वि० [सं०] छठे समय अर्थात् तीसरे दिन शाम को भोजन करनेवाला [को०]।

षष्ठभक्त^{२}—संज्ञा पुं० छठा भोजन। षष्ठकाल का आहार [को०]।

षष्ठम—वि० [सं०] छठा [को०]।

षष्ठमी—संज्ञा स्त्री० [सं०] षष्ठी तिथि [को०]।

षष्ठांश—संज्ञा पुं० [सं०] १. छठा हिस्सा। २. कर के रूप में दिया जानेवाला उपज का छठा भाग या हिस्सा। राजस्व के रूप में राजा को दिया जानेवाला कृषि का छठा अंश [को०]।

षष्ठांशवृत्ति—संज्ञा पुं० [सं०] नरेश। वह जिसकी वृत्ति राजस्व के रूप में प्राप्त कृषि का छठा भाग हो। राजा जो कर के रूप में मिले कृषि के छठे अंश द्वारा कार्यवृत्ति संपादित करता है [को०]।

षष्ठान्न—संज्ञा पुं० [सं०] वह भोजन जो तीन दिनों के बीच में केवल एकबार किया जाय। षष्ठान्नकाल नाम के व्रत की विधि के अनुसार तीसरे दिन सायंकाल किया जानेवाला आहार।

षष्ठान्नकाल—संज्ञा पुं० [सं०] एक व्रत जिसमें तीन दिन में केवल एक बार, विशेषतः सायकाल के समय, भोजन किया जाता है।

षष्ठान्नकालता—संज्ञा स्त्री० [सं०] षष्ठान्नकाल व्रत के अनुसार भोजन करना [को०]।

षष्ठान्नकालक—संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'षष्ठालुकालुक' [को०]।

षष्ठालुकालुक—संज्ञा पुं० [सं०] तीन दिन में केवल एक बार किया जानेवाला भोजन [को०]।

षष्ठिका—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक देवी। षष्ठी देवी। २. जातक के जन्म से छठे दिन का उत्सव जिसमें षष्ठी देवी की पूजा विधेय है [को०]।

षष्ठिमत्त—संज्ञा पुं० [सं०] हाथी। वह हाथी जो साठ वर्ष का हो।

विशेष—कहते हैं कि हाथी को साठ वर्ष की अवस्था होने पर उसके गंडस्थल से मदस्राव होता है।

षष्ठिहायन—संज्ञा पुं० १. हाथी। २. साठी धान।

षष्ठी—संज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी पक्ष का छठा दिन। शुक्ल या कृष्ण पक्ष की छठी तिथि। २. षोडश मातृकाओं में से एक। देवसेना। ३. कात्यायानी। दुर्गा। ४. (व्याकरण में) संबंध कारक। ५. बालक उत्पन्न होने से छठा दिन तथा उक्त दिन का उत्सव।

यौ०—षष्ठीजाय = जिसने छठा विवाह किया हो। षष्ठीतत्पुरुष = तत्पुरुष समास का एक भेद जिसमें पूर्वपद में षष्ठी विभक्ति होती है। षष्ठीपूजन = प्रसव के छठें दिन होनेवाली पूजा। षष्ठीव्रत = व्रतविशेष। षष्ठी समास = दे० 'षष्ठी तत्पुरुष।

षष्ठीप्रिय—संज्ञा पुं० [सं०] स्कंद। कार्तिकेय [को०]।

षष्ठ्य—संज्ञा पुं० [सं०] छठा हिस्सा। छठा अंश।

षहसानु^{१}—संज्ञा पुं० [सं०] १. मयूर। मोर। २. यज्ञ [को०]।

षहसानु^{२}—वि० सहिष्णुता से परिपूर्ण [को०]।

षांड—संज्ञा पुं० [सं० षाण्ड] शिव का एक नाम। षंड।

षांड्य—संज्ञा पुं० [सं० षाण्ड्य] हींजड़ापन। नपुंसकता।

षाट्कौशिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० षाट्कौशिकी] जो ६ कोश या तह में लिपटा हुआ हो [को०]।

षाट्पौरुषिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० षाट्पौरुषिकी] ६ पीढ़ियों से संबंध रखनेवाला। ६ पीढ़ी या पुश्त का [को०]।

षाड़व—संज्ञा पुं० [सं० षाडव] १. राग की एक जाति जिसमें केवल छह स्वर (स, रे, ग, म, प और ध) लगते हैं और निषाद वर्जित है। जैसे,—दीपक और मेघ। षाड़व दो प्रकार का होता है—

(१) शुद्ध षाड़व और (२) ब्राह्म षाड़व। २. मिठाई। ३. हलवाई का काम। ४. मनोराग। मनोविकार। ५. गाना। संगीत (को०)।

षाडविक—संज्ञा पुं० [सं०] मिठाई बनानेवाला। हलवाई [को०]।

षाड्गुण्य—संज्ञा पुं० [सं०] १. छह् उत्तम गुणों का समूह। २. नीति के छह् अंग। विशेष दे० 'षड्गुण'। ३. किसी वस्तु को छह् से गुणा करने से प्राप्त गुणनफल। ४, तत्व (को०)।

यौ०—षाड्गुण्य प्रयोग = राजनीति के ६ अंगों का प्रयोग करना षाड्गुण्यवेदी = नीति के छहो अंगों का जानकार। षाड्गुण्य युत, षाड्गुण्यसंयुत = ६ गुणों से युक्त जो नीति के छहों अंगों से युक्त हो।

षाड्रसिक—संज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसे छहों रसों का ज्ञान हो। २. वह जिसमें छहो रसों का स्वाद प्राप्त हो।

षाड्वर्गिक—वि० [सं०] पांचों ज्ञानेंद्रियों और मन से संबंध रखनेवाला [को०]।

षाण्मातुर—संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय (जिनका पालन छह् कृत्तिकाओं न किया था)।

षाण्मासिक¹—वि० [सं०] १. छह् महीने का। २. छह् महीने में होनेवाला। ३. छठे महीने में पड़नेवाला।

षाण्मासिक²—संज्ञा पुं० मृतक संबंधी एक कृत्य जो किसी की मृत्यु के छह् महीने पीछे किया जाता है। छमसो। छमासी।

षादतर—संज्ञा पुं० [सं०] संगीत में एक बनावटी सप्तक जो मंद से भी नीचा होता है। यह सप्तक केवल बजाने के काम में आता है।

षाष्टिक—वि० [सं०] साठ वर्ष की अवस्थावाला [को०]।

षाष्ठ—संज्ञा पुं० [सं०] छठा [को०]।

षाष्ठिक¹—वि० [सं०] छठे से संबंधित [को०]।

षाष्ठिक²—संज्ञा पुं० चार मास का एक व्रत जिसमें प्रति छठे दिन खाया जाता है [को०]।

षिंग—संज्ञा पुं० [सं० षिङ्ग] १. व्यभिचारी। स्त्रैण। कामुक। २. शूरवीर।

षिड्ग—संज्ञा पुं० [सं०] १. कामुक व्यक्ति। २. विट। ३. वेश्या रखनेवाला पुरुष [को०]।

षु, षू—संज्ञा पुं० [सं०] प्रसव [को०]।

षेध—संज्ञा पुं० [सं०] निषेध। वारण [को०]।

षोड़त्—संज्ञा पुं० [सं० षोडत्] छह् दाँत का बैल। जवान बैल।

षोड़श¹—वि० [सं० षोडश] [वि० स्त्री० षोडशी] सोलहवाँ।

षोड़श²—वि० [सं० षोडशन्] जो गिनती में दस से छह अधिक हो। सोलह।

षोड़श³—संज्ञा पुं० सोलह की संख्या।

षोडशक¹—वि० [सं०] जिसमें सोलह अंश हों [को०]।

षोडशक²—संज्ञा पुं० सोलह की संख्या।

षोडशकल—वि० [सं०] सोलह कलाओं या अंशों से युक्त।

षोड़शकला—संज्ञा स्त्री० [सं० षोडशकला] चंद्रमा के सोलह भाग जो क्रम से एक एक करके निकलते और क्षीण होते हैं। विशेष दे० 'कला'—२।

षोड़शगण—संज्ञा पुं० [सं० षोडशगण] पांच ज्ञानेंद्रिय, पाँच कर्मेंद्रिय, पांच भूत और एक मन इन सबका समूह।

षोडशदान—संज्ञा पुं० [सं०] सोलह प्रकार के दान जो ये हैं—(१) भूमि, (२) आसन; (३) पानी, (४) कपड़ा, (५) दीपक, (६) अन्न, (७) पान, (८) छत्र, (९) सुगंध, (१०) फूलमाला, (११) फल, (१२) सेज, (१३) खड़ाऊँ, (१४) गाय, (१५) सोना और (१६) चाँदी।

षोडशधूप—संज्ञा पुं० [सं०] 'तंत्रसार' के अनुसार एक धूप जो सोलह वस्तुओं के मिश्रण से तैयार होता है और देव पितृ कार्यों में इसका प्रयोग विहित है [को०]।

षोडशपक्षशायी—संज्ञा पुं० [सं० षोडशपक्षशायिन्] मेढक, जो सोलह पक्ष तक निश्चेष्ट रहता है [को०]।

षोड़शपूजन—संज्ञा पुं० [सं० षोडशपूजन] सोलहो सामग्री के साथ पूजन। विशेष दे० 'षोड़शोपचार'।

षोडशभुजा—संज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा देवी का एक रूप [को०]।

षोडशभेदित—वि० [सं०] जो सोलह भागों में विभक्त हो। सोलह भागों में बँटा हुआ [को०]।

षोड़शमातृका—संज्ञा स्त्री० [सं० षोडशमातृका] एक प्रकार की देवियाँ जो सोलह हैं—(१) गौरी, (२) पद्मा, (३) शची, (४) मेधा, (५) सावित्री, (६) विजया, (७) जया, (८) देवसेना, (९) स्वधा, (१०) स्वाहा, (११) शांति. (१२) पुष्टि, (१३) धृति, (१४) तुष्टि, (१६) आत्मदेवता।

षोडशविध—वि० [सं०] सोलह प्रकार का। सोलह भेद का [को०]।

षोडश श्रृंगार—संज्ञा पुं० [सं० षोडशश्रृङ्गार] पूर्ण श्रृंगार जिसके अंतर्गत सोलह बातें हैं। पूरा सिंगार। विशेष दे० 'श्रृंगार—२' तथा 'सोलह सिंगार'।

विशेष—प्राचीन संस्कृत साहित्य में षोडश श्रृंगार की गणना अज्ञात प्रतीत होती है। अनुमानतः यह गणना वल्लभदेव की सुभाषितावली (१५वीं शती या १२वीं शती) में प्रथम बार आती है। उनके अनुसार वे इस प्रकार हैं—

> आदौ मज्जनचीरहारतिलकं नेत्राञ्जनं कुंडले,
> नासामौक्तिककेशपाशरचना सत्कंचुकं नूपुरौ।
> सौगन्ध्यं करकङ्कणं चरणयो रागो रणन्मेखला,
> ताम्बूलं करदर्पणं चतुरता श्रृंगारका षोडश॥

अर्थात् (१) मज्जन, (२) चीर, (३) हार, (४) तिलक, (५) अंजन, (६) कुंडल, (७) नासामुक्ता, (८) केशविन्यास, (९) चोली (कंचुक), (१०) नूपुर, (११) अंगराग (सुगंध), (१२) कंकण, (१३) चरणराग, (१४) करधनी, (१५) तांबूल तथा (१६) करदर्पण (आरसी नामक अंगूठी)।

पुनः १६वीं शती में श्रीरूपगोस्वामी के उज्वलनीलमणि में श्रृंगार की यह सूची इस प्रकार गिनाई गई है—

स्नातानासाग्रजाग्रन्मणिरसितपटा सूत्रिणी बद्धवेणिः
सोत्तंसा चर्चिताङ्गी कुसुमितचिकुरा स्रग्विणी पद्महस्ता ।
ताम्बूलास्योरुबिन्दुस्तबकितचिबुका कज्जलाक्षी सुचित्रा
राधालक्तोज्वलांघ्रिः स्फुरति तिलकिनी षोडशाकल्पिनीयम् ॥

उक्त प्रमाण से श्रृंगारों की यह सूची बनती है—

अर्थात् (१) स्नान, (२) नासा मुक्ता, (३) असित पट, (४) कटि सूत्र (करधनी), (५) वेणीविन्यास, (६) कर्णावतंस, (७) अंगों का चर्चित करना, (८) पुष्पमाल, (९) हाथ में कमल, (१०) केश में फूल खोंसना, (११) तांबूल, (१२) चिबुक का कस्तूरी से चित्रण, (१३) काजल, (१४) शरीर पर पत्रावली, मकरीभंग आदि का चित्रण, (१५) अलक्तक और (१६) तिलक ।

यहाँ वल्लभदेव के तथा श्रीरूपगोस्वामी के काल तक को श्रृंगार सूची में विभिन्नता स्पष्ट है ।

हिंदी कवियों में जायसी के अनुसार ये श्रृंगार यों हैं—(१) मज्जन, (२) स्नान (जायसी ने मज्जन, स्नान को अलग रखा है), (३) वस्त्र, (४) पत्रावली, (५) सिंदूर, (६) तिलक, (७) कुंडल, (८) अंजन, (९) अधरों का रँगना, (१०) तांबूल, (११) कुसुमगंध, (१२) कपोलों पर तिल, (१३) हार, (१४) कंचुकी, (१५) छुद्रघंटिका और (१६) पायल ।

रीतिकाव्य के आचार्य केशवदास ने भी सोलह श्रृंगार की गणना इस प्रकार की है—

प्रथम सकल सुचि, मंजन अमल बास,
जावक, सुदेस केस पास कौ सम्हारिबो ।
अंगराग, भूषन, विविध मुखबास-राग,
कज्जल ललित लोल लोचन निहारिबो ।
बोलन, हँसन, मृदुचलन, चितौनि चारु,
पल पल पतिव्रत प्रन प्रतिपालिबो ।
'केसौदास' सो बिलास करहु कुँवरि राधे,
इहि बिधि सोरहै सिंगारन सिंगारिबो ।

उक्त छंद की टीका करते हुए सरदार कवि ने ये श्रृंगार यों गिने हैं—(१) उबटन, (२) स्नान, (३) अमल पट्ट, (४) जावक, (५) वेणी गूँथना, (६) माँग में सिंदूर, (७) ललाट में खौर, (८) कपोलों में तिल, (९) अंग में केसर लेपन, (१०) मेंहदी, (११) पुष्पाभूषण, (१२) स्वर्णाभूषण, (१३) मुखवास (१४) दंत मंजन, (१५) तांबूल और (१६) काजल । यहाँ स्पष्ट है कि टीकाकार ने कई उपकरण अपनी ओर से जोड़े हैं ।

नगेंद्रनाथ वसु ने हिंदी विश्वकोश में इन श्रृंगारों की गणना निम्नलिखित दी है—

(१) उबटन, (२) स्नान, (३) वस्त्रधारण, (४) केश प्रसाधन, (५) काजल, (६) सिंदूर से माँग भरना, (७) महावर, (८) तिलक, (९) चिबुक पर तिल, (१०) मेंहदी, (११) सुगंध लगाना, (१२) आभूषण, (१३) पुष्पमाल, (१४) मिस्सी लगाना, (१५) तांबूल, और (१६) अधरों को रँगना ।

उक्त विभिन्न सूचियों से पता चलता है कि षोडश श्रृंगार की कोई निश्चित परिभाषा या सूची नहीं रही है । देश और काल के अनुसार उसमें भिन्नता होती रही ।

षोड़श संस्कार--संज्ञा पुं० [सं० षोडश संस्कार] वैदिक रीति के अनुसार गर्भाधान से लेकर मृतक कर्म तक के १६ संस्कार जो द्विजातियों के लिये कहे गए हैं । विशेष दे० 'संस्कार' ।

षोड़शांग^{1}--वि० [सं० षोडशाङ्ग] सोलह अंगोंवाला । जिसके सोलह भाग या प्रकार हों [को०] ।

षोड़शांग^{2}--संज्ञा पुं० दे० 'षोडशधूप' ।

षोड़शांग चूर्ण--संज्ञा पुं० [सं० षोडशाङ्ग चूर्ण] वैद्यक में एक चूर्ण जो विषमज्वर में दिया जाता है ।

विशेष--चिरायता, नीम की छाल, कुटकी, गिलोय, हड़ का छिलका, नागर मोथा, धनिया, अडूसा, त्रायमाणा, कटियाली, काकड़ासिंगी, सोंठ, पित्तपापड़ा, प्रियंगु पुष्प, पेखल, पीपल, कचूर सब सामान लेकर पीस डाले और ११ टंक प्रति दिन ठंढे जल से आठ दिन तक सेवन करे ।

षोड़शांगुलक--वि० [सं० षोडशाङ्गुलक] जो सोलह अंगुल माप का हो । सोलह अंगुल के नाप की चौड़ाई का [को०] ।

षोड़शांघ्रि--संज्ञा पुं० [सं० षोडशाङ्घ्रि] केकड़ा ।

षोड़शांशु--संज्ञा पुं० [सं० षोडशांशु] शुक्र ग्रह, जिसमें सोलह किरनें मानी गई हैं ।

षोडशात्मक--संज्ञा पुं० [सं०] आत्मा [को०] ।

षोडशार^{1}--वि० [सं०] १. सोलह अराओं वाला । जैसे, षोडशार चक्र । २. जिसमें सोलह पखड़ियाँ हों [को०] ।

षोडशार^{2}--संज्ञा पुं० एक प्रकार का कमल ।

षोडशार्चि--संज्ञा पुं० [सं०] शुक्र ग्रह [को०] ।

षोड़शावर्त--संज्ञा पुं० [सं० षोडशावर्त] शंख ।

षोड़शाश्रि--संज्ञा पुं० [सं० षोडशाश्रि] वह घर या मंदिर जो सोलह कोनों का हो । ऐसे घर में सदा अँधेरा रहता है । (बृहत्संहिता) ।

षोडशाह--संज्ञा पुं० [सं०] व्रत या उपवास आदि जो सोलह दिनों तक चलता रहे [को०] ।

षोड़शिक--वि० [सं०] [वि० स्त्री० षोडशिकी] दे० 'षोडशक' ।

षोडशिका--संज्ञा स्त्री० [सं० षोडशिका] एक प्राचीन तौल जो मागधी मान से १६ माशे और व्यावहारिक मान से एक तोले के बराबर होती थी ।

षोडशिकाम्र--संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की तौल जिसे पल कहते हैं [को०] ।

षोड़शी^{1}—वि० स्त्री० [सं० षोडशी] १. सोलहवीं । २. सोलह वर्ष की (लड़की या स्त्री) । जैसे,--षोड़शी बाला ।

षोड़शी^{2}--संज्ञा स्त्री० १. सोलह वर्ष की स्त्री । नव यौवना स्त्री । २. दस महाविद्याओं में से एक । ३. एक यज्ञपात्र । ४. एक

प्राचीन तौल। पल का एक भेद जो मागधी मान से ५ तोले और व्यावहारिक मान से ४ तोले के बराबर होता था। ५. इन सोलह पदार्थों का समूह–ईक्षण, प्राण, श्रद्धा, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, इंद्रिय, मन, अन्न, वीर्य, तप, मंत्र, कर्म और नाम। ६. मृतक संबंधी एक कर्म जो मृत्यु के दसवें या ग्यारहवें दिन होता है।

यौ०––षोड़शी सपिंडी।

षोडशी²––संज्ञा पुं० [सं०] १. सोमयुक्त पात्र विशेष। २. अग्निष्टोम यज्ञ का विभेद या रूपांतर विधान [को०]।

यौ०––षोडशीग्रह = अग्निष्टोम यज्ञ में देवता के निमित्त दिया हुआ पेयनिषेक वातर्पण।

षोड़शोपचार––संज्ञा पुं० [सं० षोडशोपचार] पूजन के पूर्ण अंग जो सोलह माने गए हैं।

विशेष––इनके नाम इस प्रकार हैं––(१) आवाहन, (२) आसन, (३) अर्घ्यपाद्य, (४) आचमन, (५) मधुपर्क, (६) स्नान, (७) वस्त्राभरण, (८) यज्ञोपवीत, (९) गंधन (चंदन), (१०) पुष्प, (११) धूप, (१२) दीप, (१३) नैवेद्य, (१४) ताबूल, (१५) परिक्रमा और (१६) बंदना। तंत्रसार के अनुसार इनके नाम इस प्रकार है,–(१) आसन, (२) स्वागत, (३) पाद्य, (४) अर्घ्य, (५) आचमन, (६) मधुपर्क, (७) आचमन, (८) स्नान. (९) वस्त्र, (१०) आभरण, (११) गंध, (१२) पुष्प, (१३) धूप, (१४) दीप, (१५) नैवेद्य और (१६) वंदना।

षोढा––क्रि० वि० [सं०] छह् ढंग से। छह् प्रकार से। षड्धा [को०]।

षोढान्यास––संज्ञा पुं० [सं०] तंत्र में छह् प्रकार अंगन्यास [को०]।

षोढामुख––संज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय जिनके छह् मुख कहे जाते हैं षरामुख [को०]।

षोदत्––संज्ञा पुं० [सं०] जवान वृष। दे० 'षोडत्' [को०]।

ष्ठीवन––संज्ञा पुं० [सं०] [वि० ष्ठीवित, ष्ठ्युत] १. थूकना। २. लाला। लार (को०)।

ष्ठीवित––वि० [सं०] दे० 'ष्ठ्यूत' [को०]।

ष्ठेव, ष्ठेवन––संज्ञा पुं० [सं०] दे० 'ष्ठीवन' [को०]।

ष्ठेविता––वि० [सं० ष्ठेवितृ] थूकनेवाला।

ष्ठ्युम––संज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा। २. प्रकाश। ३. जल। ४. सूत्र। डोरा। ५. शुभता। कल्याण [को०]।

ष्ठ्यूत––वि० [सं०] थूका हुआ।

ष्ठ्यूति––संज्ञा स्त्री० [सं०] थूकना। ष्ठीवन करना।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

STOCK VERIFY
2020
G.K.V. Library

COMPILED